भाषा विज्ञान कोश

डॉ. भोलानाथ तिवारी



भाषा विज्ञान कोश

भाषा विज्ञान कोश

भाषा विज्ञान कोश

(परिशिष्ट रूपमें भाषा विज्ञानकी अंग्रेजी हिन्दी
पारिभाषिक शब्दावलीके साथ)

डॉ० भोलानाथ तिवारी

वाराणसी
ज्ञानमण्डल लिमिटेड

मूल्य पचीस रुपये

प्रथम संस्करण माघ संवत् २०२०

प्रकाशक—ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी-१
मुद्रक—लीडर प्रेस, इलाहाबाद

श्रद्धेय

डा० विश्वनाथ प्रसाद

को

सादर

दो शब्द

प्रस्तुत कोशमें भाषा-विज्ञानके प्रायः पूरे विस्तारको न्यूनाधिक रूपमें समेट लेनेका एक विनम्र प्रयास है। सैद्धांतिक पक्षके अतिरिक्त विश्वकी प्रमुख भाषाओं एवं लिपियोंपर भी टिप्पणियाँ हैं। स्वभावतः भारतीय भाषाओं एवं लिपियोंको अपेक्षाकृत अधिक, तथा हिंदी, उसकी बोलियों, उपबोलियों एवं स्थानीय रूपोंको और भी अधिक स्थान दिया गया है। जिन भाषिक रूपोंकी वर्तमान जनसंख्या नहीं मिल सकी है, उनकी पुरानी जनसंख्यासे ही संतोष करना पड़ा है। विस्तार या महत्व आदिकी दृष्टिसे जनसंख्याकी सूचना आवश्यक समझी गयी है।

अन्य क्षेत्रोंकी भाँति ही भाषा-विज्ञानके क्षेत्रमें भी पारिभाषिक शब्द अनेकानेक हैं, और दिनों दिन उनकी संख्यामें वृद्धि हो रही है। यहाँ सभीको नहीं लिया जा सका है। इसका प्रमुख कारण इन पंक्तियोंके लेखककी अपनी सीमाएँ हैं। यों यह प्रयास अवश्य किया गया है कि बहुत आवश्यक शब्द न छूटने पायें।

प्रस्तुत कोशके निर्माणमें संस्कृत, हिंदी एवं अंग्रेजीकी देशी-विदेशी अनेक पुस्तकों एवं लेखोंसे सहायता ली गयी है। लेखक उन सभीके लेखकोंके प्रति आभारी है। पुस्तकोंकी पूरी संख्या दो सौसे ऊपर है, अतः सबका नाम लेना यहाँ अनपेक्षित है। यों मैं विशेष ऋणी ब्लूमफ़ील्ड, येस्पर्सन, ग्लीसन, हॉकिट, ग्रे, पाइक, नीडा, चटर्जी, डैनियल जोन्ज़, पेई, धीरेन्द्र वर्मा, बाबूराम सक्सेना एवं विश्वनाथ प्रसादका हूँ।

इस पुस्तकके लेखन एवं प्रकाशनका सर्वाधिक श्रेय आदरणीय श्री देवनारायण द्विवेदीको है। यदि व्यक्तिगत रूपसे उन्होंने रुचि न ली होती, एवं उत्साहवर्द्धन न किया होता तो अभी यह कोश प्रकाशमें न आता। द्विवेदीजीके प्रति मैं हृदयसे आभारी हूँ। प्रिय भाई ऋषिदेव शर्माने इस कार्यमें मेरी बड़ी सहायता की है। वस्तुतः कोशकी पांडुलिपि तैयार करनेमें, उनका सक्रिय सहयोग मेरे लिए जीवन पर्यन्त अविस्मरणीय है। मैं शर्माजीका अत्यंत ऋणी हूँ। प्रिय मित्र डॉ० जयचंद राय, डॉ० कैलाश चंद्र भाटिया तथा श्री रमेशचंद्र मेहरोत्रासे विभिन्न विषयोंके स्पष्टीकरणमें मुझे बड़ी सहायता मिली है, जिसके लिए मैं अत्यंत कृतज्ञ हूँ। इन लोगोंके प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन, कहाँतक करूँ? हर विवादास्पद विषयपर इन मित्रोंको कष्ट देना, मैं अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझने लगा हूँ।

अब रही अशुद्धियों एवं त्रुटियोंकी बात, तो मेरा सीमित ज्ञान एवं विषयका विस्तार, इस बातके पर्याप्त प्रमाण हैं कि उनसे यह पुस्तक रिक्त न होगी। पुस्तकके प्रेसमें जाते ही मुझे विदेश चला आना पड़ा और परिणाम यह हुआ कि छपाईमें मैं इसका साथ न दे सका। यदि उसका अवसर मिला होता तो निश्चय ही इसकी त्रुटियाँ कुछ कम हो गयी होतीं। इस प्रसंगमें मैं प्रेसवालोंकी सराहना किये बिना नहीं रह सकता। मेरा लेखन 'लिखें ईसा पढ़ें मूसा'-को चरितार्थ करता है। फिर भी उन लोगोंने इसे काफ़ी त्रुटिरहित छापनेका यत्न किया है और वे धन्यवाद तथा बधाईके पात्र हैं। सम्मतियों, सुझावों, त्रुटिनिर्देशों एवं आलोचनाओंके लिए अग्रिम धन्यवाद।

२५ जनवरी १९६४

ताशकंद विश्वविद्यालय

सोवियत संघ

भोलानाथ तिवारी

भाषा विज्ञान कोश

अ

अंकलिवि--पन्नवणासूत्र नामक जैन ग्रंथमें दी गयी १८ लिपियोंमेंसे एक ।

अंगलिपि--बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक ।

अंगवांकू (angwanku)--आसामकी नागा पहाड़ियोंपर बोली जानेवाली एक **पूर्वी नागा** भाषा । ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५०००-के लगभग थी और इसमें 'तुम्लू' बोलनेवाले भी सम्मिलित थे ।

अंगसा (angsa)--**इंथ** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

अंगामी (angami)--**नागा वर्ग** (दे०) के, **पश्चिमी उप वर्गकी**, नागा पहाड़ियोंमें प्रयुक्त, एक भाषा । १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४३०५० थी ।

अंगुलीयलिपि--बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'-में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक ।

अंग्क (angka)--'**अक**[1]' (दे०) का एक अन्य नाम ।

अंग्रेज़ी--इंग्लैंड, कनाडा, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड तथा दक्षिणी **अफ्रीकाके** कुछ भागोंमें प्रयुक्त विश्वकी सबसे महत्वपूर्ण तथा अंतरराष्ट्रीय भाषा । इसे लगभग २५,००,००,००० लोग बोलते हैं । इससे अधिक बोलनेवाले केवल चीनी हैं । अंग्रेज़ी, भारोपीय परिवारके केंतुम वर्गकी जर्मनिक शाखाके निम्न जर्मनसे संबद्ध है । इसके नामका सम्बन्ध एक जर्मन जाति ऐंग्ल्ज़ (Angles) से है, जिसने ५वीं सदीमें जर्मनीसे जाकर इंग्लैंडको अपने अधिकारमें कर लिया और वहाँके आदिवासियोंको मार भगाया था । ये लोग मूलतः ऐंगुल (angul) नामक प्रदेश (जर्मनी) के थे, इसी लिए इनका 'ऐंगल्ज़' नाम पड़ा । ऐंगुल प्रदेशके नामका इतिहास भी विचित्र है । वह प्रदेश कोंणके आकारका अर्थात् 'टेढ़ा' था और उस समय वहाँकी भाषामें कोंणको ऐंगुल कहते थे, इसी कारण वह प्रदेश भी ऐंगुल कहलाया । यह वही ऐंगुल है, जो अंग्रेज़ीमें कोंणका पर्याय ऐंगिल (Angle) बना है । इस प्रकार इंगलिश तथा इंग्लैंड दोनोंके मूलमें 'टेढ़ा' या 'वक्र'का भाव है । 'ऐंगल्ज़' ही पुर्तगाली माध्यमसे हिंदी आदिमें अंग्रेज़, अंग्रेज़ी बना है । अंग्रेज़ी भाषाका प्रारंभ लगभग पाँचवीं सदीके मध्यसे होता है । इसके विकासको ऐंग्लोसैक्सन या आदि कालीन अंग्रेज़ी (४५०-११००), मध्यकालीन अंग्रेज़ी (११००-१५००) तथा आधुनिक अंग्रेज़ी (१५००--), इन तीन कालोंमें बाँटा गया है । अंग्रेज़ीके प्रसिद्ध साहित्यकारोंमें चॉसर, शेक्सपीयर, मिल्टन, वर्ड्सवर्थ, शेली, कीट्स आदि प्रमुख हैं । प्राचीन अंग्रेज़ीकी केंटिश, पश्चिमी सैक्सन (मुख्य बोली), मर्सिअन (Mercian) तथा नार्थम्ब्रिअन प्रमुख बोलियाँ थीं । मध्ययुगमें आकर बोलियोंकी स्थिति कुछ परिवर्तित हो गयी । उत्तरी, मध्य तथा दक्षिणी तीन ही उल्लेख्य थीं । आधुनिक अंग्रेज़ीकी भी कई बोलियाँ हैं, किंतु उनका ठीकसे वर्गीकरण नहीं हुआ है । स्कॉटलैंडी या

स्कॉटिश तथा कॉकनीके नाम उदाहरणार्थ लिये जा सकते हैं। अंग्रेज़ी भाषा रोमन लिपिमें लिखी जाती है। अंग्रेज़ीके कुछ अन्य रूप **बीच-ला-मर** (दे०) या चंदन अंग्रेज़ी, **टूटी-फूटी अंग्रेज़ी** (दे०) **बुशनीग्रो अंग्रेज़ी** (दे०), **पिड्गिन अंग्रेज़ी** (दे०) **किंग जेम्स अंग्रेज़ी** (दे०) **गुल्ल निग्रो** (दे०) **फ़ेडेरल अंग्रेज़ी** (दे०) **ऐंग्लो इंडियन** (दे०) आदि है। अंग्रेज़ी रोमन लिपिमें लिखी जाती है। अंग्रेज़ीने विश्वकी अधिकांश भाषाओंको न्यूनाधिक रूपमें प्रभावित किया है। हिन्दीमें अंग्रेज़ी शब्द तीन हज़ारसे ऊपर हैं।

अंडकी (andaki)–**चिब्चा-अरउअक** (दे०) वर्गकी एक दक्षिणी अमरीकी भाषा।

अंडमानी––बंगालकी खाड़ीमें अंडमन द्वीपमें प्रयुक्त भाषाओंका सामूहिक नाम। अंडमानीमें प्रमुख वर्ग दो हैं–(क) **बड़ी अंडमानी** (जिसमें उत्तरीवर्गमें) बा, चारी, कोरा, येरु, जुवोइ, केदे, कोल, पुचिकवर, तथा दक्षिणी वर्गमें बले, बेआ आदि हैं। तथा (ख) **छोटी अंडमानी** (जिसमें ओंगे, यारवा हैं)। इन भाषाओंमें संघर्षी ध्वनियाँ फ, व, श, स आदि) नहीं हैं। अंडमानी लोगोंको मानवशास्त्रवेत्ता 'नेग्रिटो' मानते हैं और उनका मूल स्थान अफ्रीका मानते हैं। ऐसी स्थितिमें इस बातकी भी संभावना हो सकती है कि किसी अफ्रीकी भाषा-परिवारसे इनका सम्बन्ध हो। कुछ लोगोंने इन भाषाओंको द्रविड़ या आस्ट्रेलियन भाषाओंसे भी जोड़नेका प्रयास किया है, किंतु अभी-तक यही माना जाता है कि इनका पारिवारिक सम्बन्ध किसी भी ज्ञात परिवारसे स्पष्ट नहीं है। १९२१ की जनगणनाके अनुसार अंडमानी भाषाएँ बोलनेवालोंकी संख्या ५८० थी।

अंत––(१) समाप्ति, (२) अंतका, अंत्य, अंतिम।

अंतः केन्द्रित रचना (endocentric construction)–एकप्रकारकी रचना। (दे०) **वाक्यमें रचनाके प्रकार** उपशीर्षक।

अंतःपातसंधि––(दे०) संधि।

अंतः प्रत्यय प्रधान––मध्य-योगात्मक (दे०) का एक अन्य नाम।

अंतःस्थ, अंतस्था––अंतस्थके लिए प्रयुक्त नाम।

अंतःस्फोट द्विस्पर्श (click)––'**ध्वनियोंका वर्गीकरण**'में '**कुछ असामान्य व्यंजन और उनके भेद**' उपशीर्षक।

अंतःस्फोटात्मक व्यंजन (implosive)––(दे०) '**ध्वनियोंका वर्गीकरण**'में '**कुछ असामान्य व्यंजन और उनके भेद**' उपशीर्षक।

अंतकरण––**प्रत्यय** (दे०)का एक प्राचीन नाम।

अंत-योगात्मक (suffix agglutinative)––**योगात्मकभाषा** (दे०)का एक भेद।

अंतरपथा–**बघेली** (दे०)की उपबोली '**गहोरा**' (दे०)का दक्षिणी बाँदा (ज़िले)के मध्यभागमें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप।

अंतरिक्षदेवलिपि––बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

अंतर्ग्राही पुरुषवाचक सर्वनाम––**अंतर्भावी पुरुष वाचक सर्वनाम** (दे०)का एक अन्य नाम।

अंतर्दन्त्य (inter dental)––ऐसी ध्वनि, जिसका उच्चारण ऊपर-नीचेके दाँतोंके बीच जीभकी नोक रखकर किया जाय।

अंतर्वेदी––**ब्रजभाषा** (दे०)का एक अन्य नाम।

अंतर्भावी पुरुषवाचक सर्वनाम–(inclusive personal pronoun) कुछ भाषाओंमें प्राप्त बहुवचन पुरुषवाचक सर्वनाम जिनका अर्थ 'उन लोगोंके समेत तुम लोग' या 'हम लोगोंके समेत तुम लोग' आदि होता है। इन बहुवचन रूपोंमें किसी अन्य बहुवचनके भी अंतर्भूत होनेका भाव निहित रहता है। इन भाषाओंमें इसका ठीक उलटा **अनंतर्भावी पुरुषवाचक सर्वनाम** (दे०) होता है। अंतर्भावीको **अंतर्ग्राही** या **समावेशी** भी कहा जा सकता है।

अंतर्भुक्त प्रत्यय––**मध्यसर्ग** (दे०)का एक अन्य नाम।

अंतर्मुखी द्विस्पर्श––(click) (दे०) ध्वनियों-का वर्गीकरणमें कुछ असामान्य व्यंजन और उनके भेद उपशीर्षक ।

अंतर्मुखी व्यंजन (implosive)––(दे०) ध्वनियोंका वर्गीकरणमें कुछ असामान्य व्यंजन और उनके भेद उपशीर्षक ।

अंतर्मुखी-श्लिष्ट (internal inflectional)––श्लिष्ट-योगात्मक भाषा (दे०) का एक वर्ग ।

अंतर्वेदी––व्रजभाषा (दे०)का एक नाम । वस्तुतः इसे व्रजभाषाके पूर्वीय रूप('कनौजी'-की सीमाके पास प्रयुक्त)का नाम कहना चाहिए ।

अंतःस्थ––(१) बीचमें स्थित । अर्थात् स्पर्श व्यंजनों एवं संघर्षी व्यंजनोंके बीचकी ध्वनि। उव्वट कहते हैं––स्पर्शोष्मणामन्तः मध्ये तिष्ठतीति अंतस्थाः । (२) स्वरों और व्यं-जनोंके बीचकी ध्वनि । वाजसनेयी प्राति-शाख्यमें आता है––अथान्तस्थाः । यिति रिति लिति विति । अर्थात् य र ल व अंत-स्थ हैं । इन्हें अर्धस्वर (दे०) भी कहा गया है । पाणिनि इन्हें यण् कहते हैं । 'अंतस्थ'को अंतःस्थ, अंतस्था, अंतःस्था आदि भी कहा गया है ।

अंतस्था––(दे०) अंतस्थ ।

अंतोदात्त––ऐसा शब्द या पद जिसका अंतिम स्वर उदात्त (दे०) हो ।

अंत्य (final)––अंतिम, अंतर, ध्वनि, स्वर, व्यंजन, अक्षर, शब्द, पद, आगम, लोप तथा बलाघात आदिके साथ विशेषण रूपमें इसका प्रयोग होता है ।

अंत्य अक्षर लोप (apocope)––लोप (दे०)का एक भेद ।

अंत्य अक्षरागम–आगम (दे०) का एक भेद ।

अंत्य बलाघात (final stress)––शब्दके अंत्य अक्षरपर या अक्षरकी अंतिम ध्वनिपर पड़नेवाला बलाघात ।

अंत्ययोग (paragoge)––शब्दके अंतमें किसी स्वर, व्यंजन या अक्षरका आ जाना। जैसे once का oncet निरर्थक अत्ययोंका योग भी इसीके अंतर्गत आता है ।

अंत्ययोग व्यंजन (paragogic consonant)––(दे०) अंत्ययोग ।

अंत्ययोग-स्वर (paragogic vowel)––(दे०) अंत्ययोग ।

अंत्ययोगाक्षर (paragogic syllable)–(दे०) अंत्ययोग ।

अंत्यलोप––लोप (दे०)का एक भेद ।

अंत्य व्यंजन लोप––लोप (दे०)का एक भेद।

अंत्य व्यंजनागम–आगम (दे०)का एक भेद।

अंत्यश्रुति (final glide)–**परश्रुति** (दे०) का एक अन्य नाम ।

अंत्य स्वरलोप––लोप (दे०)का एक भेद ।

अंत्यस्वरागम––आगम (दे०)का एक भेद।

अंत्याक्षर बलाघात (terminal stress) शब्दके अंत्य अक्षरपरका बलाघात ।

अंत्यागम––आगम (दे०)का एक भेद ।

अंत्याघाती भाषा (oxytonic language)––ऐसी भाषा जिसके अधिकांश शब्द **अंत्याघाती** (दे०) हों ।

अंत्याघाती शब्द (oxytone)––ऐसा शब्द जिसके अंतिम अक्षर (syllable) पर प्रधान आघात (बल या सुर) होता है ।

अंदोआ (andoa)––दक्षिणी अमेरिकाके ज़ापरो (दे०) परिवारकी एक भाषा ।

अंद्रो (andro)––तिब्बती-बर्मी उपपरि-वारकी एक लूई (दे०) भाषा ।

अंशतः समास प्रधान–आंशिक प्रश्लिष्ट योगा-त्मक भाषा (दे०)का एक अन्य नाम ।

अःकार–तैत्तिरीय प्रातिशाख्यमें प्रथमा विभ-क्तिके लिए प्रयुक्त एक नाम ।

अकंपित––(ऋग्वेद प्रातिशाख्यके अनुसार) वेद-पाठमें बिना जीभ कँपाये (जीभ कँपाना उच्चारण-दोष माना गया है) उच्चरित स्वर ।

अक (aka)––(१) आसाम-सीमाके बाहर बोली जानेवाली **चीनी परिवार**की एक बोली। इसे ह्रुसो भी कहते हैं। (२) दक्षिणी शान प्रांतमें लगभग ३४२६५ लोगों द्वारा व्यवहृत **लो लो-मो सो** (दे०) वर्गकी एक भाषा ।

इसे केव भी कहते हैं।

अकर्मक--जिसमें या जिसका कर्म न हो। इसका प्रयोग वाक्य, क्रिया, धातु, आदिके साथ होता है।

अकर्मक क्रिया--(दे०) धातु, क्रिया।

अकर्मक धातु--(दे०) **धातु क्रिया**।

अकवइ (akawai)--**करिब** (दे०) भाषा-परिवारकी एक दक्षिणी अमरीकी भाषा।

अकाक्सी (akaxee)--**पिमा-सोनोर**(दे०) वर्गकी एक विलुप्त उत्तरी अमरीकी भाषा।

अकादिअन--(दे०) 'अकादी'।

अकादी-(accadian या akkadian)--इस भाषाको **असीरिओ-बेबिलोनिअन** भी कहते हैं। यह अब नहीं बोली जाती। अकादी **सामी परिवार** (दे०)की भाषा है। यह मेसोपोटामियामें ३००० ई० पू०से लगभग पहली ईसवी पूर्वतक बोली जाती थी। इसका प्राचीनतम लेख असीरिआमें मिला है, अतः कुछ लोग इसे गलतीसे **असीरिअन** भी कहते हैं। प्राचीन अकादीका काल ६५० ई० पू० तक। उत्तर अकादीका काल उसके बाद कुछ लोगों द्वारा माना जाता है। कुछ लोग इस प्राचीन अकादीको **असीरिअन** तथा उत्तर अकादी (६५० ई० पू०के बाद)को बेबिलोनिअन कहते हैं। अधिक प्रामाणिक मत यह है कि २००० ई०पू० के बाद अकादी भाषाकी दो शाखाएँ हो गयीं : बेबिलोनियामें **बेबिलोनिअन** तथा असीरिआमें **असीरिअन**। इन दोनोंमें **असीरिअन** अकादीकी सीधी संतान ज्ञात होती है। **बेबिलोनिअनमें** कुछ बातें ऐसी भी हैं, जो प्राचीन अकादीमें नहीं मिलतीं। अकादी भाषा क्यूनिफ़ार्म लिपिमें लिखी जाती थी जिसे इन लोगोंने **सुमेरिअन** लोगोंसे ली थी।

अकाम संधि--(दे०) **संधि**।

अकार-अ के लिए प्रयुक्त नाम। संस्कृत ग्रंथोंमें इसके १८ भेद किये गये हैं। दे० **कार**।

अकारण अनुनासिकता-(दे०) **अनुनासिकीकरण**।

अकारण ध्वनि-परिवर्तन-एक प्रकारका ध्वनि-परिवर्तन (दे०)

अकुआ (akua)--दक्षिणी अमेरिकाके **जे** (दे०) परिवारके मध्यवर्ती वर्गकी एक भाषा। इसकी प्रमुख बोलियाँ शेरेन्ते, शवान्ते, ओपे इत्यादि हैं।

अकृत्रिम संज्ञा--(दे०) **संज्ञा**।

अको (ako)--१९२१ की जनगणनाके अनुसार केंगटुंग (बर्मा)में प्रयुक्त (**लो लो-मोसो** (दे०) वर्गकी) एक भाषा।

अक्खरपिट्ठिया-पन्नवणासूत्र नामक जैन सूत्रमें दी गयीं १८ लिपियोंमें-से एक।

अक्रोआ (akroa)--**शवान्ते ओप** (दे०) का एक अन्य नाम।

अक्षर--'अक्षर' शब्दकी व्युत्पत्ति भी कई प्रकारसे की गयी है। महाभाष्यमें पतञ्जलिने ही इसकी तीन-चार व्युत्पत्तियोंके संकेत दिये हैं। यों अधिक मान्य व्युत्पत्ति 'क्षर' (न क्षरतीति) धातुसे मानी जाती है जिसका अर्थ 'नष्ट होना', 'क्षीण होना', 'चल होना' आदि है। इस रूपमें 'अक्षर' शब्द 'अनश्वर' या 'अटल' आदिका समानार्थी है। इसी आधारपर 'प्रणव', 'ब्रह्म' या उसके विविध रूपोंके लिए संस्कृत साहित्यमें इस शब्दका प्रयोग मिलता है। आगे चलकर 'अक्षर'का यही मूल अर्थ कुछ विकसित हो गया और इसका अर्थ हो गया 'जो तोड़ा या खंडित न किया जा सके' या 'जिसका और आगे विश्लेषण न किया जा सके।' पहले 'भाषा' या 'वाक्'-को अखंड्य या असमाप्य समझा जाता था। अतः 'भाषा' या 'वाक्'के लिए ही अक्षरका प्रयोग होता था। निघंटुसे इस बातका पता चलता है। भाषाके अध्ययनके सिलसिलेमें जब वाक्यके टुकड़े किये गये और शब्दका पता चला तो लोगोंने ख्याल किया कि शब्दको और अधिक छोटे टुकड़ोंमें नहीं बाँटा जा सकता, इसलिए उस समय 'अक्षर'-का प्रयोग 'शब्द'के लिए किया गया। ऋग्वेदके प्रथम मंडलमें (ऋचो अक्षरे परमे व्योमन्) 'अक्षर' शब्दका प्रयोग इसी अर्थमें मिलता है। आगे जब शब्दके भी टुकड़े किये

गये और 'सिलेब्ल' (syllable) का पता चला तो, लोगों ने 'शब्द'को तो 'खंड्य' और सिलेब्लको-'अक्षर' या 'अखंड्य' माना, और इसीलिए 'अक्षर' शब्दका 'सिलेब्ल'के लिए प्रयोग होने लगा। ऋग्वेद, ऐतरेय आरण्यक, ऋक्, वाजसनेयी तथा अथर्व आदि कई प्रातिशाख्यों, बहुतसे शिक्षा-ग्रंथों, मनुस्मृति तथा गीता आदिमें 'अक्षर'का इस अर्थमें प्रयोग मिलता है। और आगे जब 'सिलेब्ल'के भी टुकड़े किये गये तो व्यंजन और स्वरके मिले रूप (जैसे क, 'क्+अ' ख, ब, प आदि) के लिए अक्षरका प्रयोग होने लगा। आज भी इस अर्थमें 'अक्षर'का प्रयोग कुछ लोग करते हैं। और आगे जब इनका भी विश्लेषण किया गया तो वर्णों (जैसे क्, अ आदि) का पता चला और तब वर्णको 'अखंड्य' मानकर अक्षरका प्रयोग उनके लिए किया गया। ऐतरेय आरण्यक, महाभाष्य, ऋक्तंत्र, गीता (अक्षराणामकारोस्मि) आदिमें इस अर्थमें अक्षरका प्रयोग मिलता है। सामान्य लोगोंमें आज भी अक्षरका यही अर्थ है। कभी-कभी इसी आधारपर इन वर्णोंके माने हुए प्रतीकों 'लिपि-चिह्नों' या 'हरूफ़'के लिए भी अक्षरका प्रयोग होता है। कुछ लोगोंने वर्णोंको भी विश्लेषित किया और देखा कि व्यंजनोंसे भी अधिक 'अखंड्य' स्वर हैं (क्योंकि नासिका या स्पर्श आदि कुछमें तीन स्थितियाँ होती हैं और प्रयोगमें कभी-कभी दो स्थितिके भी स्पर्श मिल जाते हैं--जैसे नाम्, आप् आदि) इसीलिए स्वरके समानार्थीके रूपमें भी 'अक्षर'का प्रयोग किया गया। ऋग्वेद प्रातिशाख्य, तैत्तिरीय प्रातिशाख्य तथा चतुरध्यायिका आदिमें अक्षरका इस अर्थमें प्रयोग मिलता है। इसी प्रयोगके आधारपर 'अक्षर'के दो भेद किये गये (क) समानाक्षर (मूल स्वर या सामान्य स्वर), (ख) संध्यक्षर (संयुक्त स्वर)। कात्यायनके वार्तिक तथा कई प्रातिशाख्योंमें ये भेद मिलते हैं। भाषाके प्रसंगमें संस्कृतमें अक्षरका प्रयोग उपर्युक्त कई अर्थोंमें हुआ तो है, किन्तु अधिक प्रचलित प्रयोग 'सिलेब्ल'के अर्थोंमें ही है। यों पंडितराज जगन्नाथके 'भामिनी-विलास'में तथा कुछ अन्य पुराने ग्रंथोंमें 'सिलेब्ल'के लिए 'वर्ण का' भी प्रयोग मिलता है, किन्तु अब वर्ण ध्वनिकी लघुतम इकाईका ही पर्याय मात्र रह गया है। प्रस्तुत प्रसंगमें **अक्षर**का प्रयोग syllable के अर्थमें ही किया जा रहा है। अंग्रेज़ी शब्द syllale मूलतः ग्रीक शब्द syllabe है, जिसका अर्थ है 'जो एकमें बँधा (syn=साथ lambanein=रखना,लेना) हो या रखा। 'अक्षर' शब्दका संक्षेपमें विकास देखनेके उपरान्त उसके प्रमुख अर्थों या प्रयोगोंकी ओर संकेत किया जा सकता है। अक्षर शब्द प्रमुखतः निम्नांकित अर्थोंमें प्रयुक्त हुआ है :

(१) वर्ण या ध्वनि-चिह्न जैसे अ, ब। 'आपके अक्षर सुंदर हैं' में अक्षरका प्रयोग इसी अर्थमें है।

(२) स्वर, जैसे अ, आ। कुछ प्रातिशाख्योंमें यह अर्थ मिलता है। इसी आधारपर मूल स्वरको **समानाक्षर** तथा संयुक्त स्वरको संध्यक्षर कहा गया है।

(३) **अयोगवाह** (दे०)के लिए भी इसका प्रयोग हुआ है।

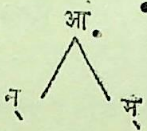
(४) स्वर और व्यंजनका मिला हुआ रूप। जैसे क (क्+अ), प (प्+अ)। जब हिन्दी में क, ख, ग आदिको अक्षर कहा जाता है, तो 'अक्षर'का यही अर्थ होता है। बतानेकी आवश्यकता न होगी कि 'क' वस्तुतः 'क्' और 'अ'का मिला हुआ रूप है। इसी प्रकार 'ख', 'ग' आदि भी। ध्वनिपरिवर्तन की दिशाओंमें 'अक्षर-लोप' आदिमें भी अक्षर शब्द इसी अर्थमें व्यवहृत होता है। (दे०) **ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ** 'लोप' तथा 'आगम' आदि।

(५) आजकल हिन्दीमें भाषाविज्ञानके क्षेत्रमें इसका प्रयोग प्रायः सिलेब्ल (syllable) के अर्थमें ही अधिक हो रहा है। इस दृष्टिसे अक्षरपर यहाँ विस्तारसे विचार किया जा रहा है।

परिभाषा—एक या अधिक ध्वनियों (या वर्णों) की उच्चारणकी दृष्टिसे ऐसी अव्यवहित इकाई जिसका उच्चरण एक झटकेमें किया जा सके, अक्षर है। जैसे आ (एक ध्वनि), जा (दो ध्वनियाँ) या काम् (तीन ध्वनियाँ) आदि। इन ध्वनि इकाइयोंका उच्चारण एक झटकेसे होता है। एक शब्दमें एक अक्षर भी हो सकता है, जैसे—(आ) (१), गा (२), बैठ् (३), युद्ध् (४), शस्त्र् (५), स्वास्थ्य् (६), और एकसे अधिक अक्षर भी हो सकते हैं, जैसे—**दो अक्षर**—आया (३), गया (४), शक्ति (५), भारतीय् (६) प्राकृत् (७), संस्कृत् (८)। **तीन अक्षर**—आइये (३) जाइये (४), अवनि (५), अमानत् (६), अत्याचार (७), पुरस्कार (८), प्राध्यापक (९), संग्मर्मर् (१०)। **चार अक्षर**—कठिनाई (७), अनुमानित् (८), पहिचान्ना (९), स्वाभाविक्ता (१०)। **पाँच अक्षर**—कठिनाइयों (९), अमानुषिक्ता (११), अव्यावहारिक्ता (१२)। उदाहरणोंके आगे कोष्ठकोंमें उनके उच्चारणमें प्रयुक्त ध्वनियोंकी संख्या दे दी गयी है। किसी शब्दमें अक्षरोंकी संख्या इस बातपर बिल्कुल निर्भर नहीं करती कि उसमें कितनी ध्वनियाँ हैं, अपितु इस बातपर करती है कि उच्चारण कितने झटकोंमें होता है या शब्दमें ध्वनियों या ध्वनिसमूहोंकी कितनी अव्यवहित इकाइयाँ हैं। 'स्वास्थ्य'में ६ ध्वनियाँ हैं, किन्तु सबका उच्चारण एक झटकेमें होता है, इसीलिए इस शब्दमें एक अक्षर है, किन्तु दूसरी ओर 'आया'में ३ ही ध्वनियाँ हैं, किन्तु इसका उच्चारण दो झटकों (आ, या) में होता है, इसीलिए इसमें दो अक्षर हैं। इसी प्रकार 'आइए'में यद्यपि ३ ही ध्वनियाँ हैं, किन्तु तीन झटकेसे उच्चारण होनेसे तीन अक्षर (आ, इ, ए) हैं। ऊपर अक्षरकी एक काम चलाऊ परिभाषा दी गयी है। यों अक्षरको पूर्णतः दो-टूक परिभाषामें बाँधना—ताकि वह विश्वकी सभी भाषाओंपर लागू हो सके—बहुत कठिन है। अबतक ऐसी कोई भी परिभाषा नहीं दी गयी जो सभी विद्वानोंको पूर्णतः मान्य हो। पी०पासी, नोएल आर्मफ़ील्ड, येस्पर्सन, ग्रैफ़, ग्रे, हेफ़्नर, क्लिगेनहेबेन, वेस्टरमैन और वार्ड आदि अनेक विद्वानोंने इस कठिनाईका स्पष्ट शब्दोंमें उल्लेख किया है। फिर भी समय-समयपर इसकी परिभाषाएँ दी जाती रही हैं। किसीने इसे **एक श्वास वर्ग** या '**श्वासके एक आघातमें-उच्चरित ध्वनि-इकाई**' कहा है तो किसीने '**एक श्वास स्पंदनसे उच्चरित ध्वनि** या ध्वनि-समूह'। नोएल आर्मफ़ील्ड आदि बहुतोंने परिभाषा न देकर केवल उदाहरणों द्वारा समझा दिया है। पाइकके अनुसार अक्षर **फेफड़ेके एक स्पंदसे उच्चरित ध्वनि इकाई** है। अन्यत्र वे इसे एक ऐसी ध्वनि-इकाई (एक या अनेक ध्वनियोंकी) कहते हैं, जिसके उच्चारणमें एक हृत्स्पंद (chest pulse) हो तथा जिसमें केवल एक शीर्ष (peak) ध्वनि हो। कैण्टनर और वेस्टके अनुसार **अक्षर भाषाकी एक ऐसी इकाई है, जिसमें मुखरता** (sonority) **का एक शीर्ष हो और उस शब्द या वाक्यांशके अन्य शीर्षोंसे अमुखरता द्वारा अलग** हो। कुछ लोगोंके अनुसार अक्षर '**स्वाभाविक लघुतम ध्वनि-इकाई**' या '**गह्वर**' (valley) **से युक्त या रहित मुखर** (sonorous) **शीर्ष** है। डॉ० सक्सेना '**संयुक्त ध्वनियोंके छोटेसे छोटे समूहको अक्षर**' कहते हैं और उसको '**ध्वनियोंका एक साथ** (अति सन्निकटता) **में उच्चारण**' मानते हैं। अक्षरको '**एक या अधिक ध्वनियोंकी उच्चारणकी दृष्टिसे पूर्ण छोटी इकाई**' या '**एक हृत्स्पंदसे उच्चरित-ध्वनि-इकाई**' भी कह सकते हैं।

स्वरूप—ऊपरकी परिभाषाओंको ठीकसे हृदयंगम करनेके लिए अक्षरका स्वरूप विचारणीय है। जब हम कोई शब्द, वाक्यांश या वाक्य बोलते हैं तो उसमें कुछ ध्वनियाँ औरोंसे प्रमुख होती हैं। उदाहरणार्थ 'व्यायाम्', 'जगदीश्' और 'अंधकार्'का उच्चारण करें तो देखेंगे कि पहलेमें यद्यपि छः ध्वनियाँ हैं

किन्तु दोनों 'आ' औरोंसे प्रमुख और मुखर हैं। इसी प्रकार दूसरेमें 'अ' और 'ई' तथा तीसरेमें 'अ' और 'आ' प्रमुख और मुखर हैं। किसी शब्दमें इस प्रकारकी जितनी ध्वनियाँ प्रमुख या मुखर होती हैं, उसमें उतने ही अक्षर होते हैं। अक्षर बनानेवाली ये प्रमुख या मुखर ध्वनियाँ आक्षरिक (syllabic) कहलाती हैं। आक्षरिक ध्वनि ही अक्षरका आधार है। बिना इसके अक्षरका निर्माण नहीं हो सकता। इसीलिए आस-पासकी अन्य ध्वनियोंसे यह महत्त्वपूर्ण समझी जाती हैं। 'नाम्' (न्+आ+म्) के उच्चारणमें भी यही बात है। बीचका 'आ' प्रमुख या आक्षरिक है और अगल-बगलके न् म् अप्रमुख या अनाक्षरिक (nonsyllabic)। इसे लहर रूपमें यों दिखाया जा सकता है :



चित्र नं० १

'आ' प्रमुख या अधिक मुखर होनेके कारण ऊँचा है। इसे शीर्ष, चोटी, केन्द्र या शिखर (functional centre, nucleus crest या peak) कहते हैं। न् म् अप्रमुख या अपेक्षया अमुखर हैं, अतः नीचे हैं। उपर्युक्त आकार पर्वत जैसा है जिसमें 'आ' चोटी है, इसी आधारपर दोनों ओरके उतार या ढालको गह्वर या घाटी (Valley या slope) कहते हैं। दूसरे शब्दोंमें 'नाम्' शब्दमें 'आ' शीर्ष ध्वनि है तथा 'न्' और 'म्' गह्वर ध्वनियाँ। प्रायः शीर्ष ध्वनि स्वर होती है और गह्वर ध्वनियाँ 'व्यंजन', क्योंकि स्वरमें मुखर तथा प्रमुख होनेकी अपेक्षाकृत अधिक शक्ति होती है, यद्यपि, जैसा कि हम आगे देखेंगे, ऐसा सर्वदा नहीं होता। हर भाषामें अक्षरके विभिन्न स्वरूप, आदर्श या नमूने पाये जाते हैं। यदि 'स्वर' के लिए 'स' और 'व्यंजनके' लिए 'व'के प्रतीक लिपि-चिह्न मानें (अंग्रेजीमें इन्हें V (Vowel) और C (Consonant) कहते हैं। तो 'नाम्'के आक्षरिक स्वरूपको व स व (न् = व्यंजन; आ–स्वर; म् = व्यंजन) रूपमें प्रकट किया जा सकता है। अधिकांश भाषाओंमें अक्षरके प्रमुखतः निम्नांकित स्वरूप पाये जाते हैं। यहाँ उदाहरण हिन्दीसे लिये जा रहे हैं।

स्वरूप	उदाहरण
स	आ
व स	जा, खा, गा, रो, जी
स व	आज्, ईख्, अब्
स व व	अन्त्, अस्त्
व व स	क्या
स व व व	अस्त्र्
व व व स	स्त्री
व स व	नाम्, हम्, कुल्
व स व व	कन्त्, पस्त्, वक्त्
व स व व व	शस्त्र्
व व स व	द्वेष्, द्वीप्
व व स व व	क्षिप्र्, व्यस्त्
व व स व व व	कृच्छ्र्, स्वास्थ्य्

कभी-कभी कुछ भाषाओंमें स्वरूपके विवेचनमें यह भी देखना अपेक्षित होता है कि स्वर ह्रस्व है या दीर्घ और अनुनासिक है या निरनुनासिक। ऐसी स्थितिमें ह्रस्व और निरनुनासिकके लिए तो किसी चिह्नका प्रयोग नहीं करते, किन्तु शेष दोके लिए चिह्नोंका प्रयोग होता है। दीर्घत्वके लिए एक बिन्दु (स.), दो बिन्दु (सः) या + (स+) का प्रयोग और अनुनासिकताके लिए ऊपर या आगे ~ (स̃, स~) या – (स–) का प्रयोग किया जा सकता है। दीर्घता और अनुनासिकता दोनोंको साथ दिखाना हो तो ± या इसी प्रकार किन्हीं दोको साथ रखा जा सकता है। उदाहरणार्थ

साँस्	व स±व
सीख्	व स–व
फँस्	व स–व
रस्	व सव

पीछे 'नाम्के' चित्रमें 'गह्वर+शीर्ष+गह्वर'का स्वरूप देख चुके हैं। ऊपरके

उदाहरणोंके देखनेसे यह स्पष्ट हो जायगा कि हर अक्षरमें यह आवश्यक नहीं है कि एक ध्वनि गह्वर रूपमें शीर्षके पूर्व और एक बादमें आये। केवल शीर्षसे भी अक्षर बन सकता है, जैसे 'आ'। इसी प्रकार केवल **पूर्वगह्वर** और **शीर्ष** (जा, पा, गा) या **शीर्ष** और **पश्च** या **परगह्वर** (आज्, आग्, ईट्)से भी अक्षरका निर्माण हो सकता है। साथ ही **पूर्वगह्वर** (क्या, श्री) या **पश्चगह्वर** (अस्त्र, अस्तमें) एकसे अधिक ध्वनियाँ भी हो सकती हैं। जैसा कि पीछे भी कहा जा चुका है अक्षरमें आक्षरिक या शीर्ष ध्वनिके अतिरिक्त अन्य जो ध्वनियाँ रहती हैं उन्हें **अक्षरांग या गह्वरध्वनि** कहते हैं। जैसे नाम् में न् म्। शीर्षके पूर्व आनेवाली ध्वनि या ध्वनियाँ '**पूर्वगह्वर**', '**पूर्व अक्षरांग** या '**पूर्वांग**' कहलाती हैं जैसे 'न्', और बादकी **पश्चगह्वर, परगह्वर, पर-अक्षरांग** या '**परांग**' जैसे म्। भाषा-विज्ञानके विद्वान् सबसे छोटा अक्षर (जैसा कि ऊपर देख चुके हैं) एक स्वरका (जैसे आ) मानते हैं। किन्तु प्रस्तुत पंक्तियोंके लेखकका विचार है कि भाषा-विज्ञानके विद्वानोंका ऐसा मत बेचारे व्यंजनके प्रति अन्याय है। यह बात सही है कि भाषामें प्रायः अकेला व्यंजन 'अक्षर'का निर्माण नहीं कर पाता, किन्तु यह बात भी उतनी ही सही है कि कभी-कभी एक अकेला व्यंजन भी विशेष स्थिति-में शब्दका रूप ले लेता है। 'रामको एक ही दिनमें 'क्' लिखना आ गया'; 'लाख कोशिश करनेपर भी मुझे 'ळ्' कहना नहीं आया'; 'सिन्धी लोग हिन्दी शब्दोंके 'ड्' को 'र्' कहते हैं' तथा 'श्' मागधीकी विशेषता है' आदिमें क्, ळ्, ड्, र्, श् निरर्थक नहीं हैं, उन्हें वैज्ञानिक दृष्टिसे शब्द ही कहा जायगा, जैसे कि 'आ' एक शब्द था; और हर शब्दमें कमसे कम एक अक्षर तो होता ही है। निष्कर्षतःयह मानना अन्यथा न होगा कि उपर्युक्त स्थितियोंमें क्, ळ, ड् आदि अक्षर हैं और इस आधार-पर अक्षरका स्वरूप 'व' (अर्थात् केवल व्यंजन) भी माना जाना चाहिए। दूसरे शब्दोंमें मात्र एक व्यंजनका भी अक्षर माना जा सकता है, इस प्रसंगमें इतना और जोड़ देना आवश्यक है कि उपर्युक्त स्थिति भाषाकी प्रकृत या सामान्य स्थिति न मानी जाकर असामान्य स्थिति मानी जानी चाहिए। ऊपर अक्षरमें 'गह्वर' और 'शीर्ष'का उल्लेख किया जा चुका है। किन्तु यहाँ हम देखते हैं कि एक स्वर या व्यंजनका भी अक्षर हो सकता है। स्पष्ट ही इस प्रकारकी स्थितिमें केवल एक ध्वनि होनेसे 'गह्वर'का प्रश्न नहीं उठाया जा सकता। ऐसी ध्वनि शीर्ष है। अक्षरका स्वरूप हर भाषामें एक नहीं होता है। ऊपर हिन्दीके उदाहरण दिये जा चुके हैं। स्लाव भाषाओंमें अक्षर अधिकांशतः स्वरान्त (अर्थात् '–स')होते हैं। जर्मनिक भाषाओंमें स, स व, व स, व स व स्वरूप-वाले अक्षर अपेक्षया अधिक प्रयुक्त होते हैं।

अक्षर-विषयक विभिन्न सिद्धान्त——१९वीं सदीके आरम्भसे ही अक्षरके सम्बन्धमें अनेक प्रकारके सिद्धान्त विद्वानों द्वारा प्रस्तुत किये जाते रहे हैं। यहाँ उनमें कुछ प्रमुख लिये जा रहे हैं। (क) सबसे सरल और स्पष्ट सिद्धान्त यह रहा है कि किसी शब्दमें जितने स्वर होंगे, उतने ही अक्षर भी होंगे, हिन्दी आदि बहुत-सी भाषाओंमें सामान्य दृष्टिसे यह ठीक है, किन्तु गम्भीरतासे विचार करनेपर यह खरा नहीं उतरता। स्वर सर्वदा शीर्ष ही न होकर कभी-कभी गह्वर भी होते हैं। अँग्रेजी संयुक्त स्वर ai और au में प्रस्तुत सिद्धांतके अनुसार दो अक्षर होंगे क्योंकि दो स्वर हैं, किन्तु वस्तुतः इन दोनोंमें केवल प्रथम a आक्षरिक है i और u, अनाक्षरिक (nonsyllabic)या व्यंजनात्मक (consonantal) हैं। इस प्रकार दोनोंमें एक-एक अक्षर है। संसारकी कुछ भाषाओंमें तो कुछ ऐसे भी शब्द हैं जिनमें एक भी स्वर नहीं है। प्रस्तुत सिद्धान्तको मान लेनेपर ऐसे शब्द अक्षरशून्य होंगे, किन्तु

ऐसा होना असम्भव है। अफ्रीकाकी इवो भाषाका ङग्‌ङग्‌ङ (= पार्सल) शब्द स्वर-शून्य है, किन्तु उसे प्रस्तुत सिद्धान्तको मानकर अक्षर-शून्य नहीं कहा जा सकता, क्योंकि विना अक्षरके शब्द नहीं होते। चेक भाषामें तो ऐसा (स्वर-शून्य) एक पूरा वाक्य है। रूमानियनमें भी दो-एक शब्द इस प्रकारके हैं। इस तरह अक्षरके सम्बन्धमें यह सिद्धान्त सामान्यतः व्यावहारिक होते हुए भी तात्त्विक दृष्टिसे ठीक नहीं कहा जा सकता। (ख) अक्षरके संदर्भमें स्टेट्सन और उनके हड्‌गिन्ज़ आदि सहयोगियोंका नाम बड़े आदरसे लिया जाता है। स्टेट्सनने अनेक यन्त्रोंके द्वारा इस समस्याका बड़ी गहराईसे अध्ययन किया और वे इस निष्कर्षपर पहुँचे कि (motor phonetics १९५१) अक्षर एक **गत्यात्मक इकाई** (motor unit) है। इसका आशय यह है कि मूलतः अक्षर एक गति है जो फेफड़ोंसे निकलनेवाली वायुसे सम्बद्ध है। फेफड़ेके पासकी मांसपेशियोंके संकोचनसे उत्पन्न छोटे-छोटे वायु-प्रवाह या श्वासस्पंद ही इस गतिके आधार हैं। इस प्रकार अक्षर हवाके उस एक झटके या झोंकेसे उत्पन्न ध्वनि-समूह या ध्वनि-इकाई है जो वक्षकी मांसपेशियोंके संकोचनसे फेफड़ेसे बाहर निकलती है। इसी कारण इसे एक श्वासस्पंदसे उद्‌भूत कहा जाता है। इस रूपमें अक्षर-निर्माणकी तीन सीढ़ियाँ हैं, प्रारम्भ; ऊर्ध्वता, अंत। पूर्वगह्वर, शीर्ष और परगह्वर भी यही हैं। रोमन याकबसन, हेफनर तथा हैले आदि अनेक आधुनिक विद्वान् स्टेट्सनके मतसे सहमत हैं। इसका अर्थ यह भी है कि अक्षरका कोई पूर्ण या शुद्ध ध्वन्यात्मक रूप सर्वमान्य नहीं हो सकता। तत्त्वतः बोलनेवालेके उच्चारणपर ही यह निर्भर करता है। (ग) पी० मैन्ज़रेथ नामक एक जर्मन विद्वान्‌ने फेफड़ेसे निकलनेवाली हवाके झोंकेके साथ स्वरतंत्रियोंका अध्ययन एक्सरे फोटोग्राफीके सहारे करना चाहा, किन्तु उसे सफलता नहीं मिली। अपनी खोजोंके परिणामस्वरूप उसने स्टेट्सनके उपर्युक्त मतको अमान्य ठहराया और अक्षरके सम्बन्धमें एक नया मत सामने रखा। उसका कहना था कि नीचेका जबड़ा हर अक्षरमें एक बार हिलता है। अर्थात् निचले जबड़ेके हिलनेपर अक्षर आधारित है। १९३६ ई०में एक अधिवेशनमें उसने इस सम्बन्धमें अपना लेख पढ़ा। लेखकी समाप्तिपर एक भाषाशास्त्री मुँहमें पाइप दबाये उठा और उसी तरह पाइप दबाये कुछ देरतक बोलता रहा। अन्तमें उसने कहा कि पाइप दबाये रहनेके कारण मेरा निचला जबड़ा हिला नहीं है, जिसका मैन्ज़रेथ साहबके अनुसार आशय यह है कि मैंने एक भी अक्षर अर्थात् एक भी शब्द नहीं कहा है। इस प्रकार यह सिद्धान्त भी मान्य नहीं हो सका। (घ) जैसा कि आगे हम देखेंगे दो अक्षरोंको सर्वदा स्पष्टतः अलग कर पाना बहुत कठिन है। अंग्रेज़ी शब्द कमिङ (coming) में दो अक्षर हैं, किन्तु पहलेकी कहाँ समाप्ति होती है और दूसरा कहाँ प्रारम्भ होता है, यह बतलाना कठिन है। 'म' ध्वनि पहलेका पर-गह्वर है और दूसरेका पूर्वगह्वर। हिन्दी 'पथिक्' (सामान्य उच्चारणमें) में भी यही समस्या है। पहले प और उसके साथ 'थ्'का थोड़ा-सा पूर्व भाग है, फिर 'थ्'का शेष भाग और इक है। 'थ्' दोनोंमें है। बेलकी प्रयोगशालामें तथा अन्यत्र भी यंत्रके आधारपर अध्ययन करनेवाले ध्वनिशास्त्रियोंने इस समस्यापर विचार और कार्य किया किन्तु किसी भी प्रकार वे ऐसी स्थितियोंमें अक्षरोंको बिल्कुल अलग न कर सके और इसी कारण उन्होंने मान लिया कि अक्षर वास्तविकता नहीं है। वह भाषा-विज्ञानविदोंकी कल्पना मात्र है। येस्पर्सनने इसके उत्तरमें बहुत सुन्दर कहा था कि यह तो वैसे ही है जैसे कोई दो सटी हुई पहाड़ियोंका अस्तित्व केवल इस आधारपर अस्वीकार कर दे कि दोनोंके बीचकी घाटी ऐसी है कि यह बतलाना असम्भव-सा है कि उस घाटीका कितना भाग पहली पहाड़ीका है और

कितना दूसरीका। सचमुच ही अलगानेकी कठिनाईके कारण अक्षरका अस्तित्व ही अस्वीकार कर देना बड़ा विचित्र है। (ङ) ग्रैमण्ट और फूशे आदिका मत है कि अक्षरका रूप शुद्ध शारीरिक है और उसका सम्बन्ध ध्वनि-यन्त्र (larynx) की मांसपेशियोंसे है। उनकी दृढ़ताकी कमी और वेशीपर ही अक्षरका उतार-चढ़ाव निर्भर करता है। इस मतकी असान्यता इसीसे स्पष्ट है कि अब विद्वान् इसका उल्लेख तक नहीं करते। (च) फ्रेंच विद्वान् सास्यूरने अक्षरका सम्बन्ध मुँहके खुलने और बन्द होनेसे माना है। इसके लिए उन्होंने ध्वनियोंके अधिक या कम खुलनेके आधारपर छः वर्ग भी बनाये हैं। कहना न होगा कि इस मतका भी अब मात्र ऐतिहासिक महत्त्व है, और यह किसीको मान्य नहीं है। (छ) श्रोताकी दृष्टिसे यही मान्यता अधिक मान्य है कि किसी शब्दमें जितनी ध्वनियाँ अधिक मुखर (sonorous) या प्रमुख होती हैं उतने ही अक्षर होते हैं। इन्हीं मुखर ध्वनियोंको शीर्ष या शिखर कहते हैं और अपेक्षया अमुखर ध्वनियोंको गह्वर या घाटी। मुख्य ध्वनिकी यह मुखरता कई बातोंपर निर्भर करती है। उपर्युक्त सारे सिद्धांतोंमें श्रवणीयताकी दृष्टिसे अन्तिम और शारीरिक दृष्टिसे स्टेट्सनका सिद्धांत मान्य कहे जा सकते हैं।

अक्षर-विभाजन—इस बातको प्रायः विद्वानोंने स्पष्ट शब्दोंमें स्वीकार किया है, कि मुखरता आदिके आधारपर यह बतला देना कि अमुक शब्दमें इतने अक्षर हैं, अपेक्षाकृत बहुत सरल, किन्तु दूसरी ओर शब्दका अलग-अलग अक्षरोंके रूपमें विभाजन करना कभी-कभी असंभव-सा है। यंत्रोंकी सहायतासे भी इसमें सफलता नहीं मिली है। पीछे कहा जा चुका है कि इसी कठिनाईके कारण यंत्रशास्त्रियोंने अक्षरकी सत्तापर न केवल प्रश्नवाचक चिन्ह लगाया, अपितु उसे मात्र कल्पना भी कह डाला। इस संभाव्यता और असंभाव्यताके आधारपर सामग्री दो प्रकारकी हो सकती है। (क) जिसे सरलतासे स्पष्ट रूपमें अक्षरोंमें विभाजित किया जा सके। (ख) जिसे विभाजित करना सम्भव न हो। अधिकांश सामग्रीका अक्षर-विभाजन सरलतासे हो सकता है। रानी, भालू, आशा, जैसे उदाहरणोंमें 'आ'के बाद विभाजन होगा, जो उच्चारणसे स्पष्ट है। यदि एक अक्षरका शीर्ष दूसरेके निकटस्थ हो, तो इसी प्रकार सरलतासे विभाजन हो जाता है। दो शब्द मिले हों तो भी सरलता से विभाजन सम्भव है जैसे सीतापति (प के पूर्व) रामराज्य (रा के पूर्व)। दो अक्षरोंके बीचमें यदि संयुक्त व्यंजन या द्वित्त-व्यंजन हो तब भी प्रायः विभाजनमें कठिनाई नहीं होती। संयुक्त या द्वित्त व्यंजनके बीचसे विभाजन कर देते हैं। जैसे पक्का, कच्चा, उल्लू (द्वित्त), भक्ति, चंचल, अंकुर, अंधर (संयुक्त; इनमें संयुक्त एकवर्गीय भी है जैसे अंकुर, अम्बर और भिन्नवर्गीय भी, जैसे चंचल) आदिमें। यहाँ उदाहरण हिन्दीसे लिये गये हैं। हर भाषाके अध्ययनके आधारपर इसी प्रकार उसके नियम निर्धारित किये जा सकते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि हर भाषाके अक्षर-विभाजनके नियम एक-से हों। दूसरी ओर भाषामें कुछ सामग्री ऐसी भी मिलती है जहाँ अक्षर-विभाजन असंभव हो जाता है। प्रायः ऐसी स्थिति दो रूपोंमें आती है। कभी तो जब एक अक्षरका पर-गह्वर (coda) दूसरे का पूर्व-गह्वर (onset) बन जाता है। अंग्रेज़ीका 'कमिङ' (coming) ऐसा ही शब्द है। इसका पहला अक्षर क और म् का पूर्व भाग है और दूसरा म् का उत्तर भाग तथा "इङ"। इस प्रकार 'म्' दोनोंमें है। इस प्रकारकी ध्वनियाँ जो दो अक्षरोंमें आवें **अक्षर-मध्यग ध्वनि** (interlude) कही जाती हैं। कुछ लोग इस शब्दका उच्चारण 'कमिङ्ग' या 'कम्-इङ्ग' रूपमें करके अक्षरका स्पष्ट विभाजन कर सकते हैं किन्तु ऐसा उच्चारण अंग्रेजीका स्वा

णाविक उच्चारण नहीं है। हिन्दी 'पथिक' शब्द भी इसी प्रकार का है। इसका प्रकृत उच्चारण न तो 'प--थिक' है और न 'पथ्-इक', अपितु ऐसा है जिसमें 'थ्' पहले अक्षरका पर-गह्वर और दूसरेका पूर्व-गह्वर है। इस प्रकारकी दूसरी स्थिति तब आती है जब दो अक्षरोंके बीच ऐसा संयुक्त व्यंजन आ जाता है जिसके बीचसे विभाजन करनसे अर्थ बदल जाता है। उदाहरणार्थ अँग्रेज़ीमें नाइट-रेट (night-rate) और नाइट्रेट (nitrate) दो शब्द हैं। पहलेमें विभाजन ट-र के बीचमें सम्भव है, किन्तु दूसरेमें यदि इस प्रकार विभाजन किया गया तो इसका अर्थ दूसरा न रहकर पहला हो जायगा। ऐसी स्थितिमें 'ट-र' उच्चारण न करके 'ट्र' उच्चारण किया जायगा। कहना होगा कि अक्षर-मध्यग ध्वनि प्रथम अक्षरके लिए पर-गह्वर और दूसरेके लिए पूर्व-गह्वर होती है। रचनाकी दृष्टिसे ऐसी ध्वनि या ऐसा ध्वनि-समूह दोनों अक्षरोंका अंग है। भारतके प्राचीन भाषा-शास्त्रियोंने भी अक्षर-विभाजनपर विचार किया है और संस्कृतके शब्दोंपर विचार करते हुए इसके लिए स्पष्ट नियमोंका निर्धारण किया है। ऋक्प्रातिशाख्य, तैत्तिरीय प्रातिशाख्य, अथर्व प्रातिशाख्य तथा वाजसनेयी प्रातिशाख्य इस दृष्टिसे विशेषरूपसे दर्शनीय हैं। यों यह स्पष्ट है कि आजकी भाँति ही उस कालमें भी इस सम्बन्धमें विद्वानोंमें पूर्ण मतैक्य नहीं था। उदाहरणार्थ स्वर-मध्यग व्यंजन-गुच्छको ऋक्प्रातिशाख्य-के अनुसार या तो बीचसे विभाजित किया जा सकता है या पूराका पूरा पूर्ववर्ती स्वर-के साथ रखा जा सकता है। किन्तु तैत्तिरीय कुछ ऐसी ही स्थितिमें गुच्छको केवल परवर्ती स्वरके साथ रखनेके पक्षमें है।

शीर्ष—अक्षर-रचनामें शीर्ष या शिखर(चोटी, peak, crest या nucleus) का बड़ा महत्त्व है। यही अक्षरका मेरुदण्ड या मूल आधार है। श्रवणीयताकी दृष्टिसे, जैसा कि कहा जा चुका है, शीर्ष ध्वनि आसपास-की गह्वर ध्वनियोंसे अधिक स्पष्ट तथा प्रमुख होती है। 'राम्'का आ, 'कील्'की 'ई' तथा 'छोर्'का 'ओ' स्पष्ट ही शीर्ष है और आसपासकी गह्वर ध्वनियोंसे प्रमुख, स्पष्ट या मुखर है। किसी ध्वनिकी मुखरता दो बातोंपर आधारित होती है: (क) **ध्वनिकी अपनी आँतरिक मुखरता**—हर ध्वनिकी अपनी आन्तरिक मुखरता होती है। प्रकृत्या ध्वनियाँ कम या अधिक मुखर होती हैं। इस आधारपर ध्वनियोंके प्रमुखतः ८वर्ग बनाये जा सकते हैं: (१) प् त् ट् क् आदि अघोष स्पर्श तथा फ़् स् ह् आदि अघोष संघर्षी। (२) ब, द, ड, ग, व, ज़, ह, आदि (प्रथमके घोष रूप) (३) म् न्, ङ, ण् आदि नासिक्य व्यंजन तथा पार्श्विक 'ल्' एवं 'ळ्'। (४) लुंठित 'र'। (५) उ, इ। (६) ओ ए। (७) ऑ, ऐ। (८) आ। इनमें प्रथम वर्ग सबसे कम मुखर है, और बादके वर्ग क्रम-से अधिक मुखर हैं। अन्तिम 'आ' मुखरतम है। (इनमें 'श्' आदि कुछ ध्वनियोंकी मुखरताके विषयमें मत-विभिन्नता भी है) (ख) **ध्वनियोंको मुखर बनानेवाले अन्य बाह्य तत्त्व**—जैसे बलाघात (श्वास-बल तथा उच्चारण-दृढ़ता), सुर या मात्रा आदि। इनमें किसी एक या एकसे अधिकके योगसे ध्वनि अपेक्षाकृत अधिक मुखर हो जाती है। ब्लूमफील्ड, ग्रैफ़, हॉकेट, हेफ़नर आदि प्रायः सभी भाषा-विज्ञानविदोंने शीर्षके लिए मुखरताको आधार माना है। डॉ० सिद्धेश्वर वर्मा केवल मुखरताको आधार माननेके पक्ष-में नहीं हैं। वे प्रमुखता (prominence) को महत्त्वपूर्ण मानते हैं। उनके अनुसार प्रमुखतामें मुखरता, श्वास-बल और मात्रा, ये तीन बातें हैं। कहना न होगा कि यहाँ अन्तर केवल नामका है। वर्माजीका 'मुखरता'-से आशय केवल 'ध्वनिकी आन्तरिक मुखरता' है, जब कि ऊपर मुखरताके दो रूप करके मात्रा और श्वास-बलको दूसरेमें समाहित कर लिया गया है। इस प्रकार आन्तरिक और बाह्य कारणोंसे उत्पन्न मुखरता

अगहानी (aghani)—मद्रासमें प्रयुक्त, **पश्तो** (दे०) का एक विकृत रूप। यह नाम अफ़ग़ानीका विकृत रूप है।

अगुअकाटेक (aguakatek)—(१) मध्य अमेरिकाकी **मम** (दे०) भाषाकी एक बोली। (२) मध्य अमेरिकाके **मिक्से-जोके** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त भाषा।

अगुअरुना (aguaruna)—दक्षिणी अमेरिकाके **क्सिबरो** (दे०) परिवारकी एक भाषा।

अगुल—काकेशस परिवार (दे०) की काकेशसमें बोली जानेवाली एक भाषा।

अगोरिआ (agoria)—अग-रिआ (दे०) का एक अन्य नाम।

अग्नीयन (agnean)—**तोखारी** (दे०) का एक अन्य नाम।

अग्र—(१) आगेका (२) जीभ या किसी अन्य उच्चारण-अवयवके अग्रभागसे उच्चरित, जैसे अग्रसर।

अग्रदंत्य—एक प्रकारकी **दंत्य** (दे०) ध्वनि।

अग्रश्रुति (on glide)-(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें श्रुति** उपशीर्षक।

अग्रस्वर (front Vowel)—ऐसा स्वर, जिसके उच्चारणमें जिह्वाका अग्रभाग ऊपर उठता है, जैसे इ, ई, ए आदि। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण** तथा **मानस्वर** उपशीर्षक।

अग्रित—(दे०) **अग्रीकृत**।

अग्रीकृत (fronted)—निश्चित स्थानसे जीभ को आगे करके किया गया (किसी ध्वनिका) उच्चारण। इसे **अग्रित** या **अग्रित उच्चारण** भी कहते हैं।

अग्लोप—अ, इ, उ, ऋ, ऌका लोप।

अघर—'बघेली'की उप-बोली **जुड़ार** (दे०) का बाँदा ज़िलेके मध्यभागमें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप।

अघोष (voiceless, devoiced)—स्वरतंत्रियोंके आधारपर किया गया, ध्वनियोंका एक भेद। ऐसी ध्वनियाँ, जिनके उच्चारणके समय स्वरतंत्रियाँ (दे० **स्वर-तंत्री**) एक दूसरेसे दूर रहती हैं, अघोष कहलाती हैं। इनके उच्चारणमें, स्वर- तंत्रियोंके एक दूसरेसे दूर रहनेके कारण, भीतरसे आती हुई हवा या निःश्वास घर्षण नहीं कर पाती अतः स्वरतंत्रियोंमें कंपन नहीं होता। क वर्ग, प वर्ग आदि पाँचों वर्गोंके प्रथम दो व्यंजन (अर्थात् क, ख, च, छ, आदि), तथा स, श, ष, क विसर्ग आदि अघोष हैं। स्वर प्रायः अघोष नहीं होते, हाँ कभी-कभी अवश्य हो जाते हैं और तब उन्हें अघोष स्वर या जपित स्वर कहते हैं। अघोष स्वरोंको सामान्य स्वरोंसे अलग दिखलानेके लिए उनके नीचे वृत्त चिह्न (इ) रखते हैं। अघोष ध्वनियोंके लिए दे० **शारीरिक ध्वनिविज्ञानमें स्वर-यंत्र, स्वर-यंत्र-मुख, स्वरतंत्री** उपशीर्षक; तथा **अघोष व्यंजन** एवं **अघोष स्वर**।

अघोष व्यंजन (voiceless consonant)—वे व्यंजन जिनके उच्चारणमें स्वरतंत्रियोंमें कंपन नहीं होता। दे० **अघोष** तथा **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें व्यंजनोंका वर्गीकरण**।

अघोष स्वर (voiceless vowel)—ऐसे स्वर, जिनके उच्चारणमें स्वरतंत्रियोंमें कंपन नहीं होता। (दे०) **अघोष**। अघोष स्वरोंके विशेष विवरणके लिए देखिए **स्वरोंका वर्गीकरण**। सामान्य स्वरोंके नीचे वृत्तचिह्न (ई. उ.) रखकर अघोष स्वरोंको प्रकट करते हैं। अघोष स्वरको जपित या फुसफुसाहट वाले स्वर भी कहते हैं।

अघोषीकरण (devocalization)—ध्वनि परिवर्तनका एक रूप, या उसकी एक दिशा। दे० 'ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ'। कभी-कभी ऐसा होता है कि शब्दमें कोई घोष (दे०) ध्वनि अघोष (दे०) हो जाती है। भाषाविज्ञानमें यह परिवर्तन अघोषीकरण कहलाता है। जैसे फ़ारसी 'खर्ज'से हिन्दी 'खर्च'। इसमें 'ज्' ध्वनि जो घोष ध्वनि थी, बदलकर अघोष ध्वनि 'च्' हो गयी है। संस्कृतकी तुलनामें पैशाची प्राकृतमें अघोषीकरणके उदाहरण बहुत अधिक मिलते हैं। जैसे 'नगर'से 'नकर', 'गगन'से 'गकन' तथा

'मेघ'से 'मेख' आदि। अघोषीकरणके लिए **अघोषीभवन** कदाचित् अधिक अच्छा नाम हो सकता है। अघोषीकरणका उलटा **घोषीकरण** (दे०) होता है।

अघोषीभवन––अघोषीकरण (दे०) का एक अन्य नाम।

अचल तान––सुर (दे०) का एक भेद।

अचल व्यंजन (static consonant)––संघर्षी व्यंजनोंकेलिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अचल सुर––सुर (दे०) का एक भेद।

अचिस (achis)––मध्य अमरिकाकी **मय** (दे०) भाषाकी एक बोली।

अच्––पाणिनिकी अष्टाध्यायीमें प्रयुक्त एक प्रत्याहार। इसमें, अ, इ, उ, ऋ, ऌ, ए, ओ, ऐ, औ, अर्थात् सभी स्वर आते हैं।

अच्संधि (=स्वरसंधि) **अज्भक्ति** (=स्वर भक्ति) या **अजन्त** (=स्वरान्त) रूपमें इस शब्दका प्रयोग संस्कृत व्याकरणमें अनेक रूपोंमें होता है। (दे०) **शिवसूत्र**।

अच्युत्––लट्लकार (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अच्-संधि––(दे०) संधि।

अजंत––'अच्+अन्तवाले' अर्थात् स्वरान्त(शब्द आदि) (दे०) अच्।

अजटेक (aztek)––**नहुअतल** (दे०) उपवर्गका एक अन्य नाम।

अजटेक लिपि––अज़टेक भाषाओंके लेखनमें प्रयुक्त एक लिपि। यह पूर्णतः एक चित्रलिपि (दे०) है। सभी चिह्न शुद्ध रूपमें चित्र हैं। इसे **मय लिपि** (दे०) से उत्पन्न माना जाता है।

अजमेरी––मध्य-पूर्वी **राजस्थानी** (दे०)की एक बोली जो अजमेरमें, तथा उसके आसपास बोली जाती है। ग्रियर्सनके भाषासर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलने वालोंकी संख्या लगभग १११,५०० थी।

अजमेरी उपबोली––'राजस्थानी'भाषाकी **मारवाड़ी** (दे०) बोलीकी, अजमेरमें प्रयुक्त एक पूर्वी उप-बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २०७.७०० थी। इसे **अजमेरी मारवाड़ी** भी कहते हैं।

अजमेरी मारवाड़ी––(दे०) **अजमेर उपबोली**।

अज़रबैड्यानी (azerbaidyani)––एक तुर्की बोली।

अजिरी––'राजस्थानी'की **गुजरी** (दे०) बोलीकी, स्वात और हजारामें प्रयुक्त, एक उपबोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २५,६१९ थी। इस संख्यामें 'गुजरी (हजाराकी)'के बोलनेवाले भी सम्मिलित हैं। इसे हजारी अजिरी या अजिरी हजाराकी भी कहते हैं।

अज्ञातकारण ध्वनि-परिवर्तन––एक प्रकारका ध्वनि-परिवर्तन (दे०)

अटकप (atakapa)–टुनिका(दे०) भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमरीकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

अटक बोली––उत्तरी-पश्चिमी लहंदा (दे०) का एक रूप।

अटकम (atakama)––दक्षिणी अमरीकी वर्ग (दे०)का एक विलुप्त भाषा-परिवार। इस परिवारकी प्रमुख भाषा भी इसी नामकी थी।

अटलन––(atalan) दक्षिणी अमरीकी वर्ग (दे०)का एक विलुप्त अमरीकी भाषा-परिवार। इस परिवारमें लगभग ४ भाषाएँ थीं, जिनमें प्रमुख भाषा इसी नामकी थी।

अटलला (atalala)—दक्षिणी अमेरिकामें, विलेल-चुलुपी परिवारकी विलेला(दे०) भाषाकी प्रमुख बोली।

अड्विप्लिइन (adwipliin)––दक्षिणी अमेरिकाकी अलकालुफ़ (दे०) परिवारकी एक भाषा। यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है।

अड्वीचंची (adwichanchi)––१९२१ की बम्बई जनगणनाके अनुसार धारवाड़के बंजारोंमें प्रयुक्त कन्नड़ (दे०)का एक विकृत रूप।

अतिप्रयत्न––ध्वनियों (विशेषतः स्वरों)के उच्चारणमें आवश्यकतासे अधिक शक्ति लगाकर किया गया प्रयत्न (दे०)। यह शब्द प्रा-

-चीन भारतीय साहित्यमें मिलता है।

अतिशुद्धि दोष (over correction)—बोलने या लिखनेमें सीमासे अधिक सतर्क होनेके कारण हुई अशुद्धि या ग़लती।

अतीत—लिट् लकार (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अत्यंत तिरस्कृत वाच्य ध्वनि—एक प्रकारकी ध्वनि (दे०)।

अत्युच्चनीच—अनुदात्त (दे०) सुरका एक अन्य नाम।

अत्युपसंहृत—संवृत रूपमें (ओष्ठों और जबड़ोंको समीप लाकर) उच्चरित। इसका प्रयोग 'अ'के संवृत उच्चारणके लिए संस्कृत व्याकरणमें हुआ है।

अत्सि (atsi)—स्त्रि (दे०)का एक और नाम, इसे असि भी कहा जाता है।

अथपस्कन (athapascan)—उत्तरी अमेरिकाके ना-डेने (दे०) भाषापरिवारका एक वर्ग या उपपरिवार। इस वर्गके अंतर्गत तीन उपवर्ग है : टिन्नेह (दे०), पैसिफ़िक (दे०) तथा दक्षिणी अथपस्कन (दे०)। कुछ लोगोंने अथपस्कनको स्वतंत्र परिवार भी माना है, तथा इसके ३ वर्गोंमें देने (उत्तरी कनाडा), हूपामतोले (कैलिफ़ोर्निया) तथा अपाचे नवजो (संयुक्तराष्ट्र अमेरिकाका दक्षिणी भाग)का नाम लिया है।

अदर्शन—लोप (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम। अदर्शनं लोपः (पाणिनि)। वर्णस्यादर्शनं लोपः (वाजसनेयी प्रातिशाख्य)। ध्वनि, प्रत्यय, आगम या मूल शब्द, सभीके भी लोपके लिए इसका प्रयोग मिलता है। अंग्रेज़ी elision के लिए अपने यहाँका पुराना शब्द यही है। गौण रूपसे इसके कुछ अन्य अर्थ भी मिलते हैं।

अदादिगण—संस्कृत धातुओंका एक गण (दे०)।

अदिग़े (adyghe)—सरकेसियन और कबार्दी भाषाओंके वर्गका नाम। यह वर्ग काकेशस परिवारका है।

अदिय (adiya)—मलयालम (दे०)के लिए, कुर्गमें प्रयुक्त, एक नाम।

अदोली (adoli)—१८९१ की जनगणनाके अनुसार हिन्दीका बड़ौदामें प्रयुक्त एक रूप। दे० 'हिन्दी'।

अद्कुरि (adkuri)—हल्बी (दे०)का एक रूप।

अदृश्य श्वा (latent shwa)—हिब्रूमें एक प्रकारका श्वा (दे०) जो स्वरके न होनेकी स्थिति व्यक्त करता था।

अद्यतन—पूर्ववर्ती आधी रातसे आगामी आधी राततक (दिनको मिलाकर) २४ घंटेका समय। संस्कृतमें कालोंके नामोंमें जो 'अनद्यतन' शब्द मिलता है उसका अर्थ इसी 'अद्यतन'से इतर है।

अद्यतनी—लुङ् लकार (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अद्रमन (adraman)—१८९१ की जनगणनाके अनुसार, 'पश्तो' (दे०)का बम्बईमें प्रयुक्त एक रूप।

अद्वियोनि—इसका शाब्दिक अर्थ है, 'एक योनिवाला'। अर्थात् वह ध्वनि जो एक प्रयत्नसे उच्चरित हो। समानाक्षर या मूल स्वर (अ, उ आदि) तथा मूल व्यंजनों (क्, ग्, आदि) को अद्वियोनि कहा गया है। संध्यक्षर या संयुक्त स्वर (जैसे औ) तथा संयुक्त व्यंजन (प्त) का यह उलटा है। ऋक्प्रातिशाख्यमें आता है—अपृक्तमेकाक्षरमद्वियोनियत्।

अधिकतावाचक क्रियाविशेषण—(दे०) क्रियाविशेषण।

अधिकपद दोष—वाक्यमें जब आवश्यकतासे अधिक पदोंका प्रयोग किया गया हो तो उसे अधिक पद वाक्य कहते हैं तथा उसमें अधिकपद दोष मानते हैं। कविता आदिमें छंदकी पूर्ति के लिए प्रायः अधिकपदोंका प्रयोग मिलता है।

अधिकपद वाक्य—(दे०) अधिकपद दोष।

अधिकरण कारक—(दे०) कारक।

अधिकरण तत्पुरुष समास—(दे०) समास।

अधिकरण बहुव्रीहि समास—(दे०) समास।

अधिकरणात्मक उपवाक्य (Locative cl-

ause)––ऐसा उपवाक्य या वाक्यांश जो अधिकरणका काम करता हो।

अधिकार सूत्र––ऐसा सूत्र (दे०) जिसका परवर्ती या अन्य सूत्रोंपर अधिकार हो या जो उनपर लागू हो। दूसरे शब्दोंमें किसी विशेष प्रकरणको आरंभ करनेसे पूर्व, उस प्रकरण-विशेषको स्पष्ट करनेवाला जिस प्रथम सूत्रका प्रयोग पाणिनि आदिने किया है और उस प्रकरणमें आये हुए सारे सूत्र जिसके अधिकारमें होते हैं, उसे अधिकारसूत्र कहते हैं। उदाहरणार्थ-अष्टाध्यायीमें स्त्री-प्रत्यय प्रकरणका प्रारंभिक सूत्र 'स्त्रियाम्' (४.१.३)। एक ही बातको बार-बार न कहनेके लिए अधिकारसूत्रकी शैली अपनायी गयी है।

अधिस्पर्श––अपूर्ण रूपसे उच्चरित, उच्चरित ध्वनि या उच्चरित स्पर्शध्वनि।

अधोऽक्षज––लिट् लकार (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अध्याहार––बोलचालमें प्रायः वाक्यके कुछ शब्द छोड़ दिये जाते हैं। जैसे–मैं उसकी एक भी...न मानूंगा। यहाँ 'बात' शब्द छोड़ दिया गया है। इस प्रकारका लोप करना अध्याहार कहलाता है। पूर्ण अध्याहार तब होता है, जब छोड़ा हुआ शब्द उस वाक्यमें पहले न आया हो। ऊपरका उदाहरण इसी श्रेणीका है। अपूर्ण अध्याहार तब होता है, जब छोड़ा हुआ शब्द या उसका रूप वाक्यमें पहले आ चुका हो। ऐसा पुनरुक्तिसे बचनेके लिए किया जाता है। उदाहरणार्थ-तुम उतने ही अच्छे हो जितना––तुम्हारा बाप––। यहाँ 'अच्छा' और 'है' दोनों छोड़ दिये गये हैं।

अध्याहारिणी लिपि––बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

अनंतर्भावी पुरुषवाचक सर्वनाम (Exclusive personal pronoun)–कुछ भाषाओंमें प्राप्त बहुवचन पुरुषवाचक सर्वनाम जिनका अर्थ 'उन लोगोंको छोड़' कर 'तुम लोग', 'हम लोगोंको छोड़कर तुम लोग' या 'तुम लोगोंको छोड़कर वे लोग' आदि होता है। इनमें कुछके अंतर्भूत न होनेका भाव निहित रहता है। इन भाषाओंमें अंतर्भावी पुरुषवाचक सर्वनाम (दे०), इसके ठीक उलटा होता है। अनंतर्भावीको असमावेशी भी कहा जाता है।

अनंत्य––(ध्वनि या शब्द) जो अन्तमें न हो। उदाहरणार्थ 'राम'में 'म्' अनंत्य व्यंजन है।

अन (an)––अनु (दे०) का एक अन्य नाम।

अनच्क––वह वर्ण जिसमें कोई स्वर (अच्) न हो। जैसे, क्, च्।

अनत––(उव्वटके अनुसार) अमूर्द्धन्यीकृत (ध्वनि)।

अनद्यतन––जो आज न हुआ हो या न होनेवाला हो। अद्यतन (दे०) का उलटा।

अनद्यतन भविष्य––लुट् लकार (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम। (दे०) अनद्यतन तथा अद्यतन।

अनद्यतन भूत––लङ् लकार (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम। (दे०) अनद्यतन तथा अद्यतन।

अनद्रतलिपि––बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

अननुनासिक––ऐसी ध्वनि जो अनुनासिक (दे०) न हो।

अननुभूत शब्द––(non-experiential-word)––ऐसा शब्द जो किसी ऐसी वस्तु, विचार या भावको व्यक्त करे, जिसका श्रोता या वक्ताको प्रत्यक्ष अनुभव या ज्ञान न हो। (दे०) अनुभूत शब्द।

अनभिधान––ऐसे शब्द जो व्याकरणसम्मत तो हों, किंतु अप्रचलित होनेके कारण अपने अर्थकी अभिव्यक्ति न कर सकें। भाषामें ऐसे शब्दोंका प्रयोग दोष माना गया है।

अनभ्यासि––जिसमें अभ्यास अर्थात् ध्वनि या ध्वनियोंकी आवृत्ति न हो। इसका प्रयोग ऐसी संस्कृत धातुओंके लिए हुआ है, जिनमें ध्वनि या ध्वनियोंकी आवृत्ति नहीं होती।

अनर्गल शब्द––एक प्रकारके शब्द (दे०)।

अनवरुद्ध––सप्रवाह (दे०) की एक अन्य

नाम।'

अनांबे—(anambe) टुपी-गवरनी (दे०) परिवारकी, दक्षिणी अमेरिकामें प्रयुक्त एक भाषा।

अनाओला (anaola)—अनावला (दे०)-का एक दूसरा नाम।

अनाक्षरिक (nonsyllabic, asyllabic)—ऐसी (स्वर या व्यंजन) ध्वनि, जो अक्षरमें शीर्षका कार्य न कर सके या न करे, अर्थात् जो अस्वर हो। (दे०) अक्षर तथा ध्वनियोंके वर्गीकरणमें स्वर और व्यंजन उपशीर्षक।

अनागमक—(शब्द या रूप आदि) जिसमें किसी ध्वनि या आगम (augment) आदिका आगम न हो, या न हुआ हो। यह शब्द आगमक (दे०) का विरोधी है।

अनातोलिअन—यूराल-अल्ताई (दे०) परिवारकी दक्षिणी तुर्कीमें प्रयुक्त एक बोली।

अनादरसूचक मध्यम पुरुष सर्वनाम—(दे०) सर्वनाम।

अनादि—जो आदिमें न हो। जैसे-'अनादि व्यंजन'।

अनानुपूर्व्य संधि—(दे०) संधि।

अनामी—चीनी परिवार (दे०)के 'ताई' वर्गकी फ्रेंच इंडोचीन (अनाम) तथा बर्मामें प्रयुक्त एक भाषा। इसकी प्रमुख बोली टोंकिनी है। यह ताई वर्गकी एक मिश्रित भाषा है। पहले इसे आस्ट्रिक परिवारके मोनख्मेर वर्गका समझा जाता था।

अनामी-मुआंग—(annamese muong) आस्ट्रिक परिवारकी अनामी (या वियतनामी) तथा मुआंग, इन दो भाषाओंके वर्गके लिए प्रयुक्त नाम।

अनार्य—भीली (दे०) की रीवाकंथामें प्रयुक्त, एक उपबोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४३,५०० थी।

अनार्ष—(१) जो ऋषि-सम्मत न हो या जिसका प्रयोग ऋषियोंने न किया हो या जो ऋषि-प्रणीत नियमोंके प्रतिकूल हो। (२) अवैदिक। (३) अव्याकरणसम्मत। वेद-विरुद्ध वाक्य।

अनार्ष प्रयोग (barbarism)–अशुद्ध, अवैदिक या अपरंपरागत प्रयोग। (दे०) अनार्ष।

अनाल—(anal)—मणिपुरमें प्रयुक्त चीनी परिवार (दे०)की एक प्राचीन 'कुकी' भाषा। १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३९६५ थी।

अनावला (anawla)—वालसर (सूरत)में अनाओला लोगों द्वारा प्रयुक्त (गुजरातीकी) एक बोली।

अनित्य—वैकल्पिक। ऐसा नियम, जिसे लागू करनेमें विकल्पकी छूट हो।

अनित्य समास—ऐसा समास, जिसका विग्रह करनेके लिए पूर्ववर्ती शब्दमें विभक्ति मात्र जोड़ देना पर्याप्त हो। जैसे-राजपुरुषः (राज्ञः पुरुषः)।

अनियत पुंस्क—ऐसा शब्द जिसके पुंलिंगत्वका निश्चय न हो।

अनियमित (irregular)—ऐसी भाषिक इकाई (वाक्य रूप, शब्द आदि) जो भाषा-विशेषके सामान्य नियमके अनुसार न हो या न कार्य करे। दूसरे शब्दोंमें, ऐसी भाषिक इकाई जो एक, अनेक या सभी दृष्टियोंसे जिस भाषाका वह अंग हो, उसके सामान्य नियमोंकी अवहेलना करे।

अनिश्चयबोधक—(दे०)'अनिश्चय वाचक'से प्रारंभ होनेवाले शीर्षक।

अनिश्चयवाचक क्रियाविशेषण–(दे०) 'क्रिया-विशेषण'।

अनिश्चयवाचक प्रत्यय—एक प्रकारका प्रत्यय (दे०)।

अनिश्चयवाचक सर्वनाम (indefinite pronoun)—ऐसा सर्वनाम (दे०) जो किसी निश्चित वस्तु या व्यक्तिके लिए प्रयुक्त न हुआ हो। जैसे-जो कोई भी चाहे ले जाय।

अनिश्चय सूचक—(दे०) 'अनिश्चयवाचक'से प्रारंभ होनेवाले शीर्षक।

अनिश्चयात्मक उपपद (indefinite article)—ऐसा उपपद (जैसे-अंग्रेजीमें a,

an) जिससे किसीका निश्चयात्मक बोध न हो। (जैसे-a man।)

अनिश्चित परिमाणवाचक विशेषण—(दे०) विशेषण।

अनिश्चित बलाघात—बलाघात (दे०)का एक भेद।

अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण—(दे०) विशेषण।

अनुंग(anung)—नुंग (दे०)का दूसरा नाम।

अनु (Anu)—उत्तरी अराकान (बर्मा)में प्रयुक्त चीनी परिवारकी एक दक्षिणी चिनी भाषा। १९२१ की जनगणनामें इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ७१२ थी।

अनुकरण—ध्वनि या दृश्य आदिका अनुकरण, या उनके अनुकरणके आधारपर शब्द-निर्माण। जैसे-झन-झन, बग-बग।

अनुकरणमूलक शब्द—एक प्रकारके शब्द (दे०)।

अनुकरणमूलकतावाद—भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धांत। इसे अनुकरण-सिद्धांत भी कहते हैं। (दे०) भाषाकी उत्पत्ति।

अनुकरणवाचक क्रियाविशेषण—(दे०) क्रियाविशेषण।

अनुकरण-सिद्धान्त—भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धान्त। (दे०) भाषाकी उत्पत्ति।

अनुकरणात्मक शब्द (१) (onomatopoeic word, onomatopoetic word, mimetic word)—ध्वनि (घड़घड़, फटफटिया) या दृश्य (जगमग, बगबग) आदिके आधारपर बना शब्द(दे०)। (२) किसी अन्य शब्दके अनुकरणके आधारपर बना शब्द। अनुकरणात्मक शब्दको अनुकार शब्द भी कहते हैं।

अनुकार शब्द—अनुकरणात्मक शब्द (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अनुक्रमणी—(दे०) शब्दानुक्रमणी।

अनुज्ञा—(दे०) अर्थ।

अनुत्पादी प्रत्यय (nonproductive suffix)—ऐसा प्रत्यय, जिसकी सहायतासे नया शब्द न बन सके या जिसे यदि शब्दमें जोड़ा भी जाय तो किसी खास नये अर्थका द्योतन न हो। संस्कृतके स्थायी प्रत्यय इसी श्रेणीके हैं।

अनुदात्त—ऐसा स्वर जो 'उदात्त न हो'। (दे०) आघातमें सुर उपशीर्षक। अनुदात्त वैदिक संस्कृतका एक सुर है। ग्रीकमें इस प्रकारका सुर ग्रेव(grave) था, यद्यपि दोनों पूर्णतः समानार्थी नहीं ज्ञात होते। अनुदात्तको तैत्तिरीय प्रातिशाख्य, वाजसनेयी प्रातिशाख्य तथा पाणिनिके अष्टाध्यायी आदिमें 'नीचैरनुदात्तः' रूपमें स्पष्ट किया गया है। अर्थात् यह 'निम्न सुर' या 'नीचा सुर' था। अनुदात्तका प्रयोग कदाचित् एकसे अधिक अर्थोंमें हुआ है। कभी तो इसका अर्थ 'उदात्त नहीं' अर्थात् 'उदात्तसे थोड़ा निम्न' ज्ञात होता है, इस रूपमें यह ग्रीक ग्रेवका समानार्थी है। और कभी यह सुरविहीन (accent less) का समानार्थी है। आपिशल शिक्षामें आता है—'यदा सर्वाङ्गानुसारी प्रयत्नस्तीव्रो भवति, तदा गात्रस्य निग्रहः, कंठबिलस्य चाणुत्वं, स्वरस्य च वायोस्तीव्रगतित्वाद् रौक्ष्यं भवति, तमुदात्तमाचक्षते।' अर्थात् जब शरीरके सर्वांगोंका प्रयत्न तीव्र हो, अंग शिथिल न हों, कंठ संकुचित हो तथा ध्वनि-उत्पादक वायु तीव्र हो तो जो रूक्ष ध्वनि निकलती है, उसकी रूक्षता उदात्त है। इसके विरुद्ध 'यदा तु मन्दः प्रयत्नो भवति, तदा गात्रस्य स्रंसनं कंठबिलस्य महत्त्वं स्वरस्य च वायोर्मन्दगतित्वात् स्निग्धता भवति तमनुदात्तं प्रचक्षते' अर्थात् 'जब प्रयत्न मंद हो, अंग शिथिल हों, कंठ असंकुचित हो तथा वायु मंद हो तो जो स्निग्ध ध्वनि निकलती है, उसकी स्निग्धता अनुदात्त है।' काशिका वृत्तिकारका 'यस्मिन्नुच्चार्यमाणे गात्राणामन्ववसर्गो नाम शिथिलीभवनं भवति, स्वरस्य मृदुता, कंठविवरस्य उरुता च सोऽनुदात्तः' भी प्रायः यही है।

अनुदात्ततर—अनुदात्त (दे०) से भी नीचा सुर। इसे कुछ लोगोंने पूर्णतः निम्न सुर माना है। महाभाष्यकार पतंजलि आदिने

सुरके जो उदात्त, उदात्ततर, अनुदात्त, अनुदात्ततर, स्वरित, स्वरितोदात्त तथा एक श्रुति, सात भेद माने हैं, इनमें अनुदात्ततर निम्नतम कहा गया है। उदात्त या स्वरित सुरके पूर्वका अनुदात्त सुर बहुत निम्न होता है, कुछ लोगोंके अनुसार उसीको अनुदात्ततर कहा गया है। इस अर्थमें पाणिनिने इसे सन्नतर (उदात्त स्वरित परस्य सन्नतरः १.२.४०) संज्ञासे अभिहित किया है।

अनुनादी कक्ष—(resonant chamber) मुख या नासिका-विवर, जो ध्वनियोंको अपने अनुनाद द्वारा ऊँची बना देते हैं।

अनुनादी विवर (resonant cavity)—अनुनादी कक्ष (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अनुनासिक—(१) ऐसी ध्वनि, जिसके उच्चारणमें मुखके साथ-साथ नाकसे भी सहायता लेनी पड़े या हवाका कुछ अंश नाकसे भी निकालना पड़े। पाणिनिने कहा है: मुखनासिकावचनोनुनासिकः। कँ, वँ आदि व्यंजन तथा अँ, आँ, आदि स्वर इसी प्रकारके हैं। (२) ङ्, ञ्, ण्, न्, म् आदिको भी अनुनासिक या नासिक्य व्यंजन कहते हैं। इनके उच्चारणमें स्पर्श तो मुँहमें (ओष्ठ, वर्त्स, तालु, मूर्द्धा या कोमल तालुपर) होता है और सारी हवा केवल नाकसे निकलती है। इस रूपमें इनमें भी नाक और मुँह दोनोंसे सहायता ली जाती है। (३) विशेषणरूपमें भी अनुनासिक शब्दका प्रयोग होता है। उस स्थितिमें इसका अर्थ होता है 'जो नाकसे उच्चरित हो' या 'जिसके उच्चारणमें नाकसे भी सहायता ली जाय'। अनुनासिकको नासिक्य भी कहते हैं। अनुनासिक ध्वनियोंके उच्चारणके लिए (दे०) शारीरिक ध्वनिविज्ञान।

अनुनासिक चिह्न (tilde)—(दे०) टिल्डे।

अनुनासिक व्यंजन—ऐसा व्यंजन जिसका उच्चारण नाककी सहायतासे हो। (दे०) अनुनासिक।

अनुनासिक स्वर—ऐसा स्वर जिसके उच्चारणमें मुँहके साथ-साथ हवाका कुछ अंश नाकसे भी निकले। जैसे अँ, ऊँ आदि। (दे०) अनुनासिक।

अनुनासिकता—किसी ध्वनिका अनुनासिक होना, या नाककी सहायतासे उच्चरित होना।

अनुनासिकीकरण (nazalization)—एक प्रकारका ध्वनि-परिवर्तन। (दे०) ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ। इसमें निरनुनासिक-ध्वनि अनुनासिक हो जाती है। जैसे-सं० 'सर्प'से हिं० 'साँप'में। यहाँ मूल शब्दमें अनुनासिकता नहीं थी पर 'साँप'में है। इसका कारण कुछ लोग द्रविड़ भाषाओंका प्रभाव मानते हैं, पर कुछ लोग इसे अकारण या स्वयंभू मानते हैं। उनका कहना है कि भाषाके स्वाभाविक विकासमें ऐसा हो गया है। यों तो इसका कारण मुख-सुख भी हो सकता है। अनुनासिक ध्वनि ही हमारे लिए स्वाभाविक है अतः आसान भी है और इसीलिए कहीं-कहीं उसका अनजाने विकास हो जाता है। कुछ अन्य उदारण हैं: उष्ट्र = ऊँट; सत्य = साँच; यूक = जूं; कूप = कुआँ; अश्रु = आँसू; श्वास = साँस; भ्रू = भौं। आज भी हिन्दीमें कुछ शब्दोंमें अनुनासिकता आ रही है, यद्यपि लिखनेमें अभी हमने उन्हें स्वीकार नहीं किया है। आम = आँम; राम = राँम; हनूमान = हँनूमाँन; काम = काँम। कहना न होगा कि इन शब्दोंमें यह अकारण नहीं है, अपितु पासकी नासिका-ध्वनिके प्रभावस्वरूप है। जिनके स्पष्ट कारणका पता नहीं चलता उन्हें अकारण अनुनासिकता कहते हैं। अनुनासिकीकरणके लिए अनुनासिकीभवन अच्छा नाम हो सकता है।

अनुनासिकीभवन—अनुनासिकीकरण (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अनुपयोगी रूपोंके विलोपके नियम—बौद्धिक-नियम (दे०) का एक भेद।

अनुप्रदान—(दे०) ध्वनियोंका वर्गीकरणमें प्रयत्न-उपशीर्षक। अनुप्रदानका प्रयोग कई अर्थोंमें हुआ है। यों प्रायः संस्कृत ग्रंथोंमें इसे

बाह्यप्रयत्नका समानार्थी माना गया है। अर्थात् विवार, संवार, घोष, अघोष, अल्पप्राण, महाप्राण, उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित इसके अंतर्गत आते हैं। इनके अतिरिक्त मुँहमें आवाजकी गूँज, जिसे नादानुप्रदान कहते हैं, तथा श्वासानुप्रदान अर्थात् साँस निकलना आदिको भी इसके अंतर्गत माना गया है।

अनुबंध--वह वर्ण या वर्णसमूह जो किसी शब्द या प्रत्यय आदिके आरंभमें या अंतमें होता है किंतु प्रयोगके समय जिसका लोप हो जाता है। जैसे 'टाप्' में 'ट्' और 'प्'। अनुज+टाप्=अनुजा। इसे 'इत्' भी कहते हैं। वस्तुतः जिसे पाणिनिने इत् कहा है, उसका प्राचीन नाम अनुबंध ही है। अनुबंध या इत्का प्रयोग व्याकरणिक विवेचनमें एकरूपता लानेके लिए किया गया है।

अनुबद्ध क्रियाविशेषण-(दे०) क्रियाविशेषण।

अनुबद्ध संबंधसूचक अव्यय-(दे०) संबंधसूचक अव्यय।

अनुभूत शब्द (experiential word)--ऐसा शब्द जो किसी ऐसी वस्तु, विचार या भावको व्यक्त करे, जिसका श्रोता या वक्ताको प्रत्यक्ष अनुभव या ज्ञान हो। (दे०) अननुभूत शब्द।

अनुमोदनबोधक अव्यय-(दे०) मनोविकारबोधक अव्यय।

अनुरणन सिद्धांत--भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धांत। यह अनुकरण सिद्धांत (दे०) का एक भेद है।

अनुरणनमूलकतावाद-भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धांत। यह अनुकरण सिद्धांत (दे०)का एक भेद है।

अनुरणनात्मक अनुकरण सिद्धांत--भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धांत। यह अनुकरण-सिद्धांत (दे०)का एक भेद है।

अनुरणनात्मक शब्द--अनुरणनके आधारपर बने हुए शब्द। जैसे-झनझन, टनटन। (दे०) शब्द।

अनुरूपता--समीकरण (दे०)का एक अन्य नाम।

अनुलोम अन्वक्षर संधि--(दे०) संधि।

अनुलोमलिपि--बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

अनुवादमूलक समस्तपद--एक प्रकारके शब्द (दे०)।

अनुवादमूलक-समास-एक प्रकारके शब्द (दे०)

अनुवाद-युग्म या अनुवादयुग्मक शब्द--एक प्रकारके शब्द (दे०)

अनुवाद-समास--एक प्रकारके शब्द (दे०)

अनुवादागत शब्द (loan translation, translation loan-word) ऐसा आगत शब्द जो मूलतः न आकर अनूदित होकर आया हो। जैसे अंग्रेज़ी (Golden age) से हिन्दी स्वर्णयुग। कुछ लोग ऐसे शब्दोंको भी इसी नामसे अभिहित करते हैं जो अनुवाद न होकर थोड़े सरल कर दिये गये होते हैं। जैसे अंग्रेज़ी टेकनिकल, एकैडमीसे तकनीकी, अकादमी आदि।

अनुषंग--धातु या प्रातिपदिकमें उपधा (दे०) 'न्'। कहा गया है--उपधाभूतस्य नकारस्य अनुषंग इति प्राचां संज्ञा।

अनुसर्ग--परसर्ग (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अनुस्वार--एक प्रकारकी ध्वनि। इसका शाब्दिक अर्थ है 'स्वर या ध्वनिके बाद'। अनुस्वार--को कहते हैं। इसके लिए कुछ संस्कृत वैयाकरणोंने 'अव' 'लव' 'मु', 'विष्णुचक्र' तथा 'बिन्दु' आदि नामोंका भी प्रयोग किया है। अनुस्वारकी प्रकृतिके संबंधमें विवाद है। ऋग्वेद प्रातिशाख्य इसे स्वर भी मानता है और व्यंजन भी--'अनुस्वारो व्यंजनं वा स्वरो वा।' वैदिकाभरणकार इसे व्यंजन मानता है। चतुरध्यायिका आदिमें इसे स्वर माना गया है। हिन्दी आदिमें अनुस्वारका आधुनिक प्रयोग व्यंजन रूपमें होता है। यह पंचम अनुनासिकोंके स्थानपर (गंगा, चंचल, पंडा, बंद, पंप) प्रयुक्त होती है। इसका स्वतंत्र, या शब्दारंभमें प्रयोग नहीं हो सकता। संस्कृतमें इसका प्रयोग कव-

सुरके जो उदात्त, उदात्ततर, अनुदात्त, अनुदात्ततर, स्वरित, स्वरितोदात्त तथा एक श्रुति, सात भेद माने हैं, इनमें अनुदात्ततर निम्नतम कहा गया है। उदात्त या स्वरित सुरके पूर्वका अनुदात्त सुर बहुत निम्न होता है, कुछ लोगोंके अनुसार उसीको अनुदात्ततर कहा गया है। इस अर्थमें पाणिनिने इसे सन्नतर (उदात्त स्वरित परस्य सन्नतरः १.२.४०) संज्ञासे अभिहित किया है।

अनुनादी कक्ष—(resonant chamber) मुख या नासिका-विवर, जो ध्वनियोंको अपने अनुनाद द्वारा ऊँची बना देते हैं।

अनुनादी विवर (resonant cavity)—अनुनादी कक्ष (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अनुनासिक—(१) ऐसी ध्वनि, जिसके उच्चारणमें मुखके साथ-साथ नाकसे भी सहायता लेनी पड़े या हवाका कुछ अंश नाकसे भी निकालना पड़े। पाणिनिने कहा है : मुखनासिकावचनोनुनासिकः। कँ, वँ आदि व्यंजन तथा अँ, आँ, आदि स्वर इसी प्रकारके हैं। (२) ङ्, ञ्, ण्, न्, म् आदिको भी अनुनासिक या नासिक्य व्यंजन कहते हैं। इनके उच्चारणमें स्पर्श तो मुँहमें (ओष्ठ, वर्त्स, तालु, मूर्द्धा या कोमल तालुपर) होता है और सारी हवा केवल नाकसे निकलती है। इस रूपमें इनमें भी नाक और मुँह दोनोंसे सहायता ली जाती है। (३) विशेषणरूपमें भी अनुनासिक शब्दका प्रयोग होता है। उस स्थितिमें इसका अर्थ होता है 'जो नाकसे उच्चरित हो' या 'जिसके उच्चारणमें नाकसे भी सहायता ली जाय'। अनुनासिकको नासिक्य भी कहते हैं। अनुनासिक ध्वनियोंके उच्चारणके लिए (दे०) शारीरिक ध्वनिविज्ञान।

अनुनासिक चिह्न (tilde)—(दे०) टिल्डे।

अनुनासिक व्यंजन—ऐसा व्यंजन जिसका उच्चारण नाककी सहायतासे हो। (दे०) अनुनासिक।

अनुनासिक स्वर—ऐसा स्वर जिसके उच्चारणमें मुँहके साथ-साथ हवाका कुछ अंश नाकसे भी निकले। जैसे अँ, ऊँ आदि। (दे०) अनुनासिक।

अनुनासिकता—किसी ध्वनिका अनुनासिक होना, या नाककी सहायतासे उच्चरित होना।

अनुनासिकीकरण (nazalization)—एक प्रकारका ध्वनि-परिवर्तन। (दे०) ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ। इसमें निरनुनासिक-ध्वनि अनुनासिक हो जाती है। जैसे-सं० 'सर्प'से हिं० 'साँप'में। यहाँ मूल शब्दमें अनुनासिकता नहीं थी पर 'साँप'में है। इसका कारण कुछ लोग द्रविड़ भाषाओंका प्रभाव मानते हैं, पर कुछ लोग इसे अकारण या स्वयंभू मानते हैं। उनका कहना है कि भाषाके स्वाभाविक विकासमें ऐसा हो गया है। यों तो इसका कारण मुख-सुख भी हो सकता है। अनुनासिक ध्वनि ही हमारे लिए स्वाभाविक है अतः आसान भी है और इसीलिए कहीं-कहीं उसका अनजाने विकास हो जाता है। कुछ अन्य उदारण हैं : उष्ट्र = ऊँट; सत्य = साँच; यूक = जूं; कूप = कुआँ; अश्रु = आँसू; श्वास = साँस; भ्रू = भौं। आज भी हिन्दीमें कुछ शब्दोंमें अनुनासिकता आ रही है, यद्यपि लिखनेमें अभी हमने उन्हें स्वीकार नहीं किया है। आम = आँम; राम = राँम; हनूमान = हँनूमाँन; काम = काँम। कहना न होगा कि इन शब्दोंमें यह अकारण नहीं है, अपितु पासकी नासिका-ध्वनिके प्रभावस्वरूप है। जिनके स्पष्ट कारणका पता नहीं चलता उन्हें अकारण अनुनासिकता कहते हैं। अनुनासिकीकरणके लिए अनुनासिकीभवन अच्छा नाम हो सकता है।

अनुनासिकीभवन—अनुनासिकीकरण (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अनुपयोगी रूपोंके विलोपके नियम—बौद्धिक-नियम (दे०)का एक भेद।

अनुप्रदान—(दे०) ध्वनियोंका वर्गीकरणमें प्रयत्न-उपशीर्षक। अनुप्रदानका प्रयोग कई अर्थोंमें हुआ है। यों प्रायः संस्कृत ग्रंथोंमें इसे

बाह्यप्रयत्नका समानार्थी माना गया है। अर्थात् विवार, संवार, घोष, अघोष, अल्पप्राण, महाप्राण, उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित इसके अंतर्गत आते हैं। इनके अतिरिक्त मुँहमें आवाजकी गूँज, जिसे नादानुप्रदान कहते हैं, तथा श्वासानुप्रदान अर्थात् साँस निकलना आदिको भी इसके अंतर्गत माना गया है।

अनुबंध--वह वर्ण या वर्णसमूह जो किसी शब्द या प्रत्यय आदिके आरंभमें या अंतमें होता है किंतु प्रयोगके समय जिसका लोप हो जाता है। जैसे 'टाप्' में 'ट्' और 'प्'। अनुज+टाप्=अनुजा। इसे 'इत्' भी कहते हैं। वस्तुतः जिसे पाणिनिने इत् कहा है, उसका प्राचीन नाम अनुबंध ही है। अनुबंध या इत्का प्रयोग व्याकरणिक विवेचनमें एकरूपता लानेके लिए किया गया है।

अनुबद्ध क्रियाविशेषण-(दे०) क्रियाविशेषण।

अनुबद्ध संबंधसूचक अव्यय-(दे०) संबंधसूचक अव्यय।

अनुभूत शब्द (experiential word)--ऐसा शब्द जो किसी ऐसी वस्तु, विचार या भावको व्यक्त करे, जिसका श्रोता या वक्ताको प्रत्यक्ष अनुभव या ज्ञान हो। (दे०) अननुभूत शब्द।

अनुमोदनबोधक अव्यय-(दे०) मनोविकारबोधक अव्यय।

अनुरणन सिद्धांत--भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धांत। यह अनुकरण सिद्धांत (दे०) का एक भेद है।

अनुरणनमूलकतावाद-भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धांत। यह अनुकरण सिद्धांत (दे०)का एक भेद है।

अनुरणनात्मक अनुकरण सिद्धांत--भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धांत। यह अनुकरण-सिद्धांत (दे०)का एक भेद है।

अनुरणनात्मक शब्द--अनुरणनके आधारपर बने हुए शब्द। जैसे-झनझन, टनटन। (दे०) शब्द।

अनुरूपता--समीकरण (दे०)का एक अन्य नाम।

अनुलोम अन्वक्षर संधि--(दे०) संधि।

अनुलोमलिपि--बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

अनुवादमूलक समस्तपद--एक प्रकारके शब्द (दे०)।

अनुवादमूलक-समास-एक प्रकारके शब्द (दे०)

अनुवाद-युग्म या अनुवादयुग्मक शब्द--एक प्रकारके शब्द (दे०)

अनुवाद-समास--एक प्रकारके शब्द (दे०)

अनुवादागत शब्द (loan translation, translation loan-word) ऐसा आगत शब्द जो मूलतः न आकर अनूदित होकर आया हो। जैसे अंग्रेज़ी (Golden age) से हिन्दी स्वर्णयुग। कुछ लोग ऐसे शब्दोंको भी इसी नामसे अभिहित करते हैं जो अनुवाद न होकर थोड़े सरल कर दिये गये होते हैं। जैसे अंग्रेज़ी टेकनिकल, एकैडमीसे तकनीकी, अकादमी आदि।

अनुषंग--धातु या प्रातिपदिकमें उपधा (दे०) 'न्'। कहा गया है--उपधाभूतस्य नकारस्य अनुषंग इति प्राचां संज्ञा।

अनुसर्ग--परसर्ग (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अनुस्वार--एक प्रकारकी ध्वनि। इसका शाब्दिक अर्थ है 'स्वर या ध्वनिके बाद'। अनुस्वार--को कहते हैं। इसके लिए कुछ संस्कृत वैयाकरणोंने 'अव' 'लव' 'मु', 'विष्णुचक्र' तथा 'बिन्दु' आदि नामोंका भी प्रयोग किया है। अनुस्वारकी प्रकृतिके संबंधमें विवाद है। ऋग्वेद प्रातिशाख्य इसे स्वर भी मानता है और व्यंजन भी--'अनुस्वारो व्यंजनं वा स्वरो वा।' वैदिकाभरणकार इसे व्यंजन मानता है। चतुरध्यायिका आदिमें इसे स्वर माना गया है। हिन्दी आदिमें अनुस्वारका आधुनिक प्रयोग व्यंजन रूपमें होता है। यह पंचम अनुनासिकोंके स्थानपर (गंगा, चंचल, पंडा, बंद, पंप) प्रयुक्त होती है। इसका स्वतंत्र, या शब्दारंभमें प्रयोग नहीं हो सकता। संस्कृतमें इसका प्रयोग कव-

र्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग आदिके साथ न होकर केवल संघर्षी या ह (अंश संहार) आदिके साथ होता था। शब्दान्तमें म् (रामं) के लिए भी यह आता था।

अनून्ज़े (anunze)—नम्बिकुअरा (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमरीकी भाषा।

अनेकवचन—पालि व्याकरणोंमें बहुवचनके-स्थानपर 'अनेकवचन' शब्दका प्रयोग मिलता है। (दे०) वचन।

अनेकस्वर—(१) बहुतसे स्वरोंवाला। जैसे अनेक स्वर शब्द। पाणिनिने इसे 'अनेकाच्' कहा है। (२) बहुतसे अक्षरों (syllables) वाला।

अनेकाक्षर—अनेक अक्षरों (syllable) वाला। जैसे-अनेकाक्षर शब्द।

अनेकाच्—एकाधिक स्वरों (दे० अच्) वाला, जैसे अनेकाच् शब्द।

अनेकार्थ—(१) एकाधिक अर्थोंवाला। (२) बहुवचनका भाव प्रकट करनेवाला।

अनेकार्थीशब्द—वह शब्द (दे०) जिसके एक-से अधिक अर्थ हों। जैसे हरि (= विष्णु, साँप, मेंढक, पानी आदि)।

अनेकाल्—अनेक वर्णोंवाला। (दे०) अल्

अनोष्ठीकरण (delabialization)–किसी ओष्ठ्य ध्वनिको अनोष्ठ्य बना देना या वृत्तमुखी (rounded) स्वरको अवृत्तमुखी (unrounded) कर देना।

अनौपचारिक रूप—सामान्य रूप (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अन्गैटे (angaite)—मस्कोइ (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरीकी भाषा। एनस्लेट (enslet) भी इसका एक नाम है।

अन्य पुरुष—एक पुरुषवाचक सर्वनाम। (दे०) सर्वनाम।

अन्य संनिधि वैशिष्ट्योत्पन्न आर्थी व्यंजना—एक प्रकारकी व्यंजना। (दे०) शब्द-शक्ति।

अन्याय्य—अनियमित।

अन्यार्थ—(१) दूसरा अर्थ, अन्य अर्थ। (२) भीतरी अर्थ, गूढ़ार्थ।

अन्वक्षर वक्त्र-संधि—(दे०) संधि।

अन्वक्षर संधि—(दे०) संधि।

अन्वक्षर संधि-वक्त्र—(दे०) संधि।

अन्वय—(१) छंद या वाक्य आदिके शब्दों या पदोंको भाषा विशेषके व्याकरण सम्मत क्रममें रखना। जैसे तुलसीकी एक अर्धालीका एक चरण है—'समुझत मन दुख भयउ अपारा'। इसका अन्वय होगा—'मन समुझत अपारा दुख भयउ।' अन्वयके संबंधमें कहा गया है —शब्दानां परस्परमर्थानुगमनम्। (२) (agreement) दो शब्दोंकी लिंग, वचन, पुरुष आदिकी दृष्टिसे एकरूपता। जैसे 'अच्छे लड़के', 'अच्छी लड़की', 'अच्छा लड़का' इन तीनोंमें विशेषण और संज्ञामें अन्वय है। इसी प्रकार कर्ता और क्रिया या कर्म और क्रियामें भी अन्वय होता है। अन्वयको अन्विति भी कहते हैं। (दे०) वाक्यमें वाक्यकी आवश्यकताएँ उपशीर्षक।

अन्विति—(दे०) अन्वय २।

अपचे (apache)—दक्षिणी अथपस्कन (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमरीकी भाषा।

अपत्यवाचक प्रत्यय–एक प्रकारका प्रत्यय, जिसके योगसे शब्द संतानवाची हो जाता है (दे०)।

अपत्याद्यर्थक—(दे०) संतानाद्यर्थबोधक तद्धित प्रत्यय।

अपनिर्माण (aalformation)—सादृश्य आदिके आधारपर या अज्ञानवश किसी अशुद्ध रूप या शब्दका निर्माण। जैसे-अंतर्साक्ष्य, क्रिया, अंतर्कथा, उपरोक्त आदि।

अपभ्रंश—(१) एक मध्ययुगीन भारतीय आर्य भाषा। (दे०) मध्ययुगीन भारतीय आर्य भाषामें अपभ्रंश उपशीर्षक। (२) किसी मूल शब्दसे निकला विकृत या विकारग्रस्त शब्द। जैसे-'गृह'का 'घर'। वैज्ञानिक दृष्टिसे इन्हें विकसित शब्द कहना चाहिए। अपभ्रंशको अपशब्द, अपभ्रष्ट, म्लेच्छ आदि तद्भव भी कहा गया है। (दे०) शब्द।

अपभ्रष्ट—अपभ्रंश (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अपरगौडादिलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयी ६४ लिपियोंमें-से एक।

अपर पीमा (upper pima)—पिमासो-नोर (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमरीकी भाषा। इस भाषाकी उपभाषाएँ हैं : पीमा (दे०) पपगो, सोबइपुरी (दे०) तथा पोट्-लपिगुआ।

अपरसर्ग कर्ता—(दे०) कर्ता।

अपरसर्ग कर्म—(दे०) कर्म

अपरिनिष्ठित (non-standard)—जो आदर्श या परिनिष्ठित न हो। भाषा, रूप आदिके लिए इसका प्रयोग चलता है। कभी-कभी शब्द, ध्वनि, वाक्य-गठनके प्रसंगमें भी यह प्रयुक्त होता है।

अपरिनिष्ठित भाषा (non-standard language)—ऐसी भाषा जो परिनिष्ठित या आदर्श न हो।

अपरिनिष्ठित रूप (non-standard form)—ऐसा रूप जो परिनिष्ठित या आदर्श न होकर अशुद्ध भ्रष्ट या ग्राम्य आदि हो।

अपरिमार्जित लैटिन—बल्गर लैटिन (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अपरिमित क्रिया (infinite verb या infinitive)—ऐसी क्रिया जो पुरुष, वचन आदिकी दृष्टिसे सीमित न हो। उदाहरणार्थ अंग्रेज़ीके दो वाक्य लें : (१) you always find fault with me. (२) you always try to find fault with me. इन दोनों वाक्योंमें find आया है। प्रथममें वह परिमित क्रिया है, क्योंकि you के कारण, पुरुष, वचन आदिकी दृष्टिसे सीमित या परिमित हो गयी है, दूसरे वाक्यमें वह अपरिमित क्रिया है, क्योंकि वह सीमित नहीं है। उस वाक्यमें try परिमित क्रिया है।

अपलची (apalachi)—**सेमिनोले** (दे०) वर्गकी एक विलुप्त उत्तरी अमरीकी भाषा।

अपवाद (exception)—ऐसा शब्द जो रूप, संधि, समास, परिवर्तन, ध्वनि या प्रयोग आदिके सामान्य नियमके अनुसार न हो।

अपशब्द—विकृत शब्द। (दे०) **अपभ्रंश**।

अपश्रुति—इसके लिए जर्मन शब्द ablaut है जिसका शाब्दिक अर्थ है 'स्वर ध्वनिका परिवर्तन'। अंग्रेज़ीमें इसे metaphony, apophony या vowel gradation या vocalic ablaut भी कहा जाता है। हिन्दीमें 'अपश्रुतिके' अतिरिक्त 'अक्षर श्रेणीकरण', 'स्वरक्रम' या 'अक्षरावस्थान'का भी प्रयोग हुआ है। मराठीमें इसके लिए केवल 'संप्रसारण'का भी प्रयोग होता रहा है। ध्वनिकी इस प्रवृत्तिका पता सबसे पहले १८७१ई० में लगा। कभी-कभी ऐसा देखा जाता है कि शब्दके व्यंजन तो प्रायः ज्यों-के-त्यों रहते हैं, किंतु स्वरों (विशेषतः **आन्तरिक** (internal vowel) स्वर) में परिवर्तनके कारण अर्थ बदल जाता है। जैसे चलना, चलाना। यों कभी-कभी इनमें कुछ और अंश भी (पहले या बादमें) जुड़ जाता है। जैसे अंग्रेज़ीमें choose, chose, chosen। यह प्रवृत्ति प्रमुखतः भारोपीय परिवार, हैमैटिक तथा सेमिटिक परिवारकी भाषाओंमें मिलती है और भाषाविज्ञानमें 'अपश्रुतिके' नामसे अभिहित की गयी है। स्वरोंका यह परिवर्तन दो प्रकारका हो सकता है–(क) मात्रिक (quantitative), और (ख) गुणीय या गौण (qualitative)। **मात्रिक अपश्रुति**—(इसे अंग्रेज़ीमें quantitative alteration, quantitative gradation या केवल apophony भी कहा गया है। डॉ० चटर्जी इसे 'ह्रस्वता दीर्घतात्मक अपश्रुति' कहते हैं) 'मात्रा'का अर्थ है ह्रस्व-दीर्घ आदि। जब स्वर (प्रकृत्या) वही रहे, केवल उसकी मात्रा परिवर्तित हो जाय तो 'मात्रिक अपश्रुति' होती है। जैसे संस्कृतमें भरद्वाज और भारद्वाज या वसुदेव और वासुदेव। संस्कृत व्याकरणोंमें इसीको गुण-वृद्धि कहा गया है। यहाँ आधारशून्य श्रेणी (Zero grade) को माना गयी, लेकिन उसका कोई नाम नहीं दिया गया। उससे ऊपर या आगे गुण और फिर वृद्धि। संस्कृत, ग्रीक आदिमें इसके स्वरूपका अध्ययन करके भाषा-विज्ञानवेत्ता अब

दूसरे निष्कर्षपर पहुँचे हैं। वे मूल या आधार श्रेणी, शून्यको नहीं मानते, अपितु 'गुण'-को मानते हैं और फिर 'गुण'के **प्रवर्द्धित** (prolonged) रूपको वृद्धि तथा **प्रह्रासित** (reduced) या **निर्बलीभूत** (weak) रूपको शून्य मानते हैं। अ, ए, ओके निर्बल रूपको शून्य; ओ, ए, ओ को गुण; आ ऐ, औ को वृद्धि कहा गया है। और सूक्ष्मतासे विचार करके कुछ भाषाविज्ञानविदोंने मात्रिक अपश्रुतिमें **सामान्य** (normal) **प्रवर्द्धित या दीर्घीभूत** (lengthened या prolonged) **प्रह्रासित, ह्रस्वीभूत,** निर्बलीभूत (reduced या weak) या और **शून्य** (Zero) ये चार श्रेणियाँ स्थापित की हैं, यों अधिक प्रचलित उपर्युक्त तीन ही हैं। हाँ, कुछ लोगोंने बलाघातयुक्त या बलाघातहीन या विभिन्न स्वरोंके संपर्कमें आनेके कारण इन तीनके छः उपभेद भी किये हैं।

गुणीय अपश्रुति–(इसे qualitative alteration, qualitative gradation या metaphony भी कहते हैं) गुणीयअपश्रुतिमें स्वर मात्रा गुणकी दृष्टिसे परिवर्तित हो जाता है, जैसे 'पश्च'के स्थानपर 'अग्र' या इसी प्रकार अन्य। इसी कारण डॉ० चटर्जी इसे 'उच्चारण स्थान-परिवर्तनात्मक अपश्रुति' कहते हैं। उदाहरण है: लैटिन tego (= मैं ढँकता या ओढ़ाता या पहनाता हूँ) और toga (= ढक्कन, लबादा या चोगा); या रूसी vez (मैं ले जाता हूँ) और voz (गाड़ी या बोझा); या अंग्रेजी sing (गाना) और sang (गाया), man, men; foot, feet; goose, geese; या अरबी किताब (पुस्तक) कुतुब (पुस्तकें) और कातिब (लिखनेवाला)। **अपश्रुतिके सम्बन्धमें दो दृष्टिकोण**—**अपश्रुतिके सम्बन्धमें** दो दृष्टिकोण दिखाई पड़ते हैं। एकका विवेचन ऊपर किया गया है, जिसमें प्रायः केवल स्वरमें गुणीय या मात्रिक परिवर्तनसे ही शब्दका अर्थ बदल जाता है। इस दृष्टिसे गुणीय अपश्रुतिके काफी उदाहरण ऊपर दिये गये हैं। हिन्दी मेल, मिला, मिली, मिले या करना, करनी, करानामी इसीके उदाहरण हैं। किन्तु मात्रिक अपश्रुतिके इस दृष्टिकोणसे बहुत कम उदाहरण मिलेंगे। वस्तुतः यदि सूक्ष्मतासे देखा जाय तो शुद्ध मात्रिक अपश्रुति केवल वहाँ होगी जहाँ स्वरका उच्चारण-स्थान तो बिल्कुल वही रहे, केवल मात्राके ह्रस्वत्व-दीर्घत्व आदिसे अर्थ बदले। यह बात कम मिलेगी। संस्कृतमें यदि 'अ' और 'आ'का उच्चारणस्थान एक मानें और इनमें केवल मात्राभेद मानें तो 'भरद्वाज'से 'भारद्वाज' या इस प्रकारके अन्य उदाहरण इसके माने जा सकते हैं। कुछ भाषाविज्ञानवेत्ताओंने इस प्रसंगमें हिन्दी 'करना'-से 'कराना' या इसी प्रकारके उदाहरण मात्रिकमें रखे हैं। कहना न होगा कि ये गलत हैं, क्योंकि हिन्दीमें 'अ' और 'आ'में मात्र मात्राभेद न होकर स्थानका भी पर्याप्त भेद है। यदि वैज्ञानिकतासे देखा जाय तो इस रूपमें या इस दृष्टिकोणसे अपश्रुतिसे प्रभावित शब्द तीन प्रकारके हो सकते हैं:

(१) **मात्रिक भेदवाले**—भरद्वाज—भारद्वाज।

(२) **गुण-मात्रिक भेदवाले**—दशरथ—दाशरथि (इसमें 'द'से 'दा'में मात्रिक भेद है और 'थ'से 'थि'में गुणीय)।

(३) **गुणीक भेदवाले**—किताबसे कुतुब।

अपश्रुतिके सम्बन्धमें दूसरा दृष्टिकोण ही मूर्द्धन्य भाषा-विज्ञानविदोंको अधिक मान्य है। इस मतके अनुसार बल इस बातपर नहीं है कि मूल शब्द या धातुके केवल स्वरोंमें परिवर्तनसे अर्थमें परिवर्तन हो, अपितु इस बातपर है कि एक शब्दसे सुननेवाले भिन्नार्थी दूसरे शब्दमें मूलशब्दके किसी एक स्वर या स्वरोंके स्थानपर कुछ परिवर्तित स्वर आ जायें, या आ जायें, चाहे (क) अन्य स्वर और व्यंजन पहलेवाले ही रहें (ख) या उनमें कुछ हट गये हों, या

(ग) कुछ नये आ गये हों, (४) या कुछ गये या परिवर्तित हुए हों और कुछ आये हों। इन बातोंसे कोई सम्बन्ध नहीं है। प्रायः धातुसे बननेवाले क्रिया रूपों (तिङन्त) या अन्य शब्दों (सुबन्त) में ही इस प्रक्रियाका विशेष उल्लेख किया जाता है। साथ ही यह भी माना जाता है कि उपसर्ग या प्रत्ययमें भी यदि स्वर परिवर्तित हो जायँ तो अपश्रुति मानी जायेगी, अर्थात् मूल शब्दमें ही उसका होना आवश्यक नहीं है। कुछ उदाहरण हैं:

मात्रीय अपश्रुति

संस्कृत

सामान्य श्रेणी	दीर्घीभूत	शून्य श्रेणी
सदम् (सीट)	सादयति (बैठाता है)	सेदुः (वे बैठे)
सचते (सम्बद्ध करता है)	सतिषाचः (वदान्यतासे सम्बद्ध करनेवाले)	सस्वति (वे बैठे)
दभ्नोति (घायल करता है)	अदाभ्य (जो घायल न हो सके)	अद्भुत (जो घायल नहीं किये जा सकते = विचित्र)

ग्रीक

poda पैरको pos (पैर)

लैटिन

pedem (पैरको) pes (पैर)

गुणीय अपश्रुति

ग्रीक––lego (मैं कहता हूँ), logos (शब्द);

जर्मन––decken (ढँकना), decke (ढक्कन)

लिथुवानियन––vezu (मैं जाता हूँ), vazis (एक प्रकारकी गाड़ी),

अंग्रेज़ी––choose, chose, chosen; mouse, mice; brother, brethren।

हिंदी––मिल्, मिलना, मिलन, मेल, मिलता, मिला, मिले।

अरबी––किताब, मकतूब, तकतुब, कतबत।

अपश्रुतिके कारण–अपश्रुतिकेकारणके रूपमें संगीतात्मक स्वराघात तथा बलात्मक स्वराघातका उल्लेख किया जाता है। प्रमुखतः इस दृष्टिसे भारोपीय परिवारकी भाषाओं-का पर्याप्त अध्ययन हुआ है और निष्कर्ष यह निकला है कि इस परिवारमें अत्यन्त प्राचीन कालमें जो मात्रिक परिवर्तन हुए उनका कारण तो बलात्मक स्वराघात था और जो गुणीय परिवर्तन हुए उनका कारण संगीतात्मक स्वराघात था। अंग्रेज़ी, रूसी, हिन्दी आदि आधुनिक भाषाओंमें प्रायः केवल गुणीय अपश्रुति है और उसका कारण आधुनिक न होकर प्रायः पुरानी परम्पराका विकासमात्र है। यों हिन्दी आदिमें संगीतात्मक और बलात्मक स्वराघातके कारण स्वरोंकी दीर्घता, ह्रस्वता तो कभी-कभी दिखाई पड़ती है किन्तु प्रायः अर्थ बदलनेसे उसका सम्बन्ध नहीं है और जहाँ है वहाँ किसी न किसी रूपमें गुणीय परिवर्तन भी हो गया है। ग्रीक, संस्कृत, लैटिन आदिमें गुणीय और मात्रिक दोनों अपश्रुतियोंकी कई श्रेणियाँ निर्धारित की गयी हैं। संस्कृतमें तो गुण, वृद्धि, संप्रसारणसे भी उनका सम्बन्ध जोड़ा गया है, किन्तु यहाँ भाषा विशेषको लेकर गहराईमें उतरना अपेक्षित नहीं है।

अपादान कारक––(दे०) **कारक**।

अपादान तत्पुरुष समास––(दे०) **समास**।

अपादान बहुब्रीहि समास––(दे०) **समास**।

अपिआका (apiaka)––**टुपी-गवरनी** (दे०) परिवारकी दक्षिणी अमेरिकाके ब्राज़ील प्रदेशमें प्रयुक्त एक भाषाका नाम।

अपिनिहिति (epenthesis या paraptyxis)––भाषा-विज्ञानकी पुस्तकोंमें 'अपिनिहिति'का प्रयोग एकसे अधिक अर्थोंमें किया गया है। ग्रे तथा पेइ आदि कुछ विद्वान् इसे मात्र 'आगम'के अर्थमें (भी) प्रयुक्त करते हैं। ग्रे इसके **व्यंजनीय अपिनिहिति** (consonantal epenthesis) और **स्वरीय अपिनिहिति** (vocal epenthesis) दो भेद करते हैं और फिर इसके विभिन्न भेदोंपर विचार करते हैं। कहना न होगा कि वह अपिनिहितिका व्यापकतम रूप है और इसमें सभी प्रकारके **आगम** (दे०) समाहित हो जाते हैं। डॉ० श्यामसुन्दरदासने

इससे मिलते-जुलते अर्थमें 'अक्षरापिनिहिति'का प्रयोग किया है। गुणेने भी इसे प्रायः इसी अर्थमें लिया है और इसे 'अक्षर' (syllable) या वर्णका किसी शब्दमें या उसके आरम्भमें 'आगम' कहा है। किन्तु इसके (कुछ अपवादोंको छोड़कर) जो उदाहरण अधिकांश पुस्तकोंमें दिये गये हैं उनसे यह निष्कर्ष निकालना अनुचित नहीं कहा जा सकता कि इसका प्रयोग **आगम** (insertion) जैसे विस्तृत अर्थमें करना अपेक्षित नहीं है। जैसा कि डॉ० चटर्जी तथा तारा पोरवाला आदिने माना है, यह एक प्रकारका **स्वरागम** (दे०) है। उच्चारण-सुविधाके लिए इसमें कोई स्वर आ जाता है। यह **पूर्वश्रुति** (दे०) के रूपमें होता है। किन्तु साथ ही अपिनिहितिके लिए यह भी आवश्यक है कि शब्दमें आनेवाले स्वरकी प्रकृतिका कोई स्वर या अर्द्धस्वर पहलेसे वर्तमान हो। संस्कृतसे अवेस्ताकी तुलना करनेपर पता चलता है कि अपिनिहिति अवेस्ताकी एक प्रमुख विशेषता थी। उदाहरणार्थ bhavati (भवति)—bavaiti; arusah (अरुषः)—auruso; taruna (तरुण)–tauruna; aryah (अर्यः)–airyo; sarvam (सर्वम्)—haurvam। इन उदाहरणोंमें आरम्भमें संस्कृतके शब्द हैं और बादमें अवेस्ताके। यहाँ हम देखते हैं कि i और u का आगम हुआ है, किन्तु यह तभी हुआ है जब शब्दमें पहलेसे उससे मिलती-जुलती ध्वनि है। अवेस्तामें केवल इ, उ इन दोका ही अपिनिहिति स्वरके रूपमें आगम हुआ। 'इ' ऐसे शब्दोंमें आया है जहाँ पहलेसे इ, ई, ए या य; थे, और 'उ' ऐसेमें आया है जहाँ पहलेसे 'उ' या 'व' था। इस बातको सामान्यीकृत कहते हुए यह कह सकते हैं कि किसी शब्दमें यदि कोई ऐसा स्वर आ जाय, जिसकी प्रकृतिका स्वर या अर्द्धस्वर पहलेसे वर्तमान हो तो उस स्वरागमको अपिनिहिति कहेंगे। इस प्रकारका स्वर प्रायः आदि या मध्यमें उच्चारण सुविधाके लिए आता है। इस आधारपर इसके **आदि-अपिनिहिति** और **मध्य-अपिनिहिति** दो भेद किये जा सकते हैं। कुछ उदाहरण हैं :—

अंग्रेज़ी—goldsmith = goldismith (उच्चारण में)

मध्ययुगीन बंगाली–karia = oh kairia (करके)

sathua = sauthua (साथी)

भोजपुरी—स्त्री = इस्त्री

स्नान = अस्नान

स्टेशन = इस्टेशन

स्प्रिंग = इस्प्रिंग

बेल = बेइल

बेला = बेइला

हिन्दी—स्थिति = इस्थिति (उच्चारणमें)

उसी प्रकृतिके स्वरके आनेके कारण इसे **'समस्वरागम'** भी कहा जा सकता है। यह ध्यान देने योग्य है कि इसके सभी उदाहरण **'आदि-स्वरागम'** या **'मध्य स्वरागम'** के उदाहरण कहे जा सकते हैं, किन्तु **'आदि-स्वरागम'** और **'मध्य स्वरागम'के** सभी उदाहरण इसके उदाहरण नहीं कहला सकते, क्योंकि इसके लिए नवागत स्वरकी प्रकृतिकी ध्वनिका पहलेसे रहना आवश्यक है। यह भी स्पष्ट है कि इस रूपमें **स्वरभक्ति** या **स्वरागमका** यह पर्याय नहीं है, अपितु उसका एक भेद मात्र है। साथ ही **'स्वर-भक्ति'** अपने प्राचीन अर्थमें दो संयुक्त व्यंजनोंके बीचमें आकर दोनोंको अलग कर देती है (जैसे धर्मसे धरम; राजेन्द्रसे राजेन्दर) किन्तु अपिनिहितिमें यह प्रवृत्ति नहीं दिखाई पड़ती। ऊपर अपिनिहितिके **आदि** और **मध्य** दो भेद किये गये हैं। कुछ लोग (डॉ० तारापोरवाला आदि) केवल 'मध्य'[1] को ही अपिनिहिति मानते हैं, और 'आदि'-

१. डॉ० श्यामसुन्दर दास अपिनिहितिको केवल 'मध्यमें इ, उ का आगम' मानते हैं।

के लिए पुरोहिति या पूर्वहिति (prothesis)[1] का प्रयोग करते हैं, किन्तु साथ ही पुरोहितिमें समस्वरागमको आवश्यक नहीं मानते। उनके अनुसार कोई भी स्वर जो शब्दके आदिमें आ जाय, पुरोहितिका उदाहरण है। इस रूपमें यह **आदि स्वरागम**[2]-का समानार्थी है। किन्तु अवेस्ता भाषाके विवेचनके सिलसिलेमें 'पुरोहिति'का प्रयोग केवल उस आदिस्वरागमके लिए किया गया है, जिसकी प्रकृतिका एक स्वर पहलेसे उस शब्दमें विद्यमान हो। जैसे––

सं० रिणक्ति (rinakti) अवेस्ता irinahti
सं० रिष्यति (risyati) ,, irisyeiti
सं० रोपयन्ति (ropayanti) urupayeinti

अवेस्तामें 'र'से आरम्भ होनेवाले शब्दोंमें पुरोहिति सर्वत्र मिलती है। एक उदाहरण 'थ'के पूर्व भी मिलता है। इसका आशय यह हुआ कि यदि **अपिनिहिति**को केवल **'मध्य-अपिनिहिति'**ही माना जाय तो **'आदि-अपिनिहिति' 'पुरोहित'** माना जा सकता है और तब पुरोहितिकी परिभाषा होगी, **'किसी शब्दके आरम्भमें किसी ऐसे स्वरका आना जिसकी प्रकृतिका दूसरा स्वर शब्दमें पहलेसे वर्तमान हो, पुरोहिति कहलाता है।'** किन्तु जैसा कि संकेत किया जा चुका है सामान्यतः इसे लोगोंने **'आदि स्वरागम'**को पर्यायके रूपमें ही प्रयुक्त किया है और इस रूपमें इसकी वही परिभाषा होगी जो **'आदि स्वरागम'**की।

अपूर्ण अध्याहार––(दे०) **अध्याहार**।

अपूर्ण अनुनासिक स्वर––ऐसा स्वर जिसके उच्चारणमें हवाका बहुत थोड़ा भाग नाकसे निकले और अधिकांश भाग मुँहसे निकले। जैसे 'राम्' या 'नाम्'का आ। (दे०) **पूर्ण अनुनासिक स्वर**।

अपूर्णकाल (imperfect tense)––ऐसा काल जिससे क्रियाके अभी चलते होने या होते होनेका भाव प्रकट हो।

अपूर्ण कृदंत––(दे०) **कृदंत**।

अपूर्ण क्रियाद्योतक कृदंत––(दे०) **कृदंत**।

अपूर्ण धातु (incomplete root या verb)––ऐसी धातु, जिसके सभी काल या अर्थ (mood) बोधक रूप न बनते या मिलते हों।

अपूर्ण वाक्यात्मक रचना––एक प्रकारकी रचना। (दे०) **वाक्यमें रचनाके प्रकार** उपशीर्षक।

अपूर्ण संयुक्त स्वर (incomplete diphthong)–(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणका संयुक्त स्वर** उपशीर्षक।

अपूर्ण समास (improper compound)––कुछ भाषाओंमें एक प्रकारका समास, जिसमें संयुक्त होनेवाले दोनों शब्द पूर्णतः न मिलकर अपूर्ण रूपसे मिलते हैं। कारक रूप बनानेके लिए दोनोंमें ही विभक्तियाँ जोड़नी पड़ती हैं।

अपूर्णता-सूचक चिह्न––एक प्रकारका चिह्न। (दे०) **विराम**।

अपूर्ण स्पर्श––एक प्रकारका स्पर्श। (दे०) **ध्वनियोंके वर्गीकरणमें व्यंजनोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक।

अपूर्ण पुनरुक्त शब्द–एक प्रकारके शब्द (दे०)।

अपूर्ण भविष्य निश्चयार्थ––(दे०) **काल**।

अपूर्ण भूत––(दे०) **काल**।

अपूर्ण भूत संभावनार्थ––(दे०) **काल**।

अपूर्ण वर्तमान––(दे०) **काल**।

अपूर्ण वर्तमान संभावनार्थ––(दे०) **काल**।

अपूर्ण संकेतार्थ––(दे०) **काल**।

---

१. अंग्रेजीमें मूल शब्द prothesis न होकर prosthesis है जिसका शाब्दिक अर्थ 'आदि-आगम' (स्वर, व्यंजन या अक्षर) तथा धात्वर्थ मात्र 'आगम' होता है।

२. ग्रे भी इसका इसी रूपमें बल्कि विशेषतः 'स्' से आरम्भ होने वाले शब्दके आरम्भमें उच्चारण-सुविधाके लिए आये स्वर [जैसे लैटिन scribere = स्पैनिश escribir (लिखना)]के लिए प्रयोग करते हैं। डॉ० श्यामसुन्दर दासने भी इसे इस रूपमें लिया है।

अपूर्ण संख्यावाचक विशेषण--(दे०) विशेषण।

अपूर्णांकबोधक विशेषण--(दे०) विशेषण।

अपूर्णांकवाचक विशेषण--(दे०) विशेषण।

अपृक्त--इसका शाब्दिक अर्थ है जो किसीसे मिला या संपृक्त न हो। (१) प्रातिशाख्यों-में इसका प्रयोग ऐसे शब्दके लिए हुआ है जो एक हो। (२) पाणिनिने अपृक्तका प्रयोग एक अल् या वर्णके प्रत्ययोंके लिए किया है —'अपृक्त एकाल् प्रत्ययः'।

अप्रचलित (obsolete)—जिस(रूप, शब्द, ध्वनि, अक्षर आदिका प्रयोग न हो रहा हो, या न हुआ हो। अल्पप्रचलितको भी प्रायः अप्रचलित कह देते हैं।

अप्रत्यक्ष कर्म—(दे०) कर्म।

अप्रत्यय कर्ता—(दे०) कर्ता।

अप्रत्यय कर्म—(दे०) कर्म।

अप्रधान कर्म—(दे०) कर्म।

अप्रधान मानस्वर (secondary cardinal vowel)--(दे०) ध्वनियोंका वर्गीकरणमें अप्रधान या गौण मानस्वर उपशीर्षक।

अप्रमुख कर्म—(दे०) कर्म।

अप्रशस्त संयुक्त स्वर (narrow diphthong)—(दे०) ध्वनियोंका वर्गीकरणका संयुक्त स्वर उपशीर्षक।

अप्राण—अल्पप्राण (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अप्रीदी (apridi)—अफ़ीदी (दे०)का शुद्ध नाम।

अफ़ग़ानी—'पश्तो' भाषाका एक अन्य नाम। (दे०) 'पश्तो'। इसकी लिपि अरबी लिपिका एक संशोधित रूप है।

अफ़ग़ान मंगोल—यूराल अल्ताई परिवारकी एक मंगोल बोली, जो समाप्तप्राय है।

अफ़ग़ानिस्तानी—पश्तो (दे०)का एक अन्य नाम।

अफ़ग़ानी—पश्तो (दे०)का एक नाम।

अफ़्रीका भाषा-खंड--विश्वको जिन चार भाषा-खंडोंमें बाँटा गया है, उनमें एक अफ्रीका-खंड भी है। इसमें प्रमुखतः निम्नांकित पाँच भाषा-परिवार या भाषा-परिवारवर्ग हैं : (१) बुशमैन परिवार (दे०) (२), बाटूपरिवार (दे०), (३) सुडान भाषा परिवार वर्ग (दे०), (४) हैमिटिक परिवार (दे०), और (५) सैमिटिक परिवार (दे०)

अफ़ीदी (afridi)—पश्तो (दे०)की उत्तरी-पूर्वी बोलीकी एक उपबोली।

अफ्लोने (aphlone)–बर्मामें प्रयुक्त, पोकरेन (दे०)की एक उप-बोली।

अबकाज़ (abkaz)—उत्तरी काकेशस परिवार (दे०)की पश्चिमी शाखाकी काकेशस-में प्रयुक्त एक भाषा। इसे 'अबखाशन' भी कहते हैं।

अबखासिअन (abkhasian)—अबकाज़ (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अबलाघाती शब्द (proclitic)—ऐसा शब्द जिसका अपना बलाघात न हो, और जो परवर्ती शब्दके साथ उच्चरित हो।

अबाकान (abakan)—यूराल-अल्ताई (दे०) परिवारकी एक एशियाई भाषा जो पूर्वी तुर्कीमें बोली जाती है।

अबिपोन (abipon)—गुयसकुर (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमरीकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

अबोर (abor)—चीनी परिवार (दे०)की एक तिब्बती-वर्मी भाषा, जो उत्तरी आसाम वर्गकी है। यह पूर्वी आसाममें बोली जाती है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या १९२१ की जनगणनाके अनुसार १३,३१७ थी, जिसमें 'मिरि' बोलनेवाले भी सम्मिलित थे।

अब्नाकी (abnaki)—पूर्वीय अलगोनकिन (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमरीकी भाषा।

अभयपुरया (abhaypurya)—'बंपरा' (दे०)का एक अन्य नाम।

अभिकाकल—स्वरयंत्र-मुख-आवरण (दे०)का एक अन्य नाम।

अभिधामूला ध्वनि—एक प्रकारकी ध्वनि (दे०)।

अभिधा शक्ति—एक प्रकारकी शब्द-शक्ति (दे०)।

अभिधामूला शाब्दी व्यंजना—एक प्रकारकी

व्यंजना। (दे०) शब्द-शक्ति।

अभिनवन (innovation)––किसी भाषा में, एक निश्चित काल एवं एक निश्चित भौगोलिक परिधिमें ध्वनि, रूप, अर्थ, वाक्य या शब्द आदि किसी भी भाषिक इकाईके क्षेत्रमें आनेवाली नवीनता या अभिनव तत्त्व। भाषाके विकासमें दो बातें ध्यातव्य होती हैं, एक तो यह कि परिवर्तनके कारण कौनसी बातें या कौनसे तत्त्व नये आ गये हैं; तथा दूसरी यह कि कौनसी पुरानी बातें (या भाषिक इकाइयाँ) सुरक्षित हैं। इन नवागत तत्त्वोंको **अभिनवन** या **नवीनता** (एं) तथा सुरक्षित पुराने तत्त्वोंको **अभिरक्षण** या **प्राचीनता** (एँ) कहते हैं।

अभिनिधान––इसका शाब्दिक अर्थ है 'जो समीप या पूर्व रखा गया हो' या 'दबाना'। प्राचीन व्याकरणमें इस शब्दका कई अर्थोंमें प्रयोग हुआ है जिनमें कुछ ये हैं––(१) स्पर्श वर्णोंमें स्फोट न होना; (२) अपूर्ण स्पर्श या अस्फोटित स्पर्श। अर्थात् ऐसा स्पर्श (दे०) व्यंजन, जिसमें केवल प्रथम दो स्थितियाँ हों, तीसरी अर्थात् स्फोटकी स्थिति न हो; (३) संयुक्त या द्वित्त स्पर्शोंमें प्रथम स्पर्श; (४) संयुक्त या द्वित्त स्पर्शोंमें दूसरा स्पर्श, तथा (५) किसी भी ध्वनिका अपूर्ण उच्चारण।

अभिनिहित संधि––(दे०) संधि।

अभिनिहिति सुर––सुर (दे०) का एक भेद।

अभिनिहित स्वरित––एक प्रकारका स्वरित (दे०)।

अभिरक्षण (reservation)––भाषाके विकासमें सुरक्षित प्राचीन तत्त्व या भाषिक इकाइयाँ। इन्हें प्राचीनता (एँ) भी कहते हैं। (दे०) **अभिनवन**।

अभिलेख विज्ञान––**पुरालेख शास्त्र** (दे०) का एक अन्य नाम।

अभिलेख शास्त्र––**पुरालेख शास्त्र** (दे०) का एक अन्य नाम।

अभिश्रुति (umlaut या vowel mutation)––**अभिश्रुति** (दे०) **अपनिहिति** (दे०) और **पुरोहित** (दे०) आदिकी भाँति ही 'अभिश्रुति' नामके प्रयोगके बारेमें भी भाषा विज्ञान-वेत्ताओंमें मतैक्य नहीं है। umlaut नाम ग्रिमका दिया हुआ है। इसका सामान्य अर्थ है शब्दके किसी आन्तरिक स्वरमें बादके अक्षरमें आनेवाले किसी अन्य स्वर (अन्य गुणवाला, मात्रावाला नहीं) के कारण परिवर्तन। पेइ आदि कुछ विद्वानोंके अनुसार कोई अन्य स्वर, अर्द्ध स्वर या व्यंजनके कारण भी कभी-कभी यह परिवर्तन हो जाता है। ब्लूमफील्ड, ग्रे इसे **स्वरका पश्चगामी समीकरण** मानते हैं। उम्लाट (umlaut) या अभिश्रुति जर्मन भाषाकी एक प्रमुख विशेषता है। इसमें कभी तो एक स्वर दूसरेके पूर्णतः अनुरूप हो जाता है, कभी पूर्णतः अनुरूप न होकर भी प्रकृतिमें समीप पहुँच जाता है। प्राचीन जर्मन––harja मध्यकालीन जर्मन haria पुरानी अंग्रेज़ी here (सेना)। यहाँ j के कारण a बदलते-बदलते e हो गया। gudini, पुरानी अँग्रेज़ी gyden (देवी)। यहाँ i ने u को प्रभावित करके y कर दिया। जर्मन-अँग्रेज़ीमें अगले अक्षरके 'i' स्वरके कारण a, u, ea क्रमसे e, y, ie में परिवर्तित हो गये हैं। डॉ० चटर्जीके अनुसार बँगलामें भी यह प्रवृत्ति है। मध्य बंगाली हारिया, आ० बंगाली हेरे (खोकर)। अभिश्रुतिमें यह भी द्रष्टव्य है कि प्रभावित करनेवाला स्वर भी समाप्त हो जाता है। **पश्चगामी समीकरण** (दे०)-से इससे यही थोड़ा अन्तर है। यों शुद्ध पश्चगामी समीकरणको भी ग्रे आदि इसके अन्तर्गत रखते हैं। **अपिनिहिति** (दे०) के साथ भी कभी अभिश्रुति देखी जाती है। परिवर्तन होनेके पहले अपिनिहिति-स्वर आ जाता है : mani, maini, men बँगला karia, kairia, k're, kore (करके)। इस प्रकारकी **अपिनिहिति-अभिश्रुति** प्राकृतोंमें भी मिलती है। आधुनिक भारतीय भाषाओंमें बंगला तथा सिंहलीमें ही अभिश्रुति विशेष रूपसे मिलती है।

अभ्यास—'अभ्यास'का व्याकरण शास्त्रमें अर्थ है, 'दो बार आना', 'आवृत्ति' या 'दोहराया जाना।' 'खट-खट मत करो'में 'खटखट' 'खट'-का अभ्यास है। वस्तुतः इस प्रकारके द्वित्त-में पहला ही अभ्यास है, क्योंकि उसीकी आवृत्ति होती है। पाणिनि कहते हैं—'पूर्वोऽभ्यासः'।

अमगुअक्से (amaguaxe)—**टुकनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमरीकी भाषा।

अमरी (amri)—आसाममें प्रयुक्त, **मिकिर** (दे०) भाषाकी एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या ७२५ थी।

अमरीकी अंग्रेज़ी—अंग्रेज़ीका एक रूप जो अमरीका तथा कनाडामें बोला जाता है। इसके बहुतसे उपरूप हैं, जिनमें प्रमुख पूर्वीय, दक्षिणी हैं। उच्चारण तथा कुछ अंशोंमें वर्तनीकी दृष्टिसे यह अंग्रेज़ी (इंग्लैंडकी)से भिन्न है।

अमरीकी केन्द्र (american school)—आधुनिक भाषा-वैज्ञानिक अध्ययनका एक प्रमुख केन्द्र या स्कूल। ध्वनिग्राम-विज्ञान (phonemics) इसी स्कूलकी देन है, इसी आधारपर इसे **ध्वनिग्रामीय स्कूल** (phoneme school) भी कहते हैं। इस स्कूलकी वैचारिक परम्परा इस सदीमें सपीर-से प्रारम्भ होती है। यों इस स्कूलके सबसे बड़े आचार्य ब्लूमफ़ील्ड हैं, जिनकी पुस्तक 'लैंग्वेज' इस स्कूलकी बाइबिल कही जाती है। वर्णनात्मक भाषा-विज्ञानमें इस स्कूल-ने बहुत काम किया है। इस स्कूलका कार्य ध्वनि-ग्राम-विज्ञानके अतिरिक्त रूपग्रामविज्ञान (morphemics), कोशविज्ञान, वाक्य-विज्ञान, लिपि-विज्ञान, पुनर्निर्माण, भाषा-भूगोल, ध्वनि-विज्ञान, भाषा काल-क्रम-विज्ञान आदि अनेक क्षेत्रोंमें हुआ है। इस स्कूल-के विद्वान् 'अर्थविज्ञान'को भाषाविज्ञानके अन्तर्गत नहीं मानते। इस स्कूलके लोगोंने विज्ञानवेत्ताओं और इंजीनियरोंकी सहायतासे बहुत-सी मशीनें (स्पेक्टोग्राफ़, स्पीचस्ट्रेचर, एलेक्ट्रिक वोकल ट्रैक्ट आदि) बना ली हैं, जिनके आधारपर ध्वनि-लहरोंका बहुत सूक्ष्म अध्ययन किया है। इस क्षेत्रमें दिन-दिन ये लोग प्रगति करते जा रहे हैं। भाषाको मनोविज्ञान, समाज-विज्ञान तथा दर्शनके परिपार्श्वमें भी यहाँ बड़ी गहराईसे विश्लेषित किया गया है। गणितकी सांख्यिकी (statistics) तथा इनफ़ार्मेशन थ्यूरीसे भी सहायता ली जा रही है। इस प्रकार अनेक अन्य विज्ञानोंकी सहायतासे भाषा-विज्ञान पूर्णता प्राप्त कर रहा है। भाषा-विज्ञानके प्रमुखतः तीन रूप माने जाते हैं: वर्णनात्मक, तुलनात्मक, ऐतिहासिक। किन्तु इनके अतिरिक्त भाषा-विज्ञानका एक प्रायोगिक (applied) रूप भी है। अमरीकामें इस क्षेत्रमें भी अनुवाद, भाषा-प्रशिक्षण, उच्चारण-संशोधन आदिमें काम किये जा रहे हैं। इधर एक दशकसे अमरीकी स्कूल वस्तुतः एक स्कूल न होकर कई स्कूलोंमें बँटता जा रहा है। अनेक सैद्धान्तिक बातोंके सम्बन्धमें यहाँके सभी भाषा-विज्ञानविदोंमें पूर्णतः मतैक्य नहीं है। इसके अतिरिक्त पारिभाषिक शब्दावलीके प्रयोगके क्षेत्रमें भी एकरूपता नहीं है। जिसका होना एक स्कूल-के लिए प्रायः आवश्यक कहा जा सकता है। अमेरिकाके प्रमुख भाषा-विज्ञानविदोंमें ब्लाक, ट्रैगर, पाइक, नाइडा, हॉगेन, हैरिस, हॉकिट, ग्लीसन आदि हैं। इस स्कूलने विशेष रूपसे अमेरिकाकी आदिम भाषाओं-पर काम किया है। (इस स्कूलकी प्रमुख पुस्तकें : Bloomfield—Language; Block & Trager—Outline of linguistic analysis; Harris—Methods in structural linguistics; Pike—Phonemics, Phonetics; Nida — Morphology; Hockett—A course in Modern linguistics, A manual of Phonology; Gleason—An Introduction ot Des criptional lingui-

stics.)

अमरीकी भाषाएँ—यहाँ 'अमरीकी भाषाएँ'से अर्थ अमरीकाकी उन अंग्रेज़ी, फ्रेंच, स्पैनिश, आदि भाषाओंसे नहीं है, जो मूलतः यूरोपकी हैं, और यूरोपीय लोगोंके साथ अमरीकामें पहुँच गयी हैं। इनका आशय उन भाषाओंसे है जो वहाँके रेड-इंडियन आदि आदिवासियों द्वारा प्रयुक्त होती हैं, अर्थात् जो भाषाएँ मूलतः अमरीकी हैं। किसी अन्य महाद्वीपकी भाषाओंसे इनका संबंध नहीं है। भाषाओंकी दृष्टिसे अमेरिका बहुत संपन्न है। यद्यपि यहाँकी भाषाओंका बहुत अधिक अध्ययन नहीं हुआ है, किंतु जो थोड़ा-बहुत अध्ययन हुआ है उसके आधारपर ऐसा अनुमान लगाया जा सकता है कि उत्तरी अमेरिकामें कुल लगभग २५ परिवार हैं जिनमें लगभग ३४५ भाषाएँ हैं। इसी तरह केन्द्रीय अमेरिका तथा मेक्सिकोमें २० परिवार तथा लगभग ८४ भाषाएँ हैं और दक्षिणी अमेरिकामें ७७ परिवार तथा ७७६ भाषाएँ हैं। निष्कर्षतः पूरे अमेरिकामें लगभग १२२ परिवार तथा १२०५भाषाएँ हैं। इनमें कुछ भाषाएँ अब भी प्रयुक्त हो रही हैं, कुछ मृतप्राय हैं और कुछ विलुप्त हो चुकी हैं। इस समय बोलनेवालोंकी संख्या २ करोड़से कम है। अधिकांश भाषाओंके नाम जातियोंके आधारपर हैं। कुछके नाम भौगोलिक स्थानोंपर भी आधारित हैं। इसकी एक भाषामें पुरुष एक भाषा बोलते हैं तथा स्त्रियाँ दूसरी। (दे०) अरवक। अमरीकी भाषाएँ प्रायः प्रश्लिष्ट योगात्मक हैं। कई भाषाओंमें वाक्यके सभी शब्द मिलकर एक बड़ा-सा शब्द बन जाते हैं। चेरोकी भाषाका 'नाधोलिनिन' (हमारे पास नाव लाओ) इसी प्रकारका वाक्य है। (दे० आकृति मूलक वर्गीकरण)। इस प्रकारकी भाषाओंमें स्वतंत्र शब्दोंका अस्तित्व प्रायः नहीं है। यहाँकी भाषाओंकी ध्वन्यात्मक विशेषता यह है कि इनमें क्लिक तथा महाप्राण ध्वनियाँ मिलती हैं। इन भाषाओंपर व्यवस्थित रूपसे काम करनेवालोंमें रिवेट (les langues dumonde) श्मिट (die sprachfamilien and sprachentreise der erde) कीकर्स, सपीर, स्वाडेश, सिल्विया, लाउन्सुरी, आदिके नाम लिये जा सकते हैं। अमरीकी भाषाओंको ३ वर्गोंमें बाँटा गया है: **उत्तरी अमरीकी वर्ग** (दे०), **केन्द्रीय अमरीकी वर्ग** (दे०) तथा **दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)।

अमरीकी भाषा-खंड—विश्वको जिन चार भाषा-खंडोंमें बाँटा गया है, उनमें एक अमरीकी-खंड भी है। इसका क्षेत्र उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका है। इस खंडकी भाषाओंको अमरीकाकी आदिवासी जातियाँ प्रयोगमें लाती हैं। (दे०) **अमरीकी भाषाएँ**।

अमरीकी स्वर-वर्गीकरण—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वर-वर्गीकरणकी अमरीकी पद्धति** उपशीर्षक।

अमहुअक—(amahuaka) **पनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमरीकी भाषा। इसके अन्य नाम **मस्पो** (maspo) तथा **इम्पेटिनेरी** (impetineri) हैं।

अमॉक (a–mok)—बर्मामें शानस्टेटकेएक भागमें प्रयुक्त एक **मोन-ख्मेर** (दे०) बोली।

अमिनों—(दे०) **त्वि**।

अमुएशा (amuesha)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारकी प्रमुख भाषा अमुएशा ही है। इसे कुछ लोग अरवक (arawak)के साथ संबद्ध करनेके पक्षमें हैं।

अमुसगो (amusgo)—**केन्द्रीय अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारकी प्रमुख भाषा भी इसी नाम-की है।

अमूर्त शब्द (abstract term)—ऐसा शब्द जो किसी अमूर्त (जैसे भाव, विचार आदि)को व्यक्त करे। कला, सुन्दर, भव्य, बुरा आदि इसी प्रकारके शब्द हैं। (दे०) **मूर्त शब्द**।

अम्मोनाइट लिपि (ammonite)—**कैनानाइट लिपि** (दे०)का एक रूप।

अम्हरिक (amharic)—**सेमिटिक इथिओपियन** (दे०)की एक बोली ।

अयकुचो (ayacucho)—दक्षिणी अमेरिकाके **किचुआ** (दे०) परिवारकी एक प्रमुख भाषा ।

अयमन (ayman)—दक्षिणी अमेरिकाके **किसरक्सरा** (दे०) परिवारकी एक भाषा ।

अयमर (ayamara)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार । इस परिवारमें लगभग ११ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख **कोला, पकसे, चरका, किलगुआ,** आदि हैं । इसका क्षेत्र पहले चिली,पेरू तथा बोलिवियाका काफ़ी बड़ा क्षेत्र था ।

अयरिको (ayriko)—**टिकनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमरीकी भाषा ।

अयेंग (ayaing)—**बर्मि** (दे०)की अक्याव (बर्मा)में प्रयुक्त एक बोली ।

अयोगवाह—वे ध्वनियाँ जो स्वतंत्र न हों, तथा जिनका प्रयोग केवल अन्य ध्वनियोंके साथ ही हो । कुछ लोगोंके अनुसार पराश्रित होनेके कारण इन्हें अयोगवाह कहा गया है—'अनुस्वारो विसर्गश्च ५ क ५ पौ चैव पराश्रितौ । अयोगवाहा विज्ञेया आश्रयस्थानभागिनः ।।' उव्वट कहते हैं—'अकारादिना वर्णसमाम्नायेन संहिताः सन्तः ये वहन्ति आत्मलाभं ते अयोगवाहाः ।' अर्थात् ये केवल 'अ' आदिके योगसे ही उच्चरित हो सकते हैं, अतः इन्हें 'अयोग वाह' कहा गया है। अयोगवाह ध्वनियाँ पाणिनिके शिवसूत्र या अन्य व्याकरण संप्रदायोंके वर्णसमाम्नायमें नहीं हैं । इसमें अनुस्वार, विसर्ग, जिह्वामूलीय, उपध्मानीय तथा यम आते हैं । अयोगवाह स्वर तथा व्यंजन दोनों ही (प्रसंगानुसार) होते हैं । पाणिनि या प्राचीन प्रातिशाख्योंमें 'अयोगवाह'का उल्लेख नहीं मिलता । वाजसनेयी प्रतिशाख्य आदिमें अयोगवाहके स्थानपर 'योगवाह'का प्रयोग हुआ है ।

अयोगात्मक भाषा—आकृतिके आधारपर भाषाओंका एक वर्गीकरण । (दे०) **विश्वकी भाषाओंका वर्गीकरणमें आकृतिमूलक वर्गीकरण** ।

अयोगात्मक रूप—वियोगात्मक रूपका एक अन्य नाम । (दे०) **संयोगात्मक रूप** ।

अयोगात्मक वाक्य—(दे०) **वाक्यमें वाक्योंके प्रकार** उपशीर्षक ।

अयौगिक शब्द—**रूढ़ि शब्द** (दे०)का एक अन्य नाम ।

अरंगा (aranga)—**एरङ्गा** (दे०)का दूसरा नाम ।

अरक्त—(दे०) **रक्त** ।

अरगोबा (aragooba)—इथियोपियामें प्रचलित इथिओपिअन भाषाकी एक बोली ।

अरड (arda)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक अमरीकी भाषा-परिवार । इस परिवारकी भाषाएँ विलुप्त हो चुकी हैं । इस परिवारकी प्रमुख भाषा भी इसी नामकी थी ।

अरतुलु (ara tulu)—द्रविड़ भाषा 'तुळु' (दे०)का एक रूप ।

अरपहो (arapaho)—अलगोन्किन परिवारके अरपहो वर्गकी उत्तरी अमरीकामें प्रयुक्त एक भाषा । इसके बोलनेवाले अब ओक्लहोमा तथा मोन्टाना आदिमें रह गये हैं।

अरपहो वर्ग (arapaho)—**अलगोनकिन** (दे०)नामक उत्तरी अमरीकाके भाषा-परिवारका एक भाषा वर्ग । इस वर्गमें २ भाषाएँ हैं : **ग्रोस-वेन्ट्रे** तथा **अरपहो** ।

अरबी—सामी परिवार (दे०)की सर्वप्रमुख भाषा । इसे उत्तरी अरबी भी कहते हैं । मूलतः इसका जन्म सऊदी अरबमें हुआ था । अब यह अरब, फ़िलस्तीन, सीरिया, मेसोपोटामिया, मिस्र तथा उत्तरी अफ्रीकामें बोली जाती है । अरबी भाषाके उत्तरी तथा दक्षिणी दो रूप हैं । उत्तरीमें प्राचीन, क्लासिकल तथा आधुनिक अरबीके अतिरिक्त हिजाज़ी, इराकी, सीरियन, मिस्री, माल्टी, ऐंदालूसियन, अलजीरियन, ट्यूनिशियन, ट्रिपोलियन आदि उत्तरी अफ्रीकी भाषाएँ आती हैं । दक्षिणी अरबीमें प्राचीन तथा आधुनिक सिमिऐरिटिक, मेहरी, सोकोत्री आदि हैं । मुस-

लमानोंका धर्मग्रंथ क़ुरान अरबीमें ही है। अरबीने शब्द-समूहकी दृष्टिसे विश्वकी अनेक (अंग्रेज़ी, फ्रेंच, फ़ारसी, संस्कृत, हिंदी, बंगला, मराठी, गुजराती आदि) भाषाओंको प्रभावित किया है। अरबी पहले आरमेइक लिपिमें लिखी जाती थी, अब इसकी अरबी लिपि (दे०) है। अरबी साहित्यको पूर्वपैगंबर युग (प्रारंभसे ६२२ ई० तक), पैगंबर युग (६२२--७५०), अब्बासी युग (७५०--१२५८), मुसलमानी-तुर्कीकाल (१२५८--१७९८), आधुनिक काल (१७९८--) इन पाँच कालोंमें बाँटा गया है। अरबीके प्रमुख साहित्यकार हस्सान-बिन-साबित, अख्तल, हब्रेहानी, हमदानी, हरीरी, अलबूसीरी, शौकी आदि हैं।

अरबी लिपि--विश्वकी बहु प्रचलित लिपियोंमें-से एक। इसकी उत्पत्तिके संबंधमें विद्वानोंमें अधिक मतभेद नहीं है। प्राचीन कालमें एक पुरानी **सामी लिपि** (दे०) थी, जिसकी आगे चलकर दो शाखाएँ हो गयीं। एक उत्तरी सामी लिपि और दूसरी दक्षिणी सामी लिपि। बादमें उत्तरी सामी लिपिसे आरमेइक तथा फोनीशियन लिपियाँ विकसित हुईं। इनमें आरमेइकने विश्वकी बहुतसी लिपियोंको जन्म दिया, जिनमें हिब्रू, पहलवी तथा नेबातेन आदि प्रधान हैं। नेबातेनसे सिनेतिक और सिनेतिकसे पुरानी अरबी लिपिका जन्म हुआ। यह जन्म कब और कहाँ हुआ, इस सम्बन्धमें निश्चयके साथ कहनेके लिए प्रमाणोंका अभाव है। अरबीका प्राचीनतम अभिलेख ५१२ ई०का है, अतएव इस आधारपर इतना अवश्य कहा जा सकता है कि इसके पूर्व अरबी लिपिका जन्म हो चुका था। अरबी लिपिका विकास मक्का, मदीना, बसेरा, कुफ़ा तथा दमस्कस आदि नगरोंमें हुआ और इनमें अधिकांशकी अपनी-अपनी शैली तथा विशेषताएँ विकसित हो गयीं जिनमें प्रमुख दो थीं--(क) कुफ़ी (मेसोपोटामियाके कुफ़ा नगरमें विकसित), (ख) नस्ख़ी (मक्का-मदीनामें विकसित)। इनमें 'कुफ़ी'का विकास ७वीं सदीके अन्तिम चरणमें हुआ। यह कलात्मक लिपि थी और स्थायी मूल्यके अभिलेखोंके प्रयोगमें तरह-तरहसे आती थी। 'नस्ख़ी'का विकास बादमें हुआ और इसका प्रयोग सामान्य कार्यों तथा त्वरालेखन आदिमें होता था।

अरबी लिपि दायेंसे बायेंको लिखी जाती है। इसमें कुल २८ अक्षर हैं--

ا ب ت ث ج ح خ

د ذ ر ز س ش ص

ض ط ظ ع غ ف ق

ك ل م ن و ه ي

चित्र नं० २

इस लिपिको यूरोप, एशिया तथा अफ्रीकाके कई देशोंने अपना लिया, जिनमें तुर्की, (अब तुर्कीने अरबी लिपिको छोड़कर 'रोमन'को अपना लिया है)। फ़ारस, अफ़गानिस्तान तथा हिन्दुस्तान प्रधान हैं। इन विभिन्न देशोंमें जाकर इस लिपिके कुछ चिह्नों तथा अक्षरोंकी संख्यामें परिवर्तन भी आ गये हैं। उदाहरणार्थ फ़ारसीमें 'रे' और 'ज़े' कुछ परिवर्तित ढंगसे लिखने लगे तथा उनकी भाषामें अरबीकी २८ ध्वनियोंके अतिरिक्त प, च, ज़ह, तथा ग, ये चार ध्वनियाँ और थीं, अतः इनके लिए ४ नये चिह्न

پ چ ژ گ

अरबीवर्णमालामें सम्मिलित कर लिये गये। और इस प्रकार फ़ारसी अक्षरोंकी संख्या ३२ हो गयी। भारतमें उर्दू, सिंधी तथा कश्मीरी आदिके लिए भी अरबी लिपि अपनायी गयी। उर्दूमें फ़ारसवालोंने जो वृद्धि की थी उसे तो

ٹ ڈ ڑ

स्वीकार किया ही गया, उनके अतिरिक्त भारतीय ध्वनियों ट, ड, ड़ के लिए तीन

चिह्न और बढ़ा लिये गये, इस प्रकार अक्षरोंकी संख्या ३५ हो गयी। इन बढ़े अक्षरोंमें ध्वनिकी दृष्टिसे केवल तीन ही (टे, डाल, ड़े) नवीन हैं। भारतमें 'रे', 'ज़े' आदिकी बनावट अरबीकी भाँति न होकर प्रायः फ़ारसीकी भाँति है। 'काफ़' और 'गाफ़' अक्षर अरबी या फ़ारसीकी भाँतिके न होकर

ک گ

पश्तोहै। तुर्की, सिंधी तथा मलय आदि भाषाभाषियोंने भी अरबीमें अपने आवश्यकतानुसार परिवर्तन-परिवर्द्धन कर लिये। अरबी तथा उससे निकली सभी लिपियाँ पुरानी सामीकी भाँति व्यंजनप्रधान हैं। स्वरोंके लिए 'ज़ेर', 'ज़बर', 'पेश' तथा 'मद' आदिका सहारा लेकर पूर्ण अंकनका प्रयास किया जाता है, पर वह उतना वैज्ञानिक नहीं है जितना नागरी या रोमन आदिमें है। इस दृष्टिसे अरबी तथा उससे निकली अन्य सभी लिपियोंमें सुधार अपेक्षित है।

अररा (arara)—**करिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमरीकी भाषा।

अरव (araua)—**तमिल** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

अरवक (arwak)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा।

अरवक परिवार (arawak)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारमें लगभग १३० भाषाएँ हैं। इन भाषाओं में से लगभग २९ भाषाएँ विलुप्त हो चुकी हैं। अरवक भाषा-परिवार दक्षिणी अमेरिकाका सबसे प्रसिद्ध भाषा-परिवार है। कभी यह परिवार दक्षिणी अमेरिकाके अतिरिक्त फ्लोरिडा आदि उत्तरी अमेरिकाके कुछ भागोंमें भी फैला हुआ था[1]। स्पेनी लोगोंके जानेके कुछ पूर्व ही गीआनाके करीब लोगोंने इस परिवारके बोलनेवालोंमें पुरुषोंको मार डाला या भगा दिया और उनकी स्त्रियोंको छीन लिया। यह मिश्र जाति जो विकसित हुई, इसमें परंपरागत रूपसे, अब भी बच्चे और स्त्रियाँ अरवक बोलती हैं तथा वयस्क पुरुष करीब २ अरवक भाषी अब थोड़े ही रह गये हैं। इनका क्षेत्र ब्रिटिश गीआना, पेरू, वेनज्वेला, कोलंबिया, ब्राज़ील, बोलीविया है। अरवक परिवारको सात वर्गोंमें बाँटा गया है: (१) **उत्तरी आसेजन**-मैपुरे, गोआक्सिरो, यौलापिती, मेहिनकू, कुस्तेनउ, वौरा, परेसी; (२) **प्रैएन्डीअन**—इपुरिना, कनामरी, मनितेनेरी, इनापरी, कंपा, पलिकुर-मारावन; (३) **बोलबिअन**-बौरे, मोक्सो, पकोनेका, पौनाका; (४) **अरुआ**—पामा, पमना, पमरी, पुरुपुरी, युबेरी, अरौआ, यामामदी, कुलिना; (५) **गिनिअन**—तरुमा, अतोरै, मपिदन, वपिशान; (६) **उरुपुकिना**; (७) **तकना**—अराओना, कविना, मवेनरो, ठिअटिंगुआ, तोरोमोना, गुआ कनहुआ, तकाना, मरोपा।

अरवु (aravu)—**तमिल** (दे०)का एक अन्य नाम।

अरसइरे (arasaire)—**पनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमरीकी भाषा। इसे **अरस** (arasa) भी कहते हैं[1]।

अराओना (araona)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा।

अराकानी—चीनी परिवारके **तिब्बती-बर्मी** उप-परिवारकी एक भाषा। १९२१ की जनगणनाके अनुसार, इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३१४,५४९ थी। इसका क्षेत्र अक्याब, सैन्दोवे तथा वसीनके आसपास अराकानमें है।

अराकानी-बर्मी—चीनी परिवारकी तिब्बती-बर्मी शाखाकी एक उपशाखा। इसमें अराकानी, बर्मी, प्राचीन कुकि तथा कुकिचीन वर्ग आते हैं।

अराये (arae)—**शवान्ते ओपे** (दे०) का एक अन्य नाम।

अराराट—**आर्मेनियन** (दे०) की एक बोली।

अरारातिअन—(दे०) **वन्नी**।

अरिकर (arikara)—**उत्तरी कड्डो** (दे०)

उपवर्गकी एक उत्तरी अमरीकी भाषा।

अरिकेम (arikam)—**चपकुरा** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमरीकी भाषा।

अरुंग (arung)—**एंपेओ** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

अरुअक (aruak)—**चिब्चा अरउअक** (दे०) वर्गकी एक दक्षिणी अमरीकी भाषा।

अरेकुने (arekuna)—**करिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमरीकी भाषा।

अरौआ (araua)—(१) **पनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमरीकी भाषा। (२) अरवक परिवारकी एक भाषा।

अरौकन (araukan)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारमें लगभग ९ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख मपुचे, पेहुएन्चे, कुंको या हुलिचे, तलुहेत या तलुचे, ल्यूबुचे, रानूकेल, पिकुन्तू या पिकुन्चे आदि हैं। इस परिवारका क्षेत्र मध्य-चिली तथा पासका अर्जेन्टीना है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या २० हजारसे ऊपर है।

अर्गोब्बा (argobba)—**सामी इथओपिअन** (दे०) भाषाकी एक बोली।

अर्गोलिक—**ग्रीककी एक डोरिक** (दे०) बोली।

अर्जेन्टीनी (argentine)—**किचुआ** (दे०) परिवारकी एक प्रमुख दक्षिणी अमरीकी भाषा। इसके अन्य नाम **टुकुमनो** (tukumano) तथा **कुज़्को** (kuzko) हैं। इसका क्षेत्र अर्जेन्टीना है।

अर्ण—तंत्रसाहित्यमें 'वर्ण'के स्थानपर 'अर्ण'-का प्रयोग मिलता है। 'व'के लोप हो जानेके कारण 'वर्ण' शब्दका यह विकसित रूप है। पुरुषोत्तमके 'प्रयोग रत्नमाला व्याकरण'-में 'अर्ण'का प्रयोग थ, य तथा कुछ स्वरोंको छोड़कर सभी वर्णोंके लिए हुआ है।

अर्निया—(arniya) **खीआर** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अर्थ (१) (mood)—क्रियाके वे रूप, जिनसे कहने वालेके मानसिक भावका बोध होता है, अर्थ कहलाते हैं। जैसे तुम बैठो (आज्ञा), शायद वह आवे (संभावना), वह खा रहा है (निश्चय)। इसे प्रकार, भाव, क्रियार्थ, भेद आदि अन्य नामोंसे भी पुकारा गया है। प्रमुख अर्थ ५ हैं: (क) **निश्चयार्थ** (indicative mood)—क्रियाके जिस रूपसे क्रियाके व्यापार या विधानका निश्चय सूचित हो। जैसे 'वह मर गया', 'मैं खा रहा हूँ'। इनमें निश्चित बातकी सूचना मिल रही है। इसे **निर्देशार्थ** भी कहते हैं। (ख) **संभावनार्थ** (contingent mood) क्रियाके जिस रूपसे अनुमान, संभावना, इच्छा, कर्त्तव्य तथा आशीर्वाद आदि प्रकट हो। जैसे—संभव है आज पानी बरसे (संभावना) या भारतवर्ष उन्नति करे (इच्छा) आदि। (ग) **संदेहार्थ** (presumptive mood)—जिससे संदेहका बोध हो। जैसे 'वह शायद ही आता हो'। (घ) **आज्ञार्थ** (imperative mood)—जिससे आज्ञा, निषेध, अनुमति, प्रार्थना, प्रेरणा या उपदेश आदिका भाव व्यक्त हो। जैसे—तुम अभी जाओ (आज्ञा), यहाँ मत आओ (निषेध) आदि। इसे **आदेशार्थ, विध्यर्थ, प्रवर्तनार्थ,** या **अनुज्ञा** भी कहते हैं। (ङ) **संकेतार्थ** conditional mood या negative contingent जिससे शर्त या संकेत आदिका बोध हो। जैसे 'यदि वैद्य आ जाता तो मृत्यु न होती।' संस्कृत भाषामें अर्थके लिए देखिए 'लकार'। (२) (meaning) वह तत्त्व जो किसी शब्द या अभिव्यक्तिकी आत्माके रूपमेंउसमें निहित होता है। इसीका बोध करानेके लिए शब्द, अभिव्यक्ति या भाषाका प्रयोग होता है। मनोवैज्ञानिक स्तरपर अर्थ वह बिंब है जो पाठकके मस्तिष्कमें शब्द आदि पढ़कर या श्रोताके मस्तिष्कमें शब्द आदि सुनकर बनता है। (दे०) **अर्थ-तत्त्व, अर्थ विज्ञान, शब्द शक्ति, अर्थ परिवर्तन, शब्द।**

अर्थ-ग्राम (semanteme sememe, episememe)—**रूपग्राम** (दे०) का अर्थ। (दे०) **अर्थ-तत्त्व।**

अर्थतत्त्व (semanteme)—अर्थकी दृष्टि-

से हर लघुतम इकाईवाले शब्द, धातु, रूप या पदका जो अर्थ होता है, उसे **अर्थ तत्त्व** कहते हैं। बेली (Bally) अर्थतत्त्वको शुद्ध कोशीय अर्थ देनेवाला एक प्रतीक मानते हैं। वे यह भी कहते हैं कि रूप, धातु, रूढ़ शब्द, यौगिक शब्द सभीके निहितभावको कहेंगे। (a symbol expressng a purely lexical idea--whether simple or complex, whether a root or inglecta form or a compound word.) मैं बेलीकी परिभाषासे दो दृष्टियोंसे सहमत नहीं हूँ। ऊपर जो परिभाषा मैंने दी है उसमें ३ बातें कही गयी हैं : (१) हर शब्द, धातु रूपका अर्थ अर्थतत्त्व होता है। इसे बेलीने भी कहा है। (२) शब्द, धातु या पदको लघुतम होना चाहिए। अर्थात् अर्थकी दृष्टिसे उस प्रसंग या संदर्भमें उसमें अर्थकी एकाधिक इकाई नहीं होनी चाहिए। बहुतसे यौगिक शब्दों (जैसे रामानुज आदि)की एक इकाई होती है, किंतु द्वन्द्व समाससे बने समस्त शब्दों (तन-मन-धन, भाई-बहिन, राम-सीता)में एकसे अधिक आर्थिक इकाइयाँ स्वीकार करनी पड़ेंगी। इस प्रकार बेलीकी बात यहाँ नहीं मानी जा सकती। (३) बेलीने शुद्ध कोशीय अर्थको अर्थतत्त्व माना है, किंतु शुद्ध कोशीय अर्थकी कोई सीमा नहीं। हर अर्थ कभी कोशीय अर्थ हो सकता है। वस्तुतः भाषाविज्ञानमें शब्दका अर्थ कमसे कम जीवित भाषामें, प्रयोगके संदर्भोंमें देखा जाता है। अतः अर्थको अर्थतत्त्व माना जायगा। अनेकार्थी शब्दोंमें कई अर्थतत्त्व हो सकते हैं। (दे०)**संबंध तत्व** तथा **विश्वकी भाषाओंका वर्गीकरणमें आकृतिमूलक वर्गीकरण**। हर **रूपग्राम** (दे०) के अर्थको भी अर्थतत्त्व या अर्थग्राम कहते हैं। **अर्थ-विज्ञान** (दे०)को भी अर्थतत्त्व कहते हैं।

अर्थदर्शी रूपग्राम--एक प्रकारका **रूपग्राम** (दे०)।

अर्थदर्शी शब्द (naming word)--ऐसे शब्द, जो व्याकरणिक संबंध दिखलानेका काम नहीं करते, अपितु जिनके अर्थ होते हैं। 'रामने मोहनको मारा' में 'राम', 'मोहन' और 'मारा' अर्थदर्शी या **पूर्ण शब्द** (दे०) हैं। 'ने' 'को' आदि अर्थदर्शी न होकर **संबंधदर्शी शब्द** (दे०) हैं।

अर्थ-परिवर्तन--किसी भी शब्दका अर्थ सर्वदा एक नहीं रहता। परिवर्तन विश्वका नित्य नियम है। वह भाषाके अन्य अंगोंकी भाँति अर्थके क्षेत्रमें भी घटित होता रहता है। इसीको **अर्थ-परिवर्तन**, **अर्थ-विकास** या **अर्थ-विकार** कहते हैं। उदाहरणार्थ 'गँवार'का मूल अर्थ है 'गाँवका रहनेवाला'। अब इसका अर्थ परिवर्तित, विकसित या विकृत होकर 'असंस्कृत' या 'असभ्य' हो गया है। अर्थात् इसमें अर्थपरिवर्तन हो गया है। कुछ और उदाहरण भी लिये जा सकते हैं। हिंदीका एक शब्द 'तेल' है। 'तेल' शब्दपर ध्यान देनेसे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह 'तिल'से निकला है और आरंभमें केवल 'तिल'के रसको 'तैल' कहते रहे होंगे। पर आज तो इसका अर्थ इतना परिवर्तित हो गया है कि केवल सरसों, नारियल और रेंड़ीके तेलको ही नहीं, अपितु मिट्टी, साँप और मछलीके तेलको भी तेल कहते हैं। वैदिक संस्कृतमें 'मृग' शब्द पशुमात्रका वाचक है। 'मृगराज' (पशुओंका राजा, सिंह)में अबतक भी यह अर्थ सुरक्षित है, पर आज उसका अर्थ हिरन या हरिण हो गया है। भोजपुरीका एक शब्द 'माहुर' है, जिसका अर्थ 'विष' है। यह देखकर कम आश्चर्य नहीं होता कि यह संस्कृतके 'मधुर' शब्दका ही परिवर्तित रूप है, जिसका अर्थ 'मीठा' होता था। यहाँ अर्थमें इतना अधिक परिवर्तन हो गया है, कि विश्वास भी नहीं पड़ता। यदि आज किसीको 'साहसी' कहें तो मारे प्रसन्नताके वह फूला न समायेगा। पर, उसे क्या पता कि संस्कृतमें 'साहस'का प्रयोग हत्या और व्यभिचार आदि बुरे कार्योंके लिए होता था। इन सभी उपर्युक्त उदाहरणोंपर ध्यान दें

तो स्पष्ट हो जाता है कि अर्थ-परिवर्तन या विकासकी दशा एक ही नहीं है। कुछ शब्द पहले संकुचित अर्थ रखते थे और विकासके पश्चात् उनके अर्थका विस्तार हो गया। इसके उलटे कुछ शब्द और भी सकुचित हो गये। इसी प्रकार कुछके अर्थ नीचे गिर गये और कुछके ऊपर उठ गये। यही विकासकी विभिन्न दिशाएँ हैं। **अर्थपरिवर्तनकी दिशाएँ**--अर्थ-परिवर्तनकी ३ दिशाएँ होती हैं--(१) अर्थ-विस्तार, (२) अर्थ-संकोच; और (३) अर्थादेश। ऊपरके उदाहरणोंमें इन तीनके अतिरिक्त कुछ ऐसे भी शब्द लिये गये हैं, जिनमें अर्थका **अपकर्ष** और **उत्कर्ष** हुआ है। यों तो ये दोनों (अपकर्ष और उत्कर्ष भी) उपर्युक्त तीन दिशाओंमें-से ही किसी न किसीके अंतर्गत रखे जा सकते हैं, किंतु उत्कर्ष और अपकर्ष विषयक स्पष्टताके लिए यहाँ इनपर भी अलग विचार किया जायेगा। (१) **अर्थ-विस्तार** (expansion of meaning)--शब्दोंका अर्थ जब सीमित क्षेत्रसे निकलकर विस्तार पा जाता है तो उसे अर्थ-विस्तार कहते हैं। ऊपर 'तेल' शब्दके अर्थ-विस्तारको हम देख चुके हैं। पहले उसका प्रयोग केवल तिलके तेलके लिए होता था, पर अब सभी वस्तुओंके तेलके लिए होता है। भाषामें अर्थ-विस्तारके उदाहरण अधिक न मिलते, क्योंकि भाषामें ज्यों-ज्यों विकास होता है, उसमें सूक्ष्मसे सूक्ष्म और सीमितसे सीमित वस्तुओं और भावनाओंके प्रकटीकरणकी शक्ति आती जाती है। इस प्रकार अर्थ-संकोच ही स्वाभाविक है, अतः वही अधिक पाया जाता है। टकरने तो यहाँतक कहा है कि यथार्थ रूपमें अर्थ-विस्तार होता ही नहीं। जिसे हम अर्थ-विस्तार कहते हैं वह एक प्रकारका अर्थादेश मात्र है। खैर, यह तो नहीं कहा जा सकता कि अर्थ-विस्तार होता ही नहीं। हाँ, कम अवश्य होता है। पर, जो होता है वह शुद्ध अर्थ-विस्तार है, उसे हम अर्थादेश नहीं कह सकते जैसा कि टकर महोदयने कहा है। कुछ उदाहरण लिये जा सकते हैं। संस्कृतके 'कल्प' शब्दका प्रयोग आनेवाले कलके लिए तथा 'परश्वः'का आनेवाले परसोंके लिए होता था, पर अब हिन्दीमें दोनोंका अर्थ-विस्तार हो गया है। दोनों ही--कल और परसों--बीते हुए तथा आनेवाले, दोनों ही दिनोंके लिए प्रयुक्त होते हैं। 'अभ्यास' शब्दका प्रयोग पहले केवल बार-बार बाण आदि फेंकनेके लिए होता था, पर अब तो बुरेसे बुरे कार्योंसे लेकर अच्छेसे-अच्छे कार्यों तकका अभ्यास किया जा सकता है। 'गवेषणा' शब्द प्रारम्भमें केवल गायको ढूँढनेके प्रयोगमें आता था, पर आज किसीभी विषयपर गवेषणापूर्ण लेख लिखे जा सकते हैं। 'स्याह'का अर्थ काला है, और आरम्भमें लोग काले रंगसे लिखते थे इसलिए उसे स्याही कहा गया। पर आज नीली, लाल और हरी आदि सभी रंगोंकी रोशनाइयाँ 'स्याही' नामसे अभिहित की जाती हैं। 'पुण्य' करनेवाला पहले 'निपुण' था। आज तो श्यामको श्वेत और श्वेतको श्याम सिद्ध करनेवाला वकील भी अपने कार्यमें निपुण है। इतना ही क्यों? सिद्धहस्त चोर भी निपुण कहा जाता है। इसी प्रकार कभी 'वीणा' बजानेमें कुशल व्यक्ति 'प्रवीण' कहा जाता था, पर आज किसीको भी किसी कार्यमें प्रवीण कह सकते हैं, चाहे उसने वीणाका नाम भी न सुना हो। 'गोहार' पहले गायोंके चुराये जानेपर की गयी पुकारके लिए प्रयुक्त होता था पर अब सभी प्रकारकी पुकार 'गोहार' है। 'गोहार'से ही 'गोहराना' क्रिया है जो पुकारनेके अर्थमें अवधी तथा भोजपुरीमें प्रयुक्त होती है। 'अधर'का पहले अर्थ था नीचेका ओष्ठ, अब दोनों ओष्ठोंको अधर कहते हैं। इतना ही नहीं, व्यक्तिवाचक संज्ञाओंमें भी अर्थविस्तार हो जाता है। जयचन्द कभी एक व्यक्ति मात्र था, पर इधर २०वीं सदीमें भारतके स्वतन्त्र होनेके पूर्वतक पुलिस और फौज विभागके सारे कर्मचारी जयचन्द कहे जाने लगे थे।

'विभीषण' और 'नारद' भी अपने अर्थको विस्तृत कर चुके हैं। एक घरका भेदिया है तो दूसरा लड़ाई लगानेवाला। बहुत सम्भव है ना० वि० गोडसे भी भविष्यमें अपना नाम अर्थ-विस्तारके उदाहरणोंमें पाने लगें। इसी प्रकार गंगा एक विशिष्ट नदीका नाम है पर मराठीमें यह 'नदी'का पर्याय हो गया है। गुजरातीमें भी इसका इस विस्तृत अर्थमें प्रयोग मिलता है। 'सब्ज़ी' सब्ज (हरा)के आधारपर पहले हरी सब्ज़ियोंका पर्याय था, किन्तु अब सभी सब्ज़ियाँ 'सब्ज़ी' हैं। (२) **अर्थ-संकोच** (contraction of meaning)—भाषाके विकासमें अर्थ-संकोचका बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। भाषाके आरम्भ कालमें सभी शब्द सामान्य रहे होंगे। सभ्यताके विकासके साथ विशिष्टताकी भावना आती गयी होगी और शब्दोंमें अर्थ-संकोच होता गया होगा। इसीलिए ब्रीलने कहा है कि राष्ट्र या जाति जितनी ही अधिक विकसित होगी उसकी भाषामें अर्थ-संकोचके उदाहरण उतने ही अधिक मिलेंगे। अर्थ-संकोचके कारण किसी शब्दका प्रयोग सामान्य या विस्तृत अर्थसे हटकर विशिष्ट या सीमित अर्थमें होने लगता है। अँग्रेज़ीके deer तथा संस्कृतके 'मृग' शब्दका प्रयोग पहले 'ज़ानवर'के लिए होता था पर क्रमशः वर्तमान अँग्रेज़ी तथा हिन्दीमें इनका प्रयोग 'हरिण'के लिए हो रहा है। 'गौ' शब्द गम् धातुसे निकला है, जिसका अर्थ है 'गमन करनेवाला' पर अब उसका प्रयोग केवल गायके लिए होता है। इसी प्रकार 'भार्या'का मूल अर्थ है 'जिसका 'भरण-पोषण' किया जाय', पर अब यह केवल पत्नीके लिए प्रयुक्त होता है, यद्यपि आजकी बहुत-सी पत्नियाँ भरण-पोषणकी अपेक्षा बिल्कुल ही नहीं रखतीं। कुछ उदाहरण तो ऐसे भी हैं, जिनमें स्त्रियाँ अपने पतियोंका भी भरण-पोषण करती हैं। श्रद्धासे किया जानेवाला प्रत्येक कार्य कभी 'श्राद्ध' कहा जाता था पर अब केवल मृत्युके बाद ही श्राद्धका प्रयोग होने लगा है। 'वेदना' शब्दका प्रयोग पहले दुःख-सुख दोनोंके लिए होता था। दुःखद वेदना और सुखद वेदना। पर अब वह केवल दुःखके लिए प्रयुक्त होता है। 'घृणा'का पुराना अर्थ दया और घृणा दोनों था, पर अब इसका केवल एक अर्थ—नफरत—है। गंधका प्रयोग अब भी खड़ी बोली आदिमें अच्छी और बुरी दोनों प्रकारकी गंधोंके लिए होता है, पर अवधीमें इसका प्रयोग केवल बहुत बुरी और असह्य दुर्गन्धिके लिए करते हैं। 'वास'का संस्कृतमें अर्थ गंध है पर उसीसे बनी 'बसायल' क्रियाका भोजपुरीमें अर्थ 'बुरी गंध देना' है। अँग्रेज़ीके 'हाउंड' शब्दका पुराना अर्थ कुत्ता था पर अब वह केवल शिकारी कुत्तेके लिए प्रयोगमें आता है। 'घृत' घृ धातुसे संबद्ध है, जिसका अर्थ है सींचना। इसीलिए पहले इसका अर्थ पानी भी होता था, पर अब तो यह केवल घीके लिए प्रयुक्त होता है। 'मुर्ग़'का फ़ारसी अर्थ 'चिड़िया' है, [शाहमुर्ग़ (=पक्षियोंका राजा=शुतुरमुर्ग़), शुतुरमुर्ग़ तथा मुर्ग़ाबी (=जलका पक्षी) में अभी वह अर्थ सुरक्षित है] पर उर्दू, हिन्दीमें एक विशेष पक्षीके लिए मुर्ग़, मुर्ग़ीका प्रयोग होता है। वत्स, बाछा, बछेड़ा, पाड़ा, छौना, मेमना, पोआ, पिल्ला[1] आदि सभी शब्दों-

१. बहुत-सी पुस्तकोंमें ऐसा लिखा मिलता है कि 'पिल्ला'का द्रविड़ भाषाओंमें अर्थ मनुष्यका बच्चा और हिन्दी आदिमें अर्थापकर्षके कारण यह कुत्तेका बच्चा हो गया, किन्तु यथार्थतः यह बात नहीं है। द्रविड़में इसका मूल अर्थ था 'बच्चा' वह चाहे किसीका भी क्यों न हो। आजकल तेलुगुमें इसका अर्थ है 'बच्ची'। वह बच्ची किसीकी भी हो सकती है मनुष्य, जानवर, पक्षी, कीड़े आदि की। प्रयोगके समय इसके साथ उसे जानवर या पक्षीका नाम जोड़ देते हैं। जैसे कुक्क पिल्ल = कुत्तेका पिल्ला।

का अर्थ बच्चा है, पर अब अर्थ संकुचित हो जानेके कारण क्रमशः ये मनुष्य, गाय, घोड़ा, भैंस, सूअर, भेंड़, साँप और कुत्तेके बच्चेके लिए प्रयोगमें आते हैं। (३) अर्थादेश (transference of meaning) —भाव-साहचर्यके कारण कभी-कभी शब्दके प्रधान अर्थके साथ एक गौण अर्थ भी चलने लगता है। कुछ दिनमें ऐसा होता है कि प्रधान अर्थका धीरे-धीरे लोप हो जाता है और गौण अर्थमें ही शब्द प्रयुक्त होने लगता है। इस प्रकार एक अर्थके लोप होने तथा नवीन अर्थके आ जानेको अर्थादेश कहते हैं। ऊपर हम गँवार शब्द ले चुके हैं। इस सम्बन्धमें दूसरा उदाहरण 'असुर'का दिया जा सकता है। ऋग्वेदकी आरम्भकी ऋचाओंमें यह देववाची शब्द है, पर बादमें राक्षसवाची हो गया। 'वर'का अर्थ श्रेष्ठ था पर अब इसका प्रयोग 'दुलहे'के लिए होता है। स्वयं 'दुलहा' शब्द भी इसी प्रकारका है, इसका मूल अर्थ 'जो जल्द न मिले' (= दुर्लभ) था, पर अब वह 'वर'के नवीन अर्थमें ही प्रयुक्त होता है। ईरानी शब्द 'दिहकान'की मूल अर्थ 'देहातका बड़ा तालुकेदार' है, पर पारसी-गुजरातीमें 'देहकानी'-का अर्थ मूर्ख होता है। अशोक 'देवानां प्रियः' कहा जाता था पर बादमें इसका अर्थ 'मूर्ख' हो गया। संस्कृतका वाटिका शब्द बँगलामें बाड़ी हो गया है और उसका अर्थ बगीचेसे हटकर 'घर' हो गया है। बौद्ध धर्मके अनुयायी बौद्ध कहलाते हैं पर 'बुद्धू' (जो उसीका रूपांतर है) का अर्थ मूर्ख होता है। 'मेये' बँगलामें पहले 'माई'के अर्थमें आता था। धीरे-धीरे अर्थादेश होने लगा, और आज रानीगंजके आस-पास इसका अर्थ पत्नी हो गया है। कुछ और उदाहरण भी लिये जा सकते हैं, जिनके कारणोंपर भी विचार किया जा सकता है। 'मौन' शब्द मुनिसे बना है, और आरम्भमें इसका प्रयोग मुनियोंके विशुद्ध आचरणके लिए होता था। मुनि लोग अधिकतर शान्त्यर्थ मौन (चुप) रहते थे अतः धीरे-धीरे मौन शब्दका प्रयोग उस चुप्पीके लिए होने लगा। आज यह केवल मुनियोंकी चुप्पी के लिए ही न होकर साधारण चुप्पीके लिए भी प्रयुक्त होने लगा है, और कभी-कभी स्वीकारका लक्षण भी माना जाता है (मौनं स्वीकृति लक्षणम्)। 'पाषंड' नामका एक संप्रदाय अशोकके समयमें था। बड़ी सराहनाके साथ अशोकने उसके साधुओंको दान दिया था। बादमें वे साधु या उनके शिष्य भ्रष्टाचारी हो गये, अतः पाषंडमें अर्थादेश होने लगा और आज दुष्टता, ढोंग, दिखावट आदिके लिए इसका प्रयोग होता है। 'तारतम्य' शब्दका पहले अर्थ न्यूनाधिक या कम-ज्यादा था। धीरे-धीरे इसका अर्थ 'क्रम' हो गया और आज 'ताँता बँधने'के अर्थमें भी इसका प्रयोग हो रहा है। बँगला भाषामें गृहसे निकले शब्द घरका अर्थ हिन्दीकी भाँति घर न होकर 'कमरा' होने लगा है। यह अर्थादेश तो स्पष्टतः भाव-साहचर्यके कारण हुआ है। इसे अर्थ-संकोचका भी उदाहरण मान सकते हैं, पर अर्थादेशका उदाहरण मानना ही कदाचित् अधिक उचित होगा। (४) अर्थापकर्ष—जैसा कि ऊपर हम कह चुके हैं, यह कोई अर्थ-परिवर्तनकी स्वतन्त्र दिशा नहीं है। ऊपरकी तीन दिशाओंमें अर्थ-परिवर्तन होनेपर कभी-कभी अर्थ बुरा हो जाता है, उसीका विवेचन यहाँ किया जायगा। कबीरने 'हरिजन' शब्दका प्रयोग 'भक्त'के अर्थमें किया है। इधर 'अछूत'का वाचक होकर यह नीचे गिर गया, अब शायद कुछ ऊपर उठ रहा है। 'आबदस्त'-का पुराना अर्थ नमाज पढ़नेके पहले जल या मिट्टी आदिसे मंत्र पढ़कर अपनी शुद्धि करना है पर अब यह शब्द अवधी 'सौंचने' या भोजपुरी 'पानी छूने'के अर्थमें प्रयुक्त होता है। 'जुगुप्सा' शब्द गुप् धातुसे बना है, जिसका पहले छिपाने तथा पालनेके अर्थमें प्रयोग होता था। अर्थादेशसे इसका अर्थ धीरे-धीरे 'घृणा' हो गया। आज भी इसका प्रयोग यही है। 'पालन'से गिरकर घृणा

अर्थमें प्रयुक्त होना 'जुगुप्सा'का अर्थापकर्ष है। आजकल काम-शास्त्र, तथा पाखाना-पेशाब सम्बन्धी अनेक शब्द इतने घृणित समझे जाने लगे हैं कि एकांतमें भी उनका उच्चारण नहीं किया जा सकता। उन सभी शब्दोंका अर्थापकर्ष हुआ है। 'लिंग' शब्दका पुराना अर्थ 'लक्षण' था, धीरे- धीरे इंद्रिय विशेषके अर्थमें प्रयुक्त होने-के कारण इसमें अपकर्ष आ रहा है और संभव है कि कुछ दिनोंमें यह सभ्य समाजसे निकाल दिया जाय। अर्थापकर्षका भाषाके शब्द-समूहपर बड़ा महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। जिन शब्दों-में अश्लीलताकी दृष्टिसे अर्थापकर्ष अधिक हो जाता है, वे धीरे-धीरे अश्लील होनेके कारण 'शब्द-समूह'से निकाल दिये जाते हैं और उनका स्थान नये शब्दों द्वारा पूरा किया जाता है। इस प्रकार किसी भाषाके शब्द-समूहमें परिवर्तन होता है। कभी-कभी ऐसा भी देखा जाता है कि तत्सम शब्द तो अपने ठीक अर्थमें प्रयोगमें आता है, पर उससे निकले तद्भव शब्दका अर्थापकर्ष हो जाता है और उसका हीन अर्थमें प्रयोग होने लगता है। 'नग्न' और 'लुंचित' शब्द पहले जैन साधुओंके लिए आदरके साथ प्रयुक्त होते थे, पर अब उनका तद्भव रूप 'नंगा लुच्चा' बदमाशके लिए प्रयोगमें आता है। 'गर्भिणी' और 'गाभिन' शब्दोंमें भी यह बात स्पष्टतः परिलक्षित होती है। पहले शब्दका सभीके लिए प्रयोग होता है, पर दूसरेका केवल पशुओंके लिए। 'प्रणाली' (रास्ता, युक्ति) तथा पनारी या पनारा (गंदी नाली) भी इसीके उदाहरण हैं। किसी भाषाके शब्दोंके अर्थापकर्षके अध्ययनसे उसके बोलनेवालोंके मनोविज्ञानपर विशेष प्रकाश पड़ सकता है।

(५) **अर्थोत्कर्ष**—यह अर्थापकर्षका विलोम है। कभी-कभी शब्दोंके अर्थ परिवर्तित होने-में पहलेसे अधिक उन्नत हो जाते हैं, इसीको अर्थका उत्कर्ष कहते हैं। 'साहस' शब्दपर हम ऊपर विचार कर चुके हैं। संस्कृतमें इसका प्रयोग बुरे अर्थमें (व्यभिचार, हत्या) होता था पर अब अधिकतर अच्छे अर्थमें और ता-रीफ़के लिए होता है। संस्कृतके 'कर्पट' (पटच्चरं जीर्णवस्त्रं समौ लक्तककर्पटौ—अमर०) और पालीके 'कप्पट'का प्रयोग केवल 'फटे वस्त्र'के लिए होता था पर आजकल अच्छे-से अच्छे वस्त्रके लिए 'कपड़े'का प्रयोग होता है। इसी प्रकार 'मुग्ध'का प्रयोग संस्कृतमें 'मूढ़'के लिए भी होता था, पर आज उसमें मूढ़ताकी तनिक भी गंध नहीं है। 'फिरंगी' शब्द पहले केवल पुर्तगाली डाकूके लिए आता था बादमें इसका हमारे यहाँ अर्थ यूरो-पियन हो गया। यद्यपि नवीन अर्थमें भी यह बहुत उच्च नहीं हो सका है, पर पहले अर्थकी अपेक्षा उसमें उत्कर्ष अवश्य हुआ है। १९४७ के पूर्व संसारमें 'इंडियन' अर्थ बहुत गिरा हुआ था लेकिन अब तो 'इंडियन' होना गौरवकी बात है। 'बन्दी' शब्द भी पहले केवल बुरे अर्थमें आता था क्योंकि केवल चोर आदि ही कारागारमें जाते थे, पर इधर राष्ट्रके देवताओंने इसे इतना पवित्र बना दिया कि कमसे कम १५ अगस्त सन् १९४७ तक बन्दी होना कम गौरवकी बात नहीं थी। आज भी वह वि-शिष्ट योग्यता (special qualification) समझी जाती है। 'अछूत' शब्द भी धीरे-धीरे ऊपर उठ रहा है। इन शब्दोंके उत्कर्षमें देशके मनोविज्ञानका कितना सुन्दर प्रतिबिंब है! सचमुच भाषा-विज्ञानके ही प्रकाशमें मानव-समाजके मनोविज्ञानके वि-कासका शुद्ध इतिहास तैयार किया जा सकता है।

अर्थ-परिवर्तनके कारणोंका आधार—ऊपर जो अर्थ-परिवर्तन दिये गये हैं उनके लिए कुछ कारण उत्तरदायी होते हैं। कारणोंपर विचार करनेके पूर्व उनके आधारोंपर विचार कर लेना उपयुक्त होगा। मनुष्यके मनोवि-ज्ञानमें सर्वदा परिवर्तन होता रहता है, जिस-के फलस्वरूप उसके विचार भी एक-से नहीं रह पाते। भाषा विचारोंकी बालिका है, अतः उसे भी विचारोंका साथ देना पड़ता

है। इस साथ देनेके प्रयासमें ही उसके शब्दोंमें अर्थ-परिवर्तन आ जाता है। इस परिवर्तनके मूलमें कार्य करनेवाले कारणोंपर विचार करना आसान नहीं है, क्योंकि वे इतने संयुक्त और गुथे रहते हैं कि निश्चित स्वरूप दिखाई ही नहीं पड़ता। एक शब्दके अर्थ-परिवर्तनपर विचार करते समय कभी एक कारण दिखाई पड़ता है तो कभी दूसरा। फिर भी एक बात तो निश्चित-सी है कि भाव-साहचर्य ही घूम-फिरकर अधिक अर्थ-परिवर्तनोंमें कार्य करता दिखाई पड़ता है। इसके अतिरिक्त कुछ सामाजिक और भौगोलिक कारण भी होते हैं, पर इनका भी प्रभाव सीधा न पड़कर उसी रास्तेसे पड़ता है। कभी-कभी व्यक्ति या संप्रदायमें विचार-विभिन्नताके कारण भी अर्थ-परिवर्तन हो जाता है।

नीचे इस सम्बन्धमें कुछ कारणोंपर हम लोग विस्तृत रूपसे विचार करेंगे, पर एक बात ध्यानमें रखे रहना आवश्यक है कि किसी भी शब्दमें एक ही कारण नहीं काम करता, इसी कारण, एक कारणके उदाहरणोंमें अन्य कारणोंकी भी गंध मिल सकती है। कारणोंके इस संयुक्त कार्यके कारण ही एक ही प्रकृतिके उदाहरण दो भिन्न कारणोंमें भी यहाँ दिये गये हैं, किंतु अपने-अपने स्थानपर कारणोंका अपना पक्ष स्पष्ट दिया गया है। इन कारणोंको एकमें मिलाकर और कम वर्ग भी बनाये जा सकते हैं, लेकिन स्पष्टताकी दृष्टिसे यहाँ ऐसा नहीं किया गया है।

अर्थ-परिवर्तनके कारण [१] बलका अपसरण (shift of emphasis)—किसी शब्दके उच्चारणमें यदि केवल एक ध्वनिपर बल देने लगें तो धीरे-धीरे शेष ध्वनियाँ कमजोर पड़कर लुप्त हो जाती हैं। उपाध्यायजी परिवर्तित होकर 'झा' इसी बलके अपसरणके कारण हुए हैं। ध्वनिकी ही भाँति अर्थमें भी यह 'बल' कार्य करता है। किसी शब्दके अर्थके प्रधान पक्षसे हटकर बल यदि दूसरेपर आ जाता है तो धीरे-धीरे वही अर्थ प्रधान हो जाता है और प्रधान अर्थ बिल्कुल लुप्त हो जाता है। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि बल कैसे प्रधान पक्षसे हटकर गौणपर जाता है। इसका निश्चित् उत्तर नहीं दिया जा सकता। हाँ, इतना अवश्य कहा जा सकता है कि भाव-साहचर्यका ही यह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव है, जिसमें समीपवर्ती दो भावोंमें एक भाव विजयी बन जाता है। यहाँ कुछ उदाहरण लिये जा सकते हैं। 'गोस्वामी' शब्दका आरम्भका अर्थ था 'बहुतसी गायोंका स्वामी।' बहुतसी गायोंका स्वामी 'धनी' होगा अतः 'माननीय' भी होगा। इसी प्रकार धीरे-धीरे इसका अर्थ माननीय हुआ। वहीं एक और भावना कार्य करने लगी। वह भावना यह थी कि जो अधिक गायोंकी सेवा करेगा वह धर्म-परक भी होगा। इस प्रकार बलके अपसरणसे 'गोस्वामी' शब्द 'गायोंके स्वामी'के अर्थसे चलकर 'माननीय धार्मिक व्यक्ति'का वाचक हो गया। इसी अर्थमें यह मध्ययुगीन सन्तोंके नाम (गोसाईं तुलसीदास)के साथ प्रयुक्त होता है। यों बादमें 'गोस्वामी'की व्याख्या 'इंद्रियोंका स्वामी'के अर्थमें भी की गयी लेकिन वह बादकी व्याख्या मात्र है। मूल अर्थ यह था नहीं। अब तो गोस्वामी या गोसाईं नामकी एक जाति भी हो गयी है। 'जुगुप्सा' शब्दका अर्थ-परिवर्तन भी इसका अच्छा उदाहरण है। यह शब्द गुप् धातुसे बना है, जिसका आरम्भका अर्थ था गायका पालन करना। कुछ दिनों बाद बल केवल 'पालने' पर गया और इसमें अर्थ-विस्तार हुआ। इस प्रकार इसका प्रयोग केवल पालनेके अर्थमें होने लगा। पालन छिपाकर किया जाता है। अतः इसमें छिपानेका भाव आने लगा और कुछ दिनोंमें यही भाव प्रधान हो गया। पुराने अर्थ बिल्कुल लुप्त हो गये और इस शब्दका अर्थ फिर आगे बढ़ने लगा। अधिकतर वही क्रिया या वस्तु छिपायी जाती है जो घृणित होती है, अतएव

घृणाके लिए इसका प्रयोग चल पड़ा। आज भी जुगुप्साका प्रयोग घृणाके लिए होता है। आश्चर्य यह है कि जुगुप्साका अर्थ इतनी लम्बी यात्रा करके और इतना नीचे गिरकर भी शान्त नहीं हो सका है, उसमें फिर परिवर्तन हो रहा है और उसका प्रयोग 'घृणा'के साथ-साथ 'निन्दा'के लिए भी होने लगा है। अरबीका शब्द 'गुलाम' तथा अंग्रेज़ीका 'नेव' (knave), ये दोनों भी इसी वर्गमें आते हैं। दोनोंका आरम्भका अर्थ 'लड़का' है पर बलके अपसरणके कारण दोनोंका अर्थ अब बहुत नीचे गिर गया है। लड़के नौकर रखे जाते थे। पुराने ज़मानेमें नौकर बिल्कुल बन्दीजैसे रहते थे अतः उसीपर बल पड़ते-पड़ते अरबीका 'गुलाम' उधर पहुँचा, और नौकर शरारती होते हैं अतः उसपर बल पड़ते-पड़ते 'नेव' बेचारा वहाँ जा पहुँचा। 'ड्रेस' (dress) का प्राचीन अर्थ है सीधा, straight। फ्रेंचमें अब भी यह अर्थ है। अंग्रेज़ीमें dress timber में वह अर्थ सुरक्षित है। लट्ठे या शहतीरको सीधा करनेके लिए काटना-छाँटना पड़ता था अतः सफाई करना अर्थ हुआ। फोड़ेकी ड्रेसिंगमें वही अर्थ है। चमड़ेकी सफाई भी की जाती थी, जूता आदि बनानेके लिए। अतः ड्रेसमें 'तैयार करने'का अर्थ आया। सलादको ड्रेस अब भी करते हैं। बाल भी ड्रेस करने लगे अतः सजानेका भाव आया और ड्रेस सजानेवाला कपड़ा हो गया। हिन्दीमें 'दरेसी'में कटाई-छँटाईका भाव अब भी है। [२]

पीढ़ी-परिवर्तन—मनुष्य अनुकरणप्रिय प्राणी है, पर स्वयं अपूर्ण होनेके कारण वह शुद्ध और पूर्ण अनुकरण नहीं कर पाता। यही कारण है कि पीढ़ी-परिवर्तनके समय जब पुरानी पीढ़ी चिताकी ओर चल पड़ती है और नयी पीढ़ी मुकुलित होने लगती है तो प्रत्येक क्षेत्रमें परिवर्तन होने लगते हैं। नयी पीढ़ी अनुकरण ठीक न कर सकनेके कारण अनजानमें ही नये रास्तेपर आ खड़ी होती है। यही परिवर्तनका मूल है। यह परिवर्तन ध्वनिके विषयमें तो स्पष्टतः देखा जाता है पर अर्थके विषयमें इसका घटित होना असम्भव नहीं है। अधिक अस्पष्ट अर्थ रखनेवाले शब्दोंके विषयमें तो यह परिवर्तन और भी स्वाभाविक हो जाता है, क्योंकि आवश्यक नहीं है कि नयी पीढ़ी प्रत्येक शब्दको उतनी ही गहराई तक समझे। इसी न समझनेमें नया अर्थ विकसित हो जाता है। मेरा अपना विचार तो यह है कि वे सभी शब्द जिनमें अर्थ-परिवर्तन हुआ है कुछ न कुछ प्रस्तुत कारणसे प्रभावित अवश्य हैं। अर्थात् सभी अर्थ-परिवर्तनोंके मूलमें किसी न किसी अंशमें इस कारणने भी कार्य किया है। यह अवश्य है कि यह बात सभी शब्दोंमें स्पष्ट नहीं है। इस सिद्धान्तके अनुसार तो सभी अर्थपरिवर्तन इसके उदाहरण हो सकते हैं, पर यहाँ केवल एक स्पष्ट उदाहरण ही दिया जा रहा है। 'पत्र' शब्दका इतिहास इस दृष्टिसे बड़ा मनोरंजक है। आरम्भमें लोगोंने पत्र या पत्तेपर लिखना आरम्भ किया। कुछ समय तक पत्तेपर लिखा जाता रहा। दूसरी पीढ़ी आयी और उसने यही सोचा कि जिसपर लिखा जाता है उसे पत्र कहते हैं। यह गलती वहाँ और भी स्पष्ट हो जाती है जब इस नयी पीढ़ीको भोज वृक्षकी छालको भी लिखनेके काममें आनेके कारण भोजपत्र या भूर्जपत्र कहते हम पाते हैं। धीरे-धीरे लिखनेके काममें और भी बराबर, चपटी और पतली चीजें (खाल, पत्थर, काठ इत्यादि) आने लगीं और पत्रका अर्थ आगे आनेवाली पीढ़ियोंने इन्हीं गुणोंको मान लिया और किसी चीज़का बराबर, चपटा और पतला रूप पत्र कहा जाने लगा। आज भी सोने, चाँदी और ताँबेके 'पत्तर' सोनार तथा लोहेके लोहार बनाते हैं। इतना ही नहीं, 'पत्तर'में पतला होनेका प्रधान गुण देखकर किसी पीढ़ीने तो आलंकारिक प्रयोगमें इस संज्ञाको विशेषण बना दिया और यही 'पत्र' या 'पत्तर' भोजपुरीमें 'पातर' और खड़ी

बोलीमें 'पतला' भी हो गया। इसमें बलके अपसरणका भी हाथ स्पष्ट है। [३] **विभाषासे शब्दोंका उधार लेना**--कभी-कभी संसर्ग या आवश्यकताके कारण एक भाषाका शब्द दूसरी भाषामें उधार ले लिया जाता है। ऐसा करनेमें शब्दका शरीर तो आ जाता है (परिवर्तित होकर भी कभी-कभी आता है); पर आत्मा ठीक उसी प्रकार नहीं आती। फल यह होता है कि उधार लेकर प्रयोग करनेवाले लोग उस शरीरमें पिछली आत्मासे मिलती-जुलती कोई आत्मा डालकर उसे अपना लेते हैं। इस प्रकार शब्दकी आत्मा अर्थात् अर्थमें कुछ परिवर्तन हो जाता है। फारसीमें 'मुर्ग'का अर्थ था 'पक्षी'। 'मुर्गावी' शब्दमें अब भी वह अर्थ सुरक्षित है, जिसका अर्थ है 'पानीकी चिड़िया'। हिन्दुस्तानी बोलियोंमें या भाषामें मुर्गका अर्थ पक्षी न रहकर पक्षी विशेष हो गया। इस अर्थ-परिवर्तनकी दिशा अर्थ-संकोच है। फारसीका दूसरा शब्द 'दरिया' (नदी) गुजरातीमें जाकर 'समुद्र'का अर्थ देने लगा है। इसी प्रकार अंग्रेज़ीका क्लाक (clock) शब्द अंग्रेज़ीमें दीवार-घड़ी या घड़ीके लिए प्रयुक्त होता है पर गुजरातीमें उसका अर्थ 'घंटा' हो गया है। अंग्रेजीका ग्लास शब्द, जिसका अर्थ शीशा है हिन्दीमें गिलास बनकर एक विशिष्ट प्रकारके वर्तनका अर्थ देने लगा है। कुछ शब्द हमारे यहाँसे अरबी भाषामें गये हैं। अधिक तो नहीं पर कुछ परिवर्तन उनमें भी हुआ है। संस्कृतका भक्त या भत्त (भात, पका चावल) अरबीमें 'बहत' हो गया है, जिसका वहाँ अर्थ 'खीर' या 'तस्मई' है। यहाँका 'विष' शब्द वहाँ 'वेश' हो गया है, जो एक जहरीली जड़ीका नाम है। संस्कृतका 'उच्च' शब्द अरबीमें 'ओज' हो गया है जिसका प्रयोग वहाँ ज्योतिषके पारिभाषिक शब्द 'ऊर्ध्वविन्दु'के लिए होता है। सच तो यह है कि विभाषाओंमें जानेपर कम शब्द अपने ठीक पुराने अर्थमें प्रयुक्त होते हैं। [४] **एक भाषा-भाषी लोगोंका तितर-बितर होकर विकसित होना**--जब एक भाषा बोलनेवाले लोगोंका समूह कई वर्गोंमें विकसित होने लगता है और अन्तमें अलग-अलग वर्ग बन जाते हैं तो उन विभिन्न वर्गोंमें एक शब्द भिन्न-भिन्न अर्थ देने लगता है। इसके पीछे उन लोगोंका अलग-अलग विकास कार्य करता है। यों ये कारण अकेले कार्य नहीं करते, इनके साथ-साथ अन्य कारण भी काम करते हैं। इसी कारण एक परिवारकी विभिन्न भाषाओंमें कभी-कभी एक ही शब्द अलग-अलग अर्थ देता दिखाई देता है। अधिकतर यह अर्थ-परिवर्तन बहुत साधारण होता है, पर कुछ ऐसे भी उदाहरण मिलते हैं, जिनमें यह इतना अधिक हो जाता है कि पहचाना भी नहीं जाता। 'वाटिका'का संस्कृतमें अर्थ बगीचा था। भोजपुरीमें इसीसे विकसित शब्द 'बारी' बगीचाका अर्थ देता है, पर बँगलामें यह शब्द 'बाड़ी' हो गया है, जिसका अर्थ घर है। संस्कृतका 'नील' शब्द हिन्दीमें नीला है और अपना मूल अर्थ देता है पर गुजरातीमें यह 'लीलो' होकर 'हरे'का अर्थ देने लगा है। अंग्रेज़ी और हिन्दी दोनों ही एक ही भारोपीय परिवारकी भाषाएँ हैं, पर कितना आश्चर्य है कि, इनके फी (fee) और 'पशु' शब्दोंके अर्थमें इतना महान् अन्तर हो गया है यद्यपि ये दोनों मूलतः एक ही शब्द हैं। इसी प्रकार संस्कृतके युग(दो) तथा अंग्रेज़ीके योक (yoke) एवं संस्कृतका मृग (=जानवर) और फारसीका 'मुर्ग' (=पक्षी) भी मूलतः एक ही शब्द है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि ऐसे शब्दोंकी ध्वनिमें भी पर्याप्त परिवर्तन हो जाता है। ऐसे परिवर्तन बहुत अधिक शब्दोंमें नहीं मिलते। [५] **वातावरणमें परिवर्तन**--वातावरणमें परिवर्तन हो जानेके कारण भी कुछ शब्दोंमें अर्थ-परिवर्तन हो जाता है। ऊपर हम लोगोंने जिस कारणपर अभी विचार किया है, उसमें भी यह काम करता है। वातावरण कई प्रकारके

हो सकते हैं, अतः सभीको अलग-अलग लेना उचित होगा। [क] **भौगोलिक वातावरण**--इसके अन्तर्गत नदी, पर्वत, पेड़ आदि लिये जा सकते हैं। सब जगह एक ही प्रकारके पेड़ नहीं मिलते। थोड़ी देरके लिए मान लें कि हम एक ऐसे स्थानपर रह रहे हैं जहाँ 'क' नामका पेड़ अधिक है और उससे हमें लाभ है। थोड़े दिन बाद हम किसी कारणवश वहाँसे हटकर कहीं और चले आये जहाँ वह पेड़ तो नहीं है, पर एक दूसरा पेड़ उसी प्रकार बहुतायतसे मिलता है साथ ही उसी पेड़की भाँति लाभकर भी है। ऐसी दशामें यह स्वाभाविक है, हम उसी पुराने नामसे नये पेड़को भी पुकारने लगें। वह ठीक उसी प्रकार है, जैसे छोटे लड़के यदि कहीं बाहर जाकर कोई नदी देखते हैं तो उसे अपने गाँव या नगरकी ही नदी समझते हैं, और उसे उसी नामसे पुकारने भी लगते हैं। अंग्रेजीमें कार्न (corn)का अर्थ गल्ला है, पर अमेरिकामें भौगोलिक वातावरणके परिवर्तनके कारण इसका प्रयोग मक्काके लिए होता है, जो वहाँका प्रधान अन्न था और जिसे पहले वहाँके मूल निवासी खाते थे। जानवरोंके विषयमें भी यह बात देखी जाती है। वेदोंकी प्राचीनतम ऋचाओंमें 'उष्ट्र'का प्रयोग एक प्रकारके जंगली बैलके लिए हुआ है, पर बादमें संभवतः जब आर्य मरुभूमिमें आ गये थे, इसका प्रयोग ऊँटके लिए होने लगा। [ख] **सामाजिक वातावरण**--एक ही भाषामें एक ही समयमें समाजके वातावरणके अनुसार शब्दोंका अर्थ परिवर्तित होता रहता है। अंग्रेजीके मदर (mother) और सिस्टर (sister) शब्दोंका अर्थ साधारणतः कुछ और है, गिरजाघरोंमें कुछ और है तथा अस्पतालोंमें कुछ और है। इसी प्रकार सभामें व्याख्यान देनेवालेका 'भाई' और 'बहन' कुछ दूसरा अर्थ रखता है और घरमें भाई-बहनका प्रयोग कुछ दूसरा अर्थ रखता है। किसी आफिसमें काम करनेवालेको रविवारके दिन देर तक सोते रहनेपर जब उसकी पत्नी 'अरे भाई उठिये' कहकर जगाती है, तो उसका आशय उन महाशयसे 'भाई'का सम्बन्ध जोड़नेका कभी नहीं रहता। इस प्रकार वातावरणके अनुसार शब्दोंका अर्थ परिवर्तित होता रहता है। नाईका 'खत काटना' और शिशु-कक्षाके लड़केका सरकंडेकी कलममें 'खत काटना' भी एक अर्थ नहीं रखते। विद्यार्थीके प्रयोगमें आनेवाला 'कलम' शब्द तथा मालीका 'कलम' शब्द भी एक नहीं है। इस प्रकारके और भी बहुतसे उदाहरण मिल सकते हैं। [ग] **प्रथा या प्रचलन संबंधी वातावरण**--लौकिक प्रथाएँ तथा रस्मरिवाज भी समयके अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं। इस वातावरणके परिवर्तनमें ऐसा होता है कि पुरानी प्रथाओंके कुछ शब्द तो लुप्त हो जाते हैं, पर कुछ शब्द नये अर्थमें प्रयुक्त होने लगते हैं। वैदिक शब्द 'यजमान' यज्ञ करनेवालेके लिए प्रयुक्त होता था। यज्ञकी प्रथाके लुप्त होनेके साथ-साथ उसका वह अर्थ भी समाप्त हो गया। आज किसीने यदि एक पैसा भी किसी ब्राह्मणको दे दिया तो तुरन्त ब्राह्मण देवता 'जजमान, तुम्हारा भगवान भला करें', कहकर आशीर्वाद देते हैं। इतना ही नहीं; देहातोंमें नाई लोग आपसमें गाँवोंकी हजामत बनानेके लिए क्षेत्र बाँट लेते हैं और अपने हिस्सेके गाँव या घरोंको अपनी 'जजमानी' कहते हैं। इसी प्रकार स्वयंवरकी प्रथा आज नहीं रही, पर 'वर'का प्रयोग 'दुलहे'के लिए चल रहा है। अब 'वर' शब्दसे चुने जानेका अर्थ निकल गया है। हिन्दी क्षेत्रमें १००० ई० के आसपास 'गाड़ी'का अर्थ ठीक वही नहीं था जो आज है। ऐसे अर्थ-परिवर्तन देहातमें प्रयुक्त होनेवाले अनेकानेक शब्दोंमें मिलते हैं। [६] **नवीन वस्तुओं का निर्माण तथा प्रचलन**--जब नवीन वस्तुएँ बनती हैं तो उनके नामकी समस्या हमारे समक्ष आती है। अधिकतर ऐसा किया जाता है कि

जिस सामग्रीसे वह वस्तु बनती है उसीके नामका प्रचलन वस्तुके लिए हो जाता है और इस प्रकार उस शब्दमें एक नवीन अर्थ प्रवेश कर जाता है। भारतवर्षमें गिलासें पहले शीशेकी बनीं। शीशेको अंग्रेज़ीमें ग्लास (glass) कहते हैं, अतः यहाँ उससे बनी वस्तुको भी ग्लास या गिलास कहने लगे। अंग्रेज़ीका पेन (pen) शब्द भी इसका अच्छा उदाहरण है। पहले कलमें पंखकी बनती थीं, अतः पंख (pinna) का ही प्रयोग उनके लिए भी होने लगा। अब लोहेकी कलमको भी पेन कहते हैं। यह किसीको भी ध्यान नहीं कि 'पेन'का यथार्थ अर्थ 'पंख' है। 'शीशा'का अर्थ इसी प्रकार 'दर्पण' हो गया है। पहले दर्पण धातुके बनते थे। उन्हें रगड़कर मुँह देखने योग्य रखा जाता था। नवीन वस्तुओंके निर्माणमें नाम सर्वदा सामग्रीपर ही आधारित नहीं रहते। कभी-कभी बनानेकी क्रियापर भी उसका नाम रख दिया जाता है और थोड़े दिनोंमें नामके आधारको भूलकर उस शब्दका अर्थ ही उस वस्तुको समझ लेते हैं। पुस्तकें ग्रंथन कर या गूँथकर बनायी जाती थीं, अतः उसका नाम 'ग्रन्थ' पड़ गया। अब हम ग्रंथका सीधा अर्थ पुस्तक ही समझते हैं। भोजपुरीका 'डाँड' शब्द भी जो जुर्मानेके अर्थमें प्रयुक्त होता है इसीका उदाहरण है। पहले दण्ड या डण्डेसे सज़ा दी जाती थी, पर आज तो रुपयेके जुर्मानेको भी 'डाँड' या 'डंड' कहते हैं। जिस कामके लिए चीज़ बने उसके आधारपर भी नाम पड़ जाता है और उसका भी अर्थ बदल जाता है। कापी (नकल) करनेके लिए कागजकी कॉपी इसी रूपमें कॉपी कही जाती है। [७] **नम्रता-प्रदर्शन**—नम्रता प्रदर्शनके कारण भी शब्दके अर्थमें परिवर्तन हो जाता है। जब उत्तरी भारतका कोई ऐसा आदमी जिसका शीन-क़ाफ़ दुरुस्त है, किसीसे पूछता है, कि आपका दौलतख़ाना कहाँ है, तो उसका 'दौलतखाने'से आशय 'धनका भंडार' न होकर 'घर' होता है। यहाँ दौलतखानेका अर्थ परिवर्तित होकर घर हो गया है। इसी प्रकार अपने घरको लोग 'ग़रीबख़ाना' कहते हैं। हिन्दीमें किसीका नाम पूछनेके लिए पूछा जाता है 'श्रीमान् किन-किन अक्षरोंको सुशोभित करते हैं?' संस्कृत साहित्यमें कहीं-कहीं ऐसा मिलता है कि 'आप कहाँसे आ रहे हैं?' पूछनेके लिए 'आप किस देश या स्थलकी श्रीको क्षीण करके आ रहे हैं?' का प्रयोग हुआ है। भारोपीय परिवारकी लगभग सभी भाषाओंमें नम्रता-प्रदर्शनका विशेष स्थान है। उर्दू राज-दरबारोंमें विकसित होनेके कारण संभवतः इन सबमें आगे है। उसमें 'आप'के लिए 'ग़रीब-परवर', 'जहाँपनाह' आदिका प्रयोग चलता है। रीवाँ आदि राज्योंमें सारी प्रजा तथा राज्य-कर्मचारी राजासे बात करते समय 'अन्नदाता' कहा करते रहे हैं। उर्दूमें यदि स्वयं कुछ कहना हो तो कहा जाता है 'कुछ अरज़ करना चाहता हूँ।' लेकिन दूसरेसे कहनेके लिए कहा जाता है 'अब आप कुछ फरमानेकी तकलीफ़ गँवारा करें।' कोई अफसर जब किसी बाबू या क्लर्कको बुलाना चाहता है तो चपरासीसे यह न कहकर कि 'अमुक बाबूको बुला लाओ' 'अमुक बाबूको सलाम बोलो' कहता है। भोजपुरीमें आदरके लिए 'राउर' शब्द प्रयुक्त होता है जो 'राजकुल्य'का रूपान्तर है। हिन्दी तथा अंग्रेज़ीमें मध्यम पुरुष एक वचन (तू-thou) का प्रयोग बहुत कम होता है। उसके स्थानपर आदरके लिए बहुवचन (तुम, you) का प्रयोग ही अधिक चलता है। पर, उस अनादरसूचक तू और thou का प्रयोग ईश्वर तथा अपने घनिष्ठके लिए बड़े प्यारसे किया जाता है। इसी प्रकार भोजपुरीमें माताके लिए 'तें'का प्रयोग होता है जो साधारणतः अनादरसूचक समझा जाता है। नम्रता-प्रदर्शनमें भाषा-संसारमें जापानी भाषा सबसे आगे है। उसमें साधारण प्रयोगसे पूर्णतया

हैं। [९]. **अधिक शब्दोंके स्थानपर एक शब्दका प्रयोग**—मनुष्यमें आलस्य अधिक है और इसीलिए कमसे कम परिश्रमसे वह अपना काम निकालना चाहता है। बोलनेमें भी वह चाहता है कि कम-से-कम शब्दोंमें अपने अधिक-से-अधिक भाव व्यक्त कर सके। इस प्रयासमें अधिक प्रयोगमें आये शब्दोंके कुछ अंश तथा शब्द-समूहके एक-दो शब्द वह छोड़ देता है। ऐसा करनेसे शेष अंश ही पूरेका अर्थ देने लगता है और इस प्रकार अर्थ-परिवर्तन हो जाता है। रेल (ट्रेनकी पटरी)पर चलनेके कारण ट्रेनको रेलगाड़ी कहा गया। अब गाड़ी शब्द हटा दिया गया है, और केवल रेलका अर्थ रेलगाड़ी हो गया है। पढ़े-लिखोंको छोड़कर अब तो कम लोग इसे जानते भी हैं, कि रेल पटरीको कहते हैं। इस प्रकार रेलके अर्थमें काफी परिवर्तन हो गया है। इसी तरह **तारका** प्रयोग अब तार द्वारा भेजी गयी खबरके लिए होने लगा। पहले हाथीको **हस्तिन् मृग** [ऐसा जानवर जिसके हाथ [सूँड़ हो] कहा जाता था, बादमें मृग छोड़ दिया गया और केवल 'हस्तिन्' ही पूरेका अर्थ देने लगा। **रेलवे स्टेशनके** लिए स्टेशन, **मोटरकारके** लिए मोटर या कार. **जिन रिक्शाके** लिए **रिक्शा, साइकिल रिकशाके** लिए **रिक्शा, प्रिंसपल टीचरके** लिए **प्रिंसपल, कैपिटल सिटी** (capital city)के लिए कैपिटल (capital) नेकटाई (necktie)के लिए टाई तथा **पोस्टल-स्टैम्प** (postal stamp) के लिए **स्टैम्प**का प्रयोग अब सर्वत्र हो रहा है। टिन धातुसे बने पीपेको 'टिनका पीपा' न कहकर **टिन या पीपा** कहा जाता है। दो पहियोंका होनेके कारण **बाइसिकिल** नाम पड़ा। अब केवल **साइकिल** कहा जा रहा है, जिसका अर्थ पहिया मात्र है। विद्यार्थी लोग तो **बाइक** कहते हैं। मीट (meat)का अर्थ था खाद्य। (sweetmeat = मीठा खाद्य या मिठाई) फ्लेश 'मीट'का प्रयोग किया गया खानेके लिए प्रयुक्त गोश्तके लिए बादमें फ्लेश हट गया और मीटका ही प्रयोग 'गोश्त'के लिए होने लगा। इस प्रकारके रोजके प्रयोगमें आनेवाले बहुतसे शब्द मिलते हैं, जिनका अर्थ परिवर्तित हो गया है। [१०] **सादृश्य** (analogy) सादृश्यके कारण भी कभी-कभी अर्थ-परिवर्तन होता है, पर इसके उदाहरण अधिक नहीं मिलते। अंग्रेजीसे हिन्दीमें जो बहुतसे शब्द आये हैं उनमें 'टिकिट' और 'टैक्स' भी हैं। इनमें 'टिकट'का रूप तो **टिकट या टिकठ** मिलता है और उसीके सादृश्यपर 'टैक्स'का रूप **टिकस** या **टिक्कस** ('टिक्कसमें घर-बार बिकानो'—भारतेंदुकालीन एक पंक्ति) हो गया है। 'टिकट' और 'टिक्स' रूप साम्यके कारण **टिक्स**के अर्थमें परिवर्तित हो गया है और अब देहातमें (भोजपुरी प्रदेश) प्रायः लोग **टिकट**के स्थानपर उस अर्थमें **टिक्स** (रेलका, डाकका, रसीदी)का भी प्रयोग करते हैं। यहाँ ध्यान देनेकी बात है सादृश्यके कारण अर्थ-परिवर्तन अज्ञानका सहारा लेकर घटित होता है। यों भाषाके अधिकांश परिवर्तन अज्ञानके क्रोड़में पड़ते हैं। आधुनिक कालमें संस्कृतका कम ज्ञान रखनेवाले अनेक साहित्यकारोंने बहुतसे संस्कृत शब्दोंके अर्थमें इस प्रकार परिवर्तन ला दिये हैं। और कुछ शब्द तो खूब चल पड़े हैं। **प्रश्रय**का संस्कृतमें अर्थ था विनय, शिष्टता, नम्रता। **आश्रय** शब्द इससे मिलता-जुलता है, अतः **आश्रय या सहारा** अर्थमें इसका प्रयोग होने लगा है। इसी प्रकार 'उत्क्रांति' (मूल अर्थ मृत्यु या उछाल)का 'क्रांति'के अर्थमें या उत्क्रोश (मूल अर्थ एक पक्षी या चिल्ल-पों) का आक्रोशके अर्थमें प्रयोग भी इसी वर्गके परिवर्तनसे युक्त है। देहातमें 'कन्सेशन'के अर्थमें मैंने 'कनेक्शन'का भी प्रयोग सुना है। [११] **ग़लत या नये अर्थमें प्रयोग**—कलाकार लोग नये शब्द तो गढ़ते ही हैं, शब्दोंको नये अर्थमें व्यवहार करना भी पसंद करते हैं। ऐसा वे लोग इसीलिए

नहीं करते कि भाव-प्रकाशनमें कठिनाई पड़ती है, अपितु केवल अपनी शैलीको चटकीली और आकर्षक बनानेके लिए। ऐसे प्रयोग श्री बेचन शर्मा 'उग्र' तथा श्री निरालामें यथेष्ट मात्रामें मिलते हैं। अज्ञेयजीकी किसी पुस्तकपर उनका परिचय छपा था। परिचयके अन्तमें भावी पुस्तकके संबंधमें लिखा था कि अमुक पुस्तकके निकलनेकी आशंका है। यहाँ प्रयोग तो **आशा**का होना चाहिए पर वहाँ आकर्षणके लिए **आशंका**का आगमन हो गया। इस एक ही प्रयोगसे आशंकाके अर्थपर अधिक प्रभाव नहीं पड़ सकता, पर दो-चार जगह भी ऐसा छपा तो फिर अनुकरणकी धारामें सर्वत्र इसका प्रयोग चल पड़ेगा और फिर अवश्य ही अर्थमें परिवर्तन होने लगेगा। शिवदत्तजी ज्ञानीकी एक पुस्तककी भूमिकामें श्री क० मा० मुंशीने लिखा है कि यह पुस्तक मेरी 'सूचना'से लिखी गयी है। वहाँ सूचनाका भी असाधारण प्रयोग है। विद्यापति, कबीर और सूरके पदोंमें तथा आजके रहस्यवाद, छायावाद और प्रयोगवादके कवियोंमें निरंकुश प्रयोग पर्याप्त मात्रामें मिल सकते हैं। कभी-कभी कलाकारोंके अतिरिक्त अन्य लोग भी अज्ञान या आवश्यकतावश ऐसा करते हैं। आजकल हिन्दीमें परिभाषाके शब्दोंकी आवश्यकता है। इसके लिए कुछ पुराने शब्दोंको भी लिया जा रहा है। **आकाशवाणी**का पौराणिक कथाओंमें एक अर्थ है, लेकिन अब पं० सुमित्रानन्दन पंतकी कृपासे यह 'रेडियो'का समानार्थी हो गया है। शासन-विषयक जितने भी शब्द आजकल लिये गये हैं उनके अर्थोंमें इस प्रकारके परिवर्तन आ गये हैं, क्योंकि उनका प्रयोग ठीक आजके **अर्थमें** नहीं था—जैसे संसद्, सदन आदि। संस्कृतका धन्यवाद (प्रशंसा) हिन्दीमें शुक्रिया हो गया है। लोकभाषाओंमें गलतीके कारण अर्थ-परिवर्तनके अच्छे उदाहरण मिलते हैं। जैसे अवधीमें 'बूढ़ा'के लिए **बुढ़ापा**, भोजपुरीमें कलंकके लिए **अकलंक**, फजूलके लिए **बेफजूल**, गुजरातीमें 'जरूरत'के लिए **जरूर**। अंग्रेज़ीमें इससे मिलती-जुलती चीज **मैलाप्रापिज्म** (malapropism) है। (दे०) **मैला प्रापिज्म**। [१२]

पुनरावृत्ति—कभी-कभी शब्दोंका दुहरा प्रयोग चल पड़ता है और इसके कारण भी उनके **आधे भागके अर्थमें** परिवर्तन हो जाता है। अब 'विन्ध्याचल पर्वत'का प्रयोग चल पड़ा है। ऐसे प्रयोग करनेवाले 'विन्ध्याचल'का अर्थ विन्ध्य पर्वत न लेकर उसे पर्वतका नाममात्र समझते हैं। मलयगिरिके विषयमें भी यही बात है। द्राविड़ भाषामें मलय शब्द ही पहाड़का अर्थ रखता है, पर हम लोगोंने मलयको नाम समझकर उसके साथ गिरि जोड़ लिया है। कुछ लोग तो मलयागिरि पर्वत भी कहते हैं। इसी प्रकार कुछ लोग हिमाचल पर्वत भी कहते हैं। डबल रोटीको **पावरोटी** भी कहते हैं। इस दुहरे प्रयोगका परिणाम यह हुआ कि लोग पावका अर्थ डबल लगाने लगे हैं जब कि पावका अर्थ रोटी होता है। **दरअसलमें, दरहकीकतमें** 'किन्तु फिर भी,' 'पर फिर भी' आदि प्रयोग भी ऐसे ही हैं। यह ठीक उसके उलटा है जिसमें दो शब्दोंके लिए एकका प्रयोग (रेलगाड़ीके लिए रेल) होता है क्योंकि यहाँ एक शब्दके लिए एकका प्रयोग है। **सज्जन व्यक्ति**का प्रयोग भी इसी श्रेणीका है। अनुवादात्मक युग (rranslation compound) भी इसी प्रकारके होते हैं। 'सौदा-सुलुफ'में सुलुफका अर्थ लोग अब 'वगैरह' जानने लगे हैं। [१३]

एक शब्दके दो रूपोंका प्रचलन—जीवित भाषामें एक वस्तु या कार्यके लिए ठीक एक अर्थ रखनेवाले दो शब्द नहीं रह सकते। भाषा यह व्यर्थका बोझ स्वीकार नहीं करती। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि एक तत्सम शब्दके साथ-साथ उसके तद्भव या अर्द्धतद्भव शब्दका भी प्रचलन हो जाता है। ऐसी दशामें दो बातोंमें-से

कोई एक घटित होती है। या तो दोनोंमें-से कोई एक लुप्त हो जाता है। या फिर किसी एकका अर्थ कुछ भिन्न हो जाता है। यहाँ हमें दूसरी बातपर विचार करना है। हिन्दी-में कुछ शब्दोंके दो रूप चल रहे हैं और भाषा यह बोझ स्वीकार नहीं कर सकती, अतः दोनोंके अर्थमें भेद हो गया है। इस प्रकार दो रूपके प्रचलनमें भी अर्थ-परिवर्तन अवश्यम्भावी हो जाता है। इन दो अर्थोंमें प्रायः देखा जाता है कि तत्सम प्राचीन शब्द तो कुछ उच्च अर्थ रखते हैं पर तद्भव शब्द कुछ हीन या नया अर्थ। स्तन और थन एक ही हैं पर दोनोंके अर्थमें अब भेद है। एकका प्रयोग मनुष्यके लिए होता है तथा दूसरेका पशुके लिए। इसी प्रकार स्थान और थान शब्द है। स्थानका प्रयोग देवी-देवताओंके लिए होता है और थानका प्रयोग हाथी या घोड़ेके लिए। जैसे—'यह ब्रह्मजीका **स्थान** है।' या 'हाथीका **थान** यहाँ है।' इस प्रकारके और भी उदाहरण दिये जा सकते हैं—**गर्भिणी** (स्त्री), **गाभिन** (गाय, भैंस); **ब्राह्मण** (शिक्षित ब्राह्मण), **बाम्हन** (निरक्षर); **साधु, साहू**; **भोज, भोजन**; **परीक्षक, पारखी**; **तिलक, टिकुली** (स्त्रियों-के ललाटपर लगानेकी काँच आदिकी बिन्दी) **सौभाग्य, सोहाग** तथा **वार्ता, बात** इत्यादि। अर्थ-विचारके प्रसिद्ध मनीषी ब्रीलने इसे भेद-भावका नियम (law of differentiation) कहा है। उनका भी यही कहना है कि सामान्य जनताका मस्तिष्क एक साथ ही एक अर्थके दो शब्द नहीं ढो सकता। एक शब्द दो विचारोंको व्यक्त करे यह ठीक हो सकता है पर एक विचारके लिए दो शब्द हों यह व्यर्थ है। साहित्यमें एक वस्तु या विचारके लिए कई शब्द चलते हैं, पर उनका बिलकुल एक ही अर्थ नहीं होता। उनका प्रयोग अपना अलग-अलग महत्त्व रखता है। पंतजीने 'पल्लव'की भूमिकामें पवन, प्रभंजन, वायु, श्वसन तथा समीर आदि-का अन्तर दिखलाया है। खैर इनमें अन्तर हो या न हो, प्रचलित भाषामें एक शब्द-के दो रूपोंमें तो प्रायः अन्तर हो ही जाता है जैसा कि हम ऊपर देख चुके हैं। [१४] **शब्दोंका अधिक प्रयोग**—अधिक प्रयोग-से शब्द घिस जाते हैं और उनसे परिचय इतना अधिक बढ़ जाता है कि उनकी शक्ति क्षीण हो जाती है। श्रीयुत, श्रीमान् या श्री का प्रयोग आरम्भमें काफी सुन्दर तथा सार्थक लगता था पर अब वे प्रयोगसे इतने घिस गये हैं कि निरर्थक-से जान पड़ते हैं, और उनमें औपचारिकता मात्र रह गयी है। पुरानी शक्ति अब उनमें तनिक भी नहीं है। बाबू शब्द भी अब पुराना अर्थ (बड़प्पन और जमीं-दारीकी शान) नहीं देता। आफिसके सभी क्लर्क और दूकानोंपर जानेवाले सभी ग्राहक आज बाबू हो गये हैं। मजाकमें अपने देर करनेवाले मित्रसे भी लोग कहते हैं 'बाबू ज़रा जल्दी करो।' इतना ही नहीं संयुक्तप्रान्तके पूर्वी ज़िलोंमें तो इसका अर्थ **गुंडा** या **छैला** भी लिया जाने लगा है। साम्यवाद, नेता, क्रांति, संस्कृति, कला आदि भी अब उतनी शक्ति नहीं रखते जितनी पहले रखते थे। विशेषणों और क्रिया-विशेषणोंमें यह बात और भी अधिक घटती है। 'बहुत' शब्द अब कुछ व्यर्थ हो रहा है। उसके स्थानपर **अत्यन्त** या **अतिशय** आदिका प्रयोग अधिक जोर-दार ज्ञात होता है। अधिकके शिथिल पड़ने-पर **अत्यधिक, अत्यन्ताधिक** या **अधिकाधिक**के प्रयोग होने लगे हैं। [१५] **किसी राष्ट्र, जाति, संप्रदाय या वर्गके प्रति सामान्य मनोभाव**—किसी जाति, राष्ट्र या जन-समुदायके प्रति जब जैसी भावना होती है उसकी छाया उनके शब्दके अर्थोंपर भी पड़ती है। इस संबंधमें कभी-कभी तो ऐसा भी देखा गया है कि अर्थ पूर्णतः उलटा हो जाता है। 'असुर'का पहले हमारे यहाँ देवता अर्थ था। उस समयतक संभवतः ईरानवालोंके प्रति हम लोगोंके विचार बुरे नहीं थे, पर ज्यों ही विचार बदले हमने उस शब्दका अर्थ **राक्षस** इसलिए कर लिया कि वह नाम ईरानियोंके

प्रधान देवता (अहुर मज़्दा) का था। यही बात वहाँ भी हुई। हमारे 'देव' शब्दका अर्थ उन लोगोंने अपने यहाँ अदेव या राक्षस कर लिया। सांप्रदायिक दंगों तथा पाकिस्तानके बँटवारेके समयसे मुसलमान शब्दका अर्थ यहाँ कुछ गिर गया है। 'हिन्दू' शब्दकी यही दशा पाकिस्तानमें है। सनातनी हिन्दुओंमें 'ईसाई'के अर्थकी भी यही दशा है। फ़ारसीमें हिन्दूका अर्थ बहुत पहलेसे 'गुलाम', 'काफ़िर' और 'नापाक' आदि है। अनार्योंके कुछ शब्दोंका अर्थ भी आर्योंने घृणाके कारण गिरे अर्थमें अपने यहाँ रखा। आर्येतर परिवारका 'पिल्ला' शब्द मूलतः लड़का या किशोर (किसी भी जीवका) का समानार्थी है, पर आर्योंने उसे कुत्तेके बच्चोंके लिए प्रयोग करना आरम्भ किया, आज भी लगभग सभी आर्य भाषाओंमें यह शब्द इसी अर्थमें प्रयुक्त होता है। आर्यसमाजियोंका सनातनधर्मियोंके प्रति श्रद्धाका भाव नहीं है। वे उन्हें धर्मकी दुर्दशा करनेवाले तथा ढोंगी मानते हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि आर्यसमाजियोंके मस्तिष्कमें व्रत, कथा, श्राद्ध, माला, मूर्ति आदिका वह उच्च अर्थ नहीं है जो सनातनधर्मियोंमें है। कुछ त्यौहारोंके विषयमें शिया और सुन्नी मुसलमानोंमें भी यही अन्तर है, जिसके कारण उनसे सम्बन्धित शब्दोंके अर्थपर भी प्रभाव पड़ा है। जबसे श्रेणी-संघर्ष (class-Struggle) का सिद्धान्त समाजके लिए आवश्यक समझा गया है, फ्रेंच शब्द बुरजुआ; हिन्दीका पूंजीवादी, सामंत, राजा, जमींदार, तालुकेदार, इलाकेदार आदिका अर्थ कितना नीचे गिर गया है? स्वयं 'कांग्रेस' शब्दमें जो उच्चता, पवित्रता, स्वार्थ-त्याग और बलिदान आदिकी भावना थी, आज समाजवादियों और कम्यूनिस्टोंके प्रभाव एवं कांग्रेसियोंके पतनके कारण बिल्कुल नहीं रह गयी है। सम्भव है, आगे यह शब्द और भी गिरे। [१६] **एक वर्गके एक शब्दमें अर्थ-परिवर्तन**—शब्द अधिकतर वर्गोंमें रहते हैं। यदि वर्गमें किसी एक भी शब्दके अर्थमें परिवर्तन हुआ तो उसका प्रभाव शेष शब्दोंके अर्थपर भी पड़ता है। वर्ग कई प्रकारके होते हैं। यहाँ कुछ प्रधानपर विचार किया जा सकता है। एक धातुसे बननेवाले सारे शब्द व्याकरणकी दृष्टिसे एक वर्गके हैं। उनमें एकमें परिवर्तन उपस्थित होते ही अन्यपर भी प्रभाव पड़ जाता है। यदि 'करना'का प्रयोग आज बुरे कार्योंके लिए ही किसी प्रकार सीमित हो जाय तो कराना, करवाना, किया, करवाया, क्रिया आदिके अर्थपर भी उसकी छाया अवश्य पड़ेगी। दुर्लभसे दूल्हा शब्द बना और उसका प्रयोग वरके लिए होने लगा। इसका प्रभाव दुर्लभ, दुलही या दुलहिनपर भी पड़ा और अन्तिम दोका प्रयोग वधूके लिए चल पड़ा। दुहिताका अर्थ 'गाय दुहनेवाली' था। बादमें जब इसका अर्थ लड़की हो गया तो इससे बननेवाले दौहित्र, दौहित्री, दौहित्रायण आदि शब्दोंका अर्थ भी उसीके अनुसार परिवर्तित हो गया। कुछ शब्दोंका वर्ग, प्रयोग या संदर्भके साथके कारण भी होता है। अहिंसा, सत्य, कांग्रेस आदि एक वर्गके शब्द हैं। धर्म-कर्म, पूजा-पाठ, जप-तप, ईश्वर-आत्मा आदि भी एक वर्गके शब्द हैं। इधर धर्मके प्रति क्षोभ होनेके कारण उसकी पवित्रता अधिक लोगोंके मस्तिष्कसे निकल गयी है। इसका प्रभाव पूजा, जप, माला, भजन, तीर्थ, कथा तथा व्रत आदिपर इतना पड़ा है कि ये सभी प्रायः ढोंग समझे जाने लगे हैं। शब्दोंके अर्थकी समीपताके आधारपर भी वर्ग बनाये जा सकते हैं। उनमें भी उपर्युक्त बातें पायी जायँगी।

[१७] **अनजाने साहचर्य आदिके कारण नवीन अर्थका प्रवेश**—ऐसी दशामें अधिकतर अर्थादेश हो जाता है। सिन्धुका अर्थ बड़ी नदी या समुद्र था। आर्योंने सिन्धु नदीको भारतमें आनेपर सिन्धु कहा। कुछ दिनमें नदीके आसपासकी भूमि भी सिन्धु कही जाने लगी। सिन्धुसे सैंधव शब्द बना जिसका अर्थ है, 'सिन्धुका' या 'सिन्धु देशमें होने-

वाला'। उस समय सिन्धुदेशकी प्रधान वस्तु 'घोड़ा' और 'नमक' होनेके कारण, सैन्धव-का प्रयोग इन दोनोंके लिए होने लगा। उधर बादमें सिन्धुके निवासियोंको भी सिन्धु कहा जाने लगा। जिसका फारसी रूप हिन्दु या हिन्दू हो गया। इस प्रकार अनजाने धीरे-धीरे सिन्धु शब्दका अर्थ जड़से चेतन हो गया। पत्र शब्दका प्रयोग अब पत्रपर लिखे विचारों या शब्दोंके लिए भी होने लगा है। 'पत्रमें अशुद्धियाँ बहुत हैं'का अर्थ कागजकी अशुद्धियाँ न होकर शब्द या वाक्यकी अशुद्धियाँ हैं। 'पत्र रुला देनेवाला है' में पत्रका अर्थ विचार है। आज ये अर्थ प्रधान तो नहीं हैं पर आ गये हैं, सम्भव है कि प्रधान भी हो जायँ और अर्थ-परिवर्तन और भी स्पष्ट हो जाय। सुर्ती, चीनी, मिस्री और मोरसके अर्थोंमें भी इसी प्रकार परिवर्तन हो गया है। [१८] **किसी शब्द, वर्ग या वस्तुमें एक विशेषताका प्राधान्य**—एक विशेषताके प्राधान्य-के कारण वही उस वस्तु या वर्ग आदिका प्रतीक समझा जाने लगता है। इसमें अर्थ-विस्तार और अर्थ-संकोच दोनों ही होता है। कम्युनिस्टोंकी प्रधान निशानी 'लाल झण्डा' है, अतः वे चारों ओर इस नामसे ही अधिक प्रसिद्ध हो रहे हैं। देहातमें तो इन्हें 'लाल झण्डा'की ही जैसे संज्ञा दे दी गयी है। 'लाल झण्डाकी सभा है' का अर्थ है 'कम्युनिस्टोंकी सभा है'। यहाँ लाल-झण्डाके अर्थका विस्तार हो गया है। वह अब कम्युनिस्टोंके पूरे समूहका अर्थ रखता है। इसी प्रकार गाँधी टोपीका अर्थ कांग्रेस-से लिया जाता रहा है। लाल पगड़ीका प्रयोग पुलिसके लिए बहुत पहलेसे चल रहा है। **सफेद पगड़ी** पारसी पुरोहितका प्रतीक है। इन सबमें अर्थविस्तार हो गया है; जिसका कारण है किसी एक विशेषताका प्रधान्य। कुछ इस कारण अर्थ-संकोचके भी उदाहरण मिलते हैं। गैसको साधारणतः एक प्रकारका हल्का ईंधन समझा जाता है, अतः गैस शब्द सर्वसाधारणके लिए केवल उसीका बोध कराता है। पर ऐसी भी गैसें हैं जो जलानेके काम नहीं आतीं। यहाँ गैसकी एक विशेषता सर्व-विदित होनेके कारण उसके विस्तृत अर्थमें संकोच हो गया है। फूल प्रायः सुन्दर, कोमल और सुगन्धित होते हैं, अतः सर्वसाधारणमें फूल नामसे इन्हीं तीनों गुणोंका भाव जागृत होता है। यों संसारमें ऐसे **फूलों***—की भी कमी नहीं है, जो बदसूरत और दुर्गन्धिपूर्ण होते हैं। पर फूल नाम या शब्दमें उनके गुणों या दुर्गुणोंको स्थान नहीं है। यहाँ फूलमें अर्थ-संकोच है। [१९] **व्यंग्य**—व्यंग्यके कारण शब्दोंमें अधिकतर अर्थादेश हो जाता है और फिर वे उसी नये अर्थमें प्रचलित हो जाते हैं। हर भाषामें इसके उदाहरण काफी बड़ी संख्यामें मिलते हैं। नीचेके उदाहरणोंमें सभीका शाब्दिक अर्थ बुद्धिमान् है पर व्यंग्य-के कारण प्रचलनमें वे मूर्खके लिए भी प्रयुक्त होते हैं। **तीन हाथकी बुद्धिवाले, अक्लके खजाना**', **अक्लकी पुड़िया, अक्लकी मोटरी**' आदिका प्रयोग तो साहित्यमें भी चलता है। कुछ भोजपुरीके भी उदाहरण लिये जा सकते हैं। 'अक्किलके समुन्दर', 'बुद्धीक पूर' 'दिमागका दोहरा' तथा 'ढेर चल्हाँक' आदि। साहित्यमें या बोल-चालमें **पूरे पंडित** या **पूरे देवता** आदिका अर्थ भी मूर्ख लिया जाता है। गुजरातीमें **दोढ़ चतुर** (चतुरका डेढ़ा)का अर्थ भी मूर्ख ही है। इसी प्रकार 'पूरे **युधिष्ठिरके अवतार**का अर्थ असत्यवादी, **भाग्यके सबसे बड़े साथी**का अर्थ अभागा, '**लक्ष्मीके पति**का अर्थ दीन और **धर्मावतार**-का अर्थ अधर्मी, बुरा आदि लिया जाता है। गन्दे आदमीको 'सफाईका अवतार' कहते हैं, और भद्दे आदमीको 'काम-

* करियारीके फूलकी गंध बड़ी बुरी होती है। घृतकुमारीका फूल तो और भी बुरा महँकता है।

देवके भाई'। इस प्रकार अच्छे गुणोंके व्यंग्यप्रयोग द्वारा हम दुर्गुणोंको प्रकट करते हैं। कभी-कभी इसके विपरीत भी होता है, पर बहुत कम। कभी-कभी अपने साथीको अधिकतर बहुत साफ कपड़े पहने देखकर हम कह उठते हैं "कहो भाई आजकल धोबी तुम्हें नहीं मिल रहा है क्या ?' भोजपुरीमें किसी आदमीको दिन-पर-दिन अधिक स्वस्थ होते देख हम लोग कह उठते हैं, 'दुनियाँ भर क दुबराई तोहरे इहाँ आइल बा का हो ?' स्वास्थ्य, भोजन, धन, बुद्धि, सौंदर्य तथा दशाके विषयमें ही ऐसे प्रयोग अधिक मिलते हैं। [२०] **भावावेश**—भावावेशमें बहुतसे शब्दोंके विषयमें हम असावधान हो जाते हैं और बहुधा बढ़ा-चढ़ाकर या विचित्र अर्थमें प्रयोग करते हैं। कभी-कभी तो इसके उदाहरण भी व्यंग्यसे मिलते-जुलते और यथार्थतः एक प्रकारके व्यंग्य ही दिखाई पड़ते हैं। जब पिता प्रेमके आवेशमें अपने लड़केको 'अरे तू तो बड़ा पाजी है।' कहता है तो पाजीका अर्थ वहाँ बुरा न होकर केवल प्यार होता है। इसी प्रकार लोग प्रेममें **शैतान, नालायक, बेहूदा,** तथा **गदहा** आदिका प्रयोग करते हैं। आजकलके मित्र प्रेमके आवेशमें एक दूसरेको **साले** ही नहीं, जाने और क्या-क्या भी कह जाते हैं। कभी-कभी तो यह कहना (जैसे कहो **बेटा** !) इतनी बड़ी गाली होती है कि कहनेके पीछे यदि प्यार या समीपताकी एक चादर न रहे तो खूनकी नदी बह जाय ! क्रोधके भावावेशमें भी लोग इतने पागल हो उठते हैं कि शब्दोंका विचित्र प्रयोग कर देते हैं। उसमें भी अर्थ-परिवर्तन दिखाई पड़ता है। 'अच्छा बच्चू फिर आना तो पता चलेगा'में 'बच्चू' शब्द प्यारमें लिपटा हुआ 'बच्चा' शब्दका वाचक नहीं है। यहाँ बच्चू केवल इतना बतला रहा है कि क्रोध करनेवाला क्रोधमें अपने विपक्षीको नाचीज समझ रहा है। इसी प्रकार करुणा और घृणाके आवेशमें भी शब्दोंका अर्थ विचित्र हो जाता है। 'राम राम' ऐसे पवित्र शब्दका अर्थ घृणाके भावावेशके कारण 'छिःछिः' हो गया है। दूसरी ओर किसी दुःखी आदमीके मुँहसे निकलता 'राम' शब्द जैसे करुणाका प्रतीक और रुला देनेवाला है। कुछ लोग, विशेषतः कलाकार बड़े भावुक होते हैं और किसी चीज़का वर्णन बढ़ा-चढ़ाकर करते हैं। इसीसे यह होता है कि पढ़नेवाला अतिशयोक्तिको निकालकर समझता है और इस प्रकार शब्दोंके अर्थ धूमिल पड़ जाते हैं। कुछ जातियाँ अन्योंसे अधिक भावप्रवण होती हैं; इस कारण उनके यहाँके ज़ोरदार शब्दोंका अर्थ अन्य शब्दोंसे कम शक्तिमान् हो जाता है, क्योंकि वे भावप्रवणतामें सर्वदा उसे इधर-उधर खींचते रहते हैं। फ्रेंच और बँगलामें यह बात विशेष पायी जाती है। इस प्रकार भावप्रवणताके कारण कुछ भाषाओंके कुछ शब्दोंके अर्थ बड़ी शीघ्रताके साथ परिवर्तित होते हैं। इसके कारण घटित अर्थपरिवर्तन ऊपरसे तो क्षणिक दिखाई पड़ता है, किन्तु यथार्थतः इसका प्रभाव स्थायी होता है। इस प्रकार प्रयुक्त शब्दोंका अर्थ कुछ नरम पड़ जाता है और उसके स्थानपर फिर नये शब्द आते हैं, फिर आगे चलकर उनकी भी यही दशा होती है। [२१] **व्यक्तिगत योग्यता**—व्यक्तिगत योग्यताके अनुसार भी शब्दोंके अर्थमें परिवर्तन होता रहता है। प्रत्येक व्यक्ति शब्दोंको एक ही संदर्भमें नहीं समझता। चोरने 'अच्छा' शब्द चोरीके बारेमें यदि सीखा हो तो उसके मस्तिष्कमें अच्छाका अर्थ वही नहीं होगा जो एक साधुके मस्तिष्कमें। सच तो यह है कि प्रतिदिन काममें आनेवाली स्थूल वस्तुओंको छोड़कर किसी एक चीजका या एक कार्य या शब्दका अर्थ दो मस्तिष्कमें बिलकुल एक नहीं रहता। एक सुयोग्य दार्शनिकके लिए 'ब्रह्म' शब्द कुछ और है, एक साधारण पढ़े-लिखेके लिए और है, और एक देहातीके लिए तो रुष्ट होकर आत्महत्या करने-

वाले ब्राह्मणकी समाधि या 'चउर' मात्र ही ब्रह्म है। टकरने ठीक ही कहा है कि शब्द तो एक प्रकारका सिक्का है, पर ऐसा सिक्का जिसका मूल्य निश्चित नहीं। बोलनेवाला उसे दो रुपयेका समझ सकता है और सुननेवाला अपने योग्यतानुसार उसे तीन या एक रुपयेका समझ सकता है। सूक्ष्म विचारों, तथा नैतिक-भावनाओंके शब्दोंके विषयमें यह और अधिक सत्य है। धर्म, ईश्वर, पाप, पुण्य, अच्छा-बुरा आदि शब्द उदाहरण-स्वरूप लिये जा सकते हैं। इस प्रकारके शब्दोंमें अस्थायी रूपसे आर्थिक उतारचढ़ाव आते रहते हैं। [२२] **शब्दोंमें अर्थका अनिश्चय**–ऊपरके कारणसे यह मिलता-जुलता कारण है। कुछ शब्द ऐसे होते हैं, जिनका निश्चित अर्थ होता ही नहीं। अहिंसा शब्दको हम लें। इसका एक ओर तो केवल यह अर्थ है कि किसीको जानसे न मारना चाहिए पर दूसरी ओर जीना भी हिंसा है क्योंकि साँसके द्वारा या पैरसे कुचलकर प्रायः हमसे जाने कितने जीव मरते रहते हैं। इन दोनों अर्थोंके अतिरिक्त ऐसी बात कहना भी हिंसा है, जिससे किसीका जी दुखे। और शायद ही कोई ऐसी बात होगी जो संसारमें सबको अच्छी लगे। तो यहाँ सर्वदा मौन रहना भी अहिंसापर चलनेके लिए आवश्यक है। इस प्रकार हिंसा और अहिंसा शब्दका बहुत निश्चित अर्थ नहीं। सत्य और कर्तव्यका अर्थ भी इसी तरह अनिश्चित है। टकरकी ऊपर कही गयी बात यहाँ भी लागू होती है। 'व्यक्तिगत योग्यता' तथा 'शब्दके अर्थका अनिश्चय' इन दोनों कारणोंमें यथेष्ट एकता है। अंतर केवल इतना है कि एक व्यक्तिपर ज़ोर देता है कि उसके मानसिक एवं मनोवैज्ञानिक स्तरके अनुसार शब्दोंका अर्थ परिवर्तित होगा, पर दूसरा शब्दपर ही जोर देता है। दूसरेके अनुसार एक शब्दका अर्थ जितना ही अधिक अनिश्चित होगा उसमें अर्थ-परिवर्तनका रूप भी उतना ही अधिक विचित्र होगा। इतना ही नहीं, अपितु, अनिश्चित शब्दोंमें अर्थपरिवर्तन होनेकी सम्भावना निश्चित शब्दोंसे अधिक होगी। आर्य, ब्राह्मण, दुबे, चौबे, तिवारी, जेण्टिलमैन (gentleman), सेठ, साहु, पाप तथा पुण्य आदि शब्द लिये जा सकते हैं। [२३] **वर्गकी एक वस्तुका नाम वर्गको देना**—वर्गकी किसी एक वस्तुसे अधिक परिचित होनेपर उसी नामसे हम पूरे वर्गको पुकारने लगते हैं। इससे उस शब्दमें अर्थ-विस्तार हो जाता है। अब 'स्याही'का अर्थ केवल काली स्याही न रहकर सभी रंग (लाल, हरी, नीली आदि) की स्याही हो गया है, यद्यपि यह शब्द 'स्याह'से बना है जिसका अर्थ काला है। पहले केवल काली स्याही थी, अतः स्याही कहा गया। बादमें और रंगकी भी स्याहियोंका प्रचलन हुआ, पर अधिक परिचित होनेसे वही नाम चलता रहा। हिंदीका 'साग' (शाक) शब्द पहले केवल उन हरे पत्तोंके लिए प्रयुक्त था जिनकी तरकारी बनती थी पर अब सागका अर्थ तरकारी हो गया है। **सब्जी** शब्द सब्ज़से बना है, जिसका अर्थ हरा है। इसका भी प्रयोग पहले केवल शाकके लिए होता था पर अब **आलू** (भूरा), सीताफल या **कोहड़ा** (पीला), **प्याज** (सफ़ेद या लाल) और **टमाटर** (लाल) भी सब्ज़ी हो गये हैं। कुछ जानवरों या कीड़ोंके लिए हम एक ही लिंगका नाम प्रयुक्त करते हैं। घोड़ा-हाथी आदिमें यह प्रयोग अधिक नहीं चलता पर छोटे जानवरोंमें तो प्रायः सभीमें चलता है। कुत्ता और कुतियाके लिए कुत्ता, गीदड़ और गीदड़िनके लिए गीदड़, लोमड़ी और लोमड़ाके लिए लोमड़ी, तोता-तोतीके लिए तोता, मैना-मैनीके लिए मैना इत्यादि। इस एक लिंगका प्रयोग उभयलिंगके लिए होनेके कारण उसका अर्थ भी विस्तार पाकर उभयलिंगी हो गया है। हिन्दीमें तो इससे एक विचित्र समस्या खड़ी हो गयी है। कुछ जानवर चाहे नर हों या मादा भाषामें उनका 'नर-प्रयोग' चल रहा

है। जैसे नर चींटा हो या मादा दोनोंके लिए चींटाका प्रयोग चलता है और सर्वदा पुल्लिगमें। इसी प्रकार तोता, कौआ, बाज, बारहसिंगा, गीदड़, तेंदुवा, चीता तथा बन-भानुख आदिमें हमारी हिन्दी भाषाके अनुसार जैसे केवल नर ही नर होते हैं। दूसरी ओर चींटी, सिधरी, कोयल, लोमड़ी तथा छिपकलीमें हिन्दीके अनुसार नरका एकान्त अभाव है। इतना ही नहीं। पुकारनेकी इस विचित्रताके कारण देहातमें कुछ लोगोंको तो ऐसा भी विश्वास है कि चींटा और चींटी एक ही जातिके हैं। अन्तर केवल यह है कि एक नर है और दूसरा मादा। 'तोता-मैना'के प्रसिद्ध किस्सेमें तोता-मैनाके विषयमें भी यही धारणा है। इसका प्रभाव यह पड़ा है कि चींटी एक अलग जीव न समझी जाकर चींटाकी स्त्री समझी जाती है और इसी प्रकार मैना तोतेकी स्त्री मानी जाती है। [२४] **भावोंको अधिक स्पष्ट करनेके लिए अलंकार-प्रयोग**—बातचीत, या किसी चीजके वर्णनमें वक्ता या लेखकका यही प्रयास रहता है कि वह कम-से-कम शब्दोंमें अपनेको अधिक-से-अधिक स्पष्ट कर सके। ऐसा करनेके लिए अलंकारों (उपमा, रूपक आदि)का प्रयोग किया जाता है। आरम्भमें तो प्रयोग आलंकारिक रहता है पर कुछ दिनोंमें अलंकारका ध्यान किसीको नहीं रहता। उस नवीन अर्थमें शब्दका प्रयोग चल पड़ता हैं। 'तुम गदहे हो'में गदहेका सीधा अर्थ 'मूर्ख' है। गदहेकी तरह मूर्ख नहीं जो प्रारम्भिक प्रयोगमें रहा होगा। ऐसा कहनेमें हम यह कभी नहीं सोचते कि अलंकारका प्रयोग कर रहे हैं। अलंकार अधिकतर सादृश्यपर आधारित रहता है। परिचित रूपों या वस्तुओंके द्वारा हम अपरिचितके विषयमें बतलाना चाहते हैं। सूक्ष्म वस्तुओं या व्यापारोंका साधारण शब्दोंमें प्रकटीकरण आसान नहीं है। अतः उनके लिए अलंकारोंका प्रयोग आवश्यक हो जाता है। उदाहरण-स्वरूप गहरी बात, सजीव चित्रण, मीठे बोल, रूखी हँसी, सरस बात, कठिनाई पार करना, दुःख काटना तथा आपत्तियोंसे घिर जाना आदिको ले सकते हैं। आज बिना ध्यानपूर्वक विचार किये इनके अलंकारोंका पता नहीं चलता, जिसका एकमात्र कारण है अर्थ-परिवर्तन। कभी-कभी स्थूल या प्रत्यक्ष वस्तुओं या उनके अवयवोंके चित्रको स्पष्ट करनेके लिए हम अपने अवयवोंके आधारपर अलंकार बना डालते हैं। घड़ेकी गर्दन, चनेकी नाक, सुईका मुँह, लोटेका मुँह, नारियलकी जटा, ईखकी आँख, सितारके कान, कुर्सीके पैर, घड़ीके हाथ तथा कागजकी पीठ आदि उदाहरण लिये जा सकते हैं। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि यहाँ इन नामोंका ठीक वही अर्थ नहीं है, जो मनुष्यके साथ होता है। मानवके स्वभावको स्पष्ट करनेके लिए हमें पशुओं, जातियों तथा बेजान वस्तुओंके सहारे अलंकार बनाना पड़ता है। ये प्रयोग भी इतने प्रचलित हैं कि साधारणतया अलंकार नहीं समझे जाते। अपने आलंकारिक अर्थमें ये प्रतीक रूढ़ि हो चुके हैं। उदाहरण-स्वरूप पत्थर (कड़े हृदयका), पानी (नरम दिल), बिना पेंदीका लोटा (जिसका कुछ निश्चय न हो), काँटा (क्रूर), गदहा (मूर्ख), उल्लू (मूर्ख या दिनके लिए अन्धा), भैंस (बेवकूफ); बैल (मूर्ख), गाय (सज्जन और सीधा), सियार (होशियार और छली), कौवा (चालाक), कालानाग (जिसके काटनेसे लहरतक नहीं आती और मृत्यु हो जाती है, अतः खतरनाक), बनिया (कंजूस), कसाई (क्रूर), चमार (गन्दा), क्रिस्तान (भक्ष्याभक्ष्यका ध्यान न रखनेवाला) तथा अहिर या जाट (उजड्ड) आदि लिये जा सकते हैं। बोलचालकी भाषाके तो जैसे ये प्राण हैं। आलंकारिक प्रयोगमें ये शब्द अपना यथार्थ अर्थ न देकर अपने गुणका अर्थ देते हैं। ब्रीलका कहना है कि सभी कारणोंसे शब्दोंमें अर्थ परिवर्तन शनैः-शनैः होता है पर अलंकारोंके कारण एक क्षणमें (on the spur of the

moment) हो जाता है। अलंकारोंके कारण अर्थ-परिवर्तन लगभग सभी दिशाओंमें होते हैं। इसके अन्तर्गत काव्यशास्त्रके सभी अलंकार लिये जाते हैं। इस सम्बन्धमें कुछ और उदाहरण देकर विषयको समाप्त किया जा सकता है। **काला दिल, अन्धा कुआँ, नदीकी गोद, पतंगकी पूँछ, मधुर गीत, मधुर गन्ध, ठोस कार्य, खोखला, आदमी, टेढ़ी बात, पहाड़की चोटी, कड़ुई बात, आरीके दाँत, बन्दूकका घोड़ा, कमलकी जीभ, लकड़ीका हीर, कविताकी आत्मा, कुर्सीके हाथ, चारपाईके पैर, नदीकी शाखा, पहाड़की जड़** तथा **फिटकिरीके फूल** आदि। इन समता-मूलक अलंकारोंके अतिरिक्त भी कुछ अलंकार हैं। 'आजकल रोटी (खाना) मिलना आसान नहीं है।' 'प्रसादको (प्रसादकी कृतियोंको) पढ़ रहा हूँ।' तथा 'आप गांधी (गांधीजी जैसे महान्) नहीं हैं।' उदाहरण पर्याप्त होंगे। ऊपरके कुछ अन्य कारण भी अलंकारके अन्तर्गत रखे जा सकते हैं, पर यहाँ स्पष्टताके विचारसे उन्हें अलग रखा गया है।* इन चौबीस प्रधान कारणोंके अतिरिक्त विशेषणका संज्ञा रूपमें प्रयोग, संज्ञाका क्रिया रूपमें प्रयोग आदि अनेक और भी अर्थ-परिवर्तनके कारण हो सकते हैं।

अर्थ-परिवर्तनके कारण--(दे०) अर्थ-परिवर्तनमें अर्थ-परिवर्तनके कारण उप-शीर्षक।

अर्थ-परिवर्तनके कारणोंका आधार--(दे०) अर्थ-परिवर्तनमें अर्थ-परिवर्तनके कारणोंका आधार उप-शीर्षक।

अर्थ भूगोल--(दे०) भाषा-भूगोल।

अर्थ रेखा (isomeaning)--भाषाओंके नक्शेमें अर्थीय विशेषताएँ दिखलानेवाली रेखा।

अर्थ-विकार--**अर्थ-परिवर्तन** (दे०)का एक अन्य नाम।

अर्थ-विकास--**अर्थ-परिवर्तन** (दे०)का एक अन्य नाम।

अर्थ-विचार--**अर्थ-विज्ञान** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अर्थ-विज्ञान--(semantics) --भाषाविज्ञानकी एक शाखा जिसमें शब्द, मुहावरे आदिके **अर्थ** (दे०)का अध्ययन किया जाता है। शब्दोंके अर्थका अध्ययन कुछ आधुनिक विद्वानोंके अनुसार भाषाविज्ञानके क्षेत्रसे बाहरका है। किंतु यह मत उचित नहीं ज्ञात होता। ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य तो भाषाके शरीर हैं, उसकी आत्मा अर्थ है, और भाषा-विज्ञान भाषाका अध्ययन है। ऐसी स्थितिमें आत्माको छोड़कर केवल शरीरका अध्ययन उसका पूर्ण अध्ययन नहीं माना जा सकता। अर्थका अध्ययन भाषाके ध्वनि, वाक्य आदि अन्य रूपोंकी तरह ही वर्णनात्मक, तुलनात्मक तथा ऐतिहासिक तीनों प्रकारका हो सकता है। वर्णनात्मकमें किसी एक कालमें भाषाके अर्थका अध्ययन होता है, ऐतिहासिकमें उसका विकास देखा जाता है और तुलनात्मकमें दो या अधिक भाषाओंके अर्थकी वर्णनात्मक या ऐतिहासिक तुलना की जाती है। भाषा-विज्ञानकी इस शाखाके समय-समयपर अनेक नाम रखे जाते रहे हैं। हिन्दीमें ही शब्दार्थ-विज्ञान, **अर्थ-विचार, अर्थ-तत्त्व, शब्दार्थ-तत्त्व** आदि अनेक नामोंका प्रचलन रहा है, अंग्रेज़ीमें इसके rhematology, semasialogy, rhematics, sematology, glossology, sedsifics, signifirs semiotics तथा orthology आदि एक

* इन्हें उपचार (metaphor) भी कहा गया है। भाषाकी उत्पत्तिपर विचार करते समय भाषाके विकासमें इसके महत्त्वका संकेत किया गया है। (दे० भाषाकी उत्पत्तिमें समन्वित रूप) इसे लक्षणा या लाक्षणिक प्रयोग भी कह सकते हैं। इसमें समताके आधारपर एक शब्दका दूसरेके लिए प्रयोग (कुर्सीके पैर) तथा लेखकका उसकी सारी कृतिके लिए प्रयोग (आजकल प्रसादको पढ़ रहा हूँ) आदि है।

दर्जनसे अधिक नाम रहे हैं। आजकल सिमैंटिक्स (semantics) नाम अधिक प्रचलित है।

अर्थविज्ञान–भाषाविज्ञानके क्षेत्रमें प्राचीनतम शाखा है। सच पूछा जाय तो सबसे पहले कदाचित् अर्थपर ही लोगोंका ध्यान गया। भारतमें यों तो ब्राह्मण ग्रंथोंमें भी इसकी ओर संकेत है, किंतु इसका कुछ अधिक विस्तृत उल्लेख सर्वप्रथम यास्कके निरुक्तमें मिलता है। यह विश्वका प्राचीनतम अर्थ-विवेचन है। प्राचीन भारतमें यास्कके अतिरिक्त, व्याकरण, न्याय, मीमांसा, वेदांत, वैशेषिक तथा काव्यशास्त्रके अनेक ग्रंथोंमें भी आचार्योंने अर्थका अनेक दृष्टियोंसे सुन्दर विवेचन किया है। यूरोपमें इस प्रसंगमें प्रथम नाम प्लेटोका लिया जा सकता है। प्लेटोने अर्थ और शब्दके संबंधपर विचार किया है। आधुनिक कालमें 'कोशविज्ञानके प्रसंगमें सर्वप्रथम लोगोंका ध्यान इधर गया। इस क्षेत्रमें प्रथम नाम के० रीजिगका लिया जा सकता है। १८२६-२७ में लैटिन भाषापर दिये गये अपने व्याख्यानोंमें उन्होंने अर्थविज्ञानके वैज्ञानिक अध्ययनकी ओर संकेत किया था। बादमें उनके शिष्य ए० बेनरी (१९वीं सदी दूसरा चरण), तथा जर्मन विद्वान् पाल (१९वीं सदी दूसरा चरण), पोस्ट गेट (१८७५ से १८८६ तक) ब्रुगमान, बेच्टल, स्वीट आदिने इसे आगे बढ़ाया। इसका व्यवस्थित स्वरूप सामने लानेका श्रेय फ्रांसीसी विद्वान् ब्रीलको है। इन्होंने अपने ग्रंथ essai de semantique में सर्वप्रथम अर्थविज्ञानको सच्चे अर्थोंमें वैज्ञानिक विचार-भूमिपर उतारा। अब अर्थकी गहराई नापनेके लिए एक 'इलिऐक' नामक मशीन बनायी जा चुकी है।

ध्वनि-विज्ञान आदिकी भाँति अर्थ-विज्ञानका संबंध भाषाके शरीर या बाह्यसे नहीं है। यह अध्ययन अपना संबंध सीधा मनोविज्ञानसे रखता है, इसी कारण बहुत ही सूक्ष्म, गम्भीर और अनिश्चित-सा है। अर्थविज्ञानकी इसी अस्पष्ट प्रकृतिके कारण मनोरंजक और आकर्षक होनेपर भी इस क्षेत्रमें बहुत अधिक कार्य नहीं हो सका है।

प्रत्येक शब्दके साथ एक अर्थ, भाव या विचार संबद्ध होता है। वही अर्थ उसका प्राण या सार है। पारिभाषिक शब्दावलीमें उस अर्थको **अर्थ-तत्व** (दे०) या **अर्थग्राम** (semanteme) कहते हैं।

अर्थ-विज्ञान और व्युत्पत्ति शास्त्र (etymology)––कुछ लोग व्युत्पत्ति शास्त्रको तथा अर्थ-विज्ञानको एक ही मानते हैं। किंतु सत्यतः ऐसा मानना अशुद्ध है। व्युत्पत्ति शास्त्रमें, किसी शब्दके आरम्भ तथा धातु आदिपर विचार करते हुए हम ध्वनि और अर्थ इन दोनों दृष्टियोंसे उसका इतिहास देते हैं। इस प्रकार किसी शब्दकी व्युत्पत्तिके अन्तर्गत हमें शब्दका सब दृष्टियोंसे जीवन-चरित्र देना होता है। कहा जा सकता है कि व्युत्पत्ति-शास्त्र अलग विज्ञान या भाषा-विज्ञानका विभाग या अर्थ-विज्ञान आदि न होकर ऐतिहासिक ध्वनि-विज्ञान और ऐतिहासिक अर्थ-विज्ञानका सम्मिलित प्रयोग मात्र है। (दे०) **व्युत्पत्ति शास्त्र**। अर्थविज्ञानमें प्रायः **अर्थ-परिवर्तन** (दे०) **बौद्धिक-नियम** (दे०) आदिपर विचार किया जाता है, किंतु इसका क्षेत्र और भी विस्तृत है। **शब्द और अर्थका संबंध** (दे०), अर्थकी गहराई और व्यापकताकी नाप-जोख, पर्यायवाची शब्दोंकी छानबीन, **शब्द-शक्ति** (दे०) तथा ध्वनि (१) (दे०) आदि अन्य भी बहुतसे विषयोंका अध्ययन इसके अंतर्गत हो सकता है।

अर्थ-विस्तार––अर्थ-परिवर्तनकी एक दिशा। (दे०) **अर्थ-परिवर्तन** ८

अर्थशक्तिमूलकसंलक्ष्यक्रमव्यंग्य ध्वनि––एक प्रकारकी **ध्वनि** (दे०)।

अर्थ-संकोच––**अर्थ-परिवर्तन** (दे०)की एक दिशा।

अर्थान्तर-संक्रमितवाच्य-ध्वनि––एक प्रकारकी ध्वनि (दे०)।

अर्थदिश—अर्थ-परिवर्तन (दे०)की एक दिशा।

अर्थापकर्ष (pejoration)—**अर्थ-परिवर्तन** (दे०)की एक दिशा।

अर्थोत्कर्ष—**अर्थ-परिवर्तन** (दे०)की एक दिशा।

अर्थोद्योतन नियम—**बौद्धिक-नियम** (दे०)-का एक भेद।

अर्द्ध अशक्त ध्वनि—**मध्यम ध्वनि** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अर्द्धघोष स्वर—**मर्मर स्वर** (दे०)के लिए कभी-कभी प्रयुक्त एक नाम।

अर्द्धतत्सम—शब्दोंका तत्सम तथा तद्भवके बीचका एक वर्ग। (दे०) **शब्द**।

अर्द्धबद्धरूपग्राम—एक प्रकारका **रूपग्राम** (दे०)।

अर्द्धमागधी अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

अर्द्धमागधी प्राकृत—एक **प्राकृत** (दे०)।

अर्द्धमुक्त रूपग्राम—एक प्रकारका **रूपग्राम** (दे०)।

अर्द्धवर्णात्मक लिपि (ruasi aephabeticscript)—ऐसी लिपि जिसमें कुछ चिह्न वर्णात्मक तथा कुछ भावमूलक या अक्षरात्मक हों।

अर्द्ध विराम—एक प्रकारका **विराम** ! (दे०)

अर्द्धविवृत स्वर—एक प्रकारका स्वर। (दे०) **ध्वनियोंके वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण** तथा **मानस्वर** उप-शीर्षक।

अर्द्धव्यंजन (semiconsonant)—अर्द्धस्वर (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अर्द्धसंघर्षी (semifricative)—स्पर्श-संघर्षीके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अर्द्धसंवृत स्वर—एक प्रकारका स्वर। (दे०) **ध्वनियोंके वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण** तथा **मानस्वर** उप-शीर्षक।

अर्द्ध सशक्त ध्वनि—**मध्यम ध्वनि** (दे०)का एक अन्य नाम।

अर्द्ध स्वतंत्र संबंधसूचक अव्यय—(दे०) **संबंधसूचक अव्यय**।

अर्द्धस्वर (semi vowel)—ऐसी ध्वनि जो स्वर और व्यंजनके बीचमें हो, या जिसमें प्रकृतिकी दृष्टिसे कुछ बातें स्वरकी तथा कुछ व्यंजनकी हों। य, व अर्द्धस्वर हैं। (दे०) **ध्वनियोंके वर्गीकरणमें व्यंजनोंका वर्गीकरण** उप-शीर्षक।

अर्द्धाधीन संबंधसूचक अव्यय—(दे०) **संबंधसूचक अव्यय**।

अर्निया (arniya)—**खोवार** या **चित्राली** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

अर्बानी (arbani)—१८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार बंजारोंकी एक भाषा।

अर्लेंग (arleng)—**मिकिर** (दे०)का एक अन्य नाम।

अर्वी (arvi)—**अरब** (दे०)का दूसरा नाम।

अर्शेव (arshev)—१८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार **पश्तो** (दे०)का एक रूप।

अर्स (arse)—आइरिश भाषाके लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम।

अलकालुफ़ (alkaluf)—दक्षिणी अमेरिकाकी **अलकालुफ़ परिवार** (दे०)की एक भाषा। इसका एक अन्य नाम अलिकुलिप है।

अलकालुफ़ परिवार (alakaluf)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक अमरीकी भाषा-परिवार। इस परिवारमें लगभग ७ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख अलिकुलिप (या अलकालुफ़), चोनो, लेचेयल तथा अड्विपलिइन आदि हैं।

अलगन्त भाषा—**अयोगात्मक भाषा** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

अलगोन्किन (algonkin)—**केन्द्रीय अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमरीकी भाषा।

अलगोन्किन परिवार (algonkin या algonquin)—**उत्तरी अमरीकी** (दे०) वर्गका सबसे विस्तृत परिवार। इस परिवारका यह नाम जे० डब्ल्यू० पावेलने १८८५ में रखा। इसी नामकी प्रसिद्ध उत्तरी अमरीकी जातिके आधारपर यह नाम रखा

गया था। इसरा मूल अर्थ है 'मछली फैलानेकी ज़गह'। अलगोन्किन परिवारकी भाषाएँ कभी पूरे कनाडामें, संयुक्तराष्ट्र अमेरिकाके कुछ भागों फुटकर तथा कुछ अन्य स्थानों जैसे इओआ आदिमें फैली थीं। कुछ विद्वान् कैलिफोर्नियाकी भाषाओंको भी इसीमें रखते हैं। इस परिवारकी पश्चिमी भाषाओंमें अरपहो, ब्लैफ़ुट, चेयेन्ने, उत्तरीमें क्री और ओजिब्वे; उत्तरी-पूर्वीमें अवनाकी, मिकमक, मोंटग्नैस; केन्द्रीयमें इलिकिस मिअमी और सौक; तथा पूर्वीमें देलावारे, शाव्नी आदि प्रमुख हैं। इस परिवारको छः वर्गोंमें मोटे रूपसे बाँटा गया है: (१) ब्लैकफुट (blackfoot) (२) अरपहो (arapaho) (३) केन्द्रीय-अलगोन्किन (central algonkin) (४) पूर्वीय अलगोन्किन (eastern algonkin) (५) चेयेन्ने (cheyenne) तथा (६) कैलिफोर्नियन इन वर्गोंको कोशमें यथास्थान देखा जा सकता है। इस परिवारमें कुल लगभग ५० से ऊपर भाषाएँ हैं। इस परिवारकी भाषाओंके नाम प्रमुखतः उनको बोलनेवाली जातियों या उपजातियोंके नामपर पड़े हैं। इस परिवारको कुछ लोगोंने इस रूपमें भी विभाजित किया है: **पूर्वी** (पूर्वी तथा मध्य कैनाडा), **मध्यवर्ती** (ग्रेटलेक प्रदेश), कैलिफ़ोर्नियन (कनाडा, अलवर्टा) **चेयीन** या चेयेन्ने (मोंटना) तथा **अरपहो** (मोंटना, ओक्ल हो मा आदि)। इस परिवारका दूसरा नाम **अलगोन्किअन** भी है।

अलबमा (alabama)—सेमिनोले (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमरीकी भाषा।

अलिकुलिप (alikulip)—दक्षिणी अमेरिकाकी अलकालुफ परिवारदे(०)की एक भाषा है। इसका एक अन्य नाम अलकालुफ़ है।

अलिजिह्व (कौवा, घंटी, शूंडिका, uvula)—गलेमें स्थित एक लटकता हुआ अंग जिसका प्रयोग कुछ भाषा-ध्वनियोंके उच्चारणमें होता है। (दे०) **शारीरिक ध्वनिविज्ञान**।

अलिजिह्वीय (uvular)—उच्चारणस्थान (दे०)के आधारपर किया गया व्यंजनोंका एक भेद। 'अलिजिह्वीय' उन व्यंजन-ध्वनियोंको कहते हैं, जिनका उच्चारण कौवे या अलिजिह्व (दे०)से किया जाता हो। इसके लिए जिह्वामूल या जिह्वापश्चको या तो निकट ले जाकर वायुमार्ग सँकरा कराकर संघर्षी ध्वनि उत्पन्न की जाती है, या स्पर्श कराकर स्पर्शध्वनि उच्चरित की जाती है। इन ध्वनियोंको जिह्वामूलीय या जिह्वापश्चीय भी कहा जाता है। क़, ख़, ग़, ध्वनियाँ इसी प्रकारकी हैं।

अलुक् समास—(दे०) समास।

अलेन्टिअक (alentiak) दक्षिणी अमेरिकाके अलेन्टिअक परिवार (दे०)की एक भाषा। इसका एक अन्य नाम हुआर्पे है। यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है।

अलेन्टिअक परिवार(alentiak)—दक्षिणी अमरीकी वर्ग (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारमें दो भाषाएँ (अलेन्अिक तथा मिल्कयक) थीं। जो अब विलुप्त हो चुकी हैं।

अल्—पाणिनिकी अष्टाध्यायीका एक प्रत्याहार (दे०)। इसमें संस्कृतके सभी वर्ण (९ स्वर, ४ अर्द्धस्वर तथा २९ व्यंजन; यदि 'ह'को दो मानें जैसा कि है भी 'एक ह, दूसरा विसर्ग' तो संख्या एक बढ़ जायगी।) आ जाते हैं। सामूहिक रुपसे सबके लिए या किसी भी वर्णके लिए इसका प्रयोग हो सकता है।

अल्टाइक या अल्टाई परिवार—(दे०) यूराल-अल्टाइक परिवार।

अल्पप्राण (unaspirated)—वे व्यंजन जिनके उच्चारणमें मुँहसे कम (अल्प) हवा (प्राण) निकलती है। जैसे क, च, ब आदि। (दे०) महाप्राण। अल्पप्राणको अप्राण भी कहते हैं। (दे०) व्यंजनोंका वर्गीकरण। अल्पप्राणको संस्कृतके व्याकरणोंमें 'बाह्य प्रयत्न'के अंतर्गत रखा गया है।

अल्पप्राणीकरण (aeaspiration)—

ध्वनि-परिवर्तनका एक रूप या उसकी एक दिशा। (दे०) 'ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ'। भाषाके विकासमें या शब्दके एक भाषासे किसी अन्य भाषामें जानेमें कभी-कभी कोई ध्वनि **महाप्राण** (दे०)से **अल्पप्राण** (दे०) हो जाती है। भाषाविज्ञानमें महाप्राणका यह अल्पप्राण होना अल्पप्राणीकरण कहलाता है। जैसे संस्कृत 'सिंधु'का फ़ारसी 'हिन्दु'। इसमें महाप्राण ध्वनि 'ध',अल्पप्राण 'द' हो गयी है। संस्कृत 'विधि'का कश्मीरीमें 'व्यद' हो गया है। यहाँ भी 'ध', 'द' हो गया है। इसी प्रकार संस्कृतमें मूल रूप भ+भूव=बभूव तथा ध+धामि= दधामि हो गया है। इस प्रकारके उदाहरण भारतीय भाषाओंमें ही प्रमुख रूपसे मिलते हैं। अल्पप्राणीकरणका एक अधिक उचित नाम **अल्पप्राणीभवन** हो सकता है। अल्पप्राणीकरणका उलटा **महाप्राणीकरण** (दे०)होता है। **अल्पप्राणी भवन**—**अल्पप्राणीकरण** (दे०)का एक अन्य नाम।

अल्प विराम—एक प्रकारका **विराम** (दे०)।

अल्पविराम संगम (comma juncture) एक प्रकारका **संगम** (दे०)।

अल्पार्थक प्रत्यय (diminutive suffix) —ऐसा प्रत्यय जो अल्पत्व या लघुताका बोध करावे। हिन्दीमें—'इया' इसी प्रकारका प्रत्यय है: बाग—बगिया; डिब्बा—डिबिया। इसे **लध्वर्थक**, **लघुतार्थक** आदि अन्य नामोंसे भी पुकारते हैं। अल्पार्थक प्रत्ययसे कभी-कभी अपकर्ष,सौंदर्य या सुस्वादुता आदिका भी भाव प्रकट होता है।

अल्पार्थक शब्द (diminutive)—किसी शब्दमें अल्पार्थक प्रत्यय लगाकर बनाया गया शब्द। जैसे डिबिया, बगिया आदि। ये शब्द डिब्बा, बागमें 'इया' प्रत्यय (जो अल्पार्थक है) लगाकर बनाये गये हैं। इसे **लघुतार्थक** शब्द या **लध्वर्थक** शब्द भी कहते हैं।

अल्बा (alba)—'हलबी' (दे०)का एक विकृत नाम।

अल्बेनियन—इलीरियन (दे०)का एक नाम।

अल्बेनियाई—(दे०) **अल्बेनियन**

अल्बेनी—(दे०) **अल्बेनियन**

अल्यूट (aleut)—(दे०) **एस्किमो अल्यूट**।

अल्सेआ (alsea)—उत्तरी अमेरिकाकी **अस्टल** (दे०) भाषाकी एक उपभाषा।

अवंत्य अपभ्रंश—अपभ्रंश (दे०)का एक भेद।

अव (awa)—**खमी** (दे०)की एक बोली।

अवग्रह—इस शब्दका संस्कृत व्याकरणोंमें कई अर्थोंमें प्रयोग मिलता है। अब इसका प्रयोग प्रमुखतः उस चिह्न(ऽ)के लिए होता है, जो पूर्ववर्ती स्वरमें 'अ' या 'आ' का पूर्वरूप हो जाना सूचित करता है। जैसे- हरे+अव=हरेऽव।

अवतरण चिह्न—एक प्रकारका चिह्न। (दे०) **विराम**।

अवधारणा—उत्तरपद कर्मधारय समास—(दे०) **समास**।

अवधारणा—पूर्वपद कर्मधारय समास—(दे०) **समास**।

अवधारणा पूर्वपद बहुव्रीहि समास—(दे०) **समास**।

अवधिवाचक क्रियाविशेषण—(दे०) **क्रियाविशेषण**।

अवधी—पूर्वी हिन्दीकी सर्वप्रमुख बोली। 'अवधी' शब्दका संबंध सं० 'अयोध्या'से है। 'अयोध्या'का विकास 'अवध' रूपमें हुआ है। अवधी-भाषी प्रदेशका नाम 'अवध' है, इसी आधारपर इस भाषाको 'अवधी' नाम दिया गया। 'अवधी' नामका भाषाके अर्थमें प्राचीनतम प्रयोग अमीर ख़ुसरोने अपने 'नुहसिपर'में किया है। अबुलफ़ज़लकी 'आईने अकबरी'में भी यह शब्द आता है। कुछ लोगोंने इसे **उत्तरी** (दे०), **प्राचीन पूर्वी** (दे०), **उत्तरखंडी** (दे०), **पूर्वी कोसली बैसवाड़ी** आदि नामोंसे भी अभिहित किया है। इनमें **कोसली** नामका प्रयोग प्रायः बहुत कम होता है। **बैसवाड़ी** नाम बहुत उचित नहीं है। 'बैसवाड़ा' वस्तुतः

अवधी क्षेत्रका एक भाग मात्र है अतः **बैसवाड़ी** (दे०) अवधीका समानार्थी न होकर उसकी एक उपबोलीका नाम हो सकता है। यों 'अवधी' नाम भी बहुत उचित नहीं है। इससे लगता है कि इसका क्षेत्र केवल अवध प्रदेश है, किंतु यथार्थतः इसकी सीमा तथा अवध प्रदेशकी सीमा पूर्णतः एक नहीं कही जा सकती। एक ओर तो अवध प्रदेशके कुछ भागों (ज़िला हरदोई, खीरी और फ़ैज़ाबादके कुछ भागों)में 'अवधी' नहीं बोली जाती, और दूसरी ओर अवध प्रदेशके बाहरके फ़तेहपुर, इलाहाबाद, जौनपुर एवं मिर्जापुर (अंतिम दोके कुछ भाग) ज़िले भी इसके क्षेत्रमें आते हैं। इनके अतिरिक्त लखनऊ, उन्नाव, रायबरेली, सीतापुर, फ़ैज़ाबाद, गोंडा, बहराइच, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़, बाराबंकी ज़िलों, कानपुर ज़िलेके कुछ भागोंमें एवं बिहारके मुसलमानों (मुज़फ्फरपुर तक) तथा नैपालकी तराईके कुछ हिस्सों (सम्मनदेई तथा बुटवलतक)-की भी यह बोली है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १६१,४३,५४८ थी।

अवधीके तीन उपरूप हैं–**पश्चिमी**, **केन्द्रीय** और **पूर्वी**। पश्चिमी अवधीका क्षेत्र खीरी, सीतापुर, लखनऊ, उन्नाव और फतेहपुर है, केन्द्रीय अवधीका बाराबंकी, बहराइच और रायबरेली, तथा पूर्वीका गोंडा, फ़ैज़ाबाद, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़, इलाहाबाद, जौनपुर (कुछ भाग) और मिर्ज़ापुर (कुछ भाग)।

अवधीकी प्रधान उपबोली **बैंसवाड़ी** (दे०) है। ग्रियर्सनने **बघेलीको** पूर्वी हिन्दीकी एक स्वतंत्र बोली माना था। किंतु व्याकरणकी तुलना करनेपर यह स्पष्ट हो जाता है, कि वह अवधीका ही दक्षिणी रूप मात्र है। इस तरह 'बघेली' अवधीकी एक बोली है। **मिर्जापुर** (दे०), **बिहारी हिन्दी** (दे०), **बनौधी** (दे०) आदि इसके कुछ अन्य रूप भी हैं।

अवधीका साहित्यमें प्रयोग ११ वीं सदीसे ही मिलता है। रोडा कृत 'राउल बेलि' पुरानी अवधीकी अबतक ज्ञात प्रथम रचना है। तबसे लेकर मध्यकालतक इसमें बहुतसे ग्रंथ लिखे गये और कुछ अंशोंमें आधुनिक कालतक इसमें साहित्य रचना हो रही है। इसके प्रसिद्ध ग्रंथ पद्मावत, रामचरित मानस तथा कृष्णायन आदि हैं। अवधीका लोक-साहित्य भी पर्याप्त संपन्न है। अवधीके पश्चिमी भागकी व्रज आदि बोलियोंका संबंध शौरसेनीसे, तथा पूर्वी भागकी भोजपुरी आदि बोलियोंका संबंध मागधी अपभ्रंशसे माना जाता है। इसी आधारपर, इन दोनोंके बीच स्थित अवधीका संबंध ग्रियर्सनने अर्धमागधीसे माना था। किंतु डॉ० बाबूराम सक्सेनाने अर्धमागधी एवं अवधीका तुलनात्मक अध्ययन किया तो उन्हें यह बात निराधार लगी। डॉ० सक्सेनाके मतानुसार अवधीका संबंध अर्द्धमागधीकी अपेक्षा पालीसे है। इसी आधारपर डॉ० सक्सेनाका अनुमान है कि अवधीकी उत्पत्ति प्राचीन अर्द्धमागधीसे हुई है, जो बादकी अर्द्धमागधीसे भिन्न थी। प्रस्तुत पंक्तियोंका लेखक इस बातसे सहमत नहीं है। अर्द्धमागधीका जो रूप साहित्यमें उपलब्ध है, तत्कालीन लोकव्यवहृत अर्द्धमागधीका प्रतिनिधि नहीं है, फिर भी उसमें अवधीके बीज हैं। लोकप्रचलित अवधीमें और भी अधिक रहे होंगे। जब अवधीके पश्चिमी क्षेत्र-स्थित बोलियोंका संबंध शौरसेनीसे तथा पूर्वी क्षेत्र-स्थित बोलियोंका मागधीसे है तो बीचका संबंध निश्चय रूपसे बीचकी प्राचीन भाषा अर्थात् अर्धमागधीसे होगा।

अवधी प्रधान रूपसे नागरी लिपिमें लिखी जाती है। इसके क्षेत्रके कुछ पुराने लोगोंमें तथा बही-खातोंके कामोंमें कैथी तथा महाजनी लिपियोंका भी प्रचार है। कुछ लोग फ़ारसी लिपिका भी प्रयोग करते हैं।

अवनायक संयुक्त स्वर–(दे०) **ध्वनियोंके वर्गीकरणमें संयुक्त स्वर** उप-शीर्षक।

अवयव (constituents)–किसी भी

रचना (वाक्य, वाक्यांश या शब्द) के घटक या अंग 'अवयव' कहलाते हैं। 'राम आया' में 'राम' और 'आया' दो अवयव हैं। 'राम आया है' में तीन अवयव हैं 'राम' 'आया' 'है'। 'अवयव' दो प्रकारके होते हैं: **निकटस्थ अवयव** (दे०) और **मूलभूत अवयव** (दे०)। 'राम आया है' में मूलभूत अवयव तो तीन हैं, किंतु निकटस्थ अवयव 'राम' और 'आया है' दो ही हैं।

अवयवाभिव्यक्ति विज्ञान (kinesics)—हाथ, पाँव, आँख, भौं, कंधा, उँगली आदि अवयवोंकी उन गतियोंका अध्ययन जो बोलते समय अभिव्यक्तिमें सहायक होती हैं।

अवर (avar)–काकेशस परिवारकी काकेशसमें प्रयुक्त एक भाषा।

अवरो-अन्दी (avaro-andi) काकेशस परिवारकी उत्तरी शाखाका एक भाषावर्ग। इसमें अवर, अन्दी, दीदो क्वार्शी तथा कपुत्सी आदि आती हैं।

अवरोह श्रुति (offglide)–(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणका श्रुति** उपशीर्षक।

अवरोही संयुक्त स्वर (falling diphthong)–(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें संयुक्त स्वर** उपशीर्षक।

अवरोही सुर—**सुर** (दे०) का एक भेद।

अवर्णात्मक परिचिह्नन (analphabetic notation) ध्वन्यात्मक प्रतिलेखनकी येस्पर्सन द्वारा प्रयुक्त एक विधि जिसमें ग्रीक अक्षर तथा रोमन अंकोंका प्रयोग किया जाता है।

अवशंगम आस्थापित संधि—(दे०) **संधि**।

अवशिष्ट रूप (survival, relieform)—कोई ऐसा रूप, जो भाषाके परिवर्तित या विकसित हो जानेपर भी, या अपने सवर्गीय या समकालीन अन्य रूपोंके अप्रचलित या अप्रयुक्त हो जानेपर भी प्रयुक्त हो रहा हो: विकसित भाषामें पुरानी भाषाका अवशिष्ट होनेके कारण ऐसे रूप इस नामसे अभिहित किये जाते हैं। ऐसे रूपोंसे प्रायः भाषाकी प्राचीन विशेषताओंका संकेत मिलता है।

अवहंस—**अपभ्रंश** (दे०) का एक अन्य नाम।

अवहट्ट—**अपभ्रंश** (दे०) का एक अन्य नाम।

अवहट्ठ—(१) **अपभ्रंश** (दे०) का एक अन्य नाम। (२) अपभ्रंश तथा आधुनिक भारतीय भाषाओंके बीचकी संधिकालीन भाषाके लिए प्रयुक्त एक नाम। (दे०) **मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा अवहट्ठ** उपशीर्षक।

अवहठ—**अपभ्रंश** (दे०) का एक अन्य नाम।

अवहत्थ—**अपभ्रंश** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

अवांकारी (awankari)–उत्तरी-पूर्वी **लहंदा** (दे०) के पश्चिमी रूपकी कोहाट तथा झेलम (पंजाब) में प्रयुक्त एक उपबोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलने वालोंकी संख्या लगभग १२३,९०१ थी।

अवांकी (awanki)—**अवांकारी** (दे०)-का एक दूसरा नाम।

अविकारी—(दे०) **अव्यय**।

अविकारी अव्यय—(दे०) **अव्यय**।

अविकारी कृदंत—(दे०) **कृदंत**।

अविकारी शब्द—(दे०) **अव्यय**।

अविकृत अव्यय—(दे०) **अव्यय**।

अविच्छिन्न लेख (continuons writing)—ऐसा लेख, जिसमें शब्द अलग-अलग न लिखे जाकर एकमें मिलाकर लिखे गये हों। सभी देशोंकी पुरानी पोथियोंमें प्रायः यही पद्धति मिलती है। हर शब्द अलग-अलग लिखनेकी परम्परा बाद की है।

अविभक्तिका कर्ता—(दे०) **कर्ता**।

अविभक्तिक कर्म—(दे०) **कर्म**।

अविस्ताक—**अवेस्ता** (दे०) का परंपरागत नाम।

अवृत्तमुखी—जिसके उच्चारणमें ओष्ठ गोल या वृत्ताकार न किये जाते हों।

अवृत्तमुखी स्वर (unrounded vowel)—ऐसा स्वर, जिसके उच्चारणमें ओष्ठ गोल या वृत्ताकार न किये जाते हों। इसे **अवृत्ताकार स्वर** भी कहते हैं। जैसे ए, ई आदि। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें**

स्वरोंका वर्गीकरण उप-शीर्षक।

अवृत्ताकार स्वर--अवृत्तमुखी स्वर (दे०) का एक अन्य नाम।

अवृत्तिकरण (unrounding)—**वृत्तमुखी** (दे०) ध्वनियोंको **अवृत्तमुखी** (दे०) बनाना।

अवेस्ता—भारोपीय परिवारकी ईरानी (दे०) उपशाखाकी एक भाषा। 'अवेस्ता'का अर्थ है 'शास्त्र' या 'ज्ञान पुस्तक'। यों इसका संबंध सं० 'विद्' जैसी 'वित्' (= जानना) धातुसे है। 'अवेस्ता' नाम मूलतः पारसियोंके धर्म ग्रंथका था। इसकी एक ज़िन्द नामक (दे० ईरानी) एक टीका भी बादमें की गयी। इसी आधारपर अवेस्ता-ग्रंथ को कभी-कभी **जेन्दावस्ता** या **जिन्दावेस्ता** भी कहते हैं। मूल नाम **अवेस्तक-उ-जेन्द** था, विपर्ययसे ये नाम बने हैं। भाषा भी अवेस्ताके अतिरिक्त कभी-कभी ज़ेन्दावेस्ता कही जाती है। कुछ लोगोंका अनुमान है कि भाषाका अवेस्ता नाम आधुनिक कालका है, किन्तु नवीनतम खोजोंने यह सिद्ध कर दिया है कि पहले भी इसे **अविस्तक** आदि नामोंसे पुकारते थे। 'अवेस्ता' ग्रंथ पारसी धर्मके प्रचारक ज़रथुश्त्रका लिखा कहा जाता है। यद्यपि इसके विभिन्न अंश ७वीं सदी ई० पू० और पहली-दूसरी सदी ई० या कुछ उसके भी बादके बीच विभिन्न कालोंमें लिखे ज्ञात होते हैं। अवेस्ता ग्रंथ यस्न, विस्पारद, यश्त, बेन्दिदाद इन भागोंमें विभक्त है। यस्नकी गाथाएँ प्राचीनतम हैं। अवेस्ताभाषा इस अवेस्ता ग्रंथकी है। अवेस्ता बैक्ट्रियाके राजा वीश्तास्पके दरबारकी भाषा भी रह चुकी है, इसीलिए इसे प्राचीन बैक्ट्रियन भी कहते हैं। इसके अन्य नाम **अवेस्ती** या **जिंद** भी हैं। अवेस्ता भाषाका प्रचार आरंभसे पहली ई०के आस-पास तक रहा होगा। अवेस्ता भाषा वैदिक संस्कृतसे बहुत मिलती-जुलती है (दे० आर्य), इसके बहुतसे वाक्य तो थोड़े परिवर्तनसे बिल्कुल वैदिकसे बन जाते हैं। उदाहरणार्थ यस्न (९) का प्रथम छंद—

Havanim a ratum.a
Haomo upait Zaraoustrəm,
Atrrm paiəi-yaozdaoəm,
Gaoas-ca sravayntəm,
a-dim psrssat (Zaraouftro)³
Ko, narə,ahi ?
yim azem vispahe anhəus
astvato sraestem dadarəsa.

आधुनिक अवेस्ता-शास्त्रियों द्वारा इसको संस्कृतमें इस प्रकार रूपान्तरित किया गया है :—

सवनिम् आ ऋतुम् आ
सोम उपैत् जरथुष्ट्रम्।
अत्रिम् परि-योम्-दधन्तम्
गाथाश्च [अपि] ३श्रावयन्तम्॥
आ तम् पृच्छत् (जरथुष्ट्रः)
को नर, असि ?
यम् अहम् विश्वस्य असोः।
अस्थिवतः श्रेष्ठम् ददर्श॥

अवेस्ता लिपि—इसे **पाजंद लिपि** भी कहते हैं। इसमें कुल ५० वर्ण हैं। इसकी उत्पत्तिके बारेमें सनिश्चय कुछ कहना कठिन है। इसके कुछ चिह्न ग्रीक लिपि तथा पहलवी लिपिसे कुछ-कुछ मिलते-जुलते हैं।

अवेस्ती—अवेस्ता (दे०) का एक अन्य नाम।

अव्यक्त योगात्मक (holophrastic)—**प्रश्लिष्ट-योगात्मक** (दे०) का एक अन्य नाम।

अव्यय (indeclinakle)—'अव्यय'का अर्थ है 'जो व्यय न हो' अर्थात् कम न हो या घटे नहीं। पहले इसका प्रयोग ब्रह्मके लिए होता था। बादमें संस्कृत व्याकरणमें अव्यय जैसे शब्दोंको भी कहा गया, जो लिंग, वचन, कारक आदिके कारण परिवर्तित नहीं होते। गोपथ ब्राह्मण (१.६) महाभाष्य तथा काशिका आदि अनेक ग्रंथोंमें कहा गया है : 'सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु सर्वासु च विभक्तिषु। वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम्॥' उदाहरणार्थ-उच्चैः, नीचैः आदि। अव्यय शब्द इस अर्थ-

में पुराना है। कुछ प्रातिशाख्यों (चतुरध्यायिका २.४८; अथर्ववेद प्रातिशाख्य २.२) में भी हम इसे पाते हैं। इसके लिए झि, **असंख्य, ससंख्य**, आदि अन्य शब्दोंका भी प्रयोग संस्कृत व्याकरणोंमें हुआ है। संस्कृतमें अव्यय एक दृष्टिसे दो प्रकारके हैं : **अव्युत्पन्न अव्यय** (जैसे-च, वा, ह, खलु, अपि), **व्युत्पन्न अव्यय** (यथा, तथा आदि; अन्य भी भावसमास भी 'परोक्ष, प्रत्यक्ष आदि' इसी प्रकारके हैं),। इन्हींको सामान्य (simple) तथा **समस्तपदीय** (compound) भी कहा गया है। संस्कृतमें अव्ययके अंतर्गत **उपसर्ग** (prefix), **क्रिया विशेषण** (adverb), निपात (particle), समुच्चय बोधक (conjunctions), तथा **मनोविकार बोधक** (interjections) आदि आते हैं। अव्ययको **अधिकारी** या **अधिकारी शब्द** भी कहते हैं। हिन्दीमें अव्ययके अंतर्गत क्रियाविशेषण (दे०), संबंधसूचक (दे०), समुच्चयबोधक (दे०) तथा मनोविकारबोधक (दे०) इन चारको स्थान दिया गया है। यद्यपि इन चारोंके अंतर्गत आनेवाले सभी शब्द अव्यय या अविकारी नहीं होते। जैसे, जो **जितने** बड़े हैं, उनकी ईर्ष्या भी **उतनी** ही बड़ी होती है। यहाँ 'जितने', 'उतनी' 'क्रियाविशेषण हैं, अतः अव्यय भी हैं,' किंतु वस्तुतः ये अविकारी या अव्यय नहीं हैं, क्योंकि इनमें लिंग-वचनके अनुसार परिवर्तन (जितना, जितनी, जितने) होता है। इसीलिए अव्ययके भी दो भेद किये जा सकते हैं : (क) **विकृत अव्यय**--जिनमें विकार होता है, जैसे जितना आदि। इसे **विकारी अव्यय** भी कहते हैं। (ख) **अविकृत अव्यय**--जिनमें विकार नहीं होता। जैसे इधर, तुरन्त आदि। इसे **अविकारी अव्यय** भी कहते हैं।

अव्यय पूर्वपद कर्मधारय समास--(दे०) **समास**।

अव्ययपूर्वपद बहुब्रीहि समास--(दे०) **समास**।

अव्ययी भाव समास---(दे०) **समास**।

अव्याकरणिक प्रयोग (barbarism)--व्याकरण-विरुद्ध प्रयोग।

अव्याहत---**सप्रवाह** (दे०) का एक अन्यनाम।

अव्युत्पन्न अव्यय--(दे०) **अव्यय**।

अशक्त ध्वनि (lenis)--ऐसी ध्वनि जिसके उच्चारणमें मुँहकी माँसपेशियाँ शिथिल रहती हों। **अशक्त स्वर** भी हो सकते हैं, जैसे अ, और **अशक्त व्यंजन** भी हो सकते हैं, जैसे क्। अशक्त ध्वनिको **शिथिल ध्वनि** भी कहते हैं। (दे०) **स्वरोंका वर्गीकरण** तथा **व्यंजनोंका वर्गीकरण**।

अशक्त बलाघात--**बलाघात** (दे०) का एक भेद।

अशिष्ट भाषा (vulgar language)--ऐसी भाषा, जिसका प्रयोग शिष्ट समाजमें न होता हो और जो अशिष्ट समझी जाती हो।

अशिष्टाचारी रूप--(दे०) **सामान्य रूप**।

अशुद्ध बलाघात (wrenched stress)--ऐसा बलाघात जो गलत जगहपर हो।

अशुद्धिजन्य शब्द (ghost word)--उच्चारण, मुद्रण, या लेखन आदि किसीकी भी अशुद्धिके कारण बना हुआ शब्द।

अ-शो (a-sho)--**ख्यंग** (दे०) का एक अन्य नाम।

अशो-ज़ो--(asho-zo)--**अ-शो** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक दूसरा नाम।

अश्कसारिक (ashksahik)--आर्मीनीयाकी वर्तमान परिनिष्ठित तथा साहित्यिक भाषा। इसे 'अश्क सरहवर' भी कहते हैं।

अश्कुंद (ashkund)--काफ़िरिस्तानमें प्रयुक्त एक काफ़िर (दरद) भाषा। इसका शुद्ध नाम 'अश्कूँ' है।

अश्कूं--(दे०) **अश्कुंद**।

अश्लिष्ट-योगात्मक (simple agglutinative)-- **योगात्मक भाषा** (दे०) का एक भेद।

अश्लिष्ट योगात्मक वाक्य--(दे०) **वाक्योंमें वाक्योंके प्रकार** उपशीर्षक।

असंख्य--(दे०) **अव्यय**।

असंते--**त्वि** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

असंयुक्त ध्वनि––**मूलध्वनि** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

असंयुक्त व्यंजन––वह व्यंजन जो संयुक्त न हो अर्थात् मूल या एक हो। जैसे क्, ट्।

असंयुक्त स्वरीकरण (monophtbongisation)–संयुक्त स्वरको मूल या असंयुक्त स्वर कर देना। इसे **मूल स्वरीकरण** भी कहते हैं।

असंलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि--एक प्रकारकी **ध्वनि** (दे०)।

अ-सक (a-sak)––**कदु** (दे०)का एक अन्य नाम।

असमावेशी पुरुषवाचक सर्वनाम–(दे०) **अनंत-र्भावी पुरुषवाचक सर्वनाम**।

असमिया––**आसामी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

असमिया लिपि––**आसामी लिपि** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

असाधु भाषा––इसका प्रयोग दो प्रकारकी भाषाओं (क–व्याकरणिक दृष्टिसे अशुद्ध भाषाके लिए; ख–शिष्ट समाजमें न प्रयोग होने योग्य भाषाके)लिए होता है।

असामान्य ध्वनि-परिवर्तन––एक प्रकारका **ध्वनि-परिवर्तन** (दे०)।

असामान्य स्वर(abnormal vowel)––ऐसा स्वर जो सामान्य स्वरोंसे भिन्न हो। जैसे-ऐसे स्वर जो पश्चस्थितिमें उच्चरित होते हैं किंतु जिनमें ओष्ठ वृत्ताकार नहीं किये जाते। जैसे w। **गौण मानस्वर** (दे०)के अतिरिक्त मध्यस्वर (अ आदि)-को भी कभी-कभी इस नामसे पुकारा जाता है। सामान्य स्वर वे हैं, जिनकी गणना सामान्य अग्र (इ, ई, ए आदि) तथा पश्च (आ, ओ, उ, ऊ) स्वरोंमें होती है।

असामी––(दे०) **आसामी**।

असार्वनामिक भाषा (non-pronominaeized language)––**सार्वजनिक भाषा** (दे०)के विरुद्ध ऐसी भाषा, जिसमें सर्वनाम क्रियासे न मिलें। (दे०) **चीनी परिवार**।

असि (asi)––(दे०) **'अत्सि'**।

असिलेपाइ (asilepai)––**सिंज** (दे०)का एक अन्य नाम।

असीरिअन––(दे०) **असुर भाषा**।

असीरिओ बेबिलोनिअन––(दे०) **अकादी**।

असुर भाषा (assyrian)––असीरिअन या असुर भाषा **सामी परिवार** (दे०)की है। इसका काल कुछ लोग ३००० ई० पू० से ६५० ई० पू० तक तथा कुछ लोग २००० ई० पू० से १ ई० पू० तक मानते हैं। (दे०) **अकादी**।

असुर लिपि––बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमें-से एक।

असुरिंग (asuring)––**अस्सिरिंगिआ** (दे०)का एक दूसरा नाम।

असुरी (asuri)–छोटा नागपुर और राँचीमें प्रयुक्त, मुंडा परिवारकी, **खेरवारी** (दे०) भाषाकी एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १५,०२५के लगभग थी।

अस्कोटिआ (askotiya)–**अस्कोटी** (दे०) का एक दूसरा नाम।

अस्कोटी––**कुमायूँनी** (दे०)की अलमोड़ा जिलेके अस्कोट (अस्सी कोट या किले) परगनेमें प्रयुक्त एक उपबोली। यह बोली नेपालीसे बहुत प्रभावित है। इसका एक नाम **अस्कोटिया** भी है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १०,९६४ थी।

अस्तित्वसूचक वाक्य (existential sentence)––ऐसा वाक्य, जिसमें किसी व्यक्ति-वस्तु आदिके होने-न होनेके संबंधमें सूचना हो। इस अंग्रेजी नामका प्रयोग येस्पर्सनने किया है। उदाहरणार्थ 'वर्तनमें पानी है' या 'वर्तनमें पानी नहीं है' इसी प्रकारके वाक्य हैं। आशय या संकेतके आधारपर इस प्रकार वाक्यके अनेक भेद-विभेद किये जा सकते हैं।

अस्तूरियन––स्पेनके उत्तरी किनारेपर बोली जानेवाली एक बोली।

अस्तोरी (astori)––कश्मीरकी घाटीमें,

प्रयुक्त होनेवाली दरद भाषा 'शिणा'की एक बोली । (दे०) **शिणा** ।

अस्पष्ट बलाघात–बलाघात (दे०)का एक भेद ।

अस्पष्ट ल (dark L)—(दे०) **पार्श्विक** ।

अस्पृष्ट—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें** प्रयत्न उपशीर्षक ।

अस्फोटित स्पर्श (in complete या unexploded)—एक प्रकारका स्पर्श नस्य (दे०) । (दे०) **ध्वनियोंके वर्गीकरणमें व्यंजनोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक ।

अस्सिनिबोइन (assiniboin)—**डकोट-अस्सिनबोइन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमरीकी भाषा ।

अस्सिरिंगिआ (assiringia)–(१) उत्तरी-पूर्वी आसाम सीमाके बाहर बोलीजानेवाली एक नागा भाषा । (२) **आओ** (दे०)का एक अशुद्ध नाम ।

अहटेना (ahtena)—**टिन्नेह** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमरीकी भाषा ।

अहरानी—**खानदेशी** (दे०)का दूसरा नाम ।

अहाणउ—**लोकोवित** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक 'प्राकृत' नाम ।

अहि (ahi)—पश्चिमी चीनमें प्रयुक्त एक **लोलो** (दे०) भाषा ।

अहिरऊ—(दे०) **अहिरहू** ।

अहिरहू–**अहीराणी** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

अहिरानी—(दे०) **अहीराणी** ।

अहीरवाटी—'उत्तरी-पूर्वी राजस्थानी'की एक बोली, जो गुड़गाँव जिलेके पश्चिममें बोली जाती है । इस क्षेत्रमें अहीरोंके प्राधान्यके कारण इसका यह नाम है । इसके अन्य नाम **हीरवाटी** तथा **अहीरवाल** भी हैं । 'अहीरवाटी' बोलीमें साहित्य नहीं है । 'अहीरवाटी' देवनागरी, गुरुमुखी तथा फ़ारसी तीनोंमें लिखी जाती है । 'अहीरवाटी' 'मेवाती', 'ब्रज', 'बाँगड़ू', 'बागडी' तथा 'शेखावाटी'के बीचमें होनेसे अपनी सीमा-रेखापर उनसे प्रभावित है । मैं इसे पश्चिमी हिन्दीके अंतर्गत रखनेके पक्षमें हूँ । इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग ४,४८,९४५ थी । (दे०) **राजस्थानी** ।

अहीरवाल—**अहीरवाटी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

अहीराणी–खानदेशी (दे०)का एक अन्य नाम ।

अहीरी—कच्छमें प्रयुक्त, **भीली** (दे०) भाषाकी एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलने वालोंकी संख्या लगभग ३०,५०० थी ।

अहोम—(दे०) **आहोम** ।

अंग-कू (ang-ku)–केंगतूंग दक्षिणी शान स्टेट (बर्मामें) प्रयुक्त, एक **मोन-ख्मेर** (दे०) बोली ।

आ

आंतरिक पुर्ननिर्माण (internal reconstruction) **पुर्ननिर्माण** (दे०)का एक रूप । इसमें किसी भाषाके उस कालके शब्दों या रूपों आदिका निर्माण करते हैं, जिस कालका लिखित रूप प्राप्त नहीं है ।

आंतरिक भाषा (inner speech)–(दे०) **भाषाके पक्ष** ।

आंतरिक मुक्त संगम (Internal open junture)—एक प्रकारका **संगम** (दे०) ।

आंतरिक रूप-निर्माण (internal inflexion)—प्रातिपदिक या मूल शब्दमें किसी आंतरिक परिवर्तन (प्रायः ध्वन्यात्मक) द्वारा कारकीय रूप बनाना ।

आंतरिक संगम (internal juncture)—एक प्रकारका **संगम** (दे०) ।

आंतरिक स्वर-विच्छेद (internal hiatus)—स्वर-विच्छेद (दे०)का एक भेद ।

आंध्र—तेलुगु (दे०) का एक दूसरा नाम ।

आंशिक प्रश्लिष्ट-योगात्मक भाषा (partly incorporative)—**योगात्मक भाषा** (दे०)का एक भेद ।

आंशिक-योगात्मक (partially agglut-

inative)––**योगात्मक भाषा** (दे०)का एक भेद।

आंशिक समीकरण (accommodation)–ध्वनिपरिवर्तनका एक भेद, जिसमें आंशिक रूपसे समीकरण होता है, अर्थात् ध्वनि पूर्णतः समीकृत न होकर दूसरी ध्वनिकी कुछ बातोंको ग्रहण कर लेती है। जैसे अंग्रेज़ी बैग, (bag)का बहुवचन बैग्स् (bags) बनता है, किंतु 'स्' ध्वनि पूर्ण समीकृत न होकर आंशिक रूपसे समीकृत होती है और ग् के घोषत्वको ग्रहण करके 'ज़्' बन जाती है। इसी कारण इसका उच्चारण 'बैग्स' न होकर 'बैग्ज़' होता है।

आइवरी कोस्ट-डहोमिअन (ivory coast-dahomian)––**सूडान वर्ग** (दे०)की कुछ भाषाओंका एक वर्ग।

आइवरी कोस्ट-लाइबेरिअन (ivory coast liberian)––**सूडान वर्ग** (दे०)की कुछ भाषाओंका एक वर्ग।

आइसलैंडिक––भारोपीय परिवारकी जर्मनिक उपशाखाकी स्कैंडेनेवियन या उत्तरी शाखाकी एक भाषा। इसका क्षेत्र आइलैंड-में तथा कुछ उत्तरी अमेरिकामें है। इसे पहले 'डैनिश भाषा' कहा जाता था। बादमें इसका नाम नोरोएना (norroena)पड़ा। १६वीं सदीके आसपास इसे इस्लेन्ज़क(islenzka) कहा गया। उसके बाद इसको आधुनिक नाम मिला। प्राचीन नार्सके पश्चिमी रूपसे आइसलैंडिक, नारवेजियन तथा पूर्वीसे डैनिश और स्वेडिशका विकास हुआ है।

प्राचीन आइसलैंडिकका प्रथम काल प्राचीन कालसे १२वीं सदी तक है। इसके बाद यह नारवेजियन-से अलग हुई। १२वींसे १४वीं सदीतक दूसरा काल है। यह प्राचीन आइसलैंडिकका क्लासिकल काल कहलाता है। तीसरा काल १३५० से १५३० तक माना जाता है। इसके बाद आधुनिक आइसलैंडिकका प्रारंभ होता है। आधुनिककी प्राचीनतम पुस्तक १५७०का बाइबिलका अनुवाद है। यहाँके साहित्यमें 'सागा' प्रसिद्ध है। इस भाषापर लैटिन, जर्मन आदिका बहुत प्रभाव रहा है। १९वीं सदीमें जाकर भाषापर ये बाहरी प्रभाव कम हुए हैं। आइसलैंडिक बोलनेवालोंकी संख्या १५०,००० है।

आइसलैंडिक लिपि––यह मूलतः **लैटिन लिपि** (दे०)पर आधारित है। इसमें कुछ ही नव-निर्मित या अतिरिक्त चिह्न हैं, जिनमें प्रमुख

ð þ ɸ

चित्र नं० ३

आदि हैं।

आइसोग्लास (isogloss)––किसी भाषा या बोलीमें कभी-कभी ऐसा देखा जाता है कि कुछ विशिष्ट शब्दोंका या किसी एक शब्दका प्रयोग कुछ विशिष्ट क्षेत्रोंमें ही होता है। भाषा या बोलीके नक्शेमें उस विशिष्ट शब्दके प्रयोगस्थलोंको मिलाती हुई जो रेखा खींची जाती है, उसे **आइसोग्लास** या **शब्द रेखा** कहते हैं। भाषाके नक्शोंमें शब्दके प्रयोगको दिखानेके लिए इसका प्रयोग किया जाता है। कुछ लोग आइसोग्लासका प्रयोग बहुत ही विस्तृत अर्थमें करते हैं। ब्लूमफील्डके अनुसार आइसोग्लास उन रेखाओंको कहते हैं, जो किसी भाषा या बोलीके क्षेत्रमें भाषा संबंधी किसी भी विशेषताको प्रदर्शित करनेके लिए खींची जायें। (दे०) **भाषा भूगोल**।

आइसोफ़ोन (isophone)––ध्वनिकी विशेषताओंको नक्शोंमें दिखानेवाली रेखा। किसी भाषा या बोलीके क्षेत्रमें जब ध्वनि-संबंधी कुछ विशेषताएँ केवल कुछ विशिष्ट स्थलोंपर ही होती हैं, तो नक्शेमें उनको रेखासे प्रदर्शित करते हैं। इन्हीं रेखाओंको **ध्वनिरेखा** या आइसोफोन कहते हैं। **आइसोग्लास** (दे०)की विस्तृत परिभाषाके अनुसार आइसोफोन भी एक प्रकारकी आइसोग्लास है।

आओ (ना०)––असमकी नागा पहाड़ियों-

पर प्रयुक्त चीनी परिवारकी एक नागा (दे०) भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३०,१४२ थी।

आकांक्षा—(दे०) **वाक्यमें वाक्यकी आवश्यकताएँ** उपशीर्षक।

आकारदर्शी विशेषण—(दे०) **विशेषण**।

आकारबोधक विशेषण—(दे०) **विशेषण**।

आकारवाचक विशेषण—(दे०) **विशेषण**।

आकारसूचक विशेषण—(दे०) **विशेषण**।

आकीऐन (achaean)—प्राचीन ग्रीककी एक पश्चिमी बोली। इसके बोलनेवाले आकेया लोग थे।

आकृतिमूलक वर्गीकरण—आकृतिके आधारपर भाषाओंका एक वर्गीकरण। (दे०) **विश्वकी भाषाओंका वर्गीकरण**।

आक्षरिक (syllabic)—वे ध्वनियाँ (स्वर या व्यंजन) जो **अक्षर** (दे०)में **शीर्ष** (दे०)-का काम करती हैं। दूसरे शब्दोंमें, ऐसी ध्वनियाँ, जो अक्षरका मेरुदंड बनकर उसका निर्माण करती हों। (दे०) **अक्षर**; तथा **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वर और व्यंजन** उपशीर्षक।

आक्षरिक बलाघात (syllakic stress)—अक्षरकी किसी एक ध्वनिपरका बलाघात।

आक्षरिक संगम (syllaleic juncture)—**संगम** (दे०)का एक भेद।

ऑक्सिडेंटल (occidental)—वहल द्वारा बनायी गयी एक कृत्रिम भाषा।

आख्यात—क्रिया या क्रिया-रूप (१) क्रिया या क्रिया-रूपके लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम। इसका प्रयोग यास्क आदिने किया है। (दे०) **शब्द**। (२) ऋक् प्रातिशाख्य तथा कुछ अन्य ग्रंथोंमें **आख्यात** शब्दका प्रयोग धातुके लिए भी मिलता है।

आगतध्वनि (excresent)—किसी शब्दमें बाहरसे आयी हुई ध्वनि। (दे०) **आगम**।

आगत शब्द—**विदेशी** (शब्द)के लिए प्रयुक्त एक नाम। (दे०) **शब्द**।

आगम—'आगम'का अर्थ है 'आना'। शब्दमें जब कोई नयी ध्वनि आ जाती है तो उसे 'आगत ध्वनि' तथा उसके आनेको **आगम** या **ध्वनि-आगम** कहते हैं। कुछ आगम तो ध्वनि-परिवर्तनके रूपमें होते हैं और कुछ व्याकरणिक आगमके रूपमें। इस तरह आगम दो प्रकारके हुए, जिन्हें नीचे दिया गया है। (क) **आगम** या **ध्वनि परिवर्तन विषयक आगम** (insertion या augment)—यह ध्वनिपरिवर्तनका एक रूप या उसकी एक दिशा है। (दे०) **ध्वनि परिवर्तनकी दिशाएँ**। उदाहरणार्थ 'दवा'से 'दवाई'। यहाँ 'ई'का आगम हो गया है। संस्कृत शब्द 'शाप' हिन्दीमें 'श्राप' रूपमें भी मिलता है। यहाँ 'र्' व्यंजनका आगम हुआ है। 'आगम'का उलटा **लोप** (दे०) होता है। आगम मुख्यतः तीन प्रकारके हो सकते हैं। स्वरागम, व्यंजनागम, अक्षरागम। यहाँ 'अक्षर'का अर्थ है स्वर और व्यंजनका योग। इन तीनोंके ही तीन-तीन उपभेद हो सकते हैं: आदि, मध्य, अंत्य। यदि ध्वनि आदिमें आयेगी तो **आदि-आगम**, मध्यमें आयेगी तो **मध्यागम** और अंतमें आयेगी तो **अंत्यागम**। इस प्रकार ९ भेद हुए। जो स्वर पहलेसे, शब्दमें हो, वही या वैसा ही एक फिर आ जाय तो उसे समस्वरागम कहते हैं। जैसे 'स्त्री'से 'इस्त्री'। यहाँ 'ई' पहलेसे थी एक 'इ' आ गयी। दोनों समान प्रकृतिकी हैं, अतः समस्वरागम हुआ। इसे लेकर आगमके प्रमुखतः १० भेद हो सकते हैं। इनके उदाहरण इस प्रकार हैं। (१) **आदिस्वरागम** (prothesis)—यह उच्चारण सुविधाके लिए अनेक प्रचलित शब्दोंमें सुनाई पड़ता है। अं० स्टेशन = इस्टेशन, सं० स्त्री = इस्त्री, सं० स्नान–अस्नान। लैटिन schola, फ्रेंच escole; स्तबल = अस्तबल। इसे **प्रागुपजन** या **पुरोहिति** भी कहते हैं। (२) **मध्य स्वरागम** (anaptyxis)—उच्चारण सुविधाके लिए यह आगम भी होता है। सं०में भी 'पृथ्वी'का 'पृथिवी', 'इंद्र'का 'इं-

न्दर' या 'स्वर्ण'का 'सुवर्ण' मिलता है। बोल-चाल या मध्ययुगीन हिन्दी साहित्यमें पूर्व = पूरब, कर्म = करम, धर्म = धरम, हुक्म= हुकुम आदि भी इसीके उदाहरण हैं। संस्कृतमें इसे विश्लेष या **स्वर भक्ति** (दे०) कहा गया है । इसके अन्य नाम **विप्रकर्ष** (diaeresis), **युक्तविकर्ष** या **अपिनिहिति** (दे०) भी हैं। (३) **अंत्यस्वरागम**—दवा = दवाई; सं० पत्रसे भोजपुरी पतई । (४) **समस्वरागम** (दे०) (५) **आदि-व्यंजनागम**—सं० ओष्ठ = हि० ओंठ; सं० अस्थि = हड्डी ।(६) **मध्य व्यंजनागम**—सं० सुन्दर = (भोजपुरी) सुन्नर; सं० शाप = हि० श्राप । (७) **अंत्य व्यंजनागम**—अरबी 'तिलस्म'का अं० talisman; उमरा = उमराव् । (८) **आदि-अक्षरागम**—सं० गुंजा = घुंगुची (भोजपुरी) (९) **मध्य अक्षरागम**—खल = खरल । (१०) **अंत्य-अक्षरागम**—आँख = आँखड़ी (राजस्थानी) आँक = आँकड़ा । (ख) **व्याकरणिक आगम**—मूल शब्द, प्रातिपदिक या धातु आदिसे नवीन शब्द या रूप बनाते समय (नियमित विभक्ति आदिके अतिरिक्त) जो ध्वनि या ध्वनि-समूह आ जाता है, उसे व्याकरणिक आगम या आगम कहते हैं । जैसे इन्द्रमें 'ई' प्रत्यय जोड़नेपर 'इन्द्राणी' बनता है । यहाँ बीचमें 'आन्' (आनुक्)का आगम हुआ है। आगमके बारेमें कहा गया है कि यह मित्रवत् (मित्रवदागमः) आता है, जब कि 'आदेश' शत्रुवत् (शत्रुवदादेशः) होता है।

आगमक—(शब्द या रूप आदि) जिसमें किसी ध्वनि (या आगम augment)का **आगम** (दे०) हो, या हुआ हो। यह शब्द **अनागमक** (दे०)का उलटा है ।

आगम संधि—(दे०) **संधि** ।

आगरी (agri)—कोलाबा (बंबई)की आगरी नामक जातिके लोगोंमें प्रयुक्त कोंकणी (दे०)की एक उपबोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २२,८२६ थी ।

आग्नेय परिवार—**आस्ट्रिक परिवार** (दे०) का एक अन्य नाम ।

आघात—[यहाँ आघात शब्द अंग्रेज़ी शब्द **ऐक्संट** (accent)के प्रतिशब्दके रूपमें प्रयुक्त किया जा रहा है। योंहिंदी पुस्तकोंमें 'ऐक्संट'के लिए **बल, स्वर, स्वराघात** आदिका भी प्रयोग किया गया है । अंग्रेज़ी 'ऐक्संट' शब्दका प्रयोग भाषाविज्ञानमें प्रमुखतः तीन अर्थोंमें मिलता है :—(क)पामर आदि कुछ भाषाविज्ञान-वेत्ता इसे बहुत विस्तृत अर्थमें ग्रहण करते हैं और उनके अनुसार मात्रा (mora), सुर-लहर या वाक्यसुर (intonation stress), बलाघात (stress), ध्वनि-प्रक्रिया (ध्वनियोंका ऐतिहासिक अध्ययन या आगम, लोप, समीकरण, विषमीकरण, विपर्यय आदि) तथा ध्वनि-प्रकृति (स्थान, प्रयत्न या संवृतता-विवृतता आदि) इसके अंतर्गत आती हैं। (ख) दूसरे अर्थमें 'ऐक्संट' बहुत सीमित है और उसे मात्र बलाघात (stress)का समानार्थी मानते हैं । प्रेटर, पेड़ तथा गेनर आदिने इसी अर्थमें इसका प्रयोग किया है । (ग) तीसरे अर्थमें यह पारिभाषिक शब्द उपर्युक्त दोनोंके बीचमें है और उसके अंतर्गत बलाघात (stress) और सुर या सुराघात (pitch) केवल दो चीजें आती हैं । यही अर्थ आजकल अधिक मान्य तथा प्रचलित है । यहाँ भी 'आघात' शब्द इस तीसरे अर्थमें ही प्रयुक्त किया जा रहा है।] भाषाशास्त्रमें 'आघात' (accent) ध्वनिसे संबद्ध है । इसके अंतर्गत ध्वनि उच्चारणमें प्रयुक्त दो प्रकारके 'आघात' आते हैं । (१) एक है **बलाघात** (stress accent), जिसे अंग्रेज़ीमें केवल **स्ट्रेस** (stress) या **एक्सपिरेटरि स्ट्रेस** (expiratory) कहते हैं । हिन्दीमें इसे **बलात्मक स्वाराघात** या केवल **बल** भी कहा गया है । (२) दूसरा है **सुराघात** या **सुर** (pitch accent) । अंग्रेज़ीमें इसे **पिच** (pitch) **टोन** (tone,), **टोनिक**

ऐक्संट (tonic accent), क्रोमैटिक ऐक्संट (chromati caccent), या म्युज़िकल ऐक्संटक (musical accent) आदि कई नामोंसे अभिहित करते हैं। हिन्दीमें इस अर्थमें **संगीतात्मक** या **गीतात्मक स्वराघात स्वर** या **तान** आदिका भी प्रयोग किया गया है। बलाघात और सुर, ये दोनों ही 'आघात' भाषा-ध्वनिके स्वरूप-निर्माणमें बहुत महत्त्वपूर्ण हाथ रखते हैं। नीचे इन दोनोंको अलग-अलग लिया जा रहा है।

बलाघात—बोलनेमें प्रायः ऐसा देखा जाता है कि वाक्यके सभी अंशोंपर बराबर बल या जोर नहीं दिया जाता। कभी वाक्यके किसी शब्दपर बल अधिक होता है तो कभी दूसरेपर। इसी प्रकार एक शब्दकी भी सभी ध्वनियोंपर बराबर 'बल' या 'आघात' नहीं दिया जाता। शब्द जब एकसे अधिक अक्षरों (syllables)का होता है तो इन अक्षरोंपर भी आघात या बल बराबर नहीं पड़ता। एकपर अधिक होता है तो दूसरे या दूसरोंपर कम। इसी 'बल', 'आघात' या 'ज़ोर'को 'बलाघात' कहते हैं। यह ध्यान देनेकी बात है कि भाषाकी कोई भी ध्वनि पूर्णतः बलाघातशून्य नहीं होती। (अस्फोट स्पर्श 'unexploded stop' जैसे 'आप्'का 'प्' जैसी ध्वनियाँ अपवाद हैं) जिन ध्वनियों, अक्षरों या शब्दोंको हम बलाघातशून्य समझते हैं उनपर केवल अपेक्षाकृत कम बलाघात होता है। कुछ लोग बलाघातको केवल 'अक्षर'पर मानते हैं, किंतु ऐसी मान्यताके लिए संपुष्ट आधारका अभाव है। व्यावहारिक रूपसे 'अक्षर-बलाघात'का प्रयोग अधिक दिखाई पड़ता है, इसलिए केवल मोटे रूपसे तो ऐसा माना जा सकता है, किन्तु तत्त्वतः जब सभी भाषा-ध्वनि किसी न किसी अंशमें बलाघातसे युक्त होती हैं, तो फिर बलाघातकी मात्र अक्षर तक कदापि सीमित नहीं माना जा सकता। मूलतः बलाघातका कुछ आधिक्य एक ध्वनिपर दिखाई पड़ता है, जब हम उसकी तुलना आस-पासकी कम बलाघात युक्त ध्वनियोंसे करते हैं। दूसरे स्तरपर बलाघातका आधिक्य अक्षरपर दिखाई पड़ता है, जब हम एक अक्षरकी तुलना आस-पासके अक्षरोंसे करते हैं। तीसरे स्तरपर यह शब्दपर दिखाई पड़ता है, जब हम एक शब्दकी तुलना आस-पासके शब्दोंसे करते हैं। चौथे स्तरपर यह वाक्यपर दिखाई पड़ता है, जब हम एक वाक्यकी तुलना आस-पासके वाक्योंसे करते हैं।

भाषाके विभिन्न स्तरोंपर बलाघातके भेद—प्रायः सभी भाषा विज्ञानविदोंने बलाघातके दो भेद माने हैं—**शब्द-बलाघात** और **वाक्य-बलाघात**। इस परम्परागत भेदसे थोड़ा हटते हुए इन पंक्तियोंका लेखक, उपर्युक्त कारणोंसे बलाघातके निम्नांकित चार-पाँच भेदोंका विनम्र सुझाव देना चाहता है। (१) **ध्वनि बलाघात**—वह बलाघात जो किसी एक ध्वनि (स्वर या व्यंजन)पर हो। यदि किसी अक्षर (syllable)में एकसे अधिक ध्वनियाँ हों तो हम देखते हैं कि उनमें एक ध्वनि उस अक्षरका शिखर होती है और शेष **गह्वर**। (दे० **अक्षर**) कहना न होगा कि अपेक्षाकृत अधिक बलाघात उस शिखरपर ही होगा। उदाहरणार्थ जप् एक अक्षर है। इस अक्षरका **शिखर** बीचका अ (ज्+अ+प्) है। इस 'अ'में **आन्तरिक मुखरता** (Inherentsonority) आदि अन्य गुणोंके साथ बलाघाताधिक्य भी है, इसीलिए यह ध्वनि 'शिखर' है, अन्य ध्वनियाँ इसी कमीके कारण 'गह्वर' हैं। (२) **अक्षर बलाघात**—वह बलाघात जो अक्षरपर हो। यदि किसी शब्दमें एकसे अधिक अक्षर हैं, तो उनमें प्रायः यह देखा जाता है किएक अक्षरपर बलाघात सबसे अधिक होता है, दूसरेपर कम, और तीसरेपर और कम। आगे भी इसी प्रकार। अंग्रेज़ी आदि बलाघात-प्रधान भाषाओंमें यह बात पर्याप्त स्पष्ट है। अंग्रेज़ीमें एकसे अधिक

अक्षरवाले सभी शब्दोंमें एक अक्षर **बलाघातयुक्त** (stressed) कहलाता है और शेषमें कुछ **बलाधातहीन** (unstressed) या **अल्प बलाघातयुक्त** (weak stress वाले)। जैसा कि संकेत किया जा चुका है, यहाँ 'बलाघातहीन'का अर्थ यह नहीं है कि वे अक्षर बिना बलाघातके होते हैं, इसका मात्र अर्थ यह है कि उनका बलाघात अन्यों-की तुलनामें नहींके बराबर होता है। इसी-लिए इस प्रसंगमें 'बलाघातहीन' (या अंग्रेज़ी-का 'अनस्ट्रेस्ड') शब्द भ्रामक है और इसके स्थानपर **अत्यल्प बलाघातयुक्त**का प्रयोग किया जाना चाहिए। यों तो वाक्यके एकसे अधिक शब्दोंके अक्षरोंके बलाघातको भी तुलनात्मक रूपमें देखा जा सकता है, किंतु इस प्रकार तुलनात्मक मूल्यांकन प्रायः केवल एक शब्दके अक्षरोंका ही किया जाता है। उनके बलाघातोंको क्रमसे **प्रथम बलाघात** (प्रबलतम), **द्वितीय बलाघात** (उससे दुर्बल), **तृतीय बलाघात** (उससे भी निर्बल), **चतुर्थ बलाघात** (तीसरेसे निर्बल) आदि नामोंसे अभिहित किया जाता है। अंग्रेज़ी शब्द ऑपार्ट्युनिटी (opportunity) में पाँच अक्षर हैं। तुलनात्मक दृष्टिसे प्रथम बलाघात तीसरे अक्षरपर, द्वितीय पहलेपर, तृतीय पाँचवेंपर, चतुर्थ दूसरेपर, और पंचम चौथेपर है। इसी रूपमें बलाघातके सापेक्षिक बलको लेकर विद्वानोंने इसके **उच्च** (loud), **उच्चार्द्ध** (half loud) **सशक्त** या **प्रबल** (strong), **अशक्त** या **निर्बल** (weak); तथा **मुख्य** (primary) **गौण** (secondary), **गौणातिगौण** या **तृतीयक** (tertiary) आदि भेद किये हैं। कहना न होगा कि तुलनात्मक दृष्टिसे विचार करके आवश्यकतानुसार इस प्रकारके अनेक भेद किये जा सकते हैं। यों मुख्य भेद दो ही हैं, जिनके लिए उपर्युक्त किसी भी **युग्म त्रिक**के प्रथम दोका प्रयोग किया जा सकता है। अंग्रेज़ी शब्द फ़ादर (father) में प्रथम अक्षर मुख्य बलाघातयुक्त है और दूसरा गौण। भाषाविज्ञानके विद्वानोंने प्रायः इस 'अक्षर-बलाघात' को ही शब्द **बलाघात** (word stress) कहा है, जिसका संभवतः आशय है, शब्दके अवयवों या अक्षरोंपर बलाघात होना। बलाघात-प्रधान भाषाओंमें शब्दके अक्षरोंपरका बलाघात निश्चित होता है, जिसे **निश्चित बलाघात** (fixed stress) कहते हैं। भाषाको स्वाभाविक रूपसे बोलनेके लिए इसका ज्ञान और प्रयोग आवश्यक है। अंग्रेज़ी इसी प्रकारकी भाषा है। भारतीय जब अंग्रेज़ी बोलते हैं, तो उसे प्रायः बलाघात-शून्य रूपमें बोलते हैं, इसीलिए अंग्रेजोंके लिए वह अस्वाभाविक लगती है और कभी-कभी समझमें भी नहीं आती। यों तथाकथित बलाघात-हीन भाषाओंमें भी शब्दके अक्षरोंपर बलाघात प्रायः निश्चित होता है। जैसे हिन्दीमें कुछ विशेष प्रकारके शब्दोंमें प्रायः अक्षरके उपान्तपर बलाघात होता है, इसी कारण अंतिम 'अ'का लोप हो गया है। जैसे—राम्, आप्, कमल् आदि। (३) **शब्द बलाघात**—एक सामान्य वाक्यमें सभी शब्दोंपर लगभग बराबर बलाघात रहता है। 'रामने मोहनको डंडेसे मारा' एक इसी प्रकारका सामान्य वाक्य है। किन्तु आवश्यकतानुसार इसके किसी शब्दपर अपेक्षाकृत अधिक बलाघात डाला जा सकता है, और तब इस वाक्यके अर्थमें थोड़ा-सा परिवर्तन आ जायगा। वाक्यगठनमें, जैसे कभी-कभी वाक्यके सबसे महत्वपूर्ण शब्दको नियमतः ठीक न होते हुए भी पहले रख देते हैं ('रामको तुमने मारा' या 'डंडेसे तुमने मारा'। इन दोनोंमें बल देनेके लिए 'राम' और 'डंडे'को अनियमित होते हुए भी पहले रख दिया गया है) इसी प्रकार बल देनेके लिए शब्द-विशेषपर 'बलाघात' भी डाल दिया जाता है। ऊपरके वाक्यमें प्रमुख अर्थबोधक शब्द राम, मोहन, डंडे, मारा ये चार हैं। इन चारोंमें किसीपर भी बलाघात डालकर अर्थकी विशेषता प्रकट की जा सकती है।

'राम'पर बल देनेका अर्थ होगा कि रामने मारा और किसीने नहीं मारा; इसी प्रकार 'डंडे'पर बल देनेका अर्थ होगा कि डंडेसे मारा किसी और चीज़से नहीं। इसी प्रकार औरोंपर भी बल देनेसे अर्थ बदल जायेगा। यहाँ दो बातें ध्यान देनेकी हैं—(क) इस रूपमें बलाघात निश्चित (fixed) न हो कर **मुक्त** या **अनिश्चित** (free) है, और अपने आवश्यकतानुसार वक्ता किसी भी शब्द-पर उसे डाल सकता है। (ख) इस बलाघातका सीधा संबंध अर्थसे है। थोड़ा भी हेर-फेर करनेसे अर्थ बदल जायगा। **शब्द-बलाघात** संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, प्रधान क्रिया और क्रिया-विशेषणपर हो सकता है। जिसे यहाँ **शब्द-बलाघात** कहा गया है उसे भाषाविज्ञानके विद्वानोंने **वाक्यबलाघात** (sentence stress) कहा है। यह इस-लिए कि वाक्यमें प्रयुक्त होनेपर ही इस प्रकारके बलाघातका प्रयोग होता है, किन्तु वस्तुतः शब्दके बलाघातको वाक्य-बलाघात कहना उचित नहीं। वाक्य-बलाघात कुछ और हो सकता है, जिसे आगे दिया जा रहा है। (४) **वाक्यबलाघात**—यों तो सामान्य बातचीतमें प्रायः सभी वाक्य-बलाघातकी दृष्टिसे, लगभग बराबर होते हैं, किन्तु कभी-कभी आश्चर्य, भावावेश, आज्ञा या प्रश्न आदिसे संबद्ध होनेपर कुछ वाक्य अपने आसपासके वाक्योंसे अधिक जोर देकर बोले जाते हैं। ऐसे वाक्योंमें कभी-कभी तो बल कुछ ही शब्दोंपर होता है, किन्तु कभी-कभी पूरे वाक्यपर भी होता है। आस-पासके अन्य वाक्योंकी तुलनामें अधिक बला-घात युक्त वाक्यके प्रयोगके कारण इस स्तरके बलाघातको **वाक्यबलाघात** कहा जा सकता है। उदाहरणार्थ :—

राम—'तुम जो भी कहो, मैं नहीं जा सकता।'

श्याम—'वाह! यह तो अच्छी रही! जिस पत्तलमें खाओ, उसीमें छेद करो, और उस-पर कहो कि नहीं जा सकता। जाओगे कैसे नहीं? (हाथ उठाकर भगानेकी दिशामें फेंकते हुए) **भाग जाओ** नालायक कहीं का।'

यहाँ कहना न होगा कि श्याम द्वारा कहे गये वाक्योंमें 'भाग जाओ'पर बलाघात अन्योंकी तुलनामें बहुत अधिक होगा। इस संदर्भमें यह भी ध्यान देने योग्य है कि इस प्रकारका 'बलाघात-युक्त वाक्य' छोटा होगा। यदि उसमें शब्द अधिक होंगे तो फिर सशक्त बलाघात केवल कुछ प्रमुख शब्दों तक ही सीमित रह जायगा। इस प्रकारके बलाघातको यदि अलग नाम देना चाहें तो (५) **वाक्यांश बलाघात** कह सकते हैं। उपर्युक्त वाक्यको 'भाग जाओ'के स्थान-पर यदि 'भाग जाओ यहाँसे' कर दें तो सामान्यतः सशक्त बलाघात पूरेपर न पड़-कर केवल प्रथम दो शब्दोंतक ही सीमित रहेगा।

बल या आघातके आधारपर बलाघातके भेद—यह हम देख चुके हैं कि किसी न किसी अंशमें बलाघात प्रायः सभी ध्वनियोंमें होता है। इसकी तीव्रता या इसका भौतिक स्वरूप, इसी कारण निरपेक्ष रूपसे वर्गी-करण या भेदीकरणके योग्य नहीं है। यदि बहुत गहराईसे देखना हो तो भाषा, व्यक्ति, संदर्भ आदिके प्रसंगमें इसके **उच्च, उच्चार्द्ध, निम्न, निम्नार्द्ध, सामान्य** आदि भेद किये जा सकते हैं। यों जैसा कि ऊपर अक्षर-बलाघातके प्रसंगमें उल्लेख किया जा चुका है, आवश्यकतानुसार इसके और भी अधिक भेद तीव्रताके तुलनात्मक मूल्यांकनके आधार-पर किये जा सकते हैं। किन्तु अधिक प्रच-लित भेद सशक्त और अशक्त दो ही हैं। भाषा अध्ययनकी सामान्य शब्दावलीमें जहाँ बलाघात सशक्त और श्रोतव्य होता है, केवल उसीको बलाघातयुक्त कहते हैं और जहाँ हलका या बहुत अशक्त होता है उसे प्रायः बलाघात नहीं मानते।

अर्थके आधारपर बलाघातके भेद—अर्थके स्तरपर बलाघात दो प्रकारका होता है—**सार्थक बलाघात** और **निरर्थक बलाघात**।

(१) **सार्थक बलाघात** उसे कहते हैं, जिसका अर्थसे संबंध होता है। ऊपर 'शब्द-बलाघात' इसी प्रकारका है। वाक्यमें जिस शब्दपर बलाघात होता है, वह अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है और उसके महत्त्वके आधारपर वाक्यके अर्थमें विशेषता आ जाती है। ऊपर 'रामने मोहनको डंडेसे मारा' वाक्य उदाहरणस्वरूप लिया जा चुका है, और इस बातका संकेत किया जा चुका है कि शब्द-बलाघातसे वाक्यके अर्थमें किस प्रकार विशेषता आ जाती है। सार्थक बलाघातका दूसरा रूप बलाघातप्रधान भाषाओंमें अक्षर-स्वराघातमें दिखाई पड़ता है। इन भाषाओंमें शब्दोंके अक्षरोंपर बलाघातमें परिवर्तनसे अर्थपरिवर्तन हो जाता है। उदाहरणार्थ अंग्रेज़ीमें बहुतसे ऐसे शब्द हैं (जैसे import, conduct, present, insult, increase आदि) जो संज्ञा और क्रिया दोनों रूपोंमें प्रयुक्त होते हैं। इनकी वर्तनी (spelling) में तो कोई अन्तर नहीं पड़ता, लेकिन बलाघातमें पड़ जाता है। जब बलाघात प्रथम अक्षरपर होता है, तो शब्द 'संज्ञा' होते हैं, किंतु जब दूसरेपर होता है तो 'क्रिया' हो जाते हैं। इस प्रकार इन शब्दोंमें संज्ञा और क्रियाका भेद किसी अन्य बातपर निर्भर न होकर मात्र बलाघातपर निर्भर है। इसीलिए यहाँ बलाघात सार्थक है। इसे **सोद्देश्य बलाघात** भी कह सकते हैं। ग्रीक भाषामें सार्थक बलाघात एक और ढंगका मिलता है। वहाँ तो बलाघातके कारण अर्थ बिलकुल बदल जाता है। उदाहरणार्थ 'पोली' शब्दमें यदि बलाघात प्रथम अक्षरपर होगा तो इसका अर्थ 'नगर' होगा, किन्तु दूसरेपर होगा तो यह शब्द संज्ञासे विशेषण हो जायेगा और इसका अर्थ हो जायेगा 'बहुत'। (२) **निरर्थक बलाघात** उसे कहते हैं, जिसके परिवर्तनसे अर्थमें कोई अन्तर नहीं पड़ता। उदाहरणार्थ, हिन्दीमें 'कमल'में 'म'के 'अ'पर बलाघात है किन्तु बोलनेवाला उसके स्थानपर 'क'के 'अ'पर यदि बलाघात कर दे तो सुननेवालेको थोड़ा अस्वाभाविक तो लगेगा, किन्तु अर्थमें कोई परिवर्तन नहीं होगा। यही निरर्थक बलाघात है।

निश्चय-अनिश्चयके आधारपर बलाघातके भेद—इस स्तरपर बलाघात **निश्चित** और **अनिश्चित** दो प्रकारका हो सकता है। अक्षरके शिखरपर या शब्दके अक्षरविशेषपर बलाघात निश्चित होता है। यों लगभग सभी भाषाओंमें किसी न किसी अंशमें यह सत्य है, किन्तु बलाघातप्रधान भाषाओंमें यह बात और भी सत्य है। इसी कारण उनके कोशोंमें इन निश्चित बलाघातोंका स्पष्ट उल्लेख होता है। दूसरी ओर वाक्यके शब्दोंपर बलाघात अनिश्चित है, अपनी आवश्यकतानुसार वक्ता बल देनेके लिए किसी भी अर्थसे विशेषतः संबद्ध शब्दको बलाघातयुक्त कर सकता है।

बलाघातके कुछ अन्य भेद—येस्पर्सन तथा कुछ अन्य लोगोंने बलाघातके **परम्परागत** (traditional) और **मनोवैज्ञानिक** (psychological) भेद भी माने हैं। परंपरागत बलाघात तो वह है, जो परंपरासम्मत है और मनोवैज्ञानिक वह है, जो परंपरासम्मत नहीं है। कभी-कभी भावावेश आदिके कारण नयी जगह बलाघात आ जाता है। इसीको **अपरंपरागत या मनोवैज्ञानिक बलाघात** कहते हैं। जोन्स तथा कुछ अन्य लोगोंने बलाघातके **स्पष्ट** (objective stress) तथा **अस्पष्ट** (subjective stress) दो भेद माने हैं। **स्पष्ट बलाघात** तो सुननेवालोंको सुनाई पड़ता है। अधिकांश भाषाओंमें यही होता है, किन्तु **अस्पष्ट बलाघात** सुनाई नहीं पड़ता। वह वक्ताकी एक मानसिक क्रिया मात्र है। प्रत्यक्ष उच्चारणसे इसका सम्बन्ध नहीं है। स्पष्ट बलाघातकी तरह इसे सभी लोग नहीं पहचान सकते। इसे केवल वे जान सकते हैं जो भाषाकी प्रकृतिसे पूर्ण अवगत हैं और यह जानते हैं कि किस ध्वनिपर यह पड़ेगा। दक्षिणी

अफ्रीकाकी, त्स्वाना (tswana) भाषाकी एक प्रमुख विशेषता इस प्रकारका बलाघात है। जोन्सके अनुसार अंग्रेज़ीमें thank you-के एक विशेष उच्चारण क्क्यु (kkju) में भी इस प्रकारका अस्पष्ट बलाघात है।

बलाघातके लिए किये जाने वाले प्रयत्न और उनकी शारीरिक प्रतिक्रिया––ऊपरके वर्णन और विश्लेषणसे यह स्पष्ट है कि **बलाघात मूलतः शक्तिकी वह मात्रा है, जिससे ध्वनि, अक्षर, शब्द या वाक्यका उच्चारण किया जाता** है। शक्ति-आधिक्यके कारण ही अपेक्षया अधिक बलाघात युक्त ध्वनि, अक्षर या शब्द आदि आसपासकी अन्य ध्वनियों आदिसे अधिक मुखर एवं शक्तिशाली होते हैं। बलाघात भाषाके अन्य उपादानोंकी तरह ही मूलतः एक मनोवैज्ञानिक क्रिया है, किन्तु इसके प्रकटीकरणके लिए शारीरिक प्रयत्नोंका सहारा लेना पड़ता है, जो निम्नांकित हैं:—(क) बलाघातकी मात्रा या तीव्रताके अनुपातमें फेफड़ोंसे अपेक्षाकृत अधिक हवा ध्वनि उत्पन्न करनेके लिए बाहर फेंकी जाती है, साथ ही वह अधिक तीव्रतासे बाहर आती है। अर्थात् प्राणशक्ति अधिक होती है। (ख) उच्चारण अधिक शक्तिसे किया जाता है। (ग) उच्चारण-अवयवोंसे संबद्ध मांस-पेशियोंको अधिक दृढ़ता या तनावके साथ परिचालित किया जाता है, उनमें सामान्य शैथिल्य नहीं रहता। (घ) कभी-कभी बलाघातके साथ-साथ मात्राको बढ़ाने एवं स्वरतंत्रियोंके कंपनको तीव्र और अधिक करने आदिके लिए भी प्रयत्न करने पड़ते हैं। **शारीरिक प्रतिक्रिया**––मूलतः मानसिक और उपर्युक्त शारीरिक प्रयत्नोंके कारण बलाघातयुक्त ध्वनिके उच्चारणके साथ प्रायः कुछ बाहरी अंग-परिचालन भी होता है। आँख, पलक, भौं, सिर, हाथ, उँगली, कंधा या पैर आदिमें एक या अधिक, उच्चारणकी तीव्रताको चढ़कर, तनकर, झटककर, नाचकर या फेंके जाकर प्रकट करते हैं। यह प्रवृत्ति भावुक लोगोंमें अधिक होती है। यूरोपमें इटलीके लोग तथा भारतमें बंगाली लोग इस संबंधमें विशेष रूपसे उल्लेख्य हैं।

बलाघातका ध्वनियोंपर प्रभाव––(१) बलाघातयुक्त ध्वनि आसपासकी ध्वनियोंसे शक्तिशाली होनेके कारण अधिक अपरिवर्तनशील होती है। आसपासकी ध्वनियाँ कमजोर होकर धीरे-धीरे बहुत परिवर्तित, दीर्घसे ह्रस्व या लुप्त हो जाती हैं, किन्तु वह ध्वनि प्रायः ज्यों की त्यों या कुछ परिवर्तित रूपमें बनी रहती है। 'उपाध्याय'में 'ध्या'पर स्वराघात था, अतः 'झ्या', 'झा'के रूपमें सुरक्षित है, किन्तु अन्य सारी ध्वनियाँ समाप्त हो गयीं। ध्वनि-लोपमें बलाघात कितना काम करता है, इसपर ध्वनिपरिवर्तनके सिलसिलेमें कुछ विस्तारसे विचार किया गया है (दे०) **लोप**। 'बाज़ार'में 'ज़ा'के 'आ'के बलाघातने ही 'बा' को पंजाबीमें 'ब' कर दिया है और वह 'बज़ार' हो गया है। इसी प्रकार पंजाबीमें नराज़, तरीफ़, बरीक, आदिमें भी हुआ है। बलाघातहीन स्वर प्रायः दीर्घसे ह्रस्व और ह्रस्वसे उदासीन या शून्य हो जाते हैं। (२) ध्वनियोंके मांस-पेशियों एवं करणकी दृढ़ता-शिथिलताके आधारपर दृढ़ (fortis) और **शिथिल** (lenis) दो भेद होते हैं। बलाघातयुक्त होनेपर शिथिल ध्वनि कुछ दृढ़ और दृढ़ ध्वनि दृढ़तर हो जाती है। (३) मात्राकी दृष्टिसे ध्वनि (स्वर-व्यंजन दोनों) बलाघातयुक्त होनेपर कुछ बड़ी (ह्रस्व कुछ दीर्घ और दीर्घ ध्वनि दीर्घतर) हो जाती है। (४) यदि सुर है तो वह भी प्रायः (यद्यपि सर्वदा नहीं) ऊँचा हो जाता है। (५) बलाघातमें हवा अधिक रहती है। इसी कारण बलाघातयुक्त अल्पप्राण स्पर्श कभी-कभी महाप्राण स्पर्शके रूपमें सुनाई पड़ते हैं। कोई डाँटकर पूछे कि 'क्यों आये ?' तो लगेगा कि वह 'ख्यों' कह रहा है। इसके विरुद्ध यदि बलाघात बहुत कम हो तो महाप्राण ध्वनि भी अल्पप्राण सुनाई देगी। क्योंकि अल्पप्राण-महाप्राण,

प्राण (वायु)का ही तो खेल है। इन बलाघातोंमें हवाकी कमी स्वभावतः 'महा'को 'अल्प' कर देगी। बीमारीमें अत्यन्त कमजोर लड़का बापसे 'खाना' न माँगकर 'काना' माँगता है। इसी प्रकार स्वराघातहीन बहुतसे शब्दों से 'ह' लुप्त होकर पूर्ववर्ती स्वरको मर्मर बना देता है, जैसे-यह, वह आदिमें। (६) व्यंजन कभी-कभी बलाघातके आधिक्यके कारण द्वित्व रूपमें भी सुनाई पड़ते हैं। 'उसने एक ऐसा गाना गाया'में 'गाना'-का 'गा' बलाघातके कारण 'ग्गा' रूपमें सुनाई पड़ता है। स्पर्शकी तीन स्थितियोंमें यहाँ मध्यवर्ती या अवरोधकी स्थिति प्रलंबित हो जाती है। पीछे पाँचवें प्रभावमें महाप्राण होनेकी बात कही गयी है। बलाघात **प्राणशक्ति** और **उच्चारणावयवकी दृढ़ता**, प्रमुखतः इन दोनोंपर निर्भर करता है। यदि दृढ़ता अपेक्षाकृत अधिक रही तो व्यंजनका द्वित्व हो जायगा, प्राणशक्ति अधिक रही तो अल्पप्राण, महाप्राण हो जायगा। महाप्राण और संघर्षी व्यंजनका प्रायः द्वित्व हो जाता है। इस प्रकारके परिवर्तनोंमें आदि या मध्यमें होनेके कारण भी कुछ अन्तर पड़ जाता है। (७) सब कुछ मिलाकर उक्त ध्वनि या ध्वनिसमूह अधिक मुखर, श्रवणीय और शक्तिशाली हो जाता।

बलाघात-परिवर्तन—जिन शब्दोंमें बलाघात निश्चित होते हैं, उनके भी विशिष्ट संदर्भमें आनेपर बलाघातमें कभी-कभी 'स्थान परिवर्तन' (shift) हो जाता है। ऐसा प्रायः तीन स्थितियोंमें होता है :—(क) शब्दके किसी अन्य एक या अधिक शब्दोंसे मिलकर नया समस्त शब्द बननेपर—ऐसी स्थितिमें मूल शब्दोंके बलाघातमें कभी-कभी स्थान-परिवर्तन या अन्य प्रकारके परिवर्तन हो जाते हैं, जैसे—waste+paper+basket='waste, paper, basket. यहाँ समस्त शब्दमें सशक्त बलाघात तीनके स्थानपर केवल एकपर रह गया है। 'वेस्ट'-का बलाघात शून्य-सा हो गया है और 'बैस्'-का गौण या अप्रमुख। (ख) उपसर्ग या प्रत्ययके जुड़नेपर भी कभी-कभी परिवर्तन देखे जाते हैं : —+in'+ordinate=i'nordinate यहाँ O से शुरू होने वाले अक्षरका बलाघात N से शुरू होनेवाले अक्षरके साथ आ गया : —regiment+al =regi'mental' यहाँ 'अल' जुड़नेसे बलाघातने अपना स्थान बदल दिया। अंग्रेज़ी tion तथा ality आदि जुड़नेसे भी इस प्रकारके परिवर्तन हो जाते हैं। (ग) वाक्यमें प्रयुक्त होनेपर भी कभी शब्दोंका बलाघात बदल जाता है। आर्मफील्डके अनुसार :—

He is' very' well-to-'do

He is' quite well-to-do.

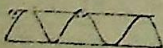
इन दोनों वाक्योंमें well-to-doपर एकसा बलाघात नहीं है। पहलेमें 'वेल'पर भी है किन्तु दूसरेमें उसपर नहीं है केवल 'डू' पर है। यह लय (rhythm)के कारण है। इसी प्रकार competent तथा incompetent में यों सशक्त बलाघात 'कम'पर है, किन्तु यदि एक वाक्यमें विरोध दिखानेके लिए competent and incompetent कहें तो in पर जोर देनेके लिए दूसरेका सशक्त बलाघात 'कम'से हटकर 'इन' पर आ जायेगा। और भी बहुतसे विरोधी शब्दोंमें यही बात मिलेगी। हिन्दीमें समर्थ-असमर्थ और सुन्दर-असुन्दर जैसे शब्दोंमें भी कुछ इस प्रकारकी प्रवृत्ति देखी जा सकती है। वाक्योंमें प्रयुक्त होनेपर एक प्रकारका और भी परिवर्तन होता है, जो अधिक सामान्य है। यों हर शब्दके किसी अंशपर सशक्त बलाघात होता है, किन्तु वाक्यमें केवल कुछ ही पर रह पाता है। अतः शेष शब्दोंके अंशसे वह समाप्त हो जाता है।

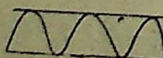
बलाघातका अंकन—किसी भी चीजका अंकन यादृच्छिक है। यों बलाघातके लिए अधिक प्रचलन निम्नांकितका रहा है। (क) सशक्त अथवा प्रमुख बलाघातवाले शब्द या

अक्षरके आरम्भमें ऊपर एक खड़ी (या तिरछी) लकीर खींच देते हैं। जैसे लायक, काबिल, लगाना, फिसड्डी, 'register, regsitrar आदि। (ख) यदि दो ही बलाघात हों तो अशक्त या द्वितीय बिना किसी निशानके छोड़ देते हैं, किन्तु यदि तीन या अधिक हों और दूसरेको दिखाना जरूरी हो, तो उसके पूर्व नीचे एक छोटी लकीर खींच देते हैं। जैसे arti'ficial, disa'ppearance यदि तीनसे अधिक बलाघात दिखाने हों तो कोई और चिह्न माना जा सकता है, यों प्रयोगमें प्रायः दो तकका ही निर्देशन किया जाता है।

बलाघात और घोष-अघोष ध्वनियाँ—मोटे रूपसे यह कहा जा सकता है कि बलाघातकी कमी और बेशी उपर्युक्त संदर्भोंमें भी भाषा, संदर्भ और व्यक्तिपर निर्भर करती है। कुछ भाषाओंमें यह अन्योंसे अधिक होता है, इसी प्रकार कुछ संदर्भों या व्यक्तियोंमें भी इसकी कमी-बेशी देखी जाती है। किन्तु इसके बावजूद तुलनात्मक अध्ययन द्वारा यह देखा गया है कि घोष व्यंजनोंपर अघोषकी तुलनामें बलाघात कुछ कम होता है। यह शायद इसलिए कि अघोषमें हवा अधिक शक्तिसे मुँहमें आती है।

बलाघातका प्रत्यक्षीकरण—काइमोग्राफ़ मशीनपर यदि किसी ध्वनि या ध्वनिसमूहको कम और अधिक बलाघातके साथ अलग-अलग बोला जाय, तो यह देखनेमें आयेगा कि अधिक बलाघाततसे उच्चरित ध्वनिके लिए बनी लहरें कमकी तुलनामें अधिक ऊँची होंगी लहरोंकी यह ऊँचाई हवाके अधिक





चित्र नं० ४

एवं उच्चारणके शक्तिशाली होने आदिके कारण हैं। इन दोनोंमें जितना ही आधिक्य होगा, लहरें उतनी ही ऊँची होंगी, और विरोधी स्थितिमें नीची।

सुर या सुराघात (pitch accent) **सुरका स्वरूप और उसमें उतार-चढ़ावके कारण**—पर बलाघातमें हम देख चुके हैं कि सभी ध्वनियाँ बराबर बलसे नहीं बोली जातीं। उसी प्रकार वाक्यकी सभी ध्वनियाँ सर्वदा एक सुरमें नहीं बोली जातीं। संगीतके सरगमकी तरह उनमें सुर ऊँचा-नीचा होता रहता है। 'आप जा रहे हैं' वाक्यकी सभी ध्वनियोंको एक सुरमें बोलनेसे इसका सामान्य अर्थ होगा, जिसका उद्देश्य होगा मात्र सूचना देना। किन्तु यदि 'आप'के बादकी ध्वनियोंका सुर बढ़ाते जायँ और अंतमें 'है'-को बहुत ऊँचे सुरपर बोलें तो इस वाक्यमें एक संगीत-सा आरोह या चढ़ाव सुनाई देगा और वाक्य सामान्यसे बदल कर प्रश्नसूचक हो जायगा, जिसका अर्थ, 'क्या आप जा रहे हैं?' इस वाक्यको आश्चर्यसूचक बनानेके लिए इसी प्रकार एक विशेष प्रकारके 'सुर'-की जरूरत होगी। 'बलाघात'की तरह ही 'सुर' भी मूलतः एक मनोवैज्ञानिक चीज है जो **स्वरतंत्रियोंके कंपन द्वारा प्रकट किया जाता है**। स्वरयंत्र (दे०) **उच्चारण अवयव** पर विचार करते समय कहा जा चुका है कि घोष ध्वनियोंके उच्चारणमें स्वरतंत्रियोंमें कंपन होता है। यही कंपन जब अधिक तेजीसे होता है तो ध्वनि ऊँचे सुरमें होती है और जब धीमी गतिसे होता है तो नीचे सुरमें होती है (इससे यह भी स्पष्ट हो जाना चाहिए कि सुरसे स्वरयंत्रको छोड़कर और किसी भी उच्चारणावयवका सम्बन्ध नहीं है)। सुर स्वर-तंत्रियोंकी प्रति सेकेंड **कंपनावृत्ति** (frequency of vibration) पर निर्भर करता है। इसीसे यह भी स्पष्ट है कि बलाघातकी तरह सुर घोष-अघोष दोनों प्रकारकी ध्वनियोंमें संभव नहीं। अघोष ध्वनिकी, तो यही विशेषता है कि उसके उच्चारणमें स्वरतंत्रियोंमें कंपन होता ही

नहीं । अर्थात् 'सुर' केवल घोष या सघोष ध्वनियोंकी चीज है । अघोषसे इसका कोई संबंध नहीं है । यह बात बिल्कुल तारवाले बाजोंकी तरह है । यदि सितार, वीणा या इसी प्रकारके किसी अन्य बाजेमें तार ढीला होगा तो उससे जो ध्वनि निकलेगी उसका सुर नीचा होगा, किन्तु यदि कसा होगा तो सुर ऊँचा होगा । इसका कारण यह है कि ढीले तारपर आघात करनेपर कंपन धीमी गतिसे होगा । किन्तु वह कसा होगा तो कंपन अधिक तेजीसे होगा । इनको बजानेवाले बजानेके पूर्व इसी दृष्टिसे विभिन्न तारोंको कसते या ढीला करते हैं । वाद्य संगीतकी भाँति ही मौखिक संगीतका अभ्यासी आरम्भमें घंटों 'आ आ' करके अपनी स्वरतंत्रियोंको कड़ा-नरम और समीप-दूर करके उनमें विभिन्न सुरों (या सरगमके आरोहों-अवरोहों) की आवाज निकालने (अर्थात् विभिन्न गतियोंसे कंपित करने) का अभ्यास करता है । अभ्यस्त हो जानेपर भी स्वरतंत्रियोंपर अपना इस दृष्टिसे पूरा नियंत्रण रखनेके लिए उसे अभ्यासको जारी रखना पड़ता है । इस प्रकार संगीतके लिए 'सुर'का बहुत महत्त्व है, किन्तु जैसा कि हम आगे देखेंगे भाषाके लिए भी यह कम महत्त्वपूर्ण नहीं है । हाँ, यह अवश्य है कि सभी भाषाओंमें उसका महत्त्व समान नहीं है । सुरके आरोह-अवरोह या उतार-चढ़ावमें स्वरतंत्रियोंकी समीपता और उनके कड़ापनके अतिरिक्त फेफड़ेसे आनेवाली हवाका महत्त्व भी कम नहीं है, क्योंकि स्वरतंत्रयोंका धीमी या तेज गतिसे कंपन हवाकी शक्तिपर भी एक सीमा तक निर्भर करता है । इन बातोंके अतिरिक्त 'सुर' स्वरतंत्रियोंकी लंबाई और स्वरयंत्र (larynx) के विस्तार (size) पर भी निर्भर करता है । बच्चोंकी आवाज ऊँचे सुरकी होती है । क्योंकि उनमें लंबाई और विस्तार दोनों कम होता है । पुरुषकी तुलनामें स्त्रियोंमें भी यही बात मिलती है ।

सुरके भेद : आरोहण-अवरोहणके आधारपर —हर व्यक्ति वैज्ञानिक दृष्टिसे ठीक एक सुरपर नहीं बोलता । सबके सुर अलग-अलग होते हैं । इसके अतिरिक्त एक ही व्यक्ति सर्वदा एक सुरमें नहीं बोलता । भाषाकी स्वाभाविक गतिमें प्रयुक्त सुर-उच्चता या सुर-निम्नता, तथा भावात्मक स्थितिके कारण, सुरका आरोह-अवरोह एक व्यक्तिकी भाषामें भी मिलता है । इस आरोह-अवरोहका अनुपात एक भाषाभाषी लोगोंमें प्रायः समान अनुपातका होता है ।

प्रत्येक व्यक्तिकी सुरकी दृष्टिसे अपनी निम्नतम और उच्चतम सीमा होती है । उसके सुरका उतार-चढ़ाव उसीके बीच होता रहता है । सूक्ष्म दृष्टिसे इसके अनेक भेद किये जा सकते हैं । यों इसके **उच्च** (high), **मध्य**, **मिश्र** या **सम** (mid या level) तथा निम्न (low), ये तीन भेद अधिक प्रचलित रहे हैं । वैदिक संस्कृतमें लगभग ये ही तीन **उदात्त** (दे०) **स्वरित** (दे०) अनुदात्त (दे०) हैं । (**उदात्ततर** और **अनुदात्ततर** भी देखिए ।) ग्रीकमें **ऐक्यूट** (acute accent), **ग्रेव** (grave accent) तथा **सरकम्फलेक्स** (circumflex accent) ये तीन सुर थे । ऐक्यूट, भारतीय उदात्तकी भाँति ही उच्च था, इसे यों (á) अंकित करते थे । ग्रेव (जिसे à अंकित करते थे) निम्न था, किंतु कदाचित् बहुत निम्न नहीं । यह भारतीय अनुदात्तका समानार्थी नहीं ज्ञात होता । यह कदाचित् सामान्य सुर और उच्च या ऐक्यूटके बीचका था । सरकम्फ्लेक्स (जिसे â या ã या ȃ रूपमें अंकित करते थे) सुर वह था, जो पहले उठे और फिर गिरे । इस रूपमें इसे **आरोही-अवरोही** सुर कह सकते हैं । **स्वरित** (दे०) इसका ठीक समानार्थी नहीं है ।

उपर्युक्त तीन भेद माननेपर भी भारतीय मनीषी इस बातसे पूर्णतः परिचित थे कि सुरके और भी भेद हो सकते हैं । इसीलिए तैत्तिरीय प्रातिशाख्यकी वैदिकाभरण

व्याख्यामें चार (**उदात्त, अनुदात्त, स्वरित,** और **प्रचय**) सुरोंके संकेत मिलते हैं। नारद शिक्षामें एक और '**निघात**' बढ़ाकर भेदोंकी संख्या पाँच कर दी गयी है। महाभाष्यकार पतंजलिने **उदात्त, उदात्ततर, अनुदात्त, अनुदात्ततर, स्वरित, स्वरितके आरम्भमें वर्तमान उदात्त** और **एकश्रुति**, ये सात भेद माने हैं। इतना ही नहीं, ऋक्प्रातिशाख्य, शुक्ल यजुः प्रातिशाख्य और तैत्तिरीय प्रातिशाख्यसे यह भी पता चलता है इन भेदोंमें 'स्वरित'के अलगसे **संहितज, जात्य, अभिनिहित, क्षैप्र, प्रश्लिष्ट, तैरोव्यंजन, वैवृत्त, तैरोविराम,** तथा **प्रातिहित**, ये ९ उपभेद भी प्राचीनकालमें माने जाते थे। चीनी भाषामें अनेक सुर आज भी हैं, यद्यपि वे उपर्युक्त भेदोंसे कुछ भिन्न हैं। उसमें चार प्रमुख सुर सम (even), आरोही (rising), अवरोही (sinking या(falling) और प्रवेशमुखी (entering) हैं। कुछ लोगोंने इन्हें कुछ **ऊँचा, साधारण प्रश्नात्मक, तेज प्रश्नात्मक** तथा **उत्तरात्मक** भी कहा है। कुछ चीनीकी बोलियोंमें इन सबके उच्च और निम्न इस प्रकार ८ भेद किये गये हैं। चीनीकी कैंटनी बोलीमें ९ सुर हैं। प्रमुख रूपसे **उच्च, मध्य, निम्न, आरोही** तथा **अवरोही** ये पाँच भेद होते हैं।

सुरके भेद : प्रयोगके आधारपर—सुर (pitch), जैसा कि पीछे स्पष्ट किया जा चुका है। **स्वरतन्त्रियोंके कंपनके कारण उत्पन्न एक ध्वनि गुण** है। बोलनेमें हर ध्वनि(घोष ध्वनि)-पर इसका रूप प्रायः एक-सा नहीं रहता, इसीलिए इसमें उतार-चढ़ाव होता रहता है। इसका आशय यह हुआ कि कई ध्वनियोंसे बने अक्षर या शब्दमें प्रायः कई प्रकारके सुर मिलेंगे, और आगे बढ़कर यदि 'वाक्य'को लें तो और भी अधिक सुर मिलेंगे। यह दो या अधिक सुरोंका उतार-चढ़ाव या आरोह-अवरोह **सुरलहर**(intonation) कहलाता है। अर्थात् भाषा या **संबद्ध भाषण** (connected speech)में इसका प्रयोग होता है और इस सुरलहरका निर्माण दो या अधिक सुरोंसे होता है। ऐसा एक अक्षरमें भी सम्भव है, एक शब्दमें भी और एक वाक्यमें भी। ये 'सुर'के दो मुख्य रूप हैं। **'एक ध्वनि'में यह 'सुर' है और सम्बद्ध ध्वनियोंमें एकसे अधिक होनेपर 'सुरलहर'**। 'सुर" (pitch)का एक और समानार्थी है **तान** (tone) यों इन दोनोंका पर्यायके रूपमें भी प्रयोग होता है, किन्तु कभी-कभी वैज्ञानिक स्पष्टताके लिए दोनोंमें भेद भी कर लिया जाता है। 'सुर' शुद्ध वैज्ञानिक नाम है। हर घोष ध्वनिमें यह है या रहता है, चाहे इसका भाषापर कोई विशेष प्रभाव पड़े या नहीं। उदाहरणार्थ हिन्दीका एक शब्द लें 'गमला'। इसमें सभी ध्वनियाँ घोष हैं, अतः अथसे इति तक विभिन्न स्तरपर इसमें सुर होगा। हिन्दीमें इस सुरलहरका एक स्वाभाविक रूप है। उसी अनुपातसे यदि वक्ता बोलेगा तो इस शब्दमें स्वाभाविकता रहेगी, किन्तु यदि कोई ग़लत सुर-लहरका प्रयोग इसके उच्चारणमें कर दे तो वह स्वाभाविकता नष्ट हो जायगी और हिन्दीभाषी यह स्पष्टतः समझ जायेगा कि वक्ताकी 'सुर-लहर'अशुद्ध है। किन्तु इस अशुद्धिसे 'गमला' शब्दके अर्थमें कोई परिवर्तन नहीं होगा। दूसरी ओर एक चीनी शब्द 'मा' लें। इसमें भी दोनों ध्वनियाँ घोष हैं, अतः इसके उच्चारणमें 'सुर-लहर' होगी। लेकिन वक्ता यदि इसका उच्चारण एक सुर-लहरमें करेगा तो इस शब्दका अर्थ 'माता' होगा और दूसरीमें करेगा तो 'घोड़ा' होगा। इसका आशय यह हुआ कि हिन्दीमें उपर्युक्त रूपमें 'सुर-लहर' सार्थक नहीं है, किन्तु चीनीमें वह सार्थक है। उससे शब्दका अर्थ बदल जाता है। **शब्दका अर्थ बदलने वाला सुर तान** (tone) **कहा जाता है**। इसी आधारपर उन भाषाओंको **तान भाषा या तान प्रधान भाषा**(tone language) कहते हैं, जिनमें तानके कारण अर्थ बदल जाता है। इस प्रकार 'सुर'

एक व्यापक शब्द है और सभी घोष ध्वनियों-में उसे मानते हैं। किन्तु यदि वह सार्थक है तो उसे 'तान' कहते हैं। **सुरलहर तान** या **सुरकी** लहर है। अर्थात् दो या अधिक ध्वनियोंमें यह मिलती है। वाक्य-स्तरपर सुरको 'वाक्यसुर' कहते हैं।

सुरके भेद : अर्थके आधारपर—उपर्युक्त विवेचनको ध्यानमें रखते हुए सुरके **निरर्थक** और **सार्थक** नामसे दो भेद किये जा सकते हैं। जहाँ सुर अर्थ-भेदक हो उसे **सार्थक सुर** या **तान** कह सकते हैं और जहाँ भेदक न हो उसे **निरर्थक सुर** या केवल **सुर** कह सकते हैं।

सुरके भेद : चल-अचल स्थितिके आधारपर—सुरके कुछ रूप तो चल होते हैं; अर्थात् उनमें श्रुति ध्वनियोंकी तरह एक स्थितिसे दूसरीमें जानेकी प्रवृत्ति होती है। संगीतज्ञ 'आऽऽऽ' बोलता हुआ जब 'सरगम'-का अभ्यास करता है तो यह उतार-चढ़ाव स्पष्ट सुनाई पड़ता है। **आरोही-अवरोही** ऐसे ही हैं। इसके विरुद्ध कुछ अचल होते हैं। इसमें एक ध्वनि एक ही स्थिर 'सुर' पर होती है। गिरती-उठती नहीं। **उच्च निम्न** ऐसे ही हैं। प्रथम संयुक्त स्वरके समान है, तो दूसरा मूल स्वरके समान। सुर या तान-के इन दोनों भेदोंको क्रमशः **चल सुर, चल तान** या **कंटूर तान** (contour tone) और **अचल सुर, अचल तान** या **रजिस्टर तान** (register tone) कहते हैं। इसी आधारपर **कंटूर तान भाषाएँ** और **रजिस्टर तान भाषाएँ** नामसे तीन भाषाओंके दो वर्ग भी माने जाते हैं।

अंकन—सुर या तानके अंकनके लिए अनेक पद्धतियाँ प्रचलित रही हैं। वैदिक साहित्य-में ही इसके लगभग एक दर्जन रूप मिलते हैं। कभी १, २, ३ आदि अंकोंसे इनका अंकन किया गया है तो कभी विभिन्न प्रकार-की टेढ़ी-सीधी रेखाओं या विन्दुओं आदि-से। सबसे अधिक प्रचलित रूप ऋग्वेदका है जिसमें अनुदात्तके नीचे बेड़ी लकीर (—), स्वरितके ऊपर खड़ी लकीर (।) तथा उदात्तको अनंकित छोड़ देते थे। आजकल भी इनके लिए ७-८ पद्धतियाँ प्रचलित हैं। कुछ लोग उच्चके लिए (/) निम्नके लिए (\) तथा समके लिए (—) चिह्न लगाते हैं, कुछ अन्य लोग १, २, ३ आदि अंकोंका प्रयोग करते हैं। इसी प्रकार छोटे-बड़े विन्दुओं या डैश और विन्दु द्वारा भी इसे प्रकट किया जाता है। सबसे प्रचलित और स्पष्ट पद्धति ऊँचे-नीचे विन्दुओं तथा उठती-गिरती रेखाओं द्वारा प्रकट करने-की है। अर्थात् उच्च [˙]; निम्न [.], मध्य [०]; आरोही [)] सम [—]; अवरोही [(]। यहाँ स्पष्ट ही विंदु अचल या रजिस्टर-के लिए है और रेखा चल या कंटूरके लिए। प्रायः, जितने सुरोंका अंकन करना होता है, उनसे एक कम चिह्न लेते हैं, क्योंकि कोई एक सुर बिना अंकनके छोड़ दिया जाता है।

तान (tone) **तथा तान भाषाएँ** (tone languages)—ऊपर हम देख चुके हैं कि 'तान' उस सुरको कहते हैं, जिसके कारण शब्दका अर्थ बदल जाता है। दूसरे शब्दोंमें यहाँ सुर अन्य ध्वनियोंकी भाँति ही भाषा-की एक महत्त्वपूर्ण इकाई बन जाता है। यहाँ विशेष प्रकारका सुर संसारकी कुछ ही भाषाओंमें मिलता है, जिन्हें इसी आधारपर 'तान भाषाएँ' कहते हैं। अफ्रीकाकी एफ़िक, इबो, क्पेले, चुआना, याउन्डे, सुडानिक, बांटू दिनका, बुशमैन, दुआला, जुलू, योरुबा; तिब्बती-चीनी परिवारकी चीन, बर्मा, इंडो-चीन तथा स्याममें प्रयुक्त भाषाएँ तथा उत्तरी अमेरिकाकी नवाहो, अपाचे, मिक्स्टेको तथा ओटोमी आदि संसारकी प्रमुख तान भाषाएँ हैं।

सुर-लहर (Intonation)—शब्द या वाक्य-में सुरोंके आरोह-अवरोहका क्रम ही **सुर लहर** है। यहाँ एक बात विशेष ध्यान देने-की है। प्रायः यह समझा जाता है कि जब हम बोलते हैं तो अथसे इति तक सुर लहर रहती है। इसी धारणाके आधारपर भाषा-विज्ञानके विद्वान् भी रेखाओं आदि

के द्वारा पूरे शब्द या वाक्यके सुर-लहरका निर्देश करते हैं। व्यावहारिक दृष्टिसे ठीक होनेपर भी वैज्ञानिक दृष्टिसे यह ठीक नहीं है। पीछे कहा जा चुका है कि 'सुर' केवल घोष ध्वनियोंमें संभव है, किन्तु बोलनेमें हम अघोष ध्वनियोंका भी प्रयोग करते हैं। इसका आशय यह है कि शब्द या वाक्यमें जहाँ-जहाँ अघोष-ध्वनि होगी वहाँ-वहाँ 'सुर-लहर' न होगी। किन्तु ऐसे स्थल अधिक नहीं होते। औसतन भाषामें अघोष ध्वनियाँ लगभग २१ प्रतिशत तथा घोष ध्वनियाँ लगभग ७९ प्रतिशत होती हैं। मैं, पं० नेहरू तथा डॉ० राजेन्द्रप्रसादके भाषणों एवं कुछ उपन्यासों-नाटकोंसे कुछ अंशोंके विश्लेषणके आधारपर इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि हिन्दीमें प्रायः २१ और २२ प्रतिशतके बीचमें अघोष ध्वनियोंका प्रयोग होता है और शेष ७९-७८ प्रतिशत घोष ध्वनियोंका। यों वक्ताके मस्तिष्कमें आन्तरिक 'सुरलहर' उन स्थलोंपर भी होती है जहाँ ध्वन्यात्मक या बाह्य दृष्टिसे वह (जैसे अघोष ध्वनियोंपर) नहीं होती।

सुर-लहरके भेद—इसके मोटे रूपसे दो भेद किये जा सकते हैं: **शब्द-सुरलहर, वाक्य-सुरलहर**। तान भाषाओंमें **शब्द-सुरलहर** और **वाक्य सुरलहर** दोनों ही सार्थक होती हैं, किन्तु अतान या अन्य भाषाओंमें केवल **वाक्य-सुरलहर**। यह दो भेद इसी दृष्टिसे महत्त्व रखते हैं। यों भाषा-विज्ञानवेत्ताओंने इस प्रकारके भेद किये नहीं हैं। इस प्रसंगमें यह ध्यान रखना आवश्यक है कि कभी-कभी हिन्दी आदि **अतान भाषाओं** (non-torre language)में भी एक शब्द विशिष्ट सुर-लहरोंमें अलग-अलग अर्थ देता है। उदाहरणार्थ 'राम'को यदि विभिन्न सुरलहरोंमें कहें तो (१) सामान्य (२) राम, यहाँ आओ, (३) क्या राम, (४) अरे राम! आदि अर्थ होंगे। वस्तुतः ये भिन्न कोशार्थ नहीं हैं। अपितु कोशार्थके ऊपरसे लादे हुए अर्थ हैं। इस रूपमें इन्हें एक शब्दके 'वाक्य' मानना पड़ेगा, शब्द नहीं। साथ ही सभी संज्ञा शब्दोंकी इस प्रकारकी सुरलहरोंमें बाँधनेसे यही अर्थ निकलेगा। तान भाषाओंमें **शब्द-सुरलहर** सर्वथा भिन्न है। वहाँ हर शब्दका विशेष अर्थके लिए निश्चित सुरलहर है, और इस प्रकार वह कोशार्थ है तथा उनका अर्थ बल, आश्चर्य या प्रश्न आदिकी दृष्टिसे भिन्न न होकर, प्रकृत्या या सर्वथा भिन्न है। जैसे चीनीमें 'मा' शब्दका एक सुरलहरमें अर्थ 'घोड़ा' दूसरीमें 'माता' तीसरीमें 'एक कपड़ा' और चौथीमें 'गाली देना'।

सुर-लहरके कार्य—सुरलहर प्रमुख रूपसे भाषामें निम्नांकित कार्य करती है:—

(१) **विशिष्ट मानसिक अवस्थाका द्योतन**—तान और अतान दोनों ही वर्गोंकी भाषाएँ सुरलहरका भावुकता, दुःख, विवशता, क्रोध, सहानुभूति, घृणा आदि मानसिक अवस्थाकी सूचना देनेके लिए प्रयोग करती हैं। भाषा-विज्ञानवेत्ताओंका कहना है कि सुरलहरका यह कार्य भाषा-विज्ञानकी दृष्टिसे महत्त्व-पूर्ण नहीं है, अतः भाषा-विज्ञानमें विचार्य नहीं है। किन्तु वस्तुतः ऐसा माननेके लिए विद्वानोंके पास कोई संपुष्ट आधार नहीं है। चूंकि इस रूपमें भी स्वरलहरें अर्थबोधक हैं, अतः ये अन्तर पर्याप्त महत्त्वपूर्ण हैं। केवल सुरलहरके आधारपर ही अर्थकी विशेषता आ गयी है, चाहे वह कोशार्थी न होकर मनोभावार्थी ही क्यों न हो? इस कार्यकी दृष्टिसे संसारकी अधिकांश भाषाओंमें काफी सीमा तक समानता मिलती है। (२) **भिन्नार्थ-द्योतन**—सुरलहरके आधारपर आने वाली भिन्नार्थ-द्योतनता तान और अतान भाषाओंमें किंचित् भिन्न होती है, इसीलिए दोनोंको अलग-अलग पाया जा सकता है। (क) **अतान-भाषाओंमें**—इनमें सामान्य सूचना, स्वीकृति, आश्चर्य, संभावना, प्रश्न, आज्ञा, अन्तर सम्बोधन बल, मिलन-वियोग आदि अर्थोंकी विशेषता आ सकती है। यों अन्य शब्दोंके सहारे भी इन्हें प्रकट किया जा सकता है किन्तु सुरलहरके आधारपर प्रकट

करना प्रयत्नलाघवकी दृष्टिसे ठीक और मनोवैज्ञानिक है। हिन्दीमें 'अच्छा'का प्रयोग विभिन्न सुरलहरोंमें स्वीकृति, आश्चर्य, सम्भावना, प्रश्न, आज्ञाके लिए हो सकता है। 'राम और मोहन'का विशिष्ट सुरलहरमें उच्चारणका अर्थ होगा—'कहाँ राम और कहाँ मोहन, बहुत अन्तर है।' 'राम जा रहा है', और 'राम यहाँ आओ'में 'राम'की सुरलहरें भिन्न होंगी। एक सामान्य है, दूसरा सम्वोधन। यों तो इनमें बहुतोंमें सुरके साथ बलाघात भी काम करता है किन्तु 'बल'का भाव प्रकट करनेमें सुर और बलको हम बहुत स्पष्ट रूपमें कभी-कभी मिला हुआ पाते हैं। यह बात भोजपुरी या बंगलामें जो सुरलहर-प्रधान हैं, खड़ी बोली आदिसे अधिक मिलती है। मिलने और विदाके 'नमस्ते'में भी सुरलहरका अन्तर होता है। इस बातपर ध्यान दिया जाना चाहिये कि उपर्युक्त रूपमें अतान-भाषाओंमें सुर-लहरका प्रयोग शब्द या वाक्यके कोशार्थको परिवर्तित नहीं करता बल्कि उसके ऊपर एक और भाव या अर्थ लाद देता है। (ख) **तान भाषाओं**—तान भाषाओंमें उपर्युक्त रूपमें सुरलहरका प्रयोग ऊपरसे लादे गये भाव या अर्थके लिए तो होता ही है, किन्तु इसके साथ ही कोशार्थ, यथार्थ अर्थ या भीतरी अर्थके परिवर्तनके लिए भी होता है, जैसा कि आगेके उदाहरणोंसे स्पष्ट हो जायेगा।

इस अर्थके भी दो भेद हो सकते हैं: (१) **यथार्थ** या **कोशार्थ** तथा (२) **व्याकरणार्थ**। यथार्थ या कोशार्थका परिवर्तन तो वहाँ माना जायगा, जहाँ शब्दका अर्थ पूर्णतः एकसे दूसरा हो जाय। दोनोंमें कोई भी सम्बन्ध न हो। जैसे पीछे उद्धृत चीनी शब्द 'मा' जिसकी एक सुरलहरमें अर्थ 'माता' है तो दूसरीमें 'घोड़ा'। व्याकरणार्थमें परिवर्तन वहाँ माना जायगा, जहाँ मूल अर्थ न बदलें अपितु शब्द व्याकरणकी दृष्टिसे बदल जाय। जैसे एकवचनसे बहुवचन, वर्तमानसे भूत या भविष्य, सामान्यसे प्रेरणार्थक, अकर्मकसे सकर्मक, उत्तम पुरुषसे मध्यम पुरुष तथा पुल्लिंगसे स्त्रीलिंग आदि। इस प्रकार ये परिवर्तन काल, लिंग, वचन आदि व्याकरणिक दृष्टिके होते हैं। नीचे दोनों प्रकारके कुछ उदाहरण संक्षेपमें दिये जा रहे हैं :—

(क) **शब्द सुरलहर**—(I) **कोशार्थ**—उत्तरी अमेरिकाकी 'मिक्स्टेको' भाषामें—

जुकू = (१) अंतमें नीची तान = पर्वत
(२) ,, ऊँची ,, = बैलका —जुवा, जुवाठ

अफ्रीकाकी 'एफ़िक' भाषामें—

आक्या = (१) आदि अंत दोनों ऊँची = नदी
(२) पहली तान निम्न और दूसरी मध्य = पहला
(३) पहली तान उच्च और दूसरी मध्य = वह मरता है।

चीनीकी एक बोलीमें—

येन = (१) कुछ ऊँची तान = धूम्र
(२) साधारण प्रश्नात्मक = नमक
(३) तेज प्रश्नात्मक = आँख
(४) उत्तरात्मक हंस

बॉडमरके अनुसार चीनीमें एक शब्द ऐसा भी है, जिसमें तानोंके हेर-फेरसे ९८ अर्थ निकलते हैं।

(II) **व्याकरणार्थ**—अमेरिकाकी मैक्ज़ाटेको भाषामें 'साइटे'का एक प्रकारकी सुरलहरमें अर्थ है 'मैं बुनता हूँ' दूसरीमें अर्थ है 'मैं बुनूँगा।'

अफ्रीकाकी याउन्डे भाषामें—

मंगायेन् = (१) निम्न उच्च और अवरोही तानमें = मैंने देखा
(२) निम्न अवरोही और उच्चमें = मैं देखूँगा।

अफ्रीकाकी ही पिन्का भाषामें—

पान्य = (१) उच्चमें = एक दीवार
(२) निम्नमें = दीवारें

(ख) **वाक्य-सुरलहर**—(I) कोशार्थ—
अफ्रीकाकी 'एफ़िक' भाषामें—

ckere didie[.·..] तुम क्या सोचते हो ?
,, ,, [..·..]तुम्हारा क्या नाम है ?

(II) व्याकरणार्थ=अफ्रीकाकी 'दुआला' a mabola भाषामें [....] = वह देता है [.·..]=उसने दिया है।

ऐसा भी देखा जाता है कि विशेष अर्थमें किसी शब्दकी 'सुरलहर' अलग रहनेपर कुछ और होती हैं और वाक्यमें प्रयुक्त होनेपर कुछ और हो जाता है।

अमेरिकाकी 'मिक्स्टेको' भाषामें--

kee=दोनोंपर सम=खरगोश

iso=पहलेपर सम दूसरेपर निम्न=जाना

kee iso=kee पर पहलेपर उच्च, दूसरेपर सम=खरगोश जानेवाला है।

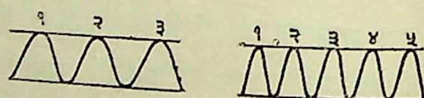
उपर्युक्त दो–मनोभाव-द्योतन और भिन्नार्थ द्योतन—के अतिरिक्त, हर भाषाकी अपनी विशिष्ट सुरलहर होती है, जिसके आधार-पर भाषाके स्वाभाविक और अस्वाभाविक रूपमें बोले जानेका पता चलता है।

सुरलहरका अंकन सुर-अंकनके आधारपर ही होगा। विभिन्न सुरोंको एक साथ रखने-से सुरलहर हो जायेगी। जैसे[ )··(.]

तानग्राम (toneme) **तथा तानग्राम-विज्ञान** (tonetics)--**रूपग्राम** (morpheme) तथा **रूपग्राम-विज्ञान** (morphemics); **ध्वनिग्राम** (phoneme) तथा **ध्वनिग्राम-विज्ञान** (phonemics) या **लिपिग्राम** (grapheme) और लिपि-ग्राम-विज्ञान (graphemics)की तरह ही **तानग्राम** तथा **तानग्राम-विज्ञान** भी हैं। तानग्राम-विज्ञानमें भाषाओंके'सुर' का विशे-षतः अर्थभेदक तान या सुरलहरके विवरण आदिकी दृष्टिसे अध्ययन किया जाता है और मोटे रूपसे ये बातें देखी जाती हैं : (क) अर्थभेदक स्तरपर (या अन्य भी) कितने प्रकारके सुर या सुरलहर हैं ? (ख) उनमें किन-किनका विरोध हैं और कौन-कौन परिपूरक वितरण (complementary distribution) में हैं ? (ग) उनमें कौन-कौनसे **तानग्राम** (toneme) हैं तथा कौन-कौन उनके अंतर्गत **संतान** (allotone) हैं। (घ) इन तानग्रामों और संतानोंका रूपतानग्रीय (morphotonemic) विश्लेषण कैसे किया जा सकता है।

अन्यत्र **रूपग्राम-विज्ञान** (दे०) एवं **ध्वनि-ग्राम-विज्ञान** (दे०)पर विस्तारसे प्रकाश डाला गया है। उन्हें पढ़ लेनेपर उपर्युक्त चारों बातें स्पष्ट हो जायेंगी।

सुरका प्रत्यक्षीकरण–कायमोग्राफ़पर यदि विभिन्न सुरोंमें ध्वनियोंको उच्चरित किया जाय तो दिखाई पड़ेगा कि बलाघातकी तरह लहरें ऊँची-नीची न होकर उतने ही स्थानमें कम-ज्यादा होंगी। सुरके उच्च होनेपर लहरें अधिक होंगी और निम्न होनेपर कम। इस रूपमें इन लहरोंको स्वरतंत्रियों-की कंपन-लहरोंके अनुरूप माना जा सकता है।[1]



आचिक (achik)--आसामकीगारो पहा-ड़ियोंपर तथा उसके आस-पास प्रयुक्त, **गारो** (दे०) भाषाकी परिनिष्ठित बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ५५,४०० के लगभग थी।

आचिक कुसिक (achik kusik)--गारो

१. ऊपर बलाघात तथा सुरका वर्णन किया गया। इसी प्रसंगमें रूपात्मक स्वराघातका उल्लेख भी किया जा सकता है। दो व्यक्ति किसी ध्वनिका उच्चारण एक ही सुर और समान बलाघातसे करें, फिर भी वह ध्वनि एक-सी नहीं सुनायी पड़ेगी। श्रोता समझ जायेगा कि राम बोल रहा है या मोहन। यह स्वरतंत्रियोंकी बनावट तथा मुँहकी बनावट एवं आकार आदिके भेदके कारण है।

[शेष टिप्पणी अगले पृष्ठपर]

(दे०) भाषाके लिए प्रयुक्त एक दूसरा नाम।

आज्ञा--लोट्लकार (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

आज्ञार्थ--(दे०) **अर्थ**।

आज्ञा वर्तमान--(दे०) **काल**।

आज्ञासूचक वाक्य--ऐसे वाक्य जिसमें किसी कामको करनेकी आज्ञा दी गयी हो, जैसे--तुम यहाँ कभी मत आना।

ऑटोफ़ोनोस्कोप (autophonoscope)--स्वर-यंत्रके अध्ययनके लिए पैंकोनसेली द्वारा बनाया गया एक यंत्र।

आतिंग (ating)--'गारो' भाषाकी आतोंग (दे०) बोलीका एक दूसरा नाम।

आतोंग (atong)--मेमनसिंह और गारो पहाड़ियोंपर बोली जानेवाली गारो (दे०) भाषाकी एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १५,००० थी।

आत्मनेपद--(दे०) **धातु** तथा **पद**।

आत्मवाचक सर्वनाम--(दे०) **सर्वनाम**।

आत्मसूचक सर्वनाम--(दे०) **सर्वनाम**।

आदरबोधक सर्वनाम--(दे०) **सर्वनाम**।

आदरवाचक सर्वनाम--(दे०) **सर्वनाम**।

आदरसूचक मध्यम पुरुष सर्वनाम--(दे०) सर्वनाम।

आदरसूचक सर्वनाम--(दे०) सर्वनाम।

आदर्श भाषा (standard language)--ऐसी भाषा जो क्षेत्र या स्थान-विशेषमें प्रयोगकी दृष्टिसे आदर्श मानी जाती हो। (दे०) **भाषाके विविध रूप**।

आदंसलिवि--पन्नवणासूत्र नामक जैन ग्रंथमें दी गयी १८ लिपियोंमें से एक।

आदर्शस्वर--(दे०) **स्वरोंका वर्गीकरणमें मानस्वर** उपशीर्षक।

आदि-अपिनिहिति--एक प्रकारकी **अपिनिहिति** (दे०)।

आदि-अक्षरलोप(aphesis)--**लोप** (दे०)का एक भेद।

आदि-अक्षरागम--**आगम** (दे०)का एक भेद।

आदि-आगम--**आगम** (दे०)का एक भेद।

आदि-भाषा--**अर्द्ध मागधी** (दे०)का एक अन्य नाम।

आदिम-भाषाका स्वरूप--(दे०) **भाषाकी उत्पत्तिमें परोक्षमार्गमें 'आदिम भाषाका स्वरूप'**।

आदियोगी रूपनिर्माण (initial inflexion)--प्रातिपदिक या मूल शब्दके आदिमें प्रत्यय जोड़कर कारक रूप बनाना।

आदि-लोप--**लोप** (दे०)का एक भेद।

आदि-व्यंजनलोप--**लोप**(दे०)का एक भेद।

आदि-व्यंजनागम--**आगम** (दे०)का एक भेद।

आदिसर्ग--**उपसर्ग** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

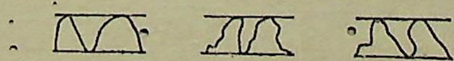
आदि-स्वरलोप (aphesis)--**लोप** (दे०)-का एक भेद।

आदिस्वरागम (prothesis) -- **आगम** (दे०)का एक भेद।

आदेश--'आदेश'का सामान्य अर्थ है आज्ञा, किंतु व्याकरणशास्त्रमें इसका अर्थ है, 'वह जिसे किसी अन्यके स्थानपर आनेका (आदिश्यते यः स आदेशः) आदेश दिया गया हो'। अर्थात् 'एवज़', 'बदल' या 'स्थानापन्न'

[पिछले पृष्ठकी शेष टिप्पणी]

ऊपर बलाघातमें हमलोगोंने देखा कि कायमोग्राफ़पर लहरें ऊँची होंगी, सुरमें देखा गया कि उतनी ही दूरीमें उनकी संख्या अधिक होगी, इस रूपात्मक स्वराघातमें न तो लहरें ऊँची होंगी, न संख्यामें अधिक होंगी, अपितु उनके स्वरूपमें भिन्नता आ जायेगी :--



जुड़वाँ लड़कोंके ये अंग प्रायः समान होते हैं, इसीलिए उनकी आवाजमें यह अंतर नहीं मिलता।

इस प्रकार आदेश किसी अन्य 'ध्वनि', 'शब्दांश', 'रूपांश', शब्द या रूपको हटाकर उसके स्थानपर आता है, जबकि आगम बिना किसीको हटाये किसी ध्वनि आदिके अगल-बगलमें आ जाता है। इसीलिए कहा गया है 'मित्रवदागमः, शत्रुवदादेशः'। आदेशके—आद्यादेश, अन्तादेश, सर्वादेश, एकादेश आदि भेद होते हैं।

आदेशार्थ—(दे०) अर्थ।

आद्य—आदिमें आनेवाला या आदिका।

आद्य ध्वनिपरिवर्तन (initial mutation)—शब्दके आद्य व्यंजन या स्वरमें परिवर्तन।

आद्य बलाघात (initial stress)—किसी अक्षरके प्रथम ध्वनि या शब्दके प्रथम अक्षरपर पड़नेवाला बलाघात।

आद्य शब्दांश-विपर्यय (spoonerism)—एक प्रकारका **विपर्यय** (दे०) कभी-कभी साथके दो शब्दोंके आरम्भके अंशोंमें विपर्यय हो जाता है, जैसे **घोड़ा गाड़ीका गोड़ा-घाड़ी**। बोलनेमें कुछ लोगोंकी ऐसी आदत-सी पड़ जाती है। आक्सफोर्डके डॉ० डब्लू० ए० स्पूनर (१८४४-१९०३)से यह विपर्यय अधिकतर हो जाता था, अतः उन्हींके नामपर इसे स्पूनरिज्म कहते हैं। स्पूनर साहबके कुछ उदाहरण लिये जा सकते हैं—loving shepherd के स्थानपर shoving leopard, two bags and a rug के स्थानपर two rags and a bug. एक बार स्पूनर साहबने बिगड़कर एक विद्यार्थीसे कहा—you have tasted a whole worm (wasted a whole term) हिन्दी उदाहरणके लिए 'कड़ी बिताब' (बड़ी किताब), 'चाल दावल' (दाल चावल) आदि लिये जा सकते हैं। किसीने पूछा—आपकी घड़ीमें क्या बजा है? उत्तर था—चौ बजकर नालिस मिनट। इसे **ध्वनि-सम्मिश्रण** (phonetic contamination) भी कहा जाता है। इसमें कभी-कभी तो केवल स्वर-विपर्यय ही होता है। जैसे चूल्हाचौकासे चौल्हा-चूका या नून-तेलका नेन-तूल आदि। यह केवल बोलनेमें हो जाता है। भाषापर इसका स्थायी प्रभाव नहीं पड़ता।

आद्युदात्त—ऐसा शब्द जिसका प्रथम स्वर उदात्त (दे०) हो।

आधार-भाषा (substratum)—ऐसी भाषा जिसके बोलनेवाले, अपनी भाषा छोड़कर किसी अन्य भाषाको अपना लें। विश्व-इतिहासमें ऐसा प्रायः हुआ है कि, विजित जातिको अपनी भाषा छोड़कर विजेताकी भाषा अपनानी पड़ी है। ये लोग अपनी मूल भाषाके आधारपर नयी भाषाएँ सीखते हैं, इसी कारण उनकी भाषा आधार-भाषा कहलाती है। इस आधार-भाषाके कारण प्रायः नवागत भाषामें परिवर्तन हो जाते हैं।

आधार-सिद्धान्त (substratum theory)—जब कोई व्यक्ति या व्यक्तिसमूह (जाति या देश) अपनी मातृभाषाके अतिरिक्त किसी भाषाको सीखता है तो नवीन भाषापर अपनी भाषाके उच्चारण तथा प्रयोग विषयक अनेक गुण आरोपित कर देता है। उसका सुर, बल (कभी-कभी वाक्य-गठन) आदि अपनी पुरानी भाषाका ही रहता है। इन सब कारणोंसे नवीन भाषाको कुछ परिवर्तित करके ग्रहण करता है। इसीको आधार-सिद्धान्त कहते हैं। शब्द-समूहमें भी यह सिद्धान्त देखा जाता है। **आधार-सिद्धान्तका प्रभाव**—भाषाके परिवर्तनमें इसका बहुत बड़ा हाथ है। जितनी ही कोई भाषा विभाषियों द्वारा प्रयुक्त होगी, उसमें विभाषीकी मातृभाषाके आधारपर सीखनेके कारण परिवर्तन आते जायेंगे। बोलियोंके बननेमें भी इसका बड़ा हाथ है। एक भाषा जब विभिन्न वर्गों द्वारा ग्रहण की जाती है, तो आधार-सिद्धान्त प्रत्येक स्थानपर काम करता है और स्थानानुसार भाषामें परिवर्तन आ जाता है। लैटिन भाषाको गाल और स्पेनी लोगोंने अपनाया और एक ही लैटिन भाषा आधार-सिद्धान्तके कारण

(यद्यपि कुछ अन्य कारण भी साथ-साथ काम कर रहे थे) स्पेनिश और फ्रेंच दो बोलियोंमें परिणत हो गयीं, जो आज स्वतन्त्र भाषाएँ बन गयी हैं। प्रथम जर्मन वर्ण-परिवर्तन आधार-सिद्धान्तके ही कारण घटित हुआ कहा जाता है। अंग्रेज़ीकी ट्, त् थ् आदि ध्वनियाँ हिन्दीसे भिन्न हैं, पर यहाँ वे ट् त् थ् हो गयी हैं। हमने अंग्रेज़ीको अपने आधारपर सीखा है, इसी कारण हमारे उच्चारणको न तो जल्दीसे अंग्रेज़ समझ सकता है और न उसके उच्चारणको हम। येस्पर्सन आदि कुछ विद्वान् तो भाषाके विकासमें आधार-सिद्धान्तको बहुत ही महत्त्वपूर्ण और बलशाली बतलाते हैं।

आधार-स्वर––(दे०) स्वरोंका वर्गीकरणका मान स्वर उपशीर्षक।

आधिक्यवाचक क्रियाविशेषण––(दे०) क्रियाविशेषण।

आधुनिक ग्रंथलिपि––ग्रंथलिपि (दे०)का आधुनिक रूप।

आधुनिक प्रशन––(दे०) प्रशन।

आधुनिक फ़ारसी–'फ़ारसी'का आधुनिक रूप। इसे 'ईरानी' भी कहते हैं। (दे०) फारसी, ईरानी।

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ––भारतीय आर्य भाषा (दे०)के नवीनतम या आधुनिक कालकी भाषा। इसे आधुनिक नव्य भारतीय भाषा (आ० न० भा०) या संक्षेप में आ० भा० आ (nia या mia) भी कहते हैं। इसका काल १००० या ११००से लेकर आजतक है। ये भाषाएँ अपभ्रंशके विविध रूपों (दे० मध्य-कालीन आर्य भाषामें अपभ्रंश)से निकली हैं। आधुनिक भारतीय भाषाओंमें प्रमुख लहँदा (दे०) पंजाबी (दे०) सिंधी (दे०) गुजराती (दे०) हिन्दी (दे०) मराठी (दे०) उड़िया (दे०) आसामी (दे०) बंगला (दे०) हैं, सिंहली (दे०) नेपाली (दे०)को भी भाषा वैज्ञानिक दृष्टिसे इन्हींके साथ रखना चाहिये।

इनकी प्रमुख सामूहिक विशेषताएँ ये हैं:––

(१) आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओंमें प्रमुखतः वही ध्वनियाँ हैं, जो प्राकृत, अपभ्रंश आदिमें थीं। किन्तु कुछ विशेषताएँ भी हैं––(क) कई नये स्वर विकसित हो गये हैं, जैसे हिन्दीमें ही बोलियोंको मिला कर १७-१८ मूल स्वरोंका प्रयोग हो रहा है। पंजाबी आदिमें उदासीन स्वर 'अ' भी प्रयुक्त होने लगा है। अवधी आदिमें जपित या अघोष स्वरोंका प्रयोग होता है। गुजरातीमें मर्मर स्वरका विकास हो गया है। कुछ बोलियोंमें कुछ विद्वानोंके अनुसार केवल मूल स्वरोंका प्रयोग हो रहा है, संयुक्त स्वरोंका नहीं। (ख) 'ऋ'का प्रयोग तत्सम शब्दोंमें लिखनेमें चल रहा हैं, किन्तु बोलनेमें यह स्वर न रहकर 'र'-के साथ इ या उ स्वरका योग रह गया है। उत्तरी भारतमें इसका उच्चारण 'रि' है, और दक्षिणी भारतमें 'रु'। (ग) व्यंजनोंमें, जहाँतक ऊष्मोंका प्रश्न है, लिखनेमें तो प्रयोग स, ष, श तीनोंका हो रहा है, किन्तु उच्चारणमें स, श दो ही है। 'ष' भी 'श' रूपमें उच्चरित होता है। हिन्दी आदिमें 'ड़' 'ढ़' आदि कुछ नये व्यंजन विकसित हो गये हैं। चवर्गके उच्चारणमें आधुनिक कालमें एकरूपता नहीं है। हिन्दीमें ये ध्वनियाँ स्पर्श-संघर्षी हैं, किन्तु मराठीमें इनका एक उच्चारण त्स (च) द्ज (ज) जैसा है। सच पूछा जाय तो मराठीमें दो चवर्ग हो गये हैं। संयुक्त व्यंजन 'ज्ञ'के शुद्ध उच्चारण (ज् ञ)का लोप हो चुका है, उसके स्थानपर ज्यँ, ग्यँ और ग्यँ, ये तीन उच्चारण चल रहे हैं। (घ) विदेशी भाषाके प्रभाव-स्वरूप आधुनिक भाषाओंमें कई नवीन ध्वनियाँ आ गयी हैं, जैसे–क़, ख़, ग़, ज़, फ़, ऑ आदि। इन ध्वनियोंका लोक-भाषाओंमें तो क, ख, ग, ज, फ, आ के रूपमें उच्चारण हो रहा है, किन्तु पढ़े-लिखे लोग इन्हें प्रायः मूल रूपमें बोलनेका प्रयास करते हैं। (२) जिन शब्दोंके उपधा (penultimate) स्वर या अन्तिम-

को छोड़कर किसी और पर बलात्मक स्वराघात था। (क) उनके अन्तिम दीर्घ स्वर प्रायः ह्रस्व हो गये हैं, (ख) अंतिम 'अ' स्वर कुछ अपवादों (संयुक्त व्यंजनादि) को छोड़कर प्रायः लुप्त हो गया है (राम्, अब् आदि)। (३) प्राकृत आदि जहाँ समीकरणके कारण व्यंजन-द्वित्त (कर्म—कम्म) हो गये थे, आधुनिककालमें 'द्वित्व'में केवल एक रह गया और पूर्ववर्ती स्वरमें क्षतिपूरक दीर्घता आ गयी (कम्म—काम, अट्ठ—आठ) पंजाबी, सिन्धी अपवाद हैं उनमें प्रायः प्राकृतसे मिलते-जुलते रूप ही चलते हैं (अट्ठ)। (४) प्रमुखतः बलात्मक स्वराघात है। विशेषतः विहारी, बंगाली आदिमें किन्तु सामान्यतः अन्योंमें भी (वाक्यके स्तरपर) संगीतात्मक भी है। (५) अपभ्रंशके प्रसंगमें कहा जा चुका है कि संस्कृत, पालि आदिकी तुलनामें रूप कम हो गये थे। आधुनिक भाषाओंमें अपभ्रंशकी तुलनामें भी रूप कम हो गये। इस प्रकार भाषा सरल हो गयी। संस्कृत आदिमें कारकके तीनों वचनोंमें लगभग २४ रूप बनते थे। प्राकृतमें लगभग १२ हो गये थे, अपभ्रंशमें ६ और आधुनिक भाषाओंमें केवल दो—मूल रूप और विकृत रूप। क्रियाके रूपोंमें भी पर्याप्त कमी हो गयी है। भाव या काल आदि तो सभी व्यक्त कर लिये जाते हैं, किन्तु सबके रूप अलग नहीं हैं। सहायक शब्दोंसे काम चल जाता है। (६) रचनाकी दृष्टिसे संस्कृत, पालि, प्राकृत आदिकी भाषा योगात्मक थी। अयोगात्मकता अपभ्रंशोंसे आरम्भ हुई, और अब, आधुनिक भाषाएँ (नाम और धातु दोनों दृष्टियोंसे) पूर्णतः अयोगात्मक या वियोगात्मक हो गयी हैं। कुछ रूप योगात्मक हैं भी तो अपवाद स्वरूप। नामरूपोंके लिए परसर्गोंका प्रयोग होता है, और धातुरूपोंके लिए कृदंत और सहायक क्रियाके आधारपर 'संयुक्त क्रिया'का। (७) संस्कृतमें वचन ३ थे। मध्यकालीन आर्य भाषाओंमें ही द्विवचन समाप्त हो गया था और आधुनिक कालमें भी केवल दो वचन हैं। अब प्रवृत्ति एक वचनकी है। लगता है कि आगे चलकर रूप केवल एकवचनके रह जायेंगे और दो, तीन या अधिकका भाव सहायक शब्दोंसे प्रकट किया जायेगा। उदाहरणार्थ हिन्दीमें 'मैं'के प्रयोगकी प्रवृत्ति कम हो रही है। उसके स्थानपर 'हम' चल रहा है, जिसके बहुवचनका कोई अलग रूप नहीं होता, केवल 'लोग' या 'सब' जोड़कर काम चला लेते हैं। (८) संस्कृतमें लिंग ३ थे। मध्ययुगीन भाषाओंमें भी स्थिति यही थी। आधुनिकमें सिन्धी, पंजाबी, राजस्थानी तथा हिन्दीमें २ लिंग हैं (पुल्लिग, स्त्रीलिंग)। सम्भवतः तिब्बत, वर्मी भाषाओंके प्रभावके कारण बंगाली, उड़िया, असमीमें लिंग भेद कम-सा है। विहारी, नेपालीमें भी समाप्त होता-सा दिखाई दे रहा है। तीन लिंग केवल गुजराती, मराठी और कुछ सिंहलीमें हैं। (९), आधुनिक भाषाओंमें प्राचीन तथा मध्ययुगीनसे शब्द-भण्डारकी दृष्टिसे सबसे बड़ी विशेषता यह है कि तुर्की, अरबी, फ़ारसी, पुर्तगाली तथा अंग्रेज़ी आदिसे लगभग ८-१० हज़ार नये विदेशी शब्द प्रत्येकमें लिये गये हैं। इसके पूर्व भाषाओंका प्रमुख शब्द-भण्डार तत्सम, तद्भव और देशजका ही था। मध्ययुगीन भाषाओंकी तुलनामें आज तत्सम शब्दोंका प्रयोग अधिक हो रहा है और तद्भवका अपेक्षाकृत कम। (१०) अनुकरणात्मक शब्दोंका प्रयोग अपेक्षाकृत बढ़ गया है।

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओंका वर्गीकरण—आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओंके वर्गीकरणपर विभिन्न विद्वानों (हार्नले, वेबर, ग्रियर्सन, चटर्जी, धीरेन्द्र वर्मा आदि) द्वारा विभिन्न रूपोंमें विचार किया गया है। यहाँ कुछ प्रमुखका उल्लेख किया जा रहा है। (१) इस प्रसंगमें प्रथम नाम हार्नलेका लिया जा सकता है। उन्होंने (comparative grammar of the

Gaudian lgs.)में आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओंको ४ वर्गोंमें रखा। (क) **पूर्वी गौडियन**--पूर्वी हिन्दी(इसीमें बिहारी भी है), बंगला, असमी, उड़िया। (ख) पश्चिमी गौडियन--पश्चिमी हिन्दी (राजस्थानी भी),गुजराती, सिंधी, पंजाबी। (ग) उत्तरी गौडियन--गढ़वाली, नेपाली आदि पहाड़ी। (घ) दक्षिणी गौडियन–मराठी। (२) हार्नलेने (उपर्युक्त पुस्तकमें) भारतीय आर्य भाषाओंके अध्ययनके आधारपर पिछली सदीमें यह सिद्धांत रखा था कि भारतमें आर्य कमसे कम दो बार आये। पहले आर्य आधुनिक पंजाबमें आकर बसे थे। कुछ दिन बाद दूसरे आर्योंका हमला हुआ। जैसे कहीं कील ठोकनेपर कील छेद बनाकर बैठ जाती है, और उस बने छेदके स्थानपर जो चीज़ रहती है, चारों ओर चली जाती है। उसी प्रकार नवागत आर्य उत्तरसे आकर प्राचीन आर्योंके स्थानपर जम गये और पूर्वागत पूरब, दक्षिण, पश्चिममें फैल गये। इस प्रकार नवागत आर्य भीतरी कहे जा सकते हैं और पूर्वागत बाहरी। इस भीतरी और बाहरीको **ग्रियर्सनने** स्वीकार किया और इसी आधारपर (Linguistic Survey of India भाग एक तथा Bulletin of the School of Oriental Studies, London Institution, Vol. I Pt. III, 1920 में) उन्होंने अपना पहला वर्गीकरण प्रस्तुत किया। इसमें ३ वर्ग हैं। (१) **बाहरी उपशाखा** (क) पश्चिमोत्तरी समुदाय (लहँदा, सिंधी), (ख) दक्षिणी समुदाय (मराठी), (ग) पूर्वी समुदाय(उड़िया, बंगाली, असमी, बिहारी)। (२) **मध्यवर्गी उपशाखा**--(घ) मध्यवर्ती समुदाय (पूर्वी हिन्दी)। (३) **भीतरी उपशाखा**--(ङ), केन्द्रीय समुदाय (पश्चिमी हिन्दी, पंजाबी, गुजराती, भीली[1], खानदेशी[2]) (च) पहाड़ी समुदाय (पूर्वी, मध्यवर्ती, पश्चिमी)। बादमें ग्रियर्सनने (Indian Antiquary, Supplement of Feb 1931) एक नया वर्गीकरण सामने रखा, जो इस प्रकार है। (क) **मध्यदेशी**--(पश्चिमी हिन्दी)। (ख) **अन्तर्वर्ती**--I पश्चिमी हिन्दीसे विशेष घनिष्ठतावाली (पंजाबी, राजस्थानी, गुजराती, पहाड़ी (पूर्वी, पश्चिमी, मध्य), II बहिरंगसे सम्बद्ध (पूर्वी हिन्दी), **(ग) बहिरंग भाषाएँ**--I पश्चिमोत्तरी (लहँदा, सिंधी), IIदक्षिणी (मराठी), III पूर्वी (बिहारी, उड़िया, बंगाली, असमी)। **ग्रियर्सनका** वर्गीकरण (१) ध्वनि, (२) व्याकरण या रूप, तथा (३) शब्द-समूह इन तीन बातोंपर आधारित है। डॉ० सुनीति कुमार चटर्जीने इन तीनोंकी ही आलोचना की है। उन्हींके आधारपर ग्रियर्सनके कुछ प्रमुख आधार संक्षिप्त आलोचनाके साथ दिये जा रहे हैं। (१) **ध्वनि**--ग्रियर्सनके वर्गीकरणके ध्वन्यात्मक आधार लगभग पंद्रह हैं, जिनमें केवल प्रमुख चार-पाँच लिये जा रहे हैं। (क) ग्रियर्सनके अनुसार 'र्' का 'ल्' या 'ड़्'के लिए प्रयोग केवल बाहरी भाषाओंमें मिलता है, किन्तु यथार्थतः ऐसी बात नहीं है। अवधी, ब्रज, खड़ी बोली आदिमें भी यह प्रवृत्ति मिलती है। जैसे बर (बल), गर (गला), जर (जल), बीरा (व्रीड़ा), किवार (किवाड़) भीर (भीड़) आदि। (ख) ग्रियर्सनके अनुसार बाहरी भाषाओंमें 'द्' का परिवर्तन 'ड्' में हो जाता है। वस्तुतः यह बात भीतरीमें भी मिलती है। हिन्दीमें डीठि (दृष्टि), डयोढ़ी (देहली), डेढ़ (द्व्यर्द्ध), डाभ (दर्भ), डाढ़ा (दग्ध), डंडा (दंड), डोली (दोलिका), डोरा (दोरक), डँसना (दंश) आदि उदाहरणार्थ देखे जा सकते हैं। (ग) ग्रियर्सनका कहना है कि

[1],[2] ये दोनों राजस्थानी-गुजरातीके रूप हैं।

'म्ब' ध्वनिका विकास बाहरी भाषाओं-में 'म्' रूपमें हुआ है तथा भीतरीमें 'ब्' रूपमें। किन्तु इसके विरोधी उदाहरण भी मिलते हैं। पश्चिमी हिन्दी क्षेत्रमें 'जम्बुक'-का 'जामुन' या 'निम्ब'का 'नीम' मिलता है। दूसरी ओर बँगलामें 'निम्बुक'का 'लेबू' या 'नेबू' मिलता है। (घ) ऊष्म ध्वनियोंको लेकर ग्रियर्सनका कहना है कि भीतरीमें इनका उच्चारण अधिक दबा-कर किया जाता है और वह 'स' रूपमें होता है, किन्तु बाहरीमें यह श, ख, या ह रूपमें मिलता है। बंगाल तथा महाराष्ट्र-के कुछ भागोंमें निर्बल होकर यह 'श' हो गया है। पूर्वी बंगाल और असममें और भी निर्बल होकर 'ख' हो गया है और बंगला तथा पश्चिमोत्तरीमें 'ह' हो गया है। जहाँ-तक स्वरोंके बीचमेंके 'स' के 'ह' हो जाने-का सम्बन्ध है यह बाहरीके साथ भीतरी भाषाओंमें भी पाया जाता है। सं० एक-सप्तति प० हिन्दी एकहत्तर, सं० द्वादश, प० हि० बारह, सं० करिष्यति, प० हि० करिहइ। साथ ही बाहरीमें 'स' भी कहीं-कहीं है, जैसे लहँदा करेसी (करेगी)। 'ख' वाला विकास बड़ा सीमित है और पूर्वक्षेत्रीय है। उसके आधारपर धुर पूर्व और पश्चिमकी भाषाएँ एकवर्गमें नहीं रखी जा सकतीं। 'श' वाली विशेषता बंगला आदिमें मागधी, प्राकृतसे चली आ रही है और वह प्रायः निर्बन्ध (unconditional) है। मराठीमें वह बादका विकास है और सबन्ध (conditional) है (इ, ई, ए, य आदि तालव्य ध्वनियोंके प्रभाव-से)। इस रूपमें तो भीतरीकी गुजरातीमें भी यह विकास है जैसे-करशे (करिष्यति)। इस प्रकार यह भी भेदक-तत्त्व नहीं है। (ङ) महाप्राण ध्वनियोंका अल्प-प्राण हो जाना भी ग्रियर्सनके अनुसार बाहरी भाषा-ओंमें है, भीतरीमें नहीं। हिन्दीमें भगिनी-का बहिन; प्राकृत कल्पित रूप इँठा (सं० इष्टक) का ईंट; प्राकृत कल्पित रूप ऊँठ (सं० उष्ट्र)का ऊँट इसके विरोधमें जाते हैं। (२) **व्याकरण या रूप**--ग्रियर्सनने इस प्रसंगमें पाँच-छः रूप-विषयक आधारों-का उल्लेख किया है जिनमेंसे तीन यहाँ लिये जा रहे हैं। (क) ग्रियर्सन 'ई' स्त्री प्रत्ययके आधारपर बाहरी वर्गकी पश्चिमी और पूर्वी भाषाओंको एक वर्गकी सिद्ध करना चाहते हैं, किन्तु वस्तुतः यह तर्क तब ठीक माना जाता, जब भीतरी वर्गमें यह बात न मिलती। हिन्दीमें इस प्रत्ययका प्रयोग क्रिया (गाती, दौड़ी), परसर्ग (की), संज्ञा (लड़की, बेटी), विशेषण (बड़ी, छोटी) आदि कई वर्गके शब्दोंमें खूब होता है, अतः इसे इस प्रकारके वर्गीकरणका आधार नहीं मान सकते। (ख) भाषा संयोगात्मक-से वियोगात्मक होती है और कुछ लोगोंके अनुसार वियोगात्मकसे फिर संयोगात्मक। ग्रियर्सनका कहना है कि संयोगात्मक भाषा संस्कृतसे चलकर आधुनिक भाषाएँ (कारक रूपमें) वियोगात्मक हो गयी हैं, किन्तु आधुनिककालमें भी बाहरी भाषाएँ विकासमें एक कदम और आगे बढ़कर संयोगात्मक हो रही हैं। जैसे हिन्दी 'रामकी किताब', बंगाली 'रामेर बोई'। ग्रियर्सनका यह भी कहना है कि भीतरीमें यदि कुछ संयोगा-त्मक रूप मिलते भी हैं तो वे प्राचीनके अव-शेष मात्र हैं, अर्थात् प्रवृत्ति नहीं है, अपवाद हैं। इस प्रकार बाहरी-भीतरी भाषाओंमें यह एक काफ़ी बड़ा अन्तर है। किन्तु ग्रिय-र्सनका यह अन्तर भी सत्यकी कसौटी-पर खरा नहीं उतरता। जैसा कि डॉ० चटर्जीने दिखाया है। तुलनात्मक ढंगसे जब हम बाहरी और भीतरीके कारक रूपों-का अध्ययन करते हैं तो देखते हैं कि संयो-गात्मक रूपोंका प्रयोग भीतरीमें बाहरीसे कम नहीं है, अतः इस बातको भी भेदक तत्त्व नहीं माना जा सकता। [ब्रज पूतहि (कर्म), मर्राहि, मौनहि (अधिकरण)।], (ग) ग्रियर्सन विशेषणात्मक प्रत्यय 'ल'को केवल बाहरी भाषाओंकी विशेषता मानते

हैं, यद्यपि भीतरीमें भी यह पर्याप्त है, जैसे-रँगीला, हठीला, भड़कीला, चमकीला, कटीला, गठीला, खर्चीला आदि । (३) **शब्द-समूह**—इसके आधारपर भी ग्रियर्सन बाहरी भाषाओंमें साम्य मानते हैं। किन्तु विस्तारसे देखनेपर यह बात भी ठीक नहीं उतरती। मराठी-बंगाली या बंगाली-सिन्धी-में बंगाली-हिन्दीसे अधिक साम्य नहीं है। इस प्रकार ग्रियर्सन जिन बातोंके आधारपर बाहरी-भीतरी वर्गीकरणको स्थापित करना चाहते थे, वे बहुत संपुष्ट नहीं हैं।

(३) डॉ० **सुनीतिकुमार चटर्जी**का वर्गीकरण (O. D. B. L. में) इस प्रकार है: (क) **उदीच्य** (सिन्धी, लहँदा, पंजाबी), (ख) **प्रतीच्य** (गुजराती, राजस्थानी), (ग) **मध्य-देशीय** (पश्चिमी, हिन्दी), (घ) **प्राच्य** (पूर्वी हिन्दी, बिहारी, उड़िया, असमिया, बंगाली), (ङ) **दाक्षिणात्य** (मराठी) । डॉ० चटर्जी पहाड़ीको राजस्थानीका प्रायः रूपांतर-सा मानते हैं। इसीलिए उसे यहाँ अलग स्थान नहीं दिया है। (द) डॉ० धीरेन्द्र वर्माने डॉ० चटर्जी-के वर्गीकरणके आधारपर ही अपना वर्गीकरण दिया है: (क) **उदीच्य** (सिंधी, लहँदा, पंजाबी), (ख) **प्रतीच्य** (गुजराती), (ग) **मध्यदेशीय** (राजस्थानी, प० हिन्दी, पूर्वी हिन्दी, बिहारी), (घ) **प्राच्य** (उड़िया, असमी, बंगाली), (ङ) **दाक्षिणात्य** (मराठी)। इस वर्गीकरणमें हिन्दीके प्रमुख चारों रूपोंको मध्यदेशीय माना गया है।

(४) **श्री सीताराम चतुर्वेदीने** सम्बन्ध-सूचक परसर्गके आधारपर **'का'** (हिन्दी, पहाड़ी, जयपुरी, भोजपुरी); **'दा'** (पंजाबी, लहँदा), **'जो'** (सिन्धी, कच्छी), **'नो'** (गुजराती), **'एर'** (बंगाली, उड़िया, असमी) वर्ग बनाये हैं। यथार्थतः यह कोई वर्गीकरण नहीं है। ऐसे तो 'ळ' या 'स', 'श' ध्वनियोंके आधारपर भी वर्ग बनाये जा सकते हैं।

(५) व्यक्तिगत रूपसे इन पंक्तियोंका लेखक कुछ इस प्रकारका वर्गीकरण (जो प्रमुखतः क्षेत्रीय है) पसन्द करता रहा है: **मध्यवर्ती** (पूर्वी और पश्चिमी हिन्दी), **पूर्वी** (बिहारी, उड़िया, बंगाली, असमी), **दक्षिणी** (मराठी), **पश्चिमी** (सिन्धी, गुजराती, राजस्थानी), **उत्तरी** (लहँदा, पंजाबी, पहाड़ी)।

किन्तु वस्तुतः वर्गीकरणका आशय यह है कि उसके आधारपर भाषाओंकी मूल-भूत विशेषताएँ स्पष्ट हो जायँ। उपर्युक्त किसी भी वर्गीकरणमें यह बात नहीं है, ऐसी स्थितिमें ये सारे व्यर्थ हैं। इनके आधारपर कोई भाषा-वैज्ञानिक निर्णय नहीं निकाला जा सकता। इससे अच्छा है कि इनकी अलग-अलग प्रवृत्तियोंका ही अध्ययन कर लिया जाय। या यदि वर्गीकरण जरूरी ही समझा जाय तो दो बातें कही जा सकती हैं: (१) प्रवृत्तियोंके आधारपर इन भाषाओंमें इतना वैभिन्य या साम्य है कि सभी बातोंका ठीक तरहसे विचार करते हुए वर्गीकरण हो ही नहीं सकता। (२) अतएव उत्पत्ति या सम्बद्ध अपभ्रंशोंके आधारपर इनके वर्ग बनाये जा सकते हैं। किन्तु यह ध्यान रहे कि इस प्रकारके वर्गोंमें ध्वनि या गठन सम्बन्धी साम्य बहुत कम दृष्टियोंसे मिल सकता है। यों उत्पत्ति भी अपने-आपमें महत्त्वपूर्ण है, अतः इसे बिल्कुल निरर्थक नहीं कहा जा सकता। इस वर्गीकरणका रूप यह है: (क) **शौरसेनी** (पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, पहाड़ी), (ख) **मागधी** (बिहारी, बंगाली, असमी, उड़िया), (ग) **अर्द्ध मागधी** (पूर्वी हिन्दी) (घ) **महाराष्ट्री** (मराठी), (ङ) **व्राचड़-पैशाची** (सिन्धी, लहँदा, पंजाबी) इन्हें क्रमसे मध्य, पूर्वीय, मध्यपूर्वीय, दक्षिणी और पश्चिमोत्तरी कहा जा सकता है।

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओंका वर्गीकरण—(दे०) **आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ**।

आनुमानिक––ऐसा रूप या शब्दादि जो साहित्य या प्रयोगमें मिलता न हो, अपितु मात्र अनुमानपर आधारित हो। कल्पित या तारांकित रूप आनुमानिक ही होते हैं। पुनर्निर्माण चाहे आंतरिक हो या बाह्य, आनुमानिक होता है।

आबूलोककी बोली––**राठी** (दे०)का एक नाम। आबू पर्वतके निवासी 'आबू लोक' कहे जाते हैं। इसी कारण उनकी बोली 'आबू लोककी बोली' नामसे प्रसिद्ध है।

आबेंग (abeng)––**गारो** (दे०) भाषाकी असममें गारो पहाड़ियोंपर तथा बंगालमें मैमनसिंहमें प्रयुक्त एक बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा–सर्वेक्षणके अनुसार ३८,००० के लगभग थी।

आभाणक––**लोकोक्ति** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक संस्कृत नाम।

आभीर अपभ्रंश––**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

आभीरोक्ति––**अपभ्रंश** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

आभ्यंतर प्रयत्न––(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें प्रयत्न** उपशीर्षक।

आयतप्रतिलेखन––(दे०) **स्थूल प्रतिलेखन**।

आयत रोमिक (broad romic)––स्वीट द्वारा बनायी गयी ध्वन्यात्मक लिपि रोमिक (दे०)का सरलीकृत रूप। इसे **सरल रोमिक** भी कहते हैं।

आयत व्यंजन (broad consonent)––आयरिश आदि कुछ भाषाओंमें पश्च स्वरोंके तुरत बाद (एक ही शब्दमें) आनेवाला व्यंजन।

आयत स्वर (broad vowel)––पश्च स्वरके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

आयरिश––केल्टिक शाखाकी एक भारोपीय भाषा, जो आयरलैंडमें बोली जाती है। इसे **आयरिश गैलिक** (irish gaelic) भी कहते हैं। इस भाषाके विकासको प्राचीन काल (६००–१२०० ई०) मध्यकाल (१२००-१६००) तथा आधुनिककाल (१६००-) में बाँटा गया है। आयरिश साहित्यमें अल्स्टर (एक शौर्यगाथा) का उल्लेख है। यहाँके साहित्यिकोंमें माइकेल ओ क्लेरे, ईगन ओ' राहिली आदि प्रमुख हैं। (दे०) **केल्टिक**।

आयरी (ayari)––भीलीकी कच्छमें प्रयुक्त एक बोली **अहीरी** (दे०)का एक अन्य नाम।

आयोनिक––(दे०) **आयोनियन**।

आयोनिक लिपि––**ग्रीक लिपि** (दे०)का एक रूप।

आयोनियन (ionian)––प्राचीन ग्रीककी एक साहित्यिक बोली। इसे **आयोनिक** भी कहते हैं। (दे०) **ग्रीक**।

आरमेइक (aramaic)––एक **सेमिटिक** (दे०) भाषा। इसके **पश्चिमी आरमेइक** (बाइबिली आरमेइक, ईसाई पैलेस्तीनी आरमेइक, जूडो आरमेइक, प्राचीन आरमेइक समेरिटन) तथा **पूर्वी आरमेइक** (बेबिलोनियन जूडो आरमेइक, मैंडेअन, हरेनियन, सीरिअक (दे०) आदि) दो रूप हैं, जिनमें छोटी-बड़ी अनेक बोलियाँ हैं। पश्चिमी आरमेइकका एक प्राचीन रूप (जिसे प्राचीन आरमेइक भी कहते हैं) ८वीं सदी ई० पू० से ४थी सदी तक कुछ शिलालेखोंमें प्रयुक्त मिलता है।

आरमेइक लिपि––उत्तरी **सामी लिपि** (दे०)-से निकली लिपि जिसका प्रयोग आरमेइक भाषाके लेखनमें होता था। प्राचीन सीरिया, फिलस्तीन, अरब, मिस्र आदि इसका क्षेत्र था। इसका काल ९वीं सदी ई० पू०से २री सदी तक है। **परवर्ती हिब्रू** (दे०) **पहलवी लिपि** (दे०) **सोग्दिअन** (दे०) **अरबी** (दे०) **आर्मेनियन लिपि** (दे०) **जार्जियन लिपि** (दे०), **मैनिकेयन** (दे०) तथा **मैंडेयन** (दे०) आदि लिपियाँ इसीसे निकली हैं।

आरे (are)––(१) **आर्ये** (दे०)का एक अन्य नाम। (२) **तुपी-गुअरनी** (दे०) परिवारकी, दक्षिणी अमेरिकामें, प्रयुक्त

एक भाषा।

आरोहश्रुति (on glide)––(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**का **श्रुति** उपशीर्षक।

आरोही संयुक्त स्वर (rising diphthong)––(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**में **संयुक्त स्वर** उपशीर्षक।

आरोही सुर––**सुर** (दे०)का एक भेद।

आर्त्शी (artshi)––**काकेशक परिवार** (दे०)की काकेशसमें प्रयुक्त एक भाषा।

आर्थी व्यंजना–एक प्रकारकी व्यंजना। (दे०) **शब्द-शक्ति**।

आर्धधातुक––(दे०) **सार्वधातुक**।

आर्मेइक (armaic)––**आरमेइक** (दे०)को कभी-कभी इस रूपमें भी उच्चारित किया जाता है।

आर्मेनियन या आर्मीनी––भारोपीय परिवारकी सतम् शाखाकी एक उपशाखा। इसे कुछ लोग आर्य परिवारकी ईरानी भाषाके अन्तर्गत रखना चाहते रहे हैं। इसका प्रधान कारण यह रहा है कि इसका शब्द-समूह ईरानी शब्दोंसे भरा है। किंतु ये शब्द केवल उधार हैं। इसकी योगात्मकता तथा ध्वनि आदि स्पष्टतः ईरानीसे भिन्न है, अतः इसे भारोपीय परिवारकी एक स्वतंत्र शाखा मानना ही अधिक उपयुक्त है। इसके कीलाक्षर-लेख मिले हैं, जिससे इसके प्राचीन साहित्यका अनुमान होता है। यह साहित्य धार्मिक था, जिसे ईसायोंने चौथी सदीके लगभग नष्ट कर दिया। ईसाई साहित्य चौथीसे ११वीं सदी तक रचा गया। ९वीं सदीका एक इंजीलका इसमें अनुवाद है। कुछ पंक्तियाँ यहाँके मूल साहित्यकी भी हैं। इसका नवीन रूप प्रत्येक दृष्टिसे प्राचीन रूपसे बहुत दूर चला आया है, पर पुराने रूप (जिसका नाम **ग्रबर या गरबार** है)का प्रयोग धार्मिक कार्योंमें अब भी संस्कृत और लैटिन आदिकी भाँति होता है।

पाँचवीं सदीमें ईरानके युवराज आर्मेनियाके राजा थे, अतः ईरानी शब्द इस भाषामें अधिक आ गये। तुर्की और अरबी शब्द भी इसमें काफी हैं। इस प्रकार आर्य और आर्येतर दोनों ही प्रभाव इसपर पड़े हैं। इसके शब्दोंमें व्यंजन संस्कृतके समीप हैं। जैसे फारसी 'दह' और संस्कृत 'दशन्'की भाँति १० के लिए इसमें 'तस्न' शब्द है। दूसरी ओर ह्रस्व स्वर एँ और ओँ आदि इसमें ग्रीककी भाँति हैं, अतः इसे आर्य और ग्रीकके बीचमें कहा जाता है।

विभाजन :––

```
                 ┌–फ्रीजिअन
आर्मेनियन––┤                                                              ┌–अराराट
                 └–प्राचीन आर्मेनियन———— वर्तमान आर्मेनियन————┤
                                                                           └–स्तंबुल
```

यूरोप और एशियाके सरहदपर बोली जानेवाली प्राचीन भाषा **फ्रीजियन** (यह phrygian हालैंडकी जर्मेनिक शाखाकी frsian से भिन्न है) भी इसीके अन्तर्गत मानी जाती है। वर्तमान आर्मेनियनके प्रधान दो रूप हैं। एकका प्रयोग एशियामें होता है और दूसरेका यूरोपमें। इनका क्षेत्र एशियामाइनरमें कुस्तुन्तुनिया तथा कृष्ण सागरके पास है। एशिया वाली बोलीका नाम **अराराट** है और यूरोपमें बोली जानेवालीका **स्तंबुल**। **स्तंबुलमें** साहित्य रचना भी होती है यही इसकी प्रधान बोली है। आर्मेनियनके बोलनेवाले लगभग ४० लाख हैं।

आर्मेनियन लिपि–भारोपीय परिवारकी आर्मेनियन भाषाके लिए प्रयुक्त एक लिपि। यह **आरमेइक लिपि** (दे०)से निकली ज्ञात होती है।

आर्य––भारोपीय परिवारकी सतम् शाखाकी एक उपशाखा। इस उपशाखाके अन्य नाम **हिंद-ईरानी** या **भारत-ईरानी** भी हैं। भारोपीय परिवारकी आर्य उपशाखा

बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। इस परिवारका प्राचीनतम प्रामाणिक साहित्य अपने शुद्ध अर्थोंमें इसी शाखामें मिलता है। इतना ही नहीं, ऋग्वेदके बराबर पुराना शुद्ध साहित्य संसारकी बहुत कम भाषाओंमें मिलेगा। ऋग्वेदकी कुछ ऋचाएँ १५०० ई० पू० तक लिखी जा चुकी थीं, और १००० ई० पू०से पूर्व तक तो यह प्रायः पूर्णतः लिखा जा चुका था। पारसियोंके धर्मग्रंथ **अवेस्ता**के प्राचीन अंश भी लगभग ७वीं सदी ई० पू० के हैं। इसके अतिरिक्त इस उपशाखाकी भाषाओं-का गठन तथा उनका साहित्य भी कम मह-त्त्वपूर्ण नहीं है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि भाषा-विज्ञानके अध्ययनके लिए इसने सामग्री दी है और पश्चिममें भाषा-विज्ञा-नका आधुनिक अध्ययन यथार्थतः तभीसे प्रारम्भ भी हुआ जबसे लोगोंको इस उप-शाखाका परिचय मिला। इस उपशाखाके लोग अपनेको आर्य कहते थे। 'आर्य' शब्द भारतीय साहित्यमें तो है ही, **ईरान** शब्द स्वयं **आर्याणाम्**से बना है। इस उपशाखाकी दो शाखाएँ हैं: १. भारतीय, २. ईरानी। बहुतसे लोग इन दोनोंको भारो-पीयकी अलग-अलग शाखाएँ माननेके पक्ष-में रहे हैं, किन्तु ऐसा मानना वैज्ञानिक नहीं है, क्योंकि ये दोनों बहुत-सी बातोंमें साम्य रखती हैं, जिससे स्पष्ट है कि ये दोनों पहलेसे ही अलग न होकर एक शाखाके रूपमें थीं और बादमें अलग हुईं।

भारतीय और ईरानीमें समानताएँ—(१) भारोपीय मूल भाषाके तीन ह्रस्व मूल स्वर (अ, एँ, ओँ) तथा तीन दीर्घ मूल स्वर (आ, ए और ओ)के स्थानपर भारतीय तथा ईरानी दोनोंहीमें एक ह्रस्व मूल स्वर 'अ' और एक दीर्घ मूल स्वर 'आ', ये दो ही मिलते हैं।

भारोपीय	संस्कृत	अवेस्ता
नेभोस	नभस्	नवह्
ओस्मि	अस्मि	अस्त
याग	यज्	यज्
एपो	अपः	अप

(२) दोनोंमें भारोपीयके अति ह्रस्व या उदासीन स्वर ə के स्थानपर 'इ' स्वर मिलता है।

भारोपीय	संस्कृत	अवेस्ता
पृəते	पिता	पिता

(३) दोनोंमें ही मूल भारोपीय 'र' (ऋ) का 'ल' (लृ) और 'ल' (लृ) का र (ऋ) होता देखा जाता है। संभवतः 'र' (ऋ) और 'ल' (लृ) ध्वनियोंमें उस समय विशेष भेद नहीं था।

मूल भारोपीय	संस्कृत	अवेस्ता
यूलक्वोस	वृकः	व्əह्र्को
रुन्च	लुंचामि	

(४) इस उपशाखामें इ, उ, क् तथा र आदिके पश्चात् आनेवाला 'स' व्यंजन अवेस्तामें 'श' हो गया और संस्कृतमें ष :—

भारोपीय	अवेस्ता	संस्कृत
स्थिस्थामि	हिश्तइति	तिष्ठामि
जिउस्तर	जओशा	जोष्टा

(५) मूल भारोपीयके प्रथम श्रेणीके कण्ठ्य या पुरःकण्ठ्य क् (क्य) ख् (ख्य) ग् (ग्य) घ् (घ्य) भारत-ईरानीमें क्रमसे श्, श्ह्, ज् और ज्ह् हो गये। कालान्तर भारतमें ये श् ज् और ह् हो गये और ईरान-में स्, ज़्, ज़्ह्।

(६) मूल भारोपीयके तृतीय श्रेणीके कण्ठ्य या कण्ठोष्ठ्य क् (क्व) ख् (ख्व) ग् (ग्व) घ् (घ्व) इस उपशाखामें शुद्ध कण्ठ्य क् ख् ग् घ् हो गये। और यदि इनके बाद इ, ए स्वर थे तो क्रमसे च्, छ्, ज्, झ् हो गये।

(७) ईरानी तथा भारतीय दोनोंमें स्वरांत संज्ञाओंको बहुवचन बनानेके लिए षष्ठीमें '—नाम्' प्रत्ययका प्रयोग हुआ है।

(८) दोनोंमें आज्ञाके लिए अन्य पुरुषमें '—तु' और '—न्तु' प्रत्यय पाये जाते हैं।

(९) बहुतसे शब्द दोनों हीमें लगभग एक-से हैं और दोनोंमें उनका अर्थ भी एक ही है—

संस्कृत	अवेस्ता
ओजस्	ओजः
अनु	अनु
अन्य	अन्य
विश्व	विस्प
ददामि	ददामि
असुर	अहुर
पुत्र	पुथ्र
सप्त	हप्त
वसिष्ठ	वहिश्त
असि	अहि

(१०) वैदिक संस्कृत और अवेस्ता इतनी समीप हैं कि एक भाषाके बहुतसे वाक्य केवल साधारण परिवर्तनसे दूसरी भाषाके बनाये जा सकते हैं——

संस्कृत	अवेस्ता
यो यथा पुत्रं =	यो यथा पुथ्रम्
तरुणं - सोमं	तउरुनम् - हओमम्
वन्देत मर्त्यः	वन्दएँता मश्यो

शूरं धामसु शविष्ठम् = सूरं दामोहू शविस्तम्।
सावने आ ऋतौ आ = हावनीम् आ रतुम् आ

भारतीय और ईरानीमें अन्तर :——ऊपरकी समानताओंमें रहते हुए भी दोनोंमें अन्तर भी हैं। यदि ऐसा न होता तो दोनों अलग-अलग ही क्यों होतीं। यहाँ कुछ प्रमुख अन्तरोंकी ओर संकेत किया जा रहा है। (१) चवर्गके केवल दो व्यंजन च् और ज् ईरानीमें हैं, जब कि भारतीयमें पाँच (च् छ् ज् झ् ञ्) हैं। (२) ईरानीमें टवर्गका एकान्त अभाव है, जब कि भारतीयमें ये हैं। (३) पाँचों वर्गोंके द्वितीय और चतुर्थ अर्थात् महाप्राण वर्ण ईरानीमें नहीं हैं। (४) पुरानी ईरानीमें 'ल्'का भी अभाव है। इसके स्थानपर 'र' है। जैसे श्रीलः = स्रीरो (श्री-संपन्न)। (५) ईरानीमें स्वरोंका बाहुल्य है। वहाँ ८ स्वर ऐसे हैं, जिनके स्थानपर भारतीयमें 'केवल' अ' या 'आ'का ही प्रयोग होता है। (६) आदि स्वरागम और अपिनिहिति भी ईरानीमें भारतीयकी अपेक्षा अधिक है। भरति = बरइति तथा भवति = बवइति आदि। (७) भारतीय शब्दोंमें पाया जानेवाला 'स्', ईरानी शब्दोंमें 'ह्' है। जैसे-सप्त = हप्त, सप्ताह = हफ़्ता तथा सिंधु = हिंदु, सत्य = हइथ्यो, सखा = हखा आदि। लोगोंने कहा है कि ऐसा केवल शब्दके आदि 'स'में हुआ है। किंतु अन्यत्रके भी उदाहरण मिलते हैं:——असु = अहु; असुर = अहुर (८) संस्कृतके घोष महाप्राण घ्, ध् भ्, ईरानीमें अल्पप्राण ग्, द्, ब रूपमें हैं। जैसे-भूमि = बूमि, दीर्घम् = दरेगम् तथा भ्राता = ब्राता आदि। (९) संस्कृतके अघोष अल्पप्राण क् त् प ईरानीमें संघर्षी ख़, थ, फ़ हैं। जैसे-क्रतुः = ख़्रतुश्, सत्यः = हइथ्यो तथा स्वप्नं = ह्वफ़नम् आदि। (१०) संस्कृतका ऋ ईरानीमें अर, र, या अ है। जैसे वृक्षम् = वरेशेम्। यहाँ केवल ध्वनि-सम्बन्धी अन्तरोंको लिया गया है। व्याकरण सम्बन्धी अन्तर बहुतसे हैं।

विभाजन——आर्य या भारत-ईरानी उपशाखाका विभाजन विवादास्पद है। ग्रियर्सन, चटर्जी आदि इसे (१) **ईरानी**, (२) **दरद**, (३) **भारतीय**, इन तीनमें विभाजित करनेके पक्षमें हैं। स्टेन कोनोव तथा कुछ अन्य लोग केवल दोके पक्षमें हैं। (१) **ईरानी**, (२) **भारतीय**। ये लोग दरदको ईरानीके अंतर्गत रखते हैं। तीसरा मत जूल ब्लाख़ तथा कुछ अन्य लोगोंका है। ये लोग भी दो वर्गके ही पक्षमें हैं किंतु दरदको, ईरानीसे नहीं अपितु भारतीयसे संबद्ध मानते हैं। एक चौथा मत रैप्सन का है, जो जूल ब्लाख़से ही प्रायः मिलता-जुलता है। उनका कहना है कि 'दरद' प्राचीन वैदिकीकी ईरानीसे प्रभावित एक शाखा है। वास्तविकता यह है कि 'दरद' दोनों (ईरानी-भारतीय)के बीचमें है, अतः इसमें कुछ समानताएँ दोनोंके साथ हैं, किंतु कुछ असमानताएँ भी हैं। व्याकरण, ध्वनि दोनोंको देखते हुए इसे दोनोंसे अलग रखना

ही ठीक ज्ञात होता है। निष्कर्षतः आर्य उपशाखाका विभाजन **ईरानी** (दे०) **दरद** (दे०) **भारतीय** (दे०) इन तीनमें करना ही समीचीन है।

आर्य परिवार––**भारोपीय परिवार** (दे०)का एक अन्य नाम।

आर्यन लिपि––**खरोष्ठी** (दे०) लिपिका एक अन्य नाम।

आर्ये (arye)––दक्षिण भारतमें प्रयुक्त **मराठी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

आर्योंका मूल स्थान––(दे०) **भारोपीय भाषा-भाषियोंका मूल स्थान**।

आर्ष––**अर्द्ध मागधी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

आर्षी––**अर्द्ध मागधी**(दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

आवंती अपभ्रंश––**अवंत्य अपभ्रंश** (दे०)-का एक अन्य नाम।

आवि (awi) **गारो** (दे०) भाषाकी असममें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २०,००० के लगभग थी।

आवृत्ति––१. **पुनरावृत्ति** (दे०)का एक अन्य नाम। किसी भी ध्वनि, शब्द या रूप आदि-का दो बार आना। २. (frequency) ––ध्वनि-लहरोंका प्रतिसेकेंड कंपन।

आवृत्तिबोधक विशेषण––(दे०) **विशेषण**।

आवृत्तिलोप––**समवर्णलोप** (दे०)का एक अन्य नाम।

आवृत्तिवाचक क्रिया विशेषण––(दे०) **क्रिया-विशेषण**।

आवृत्तिवाचक विशेषण––(दे०) **विशेषण**।

आवृत्ति संख्यावाचक विशेषण––(दे०) **विशेषण**।

आशीः––**लिङाशिषि** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

आशीर्लिङ––**लिङाशिषि** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

आश्चर्यबोधक अव्यय––(दे०) **मनोविकार-बोधक अव्यय**।

आश्चर्यवाचक संगम––**संगम** (दे०)का एक भेद।

आश्रित वाक्य––(दे०) **समुच्चयबोधक अव्यय**।

आसंति––(दे०) **वाक्यमें वाक्यकी आवश्यकताएँ** उपशीर्षक।

आसन्न––जो किसी भी दृष्टिसे निकट या निकटतम हो।

आसन्न भविष्यकाल (immediate future tense) ऐसा भविष्य काल जो अभी होनेवाला हो। इसे **तात्कालिक भविष्य काल** भी कहते हैं।

आसन्नभूत––(दे०) **काल**।

आसामी––असमकी घाटी तथा उसके आस-पास लगभग ८५००० वर्गमीलमें ४९ लाख ५० हजार (१९५१की जनगणनाके अनुसार) लोगों द्वारा ली जानेवाली एक आधुनिक भारतीय आर्यभाषा। 'असम'का प्राचीन नाम 'प्राग्ज्योतिष' था। उसके बाद इसे 'कामरूप' कहने लगे। १३वीं सदीमें बर्मासे आकर एक निषाद जातिके ताइ (शान) कबीलेने इसके पूर्वी क्षेत्रमें अपना राज्य स्थापित किया। इन्हीं लोगोंके कारण यहाँका नाम 'असम' पड़ा। नाम आसाम कैसे पड़ा इस संबंधमें पर्याप्त विवाद है। कुछ मत इस प्रकार हैं: (१) सर एडवर्ड गेटके अनुसार मूलतः यह शब्द संस्कृतका 'असम' (जिसके बराबर कोई न हो) है। कामरूपके लोगोंने इन नवागंतुक शान या ताइ लोगोंकी अभूतपूर्व वीरताके कारण इन्हें 'असम' कहा। (२) कुछ लोगोंके अनुसार तत्कालीन मोन लिपि एवं उच्चारणकी विशेषताके कारण 'शान'का 'रहवम' हो गया। यही 'रहवम' बदलते-बदलते आहोम, अहोम, असम आदि हो गया। (३) ग्रियर्सनका मत यह है कि मूलतः इस कबीले-का नाम 'शम' था। 'शन' या 'शान' उसका बर्मीमें विकृत रूप है। इसका आशय यह है कि 'शम' ही 'सम' और असम, आसाम

आदि हो गया। आरंभका आगत 'अ' या 'आ' काकतीके अनुसार अप्रतिष्ठासूचक या निजतासूचक प्रत्यय है। आक्रमणकर्ता तो ये लोग थे ही, यदि असमके मूल निवासियोंके मनमें उनके प्रति घृणा या अप्रतिष्ठाका भाव रहा हो तो कोई आश्चर्य नहीं। (४) डॉ० पी० सी० बाग्ची मूल शब्द सिएन-स्याम (sien-syam) मानते हैं और आहोम, असम आदिको उसीसे संबद्ध कहते हैं। इसमें 'सिएन' चीनी शब्द है तथा 'स्याम' ख्मेर अभिलेखोंमें प्रयुक्त शब्द है। (५) बानीकांत काकतीके अनुसार ताइ भाषामें एक धातु है 'चाम्', जिसका अर्थ है हराया जाना। इसीमें 'अ' जुड़ जानेसे 'अचाम' और फिर 'आसाम' 'असम' आदि बना है। इस तरह 'आसाम'-का अर्थ है 'अविजित' या 'विजयी'। इन लोगोंने जीतकर ही राज्य-स्थापना की थी, अतः यह नाम इनके लिए अप्रयुक्त नहीं कहा जा सकता।

किंतु इन चारोंमें कोई भी ठोस आधारपर आधारित नहीं है। इनमें अनुमान और कल्पनाका हाथ ही अधिक है। कुछ भी हो, इतना तो कहा ही जा सकता है कि इन विजेताओंका नाम 'आसाम' या 'असम' पड़ा और इन्हींके आधारपर पहले इनके द्वारा विजित पूर्वी-क्षेत्र और फिर पूरा असम इसी नामसे पुकारा जाने लगा। इस समय असमके लोग शान या ताइ लोगोंको 'आहोम', अपने देशको 'अँसम' (इसका उच्चारण कुछ 'अँख़म' जैसा है) तथा अपनी भाषाको **असमिया** (—इया = विशेषण बनानेवाला प्रत्यय) कहते हैं। हिन्दीमें प्रायः देशको 'आसाम' (कदाचित् अंग्रेजीके आधारपर) तथा भाषाको 'आसामी' कहा जाता है। कुछ लोगोंने ऐसा विचार भी व्यक्त किया है कि पहले 'अहोम' या 'आहोम' शब्द प्रयुक्त हुआ 'असम' या 'आसाम' उसीका विकृत रूप है, किंतु ऐसी धारणा अशुद्ध है। 'असम' ही 'अहोम' आदि बन गया है।

असमी भाषाका संबंध पूर्वोत्तरी मागधी अपभ्रंशसे है, सातवीं सदीमें चीनी यात्री ह्वेन त्सांगने लिखा था कि कामरूपकी भाषा मध्य देशकी भाषासे भिन्न है। इसका आशय यह है असमी भाषाका बीज बहुत पहले पड़ चुका था, किंतु इसका लिखित प्राचीनतम रूप हेम सरस्वती द्वारा लिखित 'प्रह्लाद चरित्र' नामक काव्य-ग्रंथमें मिलता है। यही असमीके पहले कवि हैं और यही है प्राचीनतम ग्रंथ। इसका काल है १३वीं सदीका प्रारंभ, असमी साहित्य प्राक्-वैष्णवकाल, वैष्णवकाल, बुरंजी-गद्यकाल, आधुनिककाल, इन चार कालोंमें विभक्त है। प्राचीन असमी साहित्यकारोंमें पीतांबर, शंकरदेव, माधवदेव, तथा सूर्यखरी, बलदेव आदि प्रमुख हैं। असमी साहित्यकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें गद्य तथा इतिहासके व्यवस्थित ग्रंथ बहुत पहलेसे मिलते हैं। इस दृष्टिसे असमी अपनी अन्य बहनोंसे बहुत आगे है।

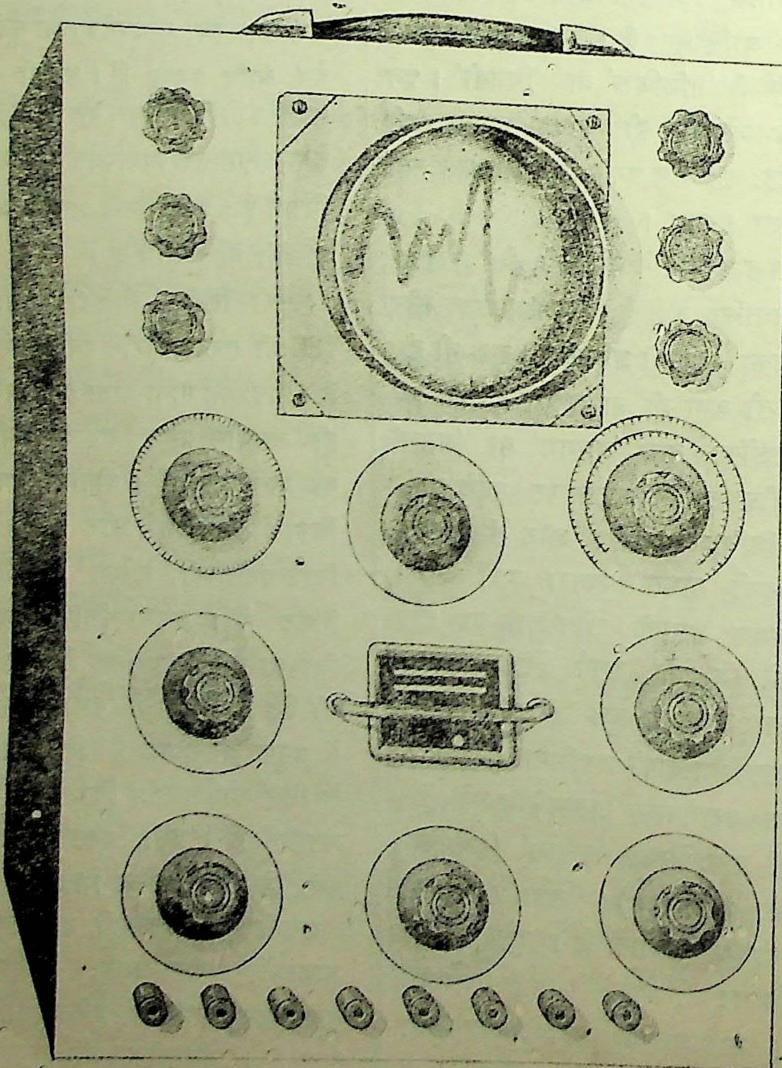
असमी लिपि, मैथिली तथा बंगाली लिपिकी तरह नागरीके पूर्वी रूपसे विकसित है। प्रायः यह माना जाता है कि बंगला लिपि ही असमीमें ग्रहण कर ली गयी है, किंतु यह बात ग़लत है। दोनोंका अपना-अपना विकास हुआ है और तत्त्वतः असमी लिपि बंगालीकी अपेक्षा मैथिलीके अधिक निकट है। असमी लिपि तथा बंगाली लिपिका साम्य आधुनिक है और यह प्रेसकी देन है। बंगाली तथा असमी लिपिमें प्रमुख अंतर यह है कि बंगालीमें 'व'-के लिए कोई स्वतंत्र चिह्न नहीं है किन्तु असमीमें है। इसी प्रकार असमीका 'र' बंगालीके 'र' से थोड़ा भिन्न है।

असमी भाषा, तिब्बती, बर्मी तथा अस्ट्रिक भाषाओंसे शब्द-समूह, मुहावरों तथा वाक्यगठन आदिकी दृष्टिसे कुछ प्रभावित है। बंगालीका भी इसपर प्रभाव पड़ा है। असमीकी बहुत अधिक बोलियाँ

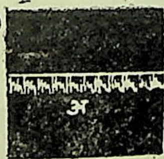
नहीं हैं । मणिपुर राज्य, सिलहट और कछारके हिन्दुओं द्वारा इसकी मयांग (इसका अन्य नाम 'विश्नुपुरिया' भी है) 'बोली' बोली जाती है। भौगोलिक कारणोंसे यह बंगलासे बहुत अधिक प्रभावित है। ग्रियर्सनका तो यहाँतक कहना है कि इसे आसानीसे बंगलाकी बोली माना जा सकता है । गारो पहाड़ियोंपर गारो और बंगाली मिश्रित बोली 'झरवा' बोली जाती है। पूर्वी असमकी असमी परिनिष्ठित मानी जाती है ।

आसामी लिपि–असममें प्रयुक्त एक लिपि। इसे प्रायः **बँगला लिपि** (दे०)से विकसित माना जाता है, किन्तु ऐसी बात है नहीं। प्राचीन नागरीके पूर्वी रूपसे मैथिली, बँगला और असमियाँ लिपियाँ विकसित हुई हैं। इन तीनोंमें पर्याप्त समानता है । असमियाँ और बँगलासे भेद केवल 'र' और 'व'का है । वर्तमान असमिया लिपि प्रेस आदिके कारण बँगलाके बहुत ही समान हो गयी है । असमिया लिपिका प्राचीनतम रूप ६१० ई०के एक ताम्रलेखमें मिलता है । इसे असमिया लिपि भी कहते हैं ।

ऑसिलोग्राफ़ (Oscillograph)––यह भाषाके अध्ययनमें प्रयुक्त एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण यंत्र है। इसमें बोलनेपर ध्वनिकी लहरें बनती हैं, जो बीचके शीशे (स्क्रीन)-पर दिखाई पड़ती हैं, और उसका फ़ोटो लिया जाता है। यह मशीन बिजलीसे चलती है । ऑसिलोग्राफ़ निम्नांकित रूपोंमें भाषा-



ध्वनिके अध्ययनमें सहायक होता है : (१) इससे ध्वनियोंके उच्चारणमें प्रयुक्त समयका बहुत ठीक पता चल जाता है। समय-रेखाकी लहरोंकी संख्या एक हजार प्रतिसेकंड होती है। (२) 'सुर'का अध्ययन भी इसके आधारपर किया जा सकता है। (३) लहरोंके स्वरूपके आधारपर घोषत्व-अघोषत्वका भी इससे बहुत अच्छी तरह पता चल जाता है। इस दृष्टिसे यह यन्त्र सर्वोत्तम माना जाता है। (४) मोटे ढंगसे ध्वनिकी तीव्रता या गम्भीरता (intensity) जाननेके लिए भी यह काफी अच्छा यन्त्र है, यद्यपि गम्भीरता-मापक (intensitymeter) जैसा आदर्श नहीं। (५) ध्वनियोंके तरंगीय स्वरूपका भी इससे पता चल जाता है। स्वरकी लहरें नियमित (regular तथा repetitive) होती हैं। स्पर्शोंकी लहरोंमें नियमितता बिल्कुल नहीं होती। उनका स्वरूप बड़ा जटिल होता है। अन्तस्थ(नासिक्य, पार्श्विक, लुंठित, संघर्षी आदि) एक प्रकारसे दोनोंके बीचमें पड़ते हैं। नासिक्यका कुछ नियमित; स, ज़ आदिकी अव्याहृत और सम होती हैं।



'अ' का ऑसिलोग्राम

आस्ट्रिक परिवार—एक भाषा परिवार जिसके बोलनेवाले भारत, हिन्देशिया, मैलेनेशिया, पैलेनेशिया मैडागास्कर, न्यूज़ीलैंड, ईस्टर द्वीप आदिमें हैं। इसे आस्ट्रिक नाम देनेका श्रेय पेटर डब्ल्यू० श्मिटको है। कुछ लोग इसे **आग्नेय परिवार** भी कहते हैं। इसके अंतर्गत मूल शाखाएँ दो मानी गयी हैं : (१) **आस्ट्रोनेशियन, या मलय पैलेनेशियन** तथा (२) **आस्ट्रो एशियाटिक**। प्रथमका संबंध प्रशांत महासागरीय द्वीपोंकी भाषाओंसे है। इसमें **इंडोनेशियन** (दे०) **माइक्रोनीशियन,** (दे०) **मैलेनेशियन, पैलेनेशियन** (दे०) **पापुआ** (दे०) और **आस्ट्रेलियन** आदि भाषाएँ आती हैं, इन्हें भी अलग-अलग परिवार कहा जाता है किन्तु वस्तुतः ये आस्ट्रिक परिवारके ही अंतर्गत हैं। आस्ट्रो एशियाटिकमें भारत, बर्मा तथा आसपासकी भाषाएँ आती हैं, जिनको **मोन-ख्मेर शाखा** (मोन, पलौंग, वा, यंगलम, दनव, खासी, नीकोबारी), **मुंडा शाखा** (खेरबारी, कुर्कू आदि) वर्गोंमें बाँटा जा सकता है।

इसकी प्रमुख विशेषताएँ केवल तीन हैं : (१) इस परिवारकी भाषाएँ अश्लिष्ट-योगात्मक हैं, पर अब कुछ वियोगावस्थाकी ओर बढ़ रही हैं। (२) धातुएँ प्रायः दो अक्षरोंकी होती हैं। (३) पद बनानेके लिए आदि, मध्य और अन्त तीनों ही स्थानोंपर योग होता है। भाषाओंपर अलग-अलग विचार करते समय अन्य विशेषताओंपर विस्तारसे विचार किया जा सकेगा। मूलतः एक होनेपर भी अलग-अलग हो जानेसे इस परिवारकी भाषाओंमें भिन्न-भिन्न प्रकारकी विशेषताएँ विकसित हो गयी हैं, जो पूरे परिवारमें नहीं पायी जातीं, अतः एक स्थानपर उनपर प्रकाश नहीं डाला जा सकता।

आस्ट्रेलियन परिवार—आस्ट्रिक परिवार (दे०)की **मलय पैलेनेशियन** शाखाका एक वर्ग जो प्रायः परिवार कहा जाता है। इस परिवारकी भाषाओंका क्षेत्र आस्ट्रेलिया और तस्मानिया है। ये अश्लिष्ट-योगात्मक हैं। पद अधिकतर प्रत्यय जोड़कर बनाये जाते हैं। तस्मानियासे इस परिवारकी भाषा समाप्त हो गयी। आस्ट्रेलियामें भी इसके बोलनेवाले दिनपर दिन कम ही होते जा रहे हैं। कुछ लोगोंने इस परिवारको द्रविड़ परिवारसे जोड़नेका प्रयास किया था, पर यह मतमान्य नहीं हो सका। इसकी प्रधान भाषा **मैक्वारी** है, जो उसी नामकी झीलके पास बोली जाती है। **कमि-**

लरोई भाषाका क्षेत्र भी उसके पास ही है। और भी कुछ छोटी-छोटी भाषाएँ हैं, जिनका विशेष महत्त्व नहीं है।

आस्ट्रो एशियाटिक—**आस्ट्रिक परिवार** (दे०)-की एक शाखा।

आस्ट्रोनेशियन परिवार—भाषाओंका एक परिवार (दे०) **प्रशांत महासागरीय खंड**।

आस्य—मुख, जिसमें उच्चारण होता है।

आस्य प्रयत्न—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**-में प्रयत्न उपशीर्षक।

आहमिया—**आसामी** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

आहाण—**लोकोक्ति** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक 'प्राकृत' नाम।

आहाणय—**लोकोक्ति** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक 'प्राकृत' नाम।

आहोम (ahom)—चीनी परिवारकी एक स्यामी या 'ताई' भाषा, जो पहले असम आदिमें बोली जाती थी। अब यह विलुप्त हो चुकी है, केवल कुछ धार्मिक कार्योंमें ही इसका प्रयोग होता है। इसे 'अहोम' भी कहते हैं।

इ

इंक राइटर—एक प्रकारका विकसित **कायमोग्राफ** (दे०)।

इंगित सिद्धान्त (gestural theory)—भाषा-उत्पत्तिका एक सिद्धान्त। (दे०) **भाषाकी उत्पत्ति**।

इंगुश (ingush) **काकेशन परिवार** (दे०)-की एक चे चेन बोली।

इंगैन (ingain)—दक्षिणी अमेरिकाके **जे** (दे०)परिवारके दक्षिणी वर्गकी एक भाषा।

इंग्रिअन (ingrian)—**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी एक फिनिश बोली।

इंजंग (injang)—**रेंगमा** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

इंजेमी (inzemi)—**एम्पेओ** (दे०)की, नागा पहाड़ियोंमें प्रयुक्त, एक बोली।

इंटरग्लॉसा (interglossa)—हॉगबेन नामक विद्वान् द्वारा, स्थानप्रधान भाषाओंकी पद्धति एवं ग्रीक-लैटिन धातुओंके आधारपर, प्रस्तावित एक कृत्रिम भाषा।

इंटरलिंगुआ (Interlingua) (१) गिउसेपो पेअनो द्वारा बनायी गयी, १९०८ में सर्वप्रथम प्रयुक्त एक कृत्रिम विश्व भाषा। (२) अन्तर्राष्ट्रीय सहकारी भाषा संस्था (international auxiliary language association) द्वारा बनायी गयी एक कृत्रिम भाषा।

इंटीबुकट (intibukat)—मध्य अमेरिकाके **लेन्का** (दे०) भाषापरिवारकी एक विलुप्त भाषा।

इंटेंसिटीमीटर (intensitymeter)—ध्वनिकी तीव्रता (intensity) मापनेके लिए बनाया गया एक यंत्र।

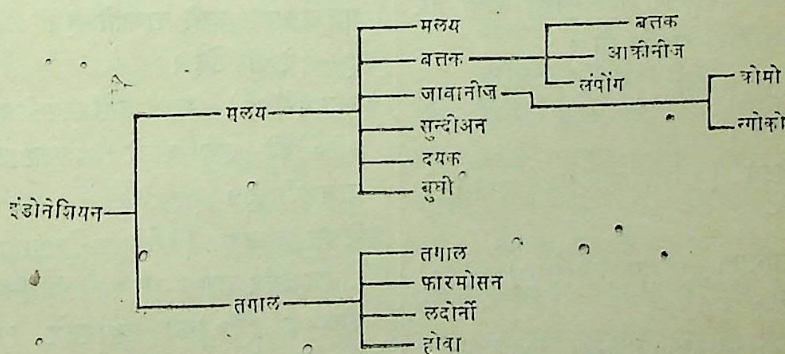
इंडिक (indic)—भारोपीय परिवारकी सतम् शाखाकी आर्य उपशाखाकी भारतीय शाखा। सभी भारतीय आर्य भाषाएँ (संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश तथा हिन्दी आदि आधुनिक भाषाएँ एवं कश्मीरी, नेपाली, सिंहली) इसीके अंतर्गत आती हैं।

इंडो-केल्टिक—**भारोपीय परिवार** (दे०)का एक नाम।

इंडो-जर्मनिक—**भारोपीय परिवार** (दे०)का एक अन्य नाम।

इंडोनेशियन परिवार—**प्रशांत सागरीय भाषा-खंड**, (दे०)का एक परिवार। इसे **मलय** या **मलायन परिवार** भी कहते हैं। वस्तुतः यह **आस्ट्रिक परिवार** (दे०)के अंतर्गत है। इसमें आदि, मध्य, अन्त तीनों स्थानोंमें **संबंधतत्त्व** (दे०) जोड़कर पद बनाये जाते हैं, पर प्रधानता आदिमें जोड़नेकी है। यह परिवार अधिक विकसित नहीं है। शब्द और धातुओंमें अधिक अन्तर नहीं है। एक ही शब्द संज्ञा, क्रिया, क्रियाविशेषण आदि

सभीका समय पड़नेपर कार्य करता है। उदाहरणार्थ मलय भाषाके 'सकित' शब्दका अर्थ बीमार, बीमार होना तथा बीमारी आदि सभी होता है। बहुवचन बनानेके लिए अधिकतर पुनरुक्ति कर दी जाती है। मलायनमें रज = राजा और रजरज = बहुत-से राजे। इस परिवारका क्षेत्र पहले भारत-का उपनिवेश-सा था, अतः संस्कृतके शब्द यहाँ काफी मिलते हैं। हाँ, उनमें ध्वनि-परिवर्तन अवश्य बहुत अधिक हो गया है। इसके अतिरिक्त फारसी, अरबी, पुर्तगाली तथा डच शब्द भी हैं। कुछ तो उदाहरण ऐसे हैं, जिनमें दो भाषाओंके शब्द मिलकर यहाँ एक शब्द हो गये हैं। अरबी और संस्कृतका योग = जवाहर-मनिकम = रत्न। यहाँके नामोंमें संस्कृत शब्द अधिक मिलते हैं। आजकलके वहाँके प्रसिद्ध नेताका नाम सुकार्नो (सुकर्ण) है। ब्रोमो (ब्रह्मा), जोग्य-कर्त (अयोध्याकृत) तथा जसविदग्ध (यशो-विदग्ध) आदि अन्य उदाहरण भी देखे जा सकते हैं। नागरी, अरबी और रोमन तीनों ही लिपियाँ कुछ परिवर्तित होकर यहाँ काम-में आती हैं। **विभाजन**--



मलय प्रायद्वीप, सुमात्राके एक भाग, एवं बोर्नियोके किनारे **मलय** भाषा बोली जाती है। यहाँ अब रोमन लिपिका प्रयोग होने लगा है। **बत्तक** वर्गकी तीनों बोलियोंका क्षेत्र सुमात्रा है। जावाके आधेसे अधिक आदमी (लगभग २ करोड़) **जावानीज़**का प्रयोग करते हैं। इस भाषाका नाम 'कवि' भी है, जिसका अर्थ 'कविकी भाषा' है। 'कवि' साहित्यिक भाषा है। इसके ८वीं सदीतकके लेख मिलते हैं। वर्तमान जावा-नीज़के दो रूप हैं। प्रथम **क्रोमो** है, जिस-का प्रयोग राजकीय कार्यों एवं साहित्यमें होता है। दूसरी **न्गोको** है जिसका प्रयोग नीची श्रेणीके लोग करते हैं। जावामें ही **सुन्दीअन**के भी कुछ बोलनेवाले हैं। **दयक** भाषी बोर्नियोके मध्य और उत्तरी भागमें रहते हैं। **बुगी** और उसीकी संगिनी **मका-सार** भाषाएँ सेलीबीज़में बोली जाती हैं। **तगाल** फिलिपाइनकी भाषा है। **फारमोसन्** भाषा फारमोसामें बोली जाती है। इसपर चीनीका प्रभाव अधिक पड़ा है। लदोर्न द्वीप-में **लदोर्नी** और मैडागास्करमें **होवा** बोली जाती है। होवाका दूसरा नाम **मलगसी** भी है। **इलोकानो** (दे०), **मदुरन** (दे०), **बाली** (दे०), **बिसया** (दे०), **बोंतोक** (दे०), **बुगिनी** (दे०), **मोरो** (दे०), **म्वाला** (दे०), **पंपन्गन** (दे०), **पैंगैसिनन** (दे०) भी इसी-के अन्तर्गत हैं।

इंडोबैक्ट्रियन लिपि--**खरोष्ठी** (दे०) लिपि-का एक अन्य नाम।

इंत--(दे०) **इंथा**।

इँतलई--(दे०) **यितलइ**।

इंथा--दक्षिणी शान प्रान्तमें प्रयुक्त **बर्मी** (दे०) भाषाकी एक बोली। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, इसके बोलनेवालोंकी

संख्या लगभग ६०,८८१ थी। इसे 'इंत' भी कहते हैं।

इंदू—(दे०) **यिदू**।

इंदोस्तान (indostan)—**हिन्दोस्तानी**के लिए प्रयुक्त एक प्राचीन अंग्रेज़ी नाम।

इ (i)—**स्वेल्शिन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

इओव (iowa)—**चिवेरे** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

इकार—इ के लिए प्रयुक्त नाम। (दे०) **कार**।

इकितो (ikito)—दक्षिणी अमेरिकाके **ज़ापरो** (दे०) परिवारकी एक भाषा।

इक्सिल (ixil)—मध्य अमेरिकाकी **मय** (दे०) भाषाकी एक बोली।

इच्छार्थक (desiderative)—इच्छाको व्यक्त करनेवाला।

इच्छावाचक (desiderative) इच्छाको व्यक्त करनेवाला।

इच्छावाचक प्रत्यय—एक प्रकारका **प्रत्यय** (दे०)।

इच्छासूचक—इच्छाको व्यक्त करनेवाला।

इच्छासूचक प्रत्यय—(दे०) **इच्छावाचक प्रत्यय**।

इच्छासूचक वाक्य—ऐसा वाक्य जिसमें वक्ताकी किसी इच्छाका भाव व्यक्त होता हो, जैसे—तुम्हारी उन्नति हो।

इजो (ijo)—**जो** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

इटिओक्रीटन (eteocretan)—(दे०) **क्रीटन**।

इटिटो-सिप्रियन (eteocyprian)—(दे०) **सिप्रिओटे**।

इटुकले (itukale)—**पनो** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसका अन्य नाम **उररीना** (urarina) है।

इटेल्मिक—**कमचदल** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

इटैलिक—यह भारोपीय परिवारकी केंतुम वर्गकी एक शाखा है। इसे **इतालवी**, या लैटिन शाखा भी कहते हैं। कुछ अन्य भाषाओंकी भाँति ही इसकी भी आरंभमें 'प' और 'क' दो शाखाएँ थीं—

लैटिन — **ओस्कन**

क्वाम — पाम

येकुअस — येपो

'क'वर्गको प्राचीन लैटिन या लैटिन वर्ग तथा 'प'वर्गको ओस्कन-अम्ब्रिअन वर्ग कहा जाता है। 'प' वर्गमें **ओस्कन**, **अम्ब्रिअन**, **सैबाइन** आती हैं। 'क' वर्गमें मूल उपशाखाएँ दो हैं: (१) **क्लासिकल लैटिन**, **डोंगलैटिन** या **निम्न लैटिन**; (२) ग्राम्य या वल्गर **लैटिन** (vulger या Neo-latin)। इसी **वल्गर लैटिन**से रूमानियन, इतालवी, पुर्तगाली, स्पैनिश या स्पेनी, फ्रेंच या फ्रांसीसीतथा सेफ़ार्दी (दे०) आदि **रोमांस भाषाएँ** (दे०) विकसित हुई हैं। 'क' और 'प'का आधार छोड़कर इस पूरी शाखाको तीन शाखाओंमें बाँटा गया है: (क) **लैटिनो-फ़ैलिस्कन**, (ख) **ऑस्को-युम्ब्रिअन** तथा (ग) **सैबेलियन**। इनको कोशमें यथास्थान देखा जा सकता है।

इटोनम (letonama)—**दक्षिणी अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी है।

इट्—(दे०) **सेट्**।

इट्ज़ा (itza)—मध्य अमेरिकाकी **मय भाषा** (दे०)की एक बोली। इसका एक **पेटेन** नाम भी है।

इडियम न्यूट्रल (Idiom-Neutral)—रोज़ेन बर्गर नामक एक रूसी इंजीनियर द्वारा **वोलपूक** (दे०)को सुधारकर १९०३ में बनायी गयी एक कृत्रिम विश्व-भाषा।

इडो (ido)—१९०७'में लूइ द ब्यूफ़ॉन्त (louis de beaufront) द्वारा **एसपिरैंतो** (दे०)के आधारपर निर्मित एक कृत्रिम भाषा।

इतरेतरद्वंद्व समास—(दे०) **समास**।

इतरेतर परिवर्ती ध्वनिग्राम (morphophoneme)—किसी शब्दमें एक दूसरेका

स्थान ले लेनेवाले **ध्वनिग्राम** ।

इतालवी—इटली, टिसिनो, सिसिली तथा कार्सिकाकी भाषा । इसका संबंध भारोपीय परिवारकी केंतुम शाखाकी इटैलिक उपशाखासे है । 'इतालवी' नामका संबंध देशके नामसे है । देशका नाम 'इतालिया' ३री सदी ई० पू० में सर्वप्रथम पड़ा । मूल शब्द ग्रीकका 'वाइतालिया' है जिसका अर्थ 'चरागाह' होता है । यूनानवाले इटलीको चरागाह कहा करते थे । इतालवी भाषाके प्राचीनतम नमूने कुछ शब्दोंके रूपमें यों तो ७वीं, ८वीं और ९वीं सदीके भी मिलते हैं, किंतु साहित्यिक रचनाओं आदिके रूपमें भाषाका व्यवस्थित प्रयोग १३वीं सदीसे आरंभ हुआ । तबसे अबतक इतालवीमें पर्याप्त और उच्चकोटिका साहित्य लिखा गया है । यहाँ प्रसिद्ध साहित्यकारोंमें **फ्राचेस्को, गुइत्तोने द' आरेज्जो, दांते, पेत्रार्का बोक्काच्यो, फीलेल्फो, वासारी, मात्सीनी दानुंजियो** आदि प्रमुख हैं । इतालवीकी बहुत-सी बोलियोंमें, जिनमें कुछ बहुत अलग हो गयी हैं, साहित्य रचना हुई है । इनमेंसे **पीमौंते, लिगूरिअन, लोंबर्दियन, एमिलियन** आदि कुछ बोलियोंका उल्लेख किया जा सकता है । आजकी परिनिष्ठित और साहित्यिक इतालवी मूलतः फ्लोरेंसकी **फ़ियोरेंतीवो** बोलीपर आधारित है । दांते आदिने जिस भाषाका प्रयोग किया है वह वस्तुतः **तुस्कन** (दे०) बोली है । इतालवी भाषाका विकास ग्राम्य लैटिन (vulgar latin)से हुआ है । यह एक रोमांस भाषा है । इतालवी बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ६,००,००,००० है । **कोर्सिकन** (दे०) **कोकोलिचे** (दे०), **ईर्निशियन** (दे०), **वन्निशन** (दे०) आदि भी इसके कुछ उल्लेख्य-रूप हैं । (दे०) **मध्य इतालवी** ।

इतालवी-केल्टीक (italo-Celtik)—वह कल्पित भाषा जिससे केल्टी और इटैलिक भाषाएँ विकसित हुई हैं ।

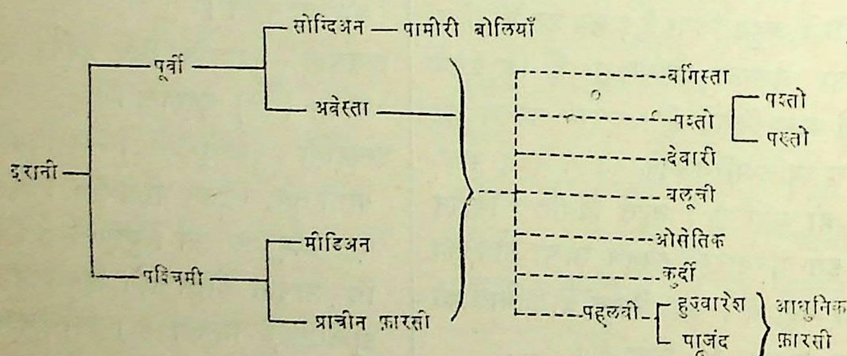
इत्—प्रत्यय, विभक्ति, आगम, धातु या शब्दादिके अंत या प्रारंभमें आनेवाली ध्वनि या ध्वनियोंका समूह जो प्रयोगके समय लुप्त हो जाता है । शाकटायनने कहा है—'अप्रयोगी इत्' । 'इत्'की कल्पना, **व्याकरणिक** उपयोगिताकी दृष्टिसे वैयाकरणोंने की है । भाषाका नियमित विश्लेषण इनके आधारपर सरल हो जाता है ।

इथिओपिअन—इथिओपिया (जिसे पहले एबिसीनिया कहते थे) में धर्म तथा धार्मिक पुस्तकों आदिमें प्रयुक्त एक भाषा । यह एबिसीनियाकी प्राचीन भाषा है । अब वहाँ अम्हारिक (amharic)का प्रचार है । इथिओपिअनकी प्रमुख बोलियाँ अम्हारिक तथा टिग्रे हैं । टिग्रे (tigre)का स्थान उत्तरमें है । **अम्हारिक** (amharic) मूलतः दक्षिणी बोली है । अन्य बोलियाँ सोमाली, गल्ला, अर्गोब्बा (argobba), गफ़ात (gafat), गुरेग (gurage), हरारी (harari) आदि हैं । इथिओपियन **सामी परिवार** (दे०)की भाषा है । इथिओपिअन साहित्य प्रमुखतः धार्मिक है । अम्हारिकमें इधर कुछ साहित्य-रचना हुई है । टिग्रे या टिग्रिनामें केवल पुराना लोक-साहित्य है । इथिओपिअनको गे'ज़ (ge'ez) **इथिओपिक, कुशिटिक** या **एबिसीनियन** भी कहते हैं । प्राचीन कुश प्रदेशके कारण कुशिटिक नाम है । इथिओपिअन वस्तुतः दो भाषाओंका नाम है । हैमिटिककी इथिओपिअन लाल सागरके पश्चिमी किनारे, पूर्वी अफ्रीकाके कोणीय भागमें है । इसे कुशिटिक कहते हैं । सोमाली, गल्ला-इसीकी बोलियाँ हैं । सेमिटिक इथिओपिअन ही प्रमुख इथिओपिअन है जिसे गेज़ भी कहते हैं । टिग्रे या टिग्रिन्या, अम्हारिक, गुरेग, हरारी, गफ़ात, अर्गोब्बा आदिका संबंध इसीसे है । अम्हारिकपर कुशिटिकका पर्याप्त प्रभाव पड़ा है ।

इथिओपिअन लिपि—**दक्षिणी सामी** (दे०) लिपिसे विकसित जिसका क्षेत्र इथियोपिआ

होगा, किन्तु दो अदूरदर्शियोंकी क्रूरताने उसे स्वाहा कर दिया। ३२३ ई० पू०में सिकन्दरने इसका काफी अंश जलवा डाला था। जो थोड़ा-बहुत बचा था उसे ६५१ ई० पू०में अरबोंने जला डाला। अब प्राचीन साहित्यके नामपर अवेस्ताके अतिरिक्त मात्र कुछ शिलालेख (हख्मानी बादशाहोंके ६ठी सदी ई० पू० के) हैं। प्राचीन साहित्यके अभावके कारण ही आधुनिक भाषाओं और बोलियोंका प्राचीन भाषाओं एवं बोलियोंसे अभीतक निश्चित संबंध-स्थापन नहीं हो सका है। ईरानीका **विभाजन** इस रूपमें किया जा सकता है :

बैक्ट्रियन भी कही जाती है। कुछ लोग भूलसे इसे **जिन्द** भी कहते हैं। इसका यह नाम इसकी प्राचीनतम पुस्तक **अवेस्ता** के कारण पड़ा है। अवेस्ताका अर्थ 'शास्त्र' है, जिसमें 'गाथा' या प्रार्थनाएँ ऋग्वेदकी भाँति हैं। इसमें यज्न (यज्ञ) विस्पेरद (बलि सम्बन्धी कर्मकांड) तथा वेन्दिदाद (प्रेतादिके विरोधी नियम) आदि भी हैं। कुछ दिन बाद जब अवेस्ता वहाँकी जनभाषा नहीं रह गयी और मध्यकालीन फारसी या पहलवीका प्रचार हुआ तो अवेस्ताकी टीका पहलवीमें की गयी। इस टीकाको **ज़ेन्द** कहते हैं। **ज़ेन्द**का अर्थ ही 'टीका' होता है। अब



[संबंधका स्पष्ट पता नहीं है, अतः अनिश्चित अंश बिन्दुसे दिखाया गया है।]

पूर्वी शाखाकी **साग्दिअन** भाषाका पता इसी सदीमें लगा है। ईसवी सन्‌के आरम्भकी तथा कुछ और बादकी ईसाई और बौद्ध धर्मकी कुछ पुस्तकें इस भाषामें मिली हैं। यह सग्दियानाकी भाषा थी, और कभी मंचूरियातक फैली थी। ऐसा अनुमान है कि पामीरी आदि बोलियाँ इसीकी बेटी हैं। यह हिन्दूकुश पर्वतपर एवं पामीरकी तराईमें प्रचलित है। **पामीरी**की प्रसिद्ध बोली **ग़लचा** है। अन्य बोलियाँ युद्ग़ा, मुंजानी, सिग़नी, सरीक़ोली, वाखी आदि हैं। साग्दिअन भाषाका समय अवेस्ताके बहुत बाद माना गया है।

अवेस्ता (जिसे **अवेस्ती** भी कहते हैं) बैक्ट्रियाकी राजभाषा होनेके कारण **प्राचीन**

दोनों शब्दों ('**ज़ेन्द**' और '**अवेस्ता**')को मिलाकर लोग उस पुस्तकको तथा कभी-कभी भाषाको '**ज़ेन्दावेस्ता**' या **जिन्दावेस्ता** कहते हैं।

मीडिअन भाषाके सम्बन्धमें केवल इसका नाम और कुछ शब्द जो यूनानी लेखकों-में मिले हैं, (एक शब्द 'स्पाक' =कुत्ता है) ज्ञात हैं। यह पश्चिमी ईरानमें प्रचलित थी। प्राचीन ईरानके पश्चिमी भागको 'फ़ारस' कहते थे। वहाँकी भाषा प्राचीन 'फ़ारसी' थी। कुछ लोग इसे 'अवेस्ता'से निकली हुई समझते हैं, किन्तु असलमें यह बात नहीं है। वस्तुस्थिति यह है कि ईरानी-की दो शाखाएँ प्राचीनकालसे ही मिलती हैं—(१) **प्राचीन फ़ारसी** (२) **अवेस्ता**।

प्राचीनतामें प्राचीन फ़ारसी अवेस्ताकी यदि बिल्कुल समकालीन नहीं तो कुछ ही बादकी है। डेरिअस प्रथम (ई० पू० ५२१-४८५) आदि एकेमेनियन राजाओंके खुदवाये कीलाक्षर अभिलेखोंमें इसका स्वरूप सुरक्षित है। इसका अलग साहित्य नहीं मिलता किन्तु अभिलेखोंमें उपलब्ध लगभग ४०० शब्दोंके आधारपर अध्ययन अवश्य हुआ है। यह बहुत-सी बातोंमें अवेस्तासे मिलती है। प्राचीन फारसीकी वर्णमाला अवेस्ताकी अपेक्षा अधिक सरल है। इस मानेमें वह संस्कृतके निकट है--

अवेस्ता	प्रा० फारसी	संस्कृत
येजी	यदी	यदि

अवेस्ताके ज़् के स्थानपर प्राचीन फारसीमें द् हो जाता है। ऐसे स्थानोंपर संस्कृतमें ह् मिलता है।

अवेस्ता	प्रा० फारसी	संस्कृत
अज़ेम	अदम	अहम्

पुरानी फारसीके पदोंके अन्तमें व्यंजन प्रायः नहीं मिलते।

संस्कृत	अवेस्ता	प्रा० फारसी
अभरत्	अबरत्	अबर

प्राचीन फारसी उस प्रदेशकी प्रमुख भाषा थी। किन्तु इसके अतिरिक्त जैबुली, हिराती आदि बोलियाँ भी थीं, जिनके विषयमें अब कुछ अधिक ज्ञात नहीं है। प्राचीन फारसीका ही विकसित रूप **मध्यकालीन फारसी** या **पहलवी** (दे०) कहलाता है। इसका प्राचीनतम रूप तीसरी सदी ई० पू०के कुछ सिक्कोंमें मिलता है। प्राचीन फारसी और मध्यकालीनके बीचका कोई लेख नहीं मिलता। पहलवीका नियमित साहित्य तीसरी सदीसे मिलने लगता है। पहलवीके दो रूप थे। एकका नाम **हुज़्वारेश** था, जिसमें सेमिटिक परिवारके शब्दोंका आधिक्य है। इसकी लिपि भी सेमिटिक है। सस्सानिद राजवंश (२२६ ई० से ६५२ ई०)की राजभाषा यही थी। अवेस्ताका कुछ अनुवाद भी इस भाषामें उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त पारसियोंका कुछ और भी धार्मिक-साहित्य इसमें है। इसके व्याकरणपर भी सेमिटिक प्रभाव यथेष्ट है। पहलवीका दूसरा रूप **पारसी** या **पाज़ंद** है। इसपर सेमिटिक प्रभाव नहीं है। इसका प्रचार पूर्वीय प्रदेशोंमें था। भारतमें बसनेवाले पारसियोंकी भाषा यही है। यही कारण है कि गुजरातीको पाज़ंदने बहुत प्रभावित किया है। जिस प्रकार अवेस्ता और प्राचीन फ़ारसी संस्कृतसे मिलती-जुलती हैं, उसी प्रकार मध्यकालीन फ़ारसी प्राकृत अपभ्रंशसे। पहलवीसे निकली **आधुनिक फ़ारसी** हिन्दीकी भाँति ही वियोगात्मक हो गयी है। इसका आरंभिक ग्रन्थ महाकवि फिरदौसी (९०४ से १०२०)का 'शाहनामा' नामक राष्ट्रीय महाकाव्य है। इसकी भाषामें अरबीके शब्द अधिक नहीं हैं, पर उसके बाद आधुनिक फ़ारसी अरबीसे लदने लगी। यह मध्यकालीनकी अपेक्षा अधिक सरल और मधुर है। ध्वनि-परिवर्तन भी इधर विशेष हुआ है। बहुतसे फ्रांसीसी शब्द भी इसमें (तेल कंपनियोंके कारण) आ गये हैं। आधुनिक फ़ारसीकी (ताजिकी) बहुत-सी प्रादेशिक बोलियाँ भी हैं। विद्वान् इस सम्बन्धमें बहुत निश्चित नहीं हैं कि कौन बोलियाँ सीधे अवेस्तासे निकली हैं, और कौन फारसीसे। टकर महोदय तो आधुनिक फारसी और पहलवीके विषयमें भी शंका करते हैं। उनका कहना है कि अवेस्ता और प्राचीन फारसीके बाद सभी ईरानी भाषाएँ एवं बोलियाँ उस समयकी बोलियोंसे विकसित हुई हैं। आज उनकी माँके विषयमें निश्चयके साथ कुछ भी नहीं कहा जा सकता। कुछ प्रधान बोलियोंपर यहाँ विचार किया जा सकता है। ये बोलियाँ इधर भारतसे लेकर उधर कैस्पियन सागरतक फैली हैं। इनमें कुछ तो प्रत्येक बातमें इतनी दूर हो गयी हैं कि पहचानी भी नहीं जातीं। **ओसेत्तिक** बोली काकेशसके एक छोटे प्रदेशमें बोली जाती है। इसकी ध्वनियोंपर

जार्जियनका अधिक प्रभाव पड़ा है। आसपासकी अन्य अनार्य भाषाओंकी भी इसपर स्पष्ट छाप है। **कुर्दी** या **कुर्दिश** बोली आधुनिक फारसीके समीप है। इसमें एक बड़ी विशेषता यह है कि शब्दोंके रूप छोटे हो गये हैं। उदाहरणार्थ आधुनिक फारसीका 'बिरादर' शब्द इसमें 'बेरा' हो गया है। इसी प्रकार 'सिपेद' (सफ़ेद) का इसमें 'स्पी' रूप मिलता है। बिलोचिस्तानकी **बिलोची** भाषा भी आधुनिक फारसीके निकट है। अभीतक यह भाषा कुछ संयोगात्मक है। प्राचीन साहित्यके नामपर इसमें केवल लोक-साहित्य है। इसमें संघर्षी वर्ण अधिकतर स्पर्श हो गये हैं। **पश्तो**का नाम **अफ़गानिस्तानी** या **अफ़गानी** भी है। यह अफगानिस्तानकी भाषा है। इसपर भारतीय ध्वनि, वाक्य-रचना, तथा बलाघात आदिका प्रभाव पड़ा है। अब यह भारतीय और ईरानीकी एक मध्यवर्ती भाषा-सी हो गयी है। इसमें १६वीं सदीके बादसे कुछ साहित्य-रचना हुई है। इसमें लोक-साहित्य भी काफी है। कुछ लोग पश्तोको सीधे अवेस्ताकी संतान मानते हैं पर यह निश्चित मत नहीं हो सका है। पश्तोके ही एक रूपको **पख़्तो** कहते हैं, जो पश्चिमोत्तर अफ़गानिस्तानमें बोली जाती है। दोनोंमें उच्चारण भेद ही प्रधान है। पश्तान या पख़्तानसे ही हिन्दीका 'पठान' शब्द निकला है। बिलोचिस्तानमें ही एक भाषा **देवारी** भी है। अफगानिस्तानके केन्द्रमें एवं सीमाप्रान्तपर **ओरमुरी** या **बर्गिस्ताँ** बोलीका क्षेत्र है। हिन्दूकुश पर्वत-पर तथा पामीरकी तराईमें बहुत-सी ईरानी बोलियाँ बोली जाती हैं, जिनके समूहको **पामीरी** कहते हैं। ये बोलियाँ गठनकी दृष्टिसे कैस्पियन सागरके तटपर प्रचलित ईरानी बोलियोंसे बहुत-सी बातोंमें मिलती-जुलती हैं।

ईषत्-दीर्घ मात्रा (half long quantity) —**मात्रा** (दे०)का एक भेद।

ईषत्पृष्ट—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**में **प्रयत्न** उपशीर्षक।

ईषत्स्पृष्ट—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**में **प्रयत्न** उपशीर्षक।

ईषत् प्रत्ययप्रधान—**आंशिक-योगात्मक** (दे०) का एक अन्य नाम।

ईषद्विवृत—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**में **प्रयत्न** उपशीर्षक।

ईसाई पैलेस्तीनी आरमेइक (christinian palestinian aramaic)—५वीं-६ठी सदीमें बाइबिलके कुछ भागोंमें प्रयुक्त एक पश्चिमी आरमेइक बोली।

उ

उंज (unza)—**रेंगमा** (दे०)का एक अन्य नाम।

उंजा (unnza)—**रेंगमा** (दे०) भाषाकी, नागा पहाड़ियों (असम)में प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ६७५० थी।

उंद्रो (undro)—**अन्द्रो** (दे०)का एक अन्य नाम।

उंबुन्दु (umbundu)—**बांटू** (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा। इस भाषाका क्षेत्र दक्षिणी अफ्रीकाके कालाहरी रेगिस्तान तथा जंबज़ीके पश्चिममें है। इसका एक अन्य नाम **नानो** भी है।

उअइकन (uaikana)—**टुकनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

उअसोना (uasona)—**टुकनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमरिकी भाषा।

उइगुर (uighur)—**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी एक भाषा।

उइगुर लिपि—सोग्दिअनसे उत्पन्न एक प्राचीन लिपि। कभी यह (१२७२ ई० तक) मंगोल

राज्यकी लिपि थी ।

उऐन्टसू (uaintasu)—**नम्बिकुअरा**(दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

उकार—उ के लिए प्रयुक्त नाम । (दे०) **कार** ।

उगरनो (ugarano)—**समुकु** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

उग्रलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललितविस्तर'में दी गयीं ६४ लिपियोंमेंसे एक ।

उग्रिक—**यूराल-अल्टाइक** (दे०)की कुछ भाषाओं (ओस्तिअक, मगियार या हुंगेरिअन, वोगल)का एक वर्ग ।

उचलिआ (uchalia)—पूना तथा सताराकी, जेबकतरोंकी एक जातिमें प्रयुक्त, **तेलुगु** (दे०)का एक विकृत तथा मराठी-मिश्रित रूप ।

उचेअन (uchean)—**यूर्ची** (दे०) परिवारका एक अन्य नाम ।

उचेन (uchen)—**तिब्बती** (दे०)का एक अशुद्ध नाम । यथार्थतः यह एक तिब्बती लिपिका नाम है ।

उच्च (high)—ऊँचा । (१)उच्च स्वर । ऐसा स्वर जिसके उच्चारणमें जीभ ऊँची उठे । जैसे ई, ऊ आदि । (२) उच्च भाषा । ऐसी भाषा जो ऊँचे प्रदेशकी हो, या जो अन्योंकी तुलनामें अच्छी या अधिक साहित्यिक हो । जैसे उच्च जर्मन ।

उच्च जर्मन—(दे०) **जर्मनिक** ।

उच्च जातीय संज्ञा—**उच्च संज्ञा** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

उच्चतर निम्नस्वर (higher low vowel)—एक प्रकारके स्वर । (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण, मानस्वर तथा स्वर वर्गीकरणकी अमेरिकी पद्धति** उपशीर्षक ।

उच्चतर मध्यस्वर (higher mib vowel)—एक प्रकारका स्वर । (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण, मानस्वर** तथा **स्वर वर्गीकरणकी अमेरिकी पद्धति** उपशीर्षक ।

उच्च बलाघात—**बालघात** (दे०)का एक रूप ।

उच्चवर्गीय संज्ञा—**उच्च संज्ञा** (दे०)का एक अन्य नाम ।

उच्च संज्ञा (high class noun)—कुछ भाषाओंमें एक संज्ञा-भेद जिसमें मनुष्य आदि तर्कशील प्राणी आते हैं । इसे **उच्चवर्गीय संज्ञा** या **उच्च जातीय संज्ञा** भी कहते हैं । (दे०) **निम्न संज्ञा** ।

उच्चसुर—सुर (दे०)का एक भेद ।

उच्चस्वर (high vowel)—एक प्रकारका स्वर । (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण, मानस्वर** तथा **स्वर वर्गीकरणकी अमेरिकी पद्धति** उपशीर्षक । उच्चस्वरोंके उच्चारणमें जीभ अपेक्षया ऊपर उठती है । इसे संवृत या अर्द्धसंवृत स्वर भी कहते हैं ।

उच्चारण—बोलना, उच्चारण करना । मुखमें प्रयत्न द्वारा भाषा-ध्वनि उत्पन्न करना ।

उच्चारण-आधार (basis of articulation)—उच्चारण अवयवोंकी वह मूल या उदासीन स्थिति जिसे आधार मानकर किसी भाषा विशेष या भाषाओंकी विभिन्न ध्वनियोंके उच्चारणका प्रयत्न, स्थान आदिकी दृष्टिसे विश्लेषण किया जाता है । इसे **उच्चारणावयवोंकी मूलस्थिति** भी कहा जा सकता है ।

उच्चारण स्थान—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें उच्चारण-स्थान** उपशीर्षक ।

उच्चारणस्थान-परिवर्तनात्मक अपश्रुति—**गुणीय अपश्रुति** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

उच्चारणावयवोंकी मूलस्थिति—(दे०) **उच्चारण आधार** ।

उच्चार्द्ध बलाघात—**बलाघात** (दे०)का एक भेद ।

उच्ची—**लहँदा** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

उच्छी—**मुलतानी** (दे०)का एक दूसरा नाम । इस नामका आधार 'उच्छ' या 'ऊच'

नगर है।

उच्लिआ (uchlia)—उचलिआ (दे०) का एक और नाम।

उज़बेक (uzbek)—**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी भाषा। इसका क्षेत्र उज़बेकिस्तान है। इसे उज़बेक नामके तुर्क जातिके लोग बोलते हैं। उज़बेक भाषाकी कई बोलियाँ हैं जिनमें **जगतई** सर्वप्रमुख है; इसमें साहित्य-रचना भी हुई है।

उजानिआ (ujania)—**सिलहटिआ** (दे०) का एक दूसरा नाम।

उज्जैनी—**मालवी** (दे०) का एक अन्य नाम।

उज्ज्वलस्वर (bright vowel)—**अग्र-स्वर** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य पारिभाषिक शब्द।

उटे-चेमेहुएवी (ute-chemehuevi)—**प्लेटो** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इस भाषाकी कई एक बोलियाँ हैं।

उटो-अज़टेक (uto-aztek)—**उत्तरी अमेरिकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार। इस परिवारमें **शोशोन** (दे०), **पिमा-सोनोर** (दे०) तथा **नहुअट्ल** (दे०), तीन वर्ग हैं। इन तीन वर्गोंमें लगभग ६५ भाषाएँ हैं। यह परिवार पूरे अमेरिकाके अत्यंत प्रमुख परिवारोंमें एक है। मूलतः इनका क्षेत्र नेवादा, दक्षिणी इडाहो, दक्षिणी कैलिफ़ोर्निया, पश्चिमी कोलोरेडो, उत्तरी-पूर्वी न्यूमैक्सिको, टेक्सास, दक्षिणी ऐरिज़ोना, मैक्सिको, पनामा आदिमें एक बहुत बड़ा भूभाग था। इसको बोलनेवाली बहुत-सी जातियाँ विलुप्त हो चुकी हैं, फिर भी लगभग ५० जातियोंके लोग अब भी इसे बोल रहे हैं। बोलनेवालोंकी संख्या युनाइटेड स्टेट अमेरिकामें २४,००० तथा मेक्सिकोमें १८,००,००० है। कुछ लोग मध्य अमेरिकामें भी हैं।

उड्र विभाषा—**उड़िया** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम।

उड़िया—उड़ीसा प्रांत; बंगालमें दक्षिणी-पश्चिमी मेदनीपुर; आँध्रमें टेक्कालि, उद्यानखंड, तरला, इच्छापुर आदि; बिहारमें सिंहभूमि, सराईकैला, खरसुआ आदि, तथा मध्यप्रदशमें रायगढ़, सारगढ़, काँकेर, बस्तर आदिमें ६०,१९७ वर्गमीलमें लगभग १ करोड़ ५० लाख लोगों द्वारा बोली जानेवाली एक आधुनिक भारतीय आर्यभाषा। इसका संबंध मागधी अपभ्रंशके दक्षिणी भागसे है। उड़ियाको उड़ियाभाषी 'ओड़िया' कहते हैं। इसके अन्य नाम **ओरिया, उरिया, उत्कली, ओड्री** आदि हैं। उड़ीसाका **प्राचीन** नाम कलिंग, 'उड्र देश' या 'उत्कल' मिलता है। 'उड्र' या 'ओड्र' का संबंध द्रविड़ धातु 'ओड' से ज्ञात होता है। 'ओड' का अर्थ होता है 'खेती करना'। उसीसे द्रविड़ शब्द 'ओडिसु' बना है, जिसका अर्थ है किसान। यह 'ओडिसु' ही उड़िया भाषामें 'ओडिशा' हो गया। आज भी उड़िया-भाषी अपने देशको 'उड़ीसा' न कहकर 'ओडिशा' ही कहते हैं। 'स' का 'श' मागधीकी प्रवृत्तिके कारण हो गया है। 'ओडिशा' ही अन्य क्षेत्रोंमें 'उड़ीसा' हो गया है। भाषाका नाम 'ओड़िया' भी 'ओडिशा' का ही विकसित रूप है। 'श' के लोप एवं य-श्रुतिके आगमसे यह 'ओड़िया' बना है, जिसके 'ओ' को कोमल बनाकर उ (उड़िया) कर लिया गया है। कुछ विद्वान् 'ओड्र' को संस्कृत शब्द मानकर ओड्रविषय (> ओड्रविष >ओडिष>ओडिशा) से 'उड़ीसा' शब्दको संबद्ध करते हैं, किन्तु यह व्युत्पत्ति युक्तियुक्त नहीं ज्ञात होती। 'ओड्र' शब्द मूलतः संस्कृतका नहीं ज्ञात होता। इसमें संस्कृतीकरणकी गंध स्पष्ट है।

उड्र विभाषाके रूपमें उड़िया भाषाका प्राचीनतम उल्लेख भरतके नाट्यशास्त्रमें ('शबराभीरचाण्डालसचलद्राविडोड्रजाः। हीना वनेचराणां च विभाषा नाटके स्मृताः॥') आता है। इसका आशय यह हुआ कि उस कालतक प्राकृतके एक स्थानीय रूपके रूपमें इसकी कुछ विशेषताएँ विकसित हो चुकी थीं। बीम्सने यह ठीक ही कहा

है कि 'बंगालीके एक निश्चित भाषा बनने-के पूर्व ही उड़िया एक निश्चित भाषा बन चुकी थी।' उड़िया भाषाके प्राचीनतम स्पष्ट नमूने १०५१ ई०के अनन्तवर्माके उरजम शिलालेखमें मिलते हैं। उड़िया साहित्यको आदिकाल (११वीं से १५५० तक), मध्यकाल (१५५०-१८५०), आधुनिक काल (१८५०--), इन तीन कालों-में बाँटा जाता है। हिन्दी साहित्यकी भाँति ही मध्यकालके पूर्व और उत्तर दो उपकाल बनते हैं, जिनको साहित्यिक प्रवृत्तियोंकी दृष्टिसे क्रमशः भक्तिकाल और रीतिकाल कहा जा सकता है। आदिकालके कवियोंमें लुइपा, शवरीपा आदि 'बौद्धगान ओ दोहा'के कवि, सारलादास (सच्चे अर्थोंमें उड़ीसाके आदि कवि ये ही हैं; इनके प्रमुख ग्रंथ 'महा-भारत' तथा 'विलंका रामायण' हैं) प्रमुख हैं। मध्ययुगीन कवियोंमें भक्तोंमें बलराम-दास, जगन्नाथदास आदि पंचसखा तथा साल-वाग आदि मुख्य हैं तथा रीतिकारोंमें उपेन्द्र-भंज प्रमुख हैं। इन्हींके आधारपर इस युगको भंजयुग कहा जाता है। आधुनिक कालमें उड़िया साहित्य पर्याप्त संपन्न हो गया है।

परिनिष्ठित उड़िया कटकके आसपासकी है, जिसे 'कटकी' कहा जा सकता है। आंध्र सीमापर इसकी एक बोली 'गंजामी' है जो तेलुगुसे बहुत अधिक प्रभावित है। मयूरभंज तथा बालासोर आदिमें उत्तरी सीमापर भी इसकी बंगाली मिश्रित कई बोलियाँ-उपबोलियाँ हैं, किन्तु उनके लिए अलग नाम नहीं हैं। संभलपुरमें इसकी 'संभलपुरी' या 'लरिया' बोली बोली जाती है। इसपर छत्तीसगढ़ीका प्रभाव पड़ा है। ग्रियर्सनने केवल 'भत्री'को उड़ियाकी विशुद्ध बोली माना है। 'भत्री' वस्तुतः उड़ियाका मराठीसे प्रभावित रूप है, जो बस्तरमें प्रयुक्त होता है। उड़ियापर ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक कारणोंसे बंगाली, मराठी, मुंडारी, तेलुगु, कुई आदिका प्रभाव पड़ा है। उड़िया लिपि अपनी है जो ब्राह्मीकी उत्तरीशैलीसे विकसित है, किन्तु इसपर तेलुगु लिपिका प्रभाव पड़ा है। तालपत्रपर लोहेकी कलमसे लिखनेके कारण यह लिपि कुछ वर्तुलाकार हो गयी है।

उड़िया लिपि--उड़ीसामें प्रयुक्त यह लिपि पुरानी नागरीकी पूर्वी शैलीसे विकसित हुई है, पर इसपर दक्षिणकी तेलुगु तथा तमिल लिपियोंका प्रभाव पड़ा है और इसी कारण बड़ी कठिन हो गयी है। कुछ लोग इसे पुरानी बँगला लिपिसे तथा कुछ लोग 'कुटिल'से (दे० **बँगला लिपि**) निकली मानते हैं। इसके दो रूप 'करनी' तथा 'ब्राह्मणी' नामसे प्रसिद्ध हैं। ब्राह्मणी ताड़पत्रोंपर लिखनेमें प्रयुक्त होती रही है और करनी कागजपर। गंजाम ज़िलेमें उड़ियाका एक और रूप मिलता है जिसके अक्षर अपेक्षाकृत और भी वर्तुलाकार हैं। लोगोंका अनुमान है कि तालपत्रपर लौह लेखनीसे सीधी रेखा बनानेसे तालपत्रके कट जानेका डर था, इसी कारण यह लिपि वर्तुलाकार हो गयी। इस लिपिका विकास १९वीं सदीके आसपास हुआ।

ଅ ଆ ଇ ଈ ଉ ଊ ଋ ଌ ଏ ଐ ଓ ଔ

କ ଖ ଗ ଘ ଙ ଚ ଛ ଜ ଝ ଞ ଟ ଠ

ଡ ଢ ଣ ତ ଥ ଦ ଧ ନ ପ ଫ ବ ଭ

ମ ଯ ର ଲ ଵ ଶ ଷ ସ ହ ଳ

[उड़ियाकी इस वर्णमालामें क्रमसे अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, लृ, ए, ऐ, ओ, औ, क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म, य, र, ल, व, श, ष, स, ह, ळ अक्षर हैं।]

उणादि—'उण्' आदि उन प्रत्ययोंको 'उणादि' कहा गया है, जिनके आधारपर, ऐसे शब्दोंकी भी धातुपर आधारित व्युत्पत्ति दी जा सकती है, जो सामान्य पाणिनीय नियमोंसे सिद्ध नहीं होते। इस वर्गका प्रथम प्रत्यय 'उण्' है, इसी कारण इनकी संज्ञा 'उणादि' है। ये एक प्रकारके **कृत्** (दे०) प्रत्यय हैं। इनके आधारपर देशज तथा विदेशी (जैसे दीनार आदि)शब्दोंको भी संस्कृत धातुओंपर आधारित सिद्ध करनेका प्रयास पंडितोंने किया है। कुछ लोगोंके अनुसार उणादि प्रत्यय पाणिनिके बादके हैं। यों, इनकी कल्पनाका आधार यास्कका मत है (सर्वानि नामानि आख्यातजातानि) जिसके अनुसार सभी संज्ञा शब्द धातुओंसे बने हैं। उणादिके आधारपर दी गयी व्युत्पत्तिको वैयाकरण शास्त्रीय अर्थमें कदाचित् व्युत्पत्ति नहीं मानते रहे हैं। पतंजलि कहते हैं: 'उणादि योऽव्युत्पन्नानि प्रातिपदिकानि'। यों अन्यत्र उन्होंने विरोधी मत भी व्यक्त किया है।

उत्कली (utakali)—**उड़िया** (दे०)का एक अन्य नाम।

उत्क्षिप्त (flapped)—**प्रयत्न** (दे०)के आधारपर किया गया व्यंजन ध्वनियोंका एक भेद। जीभको लपेटकर तालुको झटकेसे मार उसे फिर सीधा कर लेनेसे जो व्यंजन उत्पन्न होते हैं, उन्हें 'उत्क्षिप्त' कहते हैं। हिन्दी ड़, ढ़ उत्क्षिप्त हैं। इन्हें **ताड़नजात** भी कहते हैं।

उत्क्षेपलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयीं ६४ लिपियोंमेंसे एक।

उत्क्षेपावर्तलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयीं ६४ लिपियोंमें-से एक।

उत्तम पुरुष—एक पुरुषवाचक सर्वनाम। (दे०) **सर्वनाम**।

उत्तमावस्था—(दे०) **विशेषण**।

उत्तर—परवर्ती, बादका (पद, शब्द या ध्वनि आदि)।

उत्तरकुरुद्वीप लिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयीं ६४ लिपियोंमेंसे एक।

उत्तरखंडी—**अवधी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

उत्तरपद—समास या समस्तपदमें बादमें आनेवाला पद या शब्द। यह 'पूर्वपद'का उलटा है। उदाहरणार्थ 'राजपुत्र'में 'राज'पूर्व पद है और 'पुत्र'उत्तरपद।

उत्तरात्मक सुर—**सुर** (दे०)का एक भेद।

उत्तरावस्था—(दे०) **विशेषण**।

उत्तरी—**अवधी** (दे०)का रीवाँमें प्रयुक्त एक नाम।

उत्तरी अपभ्रंश—डॉ० याकोबीके अनुसार **अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

(अ)**उत्तरी अमेरिकी वर्ग**—**अमेरिकी भाषाओं** (दे०)का उत्तरी अमेरिकामें स्थित एक भौगोलिक वर्ग। इसमें निम्नलिखित २५ भाषा-परिवार हैं: (१) अलगोन्किन (algonkin), (२) बेओथुक (beothuk), (३) चिमाकुम (chimakum), (४) होक (hoka), (५) इरोक्वोइस (iroquois), (६) कड्डो (kaddo), (७) केरेसन (keresan), (८) किओव (kiowa), (९) क्लमाथ (klamath), (१०) कुटेनै (kutenai), (११) मुस्खोगी (muskhogi), (१२) ना-डेने (na-dene), (१३) पेनुटिअन (penutian), (१४) शहप्टिन (shahaptin), (१५) सलिश (salish), (१६) सिऑक्स (sioux), (१७) टनो (tano), (१८) टिमुकुआ (timukua), (१९) टुनिका (tunika), (२०) उटो-अज़्टेक (outo-aztek), (२१) वईलट्पू (waiilatpu), (२२) वकश (wakash), (२३) युकी (yuki), (२४) यूची (yuchi) और (२५) ज़ूनी (zuni)। इन परिवारोंको कोशमें **यथास्थान** देखा जा सकता है।

उत्तरी अरबी—**अरबी** (दे०)के लिए भाषा वैज्ञानिक वर्गीकरणके आधारपर कभी-कभी प्रयुक्त एक नाम। (दे०) **सेमिटिक परिवार**।

उत्तरी आर्यन––खोतानी (दे०)का एक अन्य नाम।

उत्तरी कड्डो (northern kaddo)––कड्डो (दे०) परिवारका एक उप-वर्ग। इस वर्गकी प्रमुख भाषा **अँरिकर** (arikara) है।

उत्तरी चिन (northern chin)––चीनी परिवारके तिब्बती-बर्मी उपपरिवारकी असमी-बर्मी शाखाके कुकी-चिन वर्गका एक उप-वर्ग। इस उप-वर्गके अंतर्गत, **'थादो'** (दे०), **सोक्ते** (दे०), **सियिन** (दे०), **राल्ते** (दे०) तथा **पैते** (दे०) भाषाएँ आती हैं। १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ८३,०३३ थी।

उत्तरी जे (northern ze)––दक्षिणी अमेरिकाके **जे** (दे०) परिवारका उत्तरी वर्ग। इसमें **तिम्बिरा, सकमेक्रन, मकमेक्रन** तथा **पुरेकमेक्रन** आदि भाषाएँ हैं।

उत्तरी पश्चिमी द्रविड़––ब्राहुई (दे०)के लिए कभी-कभी प्रयुक्त एक नाम। ब्राहुईका क्षेत्र उत्तर-पश्चिममें है, इसी लिए उसे इस नामसे अभिहित किया गया है।

उत्तरी-पश्चिमी लहँदा––हिन्दको (दे०)का एक अन्य नाम।

उत्तरी-पश्चिमी शिणा (north western shina)––**शिणा** (दे०)की **पुनिआली** (दे०) बोलीका एक अन्य नाम।

उत्तरी-पूर्वी पश्तो (north eastern pashto)––पश्तो(दे०)की दो प्रमुखमेंसे एक बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार––८,०६,९७४ के लगभग थी।

उत्तरी-पूर्वी राजस्थानी––(दे०) **राजस्थानी**।

उत्तरी-पूर्वी लहँदा (north eastern lahnda)––लहंदा (दे०)के विभिन्न रूपोंका, उत्तरी-पश्चिमी पंजाबमें प्रयुक्त एक वर्ग। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,७५२,७५५ थी।

उत्तरी बिलोची––पूर्वीय बिलोची (दे०)का, उत्तरी-बिलोचिस्तानमें प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १०५,५२२ थी।

उत्तरी भोजपुरी––भोजपुरी (दे०)का उत्तरी रूप जो सारन, गोरखपुर, बस्ती और देवरियाके आसपास सरयू नदी और नैपालके बीचके क्षेत्रमें बोला जाता है। थारू भोजपुरीका क्षेत्र इसकी उत्तरी सीमा बनाता है। इसके अंतर्गत **सरवरिया** (दे०) तथा **गोरखपुरी** (दे०) स्थानीय रूप या उपबोलियाँ हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ६१,६५,१५१ थी।

उत्तरी मारवाड़ी––(दे०) **मारवाड़ी**।

उत्तरी मैथिली––मैथिली (दे०)की परिनिष्ठित बोली। यह उत्तरी दरभंगा, तथा उसके आसपास भागलपुर और पूर्णियामें बोली जाती है। इसका शुद्ध रूप वहाँके ब्राह्मणोंमें मिलता है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग १९,४६,८०० थी।

उत्तरी सामी लिपि––**सामी लिपि** (दे०)-की मुख्य शाखा जिससे विश्वकी रोमन, अरबी आदि बहुत-सी प्रमुख लिपियाँ विकसित हुई हैं।

उत्थितपार्श्व संघर्षी (grooved fricative या rill fricative)––एक प्रकारकी संघर्षी ध्वनि। इसके उच्चारणमें जीभके आगेके दोनों किनारे उठे होते हैं। 'श'का उच्चारण इसी प्रकार होता है। इसे **रन्ध्र संघर्षी** भी कहते हैं। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें व्यंजनोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक।

उत्पत्ति––(१) ध्वनिकी उत्पत्ति या **उच्चारण**। (२) शब्दकी **व्युत्पत्ति**। (३) **भाषाकी उत्पत्ति** (दे०)।

उत्पादी प्रत्यय (productive suffix)––ऐसा प्रत्यय जिसकी सहायतासे शब्दमें नया अर्थ लाया जा सके या जिसे जोड़कर

नया शब्द बनाया जा सके।

उत्रोची (utrochi)––१८९१ की जनगणनाके अनुसार तरहोच (पंजाबकी एक पहाड़ी रियासत)में प्रयुक्त एक बोलीका नाम। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, यह **कौर्नी** (दे०)का एक नाम है।

उदयपुरी––**मेवाड़ी** (दे०)का एक अन्य नाम।

उदात्त––वैदिक संस्कृतका एक सुर या स्वर। (दे०) **आघातमें सुर** उपशीर्षक। उदात्तका शाब्दिक अर्थ है 'उठा हुआ'। जो सुर उठा हुआ या ऊँचा हो उसे उदात्त कहते हैं। तैत्तिरीय प्रातिशाख्य, वाजसनेयी प्रातिशाख्य तथा अष्टाध्यायी आदिमें इसे स्पष्ट किया गया है 'उच्चैरुदात्तः'। अर्थात् उदात्त उच्च होता है। इसमें 'उच्च'का अर्थ क्या है, इसे पतंजलिने स्पष्ट किया है––'आयामो दारुण्यं अणुता खस्य इति उच्चैःकराणि शब्दस्य'। इस आधारपर उदात्तमें आयाम या अंग-संकोच, दारुण्य अर्थात् रूखापन, तथा अणुता अर्थात् कंठ या स्वरयंत्रकी संवृतता ये तीन बातें मानी जा सकती हैं। आपिशल शिक्षामें भी (दे० **अनुदात्त**) प्रायः ये ही बातें कही गयी हैं। ग्रीकका ऐक्यूट इसका समानार्थी है।

उदात्ततर––**उदात्त** (दे०)से कुछ ऊँचा सुर। कुछ लोगोंके अनुसार **स्वरित** (दे०) सुरका प्रथमार्द्ध उदात्ततर होता है।

उदाहरण––किसी भी नियम, सिद्धान्त, बात या विषय आदिको स्पष्ट करनेके लिए प्रस्तुत सामग्री। इसमें ध्वनि, रूप, शब्द, अर्थ, वाक्य, रचनांश या रचना आदि कोई भी भाषिक इकाई आ सकती है।

उदासीन स्वर (neutral vowel)––(१) **मध्य स्वर** (दे०) या **मिश्र स्वर** जब **बलाघात** (दे०) रहित होते हैं तो उन्हें उदासीन स्वर कहते हैं। उदासीन स्वर बहुत हल्का होता है। इसकी मात्रा **ह्रस्वार्द्ध** (दे०) होती है। अंग्रेज़ी अबव (above)का अ, अवधी **सोरहीका** अ या पंजाबी **बेचाराका** अ उदासीन स्वर हैं। कभी-कभी ए, इ आदि अन्य स्वर भी बहुत क्षीण या हलके होकर उदासीन हो जाते हैं। जैसे अंग्रेज़ी quiet की e या possible की i। (२) फ़िनो-उग्रिक भाषाओंमें एक विशेष प्रकारके 'इ' स्वरके लिए प्रयुक्त नाम।

उदी (udi)––काकेशसमें प्रयुक्त **काकेशस परिवार** (दे०) की एक भाषा।

उद्गार व्यंजन (ejective या glottalized stop)––(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें कुछ असामान्य व्यंजन और उनके भेद** उपशीर्षक।

उद्ग्राहवत् संधि––(दे०) **संधि**।

उद्ग्राह संधि––(दे०) **संधि**।

उद्देश्य––(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक।

उद्देश्यका विस्तार––(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक।

उद्देश्य-वर्द्धक––(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक।

उद्देश्यवाचक अव्यय––(दे०) **समुच्चयबोधक अव्यय**।

उद्धृत शब्द––**विदेशी** (शब्द)के लिए प्रयुक्त एक नाम। (दे०) **शब्द**।

उद्योतनका नियम––**बौद्धिक-नियम** (दे०)का एक भेद।

उन्नतोन्मुख संयुक्त स्वर––(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें संयुक्त स्वर** उपशीर्षक।

उन्नायक संयुक्त स्वर––(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें संयुक्त स्वर** उपशीर्षक।

उन्मोचन––स्पर्शोंके उच्चारणमें एक स्थिति या प्रक्रिया। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें व्यंजनोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक।

उप-अन्तरिक्खिया––पन्नवणासूत्र नामक जैन ग्रंथमें दी गयीं १८ लिपियोंमें-से, एक।

उपचयात्मक भाषा––**योगात्मक भाषा** (दे०)-का एक अन्य नाम।

उपचयोन्मुख भाषा––**योगात्मक भाषा** (दे०)-का एक अन्य नाम।

उपचार––(दे०) **अर्थ परिवर्तन** (दे०)में

२४वाँ कारण; तथा भाषाकी उत्पत्तिमें समन्वित रूप ।

उपधा—अंतिमके पूर्वका वर्ण या ध्वनि । कहा गया है 'उपधीयते निधीयते या सा', अर्थात् जो अंतिम वर्णके पास हो ।

उपधाघाती भाषा (paroxylonic language)—ऐसी भाषा, जिसका शब्दोंमें प्रायः उपधापर मुख्य आघात (बल या सुर) हो ।

उपधाघाती शब्द (paroxytone)—ऐसा शब्द जिसका उपधापर मुख्य आघात (बल या सुर) हो ।

उपध्मानीय—'उपध्मानीय'का अर्थ है 'मुँहसे फूँकी (ध्मा = फूँकना) गयी ध्वनिके समान'। यह एक विशेष प्रकारके **विसर्ग** (दे०)का नाम है । जब विसर्ग स्वर और प् या फ-के बीचमें आ जाय तो उसे उपध्मानीय कहा जाता है । इस स्थितिमें विसर्ग प् या फ-से प्रभावित हो जाता है और इसका उच्चारण ओठसे होता है—'उपूपध्मानीयानामोष्ठौ' । शुद्ध विसर्ग प्राचीन आचार्योंके अनुसार स्वर है, किन्तु उपध्मानीय, व्यंजनोंसे प्रभावित तथा उनपर आधारित है, इसी कारण इसकी गणना व्यंजनोंमें की गयी है। इसका स्वतंत्र प्रयोग नहीं हो सकता, इसीलिए इसे **अयोगवाह** (दे०) माना गया है। वोपदेवने इसके चिह्न (ᳵ प, ᳵ फ)को 'गजकुंभाकृति' कहा है । 'उपध्मानीय शब्द' बहुत प्राचीन नहीं है । अथर्व या ऋक् प्रातिशाख्यमें यह नहीं आता । हाँ, तैत्तिरीय तथा वाजसनेयी प्रातिशाख्यमें अवश्य आया है ।

उपनागर अपभ्रंश—अपभ्रंश (दे०)का एक भेद ।

उपपद—एक प्रकारके **शब्द** (दे०) प्रातिशाख्यों तथा संस्कृत व्याकरणोंमें इसका प्रयोग एकाधिक अर्थोंमें हुआ है ।

उपपद तत्पुरुष समास—(दे०) **समास** ।

उपपद समास—(दे०) **समास** ।

उपबन्ध—**प्रत्यय** (दे०)का एक प्राचीन नाम।

उपबोली (sub-dialect)—एक बोलीके अंतर्गत जो कई छोटे-छोटे रूप होते हैं, उन्हें उपबोली कहते हैं । जैसे—अवधी बोलीके अंतर्गत बैसवाड़ी है। इसे **स्थानीय-बोली**(दे०)भी कहते हैं । (दे०) 'भाषाके विविध रूप' ।

उपमानका-नियम—बौद्धिक-नियम (दे०)-का एक भेद ।

उपमान पूर्वपद कर्मधारय समास—(दे०) **समास** ।

उपमान-पूर्वपद बहुव्रीहि समास—(दे०) **समास** ।

उपमान-उत्तरपद कर्माधारय समास—(दे०) **समास** ।

उपमावाचक कर्मधारय समास—(दे०) **समास** ।

उपवाक्य—(दे०) वाक्यमें वाक्यका विभाजन उपशीर्षक ।

उपसर्ग (prefix)—'उप+सृज्+घञ्' (समीप छोड़ा हुआ)से बननेवाले इस शब्दका प्राचीनतम प्रयोग ऐतरेय ब्राह्मणमें 'योग' 'जोड़' या 'अतिरिक्त योग'के अर्थमें हुआ है । बादमें इसका अर्थ हो गया 'किसी क्रिया या शब्दके आदिमें जोड़ा हुआ कोई **शब्द** (दे०), । ऋग्वेद प्रातिशाख्यमें आता है 'सोपसर्गेषु नामसु' । संस्कृत व्याकरणमें उपसर्गको **अव्यय** (दे०)का एक भेद माना गया है । वहाँ उपसर्ग, वह अव्यय है, जो धातु या धातुसे बने विशेषण, संज्ञा आदि शब्दोंके पूर्व जोड़े जाते हैं । अष्टाध्यायीमें आता है 'उपसर्गाः क्रियायोगे' । वार्त्तिककार भी कहते हैं—'क्रियाविशेषक उपसर्गः' अब इसे मात्र क्रियासे ही विशेष संबद्ध न मानते हुए इतना ही कहना पर्याप्त है कि 'शब्दके पूर्व जो वर्ण या वर्णसमूह अर्थमें प्रायः कुछ परिवर्तन या अन्तर लानेके लिए जोड़ा जाता है, उसे उपसर्ग कहते हैं।' जैसे कुकर्म 'में'कु' । सिद्धान्तकौमुदीमें आता है—'उपसर्गेण धात्वर्थो बलादन्यत्र नीयते। प्रहाराहारसंहारविहारपरिहारवत्॥' अर्थात् उपसर्ग-

के द्वारा 'हार' से प्रहार, आहार, संहार विहार, परिहार आदिकी भाँति अर्थ बलात् अन्यत्र ले जाया जाता है। उपसर्गसे अर्थ कभी तो उलट जाता है, कभी वही रहता है, तथा कभी वही रहते हुए भी विशिष्ट हो जाता है। शाकटायनीय धातुपाठमें कहा गया है—'धात्वर्थं बाधते कश्चित्कश्चित्तमनुवर्तते। तमेव विशिनष्ट्यन्य उपसर्गस्त्रिधागतिः ॥' अर्थात् उपसर्गके ये तीन कार्य हैं। वर्द्धमानने उपसर्गके चार कार्य माने हैं—'धात्वर्थं बाधते कश्चित् कश्चित्तमनुवर्तते। तमेव विशिनष्टयोऽनर्थकोऽन्यः प्रयुज्यते ॥' अर्थात् कभी उपसर्ग धातुके अर्थको बदल देता है, कभी उसी अर्थका अनुवर्तन करता है, कभी विशेषता लाता है और कभी निरर्थक होता है। उपसर्गका कोई अपना अर्थ होता है या नहीं इस संबंधमें संस्कृत वैयाकरणोंमें मतभेद है। शाकटायन, भर्तृहरि, कैय्यट तथा नागेश आदिके अनुसार उपसर्गोंका स्वतंत्र कोई अर्थ नहीं होता। दूसरी ओर गार्ग्य, यास्क आदिके अनुसार उपसर्गोंका अपना अर्थ होता है। जैसे 'प्र' का 'प्रारंभ' पाणिनिने आत्मनेपदके प्रसंगमें जो कुछ कहा है, उससे लगता है कि वे इनका स्वतंत्र अर्थ नहीं मानते, किन्तु कर्मप्रवचनीयके प्रसंगमें वे अर्थका समर्थन करते दिखाई देते हैं। इसी प्रकार ऋग्वेद प्रातिशाख्यमें भी एक स्थानपर अर्थका समर्थन है तो दूसरे स्थानपर विरोध। वस्तुतः ऐसा मानना उचित नहीं कहा जा सकता कि उपसर्गोंका अपना अर्थ नहीं होता। उनका अपना अर्थ होता है और इसी कारण वे अन्य शब्दोंसे मिलकर उनका अर्थ परिवर्तित कर पाते हैं। इतना ही नहीं, मेरा अपना विचार तो यह है कि अधिकांश उपसर्ग मूलतः स्वतंत्र शब्द थे। उनका वर्तमान रूप मूल शब्दका संक्षिप्त या घिसा हुआ रूप है।

संस्कृतमें प्र आदि २२ (यास्क तथा ऋग्वेद प्रातिशाख्यमें उपसर्गोंकी संख्या २० है, तैत्तिरीय प्रातिशाख्यमें लगभग १० है)। अव्ययोंकी संज्ञा **निपात** है, क्रियाके योगमें इन्हें उपसर्ग कहा गया है। इसी अर्थमें प्रायः गतिका भी प्रयोग मिलता है। क्रिया या संज्ञा आदिसे संबद्ध उपसर्गको **कर्मप्रवचनीय** (दे०) भी कहा गया है। (दे०) 'निपात', 'गति', 'कर्मप्रवचनीय' तथा 'अव्यय'। 'उपसर्ग'के लिए कुछ संस्कृत वैयाकरणोंने **'गि'** (देवनंदिन), **प्रादि** (चंद्र), **उपेन्द्र** (जीव गोस्वामी) आदि शब्दोंका प्रयोग किया है। कुछ लोग इसे **आदिसर्ग, पूर्वसर्ग, पूर्वप्रत्यय** आदि भी कहते हैं। हर भाषाके उपसर्गोंका अर्थके आधारपर भी वर्गीकरण किया जा सकता है।

उपसर्ग पूर्वपद कर्मधारय समास—(दे०) **समास**।

उपसर्गयुक्त बहुव्रीहि समास—(दे०)**समास**।

उपसर्जन—एक प्रकारके **शब्द** (दे०)।

उपस्कार—एक प्रकारके **शब्द** (दे०)।

उपाचरित संधि—(दे०) **संधि**।

उपादान लक्षणा—एक प्रकारकी लक्षणा। (दे०) **शब्द-शक्ति**।

उपालिजिह्व—गलेमें वह स्थान जो चौराहा होता है। यहाँसे नाक, मुँह, फेफड़े और आमाशयको रास्ते जाते हैं। इसे **गलबिल, कंठ, कंठ मार्ग** भी कहते हैं। (दे०) **शारीरिक ध्वनिविज्ञान**।

उपालिजिह्वीय (pharyngeal)—**उच्चारण स्थान** (दे०)के आधारपर किया गया व्यंजनोंका एक भेद। उपालिजिह्वीय उन ध्वनियों या व्यंजनोंको कहते हैं, जो स्वरयंत्र और अलिजिह्वके बीचमें **उपालिजिह्व** या **गलबिल** (दे०) स्थानमें उच्चरित की जाती हैं। इनके लिए जिह्वामूलको पीछे हटाकर गलबिलको संकीर्ण कर लिया जाता है। अरबीकी 'बड़ी हे' और 'ऐन' इसी स्थानमें उच्चरित होती हैं। उपालिजिह्वीय ध्वनियाँ प्रायः अफ्रीकामें या उसके

आसपास ही मिलती हैं।

उपुरुइ (upurui)--**करिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

उपेन्द्र--**उपसर्ग** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक संस्कृत नाम।

उप्परकारी (upparakari)--मद्रासकी एक मछेरा जातिमें प्रयुक्त, **कोंकणी** (दे०) का, एक विकृत रूप।

उबांगी (ubangi)--अफ्रीकामें प्रयुक्त नीग्रो भाषाओंका एक वर्ग जो सूडान वर्गके अन्तर्गत है। इस वर्गके अंतर्गत **बांडा**, मिट्टू, जाण्डे आदि भाषाएँ आती हैं।

उबिक (ubyk)--काकेशसमें प्रयुक्त एक भाषा जो **काकेशस परिवार** (दे०)की है।

उभयपद--(दे०) **उभयपदी**।

उभयपदी--ऐसी धातु, (जैसे मुच्) जिसके रूप आत्मने और परस्मै दोनों पदोंमें बनते हों। इसे **उभयपद** भी कहते हैं। (दे०) **धातु**।

उभयलिंग (epicene)--ऐसा शब्द जो दोनों लिंगोंका हो। इसे **द्विलिंग** भी कह सकते हैं।

उभयलिंगी (epicêne)--दोनों लिंगोंवाला; दोनों लिंगोंमें प्रयुक्त होनेवाला; दोनों लिंगोंका बोध करानेवाला। इसे **द्विलिंगी** भी कह सकते हैं।

उभयविध क्रिया--(दे०) **धातु** तथा **क्रिया**।

उभयविध धातु--(दे०)**धातु** तथा **क्रिया**।

उभयविध संबंधसूचक अव्यय--(दे०) **संबंधसूचक अव्यय**।

उभयान्वयी--(दे०) **समुच्चयबोधक अव्यय**।

उभेकी (ubheki)--**सिराइकी हिन्दकी** (दे०)का एक दूसरा नाम।

उभेची (ubhechi)--**सिराइकी हिन्दकी** (दे०)का एक अन्य नाम।

उभेजी (ubheji)--**सिराइकी हिन्दकी** (दे०) का एक अन्य नाम।

उभेदी बोली--**गूजरी** (दे०)के लिए, पंजाबमें प्रयुक्त एक नाम।

उमठवाड़ी--मालवीका एक रूप। उमठ जातिके राजपूतोंके आधारपर उत्तरीपूर्वी तथा पूर्वी मालव 'उमठवाड़' कहलाता है। इस क्षेत्रमें बोली जानेवाली **मालवी** (दे०) उमठवाड़ी कहलाती है।

उमौआ (umaua)--**करिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

उरंग (urang)--**कुरूख** (दे०)का उड़ीसामें प्रयुक्त एक नाम।

उर-पेर (ur-per)--**चिबोन** (दे०)की एक बोली।

उरस्य--ऐसी ध्वनि जो उरसे उत्पन्न हो। वस्तुतः जो ध्वनियाँ **स्वरयंत्रमुखी** (दे०) हैं, उन्हींको प्राचीन आचार्योंने उरस्य माना है। जैसे विसर्ग या ह। ऋक् तंत्रमें आता है--'उरसि विसर्जनीयो वा'। अन्यत्र भी आया है 'हकार विसर्जनीयौ उरः स्थानौ।'

उरस्य स्पर्श--**स्वरयंत्रमुखी स्पर्श** (दे०)का एक अन्य नाम।

उराँव (urao)--**कुरूख** (दे०)का एक और नाम।

उरिया--**उड़िया** (दे०)का एक अन्य नाम।

उरु पुकिना (uru- pukina)--दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा।

उरुदु (urudu)--**उर्दू** (दे०)के लिए कुर्गमें प्रयुक्त एक नाम।

उर्दू--'उर्दू' शब्दको सभी लोगोंने मूलतः तुर्की भाषाका कहा है और इसका मूल अर्थ 'शाही शिविर' या 'खेमा' आदि माना है। वास्तविकता है कि न तो मूलतः यह शब्द तुर्की भाषाका है और न इसका मूल अर्थ 'खेमा' है। यह शब्द चीनी भाषाका है। तुर्क, मंगोल तथा तातार जिनमें यह शब्द विभिन्न रूपों तथा अर्थोंमें मिलता है, मूलतः हूणोंके वंशज हैं। हूणोंका मूल स्थान उत्तरी चीनमें कहीं था। 'हूण' शब्द भी मूलतः चीनी भाषाका 'शान्-यू' है। 'शान्-यू'का अर्थ प्राचीन कालमें 'लड़ाकू' या 'युद्धप्रिय' आदि था। चूँकि ऐसे लोग

ही प्राचीन कालमें युद्ध करके 'राजा' बन जाया करते थे अतः बादमें चीनी भाषामें 'शान्-यू'का अर्थ 'राजा' हो गया। चीनी लोगोंने युद्धप्रिय तथा लुटेरा होनेके कारण हूणोंको यही नाम दे दिया। 'शान्-यू' शब्द ही बिगड़कर 'हून', 'हूङ' 'स्यूङ' या हूण हो गया। यह शब्द पहली सदीके आसपास चीनीमें 'ह्यूङ-नू' (hiung-nu)-के रूपमें मिलता है। इन हूणोंका एक कबीला ह्वांगहो नदीके किनारे था जिसे चीनी 'ओर्दू' कहा करते थे। इन्हींके आधारपर ह्वांगहो नदीके किनारेका वह स्थान आज भी चीनमें 'ओर्दुस' कहलाता है। 'ओर्दू' का मूल अर्थ चीनीमें 'घुमक्कड़' या 'यायावर' था। इन लोगोंकी घुमक्कड़ी प्रवृत्तिके कारण ही चीनी इन्हें 'ओर्दू' कहा करते थे। पहली सदी ई० से कुछ पूर्व ही चीनी लोगोंने इन सभी लोगोंको वहाँसे खदेड़ा और हूणोंके साथ ये मध्य एशियामें चले आये। ये लोग खेमोंमें रहा करते थे अतः धीरे-धीरे इस कबीलेका नाम 'ओर्दू' इन लोगोंके खेमोंके लिए प्रयुक्त होने लगा। यों यूरोपकी कई भाषाओंमें 'ओर्दू'से निकलनेवाले शब्दोंका अब भी मूल अर्थ (अर्थात् 'घुमक्कड़ जाति')-के लिए प्रयोग होता है। उदाहरणार्थ अंग्रेज़ी होर्ड (horde)का अर्थ यही है।

तुर्क (जो हूणोंके वंशज थे) इतिहासमें चौथी सदीके आसपास दिखाई पड़ते हैं। उसके पहले ये हूणों (जिसमें हूण, तातार, ओर्दू आदि सभी थे)के अंग थे। परंपरागत रूपमें तुर्कोंमें भी 'ओर्दू' या 'ओर्दु' शब्द आया। उस समय इस शब्दके दोनों अर्थ ('यायावर जाति' तथा 'खेमा') चल रहे थे। कभी-कभी अन्य अर्थोंमें ('सेना' या 'सैनिक पड़ाव')भी इसका प्रयोग होता था। 'ओदु' या 'ओर्द' रूप भी मिलता है। यूरोपमें इस शब्दका प्राचीनतम प्रयोग तेरहवीं सदी पूर्वार्द्धमें 'ओर्दम' (ordam) रूपमें है। यूरोपमें यह शब्द कई रूपोंमें कई भाषाओंमें प्रयुक्त हुआ है। उदाहरणार्थ पोलिश होर्द (horda)जर्मन होर्डे (horde), फ्रांसीसी होर्द (horde), अंग्रेज़ी होर्ड (horde) तथा रूसी ओर्द (orda) आदि। इन भाषाओंमें इसके तुर्कीके अतिरिक्त मंगोली भाषासे भी जानेकी संभावना है। ताशकंद, खोकंदमें 'ओर्दू' 'किले'के अर्थमें तथा पश्तोमें 'लश्करी पड़ाव'के अर्थमें चलता है। तुर्कोंका भारतसे संबंध होनेपर यह शब्द भारतमें आया।

इस तरह, यह शब्द, चीनसे चलकर मंगोलिया और तुर्की होते हुए तुर्कोंके साथ भारतमें आया। हॉब्सन जाब्सनके अनुसार भारतमें यह बाबरके समयमें आया, किंतु मैं समझता हूँ कि बाबरसे पूर्व ही तुर्कोंके साथ यह भारत आ चुका था। उस समय इसका अर्थ 'खेमा', 'तंबू', 'फौजी पड़ाव' आदि था, तथा उसका रूप 'ओर्दू' से 'उर्दू' हो चुका था। 'ऊ'पर अतिरिक्त बलाघातके कारण 'ओ' कोमल होकर 'उ' हो गया। यहाँ आनेपर इसका अर्थ 'छावनी या लश्करका बाज़ार' या 'वह बाज़ार जहाँ सब तरहकी चीज़ें मिलती हों' आदि भी हो गया। आक्रमणकारी मुसलमान फौजी पड़ावोंमें रहते थे तथा वहाँ उनका जरूरी चीजोंके लिए बाजार भी होता था। सेनाके बाजारके अर्थमें ही भारतके कई नगरों (दिल्ली, गोरखपुर, गाज़ीपुर आदि)में 'उर्दू बाज़ार' नाम मिलता है।

मुग़ल बादशाहोंके फौजी पड़ावोंके लिए भी 'उर्दू' शब्द चलता था। इनके सिक्के कभी-कभी पड़ावोंमें ही ढालने पड़ते थे, इसीलिए सिक्कोंपर टकसालका नाम प्रायः 'उर्दू' लिखा मिलता है। बाबरके कुछ सिक्कोंपर 'उर्दू' लिखा है। इसी प्रकार अकबरके भी कुछ सिक्कोंपर 'उर्दू-ए-ज़फ़र करीन' (अर्थात् विजयश्रीसे युक्त उर्दू' अर्थात् 'विजयी शाही पड़ाव') या उर्दू लिखा है। जहाँगीरने कभी दक्षिण जाते समय रास्तेमें अपने शाही पड़ावमें

सिक्के ढलवाये थे । उसका एक सिक्का ऐसा मिला है, जिसपर टकसालका नाम 'उर्दू दर राहे दक्कन' (अर्थात् 'दक्षिणके राहमेंका पड़ाव') लिखा है । शाहजहाँने कदाचित् अकबरके अनुकरणपर अपने टकसालका ही नाम 'उर्दू-ए-ज़फ़र-करीन' रख लिया था । इस तरह बाबरसे लेकर शाहजहाँतक 'उर्दू' शब्द 'शाही पड़ाव' या 'शाही फौजी पड़ाव' आदिके अर्थोंमें प्रयुक्त होता रहा है ।

इन पड़ावी सैनिकोंने बाबरके कालमें दिल्लीकी लोकभाषा (खड़ी बोली)को अपनाया, पर साथ ही हरियानी, पूर्वी पंजाबकी भाषाका भी उसपर प्रभाव था । बादमें जब राजधानी आगरे चली गयी तो शाही फौजी पड़ाव वहाँ गया और इन फौजियोंकी भाषापर ब्रजभाषाका भी रंग चढ़ गया । इस प्रकार मुगल बादशाहोंके साथ रहनेवालोंकी भाषा वह थी जिसके शब्द-समूहमें अरबी-फारसी-तुर्की शब्द काफी थे, किन्तु जिसका व्याकरण मूलतः खड़ी बोलीका था, पर साथ ही पंजाबी, हरियानी, ब्रज आदिसे भी प्रभावित था ।

शाहजहाँने अपनी राजधानी फिर आगरासे दिल्ली बदल ली और अपने नामपर शाहजहाँनाबाद आबाद किया । यहाँ उसने लालकिला बनवाया । यह भी उसका एक प्रकारसे शाही फौजी पड़ाव था, अतः उर्दू था । स्थायी, बड़ा तथा सुन्दर होनेके कारण इसका नाम मात्र 'उर्दू' न होकर 'उर्दू-ए-मुअल्ला' था । 'मुअल्ला' अरबी भाषाका शब्द है और इसका अर्थ 'श्रेष्ठ' अर्थात् यह 'श्रेष्ठ शाही पड़ाव' था । किला होनेके कारण कुछ लोग इसे 'क़िला मुअल्ला' तथा लाल पत्थरका बना होनेके कारण सामान्य लोग इसे 'लाल किला' भी कहते थे ।

इस समयतक शाही पड़ावकी भाषा कदाचित् एक निश्चित रूप ले चुकी थी अतः इस भाषाको 'ज़बान-ए-उर्दू-ए-मुअल्ला' (अर्थात् 'श्रेष्ठ शाही पड़ावकी भाषा') कहा गया । इस तरह शाहजहाँ और उसके शाहजहाँनाबाद (जहाँ उर्दू-ए-मुअल्ला या लाल क़िला है)से उर्दू भाषाका संबंध माना गया है । इसीलिए उर्दूको कभी-कभी 'शाहजहाँनी उर्दू' भी कहते हैं । यों यह निश्चयके साथ कहना कठिन है कि शाहजहाँके समयमें उर्दूका यह नाम चल ही पड़ा था । इंशा अल्ला खां आदि प्राचीन लेखकोंको भी इस बातमें संदेह रहा है । अस्तु, यदि उसके समयमें नहीं तो कुछ ही समय बाद, १७०० के कुछ पूर्व ही यह नाम चल पड़ा, जैसा कि आगे संकेत किया गया है । भाषाके नामके रूपमें 'ज़बान-ए-उर्दू-ए-मुअल्ला' शब्द बड़ा था इसलिए धीरे-धीरे प्रयोगमें आनेपर यह छोटा होने लगा । पहले 'मुअल्ला' शब्द हटा और यह 'ज़बान-ए-उर्दू' ही कहलायी । इसीका अनुवाद कुछ लोगोंने 'उर्दूकी ज़बान' या 'लैंग्विज अव् उर्दू' किया है । कुछ दिन और बीतनेपर 'ज़बान' शब्द भी छूट गया और 'ज़बान-ए-उर्दू ए-मुअल्ला' केवल 'उर्दू' रह गयी ।

'उर्दू' भाषाके मूल विकासकी दृष्टिसे कहा जा सकता है, कि नाम यद्यपि नहीं था, किन्तु इसका किसी न किसी रूपमें बीज उसी समय पड़ा जब १२०७ ई० में कुतुबुद्दीन ऐबकने दिल्लीको राजधानी बनाया । दिल्लीकी लोकभाषाको अपने शब्द-समूहकी छौंकके साथ मुसलमान सिपाहियोंने उसी समय सबसे पहले अपनाया होगा । बाबरके आगमनतक स्थिरताकी कमीके कारण इसका विशेष विकास नहीं हुआ । बाबर और शाहजहाँके बीच इसने पर्याप्त उन्नति कर ली । इतनी उन्नति कर ली कि शाहजहाँकी शासन-समाप्तिके लगभग ५० वर्ष बाद ही इसमें काव्य-रचनाका प्रारंभ हो गया । उस समय इस भाषाको 'हिन्द'की होनेके कारण 'हिन्दी' या अरबी-फारसी शब्दोंसे मिश्रित होनेके कारण

'रेख्ता' ' (दे०) कहते थे।

भाषाके अर्थमें 'उर्दू'के प्रयोगका प्रारंभ कब हुआ, यह अब भी विवादास्पद विषय है। लोगोंने तरह-तरहके मत व्यक्त किये हैं। मौलाना सैयद सुलेमान नदवी कहते हैं कि 'उर्दू का नाम तेरहवीं सदी हिजरी (अर्थात् उन्नीसवीं सदी)में एकाएक आ गया' (हिन्दुस्तानी-जनवरी १९३६ १७)। डॉ० ग्राहम बेली तथा डॉ० ताराचंद आदिका कहना है कि उर्दूका भाषाके निश्चित अर्थमें सबसे पुराना प्रयोग मसहफीमें मिलता है। मसहफीका एक शेर है—'ख़ुदा रक्खे ज़बाँ हमने सुनी है, मीर-वो-मिरज़ाकी; कहें किस मुँहसे हम ऐ मसहफी 'उर्दू' हमारी है।' मसहफीकी मृत्यु १८२४ ई० में हुई। अनुमान है कि १८०० के आसपास यह शेर लिखा गया, क्योंकि शेरसे लगता है कि मीर और सौदाकी मृत्युके बाद यह लिखा गया होगा। सैय्यद यहतिशाम हुसेन अपने उर्दू साहित्यके इतिहासमें लिखते हैं कि अठारहवीं सदीके अंततक उर्दू नाम भाषाके अर्थमें प्रयुक्त नहीं हुआ। इसी प्रकार और भी अनेक लोगों द्वारा इसीसे मिलते-जुलते मत व्यक्त किये गये हैं।

वस्तुतः भाषाके लिए 'ज़बाने-उर्दू-ए-मुअल्ला'का प्रयोग १७०० से कुछ पूर्व ही चल पड़ा और १७४० तक यह घिसते-घिसते 'जबाने-उर्दू-ए-मुअल्ला'से 'ज़बाने उर्दू' तथा 'ज़बाने उर्दू'से 'उर्दू' हो गया। इस शब्दका अकेले प्राचीनतम प्रयोग जहाँतक मुझे ज्ञात है, सन् १७४० में लिखित 'मआसिरुल उमरा'में आया है। उसमें लेखक उर्दूमें शेर कहे जानेकी बात लिखता है। उसके बादसे 'उर्दू' शब्द चल पड़ा हालाँकि इसके लिए 'हिन्दी' और 'रेख्ता' नाम अधिक प्रचलित थे। तबसे उन्नीसवीं सदीके मध्यके कुछ पूर्वतक उर्दूके बहुतसे प्रयोग मिलते हैं, यद्यपि वह उस समयतक भी उर्दू भाषाका एकमात्र नाम उस रूपमें नहीं बन सका जैसा कि उसके बाद हो गया। इन प्रयोगोंमें कुछ यहाँ उल्लेख्य हैं। प्रसिद्ध कवि आरज़ू (१६८७-१७५४)-ने अपनी दो पुस्तकों—'नवादिरुल अलफ़ाज', तथा 'मुस्मर'में उर्दू शब्दका कई स्थानोंमें प्रयोग किया है। उदाहरणार्थ 'नवादिरुल अलफ़ाज़' (रचनाकाल १७५१ ई०)में 'गज़क' शब्दके बारेमें लिखते हुए कवि कहता है—'दर इस्तलाहे अहले उर्दू नव अस्त अज़ शीरीनी कि अज़ कुंजद व शकर साज़ंद'। अन्य बहुतसे शब्दोंके संबंधमें लिखते हुए भी इस पुस्तकमें उर्दू शब्दका प्रयोग किया गया है। १७५२ ई०के कुछ पूर्व मीर (१७१२-१८१०) 'नेकातुश्शुअरा'के दीवाचेमें लिखते हैं—'दर फ़ने रेख़ता कि शेरस्त बतौर शेर फ़ारसी वज़बाने उर्दू-ए-मोअल्ला शाहजहानाबाद देहली।' का 'इमकी मिख़जने निकात' (१७५४ ई०)में भी यह शब्द आया है। इसी प्रकार १८०३ ई० में लिखित 'तज़किर मख़ज़न उलगरायब'में मिरज़ा मज़हर जानजानाके संबंधमें आता है—'दरे ज़बाने हिन्दी कि मुराद उर्दू अस्त।'

उर्दूके लिए विभिन्न कालोंमें 'हिन्दुस्तानी', 'हिन्दवी', 'रेख्ता', 'हिन्दी' तथा 'हिन्दवी उर्दू' आदि नामोंका प्रयोग हुआ है। 'रेख्ता' नाम मोटे तौरपर अठारहवीं सदीके प्रारंभसे लगभग उन्नीसवींके मध्यतक विशेषतः उर्दूके लिए चलता रहा है। हिन्दुस्तानी नाम फोर्ट विलियम कॉलिजके रिकार्डोंमें ही 'उर्दू'के लिए सर्वप्रथम प्रयुक्त हुआ और चलता रहा। आगे चलकर इस सदीमें प्रायः हिन्दी-उर्दूकी बीचकी शैलीके लिए हिन्दुस्तानीका प्रयोग होता रहा है। गांधीजीकी हिन्दुस्तानी यही है। यों अब भी कभी-कभी हिन्दुस्तानी नामसे लिखी जानेवाली भाषा हिन्दुस्तानी न होकर उर्दू होती है। उर्दूके उत्पत्ति-कालसे लेकर प्रायः १९वीं सदीके प्रथम चरणतक 'हिन्दी' नाम 'उर्दू'के लिए चलता

रहा । उर्दू के मीर, ग़ालिब आदि अनेक कवियोंने हिन्दी शब्दका उर्दू के लिए प्रयोग किया है । अन्य नामोंका व्यापक रूपसे अधिक दिनोंतक लगातार प्रयोग न होकर, प्रायः यदाकदा ही हुआ है ।

उर्दू भाषा कैसे बनी या उसकी उत्पत्ति किस भाषासे हुई, इस बातको लेकर विद्वानोंमें विवाद रहा है । कुछ लोग इसकी उत्पत्ति फ़ारसी या अरबी-फ़ारसीसे मानते रहे हैं । स्पष्ट ही इन लोगोंका ध्यान मात्र शब्दावलीपर रहा है, व्याकरणपर नहीं, जो वास्तविक रूपमें भाषाका मूल होता है । प्रो० आजादने 'आबे हयात'में ब्रज-भाषासे उर्दू का जन्म माना है । किन्तु ब्रज-भाषासे उर्दू के व्याकरणकी तुलना करने-पर यह स्पष्ट हो जाता है कि उर्दू में कुछ रूप ब्रजके अवश्य हैं किन्तु वे इतने थोड़े हैं कि ब्रजसे उर्दू को उत्पन्न नहीं माना जा सकता । कभी बेलीने तथा कुछ अन्य लोगोंने यह मत प्रकट किया था कि, उर्दू, पंजाबी या लाहौरीसे उत्पन्न हुई है । पंजाबीके कुछ रूप अवश्य उर्दू में हैं किन्तु ब्रजकी तरह ही वे इतने कम हैं कि पंजाबीसे उर्दू की उत्पत्ति नहीं मानी जा सकती । इसी प्रकार कुछ लोगोंने मुसलमानोंसे सिंधका प्राचीन संबंध दिखलाते हुए उर्दू की उत्पति सिंधमें, सिंधीसे मानी है, जो और भी असंभव है । वलीको दक्खिनीका अंतिम तथा उर्दू का प्रथम साहबे दीवान कवि देखकर कुछ लोगोंने उर्दू की दक्षिणमें भी उत्पत्ति मानी है । इस प्रकार अनेकानेक मत व्यक्त किये गये हैं । किन्तु जैसा कि ऊपर दिखाया जा चुका है वस्तुतः खड़ीबोली या आधुनिक परिनिष्ठित हिन्दीकी तरह ही, उर्दू भी मूलतः दिल्लीके आसपासकी खड़ी बोली-पर आधारित है. जिसमें कुछ रूप पूर्वी पंजाबी, हरियानी तथा ब्रजके हैं । पुरानी हिन्दीकी तरह पुरानी उर्दू में भी कुछ रूप अवधीके भी मिलते हैं । इस प्रकार व्याक-रणकी दृष्टिसे हिन्दी तथा उर्दू एक-दो अपवादोंको छोड़कर पूर्णतः एक हैं । प्रमुख अन्तर केवल शब्दावलीका है साहित्यिक उर्दू में अरबी-फ़ारसी शब्द अधिक होते हैं, किन्तु यह अन्तर साहित्यके स्तरपर है । सामान्य, व्यावहारिक या बोलचालके स्तर-पर हिन्दी-उर्दू दोनों ही, अपने कठिन संस्कृत या अरबी-फ़ारसी शब्दोंको छोड़कर प्रायः एक हो जाती हैं, जिसे गांधीजी हिन्दुस्तानी कहा करते थे । इधर हिन्दी तथा उर्दू दोनोंका कुछ साहित्य भी उस भाषामें लिखा गया है । इसीलिए उर्दू को हिन्दीकी फ़ारसी-अरबी शब्दावलीसे युक्त शैली या हिन्दीको उर्दू की संस्कृत शब्दोंसे युक्त शैली कहना अधिक समीचीन है । दोनोंका व्याकरण प्राय पूर्णतः एक होनेपर इन्हें अलग भाषाएँ मानना न तो व्यावहारिक है और न वैज्ञानिक ।

उर्दू भाषा कैसे बनी इस बातको लेकर इन्शाने कहा है कि उस कालकी प्रचलित भाषामेंसे कुछ भाषाओंके शब्दोंको निकाल-कर और उनके स्थानपर कुछ शब्द रख-कर तथा कुछ हेरफेर करके उर्दू भाषा बनायी गयी । वे 'दरिया-ए-लताफ़त'में लिखते हैं:—'यहाँके खुशबयानोंने मुत्तफ़िक होकर मुताद्दिद ज़बानोंसे अच्छे-अच्छे लफ़्ज़ निकाले और बाज़ी इबारतों और अल्फ़ाज़-में तसर्रुफ़ करके और ज़बानोंसे अलग एक नयी ज़बान पैदा की जिसका नाम उर्दू रक्खा ।' इसी आधारपर श्री चन्द्रबली पाण्डेयने अपनी एकाधिक पुस्तकोंमें यह मत प्रकट किया है कि हिन्दी शब्दोंको निकाल-कर तथा उनके स्थानपर अरबी-फ़ारसी आदिके शब्दोंको रखकर उर्दू भाषा बनायी गयी । डॉ० उदयनारायण तिवारी भी चंद्रबली पाण्डेयसे सहमत हैं । किन्तु तर्ककी कसौटीपर यह मत ठहरता नहीं । उर्दू के बननेके १०० वर्ष बाद इंशा यह बात लिख रहे थे । स्पष्ट ही उनका यह अनुमान मात्र है, यदि कोई ठोस प्रमाण होता तो उन्होंने अवश्य दिया होता । वस्तुतः

इस रूपमें भाषा बनानेका उदाहरण विश्वमें कहीं नहीं मिलता। जैसा कि ऊपर दिखलाया जा चुका है, उर्दू बनी इसी प्रकार। अर्थात् तत्कालीन 'हिन्दवी' जब मुसलमानों द्वारा प्रयुक्त हुई तो सहज ही उसका व्याकरण अपनाकर भी उसके सारेके सारे शब्द मुसलमान नहीं अपना सके। संज्ञा, विशेषण तथा क्रियाविशेषण आदि फ़ारसीके भी प्रयुक्त होते रहे, जिनका वे फारसी आदि बोलनेमें प्रयोग करते थे। इस प्रकार बात एक ही है। अन्तर केवल यह है कि इन्शा और उनके साथ चंद्रबली पाण्डेय तथा डॉ० उदयनारायण तिवारी कहते हैं कि उर्दू बनायी गयी, कुछ लोगों द्वारा मिलकर। किन्तु परिस्थितियाँ यह कहती हैं कि उर्दू बन गयी। आज तो भाषा बनायी जा सकती है, किन्तु उस कालमें जब भाषाके प्रति वर्तमान जागरूकता नहीं थी, भाषा बनाये जानेकी बात गलेसे नीचे नहीं उतरती। ऐसी स्थितिमें उर्दूके बन जानेकी बात ही मानी जा सकती है, बनाये जानेकी नहीं।

उर्दू भाषाके प्रारंभकी समस्या साहित्यके संदर्भमें भी विचारणीय है। उर्दू साहित्यके अध्येताओं द्वारा इस संबंधमें प्रायः विरोधी मत प्रकट किये गये हैं। एक ओर तो उर्दूका आरंभ खुसरो आदिसे माना गया है तथा 'दक्खिनी'को 'दक्खिनी उर्दू' कहकर उसके पूरे साहित्यको उर्दूकी संपत्ति माना गया है, और दूसरी ओर वलीको, जो 'दक्खिनी'के अंतिम कवि हैं, उर्दूका प्रथम कवि (साहबे दीवान शायर) माना गया है। वस्तुतः उर्दू नाम तथा उसके वर्तमान स्वरूपको यदि दृष्टिमें रखा जाय तो इसके साहित्यका प्रारंभ १७०० के आसपाससे ही माना जाना चाहिये, किन्तु, भाषावैज्ञानिक दृष्टिसे उसकी पूर्ववर्ती भाषाको उर्दूसे अलग नहीं रखा जा सकता। वास्तविकता यह है कि उर्दू हिन्दीकी ही एक शैली है अंतः उर्दू उतनी ही पुरानी है, जितनी पुरानी कि हिन्दी। हाँ, स्वतंत्र शैलीके रूपमें इसका जन्म १७०० के आसपास हुआ है और तबसे इसके इतिहास या विकासको दो कालोंमें बाँटा जा सकता है। प्रथम काल लगभग १८०० के पूर्वका है और दूसरा इसके बादका। प्रथम कालके प्रमुख कवि वली, आबरू, हातिम, दर्द, सौदा, मीर, आदि हैं तथा दूसरे कालके मोमिन, ज़ौक, ग़ालिब, दाग़, हाली, जिगर, इक़बाल, फ़िराक़ आदि।

उर्दू लिपि—भारतीय भाषा उर्दूके लिए प्रयुक्त एक लिपि जिसमें मूलतः ३५ अक्षर, तथा प्रयोगतः कुछ अधिक हैं। यह लिपि अरबीसे निकली फ़ारसी लिपिके आधारपर ट, ड, ड़ के लिए नये अक्षर बनाकर मध्ययुगमें बनायी गयी। (दे०) **अरबी लिपि**।

उर्ध्वधनुर्लिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयीं ६४ लिपियोंमेंसे एक।

उर्मुड़ी (urmuri)—**ओर्मुड़ी** (दे०)का एक अन्य नाम।

उलर्खंडी (ularkhandi)—१९२१ की बंबई जनगणनाके अनुसार **पश्चिमी हिन्दी** (दे०)की, खानदेश तथा नासिकमें प्रयुक्त, एक बोली। इसका अब पता नहीं है।

उलूआ (२) (ulua)—**सुमो** (दे०)की एक प्रमुख बोली।

उस्पान्टेक (uspantek)—मध्य अमेरिकाकी **क्विचे** (दे०) भाषाकी एक बोली।

ऊ

ऊँचा सुर—**सुर** (दे०) का एक भेद।

ऊकार—ऊ के लिए प्रयुक्त नाम। (दे०) **कार**।

ऊ-ख्वोंबो (u-khwombo)—**भोटिया** या **तिब्बती** (दे०)का एक रूप।

ऊनबोधक विशेषण—(दे०) **विशेषण**।

ऊनवाचक प्रत्यय—एक प्रकारका **प्रत्यय** (दे०)।

ऊनवाचक विशेषण—(दे०) **विशेषण** ।

ऊराली (urali)—**कुरुंब** (दे०)का एक अन्य नाम। वस्तुतः यह नीलगिरिकी एक 'कुरुंब' भाषी जातिका नाम है। बोलने-वालोंका नाम उनकी भाषाको भी दे दिया गया है।

ऊलूआ (ulua)—**सुमो** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

ऊष्म (sibilant)—ऐसी संघर्षी ध्वनियोंके लिए प्रयुक्त एक नाम, जिनमें हवा बहुत अधिक निकलती हो। ऋक् प्रातिशाख्य-में आया है—'ऊष्मा वायुस्तत्प्रधानवर्णा ऊष्माणः।' इसमें, कुछ लोगोंने स, श, ष; तथा कुछ लोगोंने स, श, ष, विसर्ग, जिह्वामूलीय, उपध्मानीय तथा अनुस्वारको माना है। महाभाष्यकार विवृत ध्वनियोंको ऊष्म कहता है—'विवृतमूष्मणाम्'। ऊष्मका पुराना नाम **ऊष्मा** मिलता है। इनमें श, स, ष; के उच्चारणमें शीत्कार (hissing)की ध्वनि सुनाई पड़नेके कारण इसे **शीत्कारी** ध्वनि भी कहते हैं।

ऊष्म संधि—ऐसी संधि, जिसमें विसर्गके स्थानपर ऊष्म हो जाता हो। जैसे हरिः+चरति=हरिश्चरति। इसे **व्यापन्न ऊष्म-संधि** भी कहते हैं। **विक्रांत ऊष्म संधि** वहाँ होती है जहाँ विसर्ग अपरिवर्तित रहता है। जैसे कः+त्सरु=कः त्सरु।

ऊष्मा—**ऊष्म** (दे०)का एक अन्य नाम।

ऊष्मीकरण (assibilation)—एक प्रकार-का ध्वनि परिवर्तन। (दे०) **ध्वनिपरिवर्तनकी दिशाएँ**। कभी-कभी ऐसी ध्वनियाँ जो ऊष्म (स, श, ष) नहीं होतीं, ऊष्म हो जाती हैं। इसे ही ऊष्मीकरण या **ऊष्मीभवन** कह सकते हैं। मूल भारोपीयके कुछ शब्दोंमें कंठ्य ध्वनियाँ **सतम्** (दे०) वर्गमें ऊष्म हो गयी थीं, जबकि **केंतुम्** (दे०)में वे कंठ्य ही रहीं। इसी आधारपर भारोपीय परिवारको केंतुम्, सतम् दो वर्गोंमें बाँटा गया है। (दे०) **भारोपीय परिवार**में **भारो-पीय परिवारका विभाजन** उपशीर्षक।

ऊष्मीभवन—**ऊष्मीकरण** (दे०) का एक अन्य नाम।

ऋ

ऋकार—ऋके लिए प्रयुक्त नाम। संस्कृत ग्रंथोंमें इसके १८ भेद किये गये हैं। (दे०) **कार**। हिन्दी आदि भाषाओंमें 'ऋ'का शुद्ध उच्चारण अब नहीं होता। इसके स्थानपर लोग 'रि' कहते हैं।

ऋग्विराम—छंदके अंतमें आनेवाला विराम जो ऋक्तंत्रके अनुसार दो तथा तैत्तिरीय प्रातिशाख्यके अनुसार तीन मात्राओंका होता है। तैत्तिरीय प्रातिशाख्यमें आता है: ऋग्विराम : पदविरामो विवृत्तिविराम-स्समानपद विवृत्तिविरामः त्रिमात्रो द्विमात्र एकमात्रोऽर्धमात्रानुपूर्व्येण।

ऋणात्मक अनिश्चित परिमाणवाचक विशे-षण—(दे०) **विशेषण**।

ऋणात्मक संख्यावाचक विशेषण—(दे०) **विशेषण**।

ऋषितपस्तप्तलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललितविस्तर' में दी गयीं ६४ लिपियोंमेंसे एक।

ए

एंडोस्कोप (endoscope)—**लैरिंगोस्कोप** (दे०)का सुधरा हुआ रूप। यों तो हिग-नर, मैकोनसेली आदि कई विद्वानोंने लैरिं-गोस्कोपको सुधारनेका कार्य किया, किन्तु, प्लेटाउका कार्य सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। इन्होंने इसे सुधारकर एंडोस्कोप बनाया, जिसके सहारे मुँह बन्द रहनेपर भी स्वरयन्त्रका अध्ययन हो सकता है। स

प्रकार ध्वनियोंके मूलस्थानके अध्ययनमें इस नवीन यन्त्र एंडोस्कोपसे अब पर्याप्त सहायता मिल रही है ।

ए (e)—**वर्ल्शिन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

एइन्बव—(दे०) **येइन्बव** ।

एक करण ध्वनि (homoorgonic sound)—एक उच्चारण-अवयवसे उच्चरित होनेवाली ध्वनियाँ एक दूसरेके संदर्भमें एककरणीय ध्वनि कहलाती हैं । इन्हें **समकरण ध्वनि** भी कहते हैं ।

एक कर्मक—एक कर्मवाली क्रिया । (दे०) **द्विकर्मक** ।

एक ध्वनि-व्यंजक वर्ण—ऐसा वर्ण या अक्षर जो केवल एक ध्वनिको (जैसे क) व्यक्त करे । (इसके विरुद्ध अंग्रेज़ी सी (c) बहु-ध्वनि व्यंजक वर्ण है । कभी 'स'को व्यक्त करता है, कभी क) ऐसे वर्णोंसे लिखी गयी वर्तनी अंग्रेजीमें (homographic spelling) कहलाती है ।

एक ध्वनीय शब्द (monophone)—केवल एक ध्वनिवाला शब्द या रूप । जैसे, आ ।

एकपद—एक पद या शब्दवाला ।

एक परिवार सिद्धांत (monogenesis theory)—एक प्राचीन सिद्धांत, जिसके अनुसार विश्वमें केवल एक भाषा परिवार है, अर्थात् विश्वकी सभी भाषाएँ एक मूल भाषासे विकसित हुई हैं । अब इसे कोई नहीं मानता ।

एक पार्श्विक—पार्श्विक (दे०)का एक भेद ।

एकप्रयत्नीय ध्वनि—एक प्रकारके प्रयत्नसे उच्चरित ध्वनियाँ एक दूसरेके संदर्भमें एकप्रयत्नीय ध्वनियाँ कहलाती हैं । इन्हें **समप्रयत्नीय ध्वनि** भी कहते हैं ।

एकमात्रिक—एक मात्राका ।

एकमूलीयभिन्नार्थक शब्द—एक प्रकारके शब्द (दे०) ।

एकमूलीय शब्द (cognate word)—एक या विभिन्न भाषाओंमें प्रयुक्त ऐसे शब्द, जो एक ही शब्द, मूल या धातुपर आधारित हों । जैसे सं० पशु, अंग्रेज़ी फ़ीस; या हिन्दी भाई, फ़ारसी बिरादर ।

एक वचन (singular number)—(दे०) **वचन** । पाणिनिने द्विवचन तथा एकवचनके संबंधमें कहा है—'द्व्येकयोर्द्विवचनैकवचने' (१.४.२२) ।

एकवर्ण—एक वर्णवाला ।

एकवर्णीय शब्द (monophone) ऐसा शब्द जो लिखनेमें केवल एक वर्ण या अक्षर द्वारा लिखा जा सके । जैसे आ ।

एक वाक्य—एक वाक्यवाला ।

एक शब्दीय अभिव्यक्ति (holophrasis)—(दे०) **एकशब्दीय वाक्य** ।

एक शब्दीय वाक्य (holophrase) एक शब्द जो एक पूरे विचार, वाक्य, उपवाक्य (एकशब्दीय उपवाक्य) या वाक्यांश (फ्रेज़) (एकशब्दीय वाक्यांश)को प्रकट करे । इस प्रकारकी अभिव्यक्ति **एक शब्दीय अभिव्यक्ति** (holophrasis) कहलाती है ।

एकशेष द्वन्द्व समास—(दे०) **समास** ।

एकश्रुति—एक प्रकारका **सुर** (दे०) । 'एकश्रुति'का शाब्दिक अर्थ है ' समसुरता', 'समस्वरता' या 'एक ही सुरमें उच्चारण' । इसके संबंधमें प्राचीन तथा अर्वाचीन सभी विद्वानोंमें मतभेद रहा है । महाभाष्यकारने इस प्रसंगमें तीन मतोंका उल्लेख किया है—(क) एकश्रुति एक प्रकारका स्वतंत्र सुर है । सुरके ७ भेदों (उदात्त, उदात्ततर, अनुदात्त, अनुदात्ततर, स्वरित, स्वरित-स्थोदात्त, एकश्रुति)में यह भी है । (ख) ऐसा अक्षर या स्वर जिसका सुर परवर्ती सुरके ही समान हो । (ग) उदात्त और अनुदात्तके बीचका सुर । इनके अतिरिक्त भी इसके संबंधमें अनेक प्रकारके मत प्रकट किये गये हैं : (क) कुछ लोगोंके अनुसार यह एक प्रकारका स्वरित है । (ख) पाणिनिने कहा है—'एकश्रुति दूरात् संबुद्धौ' । इसका स्पष्टीकरण अनेक प्रकारसे किया गया है । दयानन्द सरस्वती कहते हैं 'दूरसे

अच्छी प्रकार बलसे बुलानेमें उदात्त, अनुदात्त, स्वरितका एक तार श्रवण' ही एकश्रुति है । कुछ अन्य लोगों जैसे जयादित्यका यह कहना है कि यहाँ एकश्रुतिका अर्थ है--'ऐसा वाक्य जिसका एक स्वरसे उच्चारण हो'।। पाणिनिने एकश्रुतिके संबंधमें सात अन्य सूत्र भी लिखे हैं । (ग) काशिकाकारने कहा है कि उदात्त, अनुदात्त, स्वरितका एकमें मिल जाना एकश्रुति है। आश्वलायन भी इन तीनोंकी सन्निकर्षताको एकश्रुति कहते हैं। (घ) एक अन्य मतके अनुसार एक बलाघात या सुरमें उच्चरित ध्वनियाँ भी एकश्रुति कहलाती हैं। एकश्रुतिको तान या प्रचय भी कहा गया है।

एकश्रुति सुर—सुर (दे०)का एक भेद ।

एकांगी विपर्यय—विपर्यय (दे०)का एक भेद।

एकाक्षर—एक अक्षर (syllable) वाला। इसे **एकाक्षरी** भी कहते हैं।

एकाक्षर परिवार—चीनी परिवार (दे०)का एक अन्य नाम।

एकाक्षर भाषा—अयोगात्मक भाषा (दे०) का एक अन्य नाम।

एकाक्षरी (monosyllabic)—(दे०) एकाक्षर।

एकाक्षरी भाषा (monosyllabic language)—ऐसी भाषा जिसके अधिकांश शब्द एक अक्षर (syllable)के हों। जैसे-चीनी।

एकाक्षरी शब्द—वे शब्द जिनमें एक अक्षर हों। जैसे-राम।

एकाच् भाषा--अयोगात्मक भाषा (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

एकादेश--दो या अधिक भाषिक इकाइयों (ध्वनि, रूपांश, शब्दांश, रूप, शब्द आदि) के स्थानपर एक भाषिक इकाईका **आदेश** (दे०) यी हो जाना। उदाहरणके लिए संधिमें 'अ' और 'उ'के स्थानपर 'ओ'का हो जाना एकादेश है।

एकाधिक ध्वनिद्योतक वर्ण--**बहु ध्वनिव्यंजक वर्ण** (दे०)का एक अन्य नाम।

एकार--एके लिए प्रयुक्त नाम। (दे०) **कार**।

एकार्थ--एक अर्थवाला (शब्द आदि)।

एकार्थी शब्द--एक प्रकारके शब्द (दे०)।

एकीभाव--दो या अधिकका एक हो जाना।

एकेयन (achaean)—प्राचीन ग्रीक भाषाकी एक पश्चिमी बोली।

एक्विटेनिअन (aquitanian)--इबरियन प्रायद्वीपकी एक प्राचीन बोली। कुछ लोगोंके अनुसार आधुनिक 'बास्क'की यह जननी है। इस भाषाके बारेमें कुछ विशेष ज्ञात नहीं है। इसके कुछ व्यक्तिवाचक नाम ही आज उपलब्ध हैं।

एक्वियन (aequian)—भारोपीय परिवारकी एक सैबेलियन बोली जो अब नहीं बोली जाती।

एक्विलिअन--एक **सैबेलियन** (दे०) बोली।

एक्सरे (x-ray)--चिकित्साशास्त्रका सुप्रसिद्ध यंत्र। ध्वनिविज्ञानमें विभिन्न ध्वनियोंके उच्चारणमें जीभ तथा जबड़ेकी स्थितिका ठीक ज्ञान करनेके लिए इसका प्रयोग किया जाता है। मानस्वरोंके एक्सरे चित्र ध्वनि-विज्ञानकी कई पुस्तकोंमें दिये गये हैं। जोन्स, स्टीफ़ेन, जॉर्ज आदिने इस क्षेत्रमें पर्याप्त काम किया है।

एक्सो लिंग्विस्टिक्स (exo linguistics) (दे०) **मेटा लिंग्विस्टिक्स**।

ए-जेन--(दे०) **ये-जेन**।

एटेन (eten)—दक्षिणी अमेरिकाके **युंका** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त भाषा।

एडोमाइट लिपि (edomite)—**कैनानाइट लिपि** (दे०)का एक रूप।

एतुन--(दे०) **येतुन**।

एत्रुस्कन (etruscan)—एक विलुप्तभाषा। पूर्व रोमन कालमें तथा रोमन कालमें यह भाषा इटलीके मध्य और उत्तरी प्रदेशमें बोली जाती थी। इसे विद्वान् बहुत दिनोंतक भारोपीय परिवारकी ही समझते रहे हैं पर, इधर जबसे इसके बहुतसे शिलालेख और एक पुस्तककी प्राप्ति हुई है, यह विचार बदल गया है। भूमध्य सागरके कुछ द्वीपोंकी मूल

भाषाओंसे इस भाषाका कुछ सम्बन्ध अवश्य ज्ञात होता है,किंतु इस सम्बन्धमें आवश्यक खोज यथेष्ट रूपमें अभीतक नहीं हुई है, अतः निश्चयके साथ कुछ नहीं कहा जा सकता । कुछ लोग इसे 'काकेशी'से सम्बन्धित भी मानते हैं किन्तु यह भी सर्वमान्य नहीं है । अधिकतर लोगोंका यही कहना है कि यह किसी भी ज्ञात परिवारसे संबद्ध नहीं है । एत्रुस्कनका प्राचीनतम रूप ९वीं सदी ई० पू०का है ।

एत्रुस्कन लिपि--**ग्रीक लिपि** (दे०)से विकसित एक लिपि जिसमें २६ अक्षर थे । रूनी, फैलिस्कन, ओस्कन, उंब्रिअन तथा लैटिन आदि लिपियाँ इससे विकसित हुई हैं ।

A 8 7 Λ ∃ ⊐ H I ⋊ ⅃ ᛗ

ᛗ O 7 ◇ 1 ? T Y X

[रोमन या लैटिनकी ए, बी, सी, डी, ई, एफ़, एच, आइ, के, एल, एम, एन, ओ, पी, क्यू, आर, एस, टी, एक्स आदिकी आकृति इनमें स्पष्ट है ।]

एनिमगा (enimaga)--**एनिमगा परिवार** (दे०)की एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

एनिमगा परिवार (enimaga)--**दक्षिणी अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार । इस परिवारमें चार भाषाएँ हैं : **टोबोथली, एनिमगा, गुएनटूसे** तथा **लेंगुआ** । इनमें प्रथमको छोड़कर सभी भाषाएँ विलुप्त हो चुकी हैं ।

एनिसेई समोयद--(दे०)**येनिसेई समोयद** ।

एन--इस भाषाके बोलनेवाले जापानसे उत्तर कुछ टापुओंमें पाये जाते हैं । इसमें दो-तीन बोलियाँ हैं । कोरियाईकी ही भाँति यह भी अश्लिष्ट-योगात्मक है । इसमें साहित्यका नितान्त अभाव है । अभीतक इसे किसी भी भाषा-परिवारसे संबद्ध नहीं किया जा सका है ।

एपास्ट्रफ़ि (apostrophe)--कॉमाका किसी छूटे हुए अंश(ध्वनि या अक्षर)को दर्शित करनेके लिए प्रयोग । जैसे don't, औ' । हिन्दीमें इसका प्रयोग अधिक नहीं हुआ है । अंग्रेज़ी आदिमें इसका पर्याप्त प्रचलन है ।

एपिसिप्रिअन--**सिप्रिओटे** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

एफ़िक (efic)--**फ़ी** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

एबिबसीनियन--**इथिओपियन** (दे०)का पुराना नाम ।

एमा--(दे०) **धेमा** ।

एमिलियन (emilian)--एक **गैलो इतालवी** (दे०) बोली । **इतालवी** (दे०) साहित्य इसमें भी लिखा गया है ।

एम् शोंग--(दे०) **येम् शोंग** ।

एरव--(दे०) **येरव** ।

एरागोनीज़ (aragonese)--स्पेनकी एक मृत बोली । इबरिअन प्रायद्वीपका पूर्वमध्य भाग इसका क्षेत्र था । इसकी बहुत कम सामग्री उपलब्ध है ।

एरिलिगारु (eriligaru)--**इरुल** (दे०)का एक प्राचीन नाम ।

एरु--(दे०) **येरु** ।

एरुकल--(दे०) **येरुकल** ।

एर्ङगा--(ernga) **कोर्वा** (दे०)का एक रूप ।

एलामाइट (elamite)--एक अनिश्चित परिवारकी विलुप्त भाषा । यह ईरानमें २५०० ई० पू०से पहली सदीतक बोली जाती थी । इसे द्राविड़ तथा काकेशी आदिसे संबद्ध करनेके असफल प्रयत्न हुए हैं । इसे सूसिअन (susian)भी कहते हैं प्राचीनको ऐन्ज़ानाइट(anzanite)तथा बादकी एलमाइट कोहोज़ी (hozi) भी कहते हैं ।

एलामाइट लिपि (elamite script)--ईरानकी खाड़ीके उत्तर एलाम नामक प्रदेशमें प्रचलित लिपि । यह चित्रात्मक तथा रेखात्मक लिपि है । एलामाइटलिपि प्रायः दायेंसे बायें,

किंतु कभी-कभी बायेंसे दायेंको भी लिखी जाती थी। **प्राचीन एलामाइट लिपि** कदाचित् वहांके लोगोंकी अपनी ही आविष्कृत लिपि थी। **परवर्ती एलामाइट लिपि** इस प्राचीन लिपिसे निकली न होकर बेबीलोनी क्यूनिफ़ार्म लिपिसे निकली थी।

एलू––सिंहली (दे०) भाषाका क्लासिकल साहित्यिक रूप, जिसमें विदेशी तत्त्वोंका मिश्रण नहीं है। इसपर कुछ मराठी प्रभाव भी है।

एलेक्ट्रो कायमोग्राफ़––एक प्रकारका विकसित **कायमोग्राफ़** (दे०)।

एलेमैनिक (alemannic) जर्मनीमें प्रयुक्त एक बोली जो १००० ई० के आसपास समाप्त हो गयी। उच्च जर्मन भाषाका आधार बवेरिअन तथा लोंबर्डके साथ यह बोली भी थी।

एशियानिक––(१) एशिया माइनर तथा मेसोपोटामिया आदिमें प्राचीन कालमें बोलीजानेवाली भाषाओंका सामूहिक नाम। यह नाम भौगोलिक है। इसके अंतर्गत सुमेरिअन, खाल्दी (khaldic) या वन्निक (अन्य नाम urortaean) मीसिअन (mysian) पल्वा (palwa), या पलायन (palain), या बलायन (balain), पैम्फीलिअन (pamphylian), पफ्लगोनिअन (paphlagonian), पिसिदिअन (pisidian) पोण्टिक (pontic), सुबरेइअन (subaraean इसीमें मितानी (mitannian) तथा हूरिअन (hurrian) सम्मिलित हैं), लीडिअन (lydian), मैरिऐंदीनियन (mariandynian) लीसिअन (lycian) बिथीनिअन (bithynian), कप्पदोसी (cappadocian) कैरिअन (carian) क्रीटन (cretan) या एपिक्रीटन, सिलिसिअन (cilician) कोसेयन (cossaen) या कस्साइट (kassite), साइप्रिओटे (cypriote) या एपिसाइप्रिअन (epicyprian), एलामी या एलामाइट (elamite); अन्य नाम सूसिअन (susian), ऐन्ज़नाइट (anzanite), तथा होज़ी (hozi) आदि), यूट्रस्कन (etruscan) इसौरिअन (isaurian), खाटिअन (khatian), जर्जिटोसोलिमिअन (gergito-solymian) आदि आती हैं। (२) एक प्राचीन भाषाका नाम। (दे०) **भारोपीय एनाटोलियन परिवार**।

एश्कुन––(दे०) **येश्कुन**।

एसपिरेंतो (esperanto)––कृत्रिम या मानवनिर्मित भाषाओंमेंसे सर्वाधिक प्रमुख तथा कुछ अंशोंमें प्रचलित (लगभग १ करोड़ लोग इसे जानते हैं) एक विश्वभाषा। एक विश्वभाषाके निर्माणके लिए कितने ही लोगोंने प्रयास किये, किंतु इस संबंधमें सबसे सफल और स्तुत्य प्रयास डॉ० एल० एल० ज़मेनहाफ़ (zomenhof) का है। आप बहुत ही बड़े भाषा-विज्ञान-विशारद थे। यूरोपकी लगभग सभी भाषाओंको लिख, पढ़ और बोल सकते थे। आपने अपना पूरा जीवन इस कृत्रिम विश्व-भाषा एसपिरेंतोके लिए लगाया। **आरंभ और प्रचार**––सर्वप्रथम सन् १८८७ ई० में डाक्टर महोदयने अपनी इस अभूतपूर्व भाषाको विश्वके समक्ष रखा। पहले तो लोग इसकी ओर आकर्षित न हो सके किंतु शीघ्र ही इसकी उपयोगिता और महत्ता समझमें आने लगी और यूरोपके बड़े-बड़े विद्वान् इसकी प्रशंसा करने लगे। प्रचारार्थ एक इसी नामकी संस्था भी खुली। लीग ऑव् नेशन्सने सभी राष्ट्रोंसे इसके लिए कहा और यह भी अनुरोध किया कि स्कूलोंमें इसका पढ़ाया जाना आरंभ हो। सन् १९२५में अन्तरराष्ट्रीय टेलीग्राफ़िक संघने इसकी बड़ी प्रशंसा की और इसे बहुत ही स्पष्ट भाषा कहा। दो वर्ष बाद सन् १९२७ में संसारके ४४ प्रधान रेडिओ स्टेशनोंसे इसके विषयमें और इस भाषामें भाषण दिये गये। दिल्लीमें भी इसके पढ़ानेका प्रबंध है। **एसपिरेंतोका साहित्य**––इसमें कुछ मौलिक पुस्तकें भी लिखी गयीं, पर अनूदित पुस्तकोंकी

संख्या बहुत अधिक है : सब मिलाकर लगभग चार हज़ार पुस्तकें और बहुत-सी पत्रिकाएँ हैं। अनूदित पुस्तकोंमें बाइबिलका अनुवाद बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। इसका साहित्य दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। अभी निकट भूतमें एसपिरैंतो भाषामें १०० से भी अधिक पत्रिकाएँ निकलती रही हैं। **कमी**--इस भाषाकी सबसे बड़ी कमी यह है कि यह जीवित भाषा नहीं है, और न तो इसका स्वाभाविक विकास ही हुआ है। यदि किसी राष्ट्र या क्षेत्रकी यह मातृभाषा होती तो इसका प्रचार और अधिक तेज़ीसे होता और इसके सर्वमान्य होनेकी भी संभावना होती। उपर्युक्त कमीके कारण ही सरल, उपयोगी और स्तुत्य भाषा होनेपर भी अभीतक विश्व क्या किसी एक देशकी भी भाषा बननेमें एसपिरैंतो सफल न हो सकी। **व्याकरण, लिपि और शब्द-समूह**--स्वयं एसपिरैंतो शब्द लैटिनके एक शब्दसे बना है और इसका अर्थ 'आशापूर्ण' है। डॉ० ज़मेनहाफ़ने इसको बनानेके पूर्व बहुत-सी भाषाओंके व्याकरणोंका विश्लेषण किया था। उस विश्लेषणके आधारपर इस भाषाके सम्बन्धमें उन्होंने सोलह नियम बनाये, जिन्हें कोई भी पढ़ा-लिखा आदमी आधे घण्टेमें पूर्णतः समझ सकता है। इसके व्याकरणमें सादृश्य (analogy)का बहुत बड़ा हाथ है। वाक्य रचनाकी दृष्टिसे यह अश्लिष्ट-योगात्मक भाषा है। तुर्कीकी भाँति इसमें भी सम्बन्ध तत्त्व बिल्कुल स्पष्ट रहते हैं। उदाहरणार्थ:--

कैट (kat) = बिल्ली
इन (in) = स्त्रीलिंगका चिह्न
इड (id) = बच्चोंका चिह्न
एट (et) = छोटेका चिह्न
ओ (o) = संज्ञाका चिह्न

इनके योगसे--

एक बिल्ली (स्त्री०) = कैट-इन-ओ (kat-in-o) एक बिल्लीका बच्चा = कैट-इड-ओ (kat-id-o) एक छोटी बिल्ली (स्त्री०)-का बच्चा = कैट-इन-एट-इड-ओ (kat-in-et-id-o)

इसी प्रकार सभी शब्दोंको पद बनानेके लिए केवल प्रत्यय जोड़ना पड़ता है। इस भाषाकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि अपवाद नहीं मिलते। इसी कारण एक सप्ताहमें ही पढ़कर यह बोली जा सकती है। इसकी लिपि रोमन है, पर अंग्रेज़ीकी भाँति इसमें पढ़नेकी कठिनाई नहीं। निश्चित नियमके अनुसार जो कहा जाता है, वही लिखा जाता है और जो लिखा जाता है वही पढ़ा जाता है। शब्द-समूहके लिए विशेषतः आधार भारोपीय है। धातुपर शब्द आधारित हैं। इन धातुओंमें आधीसे भी अधिक लैटिन भाषासे ली गयी हैं और शेषमें आधीसे कुछ अधिक ट्यूटानिक भाषाओंकी हैं। बाकी लगभग १० प्रतिशत धातुएँ अन्य भाषाओंकी हैं। **इडो (ido) एक शाखा**--बीसवीं सदीके आरम्भमें कुछ लोग एसपिरैंतोमें कुछ परिवर्तनके पक्षपाती हो गये। पर जब इसके प्रधान लोगोंने उन परिवर्तनोंको स्वीकार नहीं किया तो ये लोग, जिनमें प्रधान कॉटुरट (couturat) महोदय थे, एक नवीन परिवर्तित और अधिक उपयोगी तथा सरल भाषाको जन्म देनेकी बात सोचने लगे। इसी ध्येयसे इस भाषाको और अधिक लचीली, वैज्ञानिक सरल और स्वाभाविक बनाकर सन् १९०७ में 'इडो' नामसे नवीन भाषाकी स्थापना की गयी। 'इडो' शब्द स्वयं एसपिरैंतो भाषाका है, जिसका अर्थ 'बच्चा' या 'जन्मा' हुआ है। एसपिरैंतोमें जो कुछ कठिनाइयाँ थीं, इडोमें नहीं हैं, अतः यह विश्व-भाषा होनेके लिए और भी अधिक उपयोगी है। पर, इन दोनोंमें हो कोई भी विश्व-भाषा हो सकेगी यह सन्देहास्पद है। सत्य तो यह है, कि किसी भी कृत्रिम भाषाको यह स्थान प्राप्त हो सकेगा, यह सोचना ही अस्वाभाविक और सत्यसे दूर है।

एसपेरैंतिको (esperantido)—प्रसिद्ध फ्रांसीसी भाषाविज्ञानविद् सास्यूर द्वारा, **एसपिरैंतो** (दे०)का संशोधन करके बनायी गयी एक कृत्रिम भाषा ।

एस्कगुएय (eskaguey)—**टिमोटे** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

एस्किमो—(दे०) **एस्किमो-अल्यूट** ।

एस्किमो-अल्यूट(eskimo-aleut) एलास्का, हडसनकी खाड़ी तथा लेब्राडारके आसपास, ग्रीनलैंड एवं अल्यूशिअन आदि द्वीपोंमें, धुर उत्तरी अमेरिका तथा धुर उत्तरी एशियामें प्रयुक्त भाषाओंका एक परिवार । इस परिवारमें कुछ बातें यूराल-अल्ताईके समान हैं, कुछ फ़िनो उग्रिकके, किंतु किसीसे भी इनका पारिवारिक संबंध अभीतक सिद्ध नहीं हो सका है । इस परिवारको अल्यूट या (द्वीपके नामपर) या केवल **एस्किमो** भी कहते हैं ।

एस्कुआरा (eskuara)—**बास्क** (दे०) बोलनेवाले अपनी बास्क भाषाको इसी नामसे पुकारते हैं ।

एस्कुरा (eskura)—**बास्क** (दे०)का एक अन्य नाम ।

एस्ट्रैङलो (estrangelo)—एक प्राचीन सिरिअक लिपि । इसका प्रयोग सिरिअक भाषाके लिखनेमें लगभग ५वीं सदीतक होता रहा ।

एस्सेलेन (esselen)—**होक** (दे०) भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा । अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है ।

एहुए—(ehue) **सूडानवर्ग** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा । इसे **एवे** या **इवे** (ewe) भी कहते हैं । इसका क्षेत्र टोगोलैंड तथा गोल्डकोस्टका कुछ भाग है । उस क्षेत्रमें इस भाषाका प्रयोग एक अन्तरराज्य-भाषाके रूपमें होता है ।

ऐ

ऐंग्लिअन—प्राचीन अंग्रेज़ी या ऐंग्लो-सैक्सन-की नार्थम्ब्रिअन तथा मर्सिअन बोलियोंका एक सामूहिक नाम ।

ऐंग्लिक (anglic)—विश्व-भाषाके रूपमें प्रयुक्त होनेके लिए इस सदीके प्रथम चरण-में ज़ैक्रिसन (zachrisson) द्वारा बनायी गयी एक कृत्रिम भाषा । इसका आधार अंग्रेज़ी है ।

ऐंग्लो-अमेरिकन—आधुनिक अंग्रेज़ीके लिए एक प्रयुक्त नाम । अंग्रेज़ी अब मात्र इंग्लैंडमें न रहकर अमेरिका आदि अनेक अन्य स्थानों-पर भी फैल गयी है । इसीलिए कुछ लोग अधिक व्यापक नामके रूपमें इसका प्रयोग अधिक समीचीन मानते हैं ।

ऐंग्लो-इंडियन—भारतमें विकसित एक प्रकार-की अंग्रेज़ी इसका प्रयोग भारतमें रहनेवाले अंग्रेज़ कर्मचारियोंमें होता था । इसका शब्द-समूह भारतीय भाषाओंके शब्द-समूह-से बहुत प्रभावित था । इसीको हॉब्सन जॉब्सन भी कहा गया है । यूल और बर्नेल-का प्रसिद्ध हॉब्सन-जाब्सन कोश ऐंग्लो-इंडियन भाषाका ही है ।

ऐंग्लो-नार्मन—इंग्लैंडमें १३वीं सदीतक प्रयुक्त होनेवाली प्राचीन फ्रांसीसी भाषाकी नार्मन बोली ।

ऐंग्लो-फ्रिज़िअन—भारोपीय परिवारकी कैंतुम शाखाकी जर्मनिक उपशाखाकी एक शाखा । इसका संबंध पश्चिमी जर्मनसे है । अंग्रेज़ी और फ़्रिज़िअन आदि इसीसे विकसित हुई हैं ।

ऐंग्लो-सैक्सन (anglo-saxon)—प्राचीन अंग्रेज़ी, जिसका समय मोटे रूपसे ४५० ई० से ११०० ई० तक माना जाता है । आधुनिक अंग्रेज़ी, इसीसे विकसित हुई है । **केंटिश** (दे०) और **मर्शिअन** (दे०) ऐंग्लो-सैक्सन बोलियोंमें प्रमुख हैं ।

ऐंज़ाइट—प्राचीन **एलामाइट** (दे०) भाषा ।

ऐंदल्युसिअन—दक्षिणी स्पेनमें ऐंदल्यूसिआमें

प्रयुक्त एक स्पैनिश बोली। स्पेनकी परिनिष्ठित और साहित्यिक भाषा कैस्टिलिअनका ही यह एक रूप है।

ऐंदी (andi)--काकेशस परिवारकी काकेशसमें प्रयुक्त एक भाषा।

ऐंपेओ (empeo)--चीनी परिवारकी असमी-बर्मी शाखाके नागा वर्गके **नागाबोदो** (दे०) उपवर्गकी उत्तरी कछार (असम)-में प्रयुक्त एक भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ९९५९के लगभग थी।

ऐंब्स (embs)—**एम्पेओ** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

ऐंक्विटेनियन (aquitanian)--**बास्क** (दे०)की एक पूर्वजा भाषा।

ऐटन (aiton)--चीनी परिवारकी असममें बोलीजानेवाली 'शान' (दे०) भाषाकी एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २०० थी।

ऐट्टिक (attic)--अथेन्समें प्रयुक्त एक प्राचीन बोली। प्राचीन ग्रीसकी यही प्रमुख साहित्यिक भाषा थी।

ऐतिहासिक काल (historical tenses)—भूतकालके सभी भेदोंके लिए प्रयुक्त एक सामूहिक नाम।

ऐतिहासिक ध्वनि-विज्ञान (historical phonetics या diachronic phonetics ध्वनिविज्ञानका एक रूप, जिसमें किसी भाषाकी ध्वनियोंका ऐतिहासिक अध्ययन करते हैं। **वर्णनात्मक ध्वनिविज्ञान** (दे०) से प्राप्त किसी भाषाके विभिन्नकालोंकी ध्वनि-सामग्रीके आधारपर इस ध्वनिविज्ञानमें उस भाषाकी ध्वनियों एवं **ध्वनिविशेषताओं**की उत्पत्ति, तथा उनके इतिहास या विकासका अध्ययन करते हैं, विभिन्न कालोंमें उसमें घटित **ध्वनि-परिवर्तन** (दे०) उनके कारण तथा दिशाओंपर विचार करते हैं, एवं **ध्वनि-नियम** (दे०)आदिका पता लगाते हैं। इसे ध्वनि-प्रक्रिया या ध्वनि-प्रक्रियाविज्ञान (phonology) भी कहते हैं।

ऐतिहासिक रूपविज्ञान (historical morphology) **रूपविज्ञान** (दे०) का एक भेद।

ऐतिहासिक लिपि विज्ञान--एक प्रकारका **लिपिविज्ञान** (दे०)।

ऐतिहासिक वर्गीकरण--**पारिवारिक वर्गीकरण** (दे०)का एक अन्य नाम।

ऐतिहासिक वर्तमान (historical present)--भूतकालिक घटनाओंके लिए प्रयुक्त वर्तमान काल। किस्से-कहानियोंमें इसका प्रायः प्रयोग होता है। जैसे--'पुराने ज़मानेमें एक राजा थे। एक बार देखा गया कि वे **चल रहे हैं**। किंतु पृथ्वीपर उनकी छाया नहीं **पड़ रही है**।'

ऐतिहासिक वाक्य विज्ञान (historical syntax) (दे०) 'वाक्य विज्ञान'।

ऐतिहासिक व्याकरण (historical grammar)--व्याकरणका वह रूप जिसमें किसी भाषाकी ध्वनियों, उसके व्याकरणिक रूपों एवं वाक्य-रचनामें शब्द-क्रम या अन्य नियमों आदिके ऐतिहासिक विकासपर प्रकाश डाला जाता है और उससे संबद्ध पूर्ववर्ती भाषा या भाषाओंके व्याकरणिक रूपों या नियमोंसे उसके रूपों एवं नियमोंका संबंध दिखलाते हैं। (दे०) **व्याकरण**।

ऐनू (ainu)—एक जापानी भाषा। इसके बोलनेवाले लगभग २०,००० हैं। इसके पारिवारिक संबंधका पता नहीं है।

ऐफ्रिकन--अफ्रीकाके बांटू, होटेंटोट, बुशमैन, सुडानी, गिनी आदि परिवारों-उपपरिवारोंकी भाषाओंका एक सामूहिक नाम।

ऐफ्रिकान्स (afrikaans)--डचका एक सरल रूप जो दक्षिणी अफ्रीकामें प्रयुक्त होता है। इसे **ताल, केपडच, दक्षिणी अफ्रीकी डच** भी कहते हैं। इसके बोलनेवाले १०,००,००० से ऊपर हैं।

ऐबुर (aibur)--बर्मामें चिन पहाड़ियोंपर बोलीजानेवाली एक भाषा। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३४०० थी। यह भाषा संभवतः

'कूकीचिन' वर्गकी है ।

ऐमल (aimol)––मणिपुरमें बोली जाने-वाली चीनी परिवारके **कूकी-चिन** (दे०) वर्गकी एक भाषा । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या मोटेरूपसे ७५० थी ।

ऐम्हारिक (amharic)––एक पश्चिमी सेमिटिक भाषा जिसका क्षेत्र इथियोपिआ है । इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३० लाख-के लगभग है ।

ऐरुकन (arucan)––दक्षिणी अमेरिकाका एक भाषापरिवार । इसकी भाषाएँ चाइलमें तथा उसके आसपास बोली जाती हैं । इसमें हुलिचे, लीवुचे, मपुचे, पेहुंचे आदि कुछ भाषाएँ ही अब बच गयी हैं । अन्य समाप्त हो गयी हैं ।

ऐश्केनैजिक (ashkenazic)––उत्तरी यूरोपीय यहूदियों (जिन्हें 'ऐश्के नाज़िम' कहते हैं) द्वारा प्रयुक्त एक भाषा ।

ऐस्मेरल्डा (esmeralda)––**दक्षिणी अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक विलुप्त अमेरिकी भाषा-परिवार । इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी है ।

ओ

ओंगे––एक **अंडमानी** (दे०) भाषा ।

ओइयन (oiyan)––**मिरी** (दे०)का पूर्वी असममें प्रयुक्त एक रूप ।

ओकोरोनो (okorono)––**चपकुरा** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

ओखै (okhai)––१९२१ की बड़ौदा जन-गणनाके अनुसार **गुजराती** (दे०)का ओख मंडलमें प्रयुक्त एक रूप ।

ओगम (ogham) ब्रिटिश आइल्समें केल्टिक लोगों द्वारा प्रयुक्त एक प्राचीन लिपिके चिह्न । इसकी उत्पत्ति विवादास्पद है । कुछ लोग इसे ग्रीक लिपिके एक क्षेत्रीय रूप-से विकसित मानते हैं तो कुछ लैटिनसे । कुछ लोग इसको किसी भी अन्य लिपिसे संबद्ध करनेके पक्षमें नहीं हैं ।

ओजिब्बे (ojibway)––**केन्द्रीय अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा । इसका एक अन्य नाम **चिप्पेव** भी है । इसका क्षेत्र ग्रेटलेक क्षेत्रमें है ।

ओजी––**त्वि** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

ओझी––**बघेली** (दे०) बोलीका एक गोंड़ी (बोली) मिश्रित रूप जो छिंदवाड़ाके ओझा (द्रविड़ गोड़ोंकी एक उपजाति) लोगोंमें प्रचलित है । इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार १०० थी ।

ओटुके (otuke)––**बोरोरो परिवार** (दे०)-की एक विलुप्त दक्षिणी-अमेरिकी भाषा ।

ओटो (oto)––**चिवेरे** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी-अमेरिकी भाषा ।

ओटोमक (otomak)––**दक्षिणी-अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार । इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी है ।

ओटोमि (otomi)––मध्य अमेरिकाके **ओटोमि** (दे०) परिवारकी एक मुख्य भाषा ।

ओटोमि परिवार (otomi)––**केन्द्रीय अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक भाषापरिवार । इस परिवारमें लगभग २० भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख ये हैं : **ओटोमि, सेर्रानो मेक्को, टेपेहुआ, पमे, मजहुआ, पिरिंडा, मजटेक, चिपनेक, मन्गुए, डिरिआ,** तथा **ओरोटिन** आदि ।

ओडिया (odiya)––**उड़िया** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ओड्की (odki)––पश्चिमी तथा उत्तरी-पश्चिमी भारतमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनु-

सार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २८१४ थी ।

ओड्डर (oddar)—**ओड्की** (दे०)का एक और नाम ।

ओड्डा (odda)—**ओड्की** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ओड्नी (odni)—**ओड्की** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ओड़ अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद ।

ओड़ी—**उड़िया** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ओड़ी अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०)का एक रूप ।

ओड़िया—**उड़िया** (दे०) भाषा या लिपिका उड़ीसामें प्रयुक्त नाम ।

ओत्तोमन (ottoman)—**तुर्की** (दे०) भाषाके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

ओद्शी—**त्वि** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

ओपटा (opata)—**पिमासोनोर** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा । इसका एक अन्य नाम **टेगुइमा** भी है ।

ओपेटोरो (opatoro)—मध्य अमेरिकाके **लेन्का** (दे०) भाषा-परिवारकी एक भाषा ।

ओफ़ो (ofo)—**बिलोक्सी वर्ग** (दे०)की एक उत्तरी अमेरिकी भाषा । अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है ।

ओबयुग्रिअन—**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारका एक भाषा-वर्ग । इसमें **ओस्त्यक** तथा **वोगुल** भाषाएँ आती हैं ।

ओबेरी-ओकैमे (oberi okaime)—अफ्रीकामें नाइजीरियामें कैलाबार प्रदेशके इक्पा गाँवमें एक संप्रदाय द्वारा १९२८ में बनायी गयी एक भाषा । इसमें कुछ नयी ध्वनियाँ भी हैं जो पहले वहाँ नहीं प्रयुक्त होती थीं । इसकी अपनी लिपि भी अलग है ।

ओमह (omaha)—**ढेगिहा** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

ओम्येर्र (emyerr)—**कतुर** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ओरमुरी—एक **ईरानी** (दे०) बोली ।

ओराँव (orao)—**कुरूख़** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ओरिया—**उड़िया** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ओरिस्तिने (oristine)—**बिलेल-चुलुपी परिवार** (दे०)के **लुले** भाषाकी एक विलुप्त प्रमुख बोली ।

ओरेगन (oregon)—उत्तरी अमेरिकाके **पेनुटिअन** (दे०)भाषा-परिवारका एक वर्ग । इस वर्गमें **टकेल्मा, कोअस्टल** तथा **कलपुया** भाषाएँ हैं ।

ओरेगन जार्गन (oregon jargon)—**चिनूक** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

ओरेजोन्स (orejones)—दक्षिणी अमेरिकाके **विटोटो परिवार** (दे०)की एक भाषा ।

ओरोचोन (orochon)—**तुंगुस** (दे०) भाषाकी एक बोली ।

ओरोटिन (orotina)—मध्य अमेरिकाके **ओटोमि** (दे०) परिवारकी एक भाषा ।

ओरोप (orop)—**तुंगुस** (दे०) भाषाकी एक बोली ।

ओर्मुड़ी (ormuri)—अफ़गानिस्तानमें प्रयुक्त एक **ईरानी** (दे०) भाषा ।

ओलिव (olive)—**केन्द्रीय अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार । इस परिवारकी भाषाएँ विलुप्त हो चुकी हैं । इस परिवारकी मुख्य भाषाका नाम भी ओलिव ही था ।

ओलोनेत्ज़ियन (olonetzian)—एक **यूराल-अल्ताई** (दे०) भाषा ।

ओलोमेगा (olomega)—**निकरओ** (दे०)-का एक अन्य नाम ।

ओशे (oshe)—१८९१ की बंबई जनगणनाके अनुसार **मारवाड़ी** (दे०)का एक रूप ।

ओष्ठ (lip)—उच्चारण-अवयवोंमें सबसे बाहरी अवयव । इनसे प, फ, ब, आदि ध्वनियाँ उच्चरित होती हैं । ओष्ठोंसे उच्चरित ध्वनियोंको **ओष्ठ्य** कहते हैं । (दे०)

शारीरिक ध्वनि-विज्ञान।

ओष्ठ-कंठ्य (labiovelar)––ऐसी व्यंजन-ध्वनि जिसके उच्चारणमें ओष्ठ गोले कर लिये जायँ तथा जीभका पिछला भाग कोमल तालुकी ओर उठ जाय। इसे **ओष्ठ-कोमल तालव्य** भी कहते हैं।

ओष्ठ-कोमल तालव्य––**ओष्ठ-कंठ्य** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

ओष्ठीकरण (labialization)––अनोष्ठीय ध्वनियोंको ओष्ठीय या अवृत्तमुखी स्वरोंको वृत्तमुखी बनाना।

ओष्ठ्य (labial)––**द्वयोष्ठ्य** (दे०)का एक अन्य नाम।

ओसगे (osage)––**ढेगिहा** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

ओसेटिक (ossetic)––भारोपीय परिवारकी ईरानी शाखाकी एक भाषा जो काकेशसमें लगभग सवा दो लाख लोगों द्वारा बोली जाती है।

ओसेतिक––एक ईरानी (दे०) बोली।

ओसोमिया (osomiya)––'**आसामी**' (दे०) का एक और नाम।

ओस्कन (oscan)––भारोपीय परिवारकी इटैलिक शाखाकी एक विलुप्त बोली। इसके शिलालेख यूट्रस्कन लिपिसे निकली लिपिमें मिले हैं। इसके बोलनेवाले ओस्कन लोग थे, इसी कारण इसका यह नाम पड़ा है। इसका संबंध **ओस्को-युंब्रिअन** (दे०)-से है।

ओस्को-युंब्रिअन (osco-umbrian)––भारोपीय परिवारकी इटैलिक शाखाकी एक उपशाखा जिसमें **युंब्रिअन** तथा **ओस्कन** (दे०) ये दो बोलियाँ आती हैं। दोनों विलुप्त हो चुकी हैं।

ओस्थोफ़नियम (osthoff's law)––एक ध्वनि नियम, जिसका संबंध ग्रीक भाषामें स्वरोंके ह्रस्व हो जानेसे है।

ओस्त्यक (ostyak)––एशियाई रूसमें लगभग २० हज़ार लोगों द्वारा बोली जाने वाली एक **यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी भाषा। इसके बोलनेवाले ओस्त्यक नामक एक यायावर जातिके लोग हैं।

ओस्त्यक समोयद––**समोयद** (दे०) भाषाकी एक बोली।

ओस्यनली––**तुर्की** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

ओस्वाली (oswali)––**मारवाड़ी** (दे०)का चाँदामें प्रयुक्त एक रूप।

औ

औअके (auake)––**दक्षिणी अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारकी प्रमुख भाषा भी इसी नामकी है।

औड्री––**उड़िया** (दे०)का एक अन्य नाम।

औढ्री––**उड़िया** (दे०)का एक प्राचीन नाम। उड़ीसा वैयाकरण मार्कण्डेयने इस नामका प्रयोग किया है।

औत्कली––**उड़िया** (दे०)का एक अन्य नाम।

औधी––**अवधी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

औपचारिक रूप (formal form)––कुछ भाषाओंमें संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया आदिके वे रूप जो **सामान्य रूप** (दे०)से भिन्न होते हैं। उनका प्रयोग औपचारिक भाषामें ही होता है। इस प्रकारके मुहावरे या प्रयोग भी होते हैं। उर्दूका 'आपका दौलतख़ाना कहाँ है', 'मेरा ग़रीबख़ाना. . .है' कुछ इसी प्रकारका प्रयोग है। औपचारिक रूपोंका प्रयोग कभी-कभी **अनौपचारिक रूपमें** आदरार्थ भी होता है। इसे शिष्टाचारी रूप भी कहते हैं।

औरंग (aurang)––**कुरुख** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक दूसरा नाम।

औरस––'उर' से उच्चरित। कुछ प्राचीन ग्रंथोंमें 'ह' को औरस कहा गया है। अब 'ह' स्वरयंत्रमुखी माना जाता है। औरसको **उरस्य** भी कहते हैं।

क

कंकरेजी (kankreji)––१९२१की बड़ौदा जनगणनाके अनुसार **गुजराती** (दे०)का एक नाम।

कंग (kang)––**कचिन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

कंगाली (kangali)––कंगालियों द्वारा प्रयुक्त **उड़िया** (दे०)का एक नाम।

कंजरी (kanjari)––उत्तरप्रदेशके बंजारोंमें प्रयुक्त एक **बंजारा** भाषा। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ७०८५ थी।

कंटॉइड––(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वर और व्यंजन** उपशीर्षक।

कंटिनेन्टल पश्चिमी जर्मनिक (continental west germanic)––यूरोप महाद्वीपमें प्रयुक्त पश्चिमी जर्मनिक भाषाओं––जर्मन, डच, फ्लेमिश––के लिए प्रयुक्त एक सामूहिक नाम।

कंटूर तान (contour tone)––**सुर** (दे०)-का एक भेद।

कंटूर तान भाषा––(दे०) **आघातमें सुर** उपशीर्षक।

कंठ (guttur)––भाषाके उच्चारणमें सहायक शरीरका एक अंग। (दे०) **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान**।

कंठ तालव्य (gutturo-palatal)––कंठ और तालुसे उत्पन्न। संस्कृत ग्रंथोंमें ए, ऐ कंठतालव्य कहे गये हैं।

कंठ-पिटक––**स्वर-यंत्र** (दे०)का एक अन्य नाम।

कंठोष्ठ्य (gutturo-labial)––कंठ और ओष्ठसे उच्चारित। संस्कृत ग्रंथोंमें ओ, औ-को कंठोष्ठ्य कहा गया है।

कंठ्य (१) (fancal) स्वरयंत्रमुख (glottis) तथा उपालिजिह्वके बीचसे उच्चरित। (२) (guttural या velar)––**कोमल तालव्य** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम। वस्तुतः इसका प्रयोग उपालिजिह्वीय (fancal)के लिए ही होना चाहिये।

कंडिआली (kandiali)––पंजाबी भाषाकी, **डोगरा** (दे०) बोलीका, गुरदासपुर (पाकिस्तान)में प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १०,००० के लगभग थी।

कंधारी––**पश्तो** (दे०)का, कंधारमें प्रयुक्त, एक रूप।

कंधी (kandhi)––**कुई** (दे०)का एक दूसरा नाम।

कंपनजात (trilled)––**कम्पनयुक्त** (दे०) का एक अन्य नाम।

कंपनजात संघर्षी (trilled fricative)––(१) **कम्पन युक्त** (दे०)का एक अन्य नाम। (२) एक विशिष्ट ध्वनिके लिए भी इस नामका प्रयोग होता है, जिसमें कंपनके साथ घर्षण भी होता है। ज़ेक भाषामें एक विशेष प्रकारका 'ऱ्' यही होता है।

कंपनयुक्त (trilled)––**प्रयत्न** (दे०)के आधारपर किया गया ध्वनियों (व्यंजन)का एक भेद। कम्पनयुक्तमें जीभकी नोक तालुके अत्यंत निकट चली जाती है, और हवाके प्रवाहसे इसमें स्पष्ट कम्पन होता है। कम्पनयुक्त व्यंजन जीभकी नोकके अतिरिक्त अलिजिह्व या ओठसे भी उच्चरित किये जा सकते हैं। कम्पनयुक्तमें हवा घर्षण खाकर निकलती है, अतः इन्हें **कम्पनयुक्त-संघर्षी** (दे०) भी कहा जा सकता है। इसके अन्य नाम **जिह्वोत्कंपी, कंपनजात** या **कंपनजात संघर्षी** (दे०) भी हैं।

कंपनयुक्त संघर्षी––**कंपनजात संघर्षी** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

कंपा (kampa)––दक्षिणी-अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा।

कंबा––**बांटू-परिवार** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा। इसके बोलनेवाले कंबा नीग्रो लोग

हैं। इसका क्षेत्र किलिमंजारो है।

कंबोडियन––एक आस्ट्रिक भाषा जो कंबोडियामें १५ लाख लोगों द्वारा बोली जाती है। इसे ख़्मेर भी कहते हैं।

कँवारी (kanwari)––**कमारी** (दे०)का एक अन्य नाम।

कंस (kansa)––**ढेगिहा** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

कओ (kao)––**कव** (दे०)का एक दूसरा नाम।

कओरी लेपाइ (kaori lepai)––**कचिन** (दे०)का एक रूप।

ककगुअटिके (kakaguatike)––मध्य अमेरिकाके **लेन्का** (दे०) भाषा-परिवारकी एक विलुप्त अमेरिकी भाषा।

ककार––**क्** के लिए प्रयुक्त नाम। (दे०)**कार**।

क-केल्टिक (q-celtic)––**केल्टिक** या **केल्टी** (दे०)की एक शाखा जिसमें आईरिश,स्कॉच गैलिक तथा मैंक्स भाषाएँ आती हैं। इसे **ग्वाइडेलिक** या गेलिक भी कहते हैं।

कक्चिकेल (kakchikel)––मध्य अमेरिकाकी **किचे** (दे०) भाषाकी एक बोली।

कख्येन (kakhyen)––**कचिन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

कगुरु (kaguru)––**बांटू** (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा। इस भाषाका क्षेत्र विक्टोरिया, टैंगेनिका तथा न्यास झीलोंसे घिरे प्रदेशमें है।

क-चक (kachak)––**यिंदू** (दे०)की पकोकू (बर्मा)में प्रयुक्त एक बोली। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २२२५ के लगभग थी।

कचारी (kachari)––सामान्यतः **बड** या **बोडो** (दे०) वर्गकी भाषाओंके लिए प्रयुक्त एक नाम।

कचिन––**चीनी** परिवारकी एक असमी-बर्मी भाषा। इसके कुछ बोलनेवाले असममें भी हैं। किन्तु अधिकांश बर्मामें हैं।

कच्चा नागा (kachcha naga)––**एंपेओ** (दे०)का एक अन्य नाम।

कच्छा नागा (kachchha naga)––**एंपेओ** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

कच्छी––**सिंधी** (दे०)की, कच्छमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४९१,२१४ के लगभग थी। इसके परिनिष्ठित रूपका प्रयोग ग्रियर्सनके अनुसार लगभग ४८४,-७१४ लोग करते थे।

कच्नख्वा––**कुरुख** (दे०)का एक अन्य नाम।

कज़कन (kazkan)––**नहुअत्ल** (दे०) भाषा-वर्गका एक उपवर्ग। इस उपवर्गकी भाषाएँ विलुप्त हो चुकी हैं। इस वर्गकी प्रमुख भाषा **कज़कन** थी।

कज़िकुमिक––**लाक** (दे०)भाषाका एक अन्य नाम।

कज़ी (kazi)––**भोटिआ** या **तिब्बती** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

कटकओ (katakao)––**सेक** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी-अमेरिकी भाषा।

कटर्रो (katarro)––**गुअहिबो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी-अमेरिकी भाषा।

कटविशी (katawishi)––**कटुकिन** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी-अमेरिकी भाषा। इसका अन्य नाम **हेवडिए** (hewadie) है।

कटव्बा (katawba)––**पूर्वीय सिऔक्स** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

कटारी (katari)––**मराठी** (दे०)का, दक्षिणमें कटारी नामक जाति द्वारा व्यवहृत एक रूप।

कटियाई––**मालवी** (दे०)की एक स्थानीय रूप जो छिंदवाड़ामें बोला जाता है। मराठी भाषी क्षेत्रके पास होनेके कारण इसपर 'मराठी'का पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १८,००० थी।

कटुकिन (katukin)––दक्षिणी अमेरिकाके **कटुकिन** (दे०) परिवारकी प्रमुख भाषा।

कटुकिन् परिवार (katukina)––**दक्षिणी अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारमें लगभग ८ भाषाएँ, जिनमें

प्रमुख टुकुनुडिअप, टवरी, कनमरी, कटुकिन भाषा, कटविशी आदि हैं।

कटुकिना (katukina)—**पनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी-अमेरिकी भाषा।

कटु शब्द—(दे०) **कठोर शब्द**

कठेर मेवाती (kathermewati)—'**उत्तरी-पूर्वी राजस्थानी**' की बोली **मेवाती** (दे०)का एक स्थानीय रूप जो भरतपुरके उत्तर-पश्चिम तथा अलवरके दक्षिण-पूरबमें 'कठेर' नामक प्रदेशमें बोला जाता है। इसपर 'ब्रजभाषा'का प्रभाव है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग १९३,३०० थी।

कठेरिया—**ब्रजभाषा** (दे०)का (बदायूँमें प्रयुक्त) एक उत्तरी-पश्चिमी रूप। इसके क्षेत्रके समीपके कठेर प्रदेशके आधारपर इसका यह नाम पड़ा है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ८२५,००० थी। इसे **काठेरिया** भी कहते हैं।

कठोर तालव्य—**कठोर तालु** (दे०)से उच्चरित होनेवाली ध्वनियाँ। इन्हें **तालव्य** (दे०)भी कहते हैं। हिन्दीके च्, छ्, आदि इसी वर्गके हैं।

कठोर तालु (hard palate)—'तालु'-का सबसे आगेका भाग जो मसूड़ोंसे लगा होता है। यह मसूड़े और मूर्द्धाके बीचका भाग है। कठोर होनेके कारण इसे 'कठोर तालु' कहा जाता है। इसे केवल 'तालु' भी कहते हैं। 'चवर्ग' तथा 'श' आदिका उच्चारण यहींसे होता है। कठोर तालुसे उच्चरित होनेवाली ध्वनियाँ **कठोर तालव्य** या तालव्य कहलाती हैं। (दे०) **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान**।

कठोर शब्द—वे शब्द, जिनमें कर्णकटु वर्णों या ध्वनियों (टवर्ग, संयुक्त या द्वित्त व्यंजन) या समासादिका प्रयोग हो। जैसे रुंड, मुंड, भृकुटि, झपट्टा आदि। ऐसे शब्दोंका प्रयोग ओजगुण तथा गौड़ी रीति या परुषा-वृत्तिके लिए होता है। इन्हें कटु या **परुष** शब्द भी कहते हैं। (दे०) **शब्द**।

कड्डो (kaddo)—**दक्षिणी कड्डो** (दे०)-उप-वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

कड्डो परिवार (kaddo)—**उत्तरी अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक भाषापरिवार। इस परिवारमें तीन उप-वर्ग हैं : उत्तरी कड्डो (दे०), केन्द्रीय कड्डो (दे०) तथा दक्षिणी कड्डो (दे०)।

कता काना लिपि (kata kana)—**जापानी लिपि** (दे०)का एक रूप।

कतिया (katia)—**मराठी** (दे०)का छिंदवाड़ा तथा नरसिंहपुरमें प्रयुक्त एक रूप। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग १८,७०० थी।

कतियाई (katiyai)—(१) **कतिया** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम। (२) 'राजस्थानी'की **मालवी** (दे०) बोलीका, छिंदवाड़ामें प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १८,००० के लगभग थी।

कती (kati)—**बश्गली** (दे०)का एक अन्य नाम।

कतुर्र (katurr)—**पलौंग** (दे०)का उत्तरी शानप्रांतमें प्रयुक्त एक रूप। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५९५९ के लगभग थी।

कते—**मैतेइ** (दे०)का बर्मामें प्रचलित एक नाम। **कते**का शाब्दिक अर्थ 'नृत्यमें प्रवीण' होता है। मणिपुरके लोगोंके नृत्यमें प्रवीण होनेके कारण ही उनकी भाषाको इस नामसे अभिहित किया गया है।

कत्लंग (katlang)—**जंगशेन** (दे०)का एक रूप।

कत्वान (katwan)—१८९१ की बंबई जनगणनाके अनुसार खानदेशमें प्रयुक्त एक भीली (दे०) भाषा।

कथे (kathe)—**मैतेइ** (दे०)का एक अन्य नाम।

कथ्री (kathri)—**खर्थी** (दे०)के लिए

प्रयुक्त एक नाम ।

कथ्लमेट (kathlamet)—**चिनुक** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

कदियंसे (kadianse)—१८९१ की बंबई जनगणनाके अनुसार **गुजराती** (दे०)का एक रूप ।

कदी (kadi)—१८९१ की हैदराबादकी जनगणनाके अनुसार एक **बंजारा** (दे०) भाषा ।

कदू (kadu)—१९२१ की जनगणनाके अनुसार, चीनी परिवारकी **तिब्बती-बर्मी** शाखाकी एक भाषा । १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या भारतमें १८,५९४ थी । बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, बर्माके कथा, ऊपरी चिंदविन तथा अन्य भागोंमें इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३५,३०० थी ।

कद्पती (kadpati)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **गुजराती** (दे०) के लिए खानदेशमें प्रयुक्त एक नाम ।

क-धक (kadhak)—**यिंदू** (दे०) की एक बोली ।

कनउजी—**कनौजी** (दे०)के क्षेत्रमें कनौजीके लिए प्रयुक्त नाम । आशय यह है कि कनौजी क्षेत्रमें 'कनौजी' नामका उच्चारण कनउजी होता है ।

कनम (kanam)—**कनौरी** (दे०)का, पंजाबके हिमालयी क्षेत्रमें प्रयुक्त एक रूप ।

कनमरी (kanamari)—**कटुकिन** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

कनरी (kanari)—**दक्षिणी अमेरिकी वर्ग** (दे०) का एक अमेरिकी भाषा-परिवार । इस परिवारकी भाषाएँ विलुप्त हो चुकी हैं । इस परिवारकी प्रमुख भाषाका नाम कनरी था ।

कनवरी तिब्बती—ऊपरी कनवरमें प्रयुक्त एक **तिब्बती** (दे०) बोली ।

कनमरी (kanamari)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०) की एक भाषा ।

कनारिलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयीं ६४ लिपियोंमेंसे एक ।

कनारी—**कन्नड़** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

कनावरी (kanawri)—**कनौरी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

कनाशी (kanashi)—चीनी परिवारके तिब्बती-बर्मी भाषाओंके पश्चिमी सार्वनामिक हिमालयी वर्गकी, कुलूमें प्रयुक्त भाषा । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ९८० थी ।

कनिचन (kanichana)—**दक्षिणी अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार । इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी है ।

कनूरी (kanuri)—कनूरी नामक अफ्रीकी जाति द्वारा प्रयुक्त **सूडान वर्ग** (दे०)की एक भाषा । इसका क्षेत्र मध्य अफ्रीकामें बोर्नूमें है । इस भाषाकी कई बोलियाँ हैं, जो विभिन्न कबीलोंमें बोली जाती हैं ।

कनेसियन—**हित्ती** (दे०)भाषाके लिए प्रयुक्त एक दूसरा नाम ।

कनोरिंग स्कद्द (kanoring skadd)—**कनौरी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

कनोरेऊनू स्कद्द (kanoreunu skadd) —**कनौरी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

कनौजी—ग्रियर्सनके अनुसार पश्चिमी हिन्दीकी एक बोली । इसके तथा ब्रजभाषाके व्याकरणकी तुलनासे यह स्पष्ट हो जाता है कि इसे स्वतंत्र बोली नहीं माना जा सकता । यह **ब्रजभाषा** (दे०)का ही एक रूप है, जैसा कि डॉ० धीरेन्द्र वर्माने माना है । इसका नाम फर्रुखाबाद ज़िलेके कनौज (सं० कान्यकुब्ज) नगरके नामपर पड़ा है । इसे **कन्नौजी** या **कनउजी** भी कहते हैं । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार 'कनौजी' बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४५ लाख थी । यह इटावा, फर्रुखाबाद, शाहजहाँपुर, कानपुर, हरदोई, पीलीभीत तथा

कानपुरके कुछ भागोंमें बोली जाती है। शुद्ध **कनौजी** केवल प्रथम तीन ज़िलोंकी है। अन्य स्थानोंपर अवधी, बुंदेली या ब्रज आदिका मिश्रण हो जाता है। इसका क्षेत्र बहुत विस्तृत नहीं है, अतः इसके स्थानीय रूपोंका विशेष विकास नहीं हो सका है। इस दृष्टिसे इसके केवल तीन-चार रूपों **तिरहारी** (दे०), **पचरुआ** (दे०), तथा **बँगराही** (दे०)का ही उल्लेख किया जा सकता है। ग्रियर्सन **भुक्सा** (दे०)को भी इसका एक रूप माननेके पक्षमें हैं। फर्रुखाबाद ज़िलेकी 'कनौजी'को **हिन्दी** भी कहते हैं।

साहित्यकी दृष्टिसे 'कनौजी'का महत्त्व नहींके बराबर है। यहाँके कवियोंने (जैसे मतिराम तथा चिंतामणि आदि) पश्चिमी ब्रजभाषामें ही रचना की, यद्यपि उनकी ब्रजभाषापर कनौजीकी छाप यत्र-तत्र अवश्य है। लोक-साहित्य कनौजीमें पर्याप्त है।

कनौरी (kanauri)—**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंके, पश्चिमी सार्वनामिक हिमालयी वर्गकी, कनवर या कनौरमें प्रयुक्त, एक भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २२,०९८के लगभग थी।

कन्नड़—**द्रविड़ परिवार** (दे०)की प्रमुख चार भाषाओंमें एक। कन्नड़ भाषाके अन्य नाम **कर्नाटकी कन्नड़ी, कनारी, कनाड़ी, केनरा, कर्णाट, कर्णाटिकी** आदि भी हैं। कर्नाट, कर्नाटक, कर्णाटक, कन्नड़ आदि शब्द, बहुत पहलेसे मिलते हैं। महाभारत (कर्णाटकाश्च—सभा पर्व ७८, ९४)गुणाढ्यकी पैशाची 'वृहत्कथा' (ईस्वी सन्‌के आरंभके आस-पास), तथा वाराहमिहिर (६ ठी सदी) आदिमें ये नाम किसी न किसी रूपमें प्रयुक्त हुए हैं। कन्नड़ भाषियोंको तमिल काव्य 'शिलप्पदिकारम्' (२ री सदी)में करुनाडर कहा गया है। इस देश तथा इसकी भाषाके लिए प्रयुक्त सभी नाम एक दूसरेसे संबद्ध हैं अब देशको कर्नाटक तथा भाषाको कन्नड या कन्नड़ कहते हैं। इनकी व्युत्पत्तिके संबंधमें विवाद है। डॉ० गुण्डर्ट तथा कुछ अन्य लोगोंके अनुसार मूल शब्द कर (= काला या काली मिट्टीका)+नाडु (देश) था। 'करनाडु' ही कन्नड़ और 'कर्नाट'-या 'कर्नाटक' बना। दूसरे मतानुसार मूल शब्द करु (ऊँचा)+नाडु (देश) था। तीसरा मत यह है कि संस्कृत शब्द 'कर्णाट' का ही 'कन्नड' आदि तद्भव है। चौथा मत जो कन्नड़ भाषियोंको अधिक मान्य है, यह है कि 'कम्मितु (सुगंधित)+नाडु (देश)से ही यह शब्द निकला है। चंदन-के देश या उसकी भाषाको यह नाम दिया गया हो तो कोई आश्चर्य नहीं है। यों, ये सभी मत कोरे अनुमानपर आधारित हैं और निश्चयके साथ इस संबंधमें कुछ कहना कठिन है। केवल इतना ही कहा जा सकता है कि इसका प्राचीन रूप 'कर्णाट'[1] था। उसीसे एक ओर कर्णाटक या कर्नाटक बना और दूसरी ओर कर्णाट>कन्नाड >कन्नाडु>कन्नडु>कन्नड। आज भी कुछ पुराने कन्नड़ भाषी भाषाको कन्नडु या कन्नाडु कहते हैं। 'कनारी' 'केनरा' जैसे 'र' वाले नाम अंग्रेज़ी लिपिके प्रभाव'से प्रचलित हो गये हैं।

कन्नड भाषा पारिवारिक संबंधकी दृष्टि-से तेलुगु आदिकी अपेक्षा तमिल-मलयालम आदि से अधिक निकटका संबंध रखती है। कन्नड़का क्षेत्र मैसूरके एक बहुत बड़े भाग-में तथा आस-पास मद्रास, बंबई, आँध्र आदिमें पड़ता है।

कहा जाता है कि कन्नड़ भाषाका प्राचीन-तम नमूना पाँचवीं सदी मध्यके एक शिला-लेख (हलिमिडिमें प्राप्त) में (गद्य रूपमें) मिलता है। किंतु वास्तविकता यह है कि दूसरी सदीमें लिखित एक ग्रीक नाटकमें भी

१. यह शब्द मूलतः द्रविड़ परिवारका रहा होगा। उसी आधारपर बना यह संभवतः एक संस्कृतीकृत रूप है।

इसके कुछ वाक्य मिले हैं। इस दृष्टिसे इसे भारतकी आधुनिक प्राचीनतम भाषाओंमें माना जा सकता है। नियमित साहित्य-सृजन सातवीं-आठवीं सदीसे प्रारंभ होता है। कन्नड़ साहित्यका स्वर्णयुग पंपकाल (९५० ई०—११५० ई०) है, इस कालके प्रमुख कवि पंप, पोन्न तथा रन्न हैं, जो 'रत्नत्रय' कहे जाते हैं। कन्नड़ भाषामें संस्कृत शब्दों-की संख्या बहुत अधिक है।

कन्नड़ भाषाकी प्रमुख बोलियाँ तीन हैं : वडग या वडगा, कुरुंब या कुरुम्वारी तथा गोलरी या हिलिया। कुछ लोगोंने तुलु, कोडगु, तोड तथा कोटको भी इसकी बोलियाँ माना है, किन्तु वस्तुतः ये बोलियाँ नहीं मानी जा सकतीं। इसका परिनिष्ठित रूप मैसूर तथा उसके आसपास बोला जाता है।

कन्नड़ भाषियोंकी संख्या १९२१की जनगणनाके अनुसार १,०३,७४,२०४ थी। कन्नड़ लिपि (दे०) यद्यपि ब्राह्मीके दक्षिणी रूपसे विकसित हुई है, किन्तु तमिलकी तुलनामें देवनागरी आदि उत्तर भारतीय लिपियोंसे अधिक समानता रखती है। इस समानताके दो अर्थ हैं। एक तो 'ग', 'न' आदि कुछ चिह्न कन्नड़में देवनागरीसे अपेक्षाकृत निकट हैं, दूसरे यह लिपि देवनागरीकी तरह पूर्ण है, तमिलकी तरह अपूर्ण नहीं है। अर्थात् सभी वर्गोंमें घोष तथा महाप्राणोंके लिए भी चिह्न हैं।

कन्नड़ लिपि—कन्नड़की लिपि। (दे०) **तेलुगु – कन्नड़**।

ಅ ಆ ಇ ಈ ಉ ಊ ಋ
ಎ ಏ ಐ ಒ ಓ ಔ ಅಂ
ಅಃ ಕ ಖ ಗ ಘ ಙ
ಚ ಛ ಜ ಝ ಞ
ಟ ಠ ಡ ಢ ಣ
ತ ಥ ದ ಧ ನ
ಪ ಫ ಬ ಭ ಮ
ಯ ರ ಲ ವ ಶ ಷ ಸ
ಹ ಳ

[कन्नड़की उपर्युक्त **वर्णमालामें** क्रमशः अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ऍ, ए, ऐ, ऑ, ओ, औ, अं, अः, क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, द, घ, न, प, फ, व, भ, म, य, र, ल, व, श, ष, स, ह, ळ, हैं।]

कन्नौजी—**कनौजी** (दे०) का एक नाम।

कन्होव (kanhow)—**सोक्ते** (दे०) की एक बोली। १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ८६६४ थी। इसे **कान्होव** भी कहते हैं।

कपनहुआ (kapanahua)—**पनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

कपि (kapi)—**लइ** (दे०)का एक रूप।

कप्पदोसी—**हित्ती** (दे०) भाषाके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

कप्वी (kapwi)—**कुबुई** (दे०) का एक अन्य नाम।

कफ़ा—हैमिटिक परिवारकी इथियोपियामें प्रयुक्त एक कुशिटिक (kushitic) भाषा।

कबर्दी (qabardi)—काकेशसमें बोलीजाने-वाली एक काकेशस भाषा। (दे०) **एदीघे**।

कबिल (kabyl)—हैमिटिक परिवारकी एक भाषा जो ट्यूनिशिया तथा अल्जीरियामें प्रयुक्त होती है।

कबुई (kabui)—**चीनी परिवार**(दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंके असमी-बर्मी शाखाके, 'नागा वर्ग' के, 'नागा बोदो' उपवर्गकी, मणिपुरमें तथा आसपास प्रयुक्त, एक भाषा। १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १५,६४७ थी।

कबेकर (kabekar)—दक्षिणी अमेरिकी भाषा **टलमनुक** (दे०) की एक बोली।

कमचदल(kamachadal)—**चुकची-कमचदल** (दे०) परिवारकी, लगभग १० हज़ार लोगों (कमचदल नामकी एक साइबेरियन जातिके) द्वारा पूर्वोत्तरी एशियाके एक छोटेसे प्रदेशमें प्रयुक्त, एक भाषा। इसे **इटेल्मिक** भी कहते हैं।

कमन (kaman)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **अराकानी** (दे०) की, अक्यावमें १२११ लोगों द्वारा व्यवहृत, एक बोली।

कमाकन (kamakan)—दक्षिणी अमेरिकाके **ज़े** (दे०) परिवारके पूर्वी वर्गकी एक भाषा। इसके अन्य नाम **मोनगोयो, मोनशोको** आदि हैं।

कमार ठार (kamar thar)—**उड़िया** (दे०)का, मोरभंजमें प्रयुक्त एक रूप।

कमारी (kamari)—**मराठी** (दे०)का, रायपुरमें प्रयुक्त, एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३७४३ थी।

कमि (kami)—**खमी**(दे०)का एक नाम।

कमियो नो मोजी लिपि—**जापानी लिपि** (दे०)का एक रूप।

कमिल रोई—**आस्ट्रेलियन परिवार** (दे०)-की एक भाषा।

कम्होव—(दे०) **कन्होव**

कय (kaya)—**करेन्नी**(दे०)के लिए उसके बोलनेवालों द्वारा प्रयुक्त एक नाम।

कयप (kayapa)—दक्षिणी, अमेरिकाकी **बरबकीआ** (दे०) भाषाकी एक बोली।

कयाती(kayati)—१८९१ की बंबई जनगणनाके अनुसार **मराठी**(दे०)का खानदेशमें प्रयुक्त एक रूप।

कयापो (kayapo)—दक्षिणी अमेरिकाके **ज़े** (दे०) परिवारके मध्यवर्ती वर्गकी एक भाषा। इसकी प्रमुख बोलियाँ सुया आदि हैं।

कयुवव (kayuvava)—**दक्षिणी अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी है।

कयुस (kayus)—वईलत्पू (दे०) परिवारकी एक विलुप्त उत्तरी अमेरिकी भाषा।

कयेत्थिन (kayetthin)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार उत्तरी अराकानमें लगभग ४०० व्यक्तियों द्वारा बोली जानेवाली एक भाषा। इसके पारिवारिक संबंधका पता नहीं है।

करंतिथ (karantith)—१८९१ बंबई जनगणनाके अनुसार कनारामें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

करखन्दारी बोली—दिल्लीमें जामा मस्जिदके आसपासके पुराने इलाकेमें प्रयुक्त **खड़ी बोली**का रूप। इसके बोलनेवाले अधिकतर मुसलमान हैं। इसमें मध्यग ह ध्वनिका प्रायः लोप (रहा, कहा) हो गया है। ड़ से मिलती-जुलती कुछ विशिष्ट ध्वनियोंका भी इसमें प्रयोग होता है। व्याकरणिक रूपों (विस्को = उसको) तथा बहुतसे शब्दों (नावाँ = पैसा)की दृष्टिसे भी यह सामान्य खड़ी बोलीसे पर्याप्त भिन्न है।

करगस(karagas)—**यूराल-अल्ताई**(दे०) परिवारकी एक पूर्वी तुर्की भाषा।

करज (karaja)—**दक्षिणी अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारके अंतर्गत **शमवीओआ, जावजे** तथा **करय** आदि भाषाएँ हैं।

करण (articulator)—(१) ध्वनियोंका उच्चारण करनेमें प्रमुख सहायक अंग लगभग सभी स्वरों तथा बहुतसे व्यंजनोंमें जीभ करणका कार्य करती है। (२) आभ्यन्तर

प्रयत्नके लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम। (३) कोई भी उच्चारण-अवयव। (४) कोई भी चल उच्चारण-अवयव, जैसे जीभ, ओष्ठ आदि। (दे०) ध्वनियोंका वर्गीकरणमें प्रयत्न उपशीर्षक।

करणकारक—(दे०) **कारक**।

करण तत्पुरुष समास—(दे०) **समास**।

करण बहुव्रीहि समास—(दे०) **समास**।

करपना (karapana)—दक्षिणी अमेरिका-के **विटोटो परिवार** (दे०) की एक भाषा।

करय (karaya)—**करज** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

करशरियन—**तोखारी** (दे०) की एक बोली।

करशरी (sarsharian)—(दे०) **तोखारी**।

करांदी (karandi)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **कन्नड़** (दे०) का एक रूप।

करा (kara)—दक्षिणी अमेरिकाकी **बरब-कोआ** (दे०) भाषाकी एक विलुप्त बोली।

कराओउ (karaou)—**मकसेक्न** (दे०) का एक दूसरा नाम।

करिन (karin)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **कन्नड़** (दे०) का एक रूप।

करिपुना (karipuna)—**पनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

करिब (karib)—**दक्षिणी अमेरिकी वर्ग** (दे०) का गीआना आदिमें फैला एक भाषा-परिवार। पहले इस परिवारमें लगभग ७४ भाषाएँ थीं, जिनमेंसे १७के लगभग विलुप्त हो चुकी हैं। इस परिवारकी मुख्य भाषाएँ **अकवइ, अरेकुन, मकुशी, सपर, सेरेगौन्ग, इपुरुकोटो, ट्रिओ, डभौआ, पिअनोकोटो, मकि-रिटरे, कुमनगोटो, गुएकेरी, चैमा, उपुरुइ, बकैरी, अररा, परिरी, बोनेरी, यौअपेरय, पेबा, यगुअे,** तथा **यमेओ** आदि हैं।

करिरि (kariri)—**दक्षिणी अमेरिकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार। इस परिवारकी मुख्य भाषाएँ करिरि तथा **सबुय** हैं।

करिष्यत्—**लुट् लकार** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

करुम (karum)—तिब्बती-वर्मीकी, मणिपुरमें प्रयुक्त, एक प्राचीन **कुकी** भाषा।

करेन—प्रो० लाकोपरीके अनुसार **चीनी परिवार** (दे०) के दक्षिणी शान वर्गकी बर्मामें (रंगूनके पूरब) बोली जानेवाली एक भाषा। इसके बोलनेवालोंकी संख्या १२,००,०००के लगभग है। ग्रियर्सनके अनुसार इसका परिवार अनिश्चित है। करेन वस्तुतः कई बोलियों (ज़येइन, करेन्नी, घेको, यिन्बा, पदौंग, तौंग्थू, प्वो, **स्गा**, करेन्व्यू तथा ब्वे) के समूहका नाम है। इनमें करेन्नी, प्वो, **स्गा** तथा तौंग्थू आदि महत्त्वपूर्ण हैं।

करेन्नी (karenni)—'करेन'की बोली–**रक्त करेन** (दे०) का एक नाम। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार करेन्नीमें तथा उसके आसपास इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३४,७९८ थी। इसके बोलनेवाले इसे **कय** कहते हैं।

करेन्नेत (karennet)—उत्तरी शान स्टेट (बर्मा) में प्रयुक्त, एक **पलौंग-व** (दे०) भाषा। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २६२२ थी।

करेन्ब्यू (karenbyu)—**करेन** (दे०) की एक बोली। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लोअर बर्मा, करेन्नी तथा शान रियासतोंमें इसके बोलनेवालोंकी संख्या १७,९८३ थी।

करेलिअन (karelian)—**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी एक फ़िनिश भाषा।

करोक (karok)—**होक** (दे०) भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

कर्गंड (kargand)—**बुर्गंडी** (दे०) का एक दूसरा नाम।

कर्णमूलीय—कानकी जड़से उच्चरित ध्वनि। संस्कृतके कुछ ग्रंथोंमें स्वरित स्वरोंको कर्णमूलीय कहा गया है।

कर्तरि प्रयोग—(दे०) **वाच्य**।

कर्ता (subject)—वह शब्द (संज्ञा या

सर्वनाम) जो क्रियाको करे या क्रियाका कर्ता हो। 'राम जा रहा है' वाक्यमें 'जाना' क्रिया 'राम' द्वारा की जा रही है। अतः 'जा रहा है' क्रिया या इस पूरे वाक्यका कर्ता 'राम' है। कर्ताका कारक **कर्ताकारक** (दे०) होता है। (दे०) **कारक**। हिन्दीमें कर्ता दो प्रकारके होते हैं: (क) **सप्रत्यय कर्ता**—वह कर्ता जिसके साथ 'ने' परसर्ग आवे। जैसे-'रामने मारा' वाक्यमें 'राम'। इसे **सविभक्तिक कर्ता** या **सपरसर्ग कर्ता** भी कहते हैं। (ख) **अप्रत्यय कर्ता**—वह कर्ता जिसके साथ 'ने' परसर्ग न हो। जैसे 'राम मारता है' वाक्यमें 'राम'। इसे **अविभक्तिक कर्ता** या **अपरसर्ग कर्ता** भी कहते हैं। प्रेरणार्थक क्रियाओंवाले वाक्यमें दो कर्ता होते हैं। जो प्रेरणा देता है, उसे **प्रेरक कर्ता** तथा जो प्रेरित होकर काम करता है, उसे **प्रेरित कर्ता** कहते हैं। 'थानेदार चोरको सिपाही-से पिटवाता है' वाक्यमें थानेदार प्रेरक कर्ता है और सिपाही प्रेरित कर्ता।

कर्तित शब्द (clipped)—ऐसा शब्द जिसके प्रारंभ, मध्य या अंत, (या दो या दो-से अधिक)का अंश लुप्त हो गया हो। जैसे 'नेकटाई' से 'टाई' 'यूनिवर्सिटी'से 'वर्सिटी' या 'इनफ्लूयंज़ा'से 'फ़्लू' इत्यादि। इन्हें **संक्षेपित शब्द** भी कह सकते हैं।

कर्तृवाचक कृदंत—(दे०) **कृदंत**।

कर्तृवाचक प्रत्यय—एक प्रकारका **प्रत्यय** (दे०)।

कर्तृवाच्य—(दे०) **वाच्य**।

कर्नरिवर (kernriver)—**शोशोन** (दे०) वर्गका एक उपवर्ग। इस वर्गकी प्रमुख भाषा **टुबाटुलबाल** है।

कर्नाटक या **कर्नाटकी**—**कन्नड़** (दे०)का एक नाम।

कर्म (object)—वह शब्द (संज्ञा या सर्व-नाम) जिसपर कर्ताकी **क्रिया** (दे०)का प्रभाव पड़े। दूसरे शब्दोंमें 'जिसपर कर्ताके व्यापारका फल पड़े'। जैसे 'रामने मोहनको मारा'में मारनेका फल या प्रभाव 'मोहन'पर पड़ा अतः 'मोहन' 'मारा' क्रिया कर्म है। कर्म शब्दका कारक कर्मकारक होता है। (दे०) **कारक**। कर्म एक शब्द, कई शब्दोंका समूह या पूरा 'फ्रेज़' आदि हो सकता है। परसर्गके लगने या न लगनेके आधारपर कर्म दो प्रकारका होता है: (१) **अप्रत्यय कर्म**—जिसके साथ परसर्ग न हो। जैसे-'लड़का पत्र लिखता है' वाक्यमें 'पत्र'। इसे **अविभक्तिक कर्म** या **अपरसर्ग कर्म** भी कहते हैं। (२) **सप्रत्यय कर्म**—जिसके साथ परसर्ग हो। जैसे—'मैंने चोरको मारा' वाक्यमें 'को' होनेके कारण 'चोर' सप्रत्यय कर्म है। इसे **सविभक्तिक** या **सपरसर्ग कर्म** भी कहते हैं। कुछ सकर्मक क्रियाएँ द्विकर्मक होती हैं, अर्थात् उनके दो कर्म होते हैं। जो कर्म प्रधान होता है, उसे **प्रमुख, प्रधान, मुख्य** या **प्रत्यक्ष कर्म** (direct objcet) तथा जो अप्रधान होता है, उसे **अप्रधान, अप्रमुख गौण** या **अप्रत्यक्ष कर्म** (indirect objcet) कहते हैं। 'मैंने रामको पैसे दिये' वाक्यमें दिये गये हैं 'पैसे' अतः 'पैसे' प्रधान कर्म है और रामको दिये गये हैं, अतः राम अप्रधान कर्म है।

कर्मणि प्रयोग—(दे०) **वाच्य**।

कर्म तत्पुरुष समास—(दे०) **समास**।

कर्मधारय समास—(दे०) **समास**।

कर्म प्रवचनीय—अर्थात् 'कर्म या क्रियाका द्योतन करनेवाला।'। कर्मप्रवचनीय पहले कदाचित् केवल क्रियाको (संबद्ध होकर या अलग रहकर) द्योतित या अनुशासित करते थे, किंतु बादमें संज्ञा, सर्वनाम आदि-को भी करने लगे। निम्नांकित अव्ययों या उपसर्गोंको प्रवचनीय कहा गया है:—(१) अनु (लक्षणार्थ, भागार्थ या हीनार्थ अभिव्यक्त करनेपर)। (२) उप (अधि-कार्थ अभिव्यक्त करनेपर)। (३) अप (वर्जनार्थमें) (४) आङ (मर्यादार्थमें) (५) प्रति (भाग या वीप्सा आदिके अर्थ-में) (६) परि (वर्जनार्थ, वीप्सा या निर-

र्थक रूपमें) (७) अभि (विभागार्थमें) (८) प्रति (प्रतिनिधि और प्रतिदानार्थमें) (९) अधि (निरर्थक रूपमें प्रयुक्त होनेपर या ईश्वरार्थमें) (१०) सु (पूजार्थमें) (११) अति (अतिक्रमणार्थमें) (१२) अपि (गर्हा आदिमें)। भर्तृहरिके वाक्यपदीयमें आता है––'क्रियाया द्योतको नायं संबन्धस्य न वाचकः। नापि क्रियापदाक्षेपी संबन्धस्य तु भेदकः ॥''

अर्थात् 'जो न तो किसी विशिष्ट क्रियाके द्योतक हों, न संबंधके वाचक हों, न किसी दूसरे क्रियापदको लक्षित करनेवाले हों, फिर भी विभक्तिके विधायक हो जाते हों।'

कर्म बहुव्रीहि समास––(दे०) **समास**।

कर्मवाच्य––(दे०) **वाच्य**।

कर्रीएर्स (carriers)––**टिन्नेह्** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसको **टकुल्ली** भी कहते हैं।

कर्हाडी (karhadi)––**कोंकण** (दे०)की, सामंतवाडीमें प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २०००के लगभग थी।

कलंगा––**छत्तीसगढ़ी** (दे०)की एक उपबोली जो बिहार, उड़ीसाकी सीमापर पटना नामक प्रदेशमें बोली जाती है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार छः-सौ थी। इसकी लिपि 'ओड़िया' है। इसी कारण पहले इसे 'ओड़िया' भाषाकी बोली समझा जाता रहा है। सर्वप्रथम ग्रियर्सनने इसके व्याकरण रूपोंके आधारपर इसे 'छत्तीसगढ़ी'की एक उप-बोली घोषित किया। यों सीमापर होनेके कारण इसपर 'ओड़िया'का कुछ प्रभाव अवश्य पड़ा है।

कलचकी (kalchaki)––**डिअगिट** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकाकी भाषा। इसे **डिअगिट** भी कहते हैं।

कलपुया (kalapuya)––**ओरेगन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

कलब या कलबकी बोलियाँ––पाइक phonemies पृ० (vii) ने ध्वनितत्त्व-विज्ञान विषयक विश्लेषणका अभ्यास करानेके लिए विद्यार्थियोंको बहुत-सी परिकल्पित भाषा समस्याएँ (hypothetical language problems) दीं। इनमें क, ल, ब अक्षर (syllable) विभिन्न रूपोंमें आये। इसी आधारपर इन परिकल्पित भाषाओंको कलबकी बोलियाँ (dialects of kolaba) कहा जाने लगा। इस प्रकार कलब, कलबा या कलबकी बोलियाँ उन परिकल्पित भाषाओंका संयोगवशात् पड़ा हुआ नाम है, जिनसे फोनेमिक्सके विद्यार्थियोंको परिकल्पित सामग्री (data) अभ्यासके लिए दी जाती है।

कलसी (kalasi)––**जयेइन** (दे०)का एक अन्य नाम।

कलात (kalat)––'फ़ारसी'की **देहवारी** (दे०)बोलीका, बिलोचिस्तानमें प्रयुक्त एक रूप।

कलाशा (kalasha)––**दरद** (दे०)की चित्रालमें प्रयुक्त एक भाषा।

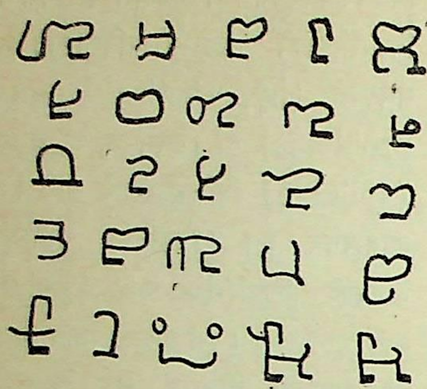
कलाशा-पशाई (kalasha-pashai)––दरद भाषाओंके **काफिरवर्ग** (दे०)का एक उपवर्ग। इस वर्गके अंतर्गत **कलाशा, गवरवती, पशाइ, दीरी** तथा **तिराही** आती हैं।

कलाशा-मोन (kalasha-mon)––**कलाशा** (दे०)का एक अन्य नाम।

कलिंग अपभ्रंश––**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

कलिंग लिपि––**ब्राह्मी लिपि** (दे०)की दक्षिणी शैलीसे विकसित इस लिपिका कलिंगमें तथा उसके आसपास ७वीं सदीसे १२वीं सदीतक प्रचार रहा है। समय-समयपर इस लिपिपर **मध्यप्रदेशी** (दे०), **पश्चिमी** (दे०), **तेलुगु** (दे०), **कन्नड़** (दे०), **ग्रंथ**(दे०) और देवनागरी लिपियोंका प्रभाव पड़ता रहा है, इसी कारण भिन्न-भिन्न कालोंमें इसके भिन्न-भिन्न रूप मिलते हैं। प्राचीन ब्राह्मी लिपिका प्रयोग १५०

ई० पू०के आस-पास मिलता है।



[इसमें क्रमसे अ, आ, इ, उ, क, ख, ग, घ, च, ज, ट, ड, त, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म, र, व, श, ह, अक्षर हैं।]

कलिंगी—तमिल (दे०)का एक अन्य नाम।

कलिआना (kaliana)—**दक्षिणी अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी थी।

कलुर (kalur)—१८९१की बंबई जन-गणनाके अनुसार, धारवाड़में प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

कलुसा (kalusa)—**मुस्खोगी** (दे०) भाषा-परिवारकी एक विलुप्त उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसके पारिवारिक संबंधके विषयमें विद्वानोंमें मतभेद है।

कल्पित रूप या शब्द (hypo thetical form या word)—ऐसा रूप या शब्द, जो प्रयोग या प्राचीन साहित्यमें मिलता न हो, अपितु जिसे, कुछ प्राप्त आधारोंपर अनुमानित या कल्पित किया गया हो। ऐसे रूपों या शब्दोंके साथ एक तारक चिह्न '*' लगानेकी परंपरा है।

कवंग-सवंग (kavng-savng)—**जयेइन** (दे०) का एक रूप।

कव (kaw)—**अक** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

कवकिउत्ल (kwakiutl)—**वकश** (दे०) भाषा परिवारकी एक मुख्य उत्तरी अमेरिकी भाषा।

कवर्ग--नागरी वर्णमालाका प्रथम वर्ग इसमें क, ख. ग, घ, ङ, ये पाँच ध्वनियाँ आती हैं। (दे०) **वर्ग**

कवल्क्री (kawalkri)--चाँदामें प्रयुक्त **हिन्दोस्तानी** (दे०)का एक रूप।

कवाहिब (kawahib)—**टुपी-गवरनी** (दे०) परिवारकी दक्षिणी अमेरिकामें प्रयुक्त एक भाषा। इसके दूसरे नाम 'पैरेण्टिण्टिन' या 'कवाहिव' आदि भी हैं।

कवाहिव (kawahiwa)--(दे०) **कवाहिब**। **टुपी-गवरनी** (दे०)

कवि--प्राचीन **जावानी** (दे०) भाषा। इसका लिखित रूप ९वीं सदीसे मिलता है।

कविना (kavina)--दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा।

कवि लिपि--जावानी लिपि (दे०)का एक अन्य नाम।

कव्री (kawri)--**कचिन** (दे०)का एक रूप।

कशमीरी--(दे०) **कश्मीरी**।

कशिबो (kashibo)--**पनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसके अन्य नाम **कचिबो** (kachibo) तथा **कहिबो** (kahibo) हैं।

कशुब (kashub)--**बाल्टिक** तटपर एक छोटेसे प्रदेश दानज़िगमें लगभग दो लाख लोगों द्वारा प्रयुक्त एक पश्चिमी स्लाक भाषा। यह पोलिश भाषासे कुछ समानता रखती है। इसे **कसुबियन**, **कस्जुब**, **कशुबिअन** आदि नामोंसे भी अभिहित करते हैं।

कशूबियन (kashubian)--**पोलिश** (दे०) भाषाकी प्रमुख बोली जिसके बोलनेवाले लगभग डेढ़ लाख हैं। यह अब इतनी विकसित हो गयी है कि भाषा कहलानेकी अधिकारिणी बन गयी है।

कश्टवाड़ी--**कश्टवारी** (दे०)का एक अन्य नाम।

कश्टवारी (kashtwari)--**कश्मीरी** (दे०) की कश्टवाड़ या किश्तवारमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग

७४६४ थी।

कश्टवारी लिपि––कश्मीरके दक्षिणपूर्वमें कश्टवारकी घाटीकी बोली **कश्टवारी** (दे०)-के लेखनमें प्रयुक्त लिपि। यह भी शारदा-से उत्पन्न है। ग्रियर्सनने इसे टक्की और शारदाके बीचकी कड़ी माना है।

कश्मीरी––'कश्मीर' शब्दकी व्युत्पत्ति विवादास्पद है। कुछ विद्वान् 'कश्मीर'को संस्कृत शब्द मानते हैं। कुछ संस्कृत शब्द 'काश्मीरक'का इसे तद्भव रूप मानते हैं। मोनियर विलियम आदि कुछ अन्य लोग इसका संबंध 'कश्यप+मीर'से जोड़ते हैं। राजतरंगिणी-में भी कुछ इस प्रकारका संकेत मिलता है। कुछ लोगोंके अनुसार इसका संबंध कश् धातु (मारना, आवाज करना)से है। कुछ आधुनिक पंडितोंका यह भी मत है कि कैस्पियन सागरसे बहुत पहले कोई जाति आयी थी। उसीके नामसे कश्मीर, काशी, उत्तरकाशी आदि स्थानोंका संबंध है। यों सनिश्चय कुछ भी कहना अभीतक कठिन है। 'कश्मीर'की भाषा होनेके कारण ही इसका नाम 'कश्मीरी' 'काश्मीरी' या 'काशमीरी' है। कश्मीरी लोग अपने देशको 'कश्मीर' न कहकर 'कशीर' तथा अपनी भाषाको 'कश्मीरी' न कहकर 'कंशुर' कहते हैं। संभव है मूल शब्द 'कशीर' (काशी आदिकी तरह) ही हो। 'कश्मीर' उसका विकसित रूप हो।

भाषाके अर्थमें 'कश्मीरी' शब्द सर्वप्रथम अमीर खुसरोके 'नुहेसिपर' ग्रंथमें मिलता है। किंतु यह नाम उस समय कदाचित् केवल कश्मीरसे बाहरके लोगोंमें प्रचलित था। कश्मीरके लोग लगभग १७वीं सदी तक अपनी भाषाको 'भाषा' या 'देश भाषा' कहते थे। कश्मीरमें संस्कृत-पांडित्यकी एक लंबी परंपरा मिलती है। किंतु इसके साथ-साथ कश्मीरीमें भी साहित्य रचना हुई है। १४वीं सदीकी 'ललद्यद' कवयित्री-का नाम कश्मीरी साहित्यमें बड़े आदरके साथ लिया जाता है। इनका ग्रंथ 'वारव्य' है। कश्मीरी साहित्यका आरंभ १३वीं सदीसे हो जाता है। तबसे लेकर आजतक इसमें साहित्य-रचना हो रही है जिसे-आदिकाल, प्रबंधकाल, गीतिकाल, प्रेमाख्यानककाल तथा आधुनिककाल, इन पाँचमें बाँटा गया है। कश्मीरीके प्रसिद्ध कवियों, कवयित्रियोंमें 'ललद्यद'के अतिरिक्त नन्दरिशि, भट्टावतार, हबाखातून, अरणिमाल, महमूदगामी तथा मकबूल आदि हैं। कश्मीरीका परिनिष्ठित रूप श्रीनगर तथा अनन्तनाग एवं बारामुल्लाके आसपासके गाँवोंमें बोला जाता है। दक्षिण-पश्चिममें कश्टवारमें इसकी प्रमुख बोली 'कश्टवारी' बोली जाती है। कश्मीरीकी अन्य मिश्रित बोलियाँ **पोगुली**, **डोडासिराजी**, **रामबनी** तथा **रिआसी** आदि हैं। भाषावैज्ञानिक स्तरपर कश्मीरीके **हिन्दू कश्मीरी** तथा **मुसलमानी कश्मीरी** नामके दो भेद किये जा सकते हैं। इन दोनों-में शब्द-प्रयोग तथा ध्वनि आदिकी दृष्टि-से पर्याप्त अंतर है। कश्मीरीका कुल क्षेत्र लगभग १०,००० वर्ग मील है और इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १५,००,-००० है। ग्रियर्सनके सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवाले ११,९५,९०२ थे। कश्मीरी भाषा क्षेत्रमें प्रमुखतः चार लिपियोंका प्रयोग होता है। सबसे अधिक प्रचार फ़ारसी लिपिका है। कश्मीरीकी अपनी लिपि शारदा है जिसका प्रयोग अब केवल कुछ हिन्दू ही करते हैं। प्राचीन साहित्यमें शारदाका पर्याप्त प्रयोग हुआ है। देवनागरीका प्रयोग भी हिन्दुओंमें चलता है। कश्टवारी बोलनेवाले टाकरी लिपिका प्रयोग करते हैं।

कश्मीरीको लोग अन्य भारतीय आर्य-भाषाओंके साथ ही रखते रहे हैं। कुछ लोगोंके अनुसार इसका संबंध पंजाबी, लहँदाकी भाँति पैशाची अपभ्रंशसे है। किंतु वास्तविकता यह है कि भारतीय भाषाओंसे प्रभावित यह एक दरद (दे०) भाषा है।

कसाइट (kassite)—एक विलुप्त भाषा। इसका क्षेत्र मेसोपोटामियाके पूर्व ज़ैग्रॉस पर्वतीय भाग है। इसकी प्राप्त सामग्री १७वीं सदी ई० पू० तककी मिली है। इस भाषामें केवल कुछ नाम आदि ही मिले हैं। इसके परिवारका पता नहीं है। कुछ लोगोंने एलामाइट या मितानीसे इसे संबद्ध करनेका प्रयास किया था, किंतु सफलता नहीं मिली। इसे **कोसेइअन** या **कोसी** भी कहते हैं।

कसुव (kasuva)–**तमिल** (दे०)की नीलगिरिमें प्रयुक्त एक बोली।

कस्कस्किआ (kaskaskia)—**केन्द्रीय-अलगोन्किन** (दे०)वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

कस्रानी (kasrani)—**बलोची** (दे०)की पूर्वीय बोलीका, डेरा इस्माइलखाँमें प्रयुक्त, एक रूप।

कस्वार (kaswar)—**कुस्वार** (दे०)का एक अन्य नाम।

कहंग (kahang)—**कचिन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

कहरी (kahari)—**बुन्देली** (दे०)का, कहर जातिमें प्रयुक्त एक रूप।

कहावत—**लोकोक्ति** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

कहिटा (kahita)—**पिमा-सोनोर** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसका अन्य नाम **यकुई** भी है।

कहिर्की (kahirki)—सिंधमें प्रयुक्त एक वंजारा (दे०) भाषा। १९२१की बंबई जनगणनामें इसे सिंधीकी अपेक्षा 'बलोची'से संबद्ध कहा गया है।

कहुअपना (kahuapana)—**कहुअपना** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा। यह भाषा इस परिवारमें सबसे महत्त्वपर्ण है।

कहुअपना परिवार (kahuapana)—**दक्षिणी-अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इसका अन्य नाम **मयना** (mayna) भी है। इस परिवारकी मुख्य भाषाएँ **क्सेबेरो**, **मयना**, तथा **कहुअपना** आदि हैं।

कहोकिआ (kahokia)—**केन्द्रीय अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक अमेरिकी भाषा। यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है। इसे कहोकिआ नामक लोग बोलते थे।

कह्लूरी (kahluri)—परिनिष्ठित **पंजाबी** (दे०)का, विलासपुर, मंगल, तथा होशियारपुर ज़िलेमें प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २०७,३२१ थी। इस संख्यामें होशियारपुरकी 'पहाड़ी' बोलनेवाले भी सम्मिलित थे।

कांकेरी—कांकर (रियासत)में प्रयुक्त **छत्तीसगढ़ी** (दे०)का एक नाम।

कांगड़ी—पंजाबी बोली **डोंगरी** (दे०)की एक उपबोली जो कांगड़ा तहसीलमें बोली जाती है। यह उप-बोली 'पश्चिमी पहाड़ी'से बहुत अधिक प्रभावित है। इसे कुछ लोगोंने पश्चिमी पहाड़ीके अंतर्गत भी माना है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ६३६,५०० के लगभग थी।

कांगो—**बाँटू परिवार** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा। इसके बोलनेवाले कांगोली लोग हैं। इसका क्षेत्र बेल्जिअन कांगो है।

कांच्य अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

काई-कुई की बोली—**जयपुरी** (दे०)का एक अन्य नाम।

काओरा (kaora)—**कोडा** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

का-कछू-की बोली—'ब्रजभाषा'की उपबोली **डाँगी** (दे०)के एक स्थानीय रूप **डाँगी**का एक अन्य नाम।

काकड़ी (kakari)—**पश्तो** (दे०)की दक्षिणी पश्चिमी बोलीका, बिलोचिस्तानमें प्रयुक्त एक रूप।

काक-पद—(दे०) **हंस-पद**।

काकरी (kakari)––गुजराती (दे०)की, बम्बई तथा दक्षिणमें प्रयुक्त एक जाति 'काकर' द्वारा व्यवहृत एक बोली ।

काकल–स्वरयंत्र-मुख (दे०)का एक अन्य-नाम ।

काकल्य––स्वरयंत्रमुखी (दे०)का एक अन्य नाम ।

काकल्य स्पर्श––स्वरयंत्रमुखी स्पर्श (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

काकल्यीकृत (glottalized)––स्वरयंत्र-मुख या काकलमें दबावके साथ उच्चरित ।

काकुवैशिष्ट्योत्पन्ना आर्थी व्यंजना––एक प्रकारकी व्यंजना । (दे०) शब्द-शक्ति ।

काकेरी (kakeri)––राजस्थानी बोली बंजारी (दे०)का, झाँसीमें प्रयुक्त एक रूप ।

काकेशस परिवार––एक यूरेशियाई भाषा-परिवार । इस परिवारकी भाषाएँ पूर्व और अंत-अश्लिष्ट-योगात्मक हैं । इनका क्षेत्र कृष्ण सागर और कैस्पिअन सागरके बीच-में काकेशस पहाड़पर तथा उसके आस-पास काकेशस नामक प्रदेशमें पड़ता है । पहाड़ी भागके बाहुल्यसे यहाँ बहुत-सी बोलियाँ विकसित हो गयी हैं । ये बोलियाँ एक-दूसरीसे इतनी भिन्न हो गयी हैं कि एक परिवारकी ज्ञात नहीं होतीं । **प्रधान विशेषताएँ**––(१) ऊपरसे देखनेमें ये भाषाएँ श्लिष्ट या विभक्ति-प्रधान ज्ञात होती हैं, पर हैं अश्लिष्ट-योगात्मक । इनमें प्रत्यय और उपसर्ग दोनों ही लगाये जाते हैं । (२) इस परिवारकी उत्तरी शाखाकी भाषाओंमें स्वरोंकी कमी है । (३) पूरे परिवारमें पद-रचनाके सम्बन्धमें बड़ी कठिनाइयाँ हैं । कुछ बोलियों (अवर आदि)में तो संज्ञाकी तीस-तीस विभक्तियाँ हैं । (४) इसकी कुछ बोलियों-(जैसे 'चेचेन') में छः लिंग तक माने जाते हैं । (५) बास्क आदि भाषाओंकी भाँति सर्वनाम और क्रियाका भी योग इस परिवारमें होता है । जहाँतक ऐसा होता है, भाषा आंशिक-प्रश्लिष्ट-योगात्मक हो जाती है । (६) क्रियाके रूप इस कुलमें और भी जटिल हैं । कभी-कभी तो उन रूपोंमें मूल धातुका पता पाना भी असंभव-सा हो जाता है । जार्जियन भाषामें 'होना', क्रियाके 'वर्', 'चर्', 'अर्स', 'वर्थ', 'चर्थ' आदि रूपोंमें 'अर्' धातुका अनुमान किया भी जा सकता है, पर ख़सीकुमुक बोलीमें 'आर', 'ऊ', 'अइसर', 'ऊन्द', 'आन्द' तथा 'अ' आदि रूपोंमें 'अइ' धातु (= बनाना)-का तो कहीं पता ही नहीं चलता । **विभाजन**––काकेशस परिवार वस्तुतः भाषा-वैज्ञानिक अर्थोंमें परिवार न होकर एक भौगोलिक नाम है । भाषावैज्ञानिक स्तर-पर इसमें दो परिवार माने गये हैं : (१) **उत्तरी काकेशस**, तथा (२) **दक्षिणी काकेशस** । इन दोनोंमें पारिवारिक संबंध बहुत स्पष्ट नहीं, किन्तु इस संबंधको असं-भव नहीं कहा जा सकता । उत्तरी काकेशस-के पूर्वी और पश्चिमी दो वर्ग हैं । पूर्वीको **चेचेनो-लेस्गिअन** भी कहते हैं । इसमें चेचेन, अवरो-अंदी, सैमुरिअन, दर्ग्वा, अर्ची, उदी, लक या कज़िकुमिक तथा किनलुग़ हैं । इनमें अवरो अंदीमें अवर, अंदी, दीदो, क्वार्शी तथा कपुत्सी भाषाएँ आती हैं । सैमुरिअनमें अगुल, बुदुक, चकुर, जेक, कूरी, सतुल तथा तबरसन आदि भाषाएँ हैं । पश्चिमीको **अबस्गो-केरकेतिअन** भी कहते हैं । इसमें अदिगे (कबर्दी और सिरकेसिअन), अदकाज़ तथा उबिक हैं । दक्षिणी काकेशसको **करतवेलियन** या **करतूलिएना** भी कहते हैं । इसमें जार्जिअन या ग्रुसिनिअन, लाज़, मिंग्रेलिअन तथा स्वानिअन या स्वानेतिअन हैं । इन भाषाओंमें अनेक बोलियाँ हैं । उत्तरीकी भाषाएँ आपसमें कम मिलती-जुलती हैं, किंतु दक्षिणीमें काफी समानताएँ हैं । उत्तरीके बोलनेवालोंकी संख्या ६ लाख-के लगभग है और दक्षिणीकी १७ लाखके लगभग । उत्तरी काकेशसमें किसीकी न तो अपनी लिपि है, न लिखित साहित्य ।

दक्षिणीमें जार्जिअनमें साहित्य है।

काकेशियन—**काकेशस** परिवार (दे०)का एक अन्य नाम।

काकेशियन परिवार—**भारोपीय परिवार** (दे०)का एक अन्य नाम।

कागते (kagate)—**भोटिया** (दे०)की, पूर्वीय नैपाल तथा दार्जिलिंगमें प्रयुक्त एक बोली।

कागानी (kagani)—**हिन्दको** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

कागानी—**चिभाली** (दे०)का, कागनमें प्रयुक्त एक रूप।

काचरी (kachari)—**दीमासा** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम। इसे **पहाड़ी काचरी** भी कहते हैं।

काचारी(kachari)—(१)**काचरी**(दे०)-का एक अन्य उच्चारण। (२)**सिलहटिआ बंगाली**(दे०)के एक रूपके लिए, असममें प्रयुक्त एक नाम। (३) **बड** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम। इसे **मैदानी काचारी** भी कहते हैं।

काछड़ी (kachhri)—परिनिष्ठित **लहँदा** (दे०)का, झेलम तथा झंगके बीच प्रयुक्त, एक रूप। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग १७,९७२ थी।

काछेजी (kachheji)–**बलोची** (दे०)का, कराचीके पास प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनके-भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, इसके बोलने-वालोंकी संख्या ५००० के लगभग थी।

कॉटिश (kottish)—**कोट्टिअन** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

काठियावाडी (kathiyawadi)–**गुजराती** (दे०)की काठियावाड़में प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २९,९६,००० थी।

काठेरिआ—**कठेरिया** (दे०)का एक अन्य नाम।

काठैड़ा—**जयपुरी** (दे०)का एक स्थानीय रूप जो साँभर झीलके दक्षिण तथा किशन-गढ़के उत्तर-पूरबमें बोला जाता है। 'परि-निष्ठित जयपुरी'से यह थोड़ी ही भिन्न है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभल १,२७,९५७ थी।

कातक्कन(katakkn)–**मलयालम** (दे०)-का एक नाम। वस्तुतः यह मद्रासकी एक जातिका नाम है जो 'मलयालम'का एक विकृत रूप बोलती है।

कात्करी (katkari)—**कोंकणी** (दे०)का, थाना (बंबई) तथा उसके आसपास प्रयुक्त, कात्करी नामक जाति द्वारा व्यवहृत, एक रूप। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रिय-र्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ७६,७०० के लगभग थी।

कात्वडी (katwadi)—**कात्करी** (दे०)-का एक दूसरा नाम।

काथी (kathi)—१८९१की बंबई जनगण-नाके अनुसार **गुजराती** (दे०)का, भड़ोचमें प्रयुक्त एक रूप।

काथोडी (kathodi)—**कात्करी** (दे०)का एक अन्य नाम।

काथोली (katholi)—**गुजराती** (दे०)-का खानदेशमें प्रयुक्त एक रूप।

काठिरा (kathira)—**राजस्थानी** (दे०)-का, जयपुरमें प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या १,२७,९५७के लगभग थी।

कानडी(kanadi)—**कन्नड़** (दे०)का एक अन्य नाम।

काना माजिरी लिपि (kana majiri)—**जापानी लिपि** (दे०)का एक रूप।

कापेवारी (kapewari)—**तेलुगु** (दे०)-का एक रूप।

कॉप्टिक(coptic)—**हेमिटिक मिस्री**(दे०) भाषासे विकसित भाषा, जो २री सदीसे १५०० ई० तक मिस्रमें प्रयुक्त होती रही। इसमें ग्रीक शब्द बहुत अधिक हैं। कॉप्टि-ककी **साहिडिक** (sahidic), **अखमिमिक**

(akh-mimic), **फेयूमिक** (fayumic) **मेम्फाइट** (memphite), **बोहिरिक** (bohiric), तथा **सुबखमिमिक** (subakhmimic) ये पाँच बोलियाँ थीं। कॉप्टिकका प्रयोग धर्म तथा कर्मकांडके कार्योंमें अब भी कॉप्टिक चर्चोंमें होता है।

कॉप्टिक लिपि—प्राचीन मिस्री भाषा कॉप्टिककी लिपि। इसमें २५ अक्षर ग्रीकसे तथा ७ डिमॉटिकसे लिये गये थे।

काफ़िर—(१) **बांटू परिवार** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा। इसके बोलनेवाले काफ़िर लोग हैं। 'काफ़िर' शब्द अरबीका है जिसका अर्थ होता है इस्लामी दृष्टिसे अधार्मिक या नास्तिक। काफ़िर लोगोंका मूल क्षेत्र नैटाल और केप प्राविन्सके बीचमें था। अब दक्षिणी-पूर्वी अफ्रीकाके अपेक्षाकृत विस्तृत क्षेत्रमें ये हैं। काफ़िर भाषाको **क्सोसा** (xosa) तथा क्झोसा (xhosa) भी कहते हैं। (२) **काफ़िर वर्ग** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

काफ़िर वर्ग—**दरद** (दे०) भाषाओंका एक वर्ग। इसके बोलनेवाले काफिरिस्तान तथा चित्राल आदिमें रहते हैं। इस भागकी भाषाओंको **काफ़िर** या **काफ़िरी** भाषा भी कहते हैं। इस वर्गकी भाषाओंमें अश्कंद आदि हैं।

काबुलियन लिपि—**खरोष्ठी** (दे०) लिपिके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

काबुली—**पश्तो** (दे०)के लिए प्रयुक्त नाम।

कॉमा (comma)—अल्प विरामके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम। (दे०) **विराम**।

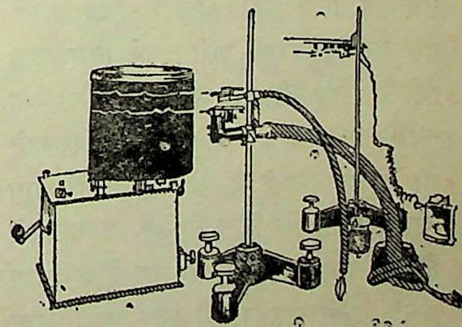
कॉमा संगम (comma juncture)—एक प्रकारका **संगम** (दे०)।

कामाठी (kamathi)—**तेलुगु** (दे०)का, बंबई, तथा पूनामें 'कामाठी' जाति द्वारा व्यवहृत एक रूप। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार १२,२००के लगभग थी।

कामी (kami)—पश्चिमी नैपालमें प्रयुक्त, एक **चीनी परिवार** (दे०)की एक-अ-सार्वनामिक हिमालयी तिब्बती-बर्मी भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ६४९ थी।

काम्ती (kamti)—**खाम्ती** (दे०)का एक अन्य नाम।

कायमोग्राफ् (kymograph)—'कायमोग्राफ' एक यंत्र है, जिसका उपयोग ध्वनियोंके अध्ययनके लिए किया जाता है। इसके पुराने और नये कई रूप हैं। पुरानेमें चौकोर बाक्सकी तरह एक मशीन होती है, जिसके ऊपर सिगरेटके गोल डिब्बेकी तरह एक बड़ी ढोल लगी होती है। ढोलके ऊपर चारों ओर धुएँसे काला किया हुआ एक चिकना कागज़ लपेट देते हैं। पास ही एक खड़े डंडेमें छोटी-सी मशीन और उसीसे सम्बद्ध एक रबड़की नली रहती है। रबरकी नलीके एक ओर एक चौड़ी-सी चीज़ लगी रहती है, ताकि मुँहमें ठीकसे लगाया जा सके। दूसरी ओर एक पतली-सी सुई रहती है। जैसा चित्रसे स्पष्ट है, सुई ढोलपर लिपटे कागजपर लगी रहती है। मुँहमें लगाये जानेवाले छोरको मुँहमें लगाकर प्रयोगकर्त्ता बोलता



है, इससे दूसरे छोरपर लगी सुईमें कम्पन होता है। उधर ढोल विद्युत्की सहायतासे घूमने लगती है और सुई काले कागजपर टेढ़ी-मेढ़ी लकीर बनाने लगती है। अनुनासिकता आदि देखनेके लिए एक नली नाकसे भी संबद्ध कर लेते हैं, जो एक अलग

निशान बनाती चलती है। कुछ ध्वनियाँ **घोष** और कुछ **अघोष** होती हैं। इसका निश्चय कायमोग्राफ़्की सहायतासे सफलता-पूर्वक हो सकता है। अघोष ध्वनियोंका उच्चारण करनेपर ढोलवाले कागज़पर बनी लकीर सीधी होती है। उसमें लहरें नहीं रहती हैं पर घोष ध्वनियोंकी लकीर लहर-दार होती है। इसका कारण यह है कि घोष ध्वनियोंमें सुई नीचे-ऊपर काँपती रहती है, पर अघोषमें नहीं। **अल्पप्राण** और **महाप्राण**की लाइनोंकी लहरोंमें भी कायमोग्राफ़्में स्पष्ट भेद रहता है। एक कुछ अधिक सीधी और दूसरी कम सीधी होती है। **स्पर्श, स्पर्श-संघर्षी, पार्श्विक** आदिकी लहरोंमें भी सूक्ष्म अंतर रहता है, जिसे लाइनोंका अध्ययन करनेवाला पहचान सकता है। **अनुनासिकता** जाननेके लिए एक अन्य नली नाकमें लगा लेते हैं। उसका भी दूसरा सिरा प्रथमकी भाँति सुई-युक्त होता है और ढोलपर लगा रहता है। अनुनासिक ध्वनिमें नासिकासे भी कुछ वायु निकलती है अतः नासिका-नलीकी सुई अनु-नासिक ध्वनिके समय लहरदार लकीर बनाती है, पर अननुनासिक ध्वनिमें उसकी लकीर साधारण रहती है। **समय** या **मात्रा** जाननेके लिए एक घड़ीसे संबद्ध करके एक तीसरी रबरकी नली इसके लिए लगा लेते हैं। यह तीसरी लकीर समय प्रदर्शित करती चलती है। इसकी सुई एक सेकेण्डमें सौ निशान बनाती है, जिसके देखनेसे पता चल जाता है कि किस ध्वनिके उच्चारणमें कितना समय लगा तथा वह दीर्घ है या लघु। इससे सुरका भी पता चल जाता है। इसका प्रयोग पहले डाक्टर लोग करते थे, किन्तु १८७६में रोज़ामेल्लीने ध्वनि-अध्ययनमें इसका प्रयोग किया और तबसे इससे ध्वनि-विज्ञानमें बहुत सहायता मिलती आ रही है। **कायमोग्राफके नये रूप**-ऊपर जिस कायमोग्राफ़का वर्णन किया गया है, उसका प्रयोग तो चल ही रहा है किन्तु अब (१) **'एलेक्ट्रो कायमोग्राफ़'** रूपमें इसका एक नया रूप भी प्रयुक्त हो रहा है, जिसमें माइक लगा होता है। इसमें अधिक स्वाभाविकता संभव है, किन्तु यह पुराने जितना उपयोगी नहीं है। इसमें घोष-अघोष तथा सुर, केवल इन दोको ही अच्छी तरह जाना जा सकता है। (२) **इंक राइटर** भी एक प्रकारका कायमोग्राफ़ ही कहा जा सकता है। इसमें कायमोग्राफ़की तरह धुएँका काला कागज़ न लपेटकर सफेद कागज़ लपेटते हैं और उसपर सुई स्याहीसे निशान बनाती है। प्रयोक्ताओंका कहना है कि इसके चिह्न अधिक सही होते हैं, साथ ही प्रयोगमें यह सस्ता भी है यद्यपि खरीदनेमें मँहगा है। (३) **क्रोमो-ग्राफ़** (chromograph)—१९३२के लगभग स्पेनके लेयर्दा (laierda) नामक भाषातत्त्वविद्‌ने इसे बनाया। यह यंत्र भी अच्छा है, किन्तु इसका प्रचार नहीं हो सका। (४) **मिंगोग्राफ़** (mingograph) —यह यंत्र घोषत्व-अघोषत्व तथा सुरको नापनेके लिए बहुत अच्छा है। इसपर भी माइकपर बोला जाता है। इसे स्वेडेनमें बनाया गया है। (५) इंगलैंडमें एक अन्य प्रकारके कायमोग्राफ़का प्रयोग होता है, जिसमें फ़ोटोके कैमरेका प्रयोग किया जाता है।

कायली (kayali)—**भीली**का, सतपुड़ामें प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षण-के अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २५,००० थी। **भीली** (दे०) यह रूप खानदेशमें भी मिलता है।

कायस्थी (kayasthi) (१) **परभी** (दे०)-का एक अन्य नाम। (२) सिंधीकी बोली **कच्छी** (दे०)का कच्छमें प्रयुक्त एक रूप।

कार—तैत्तिरीय, वाजसनेयी, ऋक् आदि प्रातिशाख्यों एवं कात्यायनके वार्तिक आदि व्याकरण ग्रंथोंमें स्वरों और व्यंजनोंके नामों-के साथ जोड़ा गया एक **प्रत्यय**। जैसे अकार, इकार, ककार, चकार, मकार आदि। केवल क् या च् आदिको कहना थोड़ा कठिन है,

इसी कारण, उच्चारण सुविधाकी दृष्टिसे स्वरोंमें 'कार' जोड़कर तथा व्यंजनोंमें 'अ' और 'कार' जोड़कर (क्+अ+कार=ककार) इनका नामकरण किया गया। हिन्दीके कुछ मध्ययुगीन संत कवियोंमें 'ककार' आदिके स्थानपर 'कंकार' आदि मिलता है।

कारक (case)—'कारक' शब्दका संबंध कृ (=करना) धातुसे है और इसका अर्थ है 'करनेवाला'। व्याकरणमें 'कारक उस संज्ञा या सर्वनाम आदिको कहते हैं, जिसका क्रियासे सीधा संबंध हो।' या 'कारकका अर्थ है ऐसी वस्तु, जिसका क्रियाके संपादनमें उपयोग हो।' कारक छः होते हैं : (१) **कर्त्ताकारक** (nominative case)—क्रियाके करनेवाले या क्रियाका संपादन करनेवालेको कर्त्ता कहते हैं। 'रामने मोहनको मारा' वाक्यमें 'राम' कर्त्ता है, क्योंकि 'मारना' 'राम'के द्वारा ही संपन्न हो रहा है। (२) **कर्मकारक** (acusative case)—जिस संज्ञा या सर्वनामपर क्रियाके व्यापारका फल पड़ता है, उसे कर्म कहते हैं। 'रामने मोहनको मारा' वाक्यमें मारनेके व्यापारका फल 'मोहन'पर पड़ता है, इसीलिए 'मोहन' कर्मकारक है। पाणिनि कहते हैं—'कर्तुरीप्सिततमं कर्म' अर्थात् जिसको कर्त्ता सबसे अधिक चाहता है, उसे कर्म कहते हैं। कर्त्ताके बाद 'कर्म' ही क्रियाके कर्मसे सबसे अधिक संबद्ध है, इसीलिए इसे 'कर्म' कहा गया है। (३) **करण कारक** (instrumental case)—जो संज्ञा या सर्वनाम क्रियाके साधन रूपमें कार्य करे उसे करण कारक कहते है। दूसरे शब्दोंमें 'अपने कार्यकी सिद्धिमें कर्त्ता जिसकी सर्वाधिक सहायता ले, उसे करण कहते हैं।' पाणिनि कहते हैं—'साधकतमं करणम्'। 'रामने रावणको वाणसे मारा' वाक्यमें साधन, या रामका सर्वाधिक सहायक 'वाण' है, अतः वह करण है। 'करण'का शाब्दिक अर्थ भी 'साधन' है। काशिकाकार लिखता है—'क्रियासिद्धौ यत् प्रकृष्टोपकारकं विवक्षितं तत्साधकतमं कारकं करणसंज्ञं भवति'। यहाँ 'प्रकृष्टोपकारकं' में भी 'सर्वाधिक सहायक' वाली बात ही व्यक्त की गयी है। (४) **संप्रदान कारक** (dative case)—जिसके लिए कोई क्रिया की जाय उसे संप्रदान कहते हैं। प्रायः जिसे कोई वस्तु दी जाती है, वह संप्रदान होता है, जैसे 'मैं रामको घड़ी देता हूँ' वाक्यमें 'देना' 'राम'-के लिए हो रहा है या 'राम' को 'घड़ी' दी जा रही है, अतः वह संप्रदान कारकमें है। 'संप्रदान' शब्दमें भी 'प्रदान' या देनेका भाव है। पाणिनि भी कहते हैं—'कर्मणा यमभिप्रैति स संप्रदानम्' अर्थात् 'दानके कर्मसे जिसको संबद्ध करना अभिप्रेत हो वह संप्रदान है'। किन्तु वस्तुतः यह कारक इतना सीमित नहीं है, इसीलिए ऊपरकी पहली परिभाषा अधिक उचित है। कुछ अन्य प्रकारके उदाहरण हैं—'मैं पढ़नेके लिए आया हूँ' या 'कवि श्रोतागणको कविता सुनाते हैं'। (५) **अपादान कारक** (ablative case)—'अपादान' शब्द 'दा' धातुसे 'अप' लगकर बना है और इसका अर्थ है 'हटाना' या 'अलगाव'। जिस संज्ञा या सर्वनामसे क्रिया हटे, निकले या अलग हो, उसे अपादान कारक कहते हैं। जैसे 'पेड़से पत्ते गिरते हैं' में 'पेड़' अपादान कारक है। पाणिनि कहते हैं—'ध्रुवमपायेऽपादानम्।' यहाँ भी वही भाव व्यक्त किया गया है। 'अपाय'का अर्थ है 'विश्लेष' या 'अलग होना'। अर्थात् जो 'अलगाव'में ध्रुव या अवधिभूत हो उसकी 'अपादान' संज्ञा होती है। वार्तिककारने इसपर वार्तिक लिखते हुए अलगावके अतिरिक्त इस कारकमें घृणा, विराम, प्रसाद आदिको भी स्थान दे दिया है। स्वयं पाणिनिने भी 'अलगाव'के अतिरिक्त 'डर', 'निषेध' आदि इसमें सम्मिलित किया है। इसी प्रकार हिन्दीमें भी 'अलगाव'के अतिरिक्त भय (मैं तुमसे डरता हूँ), रक्षा (उसने मुझे चोरसे

बचाया); शिक्षा (मैं गुरुसे पढ़ता हूँ) आदि इस कारकमें सम्मिलित हैं। (६) **अधिकरण कारक** (locative case)—'अधिकरण' शब्दका मूल अर्थ है 'आधार' या 'सहारा'। इस प्रकार क्रिया जिसपर आधारित हो वह संज्ञा या सर्वनाम अधिकरण होता है। 'मैं कमरेमें जाता हूँ' वाक्यमें जाना क्रियाका आधार है 'कमरा' अतः वह अधिकरण है। पाणिनिने भी कहा है—'आधारोऽधिकरणम्'। अर्थात् आधार अधिकरण है। मूलतः ये छः ही कारक माने गये हैं, क्योंकि क्रियासे प्रत्यक्ष संबंध केवल इन्हींका है। किन्तु व्यवहारतः कारकोंकी संख्या ८ मानी जाती है: (१) कर्त्ता, (२) कर्म, (३) करण, (४) संप्रदान, (५) अपादान, (६) संबंध, (७) अधिकरण, (८) संबोधन। इसी क्रमके आधारपर इन कारकोंको प्रायः क्रमशः प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी और सप्तमी कहते हैं। अंतिमको संबोधन ही कहते हैं। इन आठमें 'संबंध'-वस्तुतः क्रियासे संबंध नहीं है, इसी लिए वह 'कारक' नहीं माना जाता। 'संबंध'-का सामान्य अर्थ 'नाता' या 'रिश्ता'। व्याकरणमें भी संबंध कारक (genitive case) वहीं होता है जहाँ कोई नाता या संबंध व्यक्त हो। 'रामका घोड़ा मोहनके भाईको सीताके खेतमें काट रहा है' इस वाक्यमें 'राम' 'मोहन' 'सीता' संबंध कारकमें हैं क्योंकि ये क्रमसे घोड़ा, भाई, खेतका संबंध बतलाते हैं। वस्तुतः वाक्य है 'घोड़ा भाईको खेतमें काट रहा है' क्रियाका प्रत्यक्ष संबंध केवल इस वास्तविक वाक्यके शब्दोंसे है, राम, मोहन, सीतासे नहीं। इस प्रकार 'संबंध'का क्रियासे प्रत्यक्ष संबंध नहीं है, अतः वह तत्त्वतः कारक नहीं है। अंतिम **संबोधन कारक** (vocative case) है। संबोधनका अर्थ है 'पुकारना' या 'चेताना'। संज्ञाके जिस रूपसे पुकारना या संबोधित करना सूचित हो, उसे संबोधन कहते हैं। जैसे 'हे भगवान्! रक्षा करो' यहाँ 'भगवान्' संबोधन कारक है। संबोधनका तो क्रियासे और भी संबंध नहीं है। यह तो वस्तुतः वाक्यसे भी बाहर रहता है। उदाहरणार्थ 'राम! कल तुम आ जाना' में वाक्य है 'कल तुम आ जाना'। 'राम!' तो अलग ही है। इसी कारण इसकी भी गणना कारकोंमें नहीं होती। **प्रसिद्ध है**—'कर्त्ता कर्म च करणं च संप्रदानं तथैव च। अपादानाधिकरणे इत्याहुः कारकाणि षट्॥' कारकोंकी रचना संस्कृत आदि संयोगात्मक भाषाओंमें विभक्तियोंके आधारपर होती है, किन्तु हिन्दी, अंग्रेज़ी आदि अयोगात्मक भाषाओंमें 'ने' 'को' आदि परसर्ग या फ़्राम (from), टू (to) आदि पूर्वसर्गके सहयोगसे होती है। कभी-कभी कुछ न जोड़कर केवल स्थान-विशेषसे ही कारकोंका भाव प्रकट कर लिया जाता है। जैसे 'मैं घर जा रहा हूँ' में 'घर' अधिकरण कारकमें है, यद्यपि उसके साथ 'पर' 'में' आदि **परसर्ग** नहीं हैं।

कारकचिह्न—(दे०) **संबंध सूचक अव्यय**।

कारक रूप(declension)—संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदिके कर्त्ता आदि विभिन्न कारकों (दे० **कारक**) में बने रूप। विश्वकी सभी भाषाओंमें कारक रूप नहीं मिलते।

कारकवाचक प्रत्यय—एक प्रकारका **प्रत्यय** (दे०)।

कारक-विभक्ति—(दे०)**संबंध सूचक अव्यय**।

कारणजन्य ध्वनि-परिवर्तन—एक प्रकारका **ध्वनि-परिवर्तन** (दे०)।

कारणमूलक कारक (causative case) —काकेशस आदि कुछ भाषाओंमें एक प्रकारका **कारक** (दे०), जिसमें क्यों कि का भाव निहित रहता है।

कारणवाचक अव्यय—(दे०) **समुच्चयबोधक अव्यय**।

कारणवाचक क्रियाविशेषण—(दे०) **क्रियाविशेषण**।

कारणवाचक संबंधसूचक अव्यय—(दे०) **संबंध-**

सूचक अव्यय।

कारणात्मक अतीत--(दे०) **काल**।

कारणात्मक उपवाक्य--कारणात्मक वाक्यांश-के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

कारणात्मक वाक्यांश (causal clause) --ऐसा उपवाक्य या वाक्यांश जिसमें कारण बतलाया गया हो। जैसे 'वह सो गया, अतः मैं नहीं जा सका'में पहला वाक्यांश।

कारपेथो-रूसी (carpatho russian)--रूथेनियन(दे०) बोलीका एक अन्य नाम।

कार्डिअलाइज़र (cardialyzer)--**स्पेक्ट्रोग्राफ़** (दे०)का एक रूप।

कार्णाट अपभ्रंश--**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

कार्दन्तिक संबंध सूचक अव्यय--(दे०)**संबंध सूचक अव्यय**।

कोर्निश (cornish) भारोपीय परिवार-की केल्टिक (दे०) शाखाकी एक विलुप्त भाषा। इसका क्षेत्र कॉर्नवाल था।

कार्मालि (karmali)--**संथाली** (दे०)की एक रूप।

कार्य कारणवाचक क्रियाविशेषण उपवाक्य --(दे०)वाक्यमें **वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक।

कार्यात्मक रूपग्राम--एक प्रकारका **रूपग्राम** (दे०)।

कार्याधारित परिवर्तन (functional change) ध्वनि या रूप आदिमें, उसके कार्य, या नयी परिस्थितिमें उसके कार्यके कारण घटित परिवर्तन।

कार्याधारित भाषाविज्ञान (functional linguishks) भाषाके अध्ययनका वह रूप जिसमें भाषिक इकाइयों (ध्वनि, रूप आदि)का अध्ययन उनके कार्य या प्रयोगके आधारपर होता है।

काल (tense)--'काल'का सामान्य अर्थ है 'समय'। व्याकरणमें 'काल' क्रियाके उस रूपांतर या व्याकरणिक रूपांतरको कहते हैं, जिससे क्रियाके घटित होनेके समयका पता चलता है। जैसे'वह जा रहा है' से यह पता चल रहा है, कि, क्रिया वर्तमान कालमें घटित हो रही है। इसी प्रकार 'वह जायेगा'से क्रियाके भविष्यत् कालमें घटित होनेका पता चल रहा है। काल मुख्यतः तीन होते हैं (१) वर्तमान काल (present tense)-जिससे क्रियाके वर्तमान समयमें होनेका बोध हो। जैसे 'वह लिख रहा है।' (२) **भूत काल** (past tense)--जिससे क्रियाके बीते हुए समयमें होनेका बोध हो। जैसे 'वह लिख रहा था।' इसे **अतीतकाल** भी कहते हैं। (३) भविष्य या भविष्यत् काल (future tense)--जिससे क्रियाके आनेवाले समयमें होनेका बोध हो, जैसे-'वह लिखेगा।'। इन तीनों कालोंके, क्रिया-की पूर्णता-अपूर्णता आदिके आधारपर कई भेद होते हैं। संसारकी विभिन्न भाषाओं-में परंपरागत रूपसे ये भेद भिन्न-भिन्न प्रकारके माने जाते हैं। हिन्दीकी दृष्टि-से यहाँ प्रमुख काल-भेद दिये जा रहे हैं। वर्त्तमान कालके प्रमुख भेद पांच हैं: (१) **सामान्य वर्त्तमान** (present indefinite)--जिससे क्रियाके व्यापारका वर्त्तमान कालमें सामान्य रूपसे होनेका पता चले। इससे पूर्णता-अपूर्णता आदिका बोध प्रायः नहीं होता। जैसे-'राम पढ़ता है।' क्रियाका सामान्य वर्णन (वह रोगी है) तथा स्वभाव या प्रवृत्ति (वह झूठ बोलता है, वह चोरी करता है)का उल्लेख भी इसीके अंतर्गत आता है। इसे **अपूर्ण वर्त्तमान, वर्त्तमान निश्चयार्थ** तथा **घटमान वर्त्तमान** आदि भी कहते हैं।। (२) **संदिग्ध वर्त्तमान** (doubtful present)जिसमें क्रियाके व्यापार-का वर्तमान कालमें होनेका संदेह या अनिश्चयके साथ उल्लेख हो। जैसे-'वह आता होगा।' इसे **अपूर्ण भविष्य निश्चयार्थ** तथा **घटमान भविष्य** आदि अन्य नामोंसे भी अभिहित करते हैं। (३) **अपूर्ण वर्तमान** (present imperfect या present continuous)--जिससे ज्ञात होता है

कालवाचक विशेषण—(दे०) **विशेषण**।

कालवाचक संबंधसूचक अव्यय—(दे०) **संबंध सूचक अव्यय**।

कालवैशिष्टयोत्पन्ना आर्थी व्यंजना—एक प्रकारकी व्यंजना। (दे०) **शब्द-शक्ति**।

काल संबंधवाचक प्रत्यय—एक प्रकारका **प्रत्यय** (दे०)।

कालसूचक विशेषण—(दे०) **विशेषण**।

कालहंदी (kalahandi)—कालहंदी (रियासत)में **उड़िया** (दे०)को दिया गया एक नाम।

कालिंगी (kalingi)—**तेलुगु** (दे०)का एक प्राचीन नाम।

कालीपरज (kaliparaj)—गुजरातमें **भील** भाषाओंके लिए, प्रयुक्त एक सामान्य नाम। (दे०) **भीली**।

कालीमाल—'ब्रजभाषा'की उप-बोली **डाँगी** (दे०)का, करौलीकी सीमापर 'डाँगी' और 'डाँगभाँग' उप-बोलियोंके क्षेत्रोंके मध्यमें प्रयुक्त, एक स्थानीय रूप। ग्रियर्सनके भाषा–सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ८१,००० थी।

काल्डिअन पहलवी लिपि—**पहलवी लिपि** (दे०)का एक रूप।

काल्हा (kalha) 'संथाली' के रूप **कार्माली** (दे०)का एक नाम।

काशगर (kashgar)—**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी एक मध्य तुर्कीवर्गकी भाषा।

काशिका—काशीमें प्रयुक्त भोजपुरी। इसे **बनारसी** (दे०) भी कहते हैं।

किंग जेम्स अंग्रेजी—(१) १६११ में प्रकाशित अनूदित प्रामाणिक बाइबिलकी अंग्रेज़ी। (२) इंग्लैंडके राजा जेम्सके समयकी परिनिष्ठित अंग्रेज़ी। ये दोनों प्रायः एक ही हैं।

किअओ (kiao)—दक्षिणी शान प्रान्तमें (वर्मा) **अनामी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

किओउत्जे (kioutze)—**तुंग** (दे०)के लिए एक 'चीनी' नाम।

किओव (kiowa)—**उत्तरी अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा परिवार। इसकी प्रमुख भाषा **किओव** है।

किकपू (kikapu)—**केन्द्रीय अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

किकुयु (kikuyu)—**बांटू** (दे०) परिवारकी किलिमंजारोमें प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा।

किक्सो (kixo)—दक्षिणी अमेरिकाकी **बरबकोआ** (दे०) भाषाकी एक विलुप्त बोली।

किचाई (kichai)—**दक्षिणीकड्डो** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

किचुआ (kichua)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इसके पाँच भौगोलिक वर्ग हैं: इंका, चिंचसुयू, कितेनो, बोलिवियन, अर्जेन्टीन। इसका प्रमुख क्षेत्र अर्जेन्टीन तथा बोलिविया आदि है। इस परिवारमें आठ प्रमुख भाषाएँ हैं: **किटेनो, लमनो, चिन्चसूयू, हुअन्कयो, अयकुचो, कुसकेनो, बोलिविअन** तथा **अर्जेन्टीने**। इसका एक अन्य नाम **रुना-सिमि** (runa-simi) भी है।

किचे (kiche)–(१) मध्य अमरीकाकी **किचे** (दे०) भाषाकी एक प्रमुख बोली। (२) मध्य अमेरिकाके **पोकोन्ची-किचे-मम** (दे०) उपवर्गकी एक भाषा। **किचे, कक्चिकेल, टजुटुहिल, उस्पान्टेक** आदि इसकी बोलियाँ हैं।

किटुनहन (kitunahan)—**कुटेनै** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

किटेनो (kiteno)—दक्षिणी अमेरिकाके **किचुआ** (दे०) परिवारकी एक प्रमुख भाषा।

किनलुग (kinalugh)—काकेशसमें प्रयुक्त **काकेशस परिवार** (दे०)की एक भाषा।

किनलोआ (cinaloa)—**पिमा-सोनोर** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरीकी भाषा। इसका एक अन्य नाम **सिनलोआ** भी है। इस भाषाकी **यकी, मयो, टेहुएको, वकोरेमुए**

आदि कई उपभाषाएँ हैं।

किनारकी बोली—**बुंदेली** (दे०)का जालौन ज़िलेके उत्तर-पूर्वमें यमुनाके किनारेपर प्रयुक्त एक रूप। इसका क्षेत्र किनारेपर होनेसे, इसे किनार या किनारेकी बोली कहते हैं।

किन्नरलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयी ६४ लिपियोंमें-से एक।

किरग़िज—एक **यूराल-अल्ताई** (दे०) भाषा।

किरद (kirad)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **उर्दू** (दे०)का पूनामें प्रयुक्त एक रूप।

क़िरानी (kirani)—'फारसी'की बोली **देह्‌वारी** (दे०)का, बिलोचिस्तानमें प्रयुक्त एक रूप।

किरारी—**बुंदेली** (दे०)के 'छिंदवाड़ा-बुंदेली' (दे०) नामक वर्गका, छिंदवाड़ाकी किरारी जातिमें प्रयुक्त एक मराठी मिश्रित रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४७५० थी।

किरिल लिपि—**सिरिलिक लिपि** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

किरिलिक लिपि—**सिरिलिक लिपि** (दे०)-के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

किरिस्ताँव (kiristav)—**कोंकणी** (दे०) का, थाना (बंबई)के ईसाइयों द्वारा प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २५,५०० थी।

किर्सानी (kirsani)—**राजस्थानी** (दे०)-का इंदौरमें प्रयुक्त एक रूप। इसका अब पता नहीं है।

किलगुआ (kilagua)—**अयमर** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसका एक अन्य नाम **किलका** है।

किलिवी (kiliwi)—**लोअर केलीफ़ोर्निअन यूम** (दे०)उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

किलीदुबेरीजीब (kiliduberijib)—**मैयाँ** (दे०) बोलीका एक रूप।

किले (kile)—**तुंगुस** (दे०) भाषाकी एक बोली।

किशनगंजिआ—**सिरिपुरिया** (दे०)का एक नाम।

किशनगढ़ी—मध्य-पूर्वीय **राजस्थानी** (दे०)-की एक बोली जो 'जयपुरी'से बहुत साम्य रखती है। यह किशनगढ़में, तथा उसके आसपास बोली जाती है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,१६,७०० थी।

किश्त्वारी (kishtwari)—**कश्टवारी** (दे०)का एक अशुद्ध नाम।

किसान (kisan)—(१.) **कोडा** (दे०)का एक नाम। (२.) **कुरुख** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

की—**लट् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

कीर (kir)—**मारवाड़ी** (दे०)का, नरसिंहपुरमें प्रयुक्त एक रूप।

कीरनी—शिमलाकी पहाड़ियोंपर किर्न तथा उसके आसपास बोली जानेवाली (क्यूँठली बोलीकी) एक उपबोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३,९०० के लगभग थी। इसपर 'जौनसारी' बोलीका कुछ प्रभाव पड़ा है। (दे०) **क्यूँठली**।

कुंको (kunko)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरौकन** (दे०) परिवारकी एक भाषा। इसका एक अन्य नाम हुलिचे है।

कुंजुती (kunjuti)—यारकंदमें, **बुरूशास्की** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

कुंडारी—**कुंड्री** (दे०)का एक अन्य नाम।

कुंड्री—(१) 'पश्चिमी हिन्दी'की बोली **बुंदेली** (दे०)का, केन नदीके दोनों किनारोंपर, हमीरपुरके उत्तरी-पूर्वी भागमें तथा आसपास प्रयुक्त एक स्थानीय रूप। यह उप-बोली, 'बुंदेली' बोलीका, 'पूर्वी हिन्दी'-की 'बघेली' बोलीसे प्रभावित एक रूप है। बाँदाकी ओर इस बोलीमें 'बघेली'-का मिश्रण और भी अधिक है। इसे **कुंडारी**

भी कहते हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ११,००० थी। (२) 'बघेली'की उपबोली **जुड़ार** (दे०)का बाँदा ज़िलेके उत्तरी-पश्चिमी किनारेपर प्रयुक्त एक स्थानीय रूप।

कुंतेन लिपि (kunten)—जापानी **लिपि** (दे०)का एक रूप।

कुंबर (kumber)—कुर्गमें **कन्नड़** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

कुंभारी—**बघेली** (दे०) बोलीका मराठीसे प्रभावित एक स्थानीय रूप जो भंडाराके कुम्हारोंमें प्रचलित है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३० के लगभग थी। इसे **कुम्हारी** भी कहते हैं।

कुंलोंग (kunlong)—**तौंगथू** (दे०)का एक रूप।

कुंसलन (kunsalan)—**पलौंग** (दे०)का एक रूप।

कुइ—**द्रविड़ परिवार** (दे०)की एक भाषा। इसे **कन्धी** या खोंद भी कहते हैं। इसके बोलनेवाले जंगली हैं। इसका संबंध तेलुगु-से ज्ञात होता है। उड़ीसाके जंगलोंमें यह बोली जाती है। इसके पश्चिमी और पूर्वी दो भेद हैं। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ३,१८-५९२ थी।

कुइकटेक (kuikatek)— **केन्द्रीय अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारकी प्रमुख भाषा भी इसी नामकी है।

कुइका (kuika)—**टिमोटे** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

कुइट्लटेक (kiutlatek)—**केन्द्रीय अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारकी प्रमुख भाषाका नाम भी यही है।

कुइव (kuive)—**गुअहिबो** (दे०) परिवारकी एक प्रमुख दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

कुई (kui)—उड़ीसाके कुछ भागोंमें तथा मद्रास (गुमसर, विज़गापट्टम्)में बोली-जाने वाली एक 'द्रविड़' भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४,८३,६६८ थी।

कुएरेटू (kueretu)—**टुकनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

कुओयू (kuo-yu) उत्तरी मंदारिनकी पीपिङकी बोलीपर आधारित **चीनी** (दे०) भाषाका वह रूप जो इस समय वहाँकी राष्ट्र भाषा है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३० करोड़के लगभग कही गयी है।

कुकी-चिन वर्ग (kuki-chin group)—चीनी परिवारके तिब्बती-बर्मी उपपरिवारकी असमी-बर्मी शाखाका एक वर्ग। इस वर्गकी अधिकतर भाषाएँ बर्मामें बोली जाती हैं, तथा कुछ असममें। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ७,९६,३१४ थी। **चीनी परिवार**(दे०)

कुचबंधी (kuchbandhi)—बहराइच (उत्तर प्रदेश)में प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

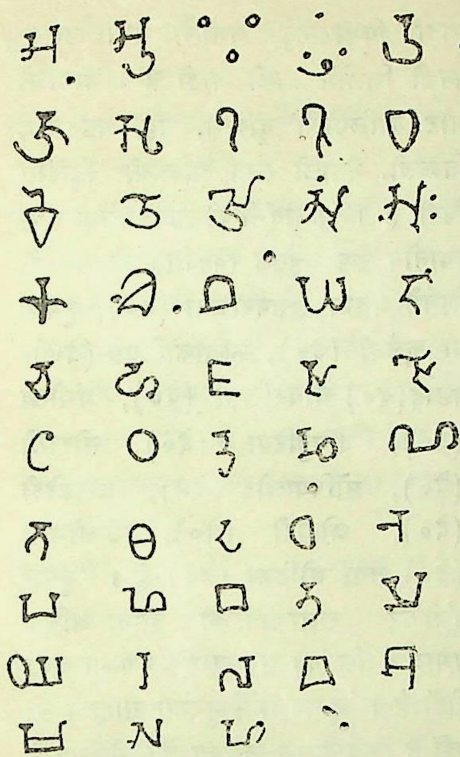
कुचिन (kuchin)—**टिन्नेह** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

कुचु (kuchu)—**आतोंग** (दे०)का एक नाम।

कुचू (kuchu)—**आतोंग** (दे०)का एक दूसरा नाम।

कुचेयन—**तोखारी** (दे०)का एक अन्य नाम।

कुटिल लिपि—**ब्राह्मी लिपि** (दे०)की उत्तरी शैलीसे विकसित एक लिपि जिसका काल ६ठीं सदीसे ९वीं-१०वीं सदी तक मिलता है। नागरी तथा शारदा लिपियाँ इसीसे निकली हैं। एक अन्य मतानुसार इसका पूर्वी भारतमें प्रयुक्त रूप ही बंगला, असमी, मैथिली लिपि बना। (दे०) **बँगला लिपि**। कुटिल नाम इस लिपिके अक्षरोंके टेढ़े होनेके कारण दिया गया है।



[कुटिल लिपिका यह रूप छठीं सदीका है । कुछ अक्षर शिलालेखोंसे तथा कुछ ताड़पत्रपर लिखित पुस्तकोंसे लिये गये हैं । अक्षर क्रमसे अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, लृ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः, क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म, य, र, ल, व, श, ष, स, ह, हैं]

कुटेनै (kutenai)––**उत्तरी अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा परिवार । इसका एक अन्य नाम किटुनहन भी है । इस परिवारकी प्रमुख भाषाका नाम भी यही है ।

कुट्नी (kutni)––मैसूरमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) बोली ।

कुठारी (kuthari)––**बघाटी** (दे०)का कुठार(पंजाबमें)प्रयुक्त एक नाम । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार 'कुठारी' बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३७८९ थी ।

कुठारी-बघाटी (kutharibaghati)––बिजा (पंजाब)में प्रयुक्त **बघाटी** (दे०)का एक नाम । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १०६९ थी ।

कुडाली (kudali)––**मराठी** (दे०)का, नीलगिरि (बंबई)के हिन्दुओंमें प्रयुक्त एक रूप । इसका **मालवणी** नाम भी मिलता है । इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग ९०,००० थी ।

कुड़माली––**पूर्वी मगही** (दे०)का एक स्थानीय रूप जो मानभूम, खरसवान, मयूरभंज तथा वामरा आदिमें प्रयुक्त होता है । इसके बोलनेवाले द्रविड़ 'कुड़मी' हैं । उन्हींके नामके आधारपर इसका नाम **कुड़माली** पड़ा है । मानभूमके पास इसपर 'बंगाली'का तथा मयूरभंजके पास 'उड़िया'का प्रभाव पड़ा है । इसके अन्य नाम **कुड़ुमाली** (यह उच्चारण मयूरभंजमें चलता है), **कुड़माली ठार** (अर्थात् कुड़माली ढंगकी बोली), **कोरठा**, **खट्टा**(इस नामका प्रयोग मानभूमके उत्तर-पश्चिममें होता है),तथा **खट्टाही** आदि हैं ।

कुड़माली ठार––(दे०) **कुड़माली** ।

कुड़ुमाली––(दे०) **कुड़माली** ।

कुड़्मी भूमिज (kurmibhumij)––**भूमिज** (दे०)का, छोटा नागपुरमें प्रयुक्त, एक रूप ।

कुणबाऊ (kunbau)––**खानदेशी** (दे०)-की, खानदेशकी कुणबी नामक जातिमें प्रयुक्त, एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४,००,००० थी ।

कुणबी (kunbi) (१) **कुणबाऊ** (दे०)का एक अन्य नाम । (२) **कोंकणी** (दे०)की, बंबईमें प्रयुक्त एक बोली । कुछ स्थानीय प्रभावोंके अतिरिक्त यह शुद्ध 'कोंकणी' है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३,६८,००० थी ।(३)**वर्हाडी**(दे०)के लिए बरारमें प्रयुक्त एक नाम ।

कुत्ची (kutchi)–**कच्छी** (दे०)का विकृत नाम ।

कुदिया (kudiya)—**कोडगू** (दे०)का एक अन्य नाम।

कुदी (kudi)—**बड़** (दे०)का एक रूप। इसका अब पता नहीं है।

कुदुबी (kudubi)—**कोंकणी** (दे०)का एक नाम। कुदुबी नामक द्रविड़ जातिमें प्रयुक्त होनेके कारण यह नाम पड़ा है।

कुदो (kudo)—**कद्** (दे०)का एक अशुद्ध नाम।

कुन (kuna)—(१) **टलमनक-बरबकोआ** (दे०) वर्गकी एक दक्षिणी-अमेरिकी भाषा। (२) अराकान (बर्मा) में प्रयुक्त एक भाषा। इसका एक नाम **कोन** भी है।

कुनबाऊ (kunbau)—चाँदामें प्रयुक्त **मराठी** (दे०)का एक विकृत रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,१०,१५० थी।

कुनम (kunama)—**सूडान वर्ग** (दे०)की एक नीग्रो भाषा।

कुन्नी (kunni)—**करेन्व्यू** (दे०)का एक अन्य नाम।

कुन्लोई (kunloi)—**पलौंग** (दे०)का एक रूप।

कुन्हव्त (kunhawt)—वर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **पलौंग** (दे०)का, दक्षिणी शान प्रांतमें, १,१४८ व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत, एक रूप।

कुपुई (kupui)—**कबुई** (दे०)का एक अशुद्ध नाम।

कुमनगोटो (kumangoto)—**कॅरिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

कुमायूँनी—**पहाड़ी** भाषाकी बोली **माध्यमिक पहाड़ी** (दे०)की एक प्रमुख बोली। इसका मुख्य क्षेत्र कुमायूँ होनेके कारण यह नाम है। 'कुमायूँ' शब्दकी व्युत्पत्ति कई प्रकारसे दी गयी है। अधिक मान्य मतके अनुसार इसका संबंध संस्कृत शब्द 'कूर्माचल'से है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार 'कुमायूँनी' बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४,३६,७८८ थी। यह कुमायूँ कमिश्नरीके नैनीताल (उत्तरी भाग), अलमोड़ा, पिथौरागढ़, चमोली तथा उत्तरकाशी ज़िलोंमें बोली जाती है। भाषाओं और बोलियोंकी दृष्टिसे, यह, गढ़वाली, तिब्बती, नैपाली तथा पश्चिमी हिन्दीसे घिरी है। 'कुमायूँनी'की उपबोलियाँ तथा स्थानीय रूप बहुतसे विकसित हो गये हैं, जिनमें प्रधान **खसपरजिया** (दे०), **कुमयाँ** या **कुमैयाँ** (दे०), **फल्दाकोटिया** (दे०), **पछाई** (दे०) **चोगरखिया** (दे०), **गंगोला** (दे०), **दानपुरिया** (दे०), **सीराली** (दे०), **सोरियाली** (दे०), **अस्कोटी** (दे०), **जोहारी** (दे०), **रउ चोभैंसी** (दे०) तथा **भोटिआ** (दे०) हैं। 'कुमायूँनी'पर 'राजस्थानी'का इतना अधिक प्रभाव है कि यह उसका एक रूप-सा ज्ञात होती है। 'कुमायूँनी'में पुराना साहित्य तो नहीं है किंतु इधर लगभग डेढ़-सौ वर्षोंसे साहित्य रचना हुई है। यहाँके पुराने साहित्यिकोंमें गुमानीपंत, कृष्णदत्त पाँडे, सिवदत्त सत्ती आदि प्रधान हैं। यहाँकी लिपि नागरी है।

कुमिक (kumik)—यूराल-अल्ताई परिवारकी एक भाषा।

कुमी (kumi)—**खमी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

कुमैयाँ—माध्यमिक पहाड़ीकी बोली **कुमायूँनी** (दे०)की एक उपबोली जो अलमोड़ा ज़िलेके काली कुमायूँ परगनेमें बोली जाती है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३७,६९६ थी।

कुमौनी—**कुमायूँनी** (दे०)का एक अन्य नाम।

कुम्हारी—(१) **बुंदेली** (दे०)का 'मराठी'की सीमाके पास छिंदवाड़ा तथा बुल्डानाके कुम्हारोंमें प्रयुक्त एक रूप। 'मराठी'की सीमापर होनेके कारण इसपर 'मराठी'का प्रभाव पाया जाता है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४,९८० थी। इसे **कुम्भारी** भी कहते हैं। (२) **कुंभारी** (दे०)का एक

अन्य नाम ।

कुरम्वारी (kuramwari)—**कुरुंब** (दे०)-के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

कुररिआ (kuraria)—**सिरिपुरिआ** (दे०) का एक अन्य नाम ।

कुरुंब—**कन्नड़** (दे०) की एक बोली । नीलगिरि पर्वतपर कुरुंब अथवा कुरुब लोगों द्वारा यह बोली जाती है । इस बोलीको **कुरम्वारी** भी कहते हैं । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १०,३९९ थी । यह बोली कन्नड़का एक विकसित या विकृत रूप है जो तमिलसे भी प्रभावित है ।

कुरुंबारी (kurumbari)—**कुरुंब** (दे०)-का एक अन्य नाम ।

कुरुख—**द्रविड़ परिवार** (दे०)की एक भाषा । बिहार, उड़ीसा और मध्यप्रदेशके सीमा स्थित प्रदेशोंमें यह बोली जाती है । यह तमिलसे मिलती-जुलती है । इसे **आराँव** भी कहते हैं । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवाले ५,०३,९८० (१९२१की जनगणनाके अनुसार ८,६५,७२२) थे । इसके **मल्हर** तथा **किसान** आदि कई उपरूप हैं ।

कुरुमा (kuruma)—**सूडानवर्ग** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा ।

कुरो (kuro)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **कच्छी** (दे०)का एक रूप । इसका अब पता नहीं है ।

कुर्मी—**कोडगू** (दे०)का एक अन्य नाम ।

कुर्दिश—कुर्दिस्तानमें प्रयुक्त एक **ईरानी** (दे०) भाषा । इसे **कुर्दी** भी कहते हैं ।

कुर्दी—(दे०) **कुर्दिश** ।

कुर्रू (kurru)—**कोरव** (दे०)का एक अन्य नाम ।

कुर्वंत—**लट् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

कुर्वंती—**लट् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

कुलनपन (kulanapan)—**पोमो** (दे०)-का एक नाम ।

कुलात्मक वर्गीकरण—**पारिवारिक वर्गीकरण** (दे०)का एक अन्य नाम।

कुलिना (kulina)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा ।

कुलिनो (kulino)—**पनो** (दे०) परिवार-की एक प्रमुख दक्षिणी-अमेरिकी भाषा । इसे **कुरिन** (kurina) भी कहते हैं ।

कुली (kuli)—१८९१की जनगणनाके अनुसार **उड़िया** (दे०)का एक रूप । इसका अब पता नहीं है ।

कुलुई—**पश्चिमी पहाड़ी** (दे०)की **कुलू वर्ग** (दे०)की एक बोली जो कुलू खासमें बोली जाती है । इसकी लिपिका नाम कुलूलिपि है, जो टाकरीका एक रूप है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५४,०८० थी । इसे **कुलुही** तथा **कुल्लुआली** भी कहते हैं ।

कुलुवरू (kuluvaru)—**कोरव** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

कुलुही (kuluhi)—**कुलुई** (दे०)का एक अन्य नाम ।

कुलू वर्गकी बोलियाँ—**पश्चिमी पहाड़ी** (दे०)-की तीन बोलियोंका, कांगड़ा ज़िलेके कुलू क्षेत्रमें प्रयुक्त एक वर्ग । इस वर्गकी तीन बोलियाँ हैं :—**कुलुई** (दे०), **भीतरी सिराजी** (दे०), तथा **सैनजी** (दे०) । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या ८४,६३१के लगभग थी ।

कुलरंग (kulrang)—**बुर्गण्डी** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

कुल्लुआली—(दे०) **कुलुई** ।

कुल्लुई—(दे०) **कुलुई** ।

कुल्लुई लिपि—कुल्लू घाटीमें बोलीजाने-वाली कुल्लुई बोली (जो **पहाड़ी** (दे०)के अंतर्गत आती है ।)की लिपि । यह लिपि **शारदा लिपि** (दे०)से उत्पन्न हुई है ।

कुल्वाडी (kulvadi)—परिनिष्ठित **मराठी** (दे०)का,धारवाड़में कुनबियों द्वारा प्रयुक्त एक विकृत रूप ।

कुशिटिक (cushitic)—हेमिटिक इथिओपिन भाषाके लिए प्रयुक्त एक नाम बाइबिलमें हैम (ham)के सबसे बड़े लड़केका नाम कुश है। इथियोपियाको उन्हींके नामपर कुश तथा वहाँकी भाषाको कुशिटिक कहा गया है। इसका क्षेत्र सोमालीलैंड या सोमालिया है। इसमें सोमाली, गल्ला, कफ़ा, ख़म्मिर, ख़ाम्ता, बंबाला, बिलिन आदि बोलियाँ आती हैं। (दे०) **इथिओपिअन**।

कुसकेनो (kuskeno)—**किचुआ**। (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी-अमेरिकी भाषा।

कुसिक (kusik)—**मांदे कुसिक** (दे०)का एक नाम।

कुसूंद (kusunda)—नैपालमें प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषा।

कुस्तेनउ (kustenau)—दक्षिणी-अमरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा। इसका क्षेत्र उत्तरी आमेज़न है।

कुस्वार (kuswar)—**नैपाली** (दे०) का नैपालमें प्रयुक्त एक विकृत रूप।

कूचिअन—**पश्चिमी तोख़ारी** (दे०)का एक अन्य नाम।

कूपूई (koopooee)—**कबुई** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

कूरी (kuri)—कौकेशसमें प्रयुक्त **काकेशस परिवार** (दे०)की एक भाषा।

कूर्कू (kurku)—सतपुड़ा (मध्य प्रदेश) तथा महादेव पहाड़ियों (बरार)में प्रयुक्त एक **मुंडा** (दे०) भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,२०,८९३ थी।

कूलुंग (kulung)—**खंबू** (दे०)की, नैपालकी ऊपरी घाटीमें प्रयुक्त एक बोली।

कूस (coos)—उत्तरी-अमेरिकाकी **कीअस्टल** (दे०) भाषाकी एक उप-भाषा।

कृतम्—**लिट् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

कृत् (primary suffix)—'कृ' धातुसे 'क्विप्' प्रत्यय लगाकर यह शब्द बना है और इसका मूल अर्थ है 'किया हुआ' या 'कार्य'। यह शब्द स्वयं कृदंतका एक उदाहरण है, और इसी आधारपर कृदंत बनानेवाले प्रत्ययोंके लिए एक सामान्य नाम बन गया है। कृत् एक प्रकारके प्रत्ययोंका सामूहिक नाम है, जिन्हें धातुमें जोड़कर संज्ञा, विशेषण या अव्यय आदि बनाते हैं। कृत्के अंतर्गत तिङको छोड़कर प्रायः सभी प्रत्यय आते हैं, जो धातुके साथ जोड़े जाते हैं। संस्कृतमें कृत् प्रत्ययोंके दो भेद हैं—(१) **कृत्**, (२) **कृत्य**। कृत् प्रत्ययके दो मुख्य भेद हैं: रूप चलनेवाले और रूप न चलनेवाले। रूप न चलनेवाले कृत् प्रत्यय हैं—तुमुल्, क्त्वा, णमुल्। रूप चलनेवाले हैं—क्त, क्तवतु, शतृ, शानच्, ष्यन्, ष्यमाण, तृच्, इष्णुच् आदि। कृत्य प्रत्यय सात हैं—तव्यत्, तव्य, अनीयर, केलिमर, यत्, क्यप्, ण्यत्। ये भाववाच्य और कर्मवाच्यमें आते हैं। कुछ लोग **उणादि** प्रत्ययोंकी गणना भी कृत् प्रत्ययोंमें करते हैं, किंतु अव्युत्पन्न प्रकृतिपदको स्वीकृति देनेवाले आचार्योंके अनुसार उणादि इनमें नहीं आते।

'कृत्' शब्द पारिभाषिक अर्थमें ब्राह्मणकाल (गोपथ ब्राह्मण '१.१.२६)से ही मिलने लगता है किंतु निरुक्त (१.१४) तथा प्रातिशाख्योंमें यह विशेष प्रकारके प्रत्ययोंके अर्थमें प्रयुक्त न होकर कृदन्तके अर्थमें प्रयुक्त हुआ है। पतंजलि आदि अन्योंने भी इस अर्थमें कृत्का प्रयोग किया है। पाणिनिका प्रयोग प्रत्ययके अर्थमें ही है। धातुमें कृत् प्रत्यय जोड़कर जो शब्द बनाये जाते हैं, उन्हें **कृदंत** कहते हैं, क्योंकि उनके अंतमें कृत् प्रत्यय होता है। (दे०) **तद्धित, प्रत्यय** और **कृदंत**। वाजसनेयी प्रातिशाख्यमें कृत् नामका प्रयोग एक प्रकारके शब्दोंके लिए हुआ है।

कृत्य (gerundive suffix)—कृत् प्रत्ययका एक भेद। (दे०) 'कृत्'। 'कृत्य'के लिए 'तव्यादि-षट्' 'यप्' 'व्य' 'ल्य' तथा

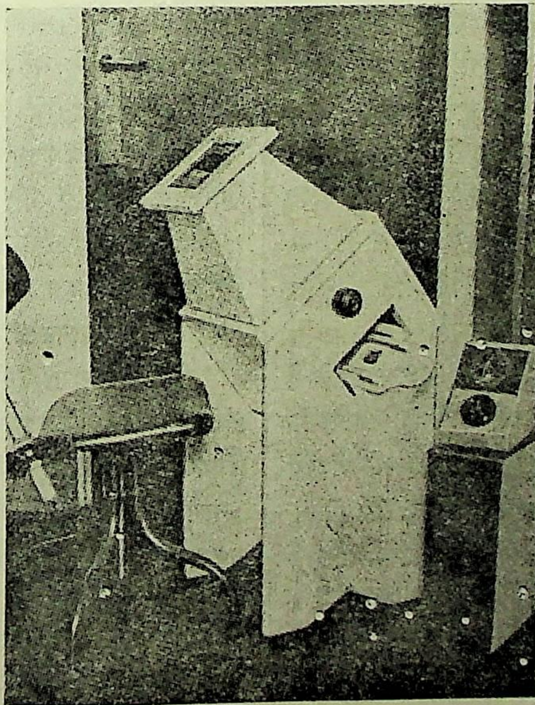
'विष्णुकृत्य' आदि अन्य नामोंका भी प्रयोग किया गया है।

कृत्रिम तालु (false या artificial palate)——उच्चारण-स्थान तथा स्पर्शका ठीक रूप आदि जाननेमें सहायक एक उपकरण। कृत्रिम तालु धातु या वल्कनाइटका बना



होता है। यह प्रयोक्ताके मुँहकी ठीक नापका ऊपरके तालुके लिए होता है। किसी ध्वनिका उच्चारण करनेके पूर्व इसमें भीतरी ओर कोई रंग या खड़िया लगा लेते हैं और फिर ऊपरके तालुपर इसे बैठा देते हैं। इसके बाद जिस ध्वनिकी परीक्षा करनी होती है, उसका उच्चारण करते हैं। उच्चारणमें जीभ तालुपर लगे कृत्रिम तालुको स्पर्श करती है और जहाँ स्पर्श होता है वहाँका रंग (या चॉक) जीभपर लग जाता है, इस प्रकार कृत्रिम तालुका स्पर्श-स्थान स्पष्ट हो जाता है। कृत्रिम तालुको सावधानीसे बाहर निकालकर उस स्पर्श-स्थानका अध्ययन करते हैं। मुँहसे निकालनेके बाद ही इसका फोटो ले लेना अधिक अच्छा होता है, क्योंकि रंग (या चॉक)के झड़ या छूट जानेपर वास्तविक स्थितिका पता नहीं चलता।

आजकल इसका ठीक चित्र लेनेके लिए **'पैलेटोग्राम प्रोजेक्टर'** नामकी एक मशीन प्रयोगमें आने लगी है। इसमें बोलनेके बाद कृत्रिम तालुको नीचे लगा देते हैं। भीतर बिजलीके प्रकाश तथा शीशेकी ऐसी व्यवस्था रहती है कि स्विच दबाते ही सबसे ऊपरके शीशे (चित्रमें चौकोर काला) पर कृत्रिम तालुकी छाया पड़ने लगती है और किसी पतले कागजको उसपर रखकर अक्स कर लेते हैं। इस प्रकार सरलतासे



देखो—पैलेटोग्राम प्रोजेक्टर

चित्र उतर जाता है। इसपर जल्दी-जल्दी थोड़े ही समयमें काफी ध्वनियोंका चित्र अक्स किया जा सकता है। मूलतः कृत्रिम-तालु दन्त चिकित्सामें प्रयुक्त होता था। १८७१ में कोट्सने इसका प्रयोग ध्वनियोंके लिए किया और तबसे यह इस क्षेत्रमें बहुत कारगर सिद्ध हुआ है।

कृत्रिम भाषा (artificial language)—ऐसी भाषा जो सहज रूपसे विकसित न होकर कृत्रिम रूपसे बनायी गयी है। **एस्पिरैंतो** (दे०) या **इडो** (दे०) आदि विश्व भाषाएँ इसी प्रकारकी हैं। चोरों, गुप्तचरों आदिकी **गुप्तभाषा** (दे०) भी कृत्रिम भाषा ही होती है। (दे०) **भाषाके विविध रूप**।

कृत्रिम संज्ञा—(दे०) **संज्ञा**।

कृदंत (participle)—हिन्दी वैयाकरणोंने कृदंतके सम्बन्धमें कहा है, 'क्रियाके जिन रूपोंका प्रयोग दूसरे शब्द भेदों (अर्थात् संज्ञा, विशेषण आदि) के समान होता है उन्हें कृदंत कहते हैं।' 'कृदंत' शब्द कृत्+अंतसे मिलकर बना है। **कृत्** (दे०) उन प्रत्ययोंको कहते हैं, जो धातुमें जोड़े जाते हैं, ऐसे प्रत्ययोंको जोड़नेपर जो शब्द बनते हैं 'कृदंत' कहलाते हैं। जैसे खा+ता=खाता, लिख्+आ=लिखा। (दे०) **कृत्**। हिन्दीमें अत्यंत प्रमुख कृदंत निम्नांकित हैं: (१) **विध्यर्थक कृदंत** या **क्रियार्थक संज्ञा** (verbal noun)—ये धातुमें—ना (चलना, बैठना) जोड़कर बनते हैं तथा संज्ञा एवं भविष्य आज्ञार्थके रूपमें काम आते हैं। इसी कारण इसके ये नाम हैं। (२) **वर्तमान कालिक कृदंत** (present participle)—ये धातुमें—'ता' जोड़कर बनते (चलता, बैठता) हैं, तथा संज्ञा, विशेषण और क्रिया रूपमें काम आते हैं। इसे **अपूर्ण कृदंत** भी कहते हैं। इसमें क्रियाके वर्तमान कालमें होने तथा अभी अपूर्ण होनेके कारण ये नाम दिये गये हैं। (३) **भूतकालिक कृदंत** (past participle) यह धातुमें—आ जोड़कर बनता (चला, बैठा) है, तथा संज्ञा, विशेषण और क्रियारूपमें प्रयुक्त होता है। इसे **पूर्ण कृदन्त** भी कहते हैं। क्रियाके पूर्ण हो जानेके कारण इसे यह नाम दिया गया है। (४) **पूर्वकालिक कृदंत** (conjunctive participle)—इसमें एक क्रियाके पूर्व किसी अन्य क्रियाके होनेका भाव रहता है, इसी कारण यह नाम दिया गया है। जैसे 'वह खाकर आया है।' इसके बनानेके लिए धातुमें—कर जोड़ते हैं। इन प्रमुख कृदंतोंके अतिरिक्त हिन्दीमें **कर्त्तृ वाचक कृदंत** (करनेवाला, अर्थात् धातुमें 'नेवाला' जोड़कर), **पूर्णक्रिया द्योतक कृदंत** (देखे—लड़केको देखे बहुत दिन हो गये; अर्थात् धातुमें-ए जोड़कर), **अपूर्णक्रिया द्योतक कृदंत** (चलते—मैंने उसे चलते देखा; अर्थात् धातुमें 'ते' जोड़कर), **तात्कालिक कृदंत** (चलते ही—चलते ही गिर पड़ा; अर्थात् धातुमें 'ते ही' जोड़कर), **मध्यकालिक कृदंत** (चलते-चलते—मैं चलते-चलते तुम्हारे ही बारेमें सोच रहा था, अर्थात् अपूर्णक्रिया द्योतककी आवृत्तिके द्वारा) आदि भी माने जाते हैं, यद्यपि वस्तुतः इनमें सभी कृदंत कहलानेके अधिकारी हैं नहीं। हिन्दीके उपर्युक्त कृदंतोंमें कुछ तो **विकारी कृदंत** हैं, अर्थात् उनमें लिंग, वचन आदिके कारण परिवर्तन होते हैं, जैसे वर्तमानकालिक, भूतकालिक, कर्त्तृ वाचक, क्रियार्थक संज्ञा आदि। कृदंत, जिनमें इस प्रकारके कोई परिवर्तन नहीं होते **अविकारी कृदंत** कहलाते हैं। हिन्दीके शेष सभी इसी श्रेणीके हैं।

कृदंतीकाल—(दे०) **काल**।

कृष्णनाम—**सर्वनाम** (दे०) का दूसरा एक नाम।

कृष्णस्वर (dark vowel)—**पश्च स्वर** (दे०) के लिए कभी-कभी प्रयुक्त एक नाम। मुखमें पीछेका भाग अपेक्षया अंधकारपूर्ण रहता है, इसी कारण वहाँसे उच्चरित स्वर कृष्णस्वर कहे गये हैं।

कैंटिश—कैंटमें प्राचीन कालमें प्रयुक्त होनेवाली एक ऐंग्लो सैक्सन बोली।

केंतुम्––भारोपीय परिवारकी एक शाखा। (दे०) **भारोपीय परिवार** शीर्षकमें उप-शीर्षक **भारोपीय परिवारका विभाजन**।

केंद्र––**शीर्ष** (दे०)का एक अन्य नाम।

केंद्राभिमुखी संयुक्त स्वर (centering diphthong––(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणका संयुक्त स्वर** उपशीर्षक।

केंद्रीय अमेरिकी वर्ग––**अमरीकी भाषाओं** (दे०)के केन्द्रीय अमेरिका तथा मेक्सिको-में स्थित भाषाओंका एक भौगोलिक वर्ग। इसमें निम्नलिखित २० भाषा-परिवार हैं :––(१) अमुसगो, (२) चिनन्टेक, (३) कुइकटेक, (४) कुइट्लटेक, (५) लेन्का, (६) मया, (७) मिस्किटो-सुमो-मटगल्पा, (८) मिक्से-ज़ोके, (९) मिक्सटेक, (१०) ओलिव, (११) ओटोमि, (१२) पया, (१३) सुब्टिअब, (१४) टूरस्क, (१५) टोटोनक, (१६) वइकुरी, (१७) क्सनम्ब्रे, (१८) क्सिकके, (१९) क्सिन्का, (२०) ज़पोटेक। इन परिवारोंको कोशमें यथास्थान देखा जा सकता है।

केंद्रीय अलगोन्किन(central Algonkin)––उत्तरी अमेरिकाके **अलगोन्किन** (दे०) परिवारका एक वर्ग। इस वर्गके अंतर्गत निम्न-लिखित भाषाएँ हैं : **क्री-मोन्टग्नैस, मेनोमिनी, सौक, फोक्स, किकपू, ओजिब्वै, अलगोन्किन, पोटवटोमी** (दे०), **कहोकिआ** (दे०), **कस्कस्किआ, पेओरिआ, मिअमी, नटिक,** (दे०) **डेलवरे, महिकन** (दे०) **पेक्योट,** आदि हैं।

केंद्रीय कड्डो (central kaddo)––**कड्डो** (दे०) भाषा परिवारका एक उप-वर्ग। इस उपवर्गकी प्रमुख भाषा **पॉनी** है।

केंद्रीय पहाड़ी––(दे०) **माध्यमिक पहाड़ी**।

केंद्रीय (जन साधारणकी) मैथिली––**मैथिली** (दे०)का पूर्वी सोतीपूरा तथा मधुबनीमें नीची जातियोंमें प्रयुक्त रूप।

केंद्रीय यूम (central yuma)––**यूम** (दे०) भाषाका एक उपवर्ग। इसके अंतर्गत निम्नलिखित भाषाएँ हैं : **मोहवे, मरीकोप** (दे०) **डिएगुएनों**, तथा **कोकोप**।

केओंथली––**'क्यूँथली'** (दे०)का एक नाम।

केक्ची (kekchi)––मध्य अमेरिकाके **पोकोन्ची** (दे०) भाषाकी एक बोली।

केची (kechi)––**मन्कानी बलोची** (दे०)का एक रूप।

केज़हामा (kezhama)––**चीनी परिवार** (दे०)के नागा पहाड़ियों (असम)में प्रयुक्त एक भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५२२८के लग-भग थी।

केदेकोल––एक **अंडमानी** (दे०) भाषा।

केपडच––**ऐफ़्रिकान्स** (दे०)का एक अन्य नाम।

केपो (kepo)––दक्षिणी अमेरिकी भाषा **टलमन्क** (दे०)की एक विलुप्त बोली।

केब्रत (kebrat)––**बड़** (दे०)का एक रूप। इसका अब पता नहीं है।

केरंडी (kerandi)––**गुअयकुरु** (दे०) परि-वारकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

केर उरओन (kera uraon)––**मुंडारी** (दे०)का एक रूप।

केरा बंगाली––**बंगाली** (दे०)का, उड़ीसा-में बसे हुए बंगालियों-द्वारा व्यवहृत एक विकृत रूप।

केरेवे (kerewe)––**बांटू** (दे०) परिवारकी विक्टोरिया झीलके उत्तरमें प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा।

केरेसन (keresan)––**उत्तरी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा परिवार। इसकी प्रमुख भाषा केरेसन है, जिसमें दो बोलियाँ हैं।

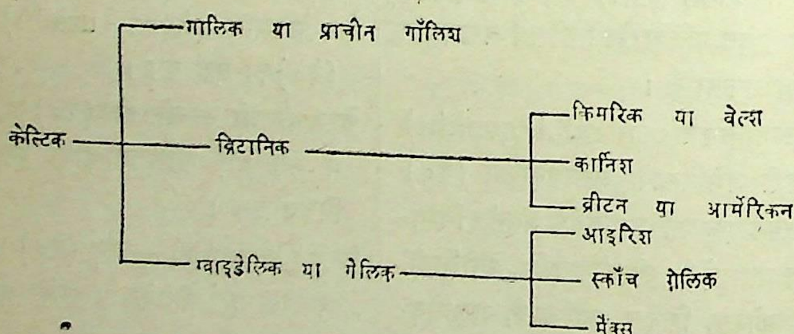
केल्टिक––**केल्टी** (दे०)का एक नाम।

केल्टी (celtic)––**भारोपीय परिवार** (दे०)-की एक उपशाखा। आजसे लगभग दो हज़ार वर्ष पूर्व इस शाखाके बोलनेवाले मध्य यूरोप, उत्तरी इटली, फ्रांस (उस समय इसका नाम 'गाल' था)के एक बड़े भाग, स्पेन, एशिया माइनर और ग्रेट ब्रिटेन आदिमें रहते थे, पर अब आयर्लैंण्ड, वेल्स, स्काटलैंड, मन्द्वीप और ब्रिटेनी तथा कार्न-वालके ही कुछ भागोंमें इसका क्षेत्र शेष रह

गया है। लैटिन शाखासे इस शाखाका बहुत साम्य है—(अ) दोनोंमें ही पुलिंग और नपुंसक लिंग ओकारान्त संज्ञाओंमें सम्बन्ध-कारकके लिए —ई प्रत्ययका प्रयोग होता है। (आ) दोनोंहीमें क्रियार्थक संज्ञा अधिकतर—शन (tion) प्रत्यय लगाकर बनायी जाती है। (इ) कर्मवाच्यकी बनावट भी दोनोंमें लगभग एक-सी है। (ई) दोनोंहीमें उच्चारण-भेदके कारण 'क' और 'प' दो वर्ग बनाये जा सकते हैं। कुछ भाषाओंमें जहाँ 'प' मिलता है वहाँ दूसरी भाषाओंमें उसके स्थानपर 'क' मिलता है जैसे वेल्शमें 'पम्प' (=पाँच) का आइरिशमें 'कोइक' है। 'प' वर्गको ब्रिटानिक और 'क' वर्गको गेलिक (gaelic) कहते हैं। इसके अतिरिक्त एक गालिक या प्राचीन गॉलिश वर्ग भी है। इस प्रकार इसके तीन वर्ग हैं।

विभाजन

१३वीं तक कविता आदिकी पर्याप्त संख्यामें रचना हुई है। कुछ रचना आज भी होती है। इसके बोलनेवालोंको अपनी भाषाका बड़ा गर्व है। **कार्निश** कार्नवालकी एक बोली थी। १७७० ई०के लगभग इसकी इतिश्री हो गयी। इसका प्राचीन साहित्य हमें अवश्य प्राप्त है, जिसकी प्रधान पुस्तक १५वीं सदीकी एक 'रहस्य-नाटिका' है। **ब्रीटन** फ्रांसके ब्रिटेनी प्रदेशमें बोली जाती है। इसे आर्मेरिकन भी कहते हैं। यथार्थतः यह कार्निशकी ही एक शाखा है, जो पाँचवीं सदीके लगभग अलग हुई थी। इसके पुराने उदाहरण दसवीं सदीतकके मिलते हैं। १२वीं सदीसे साहित्य भी मिलता है। 'क' वर्गकी प्रधान शाखा **आइरिश** है। यह केल्टिक शाखाकी प्रधान भाषा है। आयर्लैण्डमें



मृत भाषा **गालिक**, रोमके राजा प्रथम सीज़रके समयमें बोली जाती थी। २८० ई० पू० यह एशिया माइनरमें पहुँच गयी थी। अब इस भाषाका दर्शन कुछ स्थान तथा आदमियोंके नामों, पुराने लेखकों द्वारा उद्धृत शब्दों, सिक्कों और लगभग २५ अभिलेखोंमें ही मिलता है। अतः इसके विषयमें निश्चित रूपसे कुछ नहीं कहा जा सकता। किमरिक् या वेल्श 'प' वर्गकी एक शाखा है। इसके बोलनेवाले आज भी हैं। इसका प्रधान क्षेत्र वेल्स है। इसके आठवीं सदीतकके लेख मिलते हैं। साहित्यका आरम्भ ११वीं सदीसे हुआ है और

जबतक अंग्रेज़ी राज्य था भारतकी ही भाँति अंग्रेज़ीका बोलबाला था, पर देशके स्वतंत्र होनेके उपरान्त आइरिश भाषाओंको भी उचित स्थान मिला है। इसके पुराने उदाहरण पाँचवीं सदीके 'ओघम'के अभिलेखोंमें मिलते हैं। मध्यकालसे इसमें साहित्य (प्रधानतः काव्य और पौराणिक गाथा) की भी वृद्धि यथेष्ट हुई है। धार्मिक केन्द्र होनेके कारण भी इस भाषाको कम बल नहीं मिला है। इस भाषा और इसके साहित्यकी उन्नति डी वेलराके प्रयासके फलस्वरूप बड़ी ही तेजीसे हुई है। **स्कॉच गेलिक**, स्कॉटलैण्डके उत्तरी और उत्तरी-

पश्चिमी भागकी बोली थी। अब इसके बोलनेवाले अंग्रेज़ीके प्रभावसे कम हो गये हैं। कुछ स्कूलोंमें धार्मिक प्रार्थनाके लिए इस भाषाका प्रयोग वहाँ अब भी होता है। इसमें कुछ पुरानी कविताएँ मिलती हैं। **मैंक्स** इंगलैंडके समीप मानद्वीपकी भाषा है। यह भी अब समाप्तप्राय है।

केवटी––**नागपुरी मराठी**से प्रभावित **बघेली** (दे०)का, नागपुरमें कुछ लोगों द्वारा व्यवहृत एक रूप। केवटों द्वारा प्रयुक्त होनेके कारण यह नाम पड़ा है।

केहेना (kehena)––**अंगामी नागा** (दे०) की, नागा पहाड़ियों (असम)में प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ६४९० थी।

कैंगांग (kaingang)––दक्षिणी अमेरिकाके **जे** (दे०) परिवारके दक्षिणी वर्गकी एक भाषा।

कैंटनी––दक्षिणी चीनके क्वांग-टुंग प्रदेशमें तीन करोड़ लोगों द्वारा बोलीजानेवाली, **चीनी** (दे०) भाषाकी एक बोली। इसके बोलनेवाले इसे **यूएह** कहते हैं।

कैंपीदानीज (campidanese)––**सार्डिनिअन**(दे०)भाषाकी एक बोली। इसका क्षेत्र सार्डिनिया द्वीपका दक्षिणी भाग है। इसको **कैंपी देनीसिअन** भी कहते हैं।

कैंपीदेनीसिअन (campidanesian)–– **कैंपीदानीज** (दे०) बोलीका एक अन्य नाम।

कै (kai)––**तौंगथू** (दे०)का एक अन्य नाम।

कैकय अपभ्रंश––**अपभ्रंश**(दे०)का एक भेद।

कैकाडी (kaikadi)––**तमिल** (दे०)की, दक्षिणकी एक जाति विशेषमें प्रयुक्त, एक बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ८,२८९के लगभग थी।

कैकेय––मार्कंडेयके अनुसार **पैशाची प्राकृत** (दे०)का एक भेद।

कैकेयी अपभ्रंश––**अपभ्रंश** (दे०)का एक रूप।

कैगनी (kaigani)––**हैडा** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

कैगिली (kaigili)––**भोटिआ (लाहुलकी)**-का एक दूसरा नाम। (दे०) **भोटिआ** (लाहुलकी)।

कैटलन (catalan)––भारोपीय परिवारकी इटैलिक उपशाखाकी एक **रोमांस भाषा** (दे०)। इसका क्षेत्र दक्षिणी फ्रांसमें, तथा आसपास (कैटालोनिया, वलेन्सिया तथा उत्तरी-पूर्वी स्पेन आदि) और बालेआरिक द्वीप है। यह स्पेनी भाषासे तथा प्रावेंकलसे निकटका सम्बन्ध रखती है। बोलनेवालोंकी संख्या ६०,००,००० के लगभग है। इसे **कैटोलियन** भी कहते हैं।

कैटे (kaite)––**टुपी-गवरनी** (दे०) परिवारकी दक्षिणी अमेरिकामें प्रयुक्त एक भाषा। यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है।

कैटोलियन––**कैटलन** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

कैथी (kaithi)––**कायस्थी** (दे०)का एक नाम।

कैथी लिपि––पुरानी नागरी लिपिके पूर्वी रूपसे उत्पन्न यह लिपि कायस्थोंमें विशेष रूपसे प्रचलित होनेके कारण 'कैथी' कहलायी। इसका प्रमुख क्षेत्र बिहार है। इसके कई स्थानीय रूप निम्नांकित हैं––(क) **भोजपुरी कैथी**–यह भोजपुर प्रदेशमें प्रयुक्त होती है और नागरीके बहुत निकट है। (ख) **तिरहुती कैथी**––इसका क्षेत्र तिरहुत है। (ग) **मगही कैथी**––मगही बोलीका क्षेत्र इसका क्षेत्र है। पहले इसमें शिरोरेखा होती थी, किंतु बादमें छोड़ दी गयी। पहले इसमें छपाई भी होती थी।

कैना (kaina)––**ब्लैक फ़ुट** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसका **ब्लड** (blood) भी कहते हैं।

कैना नाइट (canaanite)––(१) सामी परिवारकी पश्चिमी शाखाकी उत्तरी उपशाखाका एक वर्ग जिसमें **हिब्रू** (दे०), **फ़ोनीशिअन, प्राचीन कैनानाइट** तथा **मोए-**

बाइट भाषाएँ आती हैं। (२) **प्राचीन कैनानाइट** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

कैना नाइट लिपि (canaanite)––उत्तरी **सामी लिपि** (दे०)से विकसित एक लिपि। **प्राचीन हिब्रू** (दे०) **फ़ोनीशियन** (दे०) आदि लिपियाँ इसीसे विकसित हुई हैं। कैनानाइट लिपिके पूर्वीय रूपसे **मोआबाइट** (moabite), **अम्मोनाइट** (ammonite) तथा **एडोमाइट** (edomite) लिपियोंका विकास हुआ। ये प्राचीन हिब्रूसे मिलती–जुलती हैं।

कैपगेन (keepgen)––**थादो** (दे०)का एक रूप।

कैरथ-गिनिअन लिपि––(दे०) **फोनीशियन लिपि**।

कैराली (kairali)––लहंदाके उत्तरी-पूर्वी रूप **ढूंडी** (दे०)का एक नाम।

कैरिओका (carioca)––ब्राज़ीलमें प्रयुक्त एक **पुर्तगाली** (दे०) बोली।

कैलब्रिअन (calabrian)––कैलब्रिआकी बोली जो लैटिनसे निकली है।

कैलीफोर्निअन (californian)–(१) उत्तरी अमेरिकाके **अलगोन्‌किन** (दे०) भाषा-परिवारका एक वर्ग। इस वर्गमें दो भाषाएँ **वियोट** (दे०) तथा **यूरोक** (दे०) हैं। (२) उत्तरी अमेरिकाके **पेनुटिअन** (दे०) भाषा-परिवारका एक वर्ग। इस वर्गकी भाषाएँ निम्नलिखित हैं: **विंटुन** (दे०), **मैडू** (दे०); **योकुट्स** तथा **मिवोक** (दे०)।

कैस्टिलिअन––एक **स्पैनिश** (दे०) बोली जो अब स्पेनकी साहित्यिक तथा परिनिष्ठित भाषा है। स्पेन तथा अन्य स्थानों (मेक्सिको, क्यूबा आदि)में, जहाँ स्पेनी हैं, इसीका प्रयोग होता है। **ऐंडल्यूसिअन** इसीका एक विकसित रूप है। **कैस्टिलिअन** मूलतः कैस्टाइल (स्पेनके मध्य भाग)की बोली थी।

कोंकणी––(१) **मराठी** (दे०)की एक बोली, जिसे अब लोग एक स्वतंत्र भाषा मानमेके पक्षमें हैं। कोंकणीकी अपनी लिपि नहीं हैं। यहाँके लोग कन्नड़ लिपिका (कहीं-कहीं मराठीका भी) प्रयोग करते हैं। कोंकणीका क्षेत्र दक्षिण भारतमें, दक्षिण कोंकणमें गोवामें है। इसे **गोआनी** या **गोमांतकी** भी कहते हैं। कोंकणीके बोलनेवाले ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार १५ लाख, ६३ हज़ारसे कुछ ऊपर तथा इसके परिनिष्ठित रूपको बोलनेवाले ६ लाख ८३ हज़ारसे ऊपर थे। कोंकणीकी प्रमुख बोलियाँ कुंडाली, दाल्दी, चितपावनी आदि हैं। कोंकणीमें केवल लोक साहित्य है। (२) 'कोंकणी'-की बोली **कोळी** (दे०)का एक रूप। इसे **मुसलमानी कोंकणी** भी कहते हैं। (३) **भीली** (दे०)की, बड़ौदा, सूरत, नासिक तथा खानदेशमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २,३२,६१३ थी।

कोंग (konga)––प्रत्येक **द्रविड़** भाषाके लिए प्रयुक्त एक 'कन्नड़' नाम।

कोंगडी (kongadi)––**कोंग** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

कोंगोन (kongon)––**अंगवांकू** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

कोंचो (koncho)––**पिमा-सोनोर** (दे०) वर्गकी एक विलुप्त उत्तरी अमेरिकी भाषा।

कोंड––'कोंड' भाषाके बोलनेवाले उड़ीसाकी पहाड़ियोंपर हैं। इनकी संख्या बहुत कम है। यह भाषा 'गोंड़'से मिलती-जुलती है। १८९१ की मद्रास जनगणनाके अनुसार यह 'कुइ' का ही एक स्थानीय रूप है। कोंडके अन्य नाम **'कोंडदोरा, कोंडकापू, दोरा कोटू** तथा **दोर** भी हैं।

कोंडकापू (kondakapu)––**कोंड** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

कोंडदोरा (kondadora)––**कोंड** (दे०)-का एक अन्य नाम।

कोअस्टल (coastal)––**ओरेगन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इस भाषाकी प्रमुख उप-भाषाएँ **कूस, सिउस्लव,**

यकोन, यकिन तथा अलूसेआ आदि हैं।

कोअहूइल्टेक (koahuiltek)---**होक** (दे०) परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

कोइरेंग (koireng)---**कोल्हरेंग** (दे०)का एक अशुद्ध नाम।

कोइलोंग (coilong)---(१) १८९१ की बंबई जनगणनाके अनुसार **कोंकणी** (दे०)-का एक रूप। (२) १८९१ की बंबई जनगणनाके अनुसार **मलयालम** (दे०)का एक रूप।

कोई (koi)---**गोंडी** (दे०)की, चाँदा, बस्तर, विशाखापट्टम् तथा गोदावरीमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५१,१२७ के लगभग थी।

कोकोज़ू (kokozu)---**नम्बिकुअरा** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

कोकोप (kokopa)---**केन्द्रीय यूम** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

कोकोलिचे (cocoliche)---इतालवी और स्पैनिशका एक मिश्रित रूप जो अर्जेन्टीनामें प्रचलित है।

कोच (koch)---(१) **चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके 'बड' वर्गकी, गारो पहाड़ियों, गोलपाड़ा (असम) तथा ढाका (बंगाल)-में प्रयुक्त एक भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या१६,१६५के लगभग थी। (२) **उत्तरी-बंगाली** (दे०)का, माल्दह (बंगाल)में प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ६५,००० थी। इसका व्याकरण ओड़िया-जैसा है।

कोचिमी (kochimi)---**लोअर केलीफोर्नि-अन यूम** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

कोची---पश्चिमी पहाड़ीकी बोली **क्यूँठली** (दे०)की, शिमला पहाड़ियोंपर प्रयुक्त, एक उप-बोली। इसकी लिपि 'कोची' ही है, जो 'टाक्री'का एक विकसित रूप है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ५१,९०० थी।

कोची लिपि---शिमला पहाड़ियोंके पश्चिमी भागमें प्रयुक्त कोची उपबोली (जो **पहाड़ी** (दे०)के अंतर्गत है)की लिपि। यह लिपि **शारदा लिपि** (दे०)से निकली है।

कोचे (koche)---**दक्षिणी अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इसका अन्य नाम **मोकोआ** (mokoa) भी है। इसकी प्रमुख भाषाके नाम भी ये ही हैं।

कोटंग (kotang)---**बादो** (दे०)का एक रूप।

कोटली (kotali)---**भीली** (दे०)की, सतपुड़ा (खानदेश)में प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४०,००० के लगभग थी।

कोटा---**द्रविड़ परिवार** (दे०)की एक भाषा। इसका क्षेत्र नीलगिरिकी पहाड़ियोंका जंगली भाग है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १२०१ थी। इस भाषाके बोलनेवालोंकी संख्या दिनपर दिन घटती जा रही है, अतः भाषा और जाति दोनों समाप्त्योन्मुख हैं।

कोटिल (kotil)---**कोटली** (दे०)का एक अन्य नाम।

कोटिया (kotiya)---**उड़िया** (दे०)का एक नाम। वस्तुतः यह 'उड़िया' भाषी एक द्रविड़ जातिका नाम है।

कोटिली (kotili)---**कोटली** (दे०)का एक और नाम।

कोटू (kotu)---**कोंड** (दे०)का एक दूसरा नाम।

कोट्खाई (kotkhai)---**शिमला-सिराजी-** (दे०)का एक रूप।

कोट्गढ़ी (kotgrhi)---**कोट्गुरू** (दे०)का एक अशुद्ध नाम।

कोट्गुरू (kotguru)––**साँदोची** (दे०)का एक नाम ।

कोट्टिअन (cottian)––पूर्वी साइबेरियामें ओगुलमें प्रयुक्त एक विलुप्त भाषा । इसे **काँटिश** भी कहते हैं ।

कोट्वाली (kotvali)––१९२१की जनगणनाके अनुसार सूरतके पूर्वी भागोंमें प्रयुक्त एक **भील बोली** । इसके **विटिकिमा** तथा **विटोलिआ** नाम भी मिलते हैं ।

कोडगु––**द्रविड़ परिवार** (दे०)की एक भाषा । इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषासर्वेक्षणके अनुसार ३७,२१८ थी । कोडगुमें कन्नड़ और तुलु दोनोंहीके कुछ-कुछ लक्षण मिलते हैं, इसी कारण इसे दोनोंके बीचकी भाषा कहा जाता है । इसका क्षेत्र भी दोनोंके बीचमें, कुर्गमें पड़ता है । इसे 'कुर्गी' भी कहते हैं । कुछ लोग इसे कन्नड़की बोली मानते हैं ।

कोडा (koda)––(१) **मुंडारी** (दे०)के लिए, वीरभूमि (बंगाल)में, प्रयुक्त एक नाम । (२) **कुरुख** (दे०)का एक अशुद्ध नाम । (३) **खेवारी** (दे०)की, पश्चिमी बंगाल, दक्षिणी छोटानागपुर तथा उत्तरी उड़ीसामें प्रयुक्त एक बोली । १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १९,६९०के लगभग थी । इसका एक नाम **कोड़ा** भी मिलता है ।

कोडाकू (kodaku)––**कोड़ाकू** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

कोडुन––**तमिल** (दे०) भाषाकी एक शैली ।

कोडारी (kodari)––**कोडा-३** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

कोड़कू (korku)––**कोर्वा** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

कोड़ कू––**कोड़कू** (दे०)का एक अन्य उच्चारण ।

कोड़ामुदिठार (koramudi thar)––**कोडा** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

कोड़ा––**कोडा** (दे०)का एक नाम ।

कोड़वा (korwa)––**कुरुख** (दे०)का एक अशुद्ध नाम ।

कोत (kota)––नीलगिरिकी पहाड़ियोंमें प्रयुक्त एक द्रविड़ भाषा । १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ११९२ थी ।

कोनंबो (konambo)––दक्षिणी अमेरिकाके **जापरों** (दे०) परिवारकी एक भाषा ।

कोन (kon) बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार उत्तरी अराकानमें प्रयुक्त २५० व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत एक भाषा । इसके परिवारका निश्चित पता नहीं है ।

कोनेस्टोग (konestoga)––**इरोक़ोइस** (दे०)भाषा परिवारकी एक विलुप्त उत्तरी-अमेरिकी भाषा ।

कोन्नी (konni)––(१) **करेंद्यू** (दे०)का एक अन्य नाम ।(२) **कुन्नी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

कोन्यक (konyak)––१९२१ की असम जनगणनाके अनुसार, नागा पहाड़ियोंमें बोली जानेवाली, **तम्लू**, **तब्लोंग** तथा अन्य **नागा** भाषाओंके लिए प्रयुक्त एक नाम ।

कोपेनहैगेन केन्द्र––आधुनिक भाषा विज्ञानका प्रमुख स्कूल या केन्द्र । कोपेनहैगेन डेनमार्ककी राजधानी है । भाषाके अध्ययनकी दृष्टिसे फ़िनलैण्ड, नारवे, स्वीडन आदिका आज कोपेनहैगेन ही केन्द्र है । यह स्कूल अन्योंकी अपेक्षा नवीन है । इसका कुछ कार्य तो १९३४ से ही प्रारंभ हो गया था, किंतु व्यवस्थित रूप १९३६ से मिला । हेल्मस्लेव (hzelmslev) और उल्डल इस केन्द्रके प्रमुख प्रवक्ता हैं । जिस प्रकार अमेरिकन स्कूलने भाषा-विज्ञानको 'फ़ोनिमिक्स' दिया है उसी प्रकार इस स्कूलने ग्लॉसिमेटिक्स (glossematics) दिया है । इसी आधारपर इस स्कूलको 'ग्लॉसिमेटिक स्कूल' भी कहते हैं । वस्तुतः आजकल भाषाके अध्ययनमें विद्वान् ध्वनि-इकाईकी संख्या घटाना चाहते हैं । इस दिशामें ग्लॉसिमेटिक स्कूलने पर्याप्त प्रगति की है । फ़ोनेमिक स्कूलमें जैसे–फ़ोनीमका

पता लगाते हैं उसी प्रकार ये लोग ग्लासीम (glosseme)का पता लगाते हैं । दो पार्श्वविरोध (two way contrast) होनेके कारण ग्लासीमोंकी संख्या फ़ोनीमसे भी कम होती है । इस स्कूलके सिद्धान्त सबसे अधिक जटिल तथा सूक्ष्म हैं, इसी कारण उनके वारेमें पूरा पता अन्य लोगोंको प्रायः नहीं-सा है । बीजगणितके सिद्धान्तोंके सहारे ये लोग भाषाविज्ञानके शुद्ध अर्थो-में विज्ञान वनाना चाहते हैं । इस स्कूलने गणित और तर्क शास्त्रकी काफी सहायता ली है । इसपर सास्यूरका पर्याप्त प्रभाव पड़ा है । इस स्कूलकी प्रमुख पुस्तक है : Hjlmslev—Omkring sprogtheoriens grundlaeggelse (concerning the foundation of linguisitic theory)

कोपेहन (copehan)—**विंटुन** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

कोफने (kofane)—**दक्षिणी-अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक विलुप्त अमेरिकी भाषा-परिवार । इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी थी ।

कोब (kob)—**शान** (दे०)की असममें कुछ लोगों द्वारा व्यवहृत एक बोली ।

कोम (kom) **चीनी परिवार** (दे०)की तिव्वती-वर्मी भाषाओंकी असमी-वर्मी शाखाके कुकी-चिन वर्गकी, मणिपुर (असम)में प्रयुक्त एक **प्राचीन कुकी** भाषा । १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,८५५के लगभग थी ।

कोमल-तालव्य (soft palatal)—**उच्चारण-स्थान**के आधारपर किया गया व्यंजन ध्वनियोंका एक भेद । कोमल तालव्य उन व्यंजनोंको कहते हैं, जिनका उच्चारण जीभके पिछले भागकी सहायतासे अर्थात् **कोमल तालु** (दे०) होता है । क, ख, ग, घ, ङ का उच्चारण यहींसे होता है । कुछ (विशेष प्रकारके ख़, ग़, आदि) संघर्षी ध्वनियाँ भी यहाँसे उच्चरित होती हैं । कुछ लोग इसे **कंठ्य** (guttural या velar) भी कहते हैं ।

कोमल तालु(soft palate)—तालुका सबसे पिछला भाग । कोमल होनेके कारण इसे 'कोमल तालु'कहा गयाहै । कवर्ग आदि ध्वनियोंका यहींसे उच्चारण किया जाता है । जिन ध्वनियोंका उच्चारण 'कोमल तालु'से होता है उन्हें **कोमल तालव्य** कहते हैं । प्राचीन वैयाकरणोंने इसीको कंठ्य कहा है । (दे०) **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान** ।

कोमल व्यंजन(soft consonant)—**घोष** (दे०) व्यंजनोंके लिए प्रयुक्त एक नाम ।

कोमल शब्द—वे शब्द जो कोमल वर्णोंसे युक्त हों. 'क' से 'म' तकके व्यंजन (ट ठ, ड, ढ छोड़कर) र, ल, स आदि कोमल वर्ण कहलाते हैं । कोमल शब्दोंके लिए समासका अभाव भी अच्छा माना गया है । किसलय, जलज, कलिका आदि मधुर शब्द हैं । (दे०)' शब्द' । माधुर्यगुण तथा वैदर्भी रीति या उपनागरिका वृत्तिके लिए इनका प्रयोग होता है ।

कोमोक्स (komoks)—**सलिश** (दे०) भाषा परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

कोमोरोस (cokomos)—**बाँटू** (दे०) परिवारकी दक्षिणी अफ्रीकाके पूर्वी तटपर प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा ।

कोम्टाऊ (komtau)—**तेलुगु** (दे०)की मध्यभारतमें प्रयुक्त एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३,८२७ थी ।

कोया (koya)—**कोई** (दे०)का एक नाम ।

कोयेरुना (koeruna)—दक्षिणी अमेरिकाके **विटोटो परिवार** (दे०)की एक भाषा । यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है ।

कोर (kora)—**कोरव** (दे०)के लिए एक दूसरा नाम ।

कोरग (koraga)—मद्रासमें प्रयुक्त एक गुप्त द्रविड़' भाषा जो कदाचित् **तुकू** (दे०)की एक बोली है ।

कोरच (koracha)—**कोरव** (दे०)का

एक अन्य नाम ।

कोरठा—(दे०) **कुड़माली** ।

कोरबेक (korabeka)—**बोरोरो परिवार** (दे०)की एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

कोरम (korama)—**कोरव** (दे०)का एक अन्य नाम ।

कोरयक (koryak)—**चुक्ची-कमचदल** (दे०) परिवारकी, लगभग एक हज़ार लोगों (कोरयक नामक एक साइबेरियन जातिके) द्वारा प्रयुक्त उत्तरी पूर्वी एशिया-के एक छोटेसे प्रदेशकी एक भाषा ।

कोरव (korava)—**तमिल** (दे०)की, मद्रासमें कोरव जाति द्वारा बोली जानेवाली एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ५५,११६ थी । इस संख्यामें '**येरुकल**' बोलने-वाले भी सम्मिलित थे ।

कोरवा—(दे०) कोरव ।

कोरांती (koranti)—**त्रिजिआ** (दे०)का एक अन्य नाम ।

कोरा (kora)—(१) **पिमा-सोनोर** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी-अमेरिकी भाषा । (२) एक **अंडमानी** (दे०) भाषा ।

कोरियन—(दे०) **कोरियाई** ।

कोरियन लिपि—कोरियामें प्रयुक्त लिपि । इसकी उत्पत्ति विवादास्पद है । संभवतः कई लिपियोंके आधारपर इसे बनाया गया है । प्राचीन कोरियन लिपिसे निकली एक लिपिका कभी जापानमें प्रचार था ।

कोरियाई (korean)—कोरियाई, जैसा कि नामसे स्पष्ट है, वर्तमान कोरियाकी भाषा है । अधिक दिनों तक चीनी प्रभावमें रहनेके कारण चीनी शब्दोंकी अधिकता है । यह कुछ बातोंमें जापानीसे मिलती-जुलती है। इसकी आधुनिक लिपि ब्राह्मी लिपिकी पुत्री है। आकृतिकी दृष्टिसे यह अश्लिष्ट-योगा-त्मक भाषा है किंतु यूराल-अल्टाइक परि-वारमें नहीं रखी जा सकती । इसे भारोपीय परिवारसे जोड़नेके भी असफल प्रयास हुए हैं । इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २२,००,००० है ।

कोरी (kori)—**इरोक्वोइस** (दे०) भाषा-परिवारकी एक उत्तरी-अमेरिकी भाषा । अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है । इस भाषाके पारिवारिक संबंधके विषयमें विद्वानों-में मतभेद है ।

कोरो पार्सी (koro parsi)—**कूर्कू** (दे०)-का एक और नाम ।

कोरोबिसी (korobisi)—**टलमन्क-बरब-कोआ** (दे०) वर्गकी एक विलुप्त दक्षिणी-अमेरिकी भाषा ।

कोर्कू (korku)—**कूर्कू** (दे०)का एक नाम ।

कोर्चरी (korchari)—**कोरव** (दे०)का एक अन्य नाम ।

कोर्ची (korchi)—**कोरव** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

कोर्ठा—**पूर्वीय मगही** (दे०)का एक रूप ।

कोर्डोफ़निअन (kordofanian)—**सूडानवर्ग** (दे०)की कुछ भाषाओंका एक वर्ग ।

कोर्वा (korwa)—**खेरवारी** (दे०)की, छोटा-नागपुर तथा मिदनापुर (बंगाल) में प्रयुक्त, एक बोली । १९२१की जनगणनाके अनु-सार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २१,६५५ थी ।

कोर्वारी (korwari)—**कोर्वा** (दे०)का एक अन्य नाम ।

कोर्वी (korvi)—**कोरव** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

कोर्सिकन (corsican)—कार्सिका द्वीपमें प्रयुक्त एक **इतालवी** बोली ।

कोल (kōl)—(१) **हो**का एक अन्य नाम । (२) **कुरूख** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अशुद्ध नाम । (३) संथालीके **कार्माली** (दे०) रूपके लिए प्रयुक्त एक नाम । (४) **मुंडारी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम । (५) **भूमिज** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

कोलन (kolan)—**सेक** (दे०) परिवारकी

एक विलुप्त दक्षिणी-अमेरिकी भाषा ।

कोलवन (kolavan)––१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **मराठी** (दे०)का, पूनामें प्रयुक्त एक रूप । अब इसका पता नहीं है ।

कोलवी (kolavi)––१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार शोलापुरमें प्रयुक्त एक बंजारा (दे०) भाषा ।

कोला (kola)––दक्षिणी-अमेरिकाके **अयमर** (दे०) भाषा-परिवारकी एक प्रमुख भाषा ।

कोलामी––द्रविड़ परिवार (दे०)की एक भाषा, जिसे बोली भी कहा गया है । इसे अमरावती, वरारतथा वधामें 'कोलामी' नामक आदिवासी बोलते हैं । इसका तेलगु तथा कन्नड़से कुछ संबंध ज्ञात होता है । **बसीमी भीली** या बसिमके पसाद तालुकेकी भीली तथा **नैकी** इसकी प्रमुख बोलियाँ हैं । इसके बोलनेवाले ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार २३,२९५ थे । कोलामीपर मध्यप्रदेशकी भीलीका कुछ प्रभाव है ।

कोलारी––मुंडा (दे०) भाषाओंके लिए प्रयुक्त एक सामान्य नाम ।

कोली (koli)––(१) **हो** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम । (२)**कुलुई** (दे०)के लिए एक अन्य नाम ।

कोळी (koli)––**कोंकणी** (दे०)का कोलाबा, थाना तथा जंजीरामें प्रयुक्त एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,८९,१८६ थी ।

कोलीपालुस (kolipalus)––'कोहिस्तानी'की बोली **मैयाँ** (दे०)का कोहिस्तानमें प्रयुक्त एक रूप ।

कोलोलो (kololo)––**बांटू** (दे०)परिवारकी, पूर्वी अफ्रीकाके **चुआना** प्रदेशमें प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा ।

कोल्य (kolya)––**खोईराओ** (दे०)का एक अन्य नाम ।

कोलरेन (kolren)––**कोलहरेंग** (दे०)का एक अशुद्ध नाम ।

कोलहरेंग (kolhreng) **चीनी परिवार** (दे०)की मणिपुर (असम)में प्रयुक्त एक **प्राचीन कुकी** भाषा । 'ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसका शुद्ध नाम 'कोल ह्ररेंग'; तथा इसके बोलनेवालोंकी संख्या मोटेरूपसे लगभग ७५० थी ।

कोल्हाटी (kolhati)––चांदा, वरार तथा दक्षिणी बंबईमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २,३६७ थी ।

कोश-विज्ञान (lexicology)––कोशविज्ञान भाषा-विज्ञानकी एक महत्त्वपूर्ण उपशाखा है । मानव-विकासके आरम्भमें कोशकी आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि मानवका संबंध केवल अपनी प्रचलित भाषासे था । न तो उसके पास अपने पूर्वजोंकी भाषाका कोई रूप था जिसे जाननेसमझनेके लिए वह ऐसा प्रयास करे और न एक भाषा-भाषी कबीलेका दूसरेसे बहुत अधिक संपर्क ही आवश्यक था कि वह इस दिशामें कुछ करे । साथ ही, कोशका आधार लिपि है । यह भी उसके पास नहीं था, या था भी तो नगण्य रूपमें । लिपिके विकासके साथ-साथ मनुष्यको अपने पूर्वजोंकी रचनाएँ उत्तराधिकारके रूपमें मिलीं, जिन्हें समझनेके लिए कोशोंकी आवश्यकताका अनुभव हुआ । इसी प्रकार व्यापारिक या सांस्कृतिक कारणोंसे एक भाषाभाषी जब दूसरेके संपर्कमें आये और एक दूसरेकी बातें गहराईसे समझनेकी आवश्यकता हुई तो द्विभाषीय कोशकी नींव पड़ी । इस प्रकार समाजके विकासके साथ-साथ अनेक प्रकारके कोशोंका विकास हुआ है और होता जा रहा है । कोश-विज्ञान (lexicology)से संबद्ध दूसरा शब्द-कोशकला (lexicography) है । कोशविज्ञान तो कोश बनानेका विज्ञान है, इसमें उन सिद्धान्तोंका विवेचन करते हैं, जिनके आधारपर कोश बनाते हैं । इस प्रकार इसका संबंध सिद्धांतसे है । दूसरी ओर 'कोश-कला'

सिद्धांत न होकर 'कला' या 'प्रयोग' है। सिद्धांतोंके आधारपर कोश बनाना इसमें आता है।

भाषा-विज्ञानकी अन्य शाखाओंकी भाँति ही कोश निर्माण भी सबसे पहले अपने प्रारंभिक रूपमें भारतवर्षमें ही विकसित हुआ। लगभग १००० ई० पू० निघंटुओं-की रचना हुई। तबसे लेकर १००० ई० तक, इन दो हजार वर्षोंमें भारतमें कई प्रकारके सैकड़ों कोश लिखे गये, जिनमेंसे-अमरकोश, मेदिनीकोश आदि बहुतसे तो अब भी उपलब्ध हैं। यूरोपमें १००० ई० के पूर्व ठीक अर्थोंमें कोश नहीं मिलते। अंग्रेजी कोशोंका इतिहास तो १६वीं सदीके अंतिम चरणसे ही प्रारंभ होता है, यद्यपि अब वे संसारमें संभवतः सबसे आगे हैं। **कोशोंके प्रमुख प्रकार**—कोश मूलतः तीन प्रकारके होते हैं। पुस्तककोश, व्यक्तिकोष तथा भाषा-कोश। **पुस्तक-कोश**--किसी एक पुस्तकके शब्दोंका हो सकता है। राम-चरित मानसपर बनाया गया एक प्राचीन कोश इस प्रकारका है। बाइबिल-कोश, कुरान-कोश इसी प्रकारके हैं। **व्यक्ति-कोश**--किसी एक व्यक्ति द्वारा अपने साहित्यमें प्रयुक्त शब्दोंका कोश 'व्यक्ति-कोश कहलाता है। शेक्सपियर, मिल्टन आदिके कोश इसी प्रकारके हैं। **भाषा-कोश**--इस प्रकारके कोश एक भाषा या बोली आदिके हो सकते हैं। एक भाषाके कोश (जिनमें अर्थ एक भाषासे उसी भाषामें दिये गये हों। जैसे—हिंदी-हिंदी या अंग्रेज़ी-अंग्रेज़ी। या जिनमें अर्थ एक भाषासे दूसरी भाषामें हों। जैसे--अंग्रेज़ी हिन्दी, रूसी-अंग्रेज़ी प्रमुखतः दो प्रकारके हो सकते हैं। वर्णनात्मक और ऐतिहासिक। **वर्णनात्मक कोश**—इसमें किसी भाषामें प्रयुक्त सारे शब्दों और उसके सारे अर्थोंको देते हैं। हिन्दीमें नागरी प्रचारिणी सभाका 'हिन्दी शब्द सागर' या 'वृहत् हिन्दी कोश' आदि इसी प्रकारके वर्णनात्मक कोश हैं। इस प्रसंगमें यह प्रश्न विचारणीय है कि यदि एक शब्द-के एकसे अधिक अर्थ हों तो उन्हें किस क्रममें रखा जाय। ऊपर उल्लिखित हिन्दी कोशोंमें अर्थ किसी भी क्रमसे न दिये जाकर मनमाने ढंगसे जैसे याद आते गये, आगे पीछे दे दिये गये हैं। वस्तुतः वर्णनात्मक कोशमें अर्थ प्रचलनके आधारपर क्रमबद्ध किये जाने चाहिए। जो अर्थ सबसे अधिक प्रचलित हो, उसे सबसे पहले और जो सबसे कम प्रचलित हो उसे सबसे बादमें। कभी-कभी अर्थके कम या अधिक प्रचलनके सम्बन्धमें विवाद भी खड़ा हो सकता है और वैसी स्थितिमें विवादग्रस्त अर्थोंमें किसी-को भी आगे या पीछे रखा जा सकता है। **ऐतिहासिक कोश**--किसी भाषाका ऐतिहासिक कोश उसके विकास आदिको समझनेके लिए बड़ा सहायक होता है। ऐतिहासिक कोशमें किसी भाषामें केवल प्रचलित शब्दों या उनके प्रचलित अर्थोंको ही न लेकर सारे शब्दों और उनके सारे अर्थोंको लेते हैं। वर्णनात्मक कोशमें हमने देखा कि अर्थ प्रचलनके आधारपर सजाया जाता है। यहाँ अर्थ अपने इतिहासके आधारपर सजाया जाता है। उदाहरणार्थ हम मान लें कि किसी भाषाका एक शब्द है 'अ'। उसके 'आ' 'इ' 'ई' 'उ' ऊ' ये पाँच अर्थ हैं। यहाँ देखना होगा कि सबसे पहले किस अर्थका प्रयोग हुआ और फिर किस-किसका मान लें कि उस भाषाका आरंभ १००० ई०से है; और 'आ' अर्थका प्रयोग १६०० ई० में, 'इ'का ११०० में, 'ई' का १००० ई० में, 'उ' का १७०० में और 'ऊ' का १२०० ई० में हुआ है। कहना न होगा कि यहाँ इन अर्थोंको कालक्रमसे सजाना होगा अर्थात् १००० ई० में प्रचलित अर्थ पहले दिया जायगा फिर क्रमसे ११००, १२००, १६०० और १७०० ई० के अर्थ दिये जायेंगे।

अर्थात्--

अ--ई, इ, ऊ, आ, उ

इस प्रकारका कोश बनानेके लिए यह आवश्यक है कि उस भाषाका साहित्य उपलब्ध हो। ऐसे कोशके निर्माणके पूर्व दो बातें आवश्यक हैं। (१) उस भाषामें प्राप्त सभी ग्रंथोंका पाठ पाठालोचनके आधारपर निश्चित कर लिया जाय। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि प्रक्षिप्तांशोंको निकाल फेंकनेकी आवश्यकता नहीं। अपितु उनके रचे जानेका काल-निर्धारण करके उन्हें भी उस काल या सदीकी रचना मानकर उनके समकालीन साहित्यके साथ रखा जाय। (२) सभी रचनाओंका काल निश्चित कर लिया जाय। इन दो बातोंके कर लेनेपर किस सदीमें कौन शब्द किस अर्थमें प्रयुक्त हुआ इसका निश्चय करना सरल हो जायगा, और उनके आधारपर पूरे साहित्यकी **अनुक्रमणी** (दे०) बनाकर सरलतासे ऐतिहासिक कोश बन जायगा। इस प्रसंगमें यह भी उल्लेख्य है कि ऐतिहासिक कोश हर दृष्टिसे बहुत पूर्ण नहीं बन सकता, क्योंकि तैयार होनेके बाद नयी खोजोंके आधारपर यदि कोई नयी रचना सामने आ गयी, पुरानी रचनाका नया पाठ आ गया, या किसी रचनाका नया काल कुछ और सिद्ध हो गया तो उनके कारण उसमें पर्याप्त परिवर्तन करना होगा। किसी भी आधुनिक भारतीय भाषाका इस प्रकारका ऐतिहासिक कोश अभीतक नहीं बना। संस्कृतका मोनियर विलियम्ज़का कोश इसी प्रकारका है, यद्यपि बहुत अपूर्ण है। संस्कृतका इसी प्रकारका एक आदर्श कोश पूनामें बन रहा है। अंग्रेज़ीकी आक्सफोर्ड डिक्शनरी इस प्रकारका अबतकका सर्वोत्तम प्रयास है। अन्य भी अनेक प्रकारके कोश हो सकते हैं, जिनमें प्रमुख ये हैं: **पारिभाषिक कोश**--भाषा-कोशके अंतर्गत ही पारिभाषिक कोश भी आते हैं। किसी भी भाषामें विभिन्न विषयों (इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, भाषाविज्ञान, दर्शन, मनोविज्ञान आदि) या उनकी शाखाओं (प्राचीन भूगोल, सांख्यकी, ध्वनि-विज्ञान) में प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दोंके कोश बन सकते हैं। इस प्रकारके कोश साहित्यिक धाराओंके भी बन सकते हैं। हिन्दीमें 'संत साहित्य कोश', बड़ा उपयोगी हो सकता है। **पर्याय कोश**--यह भी भाषा-कोशका एक रूप है, जिसमें मिलते-जुलते अर्थके शब्द एक साथ रखे जाते हैं। इनके साथ कभी-कभी विरोधी या विलोम शब्दोंका भी उल्लेख कर दिया जाता है। कवियों-लेखकोंके लिए इस प्रकारके कोश बड़े उपयोगी हैं। अंग्रेज़ीमें 'थेसारस' प्रायः इसी प्रकारके होते हैं। हिन्दीमें प्रस्तुत लेखकने 'बृहत् पर्यायवाची कोश' नामसे इस प्रकारका प्रयास किया है। **मुहावरा और लोकोक्ति कोश**:--इन दोनोंका प्रत्यक्ष संबंध शब्दसे नहीं है, और ये शब्द-कोश तो नहीं हैं, किंतु इनका भाषासे संबंध है, अतएव भाषा-कोशोंके प्रसंगमें इनका उल्लेख भी आवश्यक है। ये दोनों ही कोश वर्णनात्मक, ऐतिहासिक और तुलनात्मक तीनों प्रकारके बनाये जा सकते हैं। **बहुभाषा कोश**--ये दो या अधिक भाषाओंके कोश तुलनात्मक, वर्णनात्मक या ऐतिहासिक हो सकते हैं। अंग्रेज़ी शब्दोंके साथ, हिंदी या संस्कृत समानार्थी शब्द देनेवाले कोश भी इसीके अंतर्गत आते हैं। **कथाकोश, जीवनीकोश, विश्वकोश**, उद्धरण **कोश** आदि अन्य भी अनेक प्रकारके कोश हो सकते हैं।

कोश-निर्माणकी कुछ आवश्यक बातें--शब्द-संकलन--कोश निर्माणमें सबसे पहला काम कोशकारको इस दिशामें करना पड़ता है। कोश यदि जीवित भाषाका बनाना है तो शब्द लोगोंसे सुन कर इकट्ठे करने पड़ते हैं। यदि साहित्य या पुरानी भाषाका बनाना हो तो पुस्तकोंसे लेना पड़ता है। लोगोंसे सुनकर इकट्ठा करनेमें पूर्णकोश बनाना प्रायः असंभव-सा है, क्योंकि हर जीवित भाषामें शब्द बढ़ते रहते हैं। नये शब्द विभिन्न स्रोतोंसे आते रहते हैं। साहित्यके

आधारपर कोश बनानेके लिए संबद्ध सारी पुस्तकोंकी पूरी शब्दानुक्रमणी बना लेना सबसे अच्छा होता है। ऐसा कर लेनेपर कोई शब्द या अर्थ छूटने नहीं पाता। ऐतिहासिक कोशोंके लिए तो यह अनिवार्य है।

वर्तनी—शब्द-संकलनके बाद उन्हें कोशमें देनेके लिए उनकी वर्तनी (spelling) ठीक कर लेना आवश्यक है। इस दृष्टिसे सबसे अधिक आवश्यक चीज है एकरूपता। अनेकरूपता होनेपर होता यह है कि कभी-कभी शब्द कोशमें रहता है, किंतु नहीं मिलता। इस विषयके आवश्यक निर्णयोंका उल्लेख भूमिकामें अवश्य किया जाना चाहिये, ताकि देखनेवाले सहायता ले सकें।

शब्द-क्रम—कोशमें शब्द विशेष क्रमसे होते हैं। ताकि देखनेवाला उन्हें सरलतासे पा ले। संसारमें कोशोंमें अनेक प्रकारके शब्द-क्रम प्रचलित रहते हैं, जिनमेंसे कुछ प्रमुख ये हैं :—(१) **वर्णानुक्रम**—आजकी अधिकांश भाषाओंके अधिकांश कोशोंमें शब्द वर्णानुक्रमसे रखे जाते हैं। पहले शब्द केवल प्रथम वर्णके आधारपर रखे जाते थे। अर्थात् 'क' से शुरू होनेवाले सारे शब्द एक साथ। इसका आशय यह हुआ कि यदि किसी भी भाषामें 'क' से प्रारम्भ होनेवाले ५००० शब्द हैं तो वे एक जगह बिना किसी क्रमसे रखे जाते थे और खोजनेवालेको सारे शब्दोंको देखकर अपेक्षित शब्द खोजना पड़ता था। बादमें शब्दके दूसरे वर्णका भी विचार होने लगा और अब सारे वर्णोंका विचार करके क्रम दिया जाता है। (२) **अक्षर संख्या**—इसके आधारपर भी शब्दोंको रखा जाता है। भारतमें इस प्रकारके एकाक्षरी कोश मिलते हैं। चीनी तथा कुछ और भाषाओंमें भी यह पद्धति प्रचलित है। इसमें एक अक्षर (syllable) वाले शब्द पहले, फिर दो वाले, फिर तीन वाले और आगे भी इसी प्रकार रखे जाते हैं। (३) **सुर-प्रधान भाषाओं** tone languages में वर्णानुक्रम या अक्षर-संख्याके आधारपर शब्दोंके रखनेके अतिरिक्त उन्हें सुरोंके आधारपर भी रखते हैं, क्योंकि वहाँ एक ही शब्द कई सुरोंमें भी प्रयुक्त होता है, और इस प्रकार कई अर्थ देता है। (४) **विचारोंके आधारपर**—पर्याय कोशों या थेसारसमें शब्दोंको भावों या विचारोंके आधारपर रखा जाता है। जैसे-जीवोंके शब्द एक स्थानपर, ऐसे ही धर्म, अंग, खाद्य-पदार्थ, कला, विज्ञान आदिके अलग-अलग। प्रसिद्ध संस्कृत कोष 'अमरकोश'के कांड इसी आधारपर हैं। (५) **व्युत्पत्तिके आधारपर**—कभी-कभी शब्द व्युत्पत्तिके आधारपर भी रखे जाते हैं। अरबीमें इस प्रकारके कोश प्रायः मिलते हैं, जिनमें वर्णानुक्रमसे 'माद्दा' (धातु, root) देते हैं और हर 'माद्दे'के साथ उससे बननेवाले शब्द। धातुपर आधारित सभी भाषाओंके इस प्रकारके कोश बनाये जा सकते हैं।

व्याकरण—बहुतसे कोशोंमें प्रति शब्दके साथ व्याकरणकी दृष्टिसे भी टिप्पणी रहती है। इसका निर्णय भी विचार-पूर्वक होना चाहिये। कभी-कभी एक शब्द कई व्याकरणिक इकाइयोंके रूपमें प्रयुक्त होता है। मूलतः वह जो है, उसीका कोशमें उल्लेख होना चाहिये।

अर्थ—अर्थ वर्णनात्मक कोशमें प्रचलनके आधारपर और ऐतिहासिकमें इतिहासके आधारपर दिया जाता है। इसे पीछे समझाया जा चुका है। अर्थ दो प्रकारके होते हैं। एकमें केवल एक समानार्थी शब्द होते हैं (जैसे गज-हाथी) दूसरेमें परिभाषा देते हैं या समझाते हैं। (जैसे हाथी एक जानवर है जो . . .) दोनों प्रकारोंका उचित प्रयोग होना चाहिये। व्याख्या जहाँ अपेक्षित हो वहीं दी जानी चाहिये। **एकभाषीय कोश**—में व्याख्या अधिक अपेक्षित है किंतु **द्विभाषीय कोश**—में समानार्थी शब्द देना ही उचित है। जैसे—अंग्रेजी-हिंदी कोशमें (elephant) की हिन्दीमें व्याख्या निरर्थक है। वहाँ केवल 'हाथी' आदि दे देना पर्याप्त है। हाँ, यदि चीज हिंदी भाषीके लिए नवीन हो तब व्याख्या अवश्य अपेक्षित होगी।

उद्धरण—अर्थके स्पष्टीकरण या उदाहरणके

लिए अर्थके साथ उसके प्रयोग भी दिये जाते हैं। ऐसे उद्धरण प्रामाणिक होने चाहिये। यदि कुई दिये जायँ तो उन्हें कालक्रमानुसार रखना चाहिये।

चित्र——कभी-कभी अर्थ, पर्याय या व्याख्यासे ही स्पष्ट नहीं होते। ऐसी स्थितिमें वस्तुका चित्र आवश्यक हो जाता है। प्रमुखतः ऐसी चीज़ोंका जिनसे कोशका प्रयोक्ता अपरिचित हो। उदाहरणार्थ हाथीका चित्र भारतीय कोशमें अपेक्षित नहीं होगा, किन्तु ऐसे देशके कोशमें, जहाँ हाथी नहीं होता वह बहुत आवश्यक है।

उच्चारण——कोशमें उच्चारण भी आवश्यक है, क्योंकि मात्र सामान्य वर्तनी (spelling)से वह स्पष्ट नहीं होता। अंग्रेज़ी, फ्रेंच आदि कोशोंमें इसी कारण उच्चारण दिया रहता है। इन भाषाओंके तो केवल 'उच्चारण कोश' भी प्रकाशित हो चुके हैं, जिनका काम केवल उच्चारण बतलाना है। अंग्रेज़ीके उच्चारण कोशोंमें डैनियल जोन्ज़का कोश सबसे प्रामाणिक है। बी० बी० सी० से समाचार आदिमें उन्हींका दिया उच्चारण सुनायी पड़ता है जिसे पारिभाषिक शब्दावलीमें 'रिसीव्ड प्रननसिएशन' (r. p.) कहते हैं। हिन्दी कोशोंमें उच्चारण नहीं रहता।

नागरी-लिपिके समर्थकोंका कहना है कि जैसा हमारा उच्चारण है, वैसा ही नागरीमें लिखते हैं, अतः अलग उच्चारणकी हिंदीमें आवश्यकता नहीं। किन्तु ऐसा मानना अवैज्ञानिक है। हिन्दीमें सभी शब्दोंका उच्चारण वही नहीं है जो लिखा जाता है। उदाहरणार्थ 'ऋषि'का उच्चारण 'रिशि', 'द्विवेदी'-का 'दुवेदी', 'साहित्यिक' का 'साहित्तिक', 'उपन्यास' का 'उपन्न्यास' 'राम' का 'राम्' तथा 'लगभग' का 'लग्भग्' है। इसी प्रकारके हजारों शब्द हैं जिनका उच्चारण हिन्दीमें वर्तनीके अनुरूप नहीं है। ऐसे सारे शब्दोंका उच्चारण कोशोंमें दिया जाना चाहिये। जिनका विदेशी छात्रोंको पढ़ानेका अनुभव है, वे जानते हैं कि कोशोंमें ऐसा न होनेसे कितनी कठिनाई होती है। इसी प्रकार बलाघात (stress)के संबंधमें भी हिन्दी शब्दोंमें संकेत अपेक्षित हैं। उदाहरणके लिए 'मानवता' शब्द लें। यदि बलाघात 'मा' पर होगा तो एक अर्थ होगा किंतु यदि 'न' पर होगा तो दूसरा होगा।

व्युत्पत्ति——यह भी कोशका एक महत्त्वपूर्ण अंग है। अच्छे कोशमें इसका होना आवश्यक है। व्युत्पत्तिका कभी तो सीधे संकेत कर देते हैं, कभी-कभी तुलनात्मक दृष्टिसे संबद्ध या असंबद्ध सभी भाषाओंके प्राप्त रूपोंको देते हैं। (दे०) **व्युत्पत्ति शास्त्र**।

शब्द-निर्णय——उपर्युक्त बातोंके अतिरिक्त शब्द-निर्णयका विचार भी कोशके लिए बहुत आवश्यक है। इससे संबद्ध कई प्रकारके प्रश्न आते हैं। पहला प्रश्न यही उठ सकता है कि वैय्याकरणिक दृष्टिसे संबद्ध शब्दोंको कैसे दें। सबको अलग-अलग रखें या एकको मूल मानकर, उसीके साथ संबद्ध शब्दोंको रखें। उदाहरणार्थ चलना, चलता, चालू, चाल, चालबाज़, चालबाज़ी, चलन-बदचलन आदि मूलतः एक ही शब्दसे हैं। इनको कैसे रखें? इस संबंधमें कोशकारको शब्दोंके व्यक्तित्वका निर्णय करना पड़ता है, और उसी आधारपर उसे कोशमें स्थान अपेक्षित है। उपर्युक्त शब्दोंमें 'चलना' तो अलग रहेगा। 'चलता'-को उसके पेटमें भी रख सकते हैं यों अलग रखना भी ठीक होगा। इसी प्रकार 'चालू' भी अलग रहेगा। 'चालबाज़ और चालबाज़ी 'चाल' के साथ रहेंगे किन्तु 'बदचलन' चलनके साथ न रहकर 'बद' के साथ जायगा। बड़े कोशोंमें हर शब्दको अलग भी दिया जा सकता है किंतु वैसी स्थितिमें संबद्ध-संदर्भ (cross reference) देना आवश्यक होगा, ताकि यह जाना जा सके कि वह शब्द उस भाषामें कितने रूपोंमें या संदर्भोंमें आता है। समस्त पदोंको प्रथम शब्दके साथ ही प्रायः दिया जाता है जैसे 'आत्महत्या'को 'आत्म' के साथ। हाँ बड़े कोशोंमें जैसा कि कहा जा चुका

है 'हत्या' के साथ उसके अन्यत्र दिये जानेका संकेत कर दिया जा सकता है। व्युत्पत्तिकी दृष्टिसे भिन्न शब्दोंको एक साथ दें या अलग-अलग, यह प्रश्न भी इसीसे संबद्ध है। उदाहरणार्थ हिंदीमें 'आम' नामके तीन शब्द हैं। एक तो अरबी अर्थात् विदेशी है जिसका अर्थ सामान्य, साधारण या मामूली आदि है। दूसरा तद्भव और संस्कृत आम्र (पेड़ और फल)से विकसित है, और तीसरा शुद्ध संस्कृत तत्सम है जिसका अर्थ कच्चा या असिद्ध होता है, जिससे हिन्दीका एक अन्य शब्द 'आँव' निकला है। वस्तुतः इन तीनोंको आम१, आम२, आम३ रूपमें अलग-अलग देना चाहिये। क्रममें किसे पहले दें और किसे बादमें, यह भी वैज्ञानिक दृष्टिसे कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। वर्णनात्मक कोशमें तो जो शब्द सबसे अधिक-प्रचलित हो, उसे सबसे पहले और फिर इसी क्रमसे औरोंको रखना चाहिये। ऐतिहासिक कोशमें हिन्दीमें जिसका प्रयोग सबसे पहले हुआ हो, उसे सबसे पहले और अन्योंको इसी प्रकार क्रमसे। यदि इस प्रकारके दो शब्दोंका प्रयोग एक ही कालमें हुआ हो तो प्रचलनके आधारपर एकको दूसरेसे पहले रखा जा सकता है। यदि दोनों ही दृष्टिसे समानता हो—जो प्रायः बहुत कम संभव है—तो किसीको भी पहले रख सकते हैं।

कोशिर (koshir)—**कश्मीरी** (दे०)का एक अन्य नाम।

कोश्ठी—(१) **बुंदेली** (दे०) की, एक उपबोली जो 'मराठी' और 'बुंदेली' की सीमाके पास, छिंदवाड़ा, चाँदा तथा भंडारा आदिमें प्रयुक्त होती है। इसके बोलनेवाले प्रमुखतः कोष्टी (कपड़ा बुननेवाली एक जाति) लोग हैं, अतः इसे 'कोष्टी' नाम दिया गया है। 'बुंदेली'का यह रूप 'मराठी' से प्रभावित्र है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १४,६९२ थी। (२) **मराठी** (दे०) की, बरार बोलीका, बरारके जुलाहोंमें प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २,९०० थी।

कोष्टक—एक प्रकारका चिह्न। (दे०) **विराम**।

कोसली—**अवधी** (दे०)का एक अन्य नाम।

कोसी—(दे०) **कसाइट**।

कोसेइअन (cossaean)—(दे०) **कसाइट**।

कोस्त (costa)—१८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार **कोंकणी** (दे०)का एक रूप।

कोहाटी (kohati)—उत्तरी-पूर्वी **लहंदा** (दे०)को कोहाटमें दिया गया एक नाम।

कोहिस्तानी (kohistani)—कोहिस्तान तथा स्वात आदिमें प्रयुक्त एक **दरद** (दे०) भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ६८६२ थी।

कोह्ळी (kohli)—**मराठी** (दे०)का, चाँदाकी जाति विशेषमें प्रयुक्त एक विकृत रूप।

कौंगतू (kaungtu)—बर्माकि भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, उत्तरी-अराकानमें २०० व्यक्तियों द्वारा बोली जानेवाली **चीनी परिवार** (दे०) की एक 'कुकी-चिन' भाषा।

कौंगत्सो (kaungtso)—बर्माकि भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार उत्तरी अराकानमें ६५० लोगों द्वारा व्यवहृत एक **चीनी परिवार** (दे०) की कुकी-चिन भाषा।

कौंतल अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

कौकडन (kaukadan)—बर्माकि भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार अक्याबमें ५३७ व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत **चीनी परिवार** (दे०) की एक कुकी-चिन भाषा।

कौगुरू (kauguru)—बांटू परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा।

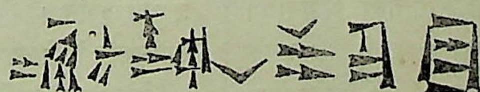
कौरवी—**खड़ी बोली** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

कौवा—**अलिजिह्व** (दे०)का एक नाम।

क्यव (kyaw)—**क्यौ** (दे०)का एक अन्य नाम।

क्यूँठली--**पश्चिमी पहाड़ी** (दे०)की एक बोली जो शिमला पहाड़ियोंपर क्योंठलके आसपास बोली जाती है। इसे **क्यौंठली** या **क्योंठली** भी कहते हैं। इसके आसपास इससे मिलती-जुलती कई बोलियाँ बोली जाती हैं, जिन सबको मिलाकर **क्यूँठली** वर्ग कहा जा सकता है। इस वर्गकी प्रधान बोली **क्यूँठली**-को बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग ४३,५७७ थी तथा पूरे वर्गके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,८८,७६३ थी। इस वर्गकी प्रमुख उप-बोलियाँ हंडरी (दे०), **शिमल सिराजी** (दे०) बराड़ी (दे०) **शोरा बोली** (दे०), **कीरनी** (दे०) तथा **कोची** हैं।

क्यूनीफ़ार्म लिपि (cuneiform writing)--इसके अन्य नाम **तिकोनी लिपि** या **फन्नी लिपि** भी हैं। क्यूनीफ़ार्म विश्वकी प्राचीनतम लिपि है। इसकी उत्पत्ति कब और कहाँ हुई, इस संबंधमें निश्चित रूपसे कुछ कहनेके लिए अभीतक कोई भी आधार-सामग्री प्राप्त नहीं है। यों इसका प्राचीनतम प्रयोग ४,००० ई० पू०के आस-पास मिलता है, साथ ही विद्वानोंका अनुमान है कि सुमेरी लोग इसके उत्पत्तिकर्त्ता हैं। इसके तिकोने स्वरूपके कारण आधुनिक कालमें १७०० ई० के आस-पास इसे 'क्यूनीफ़ार्म' (cuneus = तिकोना, form = रूप) नाम दिया गया। इस नामका प्रयोग सर्वप्रथम थामस हाइड या कुछ लोगोंके अनुसार ई०कैम्प्फरने किया। ४,००० ई० पू० से १ ई० पू० तक इसका प्रयोग मिलता है। इसके अध्ययनकर्त्ताओंका कहना है कि मूलतः यह लिपि चीनी या सिंधु घाटीकी मूलि लिपिकी भाँति चित्रात्मक थी। बेबिलोनिया-में गीली मिट्टीकी टिकियों या ईंटोंपर लिखनेके कारण धीरे-धीरे यह तिकोनी हो गयी है। यह कारण ठीक ही है। गीली मिट्टीपर गोल, धनुषाकार या और प्रकारकी रेखा खींचनेकी अपेक्षा सीधी रेखा बनाना सरल है। इसके अतिरिक्त रेखाका गीली मिट्टीपर तिकोनी हो जाना भी स्वाभाविक है। जल्दीमें रेखा जहाँसे बननी आरंभ होगी वहाँ गहरी और चौड़ी होगी और जहाँ समाप्त होगी लिखनेकी कलमके उठनेके कारण कम गहरी और कोणाकार। इस प्रकार उसका स्वरूप त्रिभुजाकार रेखा-सा हो जायगा। इस लिपिमें इसी प्रकार-की छोटी रेखाएँ पड़ी, खड़ी और विभिन्न कोणोंपर आड़ी मिलती हैं। आरंभमें इसमें बहुत अधिक चिह्न थे, पर बादमें सुमेरी लोगों-ने ५७० के लगभग कर दिया और उसमें भी ३०० विशेष प्रयोगमें आते थे। चित्रात्मकता-से बढ़कर यह लिपि धीरे-धीरे भाव-मूलक-लिपि हुई। (सूर्यका चित्र = दिन या पैरका चित्र = चलना आदि) तथा और बादमें अ-सीरिया और फारस आदिमें यह अर्द्ध-अक्षरात्मक हो गयी। पहले यह ऊपरसे नीचेको लिखी जाती थी पर बादमें दायेंसे बायें और फिर बायेंसे दायें भी लिखी जाने लगी थी। सुमेरी, बेबीलोनी, असीरी तथा ईरानी लोगों-के अतिरिक्त हिट्टाइट, मितानी, एलामाइट तथा कस्साइट आदिने भी इस लिपिका प्रयोग किया है।



क्यों (kyo)--**ल्होता** (दे०) का एक नाम।

क्योंठली--(दे०)। **क्यूँठली**।

क्योंतसू (kyontsu)--ल्होता (दे०) का एक नाम।

क्यौंठली--(दे०) 'क्यूँठली'।

क्यौंठाली--(दे०) 'क्यूँठली'।

क्यौ (kyau)--**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, 'असमी-बर्मी' शाखाके, 'कुकी-चिन' वर्गकी, उत्तरी अराकानमें प्रयुक्त, एक **प्राचीन कुकी** भाषा।

१९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या केवल ३५१ थी।

क्रओ (krao)––**सकमेकन** (दे०)का एक दूसरा नाम।

क्रम––(दे०) **पदक्रम** तथा **वाक्यमें वाक्यकी आवश्यकताएँ** उपशीर्षक।

क्रमबोधक विशेषण––(दे०) **विशेषण**।

क्रमवाचक क्रियाविशेषण––(दे०) **क्रिया विशेषण**।

क्रमवाचक प्रत्यय––(दे०) **प्रत्यय**।

क्रमवाचक विशेषण––(दे०) **विशेषण**।

क्रमसंख्या वाचक विशेषण––(दे०) **विशेषण**।

क्रम संधि––(दे०) **संधि**।

क्रमांक बोधक विशेषण––(दे०) **विशेषण**।

क्रमात्मक संख्यावाचक विशेषण––(दे०) **विशेषण**।

क्रा (kra)––**सूडानवर्ग** (दे०) की एक आइवरी कोस्ट तथा लाइबेरियाके पास प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा।

क्रिया (verb)––'क्रिया' शब्दका संबंध 'कृ' धातुसे है, और इसका अर्थ है 'कुछ किया जाना' या 'कर्म'। व्याकरण या भाषाशास्त्रमें 'क्रिया वह है जिससे किसीका कुछ करना या होना ज्ञात हो।' जैसे-'राम गया' में 'गया' या 'मोहनने काम किया' में 'किया'। क्रियाका मूल या आधार धातु (root) है। (दे०) 'धातु'। सामान्यतः जिन्हें **सकर्मक क्रिया** (transitive verb), **अकर्मक क्रिया** (intransitive verb) **उभयविधि क्रिया** तथा **प्रेरणार्थक क्रिया** कहते हैं, वे भेद क्रियाके न होकर धातुके हैं। (दे०) 'धातु'। संसारकी कुछ भाषाओंमें वाक्य कभी तो एक क्रियासे बनते हैं, जैसे 'राम गया' में 'गया'। ऐसी क्रियाएँ **मूलक्रिया** कहलाती हैं। इसके विरुद्ध कभी-कभी वाक्यमें दो क्रियाओंका या धातुरूपोंका साथ-साथ प्रयोग होता है। जैसे 'राम गया है' में 'गया है'। इस प्रकार जब दो क्रियाएँ एक साथ आती हैं तो जिस क्रियाका अर्थसे सीधा संबंध होता है, उसे तो **मूलक्रिया** कहते हैं, जैसे यहाँ 'गया' मूल क्रिया है। जो क्रिया अर्थसे सीधा संबंध नहीं रखती वह केवल व्याकरणिक पूर्तिके लिए प्रयुक्त होती है और उसे **सहकारी** या **सहायक क्रिया** (auxiliary verb) कहते हैं। अर्थात् यह मूल क्रियाकी मात्र सहायताके लिए होती है। यहाँ 'है' सहायक क्रिया है। अंग्रेज़ी be तथा हिन्दी 'हो' धातुके रूपोंका प्रमुखतः सहायक क्रियाके रूपमें प्रयोग होता है। जिस क्रियामें इस प्रकार मूल और सहकारी, दोनों क्रियाओंका प्रयोग होता है, उसे **संयुक्त क्रिया** (compound verb) कहते हैं। कभी-कभी वाक्यमें पूरक या कर्म और क्रिया एक ही धातुसे बने होते हैं। जैसे 'वह **बोली बोल** रहा है', 'मैंने उसे बड़ी **मार मारी**' या 'घोड़ा अच्छी **चाल चलता** है।' ऐसे वाक्योंकी ये क्रियाएँ '**सजातीय क्रिया**' तथा कर्म या पूरक **सजातीय कर्म** या **सजातीय पूरक** कहे जाते हैं। क्रियाके रूप कई बातोंपर आधारित होते हैं। उनके लिए देखिये 'काल', 'वाच्य' 'अर्थ', 'कृदंत'।

क्रियातिपत्ति––**लुङ् लकार** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

क्रियात्मक विशेषण (gerundive)––ऐसा विशेषण, जिसमें कुछ क्रियाका भाव हो।

क्रिया प्रधान भाषा (verb language)––ऐसी भाषा जिसमें प्रायः वाक्य क्रियायुक्त हों। हिन्दी इसी प्रकारकी भाषा है। संस्कृत, बंगालीमें हिन्दीकी तुलनामें क्रियावाले वाक्य कम होते हैं।

क्रियाबोधक विशेषण––(दे०) **विशेषण**।

क्रियामूलक पूर्वसर्ग (verbal preposition) पूर्व सर्ग (preposition) के अर्थमें प्रयुक्त कृदंत।

क्रियामूलक विशेषण (verbal adjective)––ऐसे कृदंतोंके लिए प्रयुक्त एक नाम जो विशेषणका भी कार्य करते हैं।

क्रियामूलक संबंधसूचक अव्यय––(दे०) **संबंध सूचक अव्यय**।

क्रियार्थक भेद––(दे०) **अर्थ**।

क्रियार्थक संज्ञा––(दे०) **कृदंत**।

क्रियावाक्य (verb sentence)—— ऐसा वाक्य जो क्रियायुक्त हो या जिसमें क्रियाका प्रमुख स्थान हो।

क्रियाविशेषण (adverb)——जिस प्रकार विशेषण संज्ञा शब्दोंकी विशेषता बतलाते हैं, क्रियाविशेषण क्रियाकी विशेषता बतलाते हैं। जैसे 'मैं धीरे-धीरे आ रहा था' में 'धीरे-धीरे'। क्रियाके अतिरिक्त, क्रियाविशेषण, किसी अन्य क्रियाविशेषण (वह बहुत तेज दौड़ता है) या विशेषण (बड़ा भारी काम)की भी विशेषता बतलाते हैं। इस प्रकार क्रिया-विशेषण वह **अव्यय** (दे०) है जो क्रिया, विशेषण, क्रियाविशेषण, वाक्य अथवा वाक्यांशकी विशेषताका बोध कराता है। क्रियाविशेषणके प्रमुख भेद निम्नांकित हैं : (१) **कालवाचक क्रियाविशेषण** (adverb of time)——जो समयका बोध करावे। जैसे, आज। इसे **समयबोधक क्रियाविशेषण** तथा अन्य भी बहुतसे नामोंसे अभिहित किया जाता है। (२) **स्थानवाचक क्रियाविशेषण** (adverb of place)—जो स्थानका बोध करावे। जैसे, यहाँ। इसे स्थानसूचक आदि अन्य नामोंसे भी पुकारा जाता है। (३) **परिमाणवाचक क्रियाविशेषण**(adverb of quantity) इससे परिमाणका बोध होता है। जैसे कम (राम कम बोलता है) इसे **मात्रासूचक क्रियाविशेषण** तथा अन्य भी कई नामोंसे पुकारा जाता है। (४) **रीतिवाचक क्रियाविशेषण**(adverb of manner)—जिससे रीति या ढंगका बोध हो। जल्दी, धीरे-धीरे। (५) **क्रमवाचक क्रियाविशेषण** (adverb of order)——जिससे क्रमका बोध हो। जैसे—पहले, बाद में। (६) **हेतुवाचक क्रियाविशेषण** या **कारणवाचक क्रियाविशेषण** (adverb of reason)——जिससे कारणका बोध हो। जैसे——इसलिए, क्यों। (७) **निश्चयवाचक क्रियाविशेषण**(adverb of certainty) जिससे निश्चयका बोध हो। जैसे——अवश्य, बेशक। (८) **अनिश्चयवाचक क्रियाविशेषण** या **संशयवाचक क्रियाविशेषण**(adverb of uncertainty)—जिससे अनिश्चयका बोध हो। जैसे-शायद, संभवतः। (९) **निषेधवाचक**—जिससे मना या नहींका बोध हो। जैसे—मत, नहीं। (१०) **आवृत्तिवाचक**——जिससे बार या आवृत्तिका बोध हो। जैसे—एक बार, अनेक बार। इनमें कई भेदोंके उपभेद भी हैं। जैसे स्थानवाचक के (क) **स्थितिवाचक क्रियाविशेषण** (adverb of position) जैसे-यहाँ, सामने, और (ख) **दिशावाचक क्रियाविशेषण** (adverb of direction) जैसे-इधर, उधर; कालवाचक के (क) **समयवाचक क्रियाविशेषण** जैसे-आज, कल। (ख) **अवधिवाचक क्रियाविशेषण** (adverb of period) जैसे—दिनभर। (ग) **पौनः पुन्यवाचक क्रियाविशेषण**—जैसे—रोज़-रोज़, घड़ी-घड़ी; और परिमाणवाचकके (क) **अधिकतावाचक क्रियाविशेषण** जैसे—बहुत, अतिशय, खूब। इसे **आधिक्यवाचक** क्रियाविशेषण भी कहते हैं। (ख) **न्यूनतावाचक क्रियाविशेषण** जैसे—थोड़ा, ज़रा। (ग) **पर्याप्तिवाचक क्रियाविशेषण** जैसे-काफ़ी, यथेष्ट। (घ) **तुलनावाचक क्रियाविशेषण** जैसे—बढ़कर, उतना, जितना। (ङ) **श्रेणीवाचक क्रियाविशेषण** जैसे—यथाक्रम, बारीबारीसे आदि।

क्रियाविशेषणके उपर्युक्त वर्गीकरण अर्थके आधारपर थे। प्रयोगके आधारपर क्रियाविशेषणके निम्नांकित तीन भेद हो सकते हैं : (१) **सामान्य क्रियाविशेषण**——जो वाक्यमें स्वतंत्रतः आते हैं। जैसे-'शीघ्र चलो' में 'शीघ्र'। (२) **संयोजक क्रियाविशेषण** या **संबंधवाचकक्रियाविशेषण**-जो किसी उपवाक्यके साथ होते हैं, या जो दो या अधिक उपवाक्योंको जोड़ते हैं। जैसे 'जब वह नहीं था, तुम क्या करते थे ?' में 'जब'। (३) **अनुबद्ध क्रियाविशेषण**——जिनका प्रयोग अवधारणके लिए किसी भी शब्दके साथ होता है। जैसे, 'मैंने तो उसे खाया तक नहीं' में 'तक'। प्रयोगके आधारपर ही क्रियाविशेषणके दो अन्य भेद भी किये जा सकते हैं : (१) **शुद्धक्रियाविशेषण**——वे शब्द जो मूलतः क्रियाविशेषण

ही हों। जैसे–आज, नीचे। (२) **स्थानीय क्रियाविशेषण**––वे शब्द जो मूलतः क्रियाविशेषण न हों, केवल प्रयोग विशेषमें उस विशिष्ट स्थानपर क्रियाविशेषणके रूपमें प्रयुक्त हों। बहुतसे संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण इस रूपमें प्रयुक्त होते हैं। जैसे : 'तुम मेरी मदद **पत्थर** करोगे' (संज्ञा), 'मुझे **क्या** देखोगे' (सर्वनाम), तथा 'दर्जी **सुंदर** सीता है' (विशेषण)। इन्हें क्रमसे **सांज्ञिक क्रियाविशेषण** अथवा **नामिक क्रियाविशेषण**, **सार्वनामिक क्रियाविशेषण** तथा **वैशेषणिक क्रियाविशेषण** कहा जा सकता है। इस रूप में विशेषण ही सबसे अधिक प्रयुक्त होते हैं।

व्युत्पत्ति या रूपकी दृष्टिसे क्रियाविशेषण दो प्रकारके हो सकते हैं : (१) **मूल क्रियाविशेषण** (simple adverb) जो दूसरे शब्दोंसे नहीं बनते, अपितु स्वयंसिद्ध होते हैं। जैसे–आज, दूर आदि। (२) **साधित क्रियाविशेषण** या **यौगिक क्रियाविशेषण** (compound adverb) जो दूसरे शब्दोंमें प्रत्यय या अन्य शब्द जोड़कर या परिवर्तन करके बनाये जाते हैं। जैसे–ऐसे ('इस' से) अभी (अब+ही), रात-दिन, घर-घर, निर्भय, यथा साध्य आदि। यौगिक क्रियाविशेषणके भी **द्विरुक्तिवाचक क्रियाविशेषण** (घर-घर, बैठे-बैठे), **अनुकरणवाचक क्रियाविशेषण** (तड़ातड़, सटासट) आदि कई उपभेद हो सकते हैं।

'क्रियाविशेषण' शब्द नया नहीं है। महाभाष्य, काशिका तथा परिभाषा भास्कर आदि प्राचीन ग्रंथोंमें इसका प्रयोग मिलता है। (दे०) **अव्यय**।

क्रियाविशेषण-उपवाक्य––(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक।

क्रियाविशेषणात्मक उपवाक्य––(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक।

क्रियाविशेषणात्मक वाक्यांश (adverbial expression)–दो या अधिक शब्दोंसे बनी अधिक इकाई, जो क्रिया विशेषणका कार्य करे। जैसे, 'वह बहुत तेजीसे दौड़ रहा है', में 'बहुत तेज़ीसे'।

क्रियाविशेषण संबंधसूचक अव्यय––(दे०) **संबंध-सूचक अव्यय**।

क्री (cree)––उत्तरी-अमेरिकाके आदिवासियोंकी एक भाषा।

क्रीक (creek)––मुँस्खोगी (दे०) वर्गका एक अन्य नाम।

क्रीटकी लिपियाँ––क्रीटमें चित्रलिपि (दे०) तथा **रेखात्मक लिपि** (दे०) दो प्रकारकी लिपियाँ मिलती हैं। इन लिपियोंकी उत्पत्ति संभवतः वहीं हुई थी, किंतु इनपर मिस्रकी **हीरोग्लाइफ़िक** लिपिका प्रभाव पड़ा है। कुछ लोगोंके अनुसार इन लिपियोंकी उत्पत्तिमें भी 'हीरोग्लाइफ़िक' लिपिका हाथ रहा है। चित्रलिपिमें लगभग १३५ चित्र मिलते हैं। यह बादमें कुछ अंशोंमें **भावमूलक लिपि** (दे०) तथा कुछ अंशोंमें **ध्वन्यात्मक लिपि** (दे०) हो गयी थी। इसको कभी तो बायेंसे दायें, और कभी-कभी क्रमशः दोनों ओरसे लिखा जाता था। इसका प्राचीनतम प्रयोग ३००० ई० पू० में मिलता है। १७०० ई० पू० के लगभग इसकी समाप्ति हो गयी। रेखात्मक लिपिका प्रयोग १७०० ई० पू० के बाद प्रारंभ हुआ। इसमें लगभग ९० चिह्न थे। इसे बायेंसे दायें लिखते थे। १२०० ई० पू० से कुछ पूर्व ही यह भी समाप्त हो गयी।

क्रीटन (cretan)––(१) क्रीटमें प्राचीनकालमें प्रयुक्त होनेवाली एक विलुप्त भाषा। इसके बारेमें कुछ भी ज्ञात नहीं है। इसके कुछ अभिलेख मिले हैं, किंतु वे पढ़े नहीं जा सकते हैं। इसे एशियानिक वर्गमें रखा गया है। (२) ग्रीककी एक **डोरिक** (दे०) बोली।

क्री-मोन्टग्नैस (cree–montagnais) **केन्द्रीय अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

क्रीलिपि (cree)––क्री भाषा (अमेरिका) के लिए प्रयुक्त एक अक्षरात्मक लिपि। इसमें मूलतः कुल १२ अक्षर हैं।

क्रेओले (creole)––क्रेओले नामक लोगों द्वारा प्रयुक्त फ्रांसीसी, डच या पुर्तगाली

भाषा। इनको अलग-अलग **फ्रांसीसी क्रेओले** (मारिशस तथा हैटीमें प्रयुक्त) **डच क्रेओले** (वेस्ट इन्डीज़में प्रयुक्त) तथा **डच पुर्तगाली** (केपवर्द द्वीपोंमें) भी कहते हैं।

क्रोटिअन (croatian) **सर्वो-क्रोटिअन** (दे०)।

क्रोमो—**जावानीज़** (दे०) का एक रूप।

क्रोमोग्राफ़ (chromograph) एक प्रकारका विकसित **कीमोग्राफ़** (दे०)।

क्रोव (crow)—**हिडट्सवर्ग** (दे०) की एक उत्तरी-अमेरिकी भाषा।

क्र्यादिगण—संस्कृत धातुओंका एक **गण** (दे०)।

क्लंग-क्लंग (klang-klang) **त्लंत्लंग** (दे०) का एक अन्य नाम।

क्लकमस (klakamas)—**चिनुक** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी-अमेरिकी भाषा।

क्लमाथ (klamath)—उत्तरी-अमेरिकी वर्ग (दे०) का एक भाषा-परिवार। इसे **लुतुअमिअन** भी कहते हैं। इसकी प्रमुख भाषाका नाम भी यही है।

क्लट्सोप (klatsop)—**चिनुक** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है।

क्लासिकल संस्कृत—**संस्कृत** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

क्लिक (click)—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**-में **कुछ असामान्य व्यंजन और उनके भेद**-उपशीर्षक।

क्लीकिटट (klikitat)—**शहप्टिन** (दे०) परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

क्लीब लिंग—**नपुंसक लिंग** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक पारिभाषिक शब्द।

क्लूंलोंग (klunlong)—**तौंगथू** (दे०) की एक बोली।

क्लैशुन (klaishun)—वर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **लई** (दे०) भाषाकी, चिन पहाड़ियोंमें प्रयुक्त एक बोली।

क्लोंगशइ (klongshai)—**लखेर** (दे०) के लिए एक अराकानी नाम।

क्वंगली (kwangli)—**लई** (दे०) की, वर्माकी चिन पहाड़ियोंमें प्रयुक्त एक बोली। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३६०४ थी।

क्वंन्हइ (kwanhai)—वर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **पलौंग** (दे०) का, उत्तरी शान-प्रांतमें, ६०२९ व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत, एक रूप।

क्वपव (kwapaw)—**डेगिहा** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी-अमेरिकी भाषा।

क्वरा (quara)—एक **कुशिटिक** (दे०) बोली।

क्वल्हिओक्वा (kwalhiokwa)—**पैसिफ़िक** (दे०) उपवर्गकी एक विलुप्त उत्तरी अमेरिकी भाषा।

क्वह्‌रिंग क्लंग (kwahring klang)—वर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **लई** (दे०) की, चिन पहाड़ियोंमें प्रयुक्त एक बोली।

क्वार्शी (kvarshi)—काकेशसमें प्रयुक्त **काकेशस परिवार** (दे०) की एक भाषा।

क्विन-पंग (kwin-pang)—**तंगसिर** (दे०) का एक अन्य नाम।

क्वी (kwi)—**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-वर्मी भाषाओंके लोलो-मोसो वर्गकी दक्षिणी शान प्रांतमें प्रयुक्त एक भाषा। वर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २५०० थी।

क्वीलेउट (kwileut)—**चिमाकुम वर्ग** (दे०) की एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

क्वेचुआ—एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा-परिवार। इसकी भाषाएँ बोलनेवालोंकी संख्या ४०,००,००० के लगभग है।

क्वे म्यी (kwe myi)—**खमी** (दे०) का एक अन्य नाम।

क्वेल्शिन (kwelshin)—वर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, चिन पहाड़ियोंमें ४००० व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत एक **लइ** (दे०) बोली। १९२१ की भारत जनगणनामें इसे हक नाम दिया गया है तथा इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २४५८ कही गयी है।

क्वेशिन (kweshin)—**शुन्क्ल** (दे०) का एक दूसरा नाम।

क्वोईरेंग (kwoireng)—**चीनी परिवार**

(दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी, बर्मी शाखाके, नागा वर्गकी, मणिपुर (असम) में प्रयुक्त, एक 'नागा-कुकी' भाषा। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या मोटे रूपसे, लगभग ५००० थी।

क्षतिपूरकदीर्घता—मात्राकी ऐसी दीर्घता जो क्षतिपूर्तिके लिए विकसित हुई हो। (दे०) **क्षतिपूरक दीर्घकरण**।

क्षतिपूरक दीर्घीकरण (compensetory lengthening)—शब्दोंमें स्वर कभी तो **ह्रस्व** (दे०) से **दीर्घ** (दे०) और कभी दीर्घसे ह्रस्व हो जाते हैं। (दे०) '**मात्रा-भेदीकरण**'। संस्कृतके कर्म, धर्म, घर्म आदि शब्द प्राकृतोंमें कम्म, धम्म, घम्म हो गये थे। हिन्दीमें आनेपर कम्मका काम, धम्म-का धाम तथा घम्मका घाम हो गया। ऐतिहासिक ध्वनिविज्ञानपर काम करने वालोंके सामने ये उदाहरण एक प्रश्न रखते हैं कि इन उदाहरणोंमें अ (कम्म) का आ (काम) कैसे हो गया। इसका उत्तर इस प्रकार दिया गया है कि कम्मसे काम बननेमें 'म्' का लोप हुआ, अतः इस शब्दकी मात्रा या इसके उच्चारणका काल थोड़ा कम हो गया। उस कमी या क्षतिकी पूर्तिके लिए पूर्व-वर्ती 'अ' का 'आ' हो गया। इस प्रकार ऐसे उदाहरणोंमें 'अ' का 'आ' होना क्षतिपूरक दीर्घीकरण या **क्षतिपूरक दीर्घीभवन** है। घर्म-घम्म-घाम, धर्म-धम्म-धाम, चक्र-चक्क-चाक आदि संस्कृत, प्राकृतसे इस प्रकार हिन्दी आदि आधुनिक भाषाओंमें आनेवाले अनेक शब्दोंमें यह प्रवृत्ति मिलती है। ह्रस्व स्वरोंकी इस प्रकारकी दीर्घता **क्षतिपूरक-दीर्घता**के नामसे अभिहित की जाती है। स्वरको दीर्घ करके मात्रा या कालकी इस प्रकारकी पूर्ति **क्षतिपूर्ति** भी कहलाती है।

क्षतिपूरक दीर्घीभवन—**क्षतिपूरक दीर्घीकरण** (दे०) का एक अन्य नाम।

क्षतिपूर्ति—(दे०) **क्षतिपूरक दीर्घीकरण**।

क्षत्री—मद्रासमें **हिन्दोस्तानी** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम। क्षत्रियों द्वारा प्रयुक्त होनेके कारण यह नाम पड़ा है।

क्षयमाण संयुक्तस्वर—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गी-करणमें संयुक्तस्वर** उपशीर्षक।

क्षेत्र-पद्धति (field-method)—जीवित भाषाकी सामग्री एकत्र करनेकी पद्धति। इसमें प्रश्नावली तैयार करना, उत्तर इस ढंगसे पूछना कि उत्तरदाता सहजरूपमें आव-श्यक सूचनाएँ दे सके, क्षेत्रकी सामग्री एकत्र करनेकी दृष्टिसे वैज्ञानिक विभाजन आदि क्षेत्र-कार्य (field-work) विषयक सैद्धां-तिक बातें आती हैं। (दे०) **भाषा-भूगोल**।

क्षेत्रीय भाषा-विज्ञान (areal linguistic) **भाषा-भूगोल** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

क्षैप्र संधि—(दे०) **संधि**।

क्षैप्र स्वरित—एक प्रकारका **स्वरित** (दे०)।

क्सनम्ब्रे (xanambre)—**केन्द्रीय अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इसकी प्रमुख भाषा **पिसोने** है। अब इस परिवारकी भाषाएँ विलुप्त हो चुकी हैं।

क्सिकके (xikake)—**केन्द्रीय अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इसका अन्य नाम **जिकाके** है। इस परिवारकी प्रमुख भाषाका नाम भी यही है।

क्सिन्का (xinka)—**केन्द्रीय अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इसके अन्य नाम **जिन्का** तथा **सिन्का** हैं। इस परिवारकी प्रमुख भाषाका नाम भी 'क्सिन्का' है।

क्सिबरो परिवार (xibaro)—**दक्षिणी अम-रिकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इसके अन्य नाम **शिवोरा** (shiw-ora) तथा **शुआरा** (shuara) भी हैं। इस परिवारमें १० भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख **क्सिबरो, माकास, अगुअरुना, मिआजल** तथा **पाल्टा** हैं।

क्सिरक्सरा (xiraxara)—**दक्षिणी अम-रीकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार। इस परिवारमें क्सिरक्सराके अतिरिक्त-**अयमन** तथा **गयोन** भाषाएँ आती हैं।

क्सेबेरो (xebero)—**कहुअपना** (दे०)

परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

क्सोक्सो (xaxo)—**टिमोटे** (दे०) परिवार-की एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

क्सोनाज (xonaz)—**मेको** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

क्सोसा (xosa) **बांटू परिवारकी** काफिर भाषाका एक अन्य नाम। इसे **क्सृहोसा** (xhosa) भी कहते हैं।

ख

खंड रूपग्राम (segmental morpheme) एक प्रकारका **रूपग्राम** (दे०)।

खंडेतर ध्वनियाँ (supra-segmental sounds)—(दे०) **ध्वनि-गुण**।

खंड्य रूपग्राम—(दे०) **खंड रूपग्राम**।

खंबू (khambu)—**चीनी परिवार** (दे०)-की तिब्बती-वर्मी भाषाओंके, पूर्वीय-सार्व-नामिक-हिमालयी वर्गकी, प्रमुखतः नैपालमें प्रयुक्त एक भाषा। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ४१,४९० के लगभग थी। इस संख्यामें **राई** तथा '**जिम्दार** बोलनेवाले भी सम्मिलित थे। इसकी वहुतसी बोलियोंके लिए भी इसी नामका प्रयोग होता है।

ख-कव (khakaw)—**अक** (दे०)का एक अन्य नाम।

खकार–ख्के लिए प्रयुक्त नाम। (दे०) **कार**।

खकु (khaku)—'**कचिन**' (दे०)का एक अन्य नाम।

खकेद (khaked)—१८९१ की बंबईकी जनगणनाके अनुसार, '**दक्खिनी**' (दे०) या दक्खिनी हिन्दुस्तानीका कनारामें प्रयुक्त एक रूप।

खजुना—**बुरुशास्की** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

खटक (khatak)–**पश्तो** (दे०)का, पेशावर, मियावाली, कोहाट तथा अटकमें खटक लोगों-में प्रयुक्त एक रूप।

खटोला—'पश्चिमी हिन्दी' की बोली '**बुंदेली**' (दे०)का पन्ना तथा दमोहके आसपास प्रयुक्त एक स्थानीय रूप। इसके बोलने-वालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग ८,९१,२०० थी।

खट्टा—(दे०) **कुड़माली**।

खट्टाही—(दे०) **कुड़माली**।

खड़िआ (१) कुरुख (दे०)का एक अशुद्ध-नाम। (२) बंगालके एक भाग तथा छोटानागपुर-में प्रयुक्त एक **मुंडा** (दे०) भाषा। १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या १,३७,४७६के लगभग थी।

खड़िआ ठार (kharia thar)—**बंगाली** (दे०)का मानभूमिमें खड़िआ नामक जाति द्वारा बोला जाने वाला एक रूप। ग्रिय-र्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलने-वालोंकी संख्या लगभग २२९८ थी।

खड़ी बोली—खड़ी बोली नामका प्रयोग आज दो अर्थोंमें चल रहा है: (**क**) दिल्ली-मेरठके आस-पासकी जन-भाषा, जिसे राहुलजी आदिने **कौरवी** कहा है। डॉ०-सुनीतिकुमार चटर्जी इसे **जनपदीय हिंदु-स्तानी** कहते हैं। ग्रियर्सनने इसे **वर्नाक्यूलर हिंदुस्तानी** कहा है। इसके कुछ अन्य नाम **सरहिंदी** या **सिरहिन्दी** भी मिलते हैं। इस, रूपमें खड़ी बोली रामपुर, मुरादावाद, बिजनौर, मेरठ, मुज़फ़्फ़रनगर, सहारनपुर, देहरादूनकी मैदानी भाग; अंबाला, कलसिया और पटियालाके पूर्वी भागमें प्रयुक्त होती है, और इसका क्षेत्र पंजाबी, बाँगरू, ब्रज और पहाड़ी भाषाओंके बीचमें पड़ता है। इसका शुद्ध या परिनिष्ठित रूप बिजनौरमें बोला जाता है, अन्य स्थानोंपर प्रायः समीप-वर्ती भाषाओंका प्रभाव परिलक्षित होता है। ऊपर जिन स्थानोंको उल्लेख किया गया है, वे प्रायः ग्रियर्सनके अनुसार हैं। इधर, खड़ी-बोली समीपवर्ती कुछ ब्रज आदि अन्य भाषाओंके क्षेत्रोंमें भी प्रविष्ट हो गयी है,

इस प्रकार उसका क्षेत्र कुछ बढ़ गया है। ऐसा, खड़ी बोलीके प्रचार और महत्त्वके कारण हुआ है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५३ लाखसे कुछ कम थी। इस ठेठ **खड़ी बोली** रूपमें लोकसाहित्य पर्याप्त मात्रामें है। (ख) खड़ी बोलीका दूसरा रूप वह है जिसे **साहित्यिक खड़ी बोली, खड़ी बोली हिन्दी, हिन्दी** या **हिंदुस्तानी** आदि नामोंसे अभिहित करते हैं। खड़ी बोलीका यह रूप कहींकी क्षेत्रीय भाषा नहीं है। यह एक साहित्यिक भाषा है, जिसका आंशिक प्रयोग गोरखनाथ, आदिनाथ, रामानंद, कबीर, बंदानेवाज आदि पुराने कवियोंमें मिलता है। मध्ययुगमें गंग (चंद छंद बरनन की महिमा), रहीम (मदनाष्टक) प्राणनाथ (कुलजमस्वरूप), रामप्रसाद निरंजनी (भाषा योगवासिष्ठ) तथा अनेक दक्खिनी एवं उर्दूके कवियोंने इसका अपने साहित्यमें प्रयोग किया है। आधुनिक कालमें, हिन्दी साहित्य, १९०० ई० से पूर्व मात्र गद्यके क्षेत्रमें, तथा १९०० ई० के बाद गद्य-पद्य दोनोंमें, इसी माध्यमसे लिखा गया है। खड़ी बोलीका यह साहित्यिक रूप प्रायः उपर्युक्त प्रथम रूपपर आधारित माना जाता है किंतु वस्तुतः यह केवल उस रूपपर ही आधारित नहीं है। इसमें उसके अतिरिक्त कुछ पंजाबी तथा ब्रज आदिके भी तत्त्व हैं। यह तो व्याकरणिक दृष्टिसे था। शब्दसमूहकी दृष्टिसे विभिन्न कालोंमें इसकी स्थिति बदलती रही है। उदाहरणार्थ १८०० ई० के पूर्व उर्दूधाराके रूपमें यह अरबी-फारसीकी ओर झुकी थी। अन्य धाराओंमें प्रायः तत्कलीन सामान्य हिन्दी साहित्यकी शब्दावलीका प्रयोग हुआ है। १८०० ई० के बाद उर्दू धाराके रूपमें यह भाषा अरबी-फारसीकी ओर अपेक्षाकृत और भी अधिक झुक गयी। यों कभी-कभी कुछ साहित्यकारोंने अपने साहित्यको पूर्णतः या आंशिक रूपसे इस अतिवादितासे दूर रखा। हिन्दी धारामें १८०० से १९०० ई० तक हिन्दीकी सामान्य शब्दावलीका प्रयोग हुआ है, जिसमें तद्भव शब्द बहुत अधिक हैं, संस्कृतके भी कुछ सामान्य शब्द हैं, जिन्हें क्लिष्ट नहीं कहा जा सकता। इसी प्रकार अत्यंत सरल और प्रचलित अरबी-फारसी तथा अंग्रेज़ीके शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं। १९०० और १९३६ ई० के बीच कविता और गद्यकाव्यकी खड़ी बोली बहुत ही संस्कृतनिष्ठ है। आलोचना और नाटकोंके क्षेत्रमें भी लगभग यही बात है। 'प्रसाद' जैसे कुछ अपवादोंको छोड़कर उपन्यास तथा कहानी आदिके क्षेत्रमें साहित्यिक खड़ी बोली अपेक्षया जनभाषाके निकट है। आलोचनाके क्षेत्रमें तो अबतक लगभग वही स्थिति है, जो १९३६ के पूर्व थी, किंतु अन्य क्षेत्रोंकी भाषा इधर कुछ-कुछ सरल हो गयी है और कुछ कहानियों तथा उपन्यासोंमें तो वह आंचलिक भी हो गयी है। १९४७ ई० के बाद भारत स्वतंत्र हुआ और खड़ी बोलीका यही रूप राज्य या राष्ट्रभाषा बना। साहित्य, पत्र-व्यवहार, समाचार-पत्र आदिकी साहित्यिक खड़ी बोलीको विज्ञान, वाणिज्य, राजनय आदि क्षेत्रोंकी भाषा बनना पड़ा, इस प्रकार इसको कई लाख पारिभाषिक शब्दोंकी आवश्यकता पड़ी, जिसकी पूर्तिके लिए संस्कृतके आधारपर कई लाख शब्द बने हैं और बनाये जा रहे हैं। इस प्रकार पिछले दशकमें साहित्यिक खड़ी बोली जनताके निकट तो गयी है किंतु साथ ही इसमें तथाकथित तत्सम शब्द भी काफी आ गये हैं, बल्कि इसके माध्यमसे वे शब्द जनभाषाकी भी संपत्ति बनते जा रहे हैं। ये हैं खड़ी बोलीके दो अर्थ या रूप।

'खड़ी बोली' नामको लेकर विद्वानोंमें बहुत विवाद है। चंद्रबली पांडेय खड़ी बोलीमें 'खड़ी'का अर्थ प्रकृत, ठेठ अथवा शुद्ध मानते हैं। प्रो० हक 'खड़ी' का अर्थ गँवारू लेते हैं। टी० ग्राहम बेलीने 'खड़ी'का अर्थ प्रचलित या 'करेंट' लिया है। गार्सां द तासी 'खड़ी' का अर्थ 'खरी' या शुद्ध (अरबी-फ़ारसी शब्दोंसे रहित) मानते हैं। डॉ०

धीरेन्द्र वर्मा 'खड़ी'का अर्थ कर्कश, या ब्रजकी तुलनामें खड़ी (ब्रज––कौ, थोड़ौ, कियौ; खड़ी––का, थोड़ा, किया) लेते हैं। डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी तत्कालीन अन्य ब्रज, अवधी आदिको पड़ी बोली कहते हुए इसको, उनकी तुलनामें खड़ी मानते हैं। इसी प्रकार, अन्य भी इस्टविक, केलाग, सुधाकर द्विवेदी, गुलेरीजी आदि अनेक लोगोंने अपने-अपने मत प्रकट किये हैं। इन मतोंमें किसे माना जाय और किसे नहीं, इसका निर्णय बहुत सरल नहीं है। इस प्रसंगमें खड़ी बोलीके प्रारंभिक प्रयोग कदाचित् कुछ संकेत दे सकते हैं। यह ध्यान देने योग्य है कि 'खड़ी बोली' शब्द बहुत प्राचीन नहीं है। इसका प्रयोग १८०३ से पहले नहीं मिलता। इसके प्रारंभिक प्रयोक्ताओंमें लल्लूलाल, सदल मिश्र और गिलक्राइस्ट उल्लेख्य हैं। लल्लूलाल 'प्रेम सागर' (१८०३ ई०) में कहते हैं––'यामनी भाषा छोड़ दिल्ली-आगरेकी खड़ी बोलीमें कह प्रेम सागर नाम धरा।' सदल मिश्र 'रामचरित्र' (१८०५) में लिखते हैं–'जान गिलक्राइस्ट ने ठहराया . . . ऐसी बोलीमें करो, जिसमें अरबी-फारसी न आवे। तब मैं इसको खड़ी बोलीमें कहने लगा।' गिलक्राइस्ट (the oriental fabulist १८०३में) कहते हैं, 'ठेठ खड़ी बोलीमें हिंदुस्तानीके व्याकरणपर विशेष ध्यान दिया जाता है, और अरबी-फारसीका प्रायः पूर्ण परित्याग रहता है।'

उपर्युक्त सभी उद्धरणोंसे ऐसा संकेत मिलता है कि खड़ी बोली अरबी-फारसी शब्दोंसे रहित थी और इसी अर्थमें उसे शुद्ध प्योर (pure) या खड़ी कहा गया। किंतु यहाँ एक प्रश्न और भी उठता है कि इस अर्थमें हिन्दीमें 'खरी' शब्द तो है, किंतु 'खड़ी'का अर्थ यह नहीं होता। 'खड़ी'का अर्थ 'उठी हुई' है। इस प्रसंगमें रेख्ताका उल्लेख किया जा सकता है। भाषाके अर्थमें १६वीं सदीसे लेकर १९वीं सदीतक 'रेख्ता' शब्द भी प्रचलित रहा है। ब्रजरत्न दास आदि बहुतसे लोगोंने 'रेख्ता'का अर्थ 'गिरा-पड़ा' लगाकर उसके विरुद्ध इसे 'खड़ी बोली' कहा है, किंतु वस्तुतः 'रेख्ता'का प्रयोग भारतमें छंद, संगीत तथा भाषामें जिन प्रसंगोंमें हुआ है, उसे देखनेसे लगता है कि इसमें 'गिरे होने' का भाव नहीं है अपितु मिश्रित होनेका भाव है। जिस कालमें 'खड़ी बोली' नाम पड़ा, उसी कालमें इंशा अल्ला खाँ 'दरियाए लताफ़त' में लिखते हैं––'जब वली दक्खिनीने मज़ामीन फ़ारसीकी चाशनी हिन्दी नज्ममें पैदाकी तो खास अदबी व शाइरी ज़बानको रेख्ता (दे०) कहने लगे।' इस प्रकार यह मानना कि, रेख्ताका अर्थ गिरा-पड़ा था और उसी आधारपर खड़ी बोली नामकरण किया गया, युक्तियुक्त नहीं कहा जा सकता। उपर्युक्त बातोंके आधारपर यही कहा जा सकता है कि 'खड़ी-बोली' के अर्थ और उसकी व्युत्पत्तिके संबंधमें जितने भी मत व्यक्त किये गये, उनमें कोई भी, हर दृष्टिसे देखनेपर, मान्य नहीं माना जा सकता और इस तरह यह समस्या अभी असमाधानित ही मानी जायगी।

यहाँ, यह भी उल्लेख्य है कि आरंभमें साहित्यमें प्रयुक्त इस रूपको खड़ी बोली कहा गया किंतु बादमें इसी आधारपर दिल्ली-मेरठकी बोलीको भी खड़ी बोली नाम दे दिया गया। साहित्यिक खड़ी बोलीकी आज तीन शैलियाँ हैं : (१) हिन्दी, (२) हिंदुस्तानी, (३) उर्दू। दिल्ली-मेरठके पासकी जनभाषा खड़ी बोलीकी प्रमुख बोलियाँ **बिजनौरी** (जो परिनिष्ठित रूप है), **करखन्दारी** (दे०) तथा **पहाड़ताली** (दे०) आदि हैं। आधुनिक मतोंके अनुसार **हरियानी** (दे०) भी स्वतंत्र बोली न होकर खड़ी बोलीका ही एक पंजाबी मिश्रित या प्रभावित रूप है। दिल्लीके दक्षिणी भागकी खड़ी बोली भी, खड़ी बोलीके अन्य रूपोंसे कुछ भिन्न है, यद्यपि इसके लिए किसी स्वतंत्र नामका प्रयोग नहीं होता। (दे०) **हिंदी**।

खत्ती (khattian)––अज्ञात परिवारकी

एक विलुप्त भाषा। इसे खत्ती लोग बोलते थे, जिनका स्थान एशिया माइनर था। इसके कुछ अभिलेख मिले हैं, जिनका काल २००० ई० पू० के भी पूर्व कहा गया है।

खत्री (khatri)—**पटणूली** (दे०) का एक अन्य नाम। (दे०) **सौराष्ट्री**।

खनुंग (khanung)—**नुंग** (दे०) का एक दूसरा नाम।

खन्गोई (khangoi)—**तांगखुल** (दे०) की, मणिपुरमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, मोटे रूपसे इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५०० थी।

खमन (khaman)—**मिश्मी** (दे०) का एक रूप।

खमी (khami)—**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके कूकी-चिनवर्गकी, चिटगाँवकी पहाड़ियों तथा अराकान (बर्मा) में प्रयुक्त एक दक्षिणी चिनभाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २७,३४६ थी।

खमुक (khamuk)—**खमू** (दे०) का एक अन्य नाम।

खमू (khamu)—१९२१ की जनगणनाके अनुसार २०३ व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत एक '**मोर-ख्मेर**' (दे०) भाषा।

खम्स बोली (khams)—**खम्समें** बोली जानेवाली **तिब्बती** (दे०) का एक अन्य नाम।

खम्सी तिब्बती—पूर्वी तिब्बतमें बोली जानेवाली **तिब्बती** (दे०) का एक नाम।

खयरा (khayra)—**कोडा** (दे०) का एक दूसरा नाम।

खरी (khari)—**आओ** (दे०) को दिया गया एक नाम।

खरोष्ठी—एक प्राचीन लिपि। इसके प्राचीनतम लेख शहबाज़गढ़ी और मनसेरामें मिले हैं। आगे चलकर बहुत-से विदेशी राजाओंके सिक्कों तथा शिलालेखों आदिमें यह लिपि प्रयुक्त हुई है। इसकी प्राप्त सामग्री मोटे रूपसे चौथी सदी ई० पू० से तीसरी सदी ई० तक मिलती है। इसके **इंडोबैक्ट्रियन**, **बैक्ट्रियन**, **काबुलियन**, **बैक्ट्रो-पालि** तथा **आर्यन** आदि और भी कई नाम मिलते हैं, पर अधिक प्रचलित नाम 'खरोष्ठी' ही है, जो चीनी साहित्यमें ७वीं सदी तक मिलता है। **नाम पड़नेके कारण**—इसके नामकरणके संबंधमें कई मत प्रचलित हैं: (१) चीनी विश्वकोष फ़ा-वान-शु-लिनके अनुसार किसी 'खरोष्ठ' नामक व्यक्तिने इसे बनाया था। (२) यह 'खरोष्ठ' नामक सीमाप्रान्तके अर्द्धसभ्य लोगोंमें प्रचलित होनेके कारण इस नामकी अधिकारिणी बनी। (३) इस लिपिका केन्द्र कभी मध्य एशियाका एक प्रान्त 'काशगर' था और 'खरोष्ठ' काशगरका संस्कृत रूप है। (४) सिलवाँ... लेवीके अनुसार 'खरोष्ठ' काशगरके चीनी नाम 'किया-लु-शु-ता-ले' का विकसित रूप है। काशगर इस लिपिका केन्द्र रहा है। (५) गदहेकी खालपर लिखी जानेसे इसे इरानीमें 'खरपोस्त' कहते थे, और उसीका अपभ्रंश रूप 'खरोष्ठ' है। (६) डॉ० प्रज़िलुस्कीके अनुसार यह गदहेकी खालपर लिखी जानेसे खरपृष्ठी और फिर खरोष्ठी कहलायी। (७) कोई आरमेइक शब्द 'खरोट्ठ' था और उसीका भ्रामक व्युत्पत्तिके आधारपर बना संस्कृत रूप 'खरोष्ठ' बना। (८) डॉ० राजबली पांडेयके अनुसार इस लिपिके अधिक अक्षर गदहेके ओठकी तरह बेढंगे हैं, अतएव यह नाम पड़ा है। (९) डॉ० चटर्जीके अनुसार हिब्रूमें खरोशेथ (kharosheth) का अर्थ 'लिखावट' है। उसीसे लिया जानेके कारण इसका नाम खरोशेथ पड़ा, जिसका संस्कृत रूप खरोष्ठ और उससे बना शब्द खरोष्ठी है। इन नवों मतोंमें कोई भी बहुत पुष्ट प्रमाणोंपर आधारित नहीं है, अतएव इस सम्बन्धमें पूर्ण निश्चयके साथ कुछ कहना कठिन है। यों अधिक विद्वान् इस लिपिकी उत्पत्ति जैसा कि आगे हम लोग देखेंगे आरमेइक लिपिसे मानते हैं, अतएव आरमेइक शब्द 'खरोट्ठ' से इसके नामको संबद्ध माना जा सकता है। **उत्पत्ति**—खरोष्ठी लिपिकी

उत्पत्तिके सम्बन्धमें सभी लोग एकमत नहीं हैं। इस सम्बन्धमें प्रमुख रूपसे दो मत हैं—(१) यह आरमेइकलिपिसे निकली है; (२) यह शुद्ध भारतीय लिपि है। प्रथम मतका सम्बन्ध प्रसिद्ध लिपिवेत्ता जी०बूलरसे है। इनका कहना है कि, (१) खरोष्ठी लिपि आरमेइक लिपिकी भाँति दायें-से बायेंको लिखी जाती थी, तथा (२) खरोष्ठी लिपिके ११ अक्षर बनावटकी दृष्टि-से आरमेइक लिपिके ११ अक्षरोंसे बहुत मिलते-जुलते हैं। साथकी ११ अक्षरोंकी ध्वनि भी दोनों लिपियोंमें एक है। यथा—

खरोष्ठी	आरमेइक
क	काफ्
ज	ज़ाइन्
द	दालेथ्
न	नून
ब	बेथ्
य	योध्
र	रेश्
व	वाव्
ष	शिन्
स	त्साधे
ह	हे

(३) आरमेइक लिपि खरोष्ठीसे पुरानी है। (४) तक्षशिलामें आरमेइक लिपिमें प्राप्त शिलालेखसे यह स्पष्ट है कि भारतसे आर-मेइक लोगोंका सम्बन्ध था।

इस प्रकार इन चारों बातोंसे यह स्पष्ट हो जाता है कि खरोष्ठी लिपि आरमेइकसे ही मिलती है। डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा तथा डिरिंजर भी इस मतसे सहमत हैं। दूसरा मत खरोष्ठीको शुद्ध भारतीय मानने-का है। डॉ० राजबली पांडेयने अपनी पुस्तक 'इंडियन पैलेग्राफी'में इस मतका प्रतिपादन किया है। यह मत केवल तर्कपर आधारित

है। पूर्व मतकी भाँति ठोस आधारोंकी इसमें कमी है, अतः जब तक इस मतके पक्षमें कुछ ठोस सामग्री उपलब्ध न हो जाय, पूर्व मतकी तुलनामें इसे मान्यता नहीं प्राप्त हो सकती। खरोष्ठी लिपि उर्दू लिपिकी भाँति पहले दायेंसे बायेंको लिखी जाती थी, पर बादमें सम्भवतः ब्राह्मी लिपिके प्रभावके कारण यह भी नागरी आदि लिपियोंकी भाँति बायेंसे दायेंको लिखी जाने लगी। डिरिंजर तथा अन्य विद्वानोंका अनुमान है कि इस दिशा-परिवर्तनके अतिरिक्त कुछ और बातोंमें भी ब्राह्मी लिपिने इसे प्रभावित किया। इसमें मूलतः स्वरोंका अभाव था। वृत्त, रेखा या इसी प्रकारके अन्य चिह्नों द्वारा ह्रस्व स्वरोंका अंकन इसमें ब्राह्मीका ही प्रभाव है। इसी प्रकार भ, व तथा घ आदिके चिह्न आरमेइकमें नहीं थे। यह भी ब्राह्मीके ही आधारपर इसमें सम्मिलित किये गये। खरोष्ठी लिपिको बहुत वैज्ञानिक या पूर्ण लिपि नहीं कहा जा सकता। यह एक काम-चलाऊ लिपि थी और आजकी उर्दू लिपिकी भाँति इसे भी लोगों को प्रायः अनुमानके आधारपर पढ़ना पड़ता रहा होगा। मात्राओं-के प्रयोगकी इसमें कमी है, विशेषतः दीर्घ स्वरों (आ, ई, ऊ, ऐ और औ)का तो इसमें सर्वथा अभाव है। संयुक्त व्यंजन भी इसमें प्रायः नहींके बराबर या बहुत थोड़े हैं। इसकी वर्णमालामें अक्षरोंकी मूल संख्या ३७ थी। यहाँ उनके ३८ अक्षर ऊपर चित्रमें दिये जा रहे हैं। पहचानके लिए प्रारंभमें नागरी अक्षर दिये गये हैं।

खर्वरिअन (kharwarian)—**खेर्वरिअन** (दे०)का एक अन्य नाम।

खर्वारी—(दे०) **खेरवारी**।

खल (khala)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, दक्षिणी शान प्रांत में ४००० लोगों द्वारा व्यवहृत एक भाषा। इसके परिवारका ठीक पता नहीं।

खलम (khalam)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षण-के अनुसार, दक्षिणी शान प्रांतमें ४००० व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत एक भाषा। इसके पारिवारिक संबंधका ठीक पता नहीं है।

खलोटी—**छत्तीसगढ़ी** (दे०)का एक अन्य नाम। विलासपुर, छत्तीसगढ़ी बोलनेवालोंका क्षेत्र है। समीपके बालाघाट जिलेमें इसे **खलोटी** कहते है। इसी आधारपर **छत्तीस-गढ़ी**का एक नाम **खलोटी** भी पड़ गया है।

खल्खा (khalkha)—**यूराऊ-अल्ताई** (दे०) परिवारकी एक पूर्वी मंगोली भाषा।

खल्टाही—**छत्तीसगढ़ी** (दे०)का एक नाम। विलासपुर (जो 'छत्तीसगढ़ी' बोलनेवालोंका मुख्य क्षेत्र है)को बालाघाट जिलेके लोग 'खटोली' कहते हैं। इसी आधारपर 'छतीस-गढी'का एक नाम 'खल्टाही' पड़ गया। 'खल्टाही'का अर्थ है 'खटोलीकी बोली'।

खश परजिया—(दे०) **खसपरजिया**।

खस अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

खसकुरा—**नेपाली** (दे०)का एक अन्य नाम।

खसपरजिया—माध्यमिक पहाड़ी बोली **कुमा-यूँनी** (दे०)की एक उपबोली जो अलमोड़े जिलेमें बारहमंडल तथा दाणपुरके आस-पास बोली जाती है। यहाँकी 'प्रजा' जो प्रायः 'खस' है इस बोलीका प्रयोग करती है। इसी कारण इसका यह नाम पड़ा है। इसके क्षेत्रके उच्चवर्गीय लोग तो परिनिष्ठित कुमायूँनी बोलते हैं किंतु अन्य लोग 'खस-परजिया'। दोनोंको मिलाकर बोलनेवालों-की संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ७५,९३० थी।

खस्सी (khassi)—**खासी** (दे०)का एक अशुद्ध नाम।

खाडी (khadi)—१९११की बंबई जनग-णनाके अनुसार, सूरत तथा रीवाकंथामें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

खादिरी (khadiri)—**बाँगरू** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

खानदेशी (khandesi)—खानदेशमें तथा आसपास प्रयुक्त एक भाषा। यह भाषा **मराठी** तथा **भीली** दोनोंसे संबद्ध मानी गयी है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार

इसके बोलनेवालोंकी संख्या १२,५३,०६६के लगभग थी।

खामिर—एक **कुशिटिक** (दे०) बोली।

खाम्ता—एक **कुशिटिक** (दे०) बोली।

खाम्ती (khamti)—लखीमपुर (असम)-में प्रयुक्त एक **ताई** (दे०) भाषा। १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या ९८६६के लगभग थी।

खारवा (kharwa)—**गुजराती** (दे०)की, काठियावाड़में प्रयुक्त खारवा मुसलमानों द्वारा व्यवहृत एक बोली।

खारवारी—**दक्षिणी भोजपुरी** (दे०)का एक रूप जो शाहाबाद जिलेके दक्षिणी भागमें 'खारवार' नामकी आदिवासी जातिमें बोला जाता है। 'खारवारी' तथा 'दक्षिणी भोजपुरी' में बहुत कम अंतर है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या लगभग १७१ थी।

खार्वा (kharva)—**खारवा** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

खार्वी (kharvi)—**खारवा** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

खालिंग (khaling)—**खंबू** (दे०)की नैपालकी ऊपरी घाटीमें प्रयुक्त एक बोली।

खाल्दिक—(दे०) **वन्नी**।

खासी—एक आस्ट्रिक भाषा जो असममें खासी-जयंतिया पहाड़ियोंपर बोली जाती है। यह **मोनख्मेर** (दे०) शाखाकी है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार खासी बोलनेवालों-की संख्या १,७७,२९३ थी। खासीमें **वार**, **सिंटेंग**, **लिन्गन्गम** आदि प्रमुख बोलियाँ हैं।

खास्यलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयीं ६४ लिपियोंमें-से एक।

खुंलोंग (khunlong)—**तौंगथू** (दे०)का एक रूप। इसका एक नाम **हू कुंलोंग** भी है।

खुग्नान (khugnan)—**शिग्नी** (दे०)-का एक अन्य नाम।

खुग्नी (khugni)—**शिग्नी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

खुन (khun)—एक **ताई** (दे०) भाषा। बर्माकि भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इस भाषा ('ह् कुन' नामसे)के बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४२,३७८ थी। इसका क्षेत्र प्रमुखतः दक्षिणी केंगतुंग शान प्रांत है।

खुनुंग (khunung)—**नुंग** (दे०)का एक नाम।

खु-मी (khumi)—**खमी** (दे०)का एक और नाम।

खुलुंग-मुथुन (khulung-muthun)—**मुतोनिआ** (दे०) का एक रूप।

खेंदरोई (khendroi)—**कुरुख** (दे०)का एक नाम।

खे (khe)—**चीनी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

खेड़ाकड़ा (kherakara)—**संथाली** (दे०)-के लिए प्रयुक्त एक नाम।

खेत्रांकी (khetranki)—**खेत्रानी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

खेत्रानी (khetrani)—**लहंदा** (दे०)का, बिलोचिस्तानके कुछ भागोंमें प्रयुक्त एक विकृत रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १४,५८१ थी। इस संख्यामें 'जाफ़िरी' बोलनेवाले भी सम्मिलित थे।

खे-पोक (khepok)—**मिअओ** (दे०)का एक नाम।

खेब्स (khebsa)—**खे-स** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

खेरवारी—**आस्ट्रिक परिवार** (दे०)की मुंडा शाखाकी एक भाषा, जो छोटा नागपुरमें तथा उसके आसपास बोली जाती है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या १९२१ की जनगणनाके अनुसार ३५,०३,२१५ थी। खेरवारीकी **संताली** या **संथाली**, **मुंडारी**, **भुमिज**, **बिर्हार**, **कोडा**, **हो**, **तूरी**, **असुरी**, **अगरिआ**, **ब्रिजिया** तथा **कोरवा** आदि प्रमुख बोलियाँ हैं।

खेल्म (khelma)—**हल्लाम** (दे०)की, असमके कुछ भागोंमें प्रयुक्त एक बोली।

खेस (khesa)—**सँगथ** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

खै-मी (khaimi)—**खमी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

खैरा (khaira)—**कोडा** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

खैराड़ी—**पूर्वी मारवाड़ी** (दे०)के एक रूप **मेवाड़ी** (दे०)का एक स्थानीय रूप जो मेवाड़, जयपुर और बूंदीकी सीमापर खैराड़ कहलाने वाले पहाड़ी भागमें बोला जाता है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,२८,२६४ थी ।

खोंगज़ाई (khongzai)—**थाडो** (दे०) की, मणिपुरमें प्रयुक्त एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २०,००० थी ।

खोंगोए (khongoe)—**खंगोई** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

खोंटाई—**खोंटाली** (दे०) का एक नाम ।

खोंटाली—**पूर्वी मगही** (दे०)का एक स्थानीय रूप जो पश्चिमी माल्दामें चेन, नागर तथा कुछ अन्य जातियों द्वारा बोला जाता है । इसपर 'बंगाली' तथा 'मैथिली'का प्रभाव पड़ा है । 'खोंटाली'के अन्य नाम **'खोंटाई'** तथा **'हिन्दी'** भी है ।

खोंद(khond)—**कुई** (दे०)का एक अन्य नाम ।

खोइबू (khoibu)—**मरिंग** (दे०)का एक रूप ।

खोइराओ (khoirao)—**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मीभाषाओं, असमी-बर्मी शाखाके नागा वर्गकी मणिपुरमें प्रयुक्त एक **नागा-बोदो** भाषा । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १५०३ थी ।

खोज (khoja)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **कच्छी** (दे०)का एकरूप ।

खोटन (khotana)—**टिन्नेह** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

खोट्टा बँगला (khotta bangala)—पश्चिमी बंगाली या **सराकी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

खोडी (khodi)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **हिन्दी** (दे०)का, खानदेश तथा पंचमहलमें प्रयुक्त एक रूप ।

खोतानी (khotanese)—मध्य ईरानीकी एक विलुप्त बोली । इसे **उत्तरी आर्यन** या **मध्य सकियन** (middle-sakian) भी कहा गया है ।

खोतानी लिपि—**ब्राह्मी**(दे०)से निकली गुप्त लिपिका खोतानमें प्रयुक्त रूप ।

खोरा—**बुशमैन**(दे०)परिवारकी एक अफ्रीकी बोली ।

खोवार(khowar)—चित्राल और यासीनके कुछ भागोंमें प्रयुक्त एक **दरद** (दे०) भाषा । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या केवल १२१ थी ।

ख्मु(khmu)—**खमुक**(दे०)का एक दूसरा नाम ।

ख्मू (khmu)—**खमू** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ख्मेर—**कंबोडियन**(दे०)भाषाके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

ख्यंग (khyang)—**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके कुकी-चिन वर्गकी चिटगाँवके पहाड़ी भागों तथा बर्माके अराकानयोमामें प्रयुक्त एक दक्षिणी चिन भाषा ।

ख्यिन (khyin)—**चिन** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

ख्येंग (khyeng)—**ख्यंग** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ख्यौंग्थ (khyaungtha)—**चौंगथ**(दे०) का एक अन्य नाम ।

ख्यौ(khyau)**क्यौ**(दे०)का एक अन्य नाम ।

ख्लांगम(khlangam)—**थाडो** (दे०)का एक रूप ।

ख्वेम्यी (khwemyi)—**खमी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ख्वोंबू (khwombu)—**खंबू** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ग

गंगाई (gangai)—**बड़** (दे०) का एक रूप ।

गंगाड़ी—**टेहरी** (दे०) का एक रूप ।

गंगापारिया—(दे०) **टेहरी** ।

गंगोला—**कुमायूँनी** (दे०) की एक उपबोली यह अलमोड़ा ज़िलेके गंगोल परगनेमें बोली जाती है, इसी कारण इसे यह नाम दिया गया है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसे बोलनेवालोंकी संख्या ३७,७३४ थी ।

गँठचोर (ganthachor)—**भम्टा** (दे०) का एक अन्य नाम ।

गंधर्वलिपि—बौद्धग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयीं ६४ लिपियोंमें-से एक ।

गंधव्वलिवि—पन्नवणासूत्र नामक जैन ग्रंथमें दी गयीं १८ लिपियोंमें-से एक ।

गकार—**ग्** के लिए प्रयुक्त नाम (दे०) **कार** ।

गकू (gaku)—**घेकोकरेन** (दे०) का एक अन्य नाम ।

गचिकोलो (gachikolo)—**हलबी** (दे०)-का एक रूप ।

गट्टू (gattu)—**गोंडी** (दे०) की विशाखा-पट्टम्, चाँदा और गोदावरीमें प्रयुक्त तथा गट्टू लोगों द्वारा व्यवहृत एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २०३३के लगभग थी ।

गढ़वाली—**माध्यमिक पहाड़ी** (दे०) की एक बोली । इसका क्षेत्र प्रधान रूपसे गढ़-वाल होनेके कारण यह नाम पड़ा है । पहले इस क्षेत्रके नाम केदारखंड, उत्तराखंड आदि थे । मध्ययुगमें बहुत गढ़ोंके कारण इसे लोग 'गढ़वाल' कहने लगे । ग्रियर्सन-के भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलने-वालोंकी संख्या ६,७०,८२४ के लगभग थी । यह गढ़वाल तथा उसके आसपास टेहरी, अलमोड़ा, देहरादून (उत्तरी भाग), सहा-रनपुर (उत्तरी भाग), बिजनौर (उत्तरी भाग) तथा मुरादाबाद (उत्तरी भाग) आदिके कुछ भागोंमें बोली जाती है । 'गढ़वाली'की बहुत-सी उपबोलियाँ विक-सित हो गयी हैं, जिनमें प्रमुख **श्रीनग-रिया** (दे०), **राठी** (दे०), **लोहब्या** (दे०), **बधानी** (दे०), **दसौल्या** (दे०), **माँझ-कुमैयाँ** (दे०), **नगपुरिया** (दे०), **सलानी** (दे०), **गंगापारिया** (दे०) तथा **टेहरी** (दे०) है । **श्रीनगरिया**, **गढ़वाली**का परिनि-ष्ठित रूप है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लग-भग १२,००८ थी । गढ़वालीमें साहित्य प्रायः नहींके बराबर है । लोक-साहित्य प्रचुर मात्रामें है । इसके लिए नागरी लिपि प्रयुक्त होती है ।

गढ़वाली-टिहरी तिब्बती—टिहरी-गढ़वालमें बोली जानेवाली **तिब्बती** (दे०) । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या १०६ के लगभग थी ।

गढ़वाली तिब्बती—गढ़वालमें बोली जानेवाली **तिब्बती** (दे०) । इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ४,३०० थी ।

गढ़वाली भोटिआ—गढ़वालमें बोलीजाने-वाली **तिब्बती** (दे०) का एक अन्य नाम ।

गण—'गण'का अर्थ है 'समूह' । व्याकरणमें किसी भी दृष्टिसे एक प्रकारके शब्दोंके समूहको गण कहा गया है । 'गण'के प्रथम सदस्यके नामपर प्रायः 'गण'का नामकरण किया जाता है । पाणिनिने संस्कृत धातुओं-को दस गणोंमें बाँटा है । हर गणकी धातुओंके रूप एक प्रकारसे बनते हैं । इसीपर यह वर्गीकरण आधारित है । दस गण ये हैं :

(१) **भ्वादिगण**—इस गणकी प्रथम धातु 'भू' (=होना) है । यही गण संस्कृत धातु-के गणोंमें सर्वप्रमुख है । इसमें धातुपाठके अनुसार १०३५ धातुएँ हैं । गम्, गै, जि, दृश्, धृ, नी, पठ्, पा, लभ्, श्रु, स्था, क्रीड्, क्रन्द्, कंप्, चल्, मथ्, आदि इसकी प्रमुख

धातुएँ हैं। (२) **अदादि गण**––धातुपाठके अनुसार ७२ धातुओंका एक गण। इसकी प्रथम धातु 'अद्' (=खाना) है, जिसके आधारपर गणका नाम रखा गया है। इसकी कुछ अन्य धातुएँ अस्, आस्, अधि, इ, ब्रू, या, रुद्, स्ना, तथा हन् आदि हैं। (३) **जुहोत्यादि गण**––धातुपाठके अनुसार २४ धातुओंका एक गण या समूह। इसकी पहली धातु हु (=हवन करना; जिसके रूप जुहोति आदि होते हैं) है। अन्य धातुओंमें दा, धा, भी, हा आदि प्रमुख हैं। (४) **दिवादि गण**––धातुपाठके अनुसार इसमें १४० धातुएँ हैं। इस गणकी पहली धातु दिव् (=जुआ खेलना) है। अन्य धातुएँ जन्, कुप्, विद् आदि हैं। (५) **स्वादिगण**––धातुपाठके अनुसार इसमें ३५ धातुएँ हैं। प्रथम धातु सु (=रस निकालना) है। अन्य धातुएँ आप्, चि, वृ, शक्, आदि हैं। (६) **तुदादि गण**––इसमें १५७ धातुएँ हैं। प्रथम धातु तुद् (=पीड़ा पहुँचाना) है। अन्य धातुएँ इष्, कृत्, कृष् आदि हैं। (७) **रुधादिगण**––इसमें २५ धातुएँ हैं। इस गणकी प्रथम धातु रुध् (=रोकना) है। अन्य धातुएँ, छिद्, भंज्, भुज् आदि हैं। (८) **तनादि गण**––इस गणमें १० धातुएँ हैं। इसकी प्रथम धातु तन् (=फैलना) है। अन्य प्रमुख धातुएँ कृ, आदि हैं। (९) **क्र्यादि गण**––इसमें कुल ६१ धातुएँ हैं। प्रथम धातु क्री (=खरीदना) है। अन्य प्रमुख धातुएँ ग्रह्, ज्ञा, बन्ध, आदि हैं। (१०) **चुरादि गण**––इसमें ४११ धातुएँ हैं। प्रथम धातु चुर् (=चुराना) है। इसकी अन्य प्रमुख धातुएँ गण्, क्षल्, तड्, तप् आदि हैं। व्याकरणिक एकरूपताकी दृष्टिसे भी अनेक प्रकारके शब्दोंके गणोंका उल्लेख मिलता है। जैसे गर्गादि, ऊर्यादि आदि।

गणबोधक विशेषण––(दे०) विशेषण।

गणनात्मक विशेषण––(दे०) विशेषण।

गणनाबोधक विशेषण––(दे०) विशेषण।

गणनावाचक विशेषण––(दे०) विशेषण।

गणावर्तलिपि––बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमें-से एक।

गणितलिव––पन्नवणा सूत्रनामक जैन ग्रंथमें दी गयीं १८ लिपियोंमें-से एक।

गति––'गति'का सामान्य अर्थ 'चाल', या 'चलना' आदि है। व्याकरणमें 'गति'का प्रयोग एकसे अधिक अर्थोंमें हुआ है। 'गतिश्च' (१.४.६०)में पाणिनि प्र, परा आदि उपसर्गोंकी उसे संज्ञा मानते हैं। इन उपसर्गोंके अतिरिक्त कुछ अन्य क्रियाविशेषणीय उपसर्गों (adverbial prefix) जैसे भूषण अर्थमें अलम् ('भूषणेऽलम्'––पाणिनि १.४.६४) आदर-अनादर अर्थमें 'सत्' 'असत्' ('आदरानादरयोः सदसती'–पाणिनि १.४.६३), मध्य अर्थमें अंतर् ('अन्तर् परिग्रहे'-पाणिनि २.४.६५), साक्षात् (पाणिनि १.४.७४), पुरः (पाणिनि १.४.६७) अस्तम् (पाणिनि १.४.६८) अंतर्धान अर्थमें तिरः (पाणिनि १.४.७१) आदिके लिए भी इसका प्रयोग हुआ है। 'ऊरी' आदि निपात क्रियाके योगमें 'गति' कहे गये (ऊर्यादिच्विडाचश्च'–पाणिनि १.४.६१) हैं। इसी प्रकार च्वि, डाच् प्रत्ययोंसे युक्त शब्द भी 'गति' हैं। 'गति'के लिए 'ति'का भी प्रयोग कुछ वैयाकरणोंने किया है। अक्षर या स्वरके फैलने या प्रलंबित होनेके लिए भी प्रातिशाख्योंमें 'गति'का प्रयोग मिलता है। (दे०) 'उपसर्ग', 'समास'।

गतितत्पुरुष समास––(दे०) समास।

गत्यात्मक ध्वनि––श्रुति ध्वनि (दे०)का एक अन्य नाम।

गदबा (gadaba)––मद्रासकी उत्तरी-पूर्वी पहाड़ियोंपर बोलीजानेवाली एक मुंडा (दे०) भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३३,०६६के लगभग थी।

गनन (ganan)––कथा तथा ऊपरी छिन्दविन (बर्मा) में प्रयुक्त 'लूई' भाषा। १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १०२२ थी।

गनव (ganaw)––दनव (दे०) का एक नाम।

गफ़ात (gafat)--**सेमिटिक इथिओपिअन** (दे०) भाषाकी एक बोली ।

गब्रीएलेनो (gabrieleno)--**दक्षिणी केलीफोर्निअन** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

गयिट्कशन (gyitkshan)--**त्सिम्शअन** वर्ग (दे०)की एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

गयोन (gayon)--दक्षिणी अमेरिकाके किसरक्सरा (दे०)परिवारकी एक भाषा ।

गरबार--एक **आर्सेनियन** (दे०) बोली ।

गरुडलिपि--बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयीं ६४ लिपियोंमें-से एक ।

गर्तस्वर (deep vowel)--**पश्च स्वर** (दे०) के लिए कभी-कभी प्रयुक्त एक नाम । मुख-विवरका पिछला भाग बाहरसे देखनेपर भीतर गर्तमें है, इसी कारण वहाँसे उच्चरित स्वर गर्तस्वर कहा गया है ।

गलबिल--(दे०) **उपालिजिह्व** ।

गलिका लिपि (galica)--एक **संगोल लिपि** (दे०) ।

गलो (galo)--**चिलीस** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

गलोवा (galoa)--**म्पांग्वे** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

ग़ल्चा--**पामीरी** (दे०)की एक बोली जो हिन्दुकुश पर्वत तथा पामीरकी तराईमें बोली जाती है ।

ग़ल्चा उपवर्ग--ईरानी भाषाओंके पूर्वी वर्ग-का एक उपवर्ग । पामीरके पठारपर तथा आसपास बोली जानेवाली वख़ी, शिग़नी, सुंजानी, तथा इशाश्मी आदि इसमें आती हैं ।

गल्ला (galla)--**हैमिटिक् इथिओपिअन** (दे०)की एक बोली । इसे इथिओपियामें तथा आसपास लगभग ८०,००,००० लोग बोलते हैं ।

गवरबती (gawar-bati)--चित्रालमें प्रयुक्त एक **दरद** (दे०) भाषा ।

गवली (gavli)--१९११की बंबई जनगणनाके अनुसार, **मराठी** (दे०)का नासिकमें व्यवहृत एक रूप । ग्रियर्सनके मतसे यह **खानदेशी** (दे०)का एक रूप है ।

गहेरी (gaheri)--१८९१की मध्यप्रदेश जनगणनाके अनुसार **हिन्दी** (दे०)की एक बोलीका नाम । अब इसके स्थान आदिका पता नहीं है ।

गहोरा--**बघेली** (दे०)की एक उपबोली जो बाँदा ज़िलेके पूर्वी भागमें बोली जाती है । इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ढाई लाखसे कुछ कम थी । यह व्याकरणके रूपोंकी दृष्टिसे 'तिरहारी'-से बहुत मिलती-जुलती है, पर इसके शब्द-समूहमें बुंदेलीका कुछ मिश्रण है । इसके दो स्थानीय रूप **पथा** (दे०)तथा **अंतरपथा** (दे०)हैं।

गह्वर (valley)--**अक्षर** (दे०)की अनाक्षरिक ध्वनियोंको **गह्वर**, **ढाल** (slope) या घाटी कहते हैं ।

गाँ (ga)--**सूडानवर्ग** (दे०)की एक नीग्रो भाषा । इस भाषाका क्षेत्र गोल्डकोस्ट तथा उसके आसपास है ।

गांडा (ganda)--**लुगांडा** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

गांदा (ganda)--**बांटू** (दे०) परिवारकी विक्टोरिया झीलके उत्तरमें प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा ।

गांदे (gande)--१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **मराठी** (दे०) की, नासिकमें प्रयुक्त, एक बोली ।

गाँववारी--आगरा जिलेके पूर्वी भागमें प्रयुक्त **ब्रजभाषा** (दे०)को दिया गया एक नाम ।

गा--**गाँ** (दे०)का एक अन्य उच्चारण ।

गाओली--**बुंदेली** (दे०)के **छिंदवाड़ा-बुंदेली** (दे०) नामक वर्गका छिंदवाड़ाकी गाओली जातिमें प्रयुक्त, एक मराठीमिश्रित रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १६,०९३ थी ।

गॉटलैंडिक--एक उत्तरी जर्मनिक भाषा, जो गॉटलैंड द्वीपमें बोली जाती है । इसे **गुटनियन** (gutnian) भी कहते हैं । (दे०) **स्वेडिश** ।

गॉथिक लिपि--(१) ग्रीक और लैटिन लिपियोंपर आधारित एक लिपि, जिसमें बाइबिल-

का गॉथिक अनुवाद मिलता है। (२) लैटिन लिपिसे निकली एक लिपि।

गादी—पश्चिमी पहाड़ीकी **चमेआली** (दे०) बोलीकी एक उपबोली। चंबाके समीप भरमौर नामक पहाड़ी प्रदेश (गधरना) में बसने वाले गद्दी लोगोंकी यह बोली है। स्थानके आधारपर इसका एक नाम **भरमौरी** भी है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १४, ९४६ थी।

गामटडी (gamatdi)—**भीली** (दे०) की सूरत और नवसारीमें प्रयुक्त, एक बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ४८,७१५के लगभग थी। इसे **गामटी** भी कहते हैं।

गामटी (gamti)—**गामटडी** (दे०)का एक नाम।

गामडिआ (gamadia)—(१) सामान्यतः **गुजराती**की ग्रामीण बोलियोंके लिए प्रयुक्त एक नाम। इसका एक नाम **ग्राम्य** भी है। (२) **गुजराती** (दे०)की अहमदावादमें प्रयुक्त एक बोलीका नाम।

गाये (gae)—दक्षिणी अमेरिकाके **ज़ापरो** (दे०) परिवारकी एक भाषा।

गारी (gari)—'लाहौल'में प्रयुक्त **लाहुली** (दे०)का एक रूप।

गारुडी (garudi)—**गारोडी** (दे०)का एक अन्य नाम।

गारो (garo)—**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके बड वर्गकी असमकी गारो पहाड़ियोंमें प्रयुक्त एक भाषा। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,३९,७६३ थी।

गारोडी (garodi)—बम्बई और मध्य भारतमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

गार्वी (garwi)—कोहिस्तानमें प्रयुक्त **दरद** भाषा **कोहिस्तानी** (दे०)की एक बोली।

गालिश (gaulish)—गालमें प्राचीन कालमें प्रयुक्त होनेवाली एक **केल्टिक** (दे०) भाषा।

गावित (gavit)—**मावची** (दे०)का एक दूसरा नाम।

गाह्री (gahri)—**बुनन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

गि—**उपसर्ग** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक संस्कृत नाम।

गि (णि) राहइया—पन्नवणासूत्र नामक जैन ग्रंथमें दी गयी १८ लिपियोंमें-से एक।

गितानो (gitano)—स्पेनके जिप्सियोंमें प्रयुक्त एक जिप्सी भाषा।

गित्—**प्रगृह्य** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

गिनिअन—**सूडान भाषा-परिवार वर्ग**का एक अन्य नाम।

गिरासिया (girasia)—**भीली** (दे०)की, मारवाड़ और सिरोहीमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ९०,७००के लगभग थी। इसे **गिरासियाकी बोली** (दे०) भी कहते हैं। इसे कुछ लोगोंने पूर्वी मारवाड़ीका एक स्थानीय रूप माना है।

गिरासियाकी बोली—पूर्वी **मारवाड़ी** (दे०)-का एक स्थानीय रूप जो मारवाड़ और मेरवाड़की सीमाके पहाड़ी भागोंमें भीलों द्वारा प्रयुक्त होता है। इसके अन्य नाम **गिरासिया** (दे०), तथा **न्यारकी बोली** भी हैं। इसे कुछ लोगोंने **भीली** (दे०)की एक बोली भी माना है।

गिरीपारी—**सिरमौरी** (दे०)की सिरमुर तथा जुब्बलमें प्रयुक्त एक उप-बोली। इसके एक रूपका नाम **बिश्शउ** (दे०) है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग ४१,८२३ थी।

गिल्गिती (gilgiti)–**शिणा** (दे०)की, गिलगित घाटी (कश्मीर) में प्रयुक्त, एक बोली।

ग़िल्ज़ाइ (ghilzai)–अफ़गानिस्तानमें कंधार और जलालाबादके बीचमें प्रयुक्त, **पश्तो** (दे०)की उत्तरी-पूर्वी बोलीका एक रूप।

गिल्यक (gilyak) उत्तरी पूर्वी एशियामें एक छोटेसे प्रदेशमें प्रयुक्त एक भाषा। इसके पारिवारिक संबंधका पता नहीं है। इसे

हाइपरबोरियन वर्ग (दे०)का कहा गया है।

गी—**लोट् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

गीतात्मक स्वराघात (musical accent)—**सुर** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

गीर्वानम् (girvanam)—मद्रासमें **पटणूली**-के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

गुअक्सिकेरो (guaxikero)–मध्य अमेरिका-के **लेन्का** (दे०)भाषा-परिवारकी एक भाषा।

गुअची (guachi)—**गुअयकुरु** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

गुअटूसो (guatuso)–**टलमन्क-बरबकोआ** (दे०)वर्गकी एक भाषा। इसकी प्रमुख उपभाषाएँ **टलमन्क** तथा **बोरुक** हैं।

गुअटो (guato)—**दक्षिणी-अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी है।

गुअना (guana)—**मस्कोइ** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

गुअयकुरु (guaykuru)–**दक्षिणी-अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारमें लगभग १० भाषाएँ हैं। जिनमें प्रमुख **मबया-गुअयकुरु**, **गुअची**, **पयगुआ**, **टोबा**, **मोकोवी**, **अबिपोन**, **केरन्डी** आदि हैं। इनमें अंतिमके पारिवारिक संबंधके विषयमें विद्वानोंमें मतभेद है।

गुअरउनो (guarauno)–**दक्षिणी-अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी है।

गुअरयो (guarayo)—**टुपी-गुअरनी** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

गुअहिबो (guahibo)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारमें लगभग नौ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख **कुइव**, **चिरिकोआ**, **कटर्रो**, **चुरोये** आदि हैं।

गुआंचे (guanche)—**हैमिटिक** परिवारकी एक विलुप्त भाषा जो कनारी द्वीपोंमें १७वीं सदी तक बोली जाती थी।

गुआकनहुआ (guakanahua)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा।

गुएटरे (guetare)–दक्षिणी अमेरिकी भाषा **टलमन्क** (दे०)भाषाकी एक विलुप्त बोली।

गुएन्टूसे (guentuse)–**एन्सिमगा** (दे०)परिवारकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

गुऐकेरी (guaikeri)—**करिब** (दे०)परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

गुकू (guku)—**घेको करेन** (दे०)का एक दूसरा नाम।

गुग्ळी (gugli)–१८९१की बड़ौदा जनगणना-के अनुसार 'गुग्ळी ब्राह्मणों' द्वारा प्रयुक्त **कच्छी** (दे०)का एक रूप।

गुजरा (gujara)—(१) कच्छमें **गुजराती** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम। (२) **खानदेशी** (दे०)का एक रूप।

गुजराती—गुजरातकी भाषा। 'गुजरात' शब्द-का संबंध 'गुर्जर' जातिके लोगोंसे है। ये लोग मूलतः शक थे और पाँचवीं सदीके लगभग भारतमें आ गये थे। पहले इनका क्षेत्र पंजाब एवं राजस्थान था, बादमें मुसलमानोंके आक्रमणके कारण गुजरातकी ओर चले गये। उस प्रदेशमें इनको 'त्राण' मिला, इसी कारण वह गुजरात कहलाया। 'गुजरात' शब्द 'गुर्जर+त्रा'से बना माना गया है : गुर्जर+त्रा>गुज्जरत्ता>गुजरत्त>गुजरात। इस प्रकारका विकास माननेका आधार यह है कि आठवीं, नवीं तथा दसवीं सदीके कुछ अभिलेखोंमें 'गुर्जरत्रा-भूमि' तथा 'गुज्जरत्ता' आदि शब्द मिले हैं। गुजरात या गुर्जर देश[1] मूलतः केवल माउंट आबूके उत्तरका प्रदेश था, किंतु बादमें धीरे-धीरे उसके दक्षिणका भाग भी गुजरातके अंतर्गत आ गया। अब कच्छ आदि भी इसमें सम्मिलित है।

१. इसका यह आशय नहीं कि गुजराती जनतामें केवल गुर्जर हैं। यहाँके लोग विभिन्नकालोंमें आये निग्रॉइट, आस्ट्रिक, द्रविड़, आर्य, यूनानी, बैक्ट्रीयन, हूण, सीदिअन, गुर्जर, जादेज, काठी, पारसी तथा अरब आदि एक दर्जनसे अधिक जातियोंके मिश्रण हैं।

'गुजरात' शब्दका प्रयोग यों तो १००० ई०के लगभगसे प्रारंभ हो गया था किंतु भाषाके अर्थमें 'गुजराती' शब्दका प्रयोग अभी तक १७वीं सदीसे पूर्व नहीं मिला है। इसका प्रथम प्रयोग प्रेमानंद (१६४९-१७१४ ई०) 'दशम स्कन्ध'में हुआ है। किंतु इसका यह आशय नहीं कि गुजराती भाषा उस समय तक विकसित नहीं हुई थी। अन्य देशी भाषाओंसे अलग इसे लोग आठवीं सदीमें ही पहचानने लगे थे। उद्योतन सूरिके 'कुवलय माला'में आता है—**'अह पेच्छइ गुज्जरे अवरे।'** ११वीं सदी तक आते-आते भाषा कुछ और विकसित हो गयी, यद्यपि मारवाड़ी आदि राजस्थानी भाषाओंसे इतनी भिन्न नहीं थी कि उसे स्वतंत्र भाषा माना जा सके। जैसा कि प्रसिद्ध इटैलियन विद्वान् तेसितोरीने कहा है, १६०० तक या उसके कुछ बाद तक पश्चिमी राजस्थान तथा गुजरातकी भाषा प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी थी। वर्तमान गुजरातीका सुस्पष्ट रूप १७वीं सदीके मध्यसे दिखायी पड़ने लगता है। इसे **गुर्जरी** भी कहते हैं।

गुजरातीका संबंध शौरसेनी अपभ्रंशके दक्षिणी-पश्चिमी रूपसे है, जैसाकि भौगोलिक स्थितिसे स्पष्ट है। इसे नागर अपभ्रंश भी कहा गया है। गुजराती विद्वान् उमाशंकर जोशी इसे 'मारुगुर्जर' तथा कन्हैयालाल माणिलाल मुंशी गुर्जर अपभ्रंश कहते हैं।

गुजराती साहित्यका प्रारंभ कुछलोग १२वीं सदीसे ही मानते हैं। हेमचंद्रके व्याकरण-में कुछछंद ऐसे हैं जिनको प्राचीन गुजराती-का कहा जा सकता है। १३वीं सदीसे इसके प्राचीन रूपमें नियमित साहित्य रचनाका समारंभ हो गया था। तबसे अब तक उसमें साहित्य रचना हो रही है। प्राचीन गुजराती-के प्रमुख साहित्यकार विनयचंद्रसूरि (१३वीं सदी), राजशेखर (१४वीं सदी) नरसी मेहता (१५वीं सदी) आदि हैं। १४वीं सदी तककी भाषा अपभ्रंशसे बहुत अधिक आक्रांत है। गुजरातीका मध्यकाल 'प्रेमानंद युग' भी कहलाता है। इस युगमें प्रेमानंद तथा अखा प्रसिद्ध हैं।

गुजरातीकी लिपि अपनी है, जो नागरीसे बहुत मिलती-जुलती है। यह शिरोरेखा-विहीन होती है, (दे०) **गुजराती लिपि**। गुजराती भाषा लगभग सात लाख, १० हजार वर्गमीलमें फैली हुई है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या एक करोड़, साढ़े छः लाखके लगभग थी। गुजरातीकी प्रमुख बोलियाँ नागरी, बंबइया, गामडिया, सुरती, अनावला, पूर्वी भड़ौंची, चरोतरी, पाटीदारी, वडोदरी, पट्टनी, काठियावाड़ी (इसमें झालवाडी, सोरठी, हालाडी, गोहिलवाडी आदि उपबोलियाँ आती हैं), बोरासाई, खारवा, पटलूणी, काकरी, तारीमुकी आदि हैं।

गुजराती लिपि—गुजरात प्रदेशमें प्रयुक्त **गुजराती भाषाकी** एक यह लिपि **प्राचीन नागरी लिपि** (दे०) की पश्चिमी शैलीसे निकली है तथा देवनागरीसे बहुत मिलती-जुलती है। इसकी प्रमुख विशेषता इसकी शिरोरेखा विहीनता है। इसमें ळ के लिए भी चिह्न है।

અ આ ઇ ઈ ઉ ઊ ઋ એ ઐ ઓ ઔ

ક ખ ગ ઘ ઙ ચ છ જ ઝ ઞ ટ ઠ ડ

ઢ ણ ત થ દ ધ ન પ ફ બ ભ મ ય

ર લ વ શ-ષ સ હ ળ;

[उपर्युक्त गुजराती वर्णमालामें अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ, क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म, य, र, ल, व, श, ष, स, ह ळ हैं।]

गुजरी––(१) राजस्थानी (दे०)की एक बोली जो पंजाब, उत्तर पश्चिम सीमांत प्रदेश तथा कश्मीरमें बोली जाती है। डॉ० चटर्जी-के अनुसार इसका संबंध 'राजस्थानी'की बोली 'मेवाती'से है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २,९७,६७२ थी। (२) राजस्थानी (दे०) भाषाकी पंजाबके मैदानी भागोंमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १९,३६२ के लगभग थी। इसे **मैदानी गुजरी** भी कहते हैं ।

गुजरू (gujaru)––**गुजराती** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

गुटनियन (gutnian)––**गॉट लैंडिक** (दे०) बोलीका एक अन्य नाम ।

गुण––यास्क, प्रातिशाख्यों तथा पाणिनि आदिमें प्रयुक्त एक पारिभाषिक शब्द । गुणके कई अर्थ हैं। सामान्यतः अधिक प्रचलित अर्थमें यह अ, ए, ओ इन तीन स्वरोंका एक सामूहिक नाम है। पाणिनि कहते हैं : 'अदेङ् गुणः' (१. १. ४५), अर्थात् अ, ए, ओ गुण हैं । (दे०) **स्वर श्रेणी** ।

गुणदर्शी विशेषण––(दे०) **विशेषण** ।

गुणबोधक विशेषण––(दे०) **विशेषण** ।

गुणबोधक संज्ञा––(दे०) **गुणवाचक संज्ञा** ।

गुणवाचक प्रत्यय–एक प्रकारका **प्रत्यय** (दे०)।

गुणवाचक विशेषण––(दे०) **विशेषण** ।

गुणवाचक संज्ञा––(दे०) **संज्ञा** ।

गुणसूचक विशेषण––(दे०) **विशेषण** ।

गुणात्मक संख्यावाचक विशेषण–(दे०) **विशेषण** ।

गुणीय अपश्रुति–एक प्रकारकी **अपश्रुति** (दे०)।

गुन्नग (gunnga) **यिन्बव** (दे०)का एक रूप।

गुप्त भाषा (secret language)––ऐसी भाषाएँ जो कृत्रिम रूपसे गुप्त कार्यों (जैसे-गुप्तचरों, चोरों आदिके)के लिए बनायी या विकसित की जाती हैं। सामान्य भाषा-को सभी लोग सामान्य रूपसे समझ सकते हैं, किन्तु इसके विरुद्ध इसे सब नहीं समझ सकते। (दे०) **भाषा के विविध रूप** ।

गुप्त लिपि––**ब्राह्मी लिपि** (दे०)से निकली लिपि जिसका काल ४थीं––५वीं सदी है । **कुटिल लिपि** (दे०) इसीसे निकली है । गुप्त राजाओंके कालमें प्रयुक्त होनेके कारण इसे गुप्त लिपि कहा गया है ।

[गुप्त लिपिके इस रूपका काल ४थी सदी मध्य है। इसमें क्रमसे अ, इ, उ, ए, क, ख, ग, घ, च, ज, ट, ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म, य, र, ल, व, श, ष, स, ह, ळ अक्षर हैं।]

गुमसरी (gumsari)––गुमसर (आंध्र)में प्रयुक्त एक **उड़िया** (दे०) रूप जो परिनिष्ठित उड़ियासे थोड़ा ही भिन्न है ।

गुरी-बावा (guri-bawa)––**कोडा** (दे०)-का एक जातीय नाम ।

गुरुंग (gurung)––नैपालकी ऊपरी तराईमें प्रयुक्त एक **चीनी परिवार** (दे०)के तिब्बती-बर्मी उपकुलकी भाषा। १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५२११ थी ।

गुरु––**दीर्घ** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम। इसका उलटा 'लघु' है। दीर्घ स्वरोंके अतिरिक्त उन ह्रस्व स्वरोंको भी गुरु कहा गया है, जिनके बाद संयुक्त व्यंजन हो । इसका कारण यह है कि असंयुक्त व्यंजनके पूर्वके ह्रस्व स्वरकी तुलनामें संयुक्त व्यंजनके

पूर्वका स्वर कुछ दीर्घ या गुरु होता है ।

गुरुमुखी (gurumukhi)–**पंजाबी** भाषाके लिए कभी-कभी प्रयुक्त एक नाम । वस्तुतः यह **पंजाबी** (दे०) भाषाकी लिपिका नाम है ।

गुरुमुखी लिपि—**लंडा लिपि** (दे०)का एक सुधरा हुआ रूप । सिक्खोंके दूसरे गुरु अंगद-देवने १६वीं सदीमें इसे बनाया । सिक्खोंमें पंजाबी लिखनेमें इसी लिपिका प्रचार है । इसे पंजाबी लिपि भी कहते हैं ।

ਅ	ਆ	ਇ	ਈ	ਉ
ਊ	ਏ	ੲੈ	ਐ	ਓ
ਔ	ਅੰ	ਆਂ	ਕ	ਖ
ਗ	ਘ	ਙ	ਚ	ਛ
ਜ	ਝ	ਞ	ਟ	ਠ
ਡ	ਢ	ਣ	ਤ	ਥ
ਦ	ਧ	ਨ	ਪ	ਫ
ਬ	ਭ	ਮ	ਯ	ਰ
ਲ	ਵ	ਸ਼	ਖ	ਸ
ੜ				

गुरेग गुआर्ग (gurage)—एक **सेमिटिक इथिओपिअन** (दे०) बोली ।

गुरेज़ी—(gurezi) काश्मीरमें प्रयुक्त **शिणा** (दे०)की एक बोली ।

गुर्जरी—**गुजराती** (दे०)का एक अन्य नाम ।

गुर्बी (gurbi)—१९११की बंबई जनगणनाके अनुसार रीवाकंथामें प्रयुक्त बंजारोंकी एक भाषा । इसका अब पता नहीं है ।

गुर्मा (gurma)—**सूडान वर्ग** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा ।

गुर्वी (gurvi)—**निमाड़ी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

गुल्गुलिआ (gulgulia)—बंगाल, बिहार, उड़ीसा तथा छोटा नागपुरमें प्रयुक्त बंजारोंकी एक **बंजारा** (दे०) भाषा । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ८५३के लगभग थी ।

गुल्ला-निग्रो (gulla negro)—केरोलिअन द्वीपोंपर तथा समीपवर्ती तटीय प्रदेशमें आदिवासियों द्वारा बोली जानेवाली अंग्रेज़ी । यह आदिवासियोंकी भाषासे बहुत प्रभावित है ।

गूजरी—(१) गुजरातमें प्रचारके कारण **हिन्दवी**, **हिन्दी** या **दक्खिनी** का एक नाम । (२) **गुजराती** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

गुजुरी (१) '**गूजरी** (दे०)का कश्मीरमें प्रयुक्त एक रूप । इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार २,५२,६९२के लगभग थी । इसे **कश्मीरी गुजुरी** या **गुजुरी कश्मीरी** भी कहते हैं । (२) गूजरीका, हज़ारामें प्रयुक्त, एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २५,६१९के लगभग थी । इस संख्यामें 'अजिरी' (हज़ाराकी)के बोलनेवाले भी सम्मिलित हैं । इसे **हजारा गुजुरी** भी कहते हैं ।

गृहीत शब्द (foreign या loan word) ऐसे शब्द जो किसी अन्य भाषासे उधार लिये गये हों । इन्हें **विदेशी**, **उधार** या **आगतशब्द** भी कहते हैं । (दे०) **शब्द** तथा **शब्द-समूहमें उधार** उपशीर्षक ।

गृह्य शब्द (domesticated word)—किसी भाषामें गृहीत विदेशी शब्द, जो अपने मूल रूपमें प्रयुक्त हो रहा हो । जैसे हिन्दीमें अंग्रेज़ी शब्द 'बैंक' ।

गेंटू (gentoo)—**तेलुगु** (दे०)का एक प्राचीन नाम । वस्तुतः यह पुर्तगाली gentio का एक विकृत रूप है । पुर्तगाली gentio (gentile) नामका हिन्दुओंके लिए तथा mouro (moor) नामका मुसलमानोंके लिए प्रयुक्त करते थे ।

गे'ज़ (ge'ez)–**सेमिटिक इथिओपिअन** (दे०) का एक अन्य नाम ।

गेबा (geba)—**करेन** (दे०)का एक रूप । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ११,१६०के लगभग थी ।

गेबो करेन (gebo karen)—**गेबा** (दे०) का एक नाम ।

गेली प्रयोग (galicism)—अंग्रेज़ीमें ऐसा प्रयोग जो मूलतः स्कॉटलैंडका हो ।

गेलेकीदुओर (geleki-duor)—**अंगवांकू** का (दे०) एक नाम ।

गैलिश्यन (galician)—इबेरिअन अंतरीप (स्पेनके एक भाग)में गैलिशियामें प्रयुक्त एक बोली, जिसे **पुर्तगाली** (दे०) भाषाकी एक बोली माना जाता है । यों इसमें स्पैनिश-के तत्त्व भी हैं । इस बोलीको स्पेनी लोग **गैलेगो** (gallego) कहते हैं । इसके बोलने-वालोंकी संख्या ३० लाखके लगभग है । यह बोली सुसंस्कृत तथा साहित्य-सम्पन्न है । इसे **गैलिसिअन** भी कहते हैं ।

गैलेगो (gallego)—**गैलिश्यन** (दे०) बोलीका एक अन्य नाम ।

गैलोआ (galoa)—**बांटू** परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा इसे **म्पांग्वे** (mpongwe) भी कहते हैं ।

गैलो-इटालवी (gallo-italian)—इटली-में प्रयुक्त कुछ रोमांस बोलियों (**एमिलियन, लम्बर्द, लिगूरिअन, पीदमांतीज़**)के लिए प्रयुक्त एक सामूहिक नाम । इन बोलियों-में फ्रांसीसी और इतालवी दोनों ही भाषाओं-से कुछ-कुछ समानताएँ हैं, इसी कारण इन्हें यह नाम दिया गया है ।

गैस्कन (gascan)—गैस्कनीमें प्रयुक्त एक फ्रांसीसी बोली ।

गोंडवाणी–(दे०) **गोंडवानी** तथा गोंडाणी ।

गोंडवानी—**बघेली** (दे०)का मांडलामें प्रयुक्त एक विकृत रूप । इसे 'मांडला'में प्रयुक्त होनेके कारण '**मंडलाहा**' भी कहते हैं । गोंड़ों द्वारा प्रमुखतः प्रयुक्त होनेके कारण 'गोंड-वानी' नाम पड़ा है । इसे **गोंडी** या **गोडणी** भी कहते हैं ।

गोंडाणी—रीवाँ और मांडलामें गोंडों द्वारा प्रयुक्त **बघेली** (दे०)का एक नाम । इसे **गोंडी, गोंडवाणी** तथा '**गोंडवानी**' भी कहते हैं ।

गोंडी—(१) **द्रविड़ परिवार** (दे०)की एक भाषा । इसका क्षेत्र बुंदेलखंडमें विंध्य-प्रदेशीय इलाका, उड़ीसा तथा पूर्वी मद्रास आदि है । व्याकरणकी दृष्टिसे यह तमिलके समीप ज्ञात होती है । यों कन्नड़ और तेलुगु-का भी प्रभाव है । इसके बोलनेवाले जंगली हैं । इसकी कोई लिपि नहीं है । परिनिष्ठित बोलीके अतिरिक्त **गट्टू, कोइ, पर्जो, मड़िया** आदि इसकी प्रमुख बोलियाँ हैं । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या १३,२२,१९०थी । इसके बोलनेवाले गोंड हैं इसीलिए इसे **गोंडी** या **गोंड** कहतेहैं । (२) **गोंडाणी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

गोंदला (gondla)—**रंगलोई** (दे०)का एक अन्य नाम ।

गोआक्सिरो (goaxiro)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा । इसका क्षेत्र उत्तरी आमेज़न तथा ओरिनोको है ।

गोआनी (goanese)—गोआमें प्रयुक्त **कोंकणी** (दे०)का एक नाम ।

गोजरी (gojari)—**गुजरी** (दे०)का एक नाम ।

गोट्टे (gotte)—**गट्टू** (दे०)का एक अन्य नाम ।

गोड़वाड़ी—'दक्षिणी मारवाड़ी'का एक स्था-नीय रूप जो मारवाड़ तथा किशनगढ़के 'गोड़वाड़' कहे जाने वाले भागमें बोला जाता है । मारवाड़ीके इस रूपपर **गुजराती, भीली** तथा **मालवी**का प्रभाव पड़ा है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या लगभग १,४७,००० थी । (दे०) **मारवाड़ी** ।

गोड़ावाटी—'पूर्वी मारवाड़ी'का एक स्थानीय रूप जो किशनगढ़में बोला जाता है । इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वे-क्षणके अनुसार १५,००० थी ।(दे०) **मार-वाड़ी** ।

गोथिक (gothic)—एक विलुप्त पूर्व जर्म-निक भाषा ।

गोथोनिक—**जर्मनिक** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

गोपाल (gopal)—बरारके बंजारोंकी एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

गोमांतकी (gomantaki)–**कोंकणी** (दे०) का एक अन्य नाम।

गोरखपुरी—**उत्तरी भोजपुरी** (दे०) का एक स्थानीय रूप जो पूर्वी गोरखपुर, पड़रौना, देवरिया तथा हाटाके आसपास बोला जाता है। इसको **गोरखपुरिया** भी कहते हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,३०७,५०० थी।

गोर्खाली (gorkhali)–(१) **नैपाली** (दे०)-को दिया गया एक नाम। (२) खेरी (उ० प्र०) में थारू लोगों द्वारा प्रयुक्त **अवधी** (दे०) को दिया गया एक अशुद्ध नाम।

गोर्खिया (gorkhiya)—**गोर्खाली** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

गोलरी (golari)—(१) चाँदामें, 'गोलर' लोगों द्वारा व्यवहृत एक **तेलुगु** (दे०) बोली-(२) **कन्नड़** (दे०) की एक बोली। यह मध्यप्रदेशमें चाँदाको छोड़कर अन्यत्र गोलर नामक घुमक्कड़ जाति तथा होलिया नामक चमड़ेका काम करनेवाली तथा गानेवाली जाति द्वारा बोली जातीहै। इस बोलीको **होलिया** भी कहते हैं। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ३,६१४ थी।

गोल्ल (golla)—१८९१ तथा १९२१ की बम्बई जनगणनाके अनुसार बीजापुर तथा धारवाड़में गोल्ल लोगों द्वारा प्रयुक्त **तेलुगु** (दे०) का एक रूप।

गोल्ली—**बंगाली** (दे०) भाषाके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

गोवरो (gowro)—**गौरो** (दे०) का एक अन्य नाम।

गोवारी (govari)—छिंदवाड़ा, चाँदा और भंडारामें प्रयुक्त, **मराठी** (दे०) का एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,६५० के लगभग थी।

गोहिल्वाडी (gohilwadi)—काठियावाड़में प्रयुक्त, **काठियावाड़ी** (दे०) बोली ('गुजराती' की) का एक रूप। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ६,३१,००० के लगभग थी।

गौंगतो (gaungto)—**जयेइन** (दे०) का बर्माके दक्षिणी शान प्रांतमें प्रयुक्त एक रूप।

गौंदन (goundan)—**तमिल** (दे०) का एक नाम। वस्तुतः यह मद्रासकी 'तमिल' भाषी जातिका नाम है।

गौड अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०) का एक भेद।

गौडिआ (gaudia)—उत्तरी बंगालीका एक नाम। १८९१ की मद्रास जनगणनाके अनुसार **उड़िया** (दे०) का एक नाम।

गौड़ी—(१) **मागधी प्राकृत** (दे०) का एक अन्य नाम। (२) **बंगाली** (दे०) भाषाके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

गौड़ी अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०) का एक रूप।

गौडो (gaudo)—**गोडिआ** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

गौण—जो प्रमुख न हो।

गौण कर्म—(दे०) **कर्म**

गौण ध्वनिग्राम (secondary phoneme) —(दे०) **ध्वनि-गुण**।

गौण बलाघात—**बलाघात** (दे०) का एक भेद।

गौण मान स्वर—**अप्रधान मान स्वर** (दे०) का एक अन्य नाम

गौण वाक्य—(दे०) **समुच्चय बोधक अव्यय**।

गौणातिगौण बलाघात—**बलाघात** (दे०) का एक भेद।

गौणी लक्षणा—एक प्रकारकी लक्षणा। (दे०) **शब्द-शक्ति**।

गौरो (gauro)—सिंध कोहिस्तानमें प्रयुक्त **तोर्वाली** (दे०) का एक नाम।

गौर्जर अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०) का एक भेद।

ग्नमेइ (gnamei)—**अंगामी** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

ग्यामी (gyami)—**चीनी परिवार** (दे०) की, तिब्बत तथा पश्चिमी चीनके मध्यवर्ती क्षेत्रमें प्रयुक्त, एक बोली।

ग्यारुंग (gyarung)—**भोटिआ** (तिब्बत-

की) का, पूर्वी तिब्बतमें प्रयुक्त एक रूप। (दे०) भोटिआ (तिब्बतकी)।

ग्रंथ—वस्तुतः यह एक लिपि (दे०) ग्रंथलिपि का नाम है, किन्तु कभी-कभी **तमिल** (दे०) के लिए भी प्रयुक्त हुआ है।

ग्रंथ लिपि—ब्राह्मीकी दक्षिणी शैली (दे०) ब्राह्मीलिपिसे विकसितएक लिपि। **तमिललिपि** (दे०) अपूर्णलिपि है, इसी कारण उस क्षेत्रमें संस्कृत ग्रंथोंके लेखनमें ग्रंथ लिपि प्रचलित रही है। ग्रंथोंमें प्रयुक्त होनेके कारण इसे 'ग्रंथ लिपि' कहते हैं। इसका काल ७वीं सदीसे १५वीं तक है। इस कालकी लिपिको प्राचीन **ग्रंथलिपि**, तथा उसके बादकी लिपिको **आधुनिक ग्रंथलिपि** कहते हैं। **मलयालम लिपि** और **तुलू लिपि** भी ग्रंथ लिपिसे ही निकली मानी जाती हैं।

ग्रंथि-लिपि (knot script या knot device) रस्सी, छाल, कपड़े आदिमें गाँठ देकर भाव व्यक्त करने या स्मरण रखनेकी पद्धति। यह सूत्रलिपि (दे०) का एक रूप है।

ग्रबर (grabar)—भारोपीय परिवारकी प्राचीन **आर्मेनियन** भाषा, जो मंत्र आदिकी भाषाके रूपमें कर्मकांडों आदिमें अब भी प्रयुक्त होती है।

ग्रामीण भाषा—**अपभ्रंश** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

ग्राम्य—(१) नमि साधुके अनुसार **अपभ्रंश** (दे०) का एक भेद। (२) (gramya) **गामडिआ** (दे०) का एक नाम।

ग्राम्य भाषा—(१) ऐसी भाषा जो ग्रामीण क्षेत्रों या असंस्कृत लोगोंमें प्रयुक्त होती हो। यह नगरोंकी या परिनिष्ठित भाषासे कुछ विकसित होती है, किंतु उससे निम्नस्तरकी और भ्रष्ट मानी जाती है। **पैशाची प्राकृत** (दे०) का एक अन्य नाम।

ग्राम्य लैटिन—**वल्गर लैटिन** (दे०) का एक अन्य नाम।

ग्रिम-नियम—एक **ध्वनि-नियम** (दे०)।

ग्रीक—भारोपीय परिवारकी केंतुम शाखाकी एक उपशाखा। इसे **हेलेनिक** उपशाखा भी कहते हैं। इस शाखामें मूलतः ग्रीक या यूनानी भाषा एक थी। बोल-चालकी भाषाके समुन्नत होकर यही **क्लासिकल ग्रीक** बनी। क्लासिकल ग्रीकका होमरिक साहित्य १००० ई० पू० के लगभगका है। उस समय तक ग्रीककी कई बोलियाँ विकसित हो चुकी थीं। होमरिक ग्रीकमें यों तो प्रमुख ग्रीक बोली **आयोनिकका** प्रयोग है किंतु कुछ अन्य बोलियोंका भी मिश्रण है। भौगोलिक कारणोंसे ग्रीककी अनेक बोलियाँ हो गयी थीं, जिनमें **आयोनिक** (एजिअन द्वीप तथा आसपास प्रयुक्त), **ऐटि्टक** (एटि्टका की बोली; यह मूलतः आयोनिककी एक शाखा है) वर्तमान ग्रीकका विकास इसीसे हुआ है। एटि्टकके विकसित रूपका नाम **कोइने** था।), **एओलिक** (एओलिस तथा ब्रोसोटिआमें प्रयुक्त), तथा डोरिक (दे०) (पिंडारने इसीका प्रयोग किया है; क्रीट, स्पार्टा, उत्तरी यूनान आदि इसका क्षेत्र है) आदि प्रमुख हैं। इनमें पहली बोली अर्थात् आयोनिकके **प्राचीन आयोनिक** या **एनिक** (होमरकी भाषा), तथा **नवीन आयोनिक** (हेरोडोटस आदिकी भाषा) दो उपभेद हैं। ग्रीक भाषाको विकासकी दृष्टिसे आदिकाल (आरंभसे ३री सदी तक), उत्तरकाल (छठीं सदी तक), मध्यकाल (१५वीं सदी तक), आधुनिककालमें बाँटा जाता है। प्राचीन ग्रीकमें वैदिक संस्कृतकी तरह संगीतात्मक स्वराघात था, किंतु आधुनिक ग्रीकमें यह बात नहीं है। आधुनिक ग्रीकके प्रमुखतः **रोमइक** (romaic) तथा **नवहेलेनिक** (neo-hellenic) दो रूप हैं। प्रथम बोलचालकी विकसित ग्रीक है। दूसरीमें पुराने तत्त्व (शब्द, मुहावरे) सुरक्षित हैं। यूनानी साहित्यमें होमरके इलियड, ओडिसी बहुत प्रसिद्ध हैं। भाषावैज्ञानिक दृष्टिसे ग्रीकका बहुत मूल्य है। इसमें अव्यय और क्रिया आदिके रूप संस्कृतकी तुलनामें अधिक हैं, जिनसे मूल भारोपीय भाषाके जाननेमें बहुत सहायता मिली है। ग्रीकमें संस्कृतकी तुलनामें स्वर भी अधिक

हैं। उसने मूल भारोपीय स्वरोंको अपेक्षाकृत अधिकको सुरक्षित रखा है। वर्तमान ग्रीक भाषा ग्रीस, ग्रीक तुर्की, क्रीट, साइप्रस आदिमें बोली जाती है। ग्रीकके कुछ अन्य नए-पुराने रूप-उपरूप **डीमॉटिक ग्रीक** (दे०) **आकीऐन** (दे०), **लोकोनिअन** (दे०), **त्सैकोनिअन** (दे०), **मेसेनिअन** (दे०), **अर्गोलिक** (दे०) तथा **क्रीटन** (दे०) आदि भी हैं। ग्रीकको **यूनानी** या **यवनानी** भी कहते हैं।

ग्रीक लिपि—यूनानमें प्रचलित लिपि **सामी लिपि** (दे०)की उत्तरी शाखासे इसकी उत्पत्ति मानी गयी है। यूनानी परंपरामें इसकी उत्पत्तिके संबंधमें कई जनश्रुतियाँ प्रचलित हैं किंतु उनमें सत्यकी मात्रा प्राय: नहींके बराबर है। इसपर कुछ लोग **फ़ोनीशियन लिपि** (दे०)का भी प्रभाव मानते हैं। ग्रीक लिपिकी उत्पत्ति ११वीं सदी ई० पू० के आसपास हुई। यह पहले अन्य सामी लिपियोंकी भाँति दायेंसे बायेंको लिखी जाती थी, किंतु बादमें ५०० ई० पू० के बादसे इसे बायेंसे दायें लिखने लगे। ग्रीकलिपिके विकसित रूप पूर्वी और पश्चिमी दो वर्गोंमें रखे जा सकते हैं। **आयोनिक लिपि**, तथा **डोरिअन लिपि** पूर्वीमें आती हैं, तथा **चैल्सिडिअन लिपि, लोक्रिअन लिपि** तथा **बोटिअन** आदि पश्चिमीमें। ग्रीकलिपि अत्यन्त वैज्ञानिक लिपि है। व्यंजनात्मक सामी लिपिपर आधारित होते हुए भी इसमें सामी लिपिकी खराबियाँ नहीं हैं और इसमें स्वरोंको भी व्यंजित करनेकी शक्ति है। इसमें कुल २४ चिह्न हैं। एत्रुस्कन, रूसी आदि लिपियाँ ग्रीकलिपिसे ही निकली हैं।

Αα Ββ Γγ Δδ Εε

Ζζ Ηη Θθ Ιι Κκ

Λλ Μμ Νν Ξξ Οο

Ππ Ρρ Σσς Ττ Υυ

Φφ Χχ Ψψ Ωω

ग्रूसिनिअन (grusinian)–**जार्जिअन** (दे०) का एक अन्य नाम।

ग्रे (gre)–**सूडानवर्ग** (दे०) वर्गकी, लाइबेरिया तथा आइवरी कोस्टके पास प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा। इसे **ग्रेबो** भी कहते हैं।

ग्रैसमैन-नियम—एक ध्वनि-नियम (दे०)।

ग्रोस-वेन्ट्रे (gros-ventre)—**अरपहो वर्ग** (दे०)की एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

ग्लॉसिमैटिक्स (glossematics)—**ध्वनिग्राम विज्ञान** (दे०) की तरहका एक विज्ञान। जिस प्रकार ध्वनिग्राम विज्ञानमें किसी भाषाके ध्वनिग्रामोंका पता लगाया जाता है, उसी प्रकार इसमें ग्लासीम (glossime)का पता लगाते हैं। ग्लासीम ब्लूमफ़ीलमके शब्दोंमें लघुतम सार्थक भाषिक इकाई (smallest meaningful linguistic unit) है, किंतु इस विज्ञानमें यह कुछ और अधिक अर्थ रखता है। यह अर्थ परिवर्तनकी शक्ति रखने वाली लघुतम ध्वन्यात्मक इकाई भी है। ग्लासिमैटिक्सके विकासका श्रेय हेम्स्लेव (hjelmslev)को है। ग्लासीमोंमें द्विपार्श्वविरोध (two way contrast) होता है। ग्लासिमैटिक्सके सिद्धांत बहुत जटिल हैं। इसमें बीजगणितकी सहायता ली जाती है। इसकी दुरूहता देखकर बहुतसे भाषाविज्ञान-वेत्ताओंने कहा है कि भाषा-विज्ञान जहाँ समाप्त होता है, ग्लासिमेंटिक्स वहाँ शुरू होता है।

ग्लॉसीम (glosseme) **ग्लासिमैटिक्स** (दे०)।

ग्लॉसेमेटिक स्कूल–(दे०) **कोपेनहैगेन केन्द्र**।

ग्लैगोल लिपि—**ग्लैगोलिटिक लिपि** (दे०)का एक अन्य नाम।

ग्लैगोलिटिक लिपि (glagolitic)—स्लाविक लोगों द्वारा प्रयुक्त एक प्राचीन लिपि। इसे **ग्लैगोललिपि** या **ग्लैगोलित्सा** (glagolitsa) लिपि भी कहते हैं। यह ९वीं सदीमें **ग्रीक लिपि** (दे०)के आधारपर बनायी गयी थी। अब, इसका, सामान्य प्रयोग तो नहीं होता, किंतु दलमातिआ आदिमें कैथलिक धर्मकी पुस्तकों आदिमें

अब भी यह प्रयुक्त होती है ।

ग्लैगोलित्सा लिपि (glagolitsa)—**ग्लैगोलिटिकलिपि** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ग्वॉइडेलिक (goidelic)—**भारोपीय परिवार** (दे०)की आयरिश, स्कॉटगैलिक तथा मैंक्स, इन तीन केल्टिक भाषाओंके वर्गका एक सामूहिक नाम ।

ग्वायन (guayana)—दक्षिणी अमेरिकाके **जे** (दे०) परिवारके दक्षिणी वर्गकी एक भाषा । इसका अन्य नाम **वैंगन्न** है ।

ग्वालियरी—**ब्रजभाषा** (दे०)के लिए मध्ययुग (१७वीं सदी तथा उसके बाद)में प्रयुक्त एक नाम ।

घ

घंटी—**अलिजिह्व** (दे०)का एक अन्य नाम।

घ—'तरप्' (उत्तरावस्था) और तमप् उत्तमावस्था प्रत्ययोंको पाणिनिने 'घ' नाम दिया है। **तरप् तमपौघः** (अष्टाध्यायी १.१.२२)

घकार—घ् के लिए प्रयुक्त नाम । (दे०) **कार** ।

घटमान भविष्य—(दे०) **काल** ।

घटमानभूत—(दे०) **काल** ।

घटमान वर्तमान—(दे०) **काल** ।

घर्ष—**संघर्षी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

घर्षक—**संघर्षी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

घाटा-वार-ची वर्हाडी (ghata-var-chi varhadi)–बरारमें प्रयुक्त **वर्हाडी** (दे०) बोली (मराठी भाषाकी)का एक रूप ।

घाटी—(१) पश्चिमी घाटमें,(कोलाबा तथा भोरके बीचमें) प्रयुक्त, **कोंकणी** (दे०)का एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २००० के लगभग थी । (२) **गह्वर** (दे०)का एक अन्य नाम ।

घिसाडी (ghisadi)—**तारीमूकी** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

घी—**लङ लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

घृणाबोधक अव्यय–(दे०) **मनोविकार बोधक अव्यय** ।

घेकोकरेन (gheko karen)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **करेन** (दे०)का एक रूप ।

घेग (gheg)—उत्तरी अल्बानियामें तथा उसके आसपास प्रयुक्त एक अल्बानियन बोली ।

घेत्ली (ghetli)—१८९१ की मध्यप्रदेश जन गणनाके अनुसार **मराठी** (दे०)का रूप अब इसका पता नहीं है ।

घेबी (ghebi)—**लहंदा** (दे०)की उत्तरी-पूर्वी बोलीका एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ९०,३०८के लगभग थी ।

घोगारी (ghogari)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार एक **बंजारा** (दे०) भाषा ।

घोष (voice, voiced)—स्वर-तंत्रियोंके आधारपर किया गया, ध्वनियोंका एक भेद । ऐसी ध्वनियाँ, जिनके उच्चारणके समय स्वरतंत्रियाँ (दे०) **स्वरतंत्री** एक दूसरेके पर्याप्त समीप रहती हैं, **घोष या सघोष** कहलाती हैं । घोष ध्वनियोंके उच्चारणमें, स्वरतंत्रियोंके समीप रहनेके कारण, भीतरसे आती हुई हवा या निःश्वास घर्षण करती है, अतः स्वरतंत्रियोंमें कंपन होता है । यह कंपन ही, ऐसी ध्वनियोंके घोषत्वका कारण बनता है । क वर्ग, प वर्ग आदि पाँचों वर्गों के अंतिम तीन व्यंजन (अर्थात् ग, घ, ङ, द ध न आदि) तथा ज़, य, र, ल, व, ह आदि घोष व्यंजन हैं । कुछ अपवादोंको छोड़कर सभी स्वर घोष होते हैं । (दे०) **अघोष शारीरिक-ध्वनिविज्ञानमें स्वरयंत्र, स्वरयंत्रमुख, स्वरतंत्री** उपशीर्षक, **व्यंजनोंकावर्गीकरण**; और **स्वरोंका**

वर्गीकरण ।

घोषवत्—जो **घोष** (दे०) हो । इसे **घोष** या **सघोष** भी कहते हैं ।

घोष व्यंजन (voiced या voice consonant)—(दे०) **घोष** ।

घोष-स्वर (voiced vowel)—ऐसे स्वर जिनके उच्चारणमें स्वरतंत्रियोंमें कंपन होता है प्रायः सभी स्वर घोष होते हैं । (दे०) **घोष; शारीरिक ध्वनिविज्ञान** में **स्वरयंत्र, स्वरयंत्रमुख** और **स्वरतंत्री** उपशीर्षक; तथा **स्वरोंका वर्गीकरण** ।

घोषीकरण (vocalization) ध्वनि-परिवर्तनका एक रूप या उसकी एक दिशा । (दे०) 'ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ' । कभी-कभी ऐसा होता है कि शब्दमें कोई **अघोष** (दे०) ध्वनि **घोष** (दे०) हो जाती है । यह परिवर्तन भाषाविज्ञानमें 'घोषीकरण' कहलाता है । उदाहरणार्थ संस्कृत 'काक'का हिन्दी 'काग' या 'कागा' । यहाँ अघोष व्यंजन 'क' परिवर्तित होकर घोष व्यंजन 'ग' हो गया है । इसी प्रकार 'कंकण' से 'कंगन' या 'शाक'से 'साग' आदि । इसके लिए घोषीभवन कदाचित् अधिक अच्छा नाम हो सकता है । **घोषीकरण** का उलटा **अघोषीकरण** (दे०) होता है ।

घोषीभवन—**घोषीकरण** (दे०)का एक अन्य नाम ।

घ्यप्—**कृत्य** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

च

चंग (chang)—**अचंग** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

चंगसेन (changsen)—**थाडो** (दे०)का एक रूप ।

चंदन अंग्रेज़ी (sandal wood English)—**बीच-ला-मर** (दे०)का एक अन्य नाम ।

चंदारी (chandari)—**हलबी** (दे०)का एक रूप ।

चंद्र (breve)—स्वरकी ह्रस्वता या कभी-कभी कुछ और द्योतित करनेके लिए स्वरोंपर लगाया गया चिह्न (˘) इसे **चंद्राकार** भी कहते हैं ।

चंद्रबिन्दु—देवनागरी लिपिका ँ चिह्न, जो स्वर (आँ, उँ) या व्यंजन (कँ, वँ) को अनुनासिक रूप देनेके लिए प्रयुक्त होता है । यदि शिरोरेखाके ऊपर कोई मात्रा हो तो चंद्रबिंदुके स्थानपर केवल बिंदु (जैसे-मैं में थीं) का प्रयोग होता है ।

चंद्राकार—**चंद्रा** (दे०)का एक अन्य नाम ।

चंपा (champa)—चम्पा नामक जाति द्वारा लद्दाखमें प्रयुक्त एक **भोटिया** (दे०)-की बोली ।

चंफंग (champhang)—मणिपुरमें प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०)की एक कूकी-चिन भाषा । ग्रियर्सनके अनुसार इसके स्थानका ठीक पता नहीं है ।

चंबा लाहुली (chamba lahuli)—चम्बामें प्रयुक्त, **चीनी परिवार** (दे०)की एक तिब्बती-बर्मी भाषा । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,३८७ के लगभग थी ।

चंबिआली (chambeali)—**चमेआली** (दे०)का एक अन्य नाम ।

चकार—**च** के लिए प्रयुक्त नाम । (दे०) **कार** ।

चकुर (chakur)—**काकेशस परिवार** (दे०)-की काकेशसमें प्रयुक्त एक भाषा ।

चकृवत्—**लिट्लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

चक्रलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयीं ६४ लिपियोंमें-से एक ।

चक्रिमा (chakrima)—**चीनीपरिवार** (दे०) की अंगामी-नागा भाषाकी नागा पहाड़ियों (असम)में प्रयुक्त एक बोली । इसमें **दज़ुन 'केहेन** और **नाली** उप-बोलियाँ भी सम्मि-

लित हैं । इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ८,५१०के लगभग थी ।

चक्रोमा (chakroma)—**तेंगिमा** (दे०) बोलीका नागा पहाड़ियों (असम)में प्रयुक्त एक रूप ।

चग़ताई—**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी तुर्की शाखाके मध्य वर्गकी एक भाषा ।

चग्गा (chagga)—**बांटू** (दे०)परिवारकी किलिमंजारोमें प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा ।

चचदी (chachadi)—आँध्रमें चचदी जाति द्वारा बोली जानेवाली **तेलुगु**, मिश्रित **ओड़िया** (दे०)का एक रूप ।

चटगाइया (chatgiya)—दक्षिणी-पूर्वी बंगाली (दे०)का एक अन्य नाम ।

चटिनो (chatino)—मध्य अमेरिकाके **जपोटेक** (दे०) परिवारकी एक भाषा ।

चतुःसंयुक्त स्वर (tetraphthong)—चार स्वरोंके संयोगसे बना स्वर ।

चतुर्थबलाघात—**बलाघात**(दे०)का एक रूप ।

चतुर्थी तत्पुरुष समास—(दे०) **समास** ।

चतुर्थी बहुव्रीहि समास—(दे०) **समास** ।

चतुर्थी संप्रदान कारक—(दे०) **कारक** ।

चतुर्वचन (quatrial number)—शब्दका वह रूप जिससे चारका बोध हो । (दे०) **वचन** ।

चत्रारी (chatrari)—**खोवार** (दे०)का एक नाम ।

चन-बेगुआ (chana-begua)—**चरूआ** (दे०)परिवारकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

चनावन(chanawan)—**चिनाबड़ी**(दे०) भाषाका एक दूसरा नाम ।

चन्गिन (changina)—**डोरस्क–गुअयनी** (दे०) वर्गकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

मुख्य हूअची, पबुभवा, टूरा, अरिकेम,रोको-

चपकुरा (chapakura)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग**(दे०)का एक भाषा-परिवार । इस परिवारमें १५के लगभग भाषाएँ हैं ? जिनमें

रोन, ओकोरोनी आदि हैं ।

चपोगिर (chopogir)—**तुंगुस** (दे०) भाषाकी एक बोली ।

चम (cham)—फ्रांसीसी इंडोचाइनामें प्रयुक्त एक भाषा जो **आस्ट्रिक परिवार** (दे०)की है ।

चमकोको (chamakoko)—**समुकु**(दे०) परिवारकी एक दक्षिण अमेरिकी भाषा ।

चमरवा—'पश्चिमी हिंदी'की बोली **बाँगरू** (दे०)का, दिल्लीके ग्रामीण भागोंके चमारोंमें प्रयुक्त, एक स्थानीय तथा जातीय रूप ।

चमेआली—**पश्चिमी पहाड़ी** (दे०)की एक बोली जो चंबाके आसपास बोली जाती है । इसके चार स्थानीय रूप—परिनिष्ठित **चमेआली, गादी** या **भरमौरी, चुराही** तथा **पंगवाली** हैं । परिनिष्ठित चमेआली इन सबके केन्द्रमें चंबाके समीपवर्ती क्षेत्रमें बोला जाता है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या६३,३३८ थी ।

चमेआली लिपि—चंबा प्रदेशकी भाषा चमेआली(दे०)**पहाड़ी**की लिपि । इसकी उत्पत्ति **शारदा लिपि** (दे०)से हुई है ।

चम्टी (chamti)—मध्यप्रदेशकी १९२१की जनगणनाके अनुसार अलीराजपुर और झबुआमें मात्र ५७ व्यक्तियों द्वारा प्रयुक्त एक **भीली** (दे०) बोली ।

चरका (charka)—**अयमर** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

चरण (foot)—छंदका एक पद । मात्रिक छंदोंमें इसमें निश्चित मात्राएँ तथा वार्णिकमें निश्चित वर्ण होते हैं ।

चरोतरी (charotari)—**गुजराती**(दे०)की, महिकंथा, कैरा (बम्बई) आदिमें प्रयुक्त एक बोली ।

चर्च स्लैवोनिक—(दे०) **स्लैवोनिक** ।

चरुआ परिवार (charrua)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार । इस परिवारमें लगभग ७ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख, **चरुआ, खास, बोहने, चन-बेगुआ** आदि हैं । इस परिवारकी सभी भाषाएँ

वर्गीकरण ।

घोषवत्—जो **घोष** (दे०) हो। इसे **घोष** या **सघोष** भी कहते हैं ।

घोष व्यंजन (voiced या voice consonant)—(दे०) **घोष** ।

घोष-स्वर (voiced vowel)—ऐसे स्वर जिनके उच्चारणमें स्वरतंत्रियोंमें कंपन होता है प्रायः सभी स्वर घोष होते हैं। (दे०) **घोष; शारीरिक ध्वनिविज्ञान** में **स्वरयंत्र, स्वरयंत्रमुख** और **स्वरतंत्री** उपशीर्षक; तथा **स्वरोंका वर्गीकरण** ।

घोषीकरण (vocalization) ध्वनि-परिवर्तनका एक रूप या उसकी एक दिशा । (दे०) 'ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ'। कभी-कभी ऐसा होता है कि शब्दमें कोई **अघोष** (दे०) ध्वनि **घोष** (दे०) हो जाती है। यह परिवर्तन भाषाविज्ञानमें 'घोषीकरण' कहलाता है । उदाहरणार्थ संस्कृत 'काक'का हिन्दी 'काग' या 'कागा' । यहाँ अघोष व्यंजन 'क' परिवर्तित होकर घोष व्यंजन 'ग' हो गया है। इसी प्रकार 'कंकण' से 'कंगन' या 'शाक'से 'साग' आदि । इसके लिए घोषीभवन कदाचित् अधिक अच्छा नाम हो सकता है। **घोषीकरण** का उलटा **अघोषीकरण** (दे०) होता है ।

घोषीभवन—**घोषीकरण** (दे०)का एक अन्य नाम ।

घ्यप्—**कृत्य** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

च

चंग (chang)—**अचंग** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

चंगसेन (changsen)—**थाडो** (दे०)का एक रूप ।

चंदन अंग्रेजी (sandal wood English)—**बीच-ला-मर** (दे०)का एक अन्य नाम ।

चंदारी (chandari)—**हलबी** (दे०)का एक रूप ।

चंद्र (breve)—स्वरकी ह्रस्वता या कभी-कभी कुछ और द्योतित करनेके लिए स्वरोंपर लगाया गया चिह्न (˘) इसे **चंद्राकार** भी कहते हैं ।

चंद्रबिन्दु—देवनागरी लिपिका ँ चिह्न, जो स्वर (आँ, उँ) या व्यंजन (कँ, वँ) को अनुनासिक रूप देनेके लिए प्रयुक्त होता है। यदि शिरोरेखाके ऊपर कोई मात्रा हो तो चंद्रबिंदुके स्थानपर केवल बिंदु (जैसे-मैं में थीं) का प्रयोग होता है ।

चंद्राकार—**चंद्रा** (दे०)का एक अन्य नाम ।

चंपा (champa)—चम्पा नामक जाति द्वारा लद्दाखमें प्रयुक्त एक **भोटिया** (दे०)-की बोली ।

चंफंग (champhang)—मणिपुरमें प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०)की एक कूकी-चिन भाषा । ग्रियर्सनके अनुसार इसके स्थानका ठीक पता नहीं है ।

चंबा लाहुली (chamba lahuli)–चम्बामें प्रयुक्त, **चीनी परिवार** (दे०)की एक तिब्बती-बर्मी भाषा । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,३८७ के लगभग थी ।

चंबिआली (chambeali)—**चमेआली** (दे०)का एक अन्य नाम ।

चकार—**च** के लिए प्रयुक्त नाम । (दे०) **कार** ।

चकुर (chakur)–**काकेशस परिवार** (दे०)-की क़ाकेशसमें प्रयुक्त एक भाषा ।

चकृवत्—**लिट्लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

चक्रलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयीं ६४ लिपियोंमें-से एक ।

चक्रिमा (chakrima)–**चीनीपरिवार** (दे०) की अंगामी-नागा भाषाकी नागा पहाड़ियों (असम)में प्रयुक्त एक बोली । इसमें **दजुन 'केहेन** और **नाली** उप-बोलियाँ भी सम्मि-

लित हैं । इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ८,५१०के लगभग थी ।

चक्रोमा (chakroma)—**तेंगिमा** (दे०) बोलीका नागा पहाड़ियों (असम) में प्रयुक्त एक रूप ।

चग़ताई—**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी तुर्की शाखाके मध्य वर्गकी एक भाषा ।

चग्गा (chagga)—**बांटू** (दे०) परिवारकी किलिमंजारोमें प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा ।

चचदी (chachadi)—आँध्रमें चचदी जाति द्वारा बोली जानेवाली **तेलुगु**, मिश्रित **ओड़िया** (दे०) का एक रूप ।

चटगाइया (chatgiya)—**दक्षिणी-पूर्वी बंगाली** (दे०) का एक अन्य नाम ।

चटिनो (chatino)—मध्य अमेरिकाके **जपोटेक** (दे०) परिवारकी एक भाषा ।

चतुःसंयुक्त स्वर (tetraphthong)—चार स्वरोंके संयोगसे बना स्वर ।

चतुर्थबलाघात—**बलाघात** (दे०) का एक रूप ।

चतुर्थी तत्पुरुष समास—(दे०) **समास** ।

चतुर्थी बहुव्रीहि समास—(दे०) **समास** ।

चतुर्थी संप्रदान कारक—(दे०) **कारक** ।

चतुर्वचन (quatrial number)—शब्दका वह रूप जिससे चारका बोध हो । (दे०) **वचन** ।

चत्रारी (chatrari)—**खोवार** (दे०) का एक नाम ।

चन-बेगुआ (chana-begua)—**चर्रूआ** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

चनावन (chanawan)—**चिनाबड़ी** (दे०) भाषाका एक दूसरा नाम ।

चन्गिन (changina)—**डोरस्क–गुअयनी** (दे०) वर्गकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

मुख्य हूअची, पबुभवा, टूरा, अरिकेम, रोको-

चपकुरा (chapakura)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार । इस परिवारमें १५के लगभग भाषाएँ हैं । जिनमें

रोन, ओकोरोनों आदि हैं ।

चपोगिर (chopogir)—**तुंगुस** (दे०) भाषाकी एक बोली ।

चम (cham)—फ्रांसीसी इंडोचाइनामें प्रयुक्त एक भाषा जो **आस्ट्रिक परिवार** (दे०) की है ।

चमकोको (chamakoko)—**समुकु** (दे०) परिवारकी एक दक्षिण अमेरिकी भाषा ।

चमरवा—'पश्चिमी हिंदी'की बोली **बाँगरू** (दे०) का, दिल्लीके ग्रामीण भागोंके चमारोंमें प्रयुक्त, एक स्थानीय तथा जातीय रूप ।

चमेआली—**पश्चिमी पहाड़ी** (दे०) की एक बोली जो चंबाके आसपास बोली जाती है । इसके चार स्थानीय रूप—परिनिष्ठित **चमेआली, गादी** या **भरमौरी, चुराही** तथा **पंगवाली** हैं । परिनिष्ठित चमेआली इन सबके केन्द्रमें चंबाके समीपवर्ती क्षेत्रमें बोला जाता है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ६३,३३८ थी ।

चमेआली लिपि—चंबा प्रदेशकी भाषा चमेआली (दे०) **पहाड़ी**की लिपि । इसकी उत्पत्ति **शारदा लिपि** (दे०) से हुई है ।

चम्टी (chamti)—मध्यप्रदेशकी १९२१की जनगणनाके अनुसार अलीराजपुर और झबुआमें मात्र ५७ व्यक्तियों द्वारा प्रयुक्त एक **भीली** (दे०) बोली ।

चरका (charka)—**अयमर** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

चरण (foot)—छंदका एक पद । मात्रिकछंदोंमें इसमें निश्चित मात्राएँ तथा वार्णिकमें निश्चित वर्ण होते हैं ।

चरोतरी (charotari)—**गुजराती** (दे०)-की, महिकंथा, कैरा (बम्बई) आदिमें प्रयुक्त एक बोली ।

चर्च स्लैवोनिक—(दे०) **स्लैवोनिक** ।

चर्रुआ परिवार (charrua)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार । इस परिवारमें लगभग ७ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख, **चर्रूआ खास, बोहने, चन-बेगुआ** आदि हैं । इस परिवारकी सभी भाषाएँ

विलुप्त हो चुकी हैं।

चरूआ खास (charrua proper)—**चरूआ** (दे०) परिवारकी प्रमुख दक्षिणी अमेरिकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

चल तान—**सुर** (दे०)का एक भेद।

चल ध्वनि—**श्रुतिध्वनि** (दे०)का एक अन्य नाम।

चल श्वा (mobile shwa)—हिब्रूमें प्रयुक्त एक चिह्न, जो उदासीन स्वर (ə)-को व्यक्त करता था।

चल सुर—**सुर** (दे०)का एक भेद।

चलित वर्तमान—(दे०) **काल**।

चल्गरी (chalgari)—**तरीनो** (दे०)का एक अन्य नाम।

चव (chaw)—**क्यौ** (दे०)का एक नाम।

चवर्ग—नागरी वर्णमालाका द्वितीय वर्ग। इसमें च, छ, ज, झ, ञ ये पाँच ध्वनियाँ आती हैं। (दे०) **वर्ग**।

चांको (chanko)—दक्षिणी अमेरिकाके **युंका** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त भाषा।

चांग (chang)—असममें प्रयुक्त एक **चीनी परिवार** (दे०)के 'तिब्बती-बर्मी' उपपरिवार-की पूर्वीय **नागा** भाषा।

चांगलो (changlo)—पूर्वीय हिमालयमें प्रयुक्त **भोटिआ** (दे०)की एक बोली।

चांडाली—**मागधी प्राकृत** (दे०)का एक जातीय रूप।

चा (cha)—**क्यौ** (के एक नाम 'चव'के आधारपर बना)का एक नाम। (दे०) **क्यौ**।

चाक्मा (chakma)—चटगाँवकी पहाड़ियोंमें प्रयुक्त, **बंगाली** (दे०)की एक उप-बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २०,०००के लगभग थी।

चाक्मा लिपि—चटगाँवकी पहाड़ियोंपर पहाड़ी जातिके लोगों द्वारा प्रयुक्त तिब्बती-बर्मी तथा बंगाली मिश्रित चाक्मा भाषाकी लिपि, जो कदाचित् ब्राह्मी लिपिकी दक्षिणी शैलीसे विकसित हुई है। यह बर्मी लिपिसे मिलती-जुलती है, किंतु उससे अधिक प्राचीन है।

चान बल (chanabal)—मध्य अमेरिका-की **टजोट्ज़िल भाषा** (दे०)की एक बोली।

चानर (chanar)—मद्रासमें इसी नामकी जाति द्वारा प्रयुक्त **कन्नड़** (दे०)का एक नाम।

चाम्लिंग (chamling)—(१) **रोदोंग** (दे०) बोलीका अन्य एक नाम। (२) **खंबू** (दे०)की नैपालकी तराईमें प्रयुक्त एक बोली।

चारणी (charani)—पंच महल और थाना (बम्बई)के चारणोंमें प्रयुक्त **भीली** (दे०)-की एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलने वालोंकी संख्या १,२०० के लगभग थी।

चारी (chari)—एक **अंडमनी** (दे०) भाषा।

चालय (chalaya)—**मलयालम** (दे०)का एक नाम। मद्रासमें इसी नामकी जाति द्वारा बोली जानेके कारण यह नाम पड़ा है।

चिंगपव (chingpaw)—बर्मामें प्रयुक्त **कचिन** (दे०)बोलियोंका एक सामान्य नाम। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलने-वालोंकी संख्या १,५०,८९६के लगभग थी। इसमें **सिंगफो** (दे०)तथा अन्य 'कचिन'बोलि-योंके बोलनेवाले भी सम्मिलित थे।

चिंग-पा (ching-pa)—**चिंगपव** (दे०)का एक अन्य नाम।

चिंग्मेग्नू (chengmegnu)—**चीनी परि-वार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमकी उत्तरी-पूर्वी नागा पहाड़ियोंपर प्रयुक्त, एक **पूर्वीय नागा** भाषा। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या ५०००के लगभग थी। इसमें 'अंगवांकू'के बोलनेवाले भी सम्मिलित थे।

चिंचसूयू (chinchasuyu)—**क्विचुआ** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसका अन्य नाम **चिंचया** (chinchaya) है।

चिंचा (chincha)—दक्षिणी अमेरिकाके **युंका** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त भाषा।

इस भाषाको मोचिका भी कहते हैं।

चिकिटो (chikito)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारमें लगभग ६ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख **मनसिका, पिनोका, चुरपा,** आदि हैं।

चिकीर्षित—**सन्नन्त** (दे०)के लिए निरुक्तकार तथा अन्य प्राचीन वैयाकरणों द्वारा प्रयुक्त एक पारिभाषिक शब्द।

चिकोमुसेल्टेक (chikomuseltek)—मध्य अमेरिकाके **हुअस्टेक वर्ग** (दे०)की एक प्रमुख बोली।

चिटिमशा (chitimasha)—**टुनिका** (दे०) भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

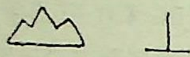
चितोडी (chitodi)—खानदेशके चितोड बनियोंमें प्रयुक्त **खानदेशी** (दे०)का गुजराती और मराठी मिश्रित रूप।

चित्खुली (chitkhuli)—**कनौरी** (दे०)की एक बोली।

चित्पावनी (chitpavani)—रत्नगिरि (बंबई)में चित्पावन ब्राह्मणों द्वारा बोली-जानेवाली, **कोंकणी** (दे०)की, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ६९,०००के लगभग थी।

चित्र लिपि (pictograph)—विश्वकी प्राचीनतम लिपि। यह लेखनके इतिहासकी पहली सीढ़ी है। किंतु ये चित्र केवल लेखनके इतिहासके आरम्भिक प्रतिनिधि ही नहीं थे। चित्रोंसे चित्रकलाके इतिहासका भी आरम्भ होता है। उस कालके मानवने कंदराओंकी दीवालोंपर या अन्य चीजोंपर पशु, जंतु, वनस्पति, मानव शरीर या अंग तथा ज्यामितीय शक्लों आदिके टेढ़े-मेढ़े चित्र बनाये होंगे। यह भी सम्भव है कि कुछ चित्र धार्मिक कर्मकांडोंके हेतु देवी-देवताओंके बनाये जाते रहे हों। इस प्रकारके पुराने चित्र दक्षिणी फ्रांस, स्पेन, क्रीट, मेसोपोटामिया, यूनान, इटली, पुर्तगाल, साइबेरिया, उजबकिस्तान, सीरिया, मिश्र, ग्रेटब्रिटेन, केलिफोर्निया, ब्राज़ील तथा आस्ट्रेलिया आदि अनेकानेक देशोंमें मिले हैं। ये पत्थर, हड्डी, काठ, सींघ, हाथीदाँत, पेड़की छाल, जानवरोंकी खाल तथा मिट्टीके बर्तन आदिपर बनाये जाते थे। चित्र लिपिमें किसी विशिष्ट वस्तुके लिए उसका चित्र बना दिया जाता था। जैसे-सूर्यके लिए गोला या गोला और उससे चारों ओर निकलती रेखाएँ, विभिन्न पशुओंके लिए उनके चित्र, आदमीके लिए आदमीका चित्र तथा उसके विभिन्न अंगोंके लिए उन अंगोंके चित्र आदि। चित्र लिपिकी परंपरा उस प्राचीन कालसे आज तक किसी न किसी रूपमें चली आ रही है। भौगोलिक नकशोंमें मंदिर, मस्जिद, बाग तथा पहाड़ आदि एवं पंचांगोंमें ग्रह अदि चित्रों द्वारा ही प्रकट किये जाते हैं। प्राचीन कालमें चित्र लिपि बहुत ही व्यापक रही होगी, क्योंकि इसके आधार-पर किसी भी वस्तुका चित्र बनाकर उसे व्यक्त कर सकते रहे होंगे। इसे एक अर्थमें अन्तर्राष्ट्रीय लिपि भी माना जा सकता है, क्योंकि किसी भी वस्तु या जीवका चित्र सर्वत्र प्रायः एक-सा ही रहेगा और उसे देखकर विश्वका कोई भी व्यक्ति जो उस वस्तु या जीवसे परिचित होगा, उसका भाव समझ जायगा और इस प्रकार उसे पढ़ लेगा। पर यह तभी तक सम्भव रहा होगा जब तक चित्र मूल रूपमें रहे होंगे। **चित्र लिपिकी कठिनाइयाँ**—चित्र लिपिमें निम्नांकित कठिनाइयाँ थीं : (१) व्यक्तिवाचक संज्ञाओंको व्यक्त करनेका इसमें कोई साधन नहीं था। आदमीका चित्र तो किसी भी प्रकार कोई बना सकता था, पर राम, मोहन और माधवका पृथक्-पृथक् चित्र बनाना साधारणतया सम्भव नहीं था। (२) स्थूल वस्तुओंका प्रदर्शन तो सम्भव था, पर भावों या विचारोंका चित्र सम्भव न था। कुछ भावनाओंके लिए चित्र अवश्य बने थे, जिन्हें हम आगे देखेंगे, पर सबका इस प्रकार प्रतीकात्मक चित्र बनाना व्यावहारिक नहीं था। (३) शीघ्रतामें ये चित्र नहीं बनाये

जा सकते थे। (४) कुछ लोग ऐसे भी रहे होंगे जो सभी वस्तुओंके चित्र बनानेमें अकलाकार प्रवृत्तिके होनेके कारण समर्थ न रहे होंगे। ऐसे लोगोंको और भी कठिनाई पड़ती रही होगी। (५) काल आदिके भावोंको व्यक्त करनेके साधनोंका इस लिपिमें एकान्त अभाव था। चित्र लिपि विकसित होते-होते बादमें प्रतीकात्मक हो गयी। उदाहरणार्थ यदि आरम्भमें पहाड़ इस प्रकार बनता था तो धीरे-धीरे लोग उसे केवल इस तरह बनाने लगे।



दूसरे शब्दोंमें उसका रूप घिस गया। शीघ्रतामें लिखनेके कारण संक्षेपमें इसी प्रकार लोग लिखने लगे और रुढ़ि रूपमें इसीसे पहाड़का भाव व्यक्त होने लगा। चीनी लिपिमें इस प्रकार चिह्नोंके प्रतीक बन जानेके अनेक उदाहरण मिलते हैं। इस तरह धीरे-धीरे चित्र लिपिके सभी चित्र प्रतीकात्मक हो गये होंगे। इस रूपमें चित्र लिपिकी विश्व भरमें समझी जानेकी क्षमता समाप्त हो गयी होगी और विभिन्न सजीव और निर्जीव वस्तुओंके चित्र उन वस्तुओंके स्वरूपके आधारपर बनकर



विकसित चिह्नोंके रूपमें बनने लगे होंगे। यहाँ वह अवस्था आ गयी होगी जब इन प्रतीकात्मक या रुढ़ि चिह्नोंको याद रखनेकी आवश्यकता पड़ने लगी होगी। कुछ चित्र तथा ज्यामितीय लिपियाँ ऊपरके चित्रमें दिखायी गयी हैं।

[पुर्तगाल, स्पेन, इटली उत्तरी अफ्रीका, एरिज़ोना तथा कैलिफ़ोर्नियामें प्राप्त प्राचीनतम लिपिसे उपर्युक्त सामग्री ली गयी है। इनकी गणना विश्वकी प्राचीनतम लिपियोंमें की जाती है। ऊपरसे प्रथम दो पंक्तियोंमें पशु-पक्षी-कीड़े आदि हैं। बादकी दो पंक्तियाँ मनुष्योंके चित्रों द्वारा बने चित्र लिपिकी है। इनमें कुछमें क्रियाका भाव भी स्पष्ट है। जैसे एकमें शिकार, दूसरेमें नृत्य या हाथ मिलाना या कुश्ती, एकमें कुछ चलाना, एकमें संभवतः खेल या व्यायाम तथा एकमें साँप पकड़ना आदि। नीचेकी चार पंक्तियोंमें घर, टीला या जंगल तथा ज्यामितीय शक्लें आदि हैं]

चित्र लिपि चिह्न (pictogram)––किसी वस्तु या जीवका पूर्ण या अपूर्ण चित्र जो, चित्रलिपि द्वारा भाषाओंके लेखनमें काम आता है। चित्र लिपिमें इस प्रकारके अनेक चिह्न होते हैं।

चित्रात्मक लिपि––ऐसी लिपि जिसमें, रेखात्मक चिह्नों आदिका न प्रयोग हो, अपितु चित्रोंका प्रयोग हो। (दे०) **चित्रलिपि**।

चित्राली (chitrali)––**खोवार** (दे०)का अन्य नाम।

चिन––चीनी परिवारकी असमी-बर्मी-शाखाके कुकीचिन वर्गका एक उपवर्ग। (दे०) **उत्तरी चिन, दक्षिणी चिन** तथा **केंद्रीय चिन**।

चिनावड़ी (chinawari)––पश्चिमी पंजाबके झंग जिलेमें प्रयुक्त **लहंदा** (दे०) की एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ७३, ४७९के लगभग थी।

चिनूक (chinuk)––**पेनुटिअन** (दे०)

भाषा-परिवारका एक वर्ग । इस वर्गमें **वस्को, विश्‌रस, कथ्‌लमेट, क्लकमस, क्लट्‌सोप** (दे०) आदि भाषाएँ हैं ।

चिनूक (chinook)––(१) उत्तरी अमेरिकाके आदिवासी चिनक लोगोंकी भाषा चिनूक है । (२) अंग्रेज़ी, फ्रेंच, चिनूक तथा आसपासकी कुछ अन्य अमेरिकी इंडियन भाषाओंके मिश्रणसे वहाँ एक अजीव भाषा विकसित हो गयी है, जिसे **चिनूक, चिनूक जार्गन** (chinook jargan), या **ओरेगन जार्गन** (oregon jargon) कहते हैं। इस मिश्रित भाषाका प्रारंभ ओरेगन नामक स्थानसे हुआ था, इसीलिए इसका **ओरेगन जार्गन** नाम पड़ा है । यह भाषा उत्तरी पश्चिमी अमेरिका (u. s. a.) तथा संलग्न कनाडामें व्यापारियों तथा अमेरिकी इंडियनोंकी, एक प्रकारसे अंतर्प्रान्तीय भाषा है ।

चिनूक जार्गन (chinook jargan)–– **चिनूक** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

चिनन्‌टेक (chinantek)––**केन्द्रीय अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार । इस परिवारकी प्रमुख भाषा भी इस नामकी है ।

चिन्‌बोक (chinbok)––**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, 'असमी-बर्मी' शाखाके, कुकी-चिनवर्गकी, बर्मीमें प्रयुक्त एक **दक्षिणी चिन** भाषा । बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ११,८८८के लगभग थी ।

चिन्‌बोन (chinbon)––**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके, 'कुकीचिन' वर्गकी बर्मामें प्रयुक्त, एक दक्षिणी चिन भाषा । बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ६,९३४के लगभग थी ।

चिन्मे (chinme)––**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंके 'कुकी-चिन' वर्गकी पकोक्कू (बर्मा) में प्रयुक्त, एक दक्षिणी 'चिन' भाषा ।

चिन्हावरी (chinhawari)––चिनाबके किनारे मुजफ्फ़रगढ़ (पंजाब) में बोली जानेवाली **मुल्तानी** (दे०) का एक स्थानीय नाम ।

चिपनेक (chipanek)––मध्य अमेरिकाके **ओटोमि** (दे०) परिवारकी एक भाषा ।

चिपवा या **चिपेवा** (chippewa)–– **ओजिब्वे** (दे०) का एक अन्य नाम ।

चिप्पेव (chippewa)––**ओजिब्वे** (दे०) का एक अन्य नाम ।

चिप्पेवे (chippeway)––टिन्नेह (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

चिबोक (chibok)––गारो (दे०) की, गारो पहाड़ियों (असम) पर बोलीजानेवाली एक बोली । इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार १५००के लगभग थी ।

चिब्‌चा-अरउअक (chibcha-aruak)–– **चिब्‌चा** (दे०) भाषा-परिवारका एक वर्ग । इस वर्गके अंतर्गत **चिब्‌चा भाषा, मुयस्का, रामा, मेल्‌चोरा,** अरअक, **टुनेबो, बेटोई,** अन्‌डकी आदि भाषाएँ हैं ।

चिब्‌चा परिवार (chibcha)––**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०) तथा केन्द्रीय अमेरिकी वर्गका एक भाषा-परिवार । इस परिवारमें लगभग ७३ भाषाएँ हैं, जो चार वर्गोंमें बाँटी गयी हैं : **टलमनक बरबकोआ** (दे०), **डोरस्क-गुअय्मी** (दे०), **चिब्‌चा-अरउअक** (दे०) तथा **पजे** (दे०) । इस परिवारका क्षेत्र पहले कोलम्बिआसे दक्षिणी पूर्वी निकारगुआ तक है ।

चिब्‌चा भाषा (chibcha)––**चिब्‌चा-अरउअक** (दे०) वर्गकी एक प्रमुख दक्षिणी अमेरिकी भाषा । यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है ।

चिभाली (chibhali)––काश्मीरके बाहरी पहाड़ी इलाके (चिनाब और झेलम नदियोंके बीचके भाग) में प्रयुक्त लहंदा (दे०) की,

एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५,२१, ३३८के लगभग थी।

चिमरिको (chimariko)—**होक** (दे०) भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

चिमाकुम (chimakum)—**चिमाकुम वर्ग** (दे०)की एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

चिमाकुम वर्ग (chimakum)—**उत्तरी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारमें दो भाषाएँ थीं: चिमाकुम तथा क्वीलेउट। अब चिमाकुम विलुप्त हो चुकी है और केवल क्वीलेउट ही शेष है।

चिमिल (chimila)—**डोरस्क-गुअयनी** (दे०)वर्गकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

चिमू (chimu)—दक्षिणी अमेरिकाके **युंका** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त भाषा।

चिरकुआ (chirakua)—**समुकु** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

चिरिकोआ (chirikoa)—**गुअहिबो** (दे०) भाषा-परिवारकी एक प्रमुख दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

चिरिगुअनो (chiriguano)—**टुपी-गुअरनी** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसके अन्य नाम **अबा** (aba), **कम्बा** (kamba) तथा **टेम्बेटा** (tembeta) हैं।

चिरिनो (chirino)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक विलुप्त अमेरिकी भाषा-परिवार। इस परिवारकी प्रमुख भाषा भी इसी नामकी थी।

चिरू (chiru)—मणिपुरमें प्रयुक्त एक प्राचीन कुकी भाषा। यह भाषा **चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके, कुकी-चिन वर्गकी है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, मोटे रूपसे, इसके बोलनेवालोंकी संख्या ७५० थी। १९२१की जनगणनाके अनुसार यह संख्या १,५७७के लगभग थी।

चिलंगा (chilanga)—मध्य अमेरिकाके **लेन्का** (दे०) भाषा परिवारकी एक भाषा।

चिलासी (chilasi)—सिंध घाटीमें प्रयुक्त **शिणा** (दे०)की एक बोली।

चिलीस (chilis)—कोहिस्तानीकी **तोखाली** (दे०) बोलीका, स्वात कोहिस्तानमें प्रयुक्त, एक रूप।

चिवेरे (chiwere)—उत्तरी अमेरिकाके **सिऔक्स** (दे०) भाषा-परिवारका एक वर्ग। इस वर्गमें **इओव, ओटो,** मिस्सूरी तथा **विन्नेबगो** आदि भाषाएँ प्रमुख हैं।

ची (chi)—**सूडान वर्ग** (दे०)की आइवरी-कोस्ट-गोल्डकोस्टमें प्रयुक्त एक भाषा।

चीनलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयीं ६४ लिपियोंमें-से एक। (दे०) **चीनी लिपि**।

चीनी—**चीनी परिवार** (दे०)की एक प्रमुख भाषा। इसका एक प्राचीन नाम 'नाम' भी मिलता है। चीनीका प्रमुख क्षेत्र चीन है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ६० करोड़ मानी गयी है। बोलनेवालोंकी संख्याकी दृष्टिसे यह भाषा, विश्वमें प्रथम है। दूसरा नंबर अंग्रेजीका और तीसरा हिन्दीका है। चीनी परिवारकी प्रमुख विशेषता उसका सुर युक्त होना है। इसकी कुछ बोलियोंमें आठ सुर तक माने गये हैं। परिनिष्ठित चीनीमें चार सुर हैं। इसकी दूसरी विशेषता है इसकी एकाक्षरता। इसके मूल शब्द प्रायः एकाक्षर हैं। तीसरी विशेषताके रूपमें इसकी अयोगात्मकता या स्थान-प्रधानताका उल्लेख किया जा सकता है। इसमें संबंधतत्त्व संस्कृत आदिकी भाँति विभक्ति, प्रत्यय आदिके रूपमें नहीं हैं। कुछ संबंधतत्त्वोंके लिए कुछ स्वतंत्र शब्द होते हैं, जिन्हें रिक्त शब्द कहते हैं। इनका काम व्याकरणिक संबंध दिखलाना होता है। अन्य संबंधोंका पता शब्दके स्थानसे चल जाता है। विशेष स्थानपर एक ही शब्द कर्त्ता होता है, किन्तु

वही शब्द बिना किसी परिवर्तनके ही, किसी अन्य स्थानपर कर्म हो जाता है। (दे०) **वाक्यमें वाक्यके प्रकार** उपशीर्षक, तथा **आकृति मूलक वर्गीकरण**। आधुनिक चीनीकी प्रमुख बोलियाँ हैं : मंदारिन (उत्तरी मंदारिन, दक्षिणी मंदारिन, दक्षिणी-पश्चिमी मंदारिन), फ़ूचो, अमोयी, निंगपो, स्वातो, वेन्चो, मेहससीन तथा कैंटनी। पीपिङकी या उत्तरी मंदारिनका कुओयू (दे०) रूप चीनकी राष्ट्र भाषा है। कहनेको ये सभी चीनीकी बोलियाँ हैं किन्तु इनमें कुछमें आपस में दो भाषाओं (जैसे अंग्रेज़ी और डच) जितना अंतर है। चीनीके कुछ अन्य रूपांतर मिन, क, वेन-लि आदि भी हैं।

लगभग ९वीं सदीसे चीनके हर भागमें दो प्रकारकी भाषाका प्रयोग मिलता है। एक भाषा तो दैनिक बोलचालकी है, जो, जैसा कि सामान्यतः होता है, उच्चारण, शब्द-समूह तथा कभी-कभी व्याकरणके नियमोंकी दृष्टिसे भी १०-१०, १५-१५ मीलपर बदलती मिलती है। इसके अतिरिक्त एक साहित्यिक रूप है या वेनियेन (wenyen) जो व्याकरण, शब्द-प्रयोग आदिकी दृष्टिसे पूरे चीनमें लगभग एक है। हाँ, उच्चारण इसका भी, चीनके विभिन्न भागोंमें भिन्न-भिन्न प्रकारसे होता है। चीनकी यह साहित्यिक भाषा चीनी साहित्यकी प्राचीन निधियोंकी भाषापर आधारित रही है। भाषाके ये दो रूप १९१७ तक मिलते हैं। उसके बाद मंदारिनके परिनिष्ठित रूप कुओयूमें ही साहित्य-रचना होने लगी है।

चीनी भाषाका साहित्य बहुत ही संपन्न तथा प्राचीन है। एक मतके अनुसार तो वह ३००० ई० पू० तक जाता है। १००० ई० पू० से लगभग नियमित साहित्य रचना होती रही है। ३री सदी ई० पू० से ही बहुत अच्छा गद्य साहित्य चीनीमें उपलब्ध होता है। चीनी भाषा अपने कन्फ़्यूसिअस साहित्य, प्राचीन इतिहास ग्रंथ जिन्हें शुकिंग कहते हैं, तथा दर्शन-साहित्यके लिए अधिक प्रसिद्ध है। प्राचीन कालमें यहाँका साहित्य भारत तथा ईरानसे तथा आधुनिक कालमें यूरोपसे प्रभावित हुआ है। यहाँके प्रसिद्ध लेखकोंमें कन्फ़्यूसिअस (५५१-४७९ ई० पू०), चू-हिस, वांग-पो, नी-पो, पो-चुइ, ह्सन चिचि, लाउ शो आदि हैं। भारतके बहुतसे बौद्ध ग्रंथ जो अब भारतमें उपलब्ध नहीं हैं चीनीमें अनूदित रूपमें उपलब्ध हैं। हिन्दीमें चीनीसे आनेवाले शब्दोंमें चाय, चीनी, लीची आदि प्रमुख हैं।

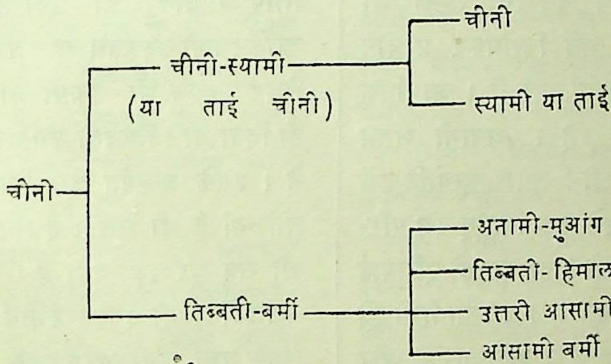
चीनी परिवार—एशियाका एक भाषा-परिवार। इसे एकाक्षर, भारोपीय चीनी या तिब्बती चीनी परिवार भी कहते हैं। इस परिवारकी प्रधान भाषा चीनी है। चीन, स्याम, तिब्बत और ब्रह्मा आदिमें यह परिवार फैला हुआ है। भारोपीय परिवारके बाद बोलनेवालोंकी संख्याकी दृष्टिसे यही परिवार विश्वमें सबसे बड़ा है। इस परिवारके प्रमुख लक्षण स्पष्ट रूपसे अब केवल चीनीमें ही पाये जाते हैं। अन्य अन्य भाषाएँ आर्य तथा अन्य परिवारोंसे प्रभावित होनेके कारण वर्ण-संकर हो गयी हैं।

परिवारकी प्रधान विशेषताएँ-(१) इस परिवारकी भाषाएँ स्थान-प्रधान या अयोगात्मक हैं। दो शब्द एकमें नहीं मिलते। सम्बन्धका पता बहुधा शब्दके स्थानसे ही चल जाता है। **'हुआ पओ मीन'**=राजा प्रजाकी रक्षा करता है। पर यदि इससे उलटा कहना होगा तो वाक्यमें और किसी भी प्रकारका परिवर्तन न करके केवल स्थान-परिवर्तन कर देंगे। **'मीन पओ हुआ'** =प्रजा राजाकी रक्षा करती है। (२) प्रत्येक शब्द एक अक्षर (syllable)का होता है। इसीलिए इसे **एकाक्षर परिवार** भी कहते हैं। वह एक प्रकारसे अव्यय है जो न बढ़ता है और न घटता है और न विकृत ही होता है। वाक्यमें चाहे जहाँ भी आये उसके रूपमें कोई परिवर्तन नहीं मिलेगा। इन एकाक्षर शब्दोंकी संख्या

चीनी भाषामें पाँचसौ और एक हजारके बीचमें है। चीनकी साहित्यिक और राष्ट्र-भाषा 'मंदारिन'में चारसौसे कुछ ही अधिक शब्द हैं, जो लगभग बयालीस हज़ार भिन्न-भिन्न अर्थोंको प्रकट करते हैं। (३) यहाँ यह समस्या है कि इतने कम शब्द कैसे इतने अधिक अर्थ प्रकट करते हैं। इसके लिए ये लोग सुर या तान-का प्रयोग करते हैं। एक शब्द विभिन्न सुरोंमें विभिन्न अर्थ देता है। यों तो प्रधान चार ही सुर हैं, पर कुछ उपभाषाओं या बोलियोंमें इससे कम या अधिक सुर भी अपवाद स्वरूप मिलते हैं। 'मंदारिन'में पाँच सुर हैं। दूसरी बोली 'फूकिन'में आठ हैं। (४) केवल सुरोंसे पूरी स्पष्टता नहीं आ पायी, अतः इसके लिए वे लोग एक और युक्ति (द्वित्व) से काम निकालते हैं। इनके यहाँ द्वित्व प्रयोग चलता है। ऊपर हम कह चुके हैं कि एक शब्दके कई अर्थ होते हैं। जैसे 'ताओ' = सड़क, झंडा, गल्ला, ढक्कन इत्यादि, या 'लू' = ओस, जवाहर, घुमाव, सड़क इत्यादि। यहाँ हम देखते हैं कि 'ताओ' और 'लू' दोनोंके अर्थ सड़क हैं। अब यदि सड़कके लिए दोनों शब्दों (ताओ और लू) का साथ प्रयोग करें तो किसी भी प्रकारकी गड़बड़ीका भय नहीं रह जाता। अतः सड़कके लिए 'ताओ लू' शब्द प्रयुक्त होता है। ऐसे प्रयोगोंको द्वित्त प्रयोग कहते हैं। चीनी भाषामें इसका बहुत प्रयोग होता है। इसमें सर्वदा पर्याय शब्द ही नहीं रखे जाते। कभी-कभी आवश्यकतानुसार अन्य भी ऐसे शब्द (दूसरा अर्थ रखनेवाले) रख दिये जाते हैं, जिनसे अर्थ स्पष्ट हो जाय। जैसे—नमकके साथ बारीक या रोड़ा, पानीके साथ गर्म या ठंढा इत्यादि। (५) भारोपीय परिवारकी भाँति वहाँ भाषाका व्याकरण नहीं है। एक ही शब्द स्थान और आव-श्यकतानुसार संज्ञा, क्रिया, विशेषण आदि हो जाता है। 'त' शब्दका उदाहरण लिया जा सकता है। इसका अर्थ 'बड़ा', 'बड़ाई' तथा 'बड़ा होना' आदि सभी होता है। (६) ऊपर हम इसे स्थान-प्रधान भाषा कह चुके हैं। पर कभी-कभी केवल शब्दोंके स्थानसे सम्बन्ध स्पष्ट नहीं हो पाता तो सहायक शब्दोंकी आवश्यकता पड़ती है। इसे ही कुछ लोगोंने चीनीका 'निपात प्रधान' होना कहा है। इस दृष्टिसे चीनी शब्दोंके दो वर्ग होते हैं—पूर्ण शब्द और रिक्त शब्द। पूर्ण शब्द वह है जो कुछ अर्थ-तत्त्व रखे पर रिक्त शब्द वह है जो केवल सम्बन्ध प्रकट कर दे। पर इसका आशय यह नहीं कि वहाँका पूरा शब्द-समूह इन दो भागोंमें बँटा है। बहुतसे पूर्ण शब्द आव-श्यकता पड़नेपर रिक्त बना लिये जाते हैं। इस प्रकार, प्रयोग होनेपर ही कहा जा सकता है कि कौन शब्द रिक्त है और कौन पूर्ण। उदाहरणके लिए 'छिह' शब्दको ले सकते हैं। इसका 'जाना', 'वह', 'सम्बन्ध', 'रखना' आदि अर्थ होता है, पर कभी-कभी यह सम्बन्ध कारककी विभक्तिका भी काम करता है। जैसे—मु = माता। त्जु = पुत्र। मु छिह त्जु (यह रूप पुराना है। अब इसे 'मूछिन त अङ दज़्') = माताका पुत्र। (७) चीनी भाषामें पूर्ण शब्द भी प्रायः दो प्रकारके माने जाते हैं। एक तो वे हैं जो जीवित हैं और क्रिया जिनका प्रधान गुण है। दूसरे वे हैं, जो मृत या जड़ हैं और स्वयं कुछ कर नहीं सकते। जीवित शब्द अपनी क्रिया इन्हीं मृत शब्दोंपर करते हैं। यह विभाजन भी बहुत निश्चित नहीं है। (८) अनुनासिक ध्वनियोंके प्रयोगका यहाँ बाहुल्य है। विशे-षतः ङ और ञ ध्वनियाँ तो शायद ही विश्वकी किसी और भाषामें इतनी प्रयुक्त होती हों।

चीनी परिवारका विभाजन कई विद्वानोंने कई प्रकारसे किया है। कुछ लोग इसे **चीनी, ताई या स्यामी** और **तिब्बती-बर्मी** मूलतः इन तीन वर्गोंमें बाँटते हैं और फिर उनके

भेदोपभेद करते हैं। कुछ लोग **चीनी, स्यामी, तिब्बती,** और **बर्मी** इन चार वर्गोंमें बाँटते हैं। कुछ लोग **येनिसेई-ओस्त्यक** तथा **कॉटिश** को मिलाकर एक पाँचवाँ वर्ग भी बनाते हैं। अधिक मान्य वर्गीकरण निम्नांकित है: **चीनी** या **भारत-चीनी** परिवारका विभाजन इस प्रकार किया गया है:—



स्यामी वर्गको **ताई** या **शान** भी कहते हैं। इसका दक्षिणी रूप **करेन** है जो बर्मामें बोला जाता है। इसके अंतर्गत अन्य भाषाएँ **शान** (अहोम, खाम्ती) तथा स्यामी (लाओ) हैं। **अनामी-मुआंग**में **अनामी** और **मुआंग** दो भाषाएँ हैं जो फ्रेंच इंडो-चीनमें बोली जाती हैं। **तिब्बती हिमालयी**-का क्षेत्र तिब्बत और संलग्न हिमालयका पठार है। इसमें तिब्बती या भोटिया, **सार्वनामिक हिमालयीय भाषाएँ** तथा बोलियाँ (**पश्चिमी**—मन्चाटी, चंबा लाहुली, बुनन, रंगलोई, कनाशी, कनौरी, रंगकास, दर्मिया, चौदान्गसी, व्यांगसी जंगली; **पूर्वी**—धीमाल, थामी, लिम्बू, याखा, खंबू, जिम्दार, चेपांग, कुसुन्दा, भ्रामू, थाक्स्या आदि) तथा **असार्वनामिक हिमालीय भाषाएँ तथा बोलियाँ** (गुरुंग, मुर्मी, सुन्वार, मँगरी, नेवारी, लेप्चा या रोंग, कामी, मांझी, टोटो आदि) आती हैं। **उत्तरी आसामी**में अक, दफ़ला, अबोर, मिरी, मिश्मी आदि हैं जो उत्तरी असममें बोली जाती हैं। **आसामी-बर्मी** उपशाखामें **बड़ या बोदो वर्ग** (मैदानी कछारी; लालुंग, दीमासा या पहाड़ी कछारी), गारो, कोच, राभा, तिपुरा या म्रुंग, चुतिया, मोरान)। **नागा वर्ग**—(**पश्चिमी वर्ग**—) अंगामी, सेमा, रेंगमा, केज़ामा; **मध्यवर्ती वर्ग**—आओ, ल्होता, तेनसा नागा, थुकुमी, यचुमी; **पूर्वी वर्ग**—अंगवांकू, तम्लू, बनपरा, मुतोनिआ, मोहोंगिआ, नमसंगिया, चांग, अस्सिरिंगिआ, मोशांग, शांग्गे; **नागा-बोदो**—एम्पेओ, कबुई, खोइराओ; **नागा-कुकी**—मिकिर, सोप्वोमा, मराम, मियांगखांग, क्वोइरेंग, तांगखुल, मरिंग, अवर्गीकृत नागा—कचिन), **कुकिचिनवर्ग** (**मेइथेइ**—मणिपुरी; **उत्तरी चिन**—थादो, सोक्ते, सियिन, राल्ते, पइते; **मध्यवर्ती चिन** — शुंक्ल, लइ, लुशेई, बन्जोगी, पान्खू; **प्राचीन कुकि**—ह्राँगखोल, हल्लाम, लंगप्रोंग, अइमोल, चिरु, कोल्हरेंग, कोम, क्यउ, ह्मर, चकोने गुन्तुक, करुम, पुरुम, अनाल, हिरोइ-लम्गांग; **दक्षिणी चिन**—चिन्मे, वेलौंग, चिन्बोक, यिन्दु, चिन्बोन तउंग्था, ख्युंग, खमी, अनु, म्हांग; **अवर्गीकृत कुकिचिन**—कुकि, चिन); **बर्मा वर्ग** (मैंग्था, स्ज़ी, लशी, मरु, म्रू, बर्मी या बरमी, अराकानी, तौंग्यो, इन्था, दनू, तवोयन, चौंग्थ, यन्व्ये); **लोलो-मोसो वर्ग** (लोलो, मोसो, लिसु, अक, क्वि आदि), तथा **सक या लूई वर्ग** (लूइ, कदु, दैंगनेत, गनन, सक) आते हैं। इसकी कुछ प्रमुख भाषाओं और बोलियोंका संक्षिप्त परिचय आगे दिया जा रहा है। चीनी परिवारकी सबसे प्रमुख भाषा चीनी (दे०) है। **मंदारिन, कैंटनी,** फ़ूचो आदि चीनीकी प्रधान

बोलियाँ हैं। नानकिन और पीपिङ्के पास बोली जानेवाली '**मंदारिन**' बोली राज्य एवं साहित्यकी भाषा है, जिसमें बयालीस हज़ारके लगभग शब्द हैं, जो केवल सवा चार सौ शब्दोंसे ही सुर आदिके द्वारा व्यक्त किये जाते हैं। चीनीमें बोलनेकी भाषा लिखनेसे भिन्न हैं। कुछ बोलियाँ एक दूसरेसे इतनी भिन्न हो गयी हैं कि एकका बोलनेवाला दूसरीको समझ भी नहीं सकता। ये बातें विशेषकर प्राचीन चीनीको लेकर कही गयी हैं। आधुनिक चीनी बदल गयी है। **अनामी भाषा** टोंकिन, कोचिन चीन तथा कम्बोडियामें बोली जाती है। इसे कुछ विद्वान् इस परिवारसे अलग स्यामी तथा आस्ट्रो-एशियाई कुलके बीचकी मानते हैं। पर चीनीकी ही भाँति यह भी एकाक्षर, अयोगात्मक और स्थान-प्रधान है। अर्थ प्रकट करनेके लिए यहाँ भी सुरों (लगभग छः)का प्रयोग होता है, अतः इसे अलग मानना ठीक नहीं कहा जा सकता। इसका शब्द-समूह अवश्य चीनीसे भिन्न है, पर सम्भवतः उधार रूपमें पर्याप्त मात्रामें चीनी शब्द भी मिलते हैं। इसके पुराने ग्रंथ भी चीनी लिपिमें ही हैं। इधर कुछ वर्षोंसे उन लोगोंने रोमन लिपिको अपना लिया है। **स्यामी** भाषाका दूसरा नाम **थाई** या **तई** है। इनके बोलनेवालोंको 'तई' या 'शान' कहा जाता है। असमके पूर्वी भाग तथा ब्रह्माके कुछ भागोंमें इस भाषाका क्षेत्र है। १२वीं सदीके लगभग ये लोग भारतमें आकर असममें बसे और लगभग आर्य हो गये। असम नाम भी संभवतः इन्हीं लोगोंके कारण पड़ा। असमके पुरोहित अब भी अपनी प्राचीन बोली **अहोम** बोलते हैं। **खाम्ती** या **खम्ती** बोली असम और ब्रह्माके संधिस्थलपर बोली जाती है। स्यामी भाषामें अब कुछ उपसर्ग आदि भी प्रयुक्त होने लगे हैं। यह शायद भारतका ही प्रभाव है। **तिब्बती** या भोट भाषामें एकाक्षरता चीनीकी अपेक्षा कम है। एकाक्षर परिवारकी भाषाओंमें इसपर भारतका प्रभाव सबसे अधिक है। छठी सदीसे यहाँ संस्कृत और पालि ग्रन्थोंके अनुवाद आरम्भ हो गये थे। महापंडित राहुल सांकृत्यायनको वहाँ ऐसे अनेक ग्रंथ मिले हैं, जिनका मूल संस्कृत रूप कहीं भी उपलब्ध नहीं है। ऐसे कुछ ग्रन्थोंके उन्होंने संस्कृतमें अनुवाद भी किये हैं। **तिब्बती लिपि** ब्राह्मीकी ही पुत्री है और इसका व्याकरण भी संस्कृतसे बहुत प्रभावित है। उसे स्थिर स्वरूप भी किसी भारतीय पंडितने ही दिया था। तिब्बती साहित्य बहुत सम्पन्न है। इसके अन्तर्गत कुछ हिमालयकी ऐसी बोलियाँ हैं जो मूलतः इसकी बेटी होनेपर भी अब दूर पड़ गयी हैं। पड़ोसकी मुंडा बोलियोंका भी इनपर प्रभाव पड़ा है और उनके प्रायः सभी लक्षण इनमें आ गये हैं। इन हिमालयी बोलियोंके असार्वनामिक (non-pronominalized) और **सार्वनामिक** (Pronominalized) दो वर्ग किये जा सकते हैं। सार्वनामिक वर्गमें कर्ता और कर्म यदि सर्वनाम हों तो उन्हें क्रियामें ही प्रत्ययकी तरह जोड़ देते हैं—**हिप्** = मारना। **तू** = उसे। **ङग** = मैं। **हिप्तुङग** = मैं उसे मारता हूँ। **सार्वनामिक**के किराँत और कनौरदामी दो उपवर्ग हैं। पहलेको पूर्वी और दूसरेको पश्चिमी भी कहते हैं। इन दोनोंहीके अन्तर्गत छोटी-छोटी अनेक बोलियाँ हैं। नेपालके पूरबमें इनका प्रदेश पड़ता है। **असार्वनामिक** भाषाओंमें इस प्रकारका सर्वनाम-संयोग नहीं होता। यह वर्ग नेपाल, सिकिम, भूटान आदिमें फैला हुआ है। नेपालकी प्रधान बोली नेवारी इसी वर्गकी है, जिसमें साहित्य भी है। भारतीय संस्कृति तथा मैथिली साहित्यका नेवारीपर काफी प्रभाव पड़ा है। 'वर्मी-असमी' वर्ग जैसा कि नामसे स्पष्ट है वर्मा और असममें फैला है, किन्तु इसकी 'लोलो' आदि कुछ बोलियाँ अवश्य चीनमें पड़ती है। इसपर भी भारतीय-संस्कृति तथा साहित्यका प्रभाव कम

नहीं है और इसी कारण यह भी शुद्ध एकाक्षरी नहीं रह गयी है। मणिपुरकी भाषा मेइतेइ या मेईथेईमें प्राचीन साहित्य बहुत है। इस भाषामें इतिहास ग्रन्थ लिखनेकी प्रथा १५वीं सदीसे चली आ रही है। इसमें शुद्ध क्रियाका प्रायः अभाव माना गया है। लोग क्रियार्थक संज्ञा आदिसे काम चलाते हैं। बर्मी भाषा भी साहित्यिक हैं। इसका साहित्य प्रधानतया धार्मिक है। बर्मी भाषाकी बोलियाँ एक दूसरेसे बहुत भिन्न हैं। बर्मीकी लिपि भी तिब्बतीकी भाँति ही ब्राह्मीकी पुत्री है। 'तिब्बती-बर्मी' वर्गकी भाषाएँ अन्तप्रश्लिष्ट-योगात्मकताकी ओर अग्रसर होती जा रही हैं।

चीनी लिपि—चीनकी लिपि। इस लिपिकी उत्पत्तिके संबंधमें कई किंवदंतियाँ प्रचलित हैं। एकके अनुसार २७०० ई० पू० किसी 'त्सं-की' (इस नामका कुछ लोगोंने 'सांग-के' उच्चारण दिया है) नामके व्यक्तिने इसका आविष्कार किया। चीनी भाषाके प्रसिद्ध बौद्ध विश्वकोष 'फा युअन् चु लिन्' (निर्माण-काल सन् ६६८ ई०) में बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'-के अनुसार' ६४ लिपियोंके नाम दिये हैं, जिनमें पहला ब्राह्मी, दूसरा खरोष्ठी (किअ-लु-से-टो = कलु सेटो = खरोसट = खरोष्ठ) है। आगे विभिन्न लिपियोंके वर्णनके प्रसंगमें कहा गया है कि "लिखनेकी कलाका शोध तीन दैवी शक्तिवाले आचार्योंने किया, उनमें सबसे प्रसिद्ध 'ब्रह्मा' हैं, जिनकी लिपि (ब्राह्मी) बाईं ओरसे दाहिनी ओर पढ़ी जाती है। उसके बाद किअलु (= खरोष्ठ) है, जिनकी लिपि (खरोष्ठी) दाहिनी ओरसे बाएँ तरफ पढ़ी जाती है, और सबसे कम महत्त्वकी 'त्सं-की' है, जिनकी लिपि (चीनी) ऊपरसे नीचेकी तरफ पढ़ी जाती है। ब्रह्मा और खरोष्ठ भारतवर्षमें हुए और 'त्सं-की' चीनमें। ब्रह्मा और खरोष्ठने अपनी लिपियाँ देवलोकसे पायीं और 'त्सं-की' ने अपनी लिपि पक्षी आदिके पैरोंके चिह्नोंसे बनायी।" कुछ पुराने धार्मिक लोग चीनीकी उत्पत्ति त्ज़ू शेन (लिपिके देवता) से मानते रहे हैं। एक अन्य मतके अनुसार त्सं-की (२७०० ई० पू०) बहुत ही प्रतिभा-संपन्न व्यक्ति था। एक दिन रास्तेमें जाते समय इसने एक कछुवा देखा और उसके आकारपर उसका ध्यान गया। 'त्सं-की'ने सोचा कि इसके रेखाचित्र द्वारा इसका बोध कराया जा सकता है। इसके बाद इस दिशामें उसने और भी सोचा और धीरे-धीरे आस-पासके जीव (जैसे आदमी, पक्षी, मछली, कछुवा तथा साँप आदि) और निर्जीव (पर्वत, तारे, मकान, सूर्य, चाँद तथा वर्षा आदि) के रेखाचित्र द्वारा उनके भाव व्यक्त करनेकी उसने पद्धति चलायी। इसीसे धीरे-धीरे चित्र लिपि बनी, जिसका आगे चलकर मध्ययुगीन तथा आधुनिक चीनी लिपिके रूपमें विकास हुआ। एक तीसरे मतके अनुसार एक आठ प्रकारकी त्रि-पंक्तीय रेखाओंसे चीनी लिपि निकली है। इन विशिष्ट रेखाओंका पहले कर्मकांडों या धार्मिक कृत्योंमें प्रयोग होता था। बादमें इन्हीं चिह्नोंका लिपि रूपमें प्रयोग होने लगा और उसीसे चीनी लिपि विकसित हुई। एक चीनी कहावतके आधारपर कहा जाता है कि फू-हे नामक एक व्यक्तिने (३२०० ई० पू०) चीनमें लेखनका आविष्कार किया। इसके लेखनका मूलरूप रस्सियोंमें गाँठ बाँधकर भाव प्रकट करनेका था। चीनमें वस्त्रोंके प्रयोग तथा विवाह-पद्धति आदिका प्रादुर्भाव भी इसीको माना जाता है। इन किंवदंतियोंके अतिरिक्त विद्वानोंने भी इस संबंधमें अपने विचार प्रकट किये हैं। एक मतके अनुसार पीरूकी ग्रंथि लिपि (क्वीपू) की तरहकी कोई ग्रंथलिपि पहले चीनमें प्रचलित थी और उसीसे वर्तमान चीनी लिपिका विकास हुआ। दूसरे मतके अनुसार क्यूनीफार्म लिपि—जिसका कभी बेबीलोनिया, सुमेरिया, असीरिया तथा ईरान आदिमें प्रचार

था--ही चीनी लिपिकी जननी है। तीसरे मतके अनुसार मेसोपोटामिया, ईरान या सिंधुकी घाटीमें जो भावध्वनिमूलक लिपि मिली है, उसीसे इसका संबंध है। दूसरे शब्दोंमें इन्हीं तीनोंमेंसे किसीसे चीनियोंने लिखनेकी कला ली। चौथे मतके अनुसार चीनमें हाथकी उँगलियोंकी विभिन्न मुद्राओं-से भावाभिव्यक्तिकी जो पद्धति है, वह बहुत पुरानी है और उसीसे यहाँकी लिपि निकली है। पाँचवें मतके अनुसार चीनी सभ्यताके प्रारंभिक कालमें धर्म, सजावट या स्वामित्व-चिह्न आदिकी दृष्टिसे बने चित्रों या चिह्नों-से ही धीरे-धीरे चित्रलिपि और उससे आधुनिक चीनी लिपिका विकास हुआ है। छठवें मतके अनुसार मिस्रकी 'हीरोग्लाइफ़िक'से इसकी उत्पत्ति हुई है। इसी प्रकारके कुछ और भी मत हैं। इन सभीपर आलोचनात्मक और वैज्ञानिक दृष्टि डालनेपर तथा इससे संबद्ध अन्य बातोंपर विचार करनेपर हम निम्नांकित निष्कर्षोंपर पहुँचते हैं: (१) चीनी लिपिको देखनेसे ऊपरके मतोंके विवेचनसे, और इस प्रकारकी विश्वकी अन्य भावमूलक या भावध्वनिमूलक लिपियोंके इतिहासके अध्ययनसे यह अनुमान लगता है कि अपने मूल रूपमें चीनी लिपि निश्चय ही एक चित्रलिपि थी। (२) वह चित्र-लिपि त्सं-कीके पक्षी या कछुवेके चित्रसे आरंभ हुई थी, या सजावट या धार्मिक दृष्टिसे बने चित्रोंसे या किसी विदेशी चित्र-लिपिसे, इस संबंधमें विश्वस्त आधारोंके अभावमें निश्चयके साथ कुछ कहना संभव नहीं है। और जबतक कि इस प्रकारका कोई प्रमाण न मिले, चीनी लिपिको, चीनी कला या चीनी संस्कृतिकी भाँति ही चीनकी अपनी चीज़ माना जा सकता है। यहाँ एक और तथ्यकी ओर संकेत कर देना भी आवश्यक है। इन पंक्तियोंके लेखकने स्वयं चीनी लिपिके पुराने प्राप्त चिह्नों और हड़प्पा, मोहन-जो-दड़ोके चिह्नोंको मिलाकर देखनेका प्रयास किया है और इस तुलनामें कई चिह्न मिलते-जुलते मिले हैं। पर, केवल इस आधारपर दो चित्र-लिपियोंको एक-दूसरेपर आधारित नहीं माना जा सकता। कारण स्पष्ट है। हम थोड़ी देरके लिए मान लें कि प्राचीन कालमें चीन-में 'त्सं-की'ने कछुवे या पक्षी या मछलीको देखकर उसके भावको प्रकट करनेके लिए एक रेखाचित्र बनाया। दूसरी ओर सिंधुकी घाटीमें भी परिचित जीवों और वस्तुओंको देखकर उनके चित्र लिपिके बनाये गये। यह संभव ही नहीं प्राय: निश्चित-सा है कि दोनों ही देशोंमें मछली, कछुवा या पक्षीके रेखा-चित्रमें समता होगी, चाहे एक-दूसरेसे कोई भी संबंध न हो; आशय यह है कि चित्र-लिपियोंमें स्वाभाविक साम्यकी संभावना बहुत होती है अतएव केवल चिह्नोंके रूप साम्यके आधारपर दो चित्र लिपियोंमें किसी एकको दूसरीसे प्रभावित या विकसित या उद्भूत मानना भूल होगी।

चीनी लिपि स्वरूपकी दृष्टिसे, अन्य प्राय: सभी लिपियोंसे बिलकुल भिन्न है। देवनागरी, अंग्रेज़ी या उर्दू आदिमें एक ध्वनिके लिए एक चिह्न होता है जैसे 'क' ('क्') ध्वनिके लिए या ('ल्' ध्वनिके लिए)। किंतु चीनी लिपिमें इस प्रकार ध्वनियोंके लिए चिह्न नहीं हैं। उसमें अक्षर या वर्ण-का पूर्णतया अभाव है। उसमें शब्द या भाव-के लिए ही प्राय: चिह्न हैं। उदाहरणके लिए हिन्दीमें यदि हमें 'सूरज्' लिखना हो तो 'स्+ऊ+र्+अ+ज्' इतनी ध्वनियों-को मिलाकर हम लिखेंगे, पर चीनीमें केवल एक चिह्न बना देंगे और वही सूरजका भाव प्रकट करेगा। इसी कारण इसे भाव-मूलक लिपि कहा जाता है। इसमें विभिन्न भावों (स्थूल या सूक्ष्म)के लिए चिह्न हैं। इसका परिणाम यह है कि जहाँ हिन्दीमें ५४-५५ चिह्नोंसे या अंग्रेज़ीमें २६ चिह्नोंसे काम चल जाता है, वहाँ चीनीमें कई हजार चिह्न याद करने पड़ते हैं। इसके प्रत्येक चिह्न अलग-अलग लिखे जाते हैं। हिन्दी, अंग्रेज़ी या

उर्दूकी भाँति एक दूसरेमें मिलाकर इन्हें नहीं लिखा जाता । चीनी लिपि पृष्ठकी दाईं ओरसे ऊपरसे नीचेको लिखते रहे हैं । किंतु अब बायेंसे दायेंकी ओर भी लोग लिखने लगे हैं । चीनी लिपिके चिह्नोंको अनेकानेक विद्वानोंने अनेकानेक वर्गोंमें रखा है । एक विदेशीके लिए इसके प्रयोग, स्वरूप तथा विकास आदिको समझनेकी दृष्टिसे इसे चार वर्गोंमें रखना अधिक युक्तिसंगत होगा : (क) पहला वर्ग ऐसे चिह्नोंका है जो चित्रलिपिके अंतर्गत आते हैं या कमसे कम उनके समीप हैं । उदाहरणके लिए पहले लोग सूर्यका चित्र एक छोटे वृत्तमें एक विंदु रखकर बनाते थे ⊙ । धीरे-धीरे बदलते-बदलते आज सूर्यके भावके लिए चिह्न प्रयोगमें आता है । इसी प्रकार 'पर्वत' के लिए पहले तीन मिले हुए त्रिभुज बनते थे, जिनमें पर्वतका रूप स्पष्ट था किंतु आज उसका विकसित रूप प्रयुक्त होता है : इसी प्रकार चाँद, मछली, कुआँ, लड़का तथा साँप आदिके बारेमें भी है । इस प्रकारके चित्रमूलक सरल चिह्न जो परिचित वस्तुओं या जीवोंके भावको व्यक्त करते हैं चीनी लिपिकी प्रारंभिक अवस्थाके हैं । इन्हीं चिह्नोंसे कदाचित् चीनी लिपिका श्रीगणेश हुआ । (ख) दूसरा वर्ग संयुक्त चित्र चिह्नोंका है । पहले वर्गके चिह्नोंके प्रयोगमें आनेके बाद लोगोंने कुछ चीजोंके लिए दो चित्रोंको मिलाकर चिह्न बनाये । उदाहरणार्थ 'सवेरा' लें । चीनी लोगोंके सामने 'सवेरा'-के भाव व्यक्त करनेका प्रश्न आया तो उन लोगोंने एक पड़ी रेखा खींची, जो क्षितिजका भाव व्यक्त करती थी और उसके ऊपर सूर्यका चिह्न बना दिया । सूर्य सबेरे क्षितिजपर रहता है अतः इन दोनों चिह्नों (चित्रों)के मेलसे सवेराका भाव व्यक्त हो गया । इसी प्रकार पेड़के दो चिह्न पास-पास रखकर 'जंगल', मुंहके चिह्नसे एक निकलती रेखा बनाकर 'जीभ' तथा मुंहके चिह्नसे निकलती हवाका चित्र बनाकर 'शब्द' आदिको व्यक्त किया गया । (ग) और आगे बढ़नेपर चीनी लोगोंके सामने अपनी लिपिमें सूक्ष्म भावोंको व्यक्त करनेकी समस्या आयी । स्वभावतः 'चित्र लिपि'में भावको व्यक्त करनेकी समस्या बहुत कठिन रही होगी । सामनेकी प्रत्यक्ष वस्तुओंके लिए या स्थूलके लिए तो चित्र बन सकते हैं पर विभिन्न भावोंके चित्र कैसे बनाये जायँ यह विचारणीय प्रश्न था । आश्चर्य होता है कि चीनी लोगोंने अपनी इस विकट आवश्यकताकी पूर्ति बड़े ही आश्चर्यजनक ढंगसे की । उन्होंने संयुक्त चित्रोंके आधारपर ही इन्हें भी व्यक्त किया । उदाहरणार्थ दरवाजेका चित्र चिह्न बनाकर उसके समीप कानका चित्र चिह्न बनाया और इन दोनोंके संयोगसे सुननेका भाव व्यक्त किया । इसी प्रकार सूर्य और चन्द्रमाको एक जगह रखकर 'प्रकाशमान'; स्त्री+लड़का = 'अच्छा' ; पेड़ोंके बीच सूरज = 'पूरब' ; दो हाथसे मित्रता; दो स्त्रियोंसे 'झगड़ा' ; मुँह+पक्षी = गाना; तथा तीन घोड़े = चौकड़ी भरते हुए दौड़ना तथा छतके नीचे स्त्री = शांति आदिके भाव व्यक्त किये । कहना न होगा कि इस प्रकारके संयुक्त चिह्नों द्वारा व्यक्त किये गये भावोंके अध्ययनके आधारपर उस कालके चीनी लोगोंकी मनःस्थिति या उनके सामाजिक मनोविज्ञानका सुन्दर अध्ययन किया जा सकता है । दो स्त्रियों द्वारा झगड़े-का भाव व्यक्त करना, छतके नीचे स्त्री द्वारा शांतिका भाव व्यक्त करना या स्त्री, और लड़केके द्वारा 'अच्छे'का भाव व्यक्त करना यों ही या अकारण नहीं है । इसकी पृष्ठभूमिमें उनका तत्कालीन जातीय एवं राष्ट्रीय मनोविज्ञान है । इस श्रेणीके संयोग-

में चीनियोंने बहुत ही सोच-समझकर चयन किया है और ये चयन बहुत अंशोंमें पूरे विश्वकी भावनाओंसे मेल खाते दिखायी देते हैं। (घ) चौथे प्रकारके चिह्न दोहरे प्रयोगोंके मिलते हैं। इनमें एक ही भावके लिए दो चिह्न पास-पास रखे जाते हैं। चीनी भाषामें तान (tone)[1] का बहुत महत्त्व-पूर्ण स्थान है। चीनीमें एक ही शब्दके बहुत-से अर्थ होते हैं। सामान्य ढंगसे यदि एक शब्द कहा जाय तो अर्थ समझनेमें गड़बड़ीकी सम्भावना हो सकती है। इसके लिए वे लोग विभिन्न अर्थोंमें विभिन्न सुरोंका प्रयोग करते हैं। उदाहरणार्थ 'मा' शब्द लें। ये चारों 'मा'

馬 媽 麻 罵

चार भिन्न-भिन्न सुरोंमें—मा, माँ, म्।, मा हैं। इनके अर्थ हैं क्रमशः घोड़ा, माँ, एक कपड़ा तथा गाली देना। 'मा'को यदि सामान्य ढंगसे कहा जाय तो वे लोग 'घोड़ा; मुँह कुछ गोल करके कहा जाय तो माता; कुछ त्वरासे कहा जाय तो 'कपड़ा' और खींचकर कहा जाय तो 'गाली देना' अर्थ लेते हैं। आरम्भमें इस प्रकारके शब्दोंको ये लोग एक ही ढंगसे लिखते थे, पर वहाँ उसका भाव समझने तथा उसका उच्चारण करनेमें गड़बड़ी होती थी, अतः इस गड़बड़ीसे बचनेके लिए दुहरे प्रयोग होने लगे। उदाहरणार्थ वे लोग यदि कोई शब्द लिखेंगे तो उसके भाव तथा उच्चारणार्थ सुर विशेषको स्पष्ट करनेके लिए उसके साथ एक दूसरा शब्द भी लिख देंगे, जो उस शब्दके अनेक अर्थोंमें किसी एकपर बल देगा। और इस प्रकार उस विशिष्ट शब्दके साथ उसे देखकर पाठक समझ जायगा कि अमुक शब्दका यहाँ अमुक अर्थ है, अतएव इसका उच्चारण इस प्रकारके विशिष्ट स्वरमें होना चाहिये। लिखनेमें इस प्रकार-के दो शब्दोंका साथ प्रयोग 'दोहरा प्रयोग' कहा जा सकता है। कुछ उदाहरणोंसे यह बात स्पष्ट हो जायगी। चीनीका एक शब्द 'फैंग' है, जिसके बहुतसे अर्थोंमें 'कमरा' तथा 'बुनना' अर्थ प्रधान हैं। इन दोनों अर्थोंके लिए यह आवश्यक है कि इसका उच्चारण दो भिन्न सुरोंमें किया जाय। पर, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है इस शब्दके लिखने मात्रसे कोई इसके अर्थ या सुरका पता नहीं चला सकता। सम्भव है कोई व्यक्ति 'बुनना' अर्थके लिए इस शब्दका प्रयोग करे और दूसरा 'कमरा' अर्थ समझ ले या दूसरी ओर 'कमरा'के लिए प्रयोग करनेपर 'बुनना' अर्थ समझ ले। चीनी लोग इस गड़बड़ीसे बचने-के लिए इसके साथ किसी और ऐसे शब्दको जोड़ देते हैं, जिससे अर्थ स्पष्ट हो जाय। उदाहरणार्थ जब इसका 'कमरा' अर्थ प्रकट करना होगा तो इसके साथ 'दरवाजा'का भाव व्यक्त करनेवाला शब्द-चिह्न रख देंगे और जब 'बुनना' अर्थ अपेक्षित होगा तो 'सिल्क'का भाव व्यक्त करनेवाला शब्द-चिह्न। इसके कारण पढ़नेवालेके लिए अर्थ और सुरका संकेत मिल जायगा। यहाँ यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि 'दरवाजे'का 'कमरे'से सम्बन्ध है अतएव यह ध्वनि स्पष्ट करनेके लिए सहायकके रूपमें रखा गया और इसी प्रकार 'बुनने'के अर्थके लिए 'सिल्क'। पर, दोहरे प्रयोगमें केवल इसी प्रकारके शब्द

१. तानके कारण अर्थ बदलनेके संबंधमें एक मनोरंजक घटनाका उल्लेख मिलता है। एक बार एक चीनी व्यापारीने कोई झगड़ा सुलझानेके लिए इंगलैण्डकी सरकारके संबंधमें कुछ कहते हुए 'क्वाई को' कहा, जिसमें 'क्वाई'का उच्चारण कुछ खींचकर किया गया था। इसका अर्थ 'आदरणीय सरकार' था। गलतीसे दुभाषियेने 'क्वाई'के उच्चारणके खिंचावको कुछ दूसरे ढंगका (क्वांई-को) समझ लिया, जिसका अर्थ 'दुराचारी सरकार' होता है, और फल यह हुआ कि झगड़ा सुलझनेके स्थानपर और उलझ गया।

नहीं रखे जाते । इसके लिए तीन और तरीके भी अपनाये जाते हैं । एकके अनुसार कभी-कभी चिह्नको दो बार रख देते हैं । जैसे 'को'के कई अर्थ हैं, जिनमें एक बड़ा भाई भी है। 'बड़े भाई' के भाव तथा सुरकी ओर संकेत करनेके लिए 'को'का एक चिह्न न बनाकर दो चिह्न बना देते हैं । यह परम्परागत रूपसे रूढ़ि है कि दो 'को' साथ रखनेपर 'बड़े भाई'का अर्थ लिया जाय,अतः इससे लोग यही भाव समझ जाते हैं। दूसरेके अनुसार दो पर्याय शब्दोंको साथ रखते हैं । हिन्दीसे इसका उदाहरण लेकर इसे स्पष्टतासे समझाया जा सकता है । 'हरि'-का अर्थ विष्णु, साँप, पानी तथा मेढक आदि होता है । इसी प्रकार 'क्षीर'का अर्थ दूध तथा पानी आदि होता है । अब यदि 'हरिक्षीर' कहें या लिखें तो अर्थमें गड़बड़ी न होगी । दोनोंके अनेक अर्थोंमें 'पानी' उभयनिष्ट है, अतएव स्वभावतः उसीकी ओर लोगोंका ध्यान जायगा । चीनीमें इस प्रकारके पर्यायोंके चिह्न एक स्थानपर रखकर भी भाव तथा सुरको स्पष्ट किया जाता है । कुंग-पा (डरना) शु-मु (पेड़) या काओ-सु (कहना) आदि चीनी चिह्न इसी श्रेणीके हैं । अन्तिम प्रकारके प्रयोगमें जो दो शब्द-चिह्न साथ-साथ रखे जाते हैं, उनमें कोई स्वाभाविक सम्बन्ध नहीं है । उदाहरणार्थ हु (=चीता)के लिए लाव हु (वृद्ध चीता) लिखते हैं । यहाँ लाव(वृद्ध)का चीतेसे कोई सम्बन्ध नहीं है पर प्रयोगकी रूढ़िके कारण इन दोनों चिह्नोंको एक स्थानपर देखकर लोग समझ जाते हैं कि यह 'चीते'के लिए आया है । कहना न होगा कि इस प्रकारके दोहरे प्रयोग द्वारा चीनी लिपिमें सुर तथा भाव स्पष्ट हो जाता है, नहीं तो बड़ी गड़बड़ी होती।

चीनी लिपिमें कुल लगभग ५६ हजार चिह्न हैं । स्वरूपकी दृष्टिसे इनका प्रयोग कई प्रकारसे होता है जिनमें प्रधान तीन हैं । एक तो सामान्य प्रयोगकी हैं, जिसमें ज्यों-के-त्यों चिह्न बना दिये जाते हैं । दूसरे प्रकारकी लिपिको त्वरालिपि या शार्ट-हैंड कह सकते हैं । इसमें चिह्नोंके स्वरूप कुछ इस प्रकारके हैं, जिन्हें तेज़ीसे लिखा जा सके । तीसरे प्रकारकी लिपि आलंकारिक है। इसके कई विभेद हैं । आकर्षक तथा कलात्मक रूपमें लिखनेमें इसका प्रयोग किया जाता है ।

चीनी लिपिमें अलग-अलग वर्ण या अक्षरके लिए चिह्न न होनेके कारण विदेशी व्यक्तियोंके नामोंके अंकनमें बड़ी कठिनाई होती रही है, पर इसके लिए वे प्रायः अनुवादसे काम चलाते रहे हैं । उदाहरणार्थ यदि उन्हें 'ईश्वरनाथ' लिखना हो तो वे इसके टुकड़े करके यह देखेंगे कि टुकड़ोंका क्या अर्थ है और फिर उन अर्थोंके लिए अपनी भाषामें प्रयुक्त शब्दोंके चिह्न रख देंगे । प्रस्तुत उदाहरणमें अपनी भाषासे 'भगवान्' (ईश्वर) और 'स्वामी' (नाथ)-के पर्यायके चिह्न एक स्थानपर लिख देंगे और यही उनके लिए 'ईश्वरनाथ' हो जायगा । भगवान् बुद्धके पिता 'शुद्धोदन'का नाम चीनीमें जिस रूपमें लिखा मिलता है उसका वास्तविक अर्थ 'शुद्ध चावल' (शुद्ध+ओदन) है । पर कभी-कभी एक दूसरा रास्ता भी वे लोग अपनाते हैं । यदि उन्हें कोई शब्द लिखना हो, और उसकी ध्वनिसे मिलता-जुलता शब्द यदि उनकी भाषामें है तो उसीका चिह्न उसके स्थानपर रख देते हैं । बुद्धके पिता 'शुद्धोदन'का नाम तो उन लोगोंने अनुवाद करके रखा है, जैसा कि ऊपर कहा गया है किंतु बुद्धकी स्त्री 'यशोधरा'की ध्वनिसे मिलता-जुलता कोई शब्द उन्हें मिल गया अतः अनुवादकी आवश्यकता नहीं पड़ी । मेरे एक मित्र 'केशवचन्द्र सिन्हा'के नाममें 'केशव' और 'चन्द्र' के लिए तो 'ईश्वर' और 'चाँद'का चिह्न लिखते हैं, किंतु सिन्हासे मिलता-जुलता कोई शब्द चीनीमें है और उसीसे काम चल जाता है । इधर कुछ दिनोंसे

विदेशी शब्दों तथा नामोंके अंकनके लिए एक और पद्धतिका विकास भी चीनियोंने कर लिया है और प्रायः बिना अनुवादके काम चल जाता है। चीनी लिपिमें चीनी लोगों तथा विदेशियों, दोनोंहीके लिए यह एक बहुत बड़ी कठिनाई रही है कि इसमें वर्णमालायुक्त लिपियोंकी तुलनामें चिह्न बहुत अधिक हैं और साथ ही वे बहुत कठिन भी हैं। कुछ चिह्नोंमें तो बीस-से भी अधिक 'स्ट्रोक' हैं। इन दोनों कठिनाइयोंको पार करनेके लिए इधर प्रयास किये गये हैं। चिह्न कठिन हैं, स्ट्रोक या रेखाओंके आधिक्यसे। इससे त्राण पानेके लिए वहाँके लिपिवेत्ताओंने लगभग ५०० चिह्नोंकी रेखाओंकी संख्या घटाकर इन्हें बहुत सरल बना दिया है। और अब इन ५०० सरल चिह्नोंका प्रयोग चल रहा है, किंतु केवल इतने सुधारसे ही चीनियों-ने संतोष नहीं किया है। चीनी लिपिकी तुलनामें वे वर्णात्मक लिपिकी उपयोगिताको समझ गये हैं और सर्वोत्तम वर्णात्मक लिपि रोमनको वे अपनानेके प्रयासमें हैं। उनकी भाषामें कुछ ऐसी भी ध्वनियाँ हैं, जिनके लिए रोमन लिपिमें चिह्न नहीं हैं। इसके लिए उन्होंने रोमन लिपिमें कुछ नये चिह्न बना दिये हैं जो ळ, ञ्ज तथा ङ आदि ध्वनियोंके लिए हैं। इस प्रकारकी प्रस्तावित रोमन लिपि—जो चीनी लिपिका स्थान लेना चाहती है—तीस अक्षरोंकी है, जिसमें २४ व्यंजन तथा छह स्वर हैं।

चीनी-शान (chinese-shan)—(दे०) **शान-चीनी**।

चीनी-स्यामी—**ताई-चीनी** (दे०)का एक अन्य नाम।

चुंगली (chungli)—**आओ-नागा** (दे०)-की, असमकी नागा पहाड़ियोंपर प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ९,३००के लग-भग थी।

चुआना (chuana)—**बांटू परिवार** (दे०)-की एक अफ्रीकी भाषा। इसका क्षेत्र दक्षिणी अफ्रीकामें बेचुआनालैंड है।

चुक्ची (chukchi)—**चुक्ची-कमचदल** (दे०) परिवारकी, १०,००० चुक्ची नामक एक साइबेरियन जातिमें प्रयुक्त भाषा। इसका क्षेत्र उत्तरी पूर्वी एशियामें एक छोटा-सा प्रदेश है।

चुक्ची कमचदल (chukchi-kamchadal)—धुर उत्तरीपूर्वी एशियाका एक भाषा-परिवार। इसका अभीतक किसी अन्य प्रसिद्ध भाषा-परिवारसे संबंध-स्थापन नहीं हो सका है। 'चुक्ची' और कमचदल नामकी दो साइबेरियन जातियां हैं, जो इस परि-वारकी **चुक्ची**, और **कमचदल** भाषाएँ बोलती हैं। **कोरयक** भाषा (जो इसी नामकी जाति-की है) भी इसी परिवारकी है। इस परि-वारको **हाइपरबोरियन** (दे०) वर्गके अन्तर्गत रखा जाता है।

चुचोन (chuchon)—**चोचो** (दे०) उप-भाषाका एक अन्य नाम।

चुतिया (chutiya)—शिवसागर और लखीमपुर (असम) में प्रयुक्त एक भाषा। यह **चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके 'बड़' वर्गमें आती है। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४,११३के लग-भग थी।

चुमश (chumash)—**होक** (दे०) भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

चुरपा (churapa)—**चिकिटो** (दे०) भाषा-परिवारकी एक प्रमुख दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

चुरादि गण—संस्कृत धातुओंका एक **गण** (दे०)।

चुराही—पश्चिमी पहाड़ीकी **चमेआली** (दे०) बोलीकी एक उपबोली। चंबाके समीप 'चुराही'के आसपास इसका क्षेत्र है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या २७,३०१ थी। यह टकरीके एक विकसित रूपमें लिखी जाती है।

चुरोये (churoye)—**गुअहिबो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसके अन्य नाम **बिसनिगुआ** तथा **गुअइगुआ** हैं।

चुलिकाता (chulikata)—**मिश्मी** (दे०)-का एक रूप।

चुवैश (chuvash)—**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी एक भाषा। इसका क्षेत्र बलगेरिया है। इसी नामकी एक जाति बोलती है।

चूतिया (chutiya)—**मिरी** (दे०)का एक रूप।

चूरूवाली—**बीकानेरी** (दे०)का, फर्रुखाबाद (उत्तर प्रदेश)में प्रयुक्त एक विकृत रूप।

चूलिका पैशाची—**पैशाची प्राकृत** (दे०)का एक भेद।

चूहरा—एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

चेंचू (chenchu)—१८९१की मद्रास जनगणनाके अनुसार **तेलुगु** (दे०)का एक नाम।

चेचेन—एक **काकेशस** (दे०) भाषा जिसमें तुश, इंग्विश आदि बोलियाँ हैं। इसका क्षेत्र डैगेस्टन है। बोलनेवालोंकी संख्या ३ लाखसे ऊपर है।

चेचेनो-लेस्ग़िअन—(checheno-lesghian)—**पूर्वी काकेशन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

चेचेहेट (chechehet)—**हेट** (दे०)परिवारकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

चेपांग (chepang)—नेपालकी मध्यवर्ती पहाड़ियोंपर बोली जानेवाली **चीनी परिवार** (दे०)की एक तिब्बती-बर्मी भाषा।

चेयेन्ने (cheyenne)—**चेयेन्ने वर्ग** (दे०)-की एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसे चेयेन्ने नामकी एक अलगोन्किन उपजाति बोलती है। इनका क्षेत्र मिसूरी नदी तथा अरकान्ससके बीच है।

चेयेन्ने वर्ग (cheyenne)—**अलगोन्किन** (दे०) भाषा-परिवारका उत्तर अमेरिकामें स्थित एक भाषा वर्ग। इस वर्गमें दो भाषाएँ हैं : **चेयेन्ने** (दे०) तथा **सुतइओ** (दे०)।

चेरकेस (cherkess)—**सरकैसिअन** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

चेरेमिस (cheremis)—**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी एक **फ़िनो उग्रिक** या **यूराली** भाषा जो एशियाई रूसमें लगभग पौने चार लाख लोगों द्वारा प्रयुक्त होती है।

चेरोकी (cherokee)—**इरोकियन** या **इरोक़ोइस** (दे०) भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। चेरोकी जातिके लोग इरोक़ोइस जातिके ही एक अंग हैं। इनका क्षेत्र ओक्लहोम है। इनकी अपनी लिपि भी है, जिसमें इनके पास मुद्रित साहित्य भी है।

चेरोकी लिपि—उत्तरी अमेरिकाके चेरोकी नामक आदिवासियोंकी लिपि। अमेरिकाके आदिवासियोंकी लिपियोंमें यह श्रेष्ठतम कही जाती है। यह १८२१में आविष्कृत हुई थी। इस अक्षरात्मक लिपिमें ८५ लिपि चिन्ह थे। अब इसका प्रयोग नहीं होता।

चेष्टावैशिष्ट्योत्पन्ना आर्थी व्यंजना—एक प्रकारकी व्यंजना। (दे०) **शब्द-शक्ति**।

चैमा (chaima)—**करिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

चैरेल (chairel)—मणिपुर (असम)में प्रयुक्त एक **लूई** (दे०) भाषा। 'चैरेल' भाषा अन्य 'लुई' भाषाओंसे पर्याप्त भिन्न है। इसी कारण बहुतसे विद्वानोंके अनुसार इसका पारिवारिक संबंध संदिग्ध है।

चैल्सिडिअन लिपि—**ग्रीक लिपि** (दे०)का एक रूप।

चोंगलोई (chongloi)—**थादो** (दे०)का एक रूप।

चोंटल (chontal)—(१) **भटगलपा** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम। (२) मध्य अमेरिकीकी **टज़ोट्ज़िल भाषा** (दे०)की एक बोली।

चोंत्जू (chontzu)—१८९१की मद्रास जनगणनाके अनुसार **तेलुगु** (दे०)का एक अन्य नाम।

चोको (choko)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग**

(दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार । इस परिवारकी प्रमुख भाषा भी इसी नामकी है ।

चोक्टव (choctaw)--**सेमिनोले** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

चोचो (chocho)--मध्य अमेरिकाकी **मज्र-टेक** (दे०) भाषाकी एक उपभाषा । इसको **चुचोन** भी कहते हैं ।

चोटी--**शीर्ष** (दे०)का एक अन्य नाम ।

चोते (chote)--**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके कुकी-चिन वर्गकी मणिपुरमें प्रयुक्त, एक प्राचीन 'कुकी' भाषा । इसके संबंधमें अब कोई निश्चित मत नहीं है ।

चोधरी (chodhri)--**भीली** (दे०)की सूरत और नवसारीमें प्रयुक्त, एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,२१,२५८ के लगभग थी ।

चोन (chon)--**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)-का एक भाषा-परिवार । इस परिवारमें लगभग ३९ भाषाएँ हैं । जिनमें प्रमुख **पटगोनिअन, फुएगिअन, टेहुएलचे** तथा **टेउएश** हैं ।

चोना (chona)--**भोटिआ** (तिब्बती)का मध्य तिब्बतमें प्रयुक्त एक रूप ।

चोनो (chono)--दक्षिणी अमेरिकाकी **अलकालुफ़ परिवार** (दे०)की एक विलुप्त भाषा ।

चोरीवाली (choriwali)--**चूरवाळी** (दे०)का विकृत नाम ।

चोर्टी (chorti)--मध्य अमेरिकाकी **टज़ोट्ज़िल भाषा** (दे०)की एक बोली ।

चोल (chol)--मध्य अमेरिकाकी **टज़ोट्ज़िल भाषा** (दे०)की एक बोली ।

चोलुटेक (cholutek)--**मन्गुए** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

चोलोना (cholona)--**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा परिवार । इस परिवारकी प्रमुख भाषा भी इसी नामकी है ।

चौंग्थ (chaungtha)--अक्याव तथा उत्तरी अराकान (बर्मा)में प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०)के बर्मा वर्गकी एक भाषा । बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ६४,५३१ थी ।

चौंग्यी चिन (chaunggyi chin)--अक्याव (बर्मा)में प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०)की एक कुकिचिन भाषा । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ६६६के लगभग थी ।

चौ (chau)--**चव** (दे०)का एक नाम ।

चौगरखिया--माध्यमिक पहाड़ी बोली **कुमाऊँनी** (दे०)की एक उपबोली जो 'चौगरखा'-के आसपास 'चौगरखिया' लोगों द्वारा बोली जाती है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३७,२१० थी ।

चौदांगसी (chaudangsi)--अलमोड़ामें चौंदांग पट्टीमें प्रयुक्त, **चीनी परिवार** (दे०)की एक तिब्बती-बर्मी भाषा । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,४८५के लगभग थी ।

चौभैंसी--**रौ-चौभैंसी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

चौरासी--**जयपुरी** (दे०)का एक स्थानीय रूप जो 'काठैड़ा' बोलीके क्षेत्रके दक्षिण किशनगढ़की सीमाके पास बोला जाता है । परिनिष्ठित जयपुरीसे यह थोड़ा ही भिन्न है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,८२,१३३ थी ।

चौरासीकी बोली--**गोंडी** (दे०)का मांडलामें प्रयुक्त, एक नाम ।

चौरास्य (chaurasya)--नेपालमें प्रयुक्त **खंबू** (दे०) की एक बोली ।

च्यंग (chyang)--**स्यंग** (दे०)का एक रूप ।

च्वी (chwee)--(दे०) **त्वी** ।

छ

छंदस्––**वैदिक संस्कृत** (दे०) का एक अन्य नाम।

छंदोभाषा––**वैदिक संस्कृत** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम।

छकाटिया (chhakatia)––**कुमायूँनी** (दे०) बोलीकी नैनीतालमें प्रयुक्त एक उपबोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २५,८०० थी।

छकार––छ के लिए प्रयुक्त नाम (दे०) **कार**।

छखातिया––**कुमायूँनीकी उपबोली रउ चौंभैंसी** (दे०) का, नैनीताल जिलेमें 'छखात' नामक स्थानमें तथा उसके आस-पास प्रयुक्त, एक स्थानीय रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २५,८०० थी।

छछी (chhachhi)––**पश्तो** (दे०) की, उत्तरी-पूर्वी बोलीका, अटकमें प्रयुक्त, एक रूप।

छत्तीसगढ़ी––**पूर्वी हिन्दी** (दे०) की एक उपबोली। इसका केन्द्र छत्तीसगढ़में होनेके कारण ही इसे यह नाम दिया गया है। 'छत्तीसगढ़' नामके संबंधमें कई मत हैं। कनिंघमका कहना है कि इस प्रदेशका प्राचीन नाम 'अधिष्ठ्री' था। इसका 'अधिष्' ही छत्तीस हो गया। एक अन्य मतानुसार चेदि वंशी हैहयोंका यहाँ राज्य था। उसीसे 'चेदीगढ़' बना, जिसका विकास 'छत्तीसगढ़' हो गया। एक तीसरा मत यह भी है कि ३६ घर चमार विहार छोड़कर यहाँ आ बसे थे। यह '३६ घर' ही बादमें 'छत्तीसगढ़' हो गया। कुछ लोगोंने इसे छत्तीस राज्यों या गढ़ोंका समूह मानकर भी इसकी व्युत्पत्ति दी है। इसके अन्य नाम **लरिया, खल्टाही** या **खलोटी** भी हैं। 'छत्तीसगढ़ी' बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग ३३ लाख थी। यह रायपुर, बिलासपुर, संभलपुरके पश्चिमी भाग, कांकेर, नंदगाँव, सुरगुजा, उदयपुर, चाँदाके उत्तरी-पूर्वी भाग, बालाघाटके पूर्वी भाग तथा सक्ती, सारंगढ़, जशपुर, जयपुर, बस्तर एवं बिहारके कुछ भागोंमें बोली जाती है।

छत्तीसगढ़ीकी प्रधान उपबोलियाँ **सुरगुजिया** (दे०), **सदरी, कोरवा** (दे०), **बैगानी** (दे०), **बिंझवाली** (दे०), **कलंगा** (दे०) तथा **भुलिआ** (दे०) हैं। कुछ अन्य रूप **सतनामी** (दे०), **कांकेरी** (दे०) तथा **बिलासपुरी** (दे०) आदि भी हैं।

छत्तीसगढ़ीका साहित्यमें प्रयोग प्रायः नहीं हुआ है। आधुनिक कालमें अवश्य शुकलाल प्रसाद पांडेय आदि कुछ लोगोंने इसमें काव्य रचना की है। सामान्यतः प्राचीनकालमें इसके साहित्यकारोंने ब्रज या अवधीमें लिखा। आधुनिककालमें भी साहित्य-रचना प्रायः खड़ी बोली हिन्दीमें ही हो रही है। लोक साहित्यकी दृष्टिसे छत्तीसगढ़ी अवश्य संपन्न है। इसका उद्गम अर्द्धमागधीसे हुआ है। (दे०) **अवधी**। छत्तीसगढ़ीके लिए प्रमुख रूपसे नागरी लिपि प्रयोगमें आती है। इसकी केवल दो उपबोलियाँ (भुलिया तथा कलंगा) उड़िया लिपिमें लिखी जाती हैं।

छपरहिया––**दक्षिणी भोजपुरी** (दे०) का एक स्थानीय रूप जो छपराके आसपास बोला जाता है।

छांदस्-प्रयोग––ऐसे रूप या प्रयोग जो केवल वैदिक साहित्यमें मिलते हैं।

छिंगतांग (chhingtang) नेपालकी ऊपरी घाटीमें प्रयुक्त **खंबू** (दे०) की एक बोली।

छिंदवाड़ा बुंदेली––पश्चिमी हिन्दीकी **बुंदेली** (दे०) बोलीके 'मराठी' मिश्रित कुछ स्थानीय या जातीय रूपोंका एक वर्ग। छिंदवाड़ीमें प्रयुक्त होनेके कारण बुंदेली बोलियोंके इस वर्गका नाम 'छिंदवाड़ा बुंदेली'

पड़ा है। इसे 'बुंदेली छिंदवाड़ी' या 'छिंदवाड़ी बुंदेली' भी कहते हैं। इस वर्गके प्रमुख रूप **बग्ेली** (दे०), **बुंदेली** (दे०), **पोवारी** (दे०) **गाओली** (दे०) **राघोबंसी** (दे०) तथा **किरारी** (दे०) आदि हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इस वर्गके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,४५, ५०० थी।

छिंदवाड़ी-बुंदेली––(दे०) **छिंदवाड़ा-बुंदेली**।

छिका-छिकी––**मैथिली** (दे०)की, दक्षिणी भागलपुर, उत्तरी संथालपरगना तथा दक्षिणी मुंगेरमें प्रयुक्त एक उप-बोली। यह उप-बोली मगही तथा बंगालीसे प्रभावित है। इसकी क्रियामें 'परिनिष्ठित मैथिली'के 'थीक्'की तुलनामें 'छिका' या 'छिक'का प्रयोग होता है, इसी कारण इसे 'छिका-छिकी' नाम दिया गया है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १७,१९,७८१ थी।

छिभाली––(chhibhali) **चिभाली** (दे०)-का अशुद्ध नाम।

छोटा कोष्टक––एक प्रकारका कोष्टक। (दे०) **विराम**।

छोटा बंघाली––पश्चिमी पहाड़ीके **मंडी वर्ग** (दे०)की, मंडीके उत्तरी क्षेत्रमें प्रयुक्त एक उप-बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,५०,००० थी। इस संख्यामें 'मंडेआली' बोलनेवाले भी सम्मिलित थे।

ज

जंगदी (jangdi)––१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार, **उर्दू** (दे०)का, खानदेशमें प्रयुक्त एक रूप।

जंगली––(१) भील भाषाओंके लिए बंबईमें प्रयुक्त एक नाम। (२) पंजाबीकी बोली 'मालवाई' या **जट्की** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम। (३) 'संथाली'के लिए मुर्शिदाबादमें प्रयुक्त एक नाम।

जंगशेन (jangshen)––**थाडो** (दे०) भाषाकी, उत्तरी कछार (असम)में प्रयुक्त एक बोली।

जंग्गली (janggali) **चीनी परिवार** (दे०)-की सार्वनामिक हिमालयी बर्मी-तिब्बती भाषाओंके पश्चिमी उप-वर्गकी, अलमोड़ामें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २०० थी।

ज़ंसकरी (zanskari)––**भोटिआ**की, पश्चिमी तिब्बतमें प्रयुक्त, एक बोली। वस्तुतः यह **भोटिआ** (**पुरिक की**)का ही एक रूप है। (दे०) **भोत्रिआ** (**पुरिक की**)।

जंसेन (jansen)––**जंगशेन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

ज़ओ (zao)––**लखेर** (दे०)का एक अन्य नाम।

ज़कटेक (zakatek)––**पिमा-सोनोर** (दे०) वर्गकी एक विलुप्त उत्तरी अमेरिकी भाषा।

जकार––ज् के लिए प्रयुक्त नाम। (दे०) **कार**।

जकोबाबादी––**बलोची** (दे०)की पूर्वीय बोली-का एक रूप।

जक्तुंग (jaktung)––**अंगवांकू** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

जगतई (jagatai)––**उज़बेक** (दे०)भाषाकी प्रमुख बोली।

जगन्नाथी––१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **उड़िआ** (दे०)का एक नाम।

जग़दली (jaghdali)––**जद्गाली** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

जग्दाली (jagdali)––**जद्गाली** (दे०)का एक अन्य नाम।

जटलैंडी––**डैनिश** (दे०)की एक बोली।

जटातर्दी (jatatardi)––**परिनिष्ठित लहंदा** (दे०)का, गुजरात (पंजाब) जिलेमें प्रयुक्त

एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,४७,०००के लगभग थी।

जटिल वाक्य–(दे०) **वाक्यमें वाक्योंके प्रकार** उपशीर्षक।

जट्की—जाटोंकी भाषा। इस नामका प्रयोग कई भाषाओं और बोलियोंके लिए होता है। प्रमुख प्रयोग ये हैं (१) **लहँदा**(दे०) या उसके कुछ स्थानीय रूपोंका एक अन्य नाम। (२) **मुल्तानी** (दे०) बोलीका एक स्थानीय नाम। (३) **हिंदकी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम। (४) **सिरैकी हिंदकी** (दे०)के लिए व्यवहृत एक नाम। (५) थळी (दे०)का एक अन्य नाम। (६) पंजाबीकी जंगली उपबोलीका एक नाम। (७) लासी (सिंधी बोली)के एक रूप जट्की सिंधीका एक अन्य नाम।

जड (jad) ऊपरी कनवर तथा टेहरीगढ़वालमें तिब्बतीके लिए प्रयुक्त एक नाम।

जद्गाली (jadgali)–बिलोचिस्तानमें **सिंधी** (दे०)तथा **लहँदा**(दे०)दोनोंके लिए प्रयुक्त एक नाम।

जनपदीय हिंदुस्तानी—**खड़ी बोली**(दे०)का एक अन्य नाम।

जपित (whispered)—ऐसी ध्वनि (स्वर या व्यंजन) जिसका उच्चारण फुसफुसाहट रूपमें किया जाय। (दे०) **जपित ध्वनि, जपित** व्यंजन, जपित स्वर।

जपित ध्वनि (whispered sound)—ऐसी ध्वनि (स्वर या व्यंजन) जिसका उच्चारण जोरसे न किया जाकर फुसफुसाहट रूपमें धीरेसे किया जाय। (दे०) **शारीरिक ध्वनिविज्ञानमें स्वर-यंत्र, स्वर यंत्र-मुख और स्वरतंत्री** उपशीर्षक; **जपित व्यंजन; जपित स्वर।**

जपित व्यंजन (whispered consonant) ऐसा व्यंजन जो सामान्य व्यंजनोंसे भिन्न फुसफुसाहटके रूपमें उच्चरित होता है। इसके उच्चारणमें स्वर तंत्रियोंकी स्थिति घोष व्यंजन और अघोष व्यंजनसे भिन्न होती है। (दे०) **शारीरिक ध्वनि विज्ञानमें स्वर-यंत्र, स्वर-यंत्र-मुख और स्वर-तंत्री** उपशीर्षक; तथा **व्यंजनोंका वर्गीकरण में स्वरतंत्रियोंके आधारपर** उपशीर्षक।

जपित स्वर (whispered vowel)—**अघोष स्वर** (दे०) जिनका उच्चारण फुसफुसाहटके रूपमें होता है और दूरतक नहीं सुनायी पड़ता। अवधीमें इ जपित स्वर है। उदाहरणार्थ गीलइमें। (दे०) **जपित ध्वनि।**

ज़पोटेक (zapotek)—मध्य अमेरिकाके **ज़पोटेक**(दे०)भाषा-परिवारकी प्रमुख भाषा।

ज़पोटेक परिवार (zapotek)—**केन्द्रीय अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इस परिवारके अंतर्गत प्रमुखतः **ज़पोटेक, सोल्टेक, चटिनो** तथा **पपबुको** ये चार भाषाएँ हैं। इस परिवारका प्रमुख क्षेत्र मेक्सिको तथा आसपास है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,५०,०००के लगभग है।

जफ़ेटिक (japhetic)—(१) लीबनिज़ द्वारा प्रस्तावित एक भाषा-परिवारका नाम। यह भाषा-परिवार लगभग भारोपीय भाषा-परिवार ही है। इस नामके आधार हैं हज़रत नूहके पुत्र जफ़ेट या जफ़ेथ (japheth)। (दे०) **भारोपीय परिवार।** (२) रूसी भाषा-विज्ञानविद् मार (Marr, N.) द्वारा प्रस्तावित एक कल्पित भाषा-परिवार, जिसमें काकेशस, सुमेरी, एलामाइट, बास्क, यूट्रस्कन आदि अनेक भाषाएँ हैं। मारका यह प्रस्ताव स्वीकृति नहीं पा सका। आरंभमें रूसमें इसका कुछ स्वागत हुआ था किंतु बादमें वहाँ भी इसे स्वीकृति नहीं मिली। स्टालिन भी इसके विरोधियोंमें था।

जफ़ेटिक परिवार—**भारोपीय परिवार**(दे०) का एक नाम। (दे०) **जफ़ेटिक।**

जबलपुरी (jabalpuri)—१९२१की जनगणनाके अनुसार, **बघेली**(दे०)की रीवाँमें प्रयुक्त एक बोली।

ज़बाने हिन्दुस्तान—**दक्खिनी** (दे०)का एक

अन्य नाम।

ज़बेइन (zabein)––**यबेइन** (दे०)का एक अन्य नाम।

जमथी (jamathi)––कुर्गमें **हिन्दुस्तानी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

जमदार––१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **उर्दू** (दे०)का एक रूप।

जमुआळी––जम्मूकी **डोगरा** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

जमैता (jamaita)––**तिपुरा** (दे०)का एक रूप।

जयपुरी––मध्य पूर्वीय (ग्रियर्सनके वर्गीकरणके-अनुसार) राजस्थानीकी प्रमुख बोली। यह जयपुरमें तथा आसपास बोली जाती है। 'जयपुरी' नाम यूरोपीयोंका दिया हुआ कहा जाता है। वहाँके निवासी इसे **ढुंढाली** (ढुंढाड़ प्रदेशकी भाषा) कहते हैं। ढुंढाड़ी या ढूंढाहड़ी नाम १८वीं सदीसे ही मिलता है। इसका प्राचीनतम प्रयोग 'आठ देस गूजरी' पुस्तकमें हुआ है। 'ढुंढाड़' प्रदेश शेखावाटी और जयपुरके बीचमें है। जयपुरीके अन्य नाम **झाड़शाही बोली** (निर्जन राज्य या मरु-राज्यकी बोली) तथा **काई कुईकी बोली** (जयपुरीमें क्याको 'कांई' कहते हैं) हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार जयपुरी बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १६,८७,८९९ थी। जयपुरीका परिनिष्ठित रूप जयपुरमें बोला जाता है तथा इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग ७,९०,२३१ थी। जयपुरीकी **तोरावाटी** (दे०), **काठैड़ा** (दे०), **चौरासी** (दे०), **नागरचाल** (दे०) तथा **राजावाटी** (दे०) ये पाँच स्थानीय रूप या उपबोलियाँ हैं। जयपुरीमें कुछ साहित्य रचना भी हुई है। दादूपंथी साहित्यका कुछ अंश जयपुरीमें मिलता है। (दे०) **राजस्थानी**।

जयेइन (zayein)––बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, **करेन** (दे०) की, दक्षिणी शान स्टेटमें प्रयुक्त, एक बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४,१५१ थी।

ज़रेइन (zarein)––**ज़येइन** (दे०)का एक और नाम।

ज़र्जिटो सालिमिअन (gergite-solymian)––एक विलुप्त **एशियानिक** (दे०) भाषा, जिसके बहुत कम उदाहरण प्राप्त हैं, तथा जिसके पारिवारिक संबंधका पता नहीं है।

ज़र्पी (zarpi)––जाङ्पी (दे०)का एक अशुद्ध नाम।

जर्मन––भारोपीय परिवारकी **जर्मनिक** (दे०) उपशाखाकी पश्चिमी शाखाकी एक भाषा। इसे उच्च जर्मन भी कहते हैं। इसका प्रमुख क्षेत्र जर्मनी तथा आस्ट्रिया है और इसके बोलनेवालोंकी संख्या९,००,००,०००से ऊपर है। जर्मन भाषाके विकासको प्राचीन, मध्ययुगीन और आधुनिक तीन कालोंमें बाँटा गया है। प्राचीन काल ८०० से ११०० तक, मध्यकाल ११००से १५०० तक और आधुनिककाल उसके बाद। साहित्य-रचना व्यवस्थित रूपसे १२वीं सदीसे आरंभ होती है यों इसके पहले भी कुछ धार्मिक ग्रंथ लिखे गये थे। प्रसिद्ध जर्मन साहित्यकारोंमें क्लॉपस्टॉक, वीलैंड, लेसिङ, गोथे (१७४९-१८३२), हाइन आदि उल्लेख्य हैं। दार्शनिकोंमें कान्ट, हीगेल, मार्क्स, शापेनहार, नीत्स्ते उल्लेख्य हैं। जर्मन या उच्च जर्मनकी प्रमुख बोलियाँ **यिडिश** (दे०), **श्विज़्टुत्श** (दे०), आधुनिक प्रशन, स्वाबिअन, स्विस या उच्च अलेमैनिक, फ्रेंकोनियन (पूर्वी और दक्षिणी), टिपुअरिअन, साइलेसिअन आदि हैं।

जर्मन ध्वनि-परिवर्तन (germonic sound shift) (दे०) ग्रिमनियम।

जर्मन लिपि––**जर्मन** (दे०) भाषाके लेखनमें दो लिपियोंका प्रयोग होता है। एक तो सामान्य रोमन लिपि है, जो अंग्रेजी आदिमें प्रयुक्त होती है। इसमें केवल एक चिह्न भिन्न है जो द्वित्व सके लिए आता है, साथ ही एक विशेष चिह्न(¨ उम्लाउट) भी है। जिस लिपिको सामान्यतः जर्मन लिपि समझते हैं वह रोमन लिपिके एक घसीट

रूपसे विकसित प्राचीन **मेरो विंजियन** लिपिसे निकली है। इसका प्रयोग ८वीं सदीसे मिलता है। प्राचीन अंग्रेज़ी अक्षरोंसे यह मिलती-जुलती है। इसे **फ़क्तुर** (fraktur) कहते हैं।

निकमें **ऐंग्लो-सैक्सन** तथा उसका विकसित रूप **अंग्रेजी** (दे०) आती है। **फ़िज़िअन** (दे०), **जर्मन** (दे०), **फ्रैंक** (दे०), **फ़्लेमिश** (दे०), **प्लाजदिउश** (दे०) और **डच** (दे०) आदि भी इसीमें हैं। **उत्तरी जर्मनिकमें आइस-**

[**यहाँ जर्मन वर्णमालाके छोटे-बड़े अक्षर तथा उम्लाउट दिये गये हैं।**]

जर्मनिक—**भारोपीय परिवार** (दे०) की एक उपशाखा। यह उपशाखा अपनी ध्वनियोंके परिवर्तन (दे०) **ग्रिम-नियम**के लिए बहुत प्रसिद्ध है। पहला परिवर्तन प्रागैतिहासिक कालमें हुआ, जिसके कारण भारोपीय परिवारकी अन्य शाखाओंसे यह कुछ दूर हो गयी। दूसरा परिवर्तन ७वीं सदीके लगभग हुआ जिसके कारण इस शाखाके ही उच्च जर्मन और निम्न जर्मन दो वर्ग हो गये।

इसके प्राचीनतम उदाहरण तीसरी सदीके मिलते हैं, जो इसकी पुरानी रूमी लिपिमें हैं। चौथी सदीका इंजीलका अनुवाद भी मिलता है। साहित्य इधर हज़ार वर्षोंके लगभगसे आरम्भ हुआ है। इस वर्गकी भाषाएँ धीरे-धीरे संयोगात्मकसे वियोगात्मक होती जा रही हैं। भारोपीय मूल-भाषामें संगीतात्मक स्वराघातका प्राधान्य था। इस वर्गमें अब केवल स्वेडिशमें ही संगीतात्मक स्वराघात शेष है। शेष सभी भाषाओंमें बलात्मक स्वराघात विकसित हो गया है। इसकी प्रमुख शाखाएँ पूर्वी, उत्तरी और पश्चिमी हैं। **पश्चिमी जर्म-** **लैंडिक, स्वेडिश, डैनिश, नार्वेजिअन, फ़ैरोईज़** (faroese) तथा **गॉटलैंडिक** आदि हैं। उत्तरी जर्मनिकको **स्कैन्डेनेबिअन** भी कहते हैं। **पूर्वी जर्मनिकमें गॉथिक, बुरगंडी** (burgundian) तथा **वैन्डल** आदि भाषाएँ थीं। ये भाषाएँ मृत हो चुकी हैं। जर्मनिकमें उच्च जर्मन और निम्न जर्मनका भी नाम लिया जाता है। उच्च जर्मन (दे० **ग्रिमनियम**) जर्मन भाषी क्षेत्रके दक्षिणमें है। इसमें प्राचीनकालमें बवेरियन, ऐलेमैन्निक आदि थीं। इन्हींसे उच्च जर्मन विकसित हुई। उच्च जर्मन ही जर्मन भाषा है। निम्न जर्मनमें फ़्रिज़िअन, ऐंग्लोसेक्सन या उसका विकसित रूप अंग्रेज़ी, डच, फ्लेमिश आदि हैं।

जवणालि—पन्नवणासूत्र नामक जैन-ग्रंथमें दी गयी १८ लिपियोंमेंसे एक।

जहओ (zahao)—**शुन्ग्ल** (दे०) की, चिन पहाड़ियों तथा बर्माके कुछ और भागोंमें प्रयुक्त, एक बोली। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १०,०४५ थी।

जहोव (jahow)—**जहओ** (दे०)का एक अशुद्ध नाम।

जांग (djong)—(दे०) **मो-सो**।

जांगली (jangali)—जंगल बार(पंजाब)-में प्रयुक्त परिनिष्ठित **लहंदा** (दे०)का, एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३०,६८७ थी।

जांड (jand)—(१) **पछाड़ी** (दे०)का एक दूसरा नाम। (२) **नैली** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

ज़ांडे (zande)—**सूडान वर्ग** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा।

ज़ाइरीन (zyrien)—एशियाई रूसमें लगभग पौने तीन लाख लोगों द्वारा प्रयुक्त एक **यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी भाषा। इसे **साइरीन** (syryen) भी कहते हैं।

जाटी—जाटू (दे०)का दूसरा नाम।

जाटू—पश्चिमी हिन्दीकी बोली **बाँगरू** (दे०)का एक स्थानीय रूप जो दिल्ली तथा रोहतकके आसपास बोला जाता है। इस क्षेत्रमें जाटोंकी अधिकताके कारण इसका यह नाम पड़ा है। इसे **जाटी** भी कहते हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ७,३२,२९६ थी।

जाडेजी (jadegi)—**कच्छी** (दे०)का काठियावाड़में प्रयुक्त एक अन्य नाम।

ज़ाड़पी (dzarpi)—एलिचपुर (बरार)में प्रयुक्त **मराठी** (दे०)की एक उपबोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५०००के लगभग थी। इसका एक नाम **भाड़पी** भी मिलता है।

जातिबोधक संज्ञा—(दे०) **जाति वाचक**।

जाति भाषा (caste language)—ऐसी भाषा जिसका प्रयोग केवल जाति,-विशेषमें होता हो। (दे०) **भाषाके विविध रूप**।

जातिभाषा विज्ञान (ethno.linguistics) जातियोंके संदर्भमें भाषाका अध्ययन। इसमें भाषा-विशेषके जातीय रूपों या किसी भाषा पर अन्य जातिके समवेत प्रभाव आदिका अध्ययन आता है।

जातिवाचक संज्ञा—(दे०) **संज्ञा**।

जात्य सुर—सुर (दे०)का एक भेद।

जात्य स्वरित—एक प्रकारका **स्वरित** (दे०)।

जादर (jadara)—**कन्नड़** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

जादोबाटी—ब्रजभाषा (दे०)का भरतपुर, करौली तथा ग्वालियरके कुछ भागोंमें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप। इस क्षेत्रमें जादवों (यादवों)के प्राधान्यके कारण इसका नाम 'जादोबाटी' पड़ा है। इसके बोलने वालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग १,४०,००० थी।

जानर (janar)—मद्रासमें प्रयुक्त **कन्नड़** (दे०) का एक नाम।

ज़ापरो परिवार (zaparo)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इसमें ज़ापरोके अतिरिक्त कोनम्बो, गाये, अन्दोआ तथा इकितो आदि हैं। इसका क्षेत्र उत्तरी पेरू तथा पूर्वी एक्वडॉर है। इसके बोलने वालोंकी लगभग ५० छोटी-छोटी जातियाँ हैं।

जापानी (japanese)—यह जापानकी भाषा है। अभिव्यंजना-शक्ति तथा साहित्य दोनों ही दृष्टियोंसे जापानी संसारकी सर्वोच्च भाषाओंमें है। अभी हालतक भाषा-विज्ञान-के विद्वान् 'जापानी'को किसी भी भाषा परिवारमें नहीं रख पाते रहे हैं। पर इधर लोग इसे **यूराल-अल्ताई** परिवारमें रखनेके पक्षमें हो रहे हैं। प्रमुख रूपसे जापानी विद्वान् तो पूर्ण रूपसे इस पक्षमें हैं। कुछ लोग इसे **कोरियाई**के साथ भी रखते हैं। किंतु अधिकांश विद्वान् अभीतक इसके पारिवारिक संबंधके बारेमें निश्चित नहीं हैं। जापानीमें लगभग १२०० वर्ष प्राचीन साहित्य मिलता है। सबसे पुरानी पोथी शिंतो धर्मकी 'कोसिकी' है। यहाँकी लिपि मूलतः चीनी ही है। उसे जापानी भाषाके अनुकूल बना लिया गया है। कहा जाता है

कि जिस व्यक्तिने चीनी लिपिको जापानी भाषाके अनुकूल बनाया वह संस्कृतका विद्वान् था। संभवत: इसीलिए जापानी वर्ण-माला-का नाम 'अइउएओ' है। जापानी भाषाके मौखिक और लिखित रूपमें पर्याप्त अन्तर रहा है। लिखनेकी भाषाको 'बुङो'और बोलनेकी भाषाको 'कोङो' कहते रहे हैं। १८९० ई० के आस-पास लिखित और मौखिक रूपको एक करनेका आन्दोलन चला। यमाद मिमियो तथा हुताबते शिमे इन दो व्यक्तियोंने दोनों रूपोंको एक करनेका प्रारम्भिक कार्य किया और 'उकीगुमो' नामक उपन्यास (१८८७ ई०) बोलचालकी भाषामें लिखा। अब बहुत अंशोंमें दोनोंका रूप एक है। शिष्टताकी दृष्टिसे जापानी भाषा संसारमें सबसे आगे है। प्रयोगोंकी दृष्टिसे बादशाहकी भाषा, उच्च लोगों-की भाषा, सामान्य लोगोंकी भाषा तथा स्त्रियोंकी भाषामें यहाँ कुछ भिन्नता है। अन्य भाषाओंमें सभीके पिताके लिए 'पिता' शब्द है, पर जापानीमें अपने पिताके लिए 'चिचि' शब्द है तो आपके पिताके लिए 'उतोसमा'। यह शिष्टता कुछ उसी प्रकारकी है जैसे, उर्दूमें दूसरेका स्थान पूछनेके लिए "जनाबका दौलतखाना कहाँ है" कहते हैं और अपने स्थानके लिए "मेरा ग़रीबखाना......है" कहते हैं। जापानी भाषामें चीनीसे बहुतसे शब्द उधार लिये गये हैं। इस समय टोकियोकी बोली ही जापान भरमें परिनिष्ठित मानी जाती है।

प्रधान विशेषताएँ---(१) भाषा अश्लिष्ट अन्तयोगात्मक है, पर साथ ही कुछ उदा-हरण इसके विरुद्ध भी मिलते हैं। (२) संज्ञा शब्दोंका सम्बन्ध परसर्गोंसे स्पष्ट किया जाता है। **दे**=द्वारा। **नि**=में। **नो**=का। उए=पर। **हसामी दे किरु**= कैंचीसे काटना। **नेको नोत्सुमे**=बिल्लीका पंजा। (३) बहुवचन बनानेके लिए पुन-रुक्तिका प्रचलन है---**यामा**=पहाड़। **यामा-यामा**=कई पहाड़। (४) ध्वनिसमूह बहुत सरल है। संयुक्त व्यंजनोंका प्रयोग नहीं-के बराबर है। जापानी बोलनेवालोंकी संख्या ८,५०,००,०००से ऊपर है।

जापानी लिपि---जापानी परंपराके अनु-सार प्राचीनकालमें जापानकी एक अपनी लिपि थी, तथा वहाँ **ग्रंथि-लिपि** (दे०) का भी प्रयोग होता था, किन्तु उसकी परवर्ती लिपियाँ अन्य देशोंकी देन हैं। उदाहरणार्थ उसकी प्राचीन लिपि **कमियो नो मोजी** (=दिव्य कालके अक्षर) कोरियनसे निकली है। जापानकी वर्तमान लिपि तीसरी सदीके आसपास चीनी लिपिके आधारपर बनायी गयी है। जिस व्यक्तिने इसे बनाया वह कोई बौद्ध था, जो संस्कृतका भी विद्वान् था। कदाचित् इसी लिए जापानी वर्णमाला या अक्षरी (syllabary) का नाम उसने 'अइउ-एओ' रखा। पूरे इतिहासको देखनेसे ऐसा अनुमान लगता है कि जापानियोंने उसके बाद कई बार, कई कालोंमें कई चीनी प्रदेशोंसे अपनी लिपिके लिए सामग्री ली। जापानी वर्ण-मालामें कुल लगभग १० हज़ार भाव-लिपि-चिह्न हैं, जिनमें लगभग २०००ही प्रायः काम आते हैं। ८वीं सदीमें एक जापानी विद्वान् किबीने तत्कालीन एक लिपि बनायी जिसे **कता काना** (kata kana) या **यामतो गाना** (yam-ato gana) कहते हैं। सरकारी काग़ज़ों तथा उच्च एवं वैज्ञानिक साहित्य आदिमें इसका प्रयोग होता है। ९वीं सदीमें कोबो दैशीने **हिरा गाना** (hira gana) लिपि बनायी जो समाचारपत्रों तथा उपन्यासों आदि सामान्य साहित्यिक ग्रंथोंमें प्रयुक्त होती है। ये दोनों ही लिपियाँ तत्कालीन प्रचलित लिपि (जो चीनी लिपिपर आधारित थी) के आधारपर बनीं। इन नामोंमें आये 'काना' (या 'गाना') शब्दका प्रयोग जापानी अक्षरात्मक लेखन पद्धति या जापानी वर्ण-मालाके लिए होता है। जापानी लेखनका परिनिष्ठित रूप **काना माजिरी** (kana-majiri) कहलाता है। काना माजिरीमें चीनी भावलिपि चिह्नोंका प्रयोग होता है,

जहोव (jahow)--**जहओ** (दे०)का एक अशुद्ध नाम ।

जांग (djong)--(दे०) **मो-सो** ।

जांगली (jangali)--जंगल बार (पंजाब)-में प्रयुक्त परिनिष्ठित **लहंदा** (दे०)का, एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३०,६८७ थी ।

जांड (jand)--(१) **पछाड़ी** (दे०)का एक दूसरा नाम । (२) **नैली** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

ज़ांडे (zande)--**सूडान वर्ग** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा ।

ज़ाइरीन (zyrien)--एशियाई रूसमें लगभग पौने तीन लाख लोगों द्वारा प्रयुक्त एक **यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी भाषा । इसे **साइरीन** (syryen) भी कहते हैं ।

जाटी--जाटू (दे०)का दूसरा नाम ।

जाटू--पश्चिमी हिन्दीकी बोली **बाँगरू** (दे०)का एक स्थानीय रूप जो दिल्ली तथा रोहतकके आसपास बोला जाता है । इस क्षेत्रमें जाटोंकी अधिकताके कारण इसका यह नाम पड़ा है । इसे **जाटी** भी कहते हैं । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ७,३२,२९६ थी ।

जाडेजी (jadegi)--**कच्छी** (दे०)का काठियावाड़में प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

ज़ाड़्पी (dzarpi)--एलिचपुर (बरार)में प्रयुक्त **मराठी** (दे०)की एक उपबोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५०००के लगभग थी । इसका एक नाम **झाड्पी** भी मिलता है ।

जातिबोधक संज्ञा--(दे०) **जाति वाचक** ।

जाति भाषा (caste language)--ऐसी भाषा जिसका प्रयोग केवल जाति,-विशेषमें होता हो । (दे०) **भाषाके विविध रूप** ।

जातिभाषा विज्ञान (ethno.linguistics) जातियोंके संदर्भमें भाषाका अध्ययन । इसमें भाषा-विशेषके जातीय रूपों या किसी भाषा पर अन्य जातिके समवेत प्रभाव आदिका अध्ययन आता है ।

जातिवाचक संज्ञा--(दे०) **संज्ञा** ।

जात्य सुर--सुर (दे०)का एक भेद ।

जात्य स्वरित--एक प्रकारका **स्वरित** (दे०) ।

जादर (jadara)--**कन्नड़** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

जादोबाटी--ब्रजभाषा (दे०)का भरतपुर, करौली तथा ग्वालियरके कुछ भागोंमें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप । इस क्षेत्रमें जादवों (यादवों)के प्राधान्यके कारण इसका नाम 'जादोबाटी' पड़ा है । इसके बोलने वालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग १,४०,००० थी ।

जानर (janar)--मद्रासमें प्रयुक्त **कन्नड़** (दे०) का एक नाम ।

ज़ापरो परिवार (zaparo)--**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार । इसमें ज़ापरोके अतिरिक्त कोनम्बो, गाये, अन्दोआ तथा इकितो आदि हैं । इसका क्षेत्र उत्तरी पेरू तथा पूर्वी एक्वडॉर है । इसके बोलने वालोंकी लगभग ५० छोटी-छोटी जातियाँ हैं ।

जापानी (japanese)--यह जापानकी भाषा है । अभिव्यंजना-शक्ति तथा साहित्य दोनों ही दृष्टियोंसे जापानी संसारकी सर्वोच्च भाषाओंमें है । अभी हालतक भाषा-विज्ञान-के विद्वान् 'जापानी'को किसी भी भाषा परिवारमें नहीं रख पाते रहे हैं । पर इधर लोग इसे **यूराल-अल्ताई** परिवारमें रखनेके पक्षमें हो रहे हैं । प्रमुख रूपसे जापानी विद्वान् तो पूर्ण रूपसे इस पक्षमें हैं । कुछ लोग इसे **कोरियाई**के साथ भी रखते हैं । किंतु अधिकांश विद्वान् अभीतक इसके पारिवारिक संबंधके बारेमें निश्चित नहीं हैं । जापानीमें लगभग १२०० वर्ष प्राचीन साहित्य मिलता है । सबसे पुरानी पोथी शितो धर्मकी 'कोजिकी' है । यहाँकी लिपि मूलतः चीनी ही है । उसे जापानी भाषाके अनुकूल बना लिया गया है । कहा जाता है

कि जिस व्यक्तिने चीनी लिपिको जापानी भाषाके अनुकूल बनाया वह संस्कृतका विद्वान् था। संभवतः इसीलिए जापानी वर्ण-माला-का नाम 'अइउएओ' है। जापानी भाषाके मौखिक और लिखित रूपमें पर्याप्त अन्तर रहा है। लिखनेकी भाषाको 'बुङो'और बोलनेकी भाषाको 'कोङो' कहते रहे हैं। १८९० ई० के आस-पास लिखित और मौखिक रूपको एक करनेका आन्दोलन चला। यमाद मिमियो तथा हुतावते शिमे इन दो व्यक्तियोंने दोनों रूपोंको एक करनेका प्रारम्भिक कार्य किया और 'उकीगुमो' नामक उपन्यास (१८८७ ई०) बोलचालकी भाषामें लिखा। अब बहुत अंशोंमें दोनोंका रूप एक है। शिष्टताकी दृष्टिसे जापानी भाषा संसारमें सबसे आगे है। प्रयोगोंकी दृष्टिसे बादशाहकी भाषा, उच्च लोगोंकी भाषा, सामान्य लोगोंकी भाषा तथा स्त्रियोंकी भाषामें यहाँ कुछ भिन्नता है। अन्य भाषाओंमें सभीके पिताके लिए 'पिता' शब्द है, पर जापानीमें अपने पिताके लिए 'चिचि' शब्द है तो आपके पिताके लिए 'उतोसमा'। यह शिष्टता कुछ उसी प्रकारकी है जैसे, उर्दूमें दूसरेका स्थान पूछनेके लिए "जनाबका दौलतखाना कहाँ है" कहते हैं और अपने स्थानके लिए "मेरा ग़रीबख़ाना......है" कहते हैं। जापानी भाषामें चीनीसे बहुतसे शब्द उधार लिये गये हैं। इस समय टोकियोकी बोली ही जापान भरमें परिनिष्ठित मानी जाती है।

प्रधान विशेषताएँ—(१) भाषा अश्लिष्ट अन्तयोगात्मक है, पर साथ ही कुछ उदाहरण इसके विरुद्ध भी मिलते हैं। (२) संज्ञा शब्दोंका सम्बन्ध परसर्गोंसे स्पष्ट किया जाता है। **दे**=द्वारा। **नि**=में। **नो**=का। **उएँ**=पर। **हसामी दे किरु**=कैंचीसे काटना। **नेको नीत्सुमे**=बिल्लीका पंजा। (३) बहुवचन बनानेके लिए पुनरुक्तिका प्रचलन है—**यामा**=पहाड़। **यामा-यामा**=कई पहाड़। (४) ध्वनिसमूह बहुत सरल है। संयुक्त व्यंजनोंका प्रयोग नहींके बराबर है। जापानी बोलनेवालोंकी संख्या ८,५०,००,०००से ऊपर है।

जापानी लिपि—जापानी परंपराके अनुसार प्राचीनकालमें जापानकी एक अपनी लिपि थी, तथा वहाँ **ग्रंथि-लिपि** (दे०) का भी प्रयोग होता था, किन्तु उसकी परवर्ती लिपियाँ अन्य देशोंकी देन हैं। उदाहरणार्थ उसकी प्राचीन लिपि **कमियो नो मोजी** (= दिव्य कालके अक्षर) कोरियनसे निकली है। जापानकी वर्तमान लिपि तीसरी सदीके आसपास चीनी लिपिके आधारपर बनायी गयी है। जिस व्यक्तिने इसे बनाया वह कोई बौद्ध था, जो संस्कृतका भी विद्वान् था। कदाचित् इसी लिए जापानी वर्णमाला या अक्षरी (syllabary) का नाम उसने 'अइउएओ' रखा। पूरे इतिहासको देखनेसे ऐसा अनुमान लगता है कि जापानियोंने उसके बाद कई बार, कई कालोंमें कई चीनी प्रदेशोंसे अपनी लिपिके लिए सामग्री ली। जापानी वर्णमालामें कुल लगभग १० हज़ार भाव-लिपि-चिह्न हैं, जिनमें लगभग २०००ही प्रायः काम आते हैं। ८वीं सदीमें एक जापानी विद्वान् किबीने तत्कालीन एक लिपि बनायी जिसे **कता काना** (kata kana) या **यामतो गाना** (yamato gana) कहते हैं। सरकारी काग़ज़ों तथा उच्च एवं वैज्ञानिक साहित्य आदिमें इसका प्रयोग होता है। ९वीं सदीमें कोबो दैशीने **हिरा गाना** (hira gana) लिपि बनायी जो समाचारपत्रों तथा उपन्यासों आदि सामान्य साहित्यिक ग्रंथोंमें प्रयुक्त होती है। ये दोनों ही लिपियाँ तत्कालीन प्रचलित लिपि (जो चीनी लिपिपर आधारित थी) के आधारपर बनीं। इन नामोंमें आये 'काना' (या 'गाना') शब्दका प्रयोग जापानी अक्षरात्मक लेखन पद्धति या जापानी वर्णमालाके लिए होता है। जापानी लेखनका परिनिष्ठित रूप **काना माजिरी** (kana-majiri) कहलाता है। काना माजिरीमें चीनी भावलिपि चिह्नोंका प्रयोग होता है,

और साथमें दाहिनी ओर छोटे हिरागाना-चिह्न, भी उच्चारणके लिए लगाये जाते हैं। **शिन-कत कानाा** (shin-kata kana) और **कुन्तेन** (kunten) का भी प्रयोग होता है। 'शिन-कता कानाा' में चीनी भावलिपि चिह्नके साथ उच्चारण सुविधाके लिए कताकाना चिह्न लगाते हैं तथा कुन्तेनमें जापानी अंक।

१	२
ロ	ろ
ニ	に
リ	り
ヨ	よ
オ	お
ン	ん
ミ	み
コ	こ
ラ	ら

[१ के नीचे कताकानाके अक्षर हैं, और २ के नीचे वे ही अक्षर हिरागानाके हैं। ध्वनिकी दृष्टिसे ऊपरसे नीचे ये क्रमसे रो, नि, रि, यो, ओ, न, मि, को तथा रा हैं।]

ज़ापरो (zaparo) दक्षिणी अमेरिकाके **ज़ापरो** (दे०) परिवारकी सर्वप्रमुख भाषा।

जाफ़िरी—बिलोचिस्तानमें तथा आसपास प्रयुक्त **लहंदा** (दे०) का एक विकृत रूप। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग १४,५८१ थी, जिसमें 'खेत्रानी' बोलनेवाले भी सम्मिलित थे।

जारजी (jaraji)—**जाडेजी** (दे०) का एक नाम।

जार्जिअन (georgian)—**काकेशस परिवार** (दे०) परिवारके दक्षिणी वर्ग की एक प्रमुख भाषा। इसका क्षेत्र जार्जिया है। इसे **ग्रूसिनियन** भी कहते हैं। इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १०,००,००० है। इसमें लगभग १००० ई०के बादसे साहित्य रचना हुई है।

जार्जिअन लिपि—जार्जियामें प्रयुक्त लिपि जो संभवतः आरमेइक लिपिसे निकली है।

जालंधरी दोआबी—परिनिष्ठित **पंजाबी** (दे०)-का, जालंधर दोआबमें प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २२,५८,७६९के लगभग थी।

ज़ावज़े (zawaze)—**करज** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसके अन्य नाम **जावहे** तथा **शावये** हैं।

जावानी (javanese)—**इंडोनेशियन परिवार** (दे०) की जावामें प्रयुक्त एक भाषा। इसका प्राचीन रूप कवि या कविवासा (कवि भाषा) कहलाता है। जावानी भाषा मलयसे बहुत निकटका संबंध रखती है। इसकी सामान्य और उच्च दो शैलियाँ हैं। उच्च शैलीका प्रयोग सरकारी कागज़ोंमें तथा बड़ोंसे बातचीत करने आदिमें होता है। जावानी भाषामें भारतीय शब्द पर्याप्त मात्रामें हैं, यद्यपि उनमें ध्वनिक तथा आर्थिक परिवर्तन हो गये हैं।

जावानी लिपि—जावामें प्रयुक्त लिपि। यह **ग्रंथ लिपि** (दे०) से निकली मानी जाती है। 'कुछ लोगोंने इसे पालीवर्गका' माना है। जावानी लिपिमें हर अक्षर अलग-अलग लिखा जाता है और शब्दोंके बीच अतिरिक्त स्थान नहीं छोड़ा जाता। प्राचीन जावानी लिपिको **कवि लिपि** भी कहते हैं। वहाँकी प्राचीन भाषाको कवि वासा (कविकी या कविताकी भाषा) कहते हैं, इसी आधारपर लिपिको कवि कहा गया है।

ज़िंद—**अवेस्ता** (दे०) का एक अशुद्ध नाम। (दे०) **ईरानी**।

ज़िंदावेस्ता—**अवेस्ता** (दे०) का एक अन्य नाम। (दे०) **ईरानी**।

जिकाक़े (jicaque)—**विसकके** (दे०) भाषा-परिवारका अन्य नाम।

जिन्का (jinca)—खिसन्का (दे०) परिवार-का एक अन्य नाम ।

जिप्सी (gipsy)—घुमंतू लोगों द्वारा प्रयुक्त एक भाषा।इसे रोमनी, रोमनी-भाषा, **बंजारा** भाषा भी कहते हैं । जिप्सी भाषाएँ मूलतः भारोपीय परिवारकी हैं । ५वीं सदी ई० पू०में बंजारा या जिप्सी भाषियोंके पूर्वज जहाँ-तहाँ इधर-उधर फैल गये । इनके कुछ वर्ग तो भारतके बाहर चले गये । और कुछ भारतमें विभिन्न प्रदेशोंमें चले गये इस प्रकार इनकी भाषा मूलतः ५वीं सदी ई० पू० की भाषा (संभवतः उत्तरी-पश्चिमी)से संबद्ध है । उसपर कुछ प्रभाव दरद भाषाओंका भी है । जिप्सीकी भारतमें प्रमुख भाषाएँ बेल्दारी, भाम्टी, डोम, गारोडी, गुलगुलिया, कंजरी (इसकी एक बोली कुच-बंधी है) कोल्हारी, लाडी, मचरिआ, मलार, चूहरा म्यानवाला या लहारी, नटी, ओड्की, पेंढारी, कशाई, सांसी तथा सिकलगारी आदि हैं । भारतमें जिप्सी भाषाओंके बोलनेवाले १९२१की जनगणनाके अनुसार १५,०००से ऊपर थे । ग्रियर्सनने इनकी संख्या सर्वेक्षणमें एक लाखसे ऊपर दी है । भारतके बाहर जिप्सी भाषाएँ बोलनेवाले आर्मेनिया, तुर्की, सीरिया, ईरान, रूस, इटली, तथा फ्रांस आदि अनेक देशोंमें हैं। अब ये भाषाएँ स्थानीय भाषाओंसे काफ़ी प्रभावित हो गयी हैं। इनमें संस्कृत मूलके शब्दोंमें घधभके स्थान पर ख, थ, फ मिलता है । भारतकी प्रमुख जिप्सी भाषाओंको कोशमें यथास्थान देखा जा सकता है । जिप्सीको बंजारा, रोमानी (हिंदी डोम) या हबूड़ी भी कहते हैं ।

जिम्दार (jimdar)—**राई** (दे०)का एक अन्य नाम ।

जिह्वा (tongue)—भाषाके उच्चारणमें सबसे महत्त्वपूर्ण अंग । **स्पर्श** (दे०) **स्पर्श-संघर्षी** (दे०) **लुंठित** (दे०) **पार्श्विक** (दे०) आदि अनेक प्रकारके व्यंजनों तथा स्वरोंके उच्चारणमें इससे सहायता मिलती है । इसके नोक, अग्र, मध्य, पश्च तथा मूल आदि कई भाग किये गये हैं। सभी ध्वनियोंके उच्चारणमें अलग-अलग काम करते हैं । विशेष विवरणके लिए देखिये **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान** ।

जिह्वाग्र (जिह्वा-फलक, front of the tongue)—जीभका अगला भाग। इससे कुछ ध्वनियोंके उच्चारणमें सहायता मिलती है । (दे०) **जिह्वा** तथा **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान** ।

जिह्वाग्र ध्वनि (frontal)—जीभके अगले भागसे उच्चरित ध्वनि ।

जिह्वानीक (जिह्वानोक, tip of the tongue)—जीभका आगेका नोकीला भाग । इससे अनेक प्रकारकी ध्वनियोंके उच्चारणमें सहायता मिलती है । (दे०) **जिह्वा** तथा **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान** ।

जिह्वानोक—**जिह्वानीक** (दे०)का एक अन्य नाम ।

जिह्वा-पश्च (जिह्वापृष्ठ, पश्चजिह्व, dorsum, back of the tongue,—जीभका पिछला भाग। इससे कई प्रकारकी ध्वनियोंके उच्चारणमें सहायता मिलती है । इसे **पश्च-जिह्व** भी कहते हैं । (दे०) **जिह्वा** तथा **शारीरिक-ध्वनि विज्ञान** ।

जिह्वा पश्चीय (dorsal)—जिसका उच्चारण **जिह्वा-पश्च** (दे०) (dorsum)से किया जाय ।

जिह्वापृष्ठ—**जिह्वा-पश्च** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

जिह्वा-फलक—**जिह्वाग्र** (दे०)का एक अन्य नाम ।

जिह्वामध्य (middle of the tongue)—जीभका मध्य भाग । इससे ध्वनियोंके उच्चारणमें कुछ सहायता मिलती है। (दे०) **जिह्वा** तथा **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान** ।

जिह्वामूल (root of the tongue)—जीभकी जड़ । इससे कुछ ध्वनियोंके उच्चारणमें सहायता मिलती है। 'क़' आदि ध्वनियाँ यहींसे उच्चरित होती हैं । यहाँसे उच्चरित ध्वनियोंको **जिह्वामूलीय** कहते हैं। (दे०)

जिह्वा तथा शारीरिक ध्वनि-विज्ञान ।

जिह्वा मूलस्थान--जीभकी जड़से उच्चरित ध्वनियोंके लिए प्रयुक्त एक नाम। ऐसी ध्वनियोंको **जिह्वमूलीय** भी कहते हैं ।

जिह्वामूलीय--(१) जीभकी जड़से उच्चरित (ध्वनि)। (२) एक प्रकारकी ध्वनि। ऐसे **विसर्ग** (दे०)को जिह्वामूलीय कहा गया है जो स्वर तथा क् या ख् के बीचमें हो, अर्थात् जिसके पहले स्वर, तथा बादमें क् या ख् हो। जैसे 'विष्णु≍करोति' इसे परवर्ती व्यंजन (क या ख) पर आधारित माना गया है, इसी कारण इसकी गणना व्यंजनोंमें है । यद्यपि शुद्ध विसर्ग संस्कृतके आचार्योंके अनुसार स्वर है। जिह्वा मूलीयका अर्थ है 'जीभकी जड़के पास उच्चरित' । क, ख के प्रभावसे 'विसर्ग' इसका उच्चारण जिह्वामूल के पास होता है। प्राचीन संस्कृत ग्रंथोंमें ऋ, लृ, विसर्ग, ऊष्म तथा कवर्गको जिह्वामूलीय कहा गया है । स्वर तथा क-ख के बीचके विसर्गके अर्थमें यह शब्द पाणिनिके बाद ही सीमित हुआ है । इसका चिह्न है--≍। इसे भी **अयोगवाह** (दे०) ध्वनि कहा गया है ।

जिह्वोत्कंपी (trilled)--**कम्पनयुक्त** (दे०)-का एक अन्य नाम। ऐसी ध्वनि जिसके उच्चारणमें जीभकी नोकको कंपित किया जाय ।

जीवित भाषा (living language)--ऐसी भाषा जो आज भी प्रयोगमें हो, जैसे 'हिन्दी' ।

जुंगी (zungi)--**चुंगली** (दे०)का एक नाम।

जुंग्रैमेटिकर (junggrammatiker)--१९वीं सदीके नये भाषाविज्ञानवेत्ताओंका एक वर्ग या स्कूल जिनका ध्वनि नियम, सादृश्य आदिमें विशेष विश्वास था। इस वर्गके प्रमुख भाषा विज्ञानविद् ब्रुगमान, पाल आदि थे ।

जुआंग (juang)--उड़ीसामें प्रयुक्त एक **मुंडा** (दे०) भाषा। १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १०,५३१ थी ।

जुड़ार--**बघेली** (दे०)की एक उप-बोली जो बाँदा जिलेमें, केन और बगेन नदियोंके बीचके क्षेत्रमें बोली जाती है । इसमें 'गहोरा' तथा 'तिरहारी'की अपेक्षा 'बुंदेली'के रूपोंका अधिक मिश्रण है । इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार १ लाख १४ हजारसे कुछ ऊपर थी । इसके प्रधान स्थानीय रूप '**कुंड्री**' (दे०), **बग्रावल** (दे०) तथा **अघर** (दे०) हैं। इसे **जूड़र** भी कहते हैं ।

जुना (dzuna)--**अंगामी नागा** (दे०)की नागा पहाड़ियों (असम)में प्रयुक्त एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,४३० के लगभग थी ।

जुलू--**बांटू परिवार** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा । इसका क्षेत्र दक्षिणी-पूर्वी अफ्रीकामें जुलूलैंड, नैटाल तथा केप कॉलोनीमें है। इसे जुलू लोग बोलते हैं। **टेबेले** (दे०)को कुछ लोग जुलूकी एक बोली मानते हैं ।

जुबोइ--एक **अंडमानी** (दे०) भाषा ।

जुहोत्यादिगण--संस्कृत धातुओंका एक **गण** (दे०) ।

जूडो आरमेइक--एक आरमेइक बोली ।

जूडो-जर्मन (jadaeo-german)--**यिडिश** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

जूनी (zuni)--**उत्तरी अमरीकी वर्ग** (दे०)-का एक भाषा-परिवार। इसकी प्रमुख भाषा जूनी है ।

जूरिमगुआ (zurimagua)--**टुपी-गवरनी** (दे०) परिवारकी दक्षिणी अमेरिकामें प्रयुक्त एक विलुप्त भाषा। इसका एक अन्य नाम **यूरिमगुआ** भी है ।

जेंटू--**तेलुगु** (दे०)का एक अन्य नाम ।

जेन्द--**अवेस्ता** (दे०)के लिए कभी-कभी प्रयुक्त एक नाम **ईरानी** (दे०) ।

जेंदावेस्ता--**अवेस्ता** (दे०)का एक अन्य नाम। (दे०) **ईरानी** ।

जे (ze)--**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार । इस परिवारको **गे** (ge) तथा **क्रन** (kran) भी कहते हैं।

इस परिवारमें लगभग ५० भाषाएँ हैं, जिन्हें **पूर्वी जे** (दे०) **उत्तरी जे** (दे०) **मध्यवर्ती जे** (दे०) तथा **दक्षिणी जे** (दे०) इन चार वर्गोंमें बाँटा जा सकता है। इस परिवारकी भाषाओंका अब पर्याप्त अध्ययन हो गया है। इस परिवारका क्षेत्र ब्राज़ील आदिमें हैं। इस परिवारकी बहुतसी भाषाएँ लुप्त हो चुकी हैं।

जेक (jek)—**काकेशस परिवार** (दे०)की काकेशसमें प्रयुक्त एक भाषा।

जेक (czech)—भारोपीय परिवारकी पश्चिमी स्लाव भाषा जो ज़ेकोस्लोवाकिया तथा अन्य देशों (अमेरिका, बेलजिअम, फ्रांस, आस्ट्रिया आदि) में लगभग एक करोड़, २० लाख लोगों द्वारा बोली जाती है। इसमें साहित्य रचना १३वीं सदीसे मिलती है। इसका प्राचीनतम रूप ९वीं सदीका मिला है। इसके प्रसिद्ध साहित्यकारोंमें जान हुस तथा जान अमोस कोमेंस्की प्रमुख हैं। ज़ेकपर जर्मन, फ्रेंच आदिका पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। ज़ेकलिपि रोमन है, किंतु विशिष्ट चिह्नोंके आधारपर कुछ नये चिह्न भी बढ़ा लिये गये हैं। इसकी एक बोली **स्लोबेकिअन** है। ज़ेकको पहले **बोहेमिअन** भी कहते थे।

जेनागा (zenaga)—अफ्रीकामें दक्षिणी मोरक्कोमें तथा आस-पास ज़ेनागा नामक एक बर्बर जाति तथा कुछ हब्शियों द्वारा प्रयुक्त एक हैमिटिक परिवारकी भाषा।

जेनुकुरूब (jenukuruba)—**कुरूब** (दे०)के लिए, कुर्गमें प्रयुक्त एक नाम।

जेनेटे (zenete)—हैमिटिक परिवारकी, उत्तरी तथा उत्तरी-पूर्वी अफ्रीकामें प्रयुक्त कुछ बोलियोंका एक सामूहिक नाम। यह बर्बर वर्गमें है।

जेबकी (zebaki)—**इश्काश्मी** (दे०)की, जेबक तथा उसके आस-पास प्रयुक्त, एक बोली।

जेमा (jema)—**येमा** (दे०)का एक नाम।

जेमे (jeme)—**एम्पेओ** (दे०)के लिए, असमके कुछ भागोंमें प्रयुक्त एक नाम।

जैंतिआपुरी—सिलहटिया (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

जैन—१८९१ की बम्बई जनगणनाके अनुसार **गुजराती** (दे०)के एक रूपका नाम।

जैविक भाषा विज्ञान (biolinguistics)—भाषाका जैविक या प्राणीय स्तरपर, स्नायु-प्रक्रिया आदि शारीरिक क्रियाओंकी दृष्टिसे अध्ययन।

जो—**सूडान वर्ग** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा। इसके अन्य नाम **इजो** (ijo), **बॉनी** (bonny) या **नवकलाबर** (new kalabar) भी हैं। 'जो' की कई बोलियाँ हैं। इसका क्षेत्र निम्न नाइजीरिया है।

ज़ो (zo)—(१) वर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार चिन पहाड़ियोंपर प्रयुक्त तथा लगभग ४,५०० व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत, **चीनी परिवार** (दे०)की एक **कुकी-चिन** भाषा। (२) (dzo)—**लुशेई** (दे०)की एक बोली।

ज़ोए (zoe)—**पिमा-सोनोर** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

ज़ोके (jzoke)—मध्य अमेरिकाके **मिक्से-ज़ोके** (दे०) परिवारकी एक भाषा।

जोगिरा (jogira)—**तुळु** (दे०)का एक नाम। वस्तुतः यह मद्रासमें प्रयुक्त तुळु भाषी एक जातिका नाम है।

जोगी—**तेलुगु** (दे०)का एक नाम। वस्तुतः यह मद्रासमें प्रयुक्त एक 'तेलुगु' भाषी जातिका नाम है।

जोधपुरी-मारवाड़ी (दे०)का एक अन्य नाम।

जोबोक (joboka)—**बनपरा** (दे०)का एक दूसरा नाम।

जोलहा बोली—पूर्वी हिन्दीकी प्रमुख बोली **अवधी** (दे०)का एक रूप, जो बिहार प्रान्तमें मुज़फ्फ़रपुर, चंपारन तथा दरभंगाके मुसलमानोंमें प्रचलित है। इसके बोलनेवालोंमें जोलाहों (मुसलमान बुनकर)का प्राधान्य होनेके कारण यह नाम पड़ा है। 'जोलहा बोली' का परिनिष्ठित रूप दरभंगाके मुसलमानों द्वारा बोला जाता है। यह रूप

'परिनिष्टित मैथिली' से प्रभावित है। इसी कारण इसे 'मैथिली' (दे०) का एक रूप कहा जाता है। इस बोलीमें फ़ारसी-अरबी शब्द अधिक हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३,३७,००० थी। 'जोलहा बोली'के अन्य नाम **जोलही बोली, मुसलमानी, जोलही-मैथिली,** तथा **शेखाई** (दे०) हैं।

जोलही बोली––(दे०) **जोलहा बोली**।

जोलही मैथिली––(दे०) **जोलहा बोली**।

जोहडी (johadi)––चाँदामें प्रयुक्त कुछ लोगों द्वारा बोली जानेवाली एक बोली। यह **राजस्थानी** (दे०)का, एक टूटा-फूटा रूप लगती है।

जोहारी––**कुमायूँनी** (दे०)का अलमोड़ामें प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षण-के अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लग-भग ७,४१९ थी।

जौनपुरी––(१) **पश्चिमी भोजपुरी** (दे०)-का एक स्थानीय रूप जो पूर्वी जौनपुरमें बोला जाता है। यह रूप 'अवधी' भाषी क्षेत्रके पास होनेके कारण 'अवधी' से कुछ प्रभावित है। (२) **टेहरी** (दे०)का एक रूप।

जौनसारी––**पश्चिमी पहाड़ी** (दे०)की, देहरा-दून जिलेके जौनसार बावर परगनेमें प्रयुक्त एक बोली। यह 'पश्चिमी हिन्दी' तथा 'गढ़वाली'की मिश्रित बोली है। इस क्षेत्रमें 'नागरी' से अधिक 'सिरमौरी' लिपिका प्रच-लन है। 'सिरमौरी लिपि', 'नागरी' और 'टाकरी'पर आधारित लिपि है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या लगभग ४७,४३७ थी।

जौनसारी लिपि––जौनसार नामक **पहाड़ी** प्रदेशकी जौनसारी बोली (जो **पहाड़ी** (दे०)-के अन्तर्गत आती है) की लिपि। यह **शारदा-लिपि** (दे०)से विकसित हुई है।

ज्यामितीय लिपि––ऐसी लिपि जिसके वर्ण ज्यामितिकी विभिन्न शक्लों (चतुर्भुज, त्रिभुज आदि)की तरह होते हैं।

ज्यू-टांगो (jew tongo)––**बुश-निग्रो-अंगेज़ी** (दे०)का एक अन्य नाम।

झ

झकार––झ् के लिए प्रयुक्त नाम (दे०) **कार**।

झरिआ (jharia)––१८९१की मध्यप्रदेश जनगणनाके अनुसार **उड़िया** (दे०)का एक रूप। अब इसका पता नहीं है।

झर्वा (jharwa)–गारो पहाड़ियों (असम)-के नीचे प्रयुक्त **आसामी** (दे०)की एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ९,००० थी।

झाड़साही बोली––**जयपुरी** (दे०)का एक दूसरा नाम।

झाड़ी (jhari)––'मराठी'की बोली **वर्हाडी** (दे०)का उत्तरी-दक्षिणी चाँदामें प्रयुक्त एक अन्य नाम।

झाड़पी––**झाड़पी** (दे०)का एक अन्य नाम।

झालावाड़ी––'गुजराती'की, बोली **काठिआ-वाड़ी** (दे०)का, काठियावाड़में प्रयुक्त, एक रूप। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग ४,३७,००० थी।

झि––(दे०) **अव्यय**।

झिमोमी (zhimomi)––**सेमा** (दे०)की, नागा पहाड़ियोंमें प्रयुक्त, एक बोली।

झेतिआ (jhetia)––**कोडा** (दे०)का एक नाम। वस्तुतः यह एक जातिका नाम है जो 'कोडा' बोलती है।

झोरिआ (jhoria)–मद्रासमें प्रयुक्त झोरिआ लोगों द्वारा व्यवहृत, **पर्जी** (दे०)का एक रूप।

ट

टएन्स (taensa)--नटचेज़ (दे०) वर्ग-की एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

टकनौरी-बाड़ाहटी--टेहरी (दे०)का एक रूप।

टकसाली भाषा (standard language) --परिनिष्ठित भाषा (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

टकार--ट् के लिए प्रयुक्त नाम (दे०) कार।

टकुल्ली (takulli)--कर्रीएर्स (दे०)का एक अन्य नाम।

टकेल्मा (takelma)-ओरेगन (दे०) वर्ग-की एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इस भाषाकी दो बोलियाँ हैं।

टक्करी--टाक्री लिपि (दे०)का एक अन्य नाम।

टक्की लिपि--टाक्री लिपि (दे०)का एक अन्य नाम।

टगिश (tagish)--ट्लिन्गिट (दे०) वर्ग-की एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

टग्ननिस (tagnanis)--नम्बिकुअरा (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

टट्सनोट्टीने (tatsanottine)--टिन्नेह (दे०)उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसका एक अन्य नाम यलो नाइव्ज़ भी है।

टनो (tano)--उत्तरी अमरीकी वर्ग (दे०)-का एक परिवार। इस परिवारके अन्तर्गत टिवा, टोवा, टेवा तथा पिरो आदि भाषाएँ आती हैं। अंतिम भाषा 'पिरो' के पारिवारिक संबंधके विषयमें विद्वानोंमें मतभेद है। इस परिवारके भाषा-भाषी टनो लोगोंका मूल-स्थान न्यूमेक्सिकोमें था। १७वीं सदीमें स्पैनिश लोगों द्वारा ये तितर-बितर कर दिये गये। अब केवल टनोअना न्यू ब्लॉसमें कुछ शेष हैं।

टपी (tapii)--बोरोरो परिवार (दे०)-की एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

टपे (tape)--टुपी-गुवरनी (दे०)परिवार-की, दक्षिणी अमेरिकामें प्रयुक्त एक भाषा। यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है।

टम (tama)--टुकनो (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

टरहूमरे (tarahumare)--पिमा-सोनोर (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इस भाषाकी चार बोलियाँ हैं।

टरिके (trike)--मज़टेक (दे०) भाषा-की एक उपभाषा।

टलमन्क(talamank)--गुअटूसो (दे०)-की एक प्रमुख भाषा। इसकी बोलियाँ गुए-टरे, केपो, कबेकर, बुरुकक, सुएरें, बरिबरि, टेर्राबा, टिरिबि टुरुकक आदि हैं।

टलमन्क-बरबकोआ (talamank—bar-bakoa)--चिब्चा (दे०) परिवारका एक भाषा-वर्ग। इस वर्गमें चार भाषाएँ हैं: गुअ-टूसो, कोरोबिसि, कुन, बरबकोआ।

टलस्कलटेक (tlaskaltek)--नहुअत्ल (दे०) भाषा-वर्गका एक उपवर्ग। इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी है।

टवरी (tawari)--दक्षिणी अमेरिकाके कटु-किन (दे०) परिवारकी एक भाषा। इसे कडेकिलिड्यप (kadekilidyapa) भी कहते हैं।

टवर्ग--देवनागरी वर्णमालाका तृतीय वर्ग। इसमें ट, ठ, ड, ढ, ण ये पाँच ध्वनियाँ आती हैं। (दे०) वर्ग।

टाइग्रे--(दे०) ताइग्रे।

टाकंकारी (takankari)--पारधी (दे०)-का एक अन्य नाम।

टाकरी--टाकी लिपि (दे०)का एक अन्य नाम।

टाक्क अपभ्रंश-अपभ्रंश (दे०)का एक भेद।

टाक्री लिपि--पंजाबीकी बोली डोगरी (दे०)-के लेखनमें प्रयुक्त एक लिपि। ग्रियर्सन इसे

शारदा और लंडाकी बहिन मानते हैं, किंतु बूलर इसे शारदाकी पुत्री मानते हैं। ओझाजी-ने इसे शारदाका घसीट रूप कहा है। इसके अन्य नाम टाकरी, ठाकरी, टक्करी, टक्की आदि भी हैं। टक्क लोगोंकी लिपि होनेसे इसका नाम टक्की है। महाजनीकी तरह इसमें भी स्वरोंकी कमी है। इधर इसके बहुतसे रूप विकसित हो गये हैं। 'टाकरी' शब्द टाँक (एक जाति) या ठक्कुरी (ठाकुरोंकी लिपि)-से व्युत्पन्न माना जाता है।

टा-टा-सिद्धान्त (ta-ta-theory)—भाषा-की उत्पत्तिका एक सिद्धान्त (दे०) **भाषाकी उत्पत्ति**।

टापचुल्टेक (tapachultek)—मध्य अमे-रिकाके **मिक्से-ज़ोके** (दे०) भाषा-परिवार-की एक भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

टार (tar)—**संथाली** (दे०) के लिए बोनई (उड़ीसा) में प्रयुक्त एक नाम।

टिआटिनगुआ (tiatinagua)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०) की एक भाषा।

टिकुलीहारी (tikulihari)—**अवधी** (दे०)-के, चंपारन जिलेमें, टिकुलीहार नामक जाति द्वारा प्रयुक्त रूपका एक नाम।

टिक्कू काजी—**नगपुरिया** (दे०) का एक नाम। इस नामसे इसे मुंडा लोग पुकारते हैं।

टिग्रे (tigre)—(दे०) **ताइग्रे**।

टिन्नेह (tinneh)—उत्तरी अमेरिकाके **अथ-पस्कन** (दे०) वर्गका एक उप-वर्ग। इसके अन्तर्गत निम्नांकित भाषाएँ आती हैं: **टट्-सनोट्टीने, थलिग्च्डिन्ने, चिप्पेवे, कुचिन, अहटेना, खोटन, नहने, कर्रीएर्स** आदि। इस वर्गको डेने भी कहते हैं।

टिमुकुआ (timukua)—**उत्तरी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार। अब इस परिवारकी भाषाएँ विलुप्त हो चुकी हैं, जिनमें प्रमुख भाषा इसी नामकी थी।

टिमोटे (timote)—**टिमोटे** (दे०) परि-वारकी प्रमुख दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

टिमोटे परिवार (timote)—**दक्षिणी अम-रीकी वर्ग** (दे०) का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इसका अन्य नाम मुकु (muku) है। इस परिवारमें लगभग १० भाषाएँ हैं। जिनमें प्रमुख **टिमोटे, मुकुची, एस्कगुएय, कुइका, टोस्टो, क्सोक्सो** आदि हैं।

टिरिबि (tiribi)—दक्षिणी अमेरिकी भाषा **टलमनक** (दे०) की एक बोली।

टिल्डे (tilde)—एक विशिष्ट ध्वनि चिह्न (~) जिसे कई वर्णों (ñ, ã, ũ) पर रख-कर कई प्रकारकी ध्वनियाँ व्यक्त करते हैं। इसे **अनुनासिक चिह्न** भी कहते हैं।

टिल्लामुक (tillamuk)—**सलिश** (दे०) भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

टिवा (tiwa)—**टनो** (दे०) भाषा-परिवार-की एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

टिहिराली—(दे०) **टेहरी**।

टी—**लिङ्गशिबि** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

टीका-सूचक चिह्न—एक प्रकारका चिह्न (दे०) **विराम**।

टुंगुस—(दे०) **तुंगुस**।

टुकनो (tukano)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार। इसका अन्य नाम **बेटोया** (betoya) है। इस परिवारमें लगभग ३९ भाषाएँ हैं। जिनमें प्रमुख **डेक्स-सेआ, उअसोना, उअइकन, डटुअन, कुएरेटू, अमगुअक्से, मकगुअक्से, पिओक्से, टम** तथा **अयरिको** आदि हैं।

टुकुन्डिअप (tukundiapa)—**कटुकिन** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमरीकी भाषा। इसे **टुकनोइयप** भी कहते हैं।

टुटेलो (tutelo)—**पूर्वीय सिऑक्स** (दे०) वर्गकी एक विलुप्त उत्तरी अमरीकी भाषा।

टुनिका (tunika)—**टुनिका** (दे०) परि-वारकी सर्वप्रमुख अमेरिकी (उत्तरी) भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

टुनिका परिवार (tunika)—**उत्तरी अम-रीकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार।

इस परिवारमें लगभग १२ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख टुनिका (दे०), अटकप (दे०), चिटिमशा आदि हैं। मूलतः इसके बोलनेवालोंका क्षेत्र लूशिआना तथा मिसीसिपी था। अब बहुत कम लोग रह गये हैं। कुछ लोगोंके अनुसार याज़ू, कोरोआ आदि मृत भाषाएँ भी इसी परिवारकी थीं।

टुनेबो (tunebo)—**चिब्चा-अरउअक** (दे०) वर्गकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसका अन्य नाम **टमे** है।

टुपिनम्बा (tupinamba)—**टुपी-गवरनी** (दे०) परिवारकी, दक्षिणी अमेरिकामें प्रयुक्त एक भाषा। यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है।

टुपी (tupi)—**टुपी-गुअरनी** परिवारकी एक भाषा जो दक्षिणी अमेरिकामें ब्राज़ीलमेंआमेज़न तथा टपजाकी घाटीमें बोली जाती है।

टुपी-गुअरनी (tupi-guarani)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इस परिवारमें लगभग६८भाषाएँ हैं, जिनमें १४ विलुप्त हो चुकी हैं। इस परिवारको कुछ लोग **टुपी** और **गुआरनी** दो परिवार मानते हैं। टुपीका क्षेत्र आमेज़न तथा टपजॉस नदीकी घाटियाँ हैं। गुअरनीका उरुग्वाय तथा पाराग्वाय आदि है।

टुबाटुलबाल (tubatulabal)—**कर्नरिवर** (दे०) उपवर्गकी प्रमुख उत्तरी अमेरिकी भाषा।

टुमेली (tumeli)—**सूडानवर्ग** (दे०) की एक अफ्रीकी भाषा।

टुयुनेइरी (tuyuneiri)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार इसकी प्रमुख भाषा टुयुनेइरी है।

टुरुकक (turukaka)—दक्षिणी अमेरिकी भाषा **टलमनक्** (दे०) की एक विलुप्त बोली।

टुस्करोरा (tuscarora)—**इरोक्वोइस** (दे०) भाषापरिवारकी एक उत्तरी अमेरिकीभाषा।

टूटी-फूटी (broken)—ऐसी (भाषा या बोली आदि) जो कामचलाऊ, भ्रष्ट, अव्याकरणिक या अशुद्धोच्चारित हो।

टूटी-फूटी अंग्रेजी (broken english)—अफ्रीकी भाषिक तत्त्वोंसे मिश्रित अंग्रेजी, जो लाइबेरिया आदि कुछ अफ्रीकी देशोंमें प्रयुक्त होती है।

टूबू (tubu)—**सूडानवर्ग** (दे०) की एक अफ्रीकी भाषा।

टूरा (tura)—**चपकुरा** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

टेउएश (teuesh)—**चोन** (दे०) भाषा-परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

टेकिस्ट्लटेक (tekistlatek)—**होक** (दे०) भाषा-परिवारकी एक उत्तरी-अमेरिकी भाषा।

टेकेट (teket)—दक्षिणी अमेरिकामें **विलेल-चुलुपी परिवारकी विलेला** (दे०) भाषाकी बोली।

टेगुइमा (teguima)—**ओपटा** (दे०) का एक अन्य नाम।

टेटोन (teton)—**डकोट-अस्सिनिबोइन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

टेपहुए (tepahue)—**पिमा-सोनोर** (दे०) वर्गकी एक विलुप्त उत्तरी अमेरिकी भाषा।

टेपेकनो (tepekano)—**पिमा-सोनोर** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

टेपेहुआ (tepehua)—मध्य अमेरिकाके **ओटोमि** (दे०) परिवारकी एक भाषा।

टेबेले (tebele) **बांटूपरिवार** (दे०) की एक अफ्रीकी भाषा। इसका क्षेत्र मतबेलेलैंड है। इसे कुछ लोग ज़ुलूकी एक बोली मानते हैं।

टेर्राबा (terraba)—दक्षिणी अमेरिकी भाषा **टलमनक्** (दे०) की एक बोली।

टेवा (tewa)—**टनो** (दे०) परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

टेहरी—**गढ़वाली** (दे०) की, टेहरी-गढ़वालमें प्रयुक्त एक उप-बोली। इसपर पश्चिमी पहाड़ीका कुछ प्रभाव पड़ा है। इसका नाम **टिहिराली** या टेहरी-गढ़वाली भी है। इस बोलीका कुछ क्षेत्र गंगाके एक किनारेपर बसा है इसलिए दूसरे किनारेवाले इसे 'गंगा

पारिया' भी कहते हैं। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग २,४०,२८१ थी। इस उपबोलीके टेहरी जिलेमें **टकनौरी-बाड़ाहटी, रमोल्या, जौनपुरी, रवांल्टी** (दे०), **बडियारगड्डी, गंगाड़ी** आदि कई स्थानीय रूप हैं।

टेहरी-गढ़वाली—(दे०) **टेहरी**।

टेहुएको (tehueco)—**किनलोआ** (दे०) भाषाकी एक उपभाषा।

टेहुएलचे (tehuelche)—**चोन** (दे०) भाषा-परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसका एक अन्य नाम **टसोनेका** है।

टोंगी—**पालिनेशियन परिवार** (दे०)की टोंगामें प्रयुक्त एक भाषा। इसे **तोंगी** या **तोंगातबु** भी कहते हैं।

टोंटो (tonto)—**पूर्वीय यूम** (दे०)उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

टोटो (toto)—**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी तिब्बती हिमालयी शाखाकी, जलपाईगुरी (बंगाल) में प्रयुक्त, एक असार्वनामिक हिमालयी भाषा।

टोटोनक (totonak)—**केन्द्रीय अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारकी मुख्य भाषाका नाम यही है।

टोडा—**द्रविड़ परिवार** (दे०)की नीलगिरिके जंगलोंकी आदिवासी जातियोंमें प्रयुक्त एक भाषा। इस भाषाके बोलनेवालोंकी संख्या दिनपर दिन कम होती जा रही है, अतः भाषा और जाति दोनों ही समाप्तोन्मुख हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या केवल ७३६ थी।

टोनाज (tonaz)—**मेको** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

टोबा (toba)—**गुअयकुरु** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

टोवा (towa)—**टनो** (दे०)भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। अब यह विलुप्त हो चुकी है।

टोवोथ्ली (towothli)—**एनिमगा** (दे०) परिवारकी एक प्रमुख दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

टोस्टो (tosto)—**टिमोमे** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

ट्जुटुहिल (tzutuhil)—मध्य अमेरिकाकी **किचे** (दे०) भाषाकी एक बोली।

ट्ज़ेन्टल (tzental)—मध्य अमेरिकाकी **टजोटज़िल भाषा** (दे०)की एक बोली।

ट्ज़ेन्टल-मय (tzental-maya)—मध्य अमेरिकाके **मय-वर्ग** (दे०)का एक उपवर्ग। इस उपवर्गकी दो भाषाएँ हैं, **टजोट्ज़िल भाषा** (दे०) तथा **मय भाषा** (दे०)।

ट्ज़ोट्ज़िल (tzotzil)—मध्य अमेरिकाकी **टजोट्ज़िल भाषा** (दे०)की एक बोली।

ट्ज़ोट्ज़िल भाषा (tzotzil language)—मध्य अरिमेकाके **टज़ेन्टल-मया** (दे०) उपवर्गकी एक भाषा। इस भाषाकी बोलियाँ **चोन्टल, टज़ेन्टल, टज़ोट्ज़िल, चानबल, चोल, चोटी, सुबिन्हा** आदि हैं।

ट्यूटॉनिक (teutonic)—**जर्मनिक** (दे०)-का एक अन्य नाम।

ट्रिओ (trio)—**करिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

ट्रुमइ (trumai)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार।

ट्रेमा (trema)—कुछ भाषाओंमें कुछ वर्णोंपर लगाया जानेवाला एक विशिष्ट चिह्न (¨)। इसे डायरेसिस (diaeresis) या **द्विबिंदु** भी कहते हैं।

ट्लिन्गिट् (tlingit)—**ट्लिन्गिट् वर्ग** (दे०) की एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

ट्लिनगिटवर्ग (tlingit)—उत्तरी अमेरिका **ना-डेने** (दे०) भाषा-परिवारका एक वर्ग। इसवर्गमें **ट्लिनगिट्** तथा **टगिश** दो भाषाएँ हैं।

ट्वेटा-टैटा (taveta-taita)—**बांटू** (दे०) परिवारकी दक्षिणी अफ्रीकाके पूर्वी तटपर प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा।

ठ

ठकार––ठ् के लिए प्रयुक्त नाम (दे०) **कार**

ठाकरी (१) **कोंकणी** (दे०) का, कोलाबा तथा नासिकके ठाकुरोंमें प्रयुक्त, एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इस रूपके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २५,४०५ थी। (२) **टाक्री लिपि** (दे०) का एक अन्य नाम।

ठाकोरी (thakori)––१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **गुजराती** (दे०) का एक रूप। इसका अब पता नहीं है।

ठी––**लिट्लकार** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

ड

डंगिहै (dngihai)––**डांगी** (पहाड़ी) के लिए प्रयुक्त एक नाम। (दे०) **डाँगी (पहाड़ी)**।

डँगेसरी––**मालवी** (दे०) का एक रूप जो चंबलके डाँगमें बोला जाता है। इसे 'काँटेकी मालवी' भी कहते हैं।

डकार––ड् के लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम (दे०) **कार**।

डकोट-अस्सिनिबोइन (dakota-assiniboin) उत्तरी अमेरिकाके **सिऔक्स** (दे०) परिवारका एक वर्ग। इस वर्गमें **म्डेवकन्टोन, वह्‌पेटन, यनक्टोन, टेटोन, अस्सिनिबोइन** आदि भाषाएँ हैं।

डच––नीदरलैंड्ज़की भाषा। भारोपीय परिवारकी केंतुम शाखाकी **जर्मनिक** (दे०) शाखाके निम्न जर्मनसे इसका संबंध है। इस प्रकार ट्यूटॉनिक या जर्मनिकके पश्चिमी रूपके निम्न जर्मनसे इस (तथा अंग्रेज़ी, निम्न-जर्मन, फ़्लेमिश, फ्रिज़िअन आदि) का विकास हुआ है। डच बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १ करोड़, ३० लाखसे ऊपर है। डचके कई रूप हैं जो अन्य स्थानोंपर प्रयुक्त होते हैं। दक्षिणी अफ्रीकामें प्रयुक्त होनेवाली डच बोली **ऐफ्रिकान्स** (दे०) के नामसे प्रसिद्ध है। मध्ययुगसे ही इसके कुछ अन्य रूप डचगाइना तथा इंडोनेशिया आदि डच उपनिवेशोंमें भी प्रयुक्त होते हैं। मध्ययुगसे हीपरिनिष्ठित डच हालैंडकी बोली है। १९वीं सदीमें इसका बोलबाला इतना हो गया कि बोल-चालमें भी इसीका प्रयोग होने लगा। इस प्रकार मध्ययुगमें विकसित बोलियाँ एक प्रकारसे अब समाप्त-सी हो गयी हैं। आधुनिक डच फ्रांसीसी, जर्मन तथा अंग्रेज़ीसे बहुत प्रभावित है।

डच साहित्यका प्रारंभ १३वीं सदीसे होता है। डच कवियोंमें सबसे प्रसिद्ध जूस्ट वान, डेन वोण्डेल तथा पीटर कार्ने लिज़ून हूफ़्ट हैं। यहाँका नाटक तथा उपन्यास साहित्य भी पर्याप्त संपन्न है।

डटुअन (datuana)––**टुकनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

डहोमिअन (dahomian)––सूडान वर्गकी एक नीग्रो भाषा। इसे फ़ॉन (fon) भी कहते हैं।

डाँगभाँग–ब्रजभाषाकी उप-बोली **डाँगी** (दे०)-का करौलीके पहाड़ी-प्रदेशमें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ८० हज़ारसे कुछ ऊपर थी।

डाँगी––(१) ग्वालियर तथा कोटामें प्रयुक्त **मालवी** (दे०) का एक नाम। (२) **खानदेशी** (दे०) की बंबईमें प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३१,७०० के लगभग थी। (३) **ब्रजभाषा** (दे०) का भरतपुर, करौली तथा जयपुरके कुछ भागोंमें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप। डाँग इस क्षेत्रकी पहाड़ी बंजर भूमिको कहते हैं। इसी आधारपर इसका

'डाँगी' नाम पड़ा है। 'डाँगी'के प्रमुख स्थानीय रूप डाँगी, डाँगभाँग, डूँगरवाड़ा तथा कालीमाल है। इस प्रकार इस पूरे प्रदेशकी बोलीको भी 'डाँगी' कहते हैं और साथ ही उसके विशिष्ट सीमित रूपको भी। इसी सीमित रूपका नाम 'का-कछू-की' बोली भी है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार डाँगीके बोलनेवालोंकी संख्या पाँच लाखसे कुछ ऊपर थी।

डाइएरेसिस (diaeresis)—एक विशेष चिह्न, जिसमें दो बिन्दु (¨) होते हैं। जब दो स्वर साथ-साथ आवें तो कभी तो वे दोनों मिलकर संयुक्त स्वर हो जाते हैं, किन्तु यदि वे संयुक्त स्वर नहीं हैं, तो उच्चारणकर्ताके लिए यह स्पष्ट करनेके लिए कि वे संयुक्तस्वर नहीं हैं दोनोंमें एक स्वरपर (प्रायः दूसरेपर) डाइएरेसिस चिह्न लगा देते हैं। जिसका अर्थ यह होता है कि चिह्नित स्वरका उच्चारण स्वतंत्र होगा। उदाहरणार्थ (Boötes chloë) आदि। डाइएरेसिसका प्रयोग **विशेष-चिह्न** (दे०)के रूपमें भी होता है। (दे०) **ध्वन्यात्मक प्रतिलेखन**।

डॉग आरमेइक (dog aramaic)—आरमेइक भाषाका एक रूप जिसपर अन्य भाषाओंका बहुत अधिक प्रभाव पड़ा है।

डॉग-रिब्स (dog-ribs)—**थलिंग्चडिन्ने** (दे०)का एक अन्य नाम।

डाल नियम (dahl's law)—**बांटू** (दे०) परिवारकी भाषाओंका एक ध्वनि-नियम। इसके अनुसार, बांटू परिवारकी कुछ भाषाओंमें, यदि स्वर (मूल या संयुक्त), दो अघोष व्यंजनोंके बीचमें हो, तो पूर्ववर्ती व्यंजन घोष हो जाता है।

डाह-हनू (dah-hanu)—**ओक्पा** (दे०) का एक अन्य नाम।

डिंग डांगवाद (ding dong theory)—भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धान्त। इसे **धातु-सिद्धान्त** (दे०) भी कहते हैं।

डिंगल—राजस्थानीकी प्रमुख बोली 'मारवाड़ी' (दे०) का साहित्यिक रूप। कुछ लोग डिंगलको, मारवाड़ीसे भिन्न, चारणोंकी एक अलग भाषा बतलाते हैं, किंतु ऐसा मानना निराधार है। डिंगलको 'भाटभाषा' भी कहा गया है। मारवाड़ीके साहित्यिक रूपका डिंगल क्यों नाम पड़ा, इस प्रश्नपर बहुत मत-वैभिन्य है: (१) डॉ० श्यामसुंदर दासके अनुसार 'डिंगल' पिंगलके सादृश्यपर गढ़ा हुआ शब्द है। (२) तेस्सितोरीके अनुसार 'डिंगल'का अर्थ है 'अनियमित' या 'गँवारू'। वे कहते हैं कि साहित्यके क्षेत्रमें ब्रजकी तुलनामें गँवारू होनेके कारण यह नाम पड़ा। (३) डॉ० हरप्रसाद शास्त्री 'डगर' से 'डिंगल' बना मानते हैं। 'डगर' का अर्थ है 'जाँगल देशकी भाषा'। (४) गजराज ओझाके अनुसार 'ड'-प्रधान भाषा होनेके कारण 'पिंगल'के सादृश्यपर 'प' के स्थानपर 'ड' रखकर 'डिंगल' शब्द बनाया गया। (५) पुरुषोत्तमदास स्वामीके अनुसार डिम+गळसे डिंगल बना है। 'डिम' अर्थात् डमरूकी ध्वनियाँ रणचंडीकी ध्वनि। 'गळ' = गला या ध्वनि, अर्थात् 'वीर रसकी ध्वनिवाली भाषा'। (६) किशोर सिंहके अनुसार 'डी' धातुका अर्थ है 'उड़ना'। ऊँचे स्वरसे पढ़े जानेसे डिंगल 'उड़नेवाली भाषा' है। (७) उदयराजके अनुसार डग = पाँवें, ल = लिए हुए; या डग = लंबा कदम या तेज चाल, +ल = लिए हुए। अर्थात् 'डिंगल' स्वतंत्र या तेज़ चलनेवाली भाषा है। (८) जगदीश सिंह गहलोतके अनुसार डींग+गल (अर्थात् ऊँची बोली) से 'डिंगल' है। (९) बदरी प्रसादके अनुसार डिंगी या डीबी (= ऊँची) +गल (= बात, स्वर) से डिंगल बना है। (१०) मोतीलाल मेनारियाके अनुसार डींगल (डींग = अतिरंजनापूर्ण)+ल) से 'डिंगल' बना है। (११) गणपति चंद्रके अनुसार राजस्थानके किसी छोटे भागका नाम प्राचीनकालमें 'डगल' था। उसी आधारपर वहाँकी भाषा 'डिंगल' कहलायी। (१२) चंद्रधर शर्मा गुलेरीके अनुसार डिंगल यदृच्छात्मक अनुकरणात्मक शब्द है। (१३)

नरोत्तमदास स्वामीके अनुसार कुशललाल रचित 'पिंगल शिरोमणि' (रचनाकाल १६०० के आसपास) ग्रंथमें उडिंगल नागराजका एक छंद शास्त्रकारके रूपमें उल्लेख मिलता है। जैसे 'पिंगल' से 'पिंगल' का नाम पड़ा है, उसी प्रकार 'उडिंगल' से 'उडिंगल'। 'उडिंगल' ही बादमें 'डिंगल' हो गया। (१४) डॉ० सुकुमारसेन तथा विश्वनाथ प्रसाद मिश्रके अनुसार संस्कृत शब्द डिंगर (=गँवारू, निम्न) से इसका संबंध है। अर्थात् मूलतः डिंगल गँवारू लोगोंकी भाषा थी। वस्तुतः इनमें कोई भी मत युक्तियुक्त नहीं है। कुछ संभावना नरोत्तम स्वामीके मतकी हो सकती है। कुछ ग्रंथोंमें डिंगलका पुराना नाम 'उडिंगल' मिलता भी है। डिंगल नाम बहुत पुराना नहीं है। इसका प्रथम प्रयोग डिंगलके प्रसिद्ध कवि बाँकीदासकी पुस्तक 'कुकवि बत्तीसी' (र० का० सन् १८१४ ई०) में मिलता है। साहित्यमें डिंगलका प्रयोग १३वीं सदीके मध्यसे लेकर आजतक मिलता है। डा० तेस्सितोरीने 'डिंगल'के प्राचीन और अर्वाचीन दो भेद किये हैं। उन्होंने १७वीं सदीके मध्यतककी भाषाको प्राचीन और उसके बादकी भाषाको अर्वाचीन माना है। डिंगलके प्रसिद्ध कवि नरपति नाल्ह, ईसरदास, पृथ्वीराज, करणीदीन, बाँकीदास, सूरजमल तथा बालाबख्श आदि हैं।

डिअगिट (diagit)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार। इसका एक अन्य नाम **कटमरेनो** (katamareno) है। इस परिवारकी प्रमुख भाषाएँ **कलचकी** तथा **लूले** हैं, जो विलुप्त हो चुकी हैं।

डिएगुएनो (diegueno)—**केन्द्रीय यूम** (दे०) की एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

डिन्का (dinka)—अफ्रीकाकी 'डिन्का' जातिमें प्रयुक्त **सूडानवर्ग** (दे०) की एक भाषा। इसका क्षेत्र खार्टूमके दक्षिणमें डिन्का घाटीमें है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या २ लाखसे कुछ कम है।

डियिहेट (diyihet)—**हेट** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त दक्षिणी-अमेरिकी भाषा।

डिरिआ (diria)—मध्य अमेरिकाके **ओटोमि** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त भाषा।

डिलाही—**लहँदा** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

डी—**लुद्लकार** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

डीमॉटिक ग्रीक (demotic greek)—ग्रीक भाषाका वर्तमान कालिक बोलचालका रूप। इस रूपको इसके बोलनेवाले **देमोतिके** (dhemotike) कहते हैं। 'देमोतिके' ग्रीक शब्द है, जिसका अर्थ है 'जनताका'। डीमॉटिक ग्रीकका व्याकरण बहुत सरल हो गया है तथा इसमें तुर्की, अरबी आदि अनेक भाषाओंके शब्द आ गये हैं।

डीमॉटिक लिपि—मिस्र आदिमें प्रचलित एक प्राचीन लिपि। यह **हीराटिक लिपि** (दे०) से निकली थी।

डुंगरी (dungri)—एदरमें प्रयुक्त **भीली** (दे०) का एक नाम।

डुक्प भोटिआ (dukpa bhotia)—भूटानकी **तिब्बती** (दे०) या भोटियाका नाम।

डुबली (dubli)—बंबईके थाना आदिमें प्रयुक्त, **भीली** (दे०) की एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १४,०५० के लगभग थी।

डूंगरवाड़ा—'ब्रजभाषा'की उप-बोली **डाँगी** (दे०) का, करौलीकी सीमापर 'कालीमाल' बोलीके क्षेत्रके पश्चिम-उत्तरमें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप। 'डूंगर' शब्दका अर्थ 'पहाड़ी' होता है, और 'डूंगरवाड़ा'का अर्थ 'पहाड़ी प्रदेशका'। इसका क्षेत्र पहाड़ी होनेसे इसे 'डूंगरवाड़ा' नाम दिया गया है। इसके अन्य नाम **डूंगरवारा** तथा **रेकार-तुकारा** भी हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १ लाखसे कुछ ऊपर थी।

डूंगरवारा—**डूंगरवारा** (दे०) का एक दूसरा नाम।

डेको-रूमानियन (daco-romanian)––रूमानियनकी रूमानियामें प्रयुक्त होनेवाली एक बोली। देसिया उस प्रदेशको (या वहाँके निवासियोंको) कहते हैं, जो डैन्यूबके उत्तर, नीस्तरके पश्चिम तथा तीसाके पूर्वमें स्थित है। उसी आधारपर इसे डेको-रूमानियन कहा गया है।

डेक्ससेआ (daxsea)––**टुकनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसका एक अन्य नाम **टुकनो** भी है।

डेने (dene)––**टिन्नेह** (दे०) वर्गका एक नाम।

डेरा गाज़ीखाँ उप-बोली––**बलोची** (दे०)की पूर्वीय बोलीका डेरा गाज़ीखाँ तथा जकोबाबाद (सिंध)में प्रयुक्त, एक रूप। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार १,२५,५१० के लगभग थी।

डेरावाल (derawal)––डेरा गाज़ीखाँमें प्रयुक्त **लहँदा** (दे०)का एक स्थानीय नाम।

डेलवरे (delaware)––**केन्द्रीय-अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसका एक अन्य नाम **लेनिलेनपे** भी है।

डैनिश––भारोपीय परिवारकी **जर्मनिक** (दे०) उपशाखाकी उत्तरी या स्कैंडेनेवियन शाखाकी एक भाषा जो डेनमार्क (जटलैंड, वार्नहोल्म तथा अन्य डैनिश द्वीप)में बोली जाती है। डैनिश, पहले ग्रीनलैंड, आइसलैंड, स्वीडेन तथा नारवे आदिमें भी बोली जाती थी। अब भी इन देशोंमें एक सीमातक इसका प्रचार है। डेनमार्कमें डैनिश बोलनेवालोंकी संख्या लगभग सवा पैंतिस लाख है। डैनिशका विकास स्कैंडेनेवियन या उत्तरी जर्मनिककी पूर्वी नार्स शाखासे हुआ है। स्वेडिश भी इसीसे उत्पन्न है। इस प्रकार स्वेडिश और डैनिश सगी बहनें हैं। स्वेडिशपर निम्न जर्मनका पर्याप्त प्रभाव है। डैनिशकी कई बोलियाँ हैं। आजकी परिनिष्ठित डैनिश वस्तुतः **ज़ीलैंड** द्वीपकी बोली है। डेनमार्ककी राजधानी कोपेनहेगेन इसी द्वीपमें है, इसी कारण यही बोली प्रमुख और टकसाली बन गयी है। डेनमार्कमें बहुतसे द्वीप हैं और कईमें अलग-अलग बोलियाँ विकसित हो गयी हैं। **जटलैंडी** (जो जटलैंडमें बोली जाती है) परिनिष्ठित डैनिशसे बहुत भिन्न है। डैनिश भाषाका प्राचीनतम रूप ८०० ई०के लगभगसे मिलता है। तबसे लेकर आज तकके डैनिश साहित्यको छः कालोंमें बाँटा गया है। व्यवस्थित साहित्य रचना १००० के बादसे हुई है। इसके प्रमुख साहित्यकारोंमें लुडविग, होलवर्ग सर्वप्रमुख हैं, जिन्हें डैनिश साहित्यका पिता कहा जाता है। अन्य लोगोंमें आडम गॉटलॉब, सोरेन अब्ये कीर्केगार्द, तथा काज मुंक आदि विशेष रूपसे उल्लेख्य हैं।

डैनो-नारवेजिअन––**रिक्समाल** (riksmal)-का एक अन्य नाम।

डोंबारी (dombari)––कोल्हाटी (दे०) का एक अन्य नाम।

डोंभारी (dombhari)––**कोल्हाटी** (दे०) का एक दूसरा नाम।

डोगरा (dogra)––**पंजाबी** (दे०)की जम्मू प्रान्तमें प्रयुक्त एक बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग १२,२९,२२७ थी।

डोगरी (dogri)––**डोगरा** (दे०)का एक अन्य नाम।

डोगरी लिपि––पंजाबके कुछ पहाड़ी भागोंमें प्रयुक्त एक लिपि। इसका प्रयोग डोगरी भाषाके लिए होता है। इसकी उत्पत्ति **शारदा लिपि** (दे०)से हुई है। इसे **डोग्री** भी कहते हैं।

डोगोन (dogon)––**सूडानवर्ग** (दे०)की एक सेनेगल और नाइजर नदियोंके पास प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा।

डोग्री––(दे०) **डोगरी**।

डोडा सिराजी (doda siraji)––सिराजी (**डोडाकी**) (दे०)का अन्य नाम।

डोडी (dodi)––सिराजी (डोडाकी) (दे०) का अन्य नाम।

डोड्रा कुआरी (dodra kuari)--**कोची** (दे०)की एक बोली ।

डोम (dom)--(१) एक **बंजारा** (दे०) भाषा । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १३,५००के लगभग थी । (२) **जिप्सी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

डोरस्क (dorask)--**डोरस्क-गुअयमी** (दे०) वर्गकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

डोरस्क-गुअयमी (dorask-guaym)--**चिब्चा** (दे०) भाषा-परिवारका एक वर्ग । इस वर्गकी प्रमुख भाषाए **मुरिरे, मोवे, चन्गिन, डोरस्क, चिमिल** आदि हैं ।

डोरिअनलिपि--**ग्रीकलिपि** (दे०)का एक रूप ।

डोरिक--एक प्राचीन **ग्रीक** (दे०) बोली जिसका क्षेत्र क्रीट, स्पार्टा आदि था । पिंडारने अपने साहित्यमें इसका प्रयोग किया है । पश्चिमी, ग्रीककी **लैकोनिअन, मेसेनिअन, अर्गोलिक, क्रीटन** आदि उप-बोलियोंके एक सामूहिक नामके रूपमें भी इसका प्रयोग होता है ।

ढ

ढंगड़ (dhangar)--**कोडा** (दे०)का एक रूप ।

ढंडेरी (dhanderi)--**डाँगी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

ढकार--ढ् केलिए प्रयुक्त नाम । (दे०) **कार** ।

ढक्की--**मागधी प्राकृत** (दे०)का एक जातीय रूप ।

ढटकी--'पश्चिमी मारवाड़ी'का एक स्थानीय रूप जो सिंध और जैसलमेरकी सीमापर 'ढाट' (शब्दार्थ रेगिस्तान) नामक मरु-प्रदेश (थार, पर्कर आदि) में तथा उसके आसपास बोला जाता है । **मारवाड़ी** (दे०) का यह रूप सिंधीसे बहुत अधिक प्रभावित है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ७२,७८९ थी ।

ढर (dhar)--**सुकेती** (दे०)का एक रूप ।

ढाल (slope)--**गह्वर** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ढुंढहाड़ी--(दे०) **ढुँढाड़ी** ।

ढुंढाड़ी--**जयपुरी** (दे०)का एक नाम ।

ढुंढारी (dhundhari)--**जयपुरी** (दे०) का एक दूसरा नाम ।

ढूंढी (dhundi)--**लहँदा** (दे०)की, हजारा जिलेमें प्रयुक्त एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ८७,७७७ के लगभग थी । इसमें 'पहाड़ी-लहँदा' बोलनेवाले भी सम्मिलित थे ।

ढेकेरी (dhekeri)--**पश्चिमी आसामी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

ढेगिहा (dhegiha)--उत्तरी अमेरिकाके **सिऔक्स** (दे०) भाषा-परिवारका एक भाषा वर्ग । इस वर्गकी प्रमुख भाषाएँ **ओमह, पोन्का, क्वपव, ओसगे** तथा **कंस** हैं ।

ढेड गूजरी (dhed gujari)--**खानदेशी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ढेडी (dhedi)--**माहारी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ढेढी (dhedhi)--१८९१की पंजाब जनगणनाके अनुसार ढेढ नामक चमारोंकी जाति द्वारा प्रयुक्त एक भाषा । इसके स्थान तथा संबंध आदिका पता नहीं है ।

ढेरी (dheri)--बस्तर, छिंदवाड़ा तथा चांदामें प्रयुक्त **मराठी** (दे०)का एक विकृत रूप ।

ढोंडी (dhondi)--**ढोडिआ** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ढोडिआ (dhodia)--**भीली** (दे०)की, सूरत और थानामें प्रयुक्त एक बोली ।

ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ६०,०००के लगभग थी ।

ढोडिआ नैकी (dhodia naiki)—ढोडिआ (दे०)का अन्य नाम ।

ढोरी (dhori)—१९२१की बंबई जनगणनाके अनुसार रीवाकंथामें प्रयुक्त एक **भील बोली**। ग्रियर्सनका अनुमान है कि यह **ढोडिआ** (दे०) ही है ।

ढोलपुरी—ढोलपुर (राजस्थान) में प्रयुक्त **ब्रजभाषा** (दे०)का एक नाम ।

ढोलेवाड़ी (dholewari)—राजस्थानी भाषाकी बोली **मालवी** (दे०)की एक उपबोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,१९,०००के लगभग थी । (दे०) **धोलेवाड़ी** ।

ण

णिजन्त (causal या causative) ऐसी धातु जो प्रेरणार्थक हो । जैसे करवा(ना), पकवा (ना) । संस्कृतमें इसके लिए मूल धातुमें णिच् प्रत्यय जोड़ते हैं (बुध्+णिच्=बोधय) अतः इन्हें णिजन्त कहते हैं ।

त

तंगसिर (tangsir)—पुताओ (बर्मा)में प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०)की एक लोलो-मोसो भाषा ।

तंगुत (tangut)—**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी एक मंगोल भाषा ।

तंगुतन (tangutan)—**भोटिआ** (तिब्बतकी)का एक प्राचीन नाम ।(दे०) **भोटिआ** (तिब्बतकी) ।

तंगुत लिपि—चीनमें प्रयुक्त एक लिपि, जो **चीनी लिपि** (दे०) की तरह ही है । १०३७ ई० में सि-हिआ द्वारा बनायी गयी थी ।

त-अंग (ta-ang)—**पलौंग** (दे०)का एक रूप ।

तओ-रइ (tao-rai)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, **पलौंग** (दे०)की, 'पले' बोलीका, तव्नपेंग उत्तरी शान स्टेटमें (लगभग ३,५७१ व्यक्तियों द्वारा) व्यवहृत, एक रूप ।

तकाना (takana)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा ।

तकार—**त्**के लिए प्रयुक्त नाम (दे०)**कार** ।

तकि-तकि—**निगेटोंगो** (दे०)का एक अन्य नाम ।

तक्प (takpa)—**भोटिआ** (तिब्बतकी)का, पूर्वी तिब्बतमें प्रयुक्त, एक रूप । (दे०) **भोटिआ** (तिब्बतकी) ।

तगती (tagati)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार, **पश्तो** (दे०)का, खानदेशमें प्रयुक्त, एक रूप ।

तगाल—**इंडोनेशियन परिवार** (दे०)की फिलिपाइनमें प्रयुक्त एक भाषा । (दे०) **तगालॉग** ।

तगलॉग (tagalog)—फ़िलिपाइन द्वीपोंमें लगभग १८ लाख तैगलॉग लोगों द्वारा प्रयुक्त इंडोनेशियन परिवारकी एक भाषा । यह वहाँकी राष्ट्र भाषा है तथा उस ओरकी भाषाओंमें सर्वाधिक विकसित है । इसे **तगाल** भी कहते हैं ।

तज्ज—तद्भवके लिए वाग्भट्ट द्वारा प्रयुक्त एक नाम (दे०) **शब्द** ।

तत्पुरुष समास—(दे०) **समास** ।

तत्सम शब्द—एक शब्द-भेद । (दे०) **शब्द** ।

तत्समाभास—वे शब्द जो मूलतः 'तत्सम' न हों, किंतु जिनको देखनेपर, तत्सम होनेका आभास हो । जैसे, श्राप ।

तदवी (tadavi)––१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार खानदेशमें प्रयुक्त एक **भील** (दे०) भाषा ।

तदो (tado)––थाडो (दे०)का एक अन्य नाम ।

तदोई (tadoi)––**थाडो** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

तद्धित (secondary suffix)––'तेभ्यः प्रयोगेभ्यः हिताः' इति तद्धिताः । अर्थात् ऐसे प्रत्यय जो भिन्न-भिन्न प्रयोगोंमें काम आ सकें वे तद्धित हैं । संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण तथा कृदंत आदिमें जिन प्रत्ययोंको जोड़कर कुछ और शब्द बनाये जाते हैं, उन प्रत्ययोंको तद्धित कहते हैं । कृत् और तद्धित् प्रत्ययोंमें अंतर यह है कि तद्धितको सर्वदा किसी सिद्ध शब्द (संज्ञा, विशेषण, अव्यय, कृदंत)में जोड़कर अन्य शब्द बनाते हैं, किंतु कृत् प्रत्यय सर्वदा केवल धातुमें ही जोड़े जाते हैं । 'तद्धित' शब्द पर्याप्त प्राचीन है । इसका प्रयोग ब्राह्मणों, निरुक्त तथा प्रातिशाख्यों आदिमें मिलता है । पाणिनिने इसका प्रयोग उपर्युक्त प्रकारके प्रत्ययोंके लिए किया है किंतु बहुतोंने तद्धितान्त शब्दके लिए इसका प्रयोग किया है । (दे०) **कृत्** । तद्धित प्रत्ययसे बनाये गये शब्द **तद्धितांत** कहलाते हैं, क्योंकि इनके अंतमें तद्धित प्रत्यय होते हैं । सं० तद्धितोंकी संख्या बहुत बड़ी है । पाणिनिने इनके संबंधमें १११० नियम दिये हैं । भाष्यकारोंने संस्कृत तद्धितोंके प्रमुखतः **अपत्याद्यर्थक, रक्ताद्यर्थक, शैषिक, पाञ्चमिक, स्वार्थिक** (दे०) आदि एक दर्जनसे ऊपर भेद किये हैं । (दे०) **प्रत्यय** । वाजसनेयी प्रातिशाख्यमें तद्धितको **शब्द** (दे०)का एक भेद माना गया है ।

तद्धित प्रत्यय––(दे०) **प्रत्यय** ।

तद्धितांत––(दे०) **तद्धित** ।

तद्भव शब्द––एक शब्द-भेद । (दे०) **शब्द** ।

तद्भवाभास––वे शब्द जो 'मूलतः' तद्भव न हों किंतु जिन्हें देखनेपर उनके तद्भव होनेका आभास हो । जैसे––दुलहिन ।

तद्रूप––तत्समके लिए प्रयुक्त एक नाम । (दे०) **शब्द** ।

तनादि गण––संस्कृत धातुओंका एक **गण** (दे०) ।

तनेग्सरी (tanegsari)––**तवोयन** (दे०) का एक रूप ।

तपुयो (tapuyo)––दक्षिणी अमेरिकाके **विटोटो परिवार** (दे०) की एक भाषा ।

तपोंग (tapong)––बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, चिन पहाड़ियोंमें व्यवहृत एक अनिश्चित वर्गकी भाषा ।

तबर (tabara)––करेंब्यू (दे०)का एक रूप ।

तबरसन (tabarasan)––काकेशनमें बोली जानेवाली एक काकेशस भाषा ।

तबिल (tabil)––१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार, **तमिल** (दे०)का एक अन्य नाम ।

तबैंग (tabaing)––**जयेइन** (दे०)का एक रूप ।

तबौंग (tabaung)––बर्माके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार, लोई लोंग दक्षिणी शान स्टेटमें, कुछ लोगों द्वारा बोली जानेवाली एक अनिश्चित वर्गकी भाषा ।

तब्लेंग (tableng)––**अंगवांकू** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

तमन (taman)––बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, ऊपरी छिन्दविनमें लगभग १३५० व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत, एक अनिश्चित वर्गकी भाषा । ग्रियर्सनके मतानुसार यह एक कुकी-चिन भाषा है ।

तमर (tamar)––**मुर्मी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

तमरिया (tamaria)––**भुमिज** (दे०)का एक रूप । (दे०) **पूर्वी मगहीकी** उपबोली **पाँचे परगनिया** (दे०)का एक अन्य नाम ।

तमशेक (tamshek)—हेमिटिक परिवार-का मौरितानिया तथा सहारा (अफ्रीका)में प्रयुक्त एक भाषा ।

तमावस्था—(दे०) **विशेषण** ।

तमिड़—**तमिल** (दे०)का एक अन्य नाम ।

तमिल—**द्रविड़ परिवार** (दे०)की सर्वप्रमुख और सबसे प्राचीन भाषा । 'तमिल' शब्दका अर्थ तमिल भाषियोंके अनुसार 'माधुरी' है । इनकी भाषा अत्यंत मधुर है, इसीलिए यह नाम पड़ा है । कुछ लोग विशेषतः संस्कृत विद्वान् संस्कृत द्रविड (> द्रमिड़ > द्रमिल > दमिल >)से ही 'तमिल'को निकला मानते हैं, किंतु कदाचित् 'तमिल' या उससे किसी विकसित रूपका ही संस्कृतीकृत रूप 'द्रविड' है । (दे०'द्रविड') । 'तमिल' शब्दका प्राचीन प्रयोग द्रविड़ भाषाके प्रसिद्ध प्राचीन व्याकरण 'तोल्गाघियम्'में हुआ है । तमिल लोगोंके अनुसार यह व्याकरण पाणिनिके अष्टाध्यायीसे पहलेका है । किंतु, वस्तुतः बात ऐसी है नहीं । इस बातके एकाधिक प्रमाण हैं कि यह ग्रंथ पाणिनि तथा ऐन्द्र व्याकरणका ऋणी है । हाँ इसके आधारपर यह अनुमान अवश्य लगता है कि भाषाके अर्थमें 'तमिल' शब्द ईसवी सन्के आरंभके आस-पास प्रयुक्त हो रहा था । किसी भी आधुनिक भारतीय भाषाका नाम इतना पुराना नहीं है । तमिलके एक अन्य नाम **उर्व** तथा **मालावार** भी मिलते हैं ।

तमिल भाषाका क्षेत्र प्रमुखतः वर्तमान मद्रास प्रांत तथा उत्तरी लंका है । तमिल साहित्य बहुत ही संपन्न है । यों तो इसकी पूर्व सीमा पहली सदीके आसपास पहुँचती है, किंतु नियमित साहित्य रचना लगभग सातवीं सदीसे हुई है । तमिलके प्रसिद्ध साहित्यकारोंमें 'तिरुक्कुरल' (काव्यग्रंथ) के रचयिता तिरुवल्लुवर, 'तिरुप्पावै' तथा 'नाच्चियार'की कवयित्री आंडाल, 'रामायण'के रचयिता कम्बन (१२वीं सदी) तथा मीनाक्षी सुन्दरम् आदि हैं । परिनिष्ठित तमिलके दो रूप रहे हैं । 'शेन' (–लाल, सुंदर पूर्ण, या साधु) शिष्ट या साहित्यिक रूप रहा है । शेन तमिलमें संस्कृत शब्द भी प्रयुक्त होते रहे हैं । अब इस शैलीमें संस्कृत शब्द कम हो गये हैं और उनका स्थान द्रविड़ मूलके तमिल शब्दोंने ले लिया है । दूसरा रूप 'कोडुन' (–झुका हुआ, ग्रामीण या असाधु) है, जो बोलचालका है । तमिल भाषाकी एक साहित्यिक शैली 'मणिप्रवाल' नामसे भी प्रसिद्ध रही है । इसमें संस्कृत शैलीका बाहुल्य रहा है । यह शेन तमिलका एक संस्कृत रूप है, जिसमें प्रमुखतः वैष्णव कवियोंने कविताएँ लिखी हैं ।

तमिल लेखनमें प्रमुखतः तमिल लिपिका प्रयोग होता है, जिसमें कवर्ग, चवर्ग आदि पाँचों वर्गोंमें केवल प्रथम और अन्तिम अक्षर हैं । बीचके ख, ग, घ या छ, ज, झ आदि नहीं हैं । यह लिपि ब्राह्मीके दक्षिणी रूपसे संबद्ध है, यद्यपि राघवय्यंगार आदि कुछ तमिल विद्वान् इसका संबंध मिस्री लिपिसे जोड़ते हैं ।

तमिल लिपिका एक विकसित घसीट रूप **वट्टेलुट्टु लिपि** है जिसका ७वीं सदीसे १४वीं सदीतक प्रचार रहा है । तमिल लिपिके अपूर्ण होनेके कारण उस प्रदेशमें संस्कृत लिखनेमें **ग्रंथ लिपि**का प्रयोग होता है ।

तमिल भाषाकी प्रमुख बोलियाँ इरुल, कसुव, कोरव, येरुकल, कैकाडी, वरगंडी आदि हैं । मलयालम भी प्राचीन कालमें इसकी बोली थी, यद्यपि अब यह भाषा बन गयी है । तमिलका परिनिष्ठित रूप मद्रासके आसपास बोला जाता है । तमिल भाषाके बोलनेवालोंकी संख्या १९२१की जनगणनाके अनुसार १,८७,७९,५७७ थी ।

तमिल लिपि—तमिल भाषाकी लिपि । **ब्राह्मी-लिपि** (दे०)की दक्षिणी शैलीसे इसका विकास हुआ है । इसके अक्षर ग्रन्थलिपिसे

समानता रखते हैं, किंतु 'क' और 'र' ब्राह्मीकी उत्तरी शैलीसे लिये गये जान पड़ते हैं। तमिल लिपि एक अपूर्ण लिपि है। इसमें कवर्ग, चवर्ग आदि पाँचों वर्गोंमें केवल प्रथम (क, च, ट आदि) तथा अंतिम (ङ, ञ आदि) ही हैं। इसीलिए इस क्षेत्रमें संस्कृत ग्रंथोंके लेखनमें **ग्रंथलिपि** (दे०)का प्रयोग होता रहा है। प्राचीन तमिल लिपि ७वीं सदीसे मिलती है। वर्तमान तमिल लिपि १४वीं सदीके लगभग इसीसे विकसित हुई।

तरेंग (tareng)—**मैंग्थ** (दे०)का एक दूसरा नाम।

तरेन (taren)—**मैंग्थ** (दे०)का एक अन्य नाम।

तरोक (tarok)—**तयोक** (दे०)का एक अन्य नाम।

तरौ (tarau)—**चीनी परिवार** (दे०)की मणिपुरमें प्रयुक्त एक प्राचीन **कुकी भाषा**।

तलुचे (taluche)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरौकन** (दे०) परिवारकी एक भाषा। इसका एक अन्य नाम 'तलुहेत' है।

அ ஆ இ ஈ உ ஊ எ ஏ ஐ ஒ ஓ

ஔ க ங ச ஞ ட ண த ந ப ம

ய ர ல வ ழ ள ற ன ஷ ஸ ஹ

[तमिल लिपिके प्रमुख अक्षर ये हैं। ये क्रमसे अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, एँ, ए, ऐ, ओं, ओ, औ, क, ङ, च, ञ, ट, ण, त, न, प, म, य, र, ल, व, ऴ, ळ, ऱ, ऩ, ष, स, ह है। कभी-कभी ज आदि कुछ अन्य ध्वनियोंके लिए भी कुछ अन्य अक्षरोंका प्रयोग होता है।]

तमुलिअन (tamulian)—**मुंडा** (दे०) भाषाओंके लिए प्रयुक्त एक नाम।

तम्लू (tamlu)—**चिगसेग्नू** (दे०)का एक अन्य नाम।

तयंग (tayang)—**करेंब्यू** (दे०)का एक रूप।

तयिंग (taying)—**दिगारू मिश्मी** (दे०) का एक दूसरा नाम।

तयोक (tayok)—**चीनी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक '**बर्मी**' नाम।

तरल ध्वनि (liquid)—'र्' और 'ल्'के लिए प्रयुक्त एक नाम। इन्हें **द्रव ध्वनि** भी कहते हैं।

तरांची (taranchi)—**यूराल अल्ताई** (दे०) परिवारकी एक तरांची नामक ईरानी मिश्रित तुर्की जाति द्वारा रूसके कजक गणतंत्रमें प्रयुक्त एक भाषा।

तरावस्था—(दे०) **विशेषण**।

तरीनो (tarino)—दक्षिणी-पश्चिमी **पश्तो** (दे०)का बिलोचिस्तानमें प्रयुक्त एक रूप।

तरू (taru)—**करेन्नी** (दे०) का एक रूप।

तलुहेत (taluhet)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरौकन** (दे०) परिवारकी एक भाषा। इसका एक अन्य नाम 'तलुचे' है।

तलैंग (talaing)—**मोन** (दे०)का एक नाम।

तलैंग-कयिन (talaing-kayin)—**प्वो-करेन** (दे०)का एक अन्य नाम।

तलैंग कलसी (talaing-kalasi)—१९२१की बर्मा जनगणनाके अनुसार, यमेथिन (बर्मा)में प्रयुक्त एक **करेन** (दे०) भाषा।

तलोक (talok)—**तयोक** (दे०)का एक अन्य नाम।

तवंगम (tawngam)—**पलौंग** (दे०)का एक रूप।

तवदी (tawadi)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **मराठी** (दे०)का, खानदेशमें प्रयुक्त, एक रूप।

तवरगढ़ी (tawargarhi)—**तोवरगढ़ी** (दे०)का एक अन्य नाम।

तवर्ग—देवनागरी वर्णमालाका चतुर्थ वर्ग।

इसमें त, थ, द, ध, न ये पाँच ध्वनियाँ आती हैं। (दे०) **वर्ग**।

तवोयन (tavoyan)—**बर्मी** (दे०) भाषाकी, बर्माके, अम्हर्स्ट, तवोय तथा मेर्गुईमें प्रयुक्त, एक बोली। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,३१,७४८के लगभग थी।

तव्थू (tawthu)—**तौंग्थू** (दे०)का एक नाम।

तव्ब्या करेन (tawbya karen)—**करेन** (दे०)का एक रूप।

तव्यन (tawyan)—**शुन्क्ल** (दे०)का एक रूप।

तव्यादि षट्—**कृत्य** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

तशोन (tashon)—**शुन्क्ल** (दे०)का एक नाम।

तसिम्शिअन (tasimshian)—**तसिम्शिअन वर्ग** (दे०)की एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

तस्मबाज़ी (tasmabazi)—**नटी** (दे०)-का एक रूप।

तस्मानियन (tasmanian)—तस्मानिया द्वीपके आदिवासियों द्वारा, प्राचीन कालमें बोली जानेवाली पाँच विलुप्त भाषाओंका परिवार। इस परिवार या इन भाषाओंके संबंधमें वर्तमान जानकारी इतनी थोड़ी है कि इनके पारिवारिक संबंधके विषयमें कुछ सनिश्चय कहना कठिन है।

तांगखुल (tangkhul)—**चीनी परिवार** (दे०)की मणिपुर (असम) तथा ऊपरी छिन्दविन (बर्मा)में प्रयुक्त एक **नागा-कुकी** भाषा। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, मणिपुरमें इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २६,००० थी। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, ऊपरी छिन्दविनमें, इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ५,५०० थी।

तांद (tanda)—**बंजारी** (दे०)का एक मद्रासी नाम।

ताइग्रे (tigre)—अफ्रीकाके पूर्वी किनारेपर ताइग्रेके आस-पास बोली जानेवाली सामी परिवारकी एक इथियोपियाई बोली। इसे **तिग्रे**, **टाइग्रे** या **टिग्रे** भी कहा गया है।

ताई (tai, thai)—(१) **स्यामी** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम। (२) चीनी परिवारकी एक शाखा जिसमें लू, खून, खाम्ती, लाओ, आहोम, स्यामी और शान आदि आती हैं।

ताई-अव्न (tai-awn)—**शांगले** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

ताई-ओन (tai-on)—**ताई अव्न** (दे०)का एक और नाम।

ताई-खव्ङग (tai-khawng)—**शान तयोक** (दे०)का एक नाम।

ताई खे (tai-khe)—**शान तयोक** (दे०)का एक नाम।

ताई-चीनी—चीनी परिवारकी एक शाखा जिसमें उपशाखाएँ **ताई** (दे०) तथा **चीनी** (दे०) हैं। इन दोनोंका एक साथ वर्गीकरण सर्वमान्य नहीं है। **ताईचीनी**को **चीनी-स्यामी** भी कहते हैं।

ताई-चौंग (tai-chaung)—**शांगले** (दे०) का एक रूप।

ताई-नव्ङग (tai-nawng)—**इंथ** (दे०) का एक अन्य नाम।

ताई-नो (tai-no)—**शान तयोक** (दे०)का एक अन्य नाम।

ताई-नोई (tai-noi)—बर्मा-सर्वेक्षणके अनुसार **लघुशान** (दे०)का एक नाम।

ताई-मन (tai-man)—**शान-बम** (दे०)का एक अन्य नाम।

ताई-रोंग (tai-rong)—**खाम्ती** (दे०)की, असममें प्रयुक्त, एक बोली।

ताई-लेम (tai-lem)—१९२१की बर्मा जनगणनाके अनुसार एक **ताई** (दे०) भाषा।

ताई-लोंग (tai-long)—**शान ग्यी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

ताई-लोई (tai-loi)—(१)बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **शान** (दे०) का, शान स्टेटोंमें प्रयुक्त एक रूप। इसके बोलने-

वालोंकी संख्या लगभग २०,९९१ थी। (२) वर्माकी केंगतूंग दक्षिणी शान स्टेटमें प्रयुक्त एक **मोन-ख्मेर** (दे०) बोली।

ताई-वर्ग (tai group)—**चीनी परिवार** (दे०) की **स्यामी-चीनी** भाषाओंका एक वर्ग। इस वर्गमें **स्यामी, लू, खून, शान, आहोम** तथा **खाम्ती**के अतिरिक्त और भी भाषाएँ हैं। इस वर्गकी अधिकांश भाषाएँ वर्मामें बोली जाती हैं। १९२१की जनगणनामें इसके बोलनेवालोंकी संख्या, लगभग ९,२६,३३५ थी।

ताग्वी (tagvy)—समोयदिक वर्गकी एक भाषा। (दे०) **समोयद**।

ताड़नजात (flapped)—**उत्क्षिप्त** (दे०) का एक अन्य नाम।

तात्कालिक कृदंत—(दे०) **कृदंत**।

तात्कालिक भविष्यकाल—(दे०) **आसन्न भविष्यकाल**।

तान—(१) एक **श्रुति** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम। (२) **सुर** (दे०) का एक अन्य नाम। (३) **सुर** (दे०) का एक भेद।

तानग्राम (toneme)—(दे०) **आघात**।

तानग्राम-विज्ञान (tonetics) (दे०) **आघात**।

तान भाषाएँ (tone language)—(दे०) **आघात**में **सुर** उपशीर्षक।

तामांग भोटिआ (tamang-bhotia) **सुर्मी** (दे०) का एक अन्य नाम।

तामुरिआ (tamuria)—**तमरिआ** (दे०) का एक अन्य नाम।

तारांकित रूप (starred form)—कल्पित रूप। ऐसा रूप जो प्राप्त न हो, केवल अनुमानके आधारपर जिसकी कल्पना की गयी हो। इसके साथ तारक-चिह्न लगाते हैं, इसी लिए इन्हें तारांकित रूपकी संज्ञा दी गयी है। (दे०) **तारक**।

तारीमूकी (tarimuki)—**गुजराती** (दे०) की, लोहारोंकी एक बंजारा जातिमें प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,६६९ थी।

तारू (taru)—**तौंग्यो** (दे०) का एक नाम।

तारोआँ (taroa)—**दिगारू मिश्मी** (दे०) का एक अन्य नाम।

ताल—**ऐफ़्रिकान्स** (दे०) का एक अन्य नाम।

तालव्य (palatal)—**उच्चारण-स्थान** (दे०)-के आधारपर किया गया व्यंजन ध्वनियोंका एक भेद। 'तालव्य' उन व्यंजनोंको कहते हैं जिनका उच्चारण कठोर तालुके पाससे होता है। जीभके अगले भाग या नोकसे इसमें सहायता ली जाती है। संस्कृतमें इ, चवर्ग, य, श का उच्चारण यहींसे होता था—'इचुयशानां तालु'। आजके हिन्दीके 'श'को तथा चवर्गको प्रायः सभी विद्वानोंने तालव्य कहा है किन्तु वस्तुतः ये सभी प्रायः वर्त्स्य-से हो गये हैं। 'श' कभी-कभी तालु और वर्त्सके संधिस्थलपर भी उच्चरित होता है। हिन्दी टवर्गका उच्चारण प्रायः यहींसे होता है। इसे **कठोर-तालव्य** भी कहते हैं।

तालव्य-नियम (palatal law)—एक **ध्वनि नियम** (दे०)।

तालव्यीकरण (palatalization)—अतालव्य ध्वनियोंको तालव्य कर देना या तालव्य रूपमें उच्चरित करना। अतालव्य ध्वनियोंके तालव्य हो जानेको **तालव्यीभवन** कहा जा सकता है।

तालव्यीभवन—**तालव्यीकरण** (दे०) का एक अन्य नाम।

ताहिती (tahitian)—पॉलिनीशियन परिवारकी ताहिती द्वीपोंमें बोली जानेवाली एक भाषा।

तिंतेकिया (tintekiya)—**कोच** (दे०) की, गोलपारा तथा गारो पहाड़ियों (असम) में प्रयुक्त, एक बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग १,४०० थी।

तिंबिरा (timbira) दक्षिणी अमेरिकाके **जे** (दे०) परिवारके उत्तरी वर्गकी एक भाषा।

ति—**गति** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

तिकोनी लिपि––**क्यूनीफार्म लिपि** (दे०)का एक अन्य नाम ।

तिगळर (tigalar)––**तमिल** (दे०)का एक 'कन्नड़' नाम ।

तिगुळर (tigular)––**तमिल** (दे०)का एक 'कन्नड़' नाम ।

तिग्रिन्या (tigrina)––सामी परिवारकी **इथिओपिअन** (दे०) भाषासे विकसित भाषा जो आजकल इरिट्रेयाकी परिनिष्ठित भाषा है । इसे **तिग्रे** (tigray) भी कहते हैं ।

तिग्रे––**ताइग्रे** (दे०)का एक अन्य नाम ।

तिङन्त––(दे०) **तिङ्** ।

तिङ्––क्रिया रूप बनानेके प्रत्ययोंका संस्कृत नाम । 'तिङ' प्रत्यय (दे०) धातुमें जोड़कर जो रूप बनते हैं उन्हें तिङन्त (तिङ+अंत) कहते हैं । उदाहरणार्थ 'भू' धातु+ति (तिङ प्रत्यय) = भवति । यह 'भवति' तिङन्त है । क्रियाके संयोगात्मक रूपोंको इसी आधारपर **तिङन्ती रूप** कहते हैं । वाजसनेयी प्रातिशाख्यमें इसे एक **शब्द** (दे०) भेद माना गया है ।

तितौक (titauk)––बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **तौंगथू** (दे०)की, दक्षिणी शान स्टेटमें (लगभग ४३०० व्यक्तियों द्वारा) व्यवहृत एक उप-बोली ।

तिनन (tinan)––**रंगलोई** (दे०)का एक अन्य नाम ।

तिनाउली (tinauli)––**लहँदा** (दे०)की, **हिन्दको** (दे०) बोलीका, पश्चिमी हज़ारा ज़िलेमें प्रयुक्त, एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ५,४२५ थी ।

तिनून (tinun)––**तिनन** (दे०)का एक अन्य नाम ।

तिपुरा (tipura)––**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके, 'बड' वर्गकी, बंगालके पहाड़ी भाग तथा उसके आस-पास प्रयुक्त, एक भाषा । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,६३,७२० थी ।

तिबर्सकद (tibarskad)––(१) **कनौरी** (दे०)का एक स्थानीय नाम । (२) **थेबोर स्कद्** (दे०) का एक अशुद्ध नाम ।

तिब्बती––तिब्बत तथा आसपासकी एक भाषा या भाषाओं-बोलियोंका एक वर्ग जो **चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी शाखाके अंतर्गत आती है । इसे तिब्बत तथा आसपासके लोग **भोटिया** कहते हैं । तिब्बती भोटियाके तिब्बतमें तथा आसपास बहुतसे रूप हैं, जिनमें प्रमुख **लद्दाखी तिब्बती**, **गढ़वाली तिब्बती** (दे०), **खम्सी तिब्बती** (दे०), **लाहुली तिब्बती**, **नैपाली तिब्बती** (दे०) **पुरिकी तिब्बती** (दे०), **सिक्कमी तिब्बती** (दे०), **स्पीती तिब्बती** (दे०), **कनवरी तिब्बती** (दे०), **बल्तिस्तानी तिब्बती** (दे०) तथा **भूटानी तिब्बती** (दे०) आदि हैं । मुख्य भोटिया या तिब्बती (जो तिब्बतमें यू तथा त्ज़ांगमें बोली जाती है)के बोलनेवालोंकी संख्या १९२१की जनगणनाके अनुसार लगभग २ लाख, ३२ हज़ारसे कुछ कम थी । इस मुख्य बोलीको **भोटिया लामा** या **लामा तिब्बती** भी कहते हैं । बर्मामें भी तिब्बतीका एक रूप पुताओ ज़िलेमें (१९२१ के गणनानुसार ८,९९५ लोगों द्वारा) भी बोला जाता है । तिब्बती भाषापर भारतीय भाषाओंका प्रभाव पड़ा है । इसमें एकाक्षरता चीनीकी अपेक्षा बहुत कम है । तिब्बती साहित्य सम्पन्न है । इसकी साहित्यिक भाषाका नाम **बल्ती** है । अन्य बोलियाँ **ल्होके**, **लद्दाखी** आदि हैं ।

तिब्बती-बर्मी––**चीनी परिवार** (दे०)की एक शाखा ।

तिब्बती लामा––**तिब्बती** (दे०)का एक अन्य नाम ।

तिब्बती लिपि––गुप्त लिपिसे विकसित **सिद्धमात्रिका लिपि** (दे०)से विकसित एक लिपि, जिसका प्रयोग तिब्बतमें होता है । चीन और जापानके बौद्धोंमें भी इसका कुछ-कुछ प्रचार है । इसे **भोटिया लिपि** भी

कहते हैं। मंगोल लिपि (दे०) तथा लेप्चा लिपि (दे०)का इससे संबंध है।

तिय्यर (tiyyar)––(१) **थेय** (दे०)का एक अन्य नाम। (२) **मलयालम** (दे०)का कुर्गमें प्रयुक्त एक नाम।

तिरस्कार बोधक अव्यय––(दे०)**मनोविकार-बोधक अव्यय**।

तिरहारी––(१) 'पश्चिमी हिन्दी'की बोली बुंदेली (दे०)का, यमुना नदीके दक्षिणी किनारेपर एक पतली पट्टीमें जालौनमें तथा हमीरपुरके उत्तरी छोरपर प्रयुक्त एक रूप। 'बुंदेली'के इस रूपपर 'पूर्वी हिन्दी' की बोली 'बघेली'का प्रभाव पड़ा है। (२) 'पूर्वी-हिन्दी'की बघेली (दे०) बोलीका, यमुनाके किनारेपर हमीरपुर, बाँदा तथा फतेहपुरमें प्रयुक्त, एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या२,२५,७०० के लगभग थी। (३) 'ब्रजभाषा'की उप-बोली कनौजी (दे०) (जिसे ग्रियर्सनने स्वतंत्र बोली माना था)का कानपुर और हमीरपुरके सामने यमुनाके किनारेपर प्रयुक्त एक स्थानीय रूप। यमुनाके तीरपर होनेके कारण इसका नाम 'तिरहारी' पड़ा है। 'तिरहारी''अवधी'से कुछ प्रभावित है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग ४०,००,००० थी।

तिरहुतिया––**मैथिली** (दे०)का एक दूसरा नाम। 'तिरहुत' शब्द संस्कृत शब्द 'तीर-भुक्ति'का विकसित रूप है। इस आधार-पर 'तिरहुत'का अर्थ है 'तीरका भोग करने-वाला प्रदेश' और 'तिरहुतिया'का अर्थ हुआ 'तीरके भोग करनेवाले प्रदेशकी बोली या वहाँके लोग'। गंगा, कोसी और गंडकी नदि-योंसे घिरे इस प्रदेश तथा यहाँकी बोलीके ये नाम वस्तुतः ठीक ही हैं।

तिरहुती कैथी––एक प्रकारकी **कैथी लिपि** (दे०)।

तिराही (tirahi)––**दरद** (दे०) भाषाओंके 'काफिर' वर्गके, कलाशा-पशइ उप-वर्गकी, निगराहर (अफ़गानिस्तान)में प्रयुक्त एक भाषा।

तिर्गुली (tirguli)––१८९१, १९०१ तथा १९११की बंबई जनगणनाके अनुसार, अहम-दनगर, पूना, शोलापुर तथा सतारामें प्रयुक्त, एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

तिल्वंदी (tilwandi)––१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार, **मराठी** (दे०)का, पूनामें प्रयुक्त, एक रूप।

तीवू भाषा––**मह्ल** (दे०)का एक रूप।

तीव्र समास (intensive compound)––ऐसा समास जिसमें एक शब्द दूसरेके अर्थको तीव्र, गंभीर या प्रखर बना दे। जैसे–वज्र-मूर्ख।

तुंगुस (tungus)––**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी मांचू-तुंगुस शाखाकी एक भाषा, जिसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ७० हज़ार है। इसका क्षेत्र साइबेरियामें येनिसेइ नदीके पास है। इसकी कई बोलियाँ हैं जिनमें **चपोगिर** (cha-pogir), **किले** (kile), **लमुत** (la-mut), मंगुम (mangum), **ओरोचोन** (orochon) तथा **ओरोप** (orop) आदि प्रमुख हैं।

तुंगुस-मांचू––**मांचू-तुंगुस** (दे०)का एक अन्य नाम।

तुंघ्लू (tunghlu)––**तौंघ्लू** (दे०)का एक अन्य नाम।

तुआरेग (tuareg)––हेमिटिक परिवारकी एक **बर्बर** (दे०) भाषा जो सहारा (अफ्री-का)में बोली जाती है।

तुकई-मी (tukai mee)––**खोइराओ** (दे०)-का एक अन्य नाम।

तुद (tuda)––**तोद** (दे०)की एक और नाम।

तुदादि गण—संस्कृत धातुओंका एक **गण** (दे०)।

तुपी—(दे०) **टुपी**।

तुपी-गुअरनी—(दे०) **टुपी-गुअरनी**।

तुरक (turaka)—**तुलुकू** (दे०) का एक अन्य नाम।

तुरिया (turiya)—**तूरी** (दे०) का एक अन्य नाम।

तुरुंग (turung)—**ताइरोंग** (दे०) का एक अन्य नाम।

तुर्की—**यूराल-अल्ताई परिवार** (दे०) की एक भाषा। यह अल्टाई वर्गमें आती है। इसके **पश्चिमी** (किरगीज़, बशकिर, चुवश आदि), **दक्षिणी** (इसकी **ओस्मनली** या **ओत्तोमन** बोली ही आधुनिक कालमें **तुर्की भाषा** नामसे प्रसिद्ध है) **केन्द्रीय** (उज़्बेक, काशग़री बोलियाँ, यारकंदी बोलियाँ) तथा **पूर्वी** (अल्ताई तुर्की, अबाकन, करगस्सी आदि) चार रूप हैं (जिनकी प्रमुख भाषाएँ और बोलियाँ कोष्ठकोंमें दी गयी हैं)। तुर्कीपर राजनीतिक कारणोंसे फ़ारसी और अरबीका प्रभाव अधिक पड़ा है, पर बदलेमें तुर्कीने भी उन दोनोंको प्रभावित किया है। उत्तरी भारतकी जनभाषामें भी तुर्कीके चाकू, तोप तथा तमग़ा आदि बहुतसे शब्द बहुतायतसे प्रचलित हैं। तुर्कीका साहित्य बहुत धनी है। काव्य और कथा-साहित्य यहाँ बहुत ही पुराना है। भारतके प्रथम तुर्क बादशाह बाबरने अपना वृत्तान्त तुर्कीमें ही (तुजुक-बाबरी) लिखा है। तुर्कीकी लिपि अरबी थी पर अब रोमन लिपि स्वीकार कर ली गयी है। इधर अरबीके शब्द भी निकाल दिये गये हैं और उनके स्थानपर तुर्की शब्दोंका स्वागत हुआ है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,८०,००,००० है। उपर्युक्त सभी रूपोंकी दृष्टिसे तुर्कीमें बोलियोंकी संख्या ३५से ऊपर है और कुल बोलनेवाले चार करोड़के लगभग हैं।

तुर्कोमन (turkoman)—**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी एक भाषा, जिसके बोलनेवाले तुर्कोमन नामक तुर्की जातिके हैं। इनका क्षेत्र तुर्कोमन, कज़ाक, उज़्बक आदि है तथा इनकी संख्या ५ लाखके लगभग है।

तुर्फारियन—**तोखारी** (दे०) की एक बोली।

तुलना—(दे०) **विशेषण**।

तुलनात्मक ध्वनि विज्ञान—दो या अधिक भाषाओंकी ध्वनियों या उनके ध्वनि विकासका तुलनात्मक अध्ययन।

तुलनात्मक पद्धति (comparative method)—तुलनात्मक भाषा विज्ञानमें दो या अधिक भाषाओंकी तुलना की जाती है। तुलना करनेकी पद्धति या तुलनात्मक अध्ययनकी पद्धति ही तुलनात्मक पद्धति है। **तुलनात्मक पद्धति** का प्रयोग इस सामान्य अर्थके अतिरिक्त एक विशेष अर्थमें भी होता है। इसके अंतर्गत दो या अधिक भाषाओं या बोलियोंके तुलनात्मक अध्ययनके आधारपर पहले यह निश्चय किया जाता है कि वे एक परिवारकी हैं या नहीं और फिर सूक्ष्म तुलनाके आधारपर उन भाषाओं या बोलियोंकी पूर्वज भाषा (जिनसे उनकी उत्पत्ति हुई है) का **पुनर्निर्माण** (reconstruction) किया जाता है, अर्थात् उसकी ध्वनियों तथा व्याकरणिक रूपों, शब्दों एवं वाक्य आदि विषयक अन्य नियमों आदिका पता लगाया जाता है। **तुलनात्मक पद्धति**—तुलनात्मक पद्धतिका प्रारम्भ १७वीं सदीमें हो गया था। तबसे अबतक भाषाके पारिवारिक वर्गीकरण एवं पारिवारिक अध्ययनके क्षेत्रमें जो भी कार्य हुआ है, उसका आधार तुलनात्मक पद्धति ही है। अब यह पद्धति पहलेकी अपेक्षा सांख्यिकी आदि शास्त्रोंकी सहायतासे बहुत सुविकसित हो गयी है। तुलनात्मक पद्धतिमें पहले दो भाषाओंके शब्दोंको एकत्र कर उनका तुलनात्मक अध्ययन करते हैं। शब्दोंके तुलनात्मक अध्ययनके फलस्वरूप हम देखते हैं कि दोनों भाषाओंके बहुतसे शब्दोंमें ध्वनि (या

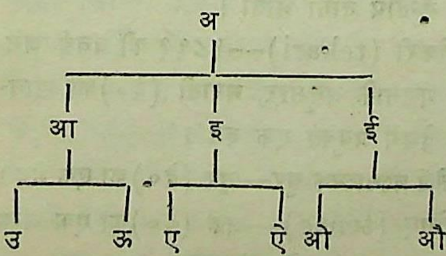
रूप) और अर्थकी दृष्टिसे बहुत साम्य है। उदाहरणार्थ संस्कृत पिता, ग्रीक pater या लैटिन pater, फारसी पेदर, या अंग्रेज़ी father आदि। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि ध्वनि और अर्थ दोनोंमें यह साम्य क्यों हुआ ? यदि विचार करें तो चार सम्भावनाएँ दिखाई पड़ती हैं। (१) सम्भव है यह साम्य यों ही संयोगसे हो गया हो। इसका कोई ऐतिहासिक आधार न हो। उदाहरणार्थ जर्मन नास (nass) और जूनी नास (nas) दोनोंका अर्थ 'भीगा हुआ' होता है और दोनोंमें ध्वनि-साम्य भी है, किन्तु इसका कोई आधार नहीं है। संयोगसे ही यह साम्य हो गया है। अंग्रेज़ी near तथा भोजपुरी नीयर (=समीप)में भी इसी प्रकारका साम्य है। (२) दूसरी संभावना यह हो सकती है कि इन दोनों भाषाओंमेंसे किसीएकने दूसरीसे उस शब्दको लिया हो। उदाहरणार्थ हिन्दीने द्रविड़ भाषाओंसे 'पिल्ला' शब्द लिया है। या यदि संस्कृत और द्रविड़-परिवारकी किसी भाषाका तुलनात्मक अध्ययन किया जाय तो एक ओर ऐसे बहुतसे शब्द मिलेंगे जो उन भाषाओंमें संस्कृतसे लिये गये हैं, जैसे कन्नड़ अन्नम् (भात) और दूसरी ओर संस्कृतमें ऐसे बहुतसे शब्द मिलेंगे जो द्रविड़ भाषाओंसे लिये गये हैं, जैसे व्रीहि (चावल)। (३) तीसरी संभावना यह भी हो सकती है कि दोनों ही भाषाओंने ध्वनि और अर्थकी दृष्टिसे साम्य रखनेवाले शब्दोंको किसी तीसरी भाषासे लिया हो। इस संभावनाके कई अन्य रूप भी हो सकते हैं। दोनों ऐसी दो अन्य भाषाओंसे भी शब्द ले सकती हैं जो या तो पारिवारिक दृष्टिसे सम्बद्ध हों या किसी भी स्तरपर उधार लेनेके कारण दोनोंमें एक ही शब्द हो। उदाहरणार्थ पंजाबी और हिन्दीने फ़ारसीसे बहुतसे शब्द लिये हैं। या फ़ारसी और तुर्कीने अरबीसे बहुतसे शब्द लिय हैं। जर्मन और अंग्रेज़ीने फ्रांसीसी भाषासे बहुतसे शब्द लिये हैं। (४) चौथी संभावना यह भी हो सकती है कि जिन दो भाषाओंमें कुछ शब्दोंमें अर्थ और ध्वनिका साम्य हो, वे दोनों एक ही परिवारकी हों और वे समतावाले शब्द उस मूल भाषाके हों जिनसे वे दोनों निकली हों। हिन्दी-पंजाबी, हिन्दी-मराठी या हिन्दी-बँगलाकी तुलना करनेपर बहुत अधिक शब्द इस प्रकारके मिलेंगे और कहना न होगा कि वे शब्द मूलतः संस्कृतके हैं। वहींसे परम्परागत रूपसे इन भाषाओंको मिले हैं।

इन चारों सम्भावनाओंको संक्षेपमें रखना चाहें तो केवल तीन वर्ग बना सकते हैं। एक संयोग या चांसका। दूसरा उधार लिये जानेका और तीसरा मूल भाषासे उससे निकली भाषाओंमें परम्परागत रूपसे आनेका। पहली या संयोगकी सम्भावनाको लेकर विद्वानोंने बहुत सोचने-समझने तथा विभिन्न भाषाओंके आधारपर इसका प्रतिशत निकालनेकी कोशिश की है। मोटे रूपसे यह कहा जा सकता है कि संयोग या चांसके कारण अधिकसे अधिक दो भाषाओंके चार प्रतिशब्दोंमें ध्वनि या रूपका साम्य हो सकता है। यदि साम्य इससे अधिक शब्दोंमें हो तो, इसका आशय है कि साम्य चांसपर आधारित न होकर शेष दोमें किसी एकपर आधारित है। दूसरे प्रकारके—अर्थात् उधारपर आधारित—साम्यकी जानकारीके लिए उधारकी सम्भावनाओंकी छानबीन करनी पड़ती है। इसके लिए दोनों भाषाओंकी भौगोलिक स्थिति एवं उनके बोलनेवालोंके राजनीतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास एवं पारस्परिक सम्बन्ध आदिपर दृष्टि दौड़ानी पड़ती है। इन आधारोंपर इस बातका निर्णय हो जाता है कि समता रखनेवाले शब्द उधार लिये गये हैं या नहीं। इसके लिए प्रतिशतका निर्धारण सम्भव नहीं। कुछ भाषाएँ ऐसी हैं जिसमें उधार शब्दोंकी संख्या बहुत अधिक है, जैसे फ़ारसी भाषामें अरबी शब्द और दूसरी ओर ऐसी भी

भाषाएँ हैं जिनमें इस प्रकारकी संख्या बहुत कम है जैसे आइसलैंडिक। उपर्युक्त दोनों सम्भावनाओंके न रहनेपर तीसरी सम्भावनाके लिए गुंजाइश होती है। इस सम्भावनाके होनेपर दोनों भाषाओंकी कुछ और दृष्टियोंसे भी तुलना अपेक्षित होती है। पहले प्रकारकी तुलना ध्वनियोंकी हो सकती है, दूसरे प्रकारकी व्याकरणिक रूपोंकी। इस दूसरेमें उपसर्ग तथा प्रत्ययोंकी तुलना भी महत्त्वपूर्ण है। तीसरे प्रकारकी तुलना वाक्यगठन आदि भाषाके अन्य नियमोंकी हो सकती है। इन तुलनाओंके अतिरिक्त इन दोनोंके बोलनेवालोंकी साहित्यिक, सांस्कृतिक परम्पराओं, उनके शरीर, जीवन एवं संस्कृतिके मानवशास्त्रीय विश्लेषण एवं उनके आदिस्थान तथा इतिहासके अध्ययन द्वारा भी इन भाषाओंके एक परिवारकी होनेकी सम्भावनाको पुष्ट किया जाता है और फिर दोनों भाषाओंके एक परिवारकी होनेका निश्चय हो जाता है। **पुनर्निर्माण** (reconstruction) पारिवारिक दृष्टिसे आपसमें संबद्ध भाषाओंके शब्दों, रूपों, ध्वनियों तथा वाक्य-निर्माणके नियमों आदिके तुलनात्मक अध्ययनके आधारपर उस मूल भाषाकी ध्वनियों, शब्दों, रूपों आदिका पता लगाना ही पुनर्निर्माण है। संस्कृत, प्राचीन फ़ारसी, ग्रीक और लैटिन आदि भाषाओंके इसी प्रकारके तुलनात्मक अध्ययनके आधारपर उनकी मूल भारोपीय भाषाके सारे अंग पुनर्निर्मित किये गये हैं। इस प्रकारके पुनर्निर्मित रूप तारक (*) के साथ लिखे जाते हैं। दो पुनर्निर्मित रूपों या शब्दोंके आधारपर पुनर्निर्मित उनका पूर्वज रूप या शब्द दो तारकों (**) के साथ लिखा जाता है। ध्वनियोंके पुनर्निर्माणके लिए संबद्ध भाषाओं—मान लें दोसे बहुतसे ध्वनि और अर्थकी समता रखनेवाले शब्द लिये जाते हैं। मान लें एक भाषाके शब्दोंमें जहाँ-जहाँ 'क' ध्वनि आयी है दूसरीमें भी वहाँ 'क' ध्वनि है, तो सामान्यतया यह माना जायगा कि मूल भाषामें उस स्थानपर 'क' ध्वनि थी। यदि उस परिवारमें दोसे अधिक भाषाओंका पता है तो उन्हीं शब्दोंके उन सभी भाषाओंमें प्रयुक्त रूपोंको लेकर इसकी परीक्षा की जायगी। यदि सभीमें 'क' है तो यह प्रायः निश्चित है कि मूल भाषामें उस स्थानपर 'क' ध्वनि थी। उदाहरणार्थ संस्कृत नव, यूनानी (enna), लैटिन (novem), गोथिक (niun) के आधारपर उस स्थानपर मूल भारोपीयमें भी 'न' के होनेका अनुमान लगता है। इसी प्रकार इन शब्दोंकी अन्य ध्वनियोंकी तुलना एवं अन्य शब्दोंमें इन ध्वनियोंकी तुलनाके आधारपर नौके पर्याय उपर्युक्त सारे शब्दके मूल रूपका पुनर्निर्माण *newn रूपमें किया गया है। आशय यह हुआ कि मूल भारोपीय भाषामें नौके लिए *newn शब्द था और उसीसे उपर्युक्त सारे रूप या उस परिवारकी अन्य भाषाओंके रूप (जैसे अंग्रेजी nine, हिन्दी नौ आदि) विकसित हुए हैं। कभी-कभी ऐसा भी हो जाता है कि एक भाषामें कहीं एक ध्वनि मिलती है दूसरीमें उसी स्थानपर दूसरी। इसमें कई सम्भावनाएँ हो सकती हैं। संभव है मूल भाषामें उन दोनोंमेंकी कोई एक ध्वनि रही हो, और दूसरी भाषाकी दूसरी ध्वनि उसका विकसित रूप हो। जैसे सातके लिए मूल भारोपीय भाषामें *septm शब्दका पुनर्निर्माण किया गया है। लैटिनमें इसका रूप (septem) मिलता है और गॉथिकमें (sibun)। अब यदि लैटिन और गॉथिकके आधारपर पुनर्निर्माण करना हो तो समस्या यह खड़ी होगी कि लैटिनमें जहाँ 'प' है, गॉथिकमें वहाँ 'ब' है, फिर मूल भाषामें क्या था? यहाँ संस्कृत सप्त, ग्रीक (hept) आदिके आधारपर तथा अन्य शब्दोंमें 'प' की गतिका अध्ययन कर भाषा-विज्ञान इस निष्कर्षपर पहुँचा है कि मूलमें 'प' ध्वनि थी। लैटिनमें तो वह 'प' ही रही किन्तु गॉथिकमें उसका घोषीकरण हो गया और वह 'ब' हो गयी। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि

दो संबद्ध भाषाओंमें एक स्थानपर दो भिन्न ध्वनियाँ मिलती हैं पर तरह-तरहके तुलनात्मक अध्ययनके उपरांत निष्कर्ष यह निकलता है कि मूल भाषामें उन दोनोंमें एक भी नहीं थी और उन दोनोंके स्थानपर कोई तीसरी ध्वनि थी। उदाहरणार्थ एकके लिए लैटिनमें (unus) शब्द मिलता है, तथा गॉथिकमें (ains) जिनके आरम्भमें क्रमसे u तथा ai है, किन्तु इन दोनोंके आधारपर जिस मूल शब्दका पुनर्निर्माण किया गया है वह *(oinos) है। इसका अर्थ यह है कि यहाँ मूल oi ध्वनि एक ओर तो u बन गयी है और दूसरी ओर ai। इस प्रकार पुनर्निर्माणमें ध्वनिपरिवर्तन सम्बन्धी नियम और दिशाओंसे भी पूरी सहायता मिलती है, और ग्रिमनियम जैसे ध्वनि-नियमोंका भी निर्धारण होता है। इस प्रकारके तुलनात्मक अध्ययनके द्वारा मूल भाषाकी सारी ध्वनियाँ शब्द, रूप तथा भाषा-विषयक अन्य नियमोंका पुनर्निर्माण होता है। इस पुनर्निर्माणकी सफलता तुलनात्मक अध्ययनके लिए प्राप्त सामग्रीकी प्रचुरता और निश्चिततापर निर्भर करती है। इसीलिए, जहाँ सामग्री कम या अनिश्चित होती है पुनर्निर्मित ध्वनियों या रूपों आदिके विषयमें प्रायः विद्वानोंमें एक मत नहीं होता। मूल भारोपीय भाषाके बहुतसे अंगोंके विषयमें इस प्रकारके मत-वैभिन्न्य हैं।

पुनर्निर्माण कई सीढ़ियोंतक किया जा सकता है। उदाहरणार्थ



यह भाषा परिवार है। इसमें अ, उ, ए, ऐ, ओ, औ जीवित भाषाएँ हैं और उनके सम्बन्धमें हमें जानकारी है। ऊपर कही गयी तुलनात्मक पद्धतिसे अ-ऊके आधारपर 'आ'का; ए-ऐ के आधारपर इ का और ओ-औके आधारपर ई का पुनर्निर्माण करेंगे। फिर पुनर्निर्मित आ, इ, ई के आधारपर 'अ' का निर्माण करेंगे। इसी प्रकार यदि सामग्री मिले तो और पीछे तक भी पुनर्निर्माण किया जा सकता है। किसी मूल भाषाके पुनर्निर्मित रूप (विशेषतः पुनर्निर्मित शब्द-समूह)के आधारपर तत्कालीन संस्कृति-सभ्यता एवं उसके प्रयोक्ताजनके स्थान आदिका भी अनुमान लगाया जा सकता है।

पुनर्निर्माणका एक रूप **आंतरिक पुनर्निर्माण** (internal reconstruction) भी कहलाता है, जिसमें एक ही भाषामें तुलनात्मक पद्धितके सहारे पुरानी ध्वनियों या शब्दों आदिका निर्माण करते हैं। इस रूपमें उपर्युक्त पुनर्निर्माणको **बाह्य पुनर्निर्माण** (external reconstruction) कहा जा सकता है। **आंतरिक पुनर्निर्माण** (internal reconstruction)—उस भाषाका अपेक्षित होता है, जिसका पुराना लिखित रूप प्राप्त नहीं है। इसके द्वारा उसके प्राचीन रूप-ध्वनि, शब्द रूप या व्याकरण आदिका पता लगाते हैं। इसका आधार यह माना गया है कि भाषाके कुछ ऐसे प्राचीन चिह्न, किसी न किसी रूपमें वर्तमान होते हैं, वे ही अंधेकी लकड़ीका काम करते हैं। उनके आधारपर ही प्राचीन भाषाका एक सीमातक निर्माण संभव है।

तुलनात्मक भाषा विज्ञान--भाषा विज्ञान (दे०)का एक रूप, जिसमें दो या अधिक भाषाओंका तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है।

तुलनात्मक रूपविज्ञान (comparative morphology)--**रूप विज्ञान** (दे०)का एक भेद।

तुलनात्मक लिपि विज्ञान--एक प्रकारका **लिपि विज्ञान** (दे०)।

तुलनात्मक वाक्य विज्ञान (comparative syntax)––(दे०) **वाक्य विज्ञान** ।

तुलनात्मक व्याकरण (comparative grammar)–व्याकरणका वह रूप जिसमें दो या अधिक भाषाओंके व्याकरण (ध्वनि, शब्द, वाक्य)का तुलनात्मक अध्ययन रहता है। (दे०) **व्याकरण** ।

तुलनावस्था––(दे०) **विशेषण** ।

तुलनावाचक क्रियाविशेषण––(दे०) **क्रिया-विशेषण** ।

तुलनावाचक संबंधसूचक अव्यय––(दे०) **संबंधसूचक अव्यय** ।

तुलुकू (tuluku)—**हिन्दुस्तानी** (दे०)के लिए मद्रासमें प्रयुक्त एक नाम । यह नाम 'तुर्क' शब्दका बिगड़ा हुआ रूप है ।

तुलू—**द्रविड़ परिवार** (दे०)की एक भाषा । इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ४,९१,७२८ थी । 'तुलु' भाषा कुर्ग और बम्बई प्रान्तकी सीमापर एक छोटे क्षेत्रमें बोली जाती है । इसमें साहित्य नहीं है। द्राविड़ भाषाओंके विशेषज्ञ तथा अधिकारी विद्वान् कैल्डवेलके अनुसार विकासकी दृष्टिसे विश्वकी उच्चतम भाषाओंमें इसका स्थान है । इसकी दो प्रमुख बोलियाँ 'कोरगा' और 'बेलरा' हैं ।

तुलूलिपि—**तुलू** (दे०) भाषाकी लिपि । इसका विकास **ग्रंथलिपि** (दे०)से हुआ है।

तुल्यतासूचक चिह्न––एक प्रकारका चिह्न " (दे०) **विराम** ।

तुळू––**तुलू** (दे०)का वास्तविक उच्चारण ।

तुळुव (tuluva)––**तुळू**(दे०)का एक अन्य नाम ।

तुळ्वी (tulvi)––**तुळु** (दे०)का एक अन्य नाम ।

तुवांगी (tuwangi)––**तिब्बती** (दे०)का, पूर्वीय हिमालयमें प्रयुक्त, एक रूप ।

तुश (tush)––जार्जियन तुश लोगों द्वारा प्रयुक्त, काकेशन परिवारकी एक चेचेन बोली ।

तुस्कन (tuskan)—**केन्द्रीय इतालवीकी** फ्लोरेंताइन, पिसन, सेनीज़ आदि बोलियोंका सामूहिक नाम । तुस्कनी प्रदेशमें होनेके कारण यह नाम पड़ा है। यहाँके रहनेवाले भी तुस्कन ही कहलाते हैं । परिनिष्ठित इतालवी इसीकी फ्लोरेंताइन बोलीपर आधारित है । तुस्कनमें ही दांतेने साहित्य-रचना की थी ।

तूरी (turi)––**खेखारी** (दे०)की, छोटा-नागपुरके दक्षिणमें तथा मध्य प्रदेशके कुछ भागोंमें प्रयुक्त, एक बोली । १९२१की जन-गणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ११,९३२ थी ।

तृतीयप्राकृत––**अपभ्रंश** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक भाषा ।

तृतीय बलाघात––**बलाघात** (दे०)का एक रूप ।

तृतीयक बलाघात––**बलाघात** (दे०)का एक भेद ।

तृतीया—करण कारक । (दे०) **कारक** ।

तृतीया तत्पुरुष समास—(दे०) **समास** ।

तृतीया बहुव्रीहि समास––(दे०) **समास** ।

तेंगिमा (tengima)––**अंगामी नागा**(दे०) की, नागा-पहाड़ियोंमें प्रयुक्त, एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २६,९०० थी।

तेंगूस नागा (tengsa naga)––(१) **आओ** (दे०)का एक अशुद्ध नाम । (२) **चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके 'नागा' वर्गकी, असमकी उत्तरी-पूर्वी सीमापर प्रयुक्त, एक **केन्द्रीय नागा भाषा** ।

तेकरी (tekari)––१८९१ की बंबई जन-गणनाके अनुसार, **मराठी** (दे०)का खान-देशमें प्रयुक्त एक रूप ।

तेज प्रश्नात्मक सुर––**सुर** (दे०)का एक भेद।

तेनए (tenae)––**अक** (दे०)का एक अन्य नाम ।

तेनुगु (tenugu)––**तेलुगु** (दे०) का एक दूसरा नाम ।

तेमुलिक (temulic)—१८९१की बंबई

जनगणनाके अनुसार **मराठी** (दे०) का एक रूप ।

तेरोव्यंजन सुर––सुर (दे०)का एक भेद ।

तेरोव्यंजन स्वरित––एक प्रकारका **स्वरित** (दे०) ।

तेलिंग (telinga)––**तेलुगु** (दे०)का एक अन्य नाम ।

तेलुगु––**द्रविड़ परिवार** (दे०)की एक प्रमुख भाषा । इसके अन्य नाम **आंध्र, तेलगू** तथा **तेनुगु** भी हैं । इनमें 'आंध्र' शब्द अधिक व्यापक है । यह उस प्रदेश तथा वहाँके लोगोंका भी वाचक है। 'आंध्र' शब्द अत्यंत प्राचीन है। ऐतरेय ब्राह्मण (एतेन्ध्राः पुण्ड्राशवराः··), महाभारत तथा रामायण आदिमें यह एक जातिबोधक शब्दके रूपमें आया है । भाषाके अर्थमें इसका प्रयोग १००० ई०के आस-पाससे हुआ है । 'तेगुगु' शब्द भाषाके अर्थमें कुछ पहलेसे व्यवहृत हो रहा था । 'तेलुगु' शब्दका प्रयोग १२०० ई०के लगभगसे होने लगा । 'तेलुगु' या 'तेनुगु' शब्द तेलुंगु, तेलिंग, तैलंग, तैलिंग, तैनुंग आदि अनेक रूपोंमें मिलता है । 'तेलुगु' नामकी व्युत्पत्तिके संबंधमें पर्याप्त विवाद है। कुछ लोग 'तेलुगु' शब्दका संबंध 'त्रिलिंग'से मानते हैं । दक्षिणी परंपराके अनुसार लिंग अर्थात् शिव तीन पर्वतों (कालेश्वर, श्रीशैल, भीमेश्वर)पर अवतरित हुए । ये तीन पर्वत ही आंध्र प्रदेश या तिलंगानेकी सीमा बनाते हैं, इसी कारण वह प्रदेश 'त्रिलिंग' या कुछके अनुसार 'त्रिकलिंग' कहलाया, जिसका विकास 'तेलुगु' आदि रूपोंमें हुआ । तमिलमें एक शब्द 'तेन' है । जिसका अर्थ 'दक्षिण' होता है । कुछ लोग इस 'तेन'से 'तेनुगु' (अर्थात् दक्षिणी भाषा) और उससे 'तेलुगु'को निकला मानते हैं । शिव या लिंगके इसी अवंतरणको पृष्ठभूमिमें रखते हुए कुछ लोग 'त्रिनगम्' (ऊपर कहे गये तीन पर्वत)से 'तेनुगु' और उससे 'तेलुगु'का विकास मानते हैं । तेलुगु भाषा बहुत श्रुति मधुर है और उसे पूर्वकी 'इतालवी' कहा गया है । इसी आधारपर कुछ तेलुगु भाषी इसके प्राचीन नाम 'तेनुगु'का संबंध 'तेने' (= शहद)से जोड़ते हैं और फिर 'तेलुगु'को 'तेनुगु'का विकास मानते हैं ।

तमिल लोग 'आंध्र भाषा' या 'तेलुगु'को **'वडगु'** कहते हैं । 'वड'का अर्थ है 'उत्तर' । कारण स्पष्ट है तेलुगु प्रदेश तमिल प्रदेशके उत्तरमें है । इस तरह 'वडगु'का अर्थ है 'उत्तरी भाषा' । पुर्तगाली इस भाषाके लिए **'जेंटू'** नामका प्रयोग करते रहे हैं ।

तेलुगु भाषाका क्षेत्र मुख्यतया, वर्तमान आंध्र प्रदेश है । इसके अतिरिक्त इसके कुछ भाग मैसूर तथा महाराष्ट्र आदिमें भी हैं । तेलुगुको प्रसिद्ध तेलुगु विद्वान् चिलकूरि नारायण रावने अपने 'आंध्र भाषा चरित्र' नामक ग्रंथमें आर्य परिवारकी भाषा कहा है । वे द्रविड़ परिवारको अलग नहीं मानते । द्रविड़में तमिल, कन्नड़, मलयालमकी तुलनामें 'तेलुगु'का स्थान कुछ अलग है । (देखिये 'द्रविड़ परिवार'में ग्रियर्सनका वर्गीकरण) तेलुगु भाषाका प्राचीनतम रूप सातवीं सदीके शिलालेखोंमें मिलता है । इसमें साहित्य रचना १०५०से आरंभ होती है । तबसे अब-तक इसमें साहित्यरचना होती चली आ रही है। तेलुगु साहित्यका मध्ययुग जिसे प्रबंध युग (१५००-१७५० ई०) भी कहते हैं, स्वर्णयुग कहा गया है । इस युगके कवियोंमें प्रमुख पेद्दना, नन्दितिम्मना, मल्लना आदि हैं । संस्कृत हिन्दीकी तरह तेलुगुमें भक्ति, शृंगार, नीतिके शतक ग्रंथोंकी एक लंबी परंपरा मिलती है । जिसमेंसे आज भी लगभग ६०० शतक ग्रंथ उपलब्ध हैं । तेलुगु अपनी श्रुति माधुरीके लिए प्रसिद्ध है । इसी कारण कर्नाटक संगीतकी अधिकांश रचनाएँ (त्यागराज आदिकी) इसी भाषामें हैं । आंध्रके बाहरके तमिल, कन्नड़ आदि भाषाओंके संगीतकारोंने भी गीत-रचनामें इसीका प्रयोग किया है । तेलुगु-लिपि, ब्राह्मी लिपिकी दक्षिणी शाखासे विकसित एक बहुत सुन्दर तथा पूर्ण लिपि है । यह कन्नड़ लिपिसे बहुत मिलती-

जुलती है। वर्तमान कालमें तेलुगुके बोलनेवाले लगभग सवा तीन करोड़ हैं। तेलुगुकी प्रमुख बोलियाँ कोमटाड, सालेवारी, गोलरी, बेरडी, बडरी, कामाठी तथा दासरी हैं।

तेलुगु कन्नड़--**ब्राह्मी लिपि** (दे०)की दक्षिणी शैलीसे विकसित एक लिपि जो वर्तमान कन्नड़ और तेलुगु लिपियोंकी जननी है। ५वीं सदीसे १४वीं सदीतक दक्षिणी महाराष्ट्र, शोलापुर, बीजापुर, बेलगाँव, धारवाड़ तथा कारवाड़ ज़िले, हैदराबादके दक्षिणी तथा मद्रासके उत्तरी-पूर्वी भाग एवं मैसूरके कुछ हिस्सोंमें इसका प्रयोग मिलता है। १४वींसदीके बाद इससे **तेलुगु** तथा **कन्नड़** (दे०) लिपियाँ विकसित हुई हैं।

[तेलुगु लिपि। ये क्रमश: अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, लृ, लॄ, एँ, ए, ऐ, ओं, ओ, औ, अं, अ:। क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म, य, र, ऱ, ल, ळ, व, श, ष, स, ह हैं।]

तेलुगु लिपि--(दे०) **तेलुगु-कन्नड़**।

तेवणइया--पन्नवणासूत्र नामक जैन ग्रंथमें दी गयीं १८ लिपियोंमेंसे एक।

तैऊ (taïu)--**दिगारू मिश्मी** (दे०)का एक अन्य नाम।

तैपिरापे (tapirape)--**टुपी-गवरनी** (दे०) परिवारकी दक्षिणी अमेरिकामें प्रयुक्त एक भाषाका नाम।

तैरोविराम सुर--**सुर** (दे०)का एक भेद।

तोंगन (tongan)--बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, ऊपरी छिन्दविनमें (लगभग ४००० व्यक्तियों द्वारा) व्यवहृत, एक **नागा** (दे०) भाषा।

तोंगातबु (tongatabu)--एक पॉलिनीशियन भाषा जो **तोंगा** द्वीपोंमें बोली जाती है। इसे **तोंगी** आदि कई अन्य नामोंसे भी पुकारा जाता है।

तोंगी--(दे०) **तोंगातबु**।

तोआरिपि (toaripi)--पापुअन परिवारकी न्यूगिनीमें प्रयुक्त एक भाषा।

तोउंग म्रू (toung-mru)--**म्रू** (दे०)का एक अन्य नाम।

तोखारी (tokharian)--भारोपीय परिवारके केंतुम वर्गकी एक विलुप्त भाषा। अंग्रेज, फ्रेंच, रूसी तथा जर्मन विद्वानोंने बीसवीं सदीके आरम्भमें पूर्वीय चीनी, तुर्किस्तानके तुरफ़ान प्रदेशमें कुछ ऐसे ग्रंथ तथा पत्र प्राप्त किये जो भारतीय लिपि (ब्राह्मी तथा खरोष्ठी)में थे। प्रो० सीग (sieg)ने इनका अध्ययन किया, जिसके फलस्वरूप यह भाषा भारोपीय परिवारकी सिद्ध हुई। इसके बोलनेवाले 'तोखार' लोग थे; अत: इस भाषाको तोखारी कहा गया। समीपताके कारण इसपर यूराल-अल्ताई परिवारका बहुत प्रभाव पड़ा है। ग्रियर्सनके अनुसार महाभारत एवं ग्रीक पुस्तकोंमें क्रमसे 'तुषारा:' तथा तोखारोई जातिका नाम है। सम्भव है यह उन्हीं लोगोंकी भाषा हो। ये लोग दूसरी सदी ई० पू०में मध्य-एशियाके शासक थे। सातवीं सदीके लगभग यह भाषा लुप्त हो गयी। तोखारी भाषामें स्वरोंकी जटिलता कम है। सन्धि-नियम कुछ संस्कृत जैसे हैं। संख्याओंके नाम एवं सर्वनाम भी भारोपीय परिवारसे साम्य रखते हैं। विभक्तियाँ भी उसी रूपमें आठ हैं। शब्द-भण्डार भी संस्कृतके समीप है।

संस्कृत	तोखारी
पितृ	पाचर्
मातृ	माचर्
वीर	विर्

सौके लिए तोखारी शब्द 'कन्ध' है, इसी कारण यह केन्तुम वर्गकी भाषा मानी गयी है। तोखारी भाषामें जो सामग्री मिली है उसके अध्ययन करनेसे यह स्पष्ट हो जाता है कि इनमें दो बोलियोंका प्रयोग हुआ है। एकको विद्वानोंने 'अ' तथा दूसरीको 'ब' कहा है। 'अ' को **पूर्वी तोखारी, तुर्फारियन, करशरियन, अगनीयन** भी कहा गया है, तथा 'ब' को **पश्चिमी तोखारी** या **कूचिअन**।

तोझुमु (tozhumu)—**यचुमी** (दे०)का एक अन्य नाम।

तोतिग (totiga)—**मराठी** (दे०)का एक नाम। वस्तुतः यह दक्षिणकी एक 'मराठी' भाषी ब्राह्मण जातिका नाम है।

तोदा (toda)—**टोडा** (दे०)का एक अन्य उच्चारण।

तोदुव (toduva)—**तोद** (दे०)का एक अन्य नाम।

तोरावाटी—**जयपुरी** (दे०)का एक स्थानीय रूप जो जयपुरके उत्तरके 'तोरावाटी' नामके पहाड़ी भागमें बोला जाता है। इसपर 'शेखावाटी' तथा 'मेवाती'का कुछ प्रभाव है। 'तोरावाटी' बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ३,४२,५५४ थी।

तोरू (toru)—**तौंग्यो** (दे०)का एक अन्य नाम।

तोरोमोना (toromona)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा।

तोर्वालाक (torwalak)—**तोर्वाली** (दे०) का एक अन्य नाम।

तोर्वाली (torwali)—**कोहिस्तानी** (दे०)की, स्वात तथा पंजकोरा कोहिस्तानमें प्रयुक्त, एक बोली।

तोवँरगढ़ी—(दे०) **तोवरगढ़ी**।

तोवरगढ़ी (towargarhi)—**भदौरी** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

तोस्क (tosk)—अल्वानियन भाषाकी, दक्षिणी अल्वानियामें प्रयुक्त एक प्रमुख बोली।

तौंगबू (taungbu)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, उत्तरी अराकानमें २४० व्यक्तियों द्वारा बोली जानेवाली, एक अनिश्चित वर्गकी भाषा।

तौंग-सिन (taung-sin)—माग्वा जिले (बर्मा) में प्रयुक्त कई **चिन** (दे०) भाषाओंके लिए व्यवहृत एक नाम।

तौंग्थ (taungtha)—**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके, कुकी-चिन वर्गकी, पकोक्कू जिले (बर्मा) में प्रयुक्त, एक दक्षिणी चिन भाषा। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ९,७१३ थी।

तौंग्थू (toungthu)—**करेन** (दे०)की, थाटन, अम्हर्स्ट, करेन्नी, दक्षिणी शान स्टेट तथा उसके आसपास (बर्मा) में प्रयुक्त, एक बोली। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २,१०,५३५ थी।

तौंग्यो (taungyo)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, **बर्मी** (दे०)की, दक्षिणी शान स्टेट तथा म्येईकतिलामें प्रयुक्त (लगभग २६,८८४ व्यक्तियों द्वारा) एक बोली।

तौक्ते (taukte)—**सियिन** (दे०)का एक 'मणिपुरी' नाम।

तौते (toute)—**सियिन** (दे०)का एक मणिपुरी नाम।

त्य—**प्रत्यय** (दे०)का एक प्राचीन नाम।

त्र्याक्षरिक—(trisyllabic)—तीन अक्षरों (syllables.)का शब्द।

त्रिपद—तीन पदों या शब्दोंवाला।

त्रिमात्र—तीन मात्राओंवाला। इसीको **प्लुत** (दे०) कहते हैं।

त्रिमाली (trimali)—१९२१की बंबई जनगणनाके अनुसार, कोलाबा, शोलापुर, खानदेश, अहमदनगर तथा उसके आस-पास प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

त्रिरुक्त—तीन बार प्रयुक्त।

त्रिवचन (trial number)—शब्दका वह रूप जिससे तीनका बोध हो। (दे०) **वचन**। त्रिवचनका प्रयोग कुछ अफ्रीकी भाषाओंमें मिलता है।

त्रिवर्ण (trigraph)—तीन स्वर-चिह्नोंका मिला रूप जो एक स्वर-ध्वनिको व्यक्त करे।

त्रिवर्ण धातु (triliteral root)—तीन ध्वनियों या वर्णोंकी धातु, जो सामी भाषाओं (क-त-ब, श-र-ब आदि) की विशेषता है। जो धातु तीन व्यंजनकी हो उसे **त्रिव्यंजन धातु** कहते हैं।

त्रिव्यंजन धातु—जिन धातुओंमें तीन व्यंजन हों। अरबी आदि सामी भाषाओंमें प्रायः ऐसी धातुएँ मिलती हैं।

त्रिसंयुक्त स्वर (triphthong)—तीन स्वरोंके मिलनेसे बना संयुक्त स्वर। (अंग्रेज़ीमें इसे proper triphthong भी कहते हैं। improper triphthong उसे कहते हैं जिसमें ३ स्वर तो हों किंतु तीनों मिलकर एक संयुक्त स्वर न बने। इन्हें वस्तुतः त्रिसंयुक्त स्वर न कहकर **त्रिवर्ण** (trigraph) कहना चाहिये। अंग्रेज़ी fire का उच्चारण faeer माना जाता है। उच्चारणकी दृष्टिसे यहाँ तीन स्वर हैं, किंतु ये मिलकर एक नहीं हैं, अतः उच्चरित रूपमें लिखनेपर यह **त्रिवर्ण** तो कहलायेगा किंतु त्रिसंयुक्त स्वर नहीं।

त्रिहोली (triholi)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **बंगाली** (दे०)का, अहमदनगरमें प्रयुक्त एक रूप।

त्रुटिपूर्ण लेखन (defective writing)—लेखनकी वह पद्धति, जिसमें केवल व्यंजनोंको लिखते हैं। इसमें, प्रसंगके आधारपर, पढ़ते समय पाठकको अनुमानसे अपेक्षित स्वरोंकी कल्पना कर लेनी पड़ती है। इसी कमीके कारण ऐसे लेखनको त्रुटिपूर्ण कहा गया है। अरबी, फ़ारसी, उर्दू आदिमें ज़ेर, ज़बर, पेश जब छोड़कर लिखा जाता है, तो उसकी लगभग यही स्थिति होती है। हिब्रू लेखन-पद्धति भी इसी प्रकारकी थी। इसे **व्यंजनात्मक लेखन** (consonantal writing) भी कहते हैं।

त्र्यक्षर—तीन अक्षरों (syll-ables) वाला।

त्लंत्लंग (tlantlang)—**लई** (दे०)की, चिन पहाड़ियों (बर्मा) में प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४,९२५ थी। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसका नाम 'वलंग-वलंग' है।

त्लिंगित (tlingit)—उत्तरी अमेरिकाके **ना देने** परिवारका एक उप-परिवार।

त्लोंगसइ (tlongsai)—**लखेर** (दे०)का एक अन्य नाम।

त्वि (twi)—गोल्डकोस्ट कॉलोनीमें तथा आसपास बोली जानेवाली एक अफ्रीकी भाषा। यह सूडान वर्गकी है। इसके अमिना, असन्ते, अशन्ति, ओदशि, च्वी आदि अन्य भी कई नाम मिलते हैं। बोलनेवालोंकी संख्या एक लाखके लगभग है।

त्वी-ली-चंग (twi-li-chang)—**चिन्बोक** (दे०)की, यमेथिन (बर्मा) में प्रयुक्त एक बोली। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ७,९४६ थी।

त्वी-शीप (twi-sheep)—**चिन्बोन**की, पकोक्कू (बर्मा) में प्रयुक्त, एक बोली। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ९८६ थी।

त्संघो (tsangho)—**अंगामी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक दूसरा नाम।

त्सांग्पा (tsangpa)—**चांग्लो** (दे०)का एक और नाम।

त्सांग्ल (tsangla)—**चांग्लो** (दे०)का एक अन्य नाम।

त्सिन-पो (tsin-po)—**सिंगफो** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

त्सिम्शिअन वर्ग (tsimshian group) उत्तरी अमेरिकाके **पेनुटिअन** (दे०) भाषा-परिवारका एक वर्ग । इस वर्गमें तीन भाषाएँ हैं : **त्सिम्शिअन, निस्का** तथा **गयिट्कशन** ।

त्सी (tsi)—**स्ज़ो** (दे०)का एक अन्य नाम ।

त्सुंगुमी (tsungumi)—**अंगामी** (दे०)-का एक अन्य नाम ।

त्सैकोनिअन (tsaconian)—प्राचीन डोरिक बोली लैकोनिअनसे विकसित एक आधुनिक ग्रीक बोली जो नौप्लियाकी खाड़ीके पास बोली जाती है ।

त्सोंत्सू (tsontsu)—**ल्होता** (दे०)का एक अन्य नाम ।

त्सोघामी (tsoghami)—**अंगामी** (दे०)-के लिए प्रयुक्त एक और नाम ।

थ

थंग्स (thangsa)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, **नुंग** (दे०)का, पुताओ ज़िलेमें प्रयुक्त तथा लगभग १,५०० व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत, एक रूप ।

थकार—थ्के लिए प्रयुक्त नाम । (दे०) **कार** ।

थत (that)—**थेत** (दे०)का एक अन्य नाम ।

थमिदी (thamidi)—**कोरव** (दे०)के लिए कुर्गमें प्रयुक्त एक नाम ।

थ-मो (tha-mo)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, **व** (दे०)का, पूर्वी मंगलुम, उत्तरी शान स्टेटमें प्रयुक्त तथा लगभग ९,३१८ व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत, एक रूप ।

थरेली (tharele)—**सिंधी** (दे०)की, राजस्थान और सिंधकी प्राचीन सीमापर प्रयुक्त एक बोली । यह 'सिंधी' तथा 'मारवाड़ी'-का एक मिश्रित रूप है ।

थरोची (tharochi)—तरोच या थरोचमें प्रयुक्त **कोर्नी** (दे०)का नाम विशेष ।

थलिंग्च्डिन्ने (thlingchdinne)—**टिन्नेह** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा । इसको **डॉग-रिब्स** भी कहते हैं ।

थली—'पश्चिमी **मारवाड़ी**'का एक स्थानीय रूप जो जोधपुरके उत्तर-पश्चिममें मारवाड़, जैसलमेर तथा सिंधु आदि 'थल' नामक प्रदेशमें बोला जाता है । 'थली' समीपवर्ती भाषा 'सिंधी'से प्रभावित है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४,८०,९०० थी । (दे०) **मारवाड़ी** ।

थल्ली (thalli)—**साँसी** (दे०) और **बाओरी** (दे०)के लिए प्रयुक्त नाम ।

थळोच्ड़ी (thalochri)—**थळी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

थाई—(दे०) **ताई** ।

थाई या (thai ya) चीनी परिवारकी एक **लाओ** (दे०) बोली जो दक्षिणी-पश्चिमी चीनमें बोली जाती है ।

थाई युअन (thai yuan)—चीनी परिवारकी एक **लाओ** (दे०) बोली जो उत्तरी थाइलैंडमें बोली जाती है । इसे **पश्चिमी लाओटिअन** भी कहते हैं ।

थाई लाओ—पूर्वी थाइलैंडमें तथा आसपास प्रयुक्त, चीनी परिवारकी एक **लाओ** (दे०) बोली । इसे **पूर्वी लाओटिन** भी कहते हैं ।

थाई लू (thai lu)—पूर्वी बर्मा तथा पश्चिमी इंडोचीन आदिमें लगभग ५ लाख लोगों द्वारा प्रयुक्त एक चीनी परिवारकी **लाओ** (दे०) बोली ।

थाओते (thaote)—**सियिन** (दे०)का एक अन्य नाम ।

थाक्सिआ (thaksya)—**चीनी परिवार**

(दे०)की एक भाषा, जो नेपालमें बोली जाती है। ग्रियर्सन इसे तिब्बती-बर्मीकी तिब्बती-हिमालयी शाखाकी एक पूर्वीय सार्वनामिक हिमालयी भाषा मानते हैं। कुछ लोगोंके अनुसार इसका इस परिवारमें ठीक स्थान क्या है, सनिश्चय नहीं कहा जा सकता।

थाडो (thado)–**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके कूकी-चिन वर्गकी, असममें, मणिपुर, नागा पहाड़ियों, काचार, सिलहट तथा बर्मा (चिन पहाड़ियों तथा ऊपरी छिन्दविन)-में प्रयुक्त, एक उत्तरी चिन भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३३,२५८ थी।

थाडो-पअओ (thado-Pao)––**थाडो** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

थादो––(दे०) **थाडो**।

थामी (thami)––तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, तिब्बती-हिमालयी शाखाकी, **चीनी परिवार** (दे०)की नेपाल, सिक्कम, दार्जिलिंग तथा उसके आसपास प्रयुक्त, एक 'पूर्वीय सार्वनामिक हिमालयी भाषा'। १९२१की जनगणनामें इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४२३ थी।

थार––कबीलाई बोलियोंके लिए प्रयुक्त ए नाम। पहाड़ी, संथाली तथा गुजराती आदिके कुछ रूपोंके नाम इससे बने शब्दोंके साथ मिलते हैं।

थारू (tharu)––(१) नेपालकी तराईमें थारू नामक आदिवासियों द्वारा बोली जानेवाली एक बोली। यह एक आर्य भाषा है। (२) ब्रजभाषाकी, नैनीतालमें प्रयुक्त बोली **भुक्सा** (दे०)का एक रूप। (३) **अवधी** (दे०)का, खीरी (उत्तर-प्रदेश)में प्रयुक्त, एक रूप। इसे **थारू अवधी** भी कहते हैं। (४) चंपारन तथा उत्तरी उत्तर-प्रदेशमें प्रयुक्त, **थारू भोजपुरी** (दे०)का एक नाम। (५) उत्तरी पूर्णियामें प्रयुक्त **मैथिली** (दे०)का एक नाम। इसे **थारू मैथिली** भी कहा जाता है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २,३०० थी।

थारू भोजपुरी––**भोजपुरी** (दे०)का थारू नामक आदिवासी जातिमें प्रचलित एक रूप जो नेपालकी सीमाके आसपास, पूर्वमें जलपाईगुड़ीसे लेकर पश्चिममें कुमायूँ भावर तक बोला जाता है। 'थारू भोजपुरी' बोलनेवालोंके मुख्य केन्द्र चंपारन, गोरखपुर, बस्ती, गोंडा तथा बहराइच हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३९,७०० थी।

थाळी (thali) **लहँदा** (दे०)की, नमककी पहाड़ियों (पश्चिमी पंजाब)के दक्षिणमें थाळ नामक स्थानमें प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ७,५९,२१०के लगभग थी।

थितौक (thitauk)––बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, **तौंगथू** (दे०) की, दक्षिणी शान स्टेटोंमें प्रयुक्त, एक उप-बोली।

थी––**लृङ् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

थुकुमी (thukumi)––**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके नागा वर्गकी, असमकी उत्तरी-पूर्वी सीमापर प्रयुक्त, एक केन्द्रीय नागा भाषा।

थुलुंग (thulung)––**चीनी परिवार**की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, तिब्बती-हिमालयी शाखाकी, नेपालमें प्रयुक्त, एक 'पूर्वीय सार्वनामिक हिमालयी' भाषा।

थेइन्बव (theinbaw)––**चिंगपव** (दे०)-का एक 'बर्मी' नाम।

थेत (thet)––१९२१ की जनगणनाके अनुसार, **चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके, कूकी-चिन वर्गकी, अक्याब (बर्मा)में प्रयुक्त, एक दक्षिणी चिन भाषा। जनगणनाके अनुसार इसके

बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ६१४ थी। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणमें इसे 'सक' (लूई) वर्गकी एक भाषा माना गया है ।

थेत्त (thetta)--**लइ** (दे०) का एक रूप।

थेबोर स्कैद्द (thebor skadd)--**कनौरी** (दे०) का एक अन्य नाम ।

थेय (theya)--**मलयालम** (दे०) का कुर्गमें प्रयुक्त एक नाम ।

थोंगा (thonga)--**रोंगा** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

थोचू (thochu)--**भोटिआ** (तिब्बतकी)-का, पूर्वीय तिब्बतमें प्रयुक्त, एक रूप । (दे०) **भोटिआ (तिब्बतकी)** ।

थ्रासिअन (thracian)--पश्चिमी बलकानमें प्राचीनकालमें प्रयुक्त एक विलुप्त भाषा । यह भारोपीय परिवारके **थ्रेको-फ्रीजिअन** (दे०) वर्गकी है ।

थ्रेको-फ्रीजिअन--भारोपीय परिवारकी **थ्रासिअन** (दे०) और **फ्रीजिअन** (दे०) इन दो विलुप्त भाषाओंके वर्गका नाम ।

द

दंत--दाँत, कुछ ध्वनियोंका उच्चारण इनकी सहायतासे होता है । (दे०) **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान** ।

दंतमूल--दाँतोंकी जड़ । कुछ ध्वनियोंका उच्चारण जीभकी नोकको दाँतकी जड़से स्पर्श कराकर किया जाता है ।

दंतमूलीय--ऊपरके दाँतोंकी जड़से उच्चरित ऋक् प्रातिशाख्यमें तवर्ग तथा र् को दंतमूलीय कहा गया है ।

दंतोष्ठ्य (labio-dental)--**उच्चारण-स्थान** (दे०) के आधारपर किया गया व्यंजन ध्वनियोंका एक भेद । 'दंतोष्ठ्य' उन ध्वनियोंको कहते हैं, जिनका उच्चारण ऊपरके दाँत और नीचेके ओष्ठकी सहायतासे होता है । जैसे व, फ ।

दंत्य (dental)--**उच्चारण-स्थान** (दे०) के आधारपर किया गया व्यंजन ध्वनियोंका एक भेद । **दाँत** (दे०) की सहायतासे उच्चरित ध्वनियाँ 'दंत्य' कहलाती हैं । इसमें जिह्वाग्र या जीभकी नोकसे सहायता ली जाती है । हिन्दीके त, थ, द, ध, दंत्य हैं । संस्कृतके ऌ, तवर्ग, ल, स, दंत्य थे। सूक्ष्मतासे विचार करनेपर 'दंत्य'के तीन भेद किये जा सकते हैं : अग्र, मध्य तथा मूल । इस प्रकार **अग्रदंत्य**, **मध्यदंत्य**, और **मूलदंत्य** ध्वनियाँ हो सकती हैं । अग्रदंतको **पूर्वदंत्य** भी कहते हैं । ऊपर-नीचेके दाँतोंके बीचसे उच्चरित ध्वनियाँ **अंतर्दन्त्य** (दे०) कहलाती हैं ।

द-अंग (da-ang)--बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **पलौंग** (दे०) का एक रूप ।

द-ऐंग (da-eng)--बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **पलौंग** (दे०) का एक रूप ।

दकनी--**दक्खिनी** (दे०) का एक अन्य नाम ।

दकार--द् , के लिए प्रयुक्त नाम (दे०) **कार** ।

दकिन-सा-रओ (dakin-sa-rao)--**कुकी** (दे०) के लिए, असमके कुछ भागोंमें प्रयुक्त, एक नाम ।

दक्खनी--(दे०) **दक्खिनी** ।

दक्खिनी--(इसके अन्य नाम **हिन्दी**, **हिन्दवी**, **दकनी**, **दखनी**, **दक्खनी**, **देहलवी**, **गूजरी** [शाह बुरहाबुद्दीन--'थेह सब गूजरी किया जबान'], **हिन्दुस्तानी**, **जबाने हिन्दुस्तान**, **दक्खिनी हिन्दी**, **दक्खिनी उर्दू**, **मुसलमानी**, **दक्खिनी हिन्दुस्तानी** आदि हैं।) दक्खिनी मूलत: हिन्दीका ही एक रूप है । इसका मूल आधार दिल्लीके आसपासकी १४वीं-१५वीं सदीकी लोकभाषा है । मुसलमानोंने भारतमें आनेपर दिल्ली भाषाको अपनाया था । मसऊद, इब्नसाद, खुसरो तथा फ़रीदुद्दीन शकरगंजी आदिने अपनी हिन्दी कविताएँ इसीमें लिखी थीं । १५-१६वीं सदीमें

फ़ौज, फ़क़ीरों तथा दरवेशोंके साथ यह भाषा दक्षिण भारतमें पहुँची और वहाँ प्रमुखतः मुसलमानोंमें, तथा कुछ हिंदुओंमें जो उत्तर भारतके थे, प्रचलित हो गयी। इसके क्षेत्र प्रमुखतः दक्षिण भारत (बीजापुर, गोलकुंडा, अहमदनगर आदि) बरार, बंबई तथा मध्य प्रदेश आदि हैं। ग्रियर्सन इसे हिन्दुस्तानीका बिगड़ा रूप न मानकर उत्तर भारतकी साहित्यिक हिन्दुस्तानी (लिंग्विस्टिक सर्वे खंड ९ भाग१)को ही इसका बिगड़ा रूप मानते हैं। डॉ० चटर्जी इसे हिन्दुस्थानी नहीं तो उसकी सहोदरा भाषा अवश्य मानते हैं। भाषा वैज्ञानिक दृष्टिसे दक्खिनीको मैं समझता हूँ कि मूलतः प्राचीन खड़ीबोलीका रूप मानना चाहिये, जिसमें पंजाबी, हरियानी, ब्रज तथा कुछ अवधीके रूप भी हैं। दक्षिणमें जानेके बाद इसपर कुछ मराठीका भी प्रभाव पड़ा है। यह ध्यातव्य है कि उत्तरी भारतकी पंजाबी, हरियानी, ब्रज, अवधी आदि भाषाओंके रूपोंके मिलनेका यह अर्थ कदापि नहीं है कि इन सबका इसपर प्रभाव है। वस्तु-स्थिति यह है कि उस कालकी भाषा कुछ इस प्रकारकी मिश्रित थी ही। कबीरने भी इसी मिश्रित भाषाका प्रयोग किया है। ये बोलियाँ बादमें स्वतंत्र होकर अपने पैरोंपर खड़ी हुईं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार दक्खिनी बोलनेवालोंकी संख्या लगभग साढ़े छत्तीस लाख थी। आज भी उस क्षेत्रमें दक्खिनी (उर्दू नामसे) बोली जाती है, यद्यपि भाषा कई दृष्टियोंसे बदल गयी है। परिवर्तनकी दृष्टिसे तीन बातें उल्लेखनीय हैं: (१) उर्दू भाषाका उसपर पर्याप्त प्रभाव पड़ गया है; (२) कुछ पुराने रूप विकसित होकर, कुछके कुछ हो गये हैं; (३) शब्द-समूहमें क्षेत्रानुसार तमिल, तेलुगु, कन्नड़ आदि भाषाओंका प्रभाव पड़ गया है। १५वींसे १८वीं सदीतक दक्खिनी बहमनी वंशके तथा अन्य राजाओंका राजाश्रय प्राप्त रहा है, और इसमें पर्याप्त साहित्य-रचना हुई है। इसमें गद्य-साहित्य भी पर्याप्त प्राचीन मिलता है। खड़ीबोली गद्यका प्राचीन प्रामाणिक ग्रंथ दक्खिनीमें ही मिलता है। इस गद्य ग्रंथका नाम 'मिराजुल आशिकीन' है, जिसके लेखक ख़्वाज़ा बंदानवाज (१३१८-१४३२ ई०) हैं। दक्खिनीके साहित्यकारोंमें अब्दुल्ला, वजही, निज़ामी, गवासी, गुलामअली तथा बेलूरी आदि प्रमुख हैं। उर्दू साहित्यका आरंभ भी वस्तुतः दक्खिनीसे ही हुआ है। उर्दूके प्रथम कवि वली (रचना काल १७०० ई०के लगभग) ही दक्खिनीके अंतिम कवि वली औरंगाबादी हैं। इस प्रकार दक्खिनीको एक प्रकारसे उर्दूकी जननी कह सकते हैं, यद्यपि भाषा और भाव दोनों ही दृष्टियोंसे दोनोंमें आकाश-पातालका अंतर है। दक्खिनीकी केवल लिपि ही फ़ारसी (या प्रचलित शब्दावलीमें उर्दू) है, अन्यथा इसकी भाषामें सामान्य हिन्दीकी भाँति ही भारतीय परंपराके शब्द हैं। अरबी-फ़ारसी शब्द उर्दूकी तुलनामें बहुत कम हैं। इसका क्षेत्र दक्षिणमें होनेके कारण ही इसका नाम 'दक्खिनी' है। आज हिन्दीवाले, हिन्दी या दक्खिनी हिन्दी कहकर इसे अपनी भाषा, और इसके साहित्यको अपने साहित्यका अंग मान रहे हैं, और उर्दूवाले **क़दीम उर्दू** या **दक्खिनी उर्दू** कहकर अपना अंग मान रहे हैं। वस्तुतः न केवल दक्खिनी भाषा, अपितु उसका साहित्य भी, हिन्दीके निकट है। कुछ अपवादोंको छोड़कर, उर्दूके विरुद्ध, दक्खिनी भाषा और साहित्यकी आत्मा हिन्दू परंपराकी तथा पूर्णतया भारतीय है। यों उर्दू भी हिन्दीकी एक शैली ही है, बहुत सशक्त और सजीव शैली। ऐसी स्थितिमें 'दक्खिनी हिन्दी' हिन्दी ही है। किसी भी दक्खिनी गद्य लेखक या कविने उसके लिए उर्दू शब्दका प्रयोग नहीं किया है, अतः किसी भी रूपमें उर्दू नामका प्रयोग इसके लिए बहुत उचित नहीं कहा जा सकता।

'दक्खिनी'के लिए प्राचीन नाम हिन्दी

(यों देखत हिन्दी बोल––शाही मीराजी, १५वीं सदी अंतिम चरण) और 'हिन्दवी' 'यों मैं हिन्दवी कर आसान' (शेख़ अशरफ़ (१५०३) 'नौसर हार' में) मिलते हैं, जिसका आशय यह है कि उत्तर भारतसे भाषाके साथ ये नाम भी गये थे। बादमें संभवतः १७वीं सदीके अंतिम चरणमें दक्खिनी नाम प्रचलित हुआ। इसका प्रथम प्रामाणिक प्रयोग कदाचित् 'वजही'का है। वे अपनी कुतुब मुश्तरी (१६३८ ई०)में लिखते हैं––'दखिनमें जो दखिनी मीठी बातका'। कुछ उर्दू लेखकोंने लिखा है कि दक्खिनीको बादमें 'रेख़्ता' भी कहने लगे थे। वस्तुतः बात ऐसी नहीं है। दक्खिनीके अंतिम कालके कवियों (जैसे वली आदि) ने 'रेख़्ता'का काव्यकी एक विशेष शैलीके लिए प्रयोग किया है। यह दक्खिनीका नाम नहीं है। (दे०) 'हिन्दी', 'हिन्दवी', 'हिन्दुस्तानी' तथा 'उर्दू'।

दक्खनी––**दक्खिनी** (दे०)का एक नाम।

दक्खिनी उर्दू––**दक्खिनी** (दे०) का एक अन्य नाम।

दक्खिनी मराठी––परिनिष्ठित **मराठी** (दे०)-का एक अन्य नाम।

दक्खिनी हिन्दी––**दक्खिनी** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

दक्खिनी हिन्दुस्तानी––**दक्खिनी** (दे०)का एक अन्य नाम।

दक्खिनी हिन्दोस्तानी––**दक्खिनी** (दे०)का एक अन्य नाम।

दक्षिणलिपि––बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

दक्षिणी अथपस्कन (southern athapascan)––**अथपस्कन** (दे०) वर्गका एक उपवर्ग। इस उपवर्गमें **लिपन**, **नवाहो** (दे०) **अपचे** आदि भाषाएँ हैं।

दक्षिणी अपभ्रंश––डॉ० याकोबीके अनुसार **अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

दक्षिणी अफ्रीकी डच––**ऐफ्रिकान्स** (दे०) भाषाके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

दक्षिणी अमरीकी वर्ग––**अमरीकी भाषाओं** (दे०)का दक्षिणी अमेरिकामें स्थित भाषा-वर्ग। यह वर्ग भौगोलिक है इसमें निम्नलिखित ७७ भाषा-परिवार हैं––(१) अलकलुफ, (२) अलेन्टिअक, (३) अमुएशा, (४) अराउकन, (५) अरवक, (६) अरड, (७) अटकम, (८) अटलन, (९) औअके, (१०) अयमर, (११) बोरोरो-परिवार, (१२) चपकुरा, (१३) चरूआ, (१४) चिव्चा, (१५) चिकिटो, (१६) चिरिनो, (१७) चोको, (१८) चोलोना, (१९) चोन, (२०) डिअगिट, (२१) एनिमग, (२२) ऐस्मेरल्डा, (२३) गुअहिबो, (२४) गुअरउनो, (२५) गुअटो, (२६) गुअयकुरु, (२७) हेट, (२८) हुअरी, (२९) इटोनम, (३०) कहुअपन, (३१) कलिअना, (३२) कनरी, (३३) कनिचन, (३४) करज, (३५) करिब, (३६) करिरि, (३७) कटुकिन, (१) (३८) कयुवव (३९) किचुअ, (४०) कोचे, (४१) कोफने, (४२) लेको, (४३) माकू, (४४) मस्कोइ, (४५) मशुबी, (४६) मटको–मटगुअयो, (४७) मोबिम, (४८) मोसेटेन, (४९) मुर, (५०) नम्बिकुअरा, (५१) ओटोमक, (५२) पनो, (५३) पुएलचे, (५४) पुइनावे, (५५) पुरुहा, (५६) सलिब, (५७) समुकु, (५८) सनविरोन, (५९) सेक, (६०) शवन्टे, (६१) शिरिअना, (६२) टिमोटे, (६३) ट्रूमइ, (६४) टुकनो, (६५) टुपी-गुअरनी, (६६) टुयुनेइरी (६७) विलेल–चुलुपी, (६८) विटोटो, (६९) क्सिवरो, (७०) क्सिरक्सरा, (७१) यहगन, (७२) यरुरो, (७३) युन्का, (७४) यूरकरे, (७५) यूरी, (७६) ज़मपरो, तथा (७७) ज़्रे। इनको कोशमें यथास्थान देखा जा सकता है।

दक्षिणी अरबी––एक वर्गीकरणके अनुसार **सेमिटिक परिवार** (दे०)की पश्चिमी शाखाके दक्षिणी वर्गकी एक भाषा जो अरबके दक्षिणी किनारे तथा सकोत्रा द्वीपमें

कई बोलियोंके रूपमें बोली जाती है।

दक्षिणी कड्डो (southern kaddo)—**कड्डो** (दे०) भाषा परिवारका एक उप-वर्ग। इस उप-वर्गमें कड्डो, विचिट तथा किचाई भाषाएँ हैं।

दक्षिणी कैलिफोर्निअन (southern californian)—**शोशोन** (दे०) वर्गका एक उप-वर्ग। इस उपवर्गमें **सेरानो, लुइसेनो, कहुइल्ला** तथा **गब्रीएलेनो** भाषाएँ हैं।

दक्षिणी चिन (southern chin)—**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके कुकी-चिन वर्गका, एक उप-वर्ग। इस उप-वर्गकी अधिकतर भाषाएँ बर्मामें तथा कुछ असममें बोली जाती हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,१०,२२५ थी।

दक्षिणी ज़े (southern ze)—दक्षिणी अमेरिकाके **ज़े** (दे०)परिवारका दक्षिणी वर्ग। इस वर्गकी दो शाखाएँ हैं।(१) पूर्वी, (२) पश्चिमी। पूर्वी शाखामें कैङ्गांग भाषा है तथा पश्चिमीमें इंगैन एवं ग्वायन।

दक्षिणी नम्संग (southern namsang)—**अंगवांकू** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

दक्षिणी-पश्चिमी पश्तो (south-western pashto)—**पश्तो** (दे०)की अफगानिस्तानके 'पख़्तो' भाषी भागके दक्षिणी-पश्चिमी भागमें प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ६,७६,४०२ थी।

दक्षिणी पूर्वीय राजस्थानी—(दे०) **राजस्थानी**।

दक्षिणी भोजपुरी—**भोजपुरी** (दे०)का एक रूप जो शाहाबाद, पालामऊ, सारन, बलिया, पूर्वी देवरिया तथा पूर्वी गाजीपुरमें प्रयुक्त होता है। 'भोजपुरी'का यह परिनिष्ठित रूप है। यह अपने शुद्धतम रूपमें शाहाबाद ज़िलेके भोजपुरके आसपास बोला जाता है। 'भोजपुरी'का यह रूप अन्योंकी अपेक्षा अधिक श्रुति-मधुर है। इसके उल्लेख्य स्थानीय रूप **खारवारी** (दे०)तथा **छपरहिया** (दे०) हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४३,२४,२९३ थी।

दक्षिणी मारवाड़ी—(दे०) **मारवाड़ी**।

दक्षिणी मैथिली—**मैथिली** (दे०) का दक्षिणी दरभंगा तथा उसके आसपास मुंगेर एवं भागलपुरमें प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनने इसे 'दक्षिणी परिनिष्ठित मैथिली' कहा है। उनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २३,००,००० थी।

दक्षिणी समोयद—**समोयद** (दे०) भाषाकी एक बोली।

दक्षिणी सामी लिपि—**सामीलिपि** (दे०)की दक्षिणी शाखा जिसका मूल क्षेत्र अरब था। इथियोपिअन लिपि इसीसे विकसित हुई है।

दखिनी—साधारणतया दक्षिण भारतकी भाषाके लिए प्रयुक्त एक नाम। इसलिए (१) **दखिनी हिन्दोस्तानी**के लिए प्रयुक्त एक नाम। (२) **उड़िया**के लिए प्रयुक्त एक नाम। (३) **जयपुरी** (दे०) के लिए पंजाबमें प्रयुक्त एक नाम। (४) दक्षिणकी **मराठी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

दख़्नंदी (dakhnandi)—**दक्खिनी** (दे०) का एक अन्य नाम।

दढी (dadhi)—**नैपाली** (दे०)की, नेपालकी तराईमें बोली जानेवाली एक विकृत बोली।

दढ़ी (darhi)—**दढी** (दे०)का एक दूसरा नाम।

ददरी (dadari)—१८९१की जनगणनाके अनुसार **जयपुरी** (दे०) का एक रूप।

दनपुरिया—(दे०) **दानपुरिया**।

दनव (danaw)—बर्मामें दक्षिणी शानमें प्रयुक्त एक **मोन-ख्मेर** (दे०) भाषा।

दनू (danu)—**बर्मी** (दे०)की एक बोली। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, शान प्रांत तथा उसके आसपासके ज़िलोंमें इसके बोलनेवालोंकी संख्या ७६,०५७ के लगभग थी।

दप्सल (dapsal)—एक अवर्गीकृत भाषा। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार चिन पहा-

ड़ियोंपर इसके बोलने वालोंकी संख्या ७०० के लगभग थी ।

दफ्ला (dafla)—–**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, उत्तरी असम शाखाकी उत्तरी–पूर्वी असममें प्रयुक्त एक भाषा । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ९५९ के लगभग थी ।

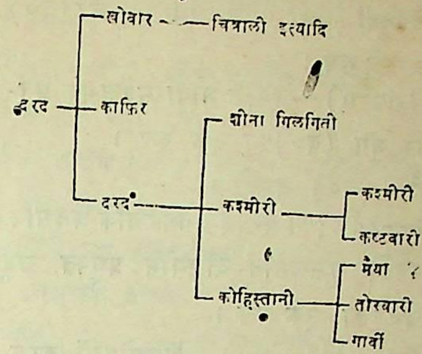
दमणी (damani)—–दमनमें प्रयुक्त **परभी** (दे०) बोलीका एक दूसरा नाम ।

दमी (dami)—–१८९१की जनगणनाके अनुसार मध्यप्रदेशमें प्रयुक्त **उड़िया** (दे०)का एक रूप। इसके निश्चित स्थानका अब पता नहीं है ।

दयक (dayak)—–**इंडोनेशियन** (दे०)परिवारकी बोर्नियोमें प्रयुक्त एक भाषा ।

दये (daye)—–बर्मामें प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०)की एक **ताई** भाषा । १९२१-की जनगणनाके अनुसार,दक्षिणी शान प्रान्तमें इसके बोलनेवालोंकी संख्या ७४६के लगभग थी ।

दरद—–भारोपीय परिवारकी सतम् शाखाकी **आर्य** (दे०) उपशाखाकी एक शाखा । **दरद** भाषाओंका क्षेत्र पामीर और पश्चिमोत्तर पंजाबके बीचमें है । कभी इनके बोलनेवाले भारतके अन्य भागोंमें भी अवश्य थे, क्योंकि मराठी, सिंधी, पंजाबी आदिपर इनका प्रभाव स्पष्ट है । गठनकी दृष्टिसे पश्तोकी भाँति ही दरद भाषाएँ भी ईरानी और भारतीयके बीचमें हैं, किंतु यदि पश्तो ईरानीकी ओर झुकी है तो दरद भारतीयकी ओर । प्राचीन कालमें संस्कृत विद्वान् दरद भाषाओंको भारतीय शाखाकी ही मानते थे और उन्हें **पैशाची प्राकृत**की संज्ञा दी गयी थी । 'दरद' शब्द संस्कृत है, जिसका अर्थ है 'पर्वत' । संस्कृत साहित्यमें कश्मीरके पासके देशके लिए भी 'दरद'का प्रयोग मिलता है । इसका **विभाजन** इस प्रकार किया जाता है :—



खोवार भाषाका क्षेत्र दर्दिस्तान एवं ईरानीके मध्यमें है । इसके अन्तर्गत कई बोलियाँ हैं, जिनमें **चित्राली** प्रमुख है । चित्रालीके पश्चिममें **काफ़िर** वर्गकी बोलियाँ बश्गली, वइअला, वसिवेरी, अशकुन्द, कलाशापशाई आदि हैं । इनमेंसे किसीमें भी साहित्य नहीं है । गिलगिटकी घाटीमें **शीना** या **शिणा** बोली जाती है । यह दरदकी प्रतिनिधि भाषा है। इसके अन्तर्गत कई बोलियाँ हैं, जिनमें **गिलगिटी** ही मुख्य है ।

कश्मीरकी भाषा **कश्मीरी** (दे०) है। इसे यहाँ 'दरद'के अन्तर्गत रखा गया है । गुणे आदि कुछ प्राचीन विद्वान् इसे भारतीयके अन्तर्गत मानते रहे हैं और पैशाच अपभ्रंशसे इसका विकास मानते रहे हैं । इस भाषापर संस्कृतका काफी प्रभाव पड़ा है । कदाचित् इसी कारण यह मान्यता रही है । अब ऐसा नहीं मानते । इसमें १४वीं सदीसे साहित्य मिलता है । इसके पूर्व यहाँ संस्कृतमें साहित्य-रचना होती थी । कश्मीरीकी परिनिष्ठित कश्मीरीके अतिरिक्त कई बोलियाँ हैं, जिनमें कष्टवारी बोली प्रमुख है । कुछ बोलियाँ पंजाबीसे मिलकर विचित्र हो गयी हैं । इस शाखाकी अन्तिम भाषा **कोहिस्तानी** है । कोहिस्तानी बोलनेवाले बहुत कम हैं । **मैया, तोरवारी, गार्वी** आदि इनकी प्रधान बोलियाँ हैं । दरदकी बोलियोंमें एक अश्कुंद भी उल्लेख्य हैं ।

दरदलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक ।

दरांग (darang)—**पलौंग** (दे०)की, बर्माके शान-प्रान्तमें प्रयुक्त एक बोली ।

दारिंगबद्दी (daringbaddi)—**कुई** (दे०) का एक रूप है।

दरू (daru)—वर्मके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **नुंग** (दे०)का एक रूप ।

दर्ग्वा—(दे०) **दार्ग्वा** ।

दर्जी—१८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार, बम्बईके मुसलमान दर्जियोंमें प्रयुक्त, **उर्दू** (दे०)का, एक रूप ।

दर्मिया (darmiya)—अलमोड़ामें दरमपट्‌टीमें प्रयुक्त, **चीनी परिवार** (दे०)के तिब्बती-वर्मी उप-परिवारकी तिब्बती हिमालयी शाखाकी, एक पश्चिमी सार्वनामिक हिमालयी भाषा । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,७६१के लगभग थी ।

दलाल—(१) दलाल नामक बंजारा जातिकी भाषा। (२) भारतके प्रायः सभी नगरोंमें, हर क्षेत्रके दलालों (जैसे-सोना-चाँदी, कपड़ा आदि)की अपनी भाषा होती है, जिसमें कुछ गुप्त शब्दोंका प्रयोग होता है। इसे 'दलाली' भाषा भी कहते हैं ।

दलेंग(daleng)—**मोन** (दे०)का एक रूप।

दलमेशन (dalmatian)—एक **रो मोस भाषा**(दे०)जो अब विलुप्त हो चुकी है। यह एड्रिआटिक सागरके किनारे दलमेशन नामक जातिके लोगों द्वारा बोली जाती थी। इसकी दो मुख्य बोलियाँ **वेगलियन** (veglian) तथा **रागुसन** (ragusan) थीं। १८९८में पहली बोली समाप्त हुई, दूसरी १५वीं सदीमें समाप्त हुई ।

दवांसा (dawansa)—**अंगामी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

दवे (dawe)—**तवोयन**(दे०)का एक दूसरा नाम ।

दशादर्शी विशेषण—(दे०) **विशेषण**

दशाबोधक विशेषण—(दे०) **विशेषण** ।

दशावाचक विशेषण—(दे०) **विशेषण** ।

दशासूचक विशेषण—(दे०) **विशेषण** ।

दशोत्तरपदसंधि लिखित लिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित-विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक ।

दसोलया—**गढ़वाली** (दे०)की, गढ़वालके उत्तरमें बद्रीनाथके आसपास प्रयुक्त एक उपबोली । इसे **दसोल्या** भी कहते हैं । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १७,०२२के लगभग थी ।

दसोल्या—(दे०) **दसोलया** ।

दसौल्या (dasaulya)—**दसोलया** (दे०) का एक अन्य नाम ।

दस्गया (dasgaya)—गारो पहाड़ियोंमें प्रयुक्त **कोच**(दे०)की एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,१००के लगभग थी ।

दही (dahi)—**दढी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

दां-जोंग-का (da-njong-ka)—**भोटिआ** (सिक्कमकी)का एक अन्य नाम । (दे०) **भोटिआ (सिक्कमकी)** ।

दाँत (teeth)—मुखका एक अस्थिमय अंग। इनका प्रयोग ध्वनियोंके उच्चारणमें होता है । हिन्दीकी 'त', 'थ', 'द', आदि ध्वनियाँ इन्हींसे उच्चरित होती हैं । इन ध्वनियोंको **दंत्य** कहते हैं । (दे०) **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान** ।

दांबूक (dambuk)—**मिरी** (दे०)का एक रूप ।

दाइको—**गारो** (दे०)के लिए प्रयुक्त खासी नाम ।

दानपुरिया—**कुमायूँनी** (दे०)की अलमोड़ा जिलेके दानपुर परगनाके उत्तरी भागमें प्रयुक्त एक उप-बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार 'दानपुरिया'को बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २३,८५१ थी ।

दामिली—पन्नवणासूत्र नामक जैनग्रंथमें दी गयी १८ लिपियोंमेंसे एक ।

दारमेस्तेतरनियम(darmesteter's law)—फ्रांसीसी भाषाका एक ध्वनिनियम । इसके अनुसार शब्दोंमें (लैटिनसे फ्रांसीसी भाषामें आनेपर) बलाघात युक्त अक्षर (stressed syllable) के तुरत बादका अक्षर,

यदि उसमें ए (a) स्वर न हो तो उच्चारण में लुप्त हो जाता है।

दार्ग्वा (dargva)––काकेशस परिवारकी उत्तरी-पूर्वी शाखाकी एक उपशाखा। इसमें **दर्ग्वा** आदि कई बोलियाँ हैं।

दालू (dalu)––(१) गारो पहाड़ियों (असम)में प्रयुक्त **गारो** (दे०)की एक बोली। (२) मैमनसिंह और सिलहटमें प्रयुक्त **हैजोंग बंगाली** (दे०)का एक नाम।

दाल्दी (daldi)––**कोंकणी** (दे०) जंजीरा, रत्नगिरि तथा कनारामें नवाईतोंमें बोली जानेवाली एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २३,५००के लगभग थी।

दासरी (dasari)––ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार बेलगाम (बंबई) में रहनेवाले भिखारियोंकी एक जातिमें प्रयुक्त **तेलुगु** तथा **कन्नड़**की एक बोली। किन्तु १८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार यह **कन्नड़** (दे०)का एक रूप है।

दि––प्रगृह्य (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

दिक्कू काजी (dikku kaji)––**नगपुरिया** (दे०)के लिए प्रयुक्त 'मुंडा' नाम।

दिगंतराल बहुव्रीहि समास––(दे०) **समास**।

दिगारू (digaru)––**मिश्मी** (दे०)का एक रूप।

दिदायी (didayi)––**पर्जा** (दे०)का दूसरा नाम।

दिमासा (dima-sa)––उत्तरी-कछार और नाओगोंग (असम) में प्रयुक्त, **चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी शाखाकी, असमी-बर्मी उप-शाखाके, 'बड' वर्गकी एक असमी भाषा। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग १८,६८१ थी।

दिल (dil)––कृत्रिम भाषा **वोलपूक** (दे०)-का संशोधन करके १८९३में फ़िवेजर द्वारा बनायी गयी एक कृत्रिम भाषा।

दिवादि गण––संस्कृत धातुओंका एक **गण** (दे०)।

दिव्य उत्पत्ति––दैवी उत्पत्ति-सिद्धांत (दे०)-का एक अन्य नाम।

दिशावाचक क्रिया विशेषण––(दे०) **क्रिया-विशेषण**।

दिशावाचक संबंधसचक अव्यय––(दे०) **संबंधसूचक अव्यय**।

दीदो (dido)––**काकेशस परिवार** (दे०)-की काकेशसमें प्रयुक्त एक भाषा।

दीरी (diri)––दर्दिस्तानमें प्रयुक्त एक **दरद** (दे०) भाषा।

दीर्घचिह्न (macron)––स्वरोंको दीर्घ करनेके लिए उनके ऊपर लगायी जानेवाली एक छोटी पड़ी रेखा। (जैसे ā, ū में)।

दीर्घ मात्रा (long quantity)––एक प्रकारकी **मात्रा** (दे०)।

दीर्घ स्वर (long vowel)––ऐसा स्वर, जिसके उच्चारणमें ह्रस्व स्वरकी तुलनामें अधिक समय लगता है। जैसे––आ, ई, ऊ आदि। (दे०) **मात्राकाल**; तथा **ध्वनियोंके वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक।

दीर्घ स्वरित––एक प्रकारका **स्वरित** (दे०)।

दीर्घीकरण (lengthering)––**मात्रा-भेदीकरण** '(दे०)का एक भेद।

दीर्घीभवन––दीर्घीकरण (दे०) का एक नाम।

दुःखबोधक अव्यय––(दे०) **मनोविकारबोधक अव्यय**।

दुःस्पृष्ट––(१) अपूर्ण स्पर्श द्वारा उच्चरित (ध्वनि)। (२) 'ळ' ळ्ह या उपध्मानीय ध्वनि। इनका उच्चारण अपूर्ण स्पर्शसे माना गया है।

दुआला (duala)––**बाँटू** (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा। इसका क्षेत्र कांगो तथा दुआलाके बीच तटीय प्रदेश तथा कुछ उत्तरी भाग है।

दुपदोरिआ (dupdoria)––**आओ-नागा** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

दुर्रे (durre)––पश्चिमी नेपालकी एक भाषा। इसके बारेमें अन्य कोई विवरण

प्राप्त नहीं है।

डुलिएन (dulien)—लुशेई (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

डुलेंग (duleng)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, पुताओ ज़िलेमें प्रयुक्त, ३०००के लगभग लोगोंद्वारा व्यवहृत एक **कचिन** (दे०) बोली।

डूंगमाली (dungmali)—खंबू (दे०) की एक अन्य बोली जो नेपालीकी ऊपरी घाटीमें बोली जाती है।

डूमी (dumi)—नेपालकी ऊपरी घाटीमें प्रयुक्त एक **खंबू** (दे०) बोली।

दूरवर्ती अन्य पुरुष सर्वनाम—(दे०) **सर्वनाम**।

दूरवर्ती ध्वनि-विपर्यय—**विपर्यय** (दे०) का एक भेद।

दूरवर्ती निश्चयवाचक सर्वनाम—(दे०) **सर्वनाम**।

दूरवर्ती पश्चगामी व्यंजन समीकरण—एक प्रकारका **समीकरण** (दे०)।

दूरवर्ती पश्चगामी स्वर समीकरण—एक प्रकारका **समीकरण** (दे०)।

दूरवर्ती पुरोगामी व्यंजन समीकरण—एक प्रकारका **समीकरण** (दे०)।

दूरवर्ती पुरोगामी स्वर समीकरण—एक प्रकारका **समीकरण** (दे०)।

दूरोल्लेखसूचक सर्वनाम—(दे०) **सर्वनाम**।

दृढ़ (tense)—(ध्वनि) जिसका उच्चारण मांस-पेशियोंको दृढ़ करके किया जाय।

दृढ़ ध्वनि—**दृढ़** (दे०) या **सशक्त ध्वनि** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

दृश्यात्मक अनुकरण सिद्धान्त—भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धांत। यह **अनुकरण सिद्धान्त** (दे०) का एक भेद है।

दृश्यात्मक धातु—(दे०) **धातु**।

दृश्यात्मक शब्द—दृश्यपर आधारित शब्द, जैसे चमचम, बगबग, दकदक आदि। (दे०) **शब्द**।

देओड़ावाटी (deorawati)—(दे०) **देवड़ावाटी**।

देओरी (deori)—**चुतिया** (दे०) का एक अन्य नाम।

देओरी चुतिया (deori chutiya)—**चुतिया** (दे०) का एक दूसरा नाम।

देक हैमोंग (deka haimong)—**आओ** (दे०) का एक अन्य नाम।

दक्कनी—**दक्खिनी** (दे०) का एक नाम।

देनवार (denwar)—**नैपाली** (दे०) का नेपाल तराईमें प्रयुक्त, एक विकृत रूप।

देमोतिके—(दे०) **डीमॉटिक ग्रीक**।

देर्मुह (dermuha)—**मोप्वा** (दे०) की एक बोली।

देवड़ावाटी—दक्षिणी **मारवाड़ी** (दे०) का एक स्थानीय रूप जो मारवाड़में सिरोहीके पूरबमें बोला जाता है। मारवाड़ीका यह रूप गुजरातीसे अत्यधिक प्रभावित है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ८६,०००थी। (दे०) **मारवाड़ी**।

देवनागरी—कुछ क्षेत्रोंमें हिन्दी (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

देवनागरी लिपि—भारतकी सर्वप्रमुख लिपि। इसका प्रयोग, संस्कृत, पालि, प्राकृत और अपभ्रंश ग्रंथोंमें पूरे विश्वमें होता है। आधुनिक कालमें, हिन्दी, मराठी, नेपाली भाषाएँ इसी लिपिका प्रयोग कर रही हैं। कभी-कभी गुजराती ग्रंथोंमें भी इस लिपिका प्रयोग होता है। भारतमें सिंधी भाषा-भाषी भी इस लिपिको अपना रहे हैं और भविष्यमें भारतीय सिंधीकी भाषा इसीके होनेकी संभावना है। भारतकी राष्ट्रलिपिके रूपमें भी इसीके स्वीकृत होनेकी संभावना है। देवनागरीको **नागरी लिपि**, **हिन्दी लिपि** या कभी-कभी **संस्कृत लिपि** भी कहते हैं। **ब्राह्मी** (दे०) की उत्तरी-शैलीसे गुप्त लिपि विकसित हुई, और गुप्त लिपिसे कुटिल लिपि। कुटिल लिपिसे ८वीं सदीके लगभग प्राचीन देवनागरी लिपिका विकास हुआ। प्राचीन देवनागरीसे आधुनिक नागरी, गुजराती, महाजनी, मैथिली, बंगला, असमिया तथा उड़िया आदिका विकास हुआ है। कुछ लोग

बंगला आदि पूर्वी लिपियोंका विकास सीधे कुटिलसे भी मानते हैं । नागरीको दक्षिणमें नंदिनागरी कहते हैं । प्राचीन देवनागरीसे आधुनिक देवनागरीका विकास १५वीं-१६-वीं सदीमें हुआ । नागरी या देवनागरी नामकी उत्पत्ति विवादास्पद है । इस संबंधमें व्यक्त किये गये प्रमुख मत इस प्रकार हैं : (१) कुछ लोगोंके अनुसार गुजरातके नागर ब्राह्मणोंमें इसका प्रयोग सर्वप्रथम होनेके कारण इसे नागरी लिपि कहते हैं । (२) कुछ अन्य लोगोंके अनुसार नगरोंमें प्रचलनके कारण ही यह नागरी कहलायी । (३) एक मत यह भी है कि ललित विस्तरकी **नागलिपि** ही 'नागरी लिपि' है, किंतु वस्तुतः इन दोनोंमें कोई संबंध नहीं है । (४) तांत्रिक चिह्न देवनागरके साम्यके कारण कुछ लोग इसके देवनागरी कहे जानेका अनुमान लगाते हैं। (५) कुछ लोगोंका यह भी कहना है, कि अन्य नगर नगर हैं, और काशी **देवनगर** है, वहाँ प्रचारके कारण ही इसे देवनागरी कहा गया । 'नागरी' देवनागरीका ही संक्षिप्त रूप है । ये सभी मत कोरे अनुमानपर आधारित हैं, और किसीके लिए कोई प्रामाणिक आधार नहीं है । यों उपर्युक्त मतोंमें दूसरे मतके कुछ अधिक संभव होनेकी संभावना हो सकती है । इस समय नागरीके एकाधिक रूप प्रचलित हैं । हिन्दी प्रदेशमें कुछ लोग इसे गुजरातीकी तरह शिरोरेखा विहीन भी लिखते हैं । कुछ अक्षरोंके (अ-ग्र, श-श, ल-ल, इ-अि, ई-अी, उ-अु, ऊ-अू, ए-अे, ऐ-अै, ण-रा) एकसे अधिक रूप चल रहे हैं । नागरी लिपिमें स्पष्टता तथा वैज्ञानिकताकी दृष्टिसे कई प्रकारके सुधार अपेक्षित हैं । इस दिशामें शासन संस्थाओंके एवं व्यक्तिगत स्तरपर अनेक प्रयास हुए किंतु अभीतक कोई भी सुधार सर्व-स्वीकृत नहीं हो सका है।

प्राचीन नागरी लिपि :

[यह वर्णमाला ११वीं सदीकी है । जो उज्जैनमें प्राप्त हुई है]

मध्ययुगसे लेकर अबतक, आवश्यकतानुसार कुछ नये लिपिचिह्न भी नागरी लिपिमें समाविष्ट किये गये हैं । प्रमुखतः हिन्दी प्रदेशकी नागरीमें इन चिह्नोंका प्रयोग अधिकांश पढ़े-लिखे लोग करने लगे हैं । चिह्न हैं: ड़, ढ़, ज़, फ़, ग़, ख़, क़, ॉ ।

अ
इ
उ
ए
ओ

[आधुनिक नागरी लिपिका विकास]

(आगे के पृष्ट में लिपियों के रूप देखें)

क

ख

ग

घ

ङ

च

छ

ज

झ

ञ

ट

ठ

ड

ढ

ण

त

थ

द

ध

न

प

फ

ब

भ

म

य

र

ल

व

श

ष

स

ह

ळ

देवलिपि--बौद्धग्रंथ 'ललित विस्तार' में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक ।

देवारी--एक ईरानी (दे०) भाषा ।

देश--प्रातिशाख्योंमें उच्चारण स्थानके लिए प्रयुक्त एक पारिभाषिक शब्द ।

देशज शब्द--एक शब्द-भेद । (दे०) **शब्द** ।

देशजात--**देशज** शब्दोंके लिए प्रयुक्त एक नाम । (दे०) **शब्द** ।

देशजाभास--वे शब्द जो मूलतः 'देशज' न हों, किंतु जिनको देखनेपर उनके देशज होनेका आभास हो, जैसे पगड़ी । (दे०) **शब्द** ।

देश भाषा--**अपभ्रंश** (दे०)का एक अन्य नाम ।

देशरूक (desharuk)--१८९१ की बंबई जनगणनाके अनुसार **मराठी** (दे०)का एक रूप ।

देशवैशिष्ट्योत्पन्ना आर्थी व्यंजना--एक प्रकार-की व्यंजना । (दे०) **शब्द-शक्ति** ।

देशी--(१) परिनिष्ठित **मराठी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम । (२) **देशज** शब्दों-के लिए प्रयुक्त एक नाम । (दे०) **शब्द** ।

देशीप्रसिद्ध--**देशज** शब्दोंके लिए चंड द्वारा प्रयुक्त एक नाम । (दे०) **शब्द** ।

देशीमत--**देशज** शब्दोंके लिए भरत मुनि द्वारा प्रयुक्त एक नाम । (दे०) **शब्द** ।

देश्य--**देशज** शब्दोंके लिए प्रयुक्त एक नाम । (दे०) **शब्द** ।

देसड़ी--**हरिआनी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

देसवाली–हरिआनी (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

देसिका––देशज शब्दोंके लिए प्रयुक्त एक नाम । (दे०) **शब्द** ।

देसी––(१) अपभ्रंश (दे०) का एक अन्य नाम । (२) हरियानी (दे०) का एक अन्य नाम ।

देहगानी (dehgani) **पशई** (दे०) का एक अन्य नाम ।

देहलवी––(१) दिल्लीमें बोली जानेवाली भाषा । यह नाम अत्यंत प्राचीन है । अमीर खुसरोने 'नुहसिपर' में तथा अबुलफ़ज़लने 'आईने अकबरी'में इस नामकी भाषाका उल्लेख किया है । यह नाम उस कालमें संभवतः दिल्लीकी हिन्दवी या हिन्दीके लिए प्रचलित था । (दे०) **हिन्द** तथा **'हिंदवी'** । (२) दक्खिनी (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

देहवारी (dehwari)––बिलोचिस्तानमें प्रयुक्त **फ़ारसी** (दे०) की एक बोली । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ६,२६८के लगभग थी ।

देहावली (dehavali)––खानदेशमें प्रयुक्त एक **भीली** (दे०) बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४५,०००के लगभग थी ।

देह्‌गानी (dehgani)––**पशई** (दे०) का एक अन्य नाम ।

दैगनेत (daignet)––**चीनी परिवार** (दे०)-की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके, 'सक' (लूई) वर्गकी, बर्मामें प्रयुक्त, एक भाषा । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४९१५के लगभग थी ।

दैवी उत्पत्ति-सिद्धान्त (divine theory)––भाषाओंकी उत्पत्तिका एक सिद्धान्त । (दे०) **भाषाकी उत्पत्ति** ।

दोंबो (dombo)––विशाखापट्टमकी पहाड़ियोंपर प्रयुक्त **उड़िया** (दे०) का एक नाम ।

दोआनिया (doaniya)––**सिंगफो** (दे०) का एक अन्य नाम ।

दोआबी––दोआब (पंजाब) में प्रयुक्त **दोआबी-पंजाबी** (दे०) का एक नाम ।

दोआबी पंजाबी––**पंजाबी** (दे०) जालंधर दोआबमें प्रयुक्त एक उपबोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २०,५१,४४८ के लगभग थी ।

दोक्तोल (doktol)––मध्यवर्ती तिब्बतमें प्रयुक्त **तिब्बती** (दे०) का एक रूप ।

दोनवार––**देनवार** (दे०) का एक नाम ।

दोमर (dommara)––दोमर लोगों द्वारा प्रयुक्त **तेलुगु** (दे०) का नाम ।

दोर––**कोंड** (दे०) का एक अन्य नाम ।

दोरा––**कुई** (दे०) का एक रूप । इसे **'कोंड-डोरा'** भी कहते हैं ।

दो संधि––**माँझ-कुमैयाँ** (दे०) का एक अन्य नाम । 'दोसंधि'का अर्थ है 'दोकी संधि' । यह उपबोली गढ़वाली और कुमायूनीका मिश्रित रूप है, इसी कारण इसका यह नाम है ।

दोसापुरिया––पन्नवणासूत्र नामक जैन ग्रंथमें दी गयीं १८ लिपियोंमेंसे एक ।

दोहरहू (doharahu)––१८९१ की बंबई जनगणनाके अनुसार खानदेशमें प्रयुक्त, **मराठी** (दे०) का एक रूप ।

द्रव ध्वनि––**तरल ध्वनि** (दे०) का एक अन्य नाम ।

द्रविड़ परिवार (drovidian family)––इस परिवारकी भाषाओंका अध्ययन यों तो इस परिवारके वैयाकरणोंद्वारा ई० सन्‌के आसपास ही प्रारंभ हो गया था, ८वीं सदीके आस-पास संस्कृत विद्वानोंका भी ध्यान इस ओर गया था और यूरोपीय विद्वान् भी इस ओर १८वीं सदी उत्तरार्धमें झुके थे, किंतु एक निश्चित परिवारके रूपमें इसे मान्यता

सर्वप्रथम कदाचित् ए० डी० कैम्पबेलकी पुस्तक A Grammar of the teloogoo languages (१८७६ ई०) की भूमिकामें एफ० ई० एलिसने दी। इसकी प्रमुख भाषा तमिलके आधारपर इस परिवारको पहले टैमुलिअन (tamulian) या टैमुलिक (tamulic) कहा जाता था। कैल्डवेलने अपने प्रसिद्ध व्याकरण (A comparative grammar of the dravidian or south-indian family of languages) के प्रथम संस्करण (१८५६ ई०)में पहले पहल इसे द्रविड़ परिवार कहा। पुस्तकके नामसे स्पष्ट है कि नये प्रयोगके कारण ही उसे या (or) जोड़कर दक्षिण भारतीय परिवार रूपमें द्रविड़ परिवार'की व्याख्य करनी पड़ी। कैम्पबेलकी यह पुस्तक उस समय इस क्षेत्रमें इतनी प्रामाणिक थी कि उसीके कारण इस परिवारका यह नया नाम चल पड़ा। 'द्रविड़' शब्द, इस प्रकार भाषा-परिवारका द्योतक हुआ, किंतु इसका अर्थ-विस्तार कहीं रुका नहीं और अब यह जातिविज्ञान एवं नृविज्ञान आदि क्षेत्रमें विशिष्ट संस्कृति एवं सभ्यता तथा विशिष्ट जातिका भी द्योतक हो गया है।

'द्रविड़' शब्द संस्कृतमें बहुत पहलेसे मिलता है। मनुस्मृतिमें 'पौण्ड्रकाश्चौड्रद्रविडाः काम्बोजा यवनाः शकाः' रूपमें द्रविड़ोंकी गणना भ्रष्ट क्षत्रियोंमें हुई है। संस्कृतमें 'द्राविड'का प्रयोग 'द्रविड'से बने विशेषणके रूपमें हुआ है। 'द्रविड' मूलतः 'द्रमिल'से विकसित है। महावंश आदि पालि तथा श्वेतांबर जैन ग्रंथोंमें इसका 'दमिल' रूप भी मिलता है। इस 'दमिल'का प्रयोग तमिल लोगोंके लिए हुआ है। कहना न होगा 'तमिल' 'दमिल' एक हैं। केवल 'त' का 'द' हो गया है। संस्कृत नाटकोंके प्राकृतोंमें डविल और दविड भी मिलता है। स्पष्ट ही ये 'म' के 'व' तथा 'ल' से 'ल' फिर 'ड' हो जानेके कारण विकसित हुए हैं। इस प्रकार 'द्रविड' शब्द मूलतः 'तमिल' ही है। तमिल > दमिल > (संस्कृतीकरण) द्रमिल > द्रमिड > द्रविड रूपमें इसका विकास संभव है। पहले लोग संस्कृत द्रविडसे (> द्रमिड > द्रमिल > दमिल >) तमिलकी उत्पत्ति मानते रहे हैं। किंतु यह धारणा अब मान्य नहीं मानी जाती। 'तमिल' शब्दका प्राचीन अर्थ 'माधुरी' तथा 'कृपा' मिलता है। 'पिंगलन्दइ' नामक तमिल कोशमें आता है 'इनिमइयुम नीर्मइयुम तमिल एनल आगुम'। यों, माधुरीके अर्थमें इसका प्रयोग एकाध स्थलोंपर ही (जैसे तिरुत्तक्कदेवरके शिन्तामणिमें) हुआ है। तमिल विद्वानोंका कहना है कि उनकी भाषाके अत्यंत मधुर होनेके कारण ही उसे यह नाम दिया गया। भाषाके साथ-साथ कदाचित् उसके बोलनेवाले भी इसी नामसे पुकारे गये और धीरे-धीरे यह नाम, न केवल तमिल भाषी, अपितु अन्य दक्षिणी भाषाओंके वासियोंका भी बोधक हो गया।

द्रविड़ लोगोंका मूल स्थान कहाँ था, यह प्रश्न विवादास्पद है। कुछ लोग इस आधारपर कि द्रविड़ भारतके बाहर कहीं नहीं मिलते, उन्हें मूलतः भारतका ही वासी मानते हैं। कुछ लोग उनकी संस्कृति सुमेरियोंके समान देखकर, उन्हें मूलतः दज़ला-फ़रातकी घाटीका निवासी मानते हैं। क्रिस्ताफ़ वान फुएरर हैमेन्दोर्कने पिछले दशकमें इस विषयमें एक नया मत विद्वानोंके समक्ष रखा था। उनके अनुसार आर्योंके आनेके बाद द्रविड़ लोग ५०० ई० पू० में समुद्रके रास्ते भारतमें आये। अत्यंत प्राचीन तमिल साहित्यके कुछ उल्लेखोंके आधारपर कुछ लोगोंने इन्हें मूलतः लिमूरिया (lemuria) का निवासी माना है। लिमूरिया एक कल्पित महाद्वीप है, जो कुछ विद्वानोंके अनुसार लंकाके दक्षिणमें

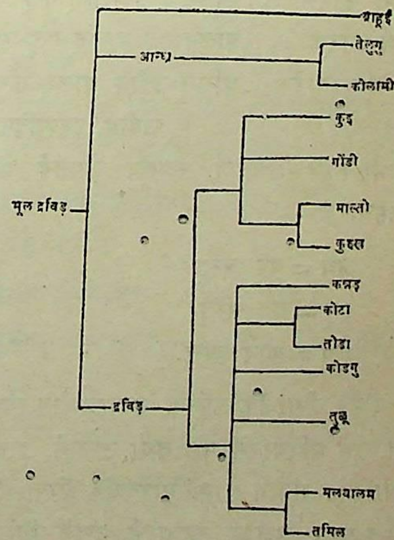
था। अब वह हिंद महासागरमें जलमग्न हो गया है। डॉ० हाल, केन्नेडी तथा डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी आदि इनका मूल-स्थान भूमध्यसागरके आसपास माननेके पक्षमें हैं। यह अंतिम मत अपेक्षाकृत कुछ अधिक मान्य है। वहाँसे ये लोग दजला-फ़रातकी घाटीमें होते भारतकी पश्चिमोत्तर सीमा पार कर भारतमें प्रविष्ट हुए। हड़प्पा तथा मोहनजोदाड़ोकी सभ्यता इन्हींकी थी। आर्योंके आनेके बाद ये दक्षिणमें चले आये।

नृतत्त्वीय दृष्टिसे द्रविड़ लोग एक जातिके नहीं हैं। इनमें एकाधिक जातियोंका मिश्रण हुआ है। मूलतः ये निग्रोइड लोगों जैसे थे।

द्रविड़ परिवारकी भाषाओंको समय-समय-पर कैल्डवेल, मैक्समूलर, ह्विटने, रूस्ट तथा ओ० श्रेडर आदि द्वारा (फ़िनोउग्रिक, स्कीथियन, तुरानियन, अलेफ़िलिअन (allaphilian), हुंगेरिअन आदि अनेक नामोंसे) यूराल-अल्टाइकसे; पी० डब्ल्यू शिमट द्वारा आस्ट्रेलियाईसे, तथा अन्य लोगों द्वारा बुरुशास्की, एलामाइट, अंडमानी, सबेरेइअन (subaraean), पापुवन (papuan) तथा मीडिक (medic) आदिसे संबद्ध करनेके प्रयास हुए हैं किंतु सफलता नहीं मिली है। इसी प्रकार डॉ० पोप, गोवर, शेषगिरि शास्त्री, स्वामिनाथ अय्यर तथा अन्य बहुतसे लोगोंने इसे भरोपीय परिवारसे संबद्ध सिद्ध करनेका असफल प्रयास किया है। जैसाकि ग्रियर्सन आदिने कहा है द्रविड़का किसी भी अन्य परिवारसे इतनी व्याकरणिक समानता नहीं है कि उसे उससे संबद्ध माना जा सके। ऐसी स्थितिमें यही कहना पड़ेगा कि यह अपने आपमें एक परिवार है, जिसका विकास मूल द्रविड भाषासे हुआ है।

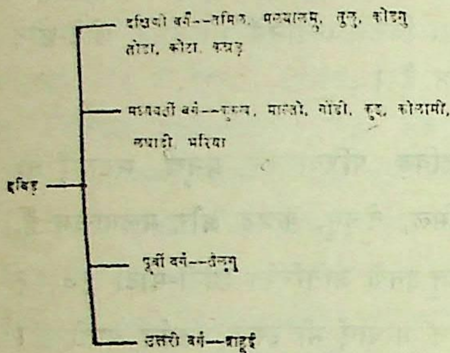
द्रविड़ परिवारकी भाषाओंका क्षेत्र उत्तरी लंका, मैसूर, केरल, मद्रास तथा आंध्रप्रदेश आदि दक्षिणी भारतमें ही प्रमुख रूपसे है। इसके अतिरिक्त लक्षद्वीप, मध्यप्रदेश, बिहार तथा बिलोचिस्तानमें भी इसके छोटे-छोटे क्षेत्र हैं।

द्रविड़ परिवारकी प्रमुख भाषाएँ तो तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम हैं, किंतु इनके अतिरिक्त छोटी-मोटी १०-११ अन्य भाषाएँ भी इसके अंतर्गत आती हैं। इन भाषाओंका वर्गीकरण कई प्रकारसे किया गया है। कहा जाता है, कि सातवीं सदीमें कुमारिल भट्टने द्रविड़ भाषाओंको दो वर्गों (आंध्र और द्रविड़) में रखा था। उन्हें ब्राहुईका पता नहीं था। उसे दृष्टिमें रखते हुए परिवारको मूलतः ३ वर्गोंमें बाँटा जा सकता है। ग्रियर्सनका वर्गीकरण कुछ इसी प्रकारका है।



इसीको आधार मानते हुए एवं भाषाओंकी भौगोलिक स्थिति, उनके इतिहास तथा

उनके स्वरूपको दृष्टिमें रखते हुए निम्नांकित रूपमें द्राविड़ भाषाओंका वर्गीकरण कदाचित् अधिक समीचीन होगा--



इनके संबंधमें विशेष विवरण कोशमें यथास्थान दिये गये हैं।

द्रविड़ परिवारकी भाषाओंकी प्रमुख विशेषताएँ निम्नांकित हैं : (१) प्रधानतः इस परिवारकी भाषाएँ अश्लिष्ट अन्त-योगात्मक (तुर्की आदिकी भाँति) हैं। मूल शब्द या धातुमें प्रत्यय एकके बाद दूसरे जुटते चले जाते हैं—

तमिलमें 'बालन्' = बालक

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्ता कारक	बालन्	बालन्-गल्
कर्म कारक	बालन्-एई	बालन्-गल्-एई
सम्बन्ध कारक	बालन्-उदीय	बालन्-गल्-उदीय, इत्यादिपर

कभी-कभी अपवाद स्वरूप उपसर्ग भी लगता है:—

अथु = वह वस्तु
इथु = यह वस्तु
एथु = कौन वस्तु

(२) जैसा कि ऊपरके उदाहरणोंसे स्पष्ट है, इस परिवारमें मूल तथा उपसर्ग, प्रत्यय आदिका संयोग प्रायः प्रारदर्शक होता है। मूल प्रायः अक्षुण्ण रहता है, उसमें विकार होता भी है तो बहुत कम। संस्कृतकी भाँति ही इन भाषाओंमें समस्त पद बनानेकी भी प्रवृत्ति है। (३) परसर्गों तथा सहायक क्रियाओंका प्रयोग अत्यंत प्राचीन कालसे मिलता है। (४) बचन दो होते हैं। (५) विशेषणोंके कारकीय रूप नहीं प्रयुक्त होते। (६) ९का वाचक शब्द (संस्कृतमें २९, ३९ आदिकी भाँति), मूलतः १०–१ (दसमें एक कम)का अर्थ रखता है। (७) अंग्रेज़ीकी भाँति कुछ मूल शब्द क्रिया तथा संज्ञा दोनों होते हैं। जैसे रुप्पु (ग़लती, ग़लती करना), मलर (फूल, फूलना), चोल (शब्द, कहना) आदि। (८) तमिल आदि कुछमें संज्ञाके मूलतः दो वर्ग होते हैं : (क) उच्चवर्गीय (high class या high caste) तथा (ख) अवर्गीय (classless या casteless)। इनमें प्रथमके फिर पुल्लिग और स्त्रीलिंग उपभेद होते हैं। उच्चवर्गमें तर्कशीलता आदि मानी जाती है। अवर्गीय संज्ञाएँ एक प्रकारसे निर्जीव या अतर्कशील होती हैं। इसे नपुंसक लिंग कह सकते हैं। मगु (= शिशु) नपुंसक लिंग अर्थात् दूसरेमें हैं; मगन (= लड़का), मगल (= लड़की) प्रथममें हैं। इस तरह जर्मन आदिकी तरह जीवित प्राणी भी अतर्कशील होनेके कारण नपुंसक लिंगमें है। (९) टवर्गीय ध्वनियोंकी अन्य भारतीय भाषाओंकी अपेक्षा अधिकता, तथा एकाधिक प्रकारके ल इस परिवारकी प्रमुख विशेषताएँ हैं। (१०) यूराल-अल्ताई परिवार तथा मुंडा आदिकी भाँति, इस वर्गकी तेलुगु आदि भाषाओंमें, स्वर-अनुरूपताकी प्रवृत्ति मिलती है। मूल शब्दमें जब कोई प्रत्यय जोड़ा जाता है, तो मूल शब्द और प्रत्ययके स्वर एक दूसरेके अनुरूप कर लिए जाते हैं। इसके लिए कभी तो प्रत्यय और कभी-कभी मूल शब्दके स्वर परिवर्तित करदिये जाते हैं। उदाहरणार्थ कत्ति = चाकू या तलवार; किं = को, अतः कत्तिकि = तलवारको; किंतु 'लु' बहुवचनका प्रत्यय, अतः कत्तुलु = तलवारें। इसी प्रकार आडु (= खेलना)से आडुदुनु (मैं खेलूँगा), किंतु आदितिनि (मैंने खेला)

या प्राचीन तेलुगुमें कलुगु (=करना)से कलुगुदुनु और कलिगितिनि। (११) तमिल आदि कुछ भाषाओंमें शब्दके आदिमें या अन्य स्थलोंपर द्वित्त रूपमें व्यंजन अघोष होते हैं, किंतु मध्यग असंयुक्त व्यंजन घोष हो जाते हैं। उदाहरणार्थ मकन (=पुत्र) या मरुल (=पुत्री) का उच्चारण क्रमसे मगन तथा मगल होता है, किंतु मक्कल (लड़के)का उच्चारण क्क रूपमें ही होता है। (१२) प्रायः सभी द्रविड़ भाषाओंमें ह्रस्व ए तथा ह्रस्व ओ स्वर हैं, और जिनमें लिपि हैं, उनमें ए-ऐ या ओ-औ से भिन्न इन ह्रस्व स्वरोंके लिखनेके लिए स्वतंत्र लिपि-चिह्न भी हैं।

द्रविद (dravid)—**तमिल** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

द्रव्य—व्यक्तिवाचक संज्ञाके लिए प्रयुक्त एक नाम।

द्रव्यबोधक संज्ञा—(दे०) **द्रव्यवाचक**।

द्रव्यवाचक संज्ञा—(दे०) **संज्ञा**।

द्राविड—(दे०) **द्राविड़**।

द्राविड अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

द्राविडलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

द्रास (dras)—**शिणा** (दे०)की कश्मीरमें प्रयुक्त एक बोली।

द्वंद्व समास—(दे०) **समास**।

द्वयाक्षरी (dissyllbic)—दो अक्षरों (syllables) वाला।

द्वयाक्षरी शब्द—वे शब्द जिनमें दो अक्षर हों। जैसे 'लगभग'। (दे०) **शब्द**।

द्वयोष्ठदंत्य (bialabiodental)—ऊपरके ओष्ठ तथा दांत और नीचेके ओष्ठकी सहायतासे उच्चरित ध्वनि।

द्वयोष्ठ्य (bilabial)—**उच्चारण-स्थान** (दे०)के आधारपर किया गया व्यंजन ध्वनियोंका एक भेद। ये वे ध्वनियाँ हैं, जिनका उच्चारण दोनों ओठोंसे होता है। जैसे प, फ, व, भ, म। इन्हें **ओष्ठ्य** (lobial) भी कहते हैं।

द्विःप्रयोग—दो वार प्रयोग।

द्विःस्पृष्ट—**दुःस्पृष्ट** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

द्विकर्मक—दो कर्मोवाली क्रिया। (दे०) **एक-कर्मक**।

द्विगुणित बहुवचन—**द्वित्त बहुवचन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

द्विगु समास—(दे०) **समास**।

द्विज—एक प्रकारके शब्द जो दो प्रकारके शब्दों (जैसे ततसम+तद्भव या देशज+तद्भव या विदेशी+तद्भव आदि)के योगसे बने हों। जैसे रेलगाड़ी। इसमें 'रेल' विदेशी है, और 'गाड़ी' तद्भव। दे० **शब्द**।

द्विज शब्द (hybrid word)—(दे०) **द्विज**।

द्वितत्त्व (binary)—दो तत्त्वों (ध्वनि, रूप, शब्द, पक्ष, नियम आदि) वाला।

द्वितीयक समास (secondary compound) ऐसा समास, जिसमें दो या अधिक ऐसे शब्दोंका समास किया जाय, जिनमें एक या अधिक पहलेसे समस्त शब्द हों। जैसे रामानुज-शक्ति।

द्वितीय प्राकृत—**प्राकृत** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

द्वितीय प्रेरणार्थक—(दे०) **धातु**।

द्वितीय बलाघात—**बलाघात** (दे०)का एक रूप।

द्वितीया—कर्म कारक। (दे०) कारक।

द्वितीया तत्पुरुष समास—(दे०) **समास**।

द्वितीया बहुव्रीहि समास—(दे०) **समास**।

द्वित्तन—**द्वित्तीकरण** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

द्वित्त बहुवचन (generous plural)—किसी वहुवचन शब्दका बहुवचन। जैसे

'अनेक'से 'अनेकों' या 'तुम'से 'तुम लोग'। इसे **द्विगुणित बहुवचन** भी कहा जा सकता है।

द्वित्तीकरण (gemination)—किसी शब्दमें एक व्यंजनको द्वित्त कर देना या हो जाना। यह एक प्रकारका ध्वनि- परिवर्तन है। जैसे बतखसे भोजपुरी बत्तक। इसे **द्वित्तन** या **द्वित्तीभवन** भी कह सकते हैं।

द्वित्ती भवन—**द्वित्तीकरण** (दे०)का एक अन्य नाम।

द्वित्व—(१) दो बार प्रयोग। (२) (gemination) एक व्यंजनका द्वित्व रूप, जैसे प्प, र्र, क्क, च्च आदि।

द्वित्व व्यंजन (gemination)—**संयुक्त व्यंजन** (दे०)के विरुद्ध द्वित्व व्यंजन उन व्यंजनोंको कहते हैं जिनमें एक ही व्यंजन-का संयुक्त रूप हो, जैसे क्क, प्प, त्त आदि। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें व्यंजनोंका वर्गीकरण** तथा **संयुक्त व्यंजन**।

द्विधा ध्वनि—ऐसी ध्वनि जो द्विधा, असमंजस या हिचककी स्थितिमें, बोलनेके बीचमें सुनाई पड़ती है। जैसे अ, हँ आदि। इन्हें रूप या शब्द मानकर **द्विधा शब्द** या **द्विधा रूप** भी कहा जा सकता है।

द्विधा रूप—**द्विधा ध्वनि** (दे०)का एक अन्य नाम।

द्विधा शब्द—**द्विधा ध्वनि** (दे०) का एक अन्य नाम।

द्विपक्षीय (binary)—दो पक्षों (नियम, विशेषता आदि) वाला।

द्विपार्श्व विरोध (bilateral apposition) —एक प्रकारका **विरोध** (दे०)।

द्विपार्श्विक—**'पार्श्विक'** (दे०) का एक भेद।

द्विबिंदु—**ट्रेमा** (दे०) नामक चिह्नका एक अन्य नाम।

द्विभाषीय (bilingual) (१) दो भाषाएँ जाननेवाला। (२) दो भाषाओंकी (पुस्तक आदि)।

द्विभाषीयता (bilingualism, bilinguality) किसी व्यक्ति या पुस्तक आदिके द्विभाषीय होनेकी स्थिति।

द्विरावृत्ति—पुनरावृत्ति (दे०)का एक अन्य नाम।

द्विरुक्त—दो बार प्रयुक्त।

द्विरुक्ति—(किसी ध्वनि या शब्दादिका) दो बार प्रयोग या **अभ्यास** (दे०)।

द्विरुक्ति वाचक क्रिया विशेषण—(दे०) **क्रिया विशेषण**।

द्विरुत्तरपदसंधि लिखित लिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयी ६४ लिपियोंमें-से एक।

द्विर्वचन—**द्वित्व** (दे०)के समानार्थी शब्दके रूपमें महाभाष्य आदि कुछ ग्रंथोंमें प्रयुक्त एक शब्द।

द्विलिंग—**उभयलिंग** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

द्विलिंगी—**सामान्य लिंग** (दे०) या **उभयलिंगीके** लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

द्विवचन (dual number)—दे० **वचन**।

द्विवत्—दो व्यंजनोंका अक्षर (syllable)।

द्विवर्ण (digraph)—दो स्वरों या दो व्यंजनोंका मिश्रित (x) या एक स्थानपर रखा हुआ (एक) रूप, जो एक ध्वनिको व्यक्त करता है। इसे **द्विलिपि** भी कहते हैं।

द्विस्वर—दो स्वरोंवाला।

ध

धंकी (dhaṅki)—१९२१ की बंबई जन-गणनाके अनुसार ख़ानदेशकी एक **भीली** (दे०) भाषा।

धकार—ध के लिए प्रयुक्त नाम। (दे०) **कार**।

धधर (dhadhar)—१८९१की वंबई जनगणनाके अनुसार **हिन्दी** (दे०)का एक रूप।

धनगरी (dhangari)–(१) **मराठी** (दे०) की, छिंदवाड़ामें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १८००के लगभग थी। (२.) कोंकणी (दे०)की, थाना और बेलगाम (वम्बई)में प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १७५० थी।

धनवारी (dhanwari)—**कुरूख** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

धन संगम (plus jumcture)—एक प्रकारका **संगम** (दे०)।

धनौची (dhanauchi)—१९२१ की पंजाब जनगणनाके अनुसार **लहँदा** (दे०) का एक रूप।

धन्नी (dhanni)—झेलममें प्रयुक्त, उत्तरी-पश्चिमी **लहँदा** (दे०)का, एक रूप।

धरणीप्रेक्षणो लिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

धरेल (dharel)—**वड** (दे०)का एक रूप। इसके स्थानका पता नहीं है।

धलो (dhalo)—धलो जातिके लोगोंमें प्रयुक्त कोडा (दे०)के लिए एक नाम।

धांगरी (dhangari)—**कुरूख** (दे०) का एक दूसरा नाम।

धाट्की (dhatki)–'सिंधी'भाषाकी, **थरेली** (दे०) बोलीका अन्य एक नाम।

धातु (root)—'धातु' शब्दका संबंध धातुसे है, जिसका अर्थ है 'रखना, स्थापित करना, बैठाना' आदि। 'धातु'का प्राथमिक अर्थ था मूलमें या भीतर स्थापित या रखी हुई चीज या मूलभूत अंश। इसी आधारपर पंच महाभूतों या तन्मात्राओं या शरीरके वात-पित्त-कफ आदि मूल उपादानों आदिके लिए इसका प्रयोग मिलता है। भाषामें भी इसका अर्थ इससे दूर नहीं है। वहाँ भी यह क्रिया या शब्द आदिका मूल तत्त्व है। इसको कई रूपों या परिभाषामें बाँधा गया है: 'जिस मूल शब्दमें विकार होनेसे क्रिया बनती है, उसे धातु कहते हैं।'—कामताप्रसाद गुरु। 'क्रिया वचनो धातुः' या 'भाव-वचनो धातु :'—भाष्यकार पतंजलि 'कियार्थो धातुः'—शाकटायन। 'क्रियाभावो धातु :'—सर्व वर्मन्। इस अर्थमें धातु शब्दका प्राचीनतम प्रयोग गोपथ ब्राह्मणमें मिलता है। धातु सामान्यतः तीन प्रकारकी मानी जाती हैं : (१) **सकर्मक** (transitive)—जिस धातु या क्रियाका कर्म हो या जिस धातुसे व्यक्त व्यापारका फलकर्ताके अतिरिक्त किसी दूसरेपर पड़े, उसे सकर्मक कहते हैं। उदाहरणार्थ 'पीना क्रिया या 'पी' धातु सकर्मक है, क्योंकि कोई चीज पी जायगी, जो **कर्म** होगी। जैसे 'राम पानी पीता है'में 'पानी' कर्म है। (दे०) **कर्म** तथा '**पूरक**'। (२) **अकर्मक** (Intransitive)—जिस धातु या क्रियाका कोई कर्म न हो, या जिसे कोई कर्म अपेक्षित न हो या जिस धातुसे व्यक्त व्यापारका फल कर्त्तापर पड़े, उसे **अकर्मक** कहते हैं। जैसे 'हँस', 'बैठ' आदि। अकर्मक धातु दो प्रकारकी होती है : (१) **पूर्ण अकर्मक**–जिसमें भावकी पूर्णताके लिए किसी 'पूर्तिकी आवश्यकता नहीं पड़ती। (२) **अपूर्ण अकर्मक**—इसमें भावकी पूर्णताके लिए कोई संज्ञा या विशेषण आदि जोड़ना आवश्यक होता है, जिसे '**पूर्ति**' कहते हैं। निकल (लड़का **तेज** निकला). हो (वह **चोर** है), तथा रह (मैं **बीमार** रहा), ऐसी ही धातुएँ हैं। रेखांकित शब्द-पूर्ति हैं। पूर्तिको 'पूरक' भी कहते हैं। (३) **उभय विध**—वे धातुएं **उभय विध** कहलाती हैं जो सकर्मक और अकर्मक दोनों ही होती हैं। जैसे भर (मैं पानी **भरता** हूँ, घड़ा **भरता** है), घिस, बदल, खुजला आदि। हिंदी पुस्तकों तथा कोशों आदिमें प्रायः गाना, पीना, हँसना

आदि धातुएँ मानी जाती हैं, किंतु वस्तुतः इस प्रकारके शब्दोंमें 'ना' निकाल देनेपर जो अंश शेष बचता है, वही धातु है, अर्थात् 'गा' 'पी' 'हँस' आदि।

व्युत्पत्तिकी दृष्टिसे स्वयं होने या किये जाने और प्रेरणाके आधारपर धातुओंके दो भेद होते हैं : (१) **मूल धातु**—अर्थात् सामान्य धातु। जैसे चलना, करना, गिरना आदि। (२) **प्रेरणार्थक धातु** (causative)—मूल धातुमें कुछ परिवर्तन करके कुछ ऐसी धातुएँ बनायी जाती हैं जिनमें प्रेरणा देनेका भाव रहता है। ऐसी धातुओंको **प्रेरणार्थक धातु** कहते हैं। जैसे 'चलना' से 'चलाना', 'करना'से 'कराना' तथा 'गिरना'से 'गिराना'। कुछ अपवादोंको छोड़कर धातुओंके प्रेरणार्थक रूप दो प्रकारके होते हैं, जिन्हें क्रमसे **प्रथम प्रेरणार्थक** (first causative) और **द्वितीय प्रेरणार्थक** (second causative) कहते हैं। जैसे 'चलना'से प्रथम प्रेरणार्थ 'चलाना' तथा द्वितीय प्रेरणार्थक 'चलवाना'। धातुका रचना या व्युत्पत्तिकी दृष्टिसे अधिक वैज्ञानिक वर्गीकरण एक अन्य रूपमें हो सकता है। इस दृष्टिसे धातुएँ दो प्रकारकी हैं : (१) **मूल धातु** (primary roots) —अर्थात् वे धातुएँ जो किसी अन्य आधारपर आधारित न होकर मूलभूत धातुएं हैं। जैसे 'चल' (चलना) 'खा' (खाना) आदि। (२) **साधित धातु** या **यौगिक धातु** (secondary roots)—जो दूसरी धातु, शब्द, ध्वनि या दृश्य आदिके आधारपर बनती हैं। इस दूसरे वर्गको प्रमुखतः ४ उपवर्गोंमें रखा जा सकता है : (क) **प्रेरणार्थक धातु**—जिसके संबंधमें ऊपर कहा जा चुका है। (ख) **नामधातु**—धातुके अतिरिक्त संज्ञा, सर्वनाम तथा विशेषण आदिसे जो धातुएं बनती हैं, उन्हें नामधातु कहते हैं। जैसे खर्चसे खर्चना, अपनासे अपनाना तथा चिकनासे चिकनाना आदि। संस्कृतमें व्यापक दृष्टिसे विशेषण आदि भी 'नाम'के अंतर्गत आते थे, इसीलिए इस श्रेणीकी धातुओंको नामधातु संज्ञा दी गयी। (ग) **ध्वन्यात्मक धातु** (onomotopoetic roots)—जो ध्वनिके आधारपर बना ली जाती हैं। जैसे मनमनाना, ठकठकाना आदि। (घ) **दृश्यात्मक धातु**—जो दृश्यके आधारपर बनती हैं, जैसे चमचमाना।

धातुओंका यह वर्गीकरण प्रमुखतः हिंदीको ध्यानमें रखकर किया गया है। संस्कृतमें धातुएँ रूप रचनाके आधारपर भ्वादि, अदादि, जुहोत्यादि, दिवादि, स्वादि, तुदादि, रुधादि, तनादि, क्र्यादि और चुरादि, इन दस भागोंमें विभक्त हैं, जिन्हें '**गण**' (दे०) कहते है। पदके आधारपर संस्कृतमें धातुओंके तीन वर्ग हैं : (क) **आत्मनेपद**—ऐसी धातुएँ जिनका फल अपने लिए हो। (ख) **परस्मैपद**—ऐसी धातुएं जिनका फल दूसरेके लिए हो। (ग) **उभयपदी**—जो धातुएं दोनोंमें आती हैं, उन्हें उभयपदी कहते हैं। यह वर्गीकरण व्याकरणिक ही अधिक है, प्रयोगमें इसका ध्यान प्रायः बहुत कम रखा गया है। प्रथम दोको **आत्मने भाष** और परस्मै भाष भी कहते हैं। संस्कृतमें और भी कई प्रकारके वर्गीकरण मिलते हैं।

आधुनिक-भाषा-विज्ञानमें धातु केवल क्रिया तक सीमित नहीं है। लघुतम संज्ञा या विशेषण (जिनके और अधिक टुकड़े न हो सकें) भी धातु है। अर्थात् अर्थके स्तरपर धातु लघुतम इकाई है। इसे ultimate semantic vehicle of a given idea or concept in a given language कहा गया है।

धातु प्रत्यय—दे० प्रत्यय।

धातु-प्रधान भाषा—**अयोगात्मक भाषा** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

धातु-सिद्धान्त (root theory)—भाषा उत्पत्तिका एक सिद्धान्त। दे० **भाषाकी उत्पत्ति**।

धात्वर्थ—धातु या मूल शब्दकी दृष्टिसे, किसी शब्दका अर्थ। इसे मूलार्थ भी कहते हैं।

धात्ववयव—(दे०) **प्रत्यय**।

धारठी—**सिरमौरी** (दे०)की सिरमुर तथा उसके आसपास प्रयुक्त एक उप-बोली। इसे **सिरमौरी धारठी** भी कहते हैं। ग्रियर्सन-के भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलने-वालोंकी संख्या लगभग ८२,७३९ थी।

धीमाल (dhimal)—सिक्किममें प्रयुक्त, **चीनी परिवार** (दे०)की एक पूर्वीय सार्व-नामिक हिमालयी तिब्बती-वर्मी भाषा।

धेक्रा (dhekra)—पश्चिमी असममें प्रयुक्त **बड़** (दे०)का एक रूप।

धेडी (dhedi)—**माहारी** (दे०)का एक दूसरा नाम।

धोंबरी (dhombary)—१८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार सतारामें प्रयुक्त बंजा-रोंकी एक भाषा। (दे०) **बंजारा**।

धोलेवाड़ी—**मालवी** (दे०)का एक स्थानीय रूप जो होशंगाबादके दक्षिण, बेतुलके उत्तरी प्रदेशके आसपास बोला जाता है। इस क्षेत्रमें धोलेवाड़ कुर्मियोंके प्राधान्यके कारण इसका यह नाम पड़ा है। 'धोले-वाड़ी', 'बुंदेली' और 'नीमाड़ी' से बहुत अधिक प्रभावित है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वे-क्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,१९,००० थी। इसे 'ढोलेवाड़ी' भी कहते हैं।

ध्रुवाभिमुख नियम (law of polarity) कुछ अफ्रीकी भाषाओंमें वचन और लिंग विषयक एक विचित्र नियम। अफ्रीकाके भाषा-कुलोंमें एक प्रधान कुल हेमेटिक है। इस कुलकी भाषाएँ उत्तरी अफ्रीकाके बहुत बड़े भागमें बोली जाती हैं। इन भाषाओंकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनमें जब एकवचन संज्ञाका बहुवचन बनाया जाता है, तो उसका लिंग भी परिवर्तित हो जाता है अर्थात् संज्ञा एकवचन पुलिंगका बहुवचन तथा संज्ञा एकवचन स्त्रीलिंगका बहुवचन स्त्रीलिंग, पुलिंग हो जाता है। इस कुलकी प्रधान भाषा सोमालीसे, इसके उदाहरण लिये जा सकते हैं। 'होयोदि' (= माँ) स्त्रीलिंग एक वचनका बहुवचन 'होयोइन-कि' (= माताएँ) शब्द वहाँके व्याकरणसे पुलिंग है। दूसरी ओर 'लिवाहिह' (= शेर) पुलिंग एकवचनका बहुवचन शब्द 'लिबाहिह्‌यो-दि' (= कई शेर) वहाँके व्याकरणसे स्त्रीलिंग है। **कारण और उसका स्पष्टीकरण**—इस प्रकारके कुछ उदाहरण अफ्रीकाके दूसरे भाषाकुल 'सेमि-टिक'में भी मिलते हैं, किंतु वे अपवाद हैं और कदाचित् इन्हीं 'भाषाओं'के प्रभाव-स्वरूप हैं। इन भाषाओंके विशेषज्ञ श्री मेनहाफ़ (meinhof)ने इस विचित्रताका कारण यह बतलाया है कि असंस्कृत मस्तिष्क एक प्रकारके परिवर्तनके साथ दूसरे प्रकारका भी परिवर्तन मान लेता है। वह दोनोंको अलग नहीं कर पाता अर्थात् एक वचनसे दूसरे वचनमें जानेमें वह मूल लिंगसे भी दूसरेमें जाना मान लेता है। इन दोनों प्रकारके परिवर्तनोंको वह संभवतः एक मानता है। इसका पूरा परिचय पृष्ठ २८२के चित्र और विवरणमें दिया जा रहा है। इन भाषाओंमें संज्ञाओंके दो वर्ग हैं। प्रथम वर्ग 'व्यक्ति'का है और दूसरा 'वस्तु'का। व्यक्ति वर्ग 'जीवित' और वस्तु वर्ग 'मृत' माना जाता है। साथ ही व्यक्ति वर्गकी संज्ञाएँ 'सबल' और 'बड़ी' मानी जाती हैं और दूसरी ओर वस्तु वर्गकी संज्ञाएँ 'निर्बल' एवं 'छोटी'। इसके साथ ही एक और विचार है। वे लोग व्यक्ति वर्गकी संज्ञाओं-को कर्त्ता या करनेवाला मानते हैं और वस्तु वर्गको 'वह जिसपर कुछ किया जाय'। प्रथम वर्गकी संज्ञाएँ पुलिंग हैं और जैसा कि ऊपर कहा गया है 'व्यक्तित्व', 'जीवन', 'सबलता', 'बड़ा होना' और 'कर्त्ता' आदि उनकी प्रधानताएँ हैं। इसके उलटे दूसरे वर्ग-की संज्ञाओंकी 'वस्तुत्व', 'अजीवन', 'निर्बल-ता', 'छोटी होना', तथा 'अकर्त्ता' आदि विशेषताएँ हैं।

केवल उसी शब्दमें हो, पर्यायवाचीमें न हो वहीं यह ध्वनि होती है। उदाहरण--

"चिर जींवौ जोरी जुरै क्यों न सनेह गँभीर।
को घटि ये वृषभानुजा, वे हलधर के बीर।"

--विहारी

इसमें वाच्यार्थका बोध होनेपर 'बृषभानुजा' और 'हलधर' शब्द द्वारा यह ध्वनि होती है कि बृषभ (बैल)की 'अनुजा' राधा और हलधर (बैल)के भाई कृष्णकी जोड़ी खूब बनी है। शब्दोंके पर्यायवाची रखनेसे यह व्यंजना संभव नहीं। (ख) **अर्थशक्ति-मूलक संलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि**--जहाँ शब्द-परिवर्त्तनके बाद भी–अर्थात् उन शब्दों-के पर्यायवाची शब्दोंके द्वारा भी व्यंग्यार्थ-का बोध होता रहे वहाँ अर्थशक्तिमूलक ध्वनि होती है। उदाहरणार्थ--"सुनि सुनि प्रीतम आलसी, धूर्त्त, सूम, धनवंत। नवल बाल हिय में हरख बाढ़ैत जात अनंत।" 'आलसी' पति परदेस नहीं जायगा, यही व्यंजना नायिका तत्काल ग्रहण कर लेती है। 'धूर्त्त' होनेसे यह ध्वनित है कि कोई उसे बहका नहीं सकता अर्थात् नायिकासे विमुख नहीं कर सकता। 'सूम' होनेसे व्यंजित है कि धनकी कमी नहीं होगी। यहाँ इन शब्दों-के पर्यायवाची भी ध्वनिमें समान रूपसे सहायक होंगे। इसलिए अर्थ-शक्तिमूलक ध्वनि मानी जायगी। (ग) **शब्दार्थोभय शक्तिमूलक संलक्ष्यक्रम ध्वनि**--जहाँ कुछ शब्द ऐसे हों जो पर्यायवाची शब्दोंसे अपना व्यंग्यार्थ प्रकट कर सकते हों और साथ ही कुछ ऐसे भी हों जो पर्यायवाचियोंसे व्यं-ग्यार्थ न प्रकट कर सकते हों, और व्यंग्यार्थ-बोधमें दोनोंकी अपेक्षा हो वहाँ यह ध्वनि होती है। उदाहरणार्थ यह दोहा लीजिये--

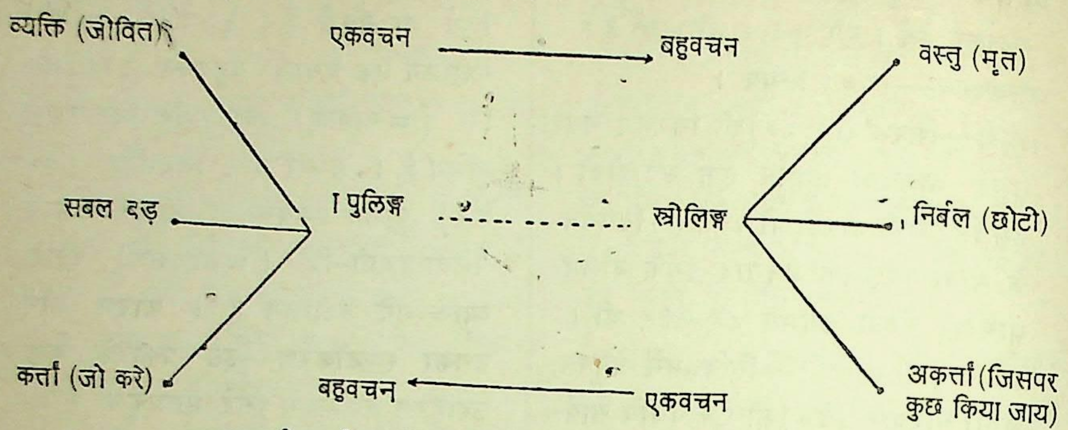
"चरन धरत चिंता करत भोर न भावे सोर।
सुबरन यों ढूँढ़त फिरत अर्थ चोर चहुँ ओर।"

इसमें 'अर्थ चोर'का प्रयोग 'धनका चोर' और 'भावापहरण करनेवाला कवि'के अर्थमें एक साथ ही कर दिया गया है। दोनोंकी चेष्टाएँ समान हैं, यह व्यंग्य है। 'चरन', 'भोर' और 'सुबरन' शब्द भी श्लिष्ट हैं। धन चुरानेवाले चोर और दूसरे कविके भावोंको चुरानेवाले कविके कृत्योंमें इन्हीं शब्दोंद्वारा साम्य स्थापित किया गया है। इन शब्दोंके पर्यायवाची उक्त प्रयोजनको सिद्ध नहीं कर सकते। दोहेके शेष शब्द जैसे 'धरत', 'करत' आदि पर्यायवाचियोंसे भी काम चला सकते हैं।

लक्षणामूला ध्वनि--जिसके मूलमें लक्षणा (दे०)हो उसे लक्षणामूला ध्वनि कहते हैं। इसमें वाच्यार्थ अपेक्षित नहीं होता। इसलिए इसे अविवक्षितवाच्य ध्वनि भी कहते हैं। **उपादान लक्षणा** (दे०) और **लक्षण-लक्षणा** (दे०)के आधारपर यह दो भागोंमें विभक्त हो जाती है। एक है **अर्थांतर संक्रमित वाच्य-ध्वनि** और दूसरी है **अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य-ध्वनि**। (१) **अर्थां-तर संक्रमित वाच्य-ध्वनि**--जहाँ मुख्यार्थका बोध होनेपर वाचक शब्द या वाक्यका वाच्यार्थ लक्षणा द्वारा अपने दूसरे अर्थमें संक्रमण कर जाय यानी परिवर्त्तित हो जाय वहाँ अर्थांतर संक्रमित वाच्य-ध्वनि होती है। जैसे कौआ कौआ है और कोकिल कोकिल। इस वाक्यमें दूसरे 'कौआ' और 'कोकिल' शब्द वाच्यार्थका बोध कराते हुए अन्य अर्थ-में संक्रमित होकर इस तथ्यकी व्यंजना कर देते हैं कि एकका स्वर कठोर है और दूसरे-का कोमल। (२) **अत्यंत तिरस्कृत वाच्य-ध्वनि**--जहाँ मुख्यार्थका सर्वांशतः तिरस्कार हो जाय (केवल अर्थांतरमें संक्रमण मात्र न हो) वहाँ अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य-ध्वनि होती है। 'पंत'की निम्नांकित पंक्तियोंमें लोभका 'हाथ पसारना' और 'लूटना' आदि इसी ध्वनिके अंतर्गत है—"सकल रोओंसे हाथ पसार, लूटता इधर लोभ गृह द्वार।" यहाँ वाच्यार्थका पूर्णतः तिरस्कार है और लक्षण-लक्षणा द्वारा व्यंग्यार्थ ग्राह्य है—लोभका सीमातीत विस्तार व्यंग्य है।

ध्वनि-आगम--आगम (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम। (दे०) **ध्वनि परिवर्तनकी दिशाएँ**।

प्रोफेसर मेनहाफ़ द्वारा बनाया गया चित्र :



ऊपरकी कही बातें इस चित्रसे स्पष्ट की जा सकती हैं।

[चित्रमें ऊपर और नीचे तीर द्वारा वचनपरिवर्तन दिखाया गया है पर साथ ही यह भी स्पष्ट है कि वचनके परिवर्तन होनेपर संज्ञा एक वर्गसे दूसरे वर्गमें चली जाती है, अतः उसमें सभी उलटी बातें (यदि एक-वचनमें संज्ञा पुलिंग, व्यक्ति, सबल, और कर्त्ता आदि थी तो बहुवचनमें (ऊपरी तीर) स्त्रीलिंग, वस्तु, निर्बल तथा अकर्त्ता आदि) आ जाती हैं।]

ध्वनि—**वाच्यार्थ** (दे०)से अधिक चमत्कारक **व्यंग्यार्थ** (दे०)को 'ध्वनि' कहते हैं। (१) ध्वनि (sound)के लिए देखिये **ध्वनि और भाषा-ध्वनि**। (२) आनन्दवर्द्धनाचार्यने कहा है कि अर्थ या शब्द अपने अभिप्रायकी प्रधानताका परित्याग करके जिस किसी विशेष अर्थको व्यक्त करते हैं उसे **ध्वनि** कहते हैं। जिस प्रकार शरीरका सौंदर्य विभिन्न अंगोंसे स्वतंत्र होनेपर भी उन्हींके माध्यमसे प्रकाशित होता है उसी प्रकार ध्वनि भी काव्यके अंगोंसे ही व्यक्त होती है, यद्यपि उनसे स्वतंत्र रहती है। 'नंद ब्रज लीजै ठोंकि बजाय"में ध्वनि है कि 'तुम अपना ब्रज अच्छी तरह सँभालो; तुम्हें इसका गहरा लोभ है, मैं तो जाती हूँ।' **ध्वनिके भेद**—ध्वनिके दो भेद होते हैं—(१) **अभिधामूला** (२) **लक्षणामूला**।

अभिधामूला ध्वनि—जिसके मूलमें **अभिधा** (दे०) अर्थात् **वाच्यार्थ** (दे०)का संबंध हो, उसे अभिधामूला ध्वनि कहते हैं। इसमें मुख्य अर्थ अपेक्षित या विवक्षित तो रहता है किन्तु वह 'अन्यपरक' होता है। इसीलिए इसे **विवक्षितान्यपरवाच्य ध्वनि** भी कहते हैं। यह दो प्रकारकी मानी गयी है—(१) **असंलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि**। (२) **संलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि**। (१) **असंलक्ष्यक्रम व्यंग्य-ध्वनि**—जहाँ वाच्यार्थ परसे **व्यंग्यार्थ** (दे०)पर पहुँचनेका 'क्रम लक्षित नहीं होता वहाँ असंलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि होती है। रसादि ध्वनियाँ इसीके अंतर्गत हैं। रसानुभूतिमें तन्मय सहृदयको विभाव, अनुभाव, संचारी आदिके अलगाव और क्रमका बोध नहीं रह पाता—

"बहुरि बदन बिधु अंचल ढाँकी।
पिय तन चितै भौंह करि बाँकी।
खंजन मंजु तिरीछे नैननि।
निज पति कहेउ तिन्हें सिय सैननि।"

इन चौपाइयोंमें शृंगार रसकी व्यंजना किसी शब्द या अनुभाव विशेषसे न होकर पूरे प्रकरणसे हो रही है। साथ ही व्यंजनाका क्रम अलक्ष्य है। (२) **संलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि**—जहाँ अभिधा द्वारा वाच्यार्थका स्पष्ट बोध होनेपर क्रमसे व्यंगार्थ संलक्षित हो, वहाँ संलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि होती है। इसके तीन भेद हैं—(क) **शब्दशक्तिमूलक** (ख) **अर्थशक्तिमूलक** (ग) **शब्दार्थोभयशक्तिमूलक**। (क) **शब्दशक्तिमूलक संलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि**—वाच्यार्थ-बोध होनेके बाद व्यंग्यार्थका बोध जिस शब्द द्वारा होता है, उसके बोध करानेकी शक्ति

केवल उसी शब्दमें हो, पर्यायवाचीमें न हो वहीं यह ध्वनि होती है। उदाहरण--

"चिर जींवौ जोरी जुरै क्यों न सनेह गँभीर।
को घटि ये वृषभानुजा, वे हलधर के बीर।"
--बिहारी

इसमें वाच्यार्थका बोध होनेपर 'वृषभानुजा' और 'हलधर' शब्द द्वारा यह ध्वनि होती है कि वृषभ (बैल)की 'अनुजा' राधा और हलधर (बैल)के भाई कृष्णकी जोड़ी खूब बनी है। शब्दोंके पर्यायवाची रखनेसे यह व्यंजना संभव नहीं। (ख) **अर्थशक्ति-मूलक संलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि**--जहाँ शब्द-परिवर्त्तनके बाद भी-अर्थात् उन शब्दोंके पर्यायवाची शब्दोंके द्वारा भी व्यंग्यार्थका बोध होता रहे वहाँ अर्थशक्तिमूलक ध्वनि होती है। उदाहरणार्थ--"सुनि सुनि प्रीतम आलसी, धूर्त्त, सूम, धनवंत। नवल बाल हिय में हरख बाढ़त जात अनंत।" 'आलसी' पति परदेस नहीं जायगा, यही व्यंजना नायिका तत्काल ग्रहण कर लेती है। 'धूर्त्त' होनेसे यह ध्वनित है कि कोई उसे बहका नहीं सकता अर्थात् नायिकासे विमुख नहीं कर सकता। 'सूम' होनेसे व्यंजित है कि धनकी कमी नहीं होगी। यहाँ इन शब्दोंके पर्यायवाची भी ध्वनिमें समान रूपसे सहायक होंगे। इसलिए अर्थ-शक्तिमूलक ध्वनि मानी जायगी। (ग) **शब्दार्थोभय शक्तिमूलक संलक्ष्यक्रम ध्वनि**--जहाँ कुछ शब्द ऐसे हों जो पर्यायवाची शब्दोंसे अपना व्यंग्यार्थ प्रकट कर सकते हों और साथ ही कुछ ऐसे भी हों जो पर्यायवाचियोंसे व्यंग्यार्थ न प्रकट कर सकते हों, और व्यंग्यार्थ-बोधमें दोनोंकी अपेक्षा हो वहाँ यह ध्वनि होती है। उदाहरणार्थ यह दोहा लीजिये--

"चरन धरत चिंता करत भोर न भावे सोर।
सुबरन यों ढूँढ़त फिरत अर्थ चोर चहुँ ओर।"

इसमें 'अर्थ चोर'का प्रयोग 'धनका चोर' और 'भावापहरण करनेवाला कवि'के अर्थमें एक साथ ही कर दिया गया है। दोनोंकी चेष्टाएँ समान हैं, यह व्यंग्य है। 'चरन', 'भोर' और 'सुबरन' शब्द भी श्लिष्ट हैं। धन चुरानेवाले चोर और दूसरे कविके भावोंको चुरानेवाले कविके कृत्योंमें इन्हीं शब्दोंद्वारा साम्य स्थापित किया गया है। इन शब्दोंके पर्यायवाची उक्त प्रयोजनको सिद्ध नहीं कर सकते। दोहेके शेष शब्द जैसे 'धरत', 'करत' आदि पर्यायवाचियोंसे भी काम चला सकते हैं।

लक्षणामूला ध्वनि--जिसके मूलमें लक्षणा (दे०)हो उसे लक्षणामूला ध्वनि कहते हैं। इसमें वाच्यार्थ अपेक्षित नहीं होता। इसलिए इसे अविवक्षितवाच्य ध्वनि भी कहते हैं। **उपादान लक्षणा** (दे०) और **लक्षण-लक्षणा** (दे०)के आधारपर यह दो भागोंमें विभक्त हो जाती है। एक है **अर्थांतर संक्रमित वाच्य-ध्वनि** और दूसरी है **अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य-ध्वनि**। (१) **अर्थांतर संक्रमित वाच्य-ध्वनि**--जहाँ मुख्यार्थका बोध होनेपर वाचक शब्द या वाक्यका वाच्यार्थ लक्षणा द्वारा अपने दूसरे अर्थमें संक्रमण कर जाय यानी परिवर्त्तित हो जाय वहाँ अर्थांतर संक्रमित वाच्य-ध्वनि होती है। जैसे कौआ कौआ है और कोकिल कोकिल। इस वाक्यमें दूसरे 'कौआ' और 'कोकिल' शब्द वाच्यार्थका बोध कराते हुए अन्य अर्थमें संक्रमित होकर इस तथ्यकी व्यंजना कर देते हैं कि एकका स्वर कठोर है और दूसरेका कोमल। (२) **अत्यंत तिरस्कृत वाच्य-ध्वनि**--जहाँ मुख्यार्थका सर्वांशतः तिरस्कार हो जाय (केवल अर्थांतरमें संक्रमण मात्र न हो) वहाँ अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य-ध्वनि होती है। 'पंत'की निम्नांकित पंक्तियोंमें लोभका 'हाथ पसारना' और 'लूटना' आदि इसी ध्वनिके अंतर्गत है--"सकल रोओंसे हाथ पसार, लूटता इधर लोभ गृह द्वार।" यहाँ वाच्यार्थका पूर्णतः तिरस्कार है और लक्षण-लक्षणा द्वारा व्यंग्यार्थ ग्राह्य है--लोभका सीमातीत विस्तार व्यंग्य है।

ध्वनि-आगम--**आगम** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम। (दे०) **ध्वनि परिवर्तनकी दिशाएँ**।

कहा जा सकता है कि अमुक भाषामें इतने ध्वनि-ग्राम और इतनी संध्वनियाँ हैं, किन्तु बिना भाषा विशेषके संदर्भके उनका अस्तित्व नहीं। (२) भाषामें प्रयोग संध्वनिका होता है। अतः यथार्थ सत्ता उसीकी है। ध्वनि-ग्राम तो मिलती-जुलती संध्वनियोंके परिवार या समूहका सामूहिक नाम मात्र है, अर्थात् काल्पनिक है, भाषामें उसका प्रयोग नहीं होता। (३) किसी भाषामें एक ध्वनि-ग्रामकी संध्वनियाँ आपसमें **परिपूरक वितरण** (दे०)में होती हैं, अर्थात् एक संध्वनि जिस विशेष परिस्थितिमें आती है, उसमें दूसरी कोई संध्वनि नहीं आती। (दे०) **ध्वनि-ग्राम विज्ञान**।

ध्वनिगुण (sound quality)—भाषाका आधार 'ध्वनि' है और 'ध्वनि'से प्रायः 'स्वर' और 'व्यंजन'का आशय लिया जाता है, किन्तु भाषा केवल स्वर और व्यंजनका ही योग नहीं है। इन दोनोंके अतिरिक्त **मात्रा, सुर** और **बलाघात** भी उनके साथ काम करते हैं। इन तीनोंका अलग अस्तित्व नहीं है। ये स्वर-व्यंजनपर ही आधारित हैं, यद्यपि इनके कारण स्वर व्यंजनकी प्रकृति या गुणमें अन्तर आता रहता है। इसीलिए इन्हें **ध्वनिगुण** कहा गया है। **सुर** और **बलाघात** दोनोंको एक नाम 'आघात' (accent)से भी अभिहित करते हैं। ध्वनि-गुणके अन्तर्गत प्रमुखतः ये ही दो (मात्रा और आघात) आते हैं। कुछ लोग **ध्वनि-गुण**को **ध्वनि-लक्षण** (sound attributes) भी कहते हैं। आंग्ल ध्वनिशास्त्रियोंने इसके लिए **संध्यात्मक तत्त्व, रागात्मक तत्त्व** या **रागीय तत्त्व** (prosodic feature) तथा अमेरिकनोंने **अखंड ध्वनियाँ** या **खंडेतर ध्वनियाँ** (supra segmental sounds) भी प्रयुक्त किया है। कुछ अन्य विद्वानोंने इन्हें **गौणध्वनिग्राम** (secondary phoneme या **प्रेसडीम** prosodeme) कहा है। 'प्रोसोदिया' शब्दका प्रयोग यूनानी आचार्य हेरोदिएनुसने 'बलाघात'के लिए किया था। उसी आधारपर प्रो० फर्थ (१९४८ के philological society के कार्य-विवरणमें sounds and prosodies शीर्षक लेख) आदिने इसे भाषा-विज्ञानमें प्रयुक्त किया है। ये तत्त्व अक्षरमें होनेपर **अक्षरगत**, पदमें होनेपर **पदगत** और वाक्यमें होनेपर **वाक्यगत** कहे जा सकते हैं। (दे०) **आघात, मात्रा**।

ध्वनिग्राम (phoneme)—भाषाविशेषकी एक ध्वनि इकाई। अनेक संध्वनियोंका यह एक सामूहिक नाम है। (दे०) **ध्वनि और भाषा-ध्वनि** तथा **ध्वनिग्राम-विज्ञान**।

ध्वनिग्राम रेखा (isophonemic line)—नक्शेमें बनी ऐसी रेखा, जो किसी एक ध्वनिग्रामकी प्रतीक हो तथा जो ऐसे स्थानोंसे होकर जाय जहाँकी भाषामें उस ध्वनिग्रामका प्रयोग होता हो।

ध्वनि-ग्राम-विज्ञान (phonemics)—**ध्वनि विज्ञान** (दे०)की एक शाखा। इसमें **ध्वनिग्राम** (दे० **ध्वनि तथा भाषा ध्वनि**)का अध्ययन किया जाता है। इसके सिद्धांतोंके आधारपर किसी भी भाषाके ध्वनिग्राम तथा उनकी संध्वनियोंका पता लगाते हैं। **फ़ोनीम** या **ध्वनिग्राम** (phoneme) मूलतः कोई नयी चीज़ नहीं है। इसे उतना ही पुराना माना जाना चाहिये, जितनी पुरानी **वर्ण लिपि** (alphabetic writing) है। इसका प्रारम्भ एक प्रकारसे १२वीं सदीसे माना जा सकता है। किन्तु यह शब्द (फ़ोनीम) इतना पुराना नहीं है। मूलतः 'फ़ोनीम' शब्दके बनानेवाले हैवेट हैं। उन्होंने भाषा-ध्वनिके अर्थमें १८७६के लगभग इसका प्रयोग किया था। आजके अर्थके समीपके अर्थमें इसका प्रयोग तीन ही वर्ष बाद १८७९में क्रुशेव्स्की (kruszewski)ने अपने एक लेखमें किया। यों इस शब्दमें भरे विचारोंसे स्वीट और पालपासी भी उन्हीं दिनों पूर्णतः परिचित थे जैसा कि उनके **स्थूल-लेखन** (दे०) और **सूक्ष्म-लेखन** (दे०)के सिद्धान्तोंसे

स्पष्ट होता है। इस सदीके आरम्भमें इस क्षेत्रमें काम करनेवाले 'सास्यूर'का भी इसे आगे बढ़ानेमें योग है किन्तु अधिक उल्लेख्य योग अमेरिकाके प्रसिद्ध भाषा-विद् सपीरका है। १९२१के कुछ पूर्व उन्होंने काम किया। और आगे चलकर ध्वनि-ग्राम-विज्ञानके विश्वमें चार केन्द्र विकसित हुए—प्राग (१९२८), लन्दन (१९२९), अमेरिका, कोपेनहैगेन (१९३५)। इस क्षेत्रमें हेमस्लेव, ब्लूमफ़ील्ड, ट्रूबेज़कॉय, डैनियलजोन्स, रोमन याकोबसन, पाइक आदिके नाम उल्लेख्य हैं। पाइकने तो इस विषयके ज्ञान और अभ्यासके लिए 'फ़ोनीमिक्स' नामकी एक स्वतन्त्र पुस्तक भी लिखी है। इस पुस्तककी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें अभ्यासके लिए जो नमूने दिये गये हैं, कल्पित हैं। इस प्रकारके अभ्यासोंके लिएं कल्पित नमूने अधिक सुविधाजनक होते हैं, क्योंकि उन्हें आवश्यकतानुसार सीमित किया जा सकता है। पाइक इन उदाहरणोंको समाहित करनेवाली कल्पित भाषाको 'कलबा' नाम दिया है। वस्तुतः यह नाम क ल ब ध्वनिके बार-बार आनेके कारण पहले उसके विद्यार्थियों द्वारा प्रयुक्त हुआ। ध्वनि-ग्राम-विज्ञानका आधार ध्वनि-विज्ञान है। ध्वनि-विज्ञान सामग्री प्रस्तुत करता है और ध्वनि-ग्राम विज्ञान उसके आधारपर विश्लेषण करके अपने निष्कर्ष सामने रखता है। इसीलिए ध्वनि-विज्ञानका पूर्ण ज्ञान बहुत आवश्यक है। इसमें सबसे पहले जिस भाषाका अध्ययन-विश्लेषण करना होता है उससे शब्दोंको एकत्र करते हैं। मृतभाषाके शब्द तो उसके प्राप्त लिखित साहित्यसे एकत्र किये जाते हैं किन्तु जीवित भाषाके शब्द भाषाको बोलनेवाले व्यक्तिके मुँहसे सुनकर। जिससे सुनकर सामग्री एकत्र करते हैं, उसके लिए **सूचक** (informant) नामका प्रयोग किया जाता है। किसी ऐसे व्यक्तिको सूचक बनाना चाहिये जो उस भाषाको अधिकसे अधिक प्रकृत रूपमें बोल सके तथा जिसपर किसी भी प्रकारका बाहरी प्रभाव न हो। सामग्री अर्थात् उस भाषाके शब्दोंको सामान्य लिपिमें न लिखकर **ध्वन्यात्मक लिपि** (phonetic alphabet)में अधिकसे अधिक सूक्ष्मतासे **सूक्ष्म लेखन** (narrow transcription)के सिद्धान्तोंके अनुसार लिखना चाहिये। अर्थात् केवल यही नहीं लिखा जाना चाहिये कि उस शब्दमें क्, ख् आदि कौनसे व्यंजन और अ, आ आदि कौनसे स्वर हैं, अपितु इस बातका भी उल्लेख होना चाहिये कि यदि कोई स्वर ध्वनि है तो वह (१) सामान्य या जपित (अघोष), (२) प्रकृत रूपसे ह्रस्व या दीर्घ, (३) सामान्य रूपसे संवृत या विवृत, (४) प्रकृत रूपसे अग्र, पश्च या मध्य, (५) अनुनासिक, (६) मर्मर, (७) विशेष सुर या बलाघातसे युक्त, (८) अनाक्षरिक आदि तो नहीं है, यदि है तो कितनी ? इसी प्रकार यदि व्यंजन है तो (१) स्थान या प्रयत्नकी दृष्टिसे अपने प्रकृत रूपसे भिन्न या (२) आक्षरिक आदि तो नहीं है। स्पर्श व्यंजन है तो (३) अस्फोटित है या नहीं; पूर्ण स्पर्श है या अपूर्ण। इतनी सूक्ष्मतासे अंकन कर लेनेके बाद संकलित सारे शब्दोंसे उनमें प्रयुक्त ध्वनियोंका चार्ट बनाते हैं। स्वरोंका चार्ट अग्र, पश्च, मध्य, वृत्तमुखी-अवृत्तमुखी, विवृत-संवृत, ह्रस्व-दीर्घ आदि आधारोंपर बनता है, और व्यंजनका चार्ट स्थान और प्रयत्नके आधारोंपर। चार्टके लिए (दे० **ध्वन्यात्मक प्रतिलेखन**। यह ध्यान देने योग्य है कि यह चार्ट उन सारी ध्वनियोंका होगा जो उस भाषामें प्रयुक्त होती हैं। कहना चाहें तो कह सकते हैं कि ये सारी एक प्रकारसे संध्वनियाँ (दे० **संध्वनि**) हैं। संध्वनियों (allophones)के प्राप्त हो जानेपर हमें यह देखना होगा कि इनमें कितने ध्वनिग्राम हैं और

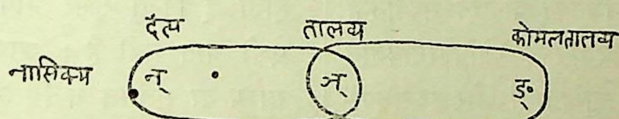
कितनी संध्वनियाँ। यह ज्ञात करनेके लिए इस चार्टको एक ओरसे देखते हैं। जो ध्वनियाँ चार्टमें पास-पास हैं, या जिनमें स्थान या प्रयत्न आदिकी दृष्टिसे कुछ समानताएँ* हैं या जो मिलती-जुलती हैं, उनके बारेमें यह सन्देह होना स्वाभाविक है कि ये दोनों कहीं एक ध्वनिग्रामके अन्तर्गत आनेवाली संध्वनियाँ तो नहीं हैं। जिन-जिन दो ध्वनियोंके बारेमें ऐसा सन्देह होता है उन्हें **संदिग्ध या सन्देहास्पद युग्म** (suspicious pair) कहते हैं। ये ऐसे जोड़े हैं जिनके बारेमें सन्देह है। ऐसी दोनों ध्वनियोंको अलग लिख लेते हैं और उन सारे शब्दोंकी परीक्षा करते हैं, जिनमें वे दोनों ध्वनियाँ आयी हों। परीक्षा करते समय कई प्रकारकी स्थितियाँ मिल सकती हैं। (१) कभी तो ऐसा होता है कि दोनोंके **न्यूनतम-विरोधी युग्म** (minimal pair)—अर्थात् शब्दोंके ऐसे जोड़े जिनमें ध्वन्यात्मक अन्तर केवल उन दोनों ध्वनियोंके कारण ही होता है और जिनके अर्थ भिन्न होते हैं—मिल जाते हैं। ऐसी स्थितिमें यह मान लिया जाता है कि दोनोंमें **विरोध** (contrast) है, अर्थात् वे दो अलग ध्वनिग्राम हैं, एक ध्वनिग्रामके अन्तर्गत आनेवाली दो संध्वनियाँ नहीं। उदाहरणार्थ मान लिया जाय कि संदिग्ध युग्म 'म' और 'न' का है और शब्दोंमें हमें 'काम' और 'कान' मिले। इन दोनोंमें ध्वनिका अन्तर केवल 'म' 'न' से ही है, और अर्थ एक नहीं है, अतः ये न्यूनतम विरोधी युग्म हैं। इसका आशय यह हुआ कि जिस भाषामें ये आये हैं, वहाँ दोनों अलग-अलग ध्वनिग्राम हैं। इन्हीं दोनोंके कारण उन शब्दोंके दो अर्थ हैं। इसी आधारपर कहा जाता है कि ध्वनिग्राम अर्थभेदक होते हैं। एक ध्वनिग्रामकी दो संध्वनियाँ अर्थभेदक नहीं होतीं। (२) कभी ऐसा होता है कि उन दोनों संदिग्ध युग्मोंके उपर्युक्त प्रकारके न्यूनतम विरोधी युग्म नहीं मिलते। न मिलनेपर उन सारे शब्दोंमें दोनों ध्वनियोंकी स्थितिका अध्ययन किया जाता है। इसमें कई बातें देखी जाती हैं: (क) दोनों एकाक्षरी शब्दोंमें आते हैं या अधिक अक्षरोंके। यदि अधिक अक्षरोंवालेमें आते हैं तो पहलेमें या दूसरे आदिमें। अर्थात् अक्षरकी दृष्टिसे उनकी स्थिति क्या है? (ख) शब्दोंके आदि, मध्य या अन्तमें आनेकी दृष्टिसे उसमें कोई विशेष प्रवृत्ति है या नहीं? (ग) बलाघात या सुरसे उनके वातावरण किसी रूपमें संबद्ध तो नहीं हैं? (घ) विशेष प्रकारकी ध्वनियों (घोष, अघोष, महाप्राण, अल्पप्राण, स्वर, व्यंजन, स्पर्श, संघर्षी, लुंठित आदि (प्रयत्नपर आधारित), ओष्ठ, तालव्य आदि (स्थानपर आधारित) तथा अनुनासिक-निरनुनासिक आदिसे उनकी स्थिति किसी रूपमें संयमित तो नहीं है? अर्थात् इनमेंसे किसी विशेष प्रकारकी ध्वनि उनमें किसीके आगे या पीछे या अक्षरमें तो नहीं आती। इन दृष्टियोंसे देखनेपर या तो ऐसा होगा कि (अ) उक्त दोनों ध्वनियाँ एक प्रकारकी स्थिति या वातावरणमें भी आती होंगी। यदि ऐसा हुआ तो उन्हें विरोधी माना जायगा और दोनोंको अलग-अलग ध्वनिग्राम माना जायगा। (आ) या फिर ऐसा होगा कि एक ध्वनि किसी एक प्रकारके वातावरण या किसी एक प्रकारकी स्थितिमें आती होगी और दूसरी किसी दूसरी प्रकारकी स्थिति या वातावरणमें। अर्थात् जिस स्थितिमें पहली आयेगी, उस स्थितिमें दूसरी नहीं और जिस स्थितिमें दूसरी आयेगी वहाँ पहली नहीं। एक परिवारके दो सदस्योंकी तरह जैसे दोनों ध्वनियोंने आपसमें तै कर लिया हो कि अमुक-अमुक

*कभी-कभी स्थान, प्रयत्न दोनों दृष्टियोंसे असम्बद्ध ध्वनियाँ भी परिपूरक वितरणमें देखी जाती हैं, यद्यपि ऐसा कम होता है।

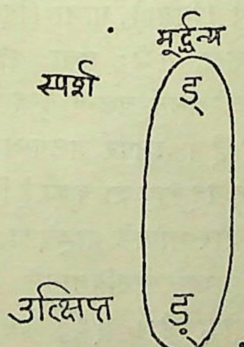
स्थानोंपर एक काम करेगा और शेष अमुक-अमुक स्थानोंपर दूसरा। उदाहरणार्थ हम मान लें कि किसी भाषामें 'आप्', रूप्, पढ़ और अपढ़, केवल ये चार शब्द ही हैं। इनके चार्ट बनानेपर देखा गया कि 'प' दो हैं एक स्फोटित और दूसरा अस्फोटित। दोनों-को संदिग्ध युग्म मानकर देखा गया तो पता चला कि अस्फोटित 'प' शब्दांतमें (आप्, रूप्) आता है और स्फोटित 'प' अन्यत्र। ऐसी स्थितिको **परिपूरक वितरण** (complementary distribution) कहते हैं। वितरणमें एक दूसरेका पूरक है। दोनोंके स्थान अलग बँटे हुए हैं। एकके स्थानपर दूसरी नहीं आ सकती; भाषा दोनोंको मिलाकर पूर्ण है। इस प्रकार दोनोंमें विरोध नहीं है।

ऐसी दो या अधिक ध्वनियाँ जिनका आपसमें विरोध न हो और जो 'परिपूरक वितरण'में हों संध्वनियाँ मानी जाती हैं।

इसी प्रकार जिन-जिन दो ध्वनियोंमें सन्देह हो उनके बारेमें विचार करना पड़ता है। अभ्यस्त ध्वनिग्रामविज्ञानज्ञ तो प्रायः सरलतासे संदिग्ध युग्मोंको पहचान लेते हैं। नये व्यक्तियोंको प्रायः सभी ध्वनियोंको, जिनमें थोड़ी भी सम्बन्धकी गन्ध हो देख लेनी चाहिये। एक ही ध्वनिका संदिग्ध युग्म एकसे अधिक ध्वनियोंके साथ बन सकता है, वैसी स्थितिमें हर ध्वनिके साथ उसे अलग-अलग देखना पड़ता है। उदाहरणार्थ :



इस प्रकार घेरकर चार्टमें संदिग्ध युग्म बनाते हैं। यहाँ दो सन्दिग्ध युग्म हैं 'न ञ' और 'ञ ङ'। 'न ङ'का भी संदिग्ध युग्म बनाया जा सकता है। सन्दिग्ध युग्म नीचे-ऊपर भी बनते हैं--



इस प्रकारकी सारी सम्भावनाओंकी परीक्षा करनेपर मान लिया जाय कि किसी भाषामें प्राप्त ६० प्रयुक्त ध्वनियोंमें (१) तीन संध्वनियोंका एक वर्ग बना अर्थात् वे तीनों एक ध्वनिग्रामकी संध्वनियाँ हैं, तो उनमें सबसे अधिक स्थानोंपर आनेवाली ध्वनिको ध्वनिग्राम मानेंगे और उसके अंतर्गत उन तीनोंको संध्वनि मानेंगे। ध्यान देनेकी बात है कि तीनोंमें प्रमुखको तो ध्वनि-ग्राम मान लिया किन्तु साथ ही वह संध्वनियोंमें भी रहेगा। ऊपरके न वाले उदाहरणको लें और मान लें कि तीनों संध्वनियाँ सिद्ध हुईं तो उन्हें यों दिखायेंगे--

।न्। [न्] [ङ] [ञ्]

अर्थात् ध्वनिग्रामको रेखाओंके भीतर तथा संध्वनियोंको कोष्ठकोंके भीतर दिखाते हैं। इसके साथ ही इस बातका भी विवरण देना होता है कि इन तीनों संध्वनियोंके आनेके अलग-अलग वातावरण क्या हैं, जिनके कारण ये परिपूरक वितरणमें हैं।

जैसे।ड। [ड] शब्दारंभमें--डोरी
संयुक्त व्यंजन रूपमें--डण्डा
अंग्रेजी शब्दमें--रेडियो
(ड़) अन्यत्र (लड़ना, पड़)

थोड़ी देरके लिए मान लें कि एक ही ध्वनिके विभिन्न रूप संध्वनियोंके रूपमें मिले, जैसे ल[1] (सामान्य) ल[2] (अग्रोन्मुख) ल[3] (पश्चोन्मुख) तो ल को ध्वनिग्राम मानेंगे और इन तीनोंको संध्वनियाँ--

।ल्। [ल्^{१}] [ल्^{२}] [ल्^{३}]

यदि कोई ध्वनि किसीके साथ संध्वनि रूप-में नहीं आती तो जैसा कि कहा जा चुका है उसे ध्वनिग्राम मानेंगे किन्तु वैज्ञानिक दृष्टिसे उसके अन्तर्गत भी उसी एकको संध्वनिके रूपमें रखना चाहिये--

।र्। [र्]

क्योंकि उस भाषाके ध्वनिग्रामोंकी गणना-में तो 'र' ध्वनि आयेगी ही, किन्तु साथ ही संध्वनिके रूपमें भी र् ध्वनि आयेगी, क्योंकि भाषामें प्रयोग संध्वनिका ही होता है। कुछ लोग इस रूपमें इसे स्वीकार नहीं करते किन्तु वैज्ञानिकता एवं व्यवस्थित पद्धतिकी दृष्टिसे यह सर्वथा उचित है। यों किसी भी भाषामें शायद ही ऐसा कोई ध्वनिग्राम हो, जिसकी दो-तीन संध्वनियाँ न हों। इस पद्धतिपर ध्वनिग्रामविज्ञान किसी भाषाके ध्वनिग्रामों और संध्वनियों-को अलग करता है। यदि उस भाषाके लिए लिपिकी आवश्यकता हो तो केवल ध्वनिग्रामोंके लिए लिपि-चिह्न बनते हैं और वे ही संध्वनियोंके स्थानपर भी आते हैं। उदाहरणार्थ हिन्दीमें ल की ४-५ संध्वनियाँ हैं, किन्तु सभीके स्थानपर ल लिखते हैं। निष्कर्षतः ध्वनिग्रामके विषयमें ये ३-४ बातें प्रमुख रूपसे उल्लेख्य हैं: (१) ध्वनि-ग्राम किसी भाषाकी लघुतम अखंड्य इकाई है (अ् क् आदि)। (२) ध्वनिग्राम अर्थको बदलनेकी शक्ति रखते हैं, जैसे नाली लाली। संध्वनियोंमें अर्थ बदलनेकी शक्ति नहीं होती। लालीके प्रथम 'ल'को यदि इस रूपमें न बोलकर थोड़ा और आगे, या पीछे करके बोलें--अर्थात् 'लाली'के प्रथम संध्वनि-'ल'के स्थानपर ल की किसी अन्य संध्वनिका प्रयोग करें--तो सुननेमें अस्वा-भाविक भले लगे, अर्थमें कोई परिवर्तन नहीं होगा। (३) ध्वनिग्राम आसपासकी ध्वनियोंसे प्रभावित होते हैं। 'ल' ध्वनिग्रामकाही उदा--हरण लें, यह उ (लू) के साथ कुछ आगे चला जाता है और ट (वाल्टी) के साथ मूर्द्धन्य बन जाता है। इसी प्रकार प्रायः सभी ध्वनिग्राम आस-पासकी ध्वनियोंसे प्रभावित होते हैं और अधिकांश संध्वनियाँ इन प्रभावोंके कारण ही आपसमें भिन्न होती हैं। (४) प्रायः ध्वनि-ग्रामोंमें एक व्यवस्था होती है या भाषामें ध्वन्यात्मक संतुलन होता है। मान लें किसी भाषामें प ब, त द, ट ड और क ध्वनिग्राम हैं तो संभावना इस बातकी है कि प्रथम तीन युग्मोंमें अघोष और घोष दोनों हैं, अतः क के साथ भी 'ग' (घोष) होगा। यदि प्राप्त ध्वनिग्रामोंमें ऐसी कमी दिखाई पड़े तो फिरसे सूचककी सहायतासे सामग्री-की परीक्षा करनी चाहिये। यों डॉ० ग्लीसन (व्यक्तिगत बातचीतके सिलसिलेमें) का कहना है कि ऐसा साम्य या संतुलन प्रायः होता है किन्तु सभी भाषाओंमें होता हो ऐसी बात नहीं है। आशय यह है कि साम्य या संतुलन न मिलनेपर फिरसे देख लेना चाहिये। (५) ध्वनिग्राम केवल स्वर और व्यंजन ही नहीं होते अपितु अनुनासि-कता (सँवार, सवार; आँत, आत; आँधी, आधी; गिराँ, गिरा; बिंधना, बिधना; बेंदी, बेदी), सुर (चीनीमें मा = घोड़ा, म्̣ा = एक कपड़ा, (बलाघात अंग्रेजीमें present (संज्ञा) present (क्रिया), मात्रा (हिन्दीमें पका, पक्का; सटा, सट्टा; बचा, बच्चा), तथा संगम (हिन्दी चलन, चल-न, तुम्हारे, तुम्-हारे) भी होते हैं। इनपर अलग-अलग प्रकाश डालते हुए यह कहा जा चुका है कि ये सार्थक होते हैं, और भाषाके बाह्यका हर सार्थक उपकरण ध्वनिग्रामविज्ञानमें विवेचनका विषय होता है। (६) कभी-कभी दो ध्वनियाँ एक दूसरेके स्थानपर बिना अर्थ-परिवर्तन किये आती रहती हैं। जैसे हिन्दीकी लोक बोलियोंमें क़, क या ग़, ग आदि 'कहना' और 'क़हना' कहनेसे या 'क़ानून' 'कानून' कहनेसे कोई अन्तर नहीं पड़ता। इसे **स्वच्छन्द परिवर्तन** (free variation) कहते हैं। यह क, क़ वाली बात उर्दू या परिनिष्ठित हिंदीमें ठीक नहीं

मानी जा सकती । वहाँ क, क़, ख़, ख, ग़, ग आदि ध्वनिग्राम हैं क्योंकि उनके न्यूनतम विरोधी युग्म (ताक, ताक़, खैर, ख़ैर, बाग, बाग़, आदि) मिलते हैं । इसे ध्वनिग्रामिकी, ध्वनिश्रेणीविज्ञान, ध्वनितत्त्वविज्ञान, ध्वनि-मात्रविज्ञान, स्वानिमी, स्वनग्रामिकी, वर्ण-विज्ञान और लिपिशास्त्र भी कहा गया है । अन्तिम नाम उचित नहीं कहा जा सकता, क्योंकि लिपिसे इसका सीधा सम्बन्ध बिल्कुल नहीं है । यूरोपमें इसके कई अन्य नाम हैं । प्राग स्कूलके भाषा-विज्ञानवेत्ता तथा कुछ अमेरिकन इसे phonology कहते हैं । कुछ आँग्ल भाषाशास्त्री इसे phonetics-में ही अन्तर्भूत मानते हैं । कुछ विद्वान् इसे functional phonetics कहते हैं । **फोनोटैक्टिक्स** (phonotactis) फ़ोने-मिक्सकी एक शाखा है तथा **ग्लासीमैटिक्स** (glossematics) उसका डैनिश विद्वान् हेम्स्लेव (hjelmslev) द्वारा प्रयुक्त एक विशेष प्रकार है, जिसका आधार गणित (प्रमुखतः बीजगणित) है और जो बहुत जटिल और पेचीदा है ।

ध्वनिग्रामिकी––**ध्वनिग्राम विज्ञान** (दे०) का एक नाम ।

ध्वनिग्रामीय लेखन (phonemic trans-cription)––लिखनेमें **संध्वनियों** (दे०)-का सूक्ष्मतापूर्वक अंकन न करके केवल **ध्वनिग्रामों** (दे०) का अंकन करना ।

ध्वनिग्रामीय स्कूल (phoneme school) ––(दे०) **अमेरिकन केन्द्र** ।

ध्वनि-जात––**ध्वनि-प्रक्रिया-विज्ञान** (दे०) का एक अन्य नाम ।

ध्वनि-तंत्री––**स्वर-तंत्री** (दे०) का एक अन्य नाम ।

ध्वनि-तत्त्व––(१) **ध्वनि-विज्ञान** (दे०) का एक अन्य नाम । (२) **ध्वनिग्राम** (दे०)-का एक अन्य नाम ।

ध्वनितत्त्व विज्ञान––**ध्वनि-ग्राम-विज्ञान** (दे०)-का एक अन्य नाम ।

ध्वनि-तरंग (sound wave)––(दे०) **ध्वनिश्रवण** ।

ध्वनि-द्विरावृत्ति (reduplicating)एक प्रकारका **संबंधतत्त्व** (दे०) ।

ध्वनि-नियम (phonetic law)––ध्वनि सम्बन्धी परिबर्तनोंमेंसे बहुतसे परिवर्तन (दे० **ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ**) तो किसी विशेष नियमानुसार नहीं चलते किंतु अन्य कुछ ऐसे भी होते हैं जो अंशतः या पूर्णतः नियमोंपर आधारित होते हैं । यहाँ नियमोंका आशय यह है कि उनके घटित होनेकी परिस्थितियोंमें बहुधा एक-रूपता रहती है । उस एकरूपताको ही एक नियम कहा जाने लगा है । **नियमकी परि-भाषा**––यहाँ प्रश्न यह उठता है कि 'नियम' कहते किसे हैं । नियमका अधिकतर प्रयोग प्राकृतिक नियमके लिए होता है, जो किसी विशेष वस्तु आदिके सम्बन्धमें लागू होते हैं । यदि विशेष परिस्थितियोंमें पड़कर कोई क्रिया समय और स्थानकी सीमा तोड़कर सर्वदा घटित हुआ करती है, तो उसे प्रायः नियमकी संज्ञा देते हैं । जैसे कोई संख्या एकसे कमकी संख्यासे गुणा करने-पर घटती और अधिकसे गुणा करनेपर बढ़ती है । **प्राकृतिक नियम और भाषा सम्बन्धी नियममें अन्तर**––(१) प्राकृतिक नियम किसी काल विशेषकी अपेक्षा नहीं रखते । चार और चार जोड़नेसे सर्वदा आठ होता है, होता था, और आगे भी होगा, पर भाषाके ध्वनि-नियममें यह बात नहीं है । भारतीय आर्यभाषाके इतिहासमें प्राचीन कालसे मध्यमें आनेमें जो परिवर्तन घटित हुए हैं, मध्यसे आधुनिक कालमें आनेमें नहीं हुए हैं । भविष्यके लिए भी हम निश्चित नहीं हैं कि वे परिवर्तन घटित होंगे या नहीं । (२) प्राकृतिक नियम कालकी भाँति ही दशा या स्थानकी भी अपेक्षा नहीं रखते । न्यूटनका नियम प्रायः सर्वत्र लागू होता है पर ध्वनि-नियमकी इस सम्बन्धमें भी सीमाएँ हैं, जिनको वह लाँघ नहीं सकता । (३) प्राकृतिक नियम अन्धेकी

भाँति काम करते हैं और कोई अपवाद नहीं छोड़ते पर इसके विरुद्ध ध्वनिनियम अपवाद छोड़ते चलते हैं। संस्कृत 'नृत्य'का 'नाच' हो गया, किन्तु भृत्यका विकास 'भाच' नहीं हुआ। **ध्वनि-नियम नामकी अशुद्धि**---ऊपर प्राकृतिक नियम और ध्वनि-नियमके अन्तरपर विचार करते समय हम देख चुके हैं कि नियमकी स्थिरता ध्वनि-नियमोंमें नहीं पायी जाती। इसीलिए कुछ विद्वानोंका मत है, कि ध्वनि-नियम नाम ही भ्रामक और अशुद्ध है। इसे **ध्वनि-प्रवृत्ति** (phonetic tendency) या ध्वनि फ़ारमूला कहना उचित समझते हैं। **ध्वनिनियम और ध्वनि-प्रवृत्ति**---दूसरी ओर कुछ अन्य विद्वान् ध्वनि-नियम और ध्वनि-प्रवृत्तिमें अन्तर मानते हैं। उनके अनुसार जो ध्वनि-विकार या ध्वनि-परिवर्तन आरम्भ होता है पर थोड़ी दूर चलनेके बाद मर जाता है और सफल नहीं हो पाता, ध्वनि-प्रवृत्ति है, किन्तु ऐसे ध्वनि-परिवर्तन जो धीरे-धीरे पूरी सफलता प्राप्त कर लेते हैं, अपने घटित होते रहनेके कालमें (अर्थात् पूर्ण-रूपेण हो जानेके पूर्व) ध्वनि-प्रवृत्ति कहे जाते हैं पर पूर्ण हो जानेपर उन्हें ध्वनि-नियम कहेंगे। इसी कारण यह भी कहा गया है कि ध्वनि-नियम वर्तमान या भविष्यके सम्बन्धमें न होकर केवल भूतके सम्बन्धमें होते हैं। **ध्वनि-नियममें अपवाद और उनके कारण**---जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है ध्वनि-नियमोंके अपवाद भी मिलते हैं। इन अपवादोंके चार कारण हो सकते हैं। (१) सबसे बड़ा कारण तो सादृश्य है। सादृश्यके कारण नियमानुसार दूसरा रूप धारण करनेवाला शब्द कुछ और हो जाता है। (२) दूसरा कारण है अन्य भाषासे शब्दोंका उधार आना। बहुधा हालके आये विदेशी शब्दोंमें ध्वनि-नियम लागू नहीं होते। (३) अपवाद मिलनेका तीसरा कारण यह होता है कि कभी-कभी हम अपनी ही भाषाके उस कालसे शब्द उधार ले लेते हैं जब वह नियम विशेष लागू नहीं हुआ रहता। (४) चौथा कारण यह भी हो सकता है कि कभी-कभी अन्य भाषाका मिलता-जुलता शब्द आकर अधिकार जमा लेता है और पुराने शब्दका ही रूप ज्ञात होता है तो उसे भी अपवाद मानना पड़ता है। उदाहरणार्थ ध्वनि-नियमके अनुसार 'कोट्पाल'को 'कोट्टपाल'और फिर 'कोटाल' होना चाहिये, जैसा कि बँगलामें प्रचलित भी है, पर बीचमें फ़ारसी शब्द 'कोतवाल' मुसलमानोंके साथ आ गया और उसने हिन्दीमें आधिपत्य जमा लिया। अब आज साधारण दृष्टिसे देखनेपर कोट्टपालका विकार कोट्टपाल = कोट्टाल = कोतवाल लगता है, पर ऐसे उदाहरण बहुत नहीं मिलते, अतः इसे अपवाद कहा जाता है। इसी प्रकार कितने ही अन्य मानसिक कारण भी सम्भव हैं। **ध्वनि-नियमकी वैज्ञानिक परिभाषा---किसी विशिष्ट भाषाकी कुछ विशिष्ट ध्वनियोंमें, किसी विशिष्ट काल और कुछ विशिष्ट दशाओंमें हुए नियमित परिवर्तन या विकारको उस भाषाका ध्वनि-नियम कहते हैं**। इस परिभाषाके **चार अंग** हैं। (१) ध्वनि-नियम किसी भाषा विशेषका होता है। एक भाषाके ध्वनि-नियमको दूसरीपर नहीं लागू कर सकते। अंग्रेज़ीके अधिकतर शब्दोंके अन्तिम आर (R)का उच्चारण नहीं किया जाता। अर्थात् फ़ादर (father)का उच्चारण फ़ादअ होता है, पर हिन्दीमें इसे लागू करके हम अम्बरको अम्बअ नहीं कह सकते। (२) एक भाषाकी भी सभी ध्वनियोंपर वह नियम न लागू होकर कुछ विशिष्ट ध्वनियों या ध्वनि-वर्गपर ही लागू होता है। जैसे उपर्युक्त उदाहरणमें (R)को अनुच्चरित होते देख हम अन्तिम (N)को भी अनुच्चरित करके मैन (man)को मैअ नहीं कह सकते और न गन (gun)को गअ ही

कह सकते हैं। (३) ध्वनि-परिवर्तनका भी एक विशिष्ट काल होता है। इस अन्तिम आर (R)के अनुच्चरित होनेका नियम प्रायः नवीन है। इसे अंग्रेज़ीके अत्यधिक प्राचीन कालपर लागू नहीं किया जा सकता। (४) किसी विशिष्ट भाषाके किसी विशिष्ट कालमें कोई विशिष्ट ध्वनि भी यों ही परिवर्तित नहीं हो सकती। उसके लिए विशिष्ट दशा या परिस्थितिकी आवश्यकता पड़ती है। उपर्युक्त उदाहरणमें ही प्रायः ऐसा नियम है कि वाक्यमें किसी शब्दके अन्तमें आर (R) हो और उसके पश्चात् आनेवाला शब्द किसी व्यञ्जनसे आरम्भ होता हो, तब तो यह अनुच्चरित होनेका नियम लागू होगा और यदि वह शब्द स्वरसे आरम्भ होता हो तो न होगा। इस प्रकार ध्वनि-नियम परिस्थितियोंसे प्रायः बँधा रहता है।

कुछ प्रसिद्ध ध्वनि-नियम--(क) ग्रिम-नियम--इस नियमकी ओर संकेत करनेवाले दो व्यक्ति, इहरे और डैनिश विद्वान् रैस्क हैं, पर इन लोगोंने संकेत मात्र किया था। इसकी पूरी विवेचना और छानवीन करनेवाले अध्येता, जर्मन भाषाके महान् पंडित याकोव ग्रिम हैं। आपने १८१९में जर्मन भाषाका एक व्याकरण प्रकाशित किया। सन् १८२२ में उसके दूसरे संस्करण-में आपने इस नियमका विवेचन किया। इनके ही नामपर इस नियमका नाम 'ग्रिम नियम' है। इस नियमका सम्बन्ध भारोपीय स्पर्शोंसे है, जो जर्मन भाषामें परिवर्तित हो गये थे। इसे जर्मन भाषाका वर्ण-परिवर्तन कहते हैं, जिसके लिए जर्मन शब्द 'lautverschiebung' है। जर्मन भाषाका यह वर्ण-परिवर्तन दो बार हुआ। प्रथम वर्ण-परिवर्तन ईसाके कई सदी पूर्व हुआ था और दूसरा वर्ण-परिवर्तन उत्तरी जर्मन लोगोंसे ऐंग्लो-सैक्सन लोगोंके पृथक् होनेके बाद लगभग ७वीं सदीमें हुआ। दोनों ही का कारण जातीय-मि... कहा जाता है। **प्रथम वर्ण-परिवर्तन**--इस प्रथम वर्ण-परिवर्तनमें मूल भारोपीय भाषाके कुछ स्पर्श परिवर्तित हो गये थे, जिन्हें तालिका रूपमें यों दिया जा सकता है--

(क)	भारोपीय मूल भाषाके घोष महाप्राण स्पर्श घ्, ध्, भ्	जर्मनिकमें घोष अल्पप्राण ग्, द्, ब् हो गये।
(ख)	भारोपीय मूल भाषाके घोष अल्पप्राण ग्, द, ब्	जर्मनिकमें अघोष अल्पप्राण क्, त्, प् हो गये।
(ग)	भारोपीय मूल भाषाके अघोष अल्पप्राण क्, त्, प्	जर्मनिकमें संघर्षी अघोष महाप्राण ख़् (ह्), थ्, फ़् (घ्) (ध्) (भ्) हो गये।

मूल भारोपीय भाषाके ये व्यञ्जन संस्कृत तथा ग्रीक आदिमें सुरक्षित हैं। अतः उदाहरणके लिए मूलके स्थानपर संस्कृत या ग्रीक शब्द लिये जा सकते हैं। इसी प्रकार परिवर्तित स्पर्शोंको दिखलानेके लिए जर्मनिक वर्गकी अंग्रेज़ी भाषाके शब्द लिये जा सकते हैं:

	संस्कृत	अंग्रेज़ी
(क)	घ् (ह्) से ग् = हंस, दुहिता	गूज़ (goose), डॉ(ग)टर (daughter)
	ध् से द् (ड) विधवा, धूम	विडो (widow), डस्ट (dust),
	भ् से ब् = भू, भ्रातृ	बी (be) ब्रदर (brother)
(ख)	ग् से क् = गो, योग	काउ (cow) योक (yoke)
	द् से त् (ट) = द्वौ, दशन्	टू (two) टेन (ten)
	ब् से प = (इसका संस्कृतमें उदाहरण नहीं मिलता) आदि भाषामें	

*स्लेउब्का अंग्रेज़ीमें slip

(ग)
क् से ख् (ह्) = ह्वाट (what)
कद्, कः ह्व (who)
त् से थ् = टूथ (tooth)
दंत, तनु, त्रि थिन (thin)
थ्री (three)
प् से फ् = फ़ादर(father)
पिता, पशु, फ़ी (fee)
पाद फ़ुट (foot)

[उपर्युक्त उदाहरणोंमें कहीं-कहीं एक ही शब्द दो भाषाओंमें दो अर्थ रखता दिखाई पड़ रहा है, पर इसका अर्थ यह नहीं कि दोनों भिन्न-भिन्न शब्द हैं। अर्थ-परिवर्तन-के प्रकरणमें हम देखेंगे कि किस प्रकार शब्दोंका अर्थ कभी-कभी बहुत दूर चला जाता है।] **द्वितीय वर्ण-परिवर्तन**--प्रथम वर्ण-परिवर्तनमें मूल भाषासे जर्मनिक भाषा भिन्न हुई थी पर इस द्वितीयमें जर्मन भाषाके ही दो रूप उच्च जर्मन और निम्न जर्मनमें यह अन्तर पड़ा। बात यह हुई कि निम्न जर्मनवाले (अंग्रेज़ आदि) विकासके पूर्व ही वहाँसे हट गये, अतः उनमें तो कोई अन्तर नहीं पड़ा। पर, उच्च जर्मनवाले जो वहीं थे द्वितीय परिवर्तन-के शिकार हुए और फल यह हुआ कि उच्च और निम्न जर्मनकी कुछ ध्वनियाँ भिन्न-भिन्न हो गयीं। निम्न जर्मनकी प्रतिनिधि अंग्रेज़ीको मान हम कुछ उदाहरण ले सकते हैं--

निम्न जर्मन (अंग्रेज़ी)
प् का फ् = डीप (deep), शीप (sheep)
ट् का ट्स् य स्स् = फूट (foot), लेट (let)
क् का ख् (ह्) = योक (yoke)
व्ह् का व् = डोव्ह (dove)
ड् का ट् = डीड (deed)
थ् का ड् (द) = थ्री (three)

उच्च जर्मन
टीफ (tief); शाफ़ (schaf)
फस्स (fuss), लासेन (lassen)
याख (Joch)
टाउबे (taube)
टाट (tat)
द्राय (Drei)

आलोचना

प्रथम और द्वितीय वर्ण-परिवर्तनके सम्बन्ध-में ग्रिमने जो तालिका दी थी वह कुछ इस प्रकार है—

मूल भाषा	आदिम जर्मनिक	उच्च जर्मन
घ् ध् भ्	= ग् द् ब्	= क् त् प्
ग् द् ब्	= क् त् प्	= ख् (ह्) थ् फ
क् त् प्	= ख् (ह्) थ् फ़्	= ग् द् ब्

प्रथम वर्ण-परिवर्तन — द्वितीय वर्ण-परिवर्तन

हम देखते हैं कि इस प्रकार नियम बहुत सुलझा हुआ दिखाई पड़ता है। हिन्दी तथा अंग्रेज़ीके बहुतसे विद्वानोंने इसे इसी रूपमें स्वीकार किया है। किन्तु यथार्थतः बात ऐसी नहीं है। दोनों परि-वर्तनोंमें इस प्रकारकी समानता नहीं है जैसी ग्रिमने दिखलानेकी कोशिश की थी। यहाँ तालिकामें दिया गया प्रथम वर्ण-परिवर्तन अपवादोंके रहते हुए भी ठीक है, पर द्वितीयके उदाहरण ठीक इस रूपमें नहीं मिलते, साथ ही इसके अपवाद भी बहुत हैं। ग्रिमने द्वितीय वर्ण-परिवर्तनके उदाहरण इसी रूपमें इकट्ठा करनेका प्रयास किया पर उसे अपेक्षित सफलता न मिली। प्रथम वर्ण-परिवर्तनके साथ द्वितीय-परिवर्तनका प्रारम्भिक रूप जो वस्तुतः मिलता है कुछ इस प्रकार हो सकता है—

मूल भाषा	निम्न जर्मन या आदिम जर्मन	उच्च जर्मन
gh; dh; bh;	g; d; b;	x; t; x;

g; d; b; k; t; p; ×; z, ss, sz; f;
k; t; p; kh (h); ×; d; st; th; f; ×;

(ख) ग्रैसमैन-नियम--ग्रिमको स्वयं अपने नियमके पर्याप्त अपवाद मिले थे। उसके साधारण नियमानुसार क्रमशः क्, त्, प् का ख् (ह्), थ्, फ् होना चाहिये। पर कुछ शब्दोंमें क् त् प् का ग् द् ब् मिलता है; उदाहरणार्थ ग्रीक किख्खोसे हो (ho), तुप्लोससे थम (thump) और पिथाससे फाडी (fody) बनना चाहिये पर बनता है गो (go), डम (dumb), बाडी (body)। ग्रैसमैनने यह खोज निकाला कि भारोपीय मूल भाषामें यदि शब्द या धातुके आदि और अन्त दोनों स्थानोंपर महाप्राण हो तो संस्कृत ग्रीक आदिमें एक अल्पप्राण हो जाता है।

संस्कृतकी √हु (=हवन करना) का रूप बनना चाहिये, हुहोति, हुहुतः, हुह्वति पर रूप है--जुहोति, जुहुतः, जुह्वति इसी प्रकार √भृ (=डरना) से 'भिभर्ति' आदि न होकर 'बिभर्ति' आदि रूप बनते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि भारोपीय मूल भाषाकी दो अवस्थाएँ रही होंगी। प्रथमावस्थामें दो महाप्राण रहे होंगे और दूसरी अवस्थामें नहीं, अतः अपवाद स्वरूप क् त् प् आदिके स्थानपर जहाँ ग् द् ब् मिलते हैं; प्राचीन कालमें क् त् प् का पुराना रूप ख् (ह्) थ् फ् अर्थात् भारोपीयमें घ् ध् भ् रहा होगा और घ् ध् भ् से ग् द् ब् बना होगा जो पूर्णतः नियमानुकूल है। इस प्रकार ग्रिम-नियममें जितने अपवाद इस तरहके थे, जिनमें ग्रिम-नियमसे एक पग आगे परिवर्तन हो जाता था ग्रैसमैन नियमसे समाधानित हो गये। पीछे ध्वनि-परिवर्तनके प्रकरणमें अल्पप्राणीकरणपर विचार करते समय इसके कुछ उदाहरण दिये गये हैं।

(ग) वर्नर नियम--उपर्युक्त दोनों नियमोंके बाद भी कुछ अपवाद रह गये थे। वर्नरने यह पता लगाया कि ग्रिम-नियम स्वराघात (accent) पर आधारित था। मूल भाषाके क्, त्, प् के पूर्व यदि स्वराघात हो तो ग्रिम-नियमके अनुसार परिवर्तन होता है पर यदि स्वराघात क् त् प् के बाद वाले स्वरपर हो तो परिवर्तन एक पग और आगे ग्रैसमैनकी भाँति ग् द् ब् हो जाता है।

संस्कृत	गाथी
सप्त	सिबुन
शतम	हुन्द

ग्रिमने यह भी कहा था कि स् के लिए स् ही मिलता है पर कुछ उदाहरणोंमें स् के स्थानपर र् मिला। इसके लिए भी वर्नरने स्वराघातका ही कारण बतलाया। स् के पूर्व स्वराघात हो तो स् रहेगा पर यदि बादमें हो तो र् हो जायगा। एक और तीसरी बात वर्नरने बतलायी कि यदि मूल भारोपीय क् त् प् आदिके पूर्व स् मिला हो (अर्थात् स्क, स्त, स्प) तो जर्मेनिकमें आनेपर शब्दमें किसी प्रकारका परिवर्तन नहीं मिलता।

लैटिन	अंग्रेजी	गाथी
piskis	--	fisks
aster	star	--

इसी प्रकार त् यदि क् या प् के साथ हो तो भी कोई परिवर्तन नहीं होता।

इतनेपर भी ग्रिम-नियमके अपवाद हैं, जिनके लिए सादृश्य ही मूल कारण माना जाता है।

(घ) तालव्य-नियम (palatal law) --बहुत निश्चित रूपसे यह नहीं कहा जा सकता कि सर्वप्रथम इसकी खोज किसने की। सत्य यह है कि कई विद्वान् लगभग एक ही समय यहाँतक पहुँचनेमें सफल हुए। इसी कारण किसी एक व्यक्तिको इसका श्रेय देना लोग ठीक नहीं समझते। १८७५में विल्हेम थाम्सनने अपने व्याख्यानमें इसकी ओर संकेत किया था, पर इस

सम्बन्धमें उनका विस्तृत लेख प्रकाशमें आ भी नहीं पाया था कि जोहन्स श्मिटने अपना लेख तैयार कर लिया। यह लेख इसकी एक पुस्तकमें १९२०में प्रकाशित हुआ। इन दोनोंके अतिरिक्त एसाय तेंगरकी भी एक छोटी-सी पुस्तिका इस विषयपर निकली। पर उस पुस्तकमें एसाय तेंगरने दिया है कि उनके पूर्व भी कालित्ज तथा सास्यूरने कुछ ऐसे विचार प्रकट किये थे। उपर्युक्त पाँचों विद्वानोंके अतिरिक्त वर्नर भी कुछ इस परिणामतक पहुँच चुका था। इस प्रकार तालव्य नियमके साथ छः विद्वानोंके नाम सम्बद्ध हैं, यद्यपि कुछ लोग इसे 'कालित्जका तालव्य नियम' भी कहते हैं। इस नियमके ज्ञात होनेके पूर्वतक विद्वानोंका विश्वास था कि कुछ शब्दोंमें संस्कृत अधिक बातोंमें अन्य सगोत्रीय-भाषाओंकी अपेक्षा मूल भारोपीय भाषाके निकट है। कुछ शब्दोंमें संस्कृतके च् और ज्के स्थानपर अन्य भाषाओंमें क् और ग् मिलते थे। इससे लोगोंने यह अनुमान किया था कि वहाँपर मूलतः च् और ज् ही थे और ध्वनि-परिवर्तनसे अन्य भाषाओंमें क् और ग् और हो गये। इस परिवर्तनका कारण अबतक विद्वानोंकी समझमें न आ सका था। तालव्य नियमकी खोजके फलस्वरूप यह ज्ञात हुआ कि जिन संस्कृत शब्दोंमें 'अ' स्वर, ध्वनिकी दृष्टिसे ग्रीक या लैटिन ओ (o)की भाँति है उसके पूर्व क् या ग् ही व्यंजन पाया जाता है, पर यदि 'अ' स्वर लैटिन या ग्रीक ई (e)की भाँति है, तो कंठ्य क् या ग् न होकर तालव्य च् और ज् मिलता है। उदाहरणार्थ च (च्+अमें अ ग्रीक ई (e)की भाँति है) और क (क्+अमें अ ग्रीक ओ (o)की भाँति है) लिये जा सकते हैं। एक ही धातु √पच्से बने रूप 'पचति' और 'पकस्' में भी यह बात देखी जा सकती है। इससे निष्कर्ष यह निकलता है कि किसी समय संस्कृतमें अ के स्थानपर ई (e) और ओ (o) स्वर थे। अग्रस्वर 'इ'के पूर्वका कंठ्य व्यंजन* तालव्यमें बदल गया जिसके फलस्वरूप क् का च् और ग् का ज् हो गया। कंठ्य व्यंजनके तालव्य हो जानेसे इसे तालव्य-नियम कहा जाता है। इस खोजसे संस्कृतके मूलसे समीप होनेकी धारणा बदल गयी और अब संस्कृतकी अपेक्षा ग्रीक लैटिन आदि मूल भारोपीय भाषाके अधिक समीप समझी जाने लगी हैं। संक्षेपमें कहा जा सकता है कि तालव्य-नियमके अनुसार मूल भारोपीय भाषाका तृतीय श्रेणीका कवर्ग (देखिये भारोपीय ध्वनियाँ) संस्कृतमें कहीं तो कवर्ग ही रहा पर पहले आनेवाले स्वरके कारण कहीं-कहीं चवर्ग (तालव्य)में परिवर्तित हो गया। इन प्रधान ध्वनि-नियमोंके अतिरिक्त **ग्रीक नियम** [मूल भारोपीय शब्दमें दो स्वरोंके बीचके 'स्'का ग्रीक भाषामें पहले 'ह्' हो जाना और फिर लुप्त हो जाना, जैसे genesos=genehos=geneos] **लैटिन नियम** [मूल भारोपीय शब्दमें दो स्वरोंके बीचके 'स्'का परिवर्तित होकर 'र्', हो जाना, जैसे genesos=generos (generis)] **फ़ारसी नियम** [संस्कृतकी 'स' ध्वनिका फारसीमें ह मिलना जैसे सप्त-हप्त, सिंध-हिंद] **ओष्ठ्य नियम**, तथा **मूर्द्धन्य नियम** आदि अनेक और ध्वनि-नियम भी हैं। (दे०) **फ़ॉरटुनटोफ़ नियम**।

ध्वनि-यूनन (subtracting)—एक प्रकारका **संबंध तत्त्व**।

ध्वनि-परिवर्तन (phonetic change) —भाषाके हर अन्य अंगकी तरह, उसकी

---

*मूल भारोपीय भाषाकी ध्वनियोंपर हम पारिवारिक वर्गीकरण करते समय विचार कर चुके हैं। उसमें जैसा कि हमने देखा तृतीय श्रेणीके कवर्ग या कंठ्य व्यंजन थे। तालव्य नियमके अनुसार जो क् ग् तालव्यमें परिवर्तित हो गये, तृतीय श्रेणीके अर्थात् क्व् तथा ग्व् थे।

ध्वनिमें भी परिवर्तन होता रहता है, जिसे पुरातनवादी लोग **ध्वनि-विकार** (phonetic decay) कहते हैं, तो नवीनतावादी **ध्वनि-विकास** (phonetic development)। कलका 'गृह' आज 'घर' हो गया है, और कलका 'कृष्ण' आज 'किशुन'। इसी प्रकार अन्य भी अनेकानेक शब्दोंमें देखा जा सकता है। यह परिवर्तन ध्वनियोंका परिवर्तन है। 'गृह'का 'घर'में 'ऋ'का 'र' हो गया है और 'ग' का घ, संभवतः 'ह'के प्रभावसे। विश्वकी कोई भी घटना अकारण नहीं होती। ध्वनि-परिवर्तनके भी कारण होते हैं। (दे०) **ध्वनि-परिवर्तनके कारण**। ध्वनि-परिवर्तनके प्रसंगमें इसके कारणोंके अतिरिक्त इस बातपर भी विचार करना पड़ता है, कि परिवर्तन किस प्रकारका होता है। इसे **ध्वनि परिवर्तनके रूप, ध्वनि परिवर्तनके स्वरूप**, ध्वनि परिवर्तनके प्रकार या **ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ** आदि नामोंसे अभिहित किया जा सकता है। (दे०) **ध्वनि-परिवर्तन-की दिशाएँ**।

ध्वनि परिवर्तन मुख्यतः दो प्रकारके होते हैं : (क) **स्वयंभू ध्वनि-परिवर्तन** (unconditional phonetic change)–यह ऐसे परिवर्तनोंका नाम है, जिनके बारेमें सनिश्चय कुछ कहना कठिन है। इसे **अकारण ध्वनि-परिवर्तन** भी कहते हैं। इसका आशय यह कभी नहीं कि इनका कोई कारण नहीं होता। 'अकारण'का आशय यहाँ अज्ञातकारण है, अर्थात् हमें इसका कारण ज्ञात नहीं है। इसीलिए इसे **अज्ञात-कारण ध्वनिपरिवर्तन** कहना कदाचित् अधिक समीचीन होगा। उदाहरणार्थ संस्कृतके दो शब्द 'चक्र' और 'सर्प' लें। प्राकृतमें इन दोनोंके रूप क्रमसे 'चक्क' और 'सप्प' हो गये। हिन्दीमें स्वाभाविक रूपमें इन्हें 'चाक' और 'साप' होना चाहिये। किंतु हम देखते हैं कि एक तो 'चाक' बना किंतु दूसरा 'साँप' बन गया। 'साँप'में अनुनासिकता कहाँसे आ गयी इसका कारण नहीं दिया जा सकता। इस प्रकार 'सर्प'-का 'साँप' हो जाना **सामान्य ध्वनि-परिवर्तन** न होकर **असामान्य ध्वनि-परिवर्तन** या **अज्ञातकारण ध्वनि-परिवर्तन** है। दूसरी ओर 'चक्र'का 'चाक' हो जाना सामान्य परिवर्तन है। स्वयंभू परिवर्तनको **स्वयंजात ध्वनि परिवर्तन** तथा अंग्रेज़ीमें spontaneous या incontact phonetic change भी कहा गया है। (ख) **परिस्थितिजन्य ध्वनि परिवर्तन** (conditional phonetic change)–पहलेके विरुद्ध, जो परिवर्तन इसमें होता है, उसके लिए कारण दिये जा सकते हैं। ध्वनि-परिवर्तनके कारणपर विचार करते समय विभिन्न प्रकारके कारणोंके साथ जो उदाहरण दिये गये हैं, उनमें घटित परिवर्तन प्रायः इसी वर्गके हैं। (दे०) **ध्वनि-परिवर्तनके कारण**। उदाहरणार्थ, अंग्रेज़ी क्नो (know) अब 'नो' उच्चरित होता है, अर्थात् 'क्' ध्वनि लुप्त हो गयी है। यह अकारण नहीं है। 'क्न'का उच्चारण कठिन था अतः **उच्चारण-सुविधा** (दे०)की दृष्टिसे क् का लोप हो गया। ऐसे परिवर्तन **कारणजन्य ध्वनि-परिवर्तन** या **परोद्भूत ध्वनि-परिवर्तन** भी कहे गये हैं। अंग्रेज़ीमें इन्हें contact phonetic change भी कहा गया है। कुछ ऐसे भी परिवर्तन हो सकते हैं, जिन्हें इन दोनों परिवर्तनोंके बीचमें रखा जा सकता है। अर्थात् उनका कारण अंशतः ज्ञात और अंशतः अज्ञात होता है। यहाँ ध्वनि-परिवर्तनका एक व्यापक अर्थ है। ध्वनि-परिवर्तन कभी-कभी एक सीमित अर्थमें भी प्रयुक्त किया जा सकता है। (दे०) **ध्वनिपरिवर्तनकी दिशाएँ**।

ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ––भाषाकी ध्वनियोंमें परिवर्तन होता रहता है। (दे०) **ध्वनि परिवर्तन** तथा **ध्वनि-परिवर्तनके कारण**। यह ध्वनि-परिवर्तन कई प्रकार,

भेद या तरहका होता है। या दूसरे शब्दोंमें ध्वनिका परिवर्तन कई दिशाओंमें होता है। कभी तो परिवर्तनमें कोई ध्वनि लुप्त हो जाती है (जैसे अंग्रेज़ी know का उच्चारण 'नो' या संस्कृत 'स्थाली'से हिन्दी थाली आदि), कभी कोई नयी ध्वनि आ जाती है (जैसे अंग्रेज़ी स्टेशनसे भोजपुरी इस्टेशन या संस्कृत 'भक्त'से हिन्दी भगत; इसमें क् और त के बीच आ आ गया है) और कभी दो ध्वनियाँ आपसमें स्थान बदल लेती हैं (जैसे अवेस्ता 'वफ़र'का हिन्दी 'बरफ़' या तुर्की 'मुकल्या'का हिन्दी 'मुचल्का' आदि)। इसी प्रकार और भी अनेक दिशाओंमें ध्वनि-परिवर्तन होता है। प्रमुख ध्वनि परिवर्तन निम्नांकित है: (१) **ध्वनि-लोप** या **लोप**। (२) **ध्वनि-आगम** या **आगम**। (३) **ध्वनि-विपर्यय** या **विपर्यय**। (४) **समीकरण**। (५) **विषमीकरण**। (६) **संधि**। (७) **ऊष्मीकरण**। (८) **अनुनासिकीकरण**। (९) **मात्रा भेदीकरण**। (१०) **घोषीकरण**। (११) **अघोषीकरण**। (१२) **महाप्राणीकरण**। (१३) **अल्प प्राणीकरण**। (१४) **अभिश्रुति**। (१५) **अपश्रुति**। इन सभीको कोशमें यथास्थान देखा जा सकता है।

यदि ध्यान दिया जाय तो परिवर्तनकी ये दिशाएँ तीन प्रमुख शीर्षकोंमें विभाजित की जा सकती हैं (क) **ध्वनि-लोप**--जिसमें कोई पहलेसे उपस्थित ध्वनि लुप्त या समाप्त हो जाय। जैसे संस्कृत 'स्थाली'से हिन्दी 'थाली'। यहाँ 'स्', ध्वनि लुप्त हो गयी। (ख) **ध्वनि-आगम**--जिसमें कोई नयी ध्वनि, जो पहलेसे उपस्थित न हो शब्दमें आ जाय। जैसे संस्कृत 'शाप' से हिन्दी 'श्राप'। यह 'र्' ध्वनि आ गयी जो पहलेसे नहीं थी। (ग) **ध्वनि-परिवर्तन**--ध्वनि-परिवर्तनकी यह दिशा वहाँ मानी जायगी जहाँ न तो कोई नयी ध्वनि आवे और न किसी पुरानी ध्वनिका लोप हो, अर्थात् न तो लोप हो और न आगम हो। केवल पहलेसे उपस्थित ध्वनि या ध्वनियाँ परिवर्तित हो जायँ। जैसे संस्कृत 'कंकण'से हिन्दी 'कंगन'। यहाँ न तो आगम हुआ और न लोप। केवल परिवर्तन हुआ। अर्थात् 'क' ध्वनि 'ग' हो गयी, तथा 'ण' ध्वनि 'न' हो गयी। इस प्रकार 'ध्वनि-परिवर्तन' एक तो सामान्य नाम है जो 'ध्वनि विकास' या 'ध्वनि विकार' का समानार्थी है (दे० 'ध्वनि-परिवर्तन') और दूसरा 'ध्वनि-परिवर्तन'। इस ध्वनि परिवर्तनकी दिशाका एक भेद है, जिसमें न तो नयी ध्वनि आवे, न पुरानी ध्वनि लुप्त हो अपितु केवल कोई पहलेसे वर्तमान ध्वनि परिवर्तित हो जाय। घोषीकरण, अघोषीकरण, अल्प प्राणीकरण, महाप्राणीकरण, संधि आदि इसी वर्गमें आती हैं। इस ध्वनि परिवर्तनको आगे कई वर्गोंमें विभाजित किया जा सकता है, जैसे: (१) **रूपगत ध्वनि-परिवर्तन**--अर्थात् जिसमें ध्वनिका स्वरूप, स्थान, मात्रा या प्रयत्न आदिकी दृष्टिसे परिवर्तित हो जाय। जैसे फ का फ़ हो जाना या 'क'का 'ग' हो जाना आदि। (२) **स्थानगत ध्वनि-परिवर्तन**--जिसमें ध्वनियोंके स्थानमें परिवर्तन हो जाय। जैसे 'मतलब' से 'मतबल' या 'लखनऊ'से 'नखलऊ'। इसमें केवल 'ध्वनि-विपर्यय' आता है। (३) **मिश्र ध्वनि परिवर्तन**--जिसमें अनेक प्रकारके मिश्र परिवर्तन घटित हों। जैसे 'सत्य'से 'साँच' आदि। ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाओंको '**ध्वनि-परिवर्तनके रूप**, **ध्वनि-परिवर्तनके स्वरूप** या **ध्वनि परिवर्तनके प्रकार** आदि भी कहते हैं।

ध्वनि-परिवर्तनके कारण--भाषाओंकी ध्वनियोंमें परिवर्तन (दे० **ध्वनि-परिवर्तन**) होता रहा है। इन परिवर्तनोंके पीछे कुछ कारण होते हैं। कारण प्रमुखतः दो प्रकारके होते हैं। पहले कारण तो वे हैं, जो शब्दके बाहर, वातावरणमें हैं, और

धीरे-धीरे ध्वनिपर प्रभाव डालते हैं। इनको **बाह्य कारण** कहा जा सकता है। **समाजकी राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक** अवस्थाएँ तथा **भौगोलिक वातावरण** इसीके अंतर्गत आते हैं; दूसरे **आन्तरिक-कारण** हैं। ये **प्रयोगाधिक्य, घिसने या स्वराघात** आदिसे सम्बन्ध रखते हैं। इसमें भीतरसे ही परिवर्तनका कारण उपस्थित होता है। किंतु इसका यह आशय नहीं कि **ध्वनियोंको लेकर हम बाँट सकते हैं कि अमुक ध्वनि केवल आंतरिक या केवल बाह्य कारणसे ही परिवर्तित हुई है।** तथ्य यह है कि एक ध्वनिके परिवर्तनमें अधिकतर एकसे अधिक कारण कार्य करते हैं, और इसीलिए किसी शब्दको लेकर स्पष्ट रूपसे उसकी ध्वनियोंके परिवर्तनमें काम करनेवाले सभी कारणोंकी ओर सर्वत्र संकेत करना सम्भव नहीं। इस प्रसंगमें एक और बातका भी ध्यान रखना आवश्यक है। इन कारणोंके **आधारपर भविष्यके विषयमें निश्चितताके साथ हम कुछ नहीं कह सकते। यह नहीं कहा जा सकता कि अमुक ध्वनि कल अमुक रूप धारण करेगी या अमुक ध्वनिमें परिवर्तित हो जायगी।** यह तो अतीतकी सामग्रीके अध्ययनके आधारपर अतीतका विश्लेषणमात्र है। यह आवश्यक नहीं कि आनेवाले परिवर्तन भी इसी पथपर चलें। साथ ही भूतके सम्बन्धमें भी नहीं कहा जा सकता कि जहाँ-जहाँ अमुक कारण उपस्थित होगा, वहाँ-वहाँ अमुक परिवर्तन अवश्य हुआ होगा। इसका कारण यह है कि ध्वनियोंके पथमें अनेकों व्याघात आते रहते हैं और उन सभीका ध्वनिके विकास या परिवर्तनपर प्रभाव पड़ता रहता है। इसीलिए हम देखते हैं कि एक ओर तो संस्कृत **कर्म**से प्राकृत **कम्म** और हिन्दी **काम** हो गया; पर दूसरी ओर **मर्म**से **मम्म** होकर **माम** न हो सका और बेचारेको **मरम** हो जाना पड़ा। ध्वनि-परिवर्तनके कारण यहाँ कुछ विस्तारसे दिये जा रहे हैं: (१) **वाक्-यन्त्रकी विभिन्नता**--**रूपात्मक स्वराघात** (दे०)में दिखलाया गया है कि किसी भी दो व्यक्तिका वाक्-यन्त्र ठीक-ठीक एक ही प्रकारका नहीं होता, इसी कारण किसी भी एक ध्वनिका उच्चारण दो व्यक्ति ठीक एक तरहसे नहीं कर सकते। एकसे दूसरेमें और दूसरेसे तीसरेमें कुछ-न-कुछ अन्तर अवश्य पड़ेगा। ये ही छोटे-छोटे अन्तर कुछ दिनमें जब अधिक हो जाते हैं, तो स्पष्ट हो जाते हैं। यह ठीक उसी प्रकार है जैसे कोई बच्चा कलसे आज कितना बड़ा हो गया, बढ़ गया, इसका अनुमान हम नहीं लगा सकते पर एक-दो वर्ष बाद उस थोड़े-थोड़े बढ़नेका अनुभव हम कर लेते हैं और अपनी आँखसे उसकी ३६० या ७२० दिनकी निश्चित बढ़ाई भी देख लेते हैं। अब यह कारण प्रायः ठीक नहीं माना जाता, किंतु इसका ध्वनि-परिवर्तनसे कुछ भी संबंध नहीं है, यह नहीं माना जा सकता। (२) **श्रवणेन्द्रियकी विभिन्नता**--भाषा कोई गर्भमेंसे सीखकर नहीं आता। यहाँ आनेके पश्चात् कुछ चेतना होनेपर कानसे सुनकर हम धीरे-धीरे इसे सीखना आरम्भ करते हैं। वाक्-यन्त्रकी भाँति श्रवणेन्द्रियकी विभिन्नता भी धीरे-धीरे ध्वनि-परिवर्तनमें सहायक होती है। यह कारण भी पहलेकी ही भाँति इतना सूक्ष्म है कि ऊपरसे देखनेमें हास्यास्पद ज्ञात होता है पर है सत्य। हाँ, यह अवश्य है कि अकेले यह कार्य नहीं करता और न पहला कारण ही अकेले कार्य करता है। दोनों साथ-साथ चलते हैं, क्योंकि हमें **सुनकर** ही सीखते और कहते हैं और फिर हमारा **कहना सुनकर** ही दूसरा सीखता है। इस प्रकार थोड़ा कहनेमें अन्तर और थोड़ा सुननेमें अन्तर। ये अन्तर आपसमें मिलते और बढ़ते जाते हैं। अन्तमें एक या दो या और भी अधिक सदियोंमें ध्वनिमें

घटित परिवर्तन स्पष्ट हो जाता है। अब इस कारणसे भी लोग प्रायः सहमत नहीं हैं, किंतु इसे पूर्णतः नहीं ठुकराया जा सकता। [३] **अनुकरणकी अपूर्णता**--उपर्युक्त दोनों कारणोंके बीचकी कड़ी अनुकरण की है। किसीका बोलना सुनकर हम अनुकरण करके बोलना सीखते हैं। पर यह अनुकरण पूर्ण नहीं हो पाता। या तो हम कुछ आगे बढ़ जाते हैं या कुछ पीछे रह जाते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि हम ठीक उसी प्रकार नहीं बोलते हैं जैसे दूसरा बोलता है, जिसका कि हम अनुकरण करते हैं। बच्चोंमें यह अपूर्णता स्पष्ट रहती है, जब वे **रोटीको लोटी** या **रुपया**-को **नुपया** कहते हैं। बड़े होनेपर यह अन्तर ठीक हो जाता है। बड़े लोगोंमें इसी प्रकारकी **सूक्ष्म** गड़बड़ी होती है। कभी-कभी तो यह एक ध्वनिको धीरे-धीरे स्थानान्तरित करती है और कभी-कभी विदेशी शब्दोंमें ध्वनिको आगे-पीछे कर देती है। दूसरे प्रकारके परिवर्तनोंमें अज्ञान भी कार्य करता है पर अनुकरणकी अपूर्णताका भी हाथ कम नहीं रहता। भोजपुर प्रदेशके मुकदमेबाज़ लोगोंमें वकीलोंके अनुकरणसे **कनेक्शन** शब्द प्रचलित हो गया है पर उसका रूप बदलकर 'कनस्कन' हो गया है। इसमें अज्ञानके साथ अनुकरणकी अपूर्णता भी एक कारण है। कुछ देशीय शब्दोंका भी अनुकरण उच्चारण कठिन होनेके कारण ठीक नहीं हो पाता। 'ब्राह्मण' का बाह्मन' हो जाना इसका सुन्दर उदाहरण है। 'ॐ नमः सिद्धम्'का लोक भाषाओंमें 'ओनामासीधम' हो जाना भी अनुकरणकी अपूर्णताके कारण ही हुआ है। अनुकरणकी अपूर्णता प्रायः अज्ञानपर आधारित रहती है। अर्थात् जिन्हें शब्दोंका ठीक ज्ञान नहीं रहता वे ही पूर्ण या ठीक अनुकरण नहीं कर पाते। नीचे 'अज्ञान' शीर्षकमें इसके कुछ और उदाहरण दिये गये हैं। (४) **अज्ञान**--अज्ञानके कारण भी कभी-कभी ध्वनियोंमें परिवर्तन हो जाता है। अनुकरणकी अपूर्णताके साथ इसका योग हम ऊपर देख चुके हैं। देशी या विदेशी किसी भी प्रकारके शब्द, जिनके विषयमें हमें निश्चित ज्ञान नहीं है, अधिकतर अशुद्ध 'उच्चरित होने लगते हैं और ध्वनि-परिवर्तन हो जाता है। अज्ञानके कारण लोग शब्दोंका ठीक रूप समझ नहीं पाते और फल यह होता है कि उच्चारणका ठीक अनुकरण नहीं हो पाता और इस प्रकार ध्वनियोंमें परिवर्तन हो जाता है। अपरिचित तथा विदेशी शब्दोंमें प्रायः इसी कारण ध्वनियोंमें परिवर्तन विशेष दिखाई पड़ता है। लोक भाषाओंमें इसीसे **इंजीनियर** का **इंजियर**, **एक्सप्रेस** का **इस्प्रेस**, **ओवरसियर** का **ओसियर** या **ओसियर**, **कम्पाउण्डर** का **कम्पोडर** या **कम्पोटर** तथा **डिस्ट्रिक्ट बोर्ड** का **डिस्टी बोर्ड** हो गया है। इन परिवर्तनोंमें अज्ञान तथा अनुकरणकी अपूर्णताके अतिरिक्त मुखसुख या इस प्रकारके अन्य कारणोंका भी कुछ प्रभाव हो सकता है। अज्ञानके कारण ही लोग बहुतसे विदेशी शब्दोंमें क़ को क, ज़ को ज, ख़ को ख आदि कर देते हैं। [५] **भ्रामक या लौकिक व्युत्पत्ति** (popular etymology या folk etymology)--भ्रामक-व्युत्पत्तिका सम्बन्ध भी अज्ञान या अशिक्षासे है। पर, **साथ ही इसमें दो मिलते-जुलते शब्दोंका होना भी आवश्यक है।** भ्रामक-व्युत्पत्तिमें होता यह है कि लोग किसी अपरिचित शब्दके संसर्गमें जब आते हैं और यदि उससे मिलता-जुलता कोई शब्द उनकी भाषामें पहलेसे रहता है तो उस अपरिचित शब्दके स्थानपर उस परिचित शब्दका ही उच्चारण करने लगते हैं और इस प्रकार ध्वनि परिवर्तन हो जाता है। अरबीका **इंतिकाल** शब्द इसी कारण हिन्दीमें **अंतकाल** हो गया है। लोगोंने अंत (=आखिरी) + काल (=समय) समझ लिया और अर्थमें साम्य था ही, अतः 'अंतकाल' कहने लगे।

इसी प्रकार लोक भाषाओंमें **लाइब्रेरी** (=पुस्तकालय) का **रायबरेली**, **एडवांस** का **अडवांस** या **अठवांस** (आठवाँ अंश), **हू कम्स देयर** का **हुकुम सदर** तथा **पाउ-रोटी** का **पावरोटी** (वह रोटी पाव भर-की या बड़ी हो), **आर्ट कॉलिज** का **आठ-कालिज**, **हीराकूद** से **हीराकुंड** हो गया है। **मेकेञ्जीका** '**मक्खनजी**', **बनर्जीका बानरजी**, **क्वार्टर गार्ड** का **कोतलगारद**, तथा **चार्ज शीट** का '**चार सीट**' भी भ्रामक-व्युत्पत्तिके कारण ही बना है। जब हम लोग मिडिलमें पढ़ रहे थे तो **चेम्स-फोर्डको चिलमफोड** कहा करते थे। हम लोगोंने सुन रखा था कि उसे धुएँका शौक नहीं था। एक बार एक देहातीने मुझसे पूछा था, 'क्यों बाबू मद्रासमें कोई **आन्हर** (आँध्र) देश है, क्या वहाँके लोग अधिक-तर **आन्हर** (अन्धे) हैं जो उसका यह नाम है?' **आनरेरी मैजिस्ट्रेट** के लिए देहातमें 'अन्हरी क साहब' और ऑनरेरी कोर्टके लिए 'अन्हेरी' प्रचलित है। उन लोगोंका विश्वास है कि यहाँ पूरी **अँधेर** (अन्हर) होती है या **अंधेरा** (अन्हार) रहता है। बात कुछ है भी वैसी ही। वे लोग तनख्वाह तो लेते नहीं अतः घूस आवश्यक हो जाता है और जहाँ घूस महाराजकी सवारी आयी, अँधेरा (अन्हे-रा)का आना आवश्यक ही है। भ्रामक व्युत्पत्तिमें ध्वनि-साम्यके साथ यदि कुछ अर्थ साम्य हो तो इसके घटित होनेकी सम्भावना और भी अधिक रहती है। [६] **बोलनेमें शीघ्रता**––बोलनेमें शीघ्रताके कारण भी ध्वनिमें परिवर्तन हो जाता है। साहित्यमें लिखा तो जाता है 'पंडित जी' पर इसका शीघ्रताके कारण सर्वत्र ही और विशेषतः प्राइमरी स्कूलोंमें उच्चारण '**पंडी-जी**' होता है। देहाती पत्रोंमें तो यह लिखा भी जाने लगा है। इसी प्रकार **उन्होंने** का **उन्ने** हो गया है। जैनेन्द्रजीने अपने उपन्यासोंमें ऐसे शब्दोंको स्थान दिया है। **किन्ने**, **जिन्ने** आदि भी प्रचलित हैं। **जब ही**, **कब ही**, **अब ही** तथा **तब ही**के **जभी**, **कभी**, **अभी** और **तभी** भी इसीके उदाहरण हैं। **इसी**, **उसी**, **किसी**, **जिसी** या **द्विवेदी** का **दुवेदी**, **दूध-दो** का **दुद्दो**, **मास्टर साहब** का **मास्साब** और **मार डाला** का **माड्डाला** हो गया है। सुना है इधर इंगलैण्डमें **थैंक्यू** (आपको धन्यवाद है) बेचारा व्यस्त जीवनकी शीघ्रतामें घिस-घिसकर केवल 'क्यू' रह गया है। अंग्रेजीके **ऑट**, **डोंट**, **शांट** तथा संस्कृतकी **स्वर**, **व्यंजन** तथा **विसर्ग-संधियों**में होनेवाले ध्वनि-परिवर्तन भी इसीके उदाहरण हैं। [७] **मुख-सुख, उच्चारण-सुविधा या प्रयत्न-लाघव**––ध्वनि-परिवर्तनका सबसे प्रधान कारण यही है। भाषा **साध्य** न होकर विचारोंको व्यक्त करनेका साधन मात्र है। अतः यह स्वाभाविक है कि हम कमसे कम प्रयास-से अपने भाव व्यक्त करनेकी चेष्टा करें। मुखको सुख देनेके प्रयासमें कभी-कभी हम किसी ध्वनिका कठिन होनेके कारण शब्द विशेषमें उच्चारण करना ही छोड़ देते हैं। अंग्रेज़ीमें talk, walk, know, knife, night, psychology आदि-में कुछ ध्वनियोंका उच्चारण इसीलिए नहीं किया जाता; वहाँ उनके उच्चारणमें जीभको द्रविड़ प्राणायाम करना पड़ता है। कभी-कभी नयी ध्वनि भी उच्चारण सुविधाके लिए जोड़ लेते हैं। इसीलिए **स्कूल** तथा **स्टेशन**को कुछ लोग तो **इस्कूल** तथा **इस्टेशन** और कुछ लोग **सकूल**, तथा **सटेशन** कहते हैं। कभी-कभी ध्वनियोंका स्थान भी परिवर्तित कर देते हैं जैसे **चिह्नसे चिन्ह**, **ब्राह्मणका ब्राम्हण** आदि। कभी-कभी प्रयत्न-लाघवके प्रयासमें शब्दोंको काट-छाँटकर इतना छोटा बना लिया जाता है, कि पहचानना भी कठिन हो जाता है। **गोपेन्द्रसे गोबिन**, **सपत्नीसे सौत** तथा **उपाध्यायसे झा** इसके अच्छे उदाहरण हैं। बोलनेकी इस सुविधाके विषयमें कुछ निश्चय नहीं है। कहीं तो किसी एक ध्वनि-

को हटानेसे सुविधा होती है, कहीं उसीको जोड़ना सुविधाजनक हो जाता है। कहीं संयुक्त ध्वनिमें दो भिन्न ध्वनिको अनुरूप करना (धर्म = धम्म) पड़ता है और कहीं अनुरूप ध्वनिको भिन्न बना देना पड़ता (काक = काग, मुकुट = मउर) है। इसीको कुछ लोगोंने आलस्य नामसे भी पुकारा है। आलस्य नाम उचित नहीं जान पड़ता। शक्तिकी मितव्ययिताको आलस्य नहीं कहा जा सकता और न धनकी मितव्ययिताको कंजूसी। [८] **भावुकता**—भावुकताके कारण भी शब्दोंमें पर्याप्त ध्वनि-परिवर्तन देखा गया है। विशेषतः लोक प्रचलित व्यक्तिवाचक नाम तो अधिकांशतः इसी ध्वनि-परिवर्तनके परिणाम हैं। **दुलारीका दुल्लो, दुलिया** या **दुल्ली, मुखरामका मुक्खू, बच्चाका बचाऊ, मुन्नाका मुन्नू** तथा **कुमारीका कुम्मो** आदि इसीके उदाहरण हैं। सम्वन्ध-सूचक संज्ञाएँ अम्मा, चाची, वेटी प्यारपूर्ण भावुकतामें ही **अम्मी, चच्ची** या **चचिया** तथा **बिट्टो** या **बिट्टी** आदि हो गयी हैं। इसके कारण भाषापर स्थायी प्रभाव पड़ता तो अवश्य है किन्तु अधिक नहीं। [९] **बनकर बोलना**—बनकर बोलनेका ध्वनिपर अस्थायी प्रभाव ही अधिक पड़ता है। बहुतसे लोग **कहना**का **केना, बैठोका बेटो, बहनोंका बेनो, बहुत का बोत, आजका आज़, खानाका ख़ाना, शुभेच्छुका शुभेक्षु, छात्रका क्षात्र** तथा **सुमिरनाका शुमिरना** आदि बोलते हैं पर इसका भाषाकी ध्वनिपर स्थायी प्रभाव प्रायः संदिग्ध-सा है। यों ऐसा अनुमान लगता है कि हिन्दीका अखरोट और मखतूल शब्दोंका अख़रोट और मख़तूल हो जाना सम्भव है, इसीसे हुआ हो। इन, दोनों ही शब्दोंको 'ख' ध्वनिके कारण ही प्रायः अरबी या फ़ारसीका समझते हैं किंतु यथार्थतः ये दोनों ही हिन्दी शब्द हैं और इनमें 'ख' ध्वनि परिवर्तित होकर 'ख़' हो गयी है। इसके पीछे 'अज्ञान'का भी काम हो सकता है। [१०] **विभाषाका प्रभाव**—एक राष्ट्र, जाति या संघ, दूसरेके सम्पर्कमें आता है तो विचार-विनिमयके साथ ध्वनि-विनिमय भी होता है। एक दूसरेकी विशेष ध्वनियाँ एक दूसरेको प्रभावित करती हैं। अफ्रीकाके बुशमैन परिवारकी भाषाओंकी क्लिक ध्वनियाँ समीपके अन्य भाषा वर्गोंको प्रभावित कर रही हैं। कुछ लोगोंका विचार है कि भारोपीय भाषामें टवर्ग नहीं था। द्रविड़ोंके प्रभावसे भारतमें आनेपर आर्योंके ध्वनि-समूहमें उसका प्रवेश हो गया। इसी कारण आरम्भिक वैदिक मन्त्रोंमें इसका प्रयोग बहुत कम है, किन्तु बादमें इसका प्रयोग बहुत अधिक हो गया है। [११] **भौगोलिक प्रभाव**—ध्वनियोंपर भौगोलिक प्रभावके सम्बन्धमें सभी विद्वान् एक मत नहीं हैं। कुछ लोगोंके अनुसार यदि कोई जाति किसी स्थानसे हटकर अधिक ठंडे स्थानपर वस जाती है, तो उसमें विवृत ध्वनियोंका विकास नहीं होता और जो विवृत रहती हैं, उनका भी संवृतकी ओर झुकाव होने लगता है। गर्म देशमें जानेपर ठीक इससे उलटा ध्वनि-परिवर्तन होता है। जो लोग कहीं ऐसी जगह जाकर बस जाते हैं, जहाँ चारों ओर पहाड़ हो तो बहुधा अन्य लोगोंसे उनका सम्पर्क नहीं होता और स्वतन्त्र रूपसे वातावरणके अनुकूल, बिना बाहरी व्याघातके उनकी ध्वनियोंका धीरे-धीरे विकास होता है। इस सम्बन्धमें निश्चयके साथ कुछ कहना या उदाहरण देना तो सम्भव नहीं है, पर, जब मानसिक विकास, शारीरिक विकास, धर्म तथा संस्कृति आदि सभीपर भौगोलिक प्रभाव पड़ता है तो असम्भव नहीं है कि भाषा तथा भाषा-ध्वनिके विकासपर भी इसका प्रभाव पड़ता हो। [१२] **सामाजिक और राजनीतिक प्रभाव**—**सामाजिक अवस्थाके अनुसार** भी ध्वनियोंमें परिवर्तन होता रहता है। यदि किसी कमीके कारण अप्रसन्नता

और दुःखपूर्ण वातावरण रहा तो सामान्यतः लोग धीरेसे बोलते हैं। ऐसी दशामें भी संवृतकी ओर झुकाव रहता है और अनेक प्रकारकी असावधानियाँ होती हैं, इसी प्रकार यदि समाजमें युद्धका वातावरण रहा तो बोलनेकी गति बढ़ जाती है। अधिकतर, शब्दोंके कुछ ही भागपर जोर दिया जाता है, जिससे कुछ ध्वनियोंका लोप सम्भव होता है। कुछ लोगोंका कहना है कि युद्धके समय भाषाके परिवर्तनकी गति बहुत अधिक हो जाती है। इसके विरुद्ध यदि **समाजमें सुख-शान्ति रही** तो विद्याका प्रचार रहेगा और इसके कारण लोग अधिक शुद्ध बोलनेका प्रयास करेंगे। नवीन ध्वनियाँ जो अशुद्ध समझी जाती हैं, विकसित न हो सकेंगी। साथ ही जो थोड़ी विकसित हैं उनका लोप भी सम्भव है। इसी स्थितिमें **सांस्कृतिक पुनरुत्थान** भी होते हैं और इनका भी अपवाद स्वरूप कभी-कभी ध्वनि-पर प्रभाव पड़ता है। **वाराणसी** बेचारा सदियोंकी यात्रा करके **बनारस** बना था, पर, सांस्कृतिक जागरूकताके प्रवाहमें उसे फिर पीछे लौटकर २५ मई, १९५६को 'वाराणसी' हो जाना पड़ा। अंग्रेजोंने 'कलिकाता'को 'कलकत्ता' और 'मुंबई'को 'बंबई' कर दिया था। अब वे फिर अपना पूर्व रूप प्राप्त कर रहे हैं। [१३] **लिखनेके कारण--अंग्रेजीमें गुप्त, मित्र, मिश्र आदि लिखनेमें अन्तमें ए** (a) लिखनेका प्रभाव यह पड़ा है कि लोग न केवल गुप्ता, मित्रा, मिश्रा आदि कहने लगे हैं, अपितु हिन्दीमें भी यही लिखने लगे हैं। आश्चर्य तो यह है कि इसीसे प्रभावित होकर विश्वविद्यालयके विद्यार्थी **बुद्धा** और **अशोकाका** भी बातचीतमें 'बुद्ध' और अशोक'के स्थान-पर प्रयोग करते सुने जाते हैं। 'सहस्र'में 'त्र' का भ्रम होनेसे लोग 'सहस्त्र' और 'सहस्तर' कहने लगे हैं। देहरादूनमें 'सहस्रधारा'-को लोग सहस्तर धारा कहते हैं। कदाचित् उर्दू लिपिके कारण पंजाबियों तथा मुसलमानोंमें राजेन्दर, इन्दरजीत जैसे उच्चारण चल पड़े हैं। [१४] **शब्दोंकी असाधारण लम्बाई**--यह कारण अकेले कार्य न करके स्वराघात, शीघ्रता तथा उच्चारण-सुविधा आदिके साथ कार्य करता है। पर इतना तो कहा ही जा सकता है कि लम्बे शब्दोंमें ध्वनि-परिवर्तन अधिक होते हैं। असाधारण लम्बाईको सँभाल न सकनेसे लोग उसे छोटा कर देते हैं। 'उपाध्याय' महाराज 'झा'का रूप धारण करनेको अपनी लम्बाईके कारण ही बाध्य हुए हैं। 'जयरामजीकी' का 'जैराम' हो गया है। स्टेशनोंपर चाय-वाले 'चाय गरम' को 'चारम' कहते हैं। इसी कारण संक्षिप्त रूप भी चल पड़ते हैं। पाकिस्तानका 'पाक', युनाइटेड स्टेट ऑव अमेरिकाका 'यू० एस० ए०' या इन्टा, इप्टा, यूनेस्को आदि उदाहरण-स्वरूप लिये जा सकते हैं। 'पटियाला ईस्ट पंजाब स्टेट्स यूनियन'को 'पेप्सू' कहते थे। भारत-यूरोपीयका 'भारोपीय' तो अपना ही उदाहरण है। शुक्ल दिवसके लिए 'सुदि' या 'सुदी' (उजेला पक्ष) तथा बहुल कृष्ण दिवसके लिए 'बदी'के प्रयोग भी ऐसे ही हैं। [१५] **बलहीन व्यंजनका आधिक्य**--बलके विचारसे व्यंजनोंके दो वर्ग बनाये जा सकते हैं। (१) बली (पंचवर्गोंके प्रथम चार स्पर्श व्यंजन)। (२) बलहीन (पाँच अनुनासिक, अन्तस्थ और ऊष्म)। जिन शब्दोंमें बलहीन व्यंजन अधिक होते हैं, उनमें ध्वनि-परिवर्तन अधिक शीघ्रतासे होता है। फ्रांसीसी विद्वान् वेन्द्रियेके अनुसार तो शब्द विशेषमें अपने स्थान विशेषके कारण भी कुछ ध्वनियाँ बलहीन हो जाती हैं और बली व्यंजनोंसे उनका युद्ध आरम्भ हो जाता है और अन्तमें बली ध्वनि परास्त करके उस बलहीन ध्वनिको निकाल बाहर करती है। इसका कारण कदाचित् यह है कि बलहीन व्यंजनोंका उच्चारण अधिक अनिश्चित होता है। [१६] **स्वाभाविक विकास या परिवर्तन**--कुछ शब्दोंकी

ध्वनियोंमें घिसकर स्वाभाविक विकास हो जाता है। प्रयोगमें आनेपर जिस प्रकार प्रत्येक वस्तु घिसती है उसी प्रकार शब्द भी। ध्वनियोंके इस विकासको स्वयं (unconditional) विकास कहा जाता है। 'मया'से 'मैं' या 'वर्तते'से 'बा' या 'बाटे'-का विकास ऐसा ही है। अकारण अनुनासिकता (सर्पसे साँप या कूपसे कूआँ) भी प्रायः स्वयंभू विकास है। [१७] **कवितामें मात्रा, तुक या कोमलताके लिए परिवर्तन**-मात्रा या तुकके लिए जानबूझकर कवि लोग शब्दोंमें मनमाना ध्वनि परिवर्तन ला देते हैं। रीतिकाल (हिन्दी साहित्य)के कवियोंमें यह बात अधिक पायी जाती है। संत साहित्यमें भी इसकी कमी नहीं है। मात्रा ठीक करनेके लिए किम्मति (कीमत), छेक उकुति (छेकोक्ति), हथ्थार (हथियार) तथा सत्थ (साथ) आदिका प्रयोग मिलता है। तुकके लिए धंका (धक्का), चंका (चक्का), नाँदिया (नंदी) तथा विकरार (विकराल) आदि जैसे प्रयोग भी प्रचलित रहे हैं। कुछ कवियोंने शब्दों-को कोमल बनानेके लिए अपभ्रंशवाली पद्धतिका अनुसरण किया है और अन्तिम अकारको उकारमें परिवर्तित कर दिया है। जैसे कमलु (कमल), डरियतु (डरयत) और बहतु (बहत) आदि। तुलसीमें 'राय' का 'राया' तथा 'राई' आदि भी तुकके लिए ही किया गया है। कहना न होगा कि इसका भी प्रभाव भाषापर प्रायः स्थायी नहीं माना जा सकता। [१८] **सादृश्य** (analogy)--कुछ शब्द किसी दूसरेके सादृश्यके कारण अपनी ध्वनियोंका परिवर्तन कर लेते हैं। **पैंतीसके** सादृश्यपर **सैंतीस**में अनुनासिकता आ गयी है। संस्कृतमें द्वादशमें सादृश्यपर एकदश भी एकादश हो गया। मुझ (= मह्यं)का उकार तुझ (= तुभ्यं)के सादृश्यसे है। 'देहात' से 'देहाती'के सादृश्यपर 'शहरी' 'शहराती' हो गया है। 'स्वर्ग'के सादृश्य-पर 'नरक' 'नर्क' हो गया है। सच पूछा जाय तो सादृश्य स्वयं कारण न होकर कार्य है। इसका भी प्रधान कारण सुगमता ही है, पर यहाँपर सुगमताकी प्राप्ति किसी विशेष शब्दके आधारपर होती है, अतः इसे अलग रख दिया गया है। इसी प्रकार सुक्खका क् दुक्ख (दुःख)के सादृश्यके कारण आ गया है। 'पिंगला'के सादृश्यपर 'इड़ा' का 'इंगला' या निर्गुणके कारण सगुणका सर्गुण हो गया है। [१९] **बलाघात**--बलाघातके कारण भी ध्वनि-परिवर्तन हो जाता है। किसी ध्वनिपर बल देनेमें श्वासका अधिक भाग उसीके उच्चारणमें व्यय करना पड़ता है। परिणाम यह होता है कि आस-पासकी ध्वनियाँ कमजोर पड़ जाती हैं और धीरे-धीरे उनका लोप हो जाता है। **अभ्यन्तर**में बीचमें बल है अतः आरम्भका 'अ' समाप्त हो गया और **भीतर** बन गया। **उपाध्याय**से झामें यही बात है। पंजाबी लोगोंके मुँहसे इसी कारण बरीक (बारीक), बज़ार (बाज़ार), सहित्य (साहित्य), अलोचना (आलोचना) सुनायी पड़ता है। डाइरेक्टर और फ़ाइनेन्सका उच्चारण बलके कारण ही डिरेक्टर और फिनैन्स हो गया है। अलाबु-का लाउ और लौ (की) है। 'अस्ति'से 'है', 'तत्स्थाने'से 'तहाँ' आदि भी इसके उदाहरण हैं। (२०) **किसी विदेशी ध्वनिका अपनी भाषामें अभाव**--जब कोई भाषाभाषी किसी दूसरी भाषाके संपर्कमें आता है और उस विदेशी भाषामें यदि कुछ ऐसी ध्वनियाँ रहती हैं जो उसकी अपनी भाषामें नहीं रहतीं तो प्रायः वह उधार लिये गये शब्दोंमें उन ध्वनियोंके स्थानपर अपनी भाषाकी उनसे मिलती-जुलती या निकटतम ध्वनियोंका प्रयोग करता है और इस प्रकार ध्वनि-परिवर्तन हो जाता है। भारतीय भाषाओंमें समय-समयपर यूनानी, इब्रानी, जापानी, चीनी, तुर्की, अरबी, फ़ारसी, अंग्रेजी तथा पुर्त-

गाली आदि भाषाओंके बहुतसे शब्द लिये गये हैं और इन सभीमें ऐसा हुआ है। कुछ उदाहरण लिये जा सकते हैं। अंग्रेजीमें ट तथा ड ध्वनि हिन्दीके ट, ड के समान न तो मूर्द्धन्य था तालव्य है और न त, द के समान दन्त्य। ये वर्त्स हैं। अतः स्वभावतः उन अंग्रेज़ी शब्दोंमें जो हिन्दीमें आये हैं ये ध्वनियाँ या तो मूर्द्धन्य या तालव्यमें परिवर्तित हो गयी हैं जैसे——'रिपोर्ट'से 'रपट', 'डेस्क'से 'डिकस' या 'डेक्स', या दन्त्यमें जैसे——'आगस्ट'से 'अगस्त', 'डेसेंबर'से 'दिसम्बर'। इसी प्रकार अंग्रेज़ीके दन्त्य-संघर्षी 'थ़' तथा 'द़' हिन्दी उर्दूमें दन्त्य स्पर्श थ, द तथा लोक भाषाओंमें अरबी, फ़ारसी और अंग्रेज़ी आदिके क़, क ख़, ख, ग़ ग, तथा ज़ ज हो गये हैं। [२१] **अन्ध-विश्वास**——अन्ध-विश्वासके कारण भी कभी-कभी ध्वनि परिवर्तन हो जाता है। इसके उदाहरण अपवाद-स्वरूप ही कुछ मिलते हैं। हिन्दीका एक उदाहरण यहाँ दिया जा रहा है। 'गोभी' एक प्रसिद्ध तरकारी है। इसके आरम्भमें गो (=गाय)की ध्वनि है, अतएव पूर्वी जिलोंमें बहुतसे धार्मिक लोग खानेवाली चीज़ होनेके कारण इसे गोभी न कहकर 'कोभी' या कभी-कभी 'कोबी' कहते रहे हैं, यद्यपि अब यह उच्चारण नहीं सुनाई पड़ता। कुछ लोग 'संधि'को भी ध्वनि- परिवर्तनका कारण मानते हैं। वस्तुतः यह कारण न होकर तेज़ बोलनेके कारण हुआ कार्य है।

ध्वनि-परिवर्तनके प्रकार——(दे०) **ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ**।

ध्वनि-परिवर्तनके रूप या स्वरूप——(दे०) **ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ**।

ध्वनि-प्रक्रिया——**ध्वनि-प्रक्रिया-विज्ञान** (दे०)-का एक अन्य नाम।

ध्वनि-प्रक्रिया-विज्ञान——ऐतिहासिक **ध्वनि-विज्ञान** (दे०)का एक अन्य नाम।

ध्वनि-प्रतिस्थापन (replacing) एक प्रकारका **संबंध तत्त्व** (दे०)।

ध्वनि-प्रतीक (vocal symbol)——भाषामें शब्द भावों, विचारों या वस्तुओंके प्रतीक होते हैं। इन शब्दोंका आधार ध्वनि है। इस प्रकार शब्द, 'वस्तुओं' या 'भावों' आदिके ध्वन्यात्मक प्रतीक या ध्वनि-प्रतीक हैं। 'पानी' शब्द प् + आ + न् + ई इन ध्वनियोंसे बना है अतः ध्वन्यात्मक है और पानी नामक द्रव पदार्थका भाव व्यक्त करता है, अतः उसका प्रतीक है अर्थात् यह ध्वन्यात्मक प्रतीक है। ये ध्वनि-प्रतीक ही भाषाके आधार हैं। (दे०) **भाषा**।

ध्वनि-प्रवृत्ति (phonetic tendency)——(दे०) **ध्वनि-नियम**।

ध्वनि बलाघात——**बलाघात** (दे०)का एक भेद।

ध्वनि-भूगोल (phono-geography)——(दे०) **भाषा-भूगोल**।

ध्वनिमात्र विज्ञान——**ध्वनिग्राम विज्ञान** (दे०)-का एक अन्य नाम।

ध्वनिमूलक लिपि (phonetic writing)——लिपिका एक अत्यंत विकसित रूप। **चित्र-लिपि** (दे०) तथा **भावमूलक लिपि** (दे०)में चिह्न किसी वस्तु या भावको प्रकट करते हैं। उनसे उस वस्तु या भावके नामसे कोई संबंध नहीं होता। पर इसके विरुद्ध ध्वनि-मूलक लिपिमें लिपि-चिह्न किसी वस्तु या भावको न प्रकट कर ध्वनिको प्रकट करते हैं, और उनके आधारपर किसी वस्तु या भावका नाम लिखा जा सकता है। नागरी, अरबी तथा अंग्रेज़ी आदि भाषाओंकी लिपियाँ ध्वनि-मूलक ही हैं। ध्वनि-मूलक लिपिके दो भेद हैं——(क) अक्षरात्मक (syllabic) (ख) वर्णात्मक (alphabetic)। **(क) अक्षरात्मक लिपि**——अक्षरात्मक लिपिमें चिह्न किसी अक्षर (syllabic)को व्यक्त करता है, वर्ण (alphabet)को नहीं। उदाहरणार्थ नागरी लिपि अक्षरात्मक है। इसके 'क' चिह्नमें क् + अ (दो वर्ण) मिले हैं, किंतु इसके विरुद्ध रोमन लिपि वर्णा-

त्मक है। उसके K में केवल 'क्' है। अक्षरात्मक लिपि सामान्यतया प्रयोगकी दृष्टिसे तो ठीक है, किंतु भाषा-विज्ञानमें जब हम ध्वनियोंका विश्लेषण करते चलते हैं तो इसकी कमी स्पष्ट हो जाती है। उदाहरणार्थ हिन्दीका 'कक्ष' शब्द लें। नागरी लिपिमें इसे लिखनेपर स्पष्ट पता नहीं चलता कि इसमें कौन-कौन वर्ण हैं, पर, रोमन लिपिमें यह बात (kaks'a) बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है। नागरीमें इसे देखनेपर लगता है कि इसमें दो ध्वनियाँ हैं पर रोमनमें लिखनेपर सामान्य पढ़ा-लिखा भी कह देगा कि इसमें पाँच ध्वनियाँ हैं। अरबी, फ़ारसी, बंगला, गुजराती, उड़िया, तमिल, तेलगू आदि लिपियाँ अक्षरात्मक ही हैं। (ख) **वर्णात्मक लिपि**--लिपि-विकासकी प्रथम सीढ़ी चित्र लिपि है तो इसकी अंतिम सीढ़ी वर्णात्मक लिपि है। वर्णात्मक लिपिमें ध्वनिकी प्रत्येक इकाई (स्वर या व्यंजन) के लिए अलग-अलग चिह्न होते हैं और उनके आधारपर सरलतासे किसी भी भाषाका कोई भी शब्द लिखा जा सकता है। भाषा-विज्ञानकी दृष्टिसे यह आदर्श लिपि है। रोमन लिपि प्रायः इसी प्रकारकी है। ऊपर नागरी और रोमनमें 'कक्ष' लिखकर अक्षरात्मक लिपि और वर्णात्मक लिपिके भेदको तथा अक्षरात्मककी तुलनामें वर्णात्मक लिपिकी श्रेष्ठताका संकेत दिया जा चुका है। (दे०) **अक्षरात्मक लिपि, वर्णात्मक लिपि**।

ध्वनि-यंत्र--**स्वर-यंत्र** (दे०) का एक अन्य नाम।

ध्वनियोंका वर्गीकरण--ध्वनियाँ मुँहसे उच्चरित (दे० **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान**) होती हैं, और इनकी तरंगें (दे० **ध्वनि-श्रवण**) वातावरणमें चलकर दूसरेके कानतक पहुँचती हैं और दूसरा व्यक्ति उन्हें सुन लेता है। इस प्रकार इसके तीन रूप हैं या अथसे इतितक इसकी तीन स्थितियाँ हैं; **उत्पत्ति, गमन, श्रवण**। वस्तुतः ध्वनियोंका वर्गीकरण और नामकरण इन **तीनों ही आधारों**पर किया जा सकता है। (क) उत्पत्तिमें करण (articulator) की सहायतासे विशेष स्थानसे विशेष प्रयत्न द्वारा हम उच्चारण करते हैं, अतः इनके आधारपर भी ध्वनियाँ वर्गीकृत की जा सकती हैं। (ख) उत्पन्न होते ही ध्वनियोंकी लहरें बनती हैं और वे लहरें स्वरूप, तीव्रता, गति आदिकी दृष्टिसे विभिन्न प्रकारकी होती हैं, जैसा कि तरह-तरहके यंत्रोंसे उनके बारेमें पता चलता है। इन लहरोंके आधारपर भी ध्वनियोंका वर्गीकरण किया जा सकता है। (ग) सुननेवालेपर ध्वनियोंका प्रभाव पड़ता है, अतः श्रवण-प्रतिक्रिया या श्रवण प्रभावके आधारपर भी ध्वनियोंको वर्गीकृत किया जा सकता है।

इन तीनों वर्गीकरणोंमें जहाँतक तीसरेका सम्बन्ध है एक तो वह वस्तुगत (objective) न होकर आत्मगत (subjective) है, अर्थात् उसका प्रभाव सुननेवालेपर निर्भर करता है। सुननेवाला जिसे मीठी आवाज समझता है, उसे दूसरा कुछ और समझ सकता है, अतः उसके आधारपर दिया गया नाम या किया गया वर्गीकरण वस्तुतः उसके लिए तो सुबोध होगा, किन्तु दूसरेके लिए नहीं होगा। साथ ही ध्वनि-श्रवणके प्रभावको व्यक्त करनेके लिए अभीतक संसारकी किसी भी भाषामें स्पष्ट और पर्याप्त शब्दावलीका अभाव है। केवल मधुर, कर्कश, भारी, पतली, मोटी, भर्राई, उखड़ी, टूटी आदि कुछ ही शब्दोंके द्वारा स्पष्ट रूपसे सभी भाषा-ध्वनियोंका ठीक वर्णन नहीं किया जा सकता। इस प्रकार श्रवणके आधारपर हमारा काम नहीं चल सकता, यद्यपि चल पाता तो बहुत अच्छा होता। दूसरा आधार लहरोंका है। इन ध्वनि-लहरोंको हम आँखसे नहीं देख सकते और न तो बहुत कीमती और जटिल यंत्रोंकी सहायताके बिना उनके बारेमें कुछ जान ही सकते हैं। ऐसी स्थितिमें इस आधारपर

ध्वनियोंका अध्ययन-विश्लेषण-वर्गीकरण-नामकरण बहुत व्ययसाध्य तो है ही, साथ ही यह भौतिकशास्त्रज्ञके ही वशका है, भाषा-विज्ञानज्ञके वशका नहीं। विश्वके प्रसिद्ध भाषाविज्ञानज्ञोंमें ऐसे लोग बहुत ही कम हैं जो इन यंत्रोंका पूरा उपयोग कर सकते हैं। ऐसी स्थितिमें यह आधार भी हमारे बहुत कामका नहीं है। यों इन यंत्रोंके पूर्ण विकास और बहुतसे लोगोंके भौतिक-शास्त्री भाषाविज्ञानज्ञ होनेपर लहरोंकी सहायतासे भाषाके बारेमें बहुत कुछ बहुत सही और निश्चित रूपमें जाना जा सकता है, अतः इसे भविष्यका विषय मानकर फिलहाल हमें अपना ध्यान इसपरसे भी हटाना होगा।

शेष रहता है पहला आधार। वस्तुतः यह आधार बहुत अच्छा नहीं है। ध्वनि पैदा करनेवाले अवयवोंके आधारपर ध्वनि-का नामकरण तो वैसा ही है जैसे कोई मेज़-पर हाथसे मारे तो निकलनेवाली आवाज-को हम **'हाथ-मेज आवाज'** नाम दें। यह नाम कितना हास्यास्पद है, कहनेकी आवश्यकता नहीं। इसी प्रकार 'थप्पड़-मुँह ध्वनि' 'डंडा-पीठ ध्वनि' या 'सिर-दीवार' ध्वनि भी नाम रखे जा सकते हैं पर ये सभी वस्तुतः नाम नहीं हैं, अपितु नामकी विडम्बना है। कहना न होगा कि मुँहसे निकलनेवाली ध्वनियोंको भी 'द्वयोष्ठ्य' या 'दंतोष्ठ्य' आदि कहना उसी रूपमें और उतना ही हास्यास्पद है, किन्तु अन्य दोनों आधारोंके अव्यावहारिक होनेपर हारकर भाषा-विज्ञानविदोंको इसीका सहारा लेना पड़ा है। यों यह प्रसन्नताका विषय है कि हास्यास्पद होते हुए भी यह आधार बिल्कुल ही अव्ययसाध्य, वस्तुगत एवं सरल है और इसके आधारपर बिना किसी विशेष परेशानी-के ध्वनियोंका नामकरण, वर्गीकरण आदि किया जा सकता है। यों इसमें कुछ थोड़ी सहायता अन्य दो (तथा अगले)से भी ली जा सकती है। उपर्युक्त तीन आधारोंका आधार था, (१) ध्वनिकी उत्पत्ति, (२) उसका गमन और (३) श्रवण। भाषामें ध्वनिका प्रयोग होता है, अतः (४) प्रयोगके आधारपर भी ध्वनियोंका वर्गीकरण किया जा सकता है।

स्वर और व्यंजन—ध्वनियोंका सबसे-अधिक प्रचलित और प्राचीन वर्गीकरण **स्वर** और **व्यंजन**के रूपमें मिलता है। यूरोपमें इस प्रसंगमें प्रथम नाम प्रसिद्ध और एक प्रकारसे सच्चे अर्थोंमें प्रथम यूनानी वैयाकरण डायोनिशस थ्रैक्सका लिया जाता है। उन्होंने 'व्यंजन' उन ध्वनियोंको कहा **जिनका उच्चारण स्वरोंकी सहायताके बिना नहीं किय जा सकता**, और 'स्वर' उन ध्वनियों-को कहा **जिनका उच्चारण बिना किसी अन्य ध्वनिकी सहायताके किया जा सकता है** (consonant शब्दका सम्बन्ध लैटिन शब्द consonantem से है जिसका अर्थ है 'दूसरेके साथ ध्वनित या उच्चरित होनेवाला')। थ्रैक्सका समय ईसा पूर्व दूसरी सदी है। संस्कृतमें **'स्वर'** शब्दका प्रथम प्रयोग यों तो ऋग्वेदमें मिलता है। वहाँ इसका अर्थ **'ध्वनि'** है। (यह शब्द 'स्वृ' धातुसे बना है जिसका अर्थ 'ध्वनि करना' है) और आगे चलकर इसका अर्थ **'बलाघात'** या **'सुर'** हो गया। ऐतरेय ब्राह्मणमें इस अर्थमें इसका प्रयोग है। और आगे चलकर यह आजके प्रचलित अर्थ (vowel या ध्वनिका एक भेद) में प्रयुक्त होने लगा। इस अर्थमें प्रथम प्रयोग संभवतः ऐतरेय आरण्यकमें मिलता है। ऐतरेय आरण्यकके उसी प्रसंगसे यह भी पता चलता है कि इस अर्थमें पहले **घोष** शब्दका प्रयोग होता था (तस्य यानि व्यञ्जनानि तच्छरीरम्, यो घोषः स आत्मा)। **'व्यंजन'**का सम्बन्ध 'अञ्ज' (=प्रकट करना) धातुसे है और इसका अर्थ है 'जो प्रकट हो'। ध्वनिके विशेष रूप (consonant)के अर्थमें व्यंजन शब्दका प्रयोग भी ऐतरेय आरण्यकसे पहले शायद कहीं नहीं मिलता। ऊपर ऐतरेय

आरण्यकसे जो उदाहरण दिया गया है, उससे यह भी स्पष्ट है कि उस कालतक भाषामें **स्वर**के महत्त्वको पहचाना जा चुका था। आगे चलकर इसी बातको दूसरे शब्दोंमें पतंजलिने कहा। पतंजलि महाभाष्यमें लिखते हैं--'स्वयं राजन्ते स्वरा अन्वग् भवति व्यञ्जनमिति।' 'व्यञ्जनानि पुनर्नटभार्यावद् भवन्ति। तद् यथा नटानां स्त्रियो रङ्गं गता यो यः पृच्छति कस्य यूयं कस्य यूयमिति तं तं तवेत्याहु। एवं व्यञ्जनान्यपि यस्य यस्याचः कार्यमुच्यते तं तं भजन्ते।' इसी बातको अन्यत्र भी कहा गया है--'यः स्वयं राजते तं तु स्वरमाह पतञ्जलिः। उपरि स्थायिना तेन व्यङ्ग्यं व्यञ्जनमुच्यते।' याज्ञवल्क्य शिक्षामें भी कहा गया है--
"दुर्बलस्य यथा राष्ट्रं हरते बलवान्नृपः।
दुर्बलं व्यञ्जनं तद्वद्धरते बलवान् स्वरः॥"
'वृत्तित्रय वार्तिक' आदि अन्य कई प्राचीन ग्रंथोंमें भी इसी प्रकारकी बातें व्यक्त की गयी हैं। ऊपरके सारे उद्धरणोंमें **स्वर**की प्रधानता तथा **व्यंजन**की अप्रधानताकी बात तो है, किन्तु **स्वरके स्वयं उच्चरित होने** तथा **व्यंजनके स्वरकी सहायतासे उच्चरित होने**की बात स्पष्ट नहीं है। पतंजलिने अन्यत्र--'न पुनरन्तरेणाचं व्यञ्जनस्योच्चारणमपि भवति'--इस बातको स्पष्ट शब्दोंमें कहा है। पतंजलि और प्रसिद्ध ग्रीक वैयाकरण थ्रैक्स एक ही सदीमें हुए थे। यह अजीब बात है कि **स्वर-व्यंजन**के बारेमें आजसे २१-२२ सौ वर्ष पूर्व थ्रैक्स जो बात यूनानमें कह रहे थे, वही बात भारतमें पतंजलि कह रहे थे। यों भारतके लिए यह श्रेयकी बात है कि उस समयसे भी ७-८ सौ वर्ष पहले अस्पष्ट रूपमें ही सही इस धारणाके बीज पड़ चुके थे, जिसके संकेत ब्राह्मण तथा आरण्यक ग्रंथोंमें मिलते हैं।

कहना न होगा कि भारत और यूरोप द्वारा प्रस्तुत यह परिभाषा कि **व्यंजन** वे हैं, जिनका उच्चारण स्वरकी सहायताके बिना नहीं हो सकता और **स्वर** वह है जिसका हो सकता है, ठीक नहीं है। हिन्दीके तथाकथित अकारान्त शब्द यथार्थतः व्यंजनान्त हैं, अर्थात् उनके अंतमें **व्यंजन** अकेले बिना **स्वर**की सहायताके उच्चरित होता है जैसे राम्, राख्, आप् आदि। इसके अतिरिक्त कई भाषाओंमें ऐसे पूरे-के-पूरे शब्द हैं, जिनमें एक भी स्वर नहीं है। अतः **व्यंजन**के **स्वर**की सहायता बिना न उच्चरित होनेकी तो बात ही क्या, पूरे शब्द स्वरकी सहायताके बिना उच्चरित हो सकते हैं। रूमानिया तथा अफ्रीकाकी भाषाओंमें ऐसे शब्द हैं। उदाहरणार्थ अफ्रीकाकी इबो भाषामें ङ ग्ङ ग्ङ (पार्सल)। चैक भाषाका तो एक पूरा वाक्य ऐसा है, जिसमें एक भी **स्वर** नहीं है--'Strc prst skrz krk [= गले (अपने) में उँगली दबाओ]। इस प्रकार **स्वर-व्यंजन**की यह परिभाषा भ्रामक है। दोनोंका ही उच्चारण किया जा सकता है (मनोरमाकारने एक स्थानपर संकेत किया है कि उच्चारण सभी ध्वनियोंका हो सकता है किन्तु मात्र **व्यंजन**का उच्चारण सरल नहीं है। यह बात अस्वीकार्य नहीं कही जा सकती)। स्, ज्, श् आदिके उच्चारणमें यह बहुत स्पष्ट है। इस बातका अनुभव पिछली सदीमें ही किया गया और हवाके प्रवाहकी अनवरतताके आधारपर इन दोनों (स्वर, व्यंजन) में भेद किया गया। प्रसिद्ध भाषाशास्त्रियोंमें स्वीट, पालपासी, डैनियल जोन्स आदि बहुतोंने इसे स्वीकार किया है। इन लोगोंके अनुसार :

'स्वर वह घोष (कभी-कभी अघोष भी) ध्वनि है जिसके उच्चारणमें हवा अबाध गतिसे मुख-विवरसे निकल जाती है।'

'व्यंजन वह ध्वनि है जिसके उच्चारणमें हवा अबाध गतिसे नहीं निकलने पाती। या तो उसे पूर्णतः अवरुद्ध होकर फिर आगे बढ़ना पड़ता है, या संकीर्ण मार्गसे घर्षण खाते हुए निकलना पड़ता है या मध्य रेखासे हटकर एक या दोनों पार्श्वोंसे निकलना पड़ता है या किसी भागको कंपित करते

हुए निकलना पड़ता है। इस प्रकार वायु मार्गमें पूर्ण या अपूर्ण अवरोध उपस्थित होता है।'

लगभग यही परिभाषा आर्मफील्ड, वेस्टर-मैन, वार्ड, ग्रे, ब्लाक और ट्रैगर आदिने भी मानी है, किन्तु साथ ही इन लोगोंने यह भी प्रायः स्पष्ट शब्दोंमें व्यक्त कर दिया है कि यह परिभाषा भी पूर्णतः ठीक नहीं है और इस रूपमें **स्वर** और **व्यंजन**में स्पष्ट रूपसे कोई सीमा-रेखा खींचना असम्भव है। बात ठीक भी है। ईख, ऊबमें ई, ऊ में हवा बिना अवरोध निकल जाती हो, ऐसी बात नहीं है। इनकी तुलनामें तो 'ह' के उच्चारणमें अवरोध प्रायः नहीं-सा है। केनियन तो 'ल'की तुलनामें 'ई'में अधिक अवरोध मानते हैं। यह बात स्पष्ट समझ लेनी चाहिये कि यहाँ जिस अवरोधकी कमी-बेशीकी बात की जा रही है वह मुँहका है, स्वर यंत्रका नहीं; क्योंकि स्वर-यंत्रमें सभी घोष व्यंजनोंकी भाँति स्वरोंमें भी अवरोधके कारण घर्षण होता है। इस प्रकार उस प्राचीन परिभाषाकी भाँति ही यह नवीन परिभाषा भी ठीक नहीं है। इसी कारण कुछ नवीन ध्वनिशास्त्रियोंने **स्वर** और **व्यंजन**के प्रति अपनी अनास्था व्यक्त करते हुए नये नामोंका व्यवहार किया है। पाइकने उच्चारण और श्रवण-प्रभावके आधारपर ध्वनियोंके **वक्वॉइड** (vocoid) और **कण्टॉइड** (contoid) दो भेद किये हैं। उनका 'वक्वॉइड', **स्वर** (vowel)के बहुत समीप होते हुए भी उससे भिन्न है। यही बात '**कण्टॉइड**' और **व्यंजन** (Consonant)के भी बारेमें है। हॉकिट आदि कुछ अन्य विद्वान् भी इसके पक्षमें हैं। हेफ्नरने दूसरे ही शब्दोंका प्रयोग किया है। वे ध्वनियोंको **सिलेबिक** (syllabic) अर्थात् **आक्षरिक** और **नॉन्‌सिलेबिक** (non syllabic) या **अनाक्षरिक** दो वर्गोंमें रखते हैं। कहना न होगा कि भारतमें भी कुछ लोगोंका मत लगभग इसी प्रकारका था जिसका उल्लेख हो चुका है। 'सिलेबिक' स्वरका समानार्थी न होता हुआ भी उससे निकट है और 'नानसिलेबिक' व्यंजनका पर्यायवाची न होता हुआ भी उससे बहुत दूर नहीं है। पूरी समस्यापर विचार करनेपर ऐसा कहना पड़ता है कि नये नामोंमें समस्याका हल नहीं दीखता। नये नाम लेकर इन विद्वानोंने जो परिभाषाएँ दी हैं, वे ही **स्वर** और **व्यंजन**को भी दी जा सकती हैं। आवश्यकता नये नामोंकी न होकर **स्वर** और **व्यंजन**की नयी परिभाषाकी है, उनके बीच यदि अन्तर है तो उसे स्पष्ट करनेकी है, और यदि नहीं है तो उसे स्पष्ट शब्दोंमें स्वीकार करनेकी है। साथ ही दोनोंमें बहुत दो-टूक अन्तर न होनेपर भी यदि उनकी प्रायोगिक सार्थकता है तो बिना किसी झिझकके एक ओर अन्तरकी अस्पष्टताको स्वीकार करनेकी है और दूसरी ओर उन्हें भाषाके अध्ययनमें अपनाने और उनके महत्त्वको उचित रूपमें पहचाननेकी है।

इन पंक्तियोंके लेखकका विश्वास है कि प्राचीनकालसे अबतक **स्वर-व्यंजन**के भेदके बारेमें विश्वमें कहीं भी जो बातें कही गयी हैं, वे पूर्णतः सत्य तो नहीं हैं किन्तु अंशतः सत्य अवश्य हैं, अतः उन्हें किसीको भी बिलकुल व्यर्थ मान बैठना बहुत ठीक नहीं है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है :

(१) **स्वरों**का उच्चारण अकेले भी सरलतासे किया जा सकता है, किन्तु **व्यंजनों**का अकेले उच्चारण करनेमें स, ज, श् आदि कुछ अपवादोंको छोड़कर प्रायः विशेष सावधानी अपेक्षित है। अस्फोटित स्पर्श भाषामें या तो शब्दान्त (अन्त्)में आते हैं या अन्य स्थानोंपर किसी **व्यंजन**के पूर्व संयुक्त रूपमें (प्लेग)। ऐसी स्थितियोंमें इनका स्वरविहीन उच्चारण होता है, किन्तु स्वतन्त्र उच्चारणमें, स्फोटित स्पर्शके उच्चारणमें चाहे जितनी भी सावधानी बरती जाय, थोड़ी-सी **स्वर**-ध्वनि सुनाई

पड़ ही जाती है (क्, प्)। (२) प्रायः **सभी स्वरों** (इ, उ आदि कुछ ह्रस्व स्वरों-को छोड़कर)का उच्चारण देरतक किया जा सकता है। **व्यंजनों**में केवल संघर्षी ल् और र् ही ऐसे हैं, शेषका उच्चारण देरतक नहीं हो सकता। (३) एक-दो (ई, ऊ) अपवादोंको छोड़कर अधिकांश **स्वरों**के उच्चारणमें मुख-विवरमें हवा गूंजती हुई बिना विशेष अवरोधके निकल जाती है। अधिकांश **व्यंजन** इसके विरोधी हैं और उनमें पूर्ण या अपूर्ण अवरोध हवाके मार्गमें व्यवधान उपस्थित करता है। (४) सभी **स्वर** आक्षरिक (syllabic)हैं। संध्यक्षरों (diphthong)में अवश्य कुछ **स्वरों**का अनाक्षरिक स्वरूप दिखाई पड़ता है, किन्तु वह अपवाद-जैसा है। दूसरी ओर प्रायः सभी **व्यंजन** सामान्यतः अना-क्षरिक (non-syllabic) हैं। अपवाद-स्वरूप न्, म्, र्, ल् आदि चार-पाँच **व्यंजन** ही कभी-कभी कुछ भाषाओंमें आक्षरिक रूपमें दृष्टिगत होते हैं। यह आधार प्रायोगिक है। (५) मुखरता (sonority)की दृष्टिसे भी **स्वर-व्यंजन**में भेद है। **स्वर** अपेक्षाकृत अधिक मुखर होते हैं और **व्यंजन** कम मुखर। कुछ अपवाद भी हैं, किन्तु वे अप-वाद ही हैं। यों जैसा कि इसी अध्यायमें अन्यत्र दिखाया जायगा, इस दृष्टिसे **स्वरों** और **व्यंजनों**के अलग-अलग स्तर बनाये जा सकते हैं। यह आधार श्रवणीयताका है। (६) ऑसिलोग्रॉफ आदि यंत्रोंमें **स्वर** और प्रमुख **व्यंजनों**की लहरोंमें भी अन्तर मिलता है। हाँ, यह अवश्य है कि र्, म् आदि कुछ व्यंजनोंकी लहरें प्रकृतिकी दृष्टिसे **स्वर** और **व्यंजन**के बीचमें आती हैं।

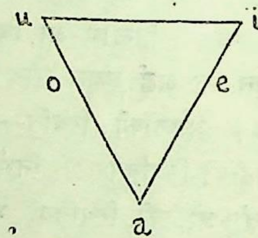
इस प्रकार, सभी **स्वरों** और **व्यंजनों**में (क) स्पष्ट, दो-टूक भेद नहीं है; (ख) कुछ धुंधला-सा भेद अवश्य है जिसका आधार श्रवणीयता, प्रायोगिकता और उच्चारण आदि है; (ग) यदि इन दृष्टियों-से स्पष्ट भेदवाले कुछ स्वरोंको एक वर्गमें रखकर उन्हें **स्वर** ; स्पष्ट भेदवाले कुछ व्यंजनोंको एक वर्गमें रखकर **व्यंजन**; और स्पष्ट भेद न रखनेवाले स्वरों और व्यंजनोंको **मिश्र** या **अन्तस्थ** शीर्षकके अन्तर्गत तीन वर्गोंमें रख दिया जाय तो विशेष कठिनाई न होगी। यों स्पष्ट भेद न रहनेपर भी शुद्ध व्यावहारिक दृष्टिसे परम्परागत रूपमें कुछ ध्वनियोंको **स्वर** और कुछको **व्यंजन** कहना और उसी रूपमें उनपर विचार करना कई दृष्टियोंसे बहुत उपयोगी है, इसीलिए सभी ध्वनिशास्त्रियों-को किसी न किसी रूप या नामसे इन्हें स्वीकार करना पड़ा है।

स्वरोंका वर्गीकरण—स्वरोंके वर्गीकरणके प्रमुख आधार निम्नांकित हैं : (१) **जीभ-का कौन-सा भाग करण अर्थात् उच्चारण करनेमें प्रमुख सहायक अंग** (articula-tor)**का कार्य करता है?** स्वरोंके उच्चा-रणमें भीतरसे आती हवाके रास्तेमें कोई खास रुकावट प्रायः नहीं होती। जो ध्वनि सुनाई पड़ती है उसका वह स्वरूप प्रमुखतः निर्भर करता है मुँहमें हवाके गूँजनेपर। विभिन्न स्वरोंके लिए गूँजनेके लिए मुख-विवर विभिन्न रूप धारण करता है। इस काममें जीभका **अग्र, मध्य** या **पश्च** भाग ऊपर उठकर मुँहकी सहायता करता है। इस प्रकार स्वरके उच्चारणमें जीभका जो भाग (अग्र, पश्च, मध्य) व्यवहृत होता है उसके आधारपर उसे **अग्र स्वर, पश्च स्वर** या **मध्य स्वर** नाम देते हैं। आशय यह कि इस आधारपर स्वरोंके प्रमुखतः **अग्र, पश्च, मध्य** ये तीन वर्ग बनते हैं। यों और सूक्ष्मतासे विचार करके और भी वर्ग बनाये जा सकते हैं। हिन्दी स्वरोंमें इ, ई, ए **अग्र** हैं, उ, ऊ, ओ, आ **पश्च** हैं और अ **मध्य**। (२) **जीभका व्यवहृत भाग कितना उठता है?** पीछे कहा जा चुका है कि स्वरका स्वरूप मुख-विवरके उस स्वरूपपर निर्भर करता है जिसमें हवा

बाहर निकलते समय गूँजती है। यह स्वरूप जीभके अग्र, पश्च या मध्य भागके उठनेपर निर्भर करता है। अर्थात् यदि जीभका विशिष्ट भाग बहुत उठा तो मुख-विवर अत्यन्त सँकरा अर्थात् **संवृत** होगा और यदि वह नहींके बराबर उठा तो मुख-विवर बहुत खुला या **विवृत** होगा। इन दोनोंके बीचमें यों तो अनेक स्थितियाँ हो सकती हैं, किन्तु प्रमुख रूपसे **अर्द्ध विवृत** और **अर्द्ध संवृत** दो मानी जाती हैं। अर्थात् इस आधारपर स्वरके चार वर्ग बने: **विवृत स्वर, संवृत स्वर, अर्द्ध विवृत स्वर** और **अर्द्ध संवृत स्वर**। हिन्दीमें आ **विवृत**, ऑ **अर्द्ध विवृत** ओ **अर्द्ध संवृत** और ऊ **संवृत** है। **(३) ओष्ठोंकी स्थिति**--स्वरोंका स्वरूप ओठोंकी स्थितिपर भी निर्भर करता है। यों तो ओठोंकी स्थितियाँ भी अनेक प्रकारकी होती हैं किन्तु प्रमुख दो हैं: **वृत्तमुखी या वृत्ताकार** जैसे ऊ, उ आदिमें और **अवृत्तमुखी** या **अवृत्ताकार** जैसे आ, ए आदिमें। कुछ स्वरोंमें ओष्ठ **विस्तृत** (ई), **पूर्ण विस्तृत** (ए), **उदासीन** (अ), **स्वल्प वृत्ताकार** (ऑ), **पूर्ण वृत्ताकार** (ऊ) आदि भी होते हैं। **(४) मात्रा**--स्वरोंका स्वरूप मात्रापर भी निर्भर करता है। इस आधारपर यों तो सूक्ष्म दृष्टिसे स्वरोंके अनेक भेद या वर्ग हो सकते हैं किन्तु प्रमुख **ह्रस्वार्द्ध** (उदासीन स्वर अ), **ह्रस्व** (अ), **दीर्घ** (आ) और **प्लुत** (ओ३म्) ये चार हैं। **(५) कोमल तालु और कौवे (अलिजिह्व)की स्थिति**--कोमल तालु और कौवा (दे० **शारीरिक ध्वनि विज्ञानमें मुख-विवर, नासिका विवर और कौवा** उपशीर्षक) दोनों कभी तो नासिका-मार्गको रोककर हवाको केवल मुँहसे निकलनेको बाध्य करते हैं और कभी बीचमें रहते हैं, अर्थात् हवाका कुछ अंश मुँहसे निकलता है और कुछ नाकसे। पहली स्थितिमें **मौखिक स्वर** (अ, आ, ए आदि) उच्चरित होते हैं और दूसरी स्थितिमें **नासिक्य** या **अनुनासिक स्वर** (अँ, आँ, एँ)। सभी स्वरोंके ये दोनों रूप सम्भव हैं। अनुनासिक स्वरोंके दो भेद होते हैं: (क) **पूर्ण अनुनासिक**--जैसे हाँ का आँ। (ख) **अपूर्ण अनुनासिक**--जैसे नाञ्, या राम्-का 'आ'। **(६) स्वरतंत्रियोंकी स्थिति**--**शारीरिक ध्वनि विज्ञान** (दे०)में दिखलाया गया है कि स्वरतंत्रियोंकी स्थिति विभिन्न ध्वनियोंके उच्चारणमें एक-सी नहीं रहती। **घोष** उन ध्वनियोंको कहते हैं जिनके उच्चारणके लिए स्वरतन्त्रियोंके बीचसे आती हवा उनके एक दूसरेके समीप आ जानेके कारण घर्षण करती हुई निकलती है, जिससे स्वरतन्त्रियोंमें कम्पन होता है। प्रायः स्वर घोष होते हैं अर्थात् उनका उच्चारण स्वरतन्त्रियोंकी उपर्युक्त स्थितिमें होता है। **अघोष** उन ध्वनियोंको कहते हैं जिनके उच्चारणके समय स्वरतन्त्रियाँ एक दूसरीसे इतनी दूर रहती हैं कि उनके बीच आनेवाली हवा सरलतासे बिना घर्षण किये निकल आती है, अर्थात् स्वरतन्त्रियोंमें कम्पन नहीं होता। केवल कुछ ही भाषाओंमें कुछ स्वर अघोष होते हैं। हिन्दीकी बोली अवधीमें उ, इ, ए के अघोष रूप मिलते हैं। स्वरोंके नीचे एक छोटा वृत्त रखकर उसका अघोष रूप व्यक्त करते हैं, जैसे इ॰ उ॰ आदि। **अघोष स्वरों**को ही **जपित या फुसफुसाहट**-वाले स्वर भी कहते हैं। इसी प्रसंगमें **मर्मर स्वर** (murmur vowel)का भी उल्लेख किया जा सकता है। इसे अधिकांश विद्वानोंने घोष और जपितके बीचकी स्थिति माना है इसीलिए इसे **अर्द्ध घोष** (half-voiced)भी कहते हैं। इसके साथ एक रगड़ जैसी आवाज सुनाई पड़ती है। इसमें हवाका दबाव घोष और जपित दोनों प्रकारके स्वरोंसे कुछ कम होता है। बलाघात-हीन अक्षरके स्वर कभी-कभी ऐसे होते हैं। potato के प्रथम o का स्वरूप कुछ लोगोंके अनुसार ऐसा ही है।

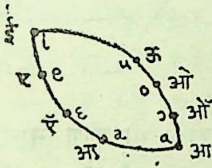
बीमार या कमज़ोर आदमी द्वारा बोले गये अधिकांश स्वर इसी प्रकारके हो जाते हैं। हिन्दीमें 'यह', 'वह' आदि शब्दोंमें जब 'ह' प्रायः अनुच्चरित-सा होता है, पूर्ववर्ती 'अ' मर्मर स्वर हो जाता है। भाषाके विकासमें 'मर्मर स्वर' धीरे-धीरे लुप्त हो जाते हैं। मर्मर कमी-वेशीके आधारपर कई प्रकारका हो सकता है। (७) मुँहकी मांस-पेशियाँ तथा अंग आदि कभी-कभी तो कड़े होते हैं और कभी शिथिल। इस आधार-पर भी स्वरोंके दो भेद हो सकते हैं: **शिथिल** (lax) और **दृढ़** (tense)। उ, इ, अ आदि शिथिल हैं और ई, ऊ दृढ़। 'ए' आदि कुछ ध्वनियाँ दोनोंके मध्यमें भी मानी जा सकती हैं। (८) कुछ **स्वर मूल** (monophthong) होते हैं अर्थात् उनके उच्चारणमें जीभ एक स्थानपर रहती है, जैसे अ, ई; और कुछ **संयुक्त स्वर** (diphthong) होते हैं; अर्थात् उनके उच्चारणमें जीभ एक स्वरके उच्चारणसे दूसरे स्वरके उच्चारणकी ओर चलती है। इन्हें श्रुतियुक्त स्वर (gliding vowel) या स्वतंत्र-स्वर-श्रुति (independent vowel glide) भी कहा जा सकता है। अवधी तथा भोजपुरी क्षेत्रमें ऐ (अ ए) औ (अओ) का उच्चारण ऐसा ही होता है। मूल और संयुक्तका वर्गीकरण स्वरकी प्रकृतिपर आधारित है। आगे **संयुक्त स्वर**-पर कुछ विस्तारसे विचार किया गया है। इस प्रकार स्वरोंका वर्गीकरण प्रमुखतः आठ आधारोंपर किया जा सकता है। इनमें प्रथम तीन आधार अधिक महत्त्व-पूर्ण हैं।

मान स्वर (cardinal vowel, प्रधान स्वर, आदर्श स्वर, आधार स्वर, मूल स्वर, मानक स्वर, प्रधान अक्षर, मानअक्षर, प्रमाणाक्षर आदि) मान स्वर किसी विशेष भाषाके नहीं होते, अपितु विवृतता-संवृतता तथा अग्रता-पश्चता-मध्यता आदिकी दृष्टिसे किसी भी भाषाके स्वरोंका स्थान निर्धारित करनेके लिए काममें आनेवाले मानक या मानदंड मात्र हैं। जैसा कि आगेके चित्रोंसे स्पष्ट हो जायगा मान स्वर चतुर्भुज रूपमें दिखाये जाते हैं, यद्यपि परम्परावश इन्हें **स्वर-त्रिभुज** (vowel triangle) कहते हैं। आधुनिक कालमें स्वरोंके स्थानका ठीक-ठीक अध्ययन करनेका प्रयास सर्वप्रथम जान वैलिसने १६५३ई०के आस-पास किया। १७८० के आस-पास एक स्वाबियन विद्वान् हेलवैगने उच्चारण स्थानके आधारपर स्वरोंका एक त्रिभुज बनाया।

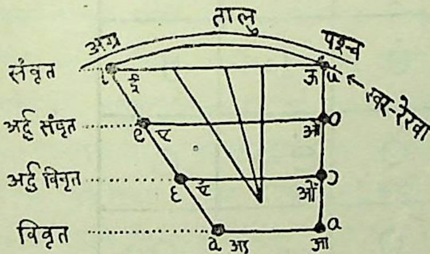


स्वर-त्रिभुजकी परम्पराका आरम्भ यहींसे होता है और इसी त्रिभुजकी परम्परामें आनेसे आजका **स्वर-चतुर्भुज** भी **स्वर-त्रिभुज** कहलाता है। आजका प्रचलित **स्वर-चतुर्भुज** डैनियल जोन्सकी देन है। इसका आधार मूलतः जीभका स्थान है, किन्तु ओष्ठकी स्थिति तथा स्वरोंकी श्रवणीयता भी इसमें समाहित है। स्वरोंके उच्चारणमें प्रायः जीभ तालुके निकट एक खास ऊँचाईतक ही उठती है। यदि जीभ उसके ऊपर उठे तो हवाको श्रवणीय घर्षणके साथ निकलना पड़ता है, अर्थात् तब स्वरोंका उच्चारण नहीं हो पाता। उस खास ऊँचाईसे होती हुई गुज़रनेवाली कल्पित रेखा **स्वर रेखा** (दे० अगला दूसरा चित्र) कहलाती है। इसी रेखापर आगेकी ओर एक विन्दु माना जा सकता है जहाँतक जीभका अग्रभाग अधिकसे अधिक जा सकता है। इसी विन्दुपर **मान स्वर 'ई'**की स्थिति मानी जाती है। इसी प्रकार पीछे जीभका पश्च भाग अधिकसे अधिक एक खास विन्दुतक उठ सकता है। **मान स्वर**

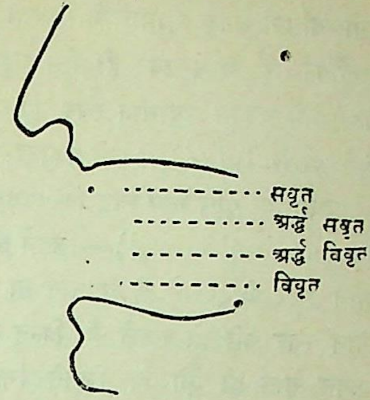
'ऊ' इसीपर माना जाता है । अग्र भाग और पश्च भाग ऐसी ही नीचे एक-एक ख़ास विन्दुतक जा सकते हैं, जिनपर क्रमसे **मान स्वर अऽ** और **मान स्वर आ** माने जाते हैं । इस प्रकार ये चारों विन्दु स्वर उच्चारणमें जीभकी चार सीमाओंको प्रकट करते हैं, अर्थात् जीभको इनसे बाहर ले जाकर स्वरका उच्चारण नहीं किया जा सकता । इनका स्वाभाविक स्थान कुछ इस प्रकार है :



यहाँ उपर्युक्त चार विन्दुओंके अतिरिक्त दो आगे और दो पीछे और भी हैं । चारोंके बीचमें अन्य स्थानोंपर आनेवाले स्वरोंका स्थान निर्धारण करनेके लिए इन्हें मान लिया गया है । उपर्युक्त चित्रको अधिक प्रचलित रूपमें यों बनाया जाता है :



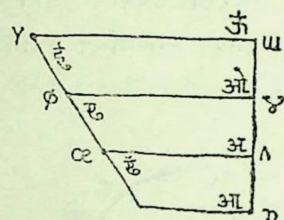
'संवृत'का अर्थ है अधिकसे अधिक 'सँकरा', अर्थात् जीभ तालुके नज़दीक जाकर मुख-विवरको सँकरा कर देती है । **'अर्द्ध संवृत'** उससे कुछ अधिक खुला है, अर्थात् जीभ नीचेकी ओर कुछ और सरक जाती है । **'अर्द्ध विवृत'**में और नीचे चली जाती है और **विवृतमें** बिलकुल नीचे जाकर वह मुंहको अधिकसे अधिक खुला बना देती है। इसे आगेके चित्रमें भी समझा जा सकता है :



अग्र, मध्य, पश्चसे जीभ या मुंहके ये भाग दिखाये गये हैं । इनके आधारपर स्वरको **अग्र, पश्च या मध्य स्वर या विवृत, संवृत** स्वर आदि कहते हैं । चतुर्भुजके मध्य या केन्द्रके आसपासके स्वर केन्द्रीय स्वर कहलाते हैं । वस्तुतः इन चार विन्दुओंके बीच अनेक स्वर हो सकते हैं जिनमें अनेक भाषाओंके स्वर-स्थानके निर्धारणकी दृष्टिसे ये ८ ही प्रमुख हैं अतः केवल ८ दिखाये गये हैं । इनके स्थान-निर्धारणमें एक्सरे फोटोग्राफीसे सहायता ली गयी है । इन आठोंमें ओष्ठोंकी आठ स्थितियाँ दिखाई पड़ती हैं । 'ई'में वे बिल्कुल फैले होते हैं ए, ऍ अऽमें क्रमसे उनका फैलाव कम होता जाता है और आ ऑ होते ओ ऊमें पूर्णतः गोलाकार हो जाते हैं । इस प्रकार **अग्र मान स्वर अवृत्तमुखी हैं** तथा **पश्च मान स्वर** (आ को छोड़कर) प्रायः **वृत्तमुखी** । इनमें भी **पश्च अर्द्धविवृत, ईषद्वृत्तमुखी** और शेष दो (संवृत, अर्द्धसंवृत), प्रायः **पूर्णवृत्तमुखी** । ये आठ मान स्वर प्रधान मान स्वर भी कहे जाते हैं । इनका विवरण संक्षेपमें इस प्रकार है : **ई**––अवृत्तमुखी, दृढ़, अग्र, संवृत । **ए**––अवृत्तमुखी, दृढ़, अग्र, अर्द्धसंवृत । **ऍ**––अवृत्तमुखी, शिथिल, अग्र, अर्द्धविवृत । **अऽ**––अवृत्तमुखी, शिथिल, अग्र, विवृत । **आ**––अवृत्तमुखी, शिथिल, पश्च विवृत । **ऑ**––स्वल्पवृत्तमुखी (आसे कुछ अधिक), शिथिल, पश्च, अर्द्धविवृत । **ओ**––वृत्तमुखी, दृढ़, पश्च, अर्द्धसंवृत । **ऊ**––पूर्णवृत्तमुखी, दृढ़ (ओसे अधिक), पश्च, संवृत । अग्र और पश्चके बीचमें कुछ मध्य या केन्द्रीय स्वर होते हैं ।

ऐसी ध्वनियाँ अनेक भाषाओंमें मिलती हैं। हिन्दीका 'अ' **मध्य स्वर** ही है। बहुतसी भाषाओंमें प्रयुक्त **उदासीन स्वर** (neutral vowel) (दे०) भी इसी प्रकारका है।

अप्रधान या गौण मान स्वर (secondary cardinal vowel)––जितने प्रधान मान स्वर थे, उतने ही अप्रधान या गौण मान स्वर भी हो सकते हैं, किन्तु उनमें केवल सात ही ऐसे हैं, जिनसे मिलती-जुलती ध्वनियोंका प्रयोग संसारकी भाषाओंमें होता है, अतः गौण मान स्वर सात ही माने गये हैं। जो स्वर 'ई' के स्थानपर है, उसमें अन्य सारी बातें 'ई' जैसी होती हैं, केवल ओष्ठ 'ऊ' की तरह वृत्तमुखी होते हैं। इसी प्रकार 'ए'के स्थानवाले स्वरमें ओष्ठ 'ओ'की तरह वृत्तमुखी होते हैं और 'ऍ'के स्थानवालेमें 'ऑ'की तरह। इसी प्रकार पश्च गौण मान स्वरोंमें भी केवल ओष्ठका अन्तर होता है। इनमें ओष्ठ क्रमसे अग्रकी भाँति होते हैं। गौण मान स्वरोंसे मिलती-जुलती ध्वनियोंका प्रयोग फ्रांसीसी, जर्मनी, मराठी, तथा अंग्रेज़ीके कुछ क्षेत्रीय रूपों आदिमें होता है।



केन्द्रीय स्वरोंके भी गौण मान स्वर रूप हो सकते हैं। जिस किसी भाषाके स्वरोंका वर्णन करना होता है उपर्युक्त (प्रधान या

अग्र		मध्य		पश्च	
अवृत्तमुखी	वृत्तमुखी	अवृत्तमुखी	वृत्तमुखी	अवृत्तमुखी	वृत्तमुखी
i	ü=y	ɨ	u̇	ï=ɯ	u
I	Ü	Ɨ	U̇	Ï	U
e	ö=ø	ė	ȯ	ë=ɤ	o
E	Ω̈	Ė=ɘ	Ω̇	Ë	Ω
ɛ	ɔ̈=œ	ɛ̇	ɔ̇	ɛ̈=ʌ	ɔ
æ	ω̈	æ̇	ω̇	æ̈	ω
a	ɒ̈	ȧ	ɒ̇	ä=ɑ	ɒ

अप्रधान मान स्वर) में जिस स्वरके समीप जो स्वर होता है उसे वही नाम दे देते हैं।

स्वर-वर्गीकरणकी अमेरिकी पद्धति––उपर्युक्त रूपमें आठ प्रधान और सात अप्रधान स्वर थे। यह पद्धति यूरोपमें प्रचलित रही है। अमेरिकामें जीभकी ऊँचाई-निचाई या उसके अग्र, पश्च, मध्य आदि भाग ––अर्थात् उन्हीं आधारोंपर जिनका उपयोग उपर्युक्त मान स्वरोंमें हुआ है––के आधारपर और अधिक भेद किये गये हैं।

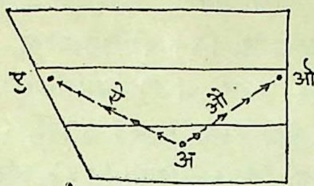
ब्लाक और ट्रैगरने स्वरका वर्गीकरण इस प्रकार किया है। उन्होंने ऊँचाईके आधारके ऊपरसे नीचे स्वरोंका **उच्च, निम्नतर उच्च, उच्चतर मध्य, मध्य, निम्नतर मध्य, उच्चतर निम्न** तथा **निम्न** (high, lower high, higher mid, mean mid, lower mid, higher low तथा low) कहा है।

कहना न होगा कि इसमें उपर्युक्त **प्रधान मान स्वर** और **अप्रधान मान स्वर** दोनों मिला दिये गये हैं साथ ही ऊँचाईमें चारके स्थानपर अधिक भेद किये गये हैं। जैसा कि कहा जा चुका है ऐसे आवश्यकतानुसार अनेक भेद किये जा सकते हैं। सिद्धान्ततः दोनों पद्धतियोंमें विशेष अन्तर नहीं है। यों स्वरोंके स्थान-निर्धारणकी दृष्टिसे प्रधान स्वरोंवाली पद्धतिकी उपयोगिता अस्वीकार नहीं की जा सकती।

श्रुति (glide)—लिखनेमें प्रायः ऐसा देखा जाता है कि जल्दीमें दो शब्दों या दो वर्णोंके बीच एककी समाप्तिके बाद और दूसरेके आरम्भके पूर्व झटकेसे एक निरर्थक लाइन खिंच जाती है। उसी प्रकार बोलनेमें, उच्चारण-अवयव जब एक ध्वनिके उच्चारणके बाद दूसरेका उच्चारण करनेके लिए नयी स्थितिमें जाने लगते हैं तो कभी-कभी हवाके निकलते रहनेके कारण बीचमें ही एक ऐसी ध्वनि उच्चरित हो जाती है जो वस्तुतः उस शब्दमें नहीं होती। ऐसी, अकस्मात् आ जानेवाली ध्वनि श्रुति कहलाती है। ऐसी ध्वनियाँ सर्वदा दो ध्वनियोंके बीचमें ही न आकर कभी-कभी किसी ध्वनिके पूर्व भी आ जाती हैं। पूर्वमें आनेवाली श्रुति **पूर्व श्रुति** (on-glide) या **अग्र श्रुति** या आरोह श्रुति कहलाती है। इस्टेशन, इस्कूल, अस्नान आदिमें आरम्भके स्वर पूर्व श्रुति ही हैं। असावधान, आलस्यपूर्ण या ढीले उच्चारणमें यह अधिक स्पष्ट होती है। यह श्रुति भी अन्योंकी भाँति अनायास है, यद्यपि इसके कारण आदि स्वर आनेसे व्यंजन गुच्छ टूट जाता है और एक अक्षरकी वृद्धि हो जाती है। जैसे स्टेशन् = २ अक्षर। इस्टेशन् = ३ अक्षर इस् + टे + शन्। अस्थिसे हड्डी, उल्लाससे हुलास उधरसे वुधर आदि पूर्व श्रुति ही हैं, जिसे आगम (स्वर या व्यंजन) भी कहा जाता है। इसके मूलमें भी ढीलापन या आलस्य आदि है। इस प्रकारकी श्रुति, शब्दके आरम्भिक मौन तथा प्रथम ध्वनिके बीच उच्चरित हो जाती है। विद्वानोंने श्रुतिका दूसरा भेद **बादकी श्रुति, अवरोह श्रुति, पश्च श्रुति, परश्रुति** या **पश्चात् श्रुति** (off glide) को माना है। जहाँतक मैं समझता हूँ इसका नाम **मध्यश्रुति** होना चाहिये। अग्र स्वरके साथ 'य' तथा पश्च स्वरके साथ 'व' प्रायः इस प्रकार सुने जाते हैं। जैसे इ--आ (क्रिया), इ--ओ (जियो) के बीच य तथा उ--आ (हुवा) के बीच व। जेलसे जेहलमें ह भी इसी प्रकार है। वस्तुतः यह परश्रुति नहीं है, क्योंकि अन्तमें यदि उपर्युक्त स्वर न हो तो श्रुतिका आगम नहीं होगा, जैसे, इ--ए (लिए) या उ--ई (हुई)। इस प्रकार दोनों ओरकी ध्वनियोंका इस श्रुतिमें हाथ है अतः इसे **मध्यश्रुति** ही कहना चाहिये। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि **परश्रुति** होती ही नहीं। यह होती है किन्तु प्रायः अत्यन्त क्षीण होती है। आलस्यपूर्ण या ढीले उच्चारणमें आज संयुक्त व्यंजनांत हिन्दी शब्दोंके अन्तमें सुना जानेवाला अ (स्वास्थ्य, ब्रह्म) यही है। इस प्रकार श्रुतिके दो भेद नहीं माने जाने चाहिये जैसा कि विद्वानोंने माना है, अपितु तीन माने जाने चाहिये : (१) **आरोह श्रुति** या **पूर्व श्रुति**, (२) **मध्यश्रुति** (३) **अवरोह श्रुति** या **परश्रुति**। संयुक्त स्वर मध्य श्रुति है, क्योंकि दो स्वरोंके उच्चारणके बीच है। यहाँ एक और बात भी ध्यान देनेकी है। श्रुतिकी जो प्रायः परिभाषा दी जाती है वह वस्तुतः मध्य श्रुतिकी है। यों तीनों श्रुतियोंका मूल

कारण मुख-सुख है। आलस्य, असावधानी या निष्क्रियता वस्तुतः इसीके रूप हैं, किन्तु मध्य श्रुतिमें, इन सबसे अधिक हाथ सहजताका है। इसी कारण 'र' 'द' आदिके **मध्यागम** (दे० **आगम** (डज़न--दर्जन, तनूर --तन्दूर) श्रुति नहीं कहे जा सकते। **संयुक्त स्वर** (diphthong)--मूल स्वर या समानाक्षरमें एक स्वर होता है। यह एक प्रकारसे अचल ध्वनि है, किन्तु इसके विरुद्ध मिश्र स्वर, संयुक्त स्वर या संध्यक्षर दो स्वरोंका योग है, अतः श्रुति या चल ध्वनि है। इसके उच्चारणमें वक्ता एक स्वरका उच्चारण करता हुआ दूसरे स्वरके उच्चारणकी ओर चलता है, और इस प्रकार दोनों स्वरोंके संयुक्त रूपका उच्चारण हो जाता है। दोनों ही स्वरोंका पूर्णरूप नहीं आ पाता। जिससे आरम्भ होता है वह शीघ्रताके कारण अत्यन्त संक्षिप्त हो जाता है और जीभको जिस दूसरी स्थितिमें पहुँचना होता है उस दिशामें चलकर भी वहाँ पहुँचनेके पूर्व ही प्रायः वह उस दूसरे स्वरका संक्षिप्त उच्चारण कर लेती है। इस प्रकार संयुक्त स्वरका उच्चारण इस एक स्वरसे दूसरेकी ओर जानेकी स्थितिमें होता है, इसीलिए इसे 'श्रुति' कहते हैं। मूल स्वर इसके विरुद्ध अचल स्वर है। उसके उच्चारणमें इस प्रकारकी 'चलता' नहीं मिलती। **संयुक्त स्वर दो स्वरोंका ऐसा मिश्र रूप है जिसमें दोनों अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व खोकर एकाकार हो जाते हैं, और साँसके एक झटकेमें उच्चरित होते हैं।** दोनों मिलकर एक स्वर जैसे हो जाते हैं। दोनोंके योगसे एक अक्षर बनता है। संयुक्त स्वरमें स्वरोंको जीभकी ऊँचाई या उसके स्थानकी दृष्टिसे **सवर्ण** न होकर **असवर्ण** होना चाहिये। कभी-कभी दोसे अधिक स्वरोंके भी संयुक्त स्वर बनते हैं, यद्यपि ऐसा कम होता है।

संयुक्त स्वरोंके कई आधारोंपर कई **भेद** होते हैं: (क) संयुक्त स्वरका निर्माण करनेवाले दो स्वरोंमें, यदि पहला अधिक मुखर है, बलाघातयुक्त है और इस प्रकार उसका व्यक्तित्व दूसरेकी अपेक्षा बलशाली या प्रमुख है तो ऐसे संयुक्त स्वर **अवरोही, क्षयमाण, अवनायक** या **ह्रासोन्मुख** (falling) कहलाते हैं, क्योंकि दूसरा या आगे आनेवाला स्वर कम मुखर, अबलाघातयुक्त तथा गौण होता है। अंग्रेजीके अधिकांश संयुक्त स्वर [ei (play, make); ou (so, post); ai (night, child) आदि] इसी वर्गके हैं। इस वर्गके गौण स्वरपर V चिह्न लगाते हैं। इसके उल्टे यदि प्रथम स्वर गौण और दूसरा प्रमुख हो तो संयुक्त स्वर **आरोही, उन्नायक** या **उन्नतोन्मुख** (rising) कहलाता है। हिन्दीके ऐ, औ इसी श्रेणीके हैं। संयुक्त स्वरका जो स्वर गौण होता है उसे **व्यंजनात्मक स्वर** (consonental vowel) कहते हैं। (ख) संयुक्त स्वरके उच्चारणमें जीभको एक स्वर-स्थानसे दूसरेकी ओर जाना पड़ता है। यदि यह दूरी लम्बी हुई तो संयुक्त स्वर **प्रशस्त** (wide) कहलाता है, और यदि थोड़ी हुई तो **अप्रशस्त** या **संकीर्ण** (narrow)। हिन्दीमें ऐ, औ प्रायः अप्रशस्त हैं। अंग्रेजीमें ei, ou आदि अप्रशस्त हैं तथा au प्रशस्त। (ग) संयुक्त स्वर यदि बाहरसे केन्द्रकी ओर अभिमुख हो, अर्थात् दूसरा स्वर मध्य या केन्द्रीय स्वर हो तो संयुक्त स्वर **केन्द्राभिमुखी** (centring) कहलायेगा, किन्तु इसका उलटा हो तो **बाह्याभिमुखी** कहलायेगा। अंग्रेजीके iə, uə आदि प्रथम प्रकारके हैं। (घ) संयुक्त स्वरके दो भेद--**अपूर्ण** और **पूर्ण**--भी होते हैं। यदि अवरोही संयुक्त स्वरमें पहला स्वर अपेक्षाकृत अधिक लम्बा हो जाय या अवरोही-आरोही किसी भी प्रकारके संयुक्त स्वरमें दूसरा स्वर अपेक्षाकृत अधिक लम्बा हो जाय तो संयुक्त स्वर **अपूर्ण** कहलाता है, अन्य स्थितियोंके **पूर्ण** कहलाते हैं।



हिन्दी संयुक्तस्वर

संयुक्त स्वरोंकी संख्या भिन्न-भिन्न भाषाओंमें भिन्न होती है। बंगलामें एक ओर इनकी संख्या २५ है तो हिन्दीकी बहुतसी बोलियोंमें दो है। यह आवश्यक नहीं है कि सभी भाषाओंमें संयुक्त स्वर हों ही। परिनिष्ठित हिन्दीमें आज प्रायः एक भी संयुक्त स्वर नहीं माना जा रहा है, विशेषतः उसके दिल्लीके आस-पासके क्षेत्रमें। **प्रयत्न**—ध्वनियोंके उच्चारणके लिए हवाको रोककर या अन्य कई प्रकारोंसे विवृत करना पड़ता है। इसी क्रियाको **प्रयत्न** कहते हैं। हर ध्वनिके लिए कोई न कोई प्रयत्न करना पड़ता है। इस प्रयत्नका हमारे यहाँ प्राचीन संस्कृत साहित्य (आरण्यक, प्रातिशाख्य, शिक्षा, व्याकरण आदि)में बड़े विस्तारसे विचार किया गया है। प्रयत्नके दो भेद मिलते हैं: **आभ्यन्तर** और **बाह्य**। **आभ्यन्तर प्रयत्न**को **आस्य प्रयत्न, करण**[1] या **प्रदान** भी कहा गया है। 'आस्य' का अर्थ मुँह है। मुँहके भीतर प्रयत्न होनेके कारण ही इसे **आभ्यन्तर प्रयत्न** कहते हैं। मुँहके बाहर जो प्रयत्न होता है उसे **बाह्य प्रयत्न, प्रकृति** या **अनुप्रदान** कहा गया है।

आभ्यन्तर प्रयत्नका क्षेत्र निश्चित नहीं है। पतंजलि महाभाष्यमें ओठसे काकलक (ओष्ठात्प्रभृति प्राक् काकलकात्) तक मानते हैं। 'काकलक' को कैयटने (काकलकं हि नाम ग्रीवायामुन्नतप्रदेशः) घंटी कहा है। यदि सचमुच ओठसे घंटीके बीचका प्रयत्न **आभ्यन्तर**में आता है, तो अनुनासिकता और निरनुनासिकताके लिए किये गये प्रयत्नको इसीके अंतर्गत मानना चाहिये, किन्तु इसे बहुतसे लोगोंने तो किसी भी प्रयत्नमें नहीं रखा है, और जिन्होंने रखा है **बाह्य**में रखा है। इसका अर्थ यह हुआ कि इस श्रेणीके विद्वानोंके अनुसार कोमल तालुसे ओठके बीचके किये गये प्रयत्न ही **आभ्यन्तर**के अंतर्गत हैं। इस प्रकारकी अनेकरूपताके कारण यह कहना बिल्कुल ही कठिन है कि प्राचीन भारतका सर्वसम्मत मत अमुक था। यों इस स्खलनके बावजूद अधिकांश ग्रंथोंमें **आभ्यन्तर प्रयत्न**के अंतर्गत **स्पृष्ट, ईषत्स्पृष्ट, विवृत** और **संवृत** इन चारको रखा गया है। इनमें **स्पृष्ट** तो स्पर्शोंके लिए है, **ईषत्स्पृष्ट** अंतःस्थोंके लिए, **संवृत** अ (पाणिनिके कालमें)के लिए और **विवृत** ऊष्मों और स्वरोंके लिए। पाणिनीय शिक्षामें **स्पृष्ट, नेमस्पृष्ट, ईषत्स्पृष्ट** और **अस्पृष्ट**का प्रयोग मिलता है किन्तु इनका अर्थ थोड़ा भिन्न है। वहाँ प्रथममें स्पर्श तथा ह, दूसरेमें ऊष्म, तीसरेमें अंतस्थ और अंतिममें स्वर हैं। कुछने इसके पाँच भेद—**स्पृष्ट, ईषत्स्पृष्ट** (अंतःस्थ) **ईषद्विवृत** (ऊष्म), **विवृत** (स्वर), **संवृत** (अ)—किये हैं।

बाह्य प्रयत्नका सम्बन्ध अधिकांश लोगोंके अनुसार स्वरतंत्रियोंसे है। प्राचीन ग्रंथोंमें इसके **विवार, संवार, श्वास, नाद, घोष, अघोष, अल्पप्राण, महाप्राण, उदात्त, अनुदात्त, स्वरित,** ये ग्यारह भेद मिलते हैं। इनमें अंतिम तीनका सम्बन्ध सुरसे है और अल्पप्राण, महाप्राणका हवाकी कमी-बेशीसे। शेष छःका सम्बन्ध स्वरतंत्रियोंसे है। **विवार** उनका एक-दूसरेसे दूर रहना है और **संवार** निकट रहना। दूर रहनेपर जो उनके बीच हवा आती है **श्वास** है और उससे उत्पन्न ध्वनि **अघोष** है। दूसरी ओर **संवार** स्थितिमें **नाद** वायुसे उत्पन्न ध्वनि **घोष** है। मनमोहन

---

[1] **आजकल करणका प्रयोग उच्चारणमें प्रमुख रूपसे सक्रिय अंग** (articulator) **जैसे जीभ आदिके लिए किया जा रहा है। यों चंद्रगोभिनके 'वर्ण सूत्र' आदिमें भी इसका इस अर्थमें प्रयोग मिलता है।**

घोष आदि कुछ विद्वानोंके अनुसार इनमें **श्वास** और **अघोष** तथा **नाद** और **घोष** एक ही हैं। व्यर्थमें **नौ** को **ग्यारह** कह दिया गया है। आधुनिक विद्वानोंमें डॉ० धीरेन्द्र वर्मा आदि कुछ लोग **बाह्य प्रयत्न**में केवल **घोष-अघोष**के लिए किये गये प्रयत्नको स्थान देते हैं, अर्थात् उनके अनुसार **बाह्य प्रयत्न**के अनुसार ध्वनियोंके केवल घोष-अघोष **दो भेद** होते हैं। दूसरी ओर एलेन आदि कुछ लोग इसके अंतर्गत **घोष-अघोष, अल्पप्राण-महाप्राण, अनुनासिक-निरनुनासिक,** इन तीनोंके लिए किये गये प्रयत्नको स्थान देते हैं। यदि इसे मानें तो बाह्य प्रयत्नका सम्बन्ध मात्र स्वरतंत्रियोंसे नहीं रह जाता। वस्तुतः प्राचीन ग्रंथोंमें उपर्युक्त तीनों मत तो हैं ही, इनके अतिरिक्त कुछ और भी मत हैं। ऐसी स्थितिमें इस प्रयत्नके भेदके सम्बन्धमें प्राचीन भारतके किसी एक मतको मान्यता देना सम्भवतः बहुत ठीक नहीं है। यों इन पंक्तियोंके लेखकका मत यह है कि गम्भीरतासे विचार करनेपर ऐसे तथ्य सामने आते हैं कि बाह्य और आभ्यंतर नामसे दो प्रयत्न करके फिर उनके भीतर अन्य प्रयत्नों-को स्थान देनेसे अधिक सुविधाजनक और अच्छा यह होगा कि सीधे, मात्र प्रयत्नके अंतर्गत ही उन सारे प्रयत्नोंको रखें जिनका प्रयोग ओठसे लेकर स्वरतंत्रियोंतक या उनके भी पूर्व होता है। पश्चिममें आधुनिक ध्वनिशास्त्रमें ऐसा ही किया भी जा रहा है। इस प्रकार आभ्यंतर प्रयत्न और बाह्य प्रयत्नकी बात छोड़कर प्रयत्न (manner of articulation)के भेद किये जा सकते हैं। अधिकांश पुस्तकोंमें **स्पर्श, नासिक्य, पार्श्विक, लुंठित, उत्क्षिप्त, संघर्षी** तथा **अर्द्ध-स्वर**के उच्चारणके लिए किये गये प्रयत्नोंकी गणना इसके अंतर्गतकी गयी है किन्तु स्वर और व्यंजनके उच्चारणमें इससे कहीं अधिक प्रयत्न किये जाते हैं। प्रमुख रूपसे प्रयत्न निम्नांकितके लिए किये जाते हैं: (१) घोष, (२) अघोष, (३) जपित (इसके कई उप-भेद किये जा सकते हैं), (४) अल्पप्राण, (५) महाप्राण, (६) मौखिक ध्वनि, (७) नासिक्य ध्वनि, (८) मौखिक-नासिक्य ध्वनि, (९) स्पर्श, (१०) संघर्षी, (११) पार्श्विक, (१२) लुंठित, (१३) उत्क्षिप्त, (१४) अर्द्धस्वर। यदि स्वरको भी दृष्टिमें रखें तो उपर्युक्त भेदोंके कुछ तो आयेंगे ही, उनके अतिरिक्त (१५) मर्मर, (१६) संवृत, (१७) अर्द्ध संवृत, (१८) अर्द्ध विवृत, (१९) विवृत आदिके लिए किये गये प्रयत्न भी जोड़ने पड़ेंगे। ये तो थीं सामान्य ध्वनियाँ, यदि इनके साथ अंतर्मुखी (implosive), क्लिक (click) और उद्गार (ejective) ध्वनियोंको भी जोड़ दिया जाय तो प्रयत्नों-की संख्या और अधिक बढ़ जायगी। ऐसा अनुमान करना अन्यथा न होगा कि सविस्तर देखनेपर प्रयत्नोंकी संख्या ५० से कम न होगी। यह भी स्मरणीय है कि किसी भी ध्वनिके लिए प्रायः विभिन्न स्थानोंपर एकसे अधिक प्रयत्नोंकी आवश्यकता पड़ती है। उदाहरणार्थ 'ख्'के लिए स्पर्शीय, अघोषीय, महाप्राणीय तथा निरनुनासिकीय, ये चार प्रयत्न अपेक्षित हैं। यही बात अधिकांश ध्वनियोंके लिए सत्य है।

उच्चारण-स्थान——ध्वनियोंका उच्चारण विशेष प्रयत्नसे किया जाता है, किन्तु साथ ही ये प्रयत्न **स्थान** विशेष या **अंग** विशेषसे किये जाते है। **उच्चारण-स्थान** या **स्थान** वह है जहाँ भीतरसे आती हुई हवाको रोक-कर या किसी अन्य प्रकारसे उसमें विकार लाकर ध्वनि उत्पन्न की जाती है। उच्चारण स्थान (place of articulation) भी उच्चारणमें प्रयत्न जितने ही महत्त्वपूर्ण हैं और उनके आधारपर भी ध्वनियोंका वर्गी-करण किया जा सकता है। स्वरका **अग्र, मध्य, पश्च** भेद स्थानपर ही आधारित है। किन्तु स्वरोंमें इन तीन स्थानोंसे तो संवृत-विवृत आदिका प्रयत्न होता है, शेष——अनुनासिक-मौखिक, वृत्तमुखी-अवृत्तमुखी, घोष-अघोष आदि——प्रयत्न अन्य स्थानोंपर

होते हैं। व्यंजनोंमें भी ओठसे लेकर स्वरयंत्र-तक इसी प्रकार अनेक स्थानोंपर प्रयत्न होता है। प्रमुख उच्चारण स्थान **ओष्ठ, दाँत, वर्त्स, कठोर तालु, मूर्द्धा, कोमल तालु, अलिजिह्व, उपालिजिह्व** तथा **स्वरयंत्र** हैं (दे० **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान**)। जिस प्रकार एक ध्वनिके लिए कई प्रयत्न अपेक्षित हैं, उसी प्रकार बहुतसे प्रयत्नके लिए बहुतसे स्थान भी अपेक्षित हैं। उपर्युक्त उदाहरणके 'ख्' के लिए ही स्वरयंत्र (अघोष), अलिजिह्व (निरनुनासिक), कोमल तालु आदि स्थानोंकी आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार यदि गहराईसे विचार किया जाय तो **एक ध्वनिके स्थान-प्रयत्नके बारेमें केवल एक स्थान और एक प्रयत्नका विचार ही पर्याप्त नहीं है, जैसा कि प्रायः सभी ध्वनि-शास्त्रके ग्रन्थोंमें मिलता है।** किन्तु संक्षिप्तता और व्यावहारिकताकी दृष्टिसे प्रायः किसी भी ध्वनिके प्रमुख प्रयत्न और उस प्रमुख प्रयत्नके स्थानका ही विचार किया जाता है। इसी कारण उपर्युक्त उदाहरणके 'ख'-के प्रयत्न और स्थानके बारेमें उतने विस्तारसे न जाकर संक्षेपमें उसे स्थानकी दृष्टिसे कोमल तालव्य और प्रयत्नकी दृष्टिसे स्पर्श कहा जाता है। यही बात सभी व्यंजनों और स्वरोंके बारेमें की जाती है, यद्यपि किसी भी ध्वनिको पूर्णतः समझनेके लिए उसके सभी स्थानों या अंगों और उनके द्वारा सम्पन्न प्रयत्नोंका विचार किया जाना चाहिये।

व्यंजनोंका वर्गीकरण––ऊपर **प्रयत्न** और **स्थान**पर विचार किया जा चुका है। वस्तुतः न केवल व्यंजन, अपितु स्वरोंके वर्गीकरणके भी तात्त्विक आधार ये ही दो हैं, किन्तु स्पष्टताकी दृष्टिसे प्रयत्नमें केवल मुख्यको लेते हैं और शेषको अलग-अलग उनके परिणाम (नासिक्यता, महाप्राणता, घोषत्व आदि)के आधारपर लेते हैं जैसा कि आगे किया जायगा। यों तात्त्विक दृष्टिसे वे भी प्रयत्नके अन्तर्गत ही आते हैं। जहाँतक स्थानका प्रश्न है केवल मुख्य प्रयत्नके स्थानका ही विचार किया जाता है, शेषको प्रायः छोड़ दिया जाता है। यहाँ इसी व्यावहारिक दृष्टिसे विचार किया जा रहा है। व्यंजनोंका वर्गीकरण कई आधारोंपर किया जा सकता है। यहाँ अलग-अलग आधारों-को लेकर भेद-विभेद दिये जा रहे हैं :––

(क) **प्रयत्नके आधारपर**––इस आधार-पर व्यंजनोंके प्रमुखतः निम्नांकित भेद हो सकते हैं : (१) **स्पर्श** (stop, mute, explosive, plosive या occlusive) ––इसे **'स्फोट'** या **'स्फोटक'** भी कहते हैं। जैसा कि नामसे स्पष्ट है, इसमें दो अंग (जैसे दोनों ओष्ठ, नीचेका ओठ और ऊपरके दाँत, जीभकी नोक और दाँत या जीभका पश्च भाग और कोमल तालु आदि) एक दूसरेका स्पर्श करके हवाको रोकते हैं और फिर एक दूसरेसे हटकर हवाको जाने देते हैं। इस प्रकार इसकी **तीन स्थितियाँ** या सीढ़ियाँ हैं **हवाका आगमन, अवरोध** और **उन्मोचन** या **स्फोट**। स्पर्शोंका उच्चारण कभी तो **पूर्ण** होता है, कभी **अपूर्ण**। **पूर्ण उच्चारण** या **पूर्ण स्पर्श** ध्वनियोंमें तीनों स्थितियाँ मिलती हैं और ध्वनि उन्मोचन या स्फोटमें सुनाई पड़ती हैं उसके पूर्व नहीं जैसे क, काल। ऐसी स्थितियाँ तो तब होती हैं जब स्पर्श अकेले हो (क्, प्) या किसी स्वरके पूर्व हो (काल, कटार)। **अपूर्ण स्पर्शोंमें** केवल प्रथम और दूसरी स्थितियाँ ही होती हैं, अंतिम नहीं। इसमें ध्वनि दोनों स्थितियोंके सन्धि-विन्दुपर सुनाई पड़ती है। यह अपूर्ण उच्चारण दो स्थितियोंमें मिलता है। एक तो ऐसी स्थितिमें जब उन्मोचन या स्फोटके पूर्ण उच्चारणावयवों-को किसी अन्य ध्वनियोंके उच्चारणके लिए तैयार होना पड़ता है। ऐसा संयुक्त व्यंजनोंमें होता है, जब प्रथम व्यंजन स्पर्श या स्पर्श संघर्षी हो। जैसे वक्तका 'क्' सप्तका 'प्' या इकट्ठाका 'ट्'। शब्दके अन्तमें आनेवाले स्पर्श (केवल अल्पप्राण, महाप्राण नहीं) भी इसी प्रकार अपूर्ण होते हैं, जैसे आप्,

ताक्, पट् आदि। भारतीय वैयाकरणोंने अपूर्ण उच्चारणको **अभिनिधान** कहा है इसी आधारपर स्पर्शके **अपूर्ण** या **अस्फोटित** (incomplete या unexploded) और **पूर्ण** या **स्फोटित** (complete or exploded) दो भेद होते हैं। हिन्दीके क़्, क्, ख्, ग्, घ्, त्, थ्, द्, ध्, ट्, ठ्, ड्, ढ्, प्, फ्, ब्, भ् स्पर्श हैं। संस्कृत व्याकरणोंमें क से म तक २५ ध्वनियों (कादयो मावसानाः स्पर्शाः)को स्पर्श कहा गया है। अब चवर्ग तथा ङ, ञ्, ण्, न्, म् स्पर्श नहीं माने जाते। (२) **संघर्षी**—संघर्षी ध्वनिमें हवाका न तो स्पर्शकी तरह पूर्ण अवरोध होता है और न अधिकांश स्वरोंकी भाँति वह अबाध रूपसे मुँहसे निकल जाती है। इसमें स्थिति स्वरों और स्पर्शके बीचकी है, अर्थात् दो अंग एक दूसरेके इतने समीप आ जाते हैं कि हवाको दोनोंके बीचसे घर्षण करके निकलना पड़ता है। इसीलिए इसे **संघर्षी** कहा जाता है। दोनों ओठ, ऊपरके दाँत और नीचेके ओठ, जीभ और दाँत, जीभ और वर्त्स आदिकी सहायतासे इस प्रकारकी ध्वनियाँ पैदा की जा सकती हैं। फ़, व, ज़, स, श, ख़, ग़, ह आदि इसी वर्गकी ध्वनियाँ हैं। स्, श्, ष् में एक प्रकारकी शीत्कार (hissing) ध्वनि सुनाई पड़ती है। संघर्षियोंमें 'श' को **उत्थितपार्श्व** या **नद संघर्षी** (grooved या rill fricative) कहते हैं; क्योंकि इसके उच्चारणमें जीभके आगेके दोनों किनारे उठे रहते हैं। इसके विरुद्ध 'स' **समपार्श्व संघर्षी** (slit fricative या surface fricative) है। इसके उच्चारणमें दोनों किनारे बराबर रहते हैं [इसे अंग्रेजीमें fricative, continuant, durative, spirant तथा हिन्दीमें घर्षक, घर्ष, सप्रवाह, अनवरुद्ध, अव्याहत विवृत आदि भी कहा गया है। 'ऊष्म' या 'ऊष्मा' (sibilant) भी इसीके अन्तर्गत हैं, जिनमें श, स, ष (तथा कुछ मतोंसे 'ह' भी) आते हैं। सप्रवाह, अनवरुद्ध और अव्यावहतका प्रयोग संघर्षीके अतिरिक्त पार्श्विक, अनुनासिक या अर्द्धस्वरके लिए भी होता है]। (३) **स्पर्श-संघर्षी** (affricate)—ऐसी ध्वनियाँ जिनका आरम्भ स्पर्शसे हो किंतु उन्मोचन या स्फोट झटकेके साथ या एक-ब-एक न होकर धीरे-धीरे होता है, जिसका फल यह होता है कि कुछ देरतक हवाको घर्षण करके निकलना पड़ता है। इसे **स्पर्श-घर्ष** भी कहते हैं। हिन्दीमें च, छ, ज, झ स्पर्श संघर्षी हैं। इनके भी 'स्पर्श' की तरह **पूर्ण-अपूर्ण** दो भेद हो सकते हैं और वे ठीक स्पर्शकी स्थितियोंमें ही घटित भी होते हैं। (४) **नासिक्य** (nasal)—उन व्यंजनोंको कहते हैं जिनमें दोनों ओठ, जीभ-दाँत, जीभ-मूर्द्धा या जीभ-पश्च और कोमल तालु आदिका स्पर्श होता है (उसी प्रकार जैसे स्पर्श व्यंजनोंमें) और हवा मुँहमें गूँजती नाकके रास्ते निकलती है। संस्कृत व्याकरणोंमें नासिक्योंकी गणना स्पर्शोंमें हुई है, किन्तु वस्तुतः इनमें हवाका निकलना अवरुद्ध नहीं होता अतः इन्हें स्पर्श मानना उचित नहीं है। हाँ हवा न रुकनेके कारण इन्हें **अनवरुद्ध, सप्रवाह** या **अव्याहत** (continuant या durative) अवश्य कहा जा सकता है। इन्हें **अनुनासिक** भी कहते हैं। (५) **पार्श्विक** (lateral)—इसे **पार्श्व व्यंजन** (lateral consonant) या **विभक्त व्यंजन** (divided consonent)भी कहते हैं। इस वर्गकी ध्वनियोंको तथा कुछ अन्यको पहले **द्रव** या **तरल ध्वनि** (liquid sound) भी कहा जाता था। इसमें मुँहकी मध्य रेखापर कहीं भी दो अंगोंके सहारे वायुमार्गको अवरुद्ध कर देते हैं, फलतः हवा एक या दोनों पार्श्वोंसे निकलती है। यह भी सप्रवाह व्यंजन है और संघर्षी या नासिक्य आदिकी भाँति इसका भी उच्चारण देरतक सम्भव है। यह जाननेके लिए कि हवा एक ओरसे निकल रही है या दोनों ओरसे

जीभको इस वर्गके व्यंजनकी स्थितिमें रखकर हवाको भीतर खींचना चाहिये। यदि दोनों ओर शीतलताका अनुभव हो तो ध्वनि **द्विपार्श्विक** है और नहीं तो **एकपार्श्विक**। हिन्दी 'ल' इसी वर्गका है। अंग्रेज़ी 'ल'के **स्पष्ट** (clear) और **अस्पष्ट** (dark) दो भेद होते हैं। (६) **लुंठित** (rolled) --जीभकी नोकको कुछ वेलनकी तरह लपेटकर या लुंठन करके तालुका स्पर्श करके यह ध्वनि उत्पन्न की जाती है। इसे **लोड़ित** भी कहते हैं। डॉ० श्यामसुन्दर दास, डॉ० धीरेन्द्र वर्मा तथा डॉ० बाबूराम सक्सेना हिन्दी 'र' को इसी वर्गका मानते हैं। डॉ० कादिरी और डॉ० चटर्जी 'र'को उत्क्षिप्त (आगे देखिये) मानते हैं। मुझे लगता है कि आधुनिक हिन्दीका 'र्' प्रायः (७) **कम्पनयुक्त--कंपनजात या जिह्वोत्कंपी** (trilled)* है, और कभी-कभी ही उत्क्षिप्त। कम्पनयुक्तमें जीभकी नोक तालुके अत्यन्त निकट चली जाती है और हवाके प्रवाहसे इसमें स्पष्ट कम्पन होता है। यों विभिन्न भाषाओंमें 'र' लुंठित, उत्क्षिप्त, संघर्षी, कम्पनयुक्त आदि कई प्रकारका पाया जाता है। लुंठित या कम्पनयुक्त व्यंजन जीभ नोकके अतिरिक्त अलिजिह्वसे भी उच्चरित होते हैं। कम्पनयुक्त तो ओंठसे भी उच्चरित हो सकता है। **लुंठित** या **कम्पनजातमें** हवा घर्षण खाकर निकलती है, अतः इन्हें **लुंठित, संघर्षी** या **कम्पन-जात संघर्षी** भी कहा जा सकता है। (८) **कंपन-जात संघर्षी** (trilled fricative)--एक अन्य प्रकारकी ध्वनि भी होती है, जिसमें कंपनके साथ-साथ संघर्षण होता है। ज़ेक भाषाका विशेष प्रकारका 'र' इसी श्रेणीका है। (९) **उत्क्षिप्त** (flapped)--जीभको लपेटकर तालुको झटकेसे मार उसे फिर सीधा कर लेनेसे जो ध्वनि उत्पन्न होती है, उसे उत्क्षिप्त कहते हैं। हिन्दी ड़, ढ़ उत्क्षिप्त हैं। इन्हें **ताड़नजात** भी कहते हैं। (१०) **अर्द्ध स्वर** (semi-vowel)--ये श्रुति ध्वनियाँ हैं, जो एक प्रकारसे स्वर और व्यंजनके बीचमें हैं। यों इनका झुकाव व्यंजनकी ओर अधिक है क्योंकि ये व्यंजनकी भाँति ही स्वरोंकी तुलनामें कम मुखर हैं, कम मात्राकी हैं, और साथ ही बलाघात भी प्रायः इनपर नहीं पड़ता, फिर भी इनको **अर्द्ध स्वर** कहा जाता है। इसका कारण यह है कि इनके उच्चारणका आरम्भ स्वर-स्थितिसे होता है। अर्द्ध स्वर दो हैं य, व। इन दोनोंके उच्चारणमें क्रमसे उच्चारण-अवयव पहले इ या उ की स्थितिमें आते हैं और वहाँ बहुत थोड़ी देर रुकनेके बाद आगामी स्वर या व्यंजनकी स्थितिमें चले जाते हैं। इस प्रकार ये ध्वनियाँ श्रुति हैं। शब्दके आरम्भमें या किसी व्यंजनके पूर्व आनेपर इनका रूप श्रुति होता हुआ भी व्यंजनका होता है (याद, गव्य) किन्तु दो स्वरोंके बीच ये प्रायः शुद्ध स्वर श्रुति (किया, जुवा) रूप होते हैं यों इसके **अपवाद** भी मिलते हैं। इनके उच्चारणमें हवाका प्रवाह बड़ा धीमा होता है।

(ख) **स्थानके आधारपर**--इस आधार-पर व्यंजनके प्रमुखतः निम्नांकित भेद हो सकते हैं : (१) **स्वरयंत्रमुखी** (laryngeal या glottal, कुछ लोग glottal और laryngealमें अन्तर मानते हैं) --उन ध्वनियोंको कहते हैं जो स्वर यंत्रमुख-से उच्चरित की जाती हैं। इन्हें **स्वरयंत्र स्थानीय, काकल्य** या **उरस्य** भी कहते हैं। 'ह' (हिन्दी आदिका) **स्वर यंत्रमुखी संघर्षी** है और **स्वरयंत्रमुखी स्पर्श** (glottal stop)। अरबीका **हमजा स्वरयंत्रमुखी स्पर्श ध्वनि** ही है। उत्तरी जर्मन तथा कुछ अन्य भाषाओंमें भी यह स्पर्श मिलता है। (२) **उपालिजिह्वीय** (pharyngeal)--उन ध्वनियोंको कहते हैं जो स्वरयंत्र और अलिजिह्वके बीचमें उपालिजिह्व या गल-

*अंग्रेजीमें rolled तथा trilled का एक अर्थमें भी प्रयोग हुआ है।

बिलमें पैदा होती हैं। इसके लिए जिह्वा मूलको पीछे हटाकर गलबिलको संकीर्ण कर लिया जाता है। अरबीकी 'बड़ी हे' (ح) और 'ऐन' (ع) इसी स्थानसे उच्चरित होती हैं। उपालिजिह्वीय ध्वनियाँ प्राय: अफ्रीकामें या उसके आसपास ही मिलती हैं। (३) **अलिजिह्वीय** (uvular)—कौवे या अलिजिह्वसे इन ध्वनियोंका उच्चारण किया जाता है। इसके लिए जिह्वामूल या जिह्वापश्चको या तो निकट ले जाकर वायु-मार्ग सँकरा करते हैं और संघर्षी ध्वनि उत्पन्न होती है, या स्पर्श कराकर स्पर्श ध्वनि। इन ध्वनियोंको **जिह्वामूलीय** या **जिह्वापश्चीय** भी कहा जाता है। क़, ग़, ख़, ध्वनियाँ इसी प्रकारकी हैं। अरबी तथा एस्किमो आदि बहुत-सी भाषाओंमें ये ध्वनियाँ हैं। फ़ारसीके प्रभावसे ये भारतमें भी हैं। (४) **कोमल तालव्य** (soft palatal)—इसे **कंठ्य** (guttural या velar) भी कहते हैं। किन्तु ऐसा कहना ठीक नहीं। यह स्थान कंठ नहीं है। जीभके पिछले भागके सहारे यहाँ ध्वनि उत्पन्न करते हैं। क, ख, ग, घ, ङ का उच्चारण यहींसे होता है। कुछ (विशेष प्रकारके ख़, ग़ आदि) संघर्षी ध्वनियाँ भी यहाँसे उच्चरित होती हैं। (५) **मूर्द्धन्य** (cerebral)—उन ध्वनियोंको कहते हैं, जिनके उच्चारणमें मूर्द्धासे सहायता ली जाती है। संस्कृतमें टवर्ग, ऋ, र, ष आदि मूर्द्धन्य थे—'ऋटुरषाणां मूर्द्धा'। हिन्दीमें टवर्गको यद्यपि पुराने नये सभी लेखकों द्वारा मूर्द्धन्य कहा गया है किन्तु वस्तुत: उसका मूर्द्धन्य उच्चारण बहुत कम होता है। वह काफ़ी आगे खिसक आया है और प्राय: कठोर तालव्य या तालव्य हो गया है। 'टूटा' जैसे शब्दोंमें तो वह वर्त्स्य है। मराठी तथा चीनीमें कुछ ध्वनियाँ मूर्द्धन्य हैं। संस्कृतके टवर्गके उच्चारणमें जीभकी नोकको उलटकर मूर्द्धासे उसका स्पर्श कराते थे। मूर्द्धन्यको अंग्रेज़ीमें कैक्यूमिनल (cacuminal) भी कहा गया है। अब इसे रेट्रोफ़्लेक्स (retroflex) कहा जाता है, जिसके लिए हिन्दी पर्याय प्रतिवेष्टित, पश्चोन्मुख या पश्चाद्वर्ती हो सकते हैं। डॉ० डैनियल जोन्स आदि प्राय: सभी विद्वान् इसे रेट्रोफ्लेक्स कहते हैं, किन्तु तत्त्वत: यह नाम स्थानपर आधारित न होकर प्रयत्नपर आधारित है, अत: इसका प्रयोग इस प्रसंगमें बहुत उचित नहीं कहा जा सकता। (६) **तालव्य या कठोर तालव्य** (palatal)—इनका उच्चारण कठोर तालुके पास होता है। जीभके अगले भाग या नोकसे इसमें सहायता ली जाती है। हिन्दी टवर्गका उच्चारण यहींसे होता है। संस्कृतमें ञ, चवर्ग, य, श का उच्चारण यहींसे होता था—'इचुयशानां तालु:'। आजके हिन्दीके श को तथा च-वर्गको प्राय: सभी विद्वानोंने तालव्य कहा है किन्तु वस्तुत: ये सभी प्राय: वर्त्स्यसे हो गये हैं। 'श' कभी कभी तालु और वर्त्सके संधिस्थलपर भी उच्चरित होता है। (७) **वर्त्स्य** (alveolar)—मसूड़े या वर्त्स (और जिह्वाग्र) की सहायतासे उत्पन्न ध्वनियाँ वर्त्स्य कहलाती हैं। वैदिक कालमें तवर्ग इसी श्रेणीका था। हिन्दीमें न, ल, र, स, ज़ तथा च वर्ग इस वर्गके हैं। 'श' भी वर्त्स्य या वर्त्स और तालुके संधिपर उच्चरित होता है। अंग्रेज़ीके ट, ड भी वर्त्स्य हैं। (८) **दंत्य** (dental)—दाँतकी सहायतासे उच्चरित ध्वनियाँ दंत्य हैं। इसमें जिह्वाग्र या जीभकी नोककी सहायता ली जाती है। हिन्दीके त, थ, द, ध, दंत्य हैं। संस्कृतसे ऌ, तवर्ग, ल, स दंत्य थे। सूक्ष्मतासे विचार करनेपर दंत्य ध्वनियोंके **अग्र, मध्य, मूल** ये तीन भेद किये जा सकते हैं। (९) **दंतौष्ठ्य** (labio-dental)—ऐसी ध्वनियाँ जिनका उच्चारण ऊपरके दाँत और नीचेके ओठकी सहायतासे होता है। व, फ़ दंतोष्ठ्य है। (१०) **ओष्ठ्य** (bilabial)—जिनका उच्चारण दोनों ओठोंसे हो। इन्हें **द्वयोष्ठ्य** भी कहते हैं। प, फ, ब, भ, म

ऐसे ही हैं। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कुछ ध्वनियोंके दो या अधिक प्रयत्न अपेक्षित होते हैं, इसी प्रकार कुछ ध्वनियों-के लिए एकसे अधिक स्थान आवश्यक होते हैं।

(ग) **स्वर तंत्रियोंके आधारपर**--इस आधारपर व्यंजनके प्रमुखतः दो भेद हो सकते हैं **घोष, अघोष**। जैसा कि कहा जा चुका है। **घोष वे ध्वनियाँ हैं जिनके उच्चारणमें स्वरतंत्रियोंके निकट आ जानेसे उनके बीच निकलती हवासे उनमें कंपन होता है।** हिन्दीमें कवर्ग, चवर्ग आदि पाँचों वर्गोंकी अन्तिम तीन (अर्थात् ग, घ, ङ, ज, झ, ञ आदि) ध्वनियाँ, तथा य, र, ल, व, ज, ग़, ह, ड़, ढ़ आदि घोष हैं। दूसरी ओर **जिनके उच्चारणमें कंपन (स्वर तंत्रियोंमें) नहीं होता उन्हें अघोष कहते हैं।** हिन्दी-में पाँच वर्गोंकी प्रथम दो ध्वनियाँ, क़, ख़, फ़, स, श आदि अघोष हैं। **अघोषको श्वास** या **कठोर** (hard, surd) और **घोषको नाद, कोमल** (soft) या **स्वनंत** (sonant) भी कहते हैं। सूक्ष्मतासे विचार करनेपर घोष ध्वनियोंके भी **पूर्ण घोष** और **अपूर्ण** घोष दो भेद हो सकते हैं। 'हिन्दी 'व' **पूर्ण घोष** है किन्तु अंग्रेज़ी b अपूर्ण घोष है।' **जपित व्यंजन** (whispered consonant) भी इसीके अन्तर्गत आते हैं। इनके उच्चारणमें स्वर-तंत्रियाँ घोष-अघोषसे अलग स्थितिमें होती हैं। (दे०) **शारीरिक ध्वनिविज्ञानमें स्वरयंत्र स्वरयंत्रमुख** और **स्वरतंत्री** उपशीर्षक घोष और अघोष दोनों प्रकारके व्यंजनोंके जपित रूप हो सकते हैं।

(घ) **प्राणत्वके आधारपर**--'प्राण'का अर्थ है, 'हवा' या 'हवाकी शक्ति'। इस आधारपर कुछ व्यंजन **अल्पप्राण** कहे जाते हैं और कुछ **महाप्राण**। जिन व्यंजनोंके उच्चारणमें हवाका आधिक्य हो या श्वास बल अधिक हो उन्हें **सप्राण या महाप्राण** (aspirated) कहते हैं, और दूसरी ओर जिन व्यंजनोंके उच्चारणमें हवाका आधिक्य न हो या श्वास बल कम हो उन्हें **अप्राण या अल्पप्राण** (unaspirated) कहते हैं। 'ह' ध्वनि शुद्ध 'प्राण'से बहुत मिलती-जुलती है, इसी कारण महाप्राण-ध्वनियोंको ह-युक्त तथा अल्प-प्राण ध्वनि-योंको ह-रहित कहा तथा लिखा जाता है। अर्थात् ख्=क्+ह (kh), या क=ख-ह। विद्वानोंने ऐसा माना तो है, किन्तु वस्तुतः जहाँतक मैं समझता हूँ ऐसी मान्यता बड़ी भ्रामक है। हम जानते हैं कि 'ह्' ध्वनि संघर्षी है, चाहे उसका संघर्ष थोड़ा ही क्यों न हो। ऐसी स्थितिमें 'ख्'को यदि 'क्+ह' माना जाय तो 'क' स्पर्श है और 'ह्' संघर्षी। इस प्रकार 'ख' ध्वनि स्पर्श-संघर्षी या स्पर्श और संघर्षीका योग हो जायगी, किन्तु हम जानते हैं कि 'ख्' शुद्ध स्पर्श है। इसका आशय यह हुआ कि 'ख'को 'क्'का महाप्राण वाला रूप मानना तो ठीक है, किन्तु उसे 'क्' 'ह्' का योग मानना भ्रामक है। यह भी प्रायः विद्वानोंने कहा है कि प्राणत्वका विचार मात्र स्पर्शोंमें होता है। ऐसा मानना भी उचित नहीं। संघर्षी ध्वनियोंके अतिरिक्त सभी प्रकारकी ध्वनियोंके अल्पप्राण और महाप्राण वाले रूप हो सकते हैं, जैसे न्ह, र्ह, ल्हे, ढ़, छ आदि। संघर्षी ध्वनियोंमें यह भेद न मिलने-का कारण यह है कि उनमें हवाके शक्ति-शाली प्रवाहकी आवश्यकता पड़ती है, अतः प्रायः सभी महाप्राण होते हैं। प्राणत्वके आधारपर हिन्दी व्यंजनोंको इस प्रकार रखा जा सकता है। अल्पप्राण--क, ग, ङ, च, ज, ञ, ट, ड, ण, त, द, न, प, ब, म, क़, ल, र, ड़। महाप्राण--ख, घ, छ, झ, ठ, ढ, थ, ध, न्ह, फ, भ, म्ह, ल्ह, र्ह, ढ़। इस प्रकार मोटे रूपमें जिन ध्वनियोंके साथ या उर्दू लिपिमें 'हे' या अंग्रेज़ीमें h (kh, ph आदि) जोड़ना पड़ता है, वे महाप्राण हैं, शेष अल्पप्राण।

(ङ) **उच्चारण-शक्तिके आधारपर**--इस

आधारपर, व्यंजनोंके सशक्त (fortis) और अशक्त (lenis) तथा मध्यम ये तीन भेद किये जा सकते हैं। **सशक्त** जिसमें मुँहकी मांसपेशियाँ दृढ़ हों, जैसे स्, ट्। **अशक्त**में मांसपेशियाँ शिथिल होती हैं, जैसे र्, ल्। च् श् आदि कुछ ध्वनियाँ दोनोंके मध्यमें आती हैं।

(च) **अनुनासिकताके आधारपर**—इस आधारपर व्यंजनोंके तीन भेद हो सकते हैं (१) **मौखिक**—जैसे क्, ट्। (२) **मौखिक-नासिक्य या अनुनासिक**—जैसे क्ँ, ट्ँ। अनुनासिकमें उच्चारणके समय हवा मुँहके साथ नाकसे भी निकलती है। (३) **नासिक्य**—जिसमें हवा केवल नाकसे निकले, जैसे म्, न्, ण्, ञ्, ङ।

(छ) **संयुक्तता-असंयुक्तताके आधारपर**—इस आधारपर व्यंजनोंके (१) **असंयुक्त**—जैसे क्, ट्; (२) **संयुक्त**—जैसे क्ट, प्व, ल्य; (३) **द्वित्व**—जैसे क्क, प्प, त्त; ये तीन भेद हैं। द्वित्वमें एक ही व्यंजनका संयुक्त रूप होता है और संयुक्तमें दो भिन्न व्यंजनोंका।

उपर्युक्तमें **प्रथम चार** (क, ख, ग, घ) **आधारोंपर** किये गये वर्गीकरण अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। और उनमें भी स्थान-प्रयत्न-वाले और महत्त्वपूर्ण हैं। इनके चार्टके लिए (दे०) **ध्वन्यात्मकप्रति-लेखन**।

कुछ असामान्य व्यंजन और उनके भेद—ऊपर जिन व्यंजनों और उनके भेदोंका उल्लेख किया गया है, वे सामान्य और बहुप्रचलित हैं। इसके विरुद्ध कुछ व्यंजन असामान्य और अल्प प्रचलित हैं। ऊपरके व्यंजन **बहिःस्फोटात्मक** थे, अर्थात् उनमें हवा फेफड़ेसे बाहरकी ओर आती थी, आगे जिन प्रथम और तृतीयका वर्णन किया जायेगा वे **अन्तःस्फोटात्मक** अर्थात् उसके ठीक उलटे हैं। इनके उच्चारणमें हवा बाहरसे भीतर जाती है। दूसरा इस दृष्टिसे दोनोंसे भिन्न है। (१) **अन्तःस्फोटात्मक व्यंजन** (implosive)—इन्हें **अंतर्मुखी** या **अंतः-स्फोट** भी कहते हैं। ये स्पर्श व्यंजन हैं। इनमें ऐसा होता है कि सामान्य स्पर्शोंकी भाँति मुँहके किसी भागमें स्पर्श या अवरोध होता है और साथ ही स्वर यंत्र काफी नीचे कर दिया जाता है। परिणाम यह होता है कि स्पर्श-स्थान और स्वर यंत्रके बीचके स्थानके विस्तृत हो जानेके कारण हवा फैलकर हलकी हो जाती है और ज्योंही अवरोधका उन्मोचन होता है बाहरसे हवा भीतर हलकी हवा होनेके कारण बड़ी तेजीसे प्रवेश करती है और यह ध्वनि उच्चरित होती है। वेस्टरमैनके अनुसार इसके तुरन्त बाद एक सामान्य स्वर सुनाई पड़ता है। इस प्रकारकी ध्वनियाँ **द्वयोष्ठ्य, दंत्य, तालव्य** और **कोमलतालव्य** होती हैं। ऐसी ध्वनियोंके पूर्व प्रायः ऊपर एक उलटा 'कॉमा' रखकर उसे अन्य ध्वनियोंसे अलग करते हैं; जैसे प' (p') आदि। यों कुछ अन्य पद्धतियाँ भी प्रचलित हैं। अफ्रीकाकी एफिक, इबो, हौसा, जुलू, फुल आदि, भारतकी सिंधी (ज, ब आदि) तथा कुछ राजस्थानी एवं कुछ मूल अमेरिकी भाषाओंमें इस प्रकारकी ध्वनियाँ मिलती हैं। अंतःस्फोटात्मक ध्वनियाँ कभी-कभी बहुत हल्की भी होती हैं। (२) **उद्गार व्यंजन,** (ejective या glottalized stop)—यह भी विशेष प्रकारकी स्पर्श-ध्वनि ही है। इसमें मुँहमें स्पर्शके अवरोधके साथ-साथ स्वर यंत्रमुख भी स्वर तंत्रियोंके समीप आनेसे बन्द हो जाता है। पहले मुँहमें स्फोट होता है और फिर स्वरयंत्रमें लगभग आधा सेकण्ड बाद। स्वरयंत्र इस समय कुछ ऊपर उठ आता है। दोहरे अवरोध और दोहरे उन्मोचनके कारण यह ध्वनि एक विशेष प्रकारकी कुछ तेज-सी बोतलके कार्कके खुलने जैसी सुनाई पड़ती है। इसके उच्चारणमें, मुँहकी मांसपेशियोंमें संकोचनसे हवा संकुचित रहती है और उन्मोचन होते ही ज़ोरसे बाहर निकलती है। यह

स्पर्श द्वयोष्ठच, तालव्य, कोमल तालव्य आदि कई प्रकारका हो सकता है। इसे लिखनेके लिए लिपि चिह्नके आगे ऊपर कॉमा लगाते हैं, जैसे क' (k') प' आदि। यह ध्वनियाँ प्रमुखतः अफ्रीकी भाषाओंमें मिलती हैं किन्तु अपवादस्वरूप फ्रांसीसी आदि कुछ अन्य भाषाओंमें भी। स्पर्शके अतिरिक्त संघर्षी, पार्श्विक तथा अर्द्ध स्वर आदिका भी उच्चारण इस प्रकार स्वरयंत्र वन्द करके हो सकता है। ये ध्वनियाँ भी अफ्रीकी भाषाओंमें मिलती हैं।

(३) **क्लिक** (click)––इसे **अन्तर्मुखी द्विस्पर्श** या **अन्तःस्फोट द्विस्पर्श** भी कहा गया है। इसकी प्रमुख विशेषताएँ दो हैं : (क) मुँहमें दो स्थानोंपर स्पर्श या अवरोध, (ख) हवाका वाहरसे भीतर जाना। दो अवरोधों या स्पर्शोंमें एक तो कोमल तालव्य (अर्थात् 'क्' के समान) होता है और दूसरा स्पर्श उसके पूर्व कहीं भी। इसके उच्चारणमें जीभ तथा मांसपेशियाँ कुछ कड़ी रहती हैं। पहले वाहरके स्पर्शका उन्मोचन होता है। भीतरकी मांसपेशियोंके कड़ापन एवं खिचावसे भीतरकी हवा संकुचित-सी रहती है, अतः उन्मोचन होते ही वाहरसे हवा घुसती है, तुरन्त ही क-स्थानीय स्पर्श भी उन्मोचित होता है। यह परवर्ती उन्मोचन अत्यन्त धीमा होनेसे सुनाई नहीं पड़ता। इस ध्वनिके वाद तुरन्त किसी सामान्य स्वरका उच्चारण होता है। क्लिक ध्वनियाँ कई प्रकारकी होती हैं। इनका यह अन्तर क-स्थानीय स्पर्शके कारण नहीं होता, क्योंकि यह स्पर्श तो सभीमें एक-सा होता है, अन्तर होता है उस दूसर स्पर्शके कारण जो क-स्थानके पूर्व घटित होता है। इन पूर्ववर्ती स्पर्शोंके आधारपर ही क्लिकके प्रमुखतः ६ भेद किये गये हैं : **द्वयोष्ठच, दंत्य, वर्त्स-तालव्य, वर्त्स्य, प्रतिवेष्टित कठोर तालव्य, वर्त्स्य-पार्श्विक**। इनमें अन्तिम उन्मोचन 'ल'की तरह केवल एक पार्श्वमें होता है। क्लिक ध्वनियोंका प्रयोग अधिकांशतः दक्षिणी अमेरिकाकी भाषामें होता है, किन्तु उनसे मिलती-जुलती ध्वनि अन्य भी वहुत-सी भाषाओंमें पायी जाती हैं। कुछ लोगोंके अनुसार प्रागैतिहासिक कालमें भारोपीय परिवारमें भी क्लिक ध्वनियाँ थीं, धीरे-धीरे उनका लोप हो गया। ब्रिटेनमें 'हम प्यार करते हैं'के अर्थमें karom का प्रयोग होता रहा है, जो इधर karomp हो गया है। वेन्द्रियेके अनुसार 'प'का विकास 'क्लिक'के कारण है। फ्रांसीसी भाषामें संदेह और आश्चर्य प्रकट करनेके लिए 'त'का क्लिक रूपमें प्रयोग होता है। हिन्दीका च् च् या टिक्-टिक् भी कुछ इसी प्रकारका है। क्लिक ध्वनियोंके अघोष-घोष, अल्पप्राण महाप्राण, अनुनासिक-निरनुनासिक आदि दोनों रूप हो सकते हैं। लिखनेमें इनके लिए कई पद्धतियाँ प्रचलित हैं। होटेंटोटकी एक बोली 'नामा'के लिए | (दंत्य), ǂ (वर्त्स्य), ! (प्रतिवेष्टित), ǁ (पार्श्विक) चिह्नोंका प्रयोग किया गया है। जैसे !ami= ढीला करना। ओष्ठचके लिए ⊙ का भी प्रयोग किया गया है। किन्तु अव लिपि चिह्नोंको उलटकर या उन जैसे नये चिह्नोंका ही प्रायः प्रयोग करते हैं, जैसे ʇ (उलटी टी) आदि। क्लिक ध्वनियोंको प्रयुक्त करनेवाली प्रमुख भाषाएँ वुशमैन, जुलू, वाँटू, होटेंटोट तथा अमेरिकाकी आदि भाषाएँ हैं। वर्त्स्य-तालव्य प्रयोग केवल सुतो (अफ्रीकी) में होता है।

संयुक्त व्यंजन—संयुक्त व्यंजन दो या अधिक व्यंजनोंके मिलनेसे वनते हैं। मिलनेवाले यदि दोनों व्यंजन एक हैं (जैसे क्––क्, पक्का) तो उस युक्त व्यंजनको **द्वित्व-व्यंजन** (double consonant या gemmination) कहते हैं, किन्तु यदि दोनों दो हैं (जैसे र्+म्, गर्मी) तो युक्त व्यंजनको **संयुक्त व्यंजन** (conjunct या compound consonant) कहते हैं। व्यंजनके एक दृष्टिसे दो भेद किये जा सकते हैं :

स्पर्श और स्पर्श-संघर्षी या पूर्ण बाधावाले तथा अन्य। स्पर्श और स्पर्शके द्वित्वमें ऐसा होता है कि उस स्पर्शके प्रथम (हवाके आने और स्पर्श होने) और अन्तिम या तृतीय (उन्मोचन या स्फोट) स्थितिमें तो कोई अन्तर नहीं आता, केवल दूसरी या अवरोधकी स्थिति बड़ी हो जाती है। 'पक्का'में वस्तुतः दो क् नहीं उच्चरित होते, अपितु 'क'के मध्यकी स्थिति अपेक्षाकृत बड़ी हो जाती है। इसीलिए वैज्ञानिक दृष्टिसे इस प्रकारके द्वित्वोंको दो क् आदि न कहकर 'क' का दीर्घ रूप या दीर्घ व्यंजन क या दीर्घ या प्रलम्बित 'क' कहना अधिक समीचीन है, क्योंकि दो 'क' तब कहलाते जब दोनोंकी तीन-तीन स्थितियाँ घटित होतीं। स्पर्श-संघर्षी व्यंजनोंके सम्बन्धमें भी यही स्थिति है। इस प्रकार बग्गी, बच्चा, लज्जा, भट्टी, अड्डा, पत्ती, गद्दी, थप्पड़, अब्बा आदि सभीके द्वित्व ऐसे ही हैं। महाप्राणोंका इस रूपमें द्वित्व नहीं होता। वस्तुतः (अन्य दृष्टियोंसे एक) अल्पप्राण और महाप्राण ध्वनियोंका अन्तर स्फोटके वायु-प्रवाहकी कमी-बेशीके कारण होता है। अतः जब दो मिलेंगे तो पहलेका स्फोट होगा नहीं, इस प्रकार वह अल्पप्राण हो जायगा। आशय यह है कि ख्ख, घ्घ, छ्छ, झ्झ ठ्ठ, भ्भ आदिका उच्चारण हो ही नहीं सकता। उच्चारणमें वे क्ख, ग्घ, च्छ, ज्झ; ट्ठ, ब्भ हो जायेंगे, जैसे घग्घर, मच्छर, झज्झर, भब्भड़ आदि। अन्य प्रायः सभी व्यंजनोंके द्वित्वमें इस प्रकारकी कोई बात नहीं होती, केवल उनकी दीर्घता बढ़ जाती है, जैसे पन्ना, अम्मा, रस्सा, बर्रे, पल्ला आदि। संयुक्त व्यंजनोंमें यदि पहला स्पर्श या स्पर्श संघर्षी है तो वह अस्फोटित होता है अर्थात् उसका स्फोट या उन्मोचन नहीं होता, जैसे ऐक्ट, अक्ल, बद्ली, अच्छी आदि। अन्य प्रायः कोई भी व्यंजन आवे, उसमें प्रकृतिकी दृष्टिसे कोई अन्तर नहीं पड़ता। हाँ, दीर्घता या मात्राकी कुछ कमी-बेशी अवश्य मिलती है। संयुक्त व्यंजनोंमें एकका घोषत्व-अघोषत्व दूसरेके स्वरूपको प्रभावित करता है। 'नागपुर'का उच्चारण 'नाक्पुर' 'प'के 'ग'पर पड़े प्रभावके कारण है। संस्कृतकी संधियोंमें इसके अनेक उदाहरण मिल सकते हैं।

ध्वनि-रेखा (isophone)--(दे०) **आइसोफ़ोन**।

ध्वनि-लक्षण (sound attributes)--**ध्वनि-गुण** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

ध्वनि-लहर (sound wave)-- (दे०) **ध्वनि-श्रवण**।

ध्वनि-लोप--**ध्वनि-परिवर्तन** का एक रूप। (दे०) **ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ**।

ध्वनि-वर्गीकरण--(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**।

ध्वनि-विकार--(१) **ध्वनि-प्रक्रिया-विज्ञान** (दे०)का एक अन्य नाम। (२) **ध्वनि-परिवर्तन** (दे०)का एक अन्य नाम।

ध्वनि-विकास (phonetic development)--**ध्वनि-परिवर्तन** (दे०)का एक अन्य नाम।

ध्वनि-विचार--**वर्णविचार** (दे०), **ध्वनि-विज्ञान** (दे०) या **ध्वनि-प्रक्रिया विज्ञान** (दे०)के लिए प्रयुक्त अन्य नाम।

ध्वनि-विज्ञान (phonetics)--भाषा विज्ञानकी एक शाखा, जिसमें **ध्वनिका** अध्ययन किया जाता है। ध्वनिके अध्ययनसे संबद्ध शास्त्र या विज्ञानके लिए अंगरेज़ीमें आज प्रमुखतः **फ़ोनेटिक्स** और **फ़ोनॉलजि** (phonetics, phonology) ये दो शब्द चल रहे हैं। स्पष्ट ही दोनोंका सम्बन्ध ग्रीक शब्द 'phone' से है, जिसका अर्थ 'ध्वनि' है। 'टिक्स' और 'लजि' प्रयोगतः 'विज्ञान' या 'शास्त्र'के समानार्थी हैं। इस प्रकार दोनों ही एक प्रकारसे ध्वनिके विज्ञान या शास्त्र हैं, किन्तु प्रयोगकी दृष्टिसे इनमें थोड़ा अंतर है। **'फ़ोनेटिक्स'** (या phonics) ध्वनियोंके अध्ययनके शुद्ध सैद्धांतिक पक्षका विज्ञान है। इस वि-

ज्ञानमें हम सामान्य रूपसे ध्वनिकी परिभाषा, भाषा ध्वनि, ध्वनियोंके उत्पन्न करनेके अंग, ध्वनियोंका वर्गीकरण और उनका स्वरूप, उनकी लहरोंका किसीके मुँहसे चलकर किसीके कान तक जाना[1] तथा सुना जाना एवं उनके विकार आदि बातों पर विचार करते हैं। इस प्रकार 'फ़ोनेटिक्स'का इस रूपमें किसी भाषा विशेषसे सम्बन्ध नहीं है। यह ध्वनिके अध्ययनका सामान्य विज्ञान है, जो अपने अध्ययनके लिए सामग्री संसारकी सभी भाषाओंसे लेता है और ऊपर कही गयी बातोंसे संबद्ध सामान्य बातोंका विवेचन करता है। **'फ़ोनॉलजि'** इसके विरुद्ध भाषा विशेषसे संबद्ध है। इसमें हम किसी एक भाषा (या बोली)की ध्वनियोंका विचार करते हैं और पहले तो **'फोनेटिक्स'** द्वारा निरूपित सिद्धांतोंके आधारपर उस भाषाकी ध्वनियोंके स्वरूप, वर्गीकरण आदिपर विभिन्न दृष्टियोंसे विचार करते हैं, फिर एक-एक ध्वनिको लेकर उसके इतिहास और विकार आदिको देखते हैं तथा तद्विषयक नियमोंका निर्धारण करते हैं। इस प्रकार **'फोनेटिक्स'** मात्र सैद्धान्तिक और सार्वभाषिक है, किन्तु **'फ़ोनॉलजि'** उसका व्यावहारिक रूप है, किसी एक भाषासे संबद्ध है, साथ ही ध्वनियोंके विकासपर विचार करनेके कारण मात्र वर्णनात्मक या विश्लेषणात्मक न होकर ऐतिहासिक भी है। इससे यह स्पष्ट है कि ध्वनिके अध्ययनके ये दो दृष्टिकोण या दो प्रमुख विभाग हैं, किन्तु इनके लिए क्रमशः **'फोनेटिक्स'** और **'फ़ोनॉलजि'** इन दो पारिभाषिक नामोंका जो प्रयोग किया गया है, वह सार्वभौम नहीं है। कुछ विद्वानोंने तो उन्हें इस रूपमें माना है, किन्तु अन्योंका प्रयोग इससे भिन्न भी है। कुछ लोग दोनों अर्थोंमें **फ़ोनेटिक्स**का ही प्रयोग करते हैं, तो कुछ लोग ध्वनि-अध्ययनके सैद्धान्तिक एवं **वर्णनात्मक** रूप (भाषा सामान्यका या एक भाषाका)-को **फोनेटिक्स** (या synchronic phonetics) कहते हैं और ऐतिहासिक रूपको **'हिस्टॉरिकल फ़ोनेटिक्स'** (diachronic phonetics)। कुछ अन्य लोग **फ़ोनॉलजि**के अन्तर्गत ही सभीको स्थान देते हैं। कुछ लोग **फ़ोनेटिक्स** और **फोनॉलजि**-को पर्यायके रूपमें भी प्रयोग करते हैं। कुछ अन्य लोग भाषा (सामान्य)की ध्वनियोंका अध्ययन एवं सिद्धान्त-निर्धारण तथा भाषा-विशेषकी ध्वनियोंका वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक दृष्टिसे अध्ययन **फ़ोनेटिक्स**में मानते हैं तथा भाषा विशेषकी ध्वनियोंपर ऐतिहासिक विचार—उनका विकास, उनमें परिवर्तन आदि—**फ़ोनॉलजि**में। कुछ आधुनिक भाषाविद् ध्वनिग्राम विज्ञान (दे०) अथवा **फ़ोनीमिक्स**के लिए भी **फोनॉलजि**का तथा कुछ **फ़ोनेटिक्स**, **फ़ोनिमिक्स** दोनोंके लिए प्रयोग करते हैं। इसी प्रकार कुछ लोग **फ़ोनेटिक्स**का भी **फ़ोनिमिक्स**के लिए प्रयोग करते हैं। निष्कर्षतः यद्यपि अधिकांश विद्वान् इन दोनोंमें कुछ भेद रखते हैं, किन्तु सर्वत्र वह भेद एक-सा नहीं है, इसीलिए व्यावहारिक दृष्टिसे आज इन दोनों नामोंकी अलग सत्ता बहुत अर्थ नहीं रखती। यों इसमें संदेह नहीं कि अधिक विद्वान् इन दोनोंका अंतर प्रायः वही मानते हैं जिसे ऊपर सबसे पहले कुछ विस्तार से समझाया गया है। संस्कृतमें ध्वनि-विज्ञानका पुराना नाम **शिक्षा-शास्त्र** था। हिन्दीमें इस प्रसंगमें **फोनेटिक्स**के लिए **ध्वनि-तत्व, ध्वनि-शिक्षा, ध्वनि-विचार, ध्वनि-विज्ञान, ध्वनि-शास्त्र, वर्ण-विज्ञान** आदि; तथा **फोनॉलजि**के लिए **ध्वनि-विकार, वर्ण-विचार, ध्वनि-विचार, ध्वन्यालोचन, ध्वनि-विज्ञान, ध्वनि-जात, ध्वनि-प्रक्रिया, ध्वनि-विचार, ध्वनि-प्रक्रिया-विज्ञान** आदिका नाम प्रयुक्त हुआ है। एकरूपताकी दृष्टिसे

---

(१) वस्तुतः यह भौतिक शास्त्रका विषय है। किंतु अब कुछ लोग भाषा-शास्त्रमें भी इसके अध्ययनको समेट लेनेके पक्षमें हैं।

फोनेटिक्सके लिए ध्वनि-विज्ञान या ध्वनि-शास्त्र और फ़ोनॉलजिके लिए '**ध्वनि-प्रक्रिया**' या '**ध्वनि-प्रक्रिया-विज्ञान**'का प्रयोग किया जा सकता है, किन्तु यों जब दोनोंमें सर्वसम्मत भेद नहीं है तो दोनों हीके लिए (साथ ही ध्वनि-विषयक अन्य अध्ययनोंके लिए भी एक covering नामके रूपमें) **ध्वनि-विज्ञान** नाम भी अवैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता। आगे इसी एक नामका सामान्य रूपसे प्रयोग किया जायगा।√भाषा-विज्ञानकी अन्य शाखाओंकी भाँति ध्वनिविज्ञान भी वर्णनात्मक, ऐतिहासिक और तुलनात्मक तीनों प्रकारोंका हो सकता है। दूसरे शब्दोंमें भाषा-ध्वनिका सर्वांगीण अध्ययन ही ध्वनि-विज्ञान है। ध्वनि-विज्ञानके कुछ प्रमुख विवेच्य विषय निम्नांकित हो सकते हैं: (१) शारीरिक ध्वनि-विज्ञान (physiological phonetics); (२) ध्वनि और भाषा-ध्वनि (sound and speech sound); (३) ध्वनि-योंका वर्गीकरण (classification of sounds); (४) ध्वनि-गुण (sound quality); (५) संगम (juncture); (६) अक्षर (syllable); (७) श्रवणात्मक या श्रावणिक ध्वनिविज्ञान (acoustics या acoustic phonetics); (८) प्रायोगिक ध्वनिविज्ञान (experimental phonetics); (९) ऐतिहासिक ध्वनिविज्ञान (diachronic phonetics); (१०) ध्वनि-ग्राम-विज्ञान (phonemics); (११) ध्वन्यात्मक प्रतिलेखन (phonetic transcription)। इनको कोशमें यथास्थान दिया गया है।

ध्वनि-विज्ञानीय स्कूल (phonetic school)—(दे०) **लंदन केन्द्र**।

ध्वनि-विपर्यय—**विपर्यय** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

ध्वनि-वियोजन (subtracting)—एक प्रकारका **संबंध तत्व** (दे०)।

ध्वनि-शास्त्र—**ध्वनि-विज्ञान** (दे०)का एक अन्य नाम।

ध्वनि-शिक्षा—**ध्वनि-विज्ञान** (दे०)का एक अन्य नाम।

ध्वनि-श्रवण—फेफड़ेसे निकली हुई हवा, ध्वनि-यंत्रके अंगोंके आंदोलनके कारण आंदोलित होकर निकलती है और बाहरकी वायुमें अपने आन्दोलनके अनुसार एक विशिष्ट प्रकारके कम्पनसेल हरें पैदा कर देती है। वे लहरें ही सुननेवालेके कानतक पहुँचती हैं और वहाँ श्रवणेन्द्रियमें कंपन पैदा कर देती हैं। सामान्यत: इन ध्वनि-लहरोंकी चाल ११००-१२०० फ़ीट प्रति सेकंड होती है। ज्यों-ज्यों ये लहरें आगे बढ़ती जाती हैं, इनकी तीव्रता घटती जाती है। इसी कारण दूरके व्यक्तिको ध्वनि धीमी सुनाई पड़ती है। अनेक यंत्रोंके सहारे भौतिक शास्त्रमें इन लहरोंका बहुत गम्भीर अध्ययन किया गया है, किन्तु भाषा-विज्ञानमें उसकी बहुत उपयोगिता नहीं है।

ध्वनियोंको कान कैसे ग्रहण करता है, इस बातको स्पष्ट रूपसे समझनेके लिए संक्षेपमें कानकी बनावटको देख लेना होगा। हमारा कान तीन भागोंमें बँटा है, जिनको क्रमसे बाह्य कर्ण, मध्यवर्ती कर्ण और आभ्यन्तर कर्ण कह सकते हैं। बाह्य कर्णके भी दो भाग किये जा सकते हैं। एक तो वह भाग है, जो ऊपर टेढ़ा-मेढ़ा दिखाई देता है। यह भाग सुननेकी क्रियामें अपना कोई विशेष स्थान नहीं रखता। दूसरा भाग छिद्र या कर्ण-नालिकाके बाहरी भागसे आरम्भ होकर भीतर तक जाता है। इस भागकी या कर्ण-नालिकाकी लम्बाई लगभग एक इंच होती है। नालिकाके भीतरी छिद्रपर एक झिल्ली होती है, जो बाह्य कर्णको मध्यवर्ती कर्णसे संबद्ध करती है। मध्यवर्ती कर्ण एक छोटी-सी कोठरी है, जिसमें तीन छोटी-छोटी हड्डियाँ होती हैं। इन अस्थियोंका एक सिरा बाह्य कर्णकी झिल्लीसे जुड़ा रहता है और दूसरी ओर इनका सम्बन्ध आभ्यन्तर कर्णके बाहरी

छिद्रसे होता है । इसके पीछे आभ्यन्तर कर्ण आरम्भ होता है । इस भागमें शंखके आकारका एक अस्थि-समूह होता है । इसके खोखले भागमें उसी आकारकी झिल्लियाँ होती हैं । इन दोनोंके बीचमें एक प्रकारका द्रव पदार्थ भरा रहता है । इस भागके भीतरी सिरेकी झिल्लीसे श्रावणी शिराके तन्तु आरम्भ होते हैं, जो मस्तिष्क-से सम्बद्ध रहते हैं । ध्वनिकी लहरें जब कानमें पहुँचती हैं तो बाह्य कर्णकी भीतरी झिल्ली (या कानके पर्दे)पर कम्पन उत्पन्न करती हैं । इस कम्पनका प्रभाव मध्यवर्ती कर्णकी अस्थियों द्वारा भीतरी कर्णके द्रव पदार्थपर पड़ता है और उसमें लहरें उठती हैं, जिसकी सूचना श्रावणी शिराके तन्तुओं द्वारा मस्तिष्कमें जाती है और हम सुन लेते हैं । ध्वनि हवा तथा अन्य संवद्ध अणुओंमें कम्पन रूपमें होती है । यह कम्पन प्रति सेकेण्ड 'फ्रिक्वेंसी' या आवृत्ति कहलाता है । यह आवृत्ति कम या अधिक हो सकती है । सामान्यतः आदमीका कान कुछ (लगभग ७० से लेकर २०,००० आवृत्तितककी) ध्वनि सुन सकता है, किन्तु साफ़ और समझने लायक वह केवल ९० से १०,००० तक ही सुन सकता है। सुननेकी दृष्टिसे काफी साफ आवाज केवल २०० से २०००के बीचमें मानी गयी है, और बहुत साफ १००० से २००० के बीच।

ध्वनि–श्रेणी––**ध्वनिग्राम** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ध्वनि–श्रेणी विज्ञान––**ध्वनिग्राम विज्ञान** (दे०) का एक अन्य नाम ।

ध्वनि-सन्निवेश(epenthesis)–किसी शब्दमें किसी ध्वनि (स्वर, व्यंजन या अक्षर) का **आगम** (दे०) ।

ध्वनि-सम्मिश्रण (phoneticcontamination)––**आद्य शब्दांश-विपर्यय** (दे०)का एक अन्य नाम ।

ध्वन्यंग––**संध्वनि** (दे०)का एक अन्य नाम।

ध्वन्यात्मक धातु––(दे०) **धातु** ।

ध्वन्यात्मक नागरी लिपि––(दे०) **ध्वन्यात्मक प्रतिलेखन** ।

ध्वन्यात्मक प्रतिलेखन (phonetic transcription)––हम जो बोलते हैं वह ठीक ऐसा नहीं है जैसा कि लिखते हैं । (दे० **ध्वनि और भाषाध्वनि**) बोलनेमें अनेक सूक्ष्म बातें हैं, जिनका लिखनेमें बिलकुल विचार नहीं किया जाता, इतना ही नहीं परम्पराका अनुकरण करनेके कारण हम लिखनेमें प्रायः बहुत दूर चले जाते हैं । बोलते हैं 'क्रिश्‍ड़' और लिखते हैं 'कृष्ण' । इन बातोंके आधारपर कहा जा सकता है कि **प्रतिलेखन**के प्रमुखतः दो भेद हैं––(१) परम्परागत, (२) ध्वन्यात्मक । (१) **परपम्रागत प्रतिलेखन** (traditional transcription)में हमारा ध्यान इस बातपर विशेष नहीं रहता कि हम क्या बोल रहे हैं, अपितु इस बातपर रहता है कि हम जो बोल रहे हैं, उसे परम्परागत रूपसे कैसे लिखते आये हैं । नागरी, रोमन, उर्दू आदिमें आज जो हम लिखते हैं, इसी प्रकारका है । अर्थात् उसमें काफी अंश ऐसा है जो हमारे बोलनेके अनुरूप बिल्कुल नहीं है । उर्दूमें 'तोय' और 'ते' का प्रयोग होता है यद्यपि सर्वत्र 'ते' बोलते हैं । ज़े, ज़ाल, ज़ोय, ज़्वाद आदि लिखते हैं यद्यपि बोलते केवल 'ज़' हैं । 'से' सीन, तथा दो हे भी इसी प्रकार लिखनेमें प्रयुक्त होती हैं, यद्यपि बोलनेमें उनका अस्तित्व नहीं है । अंग्रेज़ीमें तो और भी गड़बड़ियाँ हैं । एक ओर तो 'अ' के लिए u (cup) या i (bird) या o (son) आदिका प्रयोग करते हैं और दूसरी ओर u कभी 'अ' (sun) उच्चरित होता है, कभी 'उ' (put) वर्तनीमें । अनुच्चरित स्वर (colour) तथा व्यंजन (know, right, neighbour, write, talk आदि) एक और ही समस्या उत्पन्न करते हैं। उर्दूमें बोलते हैं 'बिलकुल' और लिखते हैं 'बालकुल' । नागरी लिपिमें लिखी गयी हिन्दी भी इन दोषोंसे मुक्त नहीं, यों उसे प्रायः बहुत वैज्ञानिक

समझा जाता है। लिखने-बोलनेके कुछ उदाहरण इस बातको स्पष्ट कर देंगे। पहले लिखित रूप दिया गया है फिर कथित या उच्चरित। ऋण-रिङ़, ऋषि-रिशि, चन्द्रिका-चन्द्रिका, द्विवेदी-दुवेदी, साहित्यिक-साहित्तिक, काम-काँम्, नागपुर-नाक्पुर, लगभग-लग्भग् आदि। इस प्रकार परम्परागत प्रतिलेखन उससे बहुत दूर है, जो हम बोलते हैं।

(२) **ध्वन्यात्मक प्रतिलेखन**का अर्थ है वह प्रतिलेखन जो बोलने या उच्चारणके अनुरूप हो। उसमें जो हम बोलते हैं, वही लिखते भी हैं। इसके दो उपभेद हैं: (क) **स्थूल प्रतिलेखन** (broad transcription) और (ख) **सूक्ष्म प्रतिलेखन** (narrow transcription)। स्थूलको प्रशस्त या आयत प्रतिलेखन भी कहते हैं। इस प्रतिलेखनमें लिखते तो वही हैं, जो बोलते हैं किन्तु मोटे रूपसे लिखते हैं। सूक्ष्म बातोंका ध्यान नहीं रखते। उदाहरणके लिए 'ध्वनिग्रामविज्ञान'के प्रसंगमें कहा जा चुका है कि कोई भी ध्वनि किसी भाषामें सभी प्रसंगोंमें बिल्कुल एक नहीं होती। बाल्टी, लू, ला, ली इन चारोंके 'ल' सूक्ष्मताकी दृष्टिसे एक नहीं हैं, अपितु चार हैं, किन्तु स्थूल प्रतिलेखनमें इन चारोंको चार न लिखकर एक 'ल' ही लिखते हैं। दूसरे शब्दोंमें संध्वनियोंको सूक्ष्म रूपमें न लिखकर मोटे ढंगसे सारी संध्वनियोंके लिए एक चिह्नका ही प्रयोग होता है। रोजके सामान्य लेखनके लिए यही लेखन अच्छा है। तुर्की आदिने अपना लेखन ऐसा ही बना लिया है। हर भाषाभाषीको अपनी लिपि ऐसी ही बना लेनी चाहिये। इसमें तीन बातोंका ध्यान प्रमुख रूपसे रखा जाना चाहिये: (१) भाषाके हर ध्वनिग्रामके लिए लिपि-चिह्न हो। (२) न तो एक लिपि-चिह्न एकसे अधिक ध्वनिग्रामोंको व्यक्त करे और न एक ध्वनिग्राम एकसे अधिक लिपि-चिह्न द्वारा व्यक्त हो। इस प्रकार लिपिमें ठीक उतने चिह्न हों, जितने कि भाषामें ध्वनिग्राम हों। (३) लिपि-चिह्न लिखने, पढ़ने, टाइप करने एवं प्रेसकी दृष्टिसे सरल एवं स्पष्ट हों।

सूक्ष्म प्रतिलेखनको **संकीर्ण** प्रतिलेखन या **संयत प्रतिलेखन** भी कहते हैं। यह प्रतिलेखन सामान्य लेखनमें नहीं प्रयुक्त होता। जब किसी भाषाका भाषाशास्त्रीय अध्ययन करना होता है, तो उसका सूक्ष्म प्रतिलेखन करते हैं। इसका मूल आधार तो स्थूल प्रतिलेखनके लिपि चिह्न होते हैं किन्तु

विशेष चिह्न

(१) तालव्यता = ‿ (त‿)
(२) कण्ठ्यता = ⁀ (ल⁀)
(३) उद्गार व्यञ्जन (ejective) = ' (प')
(४) अन्तःस्फोटात्मक व्यञ्जन (implosive) = ' (प')
(५) क्लिक = चिह्न उलट कर (ʇ उलटा ट्)
(६) ओष्ठ्यता = ω (कω)
(७) दीर्घता = + (अ+) या : (अः)
(८) अर्द्धदीर्घता = ˒ (अ˒) या ˙ (अ˙)
(९) बलाघात = ˈ ('मोहन, लगाना)
(१०) ऊर्ध्वगामी = ˏ
(११) अधोगामी = ˎ
(१२) अनुनासिकता = ~ (अ̃ या अ~)
(१३) अघोषता = ० (अ̥)
(१४) दन्त्यता = ⌐ (ट̪)
(१५) मध्य स्वर = — (इ̶)
(१६) विशेष संवृत = □ (इ□)
(१७) विशेष विवृत = ⊔ (आ⊔)
(१८) उच्चीकृत जिह्वा = ⊥ (इ⊥)
(१९) निम्नीकृत जिह्वा = T (इT)
(२०) अग्रीकृत जिह्वा = ⊣ (इ⊣)
(२१) पश्चीकृत जिह्वा = ⊢ (इ⊢)

लिखनेमें केवल स्थूल बातोंका ही ध्यान न देकर सूक्ष्मसे सूक्ष्म बातोंको देखते हैं और उनके लिए अलग-अलग चिह्नोंका प्रयोग कर ठीक उसके अनुरूप लिखनेका प्रयास करते हैं, जैसे कि वक्ता बोलता है। दूसरे शब्दोंमें यों भी कह सकते हैं कि स्थूल प्रतिलेखनमें केवल ध्वनि-ग्रामोंको लिखा जाता है किन्तु सूक्ष्ममें संध्वनियोंको लिखा जाता है । ऐसा करनेके लिए स्थूल प्रतिलेखनके चिह्नोंके अतिरिक्त और भी बहुतसे उपचिह्नों (डायक्रिटिक्स) (जैसे संवृत, विवृत, ईषत् अनुनासिक, वृत्तमुखी, आगे बढ़ा, पीछे हटा, मूर्द्धन्यीकृत आदि) की सहायता लेनी पड़ती है। प्रमुख उपचिह्न पृष्ठ ३३० पर द्रष्टव्य हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय ध्वन्यात्मक लिपिचिह्न (international phonetic alphabet)––ध्वनिशास्त्रके अध्येताओंने बहुत पहले यह देख लिया था कि संसारकी कोई भी लिपि ध्वन्यात्मक लेखनके लिए ठीक नहीं है। इसलिए कई सदी पूर्व लोग किसी वैज्ञानिक ध्वन्यात्मक लिपिके लिए प्रयत्नशील रहे हैं । इसके लिए अबतक लगभग दो दर्जनसे अधिक प्रयास हुए हैं किन्तु बहुत कमको कुछ विशेष मान्यता मिल सकी है। कुछ समय पूर्वतक भारतमें तथा यूरोप आदिमें भी रोमन लिपिपर आधारित रॉयल एशियाटिक सोसाइटीकी लेखन-पद्धतिका प्रायः प्रयोग होता रहा है। इसमें दीर्घ स्वरके लिए ––(ī, ā) तथा टवर्गके लिए (ṭ)–का प्रयोग मिलता है । इस दृष्टिसे सबसे अधिक प्रचार 'अन्तर्राष्ट्रीय ध्वन्यात्मक लिपिचिह्न' का है। यह आज भी विश्वके अधिकांश भाषाविदों द्वारा प्रयुक्त हो रहा है । इस लिपि चिह्नका सम्बन्ध अन्तर्राष्ट्रीय ध्वनि-परिषद्से है । १८८६में येस्पर्सनने सर्वप्रथम संसारकी सारी भाषाओंके लिए एक लिपि-चिह्न बनानेके लिए पाल पासीको एक पत्र लिखा था । उसीके फलस्वरूप परिषद्के सदस्योंने दो वर्ष बाद १८८८ में इस लिपिका प्रथम प्रारूप बनाया । तबसे इसका प्रयोग होता आ रहा है और प्रयोगके आधारपर आवश्यकतानुकूल इसमें परिवर्तन और परिवर्द्धन भी होते आ रहे हैं। इनमें डैनियल जोन्सका विशेष हाथ रहा है। आज इसके व्यंजन तथा स्वर चिह्न ये हैं :–

अन्तरराष्ट्रीय ध्वन्यात्मक लिपि

		ओष्ठ्य	दन्तोष्ठ्य	दन्त्य और वर्त्स्य	मूर्धन्य	तालुवर्त्स्य	वर्त्स्यतालव्य	तालव्य	कण्ठ्य	अलिजिह्वीय	उपालिजिह्वीय	स्वरयन्त्रमुखी
व्यंजन	स्पर्श	p b		t d	ʈ ɖ			c ɟ	k g	q ɢ	-	ʔ
	नासिक्य	m	ɱ	n	ɳ			ɲ	ŋ	ɴ		
	पार्श्विक संघर्षी			ɬ ɮ								
	पार्श्विक संघर्षहीन			l	ɭ			ʎ				
	लुण्ठित			r						R		
	उत्क्षिप्त			ɾ	ɽ					R		
	संघर्षी	ɸ β	f v	θ ð s z ɹ	ʂ ʐ	ʃ ʒ	ɕ ʑ	ç ʝ	x ɣ	χ ʁ	ħ ʕ	h ɦ
	संघर्षहीन सप्रवाह तथा अर्द्धस्वर	w ɥ	ʋ	ɹ				j (ɥ)	(w)	ʁ		
स्वर								अग्र मध्य पश्च				
	संवृत	(y u)						iy ɨʉ ɯu				
	अर्द्धसंवृत	(ø o)						eø ə ɤo				
	अर्द्धविवृत	(œ ɔ)						ɛœ ʌɔ				
	विवृत	(ɒ)						æ ɐ				
								a ɑɒ				

कहना न होगा कि इनके प्रयोगसे किसी भी भाषाका प्रायः केवल स्थूल प्रतिलेखन ही किया जा सकता है, इसीलिए सूक्ष्म प्रतिलेखनके लिए या इस पद्धतिमें कुछ अतिरिक्त चिह्न भी बनाये गये हैं। बहुत सी भाषाओंमें अपेक्षित नयी ध्वनियोंके लिए ये सभी लिपि-चिह्न या चिह्न यादृच्छिक हैं और आवश्यकतानुसार बनाये जा सकते हैं।

नागरी लिपिके आधारपर भी ध्वनि-चिह्न बनाये जा सकते हैं। इस दृष्टिसे कुछ प्रयास हो चुके हैं। ध्वन्यात्मक नागरी लिपिका रूप कुछ इस प्रकार हो सकता है :–

ध्वन्यात्मक नागरी लिपि : व्यञ्जन

उच्चारणविधि	स्थान	द्वयोष्ठ्य	दन्तोष्ठ्य	दन्त्य	वर्त्स्य	मूर्द्धन्य	वर्त्स्य-तालव्य	तालव्य	कोमल तालव्य	अलिजिह्वीय	उपालिजिह्वीय	स्वरयन्त्रमुखी
स्पर्श अल्पप्राण	अघोष	प्		त्	ट्	ट्		क़्	क्	क़्		?
	सघोष	ब्		द्	ड्	ड्		ग़्	ग्	ग़्		
स्पर्श महाप्राण	अघोष	फ्		थ्		ठ्			ख्			
	सघोष	भ्		ध्		ढ्			घ्			
स्पर्श-संघर्षी अल्पप्राण	अघोष	पफ़्		तथ्	ट्स(त्स)		ट्श (च्)					
	सघोष	बव़्		दध्	ड्ज़्		ड्झ़् (ज्)					
स्पर्श-संघर्षी महाप्राण	अघोष						छ्					
	सघोष						झ्					
पार्श्विक-संघर्षी	अघोष				ट्ल्							
					ड्ल्							
संघर्षी	अघोष	फ़्	फ़्	थ़्	स्	ष्	श़्	श्	ख़्	ख़्	ह़	ह़्
	सघोष	व़्	व़्	द़्	ज़्, ऱ्	ज़्	झ़्	य़्	ग़्	ग़्	ς	ह्
अनुनासिक	अल्पप्राण सघोष	म्	म़्		न्	ण्		ञ्	ङ	ङ़्		
	महाप्राण सघोष	म्ह्			न्ह				ङ्ह्			
पार्श्विक	अल्पप्राण सघोष				ल्	ळ्		ल़्				
	महाप्राण सघोष				ल्ह्							
लुण्ठित	अल्पप्राण सघोष				र्					ऱ्		
	महाप्राण सघोष				र्ह्							
उत्क्षिप्त	अल्पप्राण सघोष				ड़्	ड़्				ऱ्		
	महाप्राण सघोष					ढ़्						
सप्रवाह अर्द्धस्वर	सघोष	व़्	व़्		ऱ्			य्				

अन्तर्राष्ट्रीय ध्वन्यात्मक लिपिकी भाँति ही इस नागरी लिपिसे भी स्थूल प्रतिलेखन ही संभव है। सूक्ष्म प्रतिलेखनके लिए कुछ **संस्कारक या विकारक** (modifier) या अन्य बातोंके लिए विशेष चिह्न भी अपेक्षित हैं, जो सुविधा एवं आवश्यकतानुसार बनाये जा सकते हैं। कुछ प्रमुख चिह्न नीचे विशेष चिह्नके रूपमें दिये गये हैं।

ध्वन्यात्मक नागरी लिपिके स्वर इस प्रकारके हो सकते हैं।

स्वर

	द्वयोष्ठ्य	तालव्य अग्र	मध्य	कोमल तालव्य पश्च
संवृत	(ई, ऊ)	ई ई़	ई़ ऊ	ऊ ऊ़
अर्द्ध संवृत	(ए, ओ)	ए ए़		ओ ओ
अर्द्ध विवृत	(ऍ, ऑ)	ऍ ऍ़ ऐं	अ	ऑ ऑ
विवृत	(आ)	ए आ अ़	आ	आ आ

ध्वन्यात्मक लिपिकी अमेरिकी पद्धति––अन्तरराष्ट्रीय लिपि-चिह्नमें सिद्धान्तके अतिरिक्त टाइप आदिकी सुविधाकी दृष्टिसे भी कुछ कमियाँ हैं। इसी कारण इधर अमेरिकामें थोड़े-बहुत अन्तरके साथ कई पद्धतियाँ विकसित हो गयी हैं, जिनमें पाइककी सम्भवतः सबसे अधिक प्रचलित है। यूरोपके भी कई देशोंमें कुछ नयी पद्धतियाँ चल रही हैं।

ध्वन्यात्मक लिपि (phonetic alphabet)–सामान्य लिपिसे भिन्न एक लिपि, जिसमें भाषाको परम्परागत रूपसे न लिखकर यथार्थ उच्चारणके अनुसार लिखते हैं। (दे०) **ध्वन्यात्मक प्रतिलेखन**।

ध्वन्यात्मक लेखन (phonetic writing)–भाषाको दो आधारोंपर लिखते हैं, एक तो शब्दों द्वारा व्यंजित विचारों या भावोंके आधारपर (दे० ideographic writing) दूसरे, ध्वनियोंके आधार पर। ध्वनिमें भी syllabic और alphabetic writing दो भेद हैं।

ध्वन्यात्मक शब्द––एक प्रकारके **शब्द** (दे०)।

ध्वन्यालोचन––**ध्वनि-प्रक्रिया-विज्ञान** (दे०)–का एक अन्य नाम।

ध्वानिकी (genemmic phonetics)––**श्रावणिक ध्वनि-विज्ञान** (दे०) का एक अन्य नाम।

न

नंटीकोक (nantikok)––**पूर्वीय अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

नंदिनागरी––नागरी लिपिका दक्षिण भारतमें प्रयुक्त रूप। इसका प्राचीन रूप ८वीं सदीसे मिलता है। इससे, नागरी लिपिसे कुछ ही अंतर है।

नंफौ (namfau)––**अनाल** (दे०) का एक दूसरा नाम।

नंबिकुअरा (nambikuara)––**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार। इस परिवारमें चार भाषाएँ हैं :–**कोकोज़ू, अनून्ज़े, उऐन्टसू** तथा **टग्ननिस**।

नई कुकी–– थाडो (दे०) तथा अन्य चिन भाषाओंका एक नाम।

नकार––नके लिए प्रयुक्त नाम (दे०) **कार**।

नकारात्मक (negative)––जिसमें 'नहीं' या 'न' का भाव हो।

नकारात्मक क्रियारूप (negative conjugation)––कुछ भाषाओंमें प्रयुक्त ऐसे क्रिया रूप, जो नकारात्मक भाव व्यक्त करते हैं। इनमें नकारात्मक प्रत्यय आदि लगे होते हैं।

नकारात्मक वाक्य––ऐसा वाक्य, जिसमें किसी काम या बातके न करनेका भाव हो, जैसे––वह नहीं गया। इसे **निषेधात्मक** या **निषेधसूचक वाक्य** भी कहते हैं।

नकारात्मक शब्द––एक प्रकारके **शब्द** (दे०)।

नक्काश––'नक्काश' नामक बंजारों द्वारा प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

नक्रै (nakrai)––**तौंगथू** (दे०) का एक रूप।

न-खी––**मो-सो** (दे०) भाषाको उसके बोलनेवालों द्वारा दिया गया एक नाम।

नगपुरिया––(१) 'बिहारी' की बोली **भोजपुरी** (दे०) का दक्षिणी रूप, जो पालामऊ तथा राँची जिलोंके कुछ भागोंमें बोला जाता है। छोटा नागपुरके आधारपर इसे 'नगपुरिया' (नागपुरकी) कहते हैं। समीपवर्ती 'मगही', 'छत्तीसगढ़ी' तथा 'मुंडारी' बोलियोंका इसपर प्रभाव पड़ा है। इसके अन्य नाम **सदान**, **सदरी** तथा **डिक्कू काजी** (दे०) हैं। ग्रियर्सनके **भाषा-सर्वे-**

क्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५,९४,२५७ थी। (२) **गढ़वाली** (दे०)-की, गढ़वालके नागपुर परगनेमें प्रयुक्त एक उप-बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५१,८३१ थी।

न-ची (nachi)—**मो-सो** (दे०)का एक अन्य नाम।

न-च्री (nachri)—**मो-सो** (दे०)का एक नाम।

नञ् तत्पुरुष समास—(दे०) **समास**।

नञ् बहुव्रीहि समास—(दे०) **समास**।

नञ्समास—ऐसा समास, जिसमें पहले न (नञ्) हो। महाभाष्यकारने इस शब्दका प्रयोग नञ् तत्पुरुष तथा नञ् बहुव्रीहि, दोनोंके लिए किया है।

नटिक (natik)—**केन्द्रीय-अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो गयी है।

नटी—बिहार और उत्तरप्रदेशमें नटों द्वारा प्रयुक्त एक **जिप्सी** (दे०)भाषा। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ११,५३४ थी।

नट्चेज़ (natchez)—**मुस्खोगी** (दे०) भाषा-परिवारका एक वर्ग। इस वर्गकी प्रमुख भाषा **टएन्स** थी, जो अब विलुप्त हो चुकी है।

नत—मूर्द्धन्यीकृत, न के मूर्द्धन्यीकृत होनेसे बना हुआ (ण)। (दे०) **नति**।

नतकानी (natakani)—**मराठी** (दे०)-का, चाँदामें प्रयुक्त एक रूप।

नति—'न' ध्वनिका 'ण' हो जाना। कहा गया है :—'दन्त्यस्य मूर्धन्यापत्तिर्नतिः'। इसे **मूर्द्धन्यीकरण** या **मूर्द्धन्यीभवन** कहा जा सकता है।

नति संधि—(दे०) **संधि**।

नदसंघर्षी—**उत्थितपार्श्व संघर्षी** (दे०)का एक अन्य नाम।

नपुंसक लिंग—(दे०) **लिंग**।

नमक पहाड़ी बोली (पश्चिमी) (salt-range dialect western)—**लहँदा** (दे०)की, 'उत्तरी-पूर्वी बोली'का, नमककी पहाड़ियों (पश्चिमी पंजाब)में प्रयुक्त, एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २५,००० थी।

नम्संगिआ (namsangia)—**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके नागा वर्गकी, लखीमपुर (असम)में प्रयुक्त एक पूर्वीय नागा भाषा। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,८७० थी।

नम्सन (namsan)—**कलुर्** (दे०)का एक और नाम।

नरा (nara)—**नोरा** (दे०)का एक अन्य नाम।

नरिंग (naring)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, चिन पहाड़ियों पर व्यवहृत एक भाषा। इसके ठीक-ठीक संबंधका पता नहीं है।

नरिवल (narival)—१९२१की बंबई जनगणनाके अनुसार **सिरैकी** (दे०)का एक रूप।

नर्रागन्सेट (narraganset)—**पूर्वीय अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक विलुप्त उत्तरी अमेरिकी भाषा।

नर्साती (narsati)—**गवरबती** (दे०)का एक अन्य नाम।

नल्केरी (nalkeri)—**तुळू** (दे०) का एक रूप।

नव कलाबार (new kalabar)—**जो** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

नव प्राप्तिका नियम—**बौद्धिक नियम** (दे०)-का एक भेद।

नव प्यूनिक लिपि—(दे०) **फोनीशियन लिपि** तथा **प्यूनिक**।

नवाईत (nawait)—**दाल्दी** (दे०)का एक नाम। नवाइत मुसलमान मछेरे हैं। उनके द्वारा प्रयुक्त होनेके कारण इसका

यह नाम है।

नवाजो (navajo)––उत्तरी अमेरिकाकी एक भाषा; जो अथपस्कन परिवारकी है। इसका क्षेत्र न्यू मेक्सिको तथा ऐरिज़ोनामें है।

नवाहो (navaho)––**दक्षिणी अथपस्कन** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसके बोलनेवाले लगभग ख़ानाबदोश हैं और न्यू मेक्सिको तथा ऐरिज़ोना आदिमें रहते हैं।

नवीनता––**अभिनवन**(दे०)का एक अन्य नाम।

नवीन शब्दोंका स्रोत––(दे०) **शब्द-समूह**में **नवीन शब्दोंका स्रोत** उपशीर्षक।

न-शी––**मो-सो** (दे०) भाषाका अन्य नाम।

नहने (nahane)––**टिन्नेह** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

नहाली (nahali)––**कुर्कू** (दे०)का एक टूटा-फूटा रूप।

नहुअत्ल (nahuatol)––**नहुअत्ल** (दे०) वर्गका एक उपवर्ग। इसका एक नाम **अज़्टेक** भी है। इस उपवर्गकी भाषाएँ मेक्सिको तथा मध्य अमेरिकामें बोली जाती हैं। इसकी प्रमुख भाषा **नहुअत्ल** (या **अज़्टेक**) है।

नहुअत्ल वर्ग (nahuatl)––**उटो-अज़्टेक** (दे०) परिवारका एक वर्ग। इस वर्गमें ९ भाषाएँ हैं, जो ६ उपवर्गोंमें बाँटी गयी हैं। ६ वर्ग इस प्रकार हैं: (१) **नहुअट्ल** (दे०), (२) **पिपिल** (दे०), (३) **निकरओ** (दे०) (४) **टलस्कलटेक** (दे०), (५) **सिगुआ** (दे०) तथा (६) **कजकन** (दे०)। इस वर्गके बोलनेवाले मेक्सिको तथा कुछ मध्य अमेरिकामें हैं।

नहेड़ा मेवाती––'उत्तरी पूर्वी राजस्थानी'की बोली **मेवाती** (दे०)का एक स्थानीय रूप, जो अलवरके पास 'नहेड़ा' नामक क्षेत्रमें बोली जाती है। इसपर 'जयपुरी'का प्रभाव है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,६९,३०० थी।

नाइकडी (naikdi)––**भीली** (दे०)की, रीवाकंथा, पंचमहल तथा सूरतमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १२,१०१ थी।

नाइजेरो कमेरून (nigero camerun)––**सूडान वर्ग** (दे०)की कुछ भाषाओंका एक वर्ग।

नाइजेरो चाड (nigero chad)––**सूडान वर्ग** (दे०)की कुछ भाषाओंका एक वर्ग।

नाइजेरो-सेनेगलीज़ (nigero-senegalese)––**सूडान वर्ग** (दे०)की कुछ भाषाओंका एक वर्ग।

नागपुरिया––(दे०) **नगपुरिया**।

नागपुरी––(१) **मराठी** (दे०)का नागपुर ज़िले तथा उसके आस-पास प्रयुक्त, एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेषणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १८,२३,४७५ थी। (२) (दे०) **नगपुरिया**। (३) (दे०) **नागपुरी हिंदी**।

नागपुरी हिन्दी––**बुंदेली** (दे०)का नागपुरमें प्रयुक्त एक रूप। यह मराठीसे बहुत अधिक प्रभावित है। इसे नागपुरी भी कहते हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १०५,९०० थी।

नागभाषा––**ब्रजभाषा** (दे०) या **पिंगल** (दे०)-के लिए प्रयुक्त एक नाम।

नागर अपभ्रंश––**अपभ्रंश** (दे०)का भेद।

नागरचाल––**जयपुरी** (दे०)का एक स्थानीय रूप, जो जयपुरके दक्षिण-पूर्वमें बोला जाता है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ७१,५७५ थी।

नागरिक भाषा (urban language)––ऐसी भाषा, जिसका प्रयोग नगरोंमें होता हो। यह ग्रामीण भाषासे कुछ अधिक संस्कृत होती है।

नागरी (nagri)––नागर ब्राह्मणों द्वारा व्यवहृत, **गुजराती** (दे०)की एक बोली।

नागरी लिपि––(दे०) देवनागरी लिपि।

नागलिपि--बौद्ध ग्रंथ 'ललितविस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमें-से एक ।

नागा-कुकी (naga-kuki)--**चीनी परिवार** (दे०)की असमी-बर्मी भाषाओंके **नागा वर्ग**का एक उपवर्ग । नागा-कुकी उपवर्गके अंतर्गत छः भाषाएँ आती हैं : **मिकिर** (दे०), **सोप्वोमा** (दे०), **मराम** (दे०), **मियांगखांग** (दे०), **क्वोइरोंग** (दे०) तथा **तांगखुल** (दे०)। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १५२, २६६ थी। इन भाषाओंमें 'मिकिर'के अतिरिक्त सभी मणिपुरमें बोली जाती हैं।

नागा-बोदो (naga-bodo)--**चीनी परिवार** (दे०), तिब्बती-बर्मी उप-परिवारकी असमी-बर्मी शाखाके नागा वर्गका एक उप-वर्ग । नागा-बोदो उप-वर्गमें तीन भाषाएँ हैं--**एंपेओ** (दे०), **कबुई** (दे०) तथा **खोईराओ** (दे०)। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इस उप-वर्गके बोलनेवालोंकी संख्या ३६,३५३ थी ।

नागावर्ग--**चीनी परिवार** (दे०)की असमी-बर्मी भाषाओंका असममें तथा आसपास उसके पूर्वमें बोली जानेवाली नागा भाषाओंका एक वर्ग । इसमें प्रमुखतः ५ उपवर्ग हैं : (१) पश्चिमी, (२) केन्द्रीय, (३) पूर्वीय, (४) नागाबोदो, (५) नागाकुकी । १९२१की जनगणनाके अनुसार इस वर्गकी भाषाएँ बोलनेवालोंकी संख्या ३,३८,६३४ थी।

नाग्दिया (nagdia)--१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार, पंचमहलमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा । अब इसका पता नहीं है ।

नाघोरी (naghori)--१८९१की बड़ौदा जनगणनाके असुसार **मारवाड़ी** (दे०)का एक रूप ।

नाछेरेंग (nachhereng)--**खंबू** (दे०)-की नैपालमें प्रयुक्त एक बोली ।

ना-डेने (na-dene)--**उत्तरी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार । इस परिवारमें तीन वर्ग हैं : (१) **अथपस्कन** (दे०), हैडा, (दे०) तथा **ट्लिन्गिट** (दे०)। इन तीनों वर्गोंके अंतर्गत लगभग ४७ भाषाएँ हैं ।

नाद--(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**में **प्रयत्न** उपशीर्षक । यह **घोष** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम है । तैत्तिरीय प्रातिशाख्यमें आता है :-'संवृते कण्ठे यः शब्दः क्रियते स नादसंज्ञो भवति' ।

नादानुप्रदान--(दे०) अनुप्रदान ।

नॉनसिलबिक--(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**में **स्वर और व्यंजन** उपशीर्षक ।

नानो (nano)--**उंबुन्डु** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

नाम--(१) **संज्ञा** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम । यास्क निरुक्तमें कहते हैं:--'चत्वारि पदजातानि नामाख्याते चोपसर्गनिपाताश्च, । (२) (nam)--चीनी परिवारकी, प्राचीनकालमें मध्य एशियामें प्रयुक्त एक विलुप्त भाषा ।

नामधातु (denominative)--(दे०) **धातु** ।

नाम विज्ञान (onomatology, onomasiology, onomastics)--**शब्द-विज्ञान** (दे०)की एक शाखा, जिसमें नामोंका अध्ययन होता है । नामोंका यहाँ अर्थ है व्यक्तिवाचक संज्ञा । नाम विज्ञानकी दो शाखाएँ हो सकती हैं :-(क) **व्यक्ति-नाम विज्ञान**---इसमें, किसी क्षेत्र या भाषा-विशेष आदिके व्यक्तियों (स्त्री-पुरुष)के नामोंका अध्ययन किया जाता है । हिन्दीमें 'अभिधान अनुशीलन' नामसे डॉ० विद्याभूषण विभुने हिन्दी प्रदेशके पुरुष-नामोंका विस्तृत अध्ययन किया है । व्यक्तिनाम-विज्ञानमें नामोंकी व्युत्पत्तिके आधारपर उनका विश्लेषण-वर्गीकरण करते हैं तथा क्षेत्र या भाषा विशेषमें प्रचलित नामकरण संबंधी प्रवृत्तियोंका विवेचन करते हैं। इस अध्ययनमें संस्कृति, इतिहास, सामाजिक दशा तथा बाह्य प्रभाव आदि अनेक बातों-

के परिपार्श्वमें नामविषयक परम्पराओंकी छान-बीन करनी पड़ती है। नाम छोटे तो होते ही हैं, कभी-कभी बहुत बड़े-बड़े भी होते हैं, जैसे पारसियोंमें 'सोडावाटर बाटलकार्क-ओपेनरवाला' इसी प्रकार चलता है, जैसे हिन्दी प्रदेशमें तिवारी, शर्मा आदि। (ख) **स्थान नाम विज्ञान** (toponymics)—इसमें भौगोलिक नामोंका अध्ययन किया जाता है। इस अध्ययनमें भी व्युत्पत्ति, प्रवृत्ति आदिका अध्ययन करना पड़ता है तथा तत्संबंधित तथ्योंके प्रकाशमें वर्गीकरण आदि करना पड़ता है। इन अध्ययनोंमें बहुत-सी विचित्र बातें भी सामने आती हैं। ब्रिटेनमें एक स्टेशनका पूरा नाम ५८ अक्षरोंमें llanfairpwllgwyngyllgogerychwyrndrobwllllantysiliogogogoch है। दोनों ही प्रकारोंके नाम विज्ञानसे प्राचीन इतिहास और संस्कृति-विषयक अनेक बातोंका पता चलता है। इस संबंधमें a. h. gardinerकी 'the theory of proper names' पुस्तक पठनीय है।

नामा (nama)—(दे०) **होरेन्टोट**।

नामिक क्रियाविशेषण—(दे०) **क्रिया विशेषण**।

नायर (nayar)—कुर्गमें, **मलयालम** (दे०)-के लिए प्रयुक्त एक नाम।

नारवा (narava)—दक्षिणी अंडमनमें प्रयुक्त एक **अंडमानी** (दे०) भाषा।

नारवेजिअन—भारोपीय परिवारकी जर्मनिक उपशाखाकी स्कैंडिनेवियन या उत्तरी शाखाकी एक भाषा। उत्तरी भागको छोड़कर जहाँ लैप और फ़िन लोग हैं, लगभग पूरे नारवेकी यह भाषा है। बोलनेवालोंकी संख्या ३०,००,०००के लगभग है। प्राचीन नारवेजियन और प्राचीन आइसलैंडिक मिलकर पश्चिमी **प्राचीन नार्स** कहलाती हैं। प्राचीन नार्समें रूनिक अभिलेख ४थी सदीसे मिलते हैं। १२वीं सदीके लगभग आकर प्राचीन आइसलैंडिक प्राचीन नारवेजियनसे अलग हुई। नारवे १३९७से १८१४तक डैनिश अधिकारमें था, इसी कारण नारवेजियन डैनिशसे बहुत प्रभावित हुई है। आज नारवेजियनके दो रूप हैं। साहित्यिक भाषा, जिसे रिक्समाल (riksmaal) कहते हैं तथा बोलचालकी भाषा, जिसे नूतन नारवेजियन या लैंड्समाल (landsmaal) कहते हैं। नूतन नारवेजियनका विकास राष्ट्रीय एवं अपनी भाषाकी भावना जगानेके बाद १९वीं सदीसे हुआ है। नारवेजियनकी बोलियोंके पूर्वी, पश्चिमी और उत्तरी तीन वर्ग हैं। पश्चिमी क्षेत्रमें 'रिक्समाल'का प्रयोग अधिक चल रहा है, किंतु अन्य दोमें 'लैंड्समाल'का। इन दोनोंमें विशेषरूपसे साहित्य रचना १८१४ (जब नारवे आजाद हुआ)के बाद हुई है। यों प्राचीन तथा मध्ययुगका साहित्य भी है। साहित्यिक भाषा अब भी डैनिशके बहुत निकट है।

आधुनिक कालके सबसे बड़े साहित्यकारोंमें हंस किंक, उप्प दल आदि प्रमुख हैं। (दे०) **रिक्समाल** तथा **डैनो-नारवेजिअन**।

नार्मन—**फ्रांसीसी** (दे०) भाषाकी एक बोली।

नॉर्स (norse)—स्कैंडिनेवियाकी एक विलुप्त भाषा। उत्तरी जर्मनका विकास इसीसे हुआ था। इसे **प्राचीन नॉर्स** (old-norse) या **प्राचीन स्कैंडिनेवियन** (old-scandinavian) भी कहते हैं।

नालागढ़ी—नालागढ़में प्रयुक्त **पंजाबी** (दे०)-का एक नाम।

नालि (nali)—**अंगामी** (दे०)की, नागा पहाड़ियोंमें प्रयुक्त एक बोली।

नाली (nali)—सतपुड़ामें लगभग १०,००० व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत, **भीली** (दे०)का एक रूप।

नासिका-विवर (nazal cavity)—नाकके भीतरका खाली भाग। श्वास अपने सहज रूपमें इसीके द्वारा आता-जाता है। नासिक्य ध्वनियोंके उच्चारणमें इसीसे सहायता मिलती है। (दे०) **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान**।

नासिक्य (nasal)—**प्रयत्न** (दे०)के आधार-

पर किया गया व्यंजन ध्वनियोंका एक भेद। 'नासिक्य' उन व्यंजनोंको कहते हैं, जिनमें दोनों ओठ, जीभ-दाँत या वर्त्स, जीभ-मूर्द्धा या जीभ-पश्च और कोमल तालुका स्पर्श होता है [उसी प्रकार जैसे **स्पर्श** (दे०) व्यंजनोंमें] और हवा मुँहमें गूँजती हुई नाकके रास्ते निकलती है। संस्कृत व्याकरणोंमें नासिक्योंकी गणना स्पर्शोंमें हुई है, किंतु वस्तुतः इनमें हवाका निकलना अवरुद्ध नहीं होता, अतः इन्हें स्पर्श मानना उचित नहीं है। हाँ, हवा न रुकनेके कारण इन्हें अनवरुद्ध, सप्रवाह या अव्याहत (continuant या durative) अवश्य कहा जा सकता है। इन्हें **अनुनासिक** भी कहते हैं। अनुनासिकका प्रयोग स्वर और व्यंजन दोनोंके साथ (जैसे अनुनासिक स्वर, अनुनासिक व्यंजन) होता है, किंतु नासिक्यका प्रायः केवल व्यंजनके साथ।

नासिली––**हित्ती** (दे०) भाषाका एक दूसरा नाम।

नाहरी (nahari)––(१) **मराठी** (दे०) का कांकरमें प्रयुक्त एक रूप। यह हलबीसे अत्यधिक संबद्ध है। (२) **भीली** (दे०) की, नासिक तथा बंबईमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १३,००० थी।

निगे टोंगो––**नीग्रो अंग्रेज़ी** (दे०) का एक रूप।

निंदात्मक प्रत्यय (pejorative या deteriorative suffix)––ऐसा प्रत्यय, जिसके लगानेसे शब्दका अर्थ कुछ अपकर्षित, निन्दात्मक या तिरस्कारात्मक हो जाय। इतालवीका–accio इसी प्रकारका है। हिन्दीके–अक्कड़ (पियक्कड़ आदि) तथा आस (कपास) आदि प्रत्यय पूर्णतः निन्दात्मक तो नहीं हैं, किंतु बहुत अच्छे नहीं। इसे **अपकर्षात्मक प्रत्यय** भी कहते हैं।

निओ (nio)––**पिमा-सोनोर** (दे०) वर्गकी एक मृत उत्तरी-अमेरिकी भाषा।

निकटवर्ती अन्य पुरुष सर्वनाम–– (दे०) **सर्वनाम**।

निकटवर्ती आदरार्थ अन्यपुरुष सर्वनाम–– (दे०) **सर्वनाम**।

निकटवर्ती निश्चयवाचक सर्वनाभ––(दे०) **सर्वनाम**।

निकटवर्ती सामान्य अन्य पुरुष सर्वनाम––(दे०) **सर्वनाम**।

निकटस्थ अवयव (immediate constituent)––वाक्यमें प्रयुक्त 'पद' या 'रूप' या शब्द ही उस वाक्यके अंग या अवयव हैं। कोई वाक्य या वाक्यांश जिन दो या अधिक अवयवोंके योगसे बनता है, उनमें प्रत्येकको या कुछ निकटस्थ अवयवोंके योगको निकटस्थ अवयव कहते हैं। 'राम गया' में 'राम' और 'गया' दो निकटस्थ अवयव हैं। 'राम गया था' के 'राम' और 'गया था' दो निकटस्थ अवयव हैं। 'गया था' के भी दो हैं 'गया' और 'था'। निकटस्थता स्थानपर आधारित न होकर अर्थपर आधारित होती है। अंग्रेज़ी वाक्य 'is ram going' में यद्यपि 'is' और 'going' दूर-दूर हैं किंतु अर्थकी दृष्टिसे निकटस्थ होनेके कारण दोनों निकटस्थ अवयव हैं। पूरे वाक्यके दो निकटस्थ अवयव हैं 'ram' तथा 'is going' (दे०) **अवयव** तथा **वाक्यमें निकटस्थ अवयव** उपशीर्षक।

निकटस्थ अवयव––(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक।

निकटोल्लेख सूचक सर्वनाम (दे०) **सर्वनाम**।

निकरओ (nikarao)––**नहुअत्ल** (दे०) वर्गका एक उपवर्ग। इसे **ओलोमेगा** तथा **निकिरन** भी कहते हैं। इस उपवर्गकी भाषाएँ अब विलुप्त हो चुकी हैं। इसकी प्रमुख भाषा **निकरओ** थी।

निकिरन (nikiran)––**निकरओ** (दे०) का एक अन्य नाम।

निकुंचित ध्वनि (constricled)––ऐसी ध्वनि, जिसके उच्चारणके समय स्वरयंत्र संकुचित कर दिया जाय।

निक्षिप्त (parenthesis)––कोई शब्द, वाक्यांश, उपवाक्य या वाक्य, जो किसी वाक्यके बीच कोष्टक या डैशोंके बीच रखा

गया हो। इसके निकाल देनेपर भी वाक्यकी पूर्णतामें प्राय: कोई कमी नहीं आती। इसके **निक्षिप्त शब्द, निक्षिप्त वाक्यांश, निक्षिप्त उपवाक्य,** या **निक्षिप्त वाक्य** आदि कई रूप होते हैं। इसे **निक्षिप्ताभिव्यक्ति** भी कहते हैं।

निक्षिप्त उपवाक्य––**निक्षिप्त** (दे०)का एक रूप।

निक्षिप्त वाक्य––**निक्षिप्त** (दे०)का एक रूप।

निक्षिप्त वाक्यांश––**निक्षिप्त** (दे०)का एक रूप।

निक्षिप्त शब्द––**निक्षिप्त** (दे०)का एक रूप।

निक्षिप्ताभिव्यक्ति––**निक्षिप्त** (दे०)का एक अन्य नाम।

निक्षेप लिपि––बौद्धग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमें से एक।

निघातसुर––**सुर** (दे०)का एक भेद।

निजबोधक सर्वनाम––(दे०)**सर्वनाम**।

निजवाचक सर्वनाम––(दे०)**सर्वनाम**।

नित्य अतीत––(दे०)**काल**।

नित्य संबंधी सर्वनाम––(दे०)**सर्वनाम**।

नित्य समास––(दे०)**समास**।

नित्य स्वरित––एक प्रकारका **स्वरित**(दे०)।

नि-द्दू (ni-du)––**यिद्दू** (दे०)का एक अन्य नाम।

निपात(particle)––नि + पत् + घञ् (= पतन, गिरावट)से बननेवाले इस शब्दका प्रयोग कई अर्थोंमें हुआ है। कुछ मतोंसे 'निपात' ऐसे शब्दोंको कहते हैं, जिनके बननेके नियमका पता न हो, अर्थात् जो व्याकरणके नियमोंसे सिद्ध न हों। इसीलिए व्याकरणोंमें 'अनियमितरूप', 'अनियमितता' तथा 'अपवाद' आदि अर्थोंमें इसका प्रयोग मिलता है। निपातका कोई लिंग, वचन आदि नहीं होता। इसका प्रयोग सभी अव्ययोंके लिए हुआ है। यहाँ तक कि विस्मयादिबोधक आदिके लिए भी। प्र आदि २२ उपसर्गोंको भी निपात कहा गया है। निरुक्त तथा प्रातिशाख्यों आदिमें एक शब्द-भेद (नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात)के रूपमें उपसर्गसे अलग भी इसका उल्लेख मिलता है। यास्क इसके तीन भेद मानते हैं–'उपमार्थे, कर्मोपसंग्रहार्थे, पदपूरणे', अर्थात् निपात तीन प्रकारके माने हैं:-(१)उपमार्थक या उपमा अर्थवाले, जैसे इव, न, चित् नु, (२)कर्मोपसंग्रहार्थक, जैसे च, आ, वा, ह, (३) पदपूरणार्थक, जैसे नूनम्, खलु, हि, अथ। ऋग्वेद प्रातिशाख्यमें 'निपात: पादपूरण:' रूपमें निपातको अर्थहीन तथा केवल पादपूर्तिवाला कहा गया है। 'चादयोऽसत्त्वे'में पाणिनि भी च, वा, ह आदिको 'असत्त्व', अर्थात् अर्थहीन कहते हैं। उव्वट कहते हैं––'केचन निपाताः सार्थकाः केचन निरर्थकाः'। सच पूछा जाय तो निपातोंका यद्यपि सामान्य सार्थक शब्दोंसा स्पष्ट अर्थ प्राय: नहीं होता किन्तु साथ ही उनको निरर्थक भी नहीं कहा जा सकता। यास्कने जो तीन वर्ग किये हैं, उनमें भी प्रथम दोके स्पष्ट अर्थ हैं। भोजने अपने 'शृंगार प्रकाश' में निपातको अच्छी तरह समझाया है। वे कहते हैं:––'जात्यादिप्रवृत्ति निमित्तानुपग्राहित्त्वेनासत्त्वभूतार्थाभिधायिन:अलिंगसंख्याशक्तय उच्चावचेष्वर्थेषु निपतन्तीत्यव्ययविशेषा एव चादयो निपाताः'। अर्थात् जाति, द्रव्य, गुण और क्रिया आदिके द्वारा जिन शब्दोंका अर्थ-ग्रहण नहीं होता तथा जो असत्त्व, अर्थात् अप्राणित्त्व अर्थको प्रकट करनेवाले लिंग, संख्या आदिकी शक्तिसे रहित ऊँच-नीच अर्थोंमें प्रयुक्त होनेवाले हैं, ऐसे चादिगणमें दिये गये अव्यय-विशेषकी निपात संज्ञा है। भोजने निपातके प्रमुखत: ६ भेद माने हैं:–विध्यर्थ, अर्थवादार्थ, अनुवादार्थ, निषेधार्थ, विधिनिषेधार्थ, अविधिनिषेधार्थ। इससे भी उनके अर्थयुक्त होनेकी बात स्पष्ट है। (दे०) **उपसर्ग, शब्द, क्रियाविशेषण**।

निपात-प्रधान भाषा––**अयोगात्मक भाषा**(दे०)–के लिए प्रयुक्त एक नाम।

निप्मुक(nipmuk)––**पूर्वीय अलगोन्किन** (दे०)वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

निबट्ठा––(दे०) **निभट्टा**।

निभट्टा––**बुंदेली** (दे०)का एक स्थानीय

रूप, जो परिनिष्ठित बुंदेली और तिरहारीके क्षेत्रोंके बीचमें जालौनमें बोला जाता है। 'बुंदेली'का यह रूप पूर्वी हिन्दीकी 'बघेली' बोलीसे कुछ प्रभावित है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १०,२०० थी। इसे **निबट्ठा** भी कहते हैं।

निमाड़ी––मध्यप्रदेशमें खंडवा-निमाड़ तथा खरगोन-निमाड़की भाषा। इस प्रकार 'निमाड़ प्रदेश'की भाषा 'नीमाड़ी' है। इसके इस नामकरणके संबंधमें कई कारण दिये जाते हैं :–(१) कुछ लोगोंके अनुसार इसका संबंध फ़ारसी शब्द नीम (= आधा) से है। नर्मदा नदीका प्रायः आधा भाग इस प्रदेशमें पड़ता है। (२) एक मतानुसार इसका प्राचीन नाम 'नीमवाड़' है। 'नीमवाड़'का अर्थ है 'नीमवाला'। इस मतके पोषकोंके अनुसार इस प्रदेशमें नीमोंके आधिक्यके कारण यह नाम पड़ा है। (३) इस प्रदेशमें 'नीवार' नामक एक प्रकारका जंगली चावल बहुत उत्पन्न होता रहा है। एक मतानुसार यही 'नीवार' नीमाड़ हो गया है। (४) कुछ लोग 'नीमाड़'-का संबंध 'निम्न'से मानते हैं। निमाड़, मालवा राज्यका दक्षिणी भाग है। 'वाड़'-का अर्थ (काठियावाड़, मेवाड़, मारवाड़) स्थान होता है, अर्थात् मूलतः यह शब्द 'निम्नवाड़' था, उसीसे 'निमाड़' बना। यों, बहुत संतोषजनक तो इनमें कोई भी नहीं है, किन्तु अन्योंकी तुलनामें अंतिम मत कुछ अधिक युक्तिसंगत लगता है। १९५१की जनगणनाके अनुसार निमाड़ी-भाषियोंकी संख्या २,९२,२६१ थी। ग्रियर्सनके अनुसार निमाड़ी हिन्दीकी **राजस्थानी** (दे०) उप-भाषाके दक्षिणी वर्गमें आती है, अर्थात् यह दक्षिणी राजस्थानी है। मालवी भाषापर विचार करनेवालोंने इसे मालवीका दक्षिणी-रूप माना है। ग्रियर्सनका भी तत्त्वतः यही मत है। केवल कुछ निजी विशेषताओंके कारण ही इसे उन्होंने स्वतंत्र स्थान दिया था। डॉ० चटर्जीके अनुसार यह राजस्थानी तथा पश्चिमी हिन्दी, इन दोनोंसे इतनी मिलती-जुलती है कि यह कहना कठिन है कि यह किसकी उप-बोली है। किंतु, वस्तुतः इसे मालवी तो क्या राजस्थानीमें भी नहीं माना जाना चाहिये। ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य तथा अर्थकी दृष्टिसे तुलनात्मक अध्ययन यह बतलाता है कि निमाड़ी राजस्थानीकी अपेक्षा बुंदेली-ब्रज आदिके अधिक निकट है। इस प्रकार यह पश्चिमी हिन्दीके अंतर्गत रखी जानी चाहिये। (दे०) 'हिन्दी'। फोर्सिथ (forsyth)ने इसे फ़ारसी तथा मराठी शब्दोंसे युक्त हिन्दीकी एक बोली माना था। निमाड़ी पर मालवी, मराठी तथा बुंदेली आदिका प्रभाव है। परिनिष्ठित निमाड़ी खरगोन और खंडवाके बीचमें बोली जाती है। इस क्षेत्रके चारों ओर समीपवर्ती भाषाओं या बोलियोंसे प्रभावित इसके कई उपरूप हैं; जैसे मालवी प्रभावित निमाड़ी उत्तरमें, बुंदेली प्रभावित निमाड़ी उत्तर-पूर्वमें, खानदेशी प्रभावित निमाड़ी दक्षिणमें तथा भीली प्रभावित निमाड़ी पश्चिमोत्तरमें। अन्य भाषाओं या बोलियोंकी भाँति निमाड़ीके भी कुछ जातीय रूप मिलते हैं, जैसे–**बंजारी निमाड़ी** (भीली तथा कुरकूसे प्रभावित), **कुन्बी निमाड़ी** (गुजरातीसे कुछ प्रभावित), **गूजरी निमाड़ी** (गुजराती तथा मालवीसे प्रभावित) तथा **नागरी निमाड़ी** (गुजरातीसे प्रभावित) आदि। निमाड़ीमें लोक साहित्य तो पर्याप्त मात्रामें है ही, कुछ साहित्य भी है। इसके प्रमुख कवि सिंगाजी कहे जाते हैं।

निम्न जर्मन––(दे०) **जर्मनिक**।

निम्नजातीय संज्ञा––**निम्न संज्ञा** (दे०)का एक अन्य नाम।

निम्नतर उच्चस्वर (lower high vowel) ––एक प्रकारका स्वर। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**में **स्वरोंका वर्गीकरण**, **मानस्वर** तथा **स्वर वर्गीकरणकी अमरीकी पद्धति** उप-शीर्षक।

निम्नतर मध्य स्वर (lower mid vowel) एक प्रकारका स्वर। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गी-**

करणमें स्वरोंका वर्गीकरण, मानस्वर तथा स्वर वर्गीकरणकी अमरीकी पद्धति उपशीर्षक ।

निम्न बलाघात––बलाघात(दे०)का एक भेद ।

निम्नवर्गीय संज्ञा––निम्नजातीय संज्ञा(दे०)-का एक अन्य नाम ।

निम्नसंज्ञा (castless noun)––कुछ भाषाओंमें एक संज्ञा-भेद, जिसमें निर्जीव वस्तुएँ तथा वे प्राणी माने जाते हैं, जिनका मानसिक विकास नहीं हुआ है या जो तर्कशील नहीं हैं । इन्हें **निम्नवर्गीय संज्ञा** या **निम्नजातीय संज्ञा** भी कहते हैं ।

निम्न सुर––सुर(दे०)का एक भेद ।

निम्न स्वर (low vowel)––ऐसा स्वर, जिसके उच्चारणमें जीभ नीची रहे, अर्थात् ऊपरको अधिक ऊपर न उठे । इसे **विवृत स्वर** भी कहते हैं । (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण में स्वरोंका वर्गीकरण, मान स्वर** तथा **स्वर वर्गीकरणकी अमरीकी पद्धति** उपशीर्षक ।

निम्नार्द्ध बलाघात––बलाघात(दे०)का भेद ।

नियत संधि––(दे०) **संधि** ।

निय प्राकृत––एक **प्राकृत** (दे०)

नियमपूरक (expletive)––ऐसा शब्द, वाक्यांश या अक्षर, जो आवश्यक न हो, अपितु केवल किसी व्याकरणिक नियमकी पूर्तिके लिए प्रयुक्त किया गया है । उदाहरणार्थः–'जो आयेगा खायेगा'के लिए यदि कहा जाय 'जो आयेगा सो खायेगा' तो 'सो' इसी प्रकारका नियमपूरक पद कहलायेगा । अंग्रेज़ीमें देयर (there)का भी एसा प्रयोग मिलता है । जैसे, there is room for you में । यहाँ 'देयर' उपर्युक्त 'सो'से भी अधिक पूर्णतः नियमपूरक है । उसका अर्थसे कोई खास संबंध नहीं है ।

नियमित (regular)––वह, जो नियमानुसार हो । दूसरे शब्दोंमें, जो अपवाद न हो ।

निरपेक्ष उत्तमावस्था–– (दे०) **विशेषण** ।

निरर्थक बलाघात––बलाघात (दे०)का भेद ।

निरर्थक शब्द––एक प्रकारके **शब्द** (दे०) ।

निरर्थक सुर––सुर (दे०)का एक भेद ।

निरवयव भाषा––**अयोगात्मक भाषा** (दे०)-का एक अन्य नाम ।

निरिंद्रिय भाषा––**अयोगात्मक भाषा**(दे०)-का एक अन्य नाम ।

निर्णय-सिद्धान्त (agreement theory)––भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धान्त । (दे०) **भाषाकी उत्पत्ति** ।

निर्देशक––एक प्रकारका चिह्न । (दे०) **विराम** ।

निर्देशार्थ––(दे०) **अर्थ** ।

निर्बलकारक रूप (weak declension)–(१) वे कारक रूप, जो बिल्कुल नियमानुसार बनते हैं । (२) कुछ भाषाओंमें निर्बल संज्ञाओंके रूप ।

निर्बल क्रिया (weak verb)––ऐसी क्रियाएँ या धातुएँ, जिनके भूत या भूत कृदंती रूप निश्चित प्रत्यय (जैसे अंग्रेज़ीमें ed) जोड़कर बनाये जाते हैं । इस नियमका अतिक्रमण न कर पानेके कारण उन्हें निर्बल कहते हैं । इसके विरुद्ध जो इस नियमका अतिक्रमण करते हैं, उन्हें **सबल क्रिया** (दे०) कहते हैं ।

निर्बल क्रिया रूप (weak conjugation)––अंग्रेज़ी आदि भाषाओंमें **निर्बल क्रिया** (दे०)ओंके रूप ।

निर्बल बलाघात––**बलाघात** (दे०)का एक भेद ।

निर्बल संज्ञा (weak noun)––जर्मनिक भाषाओंमें ऐसे संज्ञा शब्द, जिनमें आंतरिक स्वर-परिवर्तन नहीं होता ।

निर्योग भाषा––**अयोगात्मक भाषा** (दे०)का एक अन्य नाम ।

निर्लिंगी––**लिंगविहीन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

निर्वचन––व्युत्पत्तिमूलक व्याख्या या किसी शब्दके अंगों-उपांगोंका विश्लेषण करते हुए उसकी व्युत्पत्ति तथा उसका मूल अर्थ आदि समझाना । जिस शास्त्रमें इस प्रकारका अध्ययन-विश्लेषण होता है, उसे **निर्वचनशास्त्र** कहते हैं । अब प्रायः निर्वचनको

व्युत्पत्ति और निर्वचन-शास्त्रको व्युत्पत्ति शास्त्र कहा जाता है। दुर्गावृत्तिमें आया है :— 'निष्कृष्य विगृह्य निर्वचनम्' ।

निर्विभक्तिक संबंधसूचक अव्यय—(दे०) **संबंधसूचक अव्यय** ।

निश्चयवाचक क्रिया विशेषण—(दे०) **क्रिया विशेषण** ।

निश्चयवाचक सर्वनाम—(दे०) **सर्वनाम** ।

निश्चयात्मक उपपद (difinite article)—ऐसे उपपद (article), जिनके लग जानेसे संज्ञामें एक निश्चितताका बोध होता है । अंग्रेज़ीका द (the) इसी प्रकारका उपपद है।

निश्चयात्मक वाक्य—ऐसा वाक्य, जिसमें किसी निश्चित बातकी सूचना हो, जैसे—'राम दौड़ रहा है' ।

निश्चयार्थ—(दे०) **अर्थ** ।

निश्चित पदक्रम (fixed word order)—वाक्यमें पदोंका निश्चित क्रम । ऐसा क्रम, जिसके परिवर्तनसे अर्थ परिवर्तित हो जाता है।

निश्चित परिमाणवाचक विशेषण—(दे०) **विशेषण** ।

निश्चित बलाघात—**बलाघात** (दे०)का एक भेद ।

निश्चित संख्यावाचक विशेषण—(दे०) **विशेषण** ।

निषेधवाचक क्रिया विशेषण—(दे०) **क्रिया विशेषण** ।

निषेधसूचक वाक्य—**नकारात्मक वाक्य**(दे०)-के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

निषेधात्मक वाक्य—**नकारात्मक वाक्य**(दे०)-के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

निषेधात्मक शब्द—एक प्रकारके **शब्द**(दे०) ।

निष्ठा—'निष्ठा'का अर्थ है 'समाप्ति'। 'क्त' और 'क्तवतु' प्रत्यय समाप्तिबोधक हैं, अतः इन्हें पाणिनीय व्याकरणमें निष्ठा (क्त-क्तवतू निष्ठा १.१.२६) कहा गया है ।

निस्का (niska)—**तसिम्शिअन वर्ग** (दे०)-की एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

निस्वानी (niswani)—परिनिष्ठित **लहँदा** (दे०)का झंग (पंजाब) में प्रयुक्त एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ९,४३२ थी ।

निस्सोमेह (nissomeh)—**आओ** (दे०)-का एक अन्य नाम ।

निहाली (nihali)—**नहाली** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

नीकोबारी—एक **आस्ट्रिक परिवार** (दे०)-की भाषा, जो नीकोबारमें बोली जाती है । यह मुंडा और मॉनके बीचमें पड़ती है । इसका क्षेत्र नीकोबार द्वीप है । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ८,६६२ थी ।

नीग्रो अंग्रेज़ी—अफ्रीकामें डचगिनीमें प्रयुक्त एक मिश्रित अंग्रेज़ी, जिसमें डच, स्पैनिश, पुर्तगाली तथा फ्रांसीसी आदिके तत्त्व भी हैं । इसके दो रूप हैं : **बुश निग्रो अंग्रेजी** तथा **निंगे टोंगो** । दूसरीको **तकि-तकि** भी कहते हैं ।

नील-अबीसीनिअन—**सूडान वर्ग** (दे०) की कुछ भाषाओंका एक वर्ग ।

नील-कांगोली (nilo-congolese) **सूडान वर्ग** (दे०)की कुछ भाषाओंका एक वर्ग ।

नील चाड—**सूडान वर्ग** (दे०)की कुछ भाषा-ओंका एक वर्ग ।

नील भाषा (blue language)—(दे०) **लाँ ब्लू** ।

नील भूमध्यरेखा वर्ग (nilo-equatoril)—**सूडान वर्ग** (दे०)की कुछ भाषाओंका एक वर्ग ।

नुंग (nung)—पुताओ ज़िलेमें प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०)की एक लोलो मोसो भाषा । बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलने-वालोंकी संख्या ९,०१७ थी ।

नुंबवे (numbuw)—उत्तरी अराकान (बर्मा)की एक भाषा । इसका पारिवारिक संबंध निश्चित नहीं हो सका है । बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या लगभग २४० थी ।

नुत्का (nutka)—(दे०) **नूत्का** ।

नुन्यास (nunyas)—१८९१की मध्य-प्रदेश जनगणनाके अनुसार एक **बंजारा** (दे०) भाषा। अब इसका पता नहीं है।

नुम-लन (num-lan)—**चिन्बोन** (दे०)-की, बर्माके पकोक्कू नामक स्थानमें प्रयुक्त एक बोली।

नूत्का (nootka)—वैनकूवर द्वीपपर नूत्का नामक आदिवासी जाति द्वारा प्रयुक्त एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसे **वकश** (दे०) भाषा परिवारका माना जाता है। इसको **नुत्का** भी कहते हैं।

नूबा (nuba)—'नूबा' (लगभग ३,००,०००) नामक नीग्रो जाति द्वारा प्रयुक्त **सूडान वर्ग** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा। इसकी बहुत-सी बोलियाँ हैं। इसका क्षेत्र नील नदीके तटपर दक्षिणी कोर्डोफ़ान है। इसके अन्य नाम **बर्बरी** (berberi) **न्यूबा, न्यूबियन** तथा **बेर्बेरिअन** (berberian) हैं।

नृजाति भाषा विज्ञान (ethnolinguistics)—भाषा विज्ञान और नृजाति-विज्ञान के पारस्परिक संबंध तथा इन दोनोंके एक दूसरे पर प्रभावका अध्ययन।

नेगासू (negasu)—**गारो** (दे०)की मेमन-सिंह (बंगाल)में प्रयुक्त एक बोली, जो अब कदाचित् विलुप्त हो चुकी है।

नेज़ पेर्से (nez perce)—**शहप्टिन** (दे०) परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

नेटिविस्टिक सिद्धांत (nativistic theory)—भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धान्त। इसे **धातु सिद्धान्त** (दे०) भी कहते हैं।

नेदु (nedu)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार पकोक्कू (बर्मा)में २,८४६ व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत, **चिन्बोक** (दे०)का एक रूप।

नेदू (nedu)—**चुलिकाता मिश्मी** (दे०)का एक अन्य नाम।

नेनेट्स (nenets)—(दे०) **समोयद**।

नेन्न्ते (nenntc)—**नगेंते**(दे०)का एक और नाम।

नेपाली—(दे०) **नैपाली**।

नेम स्पृष्ट—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें प्रयत्न** उपशीर्षक।

नेवारी (newari)—**चीनी परिवार** (दे०)-की तिब्बती-बर्मी शाखाकी तिब्बती हिमालयी उप-शाखाकी पूर्वी तथा मध्य नैपाल, सिक्कम तथा दार्जिलिंगमें प्रयुक्त एक 'अ-सार्वनामिक हिमालयी' भाषा। १९२१-की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या १०,१३४ थी।

नेवारी लिपि—नेवारी भाषाकी लिपि। यह बँगला लिपिसे उत्पन्न हुई है। इसे **नेपाली लिपि** भी कहते हैं।

नेसियन—**हित्ती** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

नेसीय—**हित्ती** (दे०) भाषाके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

ने-सु (ne-su)—**लोलो** (दे०)को लोलो भाषी 'ने-सु' नामसे अभिहित करते हैं।

नैकी (naiki)—(१) मध्य भारत तथा बिहारमें **बंजारी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम। (२) चाँदामें प्रयुक्त, **कोलामी**(दे०)-की 'एक बोली'।

नैगम प्रयोग—ऐसा प्रयोग, जो निगम, अर्थात् वेदोंमें हुआ हो। इसे वैदिक प्रयोग भी कहते हैं। यह लौकिक प्रयोग या भाषिक प्रयोगका उलटा है।

नैगिमी—**लेट् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

नैपाली—**पहाड़ी** (दे०)का पूर्वी रूप। पहाड़ी बोलियोंके प्रदेशके पूर्वी भागकी भाषा होनेके कारण इसे **पूर्वी पहाड़ी** (दे०) भी कहते हैं। 'नैपाली'को नैपालमें **नैपाली** कहते हैं। 'नैपाल'का भी यथार्थ नाम 'नेपाल' ही है। नैपाल या नेपालमें बोले जानेके कारण ही इसका नाम 'नेपाली' या 'नैपाली' है। 'नैपाल' शब्दकी उत्पत्तिके संबंधमें कई मत हैं। कुछ लोग नेपालका संबंध 'ने' नामक ऋषिसे जोड़ते हैं। बौद्ध मतके अनुसार 'नेपाल' 'ने' 'पाल' दो शब्दोंसे बना है। 'ने'का अर्थ है 'स्वयंभू' और 'पाल'का

अर्थ है 'पालन करनेवाला', अर्थात् 'नेपाल'का अर्थ है 'जिसका पालक स्वयंभू हो। अधिक प्रामाणिक मत यह है कि 'नेपाल'का संबंध 'नेपार'से है। नेपालके कुछ भागोंमें 'नेपार' जातिके लोग रहते हैं, कदाचित् उन्हींके आधारपर देशको पहले 'नेपार' कहा गया। मागधी प्राकृतकी सामान्य प्रवृत्तिके अनुसार 'र'का 'ल' हो जानेसे 'नेपार' शब्द बादमें 'नेपाल' हो गया। हिन्दी प्रदेशकी सामान्य जनता 'नेपाल'-को 'नैपाल' कहती है। नैपालीका एक अन्य नाम **गोरखाली** है। यहाँके शासक, नैपालके शासक बननेके पूर्व, 'गोरखा' नामक नगर (काठमांडूसे ७० मील दूर)में रहते थे, अतः उन्हें 'गोरखे' तथा उसी कारण नैपालके लोगोंको भी 'गोरखे' कहते हैं। इसी आधारपर 'नैपाली' भाषाका एक नाम **गोरखाली या गुरखाली** है। भाषाके अर्थमें 'गोरखाली'का प्रयोग 'नेपाली'से पुराना है। शासकीय स्तरपर 'गोरखाली' भाषाके लिए 'नेपाली' नामका प्रयोग १९३२के बाद हुआ है। पर्वतीय प्रदेशकी भाषा होनेके कारण इसे **पर्बतिया या पर्बतिया** भी कहते हैं। इसका एक अन्य नाम **खसकुरा** भी है। 'खसकुरा'का अर्थ है 'खसोंकी भाषा'; यहाँ 'खस' लोग भी काफी हैं।

'नैपाल' शब्दका प्राचीन प्रयोग कौटिल्यके अर्थशास्त्रमें मिलता है, किंतु भाषाके अर्थमें 'नेपाली'का प्रयोग अत्याधुनिक है। 'नैपाली' नामसे लगता है कि यह पूरे नैपालकी भाषा है, किंतु वस्तुतः बात ऐसी नहीं है। यहाँके आर्यशासक तथा अन्य आर्य लोग ही इसका प्रयोग करते हैं। नैपालके आदिवासियोंकी भाषा 'नेवारी' है, जो चीनी परिवारकी तिब्बती-बर्मी शाखाकी एक बोली है। नैपालके शासकोंकी भाषा होनेके कारण ही नैपाली पूरे नैपालकी राष्ट्रभाषा है। 'नैपाली' अन्य पर्वतीय भाषाओंकी तरह ग्रियर्सनके अनुसार आव्रन्त्य अपभ्रंशसे निकली है तथा डॉ॰ सुनीतिकुमार चटर्जीके अनुसार खस अपभ्रंशसे निकली है। मैं समझता हूँ कि इसका मूल संबंध 'शौरसेनी अपभ्रंश'से है। ऐतिहासिक और भौगोलिक कारणोंसे इसपर राजस्थानी, मैथिली, दरद, खस तथा तिब्बती-बर्मीकी नेवारी आदिका प्रभाव पड़ा है। प्रमुखतः रूपकी दृष्टिसे यह राजस्थानी तथा शब्द-समूह एवं मुहावरों आदिकी दृष्टिसे नेवारीसे बहुत अधिक प्रभावित है। इधर काफी दिनोंसे हिन्दीका भी नैपालमें पर्याप्त प्रचार रहा है और वहाँ हिन्दीके समाचारपत्र आदि भी निकलते रहे हैं। १९वीं सदीतक यहाँ हिन्दीकी बोली अवधी तथा भोजपुरी आदिमें कविताएँ भी होती रही हैं। इस प्रकार हिन्दीसे नैपालीका पर्याप्त संपर्क रहा है, जिसका परिणाम यह हुआ है कि नैपाली भाषामें बहुतसे हिन्दी शब्द चले गये हैं। प्रमुखतः वर्तमान नैपालीमें तो हिंदी शब्दोंकी संख्या बहुत अधिक है।

नैपाली भाषाका प्राचीनतम नमूना १५४३ ई०के एक ताम्रपत्रमें मिलता है। इसके प्राचीनतम प्रसिद्ध साहित्यकार प्रेमनिधि पंत कहे जाते हैं, किंतु उनकी कोई भी रचना उपलब्ध नहीं है। नैपालीके पुराने कवियोंमें भानुदत्त (रचनाकाल १९वीं सदी मध्य) सर्वश्रेष्ठ हैं। इनकी 'रामायण' बहुत सुन्दर रचना है। वर्तमान कालमें नैपाली गद्य-पद्यकी सभी विधाओंमें प्रगति कर रही है।

पहाड़ी प्रदेशकी भाषाओंमें बोलियों, उपबोलियोंका प्रायः बाहुल्य हो जाता है। यह बात नैपालीमें भी है। पूरे नैपालमें इसके अनेक तिब्बती-बर्मी तथा कुमायूँनी आदिसे प्रभावित स्थानीय रूप प्रचलित हैं। इनमें उल्लेख्य केवल चार हैं: पाल्पा (दे०), दही (दे०), कुसवार (दे०), देनवार (दे०)। 'पाल्पा' नैपालीका कुमायूँनीसे प्रभावित वह रूप है, जो काठमांडूके पश्चिममें 'पाल्पा' नगरके आसपास बोला जाता है। 'दही' नैपालीका एक विकृत रूप

है, जो नैपालकी तराईमें 'दही' नामक जातिके लोगोंमें व्यवहृत होता है । इसे 'दढी' या 'दढ़ी' भी कहते हैं । नैपालकी तराईमें 'देनवार' नामक जातिके लोगोंमें भी नैपालीका एक विकृत रूप प्रयुक्त होता है, जिसे 'देनवार' या 'दोनवार' कहते हैं । इसी प्रकार नैपालकी तराईमें ही नेपालीका 'कुसवार' जातिमें प्रयुक्त एक विकृत रूप 'कुसवार' या 'कसवार' कहलाता है । कुसवारका व्याकरण चीनी परिवारकी स्थानीय तिब्बती-बर्मी बोलियोंसे प्रभावित है । नैपाली लिखनेके लिए नागरी लिपिका प्रयोग होता है । नैपाली बोलनेवाले पर्याप्त लोग भारतमें भी रहते हैं । १९०१की जनगणनाके अनुसार नैपाली बोलनेवालोंकी संख्या भारतमें डेढ़ लाखसे कुछ कम थी ।

नैपाली तिब्बती–शेरपा तिब्बती (दे०)का एक अन्य नाम ।

नैपाली लिपि–नेवारी लिपि (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

नैरिन्येरी (narrinyeri)––आस्ट्रेलियाके आदिवासियोंकी एक भाषा ।

नैली (naili)–**पछाड़ी** (दे०)का एक नाम ।

नोकव (nokaw)––अपर छिन्दविन में प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०)की एक **नागा** भाषा। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २,७०० थी ।

नोक्क्यो (nokkyo)––**कचिन** (दे०)का, पुताओ (बर्मा)में प्रयुक्त एक रूप ।

नोक्टेन (nokten)––**मटको-मटगुअयो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

नोख्रइ (nokhrai)–**तौंगथू** (दे०)का एक रूप । इसका क्षेत्र दक्षिणी शान है ।

नोग्मुंग (nogmung)–**कचिन** (दे०)का पुताओ (बर्मा)में प्रयुक्त एक रूप ।

नोय्री (noyri)––१९२१की बंबई जनगणनाके अनुसार पश्चिमी खानदेशमें प्रयुक्त एक **भील** (दे०) बोली ।

नोरा (nora)––**खाम्ती** (दे०)की असममें प्रयुक्त एक बोली ।

नोरी (nori)––**भीली** (दे०)की अलीराजपुरमें प्रयुक्त एक बोली । १९०१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३४६ थी ।

नोविअल (novial)––येस्पर्सन द्वारा १९२८में निर्मित एक कृत्रिम भाषा ।

नोब्गोंग नागा (nowgong naga)––**आओ** (दे०)का एक अन्य नाम ।

न्खुम (nkhum)––**कचिन** (दे०)का एक जातीय रूप ।

न्गचंग (ngachang)––**मैंग्थ** (दे०)के लिए उसके बोलनेवालों द्वारा प्रयुक्त एक नाम ।

न्गपै (ngapai)––बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार चिन पहाड़ियोंमें लगभग ९०० व्यक्तियों द्वारा प्रयुक्त एक भाषा । इसके पारिवारिक संबंधका ठीक पता नहीं चला है ।

न्गमेई (ngamei)––**अंगामी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक मणिपुरी नाम ।

न्गारी खोर्सोम (ngari khorsom)––**तिब्बती** (दे०)का, मध्य तिब्बतमें प्रयुक्त एक रूप ।

न्गेंते (ngente)––**लुशेई** (दे०)की, लुशाई पहाड़ियों (असम)में प्रयुक्त, एक बोली ।

न्गोको––जावानीज़ (दे०)का एक रूप ।

न्गोर्न (ngorn)––१९२१की जनगणनाके अनुसार **चीनी परिवार** (दे०)की एक कुकी-चिन भाषा । यह भाषा चिन पहाड़ियों (बर्मा)पर बोली जाती है ।

न्गोन्हव्त (ngonhawt)––उत्तरी शान स्टेटमें ५१५ (बर्माके अनुसार सर्वेक्षण) व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत **पलौंग** (दे०)का एक रूप ।

न्तित (ntit)––**कचिन** (दे०)का, पुताओ (बर्मा)में प्रयुक्त एक रूप ।

न्यम्कट (nyamkat)––ऊपरी कनवरमें प्रयुक्त **तिब्बती** (दे०)का एक अन्य नाम ।

न्यांजा––**बांटू** परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा ।

न्याटुरु (nyaturu)––**बांटू** (दे०) परि-

वारकी एक अफ्रीकी भाषा । इसका क्षेत्र विक्टोरिया, टैंगेनीका तथा न्यास झीलोंसे घिरे प्रदेशमें पड़ता है ।

न्याम्बेज़ी (nyamwezi)—**बांटू** (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा । इस भाषा-का क्षेत्र विक्टोरिया, टैंगेनीका तथा न्यास झीलोंसे घिरे प्रदेशमें है ।

न्यारकी बोली—(दे०) **गिरासियाकी बोली** ।

न्यीसिंग (nyising)—**दफ़्ला** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

न्यूनकोणीय लिपि—**सिद्धमात्रिका लिपि**(दे०)-के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

न्यूनतावाचक क्रिया विशेषण—(दे०) **क्रिया विशेषण** ।

न्यून पद दोष—(दे०) **पद-लोप** ।

न्यूबा—(दे०) **नूबा** ।

न्यूबियन—(दे०) **नूबा** ।

न्योरो (nyoro)—**बांटू** (दे०) परिवारकी विक्टोरिया झीलके उत्तरमें प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा ।

न्सिबिदी लिपि—पश्चिमी अफ्रीकामें वहाँके आदिवासियों द्वारा प्रयुक्त एक भावमूलक लिपि । इसके कुछ चिह्न रेखात्मक होते हैं तथा कुछ चित्रात्मक ।

प

पंकाई (pankai)—१८९१की मध्यप्रदेश-की जनगणनाके अनुसार **हिन्दी** (दे०)-का एक रूप । अब इसका पता नहीं है ।

पंगल (pangal)—**पिंगल** (दे०)का एक अशुद्ध नाम ।

पंगनिम (pangnim)—**पलौंग** (दे०)का, ह्सीपव उत्तरी शान स्टेट (बर्मामें) प्रयुक्त, एक रूप । बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,६६५ थी ।

पंगवाली—**चमेआली** (दे०) बोलीकी एक उपबोली, जो चंबाके समीप पांगी-किलार घाटीमें बोली जाती है । इसपर भद्रवाह वर्गकी पाडरी बोलीका कुछ प्रभाव है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३,७०१ थी ।

पंगिआळी (pangiali)—(१) **तिब्बती** (लाहोलकी)का एक अन्य नाम । (२) **पंगवाली** (दे०)का एक और उच्चारण ।

पंग्सू (pangsu)—**कचिन** (दे०)का, पुताओ (बर्मा)में प्रयुक्त एक रूप ।

पंच पर्गनिआ (panch pargania)—**पाँच पर्गनिआ** (दे०)का एक अन्य नाम ।

पंचम लकार—**लेट् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

पंचमी—(१) **लोट् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम । (२) अपादान **कारक** (दे०) ।

पंचमी तत्पुरुष समास—(दे०) **समास** ।

पंचमी बहुव्रीहि समास—(दे०) **समास** ।

पंचाळी (panchali)—**भीली** (दे०)की, बरारमें प्रयुक्त एक बोली । ग्रियर्सन-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५६० थी ।

पंजगूरी (panjguri)—**मकरानी** (दे०)का एक रूप ।

पंजाबी—(१) **सिराइकी हिंदकी** (दे०)का एक अन्य नाम । (२) परिनिष्ठित **लहंदा** (दे०)के लायलपुरमें प्रयुक्त एक रूपका नाम । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४८,०३८ थी । (३) पूर्वी पंजाबकी भाषा । 'पंजाब' शब्द फ़ारसीका है । इसका अर्थ है पाँच नदियों-का देश (पंज + आब) । पाँच नदियाँ हैं सतलुज, व्यास, रावी, चेनाब और झेलम । पंजाब प्रदेशकी भाषा होनेके कारण ही इसका नाम 'पंजाबी' है । वर्तमान कालमें इसका क्षेत्र पूर्वी पंजाब (दिल्लीकी ओरका

हिन्दी तथा उत्तरमें पहाड़ी क्षेत्र छोड़कर) तथा पाकिस्तान-स्थित पश्चिमी पंजाब (कुछ भाग छोड़कर) है। यह भाषा पश्चिमी पहाड़ी, बाँगरू, बागड़ी, बीकानेरी तथा लहँदासे घिरी है । बोलनेवालोंमें सिक्खोंके प्राधान्यके कारण इसे सिक्खी, खालसी आदि अन्य नामोंसे भी पुकारा गया है । कभी-कभी लहँदा और पंजाबी दोनोंको ही पंजाबी कहते हैं । उस स्थितिमें लहँदाको पश्चिमी पंजाबी तथा पंजाबीको पूर्वी पंजाबी कहते हैं । लिपिके आधारपर इसे कभी-कभी **गुरमुखी** भी कहते रहे हैं। इसका एक प्राचीन नाम **लाहौरी** भी मिलता है । वस्तुतः यह नाम लाहौरकी पंजाबीका है। १४वीं सदीमें अमीर ख़ुसरोने नूह-ए-सिपरमें लाहौरीका उल्लेख किया है। १९२१की जनगणनाके अनुसार पंजाबी बोलनेवालोंकी संख्या १,६२,३३,५९६ थी। १९३२में पंजाब यूनिवर्सिटीने इस बातकी जाँचके लिए एक समिति बनायी थी । उसके अनुसार आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओंमें पंजाबी सबसे पुरानी भाषा है । इसमें बहुतसे प्राकृत शब्दोंका अब भी प्रयोग होता है । उदाहरणार्थ—सत्त, अट्ठ आदि। हिन्दी आदिमें विकसित रूप सात, आठ आदि प्रयुक्त होते हैं । ग्रियर्सनके अनुसार 'मध्यप्रदेशसे संबंध रखनेवाली समस्त भाषाओंमें पंजाबी ही ऐसी है, जो संस्कृत तथा फ़ारसीसे आगत शब्दोंसे सबसे अधिक मुक्त है । इसमें सहज ग्रामीण आकर्षण है, जो इसके बोलनेवाले कृषकोंकी सरलताको द्योतित करता है ।

पंजाबीके प्रमुख रूप दो हैं। एक तो आदर्श या परिनिष्ठित पंजाबी है, जो केन्द्रीय पंजाबके मैदानोंमें प्रयुक्त होती है । इसका शुद्धतम रूप अमृतसरके आसपास माझमें है। इसे माझी भी कहते हैं । माझीके अतिरिक्त, परिनिष्ठित पंजाबीके जालंधरी, दोआबी (जिसमें दोआबी खास, 'कहलूरी' या बिलासपुरी तथा होशियारपुरी पहाड़ी आती है) पोवाधी, राठी, मालवाई, भट्टियानी (जिसमें बीकानेरी राठी, फ़जिल्काई बागड़ी, फ़ीरोज़पुरी राठौरी हैं) आदि प्रमुख रूप हैं ।

पंजाबीका दूसरा प्रमुख रूप 'डोगरा' या 'डोंगरी' है । यह जम्मू तथा पंजाबके कुछ भागोंमें बोली जाती है । इसपर कश्मीरी तथा लहँदाका पर्याप्त प्रभाव पड़ा है । डोगरीके स्थानीय रूपांतर कंडिआली, काँगड़ा बोली तथा भटेआली आदि हैं । डोंगरी टाकरी लिपिमें लिखी जाती है ।

पंजाबी प्रदेशमें टाकरी, लंडा, महाजनी, गुरुमुखी, शारदा, फ़ारसी, नागरी आदि लिपियोंका प्रयोग होता रहा है । अब भारतीय क्षेत्रमें पंजाबी प्रमुखतः गुरुमुखीमें तथा पाकिस्तानी क्षेत्रमें फ़ारसी या उर्दू लिपिमें लिखी जाती है ।

पंजाबी साहित्यका आरंभ १२वीं सदीके अंतिम चरणसे होता है। इसके प्रथम कवि बाबा फ़रीद शकरगंज हैं । तबसे इसका साहित्य फलता-फूलता आ रहा है । इसके प्रसिद्ध प्राचीन साहित्यिक नानक, गुरु अर्जुन गुरुदास, तथा हीर-राँझाके लेखक वारिस शाह आदि हैं । आधुनिक लेखकोंमें मोहन सिंह, अमृता प्रीतम आदि प्रमुख हैं। लोक साहित्यकी दृष्टिसे भी पंजाबी पर्याप्त संपन्न है ।

पंजाबीका विकास पैशाची या केकय अपभ्रंशसे हुआ है । कुछ लोगोंने टक्क अपभ्रंशसे भी इसकी उत्पत्ति मानी है। साथ ही इस पर शौरसेनी अपभ्रंशका भी पर्याप्त प्रभाव पड़ा है ।

पंजाबी-लहंदा (panjabi lahnda)— परिनिष्ठित **पंजाबी** (दे०) का, मध्य पंजाबके पश्चिमी भागमें प्रयुक्त, एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २४,३२,०२४ थी ।

पंजाब्की (panjabki)—**सिराइकी हिन्दकी** (दे०) का एक अन्य नाम ।

पंपन्गन (pampangan)—**इंडोनीशियन** (दे०) परिवारकी एक भाषा, जिसे फ़िलिपीन द्वीपोंपर लगभग सा[illegible] लाख व्यक्ति बोलते हैं ।

पंबद (pambada)—**पोंबद** (दे०)का एक अन्य नाम

पँवारी—'पश्चिमी हिन्दी'की बोली **बुंदेली** (दे०)का, पूर्वी-उत्तरी ग्वालियर, दतिया तथा उसके आसपास प्रयुक्त एक स्थानीय रूप । इस क्षेत्रमें 'पँवार' राजपूतोंकी प्रधानताके कारण इसका यह नाम पड़ा है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३५,३०० थी ।

पइते (paite)—**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी,असमी-बर्मी शाखाके कुकी-चिन वर्गकी,लुशाई पहाड़ियों(असम)में प्रयुक्त एक उत्तरी चिन भाषा । इसका एक नाम 'पैथे' भी है । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १०,४६० थी ।

पई-यि (pai-yi)—**पेई-यि** (दे०)का एक अन्य नाम ।

प-ओ (pa-o)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, दक्षिणी शान स्टेटमें प्रयुक्त **तौंगथू** (दे०)की एक उप-बोली ।

पकगुअरा (pakaguara)—**पनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

पकसे (pakase)—**अयमर** (दे०)परिवारकी एक प्रमुख दक्षिणी अमेरिकी भाषा । इसका एक अन्य नाम **पकक्से** (pakaxe) भी है ।

पकार—प के लिए प्रयुक्त नाम । (दे०) **कार** ।

पकू (paku)—**स्गव करेन** (दे०)की एक बोली । इसका क्षेत्र करेन्नी और टोंगू (बर्मा)में है । १९२१की जन-गणनानुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १२०६ थी ।

प-केल्टिक—भारोपीय परिवारकी **केल्टिक** (दे०)शाखाकी **ब्राइथोनिक शाखा** (जिसमें ब्रीटन, वेल्श और कार्निश हैं)के लिए कभी-कभी प्रयुक्त एक नाम । इसे **ब्रिटॉनिक** भी कहते हैं ।

पख्तो (pakhto)—**पश्तो** (दे०)की, वजीर, स्वात, बुनेर, अटक, पेशावर, उत्तरी-पश्चिमी कोहाट तथा अफ़ीदी प्रांतमें प्रयुक्त, उत्तरी-पूर्वी बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ८,०६,-९७४ थी ।

प-ख्रा (pa-khra)—**व** (दे०)का एक रूप । इसका क्षेत्र उत्तरी शान (बर्मा)में है ।

पगडिआ (pagadia)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **हिन्दी** (दे०)का, अहमदाबादमें प्रयुक्त एक रूप ।

पचरुआ—इटावा ज़िलेके उत्तरी-पूर्वी क्षेत्रमें प्रयुक्त **कनौजी** (दे०)का एक नाम ।

पछाईं—माध्यमिक पहाड़ी बोली **कुमायूँनी** (दे०)की एक उपबोली, जो अलमोड़ाके पश्चिमी दक्षिणी भागमें गढ़वालकी सीमाके आसपास बोली जाती है । पश्चिममें बोले जानेके कारण इसे **पछाईं** या **पछाहीं** कहते हैं । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ९५,७५० थी ।

पछाडी (pachhadi)—(१) परिनिष्ठित **पंजाबी** (दे०)का, पूर्वी पंजाबमें प्रयुक्त एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३८,९९० थी । (२) **राठी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

पझनारी (pajhanari)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार खानदेशमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा ।

पटगोनिअन (patagonian)—**चोन** (दे०) भाषा-परिवारकी एक प्रमुख दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

पटणूली (patnuli)—**गुजराती** (दे०)की, दक्षिणके रेशम बुननेवाले जुलाहोंमें प्रयुक्त, एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ५,८०० थी ।

पटवी (patvi)—**मालवी** (दे०)का, चाँदाके जुलाहोंमें प्रयुक्त, एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २०० थी ।

पटवेगारी (patwegari)—बेलगाम, धारवाड़ तथा बीजापुरके रेशम बुननेवालोंमें

प्रयुक्त एक भाषा। बेलगाम तथा धारवाड़में इनकी बोली **पटणूली** (दे०)का ही एक रूप प्रयुक्त है; किन्तु बीजापुरमें वह **मराठी**(दे०)-का एक विकृत रूप है।

पट्टुआ (patua)—**जुआंग** (दे०)का एक दूसरा नाम।

पट्‌करी (patkari)—१८९१की हैदराबाद जनगणनाके अनुसार **गुजराती** (दे०)का एक रूप।

पट्टनी (pattani)—**गुजराती** (दे०)की, दक्षिणी-पश्चिमी मारवाड़, पलानपुर तथा उसके आसपास प्रयुक्त, एक बोली।

पट्‌णूली (patnuli)—**पटणूली** (दे०)का अन्य नाम।

पट्‌नी (patni)—**मंचाटी** (दे०)का एक अन्य नाम।

पट्‌वी(patwi)—**पटवी**(दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

पठानी (pathani)—पठानोंकी भाषा, **पश्तो** (दे०)का एक नाम।

पढी (padhi)—**नेवारी** (दे०)की, नैपालकी मध्यवर्ती पहाड़ियोंमें प्रयुक्त, एक बोली।

पतनी (patani)—**पट्टनी** (दे०)का एक अशुद्ध नाम।

पतानी (patani)—१८९१की मद्रास जनगणनाके अनुसार **हिन्दोस्तानी**(दे०)-का एक नाम। यह नाम कदाचित् **पठानी**-का विकसित रूप है।

पत्ली (patli)—**भीली** (दे०)का, झबुआमें प्रयुक्त एक रूप। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,६१९ थी।

पथा—'बघेली' की उपबोली **गहोरा** (दे०) का बाँदा ज़िलेके दक्षिणी-पूर्वी भागमें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप।

प-थि—**ख्‌व करेन** (दे०)का एक नाम।

पद—(१) **रूप** (दे०); या जिसमें सुप् और तिङ् विभक्तियाँ लगायी गयी हों। अष्टाध्यायीमें आता है:—'सुप्तिङन्तं पदम्' (१-४-१४)। (२) संस्कृतमें धातुओं और प्रत्ययोंके वर्गीकरणका एक आधार। संस्कृतके क्रियारूप बनानेमें प्रयुक्त प्रत्यय दो प्रकारके होते हैं:—(क) **परस्मैपद**—ऐसे प्रत्यय, जिनको धातुमें लगानेपर क्रियाका फल अपने लिए न होकर दूसरेके लिए हो। (ख) **आत्मनेपद**—ऐसे प्रत्यय, जिनको धातुमें लगानेपर क्रिया का फल दूसरेके लिए न होकर अपने लिए हो। उदाहरणके लिए 'कृ' धातुसे परस्मैपद प्रत्यय लगकर रूप 'करोमि' होगा और आत्मनेपद लगनेपर 'कुर्वे' होगा। 'अहं यज्ञं करोमि' कहा जाय तो अर्थ होगा कि फलका भोक्ता यज्ञ करनेवाला नहीं, अपितु यजमान है; किंतु 'अहं यज्ञं कुर्वे'का अर्थ होगा कि यज्ञकर्त्ता किसी अन्यके लिए नहीं, अपितु अपने लिए यज्ञ कर रहा है और फलभोक्ता वह स्वयं है। किन्तु इस प्रकार संस्कृतमें हर धातुके दो-दो रूप नहीं मिलते। केवल कुछके ही मिलते हैं। जिनके मिलते भी हैं, सच्चे अर्थोंमें उनको फलके आधार पर आत्मने और परस्मैका नहीं कहा जा सकता। प्रारंभमें संभवतः यह अंतर था। बादमें यह केवल व्याकरणिक भेद रह गया था। पदके आधारपर संस्कृतकी धातुओंको तीन वर्गोंमें रखा गया है:—(क) **परस्मैपद** या **परस्मैपदी**—ऐसी धातुएँ, जिनमें परस्मैपद प्रत्यय लगें। (ख) **आत्मनेपद** या **आत्मनेपदी**—ऐसी धातुएँ, जिनमें आत्मनेपद प्रत्यय लगें। (ग) **उभयपद** या **उभयपदी**—ऐसी धातुएँ, जिनमें दोनों प्रकारके प्रत्ययोंका प्रयोग हो। (दे० **धातु**)। या, ऐसी क्रियाएँ या धातुएँ, जिनका फल दूसरेके लिए हो **परस्मैपद**; ऐसी, जिनका फल अपने लिए हो **आत्मनेपद** तथा ऐसी, जिनका प्रयोग दोनोंके लिए हो **उभयपद** हैं। धातुओंके संबंधमें इस बातका निर्णय कि वे किस पदकी हैं अनुबंध तथा उदात्त-अनुदात्त-स्वरित (अनुदात्तङित् आत्मनेपद; अर्थात् अनुदात्त स्वर और ङ इत्‌वाली धातुएँ आत्मनेपदकी हैं; स्वरित तथा ञ इत्‌वाली उभयपदी आदि) आदि कई बातोंपर

निर्भर करता है। कभी-कभी विशिष्ट स्थितियोंमें एक पदकी धातु दूसरे पदकी भी हो जाती है। धातुओंके प्रयोगमें इस प्रकारका अंतर व्याकरणोंमें ही मिलता है। साहित्यकारोंने प्रायः इसका उल्लंघन किया है। प्रत्ययकी भाँति धातुका यह वर्गीकरण भी सच्चे अर्थोंमें अर्थसे संबंध नहीं रखता। उदाहरणार्थ--'स्ना' (नहाना) धातु परस्मैपदी है, अर्थात् 'अहं स्नामि'का अर्थ होना चाहिये कि दूसरेके लिए नहा रहा हूँ या 'अहं स्वपिमि' का अर्थ होना चाहिये कि दूसरेके लिए सो रहा हूँ। यहाँ तक कि अद् (=खाना), भी (=डरना) और श्वस (साँस लेना) भी परस्मैपदी है, यद्यपि साँस लेना सबसे अधिक आवश्यक कदाचित् अपने लिये है। दा (देना), हन् (मारना) आदि उभयपदी हैं। विद्, लभ् आदि आत्मनेपदी हैं। इस प्रकार धातुओंका यह वर्गीकरण मात्र व्याकरणिक है। निष्कर्षतः प्रत्यय और धातु, दोनोंका यह वर्गीकरण केवल इस बातका द्योतन करता है कि कुछ प्रत्यय कुछ धातुओंके साथ लगते हैं और कुछ कुछके साथ। इसी प्रकार कुछ धातु अपने साथ केवल कुछ प्रत्ययोंको मिलाते हैं और कुछ कुछको तथा कुछ दोनोंको। आर्थिक दृष्टिसे 'पर' और 'आत्म'का भाव संभव है कभी रहा हो, किंतु अब इनमें प्रायः बिल्कुल नहीं है।

पदक्रम(syntactic order, word order)—लगभग सभी भाषाओंमें वाक्यमें प्रयुक्त पदों या शब्दोंका एक विशेष क्रम होता है, जिसे उस भाषाका **शब्दक्रम, पदक्रम, रूपक्रम** या **क्रम** आदि कहते हैं। **अयोगात्मक वाक्य** (दे०) में पदक्रमका स्थान अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण होता है (दे० **आकृतिमूलक वर्गीकरणमें अयोगात्मक भाषा**), किंतु अन्य वाक्यों या अन्य प्रकारकी भाषाओंमें भी इसका कुछ-न-कुछ ध्यान रखा जाता है। पदक्रमकी दृष्टिसे भाषाओंको दो वर्गोंमें रखा जा सकता है। पहले वर्गमें तो वे भाषाएँ आती हैं, जिनमें पदोंका क्रम बहुत अधिक निश्चित नहीं होता। उनमें सरलतापूर्वक कुछ परिवर्तन कर सकते हैं और उससे अर्थमें कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता। ग्रीक, लैटिन, अरबी, फ़ारसी तथा संस्कृत आदि बहुत-सी प्राचीन संयोगात्मक भाषाएँ इसी वर्गमें आती हैं। उदाहरणार्थ :—

अरबी

ज़रब्अ ज़ैदुन अम्रन = ज़ैदने अमरको मारा।

ज़रब्अ अम्रन ज़ैदुन = अमरको ज़ैदने मारा।

फारसी

ज़ैद अमररा ज़द = ज़ैदने अमरको मारा।

अमररा ज़ैद ज़द = अमरको ज़ैदने मारा।

संस्कृत

जैदः अमरं अहनत्--ज़ैदने अमरको मारा।

अमरं जैदः अहनत्--अमरको ज़ैदने मारा।

पदोंके विभक्तियुक्त होनेके कारण ही यहाँ हम देखते हैं कि क्रम परिवर्तित करनेपर भी अर्थ वहीं है। किंतु पदक्रमकी यह स्वतंत्रता एक सीमा तक ही होती है। किसी-न-किसी स्तरपर इन भाषाओंमें भी पदोंका एक क्रम होता है और उसे परिवर्तित कर देनेपर अर्थमें परिवर्तन न भी हो, तो भी कम-से-कम पदक्रममें परिवर्तनके कारण वाक्य कुछ अस्वाभाविक-सा लगता है।

दूसरे वर्गकी भाषाएँ वे होती हैं, जिनमें वाक्यमें पद या शब्दका क्रम प्रायः निश्चित होता है। अयोगात्मक या स्थान-प्रधान भाषाएँ इस वर्गमें आती हैं। ऊपरके उदाहरणोंमें हमने देखा कि क्रमके अंतरसे अर्थमें कोई फ़रक नहीं आया, किन्तु स्थान-प्रधान भाषाओंमें वाक्यमें शब्दका स्थान बदलनेसे अर्थ बदल (कभी-कभी तो पूर्णतः उलटा हो) जाता है। इसका सर्वोत्तम उदाहरण चीनी है। यों हिंदी, अंग्रेज़ी आदि आधुनिक आर्य भाषाओंमें भी यह प्रवृत्ति कुछ-कुछ मिलती है। अंग्रेज़ीका एक उदाहरण है :--zaid killed amar.

ज़ैदने अमरको मारा।

amar killed zaid अमरने ज़ैदको मारा (यहाँ शब्दके स्थान-परिवर्तनसे वाक्य-

का अर्थ उलट गया) ।

चीनीमें तो यह प्रवृत्ति विशेष रूपसे मिलती है—

पा ताङ्‌शेन = पा शेनको मारता है ।

शेन ताङ्‌पा = शेन पाको मारता है ।

अंग्रेज़ीमें सामान्यतः कर्त्ता, क्रिया और तब कर्म आता है, किंतु प्रश्नवाचक वाक्यमें क्रियाका कुछ अंश पहले ही आ जाता है । विशेषण संज्ञाके पहले आता है और क्रिया-विशेषण क्रियाके बादमें । हिन्दीमें कर्त्ता, कर्म और तब क्रिया रखते हैं । सामान्यतः विशेषण संज्ञाके पूर्व तथा क्रिया-विशेषण क्रियाके पूर्व रखते हैं । चीनीमें अंग्रेज़ीकी भाँति कर्त्ताके बाद क्रिया और तब कर्म रखते हैं । यद्यपि इसकी कुछ बोलियोंमें कर्म पहले भी आ जाता है । विशेषण और क्रिया-विशेषण हिन्दीकी भाँति प्रायः संज्ञा और क्रियाके पूर्व आते हैं । प्रश्नवाचक शब्द (जैसे क्या) अंग्रेज़ी तथा हिन्दीमें वाक्यके आरम्भमें आते हैं पर चीनीमें वाक्यके अन्त-में । उदाहरणार्थ :—

फ़ान त्स ल मा ?

खाना खा लिया क्या ?

किसी भी भाषाके शब्दोंके स्थानकी निश्चितताके ये नियम पूर्णतः निरपवाद नहीं होते । यहाँतक कि इस प्रकारकी प्रधान भाषा चीनीमें भी नहीं । ऊपरका चीनी वाक्य इस प्रकार भी कहा जा सकता है—

त्स फ़ान ल मा ?

खा खाना लिया क्या ? = खाना खा लिया क्या ?

बल देनेके लिए पद-क्रम-प्रधान भाषाओंमें भी पदक्रममें प्रायः परिवर्तन ला देते हैं । उदाहरणार्थ हिन्दीमें सामान्यतः कहेंगे 'मैं घर जा रहा हूँ' किन्तु बल देनेके लिए 'घर जा रहा हूँ मैं' या 'जा रहा हूँ घर मैं' आदि भी कहते हैं । (दे०) **वाक्यमें वाक्यकी आवश्यकताएँ** उपशीर्षक ।

पदक्रम-प्रधान भाषा—ऐसी भाषा, जिसमें वाक्यमें पदों या शब्दोंका क्रम प्रायः निश्चित होता है । चीनी इसी प्रकारकी भाषा है । (दे०) **पदक्रम** ।

पदतत्त्व—**रूपग्राम** (दे०) का एक अन्य नाम ।

पद-परिचय—**पद-व्याख्या** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

पद-लोप—वाक्यमें किसी पद रूप या शब्दका लुप्त हो जाना । कविताकी भाषामें प्रायः वाक्यके सभी पदोंको न देकर कुछको छोड़ देते हैं । पदके लुप्त हो जानेसे यदि अर्थ समझनेमें कठिनाई हो तो इसे **न्यूनपददोष** नामसे एक दोष मानते हैं, यदि कठिनाई न हो तो इसे दोष नहीं माना जाता ।

वाक्यमें जब आवश्यक सभी पद तथा सहायक शब्द (परसर्ग, संयोजक तथा सहायक क्रिया आदि) हों तो वह पूर्ण वैया-करणिक वाक्य होता है, किन्तु प्रायः ऐसा भी देखा जाता है कि इनमें एक या अधिकको कमी भी होती है । वाक्यके अध्ययनमें यह भी देखा जाता है कि किस भाषामें किस प्रकारके लोपकी प्रवृत्ति अधिक है । कुछ दिन पूर्व तक हिन्दीमें 'मैं आज नहीं जा रहा हूँ' कहते रहे हैं, किन्तु अब 'मैं आज नहीं जा रहा' कहनेकी प्रवृत्ति बढ़ रही है, यों 'आज नहीं जा रहा' कहकर भी काम चला लेते हैं । इसमें 'मैं' और 'हूँ' का लोप हो गया है । इस प्रकारके वाक्य **पदलोपी वाक्य** कहलाते हैं ।

राम—क्या तुम जाओगे ?
मोहन—हाँ ।

यहाँ मोहनका 'हाँ' वाक्य तो है किन्तु व्या-करणकी दृष्टिसे वह पदलोपी वाक्य है इसका पूरा रूप या भाव है 'हाँ, मैं जाऊँगा' । इस तरह बातचीतमें प्रायः पदलोपी वाक्यों-का प्रयोग होता है । किसी प्रश्नका उत्तर भी (हाँ, नहीं, ज़रूर, क्यों नहीं) प्रायः पदलोपी वाक्य होता है ।

पदलोपी वाक्य—(दे०) **पद-लोप** ।

पदव (padaw)—**पदाँग** (दे०) की एक अन्य नाम ।

पद-व्याख्या—वाक्यसे अलग स्वतंत्र रूपमें

निर्भर करता है। कभी-कभी विशिष्ट स्थितियोंमें एक पदकी धातु दूसरे पदकी भी हो जाती है। धातुओंके प्रयोगमें इस प्रकारका अंतर व्याकरणोंमें ही मिलता है। साहित्यकारोंने प्रायः इसका उल्लंघन किया है। प्रत्ययकी भाँति धातुका यह वर्गीकरण भी सच्चे अर्थोंमें अर्थसे संबंध नहीं रखता। उदाहरणार्थ--'स्ना' (नहाना) धातु परस्मैपदी है, अर्थात् 'अहं स्नामि'का अर्थ होना चाहिये कि दूसरेके लिए नहा रहा हूँ या 'अहं स्वपिमि' का अर्थ होना चाहिये कि दूसरेके लिए सो रहा हूँ। यहाँ तक कि अद् (=खाना), भी (=डरना) और श्वस (साँस लेना) भी परस्मैपदी है, यद्यपि साँस लेना सबसे अधिक आवश्यक कदाचित् अपने लिये है। दा (देना), हन् (मारना) आदि उभयपदी हैं। विद्, लभ् आदि आत्मनेपदी हैं। इस प्रकार धातुओंका यह वर्गीकरण मात्र व्याकरणिक है। निष्कर्षतः प्रत्यय और धातु, दोनोंका यह वर्गीकरण केवल इस बातका द्योतन करता है कि कुछ प्रत्यय कुछ धातुओंके साथ लगते हैं और कुछ कुछके साथ। इसी प्रकार कुछ धातु अपने साथ केवल कुछ प्रत्ययोंको मिलाते हैं और कुछ कुछको तथा कुछ दोनोंको। आर्थिक दृष्टिसे 'पर' और 'आत्म'का भाव संभव है कभी रहा हो, किंतु अब इनमें प्रायः बिल्कुल नहीं है।

पदक्रम(syntactic order, word order)—लगभग सभी भाषाओंमें वाक्यमें प्रयुक्त पदों या शब्दोंका एक विशेष क्रम होता है, जिसे उस भाषाका **शब्दक्रम, पदक्रम, रूपक्रम** या **क्रम** आदि कहते हैं। **अयोगात्मक वाक्य** (दे०)में पदक्रमका स्थान अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण होता है (दे० **आकृतिमूलक वर्गीकरणमें अयोगात्मक भाषा**), किंतु अन्य वाक्यों या अन्य प्रकारकी भाषाओंमें भी इसका कुछ-न-कुछ ध्यान रखा जाता है। पदक्रमकी दृष्टिसे भाषाओंको दो वर्गोंमें रखा जा सकता है। पहले वर्गमें तो वे भाषाएँ आती हैं, जिनमें पदोंका क्रम बहुत अधिक निश्चित नहीं होता। उनमें सरलतापूर्वक कुछ परिवर्तन कर सकते हैं और उससे अर्थमें कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता। ग्रीक, लैटिन, अरबी, फ़ारसी तथा संस्कृत आदि बहुत-सी प्राचीन संयोगात्मक भाषाएँ इसी वर्गमें आती हैं। उदाहरणार्थ :--

अरबी

ज़रबअ ज़ैदुन अम्रन = ज़ैदने अमरको मारा।

ज़रबअ अम्रन ज़ैदुन = अमरको ज़ैदने मारा।

फारसी

ज़ैद अमररा ज़द = ज़ैदने अमरको मारा।

अमररा ज़ैद ज़द = अमरको ज़ैदने मारा।

संस्कृत

जैदः अमरं अहनत्--ज़ैदने अमरको मारा।

अमरं जैदः अहनत्--अमरको ज़ैदने मारा।

पदोंके विभक्तियुक्त होनेके कारण ही यहाँ हम देखते हैं कि क्रम परिवर्तित करनेपर भी अर्थ वही है। किंतु पदक्रमकी यह स्वतंत्रता एक सीमा तक ही होती है। किसी-न-किसी स्तरपर इन भाषाओंमें भी पदोंका एक क्रम होता है और उसे परिवर्तित कर देनेपर अर्थमें परिवर्तन न भी हो, तो भी कम-से-कम पदक्रममें परिवर्तनके कारण वाक्य कुछ अस्वाभाविक-सा लगता है।

दूसरे वर्गकी भाषाएँ वे होती हैं, जिनमें वाक्यमें पद या शब्दका क्रम प्रायः निश्चित होता है। अयोगात्मक या स्थान-प्रधान भाषाएँ इस वर्गमें आती हैं। ऊपरके उदाहरणोंमें हमने देखा कि क्रमके अंतरसे अर्थमें कोई फ़रक नहीं आया, किन्तु स्थान-प्रधान भाषाओंमें वाक्यमें शब्दका स्थान बदलनेसे अर्थ बदल (कभी-कभी तो पूर्णतः उलटा हो) जाता है। इसका सर्वोत्तम उदाहरण चीनी है। यों हिंदी, अंग्रेज़ी आदि आधुनिक आर्य भाषाओंमें भी यह प्रवृत्ति कुछ-कुछ मिलती है। अंग्रेज़ीका एक उदाहरण है :--zaid killed amar.

ज़ैदने अमरको मारा।

amar killed zard अमरने ज़ैदको मारा (यहाँ शब्दके स्थान-परिवर्तनसे वाक्य-

का अर्थ उलट गया)।

चीनीमें तो यह प्रवृत्ति विशेष रूपसे मिलती है—

पा ताङ् शेन = पा शेनको मारता है।

शेन ताङ् पा = शेन पाको मारता है।

अंग्रेज़ीमें सामान्यतः कर्त्ता, क्रिया और तब कर्म आता है, किंतु प्रश्नवाचक वाक्यमें क्रियाका कुछ अंश पहले ही आ जाता है। विशेषण संज्ञाके पहले आता है और क्रिया-विशेषण क्रियाके बादमें। हिन्दीमें कर्त्ता, कर्म और तब क्रिया रखते हैं। सामान्यतः विशेषण संज्ञाके पूर्व तथा क्रिया-विशेषण क्रियाके पूर्व रखते हैं। चीनीमें अंग्रेज़ीकी भाँति कर्त्ताके बाद क्रिया और तब कर्म रखते हैं। यद्यपि इसकी कुछ बोलियोंमें कर्म पहले भी आ जाता है। विशेषण और क्रिया-विशेषण हिन्दीकी भाँति प्रायः संज्ञा और क्रियाके पूर्व आते हैं। प्रश्नवाचक शब्द (जैसे क्या) अंग्रेज़ी तथा हिन्दीमें वाक्यके आरम्भमें आते हैं पर चीनीमें वाक्यके अन्तमें। उदाहरणार्थ :—

फ़ान त्स ल मा ?

खाना खा लिया क्या ?

किसी भी भाषाके शब्दोंके स्थानकी निश्चितताके ये नियम पूर्णतः निरपवाद नहीं होते। यहाँतक कि इस प्रकारकी प्रधान भाषा चीनीमें भी नहीं। ऊपरका चीनी वाक्य इस प्रकार भी कहा जा सकता है—

त्स फ़ान ल मा ?

खा खाना लिया क्या ? = खाना खा लिया क्या ?

बल देनेके लिए पद-क्रम-प्रधान भाषाओंमें भी पदक्रममें प्रायः परिवर्तन ला देते हैं। उदाहरणार्थ हिन्दीमें सामान्यतः कहेंगे 'मैं घर जा रहा हूँ' किन्तु बल देनेके लिए 'घर जा रहा हूँ मैं' या 'जा रहा हूँ घर मैं' आदि भी कहते हैं। (दे०) **वाक्यमें वाक्यकी आवश्यकताएँ** उपशीर्षक।

पदक्रम-प्रधान भाषा—ऐसी भाषा, जिसमें वाक्यमें पदों या शब्दोंका क्रम प्रायः निश्चित होता है। चीनी इसी प्रकारकी भाषा है। (दे०) **पदक्रम**।

पदतत्त्व—**रूपग्राम** (दे०) का एक अन्य नाम।

पद-परिचय—**पद-व्याख्या** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

पद-लोप—वाक्यमें किसी पद रूप या शब्दका लुप्त हो जाना। कविताकी भाषामें प्रायः वाक्यके सभी पदोंको न देकर कुछको छोड़ देते हैं। पदके लुप्त हो जानेसे यदि अर्थ समझनेमें कठिनाई हो तो इसे **न्यूनपददोष** नामसे एक दोष मानते हैं, यदि कठिनाई न हो तो इसे दोष नहीं माना जाता।

वाक्यमें जब आवश्यक सभी पद तथा सहायक शब्द (परसर्ग, संयोजक तथा सहायक क्रिया आदि) हों तो वह पूर्ण वैयाकरणिक वाक्य होता है, किन्तु प्रायः ऐसा भी देखा जाता है कि इनमें एक या अधिककी कमी भी होती है। वाक्यके अध्ययनमें यह भी देखा जाता है कि किस भाषामें किस प्रकारके लोपकी प्रवृत्ति अधिक है। कुछ दिन पूर्व तक हिन्दीमें 'मैं आज नहीं जा रहा हूँ' कहते रहे हैं, किन्तु अब 'मैं आज नहीं जा रहा' कहनेकी प्रवृत्ति बढ़ रही है, यों 'आज नहीं जा रहा' कहकर भी काम चला लेते हैं। इसमें 'मैं' और 'हूँ' का लोप हो गया है। इस प्रकारके वाक्य पदलोपी **वाक्य** कहलाते हैं।

राम—क्या तुम जाओगे ?

मोहन—हाँ।

यहाँ मोहनका 'हाँ' वाक्य तो है किन्तु व्याकरणकी दृष्टिसे वह पदलोपी वाक्य है इसका पूरा रूप या भाव है 'हाँ, मैं जाऊँगा'। इस तरह बातचीतमें प्रायः पदलोपी वाक्यों-का प्रयोग होता है। किसी प्रश्नका उत्तर भी (हाँ, नहीं, ज़रूर, क्यों नहीं) प्रायः पदलोपी वाक्य होता है।

पदलोपी वाक्य—(दे०) **पद-लोप**।

पदव (padaw)—**पदांग** (दे०) का एक अन्य नाम।

पद-व्याख्या—वाक्यसे अलग स्वतंत्र रूपमें

रखे गये शब्द 'शब्द' कहे जाते हैं, पर जब उन्हें वाक्यमें रख देते हैं तो उनका नाम 'पद' हो जाता है। पदोंके विषयमें उनके प्रकार, वचन, लिंग या अन्य पदोंके साथ उनका संबंध आदिका वर्णन ही **पद-व्याख्या, शब्द-निरुक्ति** या **पद-परिचय** आदि कहलाता है। पद-व्याख्या करते समय किस शब्द-भेदके बारेमें कौन-कौनसी बातें प्रमुखतः बतलायी जानी चाहिये, यह नीचे दिया जा रहा है––**संज्ञा**––(१) भेद या प्रकार (व्यक्तिवाचक, जातिवाचक आदि), (२) लिंग (पुल्लिग, स्त्रीलिंग, नपुंसक लिंग आदि), (३) वचन (एकवचन या बहुवचन), (४) कारक (कर्त्ता आदि किस कारकमें), (५) वाक्यके निकटतम महत्त्वपूर्ण शब्दोंसे संबंध (जैसे किस क्रियाका कर्त्ता या कर्म है ? 'रामका भाई मोहन'-में 'राम'के पद-परिचयमें यह बतलाना कि 'का भाई'के साथ 'मोहन'की विशेषता बतलाता है, आदि)। **सर्वनाम**––(१) भेद या प्रकार, (२) लिंग, (३) वचन, (४) पुरुष (उत्तम, मध्यम आदि), (५) कारक, (६) वाक्यके निकटतम महत्त्वपूर्ण शब्दोंके साथ संबंध, (७) (यदि ज्ञात हो तो) किस संज्ञाके लिए प्रयुक्त। **विशेषण**––(१) प्रकार, (२) किस विशेष्यका विशेषण, (३) लिंग, (४) वचन। **क्रिया**––(१) प्रकार (सकर्मक-अकर्मक), (२) वाच्य, (३) काल, (४) अर्थ, (५) पुरुष, (६) लिंग, (७) वचन, (८) किस कर्त्ताकी क्रिया, (९) यदि क्रिया संयुक्त है तो 'मूल' और 'सहायक' क्रिया आदिका निर्देशन तथा मूल क्रियाके कृदन्तका उल्लेख। **क्रिया-विशेषण**––(१) प्रकार, (२) जिस क्रिया, विशेषण या क्रिया-विशेषणकी विशेषता बतलाता है, उसका उल्लेख। **संबंध बोधक**––(१) इस बातका उल्लेख कि संबंध बोधक है, (२) किनका संबंध बतलाता है। **समुच्चय बोधक**––(१) इस बातका उल्लेख कि समुच्चय बोधक है, (२) संयोजक, वियोजक आदि किस प्रकारका है, (३) किन दो शब्दों, वाक्यों या वाक्यांशोंको जोड़ता है। **विस्मयादिबोधक**––(१) इस बातका उल्लेख कि विस्मयादिबोधक है, (२) हर्ष, विस्मय, शोक आदि किस भावको प्रकट करता है। प्रयोगकी दृष्टिसे एक वाक्य लेकर उसकी पद व्याख्या यहाँ देखी जा सकती है। वाक्य है––'मैं पैंसिलसे कापीपर लिखता हूँ'। इसकी पद-व्याख्या निम्नांकित ढंगसे की जायगी **मैं**––सर्वनाम, पुरुषवाचक, पुल्लिग, एकवचन, उत्तमपुरुष, कर्त्ता कारक, 'लिखता हूँ' क्रियाका कर्त्ता। **पैंसिलसे**––संज्ञा, जातिवाचक, स्त्रीलिंग, एकवचन, करण कारक, 'लिखता हूँ' क्रियासे संबंधित, 'से' करण कारकका चिह्न। **कापीपर**––संज्ञा, जातिवाचक, स्त्रीलिंग, एकवचन, अधिकरण कारक, 'लिखता हूँ' क्रियासे संबंधित। 'पर' अधिकरण कारकका चिह्न। 'कापी'से 'लिखे जाने'का संबंध प्रकट करता है। **लिखता हूँ**––क्रिया, सकर्मक, कर्तृवाच्य, सामान्य वर्तमान, निश्चयार्थ, उत्तम पुरुष, पुल्लिग, एकवचन, 'मैं' कर्त्ताकी क्रिया। संयुक्त क्रिया, मूल क्रिया 'लिखता' है, जो 'लिख' धातुका वर्तमान कालिक कृदन्त है। सहायक क्रिया 'हूँ' है, जो 'हो' धातुका सामान्य वर्तमान, एकवचन, उत्तम पुरुष रूप है।

पदश्रेणी––**रूपग्राम** (दे०)का एक अन्य नाम।

पदांत––किसी पद या शब्दकी अंतिम ध्वनि।

पदात्मक वर्गीकरण––**आकृतिमूलक वर्गीकरण** (दे०)का एक अन्य नाम।

पदार्थबोधक संज्ञा––(दे०) **पदार्थवाचक संज्ञा**।

पदार्थवाचक संज्ञा––(दे०) **संज्ञा**।

पदाश्रित वर्गीकरण––**आकृतिमूलक वर्गीकरण** (दे०)का एक अन्य नाम।

पदौंग (padoung)––**करेन** (दे०)की, बर्मामें प्रयुक्त एक बोली। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १३,७४३ थी।

पनिआ (pania)––**मलयालम** (दे०)का

एक अन्य नाम। वस्तुतः यह एक मद्रासी जातिका नाम है, जो एक प्रकारके विकृत 'मलयालंम' का प्रयोग करती है।

पनो (pano)––**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)-का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इस परिवारमें लगभग ४३ भाषाएँ हैं। जिनमें प्रमुख **कुलिनो, मयोरुना, कपनहुआ, कटुकिना, कशिबो, अमहुअक, यमिनव, शिपिनउअ, इटुकले, मपरिना, अरसइरे, यमिअका, अरौआ, पकगुअरा, करिपुना** आदि हैं। इस परिवारका क्षेत्र पूर्वी तथा दक्षिणी पेरू, उत्तरी बोलीविया तथा दक्षिणी ब्राज़ील है।

पपगो (papago)––**अपर पीमा** (दे०) भाषाकी एक उप-भाषा।

पपबुको (papabuko)––मध्य अमेरिकाके **ज़पोटेक** (दे०) परिवारकी एक भाषा।

पपुआ परिवार––आस्ट्रिक परिवारकी मलय-पालिनेशियन शाखाका एक वर्ग, जो प्रायः परिवार कहा जाता है। यह न्युगिनीके समीपके छोटे-छोटे द्वीपोंमें फैला है। इसकी भाषाएँ अश्लिष्ट-योगात्मक हैं। पद बनानेके लिए उपसर्ग और प्रत्यय दोनों हीका प्रयोग होता है। मफ़ोर भाषामें––स्नफ़ = सुनना। जम्नफ़ = मैं सुनता हूँ। जम्नफ़उ = मैं तेरी बात सुनता हूँ। बहुवचनके लिए––'सी' प्रत्यय लगाया जाता है। मफोरमें––स्नून = आदमी। स्नूनसी = कई आदमी। इसकी **मफ़ोर** भाषा ही प्रसिद्ध है और उसीका अध्ययन अबतक हो सका है। यह न्यूगिनीकी प्रधान भाषा है। न्यूगिनीमें ही एक **तोआरिपि** भाषा भी बोली जाती है। यों पपुआ या पापुअनमें कुल छोटी-मोटी १३२ भाषाएँ हैं।

पमना (pamana)––दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा।

पमरी (pammari)––दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा।

पमे (pame)––मध्य अमेरिकाके **ओटोमि** (दे०) परिवारकी एक भाषा।

पयगुआ (payagua)––**गुअयकुरु** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

पया (paya)––**केन्द्रीय अमरीकी वर्ग** (दे०)-का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इस परिवारकी मुख्य भाषाका नाम भी यही है।

परंपरागत प्रतिलेखन (traditional transcription)––लिखनेका परंपरागत ढंग, जिसमें उच्चारणपर ध्यान न देकर परंपरागत वर्तनी (traditional spelling) पर ही ध्यान दिया जाता है। know, write, कृष्ण आदि परंपरागत प्रतिलेखनके उदाहरण हैं। वस्तुतः अब इनको इस रूपमें नहीं बोला जाता। (दे०) **ध्वन्यात्मक प्रतिलेखन**।

परंपरागत बलाघात––**बलाघात** (दे०)का एक भेद।

परकंठ्य (post-velar) कंठके कुछ और आगेसे उच्चरित (व्यंजन)।

परगह्वर (coda)––**अक्षर** (दे०)में **शीर्ष** (दे०)के बादका **गह्वर** (दे०)।

परतंत्र संबंधसूचक अव्यय––(दे०) **संबंधसूचक अव्यय**।

परदेसी (pardesi)––**अवधी** (दे०)का चांदा तथा मध्यभारतमें, प्रयुक्त एक नाम।

परन (paran)––**कचिन** (दे०)का एक दूसरा नाम।

परप्रत्ययप्रधान––**अन्तः योगात्मक** (दे०)का एक अन्य नाम।

परभी (parbhi)––परिनिष्ठित **कोंकणी** (दे०)का, बंबईसे दमनतक प्रयुक्त होनेवाला एक रूप। इसके **दमणी** तथा **कायस्थी** नाम भी मिलते हैं। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग १,६०,००० थी।

परम प्रकृति––मूल शब्द या बिल्कुल मूल शब्द, जिससे बननेवाले शब्द भी प्रायः मूल शब्द माने जाते हों। इस प्रकार यह मूल शब्दका भी मूल शब्द या प्रकृतिकी भी प्रकृति है।

पररूप––(१) किसी शब्द, रूप या ध्वनिका परिवर्तित या विकसित रूप। परिवर्तित या विकसित रूपसे पहलेका रूप **पूर्वरूप** कहलाता

है। उदाहरणार्थ 'गृह' विकसित होकर 'घर' हुआ है। इन दोनोंमें 'गृह' पूर्वरूप तथा 'घर' पररूप है। पूर्वरूप दिखानेके लिए ∠ चिह्न-का तथा पररूप दिखानेके लिए 7 चिह्न-का प्रयोग होता है। संस्कृतमें इन दोनोंका प्रयोग कुछ अन्य अर्थोंमें होता था। (२) संधिमें जब दो स्वरोंके मिलनेपर पूर्ववर्ती स्वरका एक प्रकारसे लोप हो जाय तथा पूर्ववर्ती और परवर्ती दोनों स्वरोंके स्थान-पर केवल परवर्ती स्वर रह जाय, तो उसे पररूप कहते हैं। जैसे प्र + एजते = प्रेजते। पाणिनि कहते हैं : 'एङि पररूपम्' (अष्टा-ध्यायी ६.१.९४)। इसके विरुद्ध यदि दोनों-के स्थानपर पूर्ववर्ती स्वर रह जाय तो उसे **पूर्वरूप** कहते हैं। संधियोंमें कभी-कभी यह भी होता है।

परव (parava)--तुलू (दे०) का एक अन्य नाम। परव जातिमें प्रयुक्त होनेके कारण यह नाम पड़ा है।

परवर्ती एलामाइट लिपि---**एलामाइट लिपि** (दे०) का एक प्रकार।

परवर्ती हिब्रू लिपि--हिब्रू भाषाके लिए पर-वर्तीकालमें प्रयुक्त लिपि। (दे०) **हिब्रू-लिपि**। इसकी उत्पत्ति आरमेइक लिपिसे हुई है। परवर्ती हिब्रू लिपिसे ही आधुनिक हिब्रू लिपि निकली है। आधुनिक हिब्रू लिपिमें २२ वर्ण हैं, जो सभी व्यंजन हैं। इस प्रकार यह पूर्णतः व्यंजनात्मक लिपि है। स्वरोंका काम विशिष्ट चिह्नों (diacritical marks) आदिसे चलाया जाता है।

परवारी (parvari)—**माहारी** (दे०) का एक नाम। वस्तुतः यह माहारी-भाषी जाति-का नाम है।

परश्रुति (off glide)—(दे०) **ध्वनियों-का वर्गीकरण** शीर्षकमें **श्रुति** उपशीर्षक। परश्रुतिको **अंत्यश्रुति** (final glide) भी कहते हैं।

परसर्ग—(दे०) **संबंधसूचक अव्यय**।

परस्थ अव्यय—(दे०) **संबंधसूचक अव्यय**।

परस्पर संबद्ध समुच्चय बोधक (correlative conjuntion)--समुच्चयबोधक दो शब्दोंका युग्म, जो एक दूसरेके पूरकके रूप-में वाक्यमें काम करें। जैसे, जो... सो; अंग्रेजीमें either .... or।

परस्मैपद--(दे०) **धातु** तथा **पद**।

परांग--**परगह्वर** (दे०) का एक अन्य नाम।

पराची (parachi)--अफ़गानिस्तानमें प्रयु-क्त **ओर्मुड़ी** (दे०) से संबद्ध एक ईरानी भाषा।

परिअह (pariah)---**तमिल** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

परिणामदर्शक अपव्यय--(दे०) **समुच्चय-बोधक अव्यय**।

परिमाणवाचक क्रियाविशेषण उपवाक्य--(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उप-शीर्षक।

परिणामी उपवाक्य (consequence clause)--**प्रतिबंधात्मक वाक्य** (दे०) में वह उपवाक्य, जो प्रतिबंध या शर्तका परिणाम द्योतित करता है। जैसे--'यदि वह आया तो मैं जाऊँगा' में 'मैं जाऊँगा'। इसे **परि-णामी वाक्यांश** भी कहते हैं।

परिणामी वाक्यांश --(दे०) **परिणामी उप-वाक्य**।

परिनिष्ठित (standard)--आदर्श या सर्वमान्य। जैसे परिनिष्ठित भाषा या परि-निष्ठित रूप। उदाहरणके लिए, 'करा'-की तुलनामें 'किया' अनियमित होते हुए भी परिनिष्ठित रूप है। संस्कृत व्याकरणोंमें इस शब्दका प्रयोग इस अर्थमें न होकर अन्य अर्थमें होता था।

परिनिष्ठित भाषा (standard language)--भाषाका वह रूप, जो स्थान विशेषमें परिनिष्ठित या आदर्श माना जाता हो। इसे **आदर्श भाषा** भी कहते हैं। (दे०) **भाषाके विविध रूप**।

परिपन्न संधि--(दे०) **संधि**।

परिपूरक वितरण (complementary distribution) --**ध्वनिग्राम विज्ञान** (दे०) में प्रयुक्त एक पारिभाषिक शब्द।

परिमाण––मात्रा (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

परिमाणबोधक विशेषण––(दे०) **विशेषण** ।

परिमाणवाचक क्रिया विशेषण––(दे०)**क्रिया विशेषण** ।

परिमाणवाचक विशेषण––(दे०) **विशेषण** ।

परिमाणसूचक विशेषण––(दे०) **विशेषण** ।

परिमित क्रिया(finite verb)––ऐसी क्रिया, जो पुरुष, वचन आदिकी दृष्टिसे परिमित या सीमित हो गयी हो । हर **समापिका क्रिया** (दे०) इसी प्रकारकी होती है । कर्त्ता या कर्मके कारण वह सीमित हो जाती है । इसके विरुद्ध **अपरिमित क्रिया** (दे०)में यह बात नहीं होती ।

परिरी (pariri)––करिब(दे०)परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

परिलोप––लोपके लिए प्रयुक्त एक प्राचीन पारिभाषिक शब्द ।

परिवार––(दे०) **भाषा-परिवार** ।

परिस्थिति (context)––किसी ध्वनि या शब्द आदिके पूर्व या बादकी ध्वनि या शब्द आदि । परिस्थितिका ध्वनिके उच्चारण या शब्दके अर्थ आदिपर प्रभाव पड़ता है ।

परिस्थितिजन्य ध्वनि-परिवर्तन––एक प्रकारका **ध्वनि-परिवर्तन** (दे०) ।

परुष शब्द––(दे०) **कठोर शब्द** ।

परेसी (paressi)––दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा । इसका क्षेत्र उत्तरी आमेज़न है ।

परोक्ष उल्लेखसूचक सर्वनाम––(दे०) **सर्वनाम** ।

परोक्षभूत––(१) ऐसा भूतकाल, जो बहुत पहले घटित हुआ हो । इसका शाब्दिक अर्थ है, 'जो आँखोंके सामने या प्रत्यक्ष न घटित हुआ हो ।' (२) **लिट्‌लकार** (दे०)-के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

परोक्ष विधि––(दे०) **काल** ।

परोक्षा––**लिट्‌लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

परोद्‌भूत ध्वनि-परिवर्तन––एक प्रकारका **ध्वनिपरिवर्तन** (दे०) ।

पर्जी (parji)––**गोंडी** (दे०)की, बस्तर तथा उत्तरी मद्रासमें प्रयुक्त, एक बोली । प्रमुखतः यह 'परज' जाति द्वारा बोली जाती है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १७,३८७ थी ।

पर्वतिया––**नैपाली** (दे०) या **पूर्वी पहाड़ी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

पर्मिअन (permian)––**यूराल-अल्टाई** (द्रे०) परिवारकी एक शाखा, जिसमें **वोत्यक** और **ज़ाइरीन** भाषाएँ हैं ।

पर्याप्तिवाचक क्रिया विशेषण––(दे०) **क्रिया विशेषण** ।

पर्याय––समानार्थी शब्द । (दे०) **पर्यायवाची शब्द** ।

पर्यायवाची शब्द––ऐसे शब्द, जिनके अर्थ एकसे या मिलते-जुलते हों । जैसे, पानी-नीर, अंबु आदि । प्रायः पर्यायवाची शब्दोंको लोग ऐसा शब्द मानते हैं, जिनका अर्थ एक हो, किंतु कुछ अपवादोंको छोड़कर, वास्तविकता यह है कि किसी भी जीवित भाषामें ठीक एक अर्थके एकसे अधिक शब्द नहीं होते । दो पर्याय समझे जानेवाले शब्दोंमें भी प्रायः किसी-न-किसी स्तरपर कुछ-न-कुछ अंतर अवश्य होता है । इसके कई प्रकारके उदाहरण लिये जा सकते हैं । 'राधा-रमण' और 'कंसनिकंदन' दोनों एक दूसरेके पर्याय हैं, किंतु इसका अर्थ बिलकुल एक नहीं है । प्रयोगकी दृष्टिसे दोनोंका एक स्थानपर प्रयोग नहीं हो सकता । उदाहरणके लिए 'हे राधारमण ! उस दुष्टसे मेरी रक्षा करो' कहनेकी अपेक्षा 'हे कंसनिकंदन ! उस दुष्टसे मेरी रक्षा करो' कहना अधिक उपयुक्त होगा । रक्षा करनेके प्रसंगमें 'रमण करने वाले कृष्ण'की अपेक्षा 'कंसके मारनेवाले कृष्ण'को पुकारना अधिक समीचीन है । इसी प्रकार अन्य शब्दोंके संबंधमें भी देखा जा सकता है । यहाँ शब्दों-के यथार्थ अर्थपर ध्यान देनेसे अंतर मालूम

है। उदाहरणार्थ 'गृह' विकसित होकर 'घर' हुआ है। इन दोनोंमें 'गृह' पूर्वरूप तथा 'घर' पररूप है। पूर्वरूप दिखानेके लिए ∠ चिह्न-का तथा पररूप दिखानेके लिए 7 चिह्न-का प्रयोग होता है। संस्कृतमें इन दोनोंका प्रयोग कुछ अन्य अर्थोंमें होता था। (२) संधिमें जब दो स्वरोंके मिलनेपर पूर्ववर्ती स्वरका एक प्रकारसे लोप हो जाय तथा पूर्ववर्ती और परवर्ती दोनों स्वरोंके स्थान-पर केवल परवर्ती स्वर रह जाय, तो उसे पररूप कहते हैं। जैसे प्र + एजते = प्रेजते। पाणिनि कहते हैं: 'एङि पररूपम्' (अष्टा-ध्यायी ६.१.९४)। इसके विरुद्ध यदि दोनों-के स्थानपर पूर्ववर्ती स्वर रह जाय तो उसे **पूर्वरूप** कहते हैं। संधियोंमें कभी-कभी यह भी होता है।

परव (parava)—तुलू (दे०)का एक अन्य नाम। परव जातिमें प्रयुक्त होनेके कारण यह नाम पड़ा है।

परवर्ती एलामाइट लिपि—**एलामाइट लिपि** (दे०)का एक प्रकार।

परवर्ती हिब्रू लिपि—हिब्रू भाषाके लिए पर-वर्तीकालमें प्रयुक्त लिपि। (दे०) **हिब्रू-लिपि**। इसकी उत्पत्ति आरमेइक लिपिसे हुई है। परवर्ती हिब्रू लिपिसे ही आधुनिक हिब्रू लिपि निकली है। आधुनिक हिब्रू लिपिमें २२ वर्ण हैं, जो सभी व्यंजन हैं। इस प्रकार यह पूर्णतः व्यंजनात्मक लिपि है। स्वरोंका काम विशिष्ट चिह्नों (diacritical marks) आदिसे चलाया जाता है।

परवारी (parvari)—**माहारी** (दे०)का एक नाम। वस्तुतः यह माहारी-भाषी जाति-का नाम है।

परश्रुति (off glide)—(दे०) **ध्वनियों-का वर्गीकरण शीर्षकमें श्रुति उपशीर्षक**। परश्रुतिको **अंत्यश्रुति** (final glide) भी कहते हैं।

परसर्ग—(दे०) **संबंधसूचक अव्यय**।

परस्थ अव्यय—(दे०) **संबंधसूचक अव्यय**।

परस्पर संबद्ध समुच्चय बोधक (correlative conjuntion)—समुच्चयबोधक दो शब्दोंका युग्म, जो एक दूसरेके पूरकके रूप-में वाक्यमें काम करें। जैसे, जो ... सो; अंग्रेज़ीमें either .... or।

परस्मैपद—(दे०) **धातु** तथा **पद**।

परांग—**परगह्वर** (दे०)का एक अन्य नाम।

पराची (parachi)—अफ़गानिस्तानमें प्रयु-क्त **ओर्मुड़ी** (दे०)से संबद्ध एक इरानी भाषा।

परिअह (pariah)—**तमिल** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

परिणामदर्शक अपव्यय—(दे०) **समुच्चय-बोधक अव्यय**।

परिमाणवाचक क्रियाविशेषण उपवाक्य—(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उप-शीर्षक।

परिणामी उपवाक्य (consequence clause)—**प्रतिबंधात्मक वाक्य** (दे०)में वह उपवाक्य, जो प्रतिबंध या शर्तका परिणाम द्योतित करता है। जैसे—'यदि वह आया तो मैं जाऊँगा' में 'मैं जाऊँगा'। इसे **परि-णामी वाक्यांश** भी कहते हैं।

परिणामी वाक्यांश—(दे०) **परिणामी उप-वाक्य**।

परिनिष्ठित (standard)—आदर्श या सर्वमान्य। जैसे परिनिष्ठित भाषा या परि-निष्ठित रूप। उदाहरणके लिए, 'करा'-की तुलनामें 'किया' अनियमित होते हुए भी परिनिष्ठित रूप है। संस्कृत व्याकरणोंमें इस शब्दका प्रयोग इस अर्थमें न होकर अन्य अर्थमें होता था।

परिनिष्ठित भाषा (standard language)—भाषाका वह रूप, जो स्थान विशेषमें परिनिष्ठित या आदर्श माना जाता हो। इसे **आदर्श भाषा** भी कहते हैं। (दे०) **भाषाके विविध रूप**।

परिपन्न संधि—(दे०) **संधि**।

परिपूरक वितरण (complementary distribution)—**ध्वनिग्राम विज्ञान** (दे०)में प्रयुक्त एक पारिभाषिक शब्द।

परिमाण--मात्रा (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

परिमाणबोधक विशेषण--(दे०) **विशेषण** ।

परिमाणवाचक क्रिया विशेषण--(दे०)**क्रिया विशेषण** ।

परिमाणवाचक विशेषण--(दे०) **विशेषण** ।

परिमाणसूचक विशेषण--(दे०) **विशेषण** ।

परिमित क्रिया (finite verb)--ऐसी क्रिया, जो पुरुष, वचन आदिकी दृष्टिसे परिमित या सीमित हो गयी हो । हर **समापिका क्रिया** (दे०) इसी प्रकारकी होती है । कर्त्ता या कर्मके कारण वह सीमित हो जाती है । इसके विरुद्ध **अपरिमित क्रिया** (दे०)में यह बात नहीं होती ।

परिरी (pariri)--**करिब** (दे०)परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

परिलोप--लोपके लिए प्रयुक्त एक प्राचीन पारिभाषिक शब्द ।

परिवार--(दे०) **भाषा-परिवार** ।

परिस्थिति (context)--किसी ध्वनि या शब्द आदिके पूर्व या बादकी ध्वनि या शब्द आदि । परिस्थितिका ध्वनिके उच्चारण या शब्दके अर्थ आदिपर प्रभाव पड़ता है ।

परिस्थितिजन्य ध्वनि-परिवर्तन--एक प्रकारका **ध्वनि-परिवर्तन** (दे०) ।

परुष शब्द--(दे०) **कठोर शब्द** ।

परेसी (paressi)--दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा । इसका क्षेत्र उत्तरी आमेजन है ।

परोक्ष उल्लेखसूचक सर्वनाम--(दे०) **सर्वनाम** ।

परोक्षभूत--(१) ऐसा भूतकाल, जो बहुत पहले घटित हुआ हो । इसका शाब्दिक अर्थ है, 'जो आँखोंके सामने या प्रत्यक्ष न घटित हुआ हो ।' (२) **लिट्लकार** (दे०)-के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

परोक्ष विधि--(दे०) **काल** ।

परोक्षा--**लिट्लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

परोद्भूत ध्वनि-परिवर्तन--एक प्रकारका **ध्वनिपरिवर्तन** (दे०) ।

पर्जी (parji)--**गोंडी** (दे०)की, बस्तर तथा उत्तरी मद्रासमें प्रयुक्त, एक बोली । प्रमुखतः यह 'परज' जाति द्वारा बोली जाती है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १७,३८७ थी ।

पर्बतिया--**नैपाली** (दे०) या **पूर्वी पहाड़ी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

पर्मिअन (permian)--**यूराल-अल्टाई** (द्रे०) परिवारकी एक शाखा, जिसमें **वोत्यक** और **जाइरीन** भाषाएँ हैं ।

पर्याप्तिवाचक क्रिया विशेषण--(दे०) **क्रिया विशेषण** ।

पर्याय--समानार्थी शब्द । (दे०) **पर्यायवाची शब्द** ।

पर्यायवाची शब्द--ऐसे शब्द, जिनके अर्थ एकसे या मिलते-जुलते हों । जैसे, पानी-नीर, अंबु आदि । प्रायः पर्यायवाची शब्दोंको लोग ऐसा शब्द मानते हैं, जिनका अर्थ एक हो, किंतु कुछ अपवादोंको छोड़कर, वास्तविकता यह है कि किसी भी जीवित भाषामें ठीक एक अर्थके एकसे अधिक शब्द नहीं होते । दो पर्याय समझे जानेवाले शब्दोंमें भी प्रायः किसी-न-किसी स्तरपर कुछ-न-कुछ अंतर अवश्य होता है । इसके कई प्रकारके उदाहरण लिये जा सकते हैं । 'राधा-रमण' और 'कंसनिकंदन' दोनों एक दूसरेके पर्याय हैं, किंतु इसका अर्थ बिलकुल एक नहीं है । प्रयोगकी दृष्टिसे दोनोंका एक स्थानपर प्रयोग नहीं हो सकता । उदाहरणके लिए 'हे राधारमण ! उस दुष्टसे मेरी रक्षा करो' कहनेकी अपेक्षा 'हे कंसनिकंदन ! उस दुष्टसे मेरी रक्षा करो' कहना अधिक उपयुक्त होगा । रक्षा करनेके प्रसंगमें 'रमण करने वाले कृष्ण'की अपेक्षा 'कंसके मारनेवाले कृष्ण'को पुकारना अधिक समीचीन है । इसी प्रकार अन्य शब्दोंके संबंधमें भी देखा जा सकता है । यहाँ शब्दोंके यथार्थ अर्थपर ध्यान देनेसे अंतर मालूम

हुआ । कुछ पर्याय ऐसे भी होते हैं, जिनमें अंतर इस प्रकार नहीं ज्ञात किया जा सकता उदाहरणके लिए 'जलज' और 'नीरज' दो शब्द लें । दोनोंका ही अर्थ पानीसे जन्मनेवाला अर्थात् 'कमल' है, किंतु इन दोनोंमें भी, इनकी ध्वनिको देखते हुए अंतर किया जा सकता है । 'जलज' अपेक्षाकृत अधिक कोमल, पारदर्शी और प्रिय ज्ञात होता है । नीरजमें 'न' अक्षरने इसकी कोमलता और पारदर्शिता नष्ट कर दी है। कविवर सुमित्रानन्दन पंतने 'पल्लव'की भूमिकामें कुछ शब्दोंके पर्यायोंको लेकर इस दृष्टिसे बड़ा सुंदर विवेचन किया है । यहाँ उसका कुछ अंश देखा जा सकता है—"भिन्न-भिन्न पर्यायवाची शब्द, प्रायः संगीत-भेदके कारण, एक ही पदार्थके भिन्न-भिन्न स्वरूपोंको प्रकट करते हैं । जैसे, 'भ्रू' से क्रोधकी वक्रता,'भृकुटि'से कटाक्षकी चंचलता, 'भौंहों'से स्वाभाविक प्रसन्नता, ऋजुताका हृदयमें अनुभव होता है। ऐसे ही 'हिलोर'में उठान, 'लहर'में सलिलके वक्षःस्थलका कोमलकम्पन,'तरंग'में लहरोंके समूहका एक दूसरेको धकेलना, उठकर गिर पड़ना, 'बढ़ो-बढ़ो' कहनेका शब्द मिलता है; 'वीचि'से जैसे किरणोंमें चमकती, हवाके पलनेमें हौले-हौले झूलती हुई हँसमुख लहरियोंका, 'ऊर्मि'से मधुर मुखरित हिलोरोंका, हिल्लोल-कल्लोलसे ऊँची बाहें उठाती हुई उत्पातपूर्ण तरंगोंका आभास मिलता है । 'पंख' शब्दमें केवल फड़क ही मिलती है, उड़ानके लिए भारी लगता है ; जैसे किसीने पक्षीके पंखोंमें शीशेका टुकड़ा बाँध दिया हो, वह छटपटाकर बार-बार नीचे गिर पड़ता हो; अंग्रेज़ीका 'wing' जैसे उड़ानका जीता-जागता चित्र है । उसी तरह 'touch'में जो छूनेकी कोमलता है, वह 'स्पर्श'में नहीं मिलती । 'स्पर्श', जैसे प्रेमिकाके अंगोंका अचानक स्पर्श पाकर हृदयमें जो रोमांच हो उठता है, उसका चित्र है; ब्रज-भाषाके 'परस'में छूनेकी कोमलता अधिक विद्यमान है; 'joy'से जिस प्रकार मुँह भर जाता है, 'हर्ष'से उसी प्रकार आनन्दका विद्युत-स्फुरण प्रकट होता है । अंग्रेजीके 'air' में एक प्रकारकी transparancy मिलती है, मानो इसके द्वारा दूसरी ओरकी वस्तु दिखाई पड़ती हो; 'अनिल'से एक प्रकारकी कोमल शीतलताका अनुभव होता है, जैसे खसकी टट्टीसे छनकर आ रही हो,'वायु' में निर्मलता तो है ही, लचीलापन भी है । यह शब्द रबरके फीतेकी तरह खिच कर फिर अपने ही स्थानपर आ जाता है,'प्रभंजन' 'wind' की तरह शब्द करता, बालूके कण और पत्तोंको उड़ाता हुआ बहता है, 'श्वसन'की सनसनाहट छिप नहीं सकती, 'पवन' शब्द मुझे ऐसा लगता है, जैसे हवा रुक गयी हो । 'प' और 'न' की दीवारोंसे घिर-सा जाता है, 'समीर' लहराता हुआ बहता है ।" पंतजीने यह विचार कविताकी दृष्टिसे किया है । किंतु यह बात केवल कवितातक ही सीमित नहीं । गद्यकार भी यदि इस प्रकार शब्दोंको परखनेका ध्यान रखे तो उसका गद्य अधिक सुंदर हो सकता है । उर्दूके हास्यरसावतार कथाकार श्री अज़ीम बेग चगताईने 'थप्पड़'के एक पर्यायको अपनी एक कहानीमें प्रयुक्त करनेके पूर्व उसके पर्यायोंकी ध्वनिका विश्लेषण किया है । वह मनोरंजक विश्लेषण भी पर्यायोंकी आत्मा और ध्वनिकी परखके लिए यहाँ अंगुलि-निर्देश कर सकता है । वे कहते हैं : "पंजाबसे दक्खिनतक अगर हाथको किसीके गालपर मारा जाय या गाल किसीके हाथपर मारा जाय, तो कहा जाता है कि 'चाँटा मारा' या 'चाँटा पड़ा' । 'चाँटे'का शब्द बहुत प्रचलित है । 'थप्पड़' भी प्रचलित है, लेकिन इन शब्दोंके पर्यायवाची जितने भी शब्द युक्तप्रान्त या दूसरे प्रान्तोंमें बोले और इस्तेमाल किये जाते हैं, उनके उच्चारणकी साइकालोजी (मनोवृत्ति) पर गौर करनेसे पता चलता है कि चाँटेके अगणित भेद हो सकते हैं।' लोगोंने आवाजके मुताबिक अलग-अलग नाम भी

रख लिये हैं। 'चाँटा' वह है, जो गुस्सेमें किसीके गालपर रसीद किया जाता है। इसके उच्चारणसे ही इसकी ध्वनि-व्यञ्जना प्रकट हो जाती है। यानी यह जरूरी है कि 'चाँटा' आवाजके साथ उतरे। इस आवाजमें एक चटाखेकी आवाज भी छिपी हुई है। 'थप्पड़' कभी 'चाँटे'की बराबरी या 'चाँटे'-के सदृश अर्थवाची नहीं हो सकता, क्योंकि 'थप्पड़'से चटाखेकी आवाज--वह आवाज, जिसका ताल्लुक सिर्फ उँगलियोंसे ही है--नहीं निकलती। 'थप्पड़' में अभागे गालपर हाथकी उँगलियोंके अलावा हथेलीका भी कुछ हिस्सा पड़ जाता है, जो आवाजकी कमनीयताको खो देता है, लेकिन चोट अवश्य ही करारी लगती है। गालपर एक थप्पड़में उँगलियोंके निशान पड़ना मुमकिन नहीं है, अतः प्रकट है कि 'थप्पड़' और 'चाँटे'-में जमीन-आसमानका फर्क है। 'चाँटे'-के जोड़का शब्द 'तमाँचा' है; मगर उसमें भी वह तेजी नहीं, जो 'चाँटे' में है। इसके अलावा 'तमाँचा' बराबरवालोंमें इस्तेमाल नहीं होता। आमतौरसे यह बड़ोंकी ओरसे छोटोंके लिए ही 'रिजर्व' रखा जाता है। थप्पड़को कहीं-कहीं लप्पड़ भी कहते हैं, परन्तु यह शब्द प्रवाहयुक्त नहीं है; मगर क्या किया जाय, जहाँपर मजबूरी यह हो कि एक तरफ तो गाल किसी मोटे आदमीका हो, तो दूसरी ओर हाथ भी मौलाना शौकत अलीका, जिसमें चरबी-की अधिकताने सुस्ती पैदा कर दी हो। मतलब यह कि इसी किस्मके और भी कितने शब्द हैं। इन्हीं शब्दोंमें-से एक बहुत ही मौजूं और चलता हुआ शब्द है 'ज़पाटा'। युक्त-प्रांतसे दक्षिण शायद भूपालकी तरफ़ बोला जाता है। इस भूपाली 'ज़पाटे' में बिजलीकी-सी गति और हद दर्जेकी तेजी मौजूद है। इसकी प्रचंडता वर्णनसे बाहर है। असलमें यह 'चाँटा' ही है, मगर बेहद तेज़ किस्म का। अपनी तेजी और प्रचंडताके कारण 'चाँटे' और 'तमाँचे'की चटाखेदार आवाज विशेष-कर 'ज़पाटे'का झन्नाटा अपना आतंक उत्पन्न कर देता है। इसलिए 'ज़पाटा' वह चाँटा है, जिसमें चाँटेकी सारी खतरनाक बारीकियाँ और उम्दगियाँ मौजूद हों और उनके अलावा बिजलीकी-सी तेजी भी हो।" इस प्रकार प्रायः पर्याय या समानार्थी समझे जानेवाले शब्द भी मात्र मिलते-जुलते अर्थ-वाले ही होते हैं, पूर्णतः एकार्थी नहीं। यदि किसी भाषामें, किसी शब्दके सारे प्रयोगोंमें-से इसे निकालकर, उसका कोई समानार्थी शब्द उन सभी स्थानोंपर रख दिया जाय और उन वाक्यों या संदर्भोंके अर्थमें किसी भी प्रकारका कोई अंतर न आवे, तब कहीं उन दोनों शब्दोंको पर्याय माना जा सकता है।

पर्बतिया--नैपाली (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

पलवी (palawi)--**बलायन** (दे०)भाषाका एक अन्य नाम।

पलायन (palain)--**बलायन** (दे०)भाषाका एक अन्य नाम।

पलिकुर-मारावन (palikur-marawan)-दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)-की एक भाषा।

पले (pale)--**पलौंग** (दे०)की एक उत्तरी शान स्टेटमें प्रयुक्त एक बोली। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या २६,५६७ थी।

पलेइक--एक प्राचीन भाषाका नाम। (दे०) **भारोपीय-एनाटोलियन परिवार**।

पलैंग (pallaing)--**चीनी परिवार** (दे०)-के कुकी-चिन वर्गकी एक दक्षिणी चिन भाषा। बर्मा-सर्वेक्षणमें इसका उल्लेख मात्र हुआ है।

पलौंग (palaung)--**आस्ट्रिक परिवार** (दे०)की **मोन-ख्मेर** भाषाओंके 'पलौंग-व' वर्गकी, बर्मामें प्रयुक्त, एक भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,१७,७७३ थी। इसका क्षेत्र रुबी तथा उत्तरी शान आदिमें है। **पले** (दे०)

आदि इसकी कई बोलियाँ हैं।

पलौंग-व वर्ग (palaung-wa group)–**आस्ट्रिक परिवार** (दे०) की मोन-ख्मेर भाषाओंका, पूर्वीय बर्मामें प्रयुक्त एक वर्ग। १९२१की जनगणनाके अनुसार इस वर्गके बोलनेवालोंकी संख्या १,४७,८८९ थी। इस वर्गकी प्रमुख भाषा **पलौंग** है।

पल्लह (pallah)—एक **बोडो** (दे०) भाषा।

पवर्ग—देवनागरी वर्णमालाका पंचम वर्ग। इसमें प, फ, ब, भ, म ये पाँच ध्वनियाँ आती हैं। (दे०) **वर्ग**।

पवुमवा (pawumwa)—**चपकुरा** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसका एक अन्य नाम **हुअनयम** भी है।

पशई (pashai)—**दरद** (दे०)के, काफ़िर वर्गकी लग़मनमें प्रयुक्त, एक भाषा।

पशु (pashu)—**मलय** (दे०)का, मेर्गुई (बर्मा)में प्रयुक्त, एक रूप।

पश्च (back)—पीछेका (स्थान या समयकी दृष्टिसे)।

पश्चगह्वर—**परगह्वर** (दे०) का एक नाम।

पश्चगामी व्यंजन विषमीकरण—**विषमीकरण** (दे०)का एक भेद।

पश्चगामी स्वर विषमीकरण—**विषमीकरण** (दे०)का एक भेद।

पश्चजिह्व–**जिह्वा-पश्च**(दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

पश्च-निर्माण (back formation)–(१) किसी पुराने शब्दके सादृश्यके आधारपर नये शब्दोंकी व्युत्पत्ति देना। इसे **पूर्वनिर्माण** भी कहते हैं। (२) किसी भाषा या भाषा-परिवारके अज्ञात पुराने रूपों या शब्दोंका, आधुनिक रूपों या शब्दोंके आधारपर निर्माण।

पश्चश्रुति (off glide)—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणका श्रुति** उपशीर्षक।

पश्चस्वर (back vowel)—ऐसा स्वर, जिसके उच्चारणमें जीभका पश्च भाग ऊपर उठता है या करणका काम करता है। जैसे आ, ऑ, ओ, उ, ऊ, आदि। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण** तथा **मानस्वर** उपशीर्षक।

पश्चात् श्रुति (off glide)—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें श्रुति** उपशीर्षक।

पश्चाद्वर्ती (retroflex)—(दे०) **मूर्द्धन्य**।

पश्चिमी अपभ्रंश—डॉ० याकोबीके अनुसार **अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

पश्चिमी तोखारी—**तोखारी** (दे०)की एक बोली।

पश्चिमी नागा (western naga)—**चीनी परिवार** (दे०)के तिब्बती-बर्मी उप-परिवारकी, असमी-बर्मी शाखामें नागा वर्गका, एक उप-वर्ग। इस वर्गकी अधिकांश भाषाएँ नागा पहाड़ियोंपर बोली जाती हैं। १९२१-की जनगणनाके अनुसार इस उप-वर्गके बोलनेवालोंकी संख्या ८८,२६४ थी।

पश्चिमी पंजाबी—**लहँदा** (दे०)का एक अन्य नाम।

पश्चिमी पशइ (western pashai)—**पशइ** (दे०)की एक बोली।

पश्चिमी पहाड़ी—हिन्दी भाषाकी उपभाषा 'पहाड़ी'की पश्चिमी बोलियोंका एक सामूहिक नाम। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ८,५३,४६८ थी। इसका भौगोलिक विस्तार पंजाबके उत्तरी पूर्वी पहाड़ी भागमें भद्रवाह, चंबा, मंडी, शिमला, चकराता और लाहुल-स्पिती आदिमें तथा इनके आसपास है। पश्चिमी पहाड़ीकी प्रमुख बोलियाँ **जौनसारी** (दे०), **सिरमौरी** (दे०), **बघाटी** (दे०), **चमेआली** (दे०), **क्योंठली** (दे०) हैं। इनके अतिरिक्त **सतलुज वर्गकी बोलियाँ** (बाहरी सिराजी, शोदोची) (दे०), **कुलूवर्गकी बोलियाँ** (कुलुई, भीतरी सिराजी) (दे०), **मंडीवर्गकी बोलियाँ** (मंडेआली, मंडेआली पहाड़ी, सुकेती) (दे०) तथा **भद्रवाह वर्गकी बोलियाँ** (पाडरी, भलेसी, भद्रवाही) (दे०) भी इसीके अंतर्गत आती हैं। ग्रियर्सनने तो उल्लेख नहीं किया है किंतु **लोहुली** (दे०) **हमीरपुरी** (दे०)का भी स्वतंत्र उपबोलीके रूपमें उल्लेख किया जा सकता

है। लोक साहित्य इन बोलियोंमें पर्याप्त मात्रामें है। इस क्षेत्रमें टाकरी तथा उसके विभिन्न रूपोंका पर्याप्त प्रचार रहा है, किंतु अब देवनागरीका प्रचार बढ़ता जा रहा है। टाकरी लिपिका प्रचार केवल दुकानदारों आदिमें बही-खाता आदि लिखनेतक ही सीमित है। कुछ लोग उर्दू लिपिका भी प्रयोग करते रहे हैं, यद्यपि अब उनकी संख्या घट रही है। (दे०) **पहाड़ी**।

पश्चिमी बिलोची (western balochi)––**बलोची** (दे०)की, पश्चिमी बिलोचिस्तान तथा आसपास प्रयुक्त, पश्चिमी बोली। इसके कुछ बोलनेवाले कराचीमें भी मिलते हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३,२४, ८९९ थी।

पश्चिमी भोजपुरी––**भोजपुरी** (दे०)का एक रूप, जो पश्चिमी गाजीपुर, दक्षिणी-पूर्वी मीरजापुर, बनारस, पूर्वी जौनपुर, आजमगढ़ तथा पूर्वी फैज़ाबादमें बोला जाता है। ग्रियर्सनने इसे 'पश्चिमी परिनिष्ठित भोजपुरी, कहा है। इसे कभी-कभी **पूरबी** भी कहा जाता है। **पूर्वी** नाम मात्र दिशा (स्थान नहीं)पर आधारित होनेके कारण अनिश्चित है, अतः ठीक नहीं है। पश्चिमी भोजपुरीके उल्लेख्य स्थानीय रूप **जौनपुरी** (दे०), **बनारसी** (दे०) तथा **सोनपारी** (दे०) हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३९,३९,५०० थी।

पश्चिमी मारवाड़ी––(दे०)**मारवाड़ी**।

पश्चिमी मैथिली––**मैथिली** (दे०)का, पश्चिमी मुजफ़्फ़रपुर तथा पूर्वी चंपारनमें प्रयुक्त एक रूप। इस क्षेत्रके हिन्दू ही प्रमुखतः इसे बोलते हैं। इसपर 'भोजपुरी'का स्पष्ट प्रभाव है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १७,८३,४९५ थी।

पश्चिमी राजस्थानी––(दे०) **राजस्थानी**।

पश्चिमी लाओटिअन––**थाईयुअन** (दे०)बोलीका एक अन्य नाम।

पश्चिमी लिपि––**ब्राह्मी लिपि** (दे०)की दक्षिणी शैलीसे विकसित एक लिपि। ब्राह्मीकी उत्तरी शैलीके क्षेत्रकी सीमापर प्रचलित होनेके कारण कुछ उत्तरी शैलीसे भी प्रभावित है। इसके क्षेत्र भारतके मध्य तथा दक्षिणके पश्चिमी प्रदेश (गुजरात, काठियावाड़, नासिक, खानदेश तथा सतारा जिले, हैदराबाद, मैसूरके कुछ भाग तथा कोंकण) हैं। ५वीं सदीसे ९वीं सदीतक इसका प्रयोग मिलता है।

पश्चिमी सार्वनामिक भाषाएँ (western-pronounalized languages)––**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, तिब्बती-हिमालयी शाखाके सार्वनामिक हिमालयी वर्गका, पश्चिमी उपहिमालयमें प्रयुक्त, एक 'उप-वर्ग'। इस उपवर्गकी प्रमुख भाषाएँ तथा बोलियाँ **मन्चाटी, चंबा लाहुली, बुनन, रंगलोई, कनाशी, कनौरी, रंगकास, दर्मिया, चौदान्गसी, ब्यांगसी, जंगली** आदि हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इस उप-वर्गके बोलनेवालोंकी संख्या २७,०९३ थी।

पश्चोन्मुख (retroflex)––(दे०)**मूर्द्धन्य**।

पश्तो––ईरानीके अफ़गानी-बिलोचिस्तानी वर्गकी एक भाषा। यह अफ़गानिस्तानमें तथा उत्तरी-पश्चिमी फ्रंटियर प्रदेशमें लगभग साढ़े चार करोड़ लोगों द्वारा बोली जाती है। इसे **अफ़ग़ान** या **अफ़ग़ानी** भी कहते हैं। इसकी बोलियोंमें **दक्षिणी-पश्चिमी पश्तो** तथा **उत्तरी-पूर्वी पश्तो** प्रमुख हैं। दक्षिणी-पश्चिमीकी उपबोलियोंमें खटक, बन्नुइ, बन्नूची, वज़ीरी, मर्वत, काकड़ी, लूणी, शीरानी तथा तरिनो; तथा उत्तरी-पूर्वीमें पेशावरी, बुनेर, यूसुफ़ जई, बजौर, गिल्जइ, अफ़्रीदी आदि प्रमुख हैं।

पसर मलय (pasar malay)––**मलय**(दे०)-का ब्रिटिश मलायामें तथा डच ईस्ट इंडीज़ आदिमें प्रयुक्त एक मिश्रित रूप, जिसे **बाज़ार मलय** भी कहते हैं। यह उस क्षेत्रकी व्यापारिक भाषा है।

पाडरी––भद्रवाह वर्गकी एक बोली, जो कश्मीरके ऊधमपुर जिलेके पाडर नामक पहाड़ी प्रदेशमें बोली जाती है। इसपर कश्मीरीका पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। 'ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४,५४० थी। (दे०) **भद्रवाह वर्गकी बोलियाँ**।

पात्रवाचक प्रत्यय––एक प्रकारका **प्रत्यय** (दे०)।

पादलिखित लिपि––बौद्ध ग्रंथ 'ललितविस्तर'-में दी गयी ६४ लिपियोंमें-से एक।

पादवृत्त स्वरित––एक प्रकारका **स्वरित** (दे०)।

पानमे (paname)––दक्षिणी अमेरिकाके **जे** (दे०) परिवारके पूर्वी वर्गकी एक भाषा। यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है।

पानिकोच (panikoch)––**कोच** (दे०)-का एक और नाम।

पानिदुअरिआ (paniduaria)–– **मोहोंगिआ** (दे०)का एक दूसरा नाम।

पॉनी (pawnee)––**केन्द्रीय कड्डो** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

पानो (pano)––**उड़िया** (दे०)का एक अन्य नाम। वस्तुतः यह नाम एक उड़िया भाषी द्रविड़ जातिका है।

पामा (pama)–– दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा।

पामीरी––**ईरानी** (दे०)की एक बोली, जो हिन्दूकुश पर्वत एवं पामीरकी तराईमें बोली जाती है।

पारधी (pardhi)––**भीली** (दे०)की, चाँदा तथा बरारमें प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके, भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ८,६४८ थी। इसीके एक रूपको टाकंकारी कहते हैं।

पारसी––(१) **पाज़ंद** (दे०)का एक नाम। (२) **फ़ारसी** (दे०)का एक उच्चारण।

पारसीक––पहलवीके कालकी एक ईरानी बोली। (दे०) **पहलवी**।

पारसी गुजराती (parsi gujarati)––**गुजराती** (दे०)की, पारसी जाति द्वारा व्यवहृत एक बोली।

पारसी गोंडी (parsi gondi)––मंडलामें **गोंडी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

पारस्परिक व्यंजन समीकरण––एक प्रकारका **समीकरण** (दे०)।

पारस्परिक संबंधवाचक सर्वनाम––(दे०) **सर्वनाम**।

पारस्परिक समीकरण (reciprocal assimilation)––ऐसा **समीकरण** (दे०), जिसमें दोनों ध्वनियाँ एक दूसरेको प्रभावित करें।

पारस्परिक सर्वनाम (reciprocal pronoun)––पारस्परिक क्रिया प्रकट करनेवाला **सर्वनाम** (दे०)। जैसे एक-दूसरे।

पारिभाषिक शब्द (technical term या word)––ऐसा शब्द, जो ज्ञानके विशेष क्षेत्रमें विशिष्ट अर्थमें प्रयुक्त होता हो। ऐसे शब्द सामान्य भाषामें या तो प्रयुक्त होते ही नहीं (जैसे रूपग्राम) या होते भी हैं तो सामान्य अर्थमें (जैसे-अभ्यास, यह सामान्य भाषामें आदत या प्रैक्टिस है, किन्तु संस्कृत व्याकरणमें 'पुनरुक्ति' है)। कभी-कभी एक ही पारिभाषिक शब्द दो या अधिक शास्त्रों या विज्ञानोंमें एकाधिक अर्थोंमें प्रयुक्त होता है। उदाहरणार्थ 'व्युत्पत्ति'का काव्य-शास्त्र तथा भाषा-विज्ञानमें एक अर्थ नहीं है।

पारिभाषिक शब्दावली (terminology)––अध्ययन या ज्ञानके विशेष क्षेत्रमें प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दोंका समूह।

पारिवारिक वर्गीकरण––परिवारके आधारपर भाषाओंका एक वर्गीकरण। (दे०) **विश्वकी भाषाओंका वर्गीकरण**।

पारिवारिक संबंध––भाषाओंका पारिवारिक संबंध। (दे०) **मूल भाषा**।

पार्करी (parkari)––थार और परकरकी **गुजराती** (दे०)का एक नाम।

पार्जी––(दे०) **पर्जी**।

पार्धी (pardhi)—**पारधी** (दे०) का एक अन्य नाम ।

पार्श्ववर्ती ध्वनि-विपर्यय—**विपर्यय** (दे०) का एक भेद ।

पार्श्ववर्ती पश्चगामी व्यंजन समीकरण—एक प्रकारका **समीकरण** (दे०) ।

पार्श्ववर्ती पश्चगामी स्वर समीकरण—एक प्रकारका **समीकरण** (दे०) ।

पार्श्ववर्ती पुरोगामी व्यंजन समीकरण—एक प्रकारका **समीकरण** (दे०) ।

पार्श्ववर्ती पुरोगामी स्वर समीकरण—एक प्रकारका **समीकरण** (दे०) ।

पार्श्व व्यंजन—**पार्श्विक** (दे०) का एक अन्य नाम ।

पार्श्विक (lateral)—**प्रयत्न** (दे०) के आधारपर किया गया ध्वनियोंका एक भेद । इसे **पार्श्व व्यंजन** (lateral consonant) या **विभक्त व्यंजन** (divided consonant) भी कहते हैं । इस वर्गकी ध्वनियोंको तथा कुछ अन्यको पहले **द्रव** या **तरल ध्वनि** (liquid sound) भी कहा जाता था । इसमें मुँहकी मध्यरेखापर कहीं भी दो अंगोंके सहारे वायुमार्गको अवरुद्ध कर देते हैं, फलतः हवा एक या दोनों पार्श्वोंसे निकलती है । यह **सप्रभाव** (दे०) व्यंजन है और संघर्षी या नासिक्य आदिकी भाँति इसका भी उच्चारण देरतक संभव है । यह जाननेके लिए कि हवा एक ओरसे निकल रही है या दोनों ओरसे, जीभको इस वर्गके व्यंजनकी स्थितिमें रखकर हवाको भीतर खींचना चाहिये । यदि दोनों ओर शीतलताका अनुभव हो तो ध्वनि **द्विपार्श्विक** है और नहीं तो **एकपार्श्विक** । इसी आधारपर पार्श्विकके **द्विपार्श्विक** और **एकपार्श्विक** दो भेद होते हैं । हिन्दी 'ल' इसी वर्गका है । अंग्रेज़ी 'ल' के **स्पष्ट** (clear) और **अस्पष्ट** (dark) के दो भेद होते हैं । स्पष्ट 'ल' तो सामान्य 'ल' ध्वनि है, जिसमें जीभ वर्त्सको स्पर्श करती है, हवा एक या दोनों किनारेसे निकलती रहती है, और जीभका पिछला भाग गोल रहता है । अस्पष्ट 'ल' में स्पर्शके पीछेकी जीभ कुछ भीतरको झुक या धँस जाती है ।

पार्सी (parsi)—(१) **कुछंधी कंजरी** (दे०)-की एक गुप्त भाषाके लिए प्रयुक्त एक नाम। (२) कभी-कभी **संथाली** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

पालि—एक मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा । (दे०) **मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषामें पालि** उप-शीर्षक ।

पॉलिनेशियन परिवार—**प्रशांत महासागरीय भाषा-खंड** (दे०) का एक भाषा-वर्ग, जिसे प्रायः परिवार भी कहा गया है। वास्तविक रूपमें यह आस्ट्रिक परिवारकी मलय-पॉलिनेशियन शाखाका एक भाषावर्ग है । इसकी प्रमुख भाषाएँ **मओरी** (न्यूज़ीलैंडमें), **तोंगी** या **टोंगी** या **तोंगातबु** (टोंगामें), **समोई** या **समोअन** (समोआमें), **फ़ारमूसन** (फ़ारमूसामें), **ताहिती** (ताहितीमें), **हवाई** या **सैंद्विसी** (हवाईमें), **मारक्वीसन** (मारक्वीसीज़में), **यूई**, **रै रोतोंगा** आदि हैं ।

पाल्टा (palta)—दक्षिणी अमेरिकाके **क्विबरो** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त भाषा ।

पाल्पा (palpa)—**नैपाली** (दे०) की, पश्चिमी नेपालमें प्रयुक्त एक बोली ।

पावरी (pawri)—**भीली** (दे०) की, खानदेशमें प्रयुक्त, एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २५,००० थी ।

पासी (pasi)—(१) **कुचबंधी** (दे०) का एक अन्य नाम । 'पासी' शब्द 'पारसी' का ही विकसित रूप है । (२) फ़तेहपुर (उत्तर-प्रदेश) के बंजारोंमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा । इसका अब पता नहीं ।

पासेपा लिपि (passepa)—**मंगोल लिपि** (दे०) का एक नाम ।

पिंगल—**ब्रजभाषा** (दे०) का एक अन्य नाम । 'पिंगल' एक प्राचीन मुनि कहे जाते

हैं, जो छंद शास्त्रके आदि आचार्य थे। उन्हींके नामपर छंद शास्त्रको 'पिंगल' या 'पिंगलशास्त्र' कहनेकी परंपरा चली। पिंगल या पिंगल शास्त्रका संबंध कवितासे है और राजस्थानमें 'डिंगल'के अतिरिक्त 'ब्रजभाषा'का भी काव्य-भाषाके रूपमें प्रयोग होता रहा है, अतएव वहाँ डिंगलके रूपसाम्यपर 'ब्रजभाषा'को 'पिंगल' कहा गया, यों कदाचित् इसके पूर्व अपभ्रंश या शौरसेनी अपभ्रंशके लिए भी इसका प्रयोग हो चुका था। इस प्रकार मूलतः 'ब्रजभाषा'के लिए पिंगलका प्रयोग राजस्थानमें आरंभ हुआ। बादमें अन्यत्र भी यह नाम प्रयुक्त होता रहा है। पिंगलको **नागभाषा** भी कहा गया है।

पिंधारी (pindhari)—**पेंढारी** (दे०)का एक अशुद्ध नाम।

पिअनोकोटो (pianokoto)—**करिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

पिअरोआ (piaroa)—**सालिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

पिओक्से (pioxe)—**टुकनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

पिएगन (piegan)—**ब्लैकफ़ुट** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

पिकुन्चे (pikunche)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरौकन** (दे०) परिवारकी भाषा। इसका एक अन्य नाम पिकुन्तू है। यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है।

पिकुन्तू (pikuntu)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरौकन** (दे०) परिवारकी भाषा। यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है। इसका एक अन्य नाम पिकुन्चे है।

पिचमीटर (pitchmeter)—सुर (pitch) नापनेके लिए बनाया गया एक यंत्र। बहुत महँगा होनेके कारण इसका प्रचार अभी तक अधिक नहीं हो सका है।

पिड्गिन अंग्रेज़ी (pidgin english)—इसमें 'पिड्गिन' शब्द अंग्रेज़ी शब्द business का चीनी भाषामें विकृत रूप है। चीनमें प्रचलित मिश्रित अंग्रेज़ी, जिसका व्याकरण चीनी-सा है तथा जिसका शब्द-समूह अंग्रेज़ीके विकृत शब्दोंसे युक्त है। चीनमें, विदेशियों और चीनियोंके बीच बातचीतमें इसीका प्रयोग होता है।

पित्ती (pitti)—**भोटिआ** (स्पीतीकी) का एक अन्य नाम। (दे०) **भोटिआ (स्पीतीकी)**।

पिनोका (pinoka)—**चिकिटो** (दे०) भाषा-परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

पिपिल (pipil)—**नहुअत्ल** (दे०) वर्गका उप-वर्ग। इसकी प्रमुख भाषा पिपिल है।

पिमा—मेक्सिकोके आदिवासियोंकी एक भाषा। यह **अपरपीमा** (दे०) की एक उप-भाषा मानी जाती है। इसे **पीमा** भी कहते हैं।

पिमा-सोनोर (pima-sonora)—**उटो-अज़्टेक** (दे०) परिवारका एक वर्ग। इस वर्गमें लगभग ३२ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख **अपरपीमा, लोअर पीमा, ओपटा, कहिटा, किनलोआ, टेपहुए, जोए, बैसेन, निओ, टरहूमरे, कोंचो, लगुनेरोस, अकाक्सी ज़कटेक, हुरचोल कोरा** और **टेपकनो** आदि हैं। इस वर्गका क्षेत्र दक्षिणी ऐरिज़ोना तथा उत्तरी-पश्चिमी मेक्सिको आदिमें है।

पिरिंडा (pirinda)—मध्य अमेरिकाके **ओटोमि** (दे०) परिवारकी एक भाषा। इसका अन्य नाम **मट्लल्ट्ज़िन्को** है।

पिरो (piro)—**टनो** (दे०) भाषा परिवारकी एक विलुप्त उत्तरी अमेरिकी भाषा।

पिवर्द—**फ्रांसीसी** (दे०) भाषाकी एक बोली।

पिशाच—**दरद** (दे०) का एक अन्य नाम।

पिशोरी (pishori)—**पेशावरी** (दे०)का एक अशुद्ध नाम।

पिसिडिअन (pisidian)—एक प्राचीन भाषाका नाम। (दे०) **भारोपीयएनाटोलियन परिवार**। इसे पहले **एशियानिक** (दे०) भाषा माना जाता था, किंतु अब इसका संबंध भारोपीय परिवारसे माना जाने लगा है।

पिसेनिअन (picenian)—अज्ञात परिवार-

की एक विलुप्त भाषा, जो कभी इटलीमें पिसेन प्रदेशमें बोली जाती थी। इसे **लिबनियन** या **प्रीसबेलियन** भी कहते हैं।

पिसोने (pisone)––मध्य अमेरिकाके **वसनमब्रे** (दे०) परिवारकी एक मुख्य भाषा। यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है।

पीदमांतीज (piedmontese)––एक **गैलो-इतालवी** (दे०) बोली।

पीमा––(दे०) **पिमा**।

पुंछी (punchhi)––लहँदा (दे०) की, पूंछ (रियासत) में प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,२०,०६९ थी।

पुइनावे (puinave)––**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार। इसकी प्रमुख भाषाएँ **पुइनावे** तथा **मकु** हैं।

पुइनावे भाषा (puinave)––**पुइनावे** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

पुएब्लो (pueblo)––**शोशोन** (दे०) वर्गका एक उपवर्ग। इस उपवर्गकी प्रमुख भाषा **होपी** है।

पुएलचे (puelche)––**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी है, जिसकी दो बोलियाँ भी हैं।

पुक्खरसारिया––'पन्नवणासूत्र' नामक जैन ग्रंथमें दी गयी १८ लिपियोंमें-से एक।

पुचिकवर––एक **अंडमानी** (दे०) भाषा।

पुजुनन (pujunan)––**मैडू** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

पुन (pun)––१९२१की जनगणनामें **फुन** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

पुनरावृत्ति (reduplication)––किसी शब्द या रूपकी पूर्ण या अपूर्ण आवृत्ति। जैसे धड़-धड़ या एक अफ्रीकी भाषामें चोक = ऊँचा; चाचोक = बहुत ऊँचा। इसे **आवृत्ति, अभ्यास** या **द्विरावृत्ति** भी कहते हैं।

पुनरावृत्तिक अभिव्यक्ति––**पुनरावृत्तिक शब्द-युग्म** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

पुनरावृत्तिक शब्द-युग्म––ऐसा शब्द-युग्म, जिसमें लगभग एक ही, या समीपतावाले अर्थके दो शब्द हों। जैसे––चाल-ढाल, खाना-पीना, ठीक-ठाक। ये प्रायः आनुप्रासिक होते हैं। इन्हें **पुनरावृत्तिक अभिव्यक्ति** (reduplicative expression) या **पुनरावृत्ति शब्द** भी कहते हैं।

पुनरावृत्ति शब्द––**पुनरावृत्तिक शब्द-युग्म** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

पुनरावृत्तीय क्रिया (iterative verb) ऐसी क्रिया, जिससे क्रियाके बार-बार होनेका भाव प्रकट हो।

पुनरुक्त शब्द (tautology)––एक शब्दकी पुनरुक्ति द्वारा बनाया गया एक प्रकारका **शब्द** (दे०)। जैसे भड़-भड़।

पुनरुक्त समास (tautological compound)––ऐसा समास, जो एक ही शब्दको दुहराकर (घर-घर, दिन-दिन) या समानार्थी शब्दोंका समास बनाकर (हाट-बाज़ार) बनाया गया है। (दे०) **अनुवाद-युग्म** तथा **पुनरुक्त शब्द**।

पुनरुक्ति (epanalepsis)––जोर देनेके लिए या आलंकारिक सौंदर्यके लिए किसी शब्दकी पुनरुक्ति। इसे **शब्द-पुनरुक्ति** या **शब्दाभ्यास** भी कहते हैं।

पुनरुक्ति द्वन्द्व समास (iterative compound)––ऐसा **द्वन्द्व समास** (दे०), जो पुनरुक्त शब्दोंमें है। जैसे घर-घर, गाँव-गाँव।

पुनरुक्ति धातु (iterative root)––ऐसी धातु, जो पुनरुक्तिसे बनी हो; जैसे दुरदुरा(ना), भड़भड़ा(ना)।

पुनरुक्ति-सूचक चिह्न––एक प्रकारका चिह्न (दे०) **विराम**।

पुनर्निर्माण (reconstruction)––(दे०) **तुलनात्मक पद्धति**।

पुनिआली (punjali)––(दे०) **शिणा** (दे०) की 'उत्तरी-पश्चिमी बोली' का एक नाम।

पुनेकरी (punekari)––**देशी** (दे०) का एक नाम।

पुरः प्रत्यय प्रधान––**पूर्व योगात्मक** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

पुरालिपि शास्त्र (paleography)––पुराकालीन लिपियोंका उत्पत्ति, विकास, ध्वन्यात्मक मूल्य, प्रयोग, रंग या स्याही तथा लेखनाधार आदिकी दृष्टियोंसे अध्ययन ।

पुरालेख विज्ञान––**पुरालेख शास्त्र** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

पुरालेख शास्त्र (epigraphy)––पुरालेख (प्राचीन शिलालेख तथा उत्कीर्णित मिट्टीकी टिकियाँ आदि)के अध्ययनका शास्त्र । इसमें पुरालेखोंको पढ़ा जाता है तथा उनके अर्थ आदिका स्पष्टीकरण किया जाता है । इसे **पुरालेख विज्ञान, अभिलेख, विज्ञान अभिलेख शास्त्र, शिलालेख शास्त्र** आदि कई अन्य नामोंसे भी पुकारा जाता है।

पुरिक (purik)––**भोटिआ** (पुरिककी) का एक अन्य नाम । (दे०) **भोटिआ (पुरिककी)** ।

पुरिकी तिब्बती––पुरिक (कश्मीर)में बोली जानेवाली 'तिब्बती' बोली । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,४८,३६६के लगभग थी । इसमें 'बलतिस्तानी' तिब्बतीके बोलनेवाले भी सम्मिलित थे ।

पुरी (puri)––दक्षिणी अमेरिकाके **जे** (दे०) परिवारके पूर्वी वर्गकी एक भाषा । यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है ।

पुरुष––(दे०) **सर्वनाम** ।

पुरुषबोधक प्रत्यय (personal suffix या endirgs)––ऐसे प्रत्यय जिन्हें जोड़कर विभिन्न पुरुषोंके रूप बनाये जाते हैं ।

पुरुषबोधक सर्वनाम––(दे०) **सर्वनाम** ।

पुरुषभाषा––ऐसी, भाषा जिसका प्रयोग केवल पुरुष करते हों । 'करीब' नामके जंगली कबीलेकी बोली इसी प्रकार की है । वहाँ पुरुष 'करीब' नामक बोलीका तथा स्त्रियाँ 'अरो वक' नामक बोलीका प्रयोग करती हैं ।

पुरुषवाचक सर्वनाम––(दे०) **सर्वनाम** ।

पुरुष सूचक सर्वनाम––(दे०) **सर्वनाम**

पुरुषादि बोधक मूलकाल––(दे०) **काल**

पुरुषोत्तम लिंग––(दे०) **लिंग** ।

पुरुहा (puruha)––**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक विलुप्त भाषा-परिवार । इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी थी ।

पुरू (puru)––१८९१की बड़ौदा जनगणनाके अनुसार **हिन्दी** (दे०)का एक रूप । यह नाम 'पूर्वी'का विकसित रूप है ।

पुरूम (purum)––**चीनी परिवार** (दे०)-की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके कुकी-चिन वर्गकी, मणिपुर (असम)-में प्रयुक्त, एक **प्राचीन कुकी** भाषा । १९२१-की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,१३२के लगभग थी ।

पुरेकमेक्रन (purekamekran)––दक्षिणी अमेरिकाके **जे** (दे०) परिवारके उत्तरी वर्गकी एक भाषा ।

पुरोगामी व्यंजन विषमीकरण––**विषमीकरण** (दे०)का एक भेद ।

पुरोगामी स्वर विषमीकरण––**विषमीकरण** (दे०)का एक भेद ।

पुरोहिति––(१) **आदि-स्वरागम** (दे०) का एक अन्य नाम । (२) एक प्रकारकी **अपिनिहिति** (दे०) ।

पुर्तगाली (portuguese)––पुर्तगाल, मदीरा, अज़ोर्स, ब्राज़ील तथा गोवा आदिमें प्रयुक्त एक भाषा । इसके बोलनेवालोंकी संख्या पूरे विश्वमें लगभग ६ करोड़ है । इसकी प्रमुख बोली **गैलिसिअन** (दे०)के बोलनेवाले लगभग ३० लाख लोग हैं । इसके अन्य रूप या मिश्रित रूप **कैरिओका** (दे०), **पौलिस्ता** (दे०), **गैलिशन** (दे०) आदि हैं। पुर्तगाल एक **रोमांस भाषा** (दे०) है । इसका संबंध भारोपीय परिवारकी केंतुमशाखाके लैटिन या इटैलिक वर्गसे है। स्पैनिश इसकी सगी बहिन है। शब्दोंके क्षेत्रमें पुर्तगालीपर अरबी और इतालवीका बहुत प्रभाव पड़ा है। भारतीय भाषाओंको लगभग १०० शब्द पुर्तगालीने दिये हैं । पुर्तगाली साहित्य १२वीं सदीसे मिलता है। प्राचीन पुर्तगाली आधुनिकसे बहुत अधिक भिन्न नहीं है। इसके साहित्यकारोंमें मिरान्दा

(१४८१-१५५८) तथा लुइसके दे कैंमोस (१५२४-१५८०) अलमेडा गैरेत (१७९९-१८५४) आदि उल्लेख्य हैं।

पुलैयर (pulaiyar)––कोयम्बटूरकी एक तमिल (दे०)जातिमें व्यवहृत तमिलका नाम। जातिके नामके कारण ही भाषाका यह नाम पड़ा है।

पुल्लिग––(दे०) **लिंग** ।

पुष्करसारी––बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

पुष्पलिपि––बौद्धग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमें-से एक।

पूरक(complement)––इसका शाब्दिक अर्थ है 'जो पूरा करे'। सकर्मक या अकर्मक क्रियाओंके भावको पूरा करनेके लिए कभी-कभी कुछ शब्दोंकी आवश्यकता होती है, जिन्हें 'पूरक' या **पूर्ति** कहते हैं। कुछ लोग 'पूरक' (या **कर्म-पूरक**)का प्रयोग केवल सकर्मक क्रियाके पूरकके लिए करते हैं। सकर्मक क्रियाके कर्मको भी अर्थकी दृष्टिसे कभी-कभी 'पूरक' कहा जाता है। अन्यथा पूरक वह शब्द है, जो कर्मके अतिरिक्त कुछ सकर्मक क्रियाओंके साथ अर्थकी पूर्णताके लिए अपेक्षित होता है। जैसे 'मैंने उसे सभापति बनाया'में 'सभापति' अकर्मकके पूरकको प्रायः 'पूर्ति' कहा गया है। धातु इस प्रकार 'पूरक'शब्दका तीन अर्थोंमें प्रयोग होता है। (१) कर्मके लिए (२) अकर्मक क्रियाकी पूर्ति (दे० पूर्ति)के लिए, और (३)सकर्मक क्रियाके साथ कर्मके अतिरिक्त, पूर्णतार्थ प्रयुक्त शब्दके लिए (दे०) **धातु क्रिया** ।

पूर्ण (absolute)––पूर्ण रचना। ऐसी रचना, जिसमें किसी अवयवकी कमी न हो। जैसे पूर्ण वाक्य या पूर्ण वाक्यांश आदि।

पूर्ण अध्याहार––(दे०) **अध्याहार** ।

पूर्ण अनुनासिक स्वर––जिसके उच्चारणमें हवाका लगभग आधा भाग नाकसे तथा आधा मुँहसे निकले। जैसे 'हाँ' में आँ। (दे०) **अपूर्ण अनुनासिक स्वर** ।

पूर्ण कृदंत––(दे०) **कृदंत** ।

पूर्ण क्रियाद्योतक कृदंत––(दे०) **कृदंत** ।

पूर्णधातु(complete या root verb)––ऐसी धातु जिसके सभी काल या अर्थबोधक रूप बनते या मिलते हों।

पूर्ण पुनरुक्त शब्द––एक प्रकारके **शब्द** (दे०),

पूर्ण प्रश्लिष्ट-योगात्मक भाषा (completely incorporative)––**योगात्मक भाषा** (दे०)का एक भेद।

पूर्ण भविष्य निश्चयार्थ––(दे०) **काल** ।

पूर्णभूत––(दे०) **काल** ।

पूर्णभूत निश्चयार्थ––(दे०)**काल** ।

पूर्णभूत संभावनार्थ––(दे०) **काल** ।

पूर्ण वर्तमान––(दे०) **काल** ।

पूर्ण वर्तमान निश्चयार्थ––(दे०) **काल** ।

पूर्णवाक्यात्मक रचना––एक प्रकारकी रचना (दे०) **वाक्यमें रचनाके प्रकार** उपशीर्षक।

पूर्ण विराम––एक प्रकारका **विराम** (दे०)।

पूर्ण विराम संगम(teminal juncture)––**संगम** (दे०)का एक भेद।

पूर्ण वृत्तमुखी स्वर––ऐसा स्वर, जिसके उच्चारणमें ओष्ठ पूर्णतः वृत्ताकार हों। इसे **पूर्ण वृत्ताकार स्वर** भी कहते हैं। जैसे ऊ। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**में **स्वरोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक।

पूर्णवृत्ताकार स्वर––**पूर्णवृत्तमुखी स्वर** (दे०)-का एक अन्य नाम।

पूर्ण शब्द (full word)––चीनी आदि कुछ भाषाओंमें ऐसे शब्द, जो अर्थवान् होते हैं। अर्थपूर्ण होनेके कारण ही इन्हें पूर्णशब्द कहते हैं। इसके विरुद्ध जो शब्द अर्थसे रिक्त होते हैं, तथा जिनका कार्य वाक्यमें पूर्ण शब्दोंका आपसी संबंध दिखलाना ही होता है, उन्हें **रिक्त शब्द** (दे०) कहते हैं। संज्ञा, क्रिया, विशेषण, सर्वनाम आदि पूर्ण शब्दके अंतर्गत आते हैं।

पूर्ण संकेतार्थ––(दे०) **काल** ।

पूर्ण संख्या बोधक विशेषण––(दे०)**विशेषण** ।

पूर्ण संख्यावाचक विशेषण––(दे०)**विशेषण** ।

पूर्ण संख्यासूचक विशेषण (दे०) --**विशेषण**

पूर्ण संयुक्त स्वर (complete diphthong)--(दे०) **ध्वनियोंके वर्गीकरण**-का **संयुक्त स्वर** उपशीर्षक ।

पूर्ण समास (proper compound)--ऐसा समस्त शब्द, जिसमें दो या अधिक शब्द पूर्णतः मिल गये हों और उसका रूप बनानेमें केवल अन्त्यके साथ विभक्ति जोड़नी पड़े ।

पूर्ण स्पर्श--एक प्रकारका स्पर्श । (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**में **व्यंजनोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक ।

पूर्णांक बोधक विशेषण--(दे०) **विशेषण** ।

पूर्णांक वाचक विशेषण --(दे०) **विशेषण**।

पूर्णांक संख्यावाचक विशेषण--(दे०) **विशेषण** ।

पूर्ति--(दे०) **पूरक धातु**।

पूर्बी--(१) **अवधी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम। (२) **भोजपुरी**(दे०)-के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

पूर्व अक्षरांग--**पूर्वगह्वर**(दे०)का एक नाम।

पूर्वकालिक कृदंत--(दे०) **कृदंत** ।

पूर्व गह्वर(onset)--**अक्षर**(दे०)में **शीर्ष** (दे०)के पूर्वका **गह्वर** (दे०) ।

पूर्वदंत्य (predental)--ऊपरी दाँत और जीभके अग्रभागसे उच्चरित(व्यंजन) ।

पूर्व प्रत्यय--**उपसर्ग** (दे०)का एकअन्य नाम।

पूर्व भाषा विज्ञान (prelinguistics)--**मेटालिंग्विस्टिक्स** (दे०)के विरुद्ध इसका प्रयोग उस अध्ययनके लिए होताहै, जो कुछ लोगोंके अनुसार भाषा-विज्ञानसे बाहर माना जाता है, किंतु साथ ही इसकी जानकारी भाषा-विज्ञानके अध्ययनमें आवश्यक मानी जाती है। ध्वनि-विज्ञानको कुछ लोग इसी अर्थमें 'प्रीलिंग्विस्टिक्स' कहते हैं । उनके अनुसार ध्वनि-अवयव, तथा ध्वनि-उत्पत्ति आदि भाषा-विज्ञानके वास्तविक विषय न होकर 'शरीर विज्ञान' आदिके विषय हैं ।

पूर्व योगात्मक (prefix agglutinative) --**योगात्मक भाषा** (दे०)का एक भेद ।

पूर्वरूप--(दे०) **पररूप** ।

पूर्वविदेहलिपि--बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक ।

पूर्वश्रुति (on glide)--(दे०) **ध्वनियों-का वर्गीकरण**में **श्रुति** उपशीर्षक ।

पूर्वसर्ग (preposition)--(१)निपात या संबंधदर्शी शब्द, जो संज्ञा, सर्वनाम आदिके पूर्व आता है, किन्तु जो उपसर्गकी तरह मिलता नहीं, अपितु अलग रहता है। अंग्रेज़ीके to, from आदि पूर्व सर्ग हैं। हिन्दीके **पर-सर्ग** (दे०)इसके उलटे शब्दोंके बादमें आते हैं । (२)**उपसर्ग**के लिए प्रयुक्त स्वर। (दे०) **संबंधसूचक अव्यय** ।

पूर्वहिति--एक प्रकारके **अपिनिहिति** (दे०) ।

पूर्वांग--**पूर्वगह्वर** (दे०)का एक अन्य नाम।

पूर्वान्त--पूर्ववर्ती पद या शब्दकी अंतिम ध्वनि।

पूर्वान्त-योगात्मक--**योगात्मक भाषा** (दे०)-का एक भेद ।

पूर्वी अपभ्रंश--डॉ० याकोबीके अनुसार **अप-भ्रंश**(दे०)का एक भेद ।

पूर्वी तोखारी--**तोखारी** (दे०)की एक बोली।

पूर्वी पहाड़ी--**पहाड़ी** (दे०)की एक बोली । पहाड़ी क्षेत्रके पूर्वी भागमें बोलीजानेके कारण इसका यह नाम पड़ा है । इसके अन्य नाम **नैपाली** (दे०), **पर्बतिया, गोरखाली** तथा **खसकुरा** आदि हैं ।

पूर्वी मगही--'बिहारी'की बोली **मगही** (दे०)-का पूर्वी रूप, जो 'बँगला' भाषा-भाषी क्षेत्रके पश्चिममें हजारीबाग, मानभूम, माल्दा,राँची, खरसावाँ, बामरा तथा मयूर-भंजमें बोला जाता है । इसके क्षेत्रका पूर्वी छोर 'बँगला' क्षेत्रसे तथा दक्षिणी छोर 'उड़िया' क्षेत्रसे मिला है। इसी कारण इसके कुछ स्थानीय रूप 'बँगला'से तथा कुछ 'उड़िया' से प्रभावित हैं। पूर्वी मगही बोलने-वालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ३,१३,८६४ थी । 'पूर्वीमगही' लिखनेमें कैथी और नागरीके अतिरिक्त सीमान्त प्रदेशोंमें बँगला तथा उड़िया लिपिका प्रयोग होता रहा है । इसकी प्रमुख उप-बोलियाँ **कुड़माली** (दे०), **खोंटाली**

(दे०), **पाँच परगनियाँ** (दे०) तथा **सदरी कोल** हैं। इसके कुछ स्थानीय रूप **कोर्ठा** (दे०) आदि भी हैं।

पूर्वी मारवाड़ी--(दे०) **मारवाड़ी**।

पूर्वी मैथिली--(दे०) **पूर्वीय मैथिली**।

पूर्वी लाजोटिअन--थाई लाओ (दे०) बोलीका एक अन्य नाम।

पूर्वी हिन्दी--हिन्दीकी एक उपभाषा। पश्चिमी हिन्दी या समूचे हिन्दी क्षेत्र (पश्चिमी-हिन्दी, पूर्वी-हिन्दी) के पूर्वमें इसका क्षेत्र होनेके कारण इसे 'पूर्वी हिन्दी' नाम (ग्रियर्सन द्वारा) दिया गया। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार 'पूर्वी हिन्दी' बोलनेवालोंकी संख्या २,४५,११,६४७थी। पूर्वी हिन्दीका क्षेत्र उत्तरप्रदेशमें लखनऊ, उन्नाव, रायबरेली, सीतापुर, खीरी, फ़ैज़ाबाद, गोंडा, बहराइच, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़, बाराबंकी, कानपुर, फ़तेहपुर, इलाहाबाद, जौनपुर एवं मीरजापुरके कुछ भाग, नेपालकी तराईके कुछ भाग, मध्यप्रदेशमें रीवां, दमोह, जबलपुर, मांडला, बालाघाट, रायपुर, बिलासपुर, कांकेर, नंदगाँव खेरगढ़, रायगढ़, कोरिया, सरगुजा, उदयपुर (कुछ भाग), एवं जयपुर (कुछ भाग) आदि हैं। यह 'पश्चिमी हिन्दी', नेपाली, बिहारी, उड़िया, तेलुगु, मराठी तथा राजस्थानी भाषाओंके क्षेत्रोंके बीचमें है।

ग्रियर्सनने पूर्वी हिन्दीमें **अवधी, बघेली** और **छत्तीसगढ़ी** तीन बोलियाँ मानी थीं। किंतु वस्तुतः बघेली एक स्वतंत्र बोली न होकर अवधीका दक्षिणी रूप मात्र है। इस प्रकार पूर्वी हिन्दीके अंतर्गत केवल दो ही मुख्य बोलियाँ आती हैं--**अवधी** (दे०) और **छत्तीसगढ़ी** (दे०)। साहित्यिक दृष्टिसे इन दोनोंमें केवल अवधीका ही महत्त्व है। पूर्वी हिन्दीके पश्चिमी भागकी बोलियोंका संबंध शौरसेनीसे तथा पूर्वी भागकी बोलियोंका संबंध मागधी अपभ्रंशसे माना जाता है। इसी आधारपर ग्रियर्सनने पूर्वी हिन्दीका उद्गम अर्धमागधीसे माना था। किंतु डॉ० बाबूराम सक्सेनाने अवधी (जो पूर्वी हिन्दीकी मुख्य बोली है) पर विचार करते हुए दूसरा मत व्यक्त किया है। (दे०) **अवधी**। पूर्वी हिन्दी क्षेत्रमें प्रधानतः नागरी लिपिका प्रयोग होता है, पर कुछ लोग कैथी (प्रमुखतः बही-खातेके कामोंमें) तथा कुछ फारसी लिपिका भी प्रयोग करते हैं।

पूर्वीय अलगोन्किन (eastern algonkin)--उत्तरी अमेरिकाके **अलगोन्किन** (दे०) भाषा-परिवारका एक भाषा वर्ग। इस वर्गमें निम्नलिखित भाषाएँ हैं: **सिकमक, अब्नाकी, पेनोबस्कोट, पस्सामकोड्डी, मलेसिट, मस्सचुसेट्ट** (दे०), **नरगन्सेट** (दे०), **वंपनोअग** (दे०), **मोन्टौक, निप्मुक** (दे०); **नंटीकोक** (दे०), **पोहटन, सेकोटन** (दे०) आदि। इनमें अंतिम आठके पारिवारिक संबंधके विषयमें विद्वानोंमें मतभेद है।

पूर्वीय ज़े (eastern ze)--दक्षिणी अमेरिकाके ज़े (दे०) परिवारका पूर्वी वर्ग। इस परिवारमें प्रमुख भाषाएँ बोतोकुदो, कमाकन, पानमे, मशाकाली, मलाली तथा पुरी आदि हैं।

पूर्वीय नागा-चीनी परिवार (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके नागावर्गका पूर्वी असममें प्रयुक्त एक उपवर्ग। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १०,०००के लगभग थी।

पूर्वीय पहाड़ी --(दे०) **पूर्वी पहाड़ी**।

पूर्वीय बलोची--पूर्वी बिलोचिस्तानमें तथा आसपास प्रयुक्त **बलोची** (दे०) की एक बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ३,७६,८२२ थी।

पूर्वीय मैथिली--**मैथिली** (दे०) का बंगालकी सीमाके पास पश्चिमी तथा मध्य पूर्णियामें प्रयुक्त एक रूप। इसपर 'बँगाली' का प्रभाव है। इसका एक अन्य नाम **गाँववारी** (अर्थात् गँवार या गाँवकी), भी है। इसी भावसे इसे **खोट्टा बोली**, (अर्थात् खोटी

बोली) भी कहते हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १३,००,००० थी।

पूर्वीय यूम (eastern yuma)—उत्तरी अमेरिकाके **यूम** (दे०) भाषा-वर्गका एक उप-वर्ग। इस उपवर्गमें निम्नलिखित भाषाएँ हैं:—**हवसुपइ**, **वलपइ**, **टोन्टो** तथा **यवपइ**।

पूर्वीय सिऔक्स (eastern sioux)—**सिऔक्स** (दे०) भाषा-परिवारका एक वर्ग। इस वर्गमें **कटव्बा** तथा **टुटेलो** (दे०) भाषाएँ हैं।

पूर्वोपधाबलाघाती भाषा (proparaxytonic language)—(दे०) **पूर्वोपधाबलाघाती शब्द**।

पूर्वोपधाबलाघाती शब्द (proparaxytone)—ऐसा शब्द, जिसके उपधाके पूर्वके अक्षरपर बलाघात है। कुछ भाषाओंमें ऐसे शब्दोंकी प्रधानता होती है। उन्हें **पूर्वोपधाबलाघाती भाषा** कहते हैं।

पूहपूहवाद (interjectional theory)—भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धांत। इसे **मनोभावाभिव्यक्ति सिद्धांत** (दे०) भी कहते हैं।

पृथक्करणीय उपसर्ग (separable prefix)—(१) ऐसा उपसर्ग, जो सरलतासे अलग किया जा सके। जैसे 'उपवन' में 'उप'। (२) ऐसा उपसर्ग, जिसे स्वतंत्रत: एक शब्दके रूपमें भी प्रयुक्त किया जा सके। यह मान्यता अनेक प्राचीन और नवीन विद्वानोंने व्यक्त की है। किंतु वस्तुत: यदि उपसर्ग इस प्रकारका है तो उसे उपसर्ग न कहकर स्वतंत्र शब्द मानना चाहिये और उसे जोड़कर बने शब्दको समस्त शब्द मानना चाहिये।

पृथक्करणीय प्रत्यय (separable suffix)—ऐसा प्रत्यय, जो सरलतासे अलग किया जा सके। जैसे—'सुंदरता' में 'ता'।

पेंगू (pengu)—**कुई** (दे०) की पेंगू पोरोज नामक जाति द्वारा व्यवहृत, एक बोली।

पेंढारी (pendhari)—धारवाड़ तथा बेलगाममें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,२५० थी।

पेओरिआ (peoria)—**केन्द्रीय-अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

पेक्योट (pequot)—**केन्द्रीय अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

पेगुअन (peguan)—वर्माके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार, **मोन** (दे०) का, अम्हर्स्ट जिलेमें प्रयुक्त, एक रूप।

पेटेन (peten)—**इट्जा** (दे०) बोलीका एक अन्य नाम।

पेट्रोग्लिफ़ (petroglyph)—पत्थरोंपर उत्कीर्णित एक प्रकारकी अत्यंत प्राचीन चित्र लिपि।

पेतें नेग्र (petit negre)—फ्रांसीसीका फ्रांसशासित पश्चिमी अफ्रीकामें प्रयुक्त एक मिश्रित रूप। इस भाषाके शब्द-समूहमें फ्रांसीसी भाषाके शब्दोंका आधिक्य है, किंतु इसका व्याकरण स्थानीय आदिवासियोंकी भाषाका है।

पेतें न्वायर (petit noir)—फ्रांसीसी वेस्ट-इंडीज़में प्रयुक्त एक मिश्रित भाषा।

पेनुटिअन (penutian)—**उत्तरी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार। इस भाषा परिवारमें चार वर्ग हैं:—**कैलीफ़ोर्निअन** (दे०), **ओरेगन** (दे०), **चिनुक** (दे०) और **त्सिम्शिअन** (दे०)। इन चारों वर्गोंमें लगभग ३१ भाषाएँ हैं। इसका क्षेत्र उत्तरी कैलिफ़ोर्निया है।

पेनोबस्कोट (penobscot)—**पूर्वीय अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसका एक अन्य नाम **पेन्नाकुक** भी है।

पेन्नाकुक (pennakuk)—**पेनोबस्कोट** (दे०) का एक अन्य नाम।

पेबा (peba)—**करिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

पे-मिअओ (pe miao)—दक्षिणी शान स्टेट (बर्मा) में प्रयुक्त एक **मिअओ** (दे०) बोली।

पेरिकू (periku)—मध्य अमेरिकाके **वइ-**

कुरी (दे०) परिवारकी एक मुख्य भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

पेलास्गिअन (pelasgian)--विवादास्पद पारिवारिक संबंधकी एक विलुप्त भाषा। इसका क्षेत्र ग्रीसमें तथा आसपासके द्वीपोंमें था। इसके बोलनेवाले इसी नामकी जातिके लोग थे।

पेलिग्निअन (paelignian)--भारोपीय परिवारकी इटैलिक उपशाखाकी एक विलुप्त बोली।

पेशावरी (peshawari)--पेशावर शहरकी लहँदा (दे०)का एक नाम। इसको कभी-कभी **पेशोरी** भी कहा गया है।

पेशावरी पश्तो--**पश्तो** (दे०)का, पेशावर तथा उसके आसपास प्रयुक्त, एक रूप।

पेस्त (pesta)--**पश्तो** (दे०)का एक अशुद्ध नाम।

पेहुएन्चे (pehuenche)--दक्षिणी अमेरिकाके **अरौकन** (दे०) परिवारकी एक भाषा।

पैंगसिनन (pangasinan)--**इंडोनीशियन परिवार** (दे०)की एक भाषा, जिसे फ़िलीपीनमें लगभग ४ लाख लोग बोलते हैं।

पैंफिलिअन (pamphylian)--एशिया माइनरमें प्राचीन कालमें प्रयुक्त एक **एशियानिक** (दे०) भाषा। इसके परिवारका पता नहीं है।

पैक (paik)--१९०१की जनगणनाके अनुसार कनारामें प्रयुक्त, **कन्नड़** (दे०)का एक रूप।

पैकिपिरांगा (paikipiranga)--**टुपी-गवरनी** (दे०)परिवारकी दक्षिणी अमेरिकामें प्रयुक्त एक भाषा।

पैकोनेका (paikoneka)--दक्षिणी अमेरिकाके **अरवा परिवार** (दे०)की एक भाषा।

पैटर्न प्ले बैक (pattern play back)--ध्वनि-विज्ञानमें सहायक एक आधुनिक यंत्र। फ्रैंकलिन तथा बोर्स्टने इसी दशकमें इसका आविष्कार किया है। इससे **स्पेक्टोग्राफ़** (दे०)के चित्रको बजाया जा सकता है, अर्थात् चित्रके आधारपर उन्हीं ध्वनियोंको सुना जा सकता है, जो उसमें चित्रित हैं। इस मशीनसे स्पेक्टोग्राफ़के ध्वनि चित्रोंके आधारपर बनाये गये कृत्रिम चित्र भी बजाये या सुनाये जा सकते हैं। ध्वनिकी विभिन्न विशेषताओंके अध्ययनमें इससे बहुत सहायता मिल रही है।

पैटवा--भाषाका एक रूप। (दे०) **भाषाके विविध रूपमें उपबोली या स्थानीय बोली।**

पैदी (paidi)--**उड़िया** (दे०)का एक अन्य नाम। वस्तुतः यह एक उड़िया-भाषी जातिका नाम है।

पैपिआमेंतो (papiamento)--**स्पैनिश**-का कुराकाओमें प्रयुक्त एक मिश्रित रूप।

पैफ्लागोनिअन (paphlagonian)--एशिया माइनरके पास प्राचीन कालमें प्रयुक्त एक अज्ञात परिवारकी विलुप्त **एशियानिक** (दे०) भाषा।

पैरेन्टिन्टिन (parentintin)--**टुपी-गवरनी** (दे०)परिवारकी दक्षिणी अमेरिकामें प्रयुक्त एक भाषाका नाम। इसका एक अन्य नाम **कवाहिब** या **कवाहिव** भी है।

पैलेओ-एशियाटिक (palaeo-asiatic)--**हाइपरबोरियन वर्ग** (दे०)का एक अन्य नाम।

पैलेटोग्राम प्रोजेक्टर--(दे०)**कृत्रिम तालु।**

पैशाचिक--लेसेनके अनुसार **पैशाची प्राकृत** (दे०)का एक भेद।

पैशाचिका--**पैशाची प्राकृत** (दे०)का एक अन्य नाम।

पैशाचिकी--**पैशाची प्राकृत** (दे०)का एक अन्य नाम।

पैशाची--(दे०) **दरद।**

पैशाची अपभ्रंश--**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

पैशाची प्राकृत--एक **प्राकृत** (दे०)।

पैसिफ़िक (pacific)--**अथपस्कन** (दे०) वर्गका एक उपवर्ग। इसके अंतर्गत प्रमुख भाषाएँ ये हैं:--[illegible] **ओक्वा** (दे०), **शस्ट**-

कोस्टा, हूपा, मट्टोले, विह्लकुट, वैलकी आदि ।

पोंगुली--**कश्मीरी** (दे०)की, जम्मू प्रान्तमें प्रयुक्त, एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ८,१५८ थी ।

पोंटिक (pontic)--अज्ञात परिवारकी एक विलुप्त **एशियानिक** (दे०) भाषा ।

पोंबद (pombada)--**तुळू** (दे०)का एक नाम । वस्तुतः यह तुलू भाषी एक जातिका नाम है ।

पोंवारी--**बघेली** (दे०) बोलीका बालाघाट और भंडारामें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप । इसके बोलनेवालोंकी संख्या १८९१की जनगणनाके अनुसार ७०,००० थी, किंतु ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार केवल ४३,००० थी । पोंवारी, बघेली, पश्चिमी राजस्थानी (जहाँ पोंवार लोगोंका आदि-स्थान है) और मराठीका मिश्रित रूप है । इसके बोलनेवाले प्रमुखतः 'पोंवार' लोग हैं, इसीसे इसका यह नाम पड़ा है ।

पोई (poi)--**चिन** (दे०)का एक और नाम ।

पोएरोन (poeron)--**कबुई** (दे०)का एक रूप ।

पो करेन (pwo karen)--**करेन** (दे०)-की, वर्माके कई जिलोंमें प्रयुक्त, एक बोली । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३,५२,४६६ थी ।

पो किस्मो (pochismo)--मेक्सिको-अमेरिकी सीमापर अंग्रेजी (कम) और स्पैनिश (अधिक)का मिला हुआ प्रचलित रूप ।

पोकोन्ची (pokanchi)--मध्य अमेरिका-की **पोकोन्ची** (दे०) भाषाकी एक प्रमुख बोली ।

पोकोन्ची-किचे-मम (pokonchi-kiche-mam)--मध्य अमेरिकाके मय वर्गका एक उपवर्ग । इस उपवर्गमें तीन भाषाएँ **पोकोन्ची** (दे०), **किचे** (दे०) तथा **मम** (दे०) हैं ।

पोकोन्ची भाषा (pokonchi)--मध्य अमेरिकाके **पोकोन्ची-किचे-मम** (दे०) उपवर्गकी एक प्रमुख भाषा । इसकी बोलियाँ **पोकोन्ची**, **केक्ची** तथा **पोकोमन** हैं ।

पोकोमन (pokoman)--मध्य अमेरिकाकी **पोकोन्ची** (दे०) भाषाकी एक बोली ।

पोटवटोमी (potawatomi)--**केन्द्रीय-अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा । यह पोटवटोमी लोगों द्वारा प्रयुक्त होती है । इस भाषाका क्षेत्र पहले मिशिगन झीलके पश्चिम स्थित प्रदेश था । अबके लोग ओक्लहोमा, कन्सस, मिशिगन आदिमें हैं । इनकी संख्या ३ हज़ार-से कम है ।

पोट्लपिगुआ (potlapigua)--**अपरपीमा** (दे०) भाषाकी एक विलुप्त उत्तरी अमेरिकाकी उप भाषा ।

पोठ्वारी (pothwari)--**लहँदा** (दे०)-की, उत्तरी-पश्चिमी पंजाबमें प्रयुक्त, एक बोली । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४,२३,८०२ थी ।

पोण्णा--(१) बर्मामें मणिपुरी ब्राह्मणोंमें प्रयुक्त **मैतेइ** (मणिपुरी) भाषाका एक रूप । (२) **मैतेइ** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

पोन्का (ponka)--**ढेगिहा** (दे०)वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

पोन्न्यो (ponnyo)--बर्माके भाषा-सर्वेक्षण-के अनुसार, अपर छिन्दविन (बर्मा)में प्रयुक्त एक **नागा** (दे०)भाषा । सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २,७०० थी ।

पोमो (pomo)--**होक** (दे०) भाषा-परिवारकी उत्तरी अमेरिकी भाषा । इसका एक **कुलनपन** नाम भी है ।

पोरोजा (poroja)--**पर्जी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

पोर्वद (porwad)--१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **गुजराती** (दे०)का एक

रूप ।

पोलाबिश--(दे०) **स्लैवोनिक** ।

पोलिंदी--'पन्नवणासूत्र' नामक जैन ग्रंथमें दी गयी १८ लिपियोंमें-से एक ।

पोलिश--प्रमुखतः पोलैंडकी भाषा । यह पोलैंड, युनाइटेड स्टेट (अमेरिका), रूस तथा जेकोस्लोवाकिया आदिमें लगभग ३ करोड़ लोगों द्वारा बोली जाती है। यह भारोपीय-परिवारकी स्लाव शाखाकी पश्चिमी भाषा है । पोलिश भाषाका प्राचीनतम रूप संत अदलवर्ट (१०वीं सदी) के एक धार्मिक गीत-में मिलता है । १२वीं सदीके बादसे इसमें साहित्य रचना नियमित रूपसे मिलती है । यहाँके प्रसिद्ध साहित्यकारोंमें आदम मिकिविज़, सिगमंत क्रासिस्की, हेनरिक सींकीविज़ आदि प्रमुख हैं । पोलिशकी कुछ बोलियाँ भी हैं, जिनमें **कशूबियन**, मध्य पोलैंडकी बोली तथा **मेज़ोवियन** उल्लेख्य हैं । साइ-लीसियाके पासकी बोलीपर परिनिष्ठित पोलिश आधारित है । पोलिशपर लैटिन, इतालवी, फ्रांसीसी, जर्मन आदिका प्रभाव काफी पड़ा है ।

पोवाधी (powadhi)--परिनिष्ठित **पंजाबी** (दे०)का, पूर्वी पंजाबमें प्रयुक्त, एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १३,९७,१४६ थी ।

पोहटन (powhatan)--**पूर्वीय अलगोन्क्विन** (दे०)वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

पौनःपुन्य--बार-बार आना, आवृत्ति, बार्-बारता ।

पौनः पुन्यवाचक क्रियाविशेषण--(दे०) **क्रिया-विशेषण** ।

पौनाका (paunaka)--दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा ।

पौलिस्ता (paulista)--**पुर्तगाली** (दे०)-का ब्राज़ीलके एक भागमें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप ।

पौवारी--बुंदेलीके **छिंदवाड़ा-बुंदेली** (दे०) वर्गका छिंदवाड़ामें प्रयुक्त एक मराठी मिश्रित रूप । इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग ३,००० थी ।

प्नार (pnar)--**सिंतेंग** (दे०)का एक अन्य नाम ।

प्यिन् (pyin)--दक्षिणी शान स्टेट (बर्मा)-में प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०)की एक लोलो-मोसो भाषा । १९२१की जनगणना-में इसके बोलनेवालोंकी संख्या ९२७ थी ।

प्यू--चीनी परिवारकी एक बर्मी भाषा, जो १४वीं सदीमें विलुप्त हो गयी ।

प्यूनिक--प्राचीन फ़ोनीशी भाषाकी एक बोली । इसकी लिपिका नाम प्यूनिक लिपि था, जो **फ़ोनीशियन लिपि** (दे०)से ही विकसित हुई थी । नव प्यूनिक बोली और लिपि प्यूनिकसे ही विकसित हुई थी, जो बादमें समाप्त हो गयी ।

प्यूल--**सूडान वर्ग** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा । इसका क्षेत्र सेनेगल-गिनीके पास पश्चिमी अफ्रीकामें है । इसे फ़ुला भी कहते हैं । इसके बोलनेवाले प्यूल या फ़ुला जातिके लोग हैं ।

प्रकार--(दे०) **भेद** ।

प्रकारवाचक प्रत्यय--एक प्रकारका **प्रत्यय** (दे०) ।

प्रकारवाचक विशेषण--(दे०) **विशेषण** ।

प्रकृति--(१) (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**में **प्रयत्न** उपशीर्षक । (२) मूल शब्द, जिससे विभिन्न प्रकारके रूप बनाये जाते हैं। प्रकृति तीन प्रकारकी होती हैं :--**प्रातिपदिक**, **धातु**, **प्रत्यय** ।

प्रकृति-प्रत्यय प्रधान भाषा--**योगात्मक भाषा** (दे०)का एक अन्य नाम ।

प्रकृति भाव--जब शब्दमें कोई विकार नहीं होता, उसकी यथावत् स्थिति रहती हो, उसे प्रकृति भाव कहते हैं । प्रकृत्या = स्वभावेन अवस्थितिः प्रकृतिभावः ।

प्रकृति भाव संधि--(दे०) **संधि** ।

प्रकृति-संधि--(दे०) **संधि** ।

प्रकृतीकृत शब्द (naturalized)––ऐसा शब्द, जिसे किसी विदेशी भाषासे लेकर अपनी भाषाकी प्रकृतिके अनुकूल रूप दे दिया गया हो।

प्रक्रिती (prakriti)––**मराठी** (दे०)का एक अन्य नाम।

प्रक्षेप लिपि––बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमें-से एक।

प्रगृह्य––'प्रग्रह्'से बननेवाले इस शब्दका अर्थ है, 'जो रोकने या पकड़ने योग्य हो'। संस्कृत व्याकरणमें 'प्रगृह्य' नाम उन शब्दान्त-स्वरोंको दिया गया है, जिनके आगे आनेवाले स्वरोंसे संधि नहीं होती। संधिसे रोक देनेके कारण ही इनकी यह संज्ञा है। यह नाम प्रातिशाख्यों तथा पाणिनि (प्लुतप्रगृह्या अचि नित्यम्) आदिमें आता है। तैत्तिरीय प्रातिशाख्यने इसके लिए **प्रग्रह**[1] नामका प्रयोग किया है। अन्य लोगोंने इसे दि या गित् आदि भी कहा है। पाणिनिके अष्टाध्यायीमें १. १. ११-से १. १. १६ तक प्रगृह्य देखे जा सकते हैं। (दे०) 'विवृत्ति'।

प्रग्रह––**प्रगृह्य** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

प्रचय––**एक श्रुति** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

प्रचयसुर––सुर (दे०)का एक भेद।

प्रणात्मक भविष्य (promissive future)––ऐसा भविष्य, जिसमें प्रण, प्रतिज्ञा, वायदा आदिका भाव हो। जैसे 'मैं तुम्हारा काम कर दूँगा'। इसका अन्य नाम **प्रतिज्ञात्मक भविष्य** है।

प्रतिध्वनि शब्द––किसी वस्तुके नामकी प्रतिध्वनिपर आधारित शब्द, जैसे **लोटा-ओटा, पानी-वानी, कल-वल** आदि। (दे०) **शब्द**।

प्रतिनाम––**सर्वनाम** (दे०)का एक दूसरा नाम।

प्रतिबंधात्मक वाक्य (conditional sentence)––ऐसा वाक्य, जिसमें शर्त या प्रतिबंध हो।

प्रतिबद्ध बलाघात (conditional strass)––ऐसा बलाघात, जो ध्वन्यात्मक या रूपात्मक परिस्थितियों आदि-पर निर्भर या आधारित हो।

प्रतिवेष्ठित (retroflex)––(दे०) **मूर्द्धन्य**।

प्रतिज्ञात्मक भविष्य––**प्रणात्मक भविष्य** (दे०)का एक अन्य नाम।

प्रतिलोम अन्वक्षर संधि––(दे०) **संधि**।

प्रतीकवाद––भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धान्त। इसे **निर्णय-सिद्धान्त** (दे०) भी कहते हैं।

प्रतीकात्मक लिपि––सच्चे अर्थोंमें लिपि न होते हुए भी यह लिपिके बहुत समीप है। यों इसे भावाभिव्यक्तिकी **प्रतीकतामक-पद्धति** कहना कदाचित् अधिक ठीक होगा। इसमें **आँखके सहारे दूरस्थ व्यक्तिके विचार एवं उनके द्वारा भेजी गयी वस्तुओंसे भी जाने जा सकते हैं, यह पद्धति लिपि कही जा सकती है**। कई देशों और कबीलोंमें प्राचीन कालसे इसका प्रचार मिलता है। तिब्बती-चीनी सीमापर मुर्गीके बच्चेका कलेजा, उसकी चर्बीके तीन टुकड़े तथा एक मिर्चा लाल कागज़में लपेटकर भेजनेका अर्थ है कि युद्धके लिए तैयार हो जाओ। **गार्डका लाल या हरी झंडी दिखलाना, युद्धमें सफेद झंडा फहराना तथा स्काउटोंका हाथसे बात-चीत करना भी इसीके अंतर्गत आ सकता है। गूंगों-बहरोंके वार्तालापका आधार भी कुछ इसी प्रकारका साधन है।** फतेहपुर ज़िलेमें ब्राह्मण तथा क्षत्रिय आदि उच्च जातियोंमें लड़कीके विवाहका निमंत्रण हल्दी भेजकर तथा लड़केके विवाहका निमंत्रण सुपारी भेजकर दिया जाता है। भोजपुर प्रदेशमें अहीर आदि जातियोंमें हल्दी बाँटकर निमंत्रण देते हैं। इलाहाबादके आस-पास छोटी जातिके लोगोंमें गुड़ बाँटकर निमंत्रण देते हैं। **कुछ स्थानोंपर किसीके मृत्यु संस्कारमें भाग लेनेके लिए आनेवाला निमंत्रण-पत्र कोनेपर फाड़कर**

---

(१) 'प्रग्रह' का प्रयोग संध्याभावके लिए भी हुआ है।

भेजा जाता है। इस प्रकार विचाराभिव्यक्तिके साधन और स्थानोंपर भी भिन्न-भिन्न प्रकारके मिलते हैं। कांगो नदीकी घाटीमें हरकारा जब कोई बहुत महत्त्वपूर्ण समाचार लेकर किसीके पास जाता था तो भेजनेवाला उसे एक केलेकी पत्ती दे देता था। यह पत्ती ६ इंच लम्बी होती थी और दोनों ओर पत्तीके चारचार भाग किये रहते थे। कम महत्त्वके समाचारके साथ चाकू या भाले आदि भेजे जाते थे। सामान्य समाचारोंके साथ कुछ भी नहीं भेजा जाता था। कहना न होगा कि यह लिपिके अन्य रूपोंकी भाँति बहुत व्यापक नहीं है और इसका प्रयोग बहुत ही सीमित है।

प्रत्यक्ष उल्लेखसूचक सर्वनाम––(दे०) **सर्वनाम**।

प्रत्यक्षकर्म––(दे०) **कर्म**।

प्रत्यक्ष विधि––(दे०) **काल**।

प्रत्यय (suffix)––**प्रातिपदिक** (दे०) अथवा **धातु** (दे०)के अंतमें जोड़े जानेवाले वर्ण अथवा वर्ण-समूह। अर्थात् प्रत्यय वह ध्वनि, अक्षर या शब्दांश है, जिसे धातु अथवा शब्दके पीछे लगाकर कोई रूप या शब्द बनाते हैं। जैसे मूर्ख + ता = मूर्खता। यहाँ 'ता' प्रत्यय है। 'प्रत्यय' शब्द इ (जाना) धातुमें 'प्रति' उपसर्ग लगाकर बना है और इसका अर्थ है 'पास जाना' या 'की ओर जाना'। कई प्रातिशाख्योंमें इसका प्रयोग 'पश्चग' या 'पीछे' जानेवाला अर्थ में मिलता है। तैत्तिरीय प्रातिशाख्यमें आता भी है 'प्रत्येति पश्चादागच्छति इति प्रत्ययः परः।' 'प्रत्यय' शब्दका प्रयोग **उपसर्ग, मध्यसर्ग** (infix), **आगम, विभक्ति** आदि अर्थोंमें भी हुआ है। निरुक्तमें प्रत्ययके अर्थमें **अंतकरण** तथा **उपबन्ध** शब्दोंका प्रयोग मिलता है। उसमें प्रत्यय 'विचार' या 'मत'के अर्थमें प्रयुक्त हुआ है। जैनेन्द्र तथा मुग्धबोध व्याकरणोंमें प्रत्ययके लिए 'त्य' शब्दका प्रयोग मिलता है। संस्कृतमें प्रत्यय प्रमुखतः छह प्रकारके हैं: (क) **सुप्**, (ख) तिङ्, (ग) कृत्, (घ) **तद्धित** (ङ) **धातु प्रत्यय** अथवा **धात्ववयव** (जैसे चिकीर्ष आदिमें)। (च) **स्त्री प्रत्यय**। अर्थके आधारपर प्रत्ययोंको **कर्तृवाचक** (अक-पालक), **भाववाचक** (ता-लघुता), **योग्यतावाचक** (तव्य-कर्तव्य), **गुणवाचक** (वर-नश्वर), **इच्छावाचक** (सा-जिज्ञासा), **अपत्यवाचक** (इ–दाशरथि), **ऊनवाचक** (क–पुत्रक), **अनिश्चयवाचक** (चित्-कदाचित्), **काल संबंधवाचक** (तन–सनातन, पुरातन), **रीतिवाचक** (तः–स्वतः), **संबंधवाचक** (त्य–पाश्चात्य) तथा **स्थानवाचक** (त्र–अत्र, तत्र, सर्वत्र) आदि कई वर्गोंमें रखा जा सकता है। हिन्दी प्रत्ययोंके भी इसी प्रकारके भेद बनाये जा सकते हैं। जैसे––**क्रमवाचक** (वाँ–आठवाँ), **व्यापारवाचक** (एरा–सँपेरा, कसेरा, चितेरा), **पात्रवाचक** (औता–कठौता, कचरौटा) **युक्तवाचक** (ऐत-लठैत, बरछैत), **समुदायवाचक** (क–चौक, सप्तक) तथा **प्रकारवाचक** (सा–तैसा, वैसा, ऐसा) आदि। कार्यकी दृष्टिसे हिन्दी प्रत्ययोंके प्रमुख भेद ये हैं:––(क) **बहुवचनवाचक प्रत्यय** (ओं–लड़कों, लोगों), (ख) **लिंगवाचक प्रत्यय** (ई-घोड़ी, लड़की), (ग) **कारकवाचक प्रत्यय** या **विकृत रूपवाचक प्रत्यय** (ए-घोड़े; घोड़ेको मारो), (घ) **कृत् प्रत्यय** (अक–बैठक), (ङ) **तद्धित प्रत्यय** (आलु–दयालु)। हिन्दीमें ऐसे भी कुछ प्रत्यय हैं, जो कृत् तथा तद्धित दोनों ही कहे जा सकते हैं, जैसे आई–लड़ाई ('लड़'से), भलाई (भलासे) या आर–पैसार (पैस'से), लोहार ('लोहा'-से)। (दे०) **कृत्, तद्धित** तथा **उपसर्ग**। प्रत्यय प्रायः शब्दके अंतमें आते हैं, किंतु कभी-कभी शब्दके आरंभमें भी इसे रखते हैं, जैसे बहुपटुः (विभाषा सुपो बहुच्, पुरस्तात्तु)। इसीलिए इसे अंग्रेजी फ़िक्स (fix) शब्दका पर्याय मानकर इसके **पूर्वप्रत्यय** या **उपसर्ग** (prefix), **मध्यप्रत्यय** या **अंतर्मुक्त प्रत्यय** (inffix), **प्रत्यय** या **परप्रत्यय** (suffix) ये तीन भेद किये जा

सकते हैं ।

प्रत्यय धातु––ऐसी धातु, जो मूल धातुमें या संज्ञा, विशेषण आदि शब्दोंमें प्रत्यय जोड़कर बनायी गयी हो । जैसे कामय, **राजाय आदि**। महाभाष्यमें आता है––प्रत्ययधातु गोपायति, धूपायति......।

प्रत्यय प्रधान भाषा––**योगात्मक भाषा** (दे०)-का एक अन्य नाम ।

प्रत्ययांत––जिसके अंतमें कोई प्रत्यय हो । संस्कृतमें प्रायः 'प्रत्ययान्त प्रकृति'के लिए इसका प्रयोग मिलता है ।

प्रत्ययांत प्रकृति––ऐसी प्रकृति (या मूल शब्द), जो वस्तुतः प्रकृति (या मूल शब्द) न हो, अपितु, प्रकृति या मूल शब्दमें कोई प्रत्यय जोड़कर बनायी गयी हो, यद्यपि कार्य प्रकृति (या मूल शब्द)का करती हो ।

प्रत्याहार––(दे०) **शिवसूत्र** ।

प्रत्याहारसूत्र––पाणिनि द्वारा अपने अष्टाध्यायीके आरंभमें दिये गये १४ सूत्र । इन सूत्रोंसे प्रत्याहार (दे०) बनाये जाते हैं, इसीलिए इन्हें प्रत्याहार सूत्र कहा जाता है। इनका एक अन्य नाम **शिवसूत्र** (दे०) भी है।

प्रत्येक बोधक विशेषण––(दे०) **विशेषण** ।

प्रत्येक वाचक विशेषण––(दे०) **विशेषण** ।

प्रत्येक सूचक विशेषण––(दे०) **विशेषण** ।

प्रथम प्राकृत––पालि (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

प्रथम प्रेरणात्मक––(दे०) **धातु** ।

प्रथम बलाघात––**बलाघात** (दे०)का एक रूप।

प्रथम साधित (primary devivative)––किसी ऐसे शब्दसे बना शब्द, जो स्वयं साधित न हो ।

प्रथमा––कर्ता कारक (दे०) **कारक** ।

प्रदान––(१) **करण** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य पारिभाषिक शब्द । (२) (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें** प्रयत्न उपशीर्षक ।

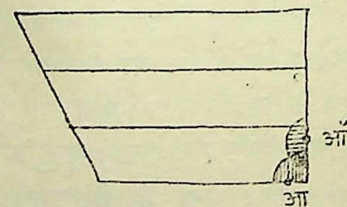
प्रधान अक्षर––(दे०) **स्वरोंका वर्गीकरणका मान स्वर** उपशीर्षक ।

प्रधान उप-वाक्य––(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक ।

प्रधान कर्म––(दे०) **कर्म** ।

प्रधान स्वर––(दे०) **स्वरोंका वर्गीकरणमें मानस्वर** उपशीर्षक ।

प्रध्वनि (diaphone)––'डायफ़ोन'का प्रयोग डैनियल जोन्सका अपना है । उनके अनुसार एक ध्वनिको एक प्रकारके शब्दोंमें भी, किसी भाषिक समाजके सभी लोग ठीक एक प्रकार उच्चारित नहीं करते । अधिकांश **व्यक्ति बोलियों** (दे०)में उसका रूप कुछ इधर-उधर हो जाता है । एक ध्वनिके इन सभी रूपोका सामूहिक नाम डायफ़ोन या प्रध्वनि है । उदाहरणार्थ 'ई' डायफ़ोनका अर्थ होगा किसी भाषा जैसे––हिन्दीमें 'ई' के विभिन्न लोगों द्वारा उच्चरित सभी रूप । हर डायफ़ोन या प्रध्वनिका सभी दृष्टियों (स्थान, प्रयत्न, मात्रा आदि)से अपना-अपना क्षेत्र होता है, कभी-कभी दो प्रध्वनियाँ एक दूसरेके क्षेत्रमें भी आ जाती हैं । जैसे हिन्दी 'आ' और 'ऑ' प्रध्वनियोंके क्षेत्र निम्न चित्रमें एक दूसरेको कुछ सीमा तक ढक रहे हैं :––



प्रबंध––एक प्रकारके **शब्द** (दे०) ।

प्रबल बलाघात––**बलाघात** (दे०) का एक भेद ।

प्रमाणाक्षर––(दे०) **स्वरोंका वर्गीकरण में मानस्वर** उपशीर्षक ।

प्रमादाधारित शब्द (phantom word)–लेखक या मुद्रकके प्रमादके कारण बना हुआ शब्द ।

प्रमुख उपवाक्य––(दे०) **वाक्य में वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक ।

प्रमुख कर्म––(दे०) **कर्म** ।

प्रमुख क्रिया––(दे०) **काल** ।

प्रयत्न––(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**में प्रयत्न उपशीर्षक ।

प्रयोग शाला-ध्वनिविज्ञान––प्रायोगिक ध्वनि-विज्ञान (दे०)का एक अन्य नाम ।

प्रयोजनवती लक्षणा––एक प्रकारकी लक्षणा । (दे०) **शब्द-शक्ति** ।

प्रवर्तनार्थ––(दे०) **अर्थ** ।

प्रवाद––लोकोक्ति(दे०)के लिए प्रयुक्त, एक संस्कृत नाम ।

प्रवाही––सप्रवाह (दे०)के लिए प्रयुक्त, एक अन्य नाम ।

प्रवेशमुखी सुर––**सुर** (दे०)का एक भेद ।

प्रशन (prussian)––प्राचीन प्रशन या प्रुशन, भारोपीय परिवारकी **बाल्टिक** (दे०) उप-शाखाकी एक भाषा थी जो १७वीं सदीमें समाप्त हो गयी । इसे प्रशन या **बोरशियन** (borussian) भी कहते हैं । आधुनिक प्रशन एक जर्मन बोली है । प्रशनका क्षेत्र प्रशा है ।

प्रशस्त संयुक्त–स्वर (wide diphthong) ––(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**का संयुक्त-स्वर उपशीर्षक ।

प्रशान्त महासागरीय भाषा खंड––विश्वको जिन चार भाषा-खंडोंमें बाँटा गया है, उनमें एक 'प्रशान्त महासागरीय खंड' भी है । इसमें प्रमुखतः निम्नांकित पाँच भाषा-परिवार हैं:(१)इंडोनेशियन या मलायन परिवार (दे०), (२) मलेनेशियन परिवार (दे०), (३) पालेनेशियन परिवार (दे०), (४) पापुआ परिवार (दे०), और (५) आस्ट्रेलियन परिवार (दे०) । कभी-कभी पाँचों परिवारोंको सम्मिलित नाम **आस्ट्रोनेशियन परिवार** या **मलय-पालेनेशियन परिवार** भी दे दिया जाता है । कुछ लोगोंने प्रथम तीन परिवारोंके लिए भी मलय-पालिनेशियन परिवारका प्रयोग किया है । उपर्युक्त पाँचों परिवार श्मिटके अनुसार **आस्ट्रिक परिवार** (दे०)के उप-परिवार मात्र हैं ।

पाँचों परिवारोंका स्रोत एक है, इसी कारण बहुत-सी वैयाकरणिक बातोंमें इनमें समानता है । केवल 'शब्द-समूह' और 'ध्वनि'में ही प्रधान अंतर है । प्रमुख समान लक्षण निम्न हैं––(१) लगभग सभी अश्लिष्ट-योगात्मक हैं । (२) धातुएँ प्रायः सभीमें दो अक्षरोंकी होती हैं । (३) स्वराघात बलात्मक है । (४) आदि या मध्य या अन्तमें शब्द जोड़कर पद बनाये जाते हैं । (५) सभी धीरे-धीरे वियोगात्मक हो रही हैं ।

प्रश्नबोधक सर्वनाम––(दे०) **सर्वनाम** ।

प्रश्नवाचक संगम––**संगम** (दे०)का एक भेद ।

प्रश्नवाचक सर्वनाम––(दे०) **सर्वनाम** ।

प्रश्नसूचक चिह्न––एक प्रकारका विराम चिह्न । इसे प्रायः लोग विरामका एक स्वतंत्र भेद मानते हैं । किंतु वस्तुतः यह विरामका एक भेद न होकर, एक पूर्णविराम है । विशेष विवरणके लिए देखिए **विराम** ।

प्रश्नसूचक वाक्य––ऐसे वाक्य जिनमें किसी प्रकारका प्रश्न हो, जैसे––तुम प्रतिदिन प्रातः कहाँ जाते हो ?

प्रश्नसूचक सर्वनाम––(दे०) **सर्वनाम** ।

प्रश्रित संधि––(दे०) **संधि** ।

प्रश्लिष्ट योगात्मक (incorporating) ––**योगात्मक भाषा** (दे०)का एक भेद ।

प्रश्लिष्ट-योगात्मक भाषा––**योगात्मक भाषा** (दे०)का एक भेद ।

प्रश्लिष्ट योगात्मक वाक्य––(दे०) **वाक्य**में **वाक्योंके प्रकार** उपशीर्षक ।

प्रश्लिष्ट संधि––(दे०) **संधि** ।

प्रश्लिष्ट सुर––**सुर**(दे०)का एक भेद ।

प्रश्लिष्ट स्वरित––एक प्रकारका **स्वरित**(दे०)।

प्रसन्नताबोधक अव्यय––(दे०) **मनोविकार-बोधक अव्यय** ।

प्रसारण––**संप्रसारण** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम ।

प्रसू (prasu)––**प्रेसुन**(दे०)का एक नाम ।

प्रस्ताव वैशिष्ट्योत्पन्ना आर्थी व्यंजना––एक प्रकारकी व्यंजना । (दे०) **शब्द-शक्ति** ।

प्रांतीय भाषा––किसी प्रान्त विशेषमें बोली जानेवाली भाषा । जैसे 'पंजाबी', बंगाली

आदि। इसका अन्य अर्थोंमें भी प्रयोग होता है। (दे०) भाषाके विविध रूपमें **बोली और भाषा**।

प्राइमरी प्राकृत––प्राकृतका एक भेद। (दे०) **मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा**।

प्राकृत––एक मध्ययुगीन भारतीय आर्यभाषा (दे०) **मध्ययुगीन भारतीय आर्यभाषा** में **प्राकृत** उपशीर्षक।

प्रागकेन्द्र (प्राग स्कूल)––आधुनिक भाषा-विज्ञानका एक प्रमुख स्कूल या केन्द्र। प्राग चेकोस्लावियाकी राजधानी है। भाषाके अध्ययनकी दृष्टिसे आस-पासके कई देशोंका यह केन्द्र है। इस स्कूलकी विचारधारापर स्लाव प्रभाव भी पड़ा है। इस स्कूलका आरंभ १९२६के आसपास हो गया था, किन्तु, इसकी मौलिक स्थापनाएँ १९२८ के आसपास सामने आयीं। इस स्कूलके प्रमुख आचार्य त्रुबेट्सक्वॉय तथा रोमन याकोबसन हैं। यों हैले, फांट, मार्टीने और मैथियसने भी उल्लेख्य कार्य किया है। इस स्कूलका कार्य प्रमुखतः ध्वनि-बलाघात, सुर, अक्षर, संगम (juncture) तथा ध्वनिग्राम क्षेत्रमें है। इसके कई सिद्धान्त बहुत ही जटिल हैं। (इस स्कूलकी पठनीय सामग्री है: trubetzkoy—principes de phonologie; R. jakobson, fant, halle—preliminaries to speech analysis)

प्रागुपजन––**आदि स्वरागम** (दे०)का एक अन्य नाम।

प्राचीन (archaic)––जो (रूप, शब्द या अभिव्यक्तिका ढंग आदि) आधुनिक न हो। इसे अप्रचलित भी कहते हैं।

प्राचीन एलामाइट लिपि––**एलामाइट लिपि** (दे०)का एक प्रकार।

प्राचीन कुकी (old kuki)––**चीनी परिवार** (दे०)के तिब्बती-बर्मी उपपरिवारकी असमी-बर्मी शाखाके कुकी-चिन वर्गका एक उप-वर्ग। इस वर्गमें सोलह भाषाएँ हैं। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग ४८,८१४ थी।

प्राचीन कैनानाइट (old canaanite)––सामी परिवारके **कैनानाइट** (दे०) वर्गकी एक विलुप्त भाषा।

प्राचीन ग्रंथ लिपि––एक **ग्रंथ लिपि** (दे०)।

प्राचीनता––**अभिरक्षण** (दे०)के लिए प्रयुक्त, एक अन्य नाम।

प्राचीन नागरी लिपि––**ब्राह्मी लिपि** (दे०) की उत्तरी शैलीसे गुप्त और कुटिल लिपि होते विकसित एक लिपि (दे०) **देवनागरी लिपि**।

प्राचीन नार्स––(दे०) **नार्स**।

प्राचीन पूर्वी––**अवधी** (दे०)का प्राचीन नाम।

प्राचीन प्रशन––(दे०) **प्रशन**।

प्राचीन फ़ारसी––**ईरानी** (दे०)की एक भाषा। (दे०) **फ़ारसी**। प्राचीन फ़ारसीका काल यों तो संस्कृतकी तरह लगभग १५०० ई० पू० से माना जा सकता है, किन्तु रचनाकालकी दृष्टिसे ८०० ई० पू० से २०० ई० तक माना गया है। इसमें हखमानी सम्राटोंके क्यूनीफ़ार्म अभिलेख मिलते हैं। इसका कोई और साहित्य उपलब्ध नहीं है।

प्राचीन बैक्ट्रियन––**अवेस्ता** (दे०)का एक अन्य नाम। (दे०) **ईरानी**।

प्राचीन भारतीय आर्य भाषा––**भारतीय आर्य भाषा** (दे०)का प्राचीनतमकाल जो मोटे रूपसे १५०० ई० पू० से ५०० ई० पू० तक माना गया है। इसे प्रा० भा० आ० (अंग्रेज़ीमें o. i. a.) कहते हैं। इसके अन्तर्गत भाषाके दो रूप मिलते हैं––**वैदिक संस्कृत** और **लौकिक संस्कृत**। यों प्रायः दोनोंके लिए **संस्कृत** नामका प्रयोग होता है। यहाँ दोनोंपर अलग-अलग विचार किया जा रहा है।

वैदिक संस्कृत इस भाषाके अन्य नाम **संस्कृत, वैदिकी, छन्दस्** या **प्राचीन संस्कृत** आदि भी हैं। वैदिक संस्कृतका प्राचीनतम रूप ऋग्वेद संहितामें मिलता है। यों चारों वेद, ब्राह्मण और प्राचीन उपनिषदोंकी भाषा वैदिक संस्कृत ही है। इन ग्रन्थोंमें भाषाका एक

रूप नहीं है। ऋग्वेदके प्रथम और दसवें मंडलोंको छोड़कर शेषकी भाषा पर्याप्त प्राचीन है। यही भाषा **अवेस्ता** (दे०)के अधिक निकट है। प्रथम और दसवेंकी भाषा बादकी है। अन्य संहिताओं (यजुः, साम, अथर्व), ब्राह्मणों और उपनिषदोंमें कुछ अपवादोंको छोड़कर भाषाका क्रमसे विकसित होता रूप दृष्टिगत होता है। प्रो० आन्त्वाँ मेय्ये तथा कुछ और लोगोंका विचार है कि वैदिक संस्कृतका पुराना रूप तबका है जब आर्य पंजाबके आसपास ही आये थे, बादकी वैदिक रचनाओंकी विकसित भाषा तबकी है, जब वे मध्यदेशकी ओर और आगे बढ़े, और सभी दृष्टियोंसे भारतके अपेक्षाकृत प्राचीन निवासियोंका उनपर प्रभाव पड़ चुका था। वैदिक संस्कृतका एक तीसरा रूप (इस प्रकार वैदिक संस्कृतके **उत्तरी, मध्यदेशीय** और **पूर्वी तीन** रूप थे)भी है जो कदाचित् उस समयका है, जब आर्य मध्य देशसे भी पूरब पहुँच गये। यह काल आठ-नौ सौ ई० पू० के लगभग माना जा सकता है। वैदिक संस्कृतके जो रूप आज उपलब्ध हैं उन्हें उस कालकी बोलचालका रूप नहीं माना जा सकता। तत्कालीन बोलचालकी भाषाके वे साहित्यिक रूप मात्र हैं।

वैदिक संस्कृतकी ध्वनियाँ--मूल भारोपीय ध्वनियों (दे० **भारोपीय परिवार**)से वैदिक संस्कृतकी ध्वनियोंकी तुलना करनेपर यह स्पष्ट हो जाता है कि यहाँ तक आते-आते ध्वनियोंमें पर्याप्त परिवर्तन हो गया था। व्यंजनोंमें चवर्ग और टवर्ग दो नये वर्ग आ गये। ष, श आदि कुछ फुटकर ध्वनियाँ भी उग आयीं। दूसरी ओर तीन कवर्गोंके स्थानपर केवल एक रह गया। स्वरों और स्वनंत या मध्य स्वरोंमें बहुत परिवर्तन हो गया।

ध्वनियोंकी पूरी सूची इस प्रकार है :---

मूल स्वर---अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ऌ, ए, ओ

संयुक्त स्वर---ऐ (अइ), औ (अउ)

कंठ्य---क, ख, ग, घ, ङ

तालव्य---च, छ, ज, झ, ञ

मूर्द्धन्य---ट, ठ, ड, ढ, ळ, ळ्ह, ण

दंत्य---त, थ, द, ध, न

ओष्ठ्य---प, फ, ब, भ, म

दंतोष्ठ्य---व्

अंतस्थ---य, र, ल, व

शुद्ध अनुनासिक---अनुस्वार (ं)

संघर्षी---श, ष, स, ह्, ह, ≍(जिह्वामूलीय), ≍(उपध्मानीय)

स्वरोंमें पहले ए, ओ, ऐ, औ को संयुक्त स्वर माना जाता था और इनके उच्चारण क्रमसे 'अइ', 'अउ', 'आइ', 'आउ' माने जाते थे, किन्तु अब विद्वान् ए, ओ को मूल स्वर मानते हैं और संयुक्त स्वर केवल ऐ, औ माने जाते हैं, जिनके उच्चारण क्रमसे 'अइ' 'अउ' थे। व्यंजनोंमें-मूर्द्धन्य ध्वनियोंका पाया जाना वैदिक संस्कृतकी बहुत बड़ी विशेषता है। इस परिवारकी किसी भी अन्य भाषामें यह वर्ग नहीं है। इसके आगमनके विषयमें कुछ विद्वानोंका अनुमान है कि द्रविड़ भाषाओंमें ये ध्वनियाँ थीं, भारतमें आनेपर आर्यभाषापर उन्हीं के प्रभावके कारण इनका विकास हुआ। सम्भवतः इसीलिए ऋग्वेदके पुराने अंशोंमें ये ध्वनियाँ कम और केवल कुछ विशेष स्थितियोंमें ही पायी जाती हैं। पूट (poot) और फ़ॉरटुनटोफ़ (fortunatov) आदि विद्वानोंने ऋ, र, ल आदिके बाद आनेवाली दन्त्यध्वनियोंके मूर्द्धन्य हो जानेका सिद्धान्त विद्वानोंके समक्ष रखा था जिसे **फ़ॉरटुनटोफ़ नियम** (fortunatov law) कहते हैं। जैसे--विकृत--विकट, संकृत--संकट, कर्त--काट (=गहराई), मृद्--मुण्ड आदि)। किन्तु अनेक अपवादों (मृदु, गर्दभ आदि)के मिलनेके कारण ब्रुगमान, बार्थोलोम तथा वाकरनागल आदि विद्वानोंने इसे नियम रूपमें स्वीकार नहीं किया। यों कुछ अंशोंतक यह नियम काम करता है, इसमें संदेह नहीं। वस्तुतः उपर्युक्त दोनों ही बातोंको **इसका**

कारण माना जा सकता है। और बादमें तो यों भी दन्त्य ध्वनियाँ मूर्द्धन्य होनेलगीं (जैसे पतति--पडति, क्वथति--कढइ)। 'ळ्ह्' ध्वनि 'ळ्' का महाप्राण है। दंतोष्ठ्य 'व' अंग्रेज़ीके V के समान ध्वनि है। यह 'फ़' का घोष रूप है। माध्यन्दिनी शिक्षाके द्वारा वैदिक संस्कृतमें इसके भी होनेके प्रमाण मिलते हैं। 'ह' विसर्ग (:) है जो घोष 'ह' का अघोष रूप है। जिह्वामूलीयका उच्चारण 'ख़' जैसा था और उपध्मानीयका 'फ़' जैसा। वस्तुतः अन्तिम चारों संघर्षी ध्वनियाँ एक ही 'ह' के चार **ध्वन्यंग** (allophone) (दे०) हैं।

लौकिक संस्कृत या संस्कृत—लौकिक संस्कृत-के अन्य नाम **संस्कृत** तथा **क्लासिकल संस्कृत** भी हैं। ऊपर कहा जा चुका है कि वैदिक संस्कृतमें भाषाके तीन स्तर मिलते हैं--**उत्तरी, मध्यदेशीय** और **पूर्वी**। कहना न होगा कि इन ऐतिहासिक और भौगोलिक रूपोंके समानान्तर बोलचाल-के भी **उत्तरी, मध्यदेशीय, पूर्वी** ये तीन रूप रहे होंगे। लौकिक संस्कृतका आधार इन तीनमें प्रथम अर्थात् **उत्तरी** रूप (बोलचाल का) ही माना जाता है, यों आगे चलनेपर वह अन्य दो-से भी प्रभावित हुई होगी। साहित्यमें प्रयुक्त भाषाके रूपमें इसका आरंभ ८वीं सदी ई० पू० से होता है। साहित्यिक या क्लैसिकल संस्कृतकी आधार भाषाका बोलचालमें प्रयोग लगभग ५वीं सदी ई० पू० या कुछ क्षेत्रोंमें उसके कुछ बाद तक होता रहा, किन्तु तबतक उत्तरी भारतके आर्य भाषा-भाषियोंमें कई भौगोलिक बोलियाँ जन्म ले चुकी थीं, जो आगे चलकर विभिन्न **प्राकृतों, अपभ्रंशों** एवं **आधुनिक आर्य भाषाओंके** जन्मका कारण बनीं। पाणिनि (जो स्वयं उत्तरी भागमें तक्षशिला-के पास शालातुर नामक स्थानके थे) ने ५वीं सदी ई० पू०के आसपास ही इस भाषाको व्याकरण-बद्ध किया। **संस्कृत** नाम कदाचित् उसी कालका है। विकसित होती भाषा पंडितोंको बिगड़ती लगी, अतः उसे **संस्कृत** किया गया। हार्नली, ग्रियर्सन तथा वेबर आदिने संस्कृतको बोलचालकी भाषा नहीं माना था, किन्तु डॉ० भंडारकर तथा डॉ० गुणेने इसका खंडन कर यह बहुत पहले दिखला दिया था कि संस्कृत भी कभी बोलचालकी भाषा थी। यह बात दूसरी है कि भाषाका प्रायः साहित्य-प्रयुक्त रूप बोल-चालके रूपसे भिन्न होता है। बोलचाल-की भाषा साहित्यिक भाषाके विरुद्ध परम्परा-गत कम और विकासोन्मुख अधिक होती है। संस्कृतके बोलचालकी भाषाके यों तो बहुतसे प्रमाण पाणिनिके सूत्रोंमें ही ('प्रत्यभिवादेऽशूद्रे' आदि) हैं। इसके अतिरिक्त विकसित संस्कृतको व्याकरणकी परिधिमें रखनेके लिए ही कात्यायनने वार्तिकोंकी रचना की थी। यहाँ 'विकसित' का अर्थ ही है कि वह बोलचालमें व्यवहृत होकर आगे बढ़ रही थी।

साहित्यमें संस्कृतका प्रयोग महाभारत-रामायणसे लेकर शाहजहाँके काल तक हुआ है और कुछ अंशोंमें तो अब भी हो रहा है। यूरोपमें जो स्थिति लैटिनकी रही है, वही स्थिति भारतमें संस्कृतकी रही है। भारत-की सभी भाषाओंने इससे अगणित शब्द लिये हैं और भारत ही नहीं अपितु आसपासकी तिब्बती, अफ़गानिस्तानी, चीनी, जापानी, कोरियाई और पूर्वी द्वीपसमूहोंकी भाषाएँ तथा अरबी आदिमें भी इससे शब्दादि लिये गये हैं। भारतकी भाषाओंके लिए तो अब भी यह कामधेनु है। संस्कृतका साहित्य विश्वके सम्पन्नतम साहित्योंमें एक है और कालिदास विश्वके सर्वश्रेष्ठ कवियोंमें एक हैं। ऊपर इस बातका उल्लेख किया जा चुका है कि संस्कृत उत्तरी भारतमें प्रयुक्त बोलीपर आधारित थी और इस प्रकारकी कमसे कम तीन बोलियाँ उस कालमें थीं--**उत्तरी, मध्यदेशीय** और **पूर्वी** (कुछ लोग एक चौथे रूप **दक्षिणी**की भी कल्पना करते हैं), किन्तु संस्कृत इन तीनों भागोंके लोगोंमें

शिष्ट भाषा, साहित्यिक भाषा या राष्ट्र-भाषाके रूपमें प्रयुक्त होती थी । **संस्कृतकी ध्वनियाँ**––ऊपर वैदिक संस्कृतकी ध्वनियाँ दी जा चुकी हैं । उनसे लौकिक संस्कृत-ध्वनियाँ कुछ ही भिन्न थीं । ऋ, ॠ और ॡ का, स्वर ध्वनियोंके रूपमें, उच्चारण सम्भवतः नहीं होता था । ळ्, ळ्ह जिह्वा-मूलीय और उपध्मानी का लोप हो गया था। दंतोष्ठ्य व भी संभवतः नहीं था । वैदिकीमें अनुस्वार शुद्ध अनुनासिक ध्वनि थी, जिसे कुछ लोगोंने स्वर तथा कुछने व्यंजन माना है । लौकिक संस्कृतमें आकर पिछले स्वरसे मिलकर उसका उच्चारण अनुनासिक स्वर-के समान होने लगा ।

प्राचीन भारतीय आर्य भाषाकी कुछ सामान्य रचनात्मक विशेषताएँ––(१)भाषा श्लिष्ट योगात्मक थी, (२) शब्दोंमें धातुका अर्थ प्रायः सुरक्षित था । लौकिक संस्कृततक आते-आते कुछ-कुछ अर्थ-परिवर्तन आरंभ हो गया था । (३)वैदिकीमें रूप-रचना अत्यन्त जटिल थी । रूप बहुत अधिक थे । इनमें अपवादोंकी संख्या भी पर्याप्त थी । लौकिक संस्कृतमें आकर रूप कुछ कम हो गये और अपवाद भी अपेक्षाकृत बहुत कम हो गये । भाषा अधिक नियमबद्ध हो गयी। इस नियमबद्धतामें पाणिनिकाभी हाथथा । (४)वैदिक संस्कृत संगीतात्मक भाषा थी । साथ ही स्वराघात भी था, यद्यपि वह बहुत प्रमुख नहीं था । स्वराघातके कारण अर्थमें परिवर्तन भी हो जाता था । संस्कृततक आते-आते संगीतात्मकता समाप्त होने लगी और स्वराघातका और विकास हो गया था । (५) तीन लिंग और तीन वचन थे । (६) वाक्यमें शब्दका स्थान निश्चित नहीं था । शब्द प्रायः कहीं भी आ सकते थे । कभी-कभी उपसर्ग भी मूल शब्दसे अलग हटाकर रखे जाते थे ।(७)वैदिक संस्कृतका शब्द-भंडार अधिकांशतः तत्सम शब्दोंका था । किन्तु तद्भव, देशज या विदेशी शब्द भी थे । तद्भव शब्द 'प्राकृत' या तत्का-लीन लोकभाषाके प्रभावके कारण (जैसे तैत्तिरीय संहितामें (स्वर्ग) सुवर्ग) विदेशी शब्द काल्डियन आदिके मिलते हैं । द्रविड़ तथा आस्ट्रिक आदिसे तो हजारों शब्द लिये गये । (जैसे कदली, नाग, तांबूल, कुण्ड, तूल, नीर, दंड, सूर्प आदि ।)

प्राचीन संस्कृत––वैदिक संस्कृत (दे०)का एक अन्य नाम ।

प्राचीन सकियन––शक(दे०) बोलीका एक नाम ।

प्राचीन स्कैंडिनेवियन––(दे०) **नार्स** ।

प्राचीन हिब्रू लिपि––कैनानाइट लिपि(दे०)-से विकसित एक लिपि । इसका प्रचार प्राचीन हिब्रू लोगोंमें था । **समेरिटन लिपि** जो आज भी समेरिटन लोगोंमें प्रचलित है, इसीसे निकली है ।

प्राच्य अपभ्रंश––अपभ्रंश (दे०)का एक भेद ।

प्राच्य पदवृत्ति संधि––(दे०) **संधि** ।

प्रातिपदिक––इसका शाब्दिक अर्थ है, 'जो प्रतिपद(= रूप)में हो ।' पाणिनिने कहा है––'प्रतिपदं गृह्णाति तत् प्रातिपदिकम् ।' 'प्रातिपदिक' शब्द पुराना है, ब्राह्मण ग्रंथोंमें इसका प्रयोग मिलता है । पाणिनिने इसकी परिभाषाके रूपमें कहा है––'अर्थवद् धातु-रप्रत्ययः प्रातिपदिकम्', अर्थात् धातु और प्रत्ययके अतिरिक्त कोई भी (शब्द) प्राति-पदिक है । इनके अनुसार प्रातिपदिकके अंतर्गत संज्ञा, सर्वनाम, विशेषणके अतिरिक्त कृदंत (जैसे गति ∠ गम् + क्तिन्)तद्धितान्त (रघु + अण् = राघव) तथा समास भी आते हैं। वार्तिककारके अनुसार प्रातिपदिकके अंतर्गत गुणवचन, सर्वनाम, अव्यय, तद्धितांत, कृदंत, समास, जाति, संख्या और संज्ञा ये नौ आते हैं । (दे०) लिंग ।

प्रातिपदिक-समास(stem compound)––ऐसा समस्त शब्द या समास जिसका एक सदस्य प्रातिपदिक हो ।

प्रातिहित सुर––सुर (दे०)का एक भेद ।

प्रादि––उपसर्ग (दे०)के लिए प्रयुक्त एक

प्राचीन नाम ।

प्रादि तत्पुरुष समास––(दे०) **समास** ।

प्रादि बहुव्रीहि समास––(दे०) **समास** ।

प्रादेशिक भाषा––ऐसी भाषा, जिसका प्रयोग किसी सीमित प्रदेशमें होता हो । भारतके विभिन्न प्रांतों या प्रदेशों (आँध्रप्रदेश आदि) की बंगला, उड़िया, असमी, कन्नड़, तेलुगु, तमिल आदि भाषाओंको प्रादेशिक भाषा कहते हैं ।

प्राप्त रूप (attested form)–ऐसा रूप जो कल्पित न हो बल्कि प्राप्त हो ।

प्रायोगिक ध्वनि-विज्ञान (experimental phonetics)––ध्वनिविज्ञान की एक उपशाखा, जिसमें विभिन्न यांत्रिक प्रयोगोंके सहारे ध्वनियों का अध्ययन किया जाता है । इसके अन्य नाम **यांत्रिक ध्वनि विज्ञान** (instrumental phonetics) या **प्रयोगशाला**-ध्वनिविज्ञान (laboratory phonetics) भी है । जैसा कि येस्पर्सनने कहा था, ध्वनि-विज्ञानकी इस शाखाको 'यांत्रिक' न कहकर 'प्रायोगिक' कहना अधिक उचित है, क्योंकि प्रयोग तो बिना मशीनके भी हो सकता है । ध्वनियोंके अध्ययनमें जब यों देखने-सुननेसे काम न चला तो ध्वनि-शास्त्रियोंने अध्ययन और विश्लेषणके लिए तरह-तरहके उपकरणोंका प्रयोग प्रारम्भ किया । इन उपकरणोंमें एक ओर तो कुछ बड़े सामान्य हैं, जैसे दर्पण आदि, और दूसरी ओर मशीनें हैं, जिनके संचालनके लिए यंत्रज्ञों की आवश्यकता पड़ती है । आज तो इस क्षेत्रमें इतनी जटिल मशीनोंका प्रयोग हो रहा है कि यह क्षेत्र मात्र भाषा-शास्त्रियोंके वशका नहीं है, जबतक कि वे गणित, भौतिक-शास्त्र तथा इंजीनियरिंगसे भी परिचित न हों । प्रायोगिक ध्वनि-विज्ञानमें प्रयुक्त होनेवाले प्रमुख यंत्र या उपकरण **मुखमापक** (दे०), **कृत्रिमतालु** (दे०), **पैलटोग्रामप्रोजेक्टर** (दे०), **क़ायमोग्राफ़** (दे०), **एलेक्ट्रो कायमोग्राफ़** (दे०), **इंकराइटर** (दे०), **क्रोमोग्राफ़** (दे०), **मिंगोग्राफ़** (दे०), **एक्सरे** (दे०), **लैरिंगोस्कोप** (दे०) **एंडोस्कोप** (दे०), **ऑसिलोग्राफ़** (दे०), **स्पेक्ट्रोग्राफ़** (दे०), **पैटर्न प्लेबैक** (दे०), **पिचमीटर** (दे०), **इंटेंसिटीमीटर** (दे०), **स्पीच-स्ट्रेचर** (दे०) **ऑटोफ़ोनोस्कोप** (दे०), **ब्रीदिंग फ्लास्क** (दे०) तथा **स्ट्रोबोलैरिंगोस्कोप** (दे०) आदि हैं । **ओवे, एलेक्ट्रिकल वोकल ट्रैक, फ़ार्मेण्ट ग्राफ़िङ्ग मशीन, कैस्केड, मॉडुलेशन ऑसिलेटर** तथा **कृत्रिम उच्चारण अवयव** आदि कुछ अन्य यंत्र इस क्षेत्रमें कामके लिए बनाये जा रहे हैं ।

प्रायोवाद––**लोकोक्ति** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक संस्कृत नाम ।

प्रारंभात्मक क्रिया (inchoative verb)–क्रिया जिससे किसी कार्यका प्रारंभ होना प्रकट हो ।

प्रावेन्सल (provencal)––एक **रोमान्स भाषा** (दे०) । पहले, पूरे दक्षिणी फ्रांसमें यह साहित्यिक भाषा थी । ११वीं सदीसे १४वीं सदीके मध्यतक इसमें गीतिकाव्य लिखा गया । १९०० के आसपास प्रसिद्ध कवि मिस्ट्रलने इसके साहित्यमें पुनर्जीवन देनेका प्रयास किया किंतु सफलता नहीं मिली । **लैंगेद्रोश** (दे०) इसके एक रूपका नाम है ।

प्रीसवेलियन––**पिसेनिअन** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

प्रे (pre)––**ब्रेक** (दे०) का एक अन्य नाम ।

प्रेनेस्टिनिअन (praenestinian)––भारोपीय परिवारकी इटैलिक शाखाकी **लैटिनो-फैलिस्कन** (दे०) उपशाखाकी एक विलुप्त बोली ।

प्रेम सिद्धांत––भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धांत । इसे **संगीत सिद्धांत** (दे०) भी कहते हैं ।

प्रेरणार्थक उपसर्ग, मध्यसर्ग या प्रत्यय (causative prefix, infix, suffix)––ऐसा **उपसर्ग** (दे०), **मध्यसर्ग** (दे०) या **प्रत्यय** (दे०) जिसका प्रयोग सामान्य क्रियासे **प्रेरणार्थक क्रिया** (दे०) बनवानेमें किया जाता है । जैसे––हिंदी में 'कर'

सामान्य धातु या क्रिया है, इसमें 'आ' या 'अवा' प्रत्यय जोड़कर प्रेरणार्थक क्रिया या धातु 'करा' या 'करवा' बनती है।

प्रेरणार्थक क्रिया (दे०) **धातु** और **क्रिया**।

प्रेरणार्थक धातु (दे०) **धातु** और **क्रिया**।

प्रेरक कर्ता––(दे०) **कर्ता**।

प्रेरित कर्ता––(दे०) **कर्ता**।

प्रेसुन (presun)––**वसी-वेरी** (दे०)का एक दूसरा नाम।

प्रेसेपोलितेन लिपि(presipolitain)––**फारसी क्यूनि फार्म लिपि** (दे०)का एक अन्य नाम।

प्लवमान तत्त्व(floating element)––वाक्यमें प्रयुक्त कोई अनावश्यक शब्द।

प्लात्तदिउश (plattdeutsch)––उत्तरी जर्मनीमें प्रयुक्त एक भारोपीय परिवारकी जर्मन बोली। यह निम्न जर्मनके अंतर्गत आती है।

प्लीन लेखन(pleane writing)––हिब्रू व्यांजनिक लेखन(consonantal writing)की एक पद्धति। इसमें केवल व्यंजनोंको लिखते थे, स्वरोंके लिए केवल कुछ अतिरिक्त चिह्न लगा दिये जाते थे।

प्लुत मात्रा––(overlong quantity)––एक प्रकारकी **मात्रा** (दे०)।

प्लुत स्वर(over long)––ऐसा स्वर जिसके उच्चारणमें **दीर्घ स्वर** (दे०)से भी अधिक समय लगता है। जैसे––ओ३म्में 'ओ'। (दे०) **मात्राकाल**; तथा **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण**।

प्लुत स्वरित––एक प्रकारका **स्वरित** (दे०)।

प्लुति संधि––(दे०) **संधि**।

प्लेटो (plateau)––**शोशोन**(दे०)वर्गका एक उपवर्ग। इस उपवर्गमें **शोशोनी-कोमंच, उटे-चेमेहुएवी** तथा **मोनो-पविओट्सो** भाषाएँ हैं।

फ

फकार––फ के लिए प्रयुक्त नाम (दे०)**कार**।

फदांग(phadang)––**तांगखुल** (दे०)की, मणिपुर (असम)में प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा–सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५०० थी।

फन्नै (fannai)–लुशाई पहाड़ियोंपर प्रयुक्त **लुशेई** (दे०)की एक बोली।

फन्नी लिपि––**क्यूनीफार्म लिपि** (दे०)का एक अन्य नाम।

फलदर्शक अव्यय––(दे०) **समुच्चय बोधक अव्यय**।

फलम चिऊ(falam chiu)––**शुन्क्ल** (दे०)-का एक अन्य नाम।

फल्दा कोटिया––माध्यमिक पहाड़ी बोली **कुमायूंनी** (दे०)की एक उपबोली जो अल्मोड़ा तथा नैनीतालमें फल्दकोटके आस-पास बोली जाती है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २०,९०८ थी।

फांटी(fanti)––आइवरी कोस्ट, गोल्ड कोस्ट की फांटी जाति द्वारा प्रयुक्त **सूडानवर्ग** (दे०)की एक नीग्रो भाषा।

फाँसी पारध (phasi pardh)––**पारधी** (दे०)का एक अन्य नाम।

फाकिअल (phakial)––**खाम्ती** (दे०)की असममें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ६२५ थी।

फाके (phake)––**फाकिअल** (दे०)का एक अन्य नाम।

फ़ॉरटुनटोफ़ नियम(fortunatou law)––संस्कृतमें टवर्गीय ध्वनियोंके संबंधमें फ़ॉरटुनटोफ़(fortunatov) द्वारा प्रस्तुत एक नियम। (दे०)**प्राचीन भारतीय आर्य भाषामें वैदिक संस्कृत**।

फ़ॉरमूसन––फ़ारमूसा द्वीपमें बोली जानेवाली एक **पौलिनेशियन**(दे०)भाषा। फ़ॉरमूसन शब्दका आधार पुर्तगाली शब्द 'फ़ारमोसा'

प्यूनिकसे ही संबद्ध माना गया है।

फोनेटिक्स (phonetics)--(दे०) **ध्वनि-विज्ञान**।

फ़्ये (phye)--**फोन** (दे०)का एक और नाम।

फ्रक्तुर (fraktur)--**जर्मन लिपि** (दे०)-का एक अन्य नाम।

फ्रांसिअन (francian)--उत्तरी फ्रांसकी एक बोली। आधुनिक परिनिष्ठित फ्रांसीसी भाषा इसीपर आधारित है। (दे०) **फ्रांसीसी**।

फ्रांसीसी--फ्रांसके बहुत बड़े भाग तथा स्विटज़रलैण्ड, बेल्जियम, उत्तरी-अफ्रीका, कनाडा, इंडोचीन, मैडागास्कर आदिमें लगभग ७ करोड़ लोगों द्वारा बोली जानेवाली एक प्रसिद्ध भाषा। फ्रांसमें इसके बोलनेवाले लगभग ४ करोड़ हैं। फ्रांसीसी नाम फ्रांसपर आधारित है। 'फ्रांस' शब्द मूलतः एक जातीय नाम है। जर्मनीमें राइन नदीके किनारे कभी एक प्राचीन जाति फ्रैंकों (franko) रहती थी। कुछ अन्य जर्मन-जातियोंकी भाँति इन फ्रैंक या फैंकों लोगोंने भी ५०० ई०के आसपास फ्रांसमें अपना राज्य स्थापित किया। फ्रैंक लोगोंका राज्य उत्तरी-पूर्वी फ्रांस था। इन फ्रैंक लोगोंके नामके आधारपर ही फ्रांस, फ्रेंच आदि शब्द बने हैं।

फ्रेंच एक रोमांस भाषा है। यह फ्रांसमें प्रयुक्त वलगर लैटिनसे विकसित हुई है। इसका प्राचीनतम लिखित रूप ८४२ ई०-का मिलता है। फ्रेंच भाषाका इतिहास तीन कालोंमें विभक्त है। (१) प्राचीनकाल प्रारंभसे १४वीं सदीतक है। (२) मध्यकालमें मोटे रूपसे १५वीं, १६वीं सदी तक साहित्यकी भाषा आती है। (३) आधुनिक काल १७वीं सदीसे आजतक है। प्राचीनकालमें 'फ्रेंच' नाम केवल उत्तरी फ्रेंचका था। फ्रांसीसीकी कई बोलियाँ थीं, जिनमें **लोरेन** (lorrain) **शम्पेन्वाँ** (champenois), **फ्रांसिअन, नार्मन, पिकर्द** आदि प्रमुख हैं। इनमें फ्रांसिअन उत्तरी फ्रांसमें 'इले द फ्रांस' की बोली थी। इसमें अच्छा साहित्य लिखा गया, साथ ही राजनीतिक और सामाजिक कारणोंसे भी इसे प्रधानता मिलती गयी। पेरिस इसके क्षेत्रमें था ही। फलतः धीरे-धीरे अन्य बोलियोंको दबाकर यह परिनिष्ठित फ्रांसीसी भाषा बन गयी। आधुनिक भाषाओंमें फ्रांसीसी यूरोपकी सबसे सुसंस्कृत भाषा मानी जाती रही है और १९वीं सदीमें लगभग सभी यूरोपीय देशोंमें उच्चवर्गके लोग इसे पढ़ते-पढ़ाते रहे हैं। पूरे यूरोपकी सभी भाषाओंको इसने प्रभावित किया है। स्वयं फ्रेंच भी अन्य भाषाओंसे बहुत प्रभावित हुई है। इसे प्रभावित करनेवाली भाषाओंमें प्रमुख लैटिन, ग्रीक, इतालवी, तथा जर्मन हैं। फ्रांसीसी लोगोंका भारतसे भी संबंध रहा है। हिन्दीमें कार्तूस और कूपन आदि फ्रांसीसी शब्द कहे जाते हैं। फ्रांसीसी साहित्य विश्वके संपन्नतम साहित्योंमें एक है। इसके प्रमुख साहित्यकारोंमें मांटेन, रूसो, विक्टर ह्यूगो, मोलियर, वाल्टेयर, अनातोले फ्रांस, बालज़क बादलेयर, रिंबो, मलार्मे आदि प्रमुख हैं। **गैस्कन** (दे०), **मारिशस क्रेओले** (दे०), **बर्गंडी** (दे०), **फ्रैंको-वेनेशिअन** (दे०)से भी इसका संबंध है।

फ्रिऊलिअन (friulian)--उत्तरी इटलीके फ्रिऊली प्रदेशमें प्रयुक्त एक रेटोरोमनिक बोली।

फ्रिज़िअन (frisian)--भारोपीय परिवारकी **जर्मनिक** (दे०)शाखाके पश्चिमी वर्गके निम्न जर्मन उपवर्गकी एक भाषा, जो फ्रीज़लैंड (नीदरलैंड)में लगभग ३५,००,००० फ्रिजिअन लोगों द्वारा बोली जाती है। इसका प्राचीनतम रूप ७वीं सदीका मिलता है। प्राचीन फ्रिज़िअन ऐंग्लो सैक्सनसे बहुत मिलती-जुलती है।

फ्रीजिअन (phrygian)--भारोपीय परिवार की एक प्राचीन भाषा, जो एशिया माइनरमें बोली जाती थी। इसके केवल कुछ अभिलेख ही मिलते हैं, जो ६ठी-७वीं सदी ई० पू०-के हैं।

फ्रीजो-आर्मीनी (phrygo-armenian)––**भारोपीय परिवार** (दे०)के सतम् वर्गका एक उप-परिवार । इसकी **फ्रीजी** (दे०) और **आर्मीनी** (दे०) दो शाखाएँ हैं ।

फ्रैंकोनिअन––कुछ मध्ययुगीन पश्चिमी जर्मनिक बोलियोंका एक सामूहिक नाम । इन बोलियोंमें उच्च और निम्न दोनों जर्मनकी कुछ-कुछ बातें मिलती हैं, यों उच्चकी अपेक्षाकृत अधिक मिलती हैं । प्रदेशका नाम फ्रैंकोनिआ होनेके कारण वहाँकी बोलियोंको यह नाम दिया गया है ।

फ्रैंको-प्रोवेंसल–– उत्तरी-पश्चिमी इटली, पश्चिमी स्विटज़रलैंड तथा पूर्वी फ्रांसकी कुछ बोलियोंके लिए अस्कोली नामक विद्वान् द्वारा १८७०के आस-पास दिया गया एक नाम । इन बोलियोंमें प्रोवेंसल तथा उत्तरी फ्रांसीसी दोनों हीकी कुछ-कुछ बातें मिलती हैं, इसीलिए उन्होंने यह नाम दिया ।

फ्रैंको-वेनेशिअन् (franco-venetian)––प्राचीन फ्रांसीसी और मध्ययुगीन वेनेशिअन (वेनिस नगरकी भाषा)को मिलाकर फ्रांसीसी भाँटों द्वारा बनायी गयी एक कृत्रिम भाषा । इसका प्रयोग वे अपनी उन कविताओंमें किया करते थे, जो उन्हें इटलीमें सुनानी होती थीं ।

फ्लाथेड (flathead)–**सलिश** (दे०)भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

फ्लेमिश––भारोपीय परिवारकी जर्मनिक उप-शाखाकी उत्तरी बेलजिअनमें (४५,००,-००० लोगों द्वारा)प्रयुक्त एक निम्न जर्मन भाषा ।

ब

बंग भाषा––**बंगाली** (दे०)का दूसरा नाम ।

बँगरही––**भोजपुरी** (दे०) बोलीका एक स्थानीय रूप, जो बलियाके पश्चिमी तथा आजमगढ़के पूर्वी क्षेत्रमें पश्चिमी और दक्षिणी 'भोजपुरी'की सीमाके पास बोला जाता है । इस क्षेत्रमें बाँगर उस क्षेत्रको कहते हैं, जहाँ गंगाकी बाढ़ नहीं जाती । इसी आधारपर यहाँकी बोलीको **बँगरही** या **बँगरहिया** कहा जाता है ।

बँगराही––हरदोईमें प्रयुक्त **कनौजी** (दे०)का एक स्थानीय नाम । इस प्रदेशके बाँगर होनेके कारण यह नाम पड़ा है ।

बँगला––**बंगाली** (दे०) भाषाके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

बंगश––**पश्तो** (दे०)की उत्तरी पूर्वी बोलीका कोहातमें प्रयुक्त एक रूप ।

बंगाली––(१) मागधी अपभ्रंशके पूर्वी रूपसे विकसित एक आधुनिक भारतीय आर्यभाषा जो प्रमुखतः बंगाल (पूर्वी और पश्चिमी)में बोली जाती है । बंगाली शब्दका संबंध बंगालके प्राचीन नाम 'बंग'से है । 'बंग' शब्द मूलतः कदाचित् अस्ट्रिकका है । 'बंग' में 'आल्' (हिन्दी वाल, वाला) प्रत्यय लगकर 'बंगाल' बना है और उसी आधारपर वहाँ की भाषाको **बँगला** या **बंगाली** कहा जाता है । इसके अन्य नाम **गौड़ी**, **प्राकृत**, **मागधी**, **गोल्ली** आदि भी मिलते हैं । पूर्वीय क्षेत्रोंकी भाषा मध्यदेशी तथा पश्चिमोत्तरी भाषासे वैदिककालमें ही भिन्न हो चुकी थी । प्राकृत तथा अपभ्रंश कालमें उस क्षेत्रकी अपनी 'श' आदि विशेषताओंका उल्लेख व्याकरण आदिके ग्रंथोंमें मिलता है । काव्यशास्त्रके ग्रंथोंमें गौड़ी रीतिके रूपमें भी इस अंचलकी शैलीकी विशेषताकी ओर संकेत है । ७७९ई०में रचित 'कुवलयमाला'में सबसे पहले कदाचित् इसी भाषाका उल्लेख है––'अड्डेत्ति उल्लवंते अह वेच्छइ गोल्लए तत्थ ।' बंगाली भाषाकी उत्पत्ति अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओंकी भाँति १०००ई०के आस-पास हुई । यों इसमें लिखित साहित्य प्रायः १४वीं सदीके पूर्व नहीं मिलता । डॉ० चटर्जीने बंगाली भाषाका प्रारंभ ९५० ई०से माना है तथा उसके इतिहास या विकासको (क) प्राचीनकाल

(९५०-१२००),(ख) मध्यकाल(१२००-१८००) तथा (ग) आधुनिक काल(१८००-अबतक),इन तीन कालोंमें विभाजित किया है। मध्यकालको उन्होंने (१) संक्रांति-काल (१२००-१३००), (२) पूर्वमध्यकाल (१३००-१५००) तथा (३) उत्तर मध्य-काल (१५००-१८००), इन तीन उपकालों-में बाँटा है। इस विभाजनको कुछ अधिक सरल रूपमें इस प्रकार भी रखा जा सकता है—(क) आदिकाल (१०००-१३००), मध्यकाल (१३००-१८००), आधुनिक-काल (१८००——)। बंगाली भाषामें संस्कृतके तत्सम शब्दोंका प्रयोग मराठीकी भाँति अधिक होता है। हिन्दीसे बंगालीने बहुतसे शब्द लिये हैं, दूसरी ओर हिन्दीको भी उपन्यास, गल्प, रसगुल्ला आदि शब्द दिये हैं। बंगला साहित्यको आदि(१२वीं-तक), चैतन्यपूर्व(१३वींसे १५वींतक),चैत-न्योत्तर (१६वींसे १८वीं) तथा आधुनिक, इन चार कालोंमें बाँटा गया है। प्राचीन बंगा-ली साहित्यमें कृत्तिवासी रामायण, काशी-रामदासका महाभारत, चंडीदासकी पदावली, केतकादासका क्षेमानंद-काव्य आदि प्रमुख हैं। आधुनिक लेखकोंमें बंकिमचंद्र, माइकेलमधु-सूदनदत्त, शरत्चन्द्र, रवीन्द्रनाथ ठाकुर आदि विशेष रूपसे उल्लेख्य हैं। आधुनिक बंगला साहित्य, आधुनिक भारतीय भाषाओंमें सर्वा-धिक सम्पन्न कहा जाता है। मध्यकालीन बंगाली साहित्य हिन्दीके कृष्णकाव्यसे प्रभावित है। ब्रजबुली साहित्य नामसे जो वहाँ साहित्य मिलता है, उसकी भाषामें भी व्याकरणिक दृष्टिसे पश्चिमी हिन्दी तथा मैथिलीके पर्याप्त तत्त्व हैं। दूसरी ओर आधुनिक कालमें बंगाली साहित्यने भी हिन्दीको काव्य (रवीन्द्रनाथ), उपन्यास (बंकिम, शरत्) तथा नाटक (डी० एल० राय)के क्षेत्रमें पर्याप्त प्रभावित किया है। १९३१की जनगणनाके अनुसार बंगाली बोलनेवालोंकी संख्या बंगालमें तथा बंगालके बाहर ५ करोड़ ३८ लाखसे कुछ ऊपर थी। बंगाली भाषाकी अपनी लिपि है, जो प्राचीन नागरी या कुटिल लिपिसे विक-सित हुई है।

ग्रियर्सनके अनुसार बंगाली भाषाको **केन्द्रीय या परिनिष्ठित बंगाली, पश्चिमी बंगाली, दक्षिणी-पश्चिमी बंगाली, उत्तरी बंगाली, राजबंगशी, पूर्वी बंगाली** तथा **दक्षिणी पूर्वी बंगाली**, इन सात बोलियोंमें बाँटा जा सकता है। इनमें परिनिष्ठित रूपोंको छोड़कर पश्चि-मीके अंतर्गत सराकी, खड़ियाठार, **पहाड़िया ठार** तथा माल पहाड़िया; उत्तरीके अंतर्गत कोच और सिरिपुरिया; राजबंगशीके अंतर्गत बाहे; पूर्वीके अंतर्गत हैजोंग तथा **सिलहटिया** एवं दक्षिणी-पूर्वीके अंतर्गत चाकमा उपबोलियाँ उल्लेख्य हैं। हैजोंग, बंगाली और तिब्बती-बर्मीका मिश्रित रूप है। चाकमाकी अपनी लिपि भी है, जो ब्राह्मीकी दक्षिणी शैलीसे निकली बर्मी लिपिसे मिलती-जुलती, किंतु उससे प्राचीन है। चाकमाके क्षेत्रके पास ही एक अन्य बोली डैंग्नेत भी है, जिसे बंगाली मिश्रित चीनी भाषा कहा जाता है। भारतके विभाजनके बाद पूर्वी बंगालकी बंगाली भाषा और उसके साहित्यका विकास पश्चिमी बंगा-लसे कुछ भिन्न रूपमें हो रहा है और उनमें कुछ ऐसे इसलामी तत्त्व आते जा रहे हैं, जो १९४७के पूर्व नहीं थे। (२) पूर्वी मागधीका हजारीबागमें प्रयुक्त एक नाम।

बंगाली लिपि—बंगला भाषाके लिए प्रयुक्त लिपि। (दे०) **असमिया लिपि**। बंगला लिपि-की उत्पत्तिके संबंधमें प्रमुखतः दो मत हैं। एकके अनुसार प्राचीन नागरी लिपिके पूर्वी रूपसे ११वीं सदीमें यह लिपि विकसित हुई।

অ আ ই ঈ উ ঊ ঋ ৯ এ ঐ ও
ঔ অং অঃ ক খ গ ঘ ঙ চ
ছ জ ঝ ঞ ট ঠ ড ঢ ণ ত থ
দ ধ ন প ফ ব ভ ম য র ল
ব শ ষ স হ

एक अन्य मतानुसार ब्राह्मीसे शारदा, नागरी, और कुटिल तीन लिपियाँ निकलीं। कुटिल लिपिसे ही बंगला(असमिया तथा मैथिली)––का विकास हुआ। इसका प्राचीनतम रूप ११७० ई०के बोधगयाके शिलालेखमें मिलता है। (दे०) **उड़िया लिपि, मैथिली लिपि** तथा **मणिपुरी लिपि**।

[उपर्युक्त बंगाली वर्णमालामें क्रमसे अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ लृ, ए, ऐ, ओ,औ, अं, अः, क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, द,ध, न, प, फ,ब, भ, म, य,र, ल, व, श, ष, स तथा ह हैं।]

बंगुई (bangui)––**बाँटू** (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा। इसका क्षेत्र कांगो और दुआलाके बीच तटीय प्रदेश तथा कुछ उत्तरी भागमें है।

बंजारा––(१) **जिप्सी** (दे०) भाषाके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम। बंजारा भाषाएँ भारतमें तथा भारतके बाहर बोली जाती हैं। (२) **नटी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम। (३) **बंजारी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

बंजारी––**राजस्थानी** (दे०)की एक बोली। 'बंजारी' संपूर्ण भारतमें विविध नामोंसे, कई बंजारा जातियों द्वारा बोली जाती है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग १,५८,५०० थी। इसका एक नाम **लभानी** भी है।

बंजोगी (banjogi)––**चीनी परिवार** (दे०) के 'कूकि-चिन' वर्गकी चिटगाँवकी पहाड़ियों-पर बोली जानेवाली एक भाषा। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या ८००के लगभग थी।

बंबइया गुजराती––(दे०) **बंबईकी बोली**।

बंबइया परभी––(दे०) **बंबईकी बोली**।

बंबई बोली––(१)––**कोंकणी** (दे०)की उप-बोली **परभी** (दे०)का एक अन्य नाम। इसे **बंबइया परभी** कहते हैं। (२)बंबई शहरमें प्रयुक्त **गुजराती** (दे०)की एक बोली। इसे **बंबइया गुजराती** भी कहते हैं।

बंबाला (bambala)––हेमिटिक परिवारकी एक **कुशिटिक** (दे०)बोली। इसका क्षेत्र सोमालीलैंडके पास है।

बंसवाडी (banswadi)––**मालवी** (दे०)का एक अन्य नाम।

बकार––ब के लिए प्रयुक्त नाम। (दे०) **कार**।

बकैरी (bakairi)––**करिब** (दे०) परिवार-की एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

बघावल––(१)**बघेली**की उपबोली **जुड़ार** (दे०)का बाँदा जिलेके दक्षिणी-पश्चिमी भागमें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप। (२) **ना-हरी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

बघलानी––**बाघली** (दे०)का एक नाम।

बघाटी––**पश्चिमी पहाड़ी** (दे०)की शिमला पहाड़ियोंपर बघाट तथा पटियाला, शिमला-कुथार आदिमें प्रयुक्त एक बोली। पटियाला-की 'बघाटी' शेषसे कुछ भिन्न है तथा इसके भी कई रूप हैं, जिनमें प्रधान धरमपुर तथा पिजनौरके हैं। बघाटी बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार २२,१९५ थी।

बघेलखंडी––**बघेली** (दे०)का दूसरा नाम।

बघेली––(१)'अवधी'का दक्षिणी रूप या उसके दक्षिणी क्षेत्रमें स्थित उसकी एक उप-बोली। ग्रियर्सनने इसे पूर्वी हिन्दीकी एक स्वतंत्र बोली माना था, किंतु अब इसे स्वतंत्र बोली न मान कर अवधीकी एक बोली या उपबोली माना जाता है। इसके क्षेत्रमें बघेल राजपूतोंके प्राधान्यके कारण इसे 'बघेली' नाम दिया गया है। इसे **बघेलखंडी** या **रीवाँई** भी कहते हैं। 'बघेली'का केन्द्र रीवाँ है, किंतु उसके आसपास दमोह, जबलपुर, मांडला, बाला-घाट, बाँदा, फतेहपुर तथा हमीरपुर आदि जिलोंके कुछ भागोंमें भी इसका शुद्ध या मिश्रित रूप बोला जाता है। ग्रियर्सन-के भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४६ लाखसे कुछ ऊपर थी। 'बघेली'के **तिरहारी** (दे०), **बुंदेली** (दे०), **गहोरा** (दे०), **जुड़ार** (दे०),

बनाफरी (दे०), **मरारी**(दे०), **पोवारी** (दे०), **कुंभारी** (दे०) तथा **ओझी** (दे०), ये ९ प्रधान स्थानीय रूप हैं। इसके कुछ अप्रधान रूप **गोंडवानी** (दे०) या **गोंडानी** (दे०) तथा **केवटी** आदि हैं। बघेलीमें साहित्य रचना नहीं हुई है। इस क्षेत्रके साहित्यिकोंकी भाषा, मध्ययुगमें 'अवधी' तथा 'ब्रज' और आधुनिक युगमें खड़ीबोली हिंदी है, यद्यपि उनकी भाषामें प्रयोग तथा शब्दकी दृष्टिसे कुछ बघेली प्रभाव भी हैं। बघेली लिखनेके लिए नागरी तथा कैथी दोनों ही लिपियोंका प्रयोग होता है। (दे०)**पूर्वी हिंदी** तथा **अवधी**। (२) **बुंदेली** (दे०)का छिंदवाड़ामें प्रयुक्त एक 'मराठी' मिश्रित रूप जो **छिंदवाड़ा-बुंदेली** (दे०)नामक वर्गमें आता है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३५,००० थी।

बघै करेन(baghai karen)——**ब्वे** (दे०)का एक अन्य नाम।

बचदी (bachadi)——'मालवी' (दे०)का एक अन्य नाम।

बजौर(bajaur)——**पश्तो**(दे०)की उत्तरी-पूर्वी बोलीका एक रूप।

बडग——**कन्नड़** (दे०)की एक बोली। इसका क्षेत्र नीलगिरि पर्वत है। वहाँ यह 'बडग' जाति द्वारा बोली जाती है। इस जातिका प्राचीन नाम 'वर्घेर' मिलता है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३०,६५६ थी। इसे 'बडगा' भी कहते हैं। यह बोली परिनिष्ठित कन्नड़के बहुत निकट है।

बडगा (badaga)——(१) **तेलुगु** (दे०)के लिए तमिल लोगों द्वारा प्रयुक्त एक नाम। (२) **बडग** (दे०)का एक अन्य नाम।

बडियार गड्डी——**टेहरी** (दे०)का एक रूप।

बड़ (bara)——**चीनी परिवार**(दे०)के तिब्बती-बर्मी उप-परिवारकी, असमी-बर्मी शाखाके बड़ वर्गकी पश्चिमी असममें प्रयुक्त एक भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,७१,६१२ थी। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार परिनिष्ठित बड़के बोलनेवाले १७८,३२० थे।

बड़वर्ग (bara group)——**चीनी परिवार** (दे०)या तिब्बती-चीनी परिवारके, तिब्बती-बर्मी उप-परिवारकी, असमी-बर्मी शाखाका, एक वर्ग। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ७,१५,६९६ थी।

बड़ी शान(big shan)——**ताई लोंग**(दे०)-का एक नाम।

बतर(batar)——**बोर**(दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

बत्तक——**इंडोनेशियन** (दे०) परिवारकी समोया प्रयुक्त एक भाषा। बोलनेवालोंकी संख्या १०,००,०००से ऊपर है।

बत्तक वर्ग——**इंडोनेशियन परिवार** (दे०)का कुछ बोलियोंका एक वर्ग। इस वर्गकी सभी बोलियाँ सुमात्रामें बोली जाती हैं।

बदक (badak)——१८९१की मध्यप्रदेशकी जनगणनाके अनुसार एक **बंजारा** बोली। इसका ठीक पता नहीं चलता। ग्रियर्सनका अनुमान है कि यह **बडगा**(दे०)ही है।

बद-कत(bad-kat)——एक **तिब्बती**(दे०) भाषा।

बदख़्शी——**फ़ारसी**(दे०)की बदख़्शाँ तथा काबुलमें प्रयुक्त एक बोली।

बदगेस(badages)—— **तेलुगु**(दे०)का एक पुराना 'पुर्त्तगाली' नाम।

बद्धमुक्त रूपग्राम——एक प्रकारका **रूपग्राम** (दे०)।

बद्ध-संगम(close junture)–एक प्रकारका **संगम** (दे०)।

बद्धाक्षर (close, check या closed syllable)–**अक्षर** (दे०)का एक भेद।

बधाणी——(दे०) **बधानी**।

बधानी——**गढ़वाली** (दे०)की, गढ़वालके बधान परगनेके मध्यवर्ती तथा पश्चिमी भागमें प्रयुक्त, एक उप-बोली। इसे **बधाणी** भी कहते हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके

बोलनेवालोंकी संख्या १४,१०८ थी।

बनपरा (banpara)—**चीनी परिवार** (दे०)-के तिब्बती-बर्मी उप-परिवारकी उत्तरी-पूर्वी असममें बोली जानेवाली पूर्वीय 'नागा' भाषा।

बनपरी—**बनाफरी** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

बनफ़रा (banfera)—**बनपरा** (दे०) का एक अन्य नाम।

बनयई लिपि—**सराफ़ी लिपि** (दे०) का एक अन्य नाम।

बनाफरी—(१) 'पश्चिमी हिन्दी'की बोली **बुंदेली** (दे०) का हमीरपुरके दक्षिण-पूर्वी भागमें तथा उसके आसपास प्रयुक्त एक स्थानीय रूप। इस क्षेत्रमें बनाफर राजपूतोंके प्राधान्यके कारण इसका नाम 'बनाफरी' पड़ा है। 'बनाफरी', 'बुंदेली'का 'पूर्वी हिन्दी'-की बोली 'बघेली'से प्रभावित एक रूप है। प्रभावकी कमी-बेशीके कारण इसके कई स्थानीय भेद हैं, पर उनके लिए अलग-अलग नाम नहीं है। कहा जाता है प्रसिद्ध लोकगाथा 'आल्हा खंड' मूल रूपसे 'बनाफरी'में ही लिखा गया था। उसका कथानक बनाफर राजपूतोंका ही है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३,३५,४०० थी। (२) पूर्वी हिन्दीकी **बघेली** (दे०) बोलीकी हमीरपुर जिलेके दक्षिणी-पूर्वी भागमें प्रयुक्त एक उप-बोली। इस क्षेत्रमें 'बनाफर' राजपूतोंके प्राधान्यके कारण इसका नाम **बनाफरी** या **बनापरी** पड़ा है। यह 'बघेली' और 'बुंदेली'का एक मिश्रित रूप है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ५,००० थी।

बनारसी—**पश्चिमी भोजपुरी** (दे०) का स्थानीय रूप, जो बनारसमें बोला जाता है। 'बनारसी उप-बोली'के अंतर्गत पेशेवालोंके अनुसार भी बोलीमें कुछ भेद मिलता है। ग्रियर्सनने भी इसका उल्लेख किया है। काशीके आधारपर इसे **काशिका** भी कहा जाता है।

बनिया लिपि—**बानिकोलिपि** (दे०) का एक अन्य नाम।

बनून (banun)—(१) **गारी** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक दूसरा नाम। (२) **लाहुली** (दे०)-का एक अन्य नाम।

बनै (banai)—**दसगया** (दे०) का एक अन्य नाम।

बनौधी—**अवधी** (दे०) का, पश्चिमी जौनपुरमें प्रयुक्त एक रूप।

बन्नू—**पश्तो** (दे०) की दक्षिणी-पश्चिमी बोलीका, बन्नू जिलेमें पढ़े-लिखे लोगों द्वारा प्रयुक्त, एक रूप।

बन्नूची (bannuchi)—'पश्तो'की दक्षिणी-पश्चिमी बोलीका, बन्नू जिलेके अनपढ़ व्यक्तियोंमें प्रयुक्त एक रूप (दे०) **बन्नू**।

बन्प (banpa)—**ज़येइन** (दे०) का एक रूप।

बन्यंग (banyang)—बर्मी भाषा **ज़येइन** (दे०) का एक रूप।

बन्यिन (banyin)—**ज़येइन** (दे०) का एक रूप।

बन्योक (banyok)—**ज़येइन** (दे०) का एक रूप।

बम (bama)—**'बर्मी'** (दे०) का बर्मी लोगोंमें प्रयुक्त एक नाम।

बम-कयिन (bama-kayin)—**स्गव करेन** (दे०) का एक बर्मी नाम।

बमुन लिपि—न्योया द्वारा इस सदीके आरंभमें बनायी गयी एक लिपि। यह भावमूलक लिपि है। इसके कुछ चिन्ह रेखात्मक तथा कुछ चित्रात्मक हैं।

बमोचि (bamochi)—१९२१की बड़ौदा जनगणनाके अनुसार **ब्वची** (दे०) का एक नाम।

बयतकम्मर (baytakammara)—**तेलुगु** (दे०) का एक नाम।

बरगंडी (burgundian)—(१) बरगंडीमें प्रयुक्त एक फ्रांसीसी भाषा। इसे **बोर्गिग्नों** भी कहते हैं। (२) एक विलुप्त पूर्वी जर्मनिक भाषा।

बरब (barab)—**यूराल्‌ अल्ताई** (दे०)

परिवारकी एक तुर्की वर्गकी भाषा, जो पश्चिमी एशियामें बोली जाती है।

बरबकोआ (barbakoa)—**टलसनक्-बरबकोआ** (दे०) वर्गकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसकी बोलियाँ **कयपकरा**, **किक्सो** आदि हैं।

बरम (barma)—**सूडान वर्ग** (दे०) की एक अफ्रीकी भाषा।

बराड़ी—शिमलाकी पहाड़ियोंपर बराड़में तथा उसके आस-पास बोली जानेवाली (क्यूँठली बोलीकी) एक उप-बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ७,९०० थी। (दे०) **क्यूंठली**।

बरारी—(१) **वर्हौडी** (दे०) का एक अन्य नाम। (२) शिमलेकी पहाड़ियोंपर बोली जानेवाली, **क्यूंठली** (दे०) बोलीकी एक उप-बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ७,८९४ थी। (३) **मराठी** (दे०) की बरारमें प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ७६,७७,४३२ थी। इस संख्यामें निज़ाम राज्य तथा मध्यप्रदेशके इस बोलीसे संबद्ध बोलियोंको बोलनेवाले भी सम्मिलित थे। इसे **बरारबोली** भी कहते हैं।

बरिबरि (bribri)—दक्षिणी अमेरिकी भाषा **टलसनक्** (दे०) की एक बोली।

बरी (bari)—**सूडान वर्ग** (दे०) की 'बरी' नामक नीग्रो जाति द्वारा प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा। इस भाषाका क्षेत्र एंग्लोइजिप्शियन सूडानमें गोंडोकोरोके आसपास है।

बरूपी (barupi)—**बहरूपिया** (दे०) का एक अन्य नाम।

बरेल (barel)—**भीली** (दे०) की प्राचीन छोटा उदयपुर स्टेटमें प्रयुक्त, एक बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार १,०००के लगभग थी।

बरोचकी (barochki)—**बलोची** (दे०) का एक अन्य नाम।

बर्गस्ता (bargasta)—'**ओर्मुड़ी**' (दे०) का एक अन्य नाम।

बर्गिस्ताँ—एक ईरानी (दे०) बोली।

बर्गिस्ता (bargista)—'**ओर्मुड़ी**' (दे०) का एक नाम।

बर्बर (berber)—हेमिटिक परिवारकी कुछ (तुआरेग, श्लुह, कबिल, ज़ेनेंगा, गुआंचे तथा ज़नेटे आदि) अफ्रीकी भाषाओंके एक वर्गका नाम।

बर्बर अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०) का एक भेद।

बर्मी—बर्माकी भाषा, जो **चीनी परिवार** (दे०)-की है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग पौने दो करोड़से कुछ कम है, यद्यपि इसके मूल बोलनेवाले १ करोड़के लगभग ही हैं। बर्मी भाषाका प्राचीनतम रूप ११वीं सदीके एक अभिलेखमें मिलता है। **चीनी** (दे०) की तरह ही इसमें भी एक सीमातक एकाक्षरता है। सुरका प्रयोग भी होता है। इसमें भी कुछ रिक्त शब्द हैं, जिनका काम केवल व्याकरणिक संबंध दिखलाना है। बर्मीपर शब्दोंकी दृष्टिसे आस्ट्रिक भाषाओंके तथा पालि आदि भारतीय भाषाओंका प्रभाव पड़ा है। आधुनिक कालमें अंग्रेजी शब्द भी पर्याप्त आ गये हैं। बर्मीकी प्रमुख बोलियाँ **अराकानी** (दे०), **यबेइन** (दे०), **सेर्गुई** (दे०), **यव** (दे०), **इंथा** (दे०), **तवोयन** (दे०) तथा **इनु** आदि हैं।

बर्मीलिपि—ब्राह्मीकी दक्षिणी शैलीपर आधारित लिपि, जो बर्मामें प्रयुक्त होती है। वर्तमान बर्मी लिपिमें ३२ व्यंजन तथा १० स्वर हैं।

बर्मी शान—**शानबर्म** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

बर्मे (barme)—**बघेली** (दे०) की रीवाँ और अजयगढ़ आदिमें बोली जानेवाली एक बोली। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १२३ थी।

बल—**बलाघात** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

बलजर (baljar)—**बंजारी** (दे०) का एक दूसरा नाम।

बलनचर (balanchar)--**बंजारी** (दे०) का एक अन्य नाम ।

बलपुरी (balpuri)--१८९१की हैदराबाद जनगणनाके अनुसार **हिन्दी** (दे०) का एक नाम ।

बलबंधु (balabandhu)--**मराठी** (दे०)-के लिए दक्षिण भारतमें प्रयुक्त एक नाम ।

बलह (balah)--दक्षिणी शानमें प्रयुक्त **तौंगथू** (दे०) का एक रूप ।

बलाइन (balain)--(दे०) **पलवी** (palawi) ।

बलाघात--एक प्रकारका **आघात** (दे०) ।

बलाघात वर्ग (stress group)--कई ऐसे अक्षरों (syllables) का एक वर्ग, जिनमें एक स्वर बलाघात युक्त हो ।

बलात्मक सर्वनाम (emphatic pronoun)--बल या जोर देनेके लिए प्रयुक्त कोई पुरुषवाचक सर्वनाम ।

बलात्मक स्वराघात--**बलाघात** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

बलायन (balaian)--एशिया माइनरकी एक विलुप्त एवं अज्ञात परिवारकी **एशियानिक** (दे०) भाषा । इसे **पलायन** (palain) या **पलवी** (palawi) भी कहते हैं ।

बलीकारक रूप (strong declension)--ऐसे कारक रूप, जो सामान्य नियमोंके अनुसार न हों । इन्हें **बली सुबन्त** भी कहते हैं ।

बली क्रिया (strong verb)--ऐसी क्रिया, जिसके रूप सामान्य नियमित प्रत्यय (जैसे अंग्रेजीमें ed) लगाकर नहीं बनाये जाते, अपितु अनियमित रूपसे बनते हैं । जैसे अंग्रेजीमें write-wrote-written; put-put-put; come-came-come आदि ।

बली क्रिया-रूप (strong conjugation)--बली क्रियाओंके रूप । इन्हें **बली तिङन्त** भी कहते हैं ।

बली तिङन्त--**बली क्रिया-रूप** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

बली सुबन्त--**बलीकारक रूप** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

बलूची (baluchi)--**बलोची** (दे०) का अशुद्ध नाम ।

बलोची--ईरानीके, पूर्वी या अफ़गानिस्तान-बिलोचिस्तान भाषा वर्गकी, बिलोचिस्तानमें तथा कुछ लोगों द्वारा पंजाब और सिंधमें बोली जानेवाली एक भाषा । इसके उत्तरी, पश्चिमी, पूर्वी आदि कई रूप हैं । बिलोचीकी उपबोलियोंमें बहावलपुरी, मकरानी या केची तथा **कल्लानी** आदि प्रमुख हैं । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४,८५,४०८ थी ।

बलेबेआ--एक **अंडमानी** (दे०) भाषा ।

बलै (balai)--१८९१की जनगणनाके अनुसार, **सिंधी** (दे०) का पूनामें प्रयुक्त एक रूप ।

बल्गेरिअन--(दे०) **स्लैवोनिक** ।

बल्तिस्तानी तिब्बती--बल्तिस्तान (कश्मीर)-में बोली जानेवाली एक **तिब्बती** (दे०) बोली । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,४८,३६६ थी । इसमें पुरिकी तिब्बतीके बोलनेवाले भी सम्मिलित थे ।

बल्ती--**बल्तिस्तानी तिब्बती** (दे०) का एक अन्य नाम ।

बल्ती लिपि--बल्ती बोलीके लेखनमें प्रयुक्त एक लिपि । इसका क्षेत्र कश्मीरके पास बल्तिस्तान है । यह लिपि रोमन तथा अरबी आदि कई लिपियोंके आधारपर बनायी गयी है ।

बल्दी (baldi)--**बंजारी** (दे०) का एक नाम ।

बवची (bavchi)--१८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार रीवाँकंथामें प्रयुक्त एक **बंजारा** (जिप्सी) भाषा । एक मतानुसार इसका संबंध **मावची** (दे०) से है ।

बशहरी (bashahri)--**कोची** (दे०) का एक अन्य नाम । बशहरसे संबद्ध होनेके कारण यह नाम पड़ा है ।

बश्किर (bashkir)--**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारके पश्चिमी तुर्की वर्गकी एक भाषा ।

बश्गली (bashgali)--**दरद** (दे०) भाषाओं-

के 'काफ़िर' वर्गकी काफ़िरिस्तानमें प्रयुक्त एक भाषा।

बशारिक—**गार्वी** (दे०)का एक अन्य नाम।

बस्तरी (bastari)—**हलबी** (दे०)का एक अन्य नाम।

बस्सा (bassa)—लाइबेरियाकी 'कुरुमन' नामक जातिमें प्रयुक्त **सूडान वर्ग** (दे०)की एक भाषा।

बहनर—मीकाँग नदीके बायें किनारेपर बोली जानेवाली एक **मोन-ख्मेर** (दे०) भाषा।

बहरंगल—पीर पंजाल दर्रेके दक्षिणमें प्रयुक्त **चिभाली** (दे०)की एक बोली।

बहल (bahal)–**सुकेती** (दे०)का एक रूप।

बहावलपुरिया—**पूर्वी बलोची** (दे०)का (पंजाबके बहावलपुरमें) प्रयुक्त एक रूप।

बहावलपुरी—लहँदाकी **मुल्तानी** (दे०)बोली–का एक अन्य नाम। बहावलपुरमें बोली जाने–के कारण यह नाम पड़ा है।

बहिर्मुखी-श्लिष्ट (external inflectional)—**श्लिष्ट-योगात्मक भाषा** (दे०)-का एक वर्ग।

बहिष्केन्द्रिक रचना (exocentric construction)—एक प्रकारकी रचना। (दे०) **वाक्यमें रचनाके प्रकार** उपशीर्षक।

बहुध्वनिचिन्ह (polyphone)—ऐसा चिन्ह या लिपिचिन्ह, जो विभिन्न संदर्भों या शब्दोंमें एकाधिक ध्वनियोंको व्यक्त करे। अंग्रेजी g या c ऐसे ही चिन्ह हैं।

बहुध्वनि व्यंजक वर्ण—कुछ लिपियोंमें प्रयुक्त ऐसा वर्ण, अक्षर, जो विभिन्न शब्दोंमें विभिन्न ध्वनियोंका द्योतन करे। जैसे अंग्रेजी सी(c)। यह कभी तो स् और कभी क् को व्यक्त करती है। ऐसी ध्वनियोंको **एकाधिक ध्वनि द्योतक वर्ण** भी कह सकते हैं। अंग्रेजी–में ऐसे वर्णोंसे लिखनेको heterographic spelling कहते हैं।

बहुपार्श्व विरोध (multilateral opposition)—एक प्रकारका **विरोध** (दे०)।

बहुरी (bahuri)—१९२१की बंबई जनगणनाके अनुसार बीजापुरमें ५४ व्यक्तियों द्वारा बोली जानेवाली एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

बहुरूपिया-बंजारी (दे०)की पंजाबमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,८७२ थी।

बहुवचन (plural number)—(दे०) **वचन**।

बहुवचनवाचक प्रत्यय—एक प्रकारका **प्रत्यय** (दे०)।

बहुव्रीहि समास—(दे०) **समास**।

बहुसंश्लेषात्मक (polysynthetic)—**प्रश्लिष्ट-योगात्मक** (दे०)का एक अन्य नाम।

बहुसंहित—**प्रश्लिष्ट-योगात्मक भाषा** (दे०)-का एक अन्य नाम।

बांकोटी (bankoti)—**कोंकणी** (दे०)की मुसलमानों द्वारा प्रयुक्त एक बोली। यह **संगमेश्वरी** (दे०)का एक रूप है

बांगनी (bangni)—**दफ़्ला** (दे०)का एक अन्य नाम।

बांगरू—**पश्चिमी हिन्दी** (दे०)की एक बोली, जो पंजाबके दक्षिणी-पश्चिमी भागमें करनाल, रोहतक, हिसार, पटियाला, नाभा, जींद एवं इनके आसपास तथा दिल्ली राज्य (नगर छोड़कर)में बोली जाती है। इस बोलीका क्षेत्र खड़ीबोली, अहीरवाटी, मारवाड़ी तथा पंजाबीसे घिरा है और इन सभी बोलियोंका इसपर प्रभाव है। वस्तुतः सभी दृष्टियोंसे इसका स्वतंत्र अस्तित्व मानना चित्य है, अर्थात् यह खड़ीबोलीका राजस्थानी (अहीरवाटी तथा मारवाड़ी) एवं पंजाबीसे प्रभावित एक उपरूप मात्र है। 'बाँगरू' नामका संबंध 'बाँगर'से है। 'बाँगर' विशेष प्रकारकी कुछ ऊंची भूमिको कहते हैं, जो नदीकी बाढ़ आदिसे न डूबे। यह प्रदेश इसी प्रकारका होनेसे 'बाँगर' या 'बाँगड़' कहलाता है। इसी कारणसे इस प्रदेशकी बोलीको 'बाँगरू' कहा गया। 'बाँगरू'के अन्य नाम 'बाँगड़ू', 'जाटू' या हरियानी' भी हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २१ लाख ६६ हजारसे कुछ कम थी।

बाँगरूका परिनिष्ठित रूप इसके क्षेत्रके बीचमें जींदके पास बोला जाता है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग आठ लाख साढ़े पचहत्तर हजारसे कुछ ऊपर थी। इसके अन्य स्थानीय रूप **हरियानी** (दे०), **जाटू** (दे०), **चमरवा** (दे०) तथा **हिंदी** (दे०) हैं।

बाँगरू या उसके उपरूपोंका साहित्य रचनामें विशेष प्रयोग नहीं हुआ है। यों कबीरके प्रसिद्ध शिष्य गरीबदास इसी क्षेत्रके थे और वे आजीवन प्रायः वहीं रहे भी, अतः उनकी भाषापर इस बोलीका पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। लोक साहित्यकी दृष्टिसे बाँगरू अवश्य पर्याप्त सम्पन्न है।

पश्चिमी हिन्दीकी अन्य बोलियोंकी भांति इसका भी विकास शौरसेनी अपभ्रंशके पश्चिमोत्तरी रूपसे हुआ है।

इस क्षेत्रमें उर्दू लिपिका प्रचार अधिक रहा है। अब इसका स्थान प्रायः नागरीने ले लिया है।

बांटू परिवार--अफ्रीकाका एक भाषा-परिवार। इस परिवारकी बांटू संज्ञा इसलिए दी गयी है कि इसकी सभी भाषाओंमें आदमीकेलिए साधारण ध्वनि परिवर्तनोंके साथ 'बांटू' शब्द ही प्रचलित है। यह परिवार मध्य और दक्षिणी अफ्रीकाके बहुत बड़े भाग तथा जंजीबार द्वीप आदिमें फैला है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५ करोड़से ऊपर है। जंजीबारकी 'स्वाहिली' भाषाको छोड़कर इसकी अन्य भाषाओंमें साहित्य प्रायः नहींके बराबर है। सुननेमें ये भाषाएँ बड़ी मधुर हैं। शायद इसका कारण यह है कि इनमें संयुक्त व्यंजनोंका प्रयोग कम होता है और सभी शब्द स्वरांत होते हैं। कहनेका ढंग भी कुछ संगीतात्मक-सा होता है। डेलाफोसे इसे सूडान वर्गसे संबंधित मानते हैं। **बांटू परिवारकी प्रमुख विशषताएँ**--(१) इस परिवारकी भाषाएँ अश्लिष्ट पूर्व योगात्मक हैं। शब्द वाक्यमें अलग-अलग रहते हैं। पदोंकी रचना उपसर्ग जोड़कर होती है। आकृतिमूलक वर्गीकरणमें हम इसका उदाहरण देख चुके हैं। (२) इन भाषाओंमें लिंग-विचार नहींके बराबर है। (३) कभी-कभी अर्थकी विभिन्नता स्वरोंके ही अन्तरसे हो जाती है। जैसे 'होफिनेल्ला'-का अर्थ 'बाँधना' है पर 'होफिनोल्ला' का अर्थ बिल्कुल उलटा 'खोलना' हो जाता है। (४) कोमलता और मधुरता इस वर्गका इतना प्रधान गुण है कि उधार शब्दोंमें भी परिवर्तन लाकर स्वानुकूल बना लेते हैं। उदाहरणार्थ 'क्राइस्ट' शब्द इस परिवारमें 'किरिसित' हो गया है। (५) इन परिवारकी भाषाओंके साधारण वाक्योंमें भी कविताकी भाँति ध्वनि-सामंजस्य रहता है। वाक्यके एक शब्दमें उपसर्ग लगाकर उसीकी वजनपर सभी शब्दोंमें परिवर्तन कर लिया जाता है। इस प्रकार छेक और वृत्ति अनुप्राससे इन लोगोंकी वाणी सर्वदा आभूषित रहती है। (६) इस परिवारकी दक्षिणी-पूर्वी भाषाओंमें क्लिक ध्वनियाँ भी मिलती हैं।

बांटू परिवारकी भाषाओं और उनके **विभाजन**के संबंधमें मतैक्य नहीं है। कुछ लोग इसमें लगभग डेढ़ सौ भाषाएं रखते हैं और उनको पूर्वी, मध्यवर्ती तथा पश्चिमी, इन तीन वर्गोंमें बाँटते हैं। ड्रेक्सेल तथा श्मिट आदि इसमें ९३ भाषाएँ मानते हैं और उन्हें सात वर्गोंमें रखते हैं। जॉन्सनने बांटमें ३९६ भाषाएँ शुद्ध बांटूकी तथा ८७ भाषाएं मिश्र मानी हैं। होम्बर्गरके अनुसार इसमें कुल ८३ भाषाएं हैं, जिन्हें निम्नांकित ११ वर्गोंमें रखा जा सकता है :--(१) **गांदा** (ganda)--इस वर्गमें 'गाँदा', 'न्योरो' तथा 'केरेव' आदि भाषाएँ हैं। इनका क्षेत्र विक्टोरिया झीलके उत्तर पूर्व है। (२) **रुआंडा** (ruanda)--इस वर्गकी प्रमुख भाषाएँ 'रुआंडा' तथा 'रुंडी' हैं। क्षेत्र टैंगेनीकाके उत्तरपूर्व है। (३) **उत्तरी-पूर्वी** (north eastern)--इस वर्गकी प्रमुख भाषाएँ 'क़िकुयु', 'कंबा', 'चग्गा' आदि हैं। इनका क्षेत्र किलिमंजारो है। (४) **उत्तरी वर्ग** (northern group)--इस वर्गकी प्रमुख भाषाएँ

पुस्तकें इसमें मिली हैं। दूसरी भाषा **लिथुआनियन** है। इसका क्षेत्र प्रशाके उत्तर-पूरबमें है। इसका साहित्य भी १६वीं सदीके बादसे आरम्भ होता है और इसकी पुरानी प्रसिद्ध पुस्तक महाकवि दोनेलेटिसकी 'सीज़न्स' है, जो १७५०के लगभग लिखी गयी थी। वैज्ञानिकोंकी दृष्टिसे यह भाषा बड़ी ही महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसका विकास बहुत धीरे-धीरे हुआ है और इसी कारण आज भी यह मूल भारोपीय भाषासे अपेक्षाकृत निकटतम है। इसमें एस्टि (संस्कृत अस्ति) एवं जीवाः जैसे रूप अब भी हैं। वैदिक संस्कृतिकी भाँति संगीतात्मकता और द्विवचन भी अभी इसमें है। इसका क्षेत्र अब रूसके अन्तर्गत है। इसकी तीसरी भाषा **लेट्टिश** या **लैट्वियन** है। यह रूसके पश्चिमी भागमें लेटिविया राज्य की भाषा है। यह लिथुआनियनसे अधिक विकसित है। इसमें भी साहित्यका आरम्भ १६वीं सदीसे हुआ है। कभी-कभी लोग इसे स्लाव भाषाओंके साथ रखकर इस उपशाखाको **बाल्टो-स्लाविक** कहते हैं।

बाल्टो-स्लावी (balto-slavic)—**भारोपीय परिवार** (दे०)के सतम् वर्गका एक उपपरिवार। इसकी **बाल्टी** (दे०) तथा **स्लावी** (दे०) दो शाखाएँ हैं।

बाल्टो-स्लानिक—**बाल्टो-स्लावी** (दे०)का अंग्रेजी नाम।

'बावरिआ (bawaria)—**बाओरी** (दे०)का एक अन्य नाम।

बास्क (basque)—फ्रांस और स्पेनकी सीमापर पेरीनीज़ पर्वतके पश्चिमी भागमें बोली जानेवाली एक भाषा। यह अनिश्चित परिवारकी मानी जाती है। इसे काकेशस, हामी, सामी, उत्तरी अफ्रीकाकी बर्बर (berber) तथा मेडिटरेनियन आदि भाषाओंसे संबद्ध करनेका प्रयास किया गया है, किंतु मान्यता किसीको भी नहीं मिली है। बास्ककी पूर्वजा भाषा **ऐक्विटेनियन** (aquitanian) थी, जिसके अब केवल कुछ नाम, (मनुष्यों तथा देवताओंके) ही मिलते हैं। ऐक्विटेनियन स्वयं **इबेरियन** (iberian)की एक बोली थी। इबेरियन कभी स्पेन तथा पुर्तगालमें बोली जाती थी। इसके भी कुछ थोड़ेसे शब्द ही उपलब्ध हैं। यह चारों ओरसे आर्य भाषाओंसे घिरी है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या दो लाखसे ऊपर है। इधर लगभग चार सौ वर्षोंसे कुछ साहित्य भी मिलता है। सबसे पुरानी पोथी १५४५ ई०की एक कविता पुस्तक कही जाती है। यों इसमें कुछ नाम ८वीं सदीतकके मिलते हैं। बास्ककी प्रधान विशेषताएँ निम्नोक्त हैं :–(१) यह अश्लिष्ट अन्तयोगात्मक भाषा है। (२) उपपद (article) परसर्गकी भांति बादमें लगता है। जैसे—जाल्दी = घोड़ा। जाल्दीअ = वह घोड़ा (the horse)। (३) सर्वनाम सेमिटिक और हैमिटिक परिवारसे मिलते-जुलते हैं। (४) क्रियाके रूप बहुत ही कठिन होते हैं। बिना अभ्यासके अधिकार पाना असंभव है। (५) क्रिया और सर्वनामका इसमें संयोग होता है। जैसे दकारकिओत = मैं इसे उसके पास ले जाता हूँ। (६) वाक्यकी बनावट कठिन होती है। क्रिया अधिकतर हिन्दीकी भांति अन्तमें लगती है। (७) लिंग-विचार केवल क्रियामें होता है। आश्चर्य यह है कि कहनेवालेके अनुसार क्रियाका लिंग परिवर्तित न होकर जिससे बात कही जाय, उसके अनुसार परिवर्तित होता है। उदाहरणार्थ—(क) सामान्य वाक्य—एज़ातकित् = मैं इसे नहीं जानता (ख) जब पुरुषसे कहा जाय—एज़ातकिआत् (ग) जब स्त्रीसे कहा जाय—एज़ातकिनात्। (८) क्रियामें आदरसूचक और निरादरसूचक दो रूप भी होते हैं। (९) धातु शब्दोंमें इतना छिप जाता है कि पता नहीं चलता। 'एउ' धातुसे 'नेबन' (मेरे पास था) शब्द बनता है, जिसमें 'एउ'का कोई भी स्वरूप स्पष्ट नहीं है। (१०) शब्दसमूह अधिक नहीं है। सूक्ष्म भावोंके लिए शब्दोंका बहुत अभाव है।

बास्क लिखनेमें लैटिन लिपिका प्रयोग होता है। बास्कको **इबेरो बास्क** (ibero-

basque), **युस्कारा**(euskara), **एस्कुरा** (eskura) आदि कई अन्य नामोंसे भी पुकारते हैं।

पश्चिमी शाखाकी बास्कका क्षेत्र पहाड़ी होनेके कारण, इसकी बहुतसी बोलियाँ विकसित हो गयी हैं, जिनमें प्रमुख सात-आठ हैं। बास्ककी बोलियोंका विभाजन कुछ इस प्रकार किया जा सकता है। इसकी दो शाखाएँ हैं। बिस्केयन (biscayan) बोली पश्चिमी भागमें बोली जाती है। दूसरी शाखा केन्द्रीय तथा उत्तरी बोलियों--गुइपुज़्कोअन (guipuzcoan), नवर्रीज़ (navarrese), लेबर्डीन (labourdine), सोउलीन (soulean) की है, जो केन्द्रीय भाग तथा उत्तरमें बोली जाती हैं। नवर्रीज़के बासन तथा हउट दो उपरूप हैं।

बाहरी सिराजी--**पश्चिमी पहाड़ी** (दे०)-की **सतलज वर्ग** (दे०)की एक बोली, जो सतलजके उत्तरी किनारेपर कुलूमें सिराजके आसपास बोली जाती है। ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २०,०००के लगभग थी। (दे०) **भीतरी सिराजी**।

बाहिंग (bahing)--**खंबू** (दे०)की एक बोली।

बाहे(bahe)---दार्जिलिंगकी तराईमें प्रयुक्त, **बंगाली**'की बोली, **राजबंग्शी** (दे०)की एक उपबोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४७,४३५ थी।

बाह्यजात (exogenous)--बाहरी परिस्थितियोंसे उत्पन्न ध्वनि या परिवर्तन आदि।

बाह्य पुनर्निर्माण (external reconstruction) एक प्रकारका **पुनर्निर्माण** (दे०)।

बाह्य प्रयत्न--(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**-में **प्रयत्न** उपशीर्षक।

बाह्य भाषा(outer speech)--(दे०) **भाषाके पक्ष**।

बाह्यमुक्त संगम (external open juncture)--एक प्रकारका **संगम**(दे०)।

बाह्य स्वर-विच्छेद(external hiatus) --**स्वर-विच्छेद** (दे०)का एक भेद।

बाह्याधारित (exogenous)--बाहरी बातोंपर आधारित (ध्वनि, परिवर्तन, प्रयोग आदि।

बाह्याभिमुखी संयुक्त स्वर--(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण** संयुक्त स्वर उपशीर्षक।

बाह्लीकी--**मागधी प्राकृत** (दे०)का एक जातीय रूप।

बिंझवारी--(दे०) **बिंझवाली**।

बिंझवाली--**छत्तीसगढ़ी** (दे०)। एक उपबोली, जो रायपुर, रायगढ़ तथा सारंगढ़ आदिमें, प्रमुखतः 'बिंझवाल' (स० विंध्य) तथा गौण रूपसे भुमिआ और भुंजिआ लोगों द्वारा बोली जाती है। ग्रियर्सनके भाषासर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग साढ़े नौ हजार थी। 'छत्तीसगढ़ी'की इस उपबोलीपर 'उड़िया' भाषाका प्रभाव पड़ा है।

बिंझिआ(binjhia)--**ब्रिजिआ** (दे०)एक अन्य नाम।

बिंदु--देवनागरी लिपिमें ं चिह्न जो ङ् (अंक), ञ् (चंचल), ण् (पंडा), न् (गंदा), म् (पंप) तथा कभी-कभी **चंद्रबिंदु** (दे०)के स्थानपर (में, क्यों) आता है।

बिंहली (binghlee)--१८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार **सिंहली** (दे०)का एक रूप। यह संभवतः 'सिंहली'का गलत छपा हुआ नाम है।

बिकल (bicol)--फिलिपाइन्स द्वीपोंपर लगभग ७,००,००० लोगों द्वारा प्रयुक्त मलय पालिनिशियन परिवारकी एक भाषा।

बिघोताकी बोली--**मेवाती** (दे०)का एक अन्य नाम।

बिचलामर(bich-lamar)--(दे०) **बीचला-मर**।

बिजनौरी--**खड़ी बोली**(दे०)का परिनिष्ठित रूप, जो बिजनौरमें बोला जाता है।

बिथिअन--एक प्राचीन भाषाका नाम।

(दे०) भारोपीय-एनाटोलियन परिवार ।

बिथिनिअन (bithynian)––एक एशियानिक (दे०) भाषा, जो अब नहीं बोली जाती। इसे कुछ लोग भारोपीय परिवारकी मानते हैं, किंतु अधिकांश इसके पारिवारिक संबंधके विषयमें किसी भी निर्णयपर नहीं पहुँच सके हैं। इसकी बहुत थोड़ी सामग्री (कुछ शिलालेखों आदिमें) प्राप्त हैं।

बिरुही (biruhi)––**ब्राहुई** (दे०)का एक अन्य नाम।

बिराहुई (birahui)––**ब्राहुई** (दे०)का एक अन्य नाम।

बिरोही (birohi)––**ब्राहुई** (दे०)का एक अन्य नाम।

बिर्जबासी (birjbasi)––व्रिजवासी (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

बिर्जिआ (birjia)––**बिजिआ** (दे०)का एक। अन्य नाम।

बिर्हाड़ (birhar)––(१) **खड़िआ** (दे०)के लिए, जसपुरमें प्रयुक्त, एक नाम (२) **खेरवारी** (दे०)की छोटा नागपुरमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १२३४ थी।

बिलासपुरिया––(दे०) **बिलासपुरी** ।

बिलासपुरी––(१) बिलासपुरमें प्रयुक्त **छत्तीसगढ़ी** (दे०) कानाम। इसे **बिलासपुरिया** भी कहते हैं। (२) **कहलूरी** (दे०) का एक अन्य नाम।

बिलिची (bilichi)––बर्मामें प्रयुक्त **मोप्वा** (दे०) की एक बोली।

बिलिन––एक कुशिटिक भाषा। अफ्रीकामें सोमालीलैंडके पास इसका क्षेत्र है।

बिलूची (biluchi)––**बलोची** (दे०)का अशुद्ध नाम।

बिलोक्सी (biloxi)––**बिलोक्सी वर्ग** (दे०) की एक अमेरिकी भाषा।

बिलोक्सी वर्ग (biloxi group)––**सिऔक्स** (दे०) भाषा-परिवारका एक वर्ग। इस वर्गमें दो भाषाएँ **बिलोक्सी** तथा **ओफ़ो** (दे०) हैं।

बिलोची (bilochi)––**बलोची** (दे०)का भारतमें प्रचलित नाम।

बिलोज़ (biloz)––**बलोची** (दे०)शब्दका तमिल उच्चारण। पहले तमिल लोग, बिलोचीको इसी नामसे पुकारते थे।

बिल्तुम (biltum)––**बुरुशस्की** (दे०) का एक दूसरा नाम।

बिश्नुपुरिया––**मयांग** (दे०)का एक अन्य नाम।

बिश्शउ––**गिरीपारी** (दे०)का एक स्थानीय रूप जो जुब्बल तथा शिमला पहाड़ियोंपर बोला जाता है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,७४५ थी।

बिसया (bisaya)––**इंडोनेशियन**(दे०)परिवारकी फिलिपाइन द्वीपमें प्रयुक्त एक भाषा। इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३२ लाख है।

बिसा (bisa)––**बाँटू** (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा। इस भाषाका क्षेत्र जंबज़ी नदीके उत्तर तथा न्यासा एवं टैंगेनिका झीलोंके पश्चिममें है। इसे **विसा** भी कहते हैं।

बिहारी––हिंदी प्रदेशकी एक उपभाषा, जो प्रमुखतः बिहारमें बोली जाती है। बिहारकी तीनों बोलियोंका एक वर्ग बनाकर उन्हें 'बिहारी' नाम देनेका श्रेय ग्रियर्सनको है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार बिहारी भाषाओंके क्षेत्रमें उसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३,६२,३९,९६७ थी तथा क्षेत्रसे बाहर लगभग ९,४०,८१५ थी। इसका भौगोलिक विस्तार उत्तरमें नैपालकी सीमाके आस-पाससे लेकर दक्षिणमें छोटानागपुरतक तथा पश्चिममें बस्ती, जौनपुर, बनारस और मिरजापुरसे लेकर पूर्वमें मालदा और दिनाजपुरतक है। इस प्रकार प्रमुखतः यह पूरे बिहार और उत्तरप्रदेशके बलिया, गाज़ीपुर, पूर्वी फैज़ाबाद, पूर्वी जौनपुर, आज़मगढ़, बनारस, देवरिया, गोरखपुर आदि ज़िलोंमें बोली जाती है।

बिहारीको 'पूर्वी बिहारी' और 'पश्चिमी

बिहारी' दो भागोंमें बाँटा जा सकता है। पूर्वी बिहारीके अंतर्गत **मैथिली** (दे०) और **मगही** (दे०) दो बोलियाँ हैं तथा पश्चिमी बिहारीमें केवल एक **भोजपुरी** (दे०)। ग्रियर्सनके अनुसार 'मगही', 'मैथिली'से इतनी मिलती-जुलती है कि उसे 'मैथिली'-की एक उपबोली माना जा सकता है। यदि इसे मान लें तो बिहारीके अंतर्गत केवल दो ही बोलियाँ 'मैथिली' और 'भोजपुरी' रह जाती हैं। डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी इन तीनों बोलियोंको एक वर्गमें रखनेके पक्षमें नहीं हैं। उनके अनुसार भोजपुरी शेष दो (मैथिली, मगही) से इतनी भिन्न है कि उसे इन दोनोंके साथ रखना समीचीन नहीं कहा जा सकता।

बिहारीकी बोलियोंमें साहित्य रचना प्रमुखतः केवल मैथिलीमें ही हुई है। बिहारी-की उत्पत्ति पश्चिमी मागधी अपभ्रंशसे हुई है। बिहारीके क्षेत्रमें लिखनेके लिए प्रमुखतः नागरी, कैथी, मैथिली, महाजनी तथा गौणतः बँगला (बंगाल-बिहारकी सीमापर) एवं उड़िया (उड़ीसा-बिहारकी सीमापर) लिपियोंका प्रयोग होता है।

बिहारी हिन्दी—सारनके मुसलमानोंमें प्रयुक्त **अवधी** (दे०) को दिया गया एक नाम।

बीकानेरी—उत्तरी मारवाड़ीका एक स्थानीय रूप, जो बीकानेरमें तथा उसके आसपास बोला जाता है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५,४३,७७० थी। (दे०) **मारवाड़ी**।

बीघोताकी बोली—**मेवाती** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

बीच-ला-मर (beach-la-mar)—पश्चिमी पैसिफ़िकमें बहुत दूर-दूरतक प्रयुक्त एक बोल-चालकी भाषा। इसके शब्द प्रमुखतः अंग्रेज़ीके हैं। इसे **चंदन अंग्रेज़ी** (sandal wood english) भी कहते हैं।

बीजापुरी—बीजापुरमें प्रयुक्त, **कन्नड़** (दे०)-के स्थानीय रूपका एक नाम।

बीररती ठार (birarati thar)—मोरभंजमें बीररती लोगोंमें बोली जानेवाली **उड़िया** (दे०) का एक नाम।

बीर्हुत (birhut)—बीर्हुत नामक जातिकी **उड़िया** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

बुंदेली—(१) हिंदीकी उप-भाषा **पश्चिमी हिंदी** (दे०) की एक बोली। इसके भाषा-भाषियोंमें बुंदेलोंकी प्रमुखताके कारण यह नाम पड़ा है। 'बुंदेला' नामकी व्युत्पत्ति अनेक प्रकारसे की गयी है। (क) 'छत्र-प्रकाश'के अनुसार पंचमको उनके भाइयोंने गद्दीसे उतार दिया था। पंचम गद्दीकी प्राप्ति-के लिए विंध्यवासिनी देवीके मंदिरमें घोर तपस्या करने लगे। कुछ दिनतक वे तपस्या करते रहे, पर उन्होंने देखा कि कोई परिणाम नहीं निकल रहा है। अंतमें निराश होकर उन्होंने तलवार निकाली और अपना सिर देवीको चढ़ानेके लिए अपनी गर्दनपर मारी। इतनेमें देवी प्रकट हुईं और उन्होंने उन्हें राज्य-प्राप्तिका वरदान दिया। तलवार गर्दनपर लग चुकी थी, किंतु बीचमें ही देवीके प्रकट होनेसे उनका हाथ हिल गया था, अतः बहुत हल्की लगी थी और उनकी गर्दनसे बूंद-बूंद रक्त निकल रहा था। इन्हीं बूँदोंके कारण पंचम और उनके वंशज बुंदेला कहलाये। (ख) 'हदीकतुल अकालीम'-के अनुसार बुंदेले मूलतः हरदेव नामके गहरवार राजपूत तथा एक बाँदीकी संतान हैं। बाँदीकी संतान होनेके कारण ही ये बुंदेला कहलाये। इसी प्रकार कई और भी मत दिये गये हैं, किंतु कोई भी साधार ज्ञात नहीं होता। बुंदेलोंका प्रमुख क्षेत्र 'बुंदेल खंड' कहा जाता है। इसी आधारपर इसे **बुन्देलखंडी** भी कहते हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ६८,६९,२०१ थी।

'बुंदेली' शुद्ध रूपमें झाँसी, जालौन, हमीरपुर, ग्वालियर, भोपाल' ओड़छा, सागर, नृसिंहपुर, सिवनी तथा होशंगाबादमें बोली जाती है। इसके कई मिश्रित रूप आगरा, दतिया, पन्ना, चरखारी, दमोह, बालाघाट

तथा नागपुर आदिमें प्रचलित हैं। इस प्रकार यह बोली दक्षिणी-पश्चिमी उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेशके मध्यभाग तथा बंबईके नागपुरके पासके उत्तरी-पूर्वी भागमें प्रयुक्त होती है और इसका क्षेत्र पूर्वी हिन्दी, पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी तथा मराठीके बीचमें है। 'बुंदेली'-का परिनिष्ठित रूप झाँसी, ओड़छा और सागरके आस-पास बोला जाता है और इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ३५,१९,७२९ थी। इसकी उपबोलियोंमें प्रमुख **पँवारी** (दे०), **लोधांती** (दे०), **खटोला** (दे०), **भदावरी**(दे०), **सहेरिया** (दे०), तथा **किनारकी बोली** (दे०) हैं। इसके क्षेत्रके उत्तरी तथा पूर्वी भागोंमें कुछ मिश्रित (ब्रज तथा बघेलीकी सीमाओंपर उनसे प्रभावित) उपबोलियाँ (ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इन सबकी सम्मिलित जनसंख्या लगभग ३,५६,६०० थी) हैं, जिनमें **बनाफरी** (दे०), **कुंड्री** (दे०), **तिरहारी** (दे०) तथा **निभट्टा** (दे०) उल्लेख्य हैं। इसी प्रकार दक्षिणमें भी इसके बहुतसे मराठी मिश्रित रूप हैं, जिनमें **लोधी** (दे०) **बुंदेली-छिंदवाड़ा** या **छिंदवाड़ा-बुन्देली** (दे०), **कोष्टी** (दे०), **कुम्हारी** (दे०) तथा **नागपुरी हिन्दी** (दे०) प्रधान हैं। इनमें 'छिंदवाड़ा बुंदेली' के भी कई स्थानीय या जातीय रूप हैं, जिनमें **बुंदेली** (दे०), **बुन्देली**, **पोवारी** (दे०) **गाओली** (दे०), **राघोबंसी** (दे०) तथा **किरारी** (दे०) आदि प्रमुख हैं। कुछ लोगोंके अनुसार बुंदेली और ब्रजभाषामें बहुत साम्य है और इस दृष्टिसे इन दोनोंको स्वतंत्र बोलियाँ न मानकर एक बोलीके दो प्रादेशिक रूप मानने चाहिये। किंतु मैं इसे स्वतंत्र उपभाषा माननेके पक्षमें हूँ।

बुंदेली बोलीका विकास शौरसेनी अपभ्रंशके दक्षिणी रूपसे हुआ है। बुंदेलीके क्षेत्रमें नागरी लिपिका ही प्रचार अधिक है। साहित्यकी दृष्टिसे बुंदेलीका अधिक महत्त्व नहीं है। केवल एक लाल कवि ही ऐसे हैं, जिन्होंने प्रमुखतः इसीमें साहित्य रचना की है। इनके ग्रंथका नाम 'छत्र-प्रकाश' है, जिसकी भाषा प्रमुखतः बुंदेली ही है। बुंदेली क्षेत्रके अन्य कवि ब्रजभाषाका ही प्रयोग करते रहे हैं। हाँ, उनकी ब्रजभाषा बुंदेलीसे प्रभावित अवश्य है। ऐसे कवियोंमें केशव, पद्माकर, पजनेशका नाम प्रमुख रूपसे लिया जा सकता है। बुंदेलीकी उपबोली बनाफरी लोक साहित्यकी दृष्टिसे बहुत प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि हिन्दी प्रदेशकी प्रसिद्ध लोक-गाथा 'आल्हखंड, की रचना मूलतः बनाफरीमें हुई थी। (२) **बघेली** (दे०) का बुंदेली मिश्रित रूप, जो बाँदा ज़िलेमें कालिंजरके पास बोला जाता है। पश्चिमी हिन्दीकी बोली 'बुंदेली' से यह भिन्न है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या दो लाखसे कुछ ऊपर थी। (३) **बुंदेली** (दे०)-का एक 'मराठी' मिश्रित रूप, जो **छिंदवाड़ा-बुंदेली** (दे०) वर्ग मेंसे एक है। यह छिंदवाड़ामें बोला जाता है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ८३,५०० थी।

बुंदेली-छिंदवाड़ी—(दे०) **छिंदवाड़ा-बुंदेली**।

बुकवित्सा (bukvitsa)—बोस्निया तथा दलमातिआमें, कैथलिक स्लाव लोगों द्वारा, पहले प्रयुक्त एक लिपि। **सिरिलिक** (syrillic) **लिपि** (दे०) के आधारपर यह लिपि बनी थी। इसपर कुछ प्रभाव **ग्लैगोलिटिक** (glagolitic) **लिपि** (दे०) का भी था।

बुगिनी (buginese)—इंडोनेशियन परिवारकी सेलीबीज़में प्रयुक्त एक भाषा। इसे **बुगी** (bugi) या **बुगिस** (bugis) भी कहते हैं।

बुगिस (bugis)—**बुगिनी** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

बुगी (bugi)—**बुगिनी** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

बुगू (bugu)—**पकू** (दे०) का एक नाम।

बुघी—**इंडोनेशियन परिवार** (दे०) की सेली-

बीजमें प्रयुक्त एक भाषा ।

बुत्कुल (butkul)––**भत्कल** (दे०)का एक विकृत नाम ।

बुदबुदिके (budabudike)––१८९१ की मैसूर जनगणनाके अनुसार एक **बंजारा** (दे०) भाषा ।

बुदाली (budali)––१८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार **हिन्दी** (दे०)का बंबईमें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप ।

बुडुक (buduk)––**काकेशस परिवार** (दे०)-की काकेशसमें प्रयुक्त एक भाषा ।

बुधी (budhi)––**लद्दाखी** (दे०) अथवा 'भोटिआ' (लद्दाखकी)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

बुनन (bunan)––**चीनी परिवार** (दे०)-की बुननमें प्रयुक्त, एक पश्चिमी सार्वनामिक हिमालयी वर्मी-तिब्बती भाषा । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २९८७ थी । इसमें **रंगलोई** (दे०) बोलनेवाले भी सम्मिलित थे ।

बुनेर (buner)––**पश्तो** (दे०)की 'उत्तरी-पूर्वी बोली'का एक रूप ।

बबे-(bube)––**बाँटू** (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा। इस भाषाका क्षेत्र कांगो तथा दुआलाके बीच तटीय प्रदेश तथा कुछ उत्तरी भाग है ।

बुरंग (burung)––**बोतोकुदो** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

बुरुकक (burukak)––दक्षिणी अमेरिकी भाषा **टलमनक** (दे०)की एक विलुप्त बोली।

बुरुशास्की––पाकिस्तानमें हुंजा नगर तथा यासिनमें प्रयुक्त एक भाषा। इसे **खजुनामी** (दे०)भी कहते हैं। इसे द्रविड़ तथा आस्ट्रिक परिवारसे संबद्ध माननेके प्रयास हुए हैं किंतु सफलता नहीं मिली है । हुंजा नगरकी बोली परिनिष्ठित मानी जाती है । यासिनकी बोलीको **बिल्तुम या वरशिक्वार** कहते हैं ।

बुर्गंडी (burgandi)––निमाड़, इन्दौर और भोपालमें एक विशेष जाति द्वारा बोली जानेवाली **तमिल** (दे०)की एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २६५ थी ।

बुर्दी (burdi)––१८९१की जनगणनाके अनुसार **मराठी** (दे०)का एक रूप ।

बुर्यत (buryat)––एक **यूराल अल्ताई** (दे०) परिवारकी उत्तरी मंगोल भाषा ।

बुश-निग्रो अंग्रेजी (bush-negro english)––डच गिनीमें बुश नीग्रो लोगों द्वारा प्रयुक्त बुश भाषा मिश्रित अंग्रेजी। इसे **ज्यू-टाँगो** (jew tongo) भी कहते हैं ।

बुशमैन परिवार या बुशमैन भाषावर्ग––अफ्रीकाका एक भाषावर्ग या भाषा परिवार । इसे **होटेंटोट-बुशमैन** भी कहते हैं । दक्षिणी अफ्रीकामें आरेंज नदीसे नगामी झीलतक बसनेवाले मूल निवासी बुशमैन जातिके कहे जाते हैं। इनकी भाषा वहाँकी सबसे प्राचीन भाषाओंमेंसे है । अलग-अलग वर्गोंमें रहनेके कारण इन लोगोंमें बहुतसी भाषाएँ और बोलियाँ विकसित हो गयी हैं । कुछ लोगोंका तो यह भी कहना है कि यह कोई एक परिवार नहीं है, अपितु कई परिवारोंका वर्ग है। इसीलिए कुछ लोग इसे 'बुशमैन परिवार' न कहकर 'बुशमैन वर्ग' कहते हैं । इस वर्ग या परिवारमें गीत और कथाके रूपमें मनौखिक साहित्य भी है। डा० ब्लीक तथा मिस ल्वायडने इनका साहित्य एकत्र किया है तथा भाषाका अध्ययन किया है । उनका कहना है कि ये भाषाएँ अश्लिष्ट अन्त योगात्मक रही हैं, पर अब धीरे-धीरे अयोगात्मक हो रही हैं । इन भाषाओंने आसपासके बांटू एवं सूडान परिवारोंको काफी प्रभावित किया है। जुलूके ध्वनि-समूहपर भी इनका प्रभाव है । नामा, खोरा आदि इसीके अन्तर्गत हैं, जिनपर हैमिटिक परिवारका प्रभाव अधिक है और संभवतः इसी कारण वे अपनी अलग विशेषताएँ भी रखती हैं। **बुशमैन परिवारकी प्रधान विशेषताएँ**––(१) इस प्रकारकी भाषाओंमें एक विचित्र प्रकारकी ध्वनियाँ पायी जाती हैं, जिन्हें 'क्लिक' या अंतःस्फोटात्मक 'ध्वनियाँ'

कहते हैं । साधारण ध्वनियों (वहिस्फोटात्मक)का उच्चारण साँस बाहर फेंककर किया जाता है, पर क्लिक ध्वनियोंके उच्चारणमें साँस भीतर खींचनी पड़ती है । ये कई प्रकारकी होती हैं, जिनपर कुछ विस्तारके साथ ध्वनि-विज्ञानमें विचार किया गया है । (२) इन भाषाओंमें लिंग पुरुषत्व और स्त्रीत्वपर न आधारित होकर सजीव और निर्जीवपर आधारित है (दे०) **ध्रुवाभिमुख नियम**) । (३) बहुवचन बनानेके लिए यहाँ कोई एक नियम नहीं है । चालीस-पचास तरीकोंका प्रयोग किया जाता है और वे भी इतने अव्यवस्थित हैं कि समझनेपर भी बिना अभ्यासके कोई नहीं सीख सकता । कभी-कभी जापानी आदि भाषाओंकी भाँति संज्ञा (एकवचन) की पुनरुक्ति करके भी बहुवचन बना लेते हैं । उदाहरणके लिए यदि घोड़ा का बहुवचन बनाना हुआ तो 'घोड़ा-घोड़ा' कर देते हैं । बहुवचन बनानेका यह नियम सबसे प्राचीन और सरलतम है । **वर्गीकरण**—इसकी मुख्य भाषाएँ दो हैं: (क) होटेंटोट, (ख) बुशमैन । होटेंटोटको नामा तथा बुशमैनको सान भी कहते हैं । बुशमैन बोलनेवालोंकी संख्या ५० हज़ारके लगभग है । इसका क्षेत्र दक्षिणी-पश्चिमी अफ्रीका है ।

बेंबा (bemba)—**बांटू** (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा । इस भाषाका क्षेत्र जंबज़ी नदीके उत्तर तथा न्यासा एवं टैंगेनीका, झीलोंके पश्चिममें रोडेशिया आदिमें है ।

बेइक (beik) **मेर्गुएसे** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

बेओथुक (beothuk)—**उत्तरी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा परिवार । इस परिवारकी भाषाएँ न्यूफाउंडलैंडमें बोली जाती थीं । अब ये विलुप्त हो चुकी हैं । इसे बेओथुक नामकी जातिके लोग बोलते थे । 'बेओथुक'-का अर्थ है 'लाल आदमी' । इस जातिके लाल होनेके कारण ही जातिका यह नाम पड़ा था । अब जाति और उसीके साथ उसकी भाषाएँ, दोनों ही समाप्त हो गयी हैं ।

बेगमाती उर्दू—स्त्रियोंमें प्रयुक्त उर्दूका एक नाम । (दे०) **रेख्ती** ।

बेगमाती ज़बान—स्त्रियोंमें प्रयुक्त एक भाषा । (दे०) **रेख्ती** ।

बेटोई (betoi)—**चिब्चा-अरउअक** (दे०) वर्गकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

बेडेरी (bederi)—**वडरी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

बेतुल (betul)—**डोलेबाड़ी** (दे०)का एक अन्य नाम । इसे आलवी बेतुल भी कहते हैं ।

बेते (bete)—**हरांगखोल** (दे०)की, उत्तरी कछार (असम)में प्रयुक्त, एक बोली । इसका एक नाम बेतेली भी मिलता है ।

बेतेली (beteli)—**बेते** (दे०)का एक अन्य नाम ।

बेत्तकुरुब (bettakuruba)—**कुरुंब** (दे०)—का एक अन्य नाम ।

बेत्रा (betra)—**भत्री** (दे०)का एक विकृत नाम ।

बेदेरी (bederi)—**वडरी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

बेपारी (bepari)—**बंजारी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

बेबिलोनियन (babylonian) **या बेबिलोनी**—**सेमिटिक परिवार** (दे०)की एक भाषा । (दे०) **अकादी** ।

बेबीलोनी क्यूनिफ़ार्म लिपि—बेबीलोनियामें प्राचीन कालमें प्रचलित **क्यूनिफ़ार्म** (दे०) लिपि । परवर्ती **एलामाइट** (दे०) आदि लिपियाँ इसीसे निकली हैं ।

बेबेजिया (bebejiya)—**चुलिकाता मिश्मी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

बेराड (berad)—**कन्नड़** (दे०)का, शोलापुरमें प्रयुक्त एक नाम ।

बेराडी (beradi)—**तेलुगु** (दे०)की बेलगाममें प्रयुक्त एक बोली ।

बेरारी (berari)—(१) **वर्हाडी** (दे०)का एक अन्य नाम । (२) **बंजारी** (दे०)के लिए मध्यप्रदेशमें प्रयुक्त एक नाम ।

बेरिया (beriya)—**नटी** (दे०)का एक

रूप ।

बेर्गा ओरावं (berga orao)—**कुरूख** (दे०)का एक रूप ।

बेर्लय (berlaya)—**बेल्लर** (दे०)का एक अन्य नाम ।

बेर्लेरा (berlera)—**बेल्लर** (दे०)का एक अन्य नाम ।

बेलोरूसी (byelorussian)—**श्वेत रूसी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

बेल्दारी (beldari)—बंबई, कोल्हापुर, बरार, जैसलमेर, सतारा आदिमें प्रयुक्त राजस्थानी बनजारोंकी एक बोली । ग्रियर्सन-के भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलने-वालोंकी संख्या लगभग ५,१४० थी ।

बेल्लरा (bellara)—मद्रासके कुछ भागोंमें प्रयुक्त एक बोली । निश्चित रूपसे इसके संबंधका पता नहीं है । कुछ विद्वान् इसे **तुळु** का एक रूप मानते हैं ।

बेल्लाकुला (bellakula)—**सलिश** (दे०) भाषा परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

बैक्ट्रियन लिपि—**खरोष्ठी** (दे०) लिपिका एक अन्य नाम ।

बैक्ट्रो-पालि लिपि—**खरोष्ठी** (दे०) लिपिका एक अन्य नाम ।

बैगानी—**छत्तीसगढ़ी** (दे०)की एक उपबोली, जो बालाघाट, रायपुर, विलासपुर, संभलपुर तथा कवर्धामें बोली जाती है । इसके बोलने-वाले प्रमुखतः बैगा (वहाँकी एक आदिवासी जाति) लोग हैं, इसी कारण इसका नाम 'बैगानी' पड़ा है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ७,००० थी । छत्तीसगढ़ीकी यह बोली शब्द-समूहकी दृष्टिसे 'गोंडी' तथा कुछ व्याकरणके रूपोंकी दृष्टिसे 'बुंदेली'से प्रभावित है ।

बैमेन (baimena)—**पिमा-सोनोर** (दे०) वर्गकी एक मृत उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

बैसवाड़ी—**अवधी** (दे०)की एक उपबोली । कुछ लोग 'अवधी'को बैसवाड़ी नामसे अभि-हित करते हैं, पर यह समीचीन नहीं है । बैसवाड़ी उसके एक सीमित क्षेत्र (बैसवाड़े)-की बोली है । बैस राजपूतोंके प्राधान्यके कारण लखनऊ, उन्नाव, रायबरेली तथा फ़तेहपुर ज़िलेके कुछ भागोंको 'बैसवाड़ा' कहते हैं । इसी आधारपर उस क्षेत्रकी अवधी 'बैसवाड़ी' कही जाती है । 'बैसवाड़ी' अवधी-के अन्य रूपोंकी तुलनामें कुछ कर्णकटु है ।

बैसिया (baisiya)—**नटी** (दे०)का एक रूप ।

बोंताव (bontawa)—नैपालकी ऊपरी घाटीमें प्रयुक्त **खंबू** (दे०)की एक बोली ।

बोंतोक (bontok)—**इंडोनेशियन** (दे०) परिवारकी फिलिपाइन द्वीपोंमें प्रयुक्त एक भाषा ।

बोंदिली (bondili)—बोंदिली जातिमें बोली जानेवाली **हिन्दोस्तानी** (दे०)का मद्रा-सी नाम ।

बो (bo)—**सूडान वर्ग** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा । इसे **इबो** भी कहते हैं ।

बोकी (boki)—**शंडू** (दे०)का उत्तरी अराकानमें प्रयुक्त एक रूप ।

बोटिअन लिपि—**ग्रीक लिपि** (दे०)का एक रूप ।

बोडिया लिपि—**सराफ़ी लिपि** (दे०)का एक अन्य नाम ।

बोडो (bodo)—(दे०) **बोदो** ।

बोतोकुदो (botokudo)—दक्षिणी अमे-रिकाके **जे** (दे०) परिवारके पूर्वी वर्गकी एक भाषा । इसके अन्य नाम बुरंग, बोरुंग या बोरन आदि हैं ।

बोदो (bodo)—**बड़** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

बोदो वर्ग (bodo group)—(दे०) **बड़ वर्ग** ।

बोद्धव्यवैशिष्टयोत्पन्ना आर्थी व्यंजना—एक प्रकारकी व्यंजना । (दे०) **शब्द-शक्ति** ।

बोनरी (bonari)—**करिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

बोनाई (bonai)—१८९१की जनगणनके

अनुसार **मराठी** (दे०)का एक रूप।

बोपल (bopal)--**वोलपूक** (दे०)-को सुधारकर १८८७ में सेंट ड मैक्स द्वारा बनायी गयी एक कृत्रिम भाषा।

बोबंगी (bobangi)--दक्षिणी अफ्रीकाकी बाँटू परिवारकी एक भाषा।

बोर (bor)--**बड़** (दे०)का एक अन्य नाम। इसका एक नाम **बतर** भी है।

बोरन (borun)--**बोतोकोदो** (दे०)का एक दूसरा नाम।

बोर मुथुन (bor muthun)--**मुतोनिआ** (दे०)का एक रूप।

बोरशियन (borussian)--**प्रशन** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

बोरी (bori)--१८९१की बंबई जनगणना-के अनुसार 'गुजराती'का एक रूप। यह **बोहरी** (दे०)का एक विकृत नाम है।

बोरुंग (borung)--**बोतोकुदो** (दे०)का एक दूसरा नाम।

बोरुक (boruka)--दक्षिणी अमेरिकी भाषा **गुअटूसो** (दे०)की एक उप-भाषा।

बोरो (boro)--**टुपी-गवरनी** (दे०) परि-वारकी दक्षिणी अमेरिकामें प्रयुक्त एक भाषा। इसका एक अन्य नाम मिरान्या भी है।

बोरोरो (bororo)--**बोरोरो परिवार** (दे०)की एक प्रमुख दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसका अन्य नाम **कोरोअडोस** है।

बोरोरो परिवार (bororo family)--**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारमें लगभग आठ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख **बोरोरो, ओटुके, कोरबेक, टपी** आदि हैं।

बोर्दुअरिआ (borduaria)--**मोहोंगिआ** (दे०)का एक अन्य नाम।

बोलिविअन (bolivian)--**किचुआ** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसका क्षेत्र बोलिविया है।

बोली एटलस (dialect atlas)बोलीके--क्षेत्रीय या भौगोलिक अध्ययनके आधारपर बनाया गया रूप, ध्वनि, अर्थ, वाक्य, शब्द या उपरूपोंके क्षेत्र आदिका दर्शक एटलस। (दे०) **भाषा भूगोल**।

बोली भूगोल (dialect geography)--बोलीका भौगोलिक अध्ययन। यह एक प्रकारसे **भाषा-भूगोल** (दे०)का एक भाग है। इसमें बोलीका क्षेत्र, उपरूप, ध्वनि, रूप, अर्थ, शब्द, वाक्य आदिकी दृष्टिसे अध्ययन किया जाता है और बोलीके नक्शे भी बनाये जाते हैं।

बोली विज्ञान (dialectology)--भाषा विज्ञानकी एक शाखा, जिसमें बोलीका क्षेत्र, उपरूप, ध्वनि, अर्थ, रूप, शब्द तथा वाक्य आदिकी दृष्टिसे अध्ययन किया जाता है। यह अध्ययन वर्णनात्मक, तुलनात्मक और ऐतिहासिक, तीनों प्रकारका हो सकता है। (दे०)**भाषा-भूगोल**।

बोहने (bohane)--**चरूआ** (दे०) परि-वारकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

बोहरी (bohari)--**वृहोरासाई** (दे०)का एक अन्य नाम।

बोहिरिक (bohiric)--**कॉप्टिक** (दे०) भाषाकी एक बोली।

बोहेमिअन--(दे०) **चेक**।

बौंगकलोने (baungkalone)--वर्मामें प्रयुक्त **पो करेन** (दे०)की एक उप-बोली।

बौंग्शे (baungshe)--**हक** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक वर्मी नाम। इसी नामके लोगोंमें प्रयुक्त होनेके कारण इस भाषाको यह नाम दिया गया है।

बौद्धिक-नियम (intellectual laws of language)--**अर्थ-विज्ञान** (semantics)के प्रसंगमें प्रस्तुत अर्थ-परिवर्तन आदि विषयक कुछ नियम। अर्थका परिवर्तन या विकास (दे० **अर्थ-परिवर्तन**) कुछ विशेष कारणोंसे होता है। इन कारणोंमें ब्रील आदि-के अनुसार कुछ कारण बुद्धिगत भी होते हैं। अर्थात् हम जानबूझकर कभी-कभी कुछ परिवर्तन कर देते हैं या कुछ परिवर्तनोंमें बुद्धिका भी योग रहता है। इस प्रकारके परि-**वर्तनों (बुद्धि-प्रसूत)**के कारणोंका विचार-

कर जो नियम निकाले गये हैं, उन्हें बुद्धि-नियम या बौद्धिक नियमकी संज्ञा दी गयी है। ब्रीलने ही सबसे पहले अर्थके अध्ययनके सिलसिलेमें बौद्धिक नियमोंकी बात उठायी। बादमें वुंट, स्पर्बर, ल्यूमन, कैरोनी, स्टर्न, सरकार आदि अनेक विद्वानोंने इस प्रकारके नियमोंपर विचार किया, लेकिन बीसजर्बर तथा टकर आदिने इस प्रकारके नियमोंका विरोध किया। इस प्रसंगमें विचार करते हुए ग्लासगो विश्वविद्यालय के प्रसिद्ध भाषा विज्ञान-विद् डॉ० उलमनने ब्रीलके इन नियमोंको असंतोषजनक माना। नीचे इस तथाकथित बौद्धिक नियमके अन्तर्गत परम्परागत रूपसे लिये जानेवाले नियम आलोचनाके साथ संक्षेपमें दिये जा रहे हैं। (१) **विशेषीकरण या विशेष भावका नियम** (law of specialization)--इसकी परिभाषा कुछ इस प्रकार दी गयी है:--किसी एक भाव, रूप या सम्बन्ध आदिको व्यक्त करनेके लिए कभी अनेक शब्द या प्रत्यय आदि प्रयुक्त होते हों और फिर धीरे-धीरे उनमें केवल एक-दो शेष रह जायँ तो इसे विशेष भावका नियम कहते हैं, क्योंकि प्रयोक्ता एक या दोको ही उन सारेके स्थानपर विशेष (special) रूपसे प्रयुक्त करने लगता है। इस प्रसंगमें ब्रील तथा सरकार आदिने भारोपीय परिवारकी प्राचीन भाषाओंमें प्रयुक्त तुलनासूचक (comparative) और सर्वाधिकतासूचक (superlative) प्रत्ययोंको लिया है और वे कहते हैं कि आरम्भमें इस कामके लिए कई प्रत्यय प्रयुक्त होते थे, लेकिन बादमें एक ही विशेष रूपसे प्रयुक्त होने लगा। यदि संस्कृतसे उदाहरण लेना चाहें तो कह सकते हैं कि पहले तुलनासूचक प्रत्यय तरप् (तर--कुशलतर, लघुतर, महत्तर, धनितर) और ईयसुन् (ईयस्-पटुसे पटीयस्, धनिन्से धनीयस्, गुरुसे गरीयस् तथा प्रियसे प्रेयस् आदि) दो थे।[1] इसी प्रकार सर्वाधिकतासूचक प्रत्यय भी तमप् (तम--कुशलतम, लघुतम, महत्तम, धनितम) और इष्ठन् (इष्ठ--पटिष्ठ, घनिष्ठ, गरिष्ठ, प्रेष्ठ) दो थे।[1] बादमें 'तर' और 'तम'का प्रचलन कम हो गया और 'ईयस्' और 'इष्ठ' ही अधिक प्रयुक्त होने लगे। यहाँ दो बातें कही जा सकती हैं:-(१) इस प्रकार बहुतके स्थानपर एक या कमका प्रयोग विशेष भाव या विशेषीकरणका नियम तो कहा जा सकता है, किन्तु क्या सचमुच इसका अर्थसे विशेष सम्बन्ध है, जैसा कि अनेक विद्वानोंके अर्थ विज्ञानके अध्यायके सिलसिलेमें इसपर विचार करने से प्रकट होता है। सच पूछिये तो यदि इस प्रकारके कुछ शब्दों या प्रत्ययोंका प्रयोग पूर्णतः बन्द हो जाय तो उसे प्रत्यय या शब्दका लोप तो कहा जा सकता है, इसी प्रकार यदि प्रयोग कम हो जाय तो अल्प प्रयोग तो कहा जाता है, किन्तु यह अर्थ-परिवर्तन किसी भी रूपमें नहीं है। अधिक-से-अधिक यह कहा जा सकता है कि अर्थके लिए अनेकके स्थानपर कम या एक शब्द (या प्रत्यय) का प्रयोग इसमें होता है और यही इसका अर्थसे सम्बन्ध है, जो निश्चय ही नहींके बराबर है। (२) दूसरा प्रश्न उठ सकता है कि क्या यह बौद्धिक नियम है ? सच पूछा जाय तो यह प्रवृत्ति सरलताकी दृष्टिसे अनेकरूपताके एकरूपताकी ओर जानेकी है और इस प्रकार इसे प्रयत्नलाघव या याद करनेमें श्रमलाघव ही कह सकते हैं। धीरे-धीरे सादृश्य (analogy)-के कारण यह होता है। इसके घटनेमें बुद्धि प्रत्यक्षतः कोई काम नहीं करती। हाँ, परोक्षतः अवश्य करती है, लेकिन परोक्षतः तो ध्वनि, रूप, वाक्य आदि अन्यमें भी काम करती है, तो क्या सभीके नियम बौद्धिक नियम हैं ? शायद नहीं। इस प्रकार इसके लिए बौद्धिक नियमका नाम जितना सार्थक है, उतना ही निरर्थक भी है। विशेष भावके नियमके दूसरे प्रकारके उदाहरणोंके रूपमें पुरानी भाषाओंके रूपोंकी विभक्तियोंके स्थानपर कारक-चिह्नों या परसर्गोंका प्रयोग माना जाता है। उदा-

१ द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुनौ (पाणिनि)

१ अतिशायने तमबिष्ठनौ (पाणिनि)

हरणार्थ 'रामस्य'के स्थानपर 'रामका' अर्थात् '--स्य' विभक्तिके स्थानपर 'का'। इस प्रसंगमें यह कहा जाता है कि ये शब्द अपना मूल अर्थ छोड़कर केवल एक विशेष व्याकरणिक अर्थ देने लगते हैं, अर्थात् उनका अलग व्यक्तित्व (अर्थयुक्त) समाप्त हो जाता है। सच पूछा जाय तो **अर्थादेश** (दे०)के अन्य उदाहरणोंसे तात्त्विक दृष्टिसे इस वर्गके उदाहरणोंकी स्थिति बहुत भिन्न नहीं है, साथ ही जान-बूझकर या बुद्धिके प्रयत्नसे इनका प्रयोग भले हो, अर्थका यह परिवर्तन (या व्यक्तित्व खोकर functional word बन जाना) बौद्धिक प्रयाससे उत्पन्न न होकर बहुत सहज है। ऐसी स्थितिमें इसे भी बौद्धिक नियमके अन्तर्गत मानना सार्थक नहीं कहा जा सकता। बौद्धिक नियमके रूपमें तो नहीं, किन्तु यों अर्थ विज्ञान और अर्थ-परिवर्तनके अन्तर्गत ऐसे शब्दोंका अर्थ-विकास 'विशेष भावका नियम' माना जा सकता है, जहाँ एक शब्द पहले सामान्य अर्थ रखता था और बादमें विशेष अर्थ रखने लगा। उदाहरणार्थ द्रविड़ शब्द 'पिल्ला'का प्राचीन अर्थ था सामान्य रूपसे 'बच्चा' या 'शावक', किन्तु हिन्दी आदिमें वह अपनी सामान्यता खोकर विशेष अर्थ (कुत्तेका बच्चा) रखने लगा। कहना न होगा कि अर्थ-संकोचके सभी उदाहरण इसी श्रेणीके हैं। (२) **अर्थोद्योतन या उद्योतन का नियम** (law of irradiation)--उद्योतन (या irradiation)-का अर्थ है चमकना। जब शब्दमें एक नया अर्थ चमक जाता है तो उसे इस नियममें रखते हैं। इसके अन्तर्गत कई प्रकारकी अर्थ-विकासकी प्रवृत्तियाँ ली जाती हैं। (१) कभी-कभी देखा जाता है कि कोई प्रत्यय किसी अच्छे अर्थसे संबद्ध हो जाता है। (२) और कभी इसके उलटे किसी बुरे अर्थसे। (३) कभी-कभी अच्छा या बुरा आदि न होकर कोई नया अर्थ ही उससे संबद्ध हो जाता है। (४) कभी-कभी सादृश्यके आधारपर एक शब्दके समानान्तर बहुतसे शब्द बन जाते हैं और फिर उन सबके आधारपर मूल शब्दकी प्रकृतिका कोई अंश ही प्रत्यय मान लिया जाता है और इस प्रकार उसमें एक नया अर्थ आ जाता है। (५) इसी प्रकार कभी-कभी पूरी प्रकृति प्रत्यय बन जाती है। ये सारे विकास अर्थोद्योतनके हैं। कुछ प्रत्ययोंके उदाहरण लिये जा सकते हैं। जर्मन प्रत्यय --hard का विकसित रूप--ardके रूपमें फ्रांसीसी तथा अंग्रेज़ीमें प्रयुक्त होता है। मूलतः इसका अर्थ खराब नहीं था। अंग्रेज़ीमें भी standard या placardमें इसका अर्थ बुरा नहीं है। लेकिन संयोगसे इसका प्रयोग बुरे शब्दोंके साथ विशेष हुआ, अतः अब यह बुरे अर्थका ही प्रत्यय माना जाता है, जैसे dullard, coward, sluggard, drunkard या bastard आदिमें। --ish की भी यही दशा है। आरम्भमें यह विशेषण बनानेका सामान्य प्रत्यय था, जैसे पुरानी अंग्रेज़ीमें folcish (= popular) या english, danish, british। बादमें रंगोंको हलका रूप देनेके लिए इसका प्रयोग होने लगा, जैसे reddish, brownish, whitish। अब इसका प्रयोग बुरे अर्थोंके प्रत्ययके रूपमें अधिक प्रचलित है, जैसे hellish, devillish, knavish, fiendish, foolish, thievish, childish, boyish, girlish, foppish तथा swinish आदि। हिन्दीका '--हा' प्रत्यय पहले सामान्य अर्थ देता था, जैसे बड़-रहा, मरकहा या मरखहा, कटहा, स्कुलिहा, पुरविहा, पछवँहा, उतरहा, किन्तु अब इसका प्रयोग घमंडके अर्थमें विशेष हो रहा है। 'रुपयहा'का अर्थ केवल 'रुपयेवाला' नहीं है, अपितु है 'जिसे अपने रुपयेका घमंड हो'। 'मोटरहा', सवँगहा, कुर्सिहा, कितबहा भी ऐसे ही हैं। 'देहात'से 'ई' लगाकर 'देहाती' शब्द बना। गलतीसे किसीने इसमें 'ई'के स्थानपर 'आती'को प्रत्यय समझ लिया और उसे जोड़कर 'शहर'से 'शहराती' कर डाला।

'शहराती' शब्द कुछ क्षेत्रोंमें अब भी प्रयोगमें है। 'पश्चात्'से बने शब्द 'पाश्चात्य'में 'आत्य' प्रत्यय समझा। इसी प्रकार लोगोंने दाक्षिणात्य और पौर्वात्य शब्द चला दिये हैं। अंग्रेज़ीमें ग्रीक और लैटिनसे आया—ic प्रत्यय है, civic, linguistic, asiatic आदिमें। इस तरहके ऐसे शब्द पर्याप्त हैं, जिनके अंतमें icके पूर्व t भी होता है (जैसे rustic, cosmetic, acoustic आदि)। दोनोंको मिलाकर लोगोंने 'टिक' प्रत्यय समझ लिया और बलियासे बना डाला 'बलियाटिक'। यह शब्द लखनऊ, इलाहाबाद, वाराणसीमें अब भी मूर्खके अर्थमें चलता है।[1] सच पूछा जाय तो किसी भी शब्दमें नये अर्थकी चमक आ जाना उद्योतन हुआ, इसे केवल प्रत्ययतक सीमित रखना उचित नहीं जान पड़ता। साथ ही अन्य नियमोंकी भाँति इसे भी बौद्धिक नियम कहना बहुत उचित नहीं लगता; क्योंकि यह उद्योतन प्रायः आ जाता है, लाया नहीं जाता। **(३) विभक्तियोंके अवशेषका नियम** (law of survival of inflections)—संयोगात्मक भाषामें विकास होते-होते ऐसी स्थिति आ जाती है कि ध्वनि-लोपके कारण विभक्तियोंका लोप हो जाता है और उस विभक्तिके भावको व्यक्त करनेके लिए अलगसे शब्द जोड़े जाने लगते हैं। संस्कृतकी कारक विभक्तियाँ इसी प्रकार समाप्त हो गयीं और उनके स्थानपर कारक-चिह्न या परसर्गोंका प्रयोग हिन्दी आदिमें चलने लगा, लेकिन अब भी कुछ पुराने रूप चल रहे हैं, जैसे कृपया, हठात्, दैवात् आदि। यही विभक्तियोंके अवशेषका नियम है। सरकार, डॉ० श्यामसुन्दर आदिने अर्थ विज्ञानके अध्यायमें इसे स्थान तो दिया है किन्तु यह स्पष्ट नहीं किया है कि अर्थ-विज्ञानसे इसका क्या सम्बन्ध है। सामान्यतः यह मात्र रूपविचारसे संबद्ध लगता है, क्योंकि कुछ विशेष स्थितियोंमें पुराने रूप बच रहे हैं। ऐसी स्थितिमें बिना अर्थ-विज्ञानसे इसका सम्बन्ध बतलाये इसे भाषा-विज्ञानकी इस शाखामें रखनेका कोई अर्थ नहीं है। यों इस तरहके उदाहरणोंका सम्बन्ध अर्थ-परिवर्तनसे न हो, ऐसी बात नहीं है। समय बीतनेके साथ ऐसे शब्दके बारेमें लोग यह भूलते जाते हैं कि इसमें कारक विशेषकी विभक्ति है और एक अव्ययके रूपमें उस पूरे (प्रकृति+विभक्ति) का प्रयोग ही चलने लगता है। आज कृपयाको 'कृपा'के कारण कारकके रूपमें हम नहीं लेते, अपितु 'कृपा करके'के अर्थमें उसे एक शब्दके रूपमें लेते हैं। इस प्रकार उसके अर्थमें थोड़ा परिवर्तन आ जाता है। अर्थ-परिवर्तनसे कुछ संबद्ध होनेपर भी पीछे अन्यके बारेमें बताये गये कारणोंके कारण ही इसे भी 'बौद्धिक नियम' संज्ञाका अधिकारी नहीं माना जा सकता। ऊपर हमने, जो उदाहरण लिये उनमें विभक्तिके साथ मूल भी सुरक्षित है। ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं, जहाँ केवल विभक्ति सुरक्षित है। भोजपुरी रूप 'घरे', 'दुवारे'में सप्तमी—ए स्पष्ट है। किन्तु इनका सम्बन्ध अर्थ-विज्ञानसे उस रूपमें सम्भवतः नहीं है। इसी प्रसंगमें दो-तीन अन्य प्रकारके उदाहरण भी डॉ० दास आदिने दिये हैं, किन्तु वे भी अर्थके अध्ययनसे सुसंबद्ध नहीं माने जा सकते। **(४) भ्रम या मिथ्या प्रतीतिका नियम** (law of false perception)—कभी-कभी किसी शब्दके रूपके कारण हम उसे औरका और समझ लेते हैं और फलतः उसके अर्थमें परिवर्तन आ जाता है। यही मिथ्या प्रतीतिका नियम है। 'असुर' हमारा पुराना शब्द है। इसका अर्थ था 'देवता'। हमारे 'असुरोमेधास्' ही पारसियोंके देवता अहुर मज़्दा (ahuro mazda) थे। आर्यों और पारसियोंके संघर्षके बाद हमारे यहाँ 'असुर'का अर्थ 'राक्षस' हो गया। 'अ' नकारात्मक उपसर्ग पहलेसे था। असुरके 'अ'को वही समझा गया, और फल यह हुआ कि 'सुर'का अर्थ देवता मान लिया गया और 'असुर'का अर्थ

१. आगे आनेवाले भ्रमके नियमसे इस नियमका साम्य है। यहाँ भी नये अर्थ किसी न किसी प्रकारके भ्रमके कारण ही आये हैं।

मूलतः '-आ' थी। वैदिक संस्कृतमें 'यज्ञा' 'महित्वा' आदि उदाहरणके लिए देखे जा सकते हैं। बादमें सर्वनामों (जहाँ '-न' मूलतः था, सं० तेन, वैदिक त्येन, प्रा० फ़ारसी त्यना)के सादृश्यपर संज्ञा शब्दोंमें भी '-न' आ गया। इसी प्रकार मूलतः भारोपीय संबंधकारककी बहुवचन विभक्ति—आम् थी। उदाहरणार्थ ग्रीक (ippon,) लैटिन (deum) वैदिक चरताम्, नराम्। 'न्' अंतवाले प्रातिपदिकोंके रूपों, जैसे'आत्मनाम्'के सादृश्य बादमें बहुतोंके अंतमें'आम्'-के स्थानपर 'नाम्' लग गया। इस प्रकारके रूप भारतमें आर्योंके आनेसे पूर्व ही बनने लगे थे, क्योंकि प्राचीन फ़ारसीमें भी 'बग' (एक देवता)से 'बगानाम्' रूप मिलता है। अंग्रेज़ीमें इसी प्रकार निर्बल क्रियासे बननेवाले रूपोंके सादृश्यपर बहुत अधिक क्रियाएँ अपना रूप चलाने लगीं। यदि चासर, शेक्सपीयर तथा आजकी अंग्रेज़ीकी तुलना करें तो ऐसी अनेक क्रियाएँ मिलेंगी, जो कभी सबल थीं, किंतु आज निर्बल हो चुकी हैं। ब्रीलके अनुसार इस प्रकारके रूप (क) अभिव्यक्तिकी कोई कठिनाई दूर करनेके लिए, (ख) अभिव्यक्तिमें अधिक स्पष्टता लानेके लिए, (ग) असमानता (antethesis) या समानता (similarity)पर बल देनेके लिए तथा (घ) किसी प्राचीन अथवा नवीन नियमसे संगति मिलानेके लिए, इन चारोंमेंसे किसी एक या अधिक आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिए बनाये जाते हैं। प्रथममें वे सारे रूप आते हैं जो अपवादोंको छोड़कर सामान्य नियमों या रूपोंके सादृश्यपर बनाये जाते हैं। जैसे अंग्रेज़ी क्रियाओंके -ed वाले रूप। इससे अभिव्यक्तिकी कठिनाई दूर होती है। रूप सरलतासे बन जाते हैं। किन्तु यह ध्यान रहे कि जान बूझकर ऐसा नहीं करते। अनजानेमें ऐसे रूप सादृश्यके आधारपर बनते हैंया मुँहसे निकल आते हैं। ऐसे प्रयोग मूलतः अशिक्षित लोगोंसे प्रारंभ होते हैं। असावधानीमें बच्चों या भारतीयों आदि अनाँग्ल भाषियोंके मुँहसे कभी-कभी broad castedयाcatched जैसे रूप सुनायी पड़ जाते हैं। 'ख' में भी वही उदाहरण रखे जा सकते हैं। तीसरेमें मराठीका 'दाक्षिणात्य' आदिके सादृश्यपर, पाश्चात्यके स्थानपर 'पाश्चिमात्य'; या हिन्दीमें 'सुन्दर'के असमान 'बुरा' आदिको छोड़कर 'असुन्दर'-का प्रयोग आदि आ सकते हैं। चौथेमें'-इक'-से लोगोंका सीधे भूगोलिक, इतिहासिक जैसे रूप बना लेना आ सकता है। यहाँ भी वही प्रश्न उठता है, कि क्या ये अर्थ-विकासके बौद्धिक-नियमके अंतर्गत आ सकते हैं? संभवतः नहीं? यह तो भाषाके धीरे-धीरे कठिनसे सरल, अनियमितसे नियमित बनने, या फिर सादृश्यके आधारपर रूप-परिवर्तन या नवरूप निर्माणकी कहानी है। (७) **नव प्राप्तिका नियम** (law of new acquisition)—इसे 'नये लाभ' आदि अन्य नामोंसे भी अभिहित किया गया है। ब्रीलका कहना है कि जिस प्रकार भाषामें पुराने अर्थ, रूप, प्रयोग, शब्द आदि समाप्त होते रहते हैं, उसी प्रकार नये अर्थ, रूप, शब्द, प्रयोग आदि आते या विकसित होते भी रहते हैं। इसके सभी भाषाओंमें उदाहरण मिलते हैं। हिन्दी आदि आधुनिक भारतीय आर्य-भाषाओंमें कारक-विभक्तियोंके घिस जानेपर स्वतंत्र शब्दोंका परसर्ग रूपमें प्रयोग होने लगा है। इसी प्रकार संयोगात्मक क्रियारूपों (तिङन्त)के घिसनेपर सहायक क्रिया तथा कृदन्तोंके आधारपर संयुक्त काल बनने लगे हैं। संस्कृतमें, मूलतः जो उपसर्ग थे, बादमें संबंधसूचक अव्ययके रूपमें भी प्रयुक्त होने लगे। जैसे 'तया सह', 'अर्थ विना'। इसी प्रकार विश्व भाषाओंका इतिहास बतलाता है कि कर्मवाच्यका बादमें विकास हुआ। क्रिया विशेषण भी विशेषण, सर्वनाम या संज्ञासे बादमें बने। पहले नहीं थे। इनमें कुछ परिवर्तनोंके पीछे बुद्धि अप्रत्यक्ष रूपसे अवश्य कार्य कर रही है, किंतु बौद्धिक नियमके अंतर्गत रखनेसे अधिक

अच्छा कदाचित् यह होगा कि इसे बौद्धिक कारण रूपमें अर्थ-विकासके अन्य कारणोंके साथ रखा जाय तथा इसके उदाहरणोंको यथोचित दिशाओंमें स्थान दे दिया जाय।

(८) **अनुपयोगी रूपोंके विलोपके नियम** (law of extinction of useless forms)–जैसे नये रूप आदि भाषामें आते रहते हैं, उसी प्रकार रूप किसी न किसी कारणसे विलुप्त होते रहते हैं। उदाहरणके लिए संस्कृतमें 'या' और 'गम्' जाना अर्थमें दो धातुएँ थीं। दोनोंके रूप अलग-अलग चलते थे। हिन्दीमें भी दोनोंके रूप हैं, किंतु दोनोंके सभी रूप नहीं हैं। 'या' धातुसे बननेवाले रूपोंमें जो आवश्यक थे, हैं, किंतु भूत कृदंतका रूप आवश्यक होते हुए भी नहीं है। 'या' से हिन्दी धातु 'जा', इससे भूतकृदंत रूप होगा 'जाया', किंतु यह रूप है नहीं। दूसरी ओर 'गम्' धातुसे बननेवाला कोई भी रूप नहीं है, केवल भूतकृदंत रूप ही रह गया है—'गया'। इस प्रकार 'या' धातुका एक रूप विलुप्त हो गया और दूसरी ओर 'गम्' के, एक रूपको छोड़कर सारे रूप विलुप्त हो गये। यहाँतक कि अब 'गम्' और 'या' दोनोंके अवशिष्ट रूप हिन्दीमें केवल एक ही धातु 'जा' के रूप माने जाते हैं। 'गया' भी 'जा' का ही रूप कहा जाता है, यद्यपि जैसा कि ध्वनिसे स्पष्ट है, यह है 'गम्' का। संस्कृत, ग्रीक, लैटिन, बंगाली आदि विश्वकी किसी भी भाषाको लिया जाय, सभीमें इस प्रकारके उदाहरण मिलते हैं। एक मूल या प्रातिपदिकके रूपोंमें कुछ रूप तो उसके अपने होते हैं, और कुछ किसी और प्रातिपदिकके होते हैं। इस प्रकार दो या अधिक प्रातिपदिकोंके कुछ रूप लुप्त हो जाते हैं और शेष सारे एक प्रातिपदिकके रूप माने जाने लगते हैं। उदाहरणार्थ संस्कृत उत्तम पुरुष अस्मद्के द्वितीयाके रूप लें—

एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
माम्, मा	आवाम्, नौ	अस्मान्, नः

स्पष्ट ही ये सारेके सारे एक प्रातिपदिकके नहीं हो सकते। इनमें कमसे कम चार प्रातिपदिकों (क) माम्, मा, (ख) आवाम्, (ग) नौ, नः, (घ) अस्मान्के संकेत मिलते हैं। अर्थात् चारोंके कभी अलग-अलग रूप रहे होंगे, बादमें सभीके कुछ-कुछ रूप विलुप्त हो गये होंगे और शेष मिलकर अब एक 'अस्मद्'के रूप माने जाते हैं। अस्मद्के मूलतः केवल वे रूप हैं, जिनमें 'अस्म' आता है। इसी प्रकार तद् (=वह)का प्रथमा एक वचन रूप 'सः' मूलतः तद्का रूप नहीं हो सकता। वैदिक संस्कृतमें 'तस्मिन्'के स्थानपर 'सस्मिन्' तथा 'तस्मात्'के स्थानपर 'सस्मात्' देखकर यह अनुमान लगता है कि तद्के साथ-साथ एक प्रातिपदिक *सद् भी कभी रहा होगा। उसके धीरे-धीरे सारे रूप विलुप्त हो गये। अब केवल 'सः' ही शेष है। इस प्रकारके लोप भाषामें होते तो हैं, किंतु अर्थसे इनका क्या संबंध? दूसरे क्या ये लोप जान बूझकर किये जाते हैं? शायद नहीं। इस प्रकार यह भी 'अर्थ-परिवर्तनका बौद्धिक नियम' नहीं कहला सकता। निष्कर्ष यह निकला कि इन नियमोंमें—(क) कइयोंका संबंध तो अर्थ-परिवर्तनसे है ही नहीं, अतः अर्थ-परिवर्तन या अर्थ-विज्ञानके प्रसंगमें इनकी चर्चा व्यर्थ है। (ख) कुछमें अर्थ-परिवर्तन होता है, किंतु उनके पीछे बौद्धिक कारण नहीं है, अतः उन्हें बौद्धिक नियम नहीं कहा जा सकता। (ग) कुछ थोड़े ऐसे भी हैं, जिनमें अर्थ परिवर्तन होता है, तथा जिनके पीछे अप्रत्यक्षतः बौद्धिक कारण भी माने जा सकते हैं, किंतु उन्हें बौद्धिक नियम शीर्षकसे अलग न रखकर अर्थ-परिवर्तनके प्रसंगमें, 'बौद्धिक कारण' रूपमें, कारणोंमें तथा इनके, उदाहरणोंको अर्थादेश आदि अर्थ-परिवर्तनकी दिशाओंमें रखना अधिक समीचीन होगा।

बौरे (baure)—दक्षिणी अमेरिकाके-अरवक परिवार (दे०)की एक भाषा।

ब्यांगसी (byangsi)—अलमोड़ामें प्रयुक्त

चीनी परिवार (दे०)की एक पश्चिमी सार्वनामिक तिब्बती-बर्मी भाषा। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार १,५८५ थी।

ब्रए (brae)—**ब्रे** (दे०)का एक नाम।

ब्रगित्सा (bragitsa)—**बर्गिस्ता** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

ब्रज-बुलि—बंगलाका एक कृत्रिम रूप, जिसे भ्रमवश लोग कभी-कभी ब्रजभाषा समझ बैठते हैं। इसमें १५-१६वीं सदीमें गोविंददास तथा ज्ञानदास आदि कवियों द्वारा, और आधुनिक कालमें रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा कृष्ण-भक्ति-विषयक काव्य रचा गया। असम तथा उड़ीसामें भी इसमें कुछ साहित्य रचना हुई है। कृष्णका संबंध ब्रजसे होनेके कारण ही कदाचित् इसे लोगोंने ब्रज-बुलिकी संज्ञा दे दी। व्याकरण तथा शब्द-समूहकी दृष्टिसे ब्रज-बुलिमें बँगला तथा मैथिलीके रूप ही अधिक हैं, ब्रज आदि पश्चिमी हिन्दी बोलियोंके रूप अपेक्षाकृत कम हैं।

ब्रजभाषा—**पश्चिमी हिन्दी** (दे०)की पाँच बोलियोंमेंसे एक प्रमुख बोली। 'ब्रज' शब्दका संबंध संस्कृत शब्द 'व्रज'से है, जिसका ऋग्वेद (२-३८-८) आदि प्राचीन ग्रंथोंमें 'चरागाह' अथवा 'पशु-समूह' आदिके अर्थमें प्रयोग हुआ है। ब्रजमंडलमें पशुपालन ही प्रमुख पेशा होनेसे संभवतः इस प्रदेशको 'ब्रज' कहा गया, और प्रदेशके आधारपर यहाँकी भाषा 'ब्रज' या 'ब्रजभाषा' कहलायी। हिन्दी या हिन्दीकी अन्य बोलियोंकी तरह पहले ब्रजभाषाको भी 'भाषा' या 'भाखा' (मुसलमानों द्वारा) कहते थे। 'ब्रजभाषा' नामका प्राचीनतम प्रयोग १५८७ ई० में गोपाल कृत रसविलास टीकामें (मरुभाषा निरजल तजी करि **ब्रजभाषा** चोज) हुआ है। १८वीं सदीमें भिखारीदासके काव्य–निर्णयमें (ब्रजभाषा भाषा रुचिर कहै सुमति सब कोइ) इसका प्रयोग मिलता है। उसके बाद यह नाम पर्याप्त प्रचलित हो गया, यद्यपि १९वीं सदीमें भी ब्रजभाषा प्रायः भाषा ही कहलाती रही। इसका एक और नाम **अंतर्बेदी** (दे०) भी मिलता है, पर यह नाम केवल 'अंतर्वेद'की भाषाका हो सकता है, जो ब्रजभाषा-क्षेत्रका एक भाग मात्र है। इस दृष्टिसे 'अंतर्वेदी'को 'ब्रज'का एक स्थानीय रूपांतर कहना कदाचित् अधिक उचित होगा। इसे **ब्रिज, ब्रिजकी, भाषामणि, माथुरी, मथुरही, पुरुषोत्तम भाषा, नागभाषा,** तथा **ग्वालियरी** आदि भी कहा गया है। कुछ लोग ब्रज-बुलि (दे०)को भी ब्रजभाषा समझते हैं, पर यथार्थतः ब्रजभाषासे इसका कोई ख़ास संबंध नहीं है। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, 'ब्रज' एक बोली है पर अधिक दिनोंतक साहित्यकी भाषा रहनेके कारण यह आदरार्थ 'ब्रजभाषा' कही जाने लगी।

ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ७९ लाख थी। अपने शुद्ध रूपमें ब्रजभाषा मथुरा, आगरा, अलीगढ़ तथा धौलपुर आदिमें बोली जाती है। गुड़गाँव, भरतपुर, जयपुर, करौली तथा ग्वालियरके कुछ भाग भी इसीके क्षेत्रमें हैं, किंतु सीमान्त प्रदेश होनेके कारण वहाँकी ब्रजभाषा 'राजस्थानी' और 'बुंदेली'से कुछ-कुछ प्रभावित है। इसी प्रकार बुलंदशहर, बदायूँ और नैनीतालकी तराईकी ब्रजभाषामें कुछ खड़ीबोली या पहाड़ी बोलियोंका प्रभाव है तो एटा, मैनपुरी, बरेली, पीलीभीत तथा इटावाकी ब्रजमें कनौजीका। 'ब्रजभाषा'के प्रधान उपरूप तीन हैं—**पूर्वी, पश्चिमी** और **दक्षिणी**। **पूर्वी ब्रजभाषा**का क्षेत्र मैनपुरी, एटा, इटावा, बदायूँ, बरेली, पीलीभीत, फर्रुख़ाबाद, शाहजहाँपुर, हरदोई और कानपुर, **पश्चिमी** अथवा **केन्द्रीय ब्रजभाषा**का मथुरा, आगरा, अलीगढ़ और बुलंदशहर तथा **दक्षिणी ब्रजभाषा**का भरतपुर, धौलपुर, करौली, पश्चिमी ग्वालियर और पूर्वी जयपुर है।

'ब्रज'के स्थानीय रूप **कनौजी** (दे०), **गाँववारी** (दे०), **ढोलपुरी** (दे०), **भरतपुरी** (दे०), **जादोबाटी** (दे०), **सिकरवाड़ी**

(दे०), **कठेरिया** (दे०) तथा **भुक्सा** (दे०) आदि हैं। अपने भाषा-सर्वेक्षणमें ग्रियर्सनने 'कनौजी'को एक स्वतंत्र बोली माना है, किंतु, जैसा कि डॉ० धीरेन्द्र वर्माने कहा है **कनौजी** (दे०) भी 'ब्रजभाषा'की ही एक बोली है।

'ब्रजभाषा' १६वीं सदीसे १९वीं सदीके अंततक और कुछ अंशोंमें २०वीं सदीमें भी साहित्यकी भाषा रही है और इस दृष्टिसे यह हिन्दीकी बहुत ही महत्त्वपूर्ण बोली है। इसके प्रसिद्ध कवि चंदवरदाई, सूरदास, नंददास, बिहारी, मतिराम, भूषण, देव, भारतेन्दु तथा रत्नाकर आदि हैं। लोक साहित्यकी दृष्टिसे भी ब्रजभाषा पर्याप्त संपन्न है। 'ब्रजभाषा'का संबंध शौरसेनी अपभ्रंशसे है। ब्रजभाषाके लिखनेके लिए प्रमुख रूपसे देवनागरी और गौण रूपसे कुछ सीमित लोगों तथा कार्योंमें फ़ारसी तथा कैथी लिपिका प्रयोग होता रहा है। अब देवनागरी ही अन्योंका स्थान लेती जा रही है।

ब्रह्मलिंग--(दे०) **लिंग**।

ब्रह्मवल्लीलिपि--बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

ब्राइ थॉनिक (brythonic) भारोपीय परिवारकी **केल्टिक** (दे०) शाखाकी एक शाखा, जिसमें **ब्रीटन** (दे०), **वेल्श** (दे०) तथा **कॉर्निश** (दे०) आदि भाषाएँ आती हैं।

ब्राचड़--लेसेनके अनुसार **पैशाची प्राकृत** (दे०) का एक भेद।

ब्राचड़ अपभ्रंश--**अपभ्रंश** (दे०) का एक भेद।

ब्राहुई--**द्रविड़ परिवार** (दे०) की एक भाषा, जो पूर्वी बिलोचिस्तान (कलात और चगल) में लगभग दो लाख लोगों द्वारा बोली जाती है। आसपासकी बिलोची भाषाओंका इसपर बहुत प्रभाव पड़ा है। इसे **उत्तरी पश्चिमी द्रविड़** भी कहते हैं।

ब्राह्मणी (brahmani)--मराठीकी **वर्हाडी** (दे०) बोलीका अकोलामें प्रयुक्त एक नाम।

ब्राह्मी--भारतकी प्राचीन लिपि। इसके प्राचीनतम नमूने बस्ती ज़िलेमें प्राप्त पिपरावाके स्तूपमें तथा अजमेर ज़िलेके बडली गाँवके शिलालेखमें मिले हैं। इनका समय गौरीशंकर हीराचंद ओझाने ५वीं सदी ई० पू० माना है। उस समयसे लेकर ३५० ई० तक इस लिपिका प्रयोग मिलता है। **ब्राह्मी नामकी व्युत्पत्ति**--इस लिपिके 'ब्राह्मी' नाम पड़नेके संबंधमें कई मत हैं--(१) इस लिपिका प्रयोग इतने प्राचीनकालसे होता आ रहा है कि लोगोंको इसके निर्माताके बारेमें कुछ ज्ञात नहीं है और धार्मिक भावनासे विश्वकी अन्य चीजोंकी भाँति 'ब्रह्मा' या 'ब्रह्म'को इसका भी निर्माता मानते रहे हैं और इसी आधारपर इसे ब्राह्मी कहा गया है। (२) चीनी विश्वकोष 'फ़ा-वान-शु-लिन' (६६८ ई०)में इसके निर्माता कोई ब्रह्म या ब्रह्मा (fan) नामके आचार्य लिखे गये हैं, अतएव उनके नामके आधारपर इसका नाम ब्राह्मी पड़ना संभव है। (३) डॉ० राजबली पांडेयके अनुसार भारतीय आर्योंने ब्रह्म (= वेद या ज्ञान)की रक्षाके लिए इसको बनाया। इस आधारपर भी इसके ब्राह्मी नाम पड़नेकी संभावना हो सकती है। (४) कुछ लोग साक्षर समाज ब्राह्मणोंके प्रयोगमें विशेष रूपसे होनेके कारण भी इसके ब्राह्मी नामसे पुकारे जानेका अनुमान लगाते हैं। स्पष्ट ही ये सारे मत केवल अनुमानपर ही आधारित हैं। ऐसी स्थितिमें इनमें किसीको भी सनिश्चय स्वीकार नहीं किया जा सकता। यों पहला मत अन्योंकी अपेक्षा अधिक तर्कसम्मत लगता है। **ब्राह्मी लिपिकी उत्पत्ति**--ब्राह्मी लिपिकी उत्पत्तिके प्रश्नको लेकर विद्वानोंमें बहुत विवाद होता आया है। इस विषयमें व्यक्त किये गये विभिन्न मत दो प्रकारके हैं। एकके अनुसार ब्राह्मी किसी विदेशी लिपिसे संबंध रखती है और दूसरेके अनुसार इसका उद्भव और विकास भारतमें हुआ है। यहाँ दोनों प्रकारके मतोंपर संक्षेपमें प्रकाश डाला जा रहा है। **(क) ब्राह्मी किसी विदेशी लिपिसे निकली है**--इस संबंधमें विभिन्न विद्वानोंने अपने अलग-

अलग विचार व्यक्त किये हैं, जिनमें प्रमुख निम्नांकित हैं—(१) फ्रेंच विद्वान् कुपेरीका विश्वास है कि ब्राह्मी लिपिकी उत्पत्ति चीनी लिपिसे हुई है। यह मत सबसे अधिक अवैज्ञानिक है। चीनी और ब्राह्मीके चिह्न आपसमें सभी बातोंमें एक दूसरेसे इतने दूर हैं कि किसी एकसे दूसरेको संबंधित माननेकी कल्पना ही हास्यास्पद है। इस मतकी व्यर्थताके कारण ही प्रायः विद्वानोंने इस विषयपर विचार करते समय इसका उल्लेखतक नहीं किया है। (२) डॉ० अल्फ्रेड मूलर, जेम्स प्रिंसेप तथा सेनार्ट आदिने यूनानी लिपिसे ब्राह्मीको उत्पन्न माना है। सेनार्टका कहना है कि सिकंदरके आक्रमणके समय भारतीयोंसे यूनानियोंका संपर्क हुआ और उसी समय इन लोगोंने यूनानियोंसे लिखनेकी कला सीखी। किंतु यथार्थता यह है कि सिकंदरके आक्रमण (३२५ ई० पू०)के बहुत पहलेसे यहाँ लेखनका प्रचार था, अतएव यूनानी लिपिसे इसका सम्बन्ध नहीं जोड़ा जा सकता। (३) हलवेके अनुसार ब्राह्मी एक मिश्रित लिपि है, जिसके आठ व्यंजन ४थी सदी ई० पू० आर्मेइक लिपिसे, छह व्यंजन, दो प्राथमिक स्वर, सब मध्यवर्ती स्वर और अनुस्वार खरोष्ठीसे तथा पाँच व्यंजन एवं तीन प्राथमिक स्वर प्रत्यक्ष या गौण रूपसे यूनानीसे लिये गये हैं और यह मिश्रण सिकंदरके आक्रमण (३२५ ई० पू०)के बाद हुआ है। कहना न होगा कि ४थी सदी ई० पू० से एवं सिकंदरके आक्रमणसे पूर्व ब्राह्मी लिपिका प्रयोग होता था, अतएव यह मत भी अल्फ्रेड मूलरके मतकी भाँति ही निस्सार है। (४) ब्राह्मी लिपिकी उत्पत्ति सामी (सेमिटिक) लिपिसे माननेके पक्षमें अधिक विद्वान् हैं, पर ये सभी इस दृष्टिसे पूर्णतः एक मत नहीं रखते। यहाँ कुछ प्रधान मत दिये जा रहे हैं।

(अ) वेबर, कस्ट, बेनफे तथा जेनसन आदि विद्वान् सामी लिपिकी फ़ोनीशियन शाखासे ब्राह्मी लिपिकी उत्पत्ति मानते हैं। इस मतका मुख्य आधार है कुछ ब्राह्मी और फ़ोनीशियन लिपि-चिह्नोंका रूप-साम्य। इसे स्वीकार करनेमें दो आपत्तियाँ हैं: (क) जिस कालमें इस प्रकारके प्रभावकी सम्भावना हो सकती है, भारत तथा फ़ोनीशियन लोगोंके प्रत्यक्ष सम्पर्कके कोई निश्चित और प्रौढ़ प्रमाण नहीं मिलते। (ख) फोनीशियन लिपिसे ब्राह्मीकी समानता स्पष्ट नहीं है। इसके लिए सबसे बड़ा प्रमाण तो यह है कि यह समानता यदि स्पष्ट होती तो इस सम्बन्धमें इस विषयके चोटीके विद्वानोंमें इतना मतभेद न होता। इस प्रसंगमें गौरीशंकर हीराचन्द ओझाका मत ही समीचीन ज्ञात होता है कि दोनोंमें केवल एक अक्षर (ब्राह्मी 'ज' और फ़ोनीशियन 'गिमेल')का ही साम्य है। कहना अनुचित न होगा कि एक अक्षरके साम्यके आधारपर इतने बड़े निर्णयको आधारित करना वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता।

(आ) टेलर तथा सेथ आदिके अनुसार ब्राह्मी लिपि दक्षिणी सामी लिपिसे निकली है। डॉ० आर० एन० साहाने इसे अरबीसे सम्बन्धित माना है। किंतु सत्य यह है कि इन लिपियोंमें समानता नहींके बराबर है और ऐसी स्थितिमें केवल इस आधारपर कि अरबसे भारतका पुराना सम्पर्क था (और यह सम्बन्ध भी इतना अधिक पुराना नहीं मिलता, जिसके आधारपर यह कहा जा सके कि ब्राह्मी, जो अशोकके समयमें इतनी विकसित है अपने मूलरूपमें इससे निकली है), यह मान लेना न्यायसंगत नहीं लगता कि ब्राह्मी अरबी या दक्षिणी सामी लिपिसे निकली है। डीकेके अनुसार असीरियाके कीलाक्षरों (क्यूनीफार्म) से किसी दक्षिणी सामी लिपिकी उत्पत्ति हुई थी और फिर उससे ब्राह्मीकी। इस सम्बन्धमें गौरीशंकर हीराचंद ओझाका मत पूर्णतः न्यायोचित लगता है कि रूपकी विभिन्नताके कारण कीलाक्षरोंसे न तो किसी सामी लिपिके निकलनेकी सम्भावना है और न सामीसे ब्राह्मीकी।

(इ) कुछ लोग उत्तरी सामी लिपिसे ब्राह्मीकी उत्पत्ति मानते हैं। इस मतके सम-

थकोंमें प्रधान नाम बूलरका लिया जाता है। यों वेबर, बेनफ़े, पाट, वेस्टरगार्ड, ह्विटने तथा विलियम जोन्स आदि अन्य लोगोंके भी इनसे बहुत भिन्न मत नहीं हैं। बूलरका कहना है कि हिन्दुओंने उत्तरी सामी लिपिके अनुकरणपर कुछ परिवर्तनके साथ अपने अक्षरोंको बनाया। परिवर्तनसे उसका आशय यह है कि कहीं लकीरको कुछ इधर-उधर हटा दिया, जैसे 'अलेफ'से 'अ' करनेमें--

K K K

जहाँ लकीर न थी, वहाँ नयी लकीर बना दी, जैसे ज़ाइनसे 'ज' बनानेमें, कहीं-कहीं लकीरें मिटा दीं, जैसे 'हेथ'से 'घ' करनेमें--

और इसी प्रकार कहीं नीचे लटकती लकीर ऊपर घुमा दी, कहीं तिरछी लकीर सीधी कर दी, कहीं आड़ी लकीर खड़ी कर दी, कहीं त्रिकोणको धनुषाकार बना दिया और कहीं कोणको अर्द्धवृत्त या कहीं लकीरको काटकर छोटी या बड़ी कर दी तो कहीं और कुछ। आशय यह कि जहाँ जो परिवर्तन चाहा कर लिया। यहाँ दो बातें कहनी हैं: (१) इतना करनेपर भी बूलरको ७ अक्षरों [दालेथ (द)से 'ध', हेथ (ह)से 'घ', तेथ (त)से 'थ', सामेख (स)से 'ष', फ़े (फ़)से 'प', त्साधेसे 'च' तथा काफ़ (क़)से 'ख']की उत्पत्ति ऐसे अक्षरोंसे माननी पड़ी, जो उच्चारणमें भिन्न हैं। (२) बूलरने जिस प्रकारके परिवर्तनोंके आधारपर 'अलेफ'से 'अ' या इसी प्रकार अन्य अक्षरोंकी उत्पत्ति सिद्ध की है, यदि कोई चाहे तो संसारकी किसी भी लिपिको किसी अन्य लिपिसे निकली सिद्ध कर सकता है। उदाहरणके लिए 'क' अक्षरसे यदि अंग्रेज़ी kको निकला सिद्ध करना चाहें तो कह सकते हैं कि बनानेवालेने क के बायीं ओरके गोलेको हटाकर ऊपरकी शिरोरेखा तिरछी कर दी और K बन गया या इसी प्रकार ब्राह्मीके अ--

K

का मुँह फेरकर सीधी रेखाको जरा हटा दिया और उत्तरी सामीका अलेफ--

बन गया। इसी तरह जैसा कि ओझाजीने लिखा है अंग्रेज़ी A से ब्राह्मी अ--

A H H

या D से ब्राह्मी द

D

का निकलना सिद्ध किया जा सकता है।

बूलरने इस द्रविड़-प्राणायामके आधारपर यह सिद्ध किया कि ब्राह्मीके २२ अक्षर उत्तरी सामीसे, कुछ प्राचीन फोनीशीय लिपिसे, कुछ मेसाके शिलालेखसे तथा पाँच असीरियाके बाटोंपर लिखित अक्षरोंसे लिये गये। इधर डॉ॰ डेविड डिरिंजरने भी अपनी 'द-अलफ़ाबेट' नामक पुस्तकमें बूलरका समर्थन करते हुए ब्राह्मीको उत्तरी सामी लिपिसे उत्पन्न माना है।

उत्तरी सामीसे ब्राह्मीके उत्पन्न होनेके लिए प्रधान तर्क ये दिये जाते हैं--(१) दोनों लिपियोंमें साम्य है। (२) भारतमें सिंधु घाटीमें जो प्राचीन लिपि मिली है, वह चित्रात्मक या भाव-ध्वनि-मूलक लिपि है और उससे वर्णात्मक या अक्षरात्मक लिपि नहीं निकल सकती। (३) ब्राह्मी प्राचीन कालमें सामीकी भाँति ही दायेंसे बायेंको लिखी जाती थी। (४) भारतमें ५वीं सदी ई॰ पू॰-के पहलेके लिपिके नमूने नहीं मिलते। यहाँ एक-एक करके इन तर्कोंपर विचार किया जा रहा है:--(१) दोनों लिपियोंमें प्रत्यक्ष साम्य बहुत ही कम है। ऊपर हम लोग देख चुके हैं कि किस प्रकार तरह-तरहके परिवर्तनों तथा द्रविड़-प्राणायामके आधारपर

बूलरने दोनों लिपियोंके अक्षरोंमें साम्य स्थापित किया है। साथ ही यह भी संकेत किया जा चुका है कि इस प्रकार यदि साम्य सिद्ध करनेपर कोई तुल ही जाय तो संसारकी किसी भी दो लिपिमें थोड़ा-वहुत साम्य सिद्ध किया जा सकता है। ऐसी स्थितिमें यह आरोपित साम्य दोनोंमें सम्बन्ध सिद्ध करनेके लिए पूर्णतया अपर्याप्त है। (२) जहाँतक दूसरे तर्कका प्रश्न है, दो बातें कही जा सकती हैं। एक तो यह कि यह कहना पूर्णतया भ्रामक है कि चित्रात्मक लिपि या चित्र-भावमूलक लिपि या भाव-ध्वनि-मूलक लिपिसे वर्णात्मक लिपिका विकास नहीं होता। प्राचीन कालमें संसारकी सभी लिपियाँ चित्रात्मक थीं और उनसे ही वर्णात्मक लिपियोंका विकास हुआ। सामीका 'अलेफ' उदाहरणार्थ लें। शब्दका मूल अर्थ वैल है और अलेफ़के लिए मूल चिह्न वैलका सर था, जिसपर दो सींग थे। उसी चित्र-लिपिसे शुद्ध वर्णात्मक लिपि रोमनके Aका विकास हुआ है। इस प्रकार अनेकानेक उदाहरण मिलते हैं। लिपिके विकासक्रमकी चित्रात्मक, भाव-ध्वनि-मूलक, अक्षरात्मक तथा वर्णात्मक लिपियाँ सीढ़ियाँ हैं। दूसरे यह कि, **सिंधु घाटीकी लिपि** (दे०) पूर्णतया चित्रलिपि नहीं है। यह भाव और ध्वनिके बीचकी, अर्थात् भाव-ध्वनि-मूलक लिपि है। ऐसी स्थितिमें यह नहीं कहा जा सकता कि सिंधु घाटीकी लिपिसे ब्राह्मी लिपिका विकास संभव नहीं है। संभव है कल कोई टूटी कड़ी मिल जाय और सिंध घाटीकी लिपिसे ही ब्राह्मीकी उत्पत्ति सिद्ध हो जाय। यों यदि ध्यानसे सिंधु घाटीकी लिपि तथा ब्राह्मीको देखा जाय तो दोनोंके कई चिह्नोंमें पर्याप्त साम्य है और वह साम्य बूलर द्वारा उत्तरी सामी और ब्राह्मीमें आरोपित साम्यसे कहीं अधिक युक्तियुक्त और तर्क-संगत है। यहाँ कुछ उदाहरण लिये जा सकते हैं—

सिंधु-घाटीकी लिपि	ब्राह्मीलिपि	नागरीलिपि
C	C	ट
+	+	क
ſ	ᒐ	ह
□	□	ब
○	○	ठ
⊙	⊙	थ
∧	∧	ग
⩓	⩓	श
|	ʃ	र
⁞	∴	इ

(३) तीसरे तर्कमें उत्तरी सामीसे ब्राह्मीको निकली माननेवालोंने कहा है कि सामी दायेंसे बायेंको लिखी जाती है और पुरानी ब्राह्मीके भी कुछ ऐसे उदाहरण हैं, जिनमें वह बायेंसे दायें न लिखी जाकर दायेंसे बायेंको लिखी गयी है। इसका आशय यह है कि सामीसे निकली होनेके कारण ब्राह्मी मूलतः दायेंसे बायेंको लिखी जाती थी। ब्राह्मीके उदाहरण जो दायेंसे बायें लिखे मिले हैं, निम्नांकित हैं—(क) अशोकके अभिलेखोंके कुछ अक्षर (जौगढ़ और धौलीके लेखोंमें 'ओ' उलटा है तथा जौगढ़ और देहलीके सिवालिक स्तंभमें संभवतः 'ध')। (ख) मध्य प्रदेशके एरण स्थानमें सिक्केका लेख। (ग) मद्रासके यरगुडी स्थानमें प्राप्त अशोकका लघु शिलालेख। बूलरके सामने इनमें केवल प्रथम दो थे। तीसरा बादमें मिला है।

'क'के सम्बन्धमें यह कहना है कि इसके उदाहरण बहुत थोड़े हैं, जबकि इसके समकालीन लेखोंमें बायेंसे दायें लिखनेके उदाहरण इससे कई गुने अधिक हैं। जैसा कि ओझाजीका अनुमान है यह लेखककी असावधानीके कारण हुआ ज्ञात होता है या संभव

है देश-भेदके कारण इस प्रकारका विकास हो गया हो, जैसे छठीं सदीके यशोधर्मनके लेखमें 'उ' नागरीके 'उ' सा मिलता है, पर उसी सदीके गारुलक सिंहादित्यके दानपत्रमें ठीक उसके उलटा। बँगलाका 'च' भी पहले बिलकुल उलटा लिखा जाता था। अतएव कुछ उलटे अक्षरोंके आधारपर लिपिको उलटी लिखी जानेवाली (दायेंसे बायें) मानना उचित नहीं कहा जा सकता। 'ख'का सम्बन्ध सिक्केसे है। किसी सिक्केपर अक्षरोंका उलटे खुद जाना आश्चर्य नहीं। ठप्पेकी गड़बड़ीके कारण प्रायः ऐसा हो जाता है। सातवाहन (आंध्र) वंशके राजा शातकर्णीके भिन्न प्रकारके दो सिक्कोंपर ऐसी अशुद्धि मिलती है। इसी प्रकार पार्थिअन् अब्दगसिसके-एक सिक्केपरका खरोष्ठीका लेख भी उलट गया है। और भी इस प्रकारके उदाहरण हैं। इसी कारण प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता डॉ० हुल्श तथा फ्लीटने बूलरके इस तर्कको अर्थहीन माना है। 'ग'के सम्बन्धमें विचित्रता यह है कि इसमें एक पंक्ति बायेंसे दायेंको लिखी मिलती है तो दूसरी दायेंसे बायें और आगे भी इसी प्रकार परिवर्तन होता गया है। इससे ऐसा लगता है कि लिखनेवाला नये प्रयोग या खेलवाड़की दृष्टिसे यह कर रहा था। यदि वह दायेंसे बायें लिखनेके किसी निश्चित सिद्धांतका पालन करता तो ऐसा न होता। पूरा लेख एक प्रकारका होता (सन् १८९५में डान मार्टिनो, डी० ज़िलवा, विक्रमसिंघेने एशिआटिक सोसाइटीके जर्नलमें (पृ० ९८५) लंकामें प्राप्त कुने ब्राह्मीके शिलालेखोंमें दो अक्षरोंके उलटे होनेका उल्लेख अपने एक पत्रमें किया था, पर उनका चित्र कहीं प्रकाशमें नहीं आया, अतः उनके सम्बन्धमें कुछ (कहना संभव नहीं है)। इन सारी बातोंको देखनेसे यह स्पष्ट हुए बिना नहीं रहता कि इन थोड़ेसे अपवादस्वरूप प्राप्त और अशुद्धियों या नये प्रयोगोंपर आश्रित उदाहरणोंके आधारपर यह नहीं कहा जा सकता कि पहले ब्राह्मी दायेंसे बायेंको लिखी जाती थी। चौथा तर्क भी महत्त्वपूर्ण नहीं कहा जा सकता। जब तक उत्तरी भारतके सभी संभाव्य स्थलोंकी पूरी खुदाई नहीं हो जाती, यह नहीं कहा जा सकता कि इससे पुराने शिलालेख नहीं हैं। साथ ही साहित्यिक प्रमाणोंसे यह सिद्ध हो चुका है कि इससे बहुत पूर्व (बुद्ध-युगसे भी पूर्व)से भारतमें लिखनेका प्रचार था। यह बहुत संभव है कि आर्द्र जलवायु तथा नदियोंकी बाढ़ आदिके कारण पुरानी लिखित सामग्री, जो भोजपत्र आदिपर रही हो, सड़-गल गयी हो। इस तरह उत्तरी सामीसे ब्राह्मीका सम्बन्ध संभव नहीं है।

ब्राह्मीको किसी विदेशी लिपिसे सम्बद्ध सिद्ध करनेवालोंमें प्रधानके मतोंका विवेचन यहाँ किया गया और इससे स्पष्ट है कि ऐसा कोई भी पुष्ट प्रमाण अभी तक नहीं मिला है, जिसके आधारपर ब्राह्मीको किसी विदेशी लिपिसे निकली सिद्ध किया जा सके। इसी प्रकार कुछ और लोगोंने कुछ और लिपियोंसे ब्राह्मीको संबद्ध माना है। संक्षेपमें इन विभिन्न विद्वानोंके अनुसार ब्राह्मी, चीनी, आर्मेइक, फोनीशियन, उत्तरी सेमिटिक, दक्षिणी सेमिटिक, मिस्री, अरबी, हिमिअरेटिक, क्यूनीफ़ार्म, हड़मांट या ओर्मजकी किसी अज्ञात लिपि या सेबिअन आदिसे मिलती-जुलती तथा सम्बद्ध है। इस प्रसंगमें सीधी बात यह कही जा सकती है कि इस क्षेत्रमें काम करनेवाले उच्च श्रेणीके विद्वानोंने ब्राह्मी लिपिसे इन विभिन्न प्रकारकी लिपियोंसे समता देखी है और सम्बद्ध सिद्ध करनेका प्रयास किया है। यदि इन विभिन्न लिपियोंमें किसी एकसे भी स्पष्ट और यथार्थ-साम्य होता तो इस विषयमें इतने मतभेद न होते। इन विद्वानोंमें इतना अधिक मतभेद यही सिद्ध करता है कि यथार्थतः इनमें किसी भी लिपिसे ब्राह्मीसे स्पष्ट और प्रचुर साम्य नहीं है, इसीलिए कष्ट-कल्पनामें विद्वानोंको दूर-दूरकी कौड़ी लानी पड़ी है। ऐसी स्थितिमें यह निष्कर्ष निकालना अनुचित नहीं कहा जा सकता है कि ऊपर

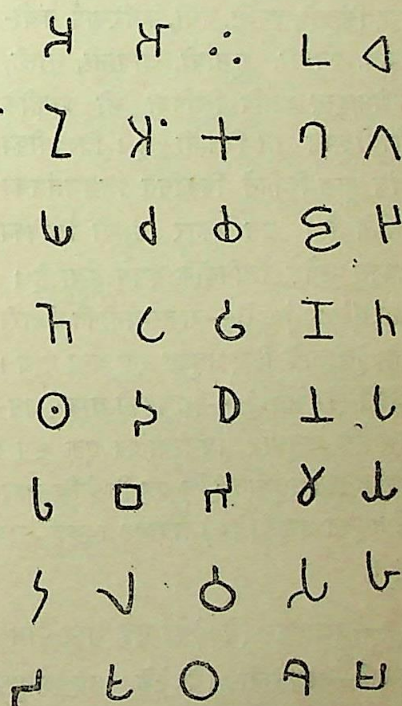
गिनायी गयी लिपियोंमें ब्राह्मी किसीसे भी नहीं निकली है। (ख) **ब्राह्मीकी उत्पत्ति भारतमें हुई है**--इस वर्गमें कई मत हैं, जिनपर यहाँ अलग विचार किया जा रहा है। (१) **द्रविड़ीय उत्पत्ति**--एडवर्ड थामस तथा कुछ अन्य विद्वानोंका यह मत है कि ब्राह्मी लिपिके मूल आविष्कारक द्रविड़ थे। डॉ० राजबली पांडेयने इस मतको काटते हुए लिखा है कि द्रविड़ोंका मूल स्थान उत्तर भारत न होकर दक्षिण भारत है, पर ब्राह्मी लिपिके पुराने सभी शिलालेख उत्तर भारतमें मिले हैं। यदि इस-के मूल आविष्कर्त्ता द्रविड़ होते तो इसकी सामग्री दक्षिण भारतमें भी अवश्य मिलती। साथ ही उनका यह भी कहना है कि द्रविड़ भाषाओंमें सबसे प्राचीन भाषा तमिल है और उसमें विभिन्न वर्गोंके केवल प्रथम एवं पंचम वर्ण ही उच्चरित होते हैं, पर ब्राह्मीमें पाँचों वर्ण मिलते हैं। यदि ब्राह्मी मूलतः उनकी लिपि होती तो इसमें भी केवल प्रथम और पंचम वर्ण मिलते। किसी ठोस आधारके अभावमें यह कहना तो सचमुच ही सम्भव नहीं है कि ब्राह्मीके मूल-आविष्कर्ता द्रविड़ ही थे, किंतु पांडेयजीके तर्क भी बहुत युक्ति-संगत नहीं दृष्टिगत होते। यह सम्भव है कि द्रविड़ोंका मूल स्थान दक्षिणमें रहा हो, पर यह भी बहुत-से विद्वान् मानते हैं कि वे उत्तर भारतमें भी रहते थे और हड़प्पा और मोहन-जो-दड़ो जैसे विशाल नगर उनकी उच्च संस्कृतिके केन्द्र थे। पश्चिमी पाकिस्तानमें ब्राहुई भाषाका मिलना (जो द्रविड़ भाषा ही है) भी उनके उत्तर भारतमें निवासकी ओर संकेत करता है। बादमें सम्भवतः आर्योंने अपने आनेपर उन्हें मार भगाया और उन्होंने दक्षिण भारतमें शरण ली। पांडेयजी यदि सिंधु-सभ्यतासे द्रविड़ोंका सम्बन्ध नहीं मानते या ब्राहुई भाषाके उस क्षेत्रमें मिलनेके लिए कोई अन्य कारण मानते हैं, तो उनकी ओर यदि यहाँ संकेत कर देते, तो पाठकके लिए इस प्रकार सोचनेका अवसर न मिलता। पांडेयजीकी दूसरी आपत्ति तमिलमें ब्राह्मीसे कम ध्वनि होनेके सम्बन्धमें है। ऐसी स्थिति-में क्या यह सम्भव नहीं है कि आर्योंने तमिल या द्रविड़ोंसे उनकी लिपि ली हो और अपनी भाषाकी आवश्यकताके अनुकूल उनमें परि-वर्द्धन कर लिया हो। किसी लिपिके प्राचीन या मूल रूपका अपूर्ण तथा अवैज्ञानिक होना बहुत सम्भव है और यह भी असम्भव नहीं है कि आवश्यकतानुसार समय-समयपर उसे वैज्ञानिक तथा पूर्ण बनानेका प्रयास किया गया हो। किसी अपूर्ण लिपिसे पूर्ण लिपिके निकलनेकी बात तत्वतः असम्भव न होकर बहुत सम्भव तथा स्वाभाविक है। (२) **सांकेतिक चिह्नोंसे उत्पत्ति**--श्री आर० शाम शास्त्रीने 'इंडियन एंटीक्वेरी' जिल्द ३५में एक लेख देवनागरी लिपिकी उत्पत्तिके विषयमें लिखा था। इसके अनुसार देवताओंकी मूर्तियाँ बननेके पूर्व सांकेतिक चिन्हों द्वारा उनकी पूजा होती थी, जो कई त्रिकोण तथा चक्रों आदिसे बने हुए यन्त्र, जो 'देवनगर' कहलाता था, के मध्यमें लिखे जाते थे। देव-नगरके मध्य लिखे जानेवाले अनेक प्रकारके सांकेतिक चिह्न कालांतरमें उन-उन नामोंके पहले अक्षर माने जाने लगे और देवनगरके मध्य उनका स्थान होनेसे उनका नाम देव-नागरी हुआ ('प्राचीन लिपि-माला', पृ० ३०)। ओझाजीके शब्दोंमें शास्त्रीजीका यह लेख गवेषणाके साथ लिखा गया तथा युक्तियुक्त है, पर जब तक यह न सिद्ध हो जाय कि जिन तांत्रिक पुस्तकोंसे अवतरण दिये गये हैं, वे वैदिक साहित्यसे पहलेके या काफी प्राचीन हैं, इस मतको स्वीकार नहीं किया जा सकता। (३) **वैदिक चित्र-लिपिसे उत्पत्ति**--श्री जग-मोहन वर्माने 'सरस्वती' (१९१३-१५)में एक लेख-मालामें यह दिखानेका यत्न किया था कि वैदिक चित्र-लिपि या उससे निकली सांकेतिक लिपिसे ब्राह्मी निकली है। पर, इस लेखके चित्र पूर्णतया कल्पित हैं और उनके लिए प्राचीन प्रमाणोंका अभाव है, अतएव

इनका मत स्वीकार नहीं किया जा सकता।

(४) **आर्य उत्पत्ति**—डाउसन, कनिंघम, लसन, थामस तथा डॉसन आदि विद्वानोंका मत है कि आर्योंने ही भारतकी किसी पुरानी चित्र-लिपिके आधारपर ब्राह्मी लिपिको विकसित किया। बूलरने पहले इसका विरोध करते हुए लिखा था कि जब भारतमें कोई चित्रलिपि मिलती ही नहीं, तो चित्र-लिपिसे ब्राह्मीके विकसित होनेकी कल्पना निराधार है। पर संयोगसे इधर सिंधकी घाटीमें चित्रलिपि मिल गयी है, अतएव बूलरकी इस आपत्तिके लिए अब कोई स्थान नहीं है और सम्भव है कि यह लिपि आर्योंकी अपनी चीज़ हो। **निष्कर्ष**—यह तो किसी सीमातक माना जा सकता है कि भारतीयोंने ही इस लिपिको जन्म दिया तथा इसका विकास किया, पर यह कार्य आर्यों, द्रविड़ों या किसी अन्य जातिके लोगों द्वारा हुआ, यह जाननेके लिए आज हमारे पास कोई साधन नहीं है। ओझाजीका यह कथन—"जितने प्रमाण मिले हैं, चाहे प्राचीन शिलालेखोंके अक्षरोंकी शैली और चाहे साहित्यके उल्लेख, सभी यह दिखाते हैं कि लेखन-कला अपनी प्रौढ़ावस्थामें थी। उनके आरम्भिक विकासका पता नहीं चलता। ऐसी दशामें यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि ब्राह्मी लिपिका आविष्कार कैसे हुआ और इस परिपक्व रूपमें··वह किन-किन परिवर्तनोंके बाद पहुँची।·· निश्चयके साथ इतना ही कहा जा सकता है कि इस विषयके प्रमाण जहाँतक मिलते हैं, वहाँतक ब्राह्मी लिपि अपनी प्रौढ़ अवस्थामें और पूर्ण व्यवहारमें आती हुई मिलती है और उसका किसी बाहरी स्रोत और प्रभावसे निकलना सिद्ध नहीं होता'। बहुत ही ठीक है और जबतक और सामग्री प्रकाशमें न आवे, इसके आगे कुछ कहना उचित नहीं है। यों इधर सिंध घाटीकी लिपि प्रकाशमें आयी है और उसके कुछ चिह्न ब्राह्मीसे मिलते भी हैं :

(पृष्ठ ४१८ पर उदाहरण दिये गये हैं)

अतएव इस आधारपर इतना और जोड़ा जा सकता है कि यह भी असम्भव नहीं है कि ब्राह्मीका विकास सिंधु घाटीकी लिपिसे हुआ हो। पर, इस सम्बन्धमें निश्चित रूपसे कुछ कहना तभी उचित होगा, जब सिंधु घाटीके चिह्नोंकी ध्वनिका भी पता चल जाय। डॉ० राजबली पाण्डेयका निश्चित मत है कि सिंधु घाटीकी लिपिसे ही ब्राह्मी लिपिका विकास हुआ है, पर तथ्य यह है कि बिना ध्वनिका विचार किये केवल स्वरूपमें थोड़ा-बहुत साम्य देखकर दोनों लिपियोंको सम्बद्ध मान लेना वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता। सम्भव है, जिन दो चिह्नोंको स्वरूप-साम्यकी दृष्टिसे हम एक समझते हों, वे मूलतः दो अलग-अलग ध्वनियोंके प्रतीक हों।



[यह ब्राह्मी लिपिका ३री सदी ई० पू०-का रूप है। अक्षर क्रमसे अ, आ, इ, उ, ए, ओ, अं, क, ख, ग, घ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म, य, र, ल, व, स, ह, ड हैं। अंतके चार अक्षर ऊ, ठ, श, ष हैं। उ, ठ पहली सदी ई० पू०के हैं तथा श, ष पहली सदी ई०के हैं।]

ब्राह्मी लिपिका विकास—ब्राह्मी लिपिके प्रयोगका काल ५वीं सदी ई० पू०से ३५०ई०-तक है। इसके बाद भारतमें इसकी दो शैलियाँ विकसित हो गयी हैं। उत्तरी शैलीसे धीरें-धीरे गुप्त लिपि, कुटिल लिपि, प्राचीन नागरी लिपि (आधुनिक नागरी या देवनागरी, गुजराती, महाजनी, कैथी, मैथिली, बँगला, उड़िया, मेइतेइ आदि इसीसे विकसित हुई हैं), शारदा लिपि (इसीसे शारदा, टाक्री, लंडा, डोगरी, चमेआली, कोची, कुल्लुई, कश्टवारी, जौनसारी, मंडेआली आदि विकसित हुई हैं)खोतानी आदि विकसित हुईं। ब्राह्मीकी दक्षिणी शैलीसे पश्चिमी, मध्य-प्रदेशी, तेलुगु, कन्नड़, ग्रंथ, कलिंग, तमिल आदि लिपियोंका विकास हुआ। भारतके वाहर **सिंहली**, लाओ, वर्मी, कोरियाई, कंबोडियाई, स्यामी, सुमात्री, जावानी, वाली, फ़िलीपाइन्स आदि लिपियाँ भी ब्राह्मीके दक्षिणीरूपसे ही निकली हैं। तिब्बतीका संबंध गुप्त लिपिसे विकसित सिद्धमात्रिका लिपिसे है। इस प्रकार ब्राह्मी लिपिका विकास अनेक लिपियोंके रूपमें हुआ है।

ब्रिजारी(brinjari)—राजस्थानीकी **बंजारी** (दे०)बोलीके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

ब्रिओरी (briori)—१८९१की वम्बई जनगणनाके अनुसार 'विलोची'का एक रूप। ग्रियर्सनका अनुमान है कि यह विलोचिस्तानमें प्रयुक्त **ब्राहुई** (दे०)भाषाका विकृत नाम है।

ब्रिज—**ब्रजभाषा** (दे०)का एक अन्य नाम।

ब्रिजकी—**ब्रजभाषा** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

ब्रिजबासी(brijbasi)—**नटी** (दे०)का एक रूप।

ब्रिजिआ (brijia)—**खेखारी** (दे०)की, पालामऊमें प्रयुक्त एक बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, ३,०००के लगभग थी।

ब्रीटन (bretan)—भारोपीय परिवारकी **केल्टिक** (दे०) शाखाकी ब्रिटेनि (फ्रांस)में प्रयुक्त एक भाषा। इसके बोलनेवालोंकी संख्या १०लाखके लगभग है।

ब्रीदिंग फ्लास्क (breathing flask)—ध्वनिमें श्वास-प्रक्रियाका सूक्ष्मतासे अध्ययन करनेके लिए गट्ज़मैन द्वारा बनाया गया एक यंत्र।

ब्रे(bre)—**ब्वे** (दे०)का एक नाम।

ब्रेक(brek)—**करेन** (दे०)की एक बोली।

ब्रोक्पा(brokpa)—**शिणा**(दे०)की बल्तिस्तानके कुछ गाँवोंमें प्रयुक्त, एक बोली। इसे **डाह हनूकी ब्रोक्पा** भी कहते हैं।

ब्रोही(brohi)—**ब्राहुई**(दे०)का एक दूसरा नाम।

ब्रोह्की(brohki)—**ब्राहुई** (दे०)का अन्य एक नाम।

ब्लड(blood)—**कैना**(दे०)का एक अन्य नाम।

ब्लैकफ़ुट (blackfoot)—**ब्लैकफ़ुट वर्ग** (दे०)की प्रमुख उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसे **सिस्किआ** भी कहते हैं। ब्लैक फ़ुटके बोलनेवाले ऊपरी मिसूरी नदीके आसपास हैं।

ब्लैकफुट वर्ग(balackfoot)—**अलगोन्किन** (दे०) परिवारका एक उत्तरी अमेरिकी वर्ग। इस वर्गकी प्रमुख भाषाएँ **पिएगन**, **कैना** और **ब्लैकफ़ुट** हैं।

ब्लैमव(blaimaw)—**पो करेन** (दे०)का एक रूप।

ब्वे(bwe)—(१) बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार चिन पहाड़ियोंपर बोली जानेवाली **लइ** (दे०)की एक बोली। (२) बर्माके शान प्रान्त और करेन्नी आदिमें बोली जानेवाली एक **करेन** (दे०) बोली।

ब्वेल्क्वा(bwelkwa)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार चिन पहाड़ियोंपर बोली जानेवाली **चीनी परिवार** (दे०)की एक 'कुकी-चिन' बोली।

भ

भंगसाली (bhangsali)--कच्छकी एक व्यापारी जाति (भंगसाल) में प्रयुक्त एक भाषा। यह **कच्छी** (दे०) का ही एक थोड़ा-सा भिन्न रूप है।

भंडारी (bhandari)--कोलाबा (बंबई) में रहनेवाली भंडारी नामक जातिमें प्रयुक्त एक **कोंकणी** (दे०) बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ८,६६३ थी।

भंद (bhand)--हैदराबादकी १८९१की जनगणनाके अनुसार एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

भकार--भके लिए प्रयुक्त नाम। (दे०) **कार**।

भटेआली (bhateali)--**पंजाबी**की **डोगरा** (दे०) बोलीकी, चम्बामें प्रयुक्त, एक उप-बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार १४,०००-के लगभग थी।

भट्टिआनी (bhattiani)--**पंजाबी** (दे०)-की फ़ीरोज़पुर और बीकानेरमें प्रयुक्त, एक उप-बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,१६,००० थी।

भट्नेरी (bhatneri)--**भट्टिआनी** (दे०)-का एक प्राचीन नाम।

भट्री (bhatri)--(१) **उड़िया** (दे०) का बस्तरमें प्रयुक्त विकृत रूप। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार १७,३८७ थी। (२) स्यालकोटमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

भड़ौंची--**गुजराती** (दे०) की पूर्वी भड़ोचमें प्रयुक्त, एक बोली।

भत्कल (bhatkal)--कुर्गमें प्रयुक्त, **कोंकणी** (दे०) की बोली **नवाईत**का एक नाम। इसे **दाल्दी** (दे०) भी कहते हैं।

भदांवरी--**बुंदेली** (दे०) का आगरा, मैनपुरी, जालौन तथा ग्वालियरमें चंबल नदीके किनारे भदावर तथा तोवँरगढ़ नामक प्रदेश-में प्रयुक्त एक स्थानीय रूप। सीमापर स्थित होनेके कारण 'ब्रजभाषा'के दक्षिणीरूपका इसपर प्रभाव पड़ा है। इसका नाम **भदावरी** भदावरके कारण है। तोवँरगढ़के आधारपर इसे **तोवँरगढ़ी** भी कहते हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या लगभग १३,१३,००० थी।

भद्रवाह वर्गकी बोलियाँ--**पश्चिमी पहाड़ी** (दे०) की तीन बोलियोंका एक वर्ग, जो भद्रवाह (कश्मीर) के आसपास बोली जाती हैं। इस वर्गकी तीन बोलियाँ **भद्रवाही**, **भलेसी** तथा **पाडरी** हैं। इस वर्गके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार २५,५१७ थी। इस वर्गकी बोलियों-पर कश्मीरी भाषाका प्रभाव पड़ा है।

भद्रवाही--भद्रवाह वर्गकी एक बोली। यह भद्रवाह (कश्मीर) के आसपास बोली जाती है। इसकी और भलेसी बोलनेवालोंकी सम्मिलित संख्या, ग्रियर्सनकी भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार २०,९७७ थी। इसपर कश्मीरीका कुछ प्रभाव पड़ा है। (दे०) **भद्रवाह वर्गकी बोलियाँ**।

भमी (bhami)--**मालवी** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

भरतपुरी--भरतपुरमें प्रयुक्त **ब्रजभाषा** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

भरमौरी--(दे०) **गादी**।

भरामू (bhramu)--**चीनीपरिवार** (दे०)-के तिब्बती-बर्मी उप-परिवारकी पश्चिमी नैपालमें प्रयुक्त, एक सार्वनामिक हिमालयी भाषा।

भरिआ (bharia)--नरसिंहपुर और छिंदवाड़ाके भरिआ गोंडोंमें प्रयुक्त, एक

मिश्रित अर्द्ध द्रविड़ बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३३० के लगभग थी। (दे०) **द्रविड़**।

भरुची—**गुजराती** (दे०) का भड़ोंचमें प्रयुक्त, एक रूप। इसे **भड़ौंची** भी कहते हैं।

भरुडी—**नीमाड़ी** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

भरूची—**भडौंची** (दे०) का एक अन्य नाम।

भर्मोरी (bharmauri)—**गादी** (दे०) का एक अन्य नाम।

भलेसी—भद्रवाह वर्गकी एक बोली, जो भद्रवाह (कश्मीर) के पूरब भलेस घाटीमें बोली जाती है। भद्रवाही और इसमें बहुत कम अंतर है। इसकी और भद्रवाहीकी सम्मिलित संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार २०,९७७ थी। (दे०) **भद्रवाह वर्गकी बोलियाँ**।

भवंती—**वर्तमान काल** (दे०) या **लट् लकार** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम।

भवति—**लट् लकार** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

भवत्—**लट् लकार** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

भविष्यंती—**भविष्यत् काल** (दे०) या **लृट् लकार** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम।

भविष्य—**लृट् लकार** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

भविष्य आज्ञा—(दे०) **काल**।

भविष्य आज्ञार्थ—(दे०) **काल**।

भविष्य काल—(दे०) **काल**।

भविष्यत्—**लृट् लकार** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

भविष्यत् काल—(दे०) **काल**।

भव्य—**लृट् लकार** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

भहाती (bhahati)—पंजाबकी १८९१की जनगणनाके अनुसार **चमेआली** (दे०) का एक रूप।

भाटिआ (bhatia)—'सिन्धी' भाषाकी, **कच्छी** (दे०) बोलीकी काठियावड़ और कच्छमें रहनेवाली एक जाति (भाटीआ)-में प्रयुक्त एक उप-बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ६,०००के लगभग थी।

भाठेला (bhathela)—**अनावला** (दे०) का एक अन्य नाम।

भाबरी (bhabari)—**कुमायूँनी** (दे०) की रामपुर (उत्तर प्रदेश) में बोली जानेवाली एक उप-बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनवालोंकी संख्या लगभग ९०० थी।

भाम्टी (bhamti)—ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार मध्यप्रदेशमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा। इसे भामटा लोग बोलते रहे हैं। सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवाले मात्र १४ थे।

भारत-ईरानी—**आर्य** (दे०) उप-शाखाका एक नाम।

भारत-एनाटोलिअन परिवार—**भारोपीय एनाटोलिअन परिवार** (दे०) का एक अन्य नाम।

भारतके भाषा-परिवार—भारतमें इस समय कुल चार भाषा परिवार हैं तथा दो अनिश्चित परिवारकी भाषाएँ हैं। ग्रियर्सनने भारतकी भाषाओंका सविस्तर सर्वेक्षण किया था। उनके अनुसार भारतमें छः परिवार या वर्गकी भाषाएँ (१७९ भाषाएँ+५४४ बोलियाँ) थीं—(१) भारोपीय, (२) द्रविड़, (३) आस्ट्रिक, (४) तिब्बती-चीनी, (५) अवर्गीकृत, (६) करेन तथा मन। **भारोपीय परिवार** (दे०) की भाषाएँ प्रमुखतः उत्तरी भारतमें बोली जाती हैं। यों इसकी कोंकणी भाषा काफी दक्षिणमें कन्नड़ क्षेत्र और अरब सागरके बीचमें बोली जाती हैं। **द्रविड़ परिवार** (दे०) की तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम, मद्रास, आन्ध्र, मैसूर और केरलमें बोली जाती है। इसका क्षेत्र प्रमुखतः दक्षिणी भारत है, किन्तु मध्य तथा उत्तरी भारतमें भी इनकी कुछ बोलियाँ या भाषाएँ हैं, जिनमें मध्य प्रदेशकी 'गोंडी', बिहारकी 'ओराँव' तथा उड़ीसाकी कंधी

आदि अधिक उल्लेख्य हैं। तीसरा **परिवार अस्ट्रिक** (दे०) है। इसके तीन वर्ग हैं: कोल या मुंडा (जिनमें–सन्ताली, मुंडारी, हो, सवेरा, खड़िया, कोर्कु, भूमिज तथा गदबा प्रमुख हैं), मोन-ख्मेर या खासी (जिसमें पलौंक, वा, खासी, मोनख्मेर आदि प्रमुख हैं) तथा नीकोबारी। इनमें भी अधिक महत्त्वपूर्ण **संताली** (बिहार, उड़ीसा, असम), मुंडारी (बिहारमें राँचीके पास तथा अन्यत्र); हो (सिहभूमि जिलेमें) तथा निकोबारी (निकोबार द्वीप) हैं। इसकी कुछ बोलियाँ राजस्थान, मध्यप्रदेश आदिमें भी हैं। चौथा परिवार **तिब्बती-चीनी** (दे०) है। इसके बोलनेवाले असम, कश्मीर तथा कुछ हिमाचल प्रदेशमें हैं। इनकी कुछ उल्लेख्य बोलियाँ लुशेइ (असम), मेइथेइ (मनीपुर), गारो (असम) में गारो (पर्वत), मिश्मी (उत्तरी-पूर्वी असम) अबोर-मिरी (उत्तरी असम) तथा अक (भूटानके पूरब असममें) आदि हैं। असमके इस परिवारकी कई बोलियोंका सामूहिक नाम 'बोडो' है। भारतमें कुछ **अवर्गीकृत भाषाएँ** (दे०) भी हैं, जो उपर्युक्त चारों परिवारोंमें किसीमें भी नहीं आतीं। इस वर्गमें ग्रियर्सनने लगभग २० भाषाओं या बोलियोंका नाम दिया था, किन्तु इनमें लगभग अठारह उपर्युक्त चार परिवारोंमें दो या अधिककी बोलियोंके मिश्रणसे बनी हैं। यथार्थतः केवल दो ही ऐसी हैं, जो उपर्युक्त चार परिवारोंके बाहर हैं। इनमें प्रथम है **बुरुशास्की** (दे०) (या खजुना)। इसका क्षेत्र कश्मीरके एक छोटे भागमें तथा आसपास है। इसे द्राविड़ या आस्ट्रिक (डॉ० चटर्जी) परिवारसे जोड़नेका प्रयास हुआ था, किन्तु व्यर्थ सिद्ध हुआ। दूसरी भाषा **अंडमनी** (दे०) है, जो अंडमन द्वीपमें बोली जाती है। मानवशास्त्रके आधारपर यहाँवाले 'नेग्रिटो' हैं। इस भाषाका अभी-तक विश्वकी किसी भाषासे सम्बन्ध-स्थापन नहीं हो सका है। ग्रियर्सनने एक छठा वर्ग 'करेन' और 'मन'का माना था। वस्तुतः ये दोनों वर्मामें हैं, अतः अब इन्हें भारतीय माननेका प्रश्न ही नहीं उठता। इस तरह यदि दो अवर्गीकृतको अलग-अलग परिवार मानें तो छः परिवारकी भाषाएँ भारतमें हैं।

भारत-चीनी-परिवार—**चीनी परिवार** (दे०)-का एक अन्य नाम।

भारत-हित्ती परिवार (indo-hittite family)—जिसे विद्वान् कुछ दिन पूर्व-तक **भारत यूरोपीय परिवार** (indo european family) कहा करते थे, उसे अब भारत-हित्ती परिवार कहा जाने लगा है, यद्यपि कुछ लोग इससे पूर्णतः सहमत नहीं हैं। इस परिवर्तनका कारण यह है कि **हित्ती** (hittite) भाषा पहले भारोपीयकी पुत्री मानी जाती थी, किंतु अब यह उसकी भगिनी मानी जाने लगी है। ऐसी स्थितिमें, ऐसा नाम उचित ही है, जो दोनों भगिनियों—अर्थात् भारोपीय और हित्ती—के नामपर आधारित हो। कहना न होगा कि 'भारत-हित्ती' नाम इसी प्रकारका है। इसमें दोनों भगिनियोंका नाम सम्मिलित है। मैं व्यक्तिगत रूपसे इस नामके बहुत पक्षमें नहीं हूँ। ऐतिहासिक दृष्टिसे स्वयं 'हित्ती' भाषा, 'एनाटोलिअन' (दे०) की पुत्री है, अतः इस परिवारका 'एना-टोलियन'के आधारपर **भारत-एनाटोलिअन** या **भारोपीय-एनाटोलिअन** नाम कदाचित् अधिक ठीक होगा। (दे०) **भारोपीय परि-वार** शीर्षकमें 'नाम'की समस्या संबंधी भाग। भारत-हित्ती (या भारोपीय) परिवार विश्व-का सबसे प्रसिद्ध परिवार है। इसका महत्त्व तीन दृष्टियोंसे अधिक है। एक तो इस परि-वारके बोलनेवाले संसारमें सबसे अधिक हैं, दूसरे यह भौगोलिक दृष्टिसे बहुत बड़े भूभागमें फैला हुआ है; और तीसरे सभ्यता, संस्कृति, साहित्य या विकास आदिकी दृष्टिसे भी यह परिवार औरोंके आगे है। आज सभी क्षेत्रोंमें इस परिवारके बोलनेवालोंका बोल-बाला है।

भारत-हित्ती परिवारकी दो शाखाएँ हैं: (क) **हित्ती** (दे०), (ख) **भारोपीय** (दे०)।

यों, जैसा कि मैंने सुझाव दिया है यदि परिवार-का नाम 'भारत-एनाटोलिअन' या 'भारतीय एनाटोलिअन' नाम रखा जाय तो इस परि-वारकी शाखाओंका स्वरूप कुछ और होगा। (दे०) भरतीय-एनाटोलिअन परिवार।

भारतीय आर्यभाषा--भारोपीय परिवारकी सतम् शाखाकी भारत-ईरानी या **आर्य** (दे०) उप-शाखाकी एक शाखा। कुछ लोगोंके अनु-सार 'दरद' भी इसी शाखामें आती है, किंतु ऐसा मानना कदाचित् भ्रामक है। (दे०) **आर्य**, (दे०) **बिरोस्** या आर्य अपने मूल स्थानसे चलकर दो या तीन टुकड़ोंमें बँट गये। एक ईरान गया, दूसरा कदाचित् दरद-क्षेत्रमें और तीसरा भारत (भारत-पाकिस्तान) में आया। भाषा-वैज्ञानिक प्रमाणोंके आधारपर ग्रियर्सन आदिका कहना है कि आर्य भारतमें कई दलों (कमसे कम दो) में आये, किंतु सभी लोग इस बातसे सहमत नहीं हैं। आर्योंके आनेके कालके सम्बन्धमें भी विवाद है। अधिकांश लोग यह मानते हैं कि मोटे रूपसे यह माना जा सकता है कि १५०० ई० पू० के लगभग आर्य आ चुके थे। इसका आशय यह हुआ कि भारतीय आर्य भाषाका इतिहास १५००ई० पू० से लेकर २०वीं सदीतक फैला हुआ है। इन साढे तीन हज़ार वर्षोंके कालको मोटे रूपसे तीन वर्गोंमें बाँटा जाता है :—

(१) **प्राचीन भारतीय आर्य भाषा काल** (१५०० ई० पू० से ५०० ई० पू० तक)।

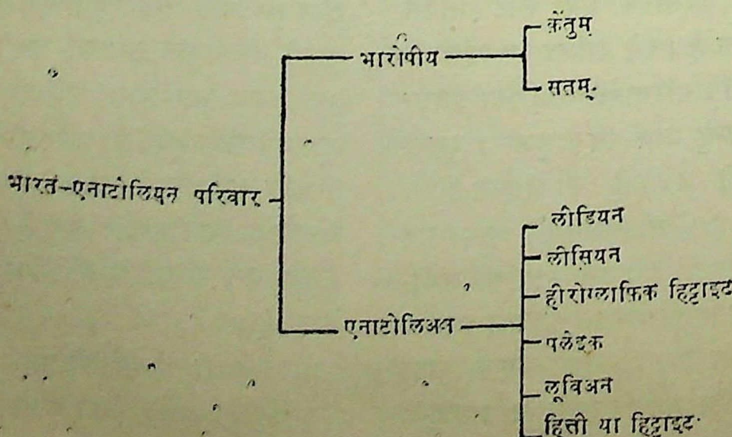
(२) **मध्यकालीन भारती आर्य भाषा काल** (५०० ई० पू० से १००० ई० तक)।

(३) **आधुनिक भारतीय आर्य भाषा काल** (१००० ई० से २०वीं सदीतक)।

इसी आधारपर इन तीनोंको **प्राचीन भारतीय आर्य भाषा** (प्रा० भा० आ०; अंग्रेज़ीमें (OIA); **मध्यकालीन आर्य भाषा** (म० भा० आ०; MIA) और **आधुनिक भारतीय आर्य भाषा** (अ० भा० आ०; NIA) कहते हैं। कुछ विद्वान् इन तीनोंके कालोंको सौ-दो सौ वर्ष इधर-उधर भी मानते हैं। प्रा० भा० आ० में **वैदिक संस्कृत** तथा **संस्कृत**, म० भा० आ०में **पालि, प्राकृत** और **अपभ्रंश** तथा आ० भा० आ०में **हिन्दी, मराठी, बंगला,** आदि आधुनिक भाषाएँ आती हैं। (विशेष विवरणके लिए इनको अलग-अलग देखिये)।

भारबोधक विशेषण--(दे०) **विशेषण**।

भारोपीय एनाटोलिअन परिवार--**भारोपीय** (दे०) या **भारत-हित्ती** (दे०) के स्थानपर, प्रस्तुत पंक्तियोंके लेखक द्वारा, भाषा परिवारके लिए दिया गया नया नाम। इस परिवारकी मूल शाखाएँ दो ही हैं--एनाटोलिअन, तथा भारोपीय। इसीलिए भारोपीय या भारत-हित्ती आदिके स्थानपर परिवारका यह नाम अधिक समीचीन है। इस परिवारकी प्रमुख शाखाएँ-प्रशाखाएँ इस प्रकार हैं, जोकि नीचेकी वंश-तालिकामें दी गयी हैं। इस संबंधमें देखिए 'भारत-हित्ती परिवार' 'भारोपीय परिवार'। चित्रमें दिये गये नामोंको भी कोशमें यथा स्थान देखा जा सकता है।



भारोपीय-एनाटोलिअन परिवारको भारत-एनाटोलिअन परिवार भी कह सकते हैं।

भारत-हित्ती या मूल भारत-हिट्टी (जिसे यहाँ मैं भारोपीय-एनाटोलियन परिवार या मूल भारोपीय-एनाटोलियन परिवार कह रहा हूँ) भाषाका काल मोटे रूपसे २४०० ई० पू०के पूर्व माना जाता है। कुछ लोग इसे ५०० वर्षोंका मानते हैं और इसका काल २९०० ई० पू० और २४०० ई० पू० के बीचमें रखते हैं। २४०० ई० पू० के लगभग इससे दो शाखाएँ विकसित हुईं, एक तो **एनाटोलिअन** और दूसरी **भारोपीय**। इसके चार-पाँच सौ वर्ष बाद २००० ई० पू० के लगभग **एनाटोलिअन** से जो भाषाएँ विकसित हुईं, उनमें छःका नाम प्रमुखतः उल्लेख्य है। इन छहोंका स्थान एशिया माइनर है। कुछ लोग प्रायः इन सभीका सम्बन्ध **काकेशियनसे** मानते रहे हैं। विद्वानोंने **सिलियन, पिसिडिअन, बिथिअन** आदि लगभग एक दर्जन मृत भाषाओंको इनसे मिलाकर संयुक्त रूपसे इन्हें **एशियानिक** नाम भी दिया है। **लीडियन** एक मृत भाषा है, जो १५०० ई० पू०के पूर्व पश्चिमी एशिया माइनरमें बोली जाती थी। इसके केवल ५३ छोटे-मोटे अभिलेख मिले हैं। अधिकतर विद्वान् लीडियनका सम्बन्ध किसी भी भाषासे नहीं मानते थे। कुछ इसे यूट्रस्कनका प्राचीन रूप मानते थे। स्टुर्टवेंट इसे प्रस्तुत परिवारमें रखते हैं। एच० पी० मेरिगीने इसपर विशेष रूपसे काम किया है। **लीसियन** भाषा एशिया माइनरके दक्षिणी-पश्चिमी भागमें **लीडियन**के कालके बादतक बोली जाती थी। सन् ईसवीके पूर्व ही यह मृत हो गयी। इसके १५० अभिलेख तथा कुछ सिक्के मिले हैं। इसका सम्बन्ध कई भाषाओंसे जोड़ा जाता रहा है। बहुतसे लोग इसे अनिश्चित परिवारकी भाषा भी मानते रहे हैं। अब प्रायः निश्चित रूपसे इसे इस परिवारकी मानी जाने लगी है। एच० पेडर्सनने इसपर विशेष रूपसे कार्य किया है। **हीरोग्लाइफिक हिट्टाइट** या चित्राक्षर हित्तीका क्षेत्र भी उसीके आसपास है। गेल्ब तथा कुछ अन्य लोगोंने इसका अध्ययन किया है।

पलेइक भाषाका क्षेत्र वहीं 'पला' नामक स्थानमें है। हित्तीके साथ इसकी भी कुछ सामग्री मिली है। बोसर्ट आदि विद्वानोंने इसपर कार्य किया है। **लूविअन** (इसे लुइअन भी कहते हैं) का क्षेत्र भी इन्हींके पास है। इसपर भी बोसर्ट तथा कुछ और लोगोंने कार्य किया है। इन तीन भाषाओंके सम्बन्धके विषयमें भी मतभेद रहा है, किन्तु अब ये सभी प्रस्तुत परिवारकी मानी जाती हैं। हिट्टाइटकी भाँति ही इन सभी भाषाओंपर सामी आदि कई परिवारोंका प्रभाव पड़ा है। एनाटोलिअन वर्गमें और भी कई अत्यंत-अल्पज्ञात भाषाएँ हैं। इन सभीमें सबसे अधिक सामग्री **हित्ती**की मिली है, इसीलिए उसका अध्ययन सबसे अधिक हुआ है और वह सबसे अधिक महत्वपूर्ण है।

भारोपीय परिवार—[इसे अब बहुतसे लोग **भारत-हित्ती** (indo-hittite) **परिवार** (दे०) कह रहे हैं। मैं इसे **भारोपीय-अनाटोलिअन**(indo-european-anatolian) **परिवार** (दे०) कहनेके पक्षमें हूँ। किंतु सामान्यतः इसके लिए सर्वत्र ही भारोपीय परिवार (indo-european family) नाम चल रहा है]—भारोपीय या भारत-यूरोपीय उस भाषा परिवारका नाम है जो उत्तरी भारत और लंकासे लेकर ईरान और आर्मेनिया होता, बीचके (यूराल-अल्ताइक आदिके) कुछ भागोंको छोड़कर प्रायः पूरे यूरोपमें फैला हुआ है। इसके अतिरिक्त आस्ट्रेलिया, अमेरिका तथा अफ्रीकामें भी इसके बोलनेवाले पर्याप्त हैं। इस परिवारका महत्त्व तीन दृष्टियोंसे अधिक है। एक तो इस परिवारके बोलनेवाले संसारमें सबसे अधिक हैं, दूसरे यह भौगोलिक दृष्टिसे बहुत बड़े भू-भागमें फैला हुआ है; और तीसरे सभ्यता, संस्कृति, साहित्य या वैज्ञानिक विकास आदि-

की दृष्टिसे भी यह परिवार और परिवारोंसे बहुत आगे है। आज सभी क्षेत्रोंमें इस परिवार-के बोलनेवालोंका विश्वमें बोलबाला है।

नाम—इस परिवारका नाम क्या हो। इस बातको लेकर पर्याप्त विवाद रहा है, आज भी यह समस्या अंतिम रूपसे समाप्त नहीं हुई है।

भारोपीय परिवारको पहले (१) **इंडो-जर्मनिक** कहा गया था, क्योंकि इसके पूर्वी छोरपर भारतीय और पश्चिमी छोरपर जर्मनिक भाषाएँ हैं। पर उसके भी पश्चिम इस परिवारकी केल्टिक शाखा है, अतः यह नाम उचित नहीं जान पड़ा और इसी कारण छोड़ भी दिया गया, यद्यपि जर्मनीमें अब भी यही नाम (indo-germanisch) प्रचलित है। उनका कहना यह है कि यह नाम विद्वानोंने जर्मनीको महत्त्व न देनेकी दृष्टिसे छोड़ दिया, उसके अनुपयुक्त होनेके कारण नहीं।

भौगोलिक दृष्टिसे (२) **इंडो-केल्टिक** नाम ठीक था और कुछ प्रयोगमें भी आया, किन्तु चल नहीं सका, क्योंकि इसमें केवल दोनों छोर ही थे। नामसे परिवारके सम्बन्धमें निश्चित चित्र नहीं खड़ा होता था। इसे (३) **आर्य परिवार** भी कुछ लोगोंने कहा, क्योंकि लोगोंका अनुमान था कि प्रारंभमें इसके बोलनेवाले आर्य (विशेष नस्ल) थे। बादमें यह धारणा भ्रामक सिद्ध हो गयी। साथ ही लोगोंका यह कहना ठीक है कि 'आर्य' शब्दका प्रयोग भारत और ईरान (आर्याणाम्, अइराण, ईरान) में ही विशेष प्रचलित रहा है, इसलिए भारोपीय परिवारके लिए नहीं, बल्कि उसकी एक शाखा भारत-ईरानी-के लिए इस नामका प्रयोग अधिक समीचीन है। आज इसीलिए 'आर्य' का प्रयोग अधिकांश विद्वान् भारत-ईरानीके लिए ही करते हैं। यों अपवाद स्वरूप मैक्समूलर, जेस्पर्सन आदि कुछ विद्वान् इसे पूरे परिवारके लिए पर्याप्ति उपयुक्त मानते हैं। इस परिवारमें संस्कृत भाषाका महत्त्व अपेक्षाकृत अधिक रहा है। पहले तो लोगोंका यह भी विचार था कि संस्कृत ही मूल भाषा थी, और इसीसे इस परिवारकी सारी भाषाएँ निकलीं। इन्हीं सब कारणोंसे कुछ लोगोंने इसे (४) **संस्कृत परिवार** या **साँस्कृतिक परिवार** कहना उचित समझा था, यद्यपि इसे भी मान्यता नहीं मिली। कुछ लोगोंने इसे (५) **काकेशियन** परिवार भी कहा था, यद्यपि यह भी नहीं चल सका। कुछ लोग सेमिटिक और हैमिटिकके वज़नपर (६) **जफ़ेटिक परिवार** नाम रखना चाहते थे। बाइबिलमें इन आधारों-पर मनुष्य जातिका वर्गीकरण किया गया है। पर, यह वर्गीकरण पूर्ण अवैज्ञानिक और अमान्य था, अतः नहीं चल सका। इसमें सबसे बड़ी दिक्कत तो यह थी कि कितने ही जफ़े-टिक कहलानेवाले लोग ऐसी भाषाएँ बोलते हैं जिनका भारोपीय परिवारसे कोई भी सम्बन्ध नहीं है। अन्तिम नाम जो आजकल भी प्रचलित है (७) **भारोपीय परिवार** (भारत-यूरोपीयindo-european) है। यह नाम भी पूर्णतया संतोषजनक नहीं है। इसका आधार भौगोलिक है, क्योंकि इस परिवारकी शाखाएँ भारतसे लेकर यूरोप-तक फैली हैं। पर यदि यही आधार माना जाय तो अमेरिका, आस्ट्रेलिया और अफ्रीका-के बहुतसे भागोंमें भी अब इस परिवारकी भाषाओं (अंग्रेज़ी, स्पैनिश, फ्रेंच, डच आदि) का प्रचार है और इस नाममें ये क्षेत्र नहीं सम्मिलित हैं। फिर भी किसी अन्य अधिक उपयुक्त नामके अभावमें 'भारोपीय' नाम काम दे सकता है। इस तरह हमने देखा कि भौगोलिक, जातीय या प्रमुख भाषा आदि कई आधारोंपर नामकरणका प्रयास किया गया है, यद्यपि कोई संतोषजनक नहीं है। इस विषयमें मेरा एक विनम्र सुझाव है। भाषा-विज्ञानविदोंने तुलनात्मक अध्ययन (संस्कृत वीर, लैटिन uir, vir, प्राचीन आइरी, fer, जर्मनिक wer आदि) के आधारपर मूल भारोपीय या भारत-हित्ती भाषाके एक शब्द wiros का पुनर्निर्माण

किया है और उन मूल लोगोंको भी इसी 'विरोस्', शब्दसे पुकारा है। यदि हम उन मूल लोगोंको 'विरोस्' कह रहे हैं, तो उसी आधारपर उस मूल भाषाके परिवारके लिए (८) **'विरोस् परिवार'** (wiros family) का प्रयोग कर सकते हैं। सभी दृष्टियोंसे यह नाम औरोंकी अपेक्षा उपयुक्त है। हाँ, यह बात दूसरी है कि भारोपीय या indo-european के पूर्ण प्रचलन हो जानेके बाद अब किसी अच्छेसे अच्छे नामके भी प्रचलनकी सम्भावना नहीं है।

ऊपर इस परिवारके नामकरणके सम्बन्धमें सात पुराने और एक अपने नये सुझावका उल्लेख किया गया है। यथार्थतः प्रथम सातकी स्थिति तबकी है, जब हित्ती (hittite) भाषाको इस परिवारकी एक शाखा माना जाता था। अब विद्वान् 'हित्ती' को 'भारोपीय'की पुत्री न मानकर बहन मानने लगे हैं, अतः वैज्ञानिक दृष्टिसे ये सारे नाम व्यर्थ-से हैं और **भारत-हित्ती** indo-hittite) नाम जो पर्याप्त प्रचलन भी पा चुका है, उपयुक्त है। (दे०) **भारत हित्ती परिवार**। यों 'विरोस् परिवार' नाम शायद 'भारत–हित्ती' या 'इंडो हिट्टाइट'से कहीं अच्छा है। यदि मूल दो शाखाओंके आधारपर ही नामकरण करना हो तो **भारोपीय-एनाटोलिअन** का सुझाव मैं देना चाहूँगा। अन्यत्र **भारोपीय एनाटोलिअन परिवार** (दे०)पर विचार करते समय जो वंशवृक्ष दिया गया है, उससे इस नामकी सार्थकता स्पष्ट हो जायगी।

भारोपीय परिवारकी मुख्य विशेषताएँ:(१) अपने मूल रूपकी दृष्टिसे यह परिवार श्लिष्ट-योगात्मक कहा जा सकता है। (२) इसमें योग (प्रत्ययका प्रकृतिमें या सम्बन्धतत्त्वका अर्थतत्त्वमें) प्रायः सेमिटिक या हैमिटिक परिवार-सा अन्तर्मुखी न होकर बहिर्मुखी होता है। (३) जो प्रत्यय जोड़े जाते हैं, उनके स्वतन्त्र अर्थका पता नहीं है। एक-दो-के विषयमें [जैसे अंग्रेजीका ly (manly)] विद्वानोंने कुछ अनुमान लगाया है पर शेष संदिग्ध हैं। पर, अनुमान ऐसा है, कि अन्य भाषाओंके प्रत्ययोंकी भाँति भारोपीय प्रत्यय भी कभी स्वतन्त्र शब्द थे। उनका अर्थ था, कालान्तरमें धीरे-धीरे ध्वनि-परिवर्तनके चक्र-में पड़नेसे आधुनिक रूप मात्र शेष रह गया। (४) इस परिवारकी भाषाएँ आरम्भमें योगात्मक थीं, पर धीरे-धीरे दो-एकको छोड़ कर सभी वियोगात्मक हो गयीं, जिसके फल-स्वरूप, परसर्ग तथा सहायक क्रिया आदिकी आवश्यकता पड़ती है। साथ ही कुछ भाषाएँ स्थान-प्रधान (positional) भी हो गयी हैं। जैसे 'राम मोहन कहता है' में 'राम'को 'मोहन'के स्थानपर और 'मोहन'को 'राम'-के स्थानपर कर देनेसे अर्थ परिवर्तित हो जायगा, पर संस्कृत आदि प्राचीन भाषाओंमें यह बात नहीं थी। (५) धातुएँ अधिकतर एकाक्षर होती हैं। इनमें प्रत्यय जोड़कर पद या शब्द बनते हैं। (६) प्रत्यय प्रमुखतः दो प्रकारके होते हैं। जो प्रत्यय धातुमें जोड़े जाते हैं उन्हें कृत् प्रत्यय (primary suffix) कहते हैं और जो कृत् लगानेके बाद जोड़े जाते हैं, उन्हें तद्धित प्रत्यय (secondary suffix)। तद्धितके भी तीन भेद हैं, जो क्रमसे शब्द, कारकके उपयुक्त पद और कालानुसार क्रिया बनाते हैं, जिन्हें क्रमसे शब्द-प्रत्यय (word-building suffixes) विभक्ति या सुप् प्रत्यय (case-indicating suffixes) और तिङ प्रत्यय (verbal suffixes) कह सकते हैं। (७) इस परिवारमें पूर्वसर्ग या पूर्व विभक्तियाँ सम्बन्ध-सूचना देनेके लिए या वाक्य बनानेके लिए बाँटू आदि कुलोंकी भाँति नहीं प्रयुक्त होतीं। उनका प्रयोग होता है, और पर्याप्त मात्रामें होता है, पर उनसे शब्दों या धातुओंके अर्थको परिवर्तित करनेका काम लिया जाता है, जैसे विहार, आहार, परिहार, आदिमें 'वि', 'आ', और 'परि' आदि लगाकर किया गया है। (८) समास-रचनाकी विशेष शक्ति इस परिवारमें है। इसकी रचनाके

समय विभक्तियोंका लोप हो जाता है और समास द्वारा बने शब्दका अर्थ ठीक वही नहीं रहता, जो उसके अलग-अलग शब्दोंको एक स्थानपर रखनेसे होता। उसमें एक नया अर्थ आ जाता है। जैसे, काशी-नागरी-प्रचारिणी-सभा अर्थात् काशीकी वह सभा जो नागरीका प्रचार करती है। वेल्श भाषामें समासोंसे बहुत बड़े-बड़े शब्द बनते हैं। किसी टापूमें बसे एक वेल्श ग्रामका नाम जो समासपर आधारित है ५८ वर्णोंका है। (९) इस परिवारकी एक प्रधान विशेषता यह भी है कि स्वर-परिवर्तनसे सम्बन्धतत्त्व सम्बन्धी परिवर्तन हो जाता है। आरम्भमें स्वराघातके कारण ऐसा हुआ होगा। स्वराघातके कारण स्वर-परिवर्तन हो गया और जब धीरे-धीरे प्रत्ययोंका लोप हो गया तो वे स्वर-परिवर्तन ही सम्बन्ध-परिवर्तनको भी स्पष्ट करने लगे। अंग्रेज़ीकी कुछ बली क्रियाओंमें यह बात स्पष्टतः देखी जा सकती है—drink, drank, drunk। यहाँ आई(i)का(a)और यू(u)में परिवर्तन हुआ है, और इसीसे उनमें कालसम्बन्धी परिवर्तन आ गया है। (१०) एक स्थानसे चलकर अलग होनेपर इस परिवारकी भाषाओंका अलग-अलग विकास हुआ और सभीमें प्रत्ययोंकी आवश्यकता पड़ी, अतः यहाँ प्रत्ययोंकी संख्या बहुत अधिक हो गयी है। अन्य किसी भी परिवारमें इनकी संख्या इतनी अधिक नहीं है।

मूल भारोपीय ध्वनियाँ[1]

मूल भारोपीय ध्वनियोंके निर्धारणका प्रयास पिछली सदीके दूसरे चरणसे ही आरम्भ हो गया था। अबतक इसपर थोड़ा-बहुत काम होता रहा है, किन्तु पूर्णतः अन्तिम रूपतक, अभीतक विद्वान् नहीं पहुँच सके हैं। स्वरोंका निर्धारण तो कठिन है ही, कई व्यंजनोंके बारेमें भी विवाद है। भारतीय विद्वानोंमें किसीने भी इस समस्यापर अनुसंधानके स्तरपर कार्य नहीं किया है, किन्तु डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी, डॉ० सुकुमार सेन, डॉ० बाबूराम सक्सेना, डॉ० श्यामसुन्दरदास तथा डॉ० उदयनारायण तिवारी आदिने अंग्रेज़ी, फ्रेंच या जर्मन आदिकी पुस्तकोंके आधारपर अपनी पुस्तकोंमें इन ध्वनियोंको संक्षेपमें दिया है। विषयकी विवादास्पदताका अनुमान इसीसे लगाया जा सकता है कि उपर्युक्त सभी विद्वानोंने जो सामग्री दी है, वह पूर्णतया एक नहीं है। यहाँ संक्षेपमें विवादोंमें न पड़ते हुए केवल बहु-सम्मत ध्वनियोंकी सूची दी जा रही है। इस चयनमें अपने निर्णयका विशेष ध्यान रखा गया है और हिन्दी या अन्य भाषाओंकी एक या अधिक पुस्तकोंसे पाठक इन्हें भिन्न पा सकते हैं।

(१) स्वर

मूल स्वर

(क) अति ह्रस्व[2] ə

(ख) ह्रस्व अ ऍ ऑ

(ग) दीर्घ आ ए ओ

संयुक्त स्वर

संयुक्त स्वरोंकी संख्या लगभग छत्तीस थी, जो उपर्युक्त ह्रस्व और दीर्घ स्वरोंके साथ इ, ऋ, लृ, उ, न्, म् के मिलनेसे बनते थे, जैसे अइ, अऋ, आलृ तथा ओउ आदि।

---

१ इन्हें ही मूल भारत-हित्ती या भारोपीय एनाटोलिअन (दे०) भाषाकी ध्वनि भी माना जा सकता है, क्योंकि इन ध्वनियोंके निर्धारणमें हित्ती ध्वनियोंका भी पूरा विचार किया गया है। किन्तु कुछ विद्वानोंके अनुसार भारत-हित्ती ध्वनियाँ इनसे कुछ भिन्न थीं। ऐसे लोगोंके अनुसार ऍ, ए, ऑ, ओ, अ, ५ए स्वर; य, व, र, ल, न, म, ६ अंतस्थ; ग, ख आदि ४ कंठतालीय ध्वनियाँ; अघोष और घोष दो 'ह'; क, त, प, ग, द, ब, घ, ध, भ, नौ स्पर्श और 'स' ऊष्म आदि कुल लगभग २७ ध्वनियाँ थीं।

२. यह उदासीन स्वर है, जो ह्रस्व स्वरका भी आधा (मात्राकी दृष्टिसे) होता है। इसका उच्चारण अस्पष्ट होता है। इसे ह्रस्वार्द्ध स्वर भी कहते हैं। यूरोपीय भाषाओंमें इसे श्वा (schwa) कहते हैं और e को उलटकर (ə) लिखते हैं।

(२) अंतःस्थ[1]
य् (इ), व् (उ), ल् (लृ)
र् (ऋ), न् (न), म् (म)
(३) व्यंजन
(क) स्पर्श [१] कवर्ग[2] (i) क्, ख्, ग्, घ्
(ii) क्, ख्, ग्, घ्
(iii) क्व्, ख्व्, ग्व्, घ्व्
[२] तवर्ग[1] त्, थ्, द्, ध्
[३] पवर्ग प्, फ्, ब्, भ्
(ख) ऊष्म[2] स (ज़)

'ह' ध्वनिके सम्बन्धमें मतभेद है। कुछ लोगोंके अनुसार यह ध्वनि नहीं थी। कुछ लोगोंका हित्तीके आधारपर यह कहना है कि इसका एक रूप था। कुछ लोग इसके 'घोष' और 'अघोष' दोनों रूपोंकी स्थिति मानते हैं। ऊष्म या संघर्षी व्यंजनोंमें कुछ लोग केवल एक 'स'को मानते हैं, जैसा कि ऊपर दिया गया है, किन्तु कुछ अन्य विद्वान् क्, ख्, ग्, त्, थ्, द्, ध्, झ् अन्य संघर्षी व्यंजनोंका भी अनुमान लगाते हैं।

ध्वनि-सम्बन्धी कुछ अन्य विशेषताएँ—(१) स्वरोंके अनुनासिक रूपों (जैसे अँ, इँ) का प्रयोग नहीं होता था। (२) दो या अधिक मूलस्वर एक साथ नहीं आ सकते थे। (३) संधिके नियम लागू होते थे। (४) दो या अधिक व्यंजन एक साथ आ सकते थे।

भारोपीय मूल भाषाका व्याकरण—(१) रूप अधिक थे। व्याकरण बड़ा जटिल था। (२) धातुमें प्रत्यय जोड़कर शब्द (पद) बनते थे। (३) आरम्भमें उपसर्गोंका बिलकुल प्रचलन न था। (४) मध्य-विन्यस्त प्रत्यय या मध्य सर्ग (infix) का प्रयोग नहीं होता था। (५) संज्ञा, क्रिया और अव्यय अलग-अलग होते थे। विशेषण और सर्वनाम आदि संज्ञाके अंतर्गत ही समझे जाते थे। अव्यय भी अविकारी न होकर विकारी होते थे। (६) सर्वनामके रूपोंमें विविधता थी। पुरुष तीन थे। (७) एक, द्वि और बहु इन तीनों वचनोंका प्रयोग होता था। (८) स्त्रीलिंग, पुंलिंग और नपुंसक लिंग थे। उनका विचार केवल संज्ञामें होता था। पहले प्राकृतिक

१. अन्तःस्थका यहाँ अर्थ है स्वर और व्यंजनके बीचमें। इसीलिए इन्हें अर्द्ध स्वर, अर्द्ध व्यंजन, अन्तःस्थ स्वर, अन्तःस्थ व्यंजन, स्वनंत (sonant), आक्षरिक (syllable) आदि भी कहते हैं। ऐसी ध्वनियाँ कभी तो स्वर-रूपमें काम करती हैं, कभी व्यंजन-रूपमें। इन ध्वनियोंका व्यंजन-रूप कोष्ठकके बाहर दिया गया है और स्वर-रूप भीतर। बहुतोंने इन छहों ध्वनियोंको अलग-अलग करके १२ दिया है, किन्तु वैसा मानना भ्रामक है। मूलतः ये ध्वनियाँ ६ ही हैं। प्रयोगके आधारपर १२ रूप मात्र हैं जैसे 'ल्' या 'क' के ४-६ रूपोंका प्रयोग होता है। कोष्ठकके बाहरके रूपको व्यंजन, अर्द्ध व्यंजन या अन्तःस्थ व्यंजन और भीतरके रूपको आक्षरिक, स्वनंत या अर्द्धस्वर आदि कह सकते हैं। स्वर या आक्षरिक रूपमें इनके दीर्घ रूपोंका भी प्रयोग होता था अर्थात् ई, ऊ, ॠ, ॡ, आदि। २. कवर्ग तीन प्रकारके थे। (i) को कुछ लोग सामान्य कवर्ग मानते हैं, किन्तु कुछ लोग इसे तालुकी गौण सहायतासे किया जानेवाला अर्थात् क्य, ख्य, ग्य, घ्य मानते हैं। डा० चटर्जी इन्हें तालव्य न मानकर पुरःकंठ्य (advanced velar) मानते हैं। (ii) को अरबी 'क़' के समान कह सकते हैं। यूरोपीय विद्वान् इन्हें कंठ्य (velar) कहते हैं, किंतु डॉ० चटर्जी इन्हें पश्चकंठ्य (back velar) या अलि जिह्वीय (uvular) मानते हैं। (iii) के उच्चारणमें होठोंकी भी सहायता ली जाती थी। डॉ० चटर्जी तथा कुछ अन्य विद्वान् इन तीनों प्रकारके कवर्गोंके साथ तीन 'ङ'की भी कल्पना करते हैं, किंतु अन्य लोगोंके अनुसार 'न्' ध्वनि ही इनके साथ इनके अनुरूप रूप धारण कर लेती थी।

१. इसे कुछ लोग दंत्य, दंतमूलीय तथा कुछ वर्त्स्य मानते हैं। २. ऊष्म या अनवरुद्ध ध्वनि 'स' ही विशेष स्थानपर सघोषोंके साथ या दो स्वरोंके बीचमें 'ज़' भी उच्चरित होती थी।

अध्ययनके आधारपर यह भी सिद्ध हो चुका है कि मूल भाषाके निकट संस्कृत नहीं, अपितु लिथुआनियन या हित्ती आदि हैं। इससे भी संभावना यही है कि मूल स्थान इन भाषाओं-के क्षेत्रोंके ही पास ही कहीं रहा होगा। (ङ) तुलनात्मक भाषा-विज्ञान, जातीय-मानव-शास्त्र, जलवायु-विज्ञान, प्राचीन भूगोल आदि आधारोंपर न केवल यूरोपीय अपितु तिलक और सर देसाई जैसे भारतीय विद्वानोंने भी मूल स्थान भारतके बाहर ही माना है।

ऊपर भारतमें मूल स्थान माननेवालोंके प्रमुख रूप संक्षेपमें दिये गये हैं। अब भारतके बाहर एशिया, यूरोप या दोनोंके संधिस्थान-पर माननेवालोंके मत संक्षेपमें गिनाये जा रहे हैं। (१) यों इस प्रश्नपर थोड़े विस्तारसे विचार करनेका प्रथम प्रयास एडल्फ पिक्टेट-ने किया था, किन्तु गहराई और वैज्ञानिकता-की दृष्टिसे इस प्रसंगमें प्रथम नाम प्रायः मैक्समूलरका लिया जाता है। मैक्समूलरके निष्कर्षके अनुसार मूल स्थान पामीरका प्लेटो तथा उसके आसपास मध्य एशियामें था। कुछ अन्य विद्वान् भी मध्य एशियाके पक्षमें रहे हैं। (२) स्कैण्डेनेवियन भाषाओंके विद्वान् डॉ० लैथम (latham) ने स्कैण्डे-नेवियन भाषाओंको प्रमुख आधार मानकर १८६७ के लगभग इस प्रश्नपर विचार किया और मध्य एशियावाले मतका विरोध करते हुए मूल स्थानको यूरोपमें माना। इनके अनु-सार यूरोपमें भी मूल स्थानके स्कैण्डेनेवियामें होनेकी संभावना अधिक है। पेन्का (penka) जाति-विज्ञानके आधारपर भी लगभग इसी निष्कर्षपर पहुँचे हैं। (३) इटैलियन मानव-शास्त्रवेत्ता सेर्जी (sergi) ने एशिया माइ-नरके पठारमें मूल स्थानका अनुमान लगाया है। हित्ती भाषाके अभिलेखोंसे इनके मतकी पुष्टि होती है। (४) लोकमान्य बाल गंगा-धर तिलकने प्रमुखतः ज्योतिष तथा क्वौलके हिमयुग सिद्धांत आदिके आधारपर ऋग्वेद-की ऋचाओंके सहारे 'आर्कटिक होम इन द वेदाज़' में उत्तरी ध्रुवके पास मूल स्थान माना है। (५) भारतीय विद्वान् सर देसाई रूसमें बाल्कल झीलके पास मूल स्थान मानते हैं। उनके अनुसार वहाँ आज भी 'सात नदियोंका देश' (सप्त सिंधु) नामक प्रान्त है। (६) डॉ० गाइल्ज़ने 'कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया-' में इस बातपर विचार किया है और हंगरीमें कारपेथियन पर्वतके आस-पास मूल स्थान मानते हैं। (७) हर्टके अनुसार पोलैंडमें विश्चुला नदीके किनारे आदिस्थान था। उसके पश्चिमी तटपर केंतुम् भाषाओंके बोलनेवाले रहते थे और पूर्वी तटपर सतम् भाषाओंके बोलनेवाले। पूर्वी तुर्किस्तानमें 'तोख़ारी' नामक केंतुम् भाषाके मिलनेके कारण, यह मत प्रायः निराधार हो गया है। (८) जातीय मानवविज्ञानके आधारपर यूनानी पौराणिक कथाओंका अध्ययन करके कुछ विद्वानोंने जर्मनीको मूलस्थान माना था। मिट्टीके बर्तनों की डिजाइनोंके आधारपर भी कुछ लोग इस निष्कर्षपर पहुँचे थे। (९) नेहरिंग (nehr-ing) ने मिट्टीके बर्तनोंके अवशेषोंके आधार-पर दक्षिणी रूसको मूल स्थान माना है। (१०) इतिहासपूर्व पुरातत्त्वके आधारपर मच (much) तथा कुछ अन्य विद्वानोंने पश्चिमी बाल्टिक किनारेको मूलस्थान माना है। (११) तुलनात्मक और ऐतिहासिक भाषा-विज्ञानके आधारपर विद्वान् इस निष्कर्ष-पर पहुँचे हैं कि लिथुवानियन भाषा ही मूल भारोपीयके सबसे निकट है। इस आधारपर कुछ लोग 'लिथुवानिया' को भी मूल स्थान माननेके पक्षमें हैं। किंतु अब इस बातके प्रमाण भी पाये गये हैं कि पहले लिथुवानिया और पूरबमें था। (१२) प्राचीन भारतीय परं-पराके अनुसार तिब्बत (त्रिविष्टप) में सृष्टि-का आरम्भ हुआ, अतः वहीं आर्योंका मूल स्थान था। (१३) स्लाव भाषाओंके विद्वान् प्रो० श्रेडरने प्रमुखतः स्लाव भाषाओंका आधार लेते हुए दक्षिणी रूसमें वोल्गा नदीके मुहाने और कैस्पियन सागरके उत्तरी किनारे-के पासके प्रदेशको मूल स्थान माना है। यह मत काफ़ी दिनोंतक मान्य रहा है। (१४)

डॉ० ब्रान्देन्श्ताइन ने (१९३६ में) तुलनात्मक और ऐतिहासिक अर्थ विज्ञानके आधारपर मध्य एशियावाले मतको पुनः स्थापित किया है और यूराल पर्वतमालाके दक्षिणमें स्थित प्रदेशको मूल स्थान सिद्ध किया है।

इनके अतिरिक्त बाल्टिक सागरके दक्षिणी पूर्वी तट, मेसोपटामिया या दज़ला-फ़रातके किनारे, दक्षिणी-पश्चिमी या उत्तरी रूस, प्रशिया, डैन्यूब नदीके किनारे, रूसी तुर्किस्तान आदि कई अन्य प्रदेशोंके मूल स्थान होनेके पक्षमें भी मत प्रकट किये गये हैं। उपर्युक्त मतोंमें गाइल्ज़, श्रेडर तथा ब्रान्देन्श्ताइनके मत अपेक्षाकृत अधिक प्रचलित और प्रसिद्ध रहे हैं। आगे प्रथम और अन्तिमपर थोड़े और विस्तारसे विचार किया जायगा।

भाषाश्रयी या **भाषापर आधारित प्रागैतिहासिक खोज** (दे०) में हम देखते हैं कि एक परिवारकी भाषाओंके शब्द-भंडारोंके तुलनात्मक अध्ययनके आधारपर इस बातका अनुमान लगाया जा सकता है कि मूल भाषा (जिससे वे सभी भाषाएँ निकली हैं)के शब्द-भंडारमें कौन-कौनसे शब्द थे। शब्दोंका निर्णय होनेपर इस बातका पता चल जायगा कि वे लोग किन-किन पेड़ों, अन्नों और जानवरों आदिसे परिचित थे। फिर पेड़ों, अन्नों और जानवरों आदिके आधारपर इस बातका अनुमान लगाया जा सकता है कि उनका स्थान कहाँ था। इसी पद्धतिपर उपर्युक्त तीनों विद्वानोंने अपने निष्कर्ष निकाले हैं। **गाइल्ज़** (giles) भारोपीय परिवारकी भाषाओंके शब्द-समूहके तुलनात्मक अध्ययनके आधारपर गाइल्ज़ने आदि भाषाके शब्द-समूहके सम्बन्धमें जो निष्कर्ष निकाले हैं, उससे पता चलता है कि वे लोग बैल, गाय, भेड़, घोड़ा, कुत्ता, सूअर, भेड़िया, भालू, चूहा तथा हिरनसे परिचित थे, किन्तु हाथी, गदहा, शेर, चीते तथा ऊँट आदि नहीं जानते थे। पक्षियोंमें हंस तथा बत्तखसे परिचित थे। पेड़ोंमें बिलो (willow) या वेतस, बर्च (birch) या भूर्ज तथा बीच (beech) से परिचित होनेकी संभावना है। इनका स्थान बड़े जंगलोंका नहीं था। ये खानाबदोश नहीं थे और एक जगह रहकर खेती आदि करते थे। गाइल्ज़के अनुसार ये सभी बातें उस पुराकालमें हंगरीमें कारपेथियन्ज़, बलकान्ज़, आस्ट्रियन, आल्प्ज़ आदिके बीचके समशीतोष्ण क्षेत्रमें सम्भव है, इसीलिए वही मूल स्थान है। **श्रेडर** (schrader)--श्रेडर लगभग इसी पद्धतिसे अपने निष्कर्ष पर पहुँचे थे। ब्रान्देन्श्ताइनके मतके बावजूद कुछ लोग अब भी इसे अधिक प्रामाणिक मानते हैं। **ब्रान्देन्श्ताइन**(brandenstein)–डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी तथा अन्य भी कई विद्वान् अब ब्रान्देन्श्ताइनके पक्षमें हैं। यों बटकृष्ण घोष तथा नेहरिंग आदि इनकी बहुतसी बातें नहीं मानते। नेहरिंगने तो अपनी किसी आगामी पुस्तकमें ब्रान्देन्श्ताइनकी मान्यताओंका व्यवस्थित रूपसे खंडन करनेका वादा भी किया था, यद्यपि अभीतक इस प्रकारकी कोई चीज दिखाई नहीं पड़ी। ब्रान्देन्श्ताइनने उपर्युक्त बातोंके अतिरिक्त भाषा-विज्ञानकी एक शाखा अर्थ-विज्ञानकी विशेष रूपसे सहायता ली है। इनके अनुसार शब्दोंके तुलनात्मक अध्ययनके आधारपर ऐसा पता चलता है कि पहले ये लोग किसी एक स्थानमें अविभक्त रूपसे रहते थे। बादमें भारत-ईरानी लोग इनसे निकलकर अलग चले गये और इस प्रकार ये दो भागोंमें विभक्त हो गये। इस विभाजनके बाद मूल शाखा (भारत-ईरानियोंके अतिरिक्त) भी अपने पुराने स्थानपर न रुककर किसी नये स्थानपर चली गयी। अविभक्त भारोपीय 'पूर्व भारोपीय', और भारत-ईरानियोंके जानेके बाद शेष बचे लोग 'परभारोपीय' कहे जा सकते हैं। ब्रान्देन्श्ताइनके अनुसार मूल शब्द-समूहकी दृष्टिसे भारत-ईरानीमें अर्थविकासका अपेक्षाकृत पुराना स्तर मिलता है और शेष या 'परभारोपीय'में बादका। इसी आधारपर इन दो वर्गोंकी कल्पना की गयी

है। उदाहरणार्थ 'पूर्व भारोपीय'में पत्थरके लिए gwer या gwerau शब्द था। संस्कृतमें यही ग्रावन् (सोमरस निचोड़नेका पत्थर) है, किन्तु 'परभारोपीय'से निकली भाषाओंमें 'चक्कीका पत्थर' या 'हाथ चक्की' आदि अर्थोंमें विकसित मिलता है (प्राचीन अंग्रेज़ी cweorn, अंग्रेज़ी quern, डच kweern तथा डैनिश kvaern आदि)। 'परभारोपीय'के नये स्थानपर जानेका अनुमान इस आधारपर लगाया गया है 'पूर्व भारोपीय'की तुलनामें शब्द-समूह और उसके अर्थमें थोड़ी भिन्नता है, जिससे यह पता चलता है कि 'पर'के शब्द-समूहका विकास 'पूर्व'के स्थानपर न होकर किसी नवीन क्षेत्रमें हुआ है। निष्कर्ष यह है कि 'पूर्व भारोपीय' किसी अपेक्षया सूखे क्षेत्रमें पहाड़की तराईमें रहते थे। हरे-भरे जंगलोंसे दूर थे। वेतस, भूर्ज, बजराँठ तथा कुछ अन्य फलविहीन वृक्षोंका उन्हें पता था। गाय, भेड़, बकरी, कुत्ता, भेड़िया, लोमड़ी, सूअर, हिरन, खरगोश, चूहा, ऊदबिलाव आदिसे भी वे परिचित थे। ब्रान्देन्स्ताइनके अनुसार यह स्थान यूराल पर्वतके दक्षिण-पूर्वमें स्थित किरगीज़का मैदान था। बादमें भारत-ईरानियोंके अलग (पूरबकी ओर) चले जानेके बाद शेष लोग (परभारोपीय) पश्चिमकी ओर किसी नीचे दलदली क्षेत्रमें गये। यहाँ पुल आदिके भावसे इनका परिचय हुआ। कुछ नये पेड़ आदि भी इन्हें मिले। ब्रान्देन्स्ताइनके अनुसार यह दूसरा स्थान कार्पेथियन पर्वतमालाके पूरबमें था।

इस प्रश्नका बहुत निश्चयके साथ दो-टूक उत्तर देना कठिन है। 'अपने'के प्रति मोहके कारण भी यह समस्या उलझी रही है, और रहेगी। भारतीय विद्वानोंने भारतीय साहित्यको आधार माना और निष्कर्षतः भारतको आदि स्थान कहा। प्रो० श्रेडर स्लाव भाषाओंके विद्वान् थे, उन्होंने अपने अध्ययनमें स्लाव उदाहरणोंको प्रधानता दी। अतः वे स्लाव क्षेत्रको ही मूल स्थान सिद्ध कर सके। स्कैंडेनेवियन भाषाओंके विद्वान् लैथमने स्कैन्डेनेवियाको सिद्ध किया। जब तक इस मोहसे ऊपर उठकर सभी विद्वान् निष्पक्ष रूपमें कार्य करते हुए एक या लगभग एक मतपर नहीं पहुँचते, अन्तिम सत्यपर पहुँचना कठिन है। यों तबतकके लिए ब्रान्देन्स्ताइनको स्वीकार किया जा सकता है।

भाव—(दे०) अर्थ।

भाव-ध्वनिमूलक लिपि—**चित्रलिपि** (दे०) का विकसित रूप **ध्वनि-मूलक लिपि** (दे०) है। कुछ लिपियाँ ऐसी होती हैं जो कुछ बातोंमें तो **भावमूलक** (दे०) होती हैं और कुछ बातोंमें **ध्वनि-मूलक**। मेसोपोटामियन, मिश्री तथा हित्ती आदि लिपियोंको प्रायः लोग भावमूलक कहते हैं, पर यथार्थतः वे इसी प्रकारकी भाव-ध्वनि-मूलक हैं, अर्थात् कुछ बातोंमें भावमूलक हैं और कुछ बातोंमें ध्वनिमूलक। आधुनिक चीनी लिपि भी कुछ अंशोंमें इसीके अंतर्गत आती है। इन लिपियोंके कुछ चिह्न चित्रात्मक तथा भावमूलक होते हैं और कुछ ध्वनिमूलक, और दोनों हीका इसमें यथासमय उपयोग होता है। कुछ विद्वानोंके अनुसार सिंधु घाटीकी लिपि इसी श्रेणीकी है।

भाव-ध्वनि लिपि (acrophonetic writing)—ऐसी लिपि, जिनमें भावमूलक चिह्नों (ideographs)को ध्वन्यात्मक चिह्नके रूपमें प्रयुक्त किया जाता है। जिस भाव या विचारके लिए मूलतः चिह्न होता है उसके प्रथम वर्णके लिए उस चिह्नका प्रयोग इस लिपिमें होता है। जैसे 'व'के लिए वीणाको व्यक्त करनेवाले चिह्नका प्रयोग।

भावनगरी (bhavnagari)—**गोहिल्वाड़ी** (दे०) का एक अन्य नाम।

भावबोधक संज्ञा—(दे०) **भाववाचक**।

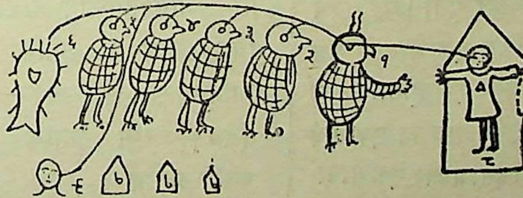
भावमूलक लिपि (ideographic writing)—ऐसी लिपि, जो ध्वनियोंको व्यक्त न करके भावों, विचारों या वस्तुओं आदिको व्यक्त करती है। इस वर्गकी लिपियाँ चित्रलिपि या चित्रलिपिपर आधारित रेखात्मक लिपि आदि होती हैं। भावमूलक लिपि **चित्र-**

लिपि (दे०) का ही विकसित रूप है। चित्र-लिपिमें चित्र वस्तुओंको व्यक्त करते हैं, पर भावलिपिमें स्थूल वस्तुओंके अतिरिक्त भावोंको भी व्यक्त करते हैं। उदाहरणार्थ चित्र लिपिमें सूर्यके लिए एक गोला बनाते थे, पर भावमूलक लिपिमें यह गोला सूर्यके अतिरिक्त सूर्यसे सम्बद्ध अन्य भावोंको भी व्यक्त करने लगा, जैसे सूर्य देवता, गर्मी, दिन तथा प्रकाश आदि। इसी प्रकार चित्र लिपिमें पैरका चित्र पैरको व्यक्त करता था पर भावमूलक लिपिमें यह चलनेका भी भाव व्यक्त करने लगा। कभी-कभी चित्र लिपिके दो चित्रोंको एकमें मिलाकर भी भावमूलक लिपिमें भाव व्यक्त किये जाते हैं। जैसे दुःख-, के लिए आँखका चित्र और उससे बहता आँसू या सुननेके लिए दरवाजेका चित्र और उसके पास कान। भावमूलक लिपिके उदाहरण उत्तरी अमेरिका, चीन, तथा पश्चिमी अफ्रीका आदिमें मिलते हैं। इस लिपिके द्वारा कभी-कभी बड़े-बड़े पत्र आदि भी भेजे जाते हैं। इस प्रकार यह बहुत ही समुन्नत रही है। इसका आधुनिक कालका एक मनोरंजक उदाहरण यहाँ दिया जा रहा है। उत्तरी अमेरिका-के एक इंडियन सरदारने संयुक्त राष्ट्र अमेरिकाके प्रेसिडेंटके यहाँ एक पत्र अपनी भावमूलक लिपिमें भेजा। पत्र मूलतः रंगीन था, पर यहाँ उसका स्केच मात्र दिया जा रहा है—

कर रही हैं कि वह सरदार है। उसका आगे बढ़ा हुआ हाथ यह प्रकट कर रहा है कि वह मैत्री-सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है। उसके पीछे उसीके कबीलेके चार सिपाही हैं। छठा व्यक्ति मत्स्य गणचिह्नके कबीले का है। नवाँ किसी और कबीलेका है। उसके सरके चारों ओरकी रेखाएँ यह स्पष्ट करती हैं कि पहले सरदारसे वह अधिक शक्तिशाली सरदार है। सबकी आँखोंको मिलानेवाली रेखा उनमें मतैक्य प्रकट करती है। नीचेके तीन मकान यह संकेत दे रहे हैं कि ये तीन सिपाही प्रेसिडेंटके तौर-तरीके अपनानेको तैयार हैं। पत्र इस प्रकार पढ़ा जा सकता है—'मैं, गरुड़ गणचिह्नके कबीलेका सरदार, मेरे कई सिपाही, मत्स्य गणचिह्नके कबीले-का एक व्यक्ति, और एक अज्ञात गणचिह्नके कबीलेका मुझसे अधिक शक्तिशाली सरदार, एकत्र हुए हैं और आपसे मैत्री-सम्बन्ध स्थापित करना चाहते हैं। हमारा आपसे सभी बातोंमें मतैक्य है। हमारे तीन सिपाही आपके तौर-तरीके अपनानेको तैयार हैं।' इस प्रकार भाव लिपि, चित्र तथा सूत्र लिपिकी अपेक्षा अधिक समुन्नत तथा अभिव्यक्तिमें सफल है। चीनी आदि कई लिपियोंके बहुतसे चिह्न आज तक इसी श्रेणीके हैं।

भाववाचक प्रत्यय—एक प्रकारका प्रत्यय (दे०)।

भाववाचक संज्ञा—(दे०) संज्ञा।



इसमें जो अंक दिये गये हैं वे मूल पत्रमें नहीं थे। समझनेके लिए ये दे दिये गये हैं। पत्र पानेवाला (नं० ८) ह्वाइट हाउसमें प्रेसिडेंट है। पत्र लिखनेवाला (१) उस कबीलेका सरदार है, जिसका गणचिह्न (टोटेम) गरुड़ है। उसके सरपर दो रेखाएँ यह स्पष्ट

भाववाच्य—(दे०) वाच्य।

भावाभिव्यक्तिकी प्रतीकात्मक पद्धति—प्रतीकात्मक लिपि (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

भावे प्रयोग—(दे०) वाच्य।

भाषण-ध्वनि—भाषामें प्रयुक्त ध्वनि। (दे०)

ध्वनि और भाषा-ध्वनि ।

भाषा (language)—**भाषा, उच्चारण-अवयवोंसे उच्चारितके योग्य यादृच्छिक (arbitrary) ध्वनि-प्रतीकों (vocal symbol) की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा एक समाजके लोग आपस में भावों और विचारोंका आदान-प्रदान करते हैं ।** इस परिभाषामें ६ बातोंकी ओर संकेत है : (क) भाषाका कार्य वक्ताके भाव या विचार श्रोतातक पहुँचाना है । (ख) भाषाका प्रयोग एक समाजमें होता है। उसके बाहर भाषा अपना कार्य नहीं कर पाती। उदाहरणार्थ मात्र अंग्रेज़ी समझने-वाले समाजमें 'हिन्दी भाषा' भाषाका कार्य नहीं कर सकती । इसी प्रकार मात्र हिन्दी समझनेवाले समाजमें अंग्रेज़ी या कोई अन्य भाषा भी अपना कार्य नहीं कर सकती । (ग) भाषामें एक व्यवस्था (system) होती है । यदि वह अव्यवस्थित हो तो लोग समझ न सकें । (घ) भाषाका आधार ध्वनि-प्रतीक है । अर्थात् हर शब्दकी ध्वनियाँ किसी वस्तु, भाव या विचारकी प्रतीक हैं । प्+आ+न्+ई, ये चार ध्वनियाँ मिलकर 'पानी'का प्रतीक हैं अर्थात् इनके प्रयोग द्वारा पानीका अर्थ व्यक्त किया तथा समझा जाता है । (ङ) यह ध्वनि-प्रतीकता यादृच्छिक होती है । अर्थात् ध्वनि और अर्थका (कुछ अंशतक ध्वन्यात्मक शब्दोको छोड़कर) कोई सहजात सम्बन्ध नहीं होता । यह संबंध माना हुआ है । इसीलिए एक भाषामें कुछ ध्वनियोंके समूहका अर्थ एक होता है तो दूसरेमें दूसरा । संस्कृतमें 'आम'का एक अर्थ है और अरबीमें दूसरा। इसी प्रकार एक भाषा-में एक वस्तुके लिए किन्हीं भिन्न ध्वनियोंके समूहका प्रयोग होता है तो दूसरी भाषामें किन्हीं औरका, और तीसरीमें किन्हीं औरका । जैसे वाटअर (water), पानी, आब । यही ध्वनि-प्रतीकोंकी यादृच्छिकता है । (च) भाषाका आधार ध्वनि है । इन ध्वनियोंको मुखावयवोंसे उच्चरित होना चाहिये । अन्य अवयवोंसे उद्भूत ध्वनियोंके आधारपर व्यक्त भाषा सामान्यतः भाषा नहीं मानी जाती । यह बात भाषा विज्ञानमें, जिस भाषाका अध्ययन करते हैं, उसके लिए तो आवश्यक है किंतु भाषाकी सामान्य परिभाषामें इसे स्थान नहीं दिया जा सकता। अपने विस्तृततम अर्थमें भाषा वह साधन (चाहे जैसा भी क्यों न हो) है, जिसके द्वारा अपने भाव या विचार व्यक्त किये जा सकें । ऐसी स्थितिमें भाषाका संबंध त्वचा, आँख, नाक, कान, जीभ आदि किसी भी ज्ञानेन्द्रियसे हो सकता है । और इनके आधारोंपर अभि-व्यक्ति भाषा हो सकती है। ऊपर जिस भाषा-की बात की गयी है वह मात्र कानसे संबंधित है । इसीलिए उसका आधार ध्वनि है । यदि अन्य ज्ञानेन्द्रियोंके विषयोंको छोड़कर केवल ध्वनिको ही लें तो भी ताली, चुटकी या बैंड आदि किसी भी प्रकारकी ध्वनिसे विचार व्यक्त किये जा सकते हैं, इस प्रकार मुख-ध्वनि भी आवश्यक नहीं है ।

उपर्युक्त छःके अतिरिक्त एक सातवीं बात भी कभी-कभी भाषाकी परिभाषामें जोड़ दी जाती है । अर्थात् 'भाषा अध्ययन-विश्ले-षणके योग्य होती है ।' आशय यह है कि भाषामें केवल उन्हीं ध्वनि-प्रतीकोंको स्थान दिया जाना चाहिये, जिनका अध्ययन और विश्लेषण हो सके । वस्तुतः यह अनावश्यक है। चुंबन, चिक्-चिक्, टिक-टिक आदि जिनको प्रायः अविश्लेषणीय माना जाता है, वे भी विश्लेषणीय हैं, क्योंकि निश्चित प्रयत्नसे, निश्चित स्थानोंसे उनका उच्चारण होता है। (दे०) **ध्वनि प्रतीक** तथा **यादृच्छिक ध्वनि प्रतीक** ।

भाषा-एटलस (linguistic atlas)—भाषाके क्षेत्रीय या भौगोलिक अध्ययनके आधारपर बनाया गया रूप, ध्वनि, अर्थ, वाक्य, शब्द या क्षेत्रखंड आदि बातोंका दर्शक एटलस । (दे०) **भाषा भूगोल** ।

भाषाका मानसिक पक्ष (psychical aspect of language) (दे०) **भाषाके पक्ष** ।

भाषा-कालक्रम-विज्ञान (glottochronology.)——भाषा-विज्ञानमें **सांख्यिकीय पद्धति** (statistical method) से काम करने या सांख्यिकी (statistics) की सहायता लेनेका इतिहास पिछली सदीसे आरम्भ होता है। ह्विटनीने १८७४ में अंग्रेज़ी ध्वनियोंपर इस पद्धतिसे कुछ काम किया था। किन्तु इसपर विशेष बल १९३५ के बाद दिया गया है। १९४८ में भाषा-विज्ञानकी छठी अन्तर्राष्ट्रीय कांग्रेसने, जो पेरिसमें हुई थी, इस संबंधमें काम करनेके लिए एक कमेटी बनायी थी। इस क्षेत्रमें काम करनेवालोंमें किंग्स्ले जिप्फ, हॉकेट, रीड, क्रोयबर, क्रेटीन तथा रास आदिके नाम उल्लेखनीय हैं। ग्लाटोक्रोनालोजी (जिसे हिंदीमें 'भाषा-कालक्रम-विज्ञान' कहा जा सकता है) इसी क्षेत्रमें विकसित अध्ययनका एक रूप है, जिसे विकसित करनेका श्रेय मारिस स्वाडेशको है। यह नाम स्वाडेशका रखा हुआ है। इसका दूसरा नाम **शब्द-सांख्यिकी** (lexicostatistics) है। इस विज्ञानको १९५० में इन्होंने विद्वानोंके समक्ष रखा। १९५२ में उत्तरी अमेरिकी, इंडियनों तथा एस्किमोंके सम्बन्धोंपर इसी आधारपर लिखित इनका लेख अमेरिका फिलासोफिकल सोसाइटीकी कार्यवाहीमें प्रकाशित हुआ। एक वर्ष बाद राबर्ट बी० लीज़ने इसपर एक बहुत सुन्दर सैद्धान्तिक लेख प्रकाशित किया। इसके बाद ग्लीसन तथा कुछ अन्य लोगोंने इसे आगे बढ़ाया है। यद्यपि सही अर्थोंमें भाषा-विज्ञानकी यह शाखा अभी अपनी बाल्यावस्थामें है, और इसकी प्रक्रिया तथा परिणामों आदिका पूर्ण उद्घाटन अभीतक नहीं हुआ है, फिर भी इसकी सम्भावनाओंकी धुँधली छाया हमारे सामने आ चुकी है। यहाँ अत्यन्त संक्षेपमें इसका परिचय दिया जा रहा है। भाषा-कालक्रम-विज्ञानमें वर्णनात्मक भाषा-विज्ञानके आधारपर एक भाषा परिवारकी दो या अधिक भाषाओंके शब्द-समूहको एकत्र करते हैं और फिर उनका तुलनात्मक अध्ययन करते हैं। इस तुलनात्मक अध्ययनमें पुराने शब्दोंके लोप और नयेके आगमके आधारपर भाषाओंके एक मूल भाषासे अलग होनेके कालका पता लगाते हैं। साथ ही कभी-कभी ऐसी भाषाओंमें जिनमें कुछ समानता हो और कुछ भिन्नता हो, जिसके कारण उनके एक परिवारके होनेके सम्बन्धमें निश्चयके साथ कुछ कहना कठिन हो, भाषा-कालक्रम-विज्ञानके आधारपर उनके एक परिवारके होने या न होनेके सम्बन्धमें अपेक्षाकृत अधिक निश्चयके साथ कहा जा सकता है। एक ही भाषाके दो कालोंका शब्द-समूह ज्ञात हो तो उनके बीचके समयके सम्बन्धमें भी इसके आधारपर कहा जा सकता है। इस प्रकार वर्णनात्मक और तुलनात्मक भाषा-विज्ञानपर आधारित इस नयी शाखाके आधारपर ऐतिहासिक भाषा-विज्ञानकी बहुतसी गुत्थियाँ सुलझायी जा सकती हैं। तेरह भाषाओंके आधारपर आरम्भमें गणना की गयी। गणनाके परिणामस्वरूप यह सिद्धान्त स्थापित किया गया कि सामान्यतया एक हज़ार वर्षोंमें कोई भी भाषा अपने मूल शब्दोंके केवल ८१% शब्द रख पाती है। शेष १९% शब्द लुप्त हो जाते हैं। दूसरे शब्दोंमें प्रति हज़ार वर्षमें किसी भाषामें १९% शब्द नये आ जाते हैं। यों इस प्रतिशतके बारेमें कुछ विद्वानोंने मतभेद प्रकट किया है, किन्तु किसी सर्वसम्मत प्रतिशतके न होनेपर इस अधिक मान्य प्रतिशतको स्वीकार किया जा सकता है। इस प्रतिशतकी प्राप्ति वर्णनात्मक, तुलनात्मक और ऐतिहासिक तीनों आधारोंपर हुई है, किन्तु अब इसे स्वीकार करके किसी भी भाषाके बारेमें बहुतसी बातोंका यदि बिल्कुल सही नहीं तो, उसके बहुत समीपका अनुमान लगाया जा सकता है। उदाहरणार्थ यदि किसी भाषाके शब्द-समूहका किसी प्राचीन कालमें पता हो और आधुनिक कालमें पता हो, किन्तु यह न पता हो कि वह प्राचीन काल कितने वर्ष पूर्वका है तो दोनों शब्द-समूहोंके तुलनात्मक अध्ययन-

के आधारपर लुप्त होनेवाले या नये आनेवाले शब्दोंके प्रतिशतका पता लगाया जा सकता है। और फिर उपर्युक्त प्रतिशतके आधारपर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वह पुरानी स्थिति कितने वर्ष पुरानी है। इसी प्रकार यदि एक परिवारकी दो भाषाओंके शब्द-समूहका पता हो किन्तु यह न पता हो कि वे दोनों कब एक-दूसरेसे अलग हुईं तो उपर्युक्त पद्धतिसे उस मूल भाषाके उस समयके शब्द-समूहका पता लगाया जा सकता है, जब दोनों भाषाएँ उससे निकलीं और फिर उस समयका भी पता लगाया जा सकता है। राजस्थानी-गुजराती या बँगला, उड़िया, असमियाँके लिए इस प्रकारकी गणना बड़ी उपयोगी सिद्ध हो सकती है। सैद्धान्तिक दृष्टिसे जो बातें ऊपर कही गयी हैं, प्रायोगिक दृष्टिसे उन्हें पूर्णतः ठीक या प्रयोगके योग्य नहीं माना जा सकता। पहली बात तो यह है कि किसी भाषाके पुराने रूपके आधारभूत शब्द-समूहको, जिसके लिए प्रायः केवल थोड़ा-बहुत साहित्य ही उपलब्ध होता है, निश्चित करना कितना कठिन है, कहनेकी आवश्यकता नहीं। दूसरे, शब्द-समूहमें परिवर्तन-सम्बन्धी, जो प्रतिशत निकाले गये हैं, सभी भाषाओंके लिए लागू नहीं हो सकते। एक भाषा ऐसी भी हो सकती है, जो किसी ऐसी जगह बोली जाती हो, जिससे बाहरके लोगोंका सम्पर्क नहींके बराबर हो। ऐसी स्थितिमें उसके शब्द-समूहमें परिवर्तन प्रायः नहींके बराबर होगा। दूसरी ओर ऐसी भी भाषा हो सकती है, जो भौगोलिक तथा अन्य दृष्टियोंसे ऐसी जगहकी हो, जहाँ अनेक राष्ट्रोंको सम्पर्क स्थापित करने तथा संस्कृतिका आदान-प्रदानका अवसर मिला हो, और ऐसी स्थितिमें उसके शब्द-समूहमें परिवर्तन बहुत अधिक होगा। आइसलैंडिक तथा ईरानी भाषाकी इस दृष्टिसे तुलना की जा सकती है। साथ ही एक ही भाषाकी दो स्थितियाँ हो सकती हैं। ऐसा असम्भव नहीं है कि अपने इतिहासके प्रथम एक हजार वर्षोंमें शब्द-समूहमें परिवर्तन कम हो और दूसरे हजार वर्षमें बहुत अधिक। दूसरी ओर ऐसी भाषा भी हो सकती है, जिसमें इसके ठीक उलटा हो। तीसरी भाषा ऐसी भी सम्भव है, जिसमें दोनों हजार वर्षोंमें पर्याप्त परिवर्तन हो और चौथी ऐसी हो सकती है, जिसमें दोनों हीमें परिवर्तन नाममात्रका हो। ऐसी स्थितिमें सबको एक लाठीसे नहीं हाँका जा सकता। हाँ, यह माना जा सकता है कि अपवादोंको यदि छोड़ दिया जाय तो सामान्य भाषाओंके लिए इन नियमोंको काफी अंशोंमें लागू किया जा सकता है। पर साथ ही एक अन्य बातकी ओर भी यहाँ संकेत कर देना अन्यथा न होगा। भाषा एक बहुत ही संश्लिष्ट चीज़ है। भूगोल, परम्परा, संस्कृति, बाह्य प्रभाव, वर्तमान सामाजिक स्थिति आदि अनेक बातोंपर उसके परिवर्तनकी गति निर्भर करती है। इसीलिए शुद्ध गणनापर आधारित सिद्धान्त उसके अध्ययनमें उतने अधिक सहायक नहीं हो सकते, जितने कि अन्य बहुतसे अत्यधिक निश्चित और विकल्पविहीन विज्ञानोंमें होते हैं। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है यह विज्ञान अभी अपनी शैशवावस्थामें है। इसके और विकसित होनेपर भाषा-विज्ञानमें इससे और अधिक सहायता मिलनेकी सम्भावना हो सकती है।

भाषाका शारीरिक पक्ष (physical aspect of language) (दे०) **भाषाके पक्ष।**

भाषाकी उत्पत्ति--भाषापर विचार करते समय पहला प्रश्न यह उठता है कि भाषाकी उत्पत्ति हुई कैसे? इस प्रश्नपर विचार अत्यन्त प्राचीन कालसे होता आया है, पर अब भाषा-विज्ञान-वेत्ता इस प्रश्नको भाषा-विज्ञानके क्षेत्रका नहीं मानते। कोई इसे मानव-विज्ञानके क्षेत्रका मानता है, तो कोई प्राचीन इतिहासका। कुछ लोग ऐसे भी हैं, जो कहते हैं कि भाषा-विज्ञान एक विज्ञान है, अतः उसके अंतर्गत विचारणीय विषय केवल वे हो सकते हैं, जिनपर विचार करने के लिए वैज्ञानिक और ठोस आधार हो; किन्तु भाषाकी उत्पत्ति

—जो कदाचित् लाखों वर्ष पूर्व हुई थी— पर विचार करनेके लिए ऐसे आधारका अभाव है, केवल अनुमान ही किया जा सकता है, अतएव यह भाषा-विज्ञानका अंग नहीं माना जा सकता। इन्हीं सब बातोंके कारण अबसे लगभग एक सदी पूर्व (१८६६ ई०में) जब पेरिसमें भाषा-विज्ञान परिषद् (la societe de linguistique)की स्थापना की गयी तो संस्थापकोंने परिषद्के परिनियमों (सेक्शन२)में स्पष्ट शब्दोंमें भाषाकी उत्पत्तिपर विचार आदि करनपर प्रतिबन्ध लगा दिया और इस प्रकार इस प्रश्नको सदा-सर्वदाके लिए भाषा-विज्ञानसे निकाल देनेका प्रयास किया। उसके बाद भी अन्य अनेक विद्वानोंने इस प्रकारके मत व्यक्त किये और आज तो प्रायः सभी मूर्द्धन्य विद्वान् इस सम्बन्धमें एक मतसे हैं कि इस प्रश्नका स्थान भाषा-विज्ञानमें नहीं है। किन्तु इस प्रतिबन्ध और उपेक्षाके बावजूद भी इन सौवर्षोमें यह प्रश्न बार-बार उठाया गया है और यह कहना भी अनुचित न होगा कि न केवल उठाया गया है, अपितु प्रायः हर दशकमें इस सम्बन्धमें एक-दो नये सिद्धान्त या पुराने सिद्धान्तोंकी नवीन व्याख्याएँ हमारे समक्ष रखी गयी हैं। बात बड़ी सीधी है। जब भाषा-विज्ञान 'भाषा'-का विज्ञान है तो निश्चय ही 'भाषा'का पूरा इतिहास और उसका हर रूप भाषा-विज्ञानके अध्ययनका विषय है। ऐसी स्थितिमें भाषाकी उत्पत्ति और उसके प्रारंभिक रूपके अध्ययनको निश्चय ही इससे अलग नहीं किया जा सकता। और यह तर्क कि विचार करनेके लिए सामग्रीका अभाव है, अतः उसे विषयसे अलग माना जायगा, कोई तर्क नहीं है। विचार करते रहनेसे तो सम्भव है इस दिशामें हम कुछ आगे बढ़ते रहें—जैसा कि मनोविज्ञानवेत्ता तथा मानव-विज्ञानविद् कर रहे हैं—किन्तु छोड़ देनेपर तो यह प्रश्न जहाँका तहाँ रह जायगा।

इस प्रश्नपर अत्यन्त प्राचीन कालसे विचार होता आया है और लोगोंने कई वादों या सिद्धान्तोंको इस प्रश्नके उत्तरस्वरूप संसारके समक्ष रखा है। ये सभी वाद या सिद्धान्त सीधे यह बतलाते हैं कि अमुक प्रकारसे भाषाकी उत्पत्ति हुई। अर्थात् ये सीधे जन्मको पकड़नेका प्रयास करते हैं, इसी कारण इनको 'प्रत्यक्ष मार्ग'के अंतर्गत रखा जाता है। दूसरी ओर भाषाके आरम्भतक पहुँचनेका एक 'परोक्ष मार्ग' भी है। 'परोक्ष मार्ग'में जन्मपर दृष्टि न ले जाकर भाषाओंके वर्तमान रूपपर दृष्टि ले जायी जाती है और उनके ऐतिहासिक तथा तुलनात्मक अध्ययन आदिके आधारपर धीरे-धीरे वर्तमानसे भूतकी ओर चला जाता है। इससे भाषाकी उत्पत्तिपर तो प्रकाश नहीं पड़ता, पर उसके आरम्भिक रूपका कुछ अनुमान अवश्य लग जाता है। यहाँ दोनों मार्गोंपर विचार किया जा रहा है।

(अ) **प्रत्यक्ष-मार्ग**—भाषाकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें प्राचीनतम विचार यूनानियों द्वारा व्यक्त किये गये हैं। ओल्ड टेस्टामेंटमें भी इस सम्बन्ध- में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूपसे कुछ बातें कही गयी हैं। इसी प्रकार भारत, मिस्र, अरब तथा अन्य देशोंकी धार्मिक तथा भाषा शास्त्र विषयक पुस्तकोंमें भाषाकी उत्पत्तिके संबन्धमें कुछ न कुछ बातें मिल जाती हैं। १८वीं सदीके पूर्वके व्यक्त लगभग सारे मत **दिव्य सिद्धान्त**के अंतर्गत आ सकते हैं। १८वीं सदीमें इस प्रश्नपर कई भाषा-विज्ञान वेत्ताओं तथा अन्य क्षेत्रोंके विद्वानोंने गम्भीरतासे विचार किया। इन विद्वानोंमें गियाम्बटिस्टा, ब्रासेस, कांडिलाक, रूसो तथा हर्डरके नाम प्रमुख रूपसे लिये जा सकते हैं। इनमें भी हर्डरका नाम विशेष उल्लेख्य है। इन्होंने भाषाकी उत्पत्तिपर एक लेख लिखा था जिसपर बर्लिन एकेडेमीने पुरस्कार दिया था। यों, बादमें हर्डरने अपने ही मतको महत्त्वहीन करार दे दिया। १९वीं सदीमें इस प्रश्नपर विचार करनेवालोंकी संख्या और भी बढ़ गयी। इसमें न्वायर, ग्रिम, राये, डार्विन, हम्बोल्ट, श्लाइखर, अर्नेस्ट रेनन, येस्पर्सन, मैक्समूलर, गाइगर, स्टाइन्थल, स्वीट, मार्टी, स्पेंसर,

रेगनौड तथा टेलर आदिके नाम उल्लेख्य हैं। आगे जिन वादोंका उल्लेख किया जायगा, उनमें बहुतसे इसी युगके हैं। २०वीं सदीकी आयु अभी आधीसे कुछ ही अधिक बीती है, किन्तु काफी विद्वानोंने इस प्रश्नपर विचार किया है। कुछ उल्लेख्य नाम वुंडट, डिलैगुना, वर्नडेशा, होनिग्स्वाल्ड, रेवेज़, जोहानसन, हम्फरी तथा समरफेल्ट आदिके हैं। इनमें रेवेज़ तथा जोहानसनके सिद्धान्त विशेषत: उल्लेख्य हैं, जिनपर आगे विचार किया गया है। भाषाकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कई प्रकारके सिद्धान्त, मतवाद या वाद विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रस्तुत किये गये हैं। यहाँ कुछ प्रमुख मत दिये जा रहे हैं। (१) **दैवी उत्पत्ति-सिद्धान्त** (diuine origin)–भाषाओंकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें यह सबसे प्राचीन मत है। लोगोंका विश्वास रहा है और कुछ अंशोंमें तो आज भी है कि संसार और उसकी अनेकानेक चीजोंकी भाँति ही भाषाको भी भगवान्ने ही बनाया। भारतीय पंडित वेदोंको अपौरुषेय मानते हैं। उनका दृढ़ विश्वास है कि संस्कृतको ईश्वरने बनाया और फिर उसी भाषामें वेदोंकी रचना की। संस्कृतको 'देव-भाषा' कहनेमें भी उनके इसी विश्वासकी ओर संकेत है। संस्कृत भाषा तथा उसके व्याकरणके मूलाधार पाणिनिके १४ सूत्र शिवके डमरूसे निकले माने जाते हैं। यहाँ भी उसी ओर संकेत है। ईश्वर निर्मित होनेके कारण ही इसे सनातनी पंडित संसारकी सभी भाषाओंका मूल मानते हैं। बौद्ध लोग 'पालि'को भी इसी प्रकार मूल भाषा मानते रहे हैं और उनका विश्वास रहा है कि यह भाषा अनादि कालसे चली आ रही है। जैन लोग तो संस्कृत पंडितों और बौद्धोंसे भी चार कदम आगे हैं। उनके अनुसार तो अर्ध-मागधी केवल मनुष्योंकी ही मूल भाषा नहीं है बल्कि, सभी जीवोंकी मूल भाषा है और जब महावीर स्वामी इस भाषामें उपदेश देते थे तो क्या देव योनिके लोग और क्या पशु-पक्षी, सभी उस उपदेशका रसास्वादन करते थे। ईसाई और उनमें भी प्रमुखत: कैथोलिक लोग 'हिब्रू' (जिसमें उनका धर्म ग्रंथ old testament लिखा गया है) को संसारकी सभी भाषाओंकी जननी मानते हैं। उनके अनुसार 'हिब्रू' आदम और हव्वाको पूर्ण विकसित भाषाके रूपमें भगवान् द्वारा दी गयी थी, फिर बाबुलकी मीनारवाली घटनाके कारण उसीके अनेक रूप हो गये और इस प्रकार संसारमें अनेक भाषाएँ हो गयीं। इसके आधारपर हिब्रूके विद्वानोंने संसारकी अनेक भाषाओंसे उन शब्दोंको इकट्ठा किया था, जो हिब्रू शब्दोंसे कुछ मिलते-जुलते थे और उनसे यह सिद्ध करनेका प्रयास किया कि यथार्थत: हिब्रू सभी भाषाओंकी जननी है। मुसलमान लोग 'कुरान'को खुदाका कलाम मानते हैं। मिस्रमें भी वहाँके प्राचीन लोगोंका अपनी भाषाके सम्बन्धमें कुछ ऐसा ही विश्वास था। प्लेटोने सभी चीजोंके नामोंको प्राकृतिक या प्रकृति-प्रदत्त कहा था, यह भी मत 'दैवी उत्पत्ति'का ही एक रूप है। इसी मतके प्रभावसे लोगोंका यह भी मत रहा है कि मनुष्य जन्मसे ही एक भाषा सीखकर आता है और वही भाषा ईश्वरकी बनायी तथा सबसे पुरानी भाषा है। इसीका निश्चय करनेके लिए मिस्रके राजा सैमेटिक्स (psammitichos)ने दो बच्चोंको जन्मके बाद ही अलग रखा था। उनके पास जानेवालोंको कुछ बोलनेका निषेध था। बड़े होनेपर उनके मुँहसे केवल 'बेकोस' (bekos) शब्द सुना गया। (रोटी देनेवाले फ्रीजियन नौकरने गलतीसे कभी इस शब्दका उच्चारण उनके सामने कर दिया था। 'बेकोस' फ्रीजियन शब्द है, और इसका अर्थ 'रोटी' होता है)। फ्रेडरिक द्वितीय (११९४-१२५०), स्काटलैंडके जेम्स चतुर्थ (१४८८-१५१३) तथा अकबर बादशाह (१५५६-१६०५)ने भी इस प्रकारके प्रयोग किये थे। अकबरका प्रयोग बहुत सफल था और फल यह हुआ कि लड़के गूँगे निकले। इस प्रकार कहना न होगा कि बच्चा पेटसे कोई भाषा सीख कर नहीं आता।

अर्थात् ईश्वर-प्रदत्त कोई भाषा नहीं है और ऐसा मानना अंधविश्वास मात्र है। आज इस मतको कोई भी नहीं मानता। यदि भाषा ईश्वर प्रदत्त होती तो कदाचित् आरंभसे ही वह पूर्ण विकसित होती, साथ ही सर्वत्र एक होती, किन्तु ऐसी बात है नहीं। इसे दिव्य उत्पत्ति भी कहते हैं। (२) **धातु-सिद्धान्त** (root theory)—इस सिद्धान्तका सूत्रपात करनेका श्रेय जर्मन प्रोफेसर हेस (heyse) को है। इन्होंने कभी अपने किसी व्याख्यानमें इसका उल्लेख किया था, जिसे बादमें उनके शिष्य डॉ० स्टाइन्थालने मुद्रित रूपमें विद्वानोंके समक्ष रखा। मैक्समूलरने भी इसे स्वीकार किया और अपनी पुस्तकमें भी इसे स्थान दिया, किन्तु बादमें उसने इसे निरर्थक कहकर छोड़ दिया। इसीको **डिंग-डाँग वाद** (ding-dong theory) भी कहा गया है। कुछ लोग गलतीसे डिंग-डाँग वादका प्रयोग अनुकरण सिद्धांत या अनुरणन सिद्धांतके लिए करते हैं। धातु-सिद्धांतका डिंग-डाँग वाद नाम साधार है, जो आगेकी बातोंसे स्पष्ट हो जायगा। इस सिद्धान्तके अनुसार संसारकी हर चीजकी अपनी ध्वनि होती है। यदि हम एक डंडेसे एक काठ, एक लोहे, एक सोने, एक कपड़े और एक कागजपर मारें तो देखेंगे सबका डिंग-डाँग (मूल अर्थ घंटेपर मारनेका शब्द या टन-टन) या सबकी ध्वनि अलग-अलग होगी। इसी प्रकार आरम्भमें मनुष्यमें एक ऐसी सहजात शक्ति थी कि जिस किसी चीजके संपर्कमें वह आता, उसके लिए उसके मुँहसे एक प्रकारकी ध्वनि निकल जाती (human speech is the result of an instinct of primitive man which made him give a vocal expression to every external impression) विभिन्न वस्तुओंकी ये ध्वन्यात्मक अभिव्यक्तियाँ 'धातु' थीं। आरम्भमें इस प्रकारकी धातुओंकी संख्या बहुत बड़ी थी, किन्तु उनमें बहुतसे (पर्याय होनेके कारण या योग्यतमावशेष-सिद्धान्तके कारण) धीरे-धीरे लुप्त हो गये और केवल चार-पाँच सौ धातु शेष रहीं। उन्हींसे भाषाकी उत्पत्ति हुई। इस सिद्धान्तके अनुसार उन धातुओंकी ध्वनि तथा उनके अर्थमें एक रहस्यात्मक सम्बन्ध (mystic harmony) था। इस मतके समर्थकोंका यह भी कहना था कि प्राचीन मनुष्यमें यह शक्ति थी, किन्तु भाषा बन जानेपर शक्तिकी आवश्यकता नहीं पड़ी, अतः वह धीरे-धीरे नष्ट हो गयी। आजका मनुष्य इसीलिए उससे शून्य है। इस सिद्धान्तको कुछ दार्शनिकोंने भी कभी किसी रूपमें माना था और इसे **नेटिविस्टिक सिद्धान्त** (nativistic theory) की संज्ञा दी थी। इस सिद्धान्तके विरुद्ध कई बातें कही जा सकती हैं। पहली बात तो यह है कि आदि मनुष्यके सम्बन्धमें इस प्रकारकी कल्पनाके लिए कोई आधार नहीं है। कुछ कल्पनाएँ साधार होती हैं, इसीलिए उन्हें माना जाता है, किन्तु यह तो निराधार कल्पना है, अतः सर्वथा त्याज्य है। दूसरे, संसारकी भाषाओंमें भारोपीय तथा सेमिटिक आदि कुछ परिवारोंमें तो धातुओंका पता चलता है, किन्तु अन्य ऐसे बहुतसे भाषा-परिवार हैं, जिनमें धातु जैसी कोई चीज नहीं है। ऐसी स्थितिमें यदि धातुकी बात मान भी लें तो ऐसी भाषाओंकी समस्याका हल इससे नहीं निकलता। तीसरे, भाषा केवल धातुसे ही नहीं बनती। प्रत्यय, उपसर्ग आदि अन्य रूपोंकी भी आवश्यकता पड़ती है, इस मतमें उनके लिए कुछ नहीं कहा गया है। चौथी बात, तो इसके विरुद्ध कही जा सकती है जो सबसे महत्त्वपूर्ण है। जिन भाषाओंमें धातु हैं, उनमें वे कृत्रिम या खोजी हुई हैं। आज भाषा-विज्ञान-वेत्ता यह नहीं मानते कि धातुओंके आधारपर प्राचीन कालमें शब्द बने, अपितु यह माना जाता है कि भाषाके अध्ययन-विश्लेषणके आधारपर धातुओंका पता, भाषाकी उत्पत्तिके कई हजार वर्ष बाद लगाया गया और धातुमें उपसर्ग या कृत प्रत्यय जोड़कर शब्द बनानेका ढंग उसके बाद अपनाया गया।

इस प्रकार इस मतमें, कोई तत्त्व नहीं है। जैसा कि ऊपर कहा गया है, यही सब सोच कर बादमें मैक्समूलरने इसे छोड़ दिया था। (३) **निर्णय-सिद्धान्त** (agreement theory) —इसे, **प्रतीकवाद, स्वीकारवाद, सांकेतिक उत्पात्ति-सिद्धान्त** तथा **संकेतवाद** आदि भी कहा गया है। इस सिद्धांतके अनुसार आरंभमें मनुष्योंने जब देखा कि हाथ आदिके संकेतोंसे काम नहीं चल रहा है, तो उन्होंने इकट्ठे होकर आवश्यक वस्तुओं या क्रियाओं आदिके लिए प्रतीक ध्वनि-सांकेत, सांकेतिक नाम या शब्द निश्चित करके स्वीकार किया और वहींसे भाषाका आरंभ हुआ। ध्यान देनेपर पता चलता है कि यह सिद्धान्त भी निरर्थक है। यदि कोई भाषा नहीं थी तो आरंभमें लोगोंने कैसे इकट्ठा होकर नामोंका निर्णय किया? बिना विचार-विनिमयके न तो इकट्ठा होना संभव है, और न प्रतीक रूपमें नामों आदिका निर्णय ही। और यदि वे इकट्ठा होनेके लिए या नाम निश्चित करनेके लिए विचार-विनिमय कर ही सकते थे तो उसके बाद किसी अन्य भाषाकी क्या आवश्यकता थी? वह तो स्वयं एक सफल या असफल भाषा थी। इस प्रकार इस वादमें निर्णयके पूर्व इकट्ठा होने तथा निर्णयार्थ विचार-विनिमयके लिए प्रयुक्त भाषाकी उत्पत्तिका भी प्रश्न खड़ा हो जात है, अतः इसके सहारे भी हमारी समस्याका हल नहीं मिलता। (४) **अनुकरण सिद्धान्त** (imitative-theory)—इसके अन्य नाम **अनुकरण-मूलकतावाद, भौं-भौंवाद, बाउ-वाउवाद, बाउ-वाउसिद्धान्त, शब्दानुकरणवाद** या **शब्दानुकरणमूलकतावाद** आदि हैं (अंग्रेजीमें इसे bow-wow theory, onomotopoeic या onomotopoetic theory या echoic theory आदि कहते हैं)। इस सिद्धांतका प्रतिपादन भी अनेक विद्वानोंने किया है कि भाषाकी उत्पत्ति अनुकरणके आधारपर हुई। मनुष्यने अपने आस-पासके जीवों और चीजों आदिकी आवाज़ आदिके अनुकरणपर प्रारम्भमें कुछ शब्द बनाये और उसीपर भाषाका महल खड़ा हुआ। इसे **अनुकरण मूलकतावाद** भी कहते हैं। इस सिद्धांतके अंतर्गत तीन उपसिद्धांत रखे जा सकते हैं। (क) ध्वन्यात्मक अनुकरण। (ख) अनुरणनात्मक अनुकरण तथा (ग) दृश्यात्मक अनुकरण। नीचे तीनोंपर अलग-अलग विचार किया जा रहा है।

(क) **ध्वान्यात्मक अनुकरण सिद्धान्त**—इसके अनुसार मनुष्यने अपने आस-पासके पशु-पक्षियों आदिसे होनेवाली ध्वनियोंके अनुकरणपर अपने लिए शब्द बनाये और फिर उसी आधारपर पूरी भाषा खड़ी हुई। रेननने इस सिद्धान्तका विरोध इस आधारपर किया था कि विश्वका सर्व श्रेष्ठ एवं विकसित प्राणी होता हुआ भी मनुष्य स्वयं कोई ध्वनि नहीं उत्पन्न कर सका और दूसरोंकी ध्वनियोंका उसे अपनी भाषा बनानेके लिए सहारा लेना पड़ा। किन्तु तत्त्वतः इस प्रकारके विरोधके लिए कोई ठोस आधार नहीं है। मनुष्य स्वयं ध्वनि उत्पन्न करता रहा होगा, पर अन्य जानवरों आदिके नामों या उनकी क्रियाओंके लिए उसने उनकी ध्वनियोंके अनुकरणपर भी शब्दोंका अनजाने ही निर्माण किया होगा। यह कहना तो व्यर्थ है कि पूरी भाषाकी उत्पत्ति इस प्रकारके अनुकरणपर आधारित शब्दोंसे हुई है, किन्तु इसमें कोई संदेह नहीं कि विश्वकी अधिकांश भाषाओंमें कुछ ऐसे शब्द हैं जिनका आधार ध्वनिका अनुकरण है। अतएव इस सिद्धांतको आंशिक रूपसे सत्य माना जा सकता है, अर्थात् कुछ प्रतिशत शब्द ध्वनिके अनुकरणपर आधारित हैं, यद्यपि उत्तरी अमेरिकाकी 'अथपस्कन' जैसी कुछ भाषाएँ ऐसी भी हैं, जिनमें इस प्रकारके शब्दोंका एकान्त अभाव है। **चीनी** मिआऊ (=बिल्ली); **हिन्दी** म्याऊँ (म्याऊँका मुँह कौन पकड़े), में-में (भेंड़की बोली), बे-बे (बकरीकी बोली), मिमियाना, बिबियाना, दहाड़ना, गरजना, गुर्राना, हिनहिनाना

फटफटिया (मोटर साइकिलके लिए देहाती नाम), पों-पों (मोटरके लिए बच्चों द्वारा प्रयुक्त शब्द), घुग्घू (= उल्लू, अपनी आवाज़के कारण); अंग्रेज़ी कक्कू, काक; संस्कृत काक (काक इति शब्दानुकृतिः—निरुक्त) तथा कोकिल आदि शब्दोंका आधार यही है, इसमें सन्देह नहीं। कुछ लोग इस सिद्धांतका विरोध इस आधारपर करते हैं कि इन शब्दोंका आधार ध्वनि-अनुकरण होता तो संसारकी सभी भाषाओंमें इनके लिए एक शब्द होते। किन्तु, यह भी आवश्यक नहीं है। अनुकरण प्रायः सर्वदा ही अपूर्ण रहता है, यह आवश्यक नहीं कि शब्द बिलकुल ही ध्वनिके अनुरूप हो। प्रायः उसमें ध्वनिका थोड़ा या अधिक आधार होता है और इसीलिए एक ही ध्वनिके अनुकरणपर बने विभिन्न भाषाओंके शब्दोंमें, ध्वन्यात्मक अंतर असंभव नहीं है। मैक्समूलरने इस मतकी हँसी उड़ायी थी और हँसीमें ही इसे वाउ-वाउ-सिद्धांत (bow-wow theory) कहा था। 'बाउ-वाउ' अंग्रेज़ीमें कुत्तेकी बोलीको कहते हैं और यों अंग्रेज़ बच्चे कुत्तेको भी 'बाव-बाव' कहते हैं, किन्तु साथ ही पापुवाके पूर्वोत्तरी किनारेकी भाषामें भी ध्वनिके आधारपर कुत्तेको इसी नामसे पुकारते हैं। मैक्समूलरने पापुवाकी भाषाके आधारपर ही यह नाम दिया था। किन्तु यह स्पष्ट है कि यह मत बिल्कुल ही त्याज्य नहीं है। पर साथ ही भाषाके सारे शब्दोंका समाधान इससे नहीं किया जा सकता। हाँ, यह अवश्य है कि भाषाकी प्राथमिक अवस्थामें ऐसे शब्द पर्याप्त रहे होंगे। (ख) **अनुरणनात्मक अनुकरण सिद्धांत, अनुरणन-सिद्धान्त** या **अनुरणन मूलकतावाद** को बहुत-सी पुस्तकोंमें ध्वनि-अनुकरणसे अलग रखा गया है, पर यथार्थतः यह भी एक प्रकारका ध्वनि-अनुकरण ही है। ऊपर पशु-पक्षियों आदिके अनुकरणकी बात थी यहाँ धातु, काठ, पानी आदि निर्जीव चीज़ोंकी ध्वनिका अनुकरण है, जैसे झनझनाना, तड़तड़ाना, कल-कल, छल-छल, ठक-ठक, खट-खट आदि। अंग्रेज़ीमें, murmur, gazz, thunder, jazz आदि शब्द इसी प्रकारके हैं। संस्कृतमें, नद-नद नादके आधारपर ही नद या नदी आदि शब्द हैं। इसी प्रकार पत् धातु (= गिरना) का आधार कदाचित् पत्रका 'पत्' ध्वनि करते हुए गिरना है। इस वर्गके भी कुछ शब्द प्रायः सभी भाषाओंमें मिल जायँगे। (ग) **दृश्यात्मक अनुकरण सिद्धान्त**—(बगबग, दगदग, जगमगके शब्द तो भाषामें और भी कम होते हैं। इन तीनों ही वर्गोंपर एक ही प्रकारके आक्षेप लागू होते हैं। जैसा कि ऊपर 'क'के बारेमें कहा गया है, इसके आधारपर भी भाषाके दो-चार या दस-बीस शब्दोंका ही समाधान हो सकता है पूर्ण भाषाका नहीं। (५) **मनोभावाभिव्यक्ति सिद्धान्त** (interjectionaltheory) **मनोभावाभिव्यक्तिवाद, मनोराग मूलकतावाद, पूह-पूहवाद, मनोभावाभिव्यंजकतावाद** आदि कुछ अन्य नामोंका भी हिन्दीमें प्रयोग होता है। अंग्रेज़ीमें इसे पूह-पूहवाद (pooh-pooh theory; यह नाम मैक्समूलरने मजाकमें दिया था) भी कहते हैं। इस सिद्धांतके अनुसार आरम्भमें मनुष्य विचार-प्रधान प्राणी न होकर अन्य पशुओंकी भाँति भाव-प्रधान था और प्रसन्नता, दुःख, विस्मय, घृणा आदिके भावावेशमें उसके मुखसे ओ, छिः, धिक्, धत्, आह, ओह, फ़ाई, पूह, पिश आदि, जैसे शब्द सहज ही निकल जाया करते थे। (विकासवादके पिता डार्विन इन ध्वनियोंका कारण शारीरिक मानते हैं) धीरे-धीरे इन्हीं शब्दोंसे भाषाका विकास हुआ। इस सिद्धांतके मान्य होनेमें कई कठिनाइयाँ हैं। पहली बात तो यह है कि भिन्न-भिन्न भाषाओंमें ऐसे शब्द एक ही रूपमें नहीं मिलते। यदि स्वभावतः आरम्भमें ये निःसृत हुए होते तो अवश्य ही सभी मनुष्योंमें लगभग एकसे होते। संसार भरके कुत्ते दुखी होनेपर लगभग एक ही प्रकारसे भूँककर रोते हैं, पर संसारभरके

इस प्रकार इस मतमें, कोई तत्त्व नहीं है। जैसा कि ऊपर कहा गया है, यही सब सोच कर बादमें मैक्समूलरने इसे छोड़ दिया था। (३) **निर्णय-सिद्धान्त** (agreement theory) —इसे, **प्रतीकवाद**, **स्वीकारवाद**, **सांकेतिक उत्पत्ति-सिद्धान्त** तथा **संकेतवाद** आदि भी कहा गया है। इस सिद्धांतके अनुसार आरंभमें मनुष्योंने जब देखा कि हाथ आदिके संकेतोंसे काम नहीं चल रहा है, तो उन्होंने इकट्ठे होकर आवश्यक वस्तुओं या क्रियाओं आदिके लिए प्रतीक ध्वनि-सांकेत, सांकेतिक नाम या शब्द निश्चित करके स्वीकार किया और वहींसे भाषाका आरंभ हुआ। ध्यान देनेपर पता चलता है कि यह सिद्धान्त भी निरर्थक है। यदि कोई भाषा नहीं थी तो आरंभमें लोगोंने कैसे इकट्ठा होकर नामोंका निर्णय किया? बिना विचार-विनिमयके न तो इकट्ठा होना संभव है, और न प्रतीक रूपमें नामों आदिका निर्णय ही। और यदि वे इकट्ठा होनेके लिए या नाम निश्चित करनेके लिए विचार-विनिमय कर ही सकते थे तो उसके बाद किसी अन्य भाषाकी क्या आवश्यकता थी? वह तो स्वयं एक सफल या असफल भाषा थी। इस प्रकार इस वादमें निर्णयके पूर्व इकट्ठा होने तथा निर्णयार्थ विचार-विनिमयके लिए प्रयुक्त भाषाकी उत्पत्तिका भी प्रश्न खड़ा हो जात है, अतः इसके सहारे भी हमारी समस्याका हल नहीं मिलता। (४) **अनुकरण सिद्धान्त** (imitative-theory)—इसके अन्य नाम **अनुकरण-मूलकतावाद**, **भौं-भौंवाद**, **बाउ-वाउवाद**, **बाउ-वाउसिद्धान्त**, **शब्दानुकरणवाद** या **शब्दानुकरणमूलकतावाद** आदि हैं (अंग्रेज़ीमें इसे bow-wow theory, onomotopoeic या onomotopoetic theory या echoic theory आदि कहते हैं)। इस सिद्धांतका प्रतिपादन भी अनेक विद्वानोंने किया है कि भाषाकी उत्पत्ति अनुकरणके आधारपर हुई। मनुष्यने अपने आस-पासके जीवों और चीजों आदिकी आवाज़ आदिके अनुकरणपर प्रारम्भमें कुछ शब्द बनाये और उसीपर भाषाका महल खड़ा हुआ। इसे **अनुकरण मूलकतावाद** भी कहते हैं। इस सिद्धांतके अंतर्गत तीन उपसिद्धांत रखे जा सकते हैं। (क) ध्वन्यात्मक अनुकरण। (ख) अनुरणनात्मक अनुकरण तथा (ग) दृश्यात्मक अनुकरण। नीचे तीनोंपर अलग-अलग विचार किया जा रहा है।

(क) **ध्यान्यात्मक अनुकरण सिद्धान्त**—इसके अनुसार मनुष्यने अपने आस-पासके पशु-पक्षियों आदिसे होनेवाली ध्वनियोंके अनुकरणपर अपने लिए शब्द बनाये और फिर उसी आधारपर पूरी भाषा खड़ी हुई। रेननने इस सिद्धान्तका विरोध इस आधारपर किया था कि विश्वका सर्व श्रेष्ठ एवं विकसित प्राणी होता हुआ भी मनुष्य स्वयं कोई ध्वनि नहीं उत्पन्न कर सका और दूसरोंकी ध्वनियोंका उसे अपनी भाषा बनानेके लिए सहारा लेना पड़ा। किन्तु तत्त्वतः इस प्रकारके विरोधके लिए कोई ठोस आधार नहीं है। मनुष्य स्वयं ध्वनि उत्पन्न करता रहा होगा, पर अन्य जानवरों आदिके नामों या उनकी क्रियाओंके लिए उसने उनकी ध्वनियोंके अनुकरणपर भी शब्दोंका अनजाने ही निर्माण किया होगा। यह कहना तो व्यर्थ है कि पूरी भाषाकी उत्पत्ति इस प्रकारके अनुकरणपर आधारित शब्दोंसे हुई है, किन्तु इसमें कोई संदेह नहीं कि विश्वकी अधिकांश भाषाओंमें कुछ ऐसे शब्द हैं जिनका आधार ध्वनिका अनुकरण है। अतएव इस सिद्धांतको आंशिक रूपसे सत्य माना जा सकता है, अर्थात् कुछ प्रतिशत शब्द ध्वनिके अनुकरणपर आधारित हैं, यद्यपि उत्तरी अमेरिकाकी 'अथपस्कन' जैसी कुछ भाषाएँ ऐसी भी हैं, जिनमें इस प्रकारके शब्दोंका एकान्त अभाव है। **चीनी** मिआऊ (= बिल्ली); **हिन्दी** म्याऊँ (म्याऊँका मुँह कौन पकड़े), में-में (भेंड़की बोली), बे-बे (बकरीकी बोली), मिमियाना, 'बिबियाना, दहाड़ना, गरजना, गुर्राना, हिनहिनाना

फटफटिया (मोटर साइकिलके लिए देहाती नाम), पों-पों (मोटरके लिए बच्चों द्वारा प्रयुक्त शब्द), घुग्घू (= उल्लू, अपनी आवाज़के कारण); अंग्रेज़ी कक्कू, काक; संस्कृत काक (काक इति शब्दानुकृतिः—निरुक्त) तथा कोकिल आदि शब्दोंका आधार यही है, इसमें सन्देह नहीं। कुछ लोग इस सिद्धांतका विरोध इस आधारपर करते हैं कि इन शब्दोंका आधार ध्वनि-अनुकरण होता तो संसारकी सभी भाषाओंमें इनके लिए एक शब्द होते। किन्तु, यह भी आवश्यक नहीं है। अनुकरण प्रायः सर्वदा ही अपूर्ण रहता है, यह आवश्यक नहीं कि शब्द बिलकुल ही ध्वनिके अनुरूप हो। प्रायः उसमें ध्वनिका थोड़ा या अधिक आधार होता है और इसीलिए एक ही ध्वनिके अनुकरणपर बने विभिन्न भाषाओंके शब्दोंमें ध्वन्यात्मक अंतर असंभव नहीं है। मैक्समूलरने इस मतकी हँसी उड़ायी थी और हँसीमें ही इसे बाउ-वाउ-सिद्धांत (bow-wow theory) कहा था। 'बाउ-वाउ' अंग्रेज़ीमें कुत्तेकी बोलीको कहते हैं और यों अंग्रेज़ बच्चे कुत्तेको भी 'वाव-वाव' कहते हैं, किन्तु साथ ही पापुवाके पूर्वोत्तरी किनारेकी भाषामें भी ध्वनिके आधारपर कुत्तेको इसी नामसे पुकारते हैं। मैक्समूलरने पापुवाकी भाषाके आधारपर ही यह नाम दिया था। किन्तु यह स्पष्ट है कि यह मत बिल्कुल ही त्याज्य नहीं है। पर साथ ही भाषाके सारे शब्दोंका समाधान इससे नहीं किया जा सकता। हाँ, यह अवश्य है कि भाषाकी प्राथमिक अवस्थामें ऐसे शब्द पर्याप्त रहे होंगे। (ख) **अनुरणनात्मक अनुकरण सिद्धांत, अनुरणन-सिद्धान्त** या **अनुरणन मूलकतावाद** को बहुत-सी पुस्तकोंमें ध्वनि-अनुकरणसे अलग रखा गया है, पर यथार्थतः यह भी एक प्रकारका ध्वनि-अनुकरण ही है। ऊपर पशु-पक्षियों आदिके अनुकरणकी बात थी यहाँ धातु, काठ, पानी आदि निर्जीव चीज़ोंकी ध्वनिका अनुकरण है, जैसे झनझनाना, तड़तड़ाना, कल-कल, छल-छल, ठक-ठक, खट-खट आदि। अंग्रेज़ीमें, murmur, gazz, thunder, jazz आदि शब्द इसी प्रकारके हैं। संस्कृतमें, नद-नद नादके आधारपर ही नद या नदी आदि शब्द हैं। इसी प्रकार पत् धातु (= गिरना) का आधार कदाचित् पत्रका 'पत्' ध्वनि करते हुए गिरना है। इस वर्गके भी कुछ शब्द प्रायः सभी भाषाओंमें मिल जायँगे। (ग) **दृश्यात्मक अनुकरण सिद्धान्त**—(बगबग, दगदग, जगमगके शब्द तो भाषामें और भी कम होते हैं। इन तीनों ही वर्गोंपर एक ही प्रकारके आक्षेप लागू होते हैं। जैसा कि ऊपर 'क'के बारेमें कहा गया है, इसके आधारपर भी भाषाके दो-चार या दस-बीस शब्दोंका ही समाधान हो सकता है पूर्ण भाषाका नहीं। (५) **मनोभावाभिव्यक्ति सिद्धान्त** (interjectionaltheory) **मनोभावाभिव्यक्तिवाद, मनोराग मूलकतावाद, पूह-पूहबाद, मनोभावाभिव्यंजकतावाद** आदि कुछ अन्य नामोंका भी हिन्दीमें प्रयोग होता है। अंग्रेज़ीमें इसे पूह-पूहवाद (pooh-pooh theory; यह नाम मैक्समूलरने मजाकमें दिया था) भी कहते हैं। इस सिद्धांतके अनुसार आरम्भमें मनुष्य विचार-प्रधान प्राणी न होकर अन्य पशुओंकी भाँति भाव-प्रधान था और प्रसन्नता, दुःख, विस्मय, घृणा आदिके भावावेशमें उसके मुखसे ओ, छिः, धिक्, धत्, आह, ओह, फ़ाई, पूह, पिश आदि, जैसे शब्द सहज ही निकल जाया करते थे। (विकासवादके पिता डार्विन इन ध्वनियोंका कारण शारीरिक मानते हैं) धीरे-धीरे इन्हीं शब्दोंसे भाषाका विकास हुआ। इस सिद्धांतके मान्य होनेमें कई कठिनाइयाँ हैं। पहली बात तो यह है कि भिन्न-भिन्न भाषाओंमें ऐसे शब्द एक ही रूपमें नहीं मिलते। यदि स्वभावतः आरम्भमें ये निःसृत हुए होते तो अवश्य ही सभी मनुष्योंमें लगभग एकसे होते। संसार भरके कुत्ते दुखी होनेपर लगभग एक ही प्रकारसे भूँककर रोते हैं, पर संसारभरके

आदमी न तो दुखी होनेपर एक प्रकारसे 'हाय' करते हैं और न प्रसन्न होनेपर एक प्रकारसे 'वाह'। बल्कि लगता है कि इनके साथ संयोगसे ही इस प्रकारके भाव सम्बद्ध हो गये हैं, और ये पूर्णतः यादृच्छिक हैं। साथ ही इन शब्दोंसे पूरी भाषापर प्रकाश नहीं पड़ता। किसी भाषामें इनकी संख्या चालीस-पचाससे अधिक नहीं होगी, और वहाँ भी इन्हें पूर्णतः भाषाका अंग नहीं माना जा सकता। बेनफ़ीने यह ठीक ही कहा था कि ऐसे शब्द केवल वहाँ प्रयुक्त होते हैं जहाँ बोलना संभव नहीं होता, इस प्रकार ये भाषा नहीं हैं। यदि इन्हें भाषाका अंग भी माना जाय तो अधिकसे अधिक इतना कहा जा सकता है, कि कुछ थोड़े शब्दोंकी उत्पत्तिकी समस्यापर ही इससे प्रकाश पड़ता है। और इसमें यह तो बिल्कुल ही स्पष्ट नहीं है कि इन शब्दोंसे और शब्द, जो भाषाके अपेक्षाकृत अधिक प्रमुख अंग हैं, किस प्रकार विकसित या उत्पन्न हुए। हाँ, इतना अवश्य स्वीकार किया जा सकता है कि इस प्रकारकी ध्वनियाँ आरम्भमें अधिक रही होंगी और उनका प्रयोग भी भाषाके अभावमें अधिक होता रहा होगा, अतः इनके कारण धीरे-धीरे विभिन्न प्रकारकी ध्वनियोंके उच्चारणका अभ्यास बढ़ा होगा, जिससे भाषाके विकसित होनेमें कुछ सहायता मिली होगी। (६) **यो-हे-हो-सिद्धान्त** (yo-he-ho theory)—इसे यो-हे-हो-वाद या श्रम-परिहरण मूलकतावाद भी कहते हैं। इसके जन्मदाता न्वायर (noire) नामक विद्वान् थे। उनका सिद्धांत था कि परिश्रमका कार्य करते समय साँसके तेजीसे बाहर-भीतर आने-जानेसे और साथ-साथ स्वरतंत्रियोंके विभिन्न रूपोंमें कम्पित होनेसे एवं तदनुकूल ध्वनियाँ उच्चरित होनेसे कार्य करनेवालेको राहत मिलती है। इसीलिए कठिन परिश्रम करते समय कुछ कहकर श्रमिक लोग श्रम-परिहार किया करते हैं। धोबी 'हियो' या 'छियो' कहते हैं। मल्लाह थकानके लिए 'यो-हे-हो' कहते हैं। क्रेनपर काम करनेवाले मजदूर भी कार्य करते समय 'हो-हो' या कुछ इसी प्रकारके शब्द कहते हैं। इसी प्रकार सड़क कूटनेवाले श्रमिक जब-जब दुर्मुस (सड़क कूटनेका डंडा लगा हुआ लोहा या पत्थर) उठाते हैं तो 'हे' या 'हुँ' कहते हैं। इस सिद्धान्तका आधार यह है कि किसी क्रियाके साथ स्वभावतः होनेवाली ध्वनि इस क्रियाकी बोधिका होती है। यह सिद्धांत ऊपरके सभी सिद्धांतोंसे गया-बीता है, क्योंकि इन शब्दोंका भाषामें कोई भी स्थान नहीं है और न तो इन ध्वनियोंसे किसी विशिष्ट अर्थका ही सम्बन्ध है। (७) **इंगित-सिद्धान्त** (gestural theory)-इस सिद्धांतकी ओर सर्वप्रथम संकेत करनेका श्रेय पालिनेशियन भाषाके विद्वान् डॉ० रायेको है। कुछ दिन बाद डार्विनने भी छः असम्बद्ध भाषाओंके तुलनात्मक अध्ययनके आधारपर इसे प्रमाणित किया था। इस सदीमें १९३०के लगभग रिचर्डने इस सिद्धांतको पुनः उठाया और अपनी पुस्तक 'ह्यूमन स्पीच' में मौखिक इंगित सिद्धान्त (oral gesture theory) नामसे इसे विद्वानोंके समक्ष रखा। आइसलैंडिक भाषाके विद्वान् अलेक्जेंडर जोहानसन भी लगभग इसी समय भारोपीय भाषाओंका तुलनात्मक अध्ययन करते हुए लगभग इसी निष्कर्षपर पहुँचे। बादमें उन्होंने अपनी तीन पुस्तकोंमें 'इंगित सिद्धांत' का विस्तृत विवेचन किया। अपने विवेचनको उन्होंने भारोपीय भाषाओंके अतिरिक्त हिब्रू, पुरानी चीनी, तुर्की तथा कुछ अन्य भाषाओंपर भी आधारित किया है। ये भाषाके विकासकी चार सीढ़ियाँ मानते हैं। पहली सीढ़ी, भाव-व्यंजक ध्वनियोंकी है—जब भय, क्रोध, दुःख, खुशी, भूख, प्यास, मैथुनेच्छाके कारण मनुष्य बन्दरों आदिकी तरह इस प्रकारकी ध्वनियों द्वारा अपने भावोंको व्यक्त करता था। दूसरी सीढ़ी' अनुकरणात्मक शब्दोंकी है। इस अवस्थामें विभिन्न जीव-जन्तुओं तथा निर्जीव पदार्थोंकी ध्वनियोंके अनुकरणपर शब्द बने होंगे। तीसरी सीढ़ी, भाव-संकेत या इंगितोंकी है।

इनका भी आधार अनुकरण है, पर यह अनुकरण (जीभ आदि द्वारा) बाहरी चीजोंका न होकर अपने अंगोंका (प्रमुखतः हाथका) या अंगोंके संकेतों (gestures) का है। इसे जोहानसनने बिना जाने किया हुआ अनुकरण (unconscious imitation) कहा है। भाषाके विकासमें इसीको वे महत्त्वपूर्ण मानते हैं। (इसकी आलोचनाके लिए देखिये टाटा सिद्धांत)। पर इस तीसरी स्थितिमें केवल स्थूलके लिए शब्द बने होंगे। मानवके मानसिक विकासके और आगे बढ़नेपर धीरे-धीरे सूक्ष्म भावों आदिके लिए भी शब्द बने। यह चौथी अवस्था थी। इस प्रसंगमें उन्होंने स्वर, व्यंजन आदिके विकासकी अवस्थाकी ओर भी संकेत किया है, ध्वनियोंसे अर्थका सम्बन्ध भी वे स्थापित करते हैं, जैसे 'र'से आरम्भ होनेवाले धातुओंका अर्थ 'गति' (क्योंकि जीभ इसके उच्चारणमें दौड़ती है) तथा 'म्' से आरम्भ होनेवाले धातुओंका अर्थ बन्द करना, चुप होना तथा समाप्त करना आदि, क्योंकि इसके उच्चारणमें ओठ लगभग यही क्रिया करते हैं। वे यह भी कहते हैं कि आदि मानवने अपने शरीरमें तरह-तरह के 'कर्व' देखे और उनके अनुकरणपर उसने १९६ मूल भावोंके द्योतक शब्दोंका आरम्भमें निर्माण किया। इस मतमें भाषाके विकासकी आरम्भिक स्थितियाँ तो निश्चय ही आरम्भ और विकासकी दृष्टिसे मान्य हो सकती हैं, किंतु इसके बाद मुंहके जीभ आदि अंगोंसे हाथ आदि बाह्य अंगोंके अनुकरणके आधारपर ध्वनि या शब्दोंकी उत्पत्ति गलेसे नहीं उतरती। दूसरे इस प्रसंगमें ध्वनि और अर्थका तर्कसम्मत सम्बन्ध स्थापित करनेकी जोहानसनने जो कोशिश की है, वह तो और भी असन्तोषजनक सिद्ध होती है। इसके आधारपर कुछ भाषाओंके कुछ शब्दोंमें उनकी बातें मिल जायँ, यह बात दूसरी है, किंतु पुरानी भाषाओंके प्राचीनतम शब्द-समूहपर दृष्टि दौड़ानेपर भी यह बात पूर्णतः सही नहीं उतरती। उदाहरणतः 'र'से आरम्भ होनेवाली धातुओंका अर्थ वे 'गति' मानते हैं। उदाहरणमें वे हिब्रू धातु rbk (मिलाना), rkb (चढ़ना) आदि देते हैं, किंतु संस्कृत तथा ग्रीक आदिमें अन्य ध्वनिसे आरम्भ होनेवाले गत्यर्थक धातुओंकी भी कमी नहीं है। इस सिद्धान्तको और सूक्ष्मतासे देखा जाय तो यह भी कहा जा सकता है कि, धातु या शब्दका क्या केवल प्रथम वर्ण ही महत्त्वपूर्ण है? और यदि है भी तो बादके वर्ण किस आधारपर रखे गये। यों यदि तर्क देने ही हों तो गणितशास्त्रके आधारपर इनके भी कुछ उत्तर दिये जा सकते हैं, पर प्रश्न उठेगा कि उस कालमें क्या मनुष्यमें इतनी तर्क-शक्ति आ गयी थी? शायद नहीं। तर्क-बुद्धि और भाषाका विकास तो साथ-साथ हुआ है। इस मतके प्रतिपादकने शब्दोंके बननेमें सामान्य सिद्धान्तकी बात उठायी है। यदि उसे उतना यांत्रिक माना जाय तो संसारकी प्रायः सभी प्राचीन भाषाओंमें प्रारम्भिक भावोंको व्यक्त करनेवाले समानार्थी शब्दोंमें पर्याप्त साम्य होना चाहिये, किन्तु यह बात भी नहींके बराबर है। इस सिद्धांतके विरुद्ध इसी प्रकारकी और भी कई आपत्तियाँ उठायी जा सकती हैं। फलतः इसके आरम्भिक अंशको छोड़कर शेषको स्वीकार्य नहीं माना जा सकता। (८) **टा-टा-सिद्धान्त या टा-टा-वाद** (ta-ta theory)—इस सिद्धांतके अनुसार आरम्भमें आदि मानव काम करते समय जाने-अनजाने उच्चारण अवयवोंसे काम करनेवाले अवयवोंकी गतिका अनुकरण करता था और इस अनुकरणमें कुछ ध्वनियों और ध्वनि-संयोगोंसे शब्दोंका उच्चारण हो जाया करता था। इन्हीं ध्वनियों और शब्दोंसे धीरे-धीरे भाषाका विकास हुआ। कहना न होगा कि यह अनुकरणवाली बात बहुत कुछ इंगित-सिद्धांतसे मिलती-जुलती है। भाषाकी उत्पत्तिका प्रश्न इससे भी सुलझता नहीं दिखायी देता। ऐसा अनुकरण न तो आजका सभ्य मानव करता है और न असभ्यतम तथा अविकसिततम मानव, जो विश्वके कुछ स्थलों-

में मिला है। साथ ही तरह-तरहके बन्दरोंमें भी, जो हमारे तथाकथित जनक हैं, यह प्रवृत्ति नहीं दिखायी देती। फिर किस आधारपर यह अनुमान लगाया गया है, पता नहीं चलता (जोहानसनके इंगित सिद्धांतके इस प्रकारके अंशके विरुद्ध भी यह आपत्ति उठायी जा सकती है)। यदि इस प्रश्नको छोड़ दिया जाय तो भी उन आरंभिक निरर्थक ध्वनियोंसे भाषाका विकास कैसे हुआ? इस बातका इस सिद्धांतमें कोई दो टूक रूप नहीं दिया गया है, और इस तरह यह भी अमान्य ही कहा जायगा।

(९) संगीत-सिद्धान्त (musical theory)— इस सिद्धांत (संगीतवाद या sing-song theory) में भाषाकी उत्पत्ति आदिम मानवके संगीतसे मानी जाती है। डार्विन तथा स्पेंसरने इसे कुछ रूपोंमें माना या येसपर्सनने भी—जहाँ वे कहते हैं कि भाषाकी उत्पत्ति खेलके रूपमें हुई और उच्चारणावयव खाली वक्तमें गानेको खेल (singing sport) में उच्चारण करनेमें अभ्यस्त हुए— इसका समर्थन किया है। इनके अनुसार गाने (प्रेम, दुःख आदिके अवसरपर) से प्रारम्भिक अर्थविहीन अक्षर (meaningless syllable) बने और विशेष स्थितिमें उनका प्रयोग होनेसे उन अक्षरोंसे अर्थका सम्बन्ध हो गया। आदिम मनुष्य भावुक अधिक रहा होगा और सम्भव है गुनगुनानेमें उसे आनन्द आता रहा हो, किन्तु गुनगुनानेके अक्षरोंसे भाषा कैसे निकली, इसका स्पष्ट चित्र इसके समर्थकोंने हमारे सामने नहीं रखा है। साथ ही गुन-गुनानेकी बात भी अनुमानपर ही अधिक आधारित है। ऐसी स्थितिमें इसे भी स्वीकार नहीं किया जा सकता। इस संगीतका संबंध अपेक्षया प्रेमसे अधिक है, इसी कारण कुछ लोगोंने इसे प्रेम सिद्धांत (woo-woo theory) भी कहा है (प्रो० हडसनके अनुसार उनके विद्यार्थियों ने सादृश्यके आधारपर यह नाम दिया है)।

(१०) सम्पर्क-सिद्धान्त (contact theory)—इस मतके प्रतिपादक जी० रेवेज़ (revesz) हैं, जो मनोविज्ञानके विद्वान् थे। इस सिद्धांतमें 'सम्पर्क'का अर्थ है सामाजिक जीवों (जिनमें मनुष्य प्रमुख हैं) में आपसी सम्पर्क रखनेकी सहजात प्रवृत्ति। समाजका निर्माण इसी प्रवृत्तिके कारण हुआ है। आदिम मनुष्यके भी छोटे-छोटे वर्ग या समाज थे और उसमें आपसमें प्रारम्भिक भावनाओं (भूख, प्यास, कामेच्छा, रक्षा आदिसे सम्बद्ध) को एक-दूसरेपर अभिव्यक्त करनेके लिए विभिन्न स्तरोंपर तरह-तरहके सम्पर्क स्थापित किये जाते थे। इन संपर्कोंके लिए स्पर्श आदिका सहारा भी चलता रहा होगा, पर साथ ही मुखोच्चरित ध्वनियाँ भी सहायक रही होंगी। भाषा उसीका विकसित रूप है। जैसे-जैसे संपर्ककी आवश्यकता बढ़ती गयी और उसकी स्पष्टताकी आवश्यकताका अनुभव होता गया, संपर्कका माध्यम (ध्वनि) का भी विकास होता गया। आरम्भकी ध्वनियाँ अपेक्षाकृत अधिक स्वाभाविक थीं, पर धीरे-धीरे मानव आवश्यकतानुसार कृत्रिमताके आधारपर उन्हें विकसित करता गया। सम्पर्क प्रारम्भमें भावोंके स्तरपर (emotional contact) रहा होगा और बादमें विचारोंके स्तरपर (intellectual contact)। विचारोंके स्तरपर सम्पर्कके बढ़नेपर भाषामें अधिक विकास हुआ होगा। रेवेज़ने इस सिद्धान्तपर विचार करते हुए ध्वन्यात्मक रूपके विकासपर भी प्रकाश डाला है। हर्ष, शोक आदिकी स्थितिमें भावावेशात्मक ध्वन्याभिव्यक्तिको रेवेज़ विनिमय या दूसरेतक अपने भावोंको पहुँचानेवाली अभिव्यक्ति नहीं मानते। किन्तु सम्पर्क-ध्वनिका इससे सम्बन्ध अवश्य है और कदाचित् एक दूसरेका विकसित रूप भी है। संपर्क-ध्वनिका विकास संसूचक ध्वनिमें होता है, जिसमें चिल्लाना, पुकारना आदि हैं। इसी अवस्थामें भाषाके आदिम शब्दोंका विकास हुआ होगा जिनका विशेष अवसरोंपर प्रयुक्त होनेके कारण विशेष अर्थोंसे भी सम्बन्ध स्थापित हो गया

होगा। इस समय सम्बन्धियों एवं वस्तुओंके लिए शब्द रहे होंगे, किन्तु उनका सम्बन्ध संज्ञासे न होकर क्रियासे रहा होगा। 'माँ'का अर्थ 'माँ दूध दो या कुछ और करो' आदि। इस प्रकार क्रिया पहले आयी, संज्ञा बादमें। साथ ही व्याकरणिक दृष्टिसे ये शब्द न होकर वाक्य रहे होंगे। फिर और विकास होनेपर कई प्रकारके शब्दोंको मिलाकर छोटे-छोटे वाक्य बने होंगे, किन्तु वाक्योंमें अलग-अलग शब्दादिका बोलनेवालोंको पता न रहा होगा। धीरे-धीरे ज्यों-ज्यों विचारोंके स्तरपर सम्पर्क बढ़ता गया होगा, भाषा विकसित होती गयी होगी। प्रो० रेवेज़-ने बाल-मनोविज्ञान, पशु-मनोविज्ञान तथा आदिम अविकसित मनुष्यके मनोविज्ञानके सहारे जो यह सिद्धान्त रखा है, पूर्णतः तर्क-सम्मत है, किन्तु इसमें मनोवैज्ञानिक ढंगसे उत्पत्ति और विकासके सामान्य सिद्धान्तोंका ही विवेचन है। हम शायद अधिक निकट हो-कर उत्पत्ति और विकासके और ठोस रूपको जानना चाहते हैं। इसीलिए इनके सिद्धान्तों-को देखनेके बाद भी कासिडी आदि विद्वानोंने भाषा-उत्पत्तिके प्रश्नको अनिर्णीत माना है।

(११) **समन्वित रूप**—पिछली सदीके प्रसिद्ध भाषा-विज्ञानविद् स्वीटने उपर्युक्त सिद्धान्तों-में कुछके समन्वयके आधारपर भाषाकी उत्पत्तिपर प्रकाश डालनेका प्रयास किया। उनका कहना था कि भाषा प्रारम्भिक रूपमें भाव संकेत या **इंगित** (gesture) और **ध्वनि-समवाय** (sound group) दोनोंपर आधारित थी। ध्वनि-समवायके आधारपर ही शब्दोंका आगे विकास हुआ। आरम्भिक शब्द-समूह स्वीटके अनुसार तीन प्रकारके शब्दोंका था— (१) पहले प्रकारके शब्द **अनुकरणात्मक** (imitative) थे, जैसे मिस्री माउ (बिल्ली, जो म्याउँ-म्याउँ करती है), सं० काक (जो का-का करता है), अं० cuckoo, हिन्दी घुग्घू आदि। स्वीटका यह भी कहना था कि आवश्यक नहीं है कि इन ध्वनियों-के अनुकरणपर आधारित शब्द पूर्णतः आधार ध्वनिके अनुरूप हों। उनमें थोड़ासा भी सादृश्य हो सकता है। (२) दूसरे प्रकारके शब्द **भावावेशव्यंजक** या **मनोभावाभिव्यंजक** (interjectional) रहे होंगे। व्याकरणमें विस्मयादिबोधकके अन्तर्गत रखे जानेवाले शब्द इसी श्रेणीके हैं। जैसे ओह, आह, धिक्, हुश्, हाय तथा वाह आदि। इस वर्गमें धातु भी होते हैं, जैसे डैनिश fy, सं० पृ, पी, धिक्कारना आदि। (३) तीसरे प्रकारके शब्दोंको स्वीटने **प्रतीकात्मक** (symbolic) कहा है। भाषाके आरम्भिक शब्द-समूहमें इस वर्गके शब्दोंकी संख्या बहुत बड़ी रही होगी और इसमें अनेक प्रकारके शब्द रहे होंगे। कुछ संज्ञा, सर्वनाम और क्रिया शब्दोंके उदाहरण स्पष्टीकरणके साथ यहाँ दिये जा रहे हैं। **प्रतीकात्मक** शब्द उसे कहते हैं, जिसका संयोगसे या किसी अत्यन्त सामान्य और थोड़े सम्बन्धसे किसी अर्थसे सम्बन्ध हो जाता है, और वह उनका प्रतीक बन जाता है। उदाहरणार्थ बच्चे यों ही मामा, पापा, बाबा, जैसे शब्द बहुत छोटी अवस्थामें बोलने लगते हैं। माँ-बाप उनका प्रयोग प्रायः अपने लिये समझ लेते हैं और फल यह होता है कि विभिन्न अर्थोंके साथ उनका सम्बन्ध हो जाता है और वे शब्द उनके प्रतीक बन जाते हैं। भाषा-विज्ञानमें जिन्हें नर्सरी शब्द कहते हैं, प्रायः इसी प्रकारके होते हैं। इनमें अधिकांश-में आद्य ध्वनियाँ ओष्ठ्य होती हैं और इनके अर्थ माता, पिता, चाचा, चाची, दाई आदि ऐसे व्यक्ति होते हैं, जो बच्चेकी देख-रेख करते हैं। अंग्रेज़ी mamma, papa, abba, mother, father, brother, dad; सं० माता, पिता, भ्राता, तात, मामा; ग्रीक meter, phrater, pater, लैटिन mater amita, pater, frater; जर्मन muhme, bruder, vater; फ़ारसी मादर, पिदर, बिरादर; अल्बानियन ama; पुरानी नार्स amma; असीरियन ummu; हिब्रू em; स्लावैनिक beba, tata, ded, dyadya; हिन्दी माता, पिता, बाबा,

दादा, भाई, बाई, दाई; टांगा bama; तुर्की बाबा; इटैलियन babbo; बलगेरियन baba; सर्बियन baba; बास्क ama तथा माँचू ama, eme आदि मूलतः इसी प्रकारके शब्द रहे होंगे। बहुतसे सर्वनामोंका भी निर्माण इसी प्रकार होता है। सं० त्वम्, ग्रीक to, लैटिन tu, हिन्दी तू, जैसे शब्दोंके उच्चारणमें सामनेके किसी व्यक्तिकी ओर मुँहसे संकेत करनेका भाव है। बहुतसी प्राचीन भाषाओंमें यह और वहके लिए पाये जानेवाले सर्वनामोंमें भी इसी प्रकारकी प्रतीकात्मकता दिखाई पड़ती है, जैसे अंग्रेज़ी this, that, संस्कृत इदम्, अदस् तथा जर्मन dies, das आदि। बहुतसे क्रिया शब्दों या धातुओंके निर्माणकी प्रक्रिया भी ऐसी ही है। पीना साँस अन्दर लेना है। लगता है कि प्रारम्भमें पीनेके लिए साँस अन्दर लेकर इंगित किया जाता रहा होगा, इसी आधारपर संस्कृत पिबामि या लैटिन bibere जैसी क्रियाएँ बनीं। अंग्रेजीके blowमें स्पष्टतः फूंकनेकी क्रिया है। 'पीना' अर्थ रखनेवाली अरबी धातु 'शरब' भी इसी प्रकारकी है। 'शरबत' तथा 'शराब'आदि शब्द इसीकी देन हैं। इन तीन प्रकारके शब्दोंके अतिरिक्त कुछ शब्द ऐसे भी होते हैं, जो किन्हीं दो वर्गोंमें आते हैं। स्वीटके अनुसार अंग्रेजीका 'hush' ऐसा ही शब्द है, जो भावाभिव्यंजक होता हुआ अंशतः या पूर्णतः प्रतीकात्मक भी है। इस प्रकार आरम्भमें बहुतसे शब्द बने होंगे, किन्तु संसारमें जितने पैदा होते हैं, सभी नहीं रह जाते हैं। वनस्पति और जीवों आदिमें, जैसे **योग्यतमावशेष** (survival of the fittest)का सिद्धांत चलता है, वैसे ही शब्दोंमें चलता है। फल यह हुआ होगा कि बोलने, सुनने और अपने अर्थको स्पष्टतापूर्वक व्यंजित करने इन तीनों ही कसौटियोंपर, जो खरे उतरे होंगे, वे ही भाषामें कुछ दिनके लिए स्थान प्राप्त कर सके होंगे।

इस प्रसंगमें एक-दो प्रश्न और भी विचारणीय हैं। आरम्भके शब्द तो स्थूल'वस्तुओं या विचारोंके द्योतक रहे होंगे, पर भाषामें सूक्ष्मताओंको व्यक्त करनेवाले शब्द भी बहुत अधिक हैं। ऐसे शब्द आदिम मनुष्यके वंशके हैं नहीं, फिर ये कहाँसे आये। इनका बादमें विकास हुआ होगा, सादृश्य आदिके आधारपर। इस प्रकारके निर्माण आज भी होते हैं। 'मक्खन'के आधारपर 'मक्खन लगाना'का प्रयोग 'बहुत चापलूसी करने'के लिए होता है। स्वीटके अनुसार दक्षिणी अफ्रीकाकी सासुतो भाषामें भिनभिनानेके आधारपर मक्खीको न्त्सी-न्त्सी कहते थे। अब इस शब्दका वहाँ मक्खीकी तरह चारों ओर चक्कर लगाकर चापलूसी करनेवाले तथा चूसनेवालेके अर्थमें भी प्रयोग होता है। सूक्ष्म भावके अतिरिक्त नवज्ञात (स्थूल) वस्तुओंके नाम भी प्रायः इसी प्रकार सादृश्य आदिके कारण पुराने शब्दोंके आधारपर रख लिये गये होंगे। अब भी ऐसा होता है। आस्ट्रेलियाके आदिम निवासियोंकी भाषामें 'मूयूम' शब्दका अर्थ 'स्नायु' था। पुस्तकसे वे अपरिचित थे। जब पहले-पहले उन लोगोंने पुस्तक देखी तो स्नायुकी तरह खुलने बंद होनेके कारण, उसे भी 'मूयूम' कहने लगे, इस प्रकार 'मूयूम' शब्द पुस्तकका भी वाचक हो गया। इस प्रकारके शब्दोंका विकास उपचार (यहाँ उपचार,-का अर्थ है ज्ञातके आधारपर नवज्ञात या 'अपूर्व ज्ञात'का परिचय, व्याख्या या नामकरण। अंग्रेज़ीमें metaphor शब्द है किन्तु, उपचार अधिक व्यापक है) के कारण होता है। इन औपचारिक या लाक्षणिक प्रयोगोंके कारण ही शब्दका अर्थ कहाँसे कहाँ चला आता है। यों उपचारके अतिरिक्त भी और रूपोंमें अर्थका विस्तार, संकोच और आदेश (दे०) **अर्थ परिवर्तन** आदि होता है।

इस प्रकार स्वीटके अनुसार भावाभिव्यंजक, अनुकरणात्मक तथा प्रतीकात्मक शब्दोंसे भाषा शुरू हुई। फिर उपचारके कारण बहुतसे शब्दोंका अर्थविकसित होता गया या नये शब्द विकसित होते गये। नवीनतम खोजोंके प्रकाशमें स्वीटके मतमें कुछ और बातें जोड़

लेनेकी आवश्यकता है। मेरा आशय उन सिद्धान्तोंसे है जिनमें कुछ तथ्यकी बातें हैं। ऊपर इनका परिचय दिया जा चुका है। निष्कर्षतः हम कह सकते हैं, जितनी खोजें हुई हैं, उनके प्रकाशमें केवल इतना ही कहना सम्भव है कि **भाषाकी उत्पत्ति भावाभिव्यंजक, अनुकरणात्मक तथा प्रतीकात्मक शब्दोंसे हुई और इसमें इंगित-सिद्धान्त, संगीत सिद्धान्त एवं सम्पर्क-सिद्धान्तसे भी सहायता मिली**। आगे चलनेपर नवाभिव्यक्तिकी आवश्यकता योग्यतमावशेष सिद्धान्त एवं अर्थ (उपचार आदि) तथा ध्वनिमें परिवर्तनके कारण भाषामें तेजीसे परिवर्तन आता गया और यह परिवर्तन इतना विशाल और बहुमुखी था कि इसे भेदकर इसके पूर्वकी भाषाके रूपके सम्बन्ध निश्चयके साथ कुछ और अधिक कहना अब प्रायः सम्भव नहीं है।

(आ) **परोक्ष मार्ग**—ऊपर हम लोगोंने सीधी शैलीसे 'भाषाकी उत्पत्ति'के प्रश्नपर विचार किया। इन सारे सिद्धान्तों और निष्कर्षोंके बावजूद भी विद्वानोंका कहना है कि भाषाकी उत्पत्तिका प्रश्न अभीतक सुलझा नहीं है। इसीलिए कुछ लोग 'उलटी शैली' या 'परोक्ष मार्ग'से आदिम भाषाके स्वरूप परिचयपर ही अधिक बल देते हैं। इससे मूल समस्या 'भाषाका उद्‌गम' या 'ध्वनि और अर्थके सम्बन्ध' आदिपर तो प्रकाश नहीं पड़ता, पर प्रारंभिक भाषाका विविध दृष्टिकोणोंसे परिचय अवश्य मिल जाता है। यह मार्ग तीन बातोंपर आधारित किया जा सकता है—

(१) **बच्चोंकी भाषा**—कुछ लोगोंका विचार है कि व्यक्तिगत विकासकी ही भाँति **सामूहिक या जातीय विकास भी होता है। इसीलिए व्यक्तिगत विकासके अध्ययनसे सामूहिक विकासपर प्रकाश** पड़ सकता है। यहाँ इसका आशय यह है कि ऐसे लोगोंके अनुसार मानवताने भाषा उसी प्रकार सीखी होगी, जैसे एक बच्चा सीखता है। कुछ लोगोंने इसी आधारपर भाषाके आरम्भपर प्रकाश भी डाला है; पर सच पूछा जाय तो दोनोंमें कोई महत्त्वपूर्ण समानता नहीं है। बच्चोंको एक बनी-बनायी भाषा सीखनी होती है, पर दूसरी ओर भाषाके आरम्भके समय लोगोंको भाषाका आविष्कार भी करना रहा होगा, केवल सीखना ही नहीं। आज एक विद्यार्थी किसी टेक्निकल स्कूलमें जाकर दो-एक वर्षमें किसी वस्तुका निर्माण करना सीख सकता है। उसके सीखनेका रास्ता वैसा दुर्गम नहीं होगा, जैसा कि उस वस्तुके आविष्कारक या प्रथम बनानेवालेका रहा होगा। भाषाके सम्बन्धमें भी ठीक यही बात है। बच्चा भाषा सीखता है, वह आविष्कार नहीं करता, अतः उसके आधारपर भाषाके आरम्भके विषयमें पता लगानेका प्रयास हास्यास्पद ही होगा। हाँ, एक बात अवश्य महत्त्वपूर्ण है। बच्चा आरम्भके वर्षोंमें निरर्थक ध्वनियोंका उच्चारण करता है और उसे दूसरोंके अनुकरणका कुछ भी ध्यान नहीं रहता। उस समय उसके बोलनेकी दशासे भाषाकी आरम्भिक दशाका कुछ अनुमान लगाया जा सकता है। कभी-कभी बच्चे उस समय पूर्णतः नवीन शब्द भी गढ़ डालते हैं, जो आजकी भाषाकी विकसित दशामें तो ग्रहण नहीं किये जाते, पर आरम्भिक दशामें ऐसे शब्दोंका लिया जाना असम्भव नहीं कहा जा सकता।

(२) **असभ्य जातियोंकी भाषा**—असभ्य तथा अत्यन्त पिछड़े हुए लोगोंकी भाषाके विश्लेषणसे भी भाषाके आरम्भिक रूपपर प्रकाश पड़ सकता है; पर, बड़ी ही सतर्कतासे इसके आधारपर निष्कर्ष निकालना चाहिये। सच तो यह है कि सभ्य भाषाओंसे कुछ ही पीढ़ी पूर्वकी ही ये भाषाएँ हो सकती हैं, अतः इनको बिलकुल आरम्भिक भाषा नहीं माना जा सकता। असभ्यसे असभ्य जातिकी भाषा भी जाने कितनी ही सदी पुरानी होगी। इनसे इतना ही लाभ हो सकता है कि सभ्य भाषाओंकी तुलनामें इनके अन्तर देखकर इनकी तुलनामें और पहलेकी भाषाकी दशाका अनुमान लगाया जा सकता है।

(३) **आधुनिक भाषाओंका इतिहास**—भाषा-

की आरम्भिक दशाके विषयमें कुछ जाननेका यह सबसे सीधा, सच्चा और महत्त्वपूर्ण पथ है। ऊपर हमलोगोंने देखा कि कुछ लोगोंने भाषाके आरम्भके विषयमें कुछ सिद्धान्त दिये हैं, जिनके आधारपर आरम्भसे चलकर हम अन्ततक पहुँचते हैं। यहाँ हमारा रास्ता उससे ठीक उलटा है। हम अन्तमें शुरू करके आरम्भ तक पहुँचना चाहते हैं। इस पथके सच्चा होनेका निश्चय इसलिए है कि हमारा आरम्भ अनुमानपर आधारित न होकर निश्चित दशापर आधारित होगा, जबकि उन सिद्धान्तोंमें कुछ अपवादोंको छोड़कर शेष अनुमान ही अनुमान था। आजकी किसी भी भाषाको लें, उसका अध्ययन करें और फिर पीछे उसके इतिहासका वहाँतक अध्ययन करते जायँ, जहाँतक सामग्री मिले। इस अध्ययनके आधारपर भाषाके विकासका सामान्य सिद्धान्त निकाल लें। उन सिद्धान्तोंके प्रकाशमें आजकी भाषाकी तुलना उसके प्राचीनतम उपलब्ध रूपसे करें और देखें कि कौनसी बातें आजकी भाषामें नहीं हैं, पर प्राचीनमें हैं। इसके बाद हम यह आसानीसे कह सकते हैं कि वे विशेषताएँ यदि भाषाके प्राचीनतम उपलब्ध रूपमें दस प्रतिशत हैं, तो भाषाके बिलकुल प्रारम्भमें सत्तर या अस्सी प्रतिशत रही होंगी। उदाहरणके लिए हिन्दी (खड़ी बोली)को लें। इसके अध्ययनके उपरान्त पुरानी हिन्दी, अपभ्रंश, प्राकृत, पालि, संस्कृत और वैदिक संस्कृतका अध्ययन करके विकासके सिद्धान्तोंपर विचार करें। फिर खड़ीबोलीकी तुलना वैदिक संस्कृतसे ध्वनि, व्याकरणके रूप, शब्द-समूह, वाक्य आदिके विचारसे करके वैदिक संस्कृतकी वे विशेषताएँ निश्चित करें, जो या तो खड़ी बोलीमें बिलकुल नहीं हैं, या हैं भी तो बहुत कम। प्राचीन भारतीय भाषामें निश्चित ही उन विशेषताओंका विशेष स्थान रहा होगा, जो घटते-घटते वैदिक संस्कृतमें कुछ शेष थीं और खड़ी बोलीतक आते-आते प्रायः नहींके बराबर रह गयी हैं।

इसी प्रकार किये गये अध्ययनके आधारपर भाषाओंके प्रारम्भिक स्वरूपपर यहाँ अत्यन्त संक्षेपमें प्रकाश डाला जा रहा है।

आदिम भाषाका स्वरूप : (क) **ध्वनि**—किसी भाषाके इतिहासके अध्ययनसे यह पता चलता है कि ध्वनियाँ धीरे-धीरे सरल होती जाती हैं। इस बातपर कुछ विस्तारसे ध्वनिके अध्यायमें विचार किया गया है। यहाँ इस सरल होनेसे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि आरम्भिक भाषामें आजकी विकसित भाषाकी तुलनामें ध्वनियाँ बहुत कठिन रही होंगी। यहाँ कठिनसे आशय उच्चारणमें कठिन संयुक्त व्यंजन (जैसे आरम्भमें प्स, क्न, ह्म) आदि प्राचीन और पिछड़ी अफ्रीकी भाषाओंमें क्लिक (दे०) ध्वनियाँ अधिक हैं। अपने यहाँ भी इसके रूप हैं। इससे यह परिणाम निकाला जा सकता है कि आरम्भकी भाषामें क्लिक ध्वनियाँ भी अधिक रही होंगी। वैदिक संस्कृत और हिन्दीकी तुलनासे यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि अपेक्षाकृत अब शब्द छोटे हो गये हैं। अन्य भाषाओंमें भी यही बात मिलती है। इससे यह ध्वनि निकलती है कि भाषाकी आरम्भिक अवस्थामें शब्द बहुत बड़े रहे होंगे। होमरिक ग्रीक तथा वैदिक संस्कृतमें संगीतात्मक स्वराघातकी उपस्थितिके यथेष्ट प्रमाण मिलते हैं। अफ्रीकाकी असंस्कृत भाषाओंमें भी यह बात पर्याप्त मात्रामें पायी जाती है, पर अब धीरे-धीरे उसका लोप हो रहा है। इससे स्पष्ट है कि आरम्भिक अवस्थामें लोग बोलनेकी अपेक्षा गाते ही अधिक रहे होंगे, अर्थात् आरम्भिक भाषामें संगीतात्मक स्वराघात (सुर) बहुत अधिक रहा होगा। (ख) **व्याकरण**—प्रारम्भिक भाषामें शब्दोंके अपेक्षाकृत अधिक रूप रहे होंगे, जो बादमें सादृश्य या ध्वनि-परिवर्तन आदिके कारण आपसमें मिलकर कम हो गये। भाषाके ऐतिहासिक अध्ययनमें हम देखते हैं कि आधुनिक भाषाओंकी तुलनामें पुरानी भाषाओंमें सहायक क्रिया या परसर्ग आदि जोड़नेकी आवश्यकता कम

या नहींके बराबर होती है। इसका आशय यह है कि प्रारम्भिक भाषा संश्लेषणात्मक रही होगी, अर्थात् सहायक क्रिया या परसर्ग इत्यादि जोड़नेकी उसमें बिलकुल ही आवश्यकता न रही होगी। अपनेमें पूर्ण नियमोंकी उस समय कमी रही होगी और अपवादोंका आधिक्य रहा होगा। उन लोगोंका मस्तिष्क व्यवस्थित न रहा होगा, अतः भाषामें भी व्यवस्थाका अभाव रहा होगा। इससे यह भी निष्कर्ष निकलता है कि बिलकुल आरम्भमें व्याकरण या भाषा-नियम नामकी कोई चीज़ ही न रही होगी। **(ग) शब्द-समूह**—भाषाका जितना ही विकास होता है, उसकी अभिव्यंजना-शक्ति उतनी ही बढ़ती जाती है। साथ ही सामान्य और सूक्ष्म भावनाओंके प्रकट करनेके लिए शब्द बन जाते हैं। इसका आशय यह है कि आरम्भिक भाषामें अभिव्यंजना-शक्ति अत्यल्प रही होगी, और सूक्ष्म तथा सामान्य भावनाओंके लिए शब्दोंका एकान्त अभाव रहा होगा। आज भी कुछ असंस्कृत भाषाएँ हैं, जो लगभग इसी अवस्थामें हैं। उत्तरी अमेरिकाकी चेरोकी भाषामें सिर धोनेके लिए, हाथ धोनेके लिए, शरीर धोनेके लिए अलग-अलग शब्द हैं; पर, 'धोने'के सामान्य अर्थको प्रकट करनेवाला एक भी शब्द नहीं है। टस्मानियाकी मूल भाषामें भिन्न-भिन्न प्रकारके सभी पेड़ोंके लिए अलग-अलग शब्द हैं, पर, 'पेड़'के लिए कोई शब्द नहीं है। उनके पास कड़ा, नरम, ठंडा और गरम आदिके लिए भी शब्द नहीं हैं। इसी प्रकार जूलू लोगोंकी भाषामें लाल गाय, काली गाय और सफेद गायके लिए शब्द हैं, पर गायके लिए नहीं। इससे यह स्पष्ट परिणाम निकलता है कि आरम्भमें शब्द केवल स्थूल और विशिष्टके लिए ही रहे होंगे, सामान्य और सूक्ष्मके लिए नहीं। ऊपरकी बातोंसे यह भी निष्कर्ष निकलता है कि आरम्भके कुछ दिनोंके बाद शब्दोंका बाहुल्य हो गया होगा। कुछ वर्तमान असभ्य भाषाओंके आधारपर इस बाहुल्यका एक और कारण यह भी दिया जा सकता है कि वे लोग अंधविश्वासी रहे होंगे, अतः सभी शब्दोंको सर्वदा प्रयोगमें लाना अनुचित माना जाता रहा होगा। उन्हें भय रहा होगा कि देवता कुपित न हो जायँ। अतः एक ही वस्तु या कार्यके लिए भिन्न-भिन्न अवसरोंपर भिन्न-भिन्न शब्द प्रयोगमें आते रहे होंगे।

(घ) वाक्य—भाषा वाक्योंपर आधारित रहती है। वाक्यके शब्दोंका विश्लेषण करके हमने उन्हें अलग-अलग कर लिया है और उनके नियमोंका अध्ययन कर व्याकरण बनाया है। यह क्रिया भाषा और उसके साथ हमारे विचारोंके बहुत विकसित होनेपर की गयी है। आरम्भमें इन शब्दोंका हमें पता न रहा होगा और वाक्य एक इकाईके रूपमें रहे होंगे। शब्दोंके रूपमें उनका 'व्याकरण' या विश्लेषण नहीं हुआ रहा होगा। उत्तरी अमेरिकाके आदिवासियोंकी कुछ बहुत पिछड़ी भाषाओंमें कुछ दिन पूर्वतक वाक्योंमें अलग-अलग शब्दोंकी कल्पना तक नहीं की गयी थी।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भाषा अपने प्रारम्भिक रूपमें संगीतात्मक थी। उसमें वाक्य शब्दकी भाँति थे। अलग-अलग शब्दोंमें वाक्यके विश्लेषणकी कल्पना नहीं की गयी थी। स्पष्ट अभिव्यंजनाका अभाव था। कठिन ध्वनियाँ अधिक थीं। स्थूल और विशिष्टके लिए शब्द थे। सूक्ष्म और सामान्यका पता नहीं था। व्याकरण सम्बन्धी नियम नहीं थे। केवल अपवाद ही अपवाद थे। इस प्रकार भाषा प्रत्येक दृष्टिसे लँगड़ी और अपूर्ण थी।

भाषाकी विशेषताएँ—भाषाकी प्रकृतिकी प्रमुख विशेषताएँ निम्नांकित हैं—**(क) भाषा पैत्रिक सम्पत्ति नहीं है**—कुछ लोगोंका विश्वास है कि भाषा पैत्रिक सम्पत्ति है। पिताकी भाषा पुत्रको पैत्रिक सम्पत्तिकी भाँति अनायास ही प्राप्त होती है। पर यथार्थतः ऐसी बात नहीं है। यदि किसी भारतीय बच्चेको दो-तीन वर्षकी अवस्थासे ही फ्रांसमें

पाला जाय तो वह हिन्दी या हिन्दुस्तानी आदि न समझ या बोल सकेगा और फ्रेंच ही उसकी मातृभाषा या अपनी भाषा होगी। यदि भाषा पैत्रिक सम्पत्ति रहती तो भारतीय लड़का भारतसे बाहर कहीं भी रहकर बिना प्रयासके हिन्दी समझ और बोल लेता। पिछले दशक में लखनऊके अस्पतालमें लगभग १२ वर्षका लड़का लाया गया था, जो मनुष्यकी तरह कुछ भी नहीं बोल पाता था। खोज करनेपर पता चला कि उसे कोई भेड़िया बहुत पहले उठा ले गया था और तबसे वह उसी भेड़ियेके साथ रहा। उसमें सभी आदतें भेड़िये जैसी थीं। उसके मुँहसे निःसृत ध्वनि भी कुछ भेड़ियेसे ही मिलती-जुलती थी। यदि **भाषा पैत्रिक सम्पति होती तो वह अवश्य** मनुष्यकी तरह बोलता, क्योंकि वह गूंगा नहीं था। **(ख) भाषा अर्जित सम्पत्ति है**—ऊपरके दोनों उदाहरणोंमें हम देख चुके हैं कि अपने चारों ओरके समाज या वातावरणसे मनुष्य भाषा सीखता है। भारतवर्षमें उत्पन्न शिशु फ्रांसमें रहकर इसीलिए फ्रेंच बोलने लगता है कि उसके चारों ओर फ्रेंचका वातावरण रहता है। इसी प्रकार भेड़ियेका साथी लड़का एक ओर वातावरणके अभावसे मनुष्यकी कोई भाषा नहीं सीख सका और दूसरी ओर भेड़ियेके साथ रहनेसे वह उसीकी ध्वनिका कुछ रूपोंमें अर्जन कर सका। अतएव यह स्पष्ट है, कि भाषा आसपासके लोगोंसे अर्जित की जाती है, और यह पैत्रिक न होकर अर्जित सम्पत्ति है। **(ग) भाषा आद्यन्त सामाजिक वस्तु है**—ऊपर हम भाषाको अर्जित सम्पत्ति कह चुके हैं। प्रश्न यह है कि व्यक्ति इस सम्पत्तिका अर्जन कहाँसे करता है। इसका एकमात्र उत्तर है समाजसे। इतना ही नहीं, भाषा पूर्णतः आदिसे अंततक समाजसे सम्बन्धित है। उसका विकास समाजमें हुआ है, उसका अर्जन समाजसे होता है और उसका प्रयोग भी समाजमें ही होता है। और इसीलिए वह एक सामाजिक संस्था है। यों, अकेलेमें हम भाषाके सहारे सोचते हैं जहाँ समाज नहीं रहता और न तो वहाँ भाषा समाजकी वस्तु है। **(घ) भाषा परम्परागत है, व्यक्ति उसका अर्जन कर सकता है, उसे उत्पन्न नहीं कर सकता**—भाषा परम्परासे चली आ रही है, व्यक्ति उसका अर्जन परम्परा और समाजसे करता है। एक व्यक्ति उसमें परिवर्तन आदि तो कर सकता है, किन्तु उसे उत्पन्न नहीं कर सकता। (सांकेतिक या गुप्त आदि भाषाओंकी बात यहाँ नहीं की जा रही है)। यदि कोई उसका जनक और जननी है तो समाज और परम्परा। **(ङ) भाषाका अर्जन अनुकरण द्वारा होता है**—ऊपरकी बातोंमें भाषाके अर्जित एवं समाज-सापेक्ष होनेकी बात हम कह चुके हैं। यहाँ 'अर्जन'की विधिके सम्बन्धमें इतना और कहना है कि भाषाको हम 'अनुकरण' द्वारा सीखते हैं। शिशुके समक्ष माँ दूधको 'दूध' कहती है। वह सुनता है और धीरे-धीरे उसे स्वयं कहनेका प्रयास करता है। प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक अरस्तूके शब्दोंमें अनुकरण मनुष्यका सबसे बड़ा गुण है। वह भाषा सीखनेमें भी उसी गुणका उपयोग करता है। **(च) भाषा चिर परिवर्तनशील है**—यथार्थतः भाषा केवल मौखिक भाषाको कहना चाहिये। उसका लिखित रूप तो उसी मौखिकपर आधारित है और उसीके पीछे-पीछे चलता है। यह मौखिक भाषा स्वयं अनुकरणपर आधारित है, अतः दो आदमियोंकी भाषा बिलकुल एकसी नहीं हो सकती। अनुकरण-प्रिय प्राणी होनेपर भी मनुष्य अनुकरणकी कलामें पूर्ण नहीं है। चन्द्रभूषण यदि श्रीनिवाससे भाषा सीख रहा है तो वह अवश्य ही ठीक उसी प्रकार नहीं बोलेगा, जिस प्रकार श्रीनिवास बोलता है। दोनोंमें कुछ-न-कुछ अन्तर रहेगा। अनुकरण का 'पूर्ण' या 'ठीक' न होना कई बातोंपर आधारित है। **भाषाके दो आधार होते हैं:** (१) शारीरिक (भौतिक) और (२) मानसिक। परिवर्तनमें ये दोनों ही कार्य करते हैं। अनुकरणकर्त्ताकी शारीरिक और मानसिक परिस्थिति

सर्वदा ठीक वैसी ही नहीं रहती है, जैसी कि उसकी रहती है जिसका अनुकरण किया जाता है। इस प्रकार प्रत्येक अनुकरणमें कुछ-न-कुछ विभिन्नताका आ जाना उतना ही स्वाभाविक है, जितना अनुकरण करना। ये साधारण और छोटी-छोटी विभिन्नताएँ ही भाषामें परिवर्तन उपस्थित किया करती हैं। इसके अतिरिक्त प्रयोगसे घिसने और बाहरी प्रभावोंसे भी परिवर्तन होता है। इस प्रकार भाषा प्रति पल परिवर्तित होती रहती है। **(छ) भाषाका कोई अन्तिम स्वरूप नहीं होता**——जो वस्तु बन-बनाकर पूर्ण हो जाती है, उसका अन्तिम स्वरूप होता है; पर भाषाके विषयमें यह बात नहीं है। वह कभी पूर्ण नहीं हो सकती। अर्थात् यह कभी नहीं कहा जा सकता कि अमुक भाषाका अमुक रूप अन्तिम है। यहाँ यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि भाषासे हमारा अर्थ जीवित भाषासे है। मृत भाषाका अन्तिम रूप तो अवश्य ही अन्तिम होता है, पर जीवित भाषामें यह बात नहीं है। जैसा कि अन्य सभीके लिए सत्य है, भाषाके विषयमें असत्य नहीं है कि परिवर्तन और अस्थैर्य ही उसके जीवनका द्योतक है। पूर्णता और स्थिरता मृत्यु है, या मृत्यु ही पूर्णता या स्थिरता है। **(ज) भाषाकी धारा स्वभावतः कठिनतासे सरलताकी ओर जाती है**——सभी भाषाओंके इतिहाससे भाषाके कठिनतासे सरलताकी ओर जानेकी बात स्पष्ट है। यों भी इसके लिए सीधा तर्क हमारे पास यह है, कि मनुष्यका यह जन्मजात स्वभाव है कि कम-से-कम प्रयासमें अधिक-से-अधिक लाभ उठाना चाहता है। इसी कम प्रयासके प्रयासमें वह 'सत्येन्द्र'को 'सतेन्द्र' और फिर 'सतेन' कहने लगता है और एक अवस्था ऐसी आ जाती है, जब वह केवल 'सति' कहकर ही काम चलाना चाहता है। यह उदाहरण 'ध्वनि'से सम्बन्धित है। पर व्याकरणके रूपोंके बारेमें यही बात है पुरानी भाषाओं (ग्रीक, संस्कृत आदि)में रूपों और अपवादोंका बाहुल्य है पर आधुनिक भाषाओंमें रूप कम हो गये हैं; साथ ही नियम बढ़ गये हैं और अपवाद कम हो गये हैं और आगे भी कम होते जा रहे हैं। भाषा पानीकी धारा है, जो स्वभावतः ऊँचाई(कठिनाई)से नीचे(सरलता)की ओर जाती है। कहा जाता है कि आजकी हिन्दी कठिनताकी ओर जा रही है, पर सचमुच यह बात नहीं है। साहित्यिक भाषा कृत्रिम भाषा है, स्वाभाविक नहीं। और यदि वह जनभाषासे दूर जाने लगे, तब तो और भी अधिक कृत्रिम हो जाती है। कठिनताकी ओर जानेवाली हिन्दीके विषयमें भी यही बात है। जीवित भाषा हिन्दी कभी उस कठिन चढ़ाईपर नहीं जा सकती। कुछ विद्वान् भले ही सड़कको 'रथ्या', नहरको 'कुल्या' और स्टेशनको 'धूम्र-शकट-विश्रामस्थल' कह लें, किंतु हिन्दीकी स्वाभाविक गतिमें तो ये शब्द भविष्यमें कदाचित् और सरल होकर सरक (सड़क), नेर (नहर) और टीसन (स्टेशन) आदि हो जायँगे। मनुष्यकी स्वाभाविक प्रवृत्तिपर इस द्रविड़ प्राणायामका लादना कभी भी सफल नहीं हो सकता, और न तो विश्वके किसी भी देशमें सफल हुआ है। **(झ) भाषा स्थूलतासे सूक्ष्मता और अप्रौढ़तासे प्रौढ़ताकी ओर जाती है**——भाषाकी उत्पत्तिपर विचार करते समय कहा जा चुका है कि आरम्भमें भाषा स्थूल थी, सूक्ष्म भावोंके लिए या विचारोंको गहराईसे व्यक्त करनेके लिए अपेक्षित सूक्ष्मता उसमें नहीं थी, फिर धीरे-धीरे उसने इसकी प्राप्ति की। इसी प्रकार दिन-पर-दिन भाषामें विकास होता रहा है, और वह अप्रौढ़से प्रौढ़ और प्रौढ़से प्रौढ़तर होती जा रही है। यह एक सामान्य सिद्धान्त तो है, किन्तु प्रयोगपर भी निर्भर करता है। आजकी हिन्दीकी तुलनामें कलकी हिन्दी अधिक सूक्ष्म और प्रौढ़ होगी, किन्तु संस्कृतकी तुलनामें आजकी हिन्दीको सूक्ष्म और प्रौढ़ नहीं कह सकते, क्योंकि उन अनेक क्षेत्रोंमें प्रयुक्त होकर अभीतक हिन्दी विकसित नहीं हुई, जिनमें संस्कृत

हजारों वर्ष पूर्व हो चुकी थी। (ञ) **भाषा संयोगावस्थासे वियोगावस्थाकी ओर जाती है**—पहले लोगोंका विचार था कि भाषा वियोग (व्यवहिति या विश्लेष)से संयोग (संहिति या संश्लेष)की ओर जाती है। कुछ लोगोंका यह भी मत रहा है कि वारी-वारीसे भाषाओंकी जिन्दगी दोनों स्थितियोंसे गुजरती रहती है। किन्तु अब ये मत प्रायः भ्रामक सिद्ध हो चुके हैं। नवीन मतके अनुसार भाषा संयोगसे वियोगकी ओर जाती है। संयोगका अर्थ है मिली होनेकी स्थिति, जैसे 'रामः गच्छति'। वियोगका अर्थ है अलग हुई स्थिति, जैसे 'राम जाता है।' संस्कृतमें केवल 'गच्छति' (संयुक्त रूप)से काम चल जाता था, पर हिन्दीमें 'जाता है' (वियुक्त रूप)का प्रयोग करना पड़ता है।

भाषाके पक्ष—भाषाके दो आधार या पक्ष हैं : (१) मानसिक पक्ष(psychical aspect), (२) भौतिक या शारीरिक पक्ष(physical aspect)। मानसिक पक्ष भाषाकी आत्मा है, तो भौतिक या शारीरिक पक्ष उसका शरीर। मानसिक पक्ष या आत्मासे आशय है वे विचार या भाव, जिनकी अभिव्यक्तिके लिए वक्ता भाषाका प्रयोग करता है और भाषाके भौतिक पक्षके सहारे श्रोता जिनको ग्रहण करता है। भौतिक पक्ष या शरीरसे आशय है भाषामें प्रयुक्त ध्वनियाँ (वर्ण, सुर और स्वराघात आदि), जो भावों और विचारोंकी वाहिका हैं, जिनका आधार लेकर वक्ता अपने विचारों या भावोंको व्यक्त करता है और जिनका आधार लेकर श्रोता विचारों या भावोंको ग्रहण करता है। उदाहरणार्थ हम 'सुन्दर' शब्द लें। इसका एक अर्थ है। इसके उच्चारण करनेवालेके मस्तिष्कमें वह अर्थ होगा और सुननेवाला भी अपने मस्तिष्कमें इसे सुनकर उस अर्थका ग्रहण कर लेगा। यही अर्थ 'सुन्दर'की आत्मा है। दूसरे शब्दोंमें यही है भाषाका मानसिक पक्ष। पर साथ ही मानसिक पक्ष सूक्ष्म है, अतः उसे किसी स्थूलका सहारा लेना पड़ता है। यह स्थूल है स्+उ+न्+द्+अ+र्। सुन्दरके भाव या विचारको व्यक्त करनेके लिए वक्ता इन ध्वनि-समूहोंका सहारा लेता है, और इन्हें सुनकर श्रोता सुन्दरका अर्थ ग्रहण करता है, अतएव ये ध्वनियाँ उस अर्थकी वाहिका, शरीर या भौतिक पक्ष या आधार हैं। भौतिक पक्ष तत्त्वतः अभिव्यक्तिका साधन है और मानसिक पक्ष साध्य। दोनोंके मिलनेसे भाषा बनती है। कभी-कभी इन्हींको क्रमशः **बाह्य भाषा** (outer speech) तथा **आन्तरिक भाषा** (inner speech) भी कहा गया है। प्रथमको समझनेके लिए शरीर-विज्ञान तथा भौतिक शास्त्रकी सहायता लेनी पड़ती है और दूसरेको समझनेके लिए मनोविज्ञानकी। कुछ लोग वक्ता और श्रोताके मानसिक व्यापारको भी भाषाका मानसिक पक्ष या आधार मानते हैं, और इसी प्रकार बोलने और सुननेकी प्रक्रियाको भी भौतिक आधार या पक्ष। एक दृष्टिसे यह भी ठीक है। यों तो उच्चारणावयवों एवं ध्वनि ले जानेवाली तरंगोंको भी भौतिक आधार या पक्ष तथा मस्तिष्कको मानसिक आधार माना जा सकता है, किन्तु परम्परागत रूपसे भाषा-विज्ञानमें केवल ध्वनियाँ, जो बोली और सुनी जाती हैं, भौतिक पक्ष मानी जाती हैं और भाव और विचार जो वक्ता द्वारा अभिव्यक्त किये जाते हैं और श्रोता द्वारा ग्रहण किये जाते हैं, मानसिक पक्ष माने जाते हैं।

भाषाके विविध रूप—भाषाके विभिन्न रूप होते हैं। ये रूप प्रमुखतः दो आधारोंपर आधारित हैं—**इतिहास** और **भूगोल**। इन्हीं दोनों आधारोंपर भाषाके विभिन्न रूप बनते हैं। भारतमें कभी संस्कृत बोली जाती थी, फिर पालि बोली जाने लगी, फिर प्राकृत और फिर अपभ्रंश। भाषाके ये भेद ऐतिहासिक हैं। एक ही भाषाका इतिहासके एक समयमें जो रूप था उसे 'संस्कृत' कहते हैं और दूसरे समयमें, जो रूप था उसे पालि कहते हैं। इसी प्रकार प्राकृत, अपभ्रंश

भी। किन्तु एक दूसरे प्रकारके भी रूप हैं, जिन्हें **भौगोलिक** रूप कह सकते हैं। अपभ्रंशके बाद संस्कृत, पालि, प्राकृतकी परम्परामें जो रूप (ऐतिहासिक रूप) आया उसे 'आधुनिक भारतीय आर्य भाषा कह सकते हैं, किन्तु इस ऐतिहासिक रूपके आज बहुतसे भौगोलिक रूप हैं, जैसे **पंजाबी, हिन्दी, गुजराती, मराठी** तथा **बंगाली** आदि। भौगोलिक दृष्टिसे अधिक व्यापक रूप **भाषा** है, फिर **बोली**, फिर **स्थानीय बोली** और इसका संकीर्णतम रूप है **व्यक्ति-बोली** या **एक व्यक्तिकी भाषा**।

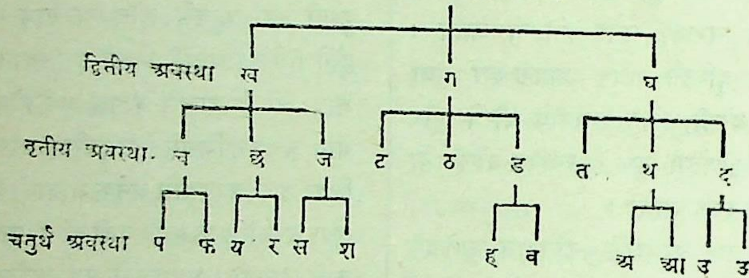
इन दो प्रमुख आधारों——इतिहास, भूगोलके अतिरिक्त भाषाके कुछ अन्य रूपोंको दृष्टिमें रखते हुए कुछ अन्य आधार भी माने जा सकते हैं। इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण आधार है **प्रयोग**। प्रयोग (कौन प्रयोग करता है या किस विषयके लिए प्रयोग होता है) के आधारपर ही **जातीय भाषा, व्यावसायिक भाषा, राज भाषा, राष्ट्र भाषा, साहित्यिक भाषा, गुप्त भाषा** तथा **राजनयिक भाषा** जैसे प्रयोग चलते हैं। दूसरा आधार है **साधुता**। इसी आधारपर **परिनिष्ठित भाषा, टकसाली भाषा, साधु भाषा, असाधु भाषा, शुद्ध भाषा, अशुद्ध भाषा** तथा **विकृत भाषा** जैसे प्रयोग चलते हैं। तीसरा आधार है **प्रचलन**। **प्रचलन**के ही आधारपर **मृत भाषा, जीवित भाषा, अप्रचलित भाषा, अल्पप्रचलित भाषा** जैसे प्रयोग होते हैं। चौथा आधार है **निर्माता**। यदि किसी भाषाका निर्माता समाज है और वह परम्परागत रूपसे चली आ रही है तो उसे भाषा कहते हैं, और यदि एक-दो व्यक्तियोंने उसका निर्माण किया है तो उसे **कृत्रिम भाषा** कहते हैं। इस प्रकार भाषाके विभिन्न रूपोंके उल्लेख्य आधार छः हैं :——(१) इतिहास, (२) भूगोल, (३) प्रयोग, (४) साधुता, (५) प्रचलन और (६) निर्माता।

इन छः आधारोंपर भाषाके सैकड़ों भेद-विभेद हो सकते हैं, यद्यपि प्रयोगमें इतने भेद किये नहीं जाते, फिर भी लगभग तीन दर्जन भेद तो विभिन्न भाषाओंमें काफी प्रचलित हैं। यहाँ इनमेंसे कुछ प्रमुख भेदों या रूपोंपर संक्षेपमें प्रकाश डाला जा रहा है :

(१) **मूल भाषा**——भाषाका यह भेद इतिहासपर आधारित है। भाषाकी उत्पत्ति अत्यन्त प्राचीन कालमें उन स्थानोंमें हुई होगी जहाँ बहुतसे लोग एक साथ रहते रहे होंगे। ऐसे स्थानोंमें किसी एक स्थानकी वह भाषा जो आरम्भमें उत्पन्न हुई होगी तथा आगे चलकर जिससे ऐतिहासिक और भौगोलिक आदि कारणोंसे अनेक भाषाएँ, बोलियाँ तथा उपबोलियाँ आदि बनी होंगी, मूल भाषा कही जायगी। भाषाओंके पारिवारिक वर्गीकरणका आधार यही मान्यता है। संसारमें उतने ही भाषा-परिवार माने जायँगे, जितनी कि मूल भाषाएँ मानी जायँगी। उदाहरणके लिए हम अपने भारोपीय परिवारकी भाषाओंको ही लें तो इसकी मूल भाषा भारोपीय[1] (indo-european) भाषा थी, जिसका प्रादुर्भाव एक साथ रहनेवाले कुछ लोगोंमें हुआ। भौगोलिक परिस्थितियोंने भाषाके विकासमें एवं शाखाओंमें बाँटनेका कार्य वहींसे आरम्भ कर दिया था। मूल स्थानपर कुछ दिनोंतक रहनेके पश्चात् जब वहाँकी जनसंख्या अधिक हो गयी और भोजन आदिकी कमी पड़ने लगी तो कुछ लोग तो संभवतः वहीं रह गये और कुछ लोग कई शाखाओंमें बँटकर अलग-अलग दिशाओंमें चल पड़े। चलनेके समय उन भिन्न-भिन्न शाखाओंकी भाषा कुछ स्थानीय अन्तरोंको छोड़कर प्रायः लगभग एक सी रही होगी। थोड़ी दूर चलकर उन शाखाओंने अपने-अपने अड्डे बनाये होंगे। उन नवीन अड्डोंपर वहाँकी भौगोलिक परिस्थितियोंके कारण उनके जीवनमें परिवर्तन आया होगा और तदनुसार उनकी भाषामें भी

१. नवीन मतानुसार यह मूल भाषा भारोपीय न होकर भारत-हित्ती (दे०) थी, जिसकी दो शाखाएँ थीं भारोपीय और हित्ती।

विकास हुआ होगा। दो-एक सदी या दस-बीस पीढ़ीके उपरान्त अलग-अलग बसनेवाली उन शाखाओंकी भाषामें आपस-में काफी विभिन्नता आ गयी होगी। कुछ दिन-के बाद वे नवीन स्थान भी जनसंख्या आदि-के बढ़नेसे अपर्याप्त सिद्ध हुए होंगे और प्रत्येक शाखामें कई प्रशाखाएँ फूटकर इधर-उधर चलकर नवीन स्थानोंपर बसी होंगी। फिर वहाँ उनका नवीन विकास हुआ होगा और तदनुकूल उनकी भाषाएँ भी अलग रूपोंमें विकसित या परिवर्तित हुई होंगी।—इसे वंशवृक्ष रूपमें यों रखा जा सकता है—



उपर्युक्त भाषा-चित्रमें हम देखते हैं 'क' से ही विकसित होकर दूसरी, तीसरी और चौथी अवस्थाकी भाषाएँ और बोलियाँ निकली हैं। ये ठीक उसी प्रकार हैं जैसे एक आदमीसे दो-तीन पुश्तमें बहुतसे आदमी हो जाते हैं। वे सभी आदमी उस आदि पुरुषके जिस प्रकार परिवार कहे जायँगे, ये भिन्न-भिन्न भाषाएँ और बोलियाँ भी उसी प्रकार उस मूल या आदि भाषा (उपर्युक्त चित्रमें 'क') के परि-वारकी कही जाती हैं। हिन्दी, बंगला, अंग्रेजी, फ्रेंच, ब्रज, अवधी या मगही आदि इसी अर्थ-में भारोपीय परिवारकी कही जाती हैं।

(२) व्यक्ति-बोली या व्यक्ति-भाषा (idi-olect)—एक व्यक्तिकी भाषाको **व्यक्ति-भाषा या व्यक्ति बोली** कहते हैं। एक दृष्टि-से भाषाका यह संकीर्णतम रूप है। शुद्ध वैज्ञानिक दृष्टिसे गहराईमें जाकर यह भी कहा जा सकता है कि मनुष्य हर क्षण बदलता रहता है। 'राम' या 'मोहन' दो बजकर एक मिनटपर वही 'राम' या 'मोहन' नहीं रहते जो ठीक दो बजे रहते हैं। ऐसी स्थितिमें उनकी व्यक्ति-भाषा भी सर्वदा एक नहीं रहती है। अर्थात् रामकी दो बजे जो व्यक्ति-भाषा होगी, दो बजकर एक या दो मिनटपर उससे भिन्न कोई दूसरी व्यक्ति-भाषा होगी, चाहे यह अन्तर कितना हीं कम और सूक्ष्म क्यों न हो। इस आधारपर यह भी कहा जा सकता है कि किसी एक व्यक्तिकी किसी एक समयकी भाषा ही सच्चे अर्थोंमें व्यक्ति-भाषा है। किन्तु साथ ही किसी व्यक्तिकी जन्मसे मृत्युतककी भाषाको भी 'व्यक्ति-भाषा' कहा जा सकता है, और कहा जाता है। पर सच्चे अर्थोंमें, व्यक्ति-भाषा, इस दूसरे अर्थमें पहले अर्थका पूरा ऐतिहासिक विकास है, क्योंकि जन्मसे मृत्युतक भाषाका एक रूप नहीं हो सकता। आदिसे अन्ततक उनमें कुछ न कुछ विकास होगा।

(३) उपबोली या स्थानीय बोली—भाषा-का यह रूप भूगोलपर आधारित है। एक छोटेसे क्षेत्रमें इसका प्रयोग होता है। यह बहुतसी व्यक्ति-भाषाओंका सामूहिक रूप है। हम कह सकते हैं कि किसी छोटे क्षेत्रकी ऐसी व्यक्ति-भाषाओंका सामूहिक रूप, जिनमें आपसमें कोई स्पष्ट अन्तर न हो, स्थानीय बोली या उपबोली कहलाता है। एक बोलीके अन्तर्गत कई उपबोलियाँ होती हैं। किसी बोलीके वर्णनमें जब हम उसके दक्षिणी, पश्चिमी, मध्यवर्ती आदि उपरूपों-की बात करते हैं तो हमारा आशय उपबोली या स्थानीय बोलीसे ही होता है। भोजपुरी, अवधी, ब्रज आदि बोलियोंमें इस प्रकारकी कई उपबोलियाँ हैं। हिन्दीमें कुछ लोगोंने

भाषाके इस रूपके लिए **बोली** नामका प्रयोग किया है, किन्तु बोलीका प्रयोग अंग्रेज़ी डाइलेक्ट(dialect)के लिए प्रायः चल पड़ा है। (इसी अर्थमें ब्रज, अवधी, भोजपुरी आदिको भाषा-विज्ञानविद् तथा सामान्य लोग हिन्दीकी बोलियाँ कहते हैं), अतः इसके लिए उसका प्रयोग न करना ही उचित हैं। भाषाके इस रूपके लिए अंग्रेज़ीमें **सब-डाइलेक्ट** (subdialect)शब्द चलता है, उस आधारपर भी 'उपबोली' शब्द ठीक है। अंग्रेज़ीमें इसके बहुत निकटके अर्थमें एक फ्रांसीसी शब्द 'पैटवा' (patois)भी चलता है। 'पैटवा' (यह शब्द फ्रांसीसी भाषासे अंग्रेजीमें १७वीं सदी पूर्वार्द्धमें आया। इसका मूल अर्थ 'असभ्यतापूर्ण ढंग' था। आज भी इसके अर्थसे असभ्यताकी बू पूर्णतः नहीं जा सकी है) डाइलेक्ट या बोलीका एक उपरूप तो है, किन्तु उसकी कुछ और विशेषताएँ भी हैं और इसी कारण उसे ठीक अर्थोंमें उपबोली या सब-डाइलेक्टका समानार्थी नहीं माना जा सकता, जैसा कि डॉ० श्यामसुन्दरदास आदि हिन्दीके कुछ भाषा-विज्ञानवेत्ताओंने माना है। यूरोप और अमेरिकाके भाषा-विज्ञानविदोंने **पैटवा**का जिस अर्थमें प्रयोग किया है, उसमें प्रायः चार बातें सम्मिलित हैं—(१) यह बोलीसे अपेक्षाकृत छोटा, स्थानीय रूप है। (२) यह असाहित्यिक होती है। (३) यह असाधु होती है। (४) यह अपेक्षया निम्न सामाजिक स्तरके अशिक्षितोंद्वारा प्रयुक्त की जाती है। कहना न होगा कि इनमें केवल पहली बात उपबोलीमें होती है। और बातें हो भी सकती हैं, नहीं भी हो सकतीं। राजस्थानीके अन्तर्गत ऐसी उपबोलियाँ हैं, जिनमें साहित्यिक रचनाएँ हुई हैं। ऐसी स्थितिमें वे उपबोली तो हैं, किन्तु 'पैटवा' नहीं।

(४) **बोली और भाषा**—जैसे बहुतसी व्यक्ति-भाषाओं—जो आपसमें प्रायः पर्याप्त साम्य रखती हों—का सामूहिक रूप उपबोली है, उसी प्रकार बहुतसी मिलती-जुलती उपबोलियोंका सामूहिक रूप बोली है और मिलती-जुलती बोलियोंका सामूहिक रूप भाषा है। दूसरे शब्दोंमें यह भी कह सकते हैं कि एक भाषा-क्षेत्रमें कई बोलियाँ होती हैं (जैसे हिन्दी क्षेत्रमें खड़ी बोली, ब्रज, अवधी आदि बोलयाँ हैं) और एक बोलीमें कई उपबोलियाँ (जैसे बुन्देली बोलीके अन्तर्गत लोधान्ती, राठौरी तथा पँवारी आदि उप-बोलियाँ)। बोली(डॉ० श्यामसुन्दरदासने बोलीका प्रयोग सब-डाइलेक्ट और पैटवाके लिए किया है, पर अन्य प्रायः सभी लोगोंने इसे dialect का पर्याय माना है) शब्द यहाँ अंग्रेज़ी डाइलेक्ट(dialect)का प्रतिशब्द है। कुछ हिन्दीके भाषा-विज्ञानविद् बोलीके लिए **विभाषा, उपभाषा** या **प्रान्तीय भाषा**का भी प्रयोग करते हैं। **प्रान्तीय भाषा**का प्रयोग विभिन्न प्रान्तोंकी बंगाली, मराठी, पंजाबी आदि भाषाओंके लिए भी होता है।

ऊपर जिन चार—**व्यक्ति-बोली, उपबोली, बोली** और **भाषा**—के नाम लिये गये हैं, उनमें भाषा-विज्ञानकी दृष्टिसे विशेष महत्त्व केवल अंतिम दो—**बोली** और **भाषा**—का है।

एक भाषाके अंतर्गत कई बोलियाँ होती हैं, या बोलीका क्षेत्र अपेक्षाकृत छोटा होता है और भाषाका बड़ा। इस रूपमें बोलीका स्वरूप स्पष्ट है, किन्तु प्रकृतिकी दृष्टिसे भाषा और बोलीमें अंतर करना बड़ा कठिन है, इसे सपीर आदि बहुतसे भाषा-विज्ञानविदोंने स्पष्ट शब्दोंमें स्वीकार किया है। फिर भी काम चलानेके लिए बोलीकी परिभाषा बल्कि व्याख्या भाषासे अलग कुछ इस प्रकार दी जा सकती है—

'बोली' किसी भाषाके एक ऐसे सीमित क्षेत्रीय रूपको कहते हैं, जो ध्वनि, रूप, वाक्य-गठन, अर्थ, शब्द-समूह तथा मुहावरे आदिकी दृष्टिसे उस भाषाके परिनिष्ठित तथा अन्य क्षेत्रीय रूपोंसे भिन्न होता है, किन्तु इतना भिन्न नहीं कि अन्य रूपोंके बोलनेवाले उसे समझ न सकें, साथ ही जिसके अपने क्षेत्रमें कहीं भी बोलनेवालोंके उच्चारण,

रूप-रचना, वाक्य-गठन, अर्थ, शब्द-समूह तथा मुहावरों आदिमें कोई बहुत स्पष्ट भेदक और महत्त्वपूर्ण भिन्नता नहीं होती ।

भाषाकी तुलनामें जैसे यहाँ 'बोली'की परिभाषा दी गयी है, उसी प्रकार 'बोली'की तुलनामें 'उपबोली'की परिभाषा भी इन्हीं शब्दोंमें ('बोली'के स्थानपर 'उपबोली' और 'भाषा'के स्थानपर 'बोली' रखकर) दी जा सकती है । डॉ० गुणेने बोलीकी परिभाषा दी है—'dialect is constituted by the speech of all those persons, in whose utterances, variations are not sensibily perceievd or attended to.' अन्य लोगोंने भी लगभग इसी प्रकारकी परिभाषाएँ दी हैं । वेब्स्ट कोशमें कहा गया है—'a form of speech actually in natural use in any community as a mode of communication varying some what in the mouths of individuals, but only within comparatively narrow limits at any one time.'

एक भाषाके अंतर्गत जब कई अलग-अलग रूप विकसित हो जाते हैं तो उन्हें 'बोली' कहते हैं । सामान्यतः कोई 'बोली' तभीतक 'बोली' कही जाती है, जबतक उसे (१) (साहित्य, धर्म, व्यापार या राजनीतिके कारण) महत्त्व न प्राप्त हो, या (२) जबतक पड़ोसी बोलियोंसे उसे भिन्न करनेवाली उसकी विशेषताएँ इतनी न विकसित हो जायँ कि पड़ोसी बोलियोंके बोलनेवाले उसे समझ न सकें । इन दोनोंमें किसी एक (या दोनों) की प्राप्ति करते ही बोली भाषा बन जाती है । अंग्रेजी, हिन्दी, रूसी, संस्कृत, ग्रीक तथा अरबी आदि विश्वकी सभी भाषाएँ अपने आरम्भिक रूपमें बोली रही होंगी और बादमें महत्त्व प्राप्त होनेपर या विकासके कारण पूर्णतः भिन्न हो जानेपर वे भाषा बन गयीं । इसी प्रकार आज बोली कहलानेवाली भोजपुरी, अवधी तथा मैथिली आदि उपयुक्त कारणोंसे भाषाएँ बन सकती हैं ।

बोलियोंके बननेका कारण——बोलियोंके बननेका कारण प्रमुखतः भौगोलिक है । पीछेके चित्रमें प्रथम अवस्थामें 'क' एक भाषा थी । उससे 'ख', 'ग' और 'घ' शाखाएँ फूटकर अलग-अलग चली गयीं और एक-दूसरेसे इतनी दूर बसीं कि आपसमें किसी प्रकारका सम्बन्ध संभव न था । एक शाखाके लोग दूसरी शाखाके लोगोंसे मिलकर बातचीत नहीं कर सकते थे । फल यह हुआ कि तीनों शाखाओंमें कुछ विशेषताएँ विकसित हो गयीं और इस प्रकार तीनों अलग-अलग बोलियाँ हो गयीं । किसी भाषाकी एक शाखाका अन्यसे सम्बन्ध-विच्छेद या अलग होना ही बोलीके बननेका प्रधान कारण है । ऐसा भी होता है कि यदि कोई भाषा बहुत दिनोंसे एक बड़े क्षेत्रमें बोली जा रही है और उस क्षेत्रमें एक उपक्षेत्रके लोग दूरीके कारण दूसरे उपक्षेत्रके लोगोंसे नहीं मिल पाते, तो उन दोनों या अधिक उपक्षेत्रोंमें भी बोलियाँ विकसित हो जाती हैं । हिन्दीमें अवधी, ब्रज आदि इसी प्रकार विकसित हो गयी हैं । भूकंप या जलप्लावनसे भी ऐसी परिस्थितियाँ आ जाती हैं । एक क्षेत्रके बीचमें व्यवधान आ जाता है, अतः लोग मिल नहीं पाते और बोलियाँ विकसित हो जाती हैं । बहुधा यह देखा जाता है कि किसी बड़ी नदीके दोनों ओरकी बस्तियाँ भाषाके सम्बन्धमें कुछ अन्तर रखती हैं । यह भी उसीका द्योतक है । कभी-कभी राजनीतिक या आर्थिक कारणोंसे कुछ लोग अपनी भाषाके क्षेत्रसे बहुत दूर जाकर बस जाते हैं और वहाँ भी उनकी नयी बोली विकसित हो जाती है । मध्ययूरोपमें जर्मनभाषाका क्षेत्र था । वहाँसे लोग इंगलैंडमें बस गये और अंग्रेजी उसकी एक अलग बोली बन गयी । कभी आसपासकी भाषाओं या दूरकी भाषाओंके प्रभावके कारण भी एक भाषामें एक क्षेत्रीय रूप विकसित हो जाता है और वह बोलीका रूप धारण कर लेता है (दे० **भाषा-भूगोल**) । **बोलियोंके महत्त्वपानेका कारण**——जैसा कि ऊपर कहा

गया है कुछ बोलियाँ किसी प्रकार महत्त्वकी प्राप्ति कर धीरे-धीरे बोलीसे भाषा बन जाती हैं। बोलियोंके महत्त्व पाकर 'भाषा'-की संज्ञा पानेके प्रधान कारण निम्नांकित हैं--(१) कुछ बोलियाँ जब अपनी अन्य बहनोंसे बिलकुल अलग हो जाती हैं, या अपनी अन्य बहनोंके मर जानेके कारण अकेली बच जाती हैं तो उन्हें महत्त्वपूर्ण समझा जाने लगता है और वे 'भाषा'की संज्ञासे विभूषित हो जाती हैं। 'ब्राहुई' इसी कारण भाषा कहलाती है। (२) साहित्यकी श्रेष्ठताके कारण भी कुछ बोलियाँ महत्त्वपूर्ण हो जाती हैं। प्राचीन कालमें मध्यदेशीय बोली साहित्यके लिए प्रयुक्त होती थी, अतः उसका अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाना स्वाभाविक था। (३) धार्मिक श्रेष्ठता भी बोलीका महत्त्व बढ़ा देती है। राम सम्बन्धी प्रधान तीर्थ अयोध्या है तथा कृष्ण सम्बन्धी मथुरा। फल यह हुआ कि दोनों जगहकी बोलियों (अवधी और ब्रज)को औरोंकी अपेक्षा अधिक महत्त्व मिला और कई सदियोंतक वे साहित्यकी भाषा बनी रहीं। 'ब्रज'का तो नाम ही 'ब्रज'-भाषा' हो गया था। इसी प्रकार खड़ीबोलीको महत्त्व प्रदान करनेमें आर्यसमाजका भी हाथ रहा है। (४) बोलनेवालोंका महत्त्वपूर्ण होना भी बोलीको महत्त्वपूर्ण बना देता है। अंग्रेजी जो मूलतः एक बोली है, अंग्रेजीके आधुनिक युगमें विश्व भरमें अपना व्यापार फैला देनेसे तथा उनके महत्त्वपूर्ण होनेसे आज विश्वकी व्यापारिक भाषा एवं अंतर्राष्ट्रीय भाषा बनी हुई है। चाहे जर्मनी हो चाहे जापान, चीन या फ्रांस हो, सभी लोग अपनी बनायी वस्तुओंपर अंग्रेजीमें ही 'मेड-इन' (made in) लिखते हैं। इसी प्रकार विदेश जानेके लिए भी अंग्रेजी जानना आवश्यक माना जाता है, क्योंकि इसका प्रचार प्रायः सर्वत्र है, यद्यपि अब यह स्थिति कुछ समाप्त होतीसी दीख रही है। (५) बोलीके प्रमुख एवं महत्त्वपूर्ण होनेका सबसे बड़ा कारण है राजनीति। जहाँ राजनीतिका केन्द्र होगा, वहाँकी बोली अवश्य ही महत्त्वपूर्ण होकर भाषा बन जायगी। दिल्लीके समीपकी खड़ीबोली आज हिन्दी भाषा-भाषी प्रान्तोंकी प्रमुख भाषा है और उसने मैथिली, अवधी और ब्रज जैसी प्राचीन एवं महत्त्वपूर्ण बोलियोंको भी दबाकर भाषा ही नहीं, राज एवं राष्ट्रभाषाके स्थानको अपना लिया है। इसी प्रकार पेरिसकी फ्रेंच और लंदनकी अंग्रेजी बोलियाँ अपनी अन्य बहनोंसे बहुत आगे निकल गयी हैं और अपने देशकी राष्ट्रभाषा बन बैठी हैं। मराठीमें कोंकणी, मारवाड़ी और बरार आदि बोलियाँ, बोलियाँ ही रह गयीं, पर पूनाकी बोली आज वहाँकी साहित्यिक भाषा है। चीनकी मन्दारिन बोलीकी भी यही दशा है। इस प्रकारके उदाहरण सभी देशोंमें मिल सकते हैं। इस प्रसंगमें एक बातकी ओर संकेत कर देना आवश्यक है कि यह आवश्यक नहीं है कि महत्त्व प्राप्त करके बोली भाषा बन ही जाय। यह भी होता है कि महत्त्व प्राप्तकरकेभीबोली बोली ही रह जाती है या कभी-कभी थोड़े दिनके लिए महत्त्व मिलता है और फिर छिन जाता है। 'ब्रज' के सम्बन्धमें ऐसा ही हुआ है।

(५) **आदर्श या परिनिष्ठित भाषा**--(इसे **भाषा** या **टकसाली** भाषा भी कहते हैं। अंग्रेजीमें इसे standard language या koine कहते हैं। koine शब्द यूनानीका है। koine यूनानी भाषाके विशेष रूपको कहते थे, जो एक क्षेत्रविशेषकी टकसाली भाषा थी। नये टेस्टामेंटकी भाषा यही है) सभ्यताके विकसित होनेपर यह आवश्यक हो जाता है कि एक भाषा-क्षेत्र (जिसमें कई बोलिया हों) की कोई एक बोली आदर्श मान ली जाय और पूरे क्षेत्रसे सम्बन्धित कार्योंके लिए उसका प्रयोग हो। उसे आदर्श या परिनिष्ठित भाषा कहा जाता है और वह पूरे क्षेत्रके प्रमुखतः शिक्षित वर्गके लोगोंकी शिक्षा, पत्र-व्यवहार या समाचारपत्रादिकी भाषा हो जाती है। साहित्य आदिमें भी प्रायः उसीका प्रयोग होता है। एक बोली

जब आदर्श भाषा बनती है और प्रतिनिधि हो जाती है तो आसपासकी बोलियोंपर उसका पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। आजकी खड़ीबोलीने ब्रज, अवधी, भोजपुरी सभीको प्रभावित किया है। कभी-कभी ऐसा भी देखा जाता है कि आदर्श भाषा आसपासकी बोलियोंको बिलकुल समाप्त कर देती है। रोमकी लैटिन जब इटलीकी आदर्श भाषा बनी तो आसपासकी बोलियाँ शीघ्र ही समाप्त हो गयीं। पर ऐसा बहुत ही कम होता है।

आदर्श भाषाके तत्कालीन रूपको लेकर उसका उच्चारण और व्याकरण आदि निश्चित कर दिया जाता है और फल यह होता है कि आदर्श भाषा स्थिर हो जाती है और कुछ दिनमें उसका रूप प्राचीन पड़ जाता है। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि आजकी खड़ीबोलीका लिखित रूप जीवित बोलीसे उच्चारण तथा शब्दसमूह आदि सभी दृष्टियोंसे कमसे कम चालीस वर्ष पीछे है। व्याकरणमें भी कुछ परिवर्तन आ गया है। आदर्श भाषाका रूप पूरे क्षेत्रमें एक ही नहीं होता। प्रादेशिक बोलियोंका प्रभाव भी उसपर कुछ पड़ता है। यह प्रभाव व्याकरण और शब्द-समूह तथा उच्चारण तीनोंमें ही देखा गया है। भोजपुरी लोग 'दिखाई दे रहा है'—के स्थानपर 'लौक रहा है' तथा 'हमने काम किया'के स्थानपर 'हम काम किये'का प्रयोग करते हैं। पंजाबी लोगोंने भी आदर्श हिन्दीपर अपनी पालिश कर दी है और खड़ीबोली हिन्दीका 'हमको जाना है' वाक्य उनके बीच 'हमने जाना है' हो गया है। **आदर्श भाषाके (१) मौखिक और (२) लिखित रूप**—आदर्श भाषाके प्रादेशिक रूपोंके अतिरिक्त लिखित और मौखिक भी दो रूप होते हैं। सभी मौखिक भाषाएँ अपने लिखित रूपोंसे प्रायः भिन्न होती है। बोलनेमें सर्वदा ही वाक्य छोटे-छोटे रहते हैं, पर लिखित रूपके वाक्य अधिकतर बड़े हो जाते हैं। कादंबरीके वाक्य कहीं-कहीं पृष्ठ पार कर जाते हैं, पर बोलचालकी संस्कृत कभी भी ऐसी न रही होगी। इस प्रकार मौखिक रूप स्वाभाविक है और लिखित रूप कृत्रिम। ये बातें आदर्श भाषामें भी पायी जाती हैं। आदर्श भाषाके लिखित रूपपर मौखिक रूपकी अपेक्षा प्रादेशिकताकी छाप कम रहती है क्योंकि लिखनेमें लोग हँसी और अशुद्धि आदिके भयसे काफ़ी सोच-समझकर लिखते हैं। लिखित रूप मौखिककी अपेक्षा अधिक संस्कृत रहता है। खड़ीबोलीके सम्बन्धमें एक और विशेष बात है। मौखिक भाषामें उर्दू और हिन्दीका कोई प्रधान अन्तर प्रायः दृष्टिगत नहीं होता, पर लिखित भाषामें यदि जान-बूझकर हिन्दुस्तानी न लिखी जाय तो यह अन्तर स्पष्ट हो जाता है। इस प्रकार आदर्श भाषा हिन्दी खड़ीबोलीके तीन रूप प्रचलित हैं—(१) मौखिक रूप—जिसमें विभिन्न स्थानोंपर केवल प्रादेशिकताकी छाप रहती है। (२) लिखित उर्दू रूप—जिसमें खड़ीबोलीका व्याकरण मात्र रहता है, शेषके लिए अरबी, फारसी और तुर्कीका सहारा लिया जाता है। तथा, (३) लिखित हिन्दी रूप—जिसमें संस्कृतके शब्द अधिक रहते हैं।

(६) राष्ट्रभाषा—आदर्श भाषा तो केवल उसी क्षेत्रमें रहती है, जिसकी वह एक बोली होती है। जैसे हिन्दी खड़ीबोली राजस्थान, उत्तर प्रदेश तथा बिहार आदिकी परिनिष्ठित या आदर्श भाषा है। किन्तु जब कोई बोली आदर्श भाषा बननेके बाद भी उन्नति करती है और महत्त्वपूर्ण बन जाती है तथा पूरे राष्ट्र या देशमें अन्य भाषा-क्षेत्र तथा अन्य परिवार-क्षेत्रमें भी उसका प्रयोग सार्वजनिक कामों आदिमें होने लगता है तो वह राष्ट्रभाषाका पद पा जाती है। हिन्दीको धीरे-धीरे भारतवर्षमें लगभग यही स्थान प्राप्त हो रहा है। वह अपने परिवारके अहिन्दी प्रान्तों (राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, बंगाल आदि) तथा अन्य परिवारके प्रान्तों (मद्रास आदि) में भी धीरे-धीरे व्यवहारमें आ रही है। पूरे यूरोपमें कुछ दिनतक फ्रेंचको भी यही स्थान प्राप्त था। कुछ तो आज भी है।

व्यापार आदिके क्षेत्रमें अंग्रेजी आज विश्व-की **अंतर्राष्ट्रीय भाषा या विश्वभाषा** है। किसी बोलीकी उन्नतिकी चरम सीमा उसका किसी रूपमें विश्वभाषा होना ही है।

(७) **विशिष्ट भाषा**—व्यवसाय, कार्य या विषय आदिके अनुसार भिन्न-भिन्न वर्गोंकी अलग-अलग भाषाएँ हो जाती हैं। ये भाषाएँ आदर्श भाषाके ही विभिन्न रूप होते हैं, जो अधिकतर शब्द-समूह, मुहावरे तथा प्रयोग आदिमें एक दूसरेसे भिन्न होते हैं। कभी-कभी उच्चारण सम्बन्धी अन्तर भी दिखाई देता है। विद्यार्थियोंकी भाषा या छात्रालय-की भाषा, व्यापारियोंकी भाषा, सोने-चाँदी-की दलाली करनेवालोंकी भाषा, कहारोंकी भाषा, धार्मिक संघोंकी भाषा, राजनयिक भाषा, राजनीतिक संस्थाओंकी भाषा तथा साहित्यिक गोष्ठियोंकी भाषा इसी अर्थमें विशिष्ट हैं। किसीपर अंग्रेजीका प्रभाव अधिक रहता है तो किसीपर संस्कृतका और किसी-किसीपर गाँवकी बोलियोंका तो किसीपर गूढ़ या पारिभाषिक शब्दोंका।

(८) **कृत्रिम भाषा**—भाषाके ऊपर लिये गये रूप स्वाभाविक रूपसे विकसित होकर बनते हैं, पर इनके विरुद्ध कृत्रिम भाषा बनायी जाती है। इसके दो रूप किये जा सकते हैं—(क) गुप्त भाषा और (ख) सामान्य भाषा। यहाँ इन दोनोंपर संक्षेपमें प्रकाश डाला जा रहा है। **(क) गुप्त भाषा**—गुप्त भाषाका प्रयोग प्रायः चोरों, डाकुओं, क्रांतिकारियों तथा लड़कों आदिमें चलती है। एक अंग्रेजने उत्तर प्रदेशके जरायम पेशावालोंकी भाषा-का अध्ययन किया था। ये लोग कुछ शब्दों-को तोड़-मरोड़कर तथा कुछ सामान्य शब्दों-को नये अर्थोंमें प्रयोग कर अपनी गुप्त भाषा इस प्रकारकी बनाते हैं, जिनको दूसरे समझ न सकें। इस प्रकारके कुछ उदाहरण बड़े मनोरंजक हैं।

शब्द या प्रयोग	अर्थ
दामादर	उदर या फेंटेमें दाम या धन है
नारायण	नालेमें ले चलो या नालेमें है।
वासदेव	डंडेसे मारो
परसाद दो	ज़हर दो
पूजा करो	पीटो
अमर करो	मार डालो

भारतके आज़ाद होनेके पूर्व यहाँके आतंक-वादियों एवं क्रांतिकारियोंमें भी इस प्रकार-की कुछ गुप्त भाषाएँ तथा लिपियाँ प्रचलित थीं। इन पंक्तियोंके लेखकको भी इस जीवन-का कुछ अनुभव है। मुझे याद है कि एक नेताको एक बार बुलानेके लिए उन्हें तारमें केवल 'एेवसेंट' (absent = अनुपस्थित) लिखा गया था और वे पूर्व निर्णयके अनुसार आ गये थे। लड़कोंमें गुप्त भाषाकी प्रवृत्ति अधिक दिखाई पड़ती है। मेरी बाल्यावस्था-में मेरे ही साथियोंमें ऐसी चार गुप्त बोलियाँ प्रचलित थीं। उनमें कमसे कम एक तो ऐसी थी कि उसमें दो लड़के एक-एक घंटेतक बात कर सकते थे और सुननेवाले उसे कुछ भी नहीं समझ पाते थे। वह है—राकस्तूरी पंजा बीरे **म**कस्तूरी मासा = राम। **ग**क-स्तूरी पंजा बीरे **या**कस्तूरी मासा—गया। यहाँ इन दोनों स्थानोंपर अक्षर-अक्षर जोड़कर शब्द और वाक्य बनाये जाते थे। कुछ लोग र् और म् लगाकर बोलते थे, पर यह भाषा सुरक्षित नहीं समझी जाती थी। जैसे **मरमैं खरमाना खरमा करमर अरमाऊँ गरमा** = मैं खाना खाकर आऊँगा। सबसे आसान रास्ता 'फुल' लगाकर था। **फुलभो फुलला फुलना फुलथ** = भोलानाथ। इलाहाबादके समीपके कुछ गाँवोंमें 'अर्फ' लगाकर गुप्त रूपसे बोलने-का प्रचार है। जैसे 'हम जात अही' के लिए **हर्फम जर्फात अर्फही** या 'तू आज आया' के लिए **तुर्फ अर्फाज अर्फाय**। शब्दोंमें अक्षर उलटकर या हर अक्षरके बाद 'स' या अन्य अक्षर रखकर भी लोग गुप्त भाषाओंका निर्माण करते हैं। कभी-कभी गुप्त भाषाओंकी अलग लिपि भी होती है। एक लिपि मेरे देखनेमें भी आयी थी जो बंगला, अंग्रेजी, उर्दू और नागरीके आधारपर थी। चले आना = ɒ A ل E A न A। **(ख) सामान्य भाषा**—

कृत्रिम भाषाके प्रथम रूप 'गुप्त भाषा'में हमने देखा कि भाषाएँ स्वाभाविक रूपसे विकसित न होकर बनायी रहती हैं। सामान्य कृत्रिम भाषा और गुप्त कृत्रिम भाषामें अन्तर यह है कि 'गुप्त भाषा' गुप्त व्यवहार या बातके लिए बनती है, अतः प्रचलित भाषा-से अधिकाधिक दूर रखी जाती है ताकि कोई समझ न सके, पर सामान्यमें यह बात नहीं रहती। वह प्रचलित भाषासे मिलती-जुलती और ऐसी बनायी जाती है कि यथाशीघ्र लोग उसे समझकर उसका प्रयोग कर सकें। डॉ० ज़मेनहाफ़की बनायी **एसपिरैंतो** भाषा ऐसी भाषाओंमें सबसे अधिक प्रसिद्ध है। यह संसार भरके लिए बनायी गयी है। इसका बहुतसे देशोंमें प्रचार है और विज्ञापन सम्बन्धी तथा कुछ अन्य विषयोंकी भी, अनेक पत्रिकाएँ इस कृत्रिम भाषामें निकलती हैं। कुछ रेडियो स्टेशनोंसे कभी-कभी इस कृत्रिम भाषामें प्रोग्राम भी सुननेमें आते हैं। संसारके अनेक शहरोंकी भाँति दिल्लीमें भी इसके पढ़ानेकी व्यवस्था है। इसके लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था है, जो सारे संसारमें इसके पूर्ण प्रचारके लिए प्रयत्नशील है। इस प्रकारकी एक दर्जनसे ऊपर भाषाएँ बनायी जा चुकी हैं, जिनमें **इडो, नोवियल, इंटरलिंगुवा, ऑक्सिडेंटल** आदि प्रमुख हैं।

ऊपर मूल भाषा, व्यक्ति-भाषा, उपबोली, बोली, भाषा, परिनिष्ठित-भाषा, राष्ट्र-भाषा, विशिष्ट-भाषा तथा कृत्रिम-भाषा-पर संक्षेपमें प्रकाश डाला गया है। भाषाके कुछ अन्य (भाषा-विज्ञानमें अपेक्षाकृत कम प्रचलित) रूप इस प्रकार हैं--(१) **साहित्य-भाषा**—जिसका प्रयोग साहित्यमें हो। बोलचालकी भाषाकी तुलनामें प्रायः यह कुछ कम विकसित, कुछ अलंकृत, कुछ कठिन तथा कुछ परम्परानुगामिनी होती है। (२) **जीवित-भाषा**—जो आज भी प्रयोगमें हो, जैसे 'हिन्दी'। (३) **मृतभाषा**—जो आज प्रयोगमें न हो, जैसे 'हिट्टाइट'। (४) **राज्य-भाषा**--जिसका प्रयोग राज्यके कामोंमें होता हैं। संविधानके अनुसार हिन्दी भारतकी राष्ट्र-भाषा न होकर राज्य-भाषा (official language) है, और वैधानिक दृष्टिसे उसे राज्य-भाषा ही कहना चाहिए, न कि राष्ट्र-भाषा। (५) **जाति-भाषा**--जिसका प्रयोग केवल जाति विशेषमें होता है। ऊपर विशिष्ट-भाषामें कहाँरोंकी भाषाकी ओर संकेत किया जा चुका है। भील, मुसहर, बनिया, कायस्थ, ब्राह्मण आदिकी बोलियाँ जाति-भाषाएँ ही हैं। भाषा या बोलीके इन जातीय रूपोंमें ध्वनि, सुर, शब्द-समूह या मुहावरे सम्बन्धी विशेषताएँ होती हैं। यह प्रायः देखा जाता है कि एक ही गाँवमें ब्राह्मणकी बोली कुछ और होती है, कायस्थ-की कुछ और मुसहर आदि छोटी जातियों-की कुछ और। (६) **स्त्री-भाषा**--जिसका प्रयोग केवल स्त्रियाँ करें। 'रेख्ती' कुछ ऐसी ही है। 'क़रीब' नामकी एक जंगली जातिमें इस प्रकारका भेद और भी स्पष्ट है। वहाँ पुरुष 'करीब' बोलीका प्रयोग करते हैं, किन्तु स्त्रियाँ 'अरोवक' नामकी बोलीका प्रयोग करती हैं, जो उसीका उससे पर्याप्त भिन्न एक रूप है। कैलिफोर्नियाके उत्तरी भागमें 'यन' नामक आदिवासियोंमें भी स्त्री और पुरुषकी भाषामें पर्याप्त भेद है। (७) **पुरुष-भाषा**--जिसका प्रयोग केवल पुरुष करें। ऊपर स्त्री-भाषामें इसका उदाहरण है। इसके अन्य भेद ये भी हो सकते हैं: **ग्राम्य-भाषा** (दे०), **शिष्ट भाषा** (दे०), **अशिष्ट भाषा** (दे०), **साधु भाषा** (दे०), **असाधु भाषा** (दे०), **विकृत-भाषा** (दे०) आदि।

भाषा-द्वीप (speech-island)--ऐसा छोटा भाषा-भाषी समुदाय, जो चारों-ओर किसी बड़े भाषा-भाषी समुदायसे घिरा हो।

भाषाधारित पुराशास्त्र-- (दे०) **भाषिक पुराशास्त्र**।

भाषा-ध्वनि (speech-sound)--भाषामें प्रयुक्त ध्वनि। (दे०) **ध्वनि और भाषा-ध्वनि**।

भाषा परिवर्तन (linguistic change)—

भाषा चिर परिवर्तनशील है। उसमें विकास या परिवर्तन होता रहता है। यह परिवर्तन भाषाके पाँचों रूपों (ध्वनि, शब्द, रूप, अर्थ, वाक्य) में होता है (विस्तारके लिए देखिये—**ध्वनि-परिवर्तन, वाक्य-परिवर्तन, शब्द-परिवर्तन, रूप-परिवर्तन,** तथा **अर्थ-परिवर्तन**)। भाषाके विकास या परिवर्तनपर बहुत पहलेसे किसी न किसी रूपमें विचार किया गया है। शब्द-शास्त्रपर विचार करनेवाले प्राचीन भारतीय आचार्योंमें कात्यायन, पतंजलि, कैयट तथा काशिकाकार जयादित्य और वामनके नाम इस दृष्टिसे विशेष रूपसे उल्लेख्य हैं। यूरोपमें इस विषयपर गम्भीरतासे और व्यवस्थित रूपसे विचार करनेवाले प्रथम व्यक्ति डैनिश विद्वान् जे० एच० ब्रेड्सडॉर्फ हैं। इन्होंने १८२१में गॉथिक ध्वनि-परिवर्तनपर विचार करते समय तथा अन्यत्र भी भाषा-परिवर्तनके ७-८ कारण गिनाये थे। तबसे इस सदीतक पाल, येस्पर्सन आदि अनेक लोगोंने इस विषयको उठाया। पिछले दशकमें स्टुर्टवेंटने इस विषयका पहली बार बहुत विस्तारसे विवेचन किया, यद्यपि उसे भी पूर्ण नहीं माना जा सकता।

विकासके कारणोंके प्रमुख दो वर्ग—भाषामें विकास जिन कारणोंसे होता है उन्हें प्रमुखतः दो वर्गोंमें रखा जा सकता है। एक आभ्यन्तर वर्ग और दूसरा बाह्य। आभ्यन्तर वर्गमें भाषाकी अपनी स्वाभाविक गति (जिसमें प्रमुखतः भाषाकी कठिनसे सरल होनेकी प्रवृत्ति है) तथा वे कारण सम्मिलित हैं, जो प्रयोक्ताकी शारीरिक या मानसिक योग्यता आदि सम्बन्धी स्थितिसे सम्बन्ध रखते हैं। बाह्य वर्गमें वे कारण आते हैं जो बाहरसे भाषाको प्रभावित करते हैं।

इसे स्पष्ट करनेके लिए एक उदाहरण लिया जा सकता है। जब एक भाषा-भाषी दूसरे भाषा-भाषीके सम्पर्कमें आता है तो स्वभावतः वे एक-दूसरेसे कुछ ग्रहण करते हैं और इस प्रकार दोनों हीकी भाषाएँ कम या बेश प्रभावित होती हैं। मुसलमानोंके सम्पर्कसे हिन्दी भाषामें कई हज़ार नये शब्द, मुहावरे और क़, ख़, ग़ तथा ज़ आदि ध्वनियाँ आ गयीं। इधर यूरोपके सम्पर्कमें आनेपर फिर हज़ारों शब्दों, मुहावरों तथा कुछ ध्वनियों जैसे 'ऑ' ('डॉक्टर') का समावेश हुआ है। इन दोनोंमें पहले प्रकारके कारण भीतरी, आन्तरिक या आभ्यन्तर कहे जा सकते हैं, दूसरे प्रकारके कारणोंको 'बाहरी' या 'बाह्य' की संज्ञा दी जा सकती है। यहाँ दोनोंके अन्तर्गत आनेवाले कुछ प्रमुख कारणोंपर संक्षेपमें विचार किया जा रहा है। सादृश्यको अलग मानकर इसपर अलग विचार किया गया है[1]।

(अ) **आभ्यन्तर वर्ग**—आभ्यन्तर वर्गके अन्तर्गत वे सभी कारण आते हैं जो बाहरसे प्रभाव नहीं डालते। संक्षेपमें प्रधान कारणोंको यहाँ लिया जा सकता है। (१) **प्रयोगसे**

---

(१) कुछ भाषा-विज्ञानविदोंने भाषाके विकासके मूल कारणके रूपमें चार वादोंका उल्लेख किया है: (१) शारीरिक विभिन्नता, (२) भौगोलिक विभिन्नता, (३) जातीय-मानसिक अवस्था भेद, (४) प्रयत्न-लाघव। इनमें प्रयत्न-लाघव तो स्पष्ट ही मूल कारणोंमें है, जैसा कि आगे समझाया गया है। शेष तीनके सम्बन्धमें थोड़े स्पष्टीकरणकी आवश्यकता है। यदि नं० १ का अर्थ यह लें कि एक ही समाजका एक व्यक्ति स्वस्थ है और दूसरा दुबला-पतला, अतः दोनोंकी भाषामें अन्तर होगा, तो यह व्यर्थ है। दूसरेका अर्थ यह लें कि रेगिस्तानी मुँह ढँके रहेंगे, सर्द देशमें रहनेवाले सर्दीके कारण कम मुँह खोलेंगे, अतएव भाषामें अन्तर होगा, तो यह भी व्यर्थ है। इसी प्रकार यदि मानें कि मानसिक अवस्थाके उच्च या नीच होनेसे भाषामें भेद होगा, तो यह भी ठीक नहीं है; किन्तु यदि दूसरा अर्थ लें, जैसा कि आगे लिया गया है तो तीनों ही किसी न किसी रूपमें भाषाके विकासमें काम करते हैं।

घिस जाना—अधिक प्रयोगके कारण धीरे-धीरे अन्य सभी चीजोंकी भाँति भाषामें भी स्वाभाविक रूपसे परिवर्तन होता है। ऐसे होनेवाले विकास या परिवर्तनको 'स्वयंभू' कहते हैं। (२) **बल**—जिस ध्वनि या अर्थपर बल अधिक दिया जाता है वह अन्य ध्वनियों या अर्थोंको या तो कमजोर बना देता है या समाप्त कर देता है। इस प्रकार इसके कारण भी भाषामें विकास या परिवर्तन हो जाता है। इस सम्बन्धमें ध्वनि और अर्थके प्रकरणमें विस्तारके साथ विचार किया जायगा। (३) **प्रयत्न-लाघव**—भाषामें विकास लानेवाले या परिवर्तन उपस्थित करनेवाले कारणोंमें यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है और भाषामें विकास या परिवर्तनका ९०प्रतिशतसे भी अधिक-दायित्व इसीपर है। इसे 'मुख-सुख' भी कहते हैं। आदमी कमसे कम प्रयासमें अधिक-से अधिक काम करना चाहता है। बोये हुए खेतोंमें लोगोंकी यही प्रवृत्ति बीचसे तिरछे रास्ता बना देती है। बोलनेमें भी इसी प्रकार कमसे कम प्रयत्नसे लोग शब्दोंको उच्चरित करना चाहते हैं और इस कमसे कम प्रयास या प्रयत्न-लाघव (प्रयत्नकी लघुता)के प्रयासमें ही शब्दोंको सरल या सरलताके लिए ही छोटा बना डालते हैं। कृष्णका कन्हैया या कान्हा, भक्तका भगत, प्वाइंट्समैनका पेटमैन, स्टेशनका टेसन, धर्मका धरम, 'बीबी जी'का बीजी, गोपेन्द्र-का गोबिन, त्वयाका तू, गृद्धका गिद्ध, आलक्तकका आलता सरल करके बोलनेके प्रयासके ही फल हैं। सरल बनानेके लिए कभी तो शब्दको छोटा बना डालते हैं, जैसे 'उपाध्याय'से 'ओझा' या 'झा'; और कभी बड़ा बना लेते हैं, जैसे 'जेल' से 'जेहल' अंग्रेजीमें क्नो (know)का उच्चारण नो, क्नाइफ़ (knife)का नाइफ़ तथा टाल्क (talk)का टाक भी इसीका परिणाम है। सरलता या प्रयत्न-लाघवके लिए कुछ शब्द तो छोटे कर लिये जाते हैं, जैसे 'उपाध्यायसे' झा, 'कब ही'से कभी, 'जब ही'से जभी, 'हास्तिन् मृग'से हस्ती, फिर हाथी या बोलनेमें मास्टर साहबका मास्साब, पंडितजीका पंडीजी, जैरामजी-कीका जैरम, मार डालाका माड्डाला; तथा कुछ शब्द सरल बनानेके लिए बड़े कर लिये जाते हैं, जैसे प्रसादसे परसाद, कृष्णसे कन्हैया, स्कूलसे इस्कूल, स्नानसे असनान, प्लेटोसे अफलातून, ग्रहणसे गरहन या गिरहन तथा उम्रसे उमिर आदि। संक्षेपमें डी० एम० (डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट), एन० टी० (नायब तहसीलदार) या सुदी (शुक्ल दिवस) आदि भी प्रयत्न-लाघवकी दृष्टिसे ही कहा जाता है। **प्रयत्न-लाघव** या **मुख-सुख** कई प्रकारसे लाया जाता है, जिनमें **स्वरलोप** (जैसे अनाजसे नाज या एकादशसे ग्यारह), **व्यंजन-लोप** (जैसे स्थानसे थान), **अक्षर लोप** (शहतूतसे तूत), **स्वरागम** (स्काउटसे इस्का-उट, कृपासे किरिपा), **व्यंजनागम** (अस्थिसे हड्डी), **विपर्यय** (वाराणसीसे बनारस या पहुँचनासे चहुँपना), **समीकरण** (शर्करा-से शक्कर या कलक्टरसे कलट्टर), **विषमीकरण** (काकसे काग), तथा **अकारण अनुनासिकता** (उष्ट्रसे ऊँट, श्वाससे साँस तथा रामसे राँम) आदि प्रमुख हैं। प्रयत्न-लाघवके अन्तर्गत आनेवाले इन प्रधान तथा अन्य और प्रकारों (घोषीकरण, अघोषी-करण, अभिश्रुति, महाप्राणीकरण, अल्प-प्राणीकरण, अपश्रुति, अग्रागम, स्वरभक्ति, उभयसम्मिश्रण, स्थान-विपर्यय मात्राभेद, ऊष्मीकरण आदि) का विस्तृत और सोदा-हरण परिचय **ध्वनि-परिवर्तन** (दे०)में दिया गया है। (४) **मानसिक स्तर**—बोलने-वालोंके मानसिक स्तरमें परिवर्तन होनेसे विचारोंमें परिवर्तन होता है; विचारोंमें परिवर्तन होनेसे अभिव्यंजनाके ढंगमें परि-वर्तन होता है और इस प्रकार भाषापर भी प्रभाव पड़ता है। इसका स्पष्ट परिणाम अर्थ-परिवर्तन होता है, पर कभी-कभी

ध्वनिपर भी असर देखा गया है। (५) **अनुकरणकी अपूर्णता**—यह इस वर्गका अन्तिम कारण है। पीछे कहा जा चुका है कि भाषा अर्जित सम्पत्ति है और उसका अर्जन मनुष्य, अनुकरणके सहारे समाजसे करता है। अनुकरण यदि पूर्ण हो तब तो व्यक्ति किसी शब्दको ठीक उसी प्रकार कहेगा, जैसे वह व्यक्ति कहता है, जिसका कि वह अनुकरण कर रहा है; किंतु,प्रायः ऐसा होता नहीं। अनुकरण प्रायः अपूर्ण या बेठीक होता है। ध्वनिका अनुकरण सुनकर तथा उच्चारण-अवयवोंकी गति देखकर (जितना दिखाई दे सके) किया जाता है। वाक्य, अर्थ आदिका अनुकरण मानसिक रूपमें समझकर किया जाता है। होता यह है कि अनुकरणमें अनुकर्त्ता (क) कुछ भाषिक तथ्योंको छोड़ देता है, तथा (ख) कुछको अनजाने ही अपनी ओरसे जोड़ देता है। इस तरह अनुकरणमें भाषाका परिवर्तन पनपता ही रहता है। जब एक पीढ़ीसे दूसरी पीढ़ी भाषाका अनुकरण कर रही होती है ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य, अर्थ, भाषाके पाँचों क्षेत्रोंमें इस छोड़ने और जोड़नेके कारण परिवर्तनकी प्रक्रिया तेजीसे घटित होती रहती है। आर० एम०पिडल (१९२६) तथा ए० डुरेफर (१९२७)ने कुछ स्थानोंमें इस बातका अनेक वर्षोंतक बड़ी सूक्ष्मतासे अध्ययन किया और वे इस निष्कर्षपर पहुँचे कि यह परिवर्तन या विकासका सबसे बड़ा कारण है। समाजमें मोटे रूपसे तीन पीढ़ियाँ होती हैं। नवोदित, जो २०-२२ या २५से कम उम्रके हैं, बहुत सक्रिय जो २५ या २०-२२ से ६० वर्षके बीचके होते हैं और अस्तप्राय, जो ६०से ऊपरके होते हैं। एक ही समाजमें इन तीनोंकी भाषामें स्पष्ट अन्तर मिलता है, यद्यपि वह अन्तर अधिक नहीं होता और कई सौ वर्षों बाद भाषापर उसकी साफ़ छाप दिखाई पड़ती है। पीढ़ी-परिवर्तनके साथ अनुकरणकी अपूर्णताके अतिरिक्त यों अन्य कारण भी काम करते हैं, जैसे अन्य प्रभाव बल देनेके लिए या नवीनताके लिए अलग प्रयोग या एकसे अनेक या अनेकसे एक करनेकी प्रवृत्ति आदि। जैसा कि कह चुके हैं एक-दो पीढ़ीमें तो इसका स्पष्ट पता नहीं चलता, पर जब दस पीढ़ी पीछेकी भाषाकी दस पीढ़ी बादकी भाषासे हम तुलना करते हैं तो दोनोंके अन्तरका साफ़ पता चल जाता है और हमें यह माननेको बाध्य होना पड़ता है कि भाषा विकसित या परिवर्तित हो गयी है। अनुकरणकी अपूर्णताके लिए भी कई कारण हैं, जिनमें प्रधान निम्नलिखित हैं:—(क) **शारीरिक विभिन्नता**—ध्वनियोंका उच्चारण अंगोंके सहारे करते हैं और सबके उच्चारण-अंग एकसे नहीं होते, अतएव उनका अनुकरण बिलकुल पूर्ण नहीं हो पाता। सामान्यतः इस विभिन्नताके प्रभावका पता नहीं चलता पर कई पीढ़ी बाद जो परिवर्तन दिखाई पड़ता है, उनमें निश्चय ही इसका भी कुछ-न-कुछ हाथ रहता है। (ख) **ध्यानकी कमी**—इसके कारण भी अनुकरण अपूर्ण रह जाता है। इसका भी भाषाके विकासपर प्रभाव दस-बीस पीढ़ीके बाद ही स्पष्ट हो पाता है। (ग) **अशिक्षा**—अशिक्षा तथा अज्ञानके कारण भी अनुकरण अपूर्ण रह जाता है। श का स (देशसे देस), ष का स (तृष्णाका तिसना), ण का न (गुणका गुन या कर्णका कान), तथा क्ष का च्छ या छ (शिक्षाका सिच्छा या क्षत्रियका छत्री) आदि मुख-सुख या प्रयत्न-लाघवके अतिरिक्त अज्ञान या अशिक्षाके कारण भी हो जाता है। विदेशी शब्द सामान्य जनतामें अज्ञान या अशिक्षाके कारण ही क्यासे क्या हो जाते हैं। उदाहरणार्थ रेविटका 'रिपीट', डाक्टरका 'डगडर', जमानाका 'जमाना', एञ्जिनका 'इंजन' या 'अंजन', मोहताजका 'मुस्ताज', लाइब्रेरीका 'रायबरेली' या 'लाबरेली', रिपोर्टका 'रपट', गार्डका 'गारद', ड्रिलका

'दलेल', इन्सपेक्टरका 'इसपट्टर', हू कम्स देयरका 'हुकुमसदर', लार्डका 'लाट', टाइमका 'टेम', सिगनलका 'सिंगल', दर्ख्वास्तका 'दरखास', मास्टरका 'महटर', या 'महट्टर' कानूनगोका 'कनुनगोह', प्लाटूनका 'पलटन', ज्वाइनका 'जैन', तथा काजीहाउसका 'काजीहौद' आदि देखे जा सकते हैं। (६) **जान बूझकर परिवर्तन**—भाषामें कभी-कभी जान बूझकर भी उस भाषाके प्रबुद्ध बोलनेवाले या लेखक आदि परिवर्तन कर देते हैं। अलेक्ज़ेंडरका 'प्रसादने' अलक्षेन्द्र कर दिया है। यह परिवर्तन स्वाभाविक नहीं है। इसी प्रकार अनेक देशज तथा विदेशी शब्दोंका संस्कृतके साहित्यकारोंने संस्कृतीकरण किया है। कभी-कभी उपयुक्त शब्द न मिलनेपर लोग जान बूझकर किसी मिलते-जुलते शब्दका नये अर्थमें प्रयोग कर देते हैं और शब्द यदि बहुत प्रचलित न रहा हो तो भाषा उस नये अर्थमें भी चल पड़ती है। अभिव्यक्तिमें चमत्कार या नवीनता आदि लानेके लिए कलाकारों द्वारा निरंकुश प्रयोग भी इस प्रकारके परिवर्तन भाषामें ला देता है।

(आ) वाह्य वर्ग—इसमें प्रमुख ये हैं:—(१) **भौतिक वातावरण**—भाषापर इसका सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है। एक भाषाके अन्तर्गत अनेक बोलियाँ या एक परिवारमें अनेक भाषाएँ मूलत: इसी कारणसे बन जाती हैं। भौतिक वातावरणका प्रभाव कई प्रकारसे पड़ सकता है—(क) गर्मी और सर्दीके अधिक या कम होनेसे जीविका, स्वभाव, रहन-सहन, आचरण आदिपर प्रभाव पड़ता है और भाषा इन सभीपर आधारित है। (ख) मैदान आदिमें दूरतक लोग सम्पर्क रख पाते हैं, अतः भाषामें एकरूपता बनी रहती है पर पहाड़ी भागोंमें या अन्य ऐसे भागों, जहाँ आने-जानेकी सुविधा कम है, या है ही नहीं, लोग अलग-अलग रहनेके आदी हो जाते हैं, फल यह होता है उनकी भाषाका अलग-अलग विकास होता है और कई भाषाएँ या अनेक बोलियोंका विकास हो जाता है। इसी कारण पहाड़ोंपर बोली थोड़ी-थोड़ी दूरपर थोड़ी-बहुत अवश्य बदल जाती है। बड़ी नदियोंके दोनों किनारोंकी बोलीमें भी इसी कारण कुछ अन्तर दिखाई देता है। ग्रीसमें कुछ ऐसे ही कारणोंसे नगर-जनपदकी प्रथा चल पड़ी। फल यह हुआ कि वहाँ बोलियोंकी भरमार हो गयी। (ग) भूमि यदि उपजाऊ है तो खाद्य-सामग्रीकी कमी न रहेगी और फल यह होगा कि लोगोंको उन्नति करनेका समय मिलेगा, अतः उन लोगोंकी भाषामें अनुपजाऊ भूमि रहनेवालोंकी अपेक्षा संस्कार अधिक होगा। वे लोग गूढ़ विषयोंपर सोचेंगे, अतः उसकी अभिव्यंजनाके लिए उनकी भाषा गम्भीर होती जायगी, जैसे कि भारत या यूनान आदिमें हुआ है। इसके विरुद्ध पहाड़ी या जंगली लोगोंकी भाषामें इस प्रकारका विकास नहीं होता। इस तरह उपजाऊ भूमिके कारण भी भाषाके परिवर्तन एवं विकासको बल मिलता है। (२) **सांस्कृतिक प्रभाव**—समाजका प्राण संस्कृति है, अतः उसका भी प्रभाव भाषापर पड़ता है और उसके कारण भाषामें विकास होता है। इसके अन्तर्गत भी प्रभाव कई प्रकारका हो सकता है। (क) सांस्कृतिक संस्थाएँ—प्राचीन शब्दोंको एक बार फिर ला देती हैं साथ ही विचारमें भी परिवर्तन कर देती हैं, जिससे अभिव्यक्तिकी शैली आदि प्रभावित होती है। १९वीं सदीके अन्त और बीसवींके आदिकी हिन्दी भाषापर आर्यसमाजके कारण संस्कृत शब्द कितने अधिक अपने तत्सम रूपमें घुस आये हैं, कहनेकी आवश्यकता नहीं। (ख) व्यक्ति—महान् व्यक्तित्वका भी भाषापर प्रभाव पड़ता है। गोस्वामी तुलसीदासने उत्तरी भारतकी भाषा, समाज तथा धर्म सभीको यथेष्ट प्रभावित किया है। कितने शब्दोंको उन्होंने कवितामें तुक आदिके

लिए कुछ तोड़कर रखा और वे चल पड़े। उनके बादकी कविताकी शैली भी उनसे प्रभावित हुई थी। इसी प्रकार गांधीजीके कारण हिन्दीकी हिन्दुस्तानी शैलीको काफी बल मिला। (ग) संस्कृतियोंका सम्मिलन-व्यापार, राजनीति तथा धर्मप्रचार आदिके कारण कभी-कभी दो संस्कृतियोंका सम्मिलन होता है। इसका भी भाषाके विकास या परिवर्तनपर प्रभाव पड़ता है। उदाहरणके लिए भारत हीको लें। यहाँ इस प्रकारके सम्मिलन हुए, जिनमें कमसे कम पाँच अधिक महत्त्वपूर्ण हैं--

(१) आस्ट्रिकों और द्राविड़ोंका।
(२) द्राविड़ों और आर्योंका।
(३) आर्यों और यवनोंका।
(४) भारतीयों और तुर्कों तथा मुसलमानोंका।
(५) भारतीयों और यूरोपवालोंका।

(अ) प्रत्यक्ष--जैसे : **(१) शब्दोंकी लेन-देन**--आज हमारी भारतीय भाषाओंमें उपर्युक्त सभी संस्कृतियोंके शब्द हैं। हिन्दीमें ही आस्ट्रिकोंके--गंगा आदि, द्राविड़ोंके-नीर, आलि, मीन आदि, यवनों (ग्रीकों)के-घोड़ा, दाम, सुरंग आदि, तुर्कों एवं मुसलमानोंके-पाजामा, बाजार, दूकान, कागज़, कलम, सन्दूक, किताब, तकिया तथा रजाई आदि, यूरोपियनोंके-खेल, न्याय और फैशन आदि सम्बन्धी हाकी, टेनिस, कालर, टाई, पेंसिल, बटन, फ्रेम, डिग्री, साइकिल, मोटर, रेल, स्टेशन, निब, कोट, कलक्टर तथा पेन आदि हजारों शब्द प्रचलित हैं। हिन्दीमें इस प्रकारके शब्दोंकी ठीकसे छान-बीन की जाय तो इनकी संख्या आठ हजारसे कम न होगी।

(२) **ध्वनिका आना**--मूल यूरोपीय भाषामें टवर्गीय ध्वनि नहीं थी पर भारतमें आनेपर द्राविड़ोंके प्रभावसे आर्य भाषामें ये ध्वनियाँ आ गयीं और आज सभी ध्वनियों-की भाँति इसका भी प्रयोग होता है। हिन्दी भाषामें भी मुसलमानों तथा अंग्रेजोंके सम्पर्कसे कई नवीन ध्वनियाँ आ गयीं हैं। जैसे,क़, ज़, ग़ तथा ऑ आदि। वाक्य-गठन, मुहावरे, लोकोक्ति, अभिव्यक्तिकी शैली भी विदेशी भाषाओंसे प्रभावित होती हैं। उदाहरणार्थ हिन्दी इस दृष्टिसे फ़ारसी तथा अंग्रेज़ी आदिसे पर्याप्त प्रभावित हुई है।

(आ) **अप्रत्यक्ष**--विचार-विनिमयके कारण एक दूसरेके साहित्य कला आदिपर भी प्रभाव पड़ता है और उससे भी भाषा (गठन, अभिव्यक्ति-पद्धति तथा मुहावरे आदि) अछूती नहीं रहती।

(३) **समाजकी व्यवस्था**--सामाजिक व्यवस्थाके कारण समाजमें शान्ति या अशान्ति रहती है और उसका भी जीवनके प्रत्येक अंगपर प्रभाव पड़ता है। यह प्रभाव घूम-फिरकर भाषापर भी पड़ता है। युद्ध या क्रांतिमें भाषामें विशेष रूपसे ध्वनि-परिवर्तन होते हैं। लोगोंके पास इतना समय नहीं रहता और न शान्ति ही रहती है कि उच्चारण पूर्णरूपेण करें। संकेतसे अधिक काम लेना पड़ता है। नवीन युगमें समय कम होनेके कारण ही अनेक प्रचलित शब्दोंके संक्षिप्त रूप बनाये गये हैं। हम कृ० पृ० उ० (p. t. o.)लिखकर 'कृपया पृष्ठ उलटिये'का काम चला लेते हैं। पूरा नाम न कहकर शर्मा, वर्मा और तिवारी ही कहा जाता है। सी० आई० डी०, बी० सी०, डी० एम०, नेफा, पेप्सू तथा यूनेस्को आदि भी इसी प्रकारके संक्षिप्त रूप हैं।

(४) **बोलनेवालोंकी उन्नति**--बोलनेवालों-की उन्नति--वैज्ञानिक या अन्य क्षेत्रोंमें --होती है तो भाषामें भी परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन दो रूपोंमें हो सकता है। एक तो नयी उन्नतिके अनुरूप नयी अभि-व्यक्तियोंके लिए भाषामें कुछ विकास होता है, कभी-कभी पुराने शब्दोंमें नया अर्थ आ जाता है और दूसरे यदि कुछ नयी चीजें--मशीन, वस्त्र, खाना, मनोरंजन आदि--(या विचार) आ जाते या आविष्कृत हो

जाते हैं, तो उनके लिए नये शब्द आ जाते हैं। भारत इधर दिनपर-दिन उन्नति करता जा रहा है, अतः उसकी भाषाओंमें बड़ी तेज़ीसे नये शब्द आते जा रहे हैं। यदि कोई देश इसके उलटे बहुत अवनति करने लगे और खानेसे मुहताज हो जाय तो अत्यधिक आराम(luxury)की बहुत-सी चीज़ें लुप्त हो जायँगी, और यदि स्थिति बदली नहीं तो उनके प्रसंग-में प्रयुक्त शब्द भी लुप्त हो जायँगे।

(५) सादृश्य--(सादृश्य स्वयं स्वतन्त्र कारण नहीं कहा जा सकता। पर, सुविधाकी दृष्टिसे आये परिवर्तनोंमें इसका स्थान अलग है, क्योंकि इसके परिवर्तनका परिणाम किसी अन्य वाक्य या शब्दके अर्थ या ध्वनिपर आधारित रहता है। इसी कारण इसे यहाँ अलग माना गया है और आगे भी कई स्थानोंपर इसे इसी अर्थमें कारण-के रूपमें अलग रखा गया है, पर उसका आशय यही समझना चाहिये)। कहते हैं खरबूज़ेको देखकर खरबूज़ा रंग बदलता है। इसी प्रकार भाषामें भी शब्द या वाक्य दूसरे शब्द या वाक्यके सादृश्यपर उसी प्रकारके बन जाते हैं। इस प्रकार इसका भी भाषाके विकास या परिवर्तनमें बहुत बड़ा हाथ है। इसे उपर्युक्त आभ्यन्तर और वाह्य किसी एक वर्गमें नहीं रखा जा सकता, क्योंकि यह दोनोंमें आता है। आजकी हिन्दीकी वाक्य-रचना बहुतसे लेखकोंमें अंग्रेज़ीके सादृश्यपर मिलती है। यह वाह्य है। दूसरी ओर 'पाश्चात्य'के सादृश्यपर 'पौर्वात्य' शब्द चल रहा है, 'एकदश' द्वादशके सादृश्यपर 'एकादश' हो गया है, या 'निर्गुण'के सादृश्यपर 'सगुण' या सर्गुन हो गया है; यह आभ्यन्तर है। इसी प्रकार अनेक अन्य उदाहरण भी लिये जा सकते हैं।

भाषाके विकासके सम्बन्धमें अन्तमें यह कह देना आवश्यक है कि भाषाके विकासका आशय यह नहीं कि भाषा और अच्छी या ऊँची होती जाती है। विकासका अर्थ केवल आगे बढ़ना या परिवर्तन है। परिवर्तनसे भाषा अभिव्यंजना-शक्ति, माधुर्य तथा ओज आदि-की दृष्टिसे ऊँचे भी उठ सकती है और नीचे भी जा सकती है। इस सम्बन्धमें कोई निश्चित सिद्धान्त नहीं दिया जा सकता है। हाँ, इतना अवश्य कहा जा सकता है कि वह सरलताकी ओर जाती है।

भाषा-परिवर्तनमें व्याघात और उसके कारण--प्रायः ऐसा देखा जाता है कि कुछ भाषाएँ बहुत कम समयमें आश्चर्यजनक विकास कर लेती हैं और दूसरी ओर कुछ ऐसी भी भाषाएँ मिलती हैं, जो अधिक समयमें भी बहुत कम विकास कर पाती हैं। भाषाके विकासपर हम पीछे विचार कर चुके हैं। बहुधा उन कारणोंके उलटे कारण जब उपस्थित होते हैं तो भाषाके विकासमें व्याघात उपस्थित होता है। प्रधान कारण निम्नांकित हैं--(१) **भौगोलिक परिस्थिति**--यदि कोई देश अपनी भौगोलिक परिस्थितियोंके कारण इस प्रकार घिरा हुआ हो, कि सरलतासे लोग वहाँ न पहुँच सकें तो वहाँकी भाषामें विकास बहुत धीमा होता है। इसका कारण यह होता है कि बाहरी लोगोंसे संपर्क नहीं हो पाता, अतः बाह्य प्रभाव बिलकुल नहीं पड़ता। भारोपीय परिवारकी 'आइसलैंडिक' भाषा इसी कारण अन्योंकी अपेक्षा बहुत ही कम विकसित हुई है। (२) **खाद्यान्नकी कमी**--देशमें यदि खाद्याभाव है तो स्वभावतः लोगों-का अधिक समय भोजनके पीछे चला जाता है, अतः अन्य सूक्ष्म समस्याओंपर विचार करनेका उन्हें समय नहीं रहता और न कला एवं साहित्यकी ही उन्नति होती है। ऐसी अवस्थामें भी भाषाका विकास नहीं होता या बहुत कम होता है। रेगिस्तानी और जंगली भाषाएँ इसी कारण प्रायः कम या बहुत धीरे-धीरे विकसित होती हैं। (३) **अभिव्यक्तिके लिए यथासाध्य प्रचलित भाषासे न हटना**--भाषाका अपने विचारोंको व्यक्त करनेके लिए ही लोग प्रयोग करते हैं, अतः यह आवश्यक होता है कि यथासाध्य प्रचलित भाषासे तनिक भी न हटें। हटनेपर अस्पष्टता आनेका

भय रहता है। यह भावना सभी भाषाओंके विकासमें बाधक सिद्ध होती है। (४) **समाजके हँसनेका भय**––समाजमें भाषाका प्रयोग होता है। यदि लोग अशुद्ध बोलें तो समाज उनपर हँसता है। छोटे बच्चे, जब 'रुपया'को 'लुपया' या 'घड़ी'को 'घली' कहते हैं और सुननेवाले हँस देते हैं, तो वे शीघ्रातिशीघ्र रुपया या घड़ी कहनेका प्रयास करते हैं और सफल भी हो जाते हैं। इस प्रकार समाजके हँसनेके भयसे भी लोग यथासाध्य भाषाके प्रचलित रूपपर ही चलनेका प्रयास करते हैं और इससे भी भाषाका विकास रुकता है। (५) **व्याकरण**––व्याकरणकी शिक्षा भी लोगोंको आदर्श-प्रयोगपर चलनेको प्रेरित करती है। जिन लोगोंको व्याकरणका ज्ञान नहीं रहता वे अशुद्धियाँ अधिक करते हैं। इसी कारण भाषामें विकास लानेका श्रेय ग्रामीणों और अशिक्षितोंको नागरिकों एवं शिक्षितोंकी अपेक्षा अधिक है। सत्य तो यह है कि भाषाका मूल विकास उन्हीं लोगोंमें होता है। इस प्रकार शिक्षा और प्रमुखतः व्याकरणकी शिक्षा भी भाषाके विकासमें बाधक या व्याघात सिद्ध होती है। (६) **शिक्षा, समाचारपत्र तथा रेडियो आदि**––आजकल इन सबके कारण भाषाके परिनिष्ठित रूपका प्रचार अधिक है, अतः स्वभावतः लोग उस रूपके प्रभावसे गलतियाँ (जिनसे भाषाका विकास होता है) करके भी उन्हें सुधार लेते हैं और इस प्रकार विकास नहीं हो पाता।

भाषाके विविध रूप––ऊपर भाषाकी परिभाषापर विचार किया जा चुका है। वह सामान्य भाषा थी। इस सामान्य भाषाके अन्तर्गत भाषाके बहुतसे रूप आते हैं। ये रूप प्रमुखतः दो आधारोंपर आधारित हैं––**इतिहास और भूगोल**। इन्हीं दोनों आधारोंपर भाषाके विभिन्न रूप बनते हैं। भारतमें कभी संस्कृत बोली जाती थी, फिर पालि बोली जाने लगी, फिर प्राकृत और फिर अपभ्रंश। भाषाके ये भेद ऐतिहासिक हैं। एक ही भाषाका इतिहासके एक समयमें जो रूप था उसे 'संस्कृत' कहते हैं और दूसरे समयमें जो रूप था उसे 'पालि' कहते हैं। इसी प्रकार प्राकृत, अपभ्रंश भी। किन्तु एक दूसरे प्रकारके भी रूप हैं, जिन्हें भौगोलिक रूप कह सकते हैं। अपभ्रंशके बाद संस्कृत, पालि, प्राकृतकी परम्परामें जो रूप (ऐतिहासिक रूप) आया उसे 'आधुनिक भारतीय आर्य भाषा' कह सकते हैं, किन्तु इस ऐतिहासिक रूपके आज बहुतसे भौगोलिक रूप हैं, जैसे पंजाबी, हिन्दी, गुजराती, मराठी तथा बंगाली आदि।

भाषा-परिवार––(दे०) **भाषाके विविध रूप** तथा **पारिवारिक वर्गीकरण**।

भाषा-प्ररूप विज्ञान (linguistic typology)––भाषाओंके अध्ययनका एक रूप। इसमें भाषाओंके प्ररूप (type) या उनकी रचना (structure)का अध्ययन होता है। इस अध्ययनके आधारपर **रूपात्मक वर्गीकरण** (दे०) भी किया जाता है। **भाषा-प्ररूप विज्ञान**का प्रयोग विद्वानोंने एकसे अधिक अर्थोंमें किया है। कुछ लोग इसे 'आकृति-मूलक वर्गीकरण'का पर्यायसा मानते हैं। इसी अर्थमें लेकर कैरॉल आदि विद्वानोंने इसका नाम लेते हुए भाषाके तीन वर्गों (isolating, agglutinative, inflective)का उल्लेख किया है। बिलकुल आधुनिक कालमें अमेरिकामें हॉकेट तथा जासेफ़ आदि कुछ अन्य विद्वानोंने सांख्यिकीय (statistical) दृष्टिकोणसे इसपर विचार किया है। अब कुछ लोग इसमें ध्वनियोंकी तुलनाके आधारपर भाषा-वर्गीकरणके पक्षमें हैं। मेरी व्यक्तिगत राय तो यह है कि 'लिंग्विस्टिक टाइपॉलोजी, (phonemic, phonetic, syntactic और morphemic आदि) उतने ही भेद किये जाने चाहिये, जितने भाषा-विज्ञानके प्रमुख विभाग हैं, और उन सभीके आधारोंपर भाषा-प्रकार (linguistic type) हो सकते हैं। आकृति या रूपपर आधारित अध्ययन महत्त्वपूर्ण है, पर शेष भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं हैं।

भाषा-भाषी समुदाय (speech community) एक भाषा बोलनेवालोंका समुदाय या समाज। इसे संक्षेपमें **भाषा-समुदाय** या **भाषा-समाज** भी कहते हैं।

भाषाभूगोल (linguistic geography) --इसे **क्षेत्रीय भाषा-विज्ञान** (areal linguistic) भी कहते हैं। **अर्थ और अध्ययन-विस्तार**--भौगोलिक विस्तारमें स्थानीय विशेषताओंकी दृष्टिसे किसी क्षेत्रकी भाषाका अध्ययन ही भाषा-भूगोल है। दूसरे शब्दोंमें किसी क्षेत्रमें बोली जानेवाली भाषाओं, भाषा या बोलियों आदिमें ध्वनि, सुर, शब्द-समूह, रूप तथा वाक्य-गठन आदिकी दृष्टिसे कहाँ-कहाँ क्या-क्या अन्तर या विशेषताएँ हैं, इनका अध्ययन ही भाषा-भूगोलमें किया जाता है। इस प्रकार भाषा-भूगोलमें पहले किसी क्षेत्रके अनेक स्थानोंकी भाषाका वर्णनात्मक अध्ययन किया जाता है और फिर उन विभिन्न स्थानोंकी भाषा-विषयक विशेषताओंका तुलनात्मक अध्ययन कर यह निश्चय किया जाता है कि कितने स्थानोंकी भाषा लगभग एकसी है और स्थानीय अन्तर प्रायः नहींके बराबर है, तथा किस-किस स्थानसे भाषामें अन्तर आने लगा है एवं वह अन्तर कहाँ थोड़ा है और कहाँ अधिक है। साथ ही कहाँसे भाषामें इतना परिवर्तन आरम्भ हो गया है कि एक क्षेत्रका व्यक्ति दूसरे क्षेत्रकी भाषाको समझ न सके। इन बातोंका निर्धारण हो जानेपर यह निश्चयके साथ कहा जा सकता है कि उस क्षेत्रमें 'इतनी' भाषाएँ हैं, और उनके क्षेत्र अमुक स्थानसे अमुक स्थानतक हैं। साथ ही प्रत्येक भाषाके अन्तर्गत आनेवाली बोलियों, और प्रत्येक बोलीके अन्तर्गत आनेवाली उप-बोलियों एवं उनके क्षेत्रों (तथा एकको दूसरेसे अलग करनेवाली प्रमुख विशेषताओं) आदिका भी निर्धारण किया जाता है। शुद्ध वैज्ञानिक दृष्टिसे प्रत्येक व्यक्तिकी भाषा, जिसे व्यक्ति-भाषा या व्यक्ति-बोली (idiolect) कहते हैं, दूसरेसे भिन्न होती है, और यहाँतक कि एक व्यक्तिकी भाषा भी हर क्षण बदलती रहती है। किसी व्यक्तिकी भाषाका विभिन्न दृष्टियोंसे, जो स्वरूप किसी दिन बजकर पाँच मिनटपर होगा, ठीक वही रूप दो बजकर छः मनटपर नहीं हो सकता, क्योंकि वह व्यक्ति भी ठीक वही नहीं है, जो दो बजकर पाँच मिनटपर था। किन्तु व्यावहारिक दृष्टिसे इतनी सूक्ष्मतामें नहीं जाया जा सकता। इसीलिए सामान्य रूपसे यह कहा जा सकता है कि किसी क्षेत्रकी व्यक्ति-भाषाओं (idiolects) में यदि कोई स्पष्ट भेद नहीं है तो उस क्षेत्रकी भाषाको 'उप-बोली कह सकते हैं। ऐसी कई उप-बोलियों-(जिनमें आपसमें थोड़ा ही अन्तर है) से मिलकर बने क्षेत्रकी भाषाको 'बोली' कह सकते हैं। ऐसी कई बोलियों (जिनमें आपसमें अंतर तो बहुत स्पष्ट है किन्तु उनमें बाह्य और आंतरिक दृष्टिसे आपसी साम्य कमसे कम इतना है कि किसी एकके बोलनेवालेको दूसरी बोलीका बोलनेवाला सरलतासे समझ सके) से मिलकर बने क्षेत्रकी भाषाको 'भाषा' कहते हैं। दो (या अधिक) ऐसे क्षेत्रकी भाषाएँ, जिनके व्यवित एक दूसरेको सरलतासे न समझ सकें, एक भाषाके अन्तर्गत नहीं माने जायँगे और वे सभी अलग-अलग भाषाएँ मानी जायँगी। बोलियोंका निर्धारण हो जानेपर उनके क्षेत्रमें ध्वनि, रूप, शब्द आदि सभी दृष्टियोंसे सर्वेक्षण किया जाता है और इस प्रकार अलग-अलग बोलियोंके अलग-अलग व्याकरण तथा कोश बनाये जाते हैं। उप-बोलियोंके अन्तरोंका भी विवरण प्रस्तुत किया जाता है और आवश्यकतानुसार बोली-क्षेत्रोंके अलग-अलग नक्शे भी बनाये जाते हैं, जिनमें भाषा सम्बन्धी विशेषताओंको स्पष्ट करनेवाली रेखाएँ (देखिये आगे) खींची जाती हैं। बोलियोंके इस प्रकारके सर्वांगीण--वर्णनात्मक ऐतिहासिक और तुलनात्मक--अध्ययनको **बोली-विज्ञान** (dialectology) कहते हैं। सैद्धांतिक दृष्टिसे बोलियोंके बनने एवं उनके भाषा बन जानेके कारण आदिका

भी इसमें विवेचन किया जा सकता है। बोलीके इस अध्ययनमें स्पष्टत: दो भाग हैं : एक भाग तो भौगोलिक है और दूसरा अन्य प्रकारका । भौगोलिक भागमें बोलियोंके भौगोलिक विस्तार एवं स्थानीय अन्तरों आदिका अध्ययन तथा नक्शे बनाना आदि आता है। **बोली-भूगोल**-(dialect geography) में बोलीका यह भौगोलिक अध्ययन ही तत्त्वत: आता है, यों आजकल इसका प्रयोग बोलीके पूरे अध्ययन, यहाँतक कि तुलनात्मक और ऐतिहासिकके लिए भी होने लगा है और इस प्रकार उसे बोली-विज्ञानके बहुत निकट ला दिया गया है । भाषा-भूगोलमें बोली-भूगोल पूर्णत: आ जाता है। भाषा-भूगोलमें दो भाषाओंकी सीमा-रेखा निर्धारित करना या किसी असर्वेक्षित क्षेत्रमें सर्वेक्षणके सहारे विभिन्न भाषाओंका पता लगाना तो आता ही है, साथ ही किसी एक भाषाके पूरे क्षेत्रका सर्वेक्षण कर उनकी स्थानीय विशेषताओंका अध्ययन भी आता है, और यही अध्ययन बोली-भूगोल भी है । जैसा कि नामसे स्पष्ट है एकमें भाषापर बल है तो दूसरेमें बोलीपर, यों बोली भाषाका अंग है। इस प्रसंगमें **शब्द-भूगोल**-(word geography)का भी उल्लेख किया जा सकता है । किसी क्षेत्रमें एक शब्दके एकसे अधिक रूपोंका अलग-अलग स्थानोंमें प्रचलन, तथा एक भावके लिए एकसे अधिक शब्दों या एकसे अधिक भावोंके लिए एक शब्दका विभिन्न स्थानोंमें प्रयोग आदिका अध्ययन इसके अन्तर्गत आता है। यह **भाषा-भूगोल** या **बोली-भूगोल**की एक शाखा है। ध्वनि-भूगोल (phono-geography), **रूप-भूगोल** (morph-geography) **वाक्य-भूगोल**, **अर्थ-भूगोल** आदि रूपोंमें इस प्रकारकी और भी शाखाएँ-प्रशाखाएँ बनायी जा सकती हैं । **इतिहास**--भाषा-भूगोलके अध्ययनकी परम्परा १९वीं सदीके प्रथम चरणतक जाती है। इस क्षेत्रमें प्रथम उल्लेख्य नाम श्मेलरका है । इन्होंने १८२१ के कुछ

पूर्व एक बवेरियन उपबोलीका अध्ययन करके उसका व्याकरण तैयार किया था। १८७३में स्कीटने इंगलिश डायलेक्टॉलोजी सोसायटीकी स्थापना की और बादमें एटलस बनानेका भी प्रयास किया गया । इसके तीन वर्ष बाद १८७६ में जर्मन विद्वान् जॉर्ज वेंकरने राइनमें स्थानीय बोलियोंका सर्वेक्षण किया । बादमें पूरे जर्मनीको अपने सर्वेक्षणका क्षेत्र बनाया और सरकारी सहायतासे स्कूलके शिक्षकोंके सहारे ४० वाक्योंको ४०,००० से अधिक स्थानीय बोलियोंमें रूपांतरित कराया। यह अध्ययन बहुत विस्तृत तो था किन्तु भाषा-विज्ञानके सिद्धान्तोंसे अपरिचित लोगोंने काम किया था, अतएव इसके परिणाम बहुत विश्वसनीय नहीं थे । बादमें रीड द्वारा सम्पादित होकर इनके आधारपर नक्शे छपे हैं । वेंकरके अध्ययनपर आधारित सिद्धान्तोंपर १९०८ में यावर्गने विचार किया। १८९५ में फिशरने अपना स्वाबियाका एटलस छपाया । भाषा-भूगोलके क्षेत्रमें गिलेरो और एडमंटका फ्रांसमें किया गया सर्वेक्षण-कार्य बड़ा महत्त्वपूर्ण माना जाता है। एडमंट ध्वनि-विज्ञान आदिसे पूर्ण परिचित था और उसने अकेले लगभग २००० शब्दों और वाक्यांशोंके आधारपर ६०० से कुछ अधिक स्थानोंका अध्ययन किया । जर्मन-अध्ययनकी तुलनामें यहाँ स्थान तो बहुत कम लिये गये थे, किन्तु एडमंट अपेक्षित शिक्षण-प्राप्त था, अतः उसकी सामग्री अपेक्षाकृत बहुत प्रामाणिक थी । गिलेरोने इसी आधारपर फ्रांसका एटलस (१८९६ से १९०८) प्रकाशित किया । ये नक्शे अब भी भाषा-भूगोलके क्षेत्रमें अत्यन्त महत्त्व रखते हैं। एलिसने अंग्रेजी बोलियोंके ध्वनिपक्षपर कार्य किया और राइटने अंग्रेजी बोलियोंकी ध्वनिका कोश और व्याकरण (१८९६ से १९०५) प्रकाशित किया । १८९८ में हागने दक्षिणी स्वाबियाके एक जिलेका पर्यवेक्षण किया और भाषा-भूगोलके अध्ययनके सिद्धान्तोंका विवेचन किया ।

१८९८ से १९१० तक बेनिक तथा क्रिस्टेन्सनने डेनमार्कमें काम किया और उसे प्रकाशित भी किया । वेगैन्डका रूमानियामें किया गया कार्य १९०९में प्रकाशमें आया। इटलीमें यावर्ग और युदने कार्य किया वादमें उनका एटलस (१९२८ से १९४० तक) प्रकाशित हुआ । यह कार्य भी महत्त्वपूर्ण है। रूक्स द्वारा ब्रिटैनीमें किया गया कार्य १९२४ में और कोयके द्वारा नीदरलैंड और वेल्जियममें किया गया कार्य १९२७ में प्रकाशित हुआ। कोयकेका अध्ययन केवल दो शब्दोंके स्वर फ़ोनीमोंतक सीमित था। इधर कनाडा तथा अमेरिकामें कार्य हुआ है, जिसमें कुरेथका न्यू इंगलैंडका एटलस (१९३९-४३), हैंडबुक तथा शब्द-भूगोल आदि प्रकाशन बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। भारतमें ग्रियर्सनने सर्वेका कार्य किया था, जो अपनी कमियोंके बावजूद बहुत महत्त्व रखता है। इसका प्रकाशन २०वीं सदीके प्रथम चरणमें हुआ। इधर डॉ० विश्वनाथ प्रसादकी देखरेखमें बिहारके कुछ पूर्वी भागका सर्वेक्षण हुआ है। पंजावके भाषा-विभागकी ओरसे भी कुछ कार्य हो रहा है। भाषा-भूगोलके क्षेत्रमें काम करनेवालोंमें कुछ और उल्लेख्य नाम पॉप, वाच, बीनरीच, गैमिलशेग, दउजा, ग्राइरा, ब्लॉक तथा ब्लैंक्वार्ट आदिके हैं।

पद्धति—जिस भौगोलिक क्षेत्रमें भाषाका अध्ययन करना हो, पहले उसमें घूम-फिरकर मोटे ढंगसे उसकी भाषा-स्थितिका पता लगा लेते हैं और इस आधारपर प्रारम्भिक रूपमें उसे अध्ययनकी सुविधाके लिए खण्डोंमें भी बाँट लेते हैं। साथ ही वहाँकी स्थिति और अपने अध्ययनके आवश्यकतानुसार शब्दों या वाक्यों आदिकी सूची तैयार करते हैं। सूची कैसे बनायें तथा उनके सम्बन्धमें लोगोंसे सूचना कैसे प्राप्त करें, इसका अध्ययन **क्षेत्र-पद्धति** (field method)के अन्तर्गत आता है। भाषाका अध्ययन ध्वनि, रूप, शब्द, वाक्य तथा अर्थ इन पाँच दृष्टियोंसे किया जा सकता है। ज्ञातव्य सूचनाओंकी दृष्टिसे सूची बनायी जाती है और पूछनेमें यह ध्यान रखा जाता है कि बतानेवाला या बोलनेवाला किसी बाह्य प्रभावसे प्रभावित न हो और स्वाभाविक रूपमें सभी बातोंको बताये। सूचीके आधारपर फिर पूरे क्षेत्रसे सामग्री एकत्र करते हैं। इसके लिए कभी-कभी यह भी किया जाता है कि क्षेत्रमें उन स्थलोंका निश्चय कर लिया जाता है, जहाँसे सामग्री लेनी हो। अच्छा तो यह होता है कि हर ५-५ या १०-१० मीलके बादसे सामग्री लें, किन्तु यदि इतने अधिक स्थलोंसे लेना सम्भव न हो तो उन स्थलोंपर लेना चाहिये जहाँ स्पष्टतः कुछ अन्तर हो। सामग्री एकत्र करनेपर उस क्षेत्रके नक्शेमें उसे विषयानुसार भरा जाता है। मान लें कि उस क्षेत्रमें उत्तरी भागमें 'आ' अधिक विवृत है और दक्षिणमें अर्द्ध संवृत है, तो बीचमें एक रेखा खींचेंगे। वह रेखा ऐसे स्थलोंसे होकर जायगी, जिसके उत्तरमें 'आ' विवृत हो और दक्षिणमें संवृत हो। इस प्रकारकी रेखाएँ सामान्य रूपसे 'आइसोग्लास' कहलाती हैं, यद्यपि इन्हें 'ध्वनि-रेखा' या 'आइसोफ़ोन' कहना अधिक उपयुक्त है। इसी प्रकार ध्वनिके अन्तरोंकी रेखाएँ बना ली जायँगी। हर विशेषताके लिए अलग-अलग नक्शेका प्रयोग अधिक अच्छा होता है। रूप, वाक्य, शब्द तथा अर्थकी दृष्टिसे भी इसी प्रकारके नक्शे (दे० **भाषा-एटलस, बोली-एटलस**) बनाये जा सकते हैं। सबके तैयार होनेपर यह स्पष्ट हो जायगा कि पूरे क्षेत्रमें भाषा संबंधी विशेषताएँ क्या हैं? पूरे क्षेत्रको बोलियोंमें विभाजित करनेके लिए इन नक्शोंका तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। तुलनात्मक अध्ययनसे यह तो स्पष्ट हो जायगा कि प्रायः सभी रेखाएँ (**ध्वनि-रेखा**, (दे०) **रूप-रेखा** (दे०), **वाक्य-रेखा** (दे०), **अर्थ-रेखा** (दे०) तथा **शब्द-रेखा** (दे०) अलग-अलग हैं, पर साथ ही यह भी स्पष्ट हो जायगा कि कुछ स्थलोंपर कुछ रेखाएँ एक दूसरेके अधिक समीप हैं। कभी-कभी एकमें मिल भी जाती हैं। जहाँ भाषाका

अन्तर दिखानेवाली ये दो या अधिक रेखाएँ एक दूसरेपर हों या समीप हों उसीको दो बोलियोंकी सीमा-रेखा मानते हैं, क्योंकि इसीके आस-पाससे दो बोलियोंके अन्तरका आरम्भ होता है, यों दो बोलियोंके बीचमें सीमा-रेखा जैसी कोई स्पष्ट चीज नहीं होती। प्रायः बोलियोंके बीच एक ऐसी पतली पेटी रहती है जिसमें दोनोंकी विशेषताएँ मिलती हैं।

इस प्रकार बोलियोंके क्षेत्रका निर्धारण हो जानेपर उनके क्षेत्रसे अधिक सूक्ष्मतासे सामग्री एकत्र कर उनका व्याकरण, कोश आदि बनाया जा सकता है अथवा उपबोलियों या उनके भी स्थानीय भेदोंके क्षेत्रोंका निर्धारण हो सकता है। कहना न होगा कि यह अध्ययन वर्णनात्मक तथा तुलनात्मक है। तुलना भौगोलिक रूपोंकी है। इनका ऐतिहासिक अध्ययन भी हो सकता है, और साथ ही इस अध्ययनसे ऐतिहासिक परिणाम भी निकाले जा सकते हैं, और इससे प्राचीन इतिहासका पुनर्निर्माण भी किया जा सकता है।

भाषा-वर्गीकरण (classification of language)––(दे०) **विश्वकी भाषाओंका वर्गीकरण**।

भाषा-विकास (linguistic phylogeny) ––भाषा-विज्ञानकी एक उपशाखा जिसमें भाषा (सामान्य; विशेष नहीं) के विकासका अध्ययन किया जाता है। अभीतक यह अध्ययन शैशवावस्थामें है।

भाषा-विज्ञान-(linguistics)––जैसा कि नामसे स्पष्ट है, भाषा-विज्ञान **भाषा** (दे०) का विज्ञान है, अर्थात् **भाषा-विज्ञानमें भाषा (सामान्य या विशिष्ट) का वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है**। इसमें भाषाकी उत्पत्ति, गठन, प्रकृति एवं विकास आदिकी व्याख्या प्रस्तुत की जाती है, साथ ही इनसे संबद्ध सिद्धान्तों या नियमोंका भी निर्धारण किया जाता है।

'भाषा-विज्ञान' के नामकरणका एक लंबा इतिहास है। भाषा-विज्ञानके लिए आरंम्भमें जिन शब्दोंका प्रयोग हुआ उनमें 'comparative grammar' उल्लेख्य है। किसी समयमें लोग व्याकरण और भाषा-विज्ञानको मूलतः एक मानते थे, भाषा-विज्ञानमें कोई विशेषता यदि थी तो उसके तुलनात्मक (comparative) होनेकी। इसी कारण उसे **कंपरेटिव ग्रामर** (comparative grammar) कहा गया, किन्तु यह स्पष्ट हो जानेपर कि भाषा-विज्ञान केवल तुलनात्मक व्याकरण ही नहीं है, यह नाम छोड़ दिया गया। १९वीं सदीमें भाषा-विज्ञानमें भाषाओंकी तुलनापर पर्याप्त बल दिया जाता था, इस आधारपर इसे कुछ लोगोंने **कंपरेटिव फिलालोजी** (comparative philology) कहा। यह नाम कुछ दिनतक चला, पर बादमें यह भी छोड़ दिया गया। इसमें सबसे अधिक आपत्ति **कंपरेटिव** (तुलनात्मक) शब्दपर थी, क्योंकि शास्त्रीय-ज्ञान प्रायः सर्वदा ही तुलनात्मक होता है, अतः यह पूँछ व्यर्थ थी। सन् १७१६ ई० में डेवीज़ ने भाषा-विज्ञानसे मिलते-जुलते अर्थमें **ग्लासालोजी** (glossology) का प्रयोग किया था। १९वीं सदीके प्रथम तीन चरणोंमें भाषा-विज्ञानके लिए इसका प्रयोग कुछ लोगोंने किया, किंतु बादमें यह भी न चल सका। इसी प्रकार प्रिचर्डने १८४१ में **ग्लाटालोजी** (glottology) का प्रयोग भाषा-विज्ञानके लिए किया। बादमें मैक्समूलरने थोड़े भिन्न अर्थोंमें इसका प्रयोग किया। २०वीं सदीके आरम्भ में टकरने इस विज्ञानके नामोंपर विचार करते हुए (glottology) को सर्वोत्तम ठहराया, किन्तु उनके बाद किसीने इस नामको याद करनेका भी गौरव न दिया। कई देशोंमें इसके लिए **फिलालोजी** (philology) शब्द चलता रहा है। भारतमें पुरानी पीढ़ीके लोगोंमें (तथा कुछ अन्य देशोंमें भी) तो आज भी यह शब्द प्रचलित है। फिलालोजी मूलतः यूनानी भाषाका शब्द है। इसमें Philos का अर्थ है 'प्यार' या 'प्रेमी' और logos का अर्थ है 'बातचीत', 'शब्द' या

'भाषा' आदि । यूनानीसे लैटिनमें इसका रूप 'Philologia' और फ्रांसीसीमें 'philologie' हुआ । अंग्रेजीमें 'फिलालोजी' शब्दका प्राचीनतम प्रयोग सन् १३८६ ई०-में मिलता है। उस समय इसका अर्थ था—व्याकरण, आलोचना, साहित्य और ज्ञानका प्रेम । बादमें विकसित होकर इसका अर्थ हो गया, 'वह ज्ञान जो ग्रीक और लैटिन आदि क्लैसिकल भाषाओंको समझानेमें सहायता दे ।' भाषा-विज्ञानके लिए अंग्रेजीमें इस शब्दका पहला प्रयोग १८वीं सदीके दूसरे दशकमें मिलता है । बीचमें जैसा कि ऊपर संकेत किया गया है, इसके साथ 'कंपरेटिव' शब्द भी जोड़ दिया गया था, पर फिर व्यर्थ समझकर हटा दिया गया । भाषा-विज्ञानके आधुनिक विद्वान् अब इस शब्दको पसन्द नहीं करते । फ्रांसीसी भाषामें तो इस (philologie)का प्रयोग **पाठ-विज्ञान**के लिए भी होता है, और यों अंग्रेजी, फ्रांसीसी और जर्मनमें 'फिलालोजी' में भाषाके अध्ययनके अतिरिक्त साहित्य, शैली तथा इनसे सम्बन्धित सांस्कृतिक प्रवृत्तियोंका अध्ययन आदि भी आता है । कभी-कभी इसका अर्थ साहित्य-शास्त्रीय दृष्टिसे भाषाका अध्ययन भी किया जाता है । अंग्रेजीमें इस विज्ञानके लिए **साइंस ऑव लैंग्वेज** (science of language) नाम भी चलता है । पर यह बड़ा होनेसे नाम जैसा नहीं लगता । आज इसके लिए अधिक प्रचलित (और कदाचित् ठीक भी) शब्द **लिंग्विस्टिक्स** (linguistics) है । इसका आधार लैटिन शब्द lingua (=जीभ) है । मूलतः भाषा-विज्ञानके अर्थमें linguistiquc रूपमें यह शब्द फ्रांसमें चला और वहाँसे 'linguistic' रूपमें १९वीं सदीके चौथे दशकमें यह अंग्रेजीमें गृहीत हुआ और लगभग दो दशकोंतक इसी रूपमें चलता रहा । छठे दशकसे इसका रूप' linguistics हो गया और तबसे यही नाम चल रहा है । फ्रेंचमें यह अब भी linguistique है और जर्मनमें sprachwissenschaft जिसका अर्थ भी भाषा-विज्ञान ही है । यही दशा रूसीकी भी है । उसमें yazeikoznanie शब्द है, जिसमें 'यजिको' तो भाषा या जिह्वा है और 'ज्नानिय' विज्ञान । यों filologiya तथा linguistika भी चलते हैं । भारतमें ठीक आजके अर्थमें तो भाषा-विज्ञान जैसा विषय पहले कभी नहीं था, किन्तु उसके समीपवर्ती अर्थोंमें प्राचीन कालमें **निर्वचन-शास्त्र**, **व्याकरण**, **शब्दानुशासन** तथा **शब्दशास्त्र** आदिका प्रयोग होता था । आधुनिक कालमें **तुलनात्मक भाषा-शास्त्र**, **भाषा-शास्त्र**, **भाषा-विज्ञान**, **भाषा-विचार**, **तुलनात्मक भाषा-विज्ञान**, **शब्दशास्त्र**, **भाषा-तत्व**, **शब्दतत्व** आदि शब्द हिन्दी, मराठी तथा बंगला आदिमें प्रयुक्त हो रहे हैं । हिन्दीमें **भाषा-विज्ञान** अपेक्षाकृत अधिक प्रचलित हो गया है । यों कुछ लोगोंका कहना है कि 'भाषा-विज्ञान' शब्द 'फिलालोजी'का प्रतिशब्द था और आज 'फिलालोजी' शब्द इस विज्ञानके नये अर्थका द्योतक नहीं है, अतः 'भाषा-विज्ञान' शब्दको फिलालोजीका प्रतिशब्द मानकर उसीके स्थानपर प्रयुक्त करना चाहिये और लिंग्विस्टिक्सके अर्थमें 'भाषा-तत्त्व'को अपना लेना चाहिये । किन्तु तथ्य यह है कि 'भाषा-विज्ञान' शब्द 'फिलालोजी'का समानार्थी भले ही रहा हो पर हिन्दी आदिमें उसका प्रयोग और अर्थ 'लिंग्विस्टिक्स'से भिन्न नहीं रहा है साथ ही वह अपेक्षाकृत इस विज्ञानके लिए अपने यहाँ दो-तीन दशकोंसे अधिक प्रसिद्ध भी है । अतएव 'लिंग्विस्टिक्स'के स्थानपर हिन्दीमें 'भाषा-विज्ञान' का प्रयोग ही उचित माना जा सकता है । यों 'भाषा-शास्त्र' (डॉ० सक्सेनाने 'भाषा-शास्त्र'को लिंग्विस्टिक्सके लिए अशुद्ध नाम माना है । किंतु आज 'शास्त्र' शब्द अपने मूल अर्थमें ही न प्रयुक्त होकर बहुत विस्तृत अर्थ रखने लगा है । यदि 'भौतिक शास्त्र' में इसका प्रयोग ठीक है तो 'भाषाशास्त्र' में इसके अशुद्ध होनेका कोई कारण नहीं दीखता ।) या इस

तरहके अन्य नामोंमें कोई अशुद्धि नहीं है, किंतु एक विज्ञानके लिए एक ही शब्द निश्चित कर लेना स्पष्टताकी दृष्टिसे अधिक अच्छा रहता है।

भाषा-विज्ञानमें, भाषाका अध्ययन कई प्रकारसे तथा कई दृष्टियोंसे होता है। उन-पर दृष्टि रखते हुए भाषा-विज्ञानके प्रमुखतः तीन रूप माने जाते हैं:--

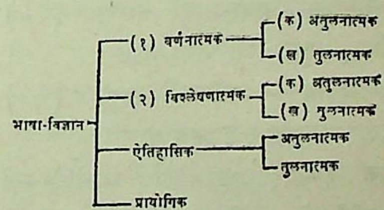
(१) **वर्णनात्मक** या **विवरणात्मक भाषा-विज्ञान** (descriptive linguistics)--इसमें किसी एक भाषाका किसी एक कालमें वर्णन (ध्वनि, रूप, शब्द, अर्थ एवं वाक्य-गठन आदिका) किया जाता है। कुछ लोग वर्णनात्मक तथा **संरचनात्मक** (structural)का प्रयोग एक ही अर्थ-में करते हैं, किंतु वस्तुतः इनमें अंतर है। वर्ण-नात्मक' पुराने ढंगके व्याकरणसे मिलता-जुलता होता है जिसमें मात्र वर्णन या विवरण होता है (ध्वनि, रूप, वाक्य-गठन आदिका) जब कि संरचनात्मकमें उक्त वर्णनके साथ संरचनाके उपादानोंका पूरा विश्लेषण भी होता है। आजका वर्णनात्मक भाषा-विज्ञान वस्तुतः **विश्लेषणात्मक** या **संरचनात्मक** है, इसीलिए इसका अधिक उचित नाम **संरच-नात्मक भाषा-विज्ञान** (structural linguistics) या **विश्लेषणात्मक भाषा-विज्ञान** (analytical linguistics) हो सकता है।

(२) **ऐतिहासिक भाषा-विज्ञान** (historical linguistics)--ऊपर कहा जा चुका है कि वर्णनात्मकमें किसी एक भाषाका एक निश्चित समयमें विवरण रहता है। किसी एक भाषाके विभिन्न कालोंके इस प्रकारके विवरण या वर्णन जब मिला दिये जाते हैं तो वह ऐतिहासिक अध्ययन हो जाता है। इतिहास या विकास विभिन्न कालोंके वर्णनोंके योगका ही नाम है। इस प्रकार ऐतिहासिक भाषा-विज्ञानमें किसी भाषाके इतिहास या विकासका अध्ययन किया जाता है तथा सिद्धान्तकी दृष्टिसे विकास या परिवर्तनके सिद्धान्तों, नियमों तथा कारणो आदिका निर्धारण होता है।

(३) **तुलनात्मक भाषा-विज्ञान** (comparative linguistics)--इसमें दो या अधिक भाषाओंका तुलनात्मक अध्ययन होता है। तुलनात्मक अध्ययन दो प्रकारका हो सकता है: किसी एक निश्चित समयका (जैसे इस समय प्रयुक्त हिन्दी और मराठी भाषाओंकी तुलना) या ऐतिहासिक (जैसे हिन्दी या मराठीके पूरे या आंशिक इतिहासका)।

(४) **प्रायोगिक भाषा-विज्ञान** (applied linguistics)--भाषा विज्ञानके इस विभागका संबंध तत्त्व-भाषा-विज्ञानेतर क्षेत्रों-में भाषा-विज्ञानके प्रयोगसे है। अर्थात् इसमें मातृ-भाषा या किसी अन्य भाषाकी शिक्षा कैसे दें, अनुवाद कैसे करें, टाइप-राइटरमें कीबोर्डमें क्या क्रम रखें, उच्चारणकी गड़बड़ी कैसे सुधारें आदि विषयोंका विचार किया जाता है। कुछ लोग क्षेत्रपद्धति (field method) आदि भाषा-विज्ञानके व्यावहारिक रूपको भी इसी-के अंतर्गत मानते हैं।

उपर्युक्त बातोंके आधारपर भाषाविज्ञानके अध्ययन-रूपोंको इस प्रकार दिखलाया जा सकता है:--



अर्थात् भाषा-विज्ञानके प्रमुखतः वर्णनात्मक (descriptive) विश्लेषणात्मक या संरच-नात्मक (structural), तुलनात्मक (comparative), ऐतिहासिक (historical) तथा प्रायोगिक (applied) रूप हो सकते हैं।

भाषाविज्ञानकी प्रमुख शाखाएँ—**वाक्य-विज्ञान** (दे०), **शब्द-विज्ञान** (दे०), **रूप-विज्ञान**

(दे०), **ध्वनिविज्ञान** (दे०) तथा **अर्थ-विज्ञान** (दे०) आदि हैं। जिन अन्य शाखाओं उपशाखाओंका अध्ययन होता है, उनमें भाषाकी उत्पत्ति, भाषाओंका वर्गीकरण, भाषा-भूगोल, भाषा कालक्रम-विज्ञान, भाषा-पर आधारित प्रागैतिहासिक खोज, लिपि, भाषा तथा उसके विविध रूप, उन रूपोंके बननेके कारण, भाषाकी प्रकृति, भाषाके विकासके कारण, उसके विकासमें व्याघात उपस्थित करनेवाले कारण, भाषा-विज्ञानका इतिहास या भाषाके अध्ययनका इतिहास, किसी जीवित भाषाके अध्ययन एवं अध्ययनार्थ सामग्री एकत्र करनेकी प्रणाली ध्वनि-ग्राम-विज्ञान, सुर-विज्ञान, ग्लासेमेटिक्स, रूपीय ध्वनिग्राम-विज्ञान, कोश-विज्ञान, नाम-विज्ञान, व्युत्पत्तिशास्त्र, बोली-विज्ञान, बोली-भूगोल, भाषा-प्ररूप-विज्ञान, व्यक्ति-बोली-विकास, भाषा-विकास, तुलनात्मक पद्धति, क्षेत्र-पद्धति, पुनर्निर्माण, मेटालिंग्विस्टिक्स, एक्सो-लिंग्विस्टिक्स, मेटारिसर्च, मेटास्प्रॉग, पूर्व-भाषा-विज्ञान (प्रिलिंग्विस्टिक्स), जाति भाषा-विज्ञान तथा सांस्कृतिक भाषा-विज्ञान आदि भी उल्लेख्य हैं।

भाषाशास्त्र—(दे०) **भाषा-विज्ञान**।

भाषा-संप्रदाय—मुहावरेके लिए प्रयुक्त एक नाम (दे०) मुहावरा।

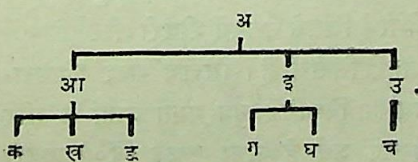
भाषा-समाज—**भाषा-भाषी समुदाय** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

भाषा-समुदाय—**भाषा-भाषी समुदाय** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

भाषिक इकाई (linguistic unit)—वे इकाइयाँ, जिनसे भाषा बनती है। इनमें वाक्य, रूप, शब्द, अर्थ, ध्वनिका नाम लिया जा सकता है। वाक्य भाषाकी स्वाभाविक इकाई है और ध्वनि भाषाकी लघुतम कृत्रिम इकाई है।

भाषिक पुराशास्त्र (linguistic palaentology)—भाषा-विज्ञान या सांस्कृतिक भाषा-विज्ञानकी एक शाखा जिसमें इतिहासके उस अंध युगपर, जिसके संबंधमें कोई अन्य सामग्री प्राप्त नहीं है, भाषाके सहारे प्रकाश डाला जाता है। जर्मन विद्वान् मैक्समूलरने इसकी नींव रखी। जर्मनमें इसका नाम उर्गशिख्त (urgeschichte) है। **खोजकी प्रणाली**—इस खोजके लिए किसी भाषाके प्राचीन शब्दोंको लिया जाता है, फिर उस परिवारकी अन्य भाषाओंके प्राचीन शब्दोंकी तुलनाके आधारपर यह निश्चित किया जाता है कि प्राचीनतम कालके कौन-कौन शब्द थे। इन शब्दोंको इकट्ठा कर इनका विश्लेषण कई दृष्टियोंसे किया जाता है। सामाजिक, धार्मिक आदि वर्गोंमें शब्दोंको अलग-अलग करके अनुमान लगाया जाता है कि उस समयकी सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक दशा क्या थी। जानवरोंके नामोंसे यह पता चलता है कि उनके पास कौन-कौन जानवर थे। क्रिया 'शब्दों'से उनके सामाजिक जीवनपर प्रकाश पड़ता है। इस प्रकार यथा-साध्य उन शब्दोंके सहारे जीवनके प्रत्येक अंगकी छानबीन की जाती है, और एक पूरा नक्शा तैयार करनेका प्रयास किया जाता है। साथ-ही प्रकृति, पर्वत, नदी, जानवर, पेड़-पौधे तथा ऋतुसे सम्बन्धित शब्दोंके आधारपर यह अनुमान लगाया जाता है कि किस स्थान-पर इन सबका इस रूपमें पाया जाना संभव है। इससे उनके आदिम स्थानका अनुमान लग जाता है। **खोजमें सहायक अन्य शास्त्र तथा विज्ञान**—इस खोजका आधार यद्यपि भाषा-विज्ञान है पर पूर्णताके लिए अन्य शास्त्रों एवं विज्ञानोंसे भी सहायता लेनी पड़ती है। इनमें सबसे प्रथम स्थान मानव-विज्ञान (anthropology) का है। इसके द्वारा उस कालके मानवका सामाजिक प्राणीके रूपमें अध्ययन अन्य आधारोंसे होता है। इसी प्रकार पुरातत्त्व (archaeology) की सामग्रियों एवं निष्कर्षोंसे भी हमें भाषा-विज्ञानके आधारपर की गयी खोजको पर्याप्त सहायता मिलती है, साथ ही उनके सत्यासत्य होनेकी परीक्षा भी कुछ हदतक हो जाती है। **भूगर्भ-विद्या** (geology)

भी हमारी कम सहायता नहीं करती है। पर सबसे अधिक सहायता भूगोलसे मिलती है। विशेषतः उस स्थान विशेषका प्राचीन भूगोल, शब्दोंके आधारपर प्राप्त वहाँकी तत्कालीन भौगोलिक दशाको समझनेमें तथा आदि स्थानको निश्चित करनेमें बहुत सहायक होता है। **मूल भाषाके शब्दोंका निर्णय करते समय कुछ स्मरणीय बातें**-(१) जिस कुलके प्राचीन कालकी खोज करनी हो, उसकी नयी-पुरानी सभी शाखाओं-प्रशाखाओं-के शब्दोंको इकट्ठा करना चाहिये और सभी-का अध्ययन बड़ी सावधानीसे करना चाहिये। ऐसा करनेसे कभी-कभी अप्रत्याशित सामग्री मिल जाती है। **किसी भी प्राचीन शब्दको व्यर्थ समझकर छोड़ना उचित नहीं।** (२) एक शब्द **एक शाखाकी अनेक प्रशाखाओंमें** और अन्य शाखा **एकाध प्रशाखाओंमें मिले तो इससे सीधे** यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि शब्द मूल भाषाका है। हो सकता है कि एक शाखामें बादमें उसका कहीं और जगहसे **आगम हुआ हो** और दूसरी शाखाओं-की एकाध प्रशाखाओंने उसे उधार ले लिया हो। इस सम्बन्धमें शब्द यदि दूरकी शाखाओंमें मिले जिनकी आपसमें **भौगोलिक दूरी भी अधिक हो और इतिहासके किसी कालमें उसका** प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सम्बन्ध भी न रहा हो तो वह मूल भाषाका माना जा सकता है। इसे नीचेके चित्र द्वारा अधिक सरल-तासे समझा जा सकता है।



यहाँ अ मूल भाषा है। उससे आरम्भमें आ, इ, उ तीन शाखाएँ हुईं और क्रमशः आ से क, ख, ङ, इ से ग, घ तथा उ से च का जन्म हुआ है। यदि क, ख और ङ में कोई शब्द है तो इसका अर्थ यह नहीं कि अनिवा-र्यतः वह मूल भाषा अ का शब्द है। पर यदि क और च में एक शब्द मिलता है तो उसके मूलमें होनेकी अधिक सम्भावना हो सकती है। इतना ही नहीं यदि अंग्रेजी और हिन्दीकी भाँति क और च का सम्बन्ध हो, या रहा हो, तो इस प्रकारके एक शब्दका पाया जाना विशेष महत्त्व नहीं रखता। क्योंकि सम्भव है संसर्गके कारण एकने दूसरेसे उधार लिया हो। पर दूसरी ओर दोनों भाषाओंमें पाया जाने-वाला शब्द इतने पुराने समयसे पाया जाता हो जब कि दोनोंका आपसमें सम्बन्ध नहीं था तो उसका महत्त्व हो सकता है। यह बात प्रत्यक्ष सम्पर्ककी है। कभी-कभी अप्रत्यक्ष सम्पर्कके कारण भी शब्द एक भाषासे दूसरी-में आ जाते हैं। उपर्युक्त चित्रमें क और घ से सीधा सम्बन्ध कभी नहीं रहा पर यदि क का ग से और ग का घ से रहा तो यह अप्र-त्यक्ष सम्बन्ध माना जायगा और शब्दके उधार लिये जानेकी सम्भावना हो सकती है। पर यहाँ भी पहलेके उदाहरणकी भाँति सम्पर्कके समयपर विचार कर लेना आव-श्यक होगा। (३) दो भाषाओंमें एक शब्द मिले पर ध्वनि और अर्थमें कुछ या अधिक अन्तर हो तो इस आधारपर शब्द छोड़ा नहीं जा सकता। क्योंकि, सम्भव है अर्थ एवं ध्वनि-परिवर्तनके कारण यह अन्तर पड़ा हो और मूलतः शब्द एक हों। (४) कोई एक शब्द एकाध प्रशाखामें हो और शेषमें न हो तो इससे सीधे यह अर्थ नहीं निकाला जा सकता कि मूल भाषामें शब्द नहीं था। क्योंकि यह भी सम्भावना हो सकती है कि शेष भाषाओंमें उस शब्दका लोप हो गया हो। अतः और आधारोंसे इसकी परीक्षा करनी चाहिये। (५) किसी शृंखलाबद्ध शब्द-पंक्तिमें इधर-उधरके शब्द मिलें तो बीचके शब्द न मिलनेपर भी उसकी सम्भावना की जा सकती है। जैसे नाक, कान, मुँहके लिए शब्द मिलें तो यह निश्चित रूपसे कहा जायगा कि आँखके लिए शब्द था। इसी प्रकार १, २, ३, ५, ६, ७, ९ के लिए शब्द हो तो ४ और ८ का होना भी माना ही जायगा, चाहे शब्द मिलें या न मिलें। **शब्दोंसे**

निष्कर्ष निकालते समय ध्यान देने योग्य बातें—(१) एक वस्तुका नाम मूल भाषामें मिलनेपर जबतक और शब्द न मिलें, उसके विभिन्न प्रयोगोंका उस कालमें होना न मान लेना चाहिये। जैसे यदि घोड़ाके लिए शब्द मिल जाय, पर चढ़ने और रथ आदिके लिए शब्द न मिले तो इसका प्रयोग संदिग्ध हो सकता है। क्योंकि यह भी सम्भव है कि परिचय मात्र रहा हो और रथमें जोतना, चढ़ना आदि प्रचलित न रहा हो। **इसी प्रकार दूधके लिए** शब्द मिलनेपर दधि और घी होनेकी सम्भावना अन्य आवश्यक शब्दोंके मिले बिना नहीं हो सकती। (२) पानी, पर्वत, पेड़ आदिके शब्दोंके तथा ऋतुके आधारपर मूल निवासस्थानके निश्चित करनेमें बहुत सतर्क रहना चाहिये। इसमें **प्राचीन भूगोलसे** विशेष सहायता ली जानी चाहिये। साथ ही केवल कुछ ही शब्दोंके आधारपर निष्कर्ष निकालना उचित नहीं। (३) **सामाजिक एवं धार्मिक अवस्था** आदिके विषयमें भी अन्य शास्त्रों एवं विज्ञानोंसे सहारा लेकर निष्कर्ष निकालना चाहिये। साथ ही पर्याप्त सामग्रीपर अपने परिणामको आधारित करना चाहिये। उस विषयमें शब्दके मिलनेपर भी किसी ऐसी परम्परा या **ऐसे विधानकी कल्पना न की जानी चाहिये जो उस कालके लिए असम्भव हो**। क्योंकि ऐसी दशामें अधिक सम्भव यह है कि वह **शब्दविशेष उस समय** कुछ दूसरा अर्थ रखता रहा हो। उदाहरणार्थ प्राचीन भारोपीयोंके सम्बन्धमें खोज करते समय रेलके लिए कोई शब्द मिले तो उसका आशय यह नहीं कि उस समय रेल थी, बल्कि उसका अर्थ यह अवश्य है कि उस शब्दविशेषके ठीक अर्थसे हम अवगत नहीं हैं। भाषा-विज्ञानके आधारपर ऐसी खोज विशेषतः भारोपीय परिवारके विषयमें हुई है। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, इस सम्बन्धमें प्रथम कार्य मैक्समूलर द्वारा हुआ। उसने और बातोंपर प्रकाश डालते हुए मध्य एशियामें आर्योंका आदि स्थान निश्चित किया। तबसे लैथन, पीटर गाइल्स, सर देसाई, तिलक, ब्रैंडेस्टाइन, दास, सम्पूर्णानन्द, कीथ आदि अनेक विद्वानोंने इस प्रश्नपर विचार किया है, किन्तु अभीतक सभी लोग किसी एक मतको मान्य नहीं मान सके हैं।

भासितो—**लोकोक्ति** (दे०)के लिए प्रयुक्त 'पालि'का एक नाम।

भिन्नात्मक संख्यावाचक विशेषण—(दे०) **विशेषण**।

भिम्डी (bhimdi)—१९११की बम्बई जनगणनाके अनुसार **बंजारों**की एक बोली। इसका क्षेत्र रीवाकंथा कहा गया है, तथा इसके बोलनेवालोंकी संख्या केवल चार दी गयी है।

भिलारी—**भीली** (दे०)का एक अन्य नाम।

भिलाली—**भीली** (दे०) बोलीका एक स्थानीय रूप जो मध्यप्रदेशमें अलीराजपुर तथा अमझेराके आसपास बोला जाता है।

भिलोडी—**भीली** (दे०)बोलीका एक अन्यनाम।

भिलोदी—**भीली** (दे०)बोलीका दूसरानाम।

भिल्नी (bhilni)—**भीली** (दे०)का एक अन्य नाम।

भिससरी (bhisasari)—१८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार **पश्तो** (दे०)का एकरूप।

भीतरी सिराजी—**पश्चिमी पहाड़ीकी कुलू वर्ग** (दे०)की एक बोली जो काँगड़ा जिलेकी सिराज तहसीलके एक भागमें बोली जाती है। इसके बगलमें बाहरी सिराजी बोली है जो सतलज वर्गकी बोलियोंमें आती है। बाहरी और भीतरी सिराजीके बीचमें सुकेत पर्वत श्रेणी है जिसके उत्तरमें भीतरी और दक्षिणमें बाहरी सिराजी हैं। 'सिराज' शब्द 'शिवराज्य'का विकसित रूप माना जाता है और इसका अर्थ है ऊँचा पहाड़ (दे०) **बाहरी सिराजी**।

भीली—भीलोंद्वारा प्रयुक्त एक बोली जो राजस्थान, गुजरात, खानदेश तथा बरारमें बोली जाती है। ग्रियर्सनने अपने भाषा-सर्वेक्षणमें एक स्वतंत्र भाषाके रूपमें इसपर विचार किया है, किंतु डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी इसे राजस्थानीकी एक बोली मानने-

के पक्षमें हैं। भिलोड़ी, अलीराजपुर, बखानी, बरार, छोटा उदयपुर, धार, खानदेश, नासिक, मेवाड़, निमाड़, पंचमहल, महिकंथा, झबुआ, एदर, बसिम, राजपिपला तथा रतलाम आदिमें बोली जानेवाली भीलीकी आपसमें कुछ भिन्नता है किंतु इनमें अधिकतर अलग-अलग नाम नहीं हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २६,९१,७०१ थी। मुख्य भीली, जो गुजरात, राजस्थान, बरार तथा खानदेशमें बोली जाती है, **भिलोदी** नामसे भी अभिहित की जाती है तथा इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ११,६३,८७२ थी। इसके कुछ रूपोंके नाम **भिलाली, राठवी भिलाली** आदि हैं। भीलीको कुछ लोगोंने खानदेशीसे सम्बद्ध माना है।

भुंगू--**सूडान वर्ग** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा।

भुंजिआ (bhunjia)--**मराठी** (दे०)की रायपुरमें प्रयुक्त, एक उप-बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार २,०००के लगभग थी।

भुअनी (bhuani)--**निमाड़ी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

भुक्सा--**ब्रजभाषा** (दे०)का नैनीतालमें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप। यह 'खड़ी बोली', 'ब्रज', 'कनौजी' तथा'कुमायूँनी'का मिश्रित रूप है। इसके बोलनेवालोंमें भुक्सा जाति प्रमुख है, जिसके आधारपर इसका नाम 'भुक्सा' पड़ा है। ग्रियर्सनके अनुसार इसमें 'कनौजीके' रूप बहुत अधिक हैं। इसआधारपर इसे **कनौजी**का स्थानीय रूप भी कहा जा सकता है। उनके सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २,००,००० थी।

भुतुनेर (bhutuner)--**भट्टिआनी** (दे०)-का एक प्राचीन नाम।

भुमिआई (bhumiai)--**बिंझवारी** (दे०)-का एक अन्य नाम।

भुमिज (bhumij)--सिंहभूमि और मोरभंज तथा उसके आसपास प्रयुक्त, एक **खेरवारी** (दे०) बोली। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,३७,३०९ थी।

भुयोंकी (bhuyonki)--**मालवी** (दे०)का एक नाम।

भुलिआ--**छत्तीसगढ़ी** (दे०)की एक उपबोली, जो सोनपुर (बिहार-उड़ीसाकी सीमापर) तथा पटना प्रदेशमें बोली जाती है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १३,५०० थी। इसे ओड़िया लिपिमें लिखते हैं, इसी कारण पहले लोग इसे 'उड़िया' की बोली समझते रहे हैं। ग्रियर्सनने सर्वप्रथम व्याकरणके रूपोंके आधारपर इसे 'छत्तीसगढ़ी'की एक उपबोली घोषित किया। 'भुलिया'पर उड़ियाका कुछ प्रभाव अवश्य पड़ा है।

भूटानी--तिब्बती (भूटानकी)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

भूटानी-तिब्बती-दार्जिलिंग, सिक्कम और भूटानमें बोली जानेवाली एक **तिब्बती**(दे०) बोली। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १०,५२६ थी।

भूटी (bhooty)--**भोटिआ** (दे०)का एक अशुद्ध नाम।

भूत--**लिट् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

भूतम्--**लिट् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

भूत अपूर्ण निश्चयार्थ--(दे०) **काल**।

भूतकाल--(दे०) **काल**।

भूतकालिक कृदंत--(दे०) **कृदंत**।

भूत निश्चयार्थ--(दे०) **काल**।

भूत भाषा-- **पैशाची प्राकृत** (दे०)का एक अन्य नाम।

भूत भाषित--**पैशाची प्राकृत** (दे०) का एक अन्य नाम।

भूतवचन-- **पैशाची प्राकृत** (दे०)का एक अन्य नाम ।

भूत संभावनार्थ---(दे०) **काल** ।

भूतेश---**लुङ् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

भूतेश्वर---**लङ् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

भूयौ (bhuyau)---सम्भलपुरमें प्रयुक्त, **मुण्डारी** (दे०)का एक रूप ।

भेदका नियम---**बौद्धिक नियम** (दे०)का एक भेद ।

भेद-भावका नियम---**बौद्धिक नियम** (दे०)-का एक भेद ।

भेदीकरण नियम---**बौद्धिक नियम** (दे०)का एक भेद ।

भोंद (bhonda)---१८९१की मद्रास जनगणनाके अनुसार मद्रासके परोजा क्षेत्रमें प्रयुक्त **उड़िआ** (दे०)का एक टूटा-फूटा रूप ।

भों-भोंवाद---भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धान्त । इसे **अनुकरण-सिद्धांत** (दे०) भी कहते हैं ।

भोई (bhoi)---**गोंडी** (दे०)का एक रूप । इसका क्षेत्र सागर था । अब यह बोली विलुप्त हो गयी है ।

भोई मिकिर (bhoi mikir)---**मिकिर** (दे०)की, असमकी खासी और जयंतिया पहाड़ियोंपर बोली जानेवाली एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १०,०८० के लगभग थी ।

भोगवइया---'पन्नवणासूत्र' नामक जैन ग्रंथमें दी गयी १८ लिपियोंमेंसे एक ।

भोग्सा (bhogsa)---**भुक्सा** (दे०)का एक अन्य नाम ।

भोजपुरी---हिन्दी प्रदेशकी उपभाषा **बिहारी** (दे०)की एक बोली । **भोजपुरी** नाम भोजपुर (ज़िला शाहाबादका एक परगना) नामके एक छोटेसे कस्बेके आधारपर पड़ा है; यद्यपि यह दूर-दूरतक बोली जाती है । प्राचीनकालमें भोजपुर इसी नामके राज्यकी राजधानी होनेके कारण अत्यन्त प्रसिद्ध था । भाषाके अर्थमें 'भोजपुरी' शब्दका प्रथम प्रयोग १७८९ का मिलता है । यह प्रयोग रेमंडके 'शेर मुताख़रीन'के अनुवादकी भूमिकामें है । भोजपुरीको कुछ लोग 'पूरबी' भी कहते हैं । यह 'पूरबी' नाम सापेक्षिक होनेके कारण बड़ा अनिश्चित-सा है । इसीलिए ब्रजभाषा तथा खड़ीबोली क्षेत्रके लोगों द्वारा कभी-कभी 'अवधी'के लिए भी प्रयुक्त होता है । 'भोजपुरी'को 'भोजपुरिया' भी कहते हैं । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या 'भोजपुरी' क्षेत्रमें लगभग २ करोड़ तथा क्षेत्रके बाहर ४ लाख, इस तरह कुल २ करोड़ ४ लाखके लगभग थी ।

'भोजपुरी' उत्तरमें नैपालकी दक्षिणी सीमारेखाके आसपाससे लेकर दक्षिणमें छोटा नागपुरतक और पश्चिममें पूर्वी मीरजापुर, वाराणसी तथा पूर्वी फैजाबादसे लेकर पूर्वमें राँची और पटनाके पासतक बस्ती (कुछ भाग), गोरखपुर, देवरिया, सारन, मीरजापुर (दक्षिणी-पूर्वी), वाराणसी, जौनपुर (पूर्वी), गाजीपुर, बलिया, शाहाबाद, पालामऊ तथा राँची (थोड़ा पूर्वी भाग छोड़कर)में बोली जाती है । भोजपुरीकी प्रधान उपबोलियाँ चार हैं---**उत्तरी भोजपुरी**(दे०), **दक्षिणी भोजपुरी** (दे०), **पश्चिमी भोजपुरी** (दे०)तथा **नगपुरिया** (दे०) हैं । इनमें 'नगपुरिया' औरोंसे अपेक्षाकृत अधिक भिन्न है । 'दक्षिणी भोजपुरी' (भोजपुर कस्बा जिसके केन्द्रमें है) भोजपुरीका परिनिष्ठित रूप है । सुदूर उत्तरमें भोजपुरीका थारू नामकी जातिमें प्रचलित रूप मिलता है, जिसे **थारू भोजपुरी** (दे०) कहते हैं । इसके अन्य उल्लेख्य स्थानीय रूप **भधेसी** (दे०), **बँगरही** (दे०), **सरवरिया** (दे०), **सारन-बोली** (दे०), **गोरखपुरी** (दे०), **खारवारी** (दे०), **छपरहिया** (दे०) तथा **सोनपारी** (दे०) आदि हैं ।

भोजपुरीमें लिखित साहित्य प्रायः नहींके बराबर है। यहाँके लोगोंने साहित्यमें, प्राचीन कालमें अवधी या ब्रज तथा आधुनिक कालमें खड़ीबोलीका प्रयोग किया है। हाँ, इधर राहुलजी तथा कुछ अन्य लोगोंने भोजपुरीमें कुछ साहित्य-रचना अवश्य की है।

भोजपुरीकी उत्पत्ति पश्चिमी मागधी या मागधी अपभ्रंशके पश्चिमी रूपसे मानी जाती है। ग्रियर्सनने मगही और मैथिलीके साथ भोजपुरीको बिहारीके अंतर्गत रखा है। डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी इसके पक्षमें नहीं हैं। वे भोजपुरीको मगही, मैथिलीसे इतना भिन्न मानते हैं कि इन तीनोंको एक वर्गमें रखना समीचीन नहीं मानते। भोजपुरी प्रमुखतः नागरी लिपिमें लिखी जाती है। कुछ पुराने लोग कैथीका प्रयोग करते हैं। वही-खातेके लिए महाजनी लिपिका प्रयोग होता है।

भोजपुरी कैथी लिपि--एक प्रकारकी **कैथी लिपि** (दे०)।

भोटिया--(१) **तिब्बती** (दे०)का एक नाम। (२) **कुमायूँनी** (दे०)की एक उपबोली, जो कुमायूँ कमिश्नरीके उत्तरी भागमें बोली जाती है।

भोटिआ लामा (दे०) **तिब्बती**।

भोटिआ लिपि--**तिब्बती लिपि** (दे०)का एक अन्य नाम।

भोतंता (bhotanta)--**तिब्बती** (दे०)-का एक प्राचीन नाम।

भोपाली (bhopali)--**मालवी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

भोयरी--**मालवी**(दे०)का एक स्थानीय रूप, जो बेतूल (छिंदवाड़ा)में प्रमुखतः भोयरों द्वारा बोला जाता है। यह मराठीसे प्रभावित है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ११,०००थी।

भौतिक ध्वनि-विज्ञान (physical phonetics)--**श्रावणिक ध्वनिक-विज्ञान** (दे०)का एक अन्य नाम।

भौमदेवलिपि--बौद्ध ग्रंथ 'ललितविस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

भ्रमका नियम--**बौद्धिक-नियम** (दे०)का एक भेद।

भ्रष्ट--**तद्भव**के लिए प्रयुक्त एक नाम। (दे०) **शब्द**।

भ्रष्ट भाषा--ऐसी भाषा जो व्याकरणिक दृष्टिसे भ्रष्ट या विकृत हो।

भ्रामक व्युत्पत्ति(popular etymology)-मूल व्युत्पत्ति या मूल अर्थका ध्यान दिये बिना किसी अपरिचित शब्दको रूप या ध्वनिकी दृष्टिसे किसी परिचित शब्द जैसा या उसके समान बना लेना। जैसे 'लायब्रेरी'का 'रायबरेली'। इस प्रवृत्तिके कारण शब्दोंका रूप प्रायः बदल जाता है। (दे०) **व्युत्पत्ति शास्त्र** तथा **ध्वनि-परिवर्तनके कारण**में **भ्रामक व्युत्पत्ति** शीर्षक।

भ्वादिगण--संस्कृत धातुओंका एक **गण**(दे०)।

म

मंगतम (mangtam)--**सोसो** (दे०)का एक रूप।

मंगबेटू (mangbetu)--मंगबेटू नामक जातिमें प्रयुक्त, **सूडान वर्ग** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा। इसका क्षेत्र उएली नदीके तटपर है।

मंगरी (mangri)--**माँगरी** (दे०)का एक अन्य नाम।

मंगल प्रयोग--**मंगलाभिव्यक्ति** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

मंगल भाषण--**मंगलाभिव्यक्ति**(दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

मंगलाभिव्यक्ति (euphemism)--अप्रिय शब्द या अभिव्यक्तिके स्थानपर प्रिय शब्द

या अभिव्यक्तिका प्रयोग। जैसे 'मर जाना'के लिए 'खुदाको प्यारा हो जाना' या 'पाखाना जाना' के लिए 'शौच जाना'। इसे **मंगल भाषण, मंगल प्रयोग** आदि भी कहते हैं।

मंगलूती (mangaluti)--**मलयालम**(दे०)-का एक अन्य नाम।

मंगुम (mangum)--**तुंगुस** (दे०) भाषा-की एक बोली।

मंगोल भाषा--यूराल-अल्ताई परिवारकी अल्ताई शाखाकी एक भाषा, जिसका क्षेत्र मंगोलिया है। मंगोल या मंगोलिअन भाषाकी प्रमुख शाखाएँ **उत्तरी** (बुर्यत), **पश्चिमी** (इसमें कलमुक आती है) तथा **पूर्वी** (तंगुत, याकूत, शरा, खल्खा) हैं। इसकी एक अप्रमुख बोली **अफ़ग़ान-मंगोल** भी है, जो अब लुप्तप्राय है। मंगोलोंका प्राचीन कालमें चीनियोंसे तथा आधुनिक कालमें रूसियोंसे सम्पर्क रहा है, इसी कारण इनकी भाषापर इन दोनों भाषाओंका पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। मंगोल भाषाके बोलनेवालों-की संख्या लगभग ३० लाख है।

मंगोल लिपि--(१) **उइग़ुर लिपि** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम। (२) १२७२के बाद-से मंगोलों द्वारा प्रयुक्त एक लिपि, जो **तिब्बती लिपि** (दे०)के आधारपर बनायी गयी। इसे **पासेपा**(passepa)कहते हैं। यह१३१०तक प्रयुक्त होती रही। (३) १३१०में उइग़ुर तथा तिब्बतीके आधारपर बनायी गयी **गलिका** (galica) लिपि, जो १३१०-के बादसे मंगोलोंमें प्रचलित हुई। यही बादमें मंगोलोंकी राष्ट्रीय लिपि बन गयी। (४) १९४९के बाद रूसी लिपिपर आधारित एक सरल लिपि यहाँ प्रचलित हो गयी है।

मंचरिआ (mancharia)--**मचरिया** (दे०)-का एक अन्य नाम। (२) कपूरथला (पंजाब)-में प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

मंचाटी (manchati)--लाहोलमें प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०)की एक पश्चिमी सार्व-नामिक हिमालयी तिब्बती-बर्मी भाषा। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,९९५ थी।

मंडन (mandan)--**सिऔक्स** (दे०) भाषा-परिवारका एक वर्ग। इस वर्गकी प्रमुख भाषा मंडन ही है।

मंडलाहा (mandlaha)--**गोंडवानी** (दे०)-का एक अन्य नाम।

मंडिंगो (mandingo)--**सूडान** वर्ग (दे०) की पश्चिमी सूडानमें प्रयुक्त एक नीग्रो भाषा।

मंडी वर्गकी बोलियाँ--**पश्चिमी पहाड़ी**(दे०)-की बोलियोंका एक समूह, जो मंडी और सुकेतके आसपास बोला जाता है। इस वर्ग-में **मंडेआली** (दे०), **मंडेआळी पहाड़ी**(दे०)-तथा **सुकेती** (दे०), ये तीन बोलियाँ हैं। इस वर्गके बोलनेवाले ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षण-के अनुसार २,१२,१८४ थे।

मंडी सिराजी--**मंडेआळी पहाड़ी** (दे०)का एक अन्य नाम।

मंडेआली--**पश्चिमी पहाड़ी** (दे०)की **मंडीवर्ग** (दे०)की एक बोली, जो मंडीके आस-पास बोली जाती है। टी० ग्राहम बेलीके अनुसार इसके तीन रूप हैं। पहला व्यास नदीके दक्षिणमें, दूसरा व्यासके उत्तरमें तथा तीसरा छोटा बंगाहलके पास। पहला रूप परि-निष्ठित है। इसे भी मंडेआळी ही कहते हैं। दूसरा उत्तरी मंडेआळी है तथा तीसरा **'छोटा बंगाहली'**। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षण-के अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,५०,००० थी।(दे०) **मंडी वर्गकी बोलियां**। मंडेआळीकी लिपि टाकरीका एक विकसित रूप **मंडेआली लिपि** है।

मंडेआळी पहाड़ी--मंडी वर्गकी एक बोली, जो मंडी स्टेट (प्राचीन)में बोली जाती है। यह बोली मंडेआली तथा भीतरी सिराजीका एक मिश्रित रूप है। इसका दूसरा नाम **मंडी सिराजी** भी है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षण-के अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १०,००० थी। दे० **मंडी वर्गकी बोलियाँ**।

मंडेआली लिपि--मंडा तथा सुकेत राज्योंकी भाषा मंडेआली [जो **पहाड़ी** (दे०)के अंत-र्गत आती है] के लिए प्रयुक्त एक लिपि।

इसकी उत्पत्ति शारदा लिपि (दे०) से हुई है।

मंतोन (manton)--हसिपव उत्तरी शान स्टेटमें व्यवहृत **पले** (दे०) का एक रूप। वर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १७० थी।

मंथनी (manthani)--**तेलुगु** (दे०) का चाँदामें प्रयुक्त एक रूप।

मंदसौरी--**मालवी** (दे०) का एक रूप। यह मंदसौरमें बोला जाता है।

मंदोखेल बोली (mandokhel dialect)-दक्षिण-पश्चिमी **पश्तो** (दे०) का, बिलोचिस्तानमें प्रयुक्त एक रूप।

मइ-तई--मेईथेई (दे०) के लिए ढाकामें प्रयुक्त एक नाम।

मइहतइ--मेईथेई (दे०) का एक असमी नाम।

मओरी--न्यूज़ीलैंडके आदिवासियोंकी भाषा। इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग एक लाख है। कुछ लोग इसे पॉलिनेशियन भाषा मानते हैं।

मकगुअक्से (makaguaxe)--**टुकनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

मकमेक्रन (makamekren)--दक्षिणी अमेरिकाके **ज़े** (दे०) परिवारके उत्तरी वर्गकी एक भाषा। इसके अन्य नाम कराओउ तथा क्रओ आदि हैं।

मकार--**म** के लिए प्रयुक्त नाम। (दे०) **कार**।

मकासर (macassar)--सेलीबीज़में लगभग तीन लाख लोगों द्वारा बोली जानेवाली एक **इंडोनेशियन** (दे०) भाषा।

मकिरिटरे (makiritare)--**करिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

मकु (maku)--**पुइनावे** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

मकुआ (makua)--**बांटू** (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा। इसका क्षेत्र पूर्वी अफ्रीकाका तटीय प्रदेश है।

मकुशी (makushi)--**करिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

मक्रानी (makrani)--**पश्चिमी बलोची** (दे०) का एक अन्य नाम।

मक्रानी केची (makrani kechi)--पश्चिमी **बलोची** (दे०) का एक रूप।

मक्रानी पंजगूरी (makrani panjguri)--पश्चिमी **बलोची** (दे०) का पश्चिमी बिलोचिस्तानमें प्रयुक्त एक रूप।

मगध भाषा--**पालि** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

मगध लिपि--बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

मगम्सा (magamsa)--**नागा** (दे०) भाषाओंके लिए बोदो लोगोंमें प्रयुक्त एक सामान्य नाम।

मगर (magar)--**माँगरी** (दे०) का एक अन्य नाम।

मगराकी बोली--पूर्वी मारवाड़ीका एक स्थानीय रूप, जो दक्षिणी मेरवाड़के पहाड़ी भागोंमें भीलों द्वारा बोला जाता है। वहाँकी भीली भाषामें 'मगरो' का अर्थ पहाड़ होता है। इसी आधारपर वहाँकी बोली 'मगराकी बोली' या 'मगरी' कहलाती है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४४,५०० थी। (दे०) **मारवाड़ी**।

मगरी (magri)--(१) **भीली** (दे०) की मेरवाड़में प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४४,५०० थी। (२) **माँगरी** (दे०) का एक और नाम। (३) **मगराकी बोली** (दे०) का एक अन्य नाम।

मगही--हिन्दीकी उप-भाषा **बिहारी** (दे०)-की एक बोली, जो पूरे गया जिलेमें तथा पटना, हजारीबाग, मुंगेर, पालामऊ, भागलपुर और राँची जिलोंके कुछ भागोंमें बोली जाती है। 'मगही' शब्द 'मागधी' का विकसित रूप है। कुछ पढ़े-लिखे लोग इसे **मागधी** भी कहते हैं। 'मगही' या 'मागधी' का अर्थ है 'मगधकी भाषा', किंतु आधुनिक 'मगही' प्राचीन मगधतक ही सीमित है। 'मगही' बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ६५,०४,८१७ थी। 'मगही' का परिनिष्ठित रूप गया ज़िलेमें बोला

जाता है। अन्य स्थानोंपर समीपवर्ती भाषाओंका प्रभाव पड़ा है । पटनाकी 'मगही'पर मैथिली, भोजपुरी तथा पटनाके उर्दू भाषी मुसलमानोंका प्रभाव है । इसके क्षेत्रका दक्षिणी भाग उड़िया भाषा-भाषी प्रदेशका स्पर्श करता है, अतः उधरके स्थानीय रूप 'उड़िया'से और इसी प्रकार पूर्वी स्थानीय रूप बँगलासे प्रभावित हैं। पश्चिमी सीमाकी 'मगही' भोजपुरीसे प्रभावित है। 'मगही'का उपर्युक्त रूपोंके अतिरिक्त एक प्रधान रूप है, जिसे **पूर्वी मगही** (दे०) कहते हैं। इसके अंतर्गत कई उप-बोलियाँ हैं। मगहीमें लिखित साहित्य नहीं है। लोक साहित्य पर्याप्त मात्रामें है, जिसमें 'गोपीचंद' और 'लोरिक' प्रसिद्ध हैं। इसकी लिपि प्रमुखतः कैथी तथा नागरी हैं। 'पूर्वी मगही'को कुछ लोग बँगला तथा उड़ियामें भी लिखते हैं ।

मगही कैथी–एक प्रकारकी **कैथी लिपि** (दे०)।

मगियार (magyar)—**हुंगेरिअन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक हुंगेरिअन नाम ।

मघिआ (maghia)—**मगही** (दे०)का एक अशुद्ध नाम ।

मघी (maghi)—**अराकानी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मचरिआ (macharia)—पंजावके एक कवीलेमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा। यह भाषा 'सिंधी' तथा 'पंजाबी'का मिश्रण है।

मज़टेक (mazatek)—(१) मध्य अमेरिकाके **ओटोमि** (दे०) परिवारकी एक भाषा। इस भाषाकी तीन उपभाषाएँ **टरिके**, **चोचो** तथा **मज़टेक** हैं। (२) मज़टेक भाषाकी एक उपभाषा ।

मज़हुआ (mazahua)—मध्य अमेरिकाके **ओटोमि** (दे०) परिवारकी एक भाषा ।

मज़ारी (mazari)—मज़ार तथा अन्य लोगोंमें प्रयुक्त पूर्वी **बलोची** (दे०)का एक रूप ।

मटको (matako)—**मटको-मटगुअयो** (दे०) परिवारकी एक प्रमुख दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

मटको-मटगुअयो (matako–matagua-yo)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारमें लगभग १२ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख **मटगुअयो**, **वेक्सोज़**, **मटको** तथा **नोक्टेन** आदि हैं ।

मटगल्पा (matagalpa)—मध्य अमेरिकाके **मिस्किटो-सुमोमटगल्पा** (दे०) परिवारकी एक प्रमुख भाषा। इसका अन्य नाम **चोन्टल** है ।

मटगुअयो (mataguayo)—**मटको-मटगुअयो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

मट्टोले (mattole)—**पैसिफ़िक** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

मट्ललट्ज़िन्को (matlalatzinko)—मध्य अमेरिकाकी **पिरिंडा** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

मड़िआ (maria)—**गोंडी** (दे०)की वस्तरमें प्रयुक्त एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,०४,३४० थी ।

मणिपुरी—**मैतेइ** (दे०)का अन्य भाषाभाषियोंमें वहुप्रचलित एक नाम ।

मणिपुरी लिपि—**मैतेइ मयेक लिपि** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मणिप्रवाल—**तमिल** (दे०) तथा **मलयालम** (दे०)की संस्कृत मिश्रित शैली ।

मतिआ (matia)—मतिआ नामक द्रविड़ जातिमें प्रयुक्त **उड़िया** (दे०)का एक नाम।

मतु (matu)—बर्मामें प्रयुक्त एक **कुकी-चिन** (दे०) भाषा ।

मत्रइ (matrai)—**मैतरिआ** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मत्वंग (matwang)—पुताओ ज़िलेमें प्रयुक्त **नुंग** (दे०)का एक रूप। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २,००० थी ।

मथवाडी (mathawadi)—सतपुड़ामें लगभग २०,००० व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत, **भीली** (दे०)का एक रूप ।

मथुंदी (mathundi)--१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार खानदेशमें प्रयुक्त एक भील (दे०) भाषा।

मदुरन (madurese)--मदुरा तथा पूर्वी जावामें लगभग ३० लाख लोगों द्वारा प्रयुक्त एक इंडोनेशियन (दे०) भाषा। इसके बोलने-वाले मदुरन या मदुरीज़ लोग हैं। इनका मूल स्थान मदुरा है, इसी कारण इनका यह नाम पड़ा है।

मद्रासी (madrasi)--**तमिल** (दे०)का एक नाम।

मधेसी--**भोजपुरी** (दे०)का एक स्थानीय रूप, जो चंपारनमें बोला जाता है। तिरहुतकी 'मैथिली' तथा गोरखपुरकी 'भोजपुरी'के मध्य स्थित क्षेत्रकी बोली होनेसे इसे 'मधेसी' (सं० मध्यदेशीय) कहते हैं। इसका दूसरा नाम **गोरखपुरी** भी है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १७,१४,०३६ थी।

मध्य--बीचका, मध्यवर्ती। जैसे मध्य स्वर।

मध्य-अक्षर लोप--लोप (दे०)का एक भेद।

मध्य-अक्षरागम--आगम (दे०)का एक भेद।

मध्य-अपिनिहिति--एक प्रकारका **अपिनिहिति** (दे०)।

मध्य अलगोनकिन--उत्तरी अमेरिकाके **अलगोनकिन** (दे०) परिवारका मध्य वर्ग, जिसमें फॉक्स, इलिनोइस, किक्पू, मेनोमिनी मिअमी, पोट्वाटोमी, ओ जिब्वे, सौक, शानी आदि भाषाएँ हैं।

मध्य इतालवी--मध्य इटलीमें प्रयुक्त कुछ इतालवी बोलियोंका एक सामूहिक नाम। इसमें कोर्सिअन, गैलूरीज़ तथा सैसारीज आदि आती हैं।

मध्यकालिक कृदंत--(दे०) **कृदंत**।

मध्यकालीन फ़ारसी--**फ़ारसी** (दे०)का मध्य-कालीन रूप। इसे **पहलवी** (दे०) भी कहते हैं। (दे०) **ईरानी**।

मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा--**भारतीय आर्यभाषा** (दे०)के मध्य या दूसरे कालकी भाषा, जिसमें पालि, प्राकृत, अपभ्रंश तीन भाषाएँ आती हैं। इसे संक्षेपमें म० भा० आ० (अंग्रेज़ी mia) कहा जाता है।

पाणिनिने भाषाका संस्कार करके उसे बाँध दिया और **संस्कृत** (दे०) **प्राचीन भारतीय आर्यभाषाका** एक रूप निश्चित हो गया, किन्तु लोकभाषा अबाध गतिसे विकसित होती रही। इस विकासके फलस्वरूप भाषा-का जो स्वरूप सामने आया, उसे **प्राकृत** कहते हैं। मोटे रूपसे इसका (प्राकृत या म० भा० आ० का) काल ५०० ई० पू०से १,००० ई०तक अर्थात् डेढ़ हजार वर्षोंका माना जाता है। कुछ लोग इसका आरम्भ ६०० ई० पू०से भी मानते हैं और अन्त ११०० या १,२०० ई०में। 'प्राकृत'के हेमचन्द्र, मार्कण्डेय तथा वासुदेव आदि वैयाकरणोंने **प्रकृतिः संस्कृतं तत्र भवं प्राकृतमुच्यते** आदि रूपमें प्राकृतको संस्कृतसे निकली माना है, किन्तु ऐसा असम्भव है[1]। पाणिनिकी व्यवस्थामें बँधी भाषामें विकासकी सम्भावना कहाँ? मूलतः संस्कृतके कालमें जो बोल-चालकी भाषा थी, वही विकसित होती रही और उसीका विकसित रूप प्राकृत हुआ। यदि संस्कृत कालकी बोलचालकी लोकभाषा-को भी संस्कृत नाम दिया जाय--जो बहुत उचित नहीं कहा जा सकता--तो कहीं प्रा-कृतको संस्कृतसे उत्पन्न माना जा सकता है।

यों तो इस पूरे काल (५ सौ ई० पू०से १,००० ई०तक)की भाषाको **प्राकृत** कहते हैं, किन्तु इस पूरे कालको **प्रथम प्राकृत काल**, **द्वितीय प्राकृत काल** और **तृतीय प्राकृत काल**के रूपमें तीन कालोंमें बाँटा जाता है। इनमें प्रथम काल (आरम्भसे ईसवी सन्‌के आरम्भ-

---

१. जैसा कि पिशेलने संकेत किया है, कुछ लोगोंने प्राकृतको प्राक्+कृत (पहले बनी) मानकर, इसे संस्कृतसे भी प्राचीन माना है। यों बोलचालकी प्रकृत भाषाका संस्कृत रूप ही 'संस्कृत' है। यदि उस मूलको 'प्राकृत' कहें तो यह मत ठीक ही है। ग्रियर्सन आदिने 'प्राइमरी प्राकृत'का प्रयोग कुछ इसी अर्थमें किया था।

तक)की भाषा **पालि** और **शिलालेखी प्राकृत** या **संधिकालीन प्राकृत** है, दूसरे काल (ईसवी सन्‌से लगभग ५०० ई०तक)की भाषाका नाम **प्राकृत** है जिसके अन्तर्गत कई प्रकार-के प्राकृत आते हैं और तीसरे काल (५०० ई०से १,००० ई०तक)की भाषाका नाम **अपभ्रंश** है। क्रमसे सभीपर विचार किया जा रहा है।

पालि (या प्रथम प्राकृत)–मध्य कालीन भारतीय आर्यभाषाके प्रथम युगकी भाषा 'पालि' है। इसे **देश-भाषा** या **प्रथम प्राकृत** भी कहा गया है। इसका काल कुछ लोग ५वीं या ६ठीं सदी ई० पू०से पहली ईसवीतक और कुछ लोग दूसरीसदी ई० पू०तक मानते हैं। **पालि नाम**—'पालि' शब्दकी व्युत्पत्ति-को लेकर विद्वानोंमें मतभेद है। पालि शब्दके पुराने प्रयोग 'भाषा'के अर्थमें नहीं मिलते। इसका प्राचीनतम प्रयोग ४थी सदीमें लंका-में लिखित ग्रन्थ' दीपवंस'में हुआ है। वहाँ इसका अर्थ 'बुद्धवचन' है। बादमें प्रसिद्ध आचार्य बुद्धघोषने भी इसका प्रयोग लगभग इसी अर्थमें किया है। तबसे काफी बादतक 'पालि' शब्दका प्रयोग पालि साहित्यमें हुआ है, किन्तु कभी भी भाषाके अर्थमें नहीं। भाषा-के अर्थमें वहाँ **मगध भाषा, मागधी, मागधिक भाषा** आदिका प्रयोग हुआ है। सिंहलके लोग इसे अब भी **मागधी** कहते हैं। भाषाके अर्थमें 'पालि'का प्रयोग अत्याधुनिक है और यूरोप-के लोगों द्वारा हुआ है। शुरूमें अशोकके शिलालेखी प्राकृतके लिए भी इसका प्रयोग हुआ था, पर बादमें भ्रामक समझकर छोड़ दिया गया। पालिकी व्युत्पत्तियाँ प्रमुखतः दो प्रकारकी हैं। एक तो वे हैं, जिनमें 'पालि'के प्राचीनतम प्राप्त अर्थका ध्यान रखा गया है और दूसरी वे हैं, जिनमें अन्य आधारलिये गये हैं। यहाँ संक्षेपमें कुछ प्रमुख मतोंका उल्लेख किया जा रहा है :—(१) श्री विधुशेखर भट्टाचार्यके अनुसार 'पालि'का सम्बन्ध संस्कृत'पंक्ति' (7 पन्ति 7 पत्ति 7 पट्ठि 7 पल्लि 7 पालि)से है। शुरूमें बुद्धकी पंक्तियोंके लिए इसका प्रयोग हुआ। बादमें उसीसे विकसित होकर भाषाके अर्थमें। (२) एक मतके अनुसार वैदिकी और संस्कृत आदि-की तुलनामें यह 'पल्लि' या गाँवकी भाषा थी। 'पालि' शब्द 'पल्लि'का ही विकास है, अर्थात् इसका अर्थ है 'गाँवकी भाषा'। (३) एक मतके अनुसार यह सबसे पुरानी प्राकृत है (भण्डारकर तथा वाकेरनागल मानते हैं), इसीलिए शायद इसे 'प्राकृत' नाम दिया गया और 'पालि' शब्द 'प्राकृत' (7 पाकट 7 पाअड 7 पाअल 7 पालि)का ही विक-सित रूप है। (४) कोसाम्बी नामक बौद्ध विद्वान्‌के अनुसार इसका सम्बन्ध 'पाल्', अर्थात् 'रक्षा करना'से है, इसने बुद्धके उप-देशोंको सुरक्षित रखा है, इसीलिए यह नाम पड़ा है। (५) 'पा पालेति रक्खतीति' रूपमें भी कुछ लोगोंने 'पा'में 'लि' (णिच्) प्रत्यय लगाकर इसकी व्युत्पत्ति दी है। (६) एक मतसे 'प्रालेय' या 'प्रालेयक' (पड़ोसी)से पालि का सम्बन्ध है। (७) भिक्षु सिद्धार्थ सं० 'पाठ'से (बुद्ध पाठ या बुद्ध-वचन)इसे (पाठ 7 पालि 7 पाळि ; पालिमें संस्कृत 'ठ'का 'ळ' हो जाता है)निकला मानते हैं। (८)कुछ लोग 'पालि'को पंक्तिके अर्थका संस्कृत शब्द मानते हैं। इनके अनुसार यही शब्द पहले बुद्धकी पंक्तियोंके लिए फिर उनके उपदेशोंके लिए और फिर पुस्तकके लिए और फिर उस भाषाके लिए प्रयुक्त होने लगा। (९)राज-वाडेके अनुसार कुछ लोग पालिका सम्बन्ध संस्कृत प्रकट (पाअड 7 पाअल 7 पालि)से भी जोड़नेके पक्षमें हैं। (१०) डॉ० मैक्स-वेलेसरने 'पालि'को 'पाटलि' (पाटलिपुत्रकी भाषा)से व्युत्पन्न माना है। (११) सबसे प्रामाणिक व्युत्पत्ति भिक्षु जगदीश कश्यप द्वारा दी गयी है। अधिकांश भारतीय विद्वान् इससे सहमत हैं। इनके अनुसार 'पालि'का सम्बन्ध 'परियाय' (सं० पर्याय)से है। धम्म-परियाय या 'परियाय'का प्रयोग प्राचीन बौद्ध साहित्यमें बुद्धके उपदेशके लिए मिलता है। इसकी विकास परम्परा परियाय 7 पलियाय

7पालियाय 7पालि है। **पालि भाषाका आधार**—यह प्रश्न भी कम विवादास्पद नहीं है कि पालि मूलतः कहाँकी भाषा थी। इसपर सब मिलकर दो दर्जनसे ऊपर विद्वानोंने विचार किया है। नीचे कुछ प्रमुख मत अत्यन्त संक्षेपमें दिये जा रहे हैं :—(१) ऊपर संकेत किया जा चुका है कि सिंहल या लंकाके लोग इसे मागधी कहते हैं। वे इसे मगधकी भाषा मानते हैं। ग्रियर्सन, चाइल्डर्स, विंडिश तथा गाइगर भी लगभग इसी मतके हैं। यों विंडिश और गाइगर पालिको उस कालकी पूरे देशकी अन्तरप्रान्तीय परिनिष्ठित भाषा मानते हैं और उसमें मागधीके अतिरिक्त अन्य रूपोंके मिलनेका आधार यही बतलाते हैं। (२) वेस्टरगार्ड, ई० कुह्न, फ्रैंक तथा स्टैन कोनोके अनुसार 'पालि' उज्जयिनी या विंध्य प्रदेशके आसपासकी बोलीपर आधारित है। (३) ओल्डन बर्ग और ई० मूलर इसे मूलतः कलिंगकी भाषा मानते हैं। (४) रीज़ डेविड पालिको ६वीं-७वीं सदीकी कोसलकी बोलीपर आधारित मानते हैं। इस प्रश्नपर निर्णय देनेके पूर्व इस बातकी जानकारी भी आवश्यक है कि यद्यपि बुद्धकी अपनी भाषा मागधी थी, अतः 'पालि'के लिए उसका आधार अधिक स्वाभाविक है, किन्तु जब हम विभिन्न प्रकारकी प्राकृतोंके रूपोंकी पालिके रूपोंसे तुलना करते हैं तो यह स्पष्ट हुए बिना नहीं रहता कि : (१) पालि, मागधी या किसी पूर्वी प्रदेशकी भाषा या बोलीपर प्रमुखतया आधारित नहीं है, (२) यह बुद्धके जीवन कालकी भाषा नहीं है, बल्कि काफी बादकी, अर्थात् दूसरी सदी ई० पू०के आसपास की है। इस प्रसंगमें एक बात और भी उल्लेख्य है। बुद्ध भगवान् परम्परावादी न होकर क्रान्तिकारी थे। उन्हें यह बिलकुल पसन्द नहीं था कि सभी लोग उनके उपदेश उन्हींकी भाषामें पढ़ें। 'चुल्लवग्ग'की एक कथासे यह स्पष्ट है कि वे चाहते थे कि लोग अपनी-अपनी भाषामें उनके उपदेशोंको पढ़ें। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि बुद्ध भगवान्ने अपने उपदेश मागधीमें भले दिये हों, किन्तु कुछ ही सदियोंमें उनके अनुवाद उस कालकी अन्तरप्रान्तीय या राष्ट्रीय भाषामें हो गये और आज वही भाषा 'पालि'के रूपमें विख्यात है। इसमें थोड़ा-बहुत प्रभाव अन्य बोलियोंका हो सकता है, किन्तु इसका मूल आधार कदाचित् उस कालकी मध्य-देशके आसपासकी बोलचालकी भाषा ही थी। अवधी, ब्रजको सामने रखकर इसके रूपोंको देखनेसे भी यही निष्कर्ष निकलता है। इस प्रकार इसे क्या अर्द्ध मागधीपर आधारित मान सकते हैं? यों भाषा-विज्ञानकी पुर्ननिर्माण-पद्धतिके आधार तत्कालीन प्राकृतोंका स्वरूप स्पष्ट होनेपर इस प्रश्नका उत्तर और भी निश्चयसे शायद दिया जा सकेगा। पालि साहित्यका सम्बन्ध प्रमुखतः भगवान् बुद्धसे है। इसमें उन्हींसे संबद्ध काव्य, कथाओं या अन्य साहित्य-विधाओंकी रचना प्रमुखतः हुई है। यों कुछ उस विशेष संस्कृति या दर्शनसे संबद्ध पुस्तकें भी लिखी गयी हैं, इसी प्रकार कोश, छंद-शास्त्र या व्याकरणकी भी कुछ पुस्तकें लिखी गयी हैं। परम्परागत रूपसे पालि साहित्यको पिटक और अनुपिटक दो वर्गोंमें बाँटते हैं, जिनमें जातक (जिसे ग्रन्थ न कहकर ग्रन्थ-समूह कहना उचित समझा गया है), धम्मपद, मिलिन्दपञ्हो, बुद्धघोषकी अट्ठकथा, तथा महावंस आदि प्रमुख हैं। पालि साहित्यका रचना-काल ४८३ ई० पू०से लेकर आधुनिक कालतक लगभग ढाई हजार वर्षोंमें फैला हुआ है और इसने एशियाके एक अरबसे ऊपर लोगोंको प्रत्यक्षतःया अप्रत्यक्षतः कई दृष्टियोंसे प्रभावित किया है। पालि भाषाका प्रभाव भारतकी भाषाओंके अतिरिक्त लंका, बर्मा और स्यामकी भाषापर विशेष तथा तिब्बत, चीन और जापान आदिकी भाषापर कुछ-कुछ पड़ा है। **पालि भाषाकी कुछ प्रमुख सामान्य विशेषताएँ**—(१) पीछे वैदिक ध्वनियाँ दी जा चुकी हैं। उनमेंसे अधिकांश ध्वनियोंका प्रयोग तो पालिमें होता रहा,

किन्तु ऋ, ॠ, लृ, ऐ, औ, श्, ष्, विसर्ग या अघोष ह्, जिह्वामूलीय, उपध्मानीय इन दस ध्वनियोंका लोप हो गया। साथ ही ह्रस्व ए और ह्रस्व ओ दो ध्वनियाँ नयी विकसित हो गयीं। शुद्ध अनुनासिक या अनुस्वार वैदिककी भाँतिका न होकर संस्कृतकी भाँति ही था, जिसका उल्लेख ऊपर संस्कृतके प्रकरणमें हो चुका है। संस्कृत और पालि ध्वनियोंमें सबसे बड़ा अन्तर यह है कि वैदिक ध्वनियोंकी ळ् और ळ्ह् ये दो ध्वनियाँ संस्कृतमें नहीं मिलतीं, किन्तु पालिमें मिलती हैं। वैदिकी या संस्कृतकी तुलनामें ध्वनि-परिवर्तन सम्बन्धी अनेक प्रवृत्तियाँ इसमें दिखाई पड़ती हैं, जैसे स्वरोंके बीचके 'ड' 'ढ'का प्रायः क्रमसे 'ळ' और 'ळ्ह' हो जाना; बहुतसे अघोष व्यंजनोंका सघोष व्यंजन हो जाना (क > ग, च > ज, थ > ध), श, ष का स हो जाना तथा स्वरभक्ति, समीकरण, विषमीकरण, विपर्यय आदि। प्राकृतोंमें संयुक्त व्यंजनोंमें समीकरणकी प्रवृत्ति पालि-काल में ही शुरू हो गयी थी। (२) ध्वनि और रूप दोनों ही दृष्टियोंसे पालिमें तत्कालीन कई बोलियोंके तत्त्व हैं। (३) ध्वनि और रूप दोनों ही दृष्टियोंसे पालि वैदिक संस्कृतके निकट है, यहाँतक कि संस्कृतकी अपेक्षा भी यह निकट है; यद्यपि इसमें बहुतसे विकसित रूपोंका भी प्रयोग हुआ है। (४) पालि साहित्य देखनेसे पता चलता है कि आद्यंत 'पालि'का एक रूप नहीं रहा है। उसके कमसे-कम चार सीढ़ियोंका अनुमान लगता है। भाषाकी **पहली सीढ़ी** त्रिपिटक (सुत्त, विनय, अभिधम्म) की गाथाओंमें मिलती है। यह 'पालि'का प्राचीनतम रूप है। इसमें रूपोंका बाहुल्य है। यह भाषा वैदिक संस्कृतके बहुत निकट है। भाषाका इससे **कुछ विकसित रूप** त्रिपिटकके गद्य भागमें मिलता है। यहाँ रूप कम हैं और उनमें अपेक्षाकृत एकरूपता है। इसमें कुछ ऐसे नये रूप भी मिलते हैं, जो प्रथममें नहीं हैं, साथ ही प्रथमके पुराने रूपोंको इसमें स्थान नहीं मिला है। पालिके विकासकी **तीसरी सीढ़ी** और बादके गद्य जैसे 'मिलिन्दपञ्ह' या बुद्धघोषकी 'अट्ठकथा' आदिमें मिलती है। **चौथी सीढ़ी** उत्तरकालीन काव्य-ग्रंथों—जैसे दीपवंस, महावंस आदि—की भाषामें मिलती है। इस रूपपर संस्कृतका पर्याप्त प्रभाव है, साथ ही इस भाषामें जीवनके लक्षण नहीं हैं। एक कृत्रिमता-सी है, जो यह स्पष्ट कर देती है कि पुस्तकीय ज्ञानके आधारपर भाषाका भवन खड़ा है। (५) पालिमें तद्भव शब्दोंका प्रयोग ही अधिक है। इसके बाद संख्या तत्सम और देशजकी है। विदेशी शब्द बहुत कम हैं। प्राचीन भारतीय आर्य भाषामें आस्ट्रिक तथा द्रविड़से जो शब्द आये थे, प्रायः इसमें भी हैं। (६) संगीतात्मकता तथा स्वराघातके सम्बन्धमें निश्चितरूपसे कुछ कहना कठिन है। एक मतके अनुसार वैदिक संगीतात्मकता या संगीतात्मक स्वराघात पालिमें भी कुछ था। किन्तु टर्नर जैसे कुछ विद्वानोंके अनुसार वैदिकीकी भाँति बलात्मक और संगीतात्मक दोनों प्रकारके स्वराघात थे। ग्रियर्सनके अनुसार इसमें केवल बलात्मक स्वराघात था। जूल ब्लाकको पालिमें किसी भी बलाघातके होनेके बारेमें संदेह है। ग्रियर्सनका मत अधिक ठीक लगता है। (७) द्विवचनका प्रयोग नाम तथा धातु-रूपोंमें नहीं था। लिंग तीन थे। (८) समवेत रूपसे रूप कम हो गये। (९) व्यञ्जनान्त प्रातिपदिक बहुत कम रह गये थे। (१०) आत्मनेपद कुछ ही रूपोंमें शेष था।

शिलालेखी प्राकृत—म० भा० आ० के प्रथम युगके अन्तर्गत ही शिलालेखी प्राकृत या अशोकके शिलालेखोंकी प्राकृत भाषा भी आती हैं। इसे कुछ लोग **अशोकीय प्राकृत** या **अशोकन प्राकृत** भी कहते हैं। अशोकके अनेक लेख लाटोंपर मिलते हैं, इसीलिए कुछ लोगोंने इसे **लाट प्राकृत, लाट बोली** भी कहा है। पिशेल इसे **लेण** (सं० लयन = गुफ़ा) बोली या प्राकृत कहना अधिक उचित समझते हैं, क्योंकि इसके शिलालेख गुफाओंमें भी मिलते हैं। डॉ० गुणे इस

नामको ठीक नहीं मानते। यथार्थतः इसका नाम 'शिलालेखी प्राकृत' बिलकुल नहीं तो कम-से-कम अधिक उचित अवश्य है। अशोकने अपने राज्यके भिन्न-भिन्न भागोंमें अपने शासन तथा धर्म सम्बन्धी सिद्धान्तों आदिके विषयमें ब्राह्मी तथा खरोष्ठी लिपिमें बहुतसे अभिलेख खुदवाये थे। ये लेख प्रमुखतः स्तंभों और चट्टानोंपर हैं, जिनकी संख्या २०से ऊपर है। भाषा-विज्ञानकी दृष्टिसे इन अभिलेखोंका बहुत महत्त्व है। इनसे ईसा पूर्व तीसरी सदीके लगभग मध्य भागकी भाषाके स्वरूपका पता चल जाता है। इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इन सबकी भाषा एक न होकर उस-उस क्षेत्रकी है, जहाँ-जहाँके लिए ये खोदे गये थे। इस प्रकार तत्कालीन प्राकृतके विभिन्न रूपोंका भी इनसे पता चल जाता है। इस कालके आसपासके अशोकके अतिरिक्त कुछ अन्य राजाओं आदिके भी अभिलेख मिलते हैं, किन्तु उनका महत्त्व बहुत अधिक नहीं है। अशोकके लेखोंका भाषाकी दृष्टिसे अध्ययन किया जा चुका है, किन्तु परिणामके सम्बन्धमें फ्रैंक, सेनार्ट तथा गुणे आदि विद्वानोंमें मतभेद है। कुछ लोगोंके अनुसार इनसे दो बोलियोंका पता चलता है, कुछके अनुसार तीनका, कुछके अनुसार चारका और कुछके अनुसार पाँच का। ऊपर हम देख चुके हैं कि संस्कृत-कालमें ही उत्तरी, मध्य और पूर्वी तीन बोली-रूप विकासपर थे। इस समयतक आते-आते मोटे रूपसे पाँच रूपोंका विकसित हो जाना असम्भव नहीं है। यों शिलालेखोंसे उत्तर-पश्चिमी, दक्षिण-पश्चिमी और पूर्वी इन तीनों रूपोंका तो स्पष्ट पता चलता है, किन्तु साथ ही मध्यदेशी और दक्षिणीका अनुमान लगानेका भी आधार मिल जाता है। इन बोलियोंमें रूप और ध्वनि दोनोंके अन्तर हैं। ध्वनि विषयक अन्तरोंमें श्, ष्; र्, ल्; ञ्, ण् के प्रयोगके अन्तर प्रमुख हैं। **कुछ प्रमुख विशेषताएँ**:—(१) **ध्वनियाँ** प्रायः पालिके समान ही हैं। प्रमुख अंतर ऊष्मोंके सम्बन्धमें है। पालिमें केवल 'स'का प्रयोग मिलता है, किन्तु शिलालेखी प्राकृतोंमें इस दृष्टिसे ऐक्य नहीं है। शहबाज़गढ़ीके अभिलेखमें श्, स्, ष् तीनों हैं। इसका आशय यह हुआ कि उत्तरी-पश्चिमी बोलीमें संभवतः उस कालमें ये तीनों ध्वनियाँ प्रयुक्त होती थीं। किन्तु दक्षिण-पश्चिमीमें पालिकी तरह केवल 'स' है। इसी प्रकार र्, ल्, ञ्, ण् के प्रयोगके सम्बन्धमें भी विभिन्नता है। (२) पालिकी तरह ही संस्कृतकी तुलनामें इसमें भी ध्वनियोंमें विकास हो गया है और यह विकास आगम, लोप, समीकरण, विषमीकरण, विपर्यय, तालव्यीकरण, मूर्द्धन्यीकरण, ह्रस्वीकरण, दीर्घीकरण तथा घोषीकरण आदि अनेक दिशाओंमें हुआ है। (३) प्रातिपदिक अधिकांशतः स्वरान्त हैं। (४) द्विवचन नहीं है। लिंग तीन हैं। (५) सादृश्यके कारण पालिकी तुलनामें भी इसमें रूप कम मिलते हैं। (६) आत्मनेपद समाप्तप्राय है। (७) अन्य भी अधिकांश बातोंमें भाषा 'पालि'के समान है।

प्राकृत म० भा० आ० का दूसरा युग प्राकृतका है। इसके अन्य नाम **द्वितीय प्राकृत** या **देसी** आदि भी मिलते हैं। यों मध्यकालीन आर्य भाषाके सभी रूपोंको प्राकृत कहते हैं, ऊपर म० भा० आ०के प्रथम युगके शिलालेखोंकी भाषाको भी प्राकृत कहा गया है, किन्तु यहाँ प्राकृतका अर्थ लगभग पहली सदीसे ५०० ई०तककी 'प्राकृत भाषा' है। कुछ लोगोंने इस 'प्राकृत' और म० भा० आ०के प्रथम युगके 'पालि और शिलालेखी प्राकृत'का काल क्रमशः २००ई०से ६०० ई०तक और ६०० ई० पू०से २०० ई० पू०तक मानते हुए दोनोंके बीचमें २०० ई० पू०से २०० ई०तकका एक संक्रान्ति काल माना है। इस संक्रांति कालकी प्रमुख सामग्री (**संक्रान्तिकालीन प्राकृत**) तीन रूपोंमें है—अश्वघोषके नाटकोंकी प्राकृत (रचना-काल १०० ई०), धम्मपदकी प्राकृत (२०० ई०) और निय प्राकृत (ईसाकी तीसरी सदी)। ये तीनों ही

कालकी दृष्टिसे प्रस्तुत प्राकृत या म० भा० आ०के दूसरे युग (१ ई०से ५०० ई०)में पड़ते हैं, अतः इन्हें अलग संक्रान्ति कालमें न रखकर इसीमें स्थान दिया जा रहा है। **प्राकृत** शब्दकी व्युत्पत्ति कई प्रकारसे दी गयी है। जैसा कि पिशेलने दिया है, कुछ वैयाकरण इसका विश्लेषण, **प्राक्+कृत** अर्थात् पहले बनी हुई करते हैं और इस रूपमें इसे संस्कृतसे पहलेकी मानते हैं। हेमचन्द्र **प्रकृतिः संस्कृतं। तत्र भवं तत् आगतं वा प्राकृतम्** रूपमें प्राकृतको संस्कृतसे निकली मानते हैं। नमि साधु सामान्य लोगोंमें व्याकरणके नियमों आदिसे रहित सहज वचन-व्यापारको प्राकृतका आधार मानते हैं—**सकलजगज्जन्तूनां व्याकरणादिभिरंनाहित-संस्कारः सहजो वचन-व्यापारः प्रकृतिः तत्र भवः सैव वा प्राकृतम्**। ऐसा अनुमान है कि एक भाषाका संस्कार करके उसके रूपको 'संस्कृत' नाम दिया गया तो वह भाषा, जो असंस्कृत थी और पंडितोंमें प्रचलित इस भाषाके विरुद्ध जो 'प्रकृत' या सामान्य लोगोंमें सहज रूपमें बोली जाती थी, स्वभावतः 'प्राकृत' नामकी अधिकारिणी बन बैठी। प्राकृतकी उत्पत्ति वेद और संस्कृतकालीन जन-भाषाके विकसित रूपसे है। पालि-कालकी समाप्तिके बाद लोकभाषाका यही रूप था। पालिके कई स्थानीय रूपोंका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। प्राकृतोंका प्राचीनतम रूप शिलालेखी प्राकृतोंका है, जिसका संक्षिप्त परिचय ऊपर दिया जा चुका है। यह भी कहा जा चुका है कि उसके ४-५ रूपोंके होनेका अनुमान लगता है। यहाँ पहले प्राकृतके वे तीनरूप लिये जा रहे हैं, जिन्हें कुछ लोग संक्रांति कालमें मानते हैं। **अश्वघोषके नाटकोंकी प्राकृत**—अश्वघोषका रचना-काल १०० ई०के आसपास माना जाता है। इनके दो संस्कृत नाटकोंकी खंडित प्रतियाँ मध्य एशियामें मिली हैं, जिन्हें जर्मन विद्वान् ल्यूडर्सने संपादित किया है। इन नाटकोंमें प्रयुक्त प्राकृत, अशोकके अभिलेखोंकी प्राकृतोंसे बहुत मिलती-जुलती है। भौगोलिक (या बोलीकी) दृष्टिसे इनमें **प्राचीन मागधी, प्राचीन शौरसेनी** और **प्राचीन अर्द्धमागधी**, इन तीनका प्रयोग हुआ है। साहित्यका अंग होनेके कारण ये प्राकृत संस्कृतसे भी प्रभावित हैं। आगे भी संस्कृत नाटकोंमें प्राकृत भाषाओंका प्रयोग मिलता है। इसे उस परम्पराका आरम्भ समझना चाहिय। **धम्मपदका प्राकृत**—१८९२में फ्रांसीसी पर्यटक दुत्रुइल द राँको खोतानमें खरोष्ठी लिपिमें कुछ लेख मिले। ओल्डेनबर्ग, सेनार्ट तथा कुछ भारतीय तथा अन्य अभारतीय विद्वानोंके प्रयाससे बादमें इन लेखोंका उद्धार हुआ और यह प्राकृतमें लिखा गया 'धम्मपद' निकला। खरोष्ठी लिपिमें होनेके कारण इसे 'खरोष्ठी धम्मपद' भी कहते हैं। इसकी रचना २०० ई०के लगभगकी मानी गयी है। इसकी भाषा भारतके पश्चिमोत्तर प्रदेश की है। **निय प्राकृत**—ऑरेल स्टेनको १९००से १९१४के बीच चीनी तुर्किस्तानके 'निय' नामक प्रदेशमें कई लेख मिले, जो खरोष्ठी लिपिमें थे। १९३७में टी बरोने इनकी भाषाका अध्ययन करके इन्हें प्राकृतमें लिखा बताया। निय प्रदेशमें मिलनेके कारण इन लेखोंकी भाषाका 'नाम निय प्राकृत' पड़ा है। 'प्राकृत धम्मपद' की भाँति ही 'निय प्राकृत'-का आधार भी भारतके पश्चिमोत्तरी प्रदेश-की प्राकृत है। यह तीसरी सदीकी भाषा है। यह प्राकृत ईरानी, मंगोलियन और तोखारीसे प्रभावित है। **अन्य प्राकृत**—ऊपर जिस तीन प्राकृतका उल्लेख किया गया है, वे भारतके बाहर मिले हैं, यों उनका सम्बन्ध भारत-स्थित प्राकृतसे है और उनके आधारपर यह भी अनुमान लगता है कि उस कालमें कम-से-कम चार प्राकृत—**शौरसेनी, मागधी, अर्द्धमागधी** तथा **पश्चिमोत्तरी**—थे। यहाँ पहले प्राकृतके भेदपर विचार किया जा रहा है। प्राकृतके भेद कई दृष्टियोंसे किये गये हैं। धार्मिक दृष्टिसे लोगोंने प्राकृतके पालि (इसपर ऊपर विचार हो चुका है), **अर्धमागधी, जैन महाराष्ट्री** और **जैन शौरसेनी**

प्रायः ये चार भेद माने हैं। साहित्यकी दृष्टिसे **महाराष्ट्री, शौरसेनी, मागधी** और **पैशाची**के नाम लिये गये हैं। नाटककी दृष्टिसे इनमें प्रथम तीनकी गणना की गयी है। किन्तु ये सभी भेद मूलतः प्रायः भौगोलिक या व्याकरणिक हैं। प्राकृतके प्राचीन वैयाकरणों-में वररुचि उल्लेख्य हैं। इन्होंने **महाराष्ट्री, पैशाची, मागधी** और **शौरसेनी**, इन चारका उल्लेख किया है। हेमचन्द्रने तीन और नाम दिये हैं :—**आर्ष, चूलिका, पैशाची** और **अप-भ्रंश**। इनमें आर्षको ही अन्य लोगोंने **अर्ध मागधी** कहा है। कुछ अन्य व्याकरणों तथा अन्य स्रोतोंसे कई और प्राकृतके भी नाम मिलते हैं, जैसे **बाह्लीकी, शाकारी, ढक्की, शाबरी, चांडाली, आभीरिका, अवन्ती, दाक्षि-णात्य, भूत भाषा** तथा **गौड़ी** आदि। इनमें प्रथम पाँच मागधीके ही भौगोलिक या जातीय उप-भेद थे। **आभीरिका** शौरसेनीकी जातीय (आभीरोंकी) रूप थी और **अवन्ती** या **अवं-तिका** उज्जैनके पासकी कदाचित् महाराष्ट्रीसे प्रभावित शौरसेनी। इसे प्राचीन मालवी कह सकते हैं। **दाक्षिणात्य** भी शौरसेनीका एक रूप है। हेमचन्द्रकी **चूलिका पैशाची**को ही दंडीने **भूत भाषा** कहा है (गलतीसे **पैशाची**का अर्थ **पिशाच**का या **भूत**का समझ-कर)। कुछ लोगोंने लिखा है कि हेमचन्द्रने **पैशाची**को ही **चूलिका पैशाची** कहा है, किन्तु वस्तुतः बात ऐसी नहीं है। हेमचन्द्रने ये दोनों नाम अलग-अलग दिये हैं। दूसरी पहली-की ही एक उपबोली है। **गौड़ी**का अर्थ है 'गौड़' देशका। इसका आशय यह है कि यह मागधीका ही एक नाम है। इस प्रसंगमें कुछ और नामोंपर भी विचार करना आवश्यक है। प्राकृतके साथ **गाथा**का नाम भी लिया जाता है। गाथाकी भाषा संस्कृतका प्राकृतोंसे प्रभा-वित रूप है या इसे संस्कृत-प्राकृतका मिश्रित रूप भी कह सकते हैं। इसमें बौद्धों और जैनों-ने बहुत सी रचनाएँ की हैं, जिनमें 'जातक-माला', 'ललितविस्तर', 'अवदान-शतक' आदि प्रमुख हैं। मैक्समूलर तथा वेबर इसे संस्कृत और पालिके बीचकी भाषा मानते थे। इस भाषाका आगे विकास नहीं हो सका।

कुछ लोग एक **पश्चिमी प्राकृत**की भी कल्पना करते हैं, जो सिन्धमें बोली जाती रही होगी तथा जिससे **व्राचड़** अपभ्रंशका विकास हुआ होगा। यह व्राचड़ वर्तमान सिंधीकी जननी है। पंजाबी और लहँदा क्षेत्रमें भी उस कालमें कोई प्राकृत रही होगी, जिसे कुछ विद्वानोंने **केकय प्राकृत** कहा है। **टक्क** और **मद्र** या **टाक्की** या **माद्री** प्राकृत इसीकी शा-खाएँ थीं। राजस्थानी और गुजराती, शौर-सेनीसे प्रभावित तो हैं, किन्तु उनका आधार नागर अपभ्रंश है। वहाँ उस कालमें नागर प्राकृतकी भी कल्पना कुछ लोगोंने की है। इसी प्रकार पहाड़ी भाषाओंके लिए **खस अपभ्रंश**की कल्पना की गयी। उसका आधार **खस प्राकृत** हो सकती है। चंबल और हिमा-लयके बीच गंगाके किनारे एक **पांचाली प्राकृत**का भी उल्लेख किया जाता है। इस प्रकार प्राकृतोंके प्रसंगमें लगभग दो दर्जनसे ऊपर नामोंका उल्लेख मिलता है, किन्तु भाषा-वैज्ञानिक स्तरपर केवल पाँच ही प्रमुख भेद स्वीकार किये जा सकते हैं—(१) शौरसेनी, (२) पैशाची (इसके उत्तरी, दक्षिणी दो रूपान्तर सम्भव हैं), (३) महा-राष्ट्री, (४) अर्द्धमागधी, (५) मागधी। आगे इनपर संक्षेपमें प्रकाश डाला जा रहा है :—

(१) **शौरसेनी प्राकृत**—यह प्राकृत मूलतः मथुरा या शूरसेनके आसपासकी बोली थी। इसका विकास वहाँकी पालिकालीन स्थानीय बोलीसे हुआ था। मध्यदेशकी भाषा होनेके कारण इसे कुछ लोग संस्कृतकी भाँति उस कालकी परिनिष्ठित भाषा मानते हैं। मध्यदेश संस्कृतका केन्द्र था, इसी कारण शौरसेनी उससे बहुत प्रभावित है। संस्कृत नाटकोंकी गद्यकी भाषा शौरसेनी ही है। 'कर्पूरमंजरी'का गद्य इसीमें है। इसका प्राचीनतम रूप अश्वघोषके नाटकोंमें मिलता है। जैनों (दिगंबर संप्रदाय) ने अपने साम्प्रदायिक ग्रंथोंके लेखनमें भी

इसका प्रयोग किया है। ऐसे ग्रंथोंकी भाषा 'जैन शौरसेनी' या 'दिगंबरी शौरसेनी' कही गयी है। यह मूल शौरसेनीसे थोड़ी भिन्न है। पिशेलके अनुसार इसका विकास दक्षिणमें हुआ। शौरसेनीके अन्य स्थानीय रूप अवन्ती, आभीरी आदि हैं। **प्रमुख विशेषताएँ**—(१) दो स्वरोंके बीचमें आनेवाला सं० (=संस्कृत) 'त' इसमें 'द' हो गया है और 'थ' 'ध' (गच्छति—गच्छदि, कथय— कधोहि)। यद्यपि इसके अपवाद भी मिलते हैं। (२) दो स्वरोंके बीचकी 'द' 'ध' ध्वनियाँ प्रायः सुरक्षित हैं (जलदः —जलदो)। (३) 'क्ष'का विकास 'क्ख'-में हुआ है (इक्षु—इक्खु)। (४) केवल परस्मैपदका प्रयोग मिलता है, आत्मनेपदका नहीं। (५) रूपोंकी दृष्टिसे यह कुछ बातोंमें संस्कृतकी ओर झुकी है, जो मध्य-देशमें रहनेका प्रभाव है, किन्तु साथ ही, महाराष्ट्रीसे भी इससे काफ़ी साम्य है। (२) **पैशाची प्राकृत**—इसके अन्य नाम **पैशाचिकी, पैशाचिका, ग्राम्यभाषा, भूतभाषा, भूतवचन, भूतभाषित** आदि भी मिलते हैं। अंतिम तीन नाम 'पिशाच'को भूतका पर्याय समझ लेनेके आधारपर रखे गये हैं। 'महा-भारत'में 'पिशाच' जातिका उल्लेख है। ये उत्तर-पश्चिममें कश्मीरके पास थे। ग्रियर्सन इसे वहींकी 'दरद'से प्रभावित भाषा मानते हैं। हार्नली इसे द्रविड़ों द्वारा प्रयुक्त प्राकृत मानते हैं। पुरुषोत्तम देवने अपने 'प्राकृतानुशासन'में इसे संस्कृत और शौरसेनीका विकृत रूप माना है। वररुचि इसका आधार संस्कृत मानते हैं। इसमें साहित्य नहींके बराबर है। 'हम्मीरमर्दन' तथा कुछ अन्य नाटकोंमें कुछ पात्रोंने इसका प्रयोग किया है। पैशाचीके कई भेदोंके उल्लेख मिलते हैं। हेमचन्द्र तथा कुछ अन्योंने इसका एक रूप **चूलिका पैशाची** दिया है। मार्कण्डेय आदिने इसके **कैकेय, पांचाल** और **शौरसेनी** तीन भेद दिये हैं। 'प्राकृतसर्वस्व'में देश तथा जातिके आधारपर इसके ग्यारह भेद दिये गये हैं। लेसेनने: **मागध, व्राचड़, पैशाचिक** तीन भेद माने हैं। इन बहुत-से भेदोंके आधारपर कुछ लोगोंका विचार है पैशाची केवल अपने स्थानपर ही प्रचलित न होकर चारों ओर निम्न स्तरके लोगोंमें प्रचलित थी। **प्रमुख विशेषताएँ**—(१) दो स्वरोंके बीचमें आनेवाले स्पर्श वर्गोंके तीसरे और चौथे घोष व्यंजन इसमें पहले और दूसरे, अर्थात् अघोष हो गये है (गगन—गकन, मेघः—मेखो)। (२) इसके कुछ रूपोंमें 'ल'के स्थानपर 'र' और कुछमें 'र'के स्थानपर 'ल' हो जाता है। दोनोंका वैकल्पिक-सा प्रयोग है (रुद्रं—लुद्दं, कुमार—कुमाल)। (३) 'ष' के स्थानपर कहीं तो 'श' और कहीं 'स' मिलता है (विषम—विसमो, तिष्ठति —चिश्तदि)। (४) अन्य प्राकृतोंकी तरह स्वरोंके बीचमें आनेवाले स्पर्श इसमें लुप्त नहीं होते। (३) **माहाराष्ट्री या माहाराष्ट्री प्राकृत**—इस प्राकृतका मूल स्थान महाराष्ट्र है। जूल ब्लाखने मराठी-का विकास इसीके बोलचालके रूपसे माना है। कुछ लोग इसे मात्र महाराष्ट्रतक सीमित न मानकर महाराष्ट्र अर्थात् पूरे भारतकी तत्कालीन राष्ट्रभाषा मानते हैं। इसी रूपमें डॉ० मनमोहन घोषने इसे शौरसेनीके बादकी माना है। डॉ० सुकुमार सेनका भी लगभग यही मत है। कुछ लोग इसे काव्यकी कृत्रिम भाषा मानते रहे हैं, किन्तु अब यह मत निर्मूल सिद्ध हो चुका है। महाराष्ट्री (गुणेने इसे सर्वत्र माहाराष्ट्री लिखा है) प्राकृत साहित्यकी दृष्टिसे बहुत धनी है। यह काव्य-भाषा रही है। गाहा सत्तसई (हाल), रावणवहो (प्रवसरसेन) तथा वज्जालग्ग (जयवल्लभ) इसकी अमर कृतियाँ हैं। काव्य-भाषा-रूपमें इसका प्रचार पूरे उत्तरी भारतमें था और इसमें 'गीति', 'खंड' और 'महा', सभी प्रकारके काव्य लिखे गये। कालिदास, हर्ष आदिके नाटकोंके गीत-की भाषा यही है। कुछ लोग समझते हैं कि महाराष्ट्रीमें केवल कविताकी रचना हुई, गद्यकी नहीं। किन्तु यथार्थतः बात यह नहीं

है। श्वेताम्बर जैनियोंने इसमें अपने कुछ धार्मिक गद्य-ग्रंथ भी लिखे हैं, जिनकी भाषाको याकोबीने **जैन महाराष्ट्री** कहा है। इस भाषापर अर्द्धमागधीका भी प्रभाव पड़ा है। कुछ बौद्ध ग्रंथ भी महाराष्ट्रीमें मिलते हैं। महाराष्ट्री प्राकृतोंमें परिनिष्ठित भाषा मानी गयी है। इसीलिए वैयाकरणोंने पहले इसीका सविस्तर वर्णन किया है और अन्य प्राकृतोंके केवल इससे अंतरोंका उल्लेख कर दिया है। जैसा कि ऊपर कहा गया है, इसी आधारपर कुछ लोग इसे 'मराठा देश'से सम्बन्ध न मानकर पूरे भारत (महाराष्ट्र)की कहते हैं। कुछ **प्रमुख विशेषताएँ**—(१) इसमें दो स्वरोंके बीच आनेवाले अल्प प्राण स्पर्श (क, त, प, द, ग आदि) प्रायः लुप्त हो गये हैं (प्राकृत—पाउअ, गच्छति—गच्छइ)। (२) उसी स्थितिमें महाप्राण स्पर्श (ख, थ, फ, ध, घ)का केवल 'ह' रह गया है (क्रोधः—कोहो, कथयति—कहेइ)। (३) ऊष्म ध्वनियाँ स, श का प्रायः 'ह' हो गया है (तस्य—ताह, पाषाण—पाहाण)। (४) कर्मवाच्य 'य' (गम्यते)का 'इज्ज' (गमिज्जइ) बनता है। (५) पूर्वकालिक क्रिया बनानेमें 'ऊण' प्रत्ययका प्रयोग होता है। (सं० पृष्ट्वा—पुच्छिऊण)। (४) **अर्द्धमागधी प्राकृत**—अर्द्धमागधीका क्षेत्र मागधी और शौरसेनके बीचमें है, अर्थात् यह प्राचीन कोशलके आसपासकी भाषा है। इसमें मगधीकी प्रवृत्तियाँ भी पर्याप्त मात्रामें मिलती हैं, इसीलिए इसका नाम अर्द्धमागधी है। जैनियोंने इसके लिए **आर्ष, आर्षी** और **आदि भाषा**का भी प्रयोग किया है। इसका प्रयोग प्रमुखतः जैन साहित्यमें हुआ है। गद्य और पद्य दोनों ही इसमें लिखे गये हैं। यों साहित्यिक नाटकोंमें भी इसका प्रयोग हुआ है। प्राचीनतम प्रयोग 'अश्वघोष'में मिलता है। साहित्यदर्पणकारने इसे चरों, सेठों और राजपुत्रोंकी भाषा कहा है। 'मुद्राराक्षस'और 'प्रबोध चंद्रोदय'में भी इसका प्रयोग मिलता है। कुछ विद्वानोंके अनुसार अशोकके अभिलेखोंकी मूल भाषा यही थी, जिसको स्थानीय रूपोंमें रूपान्तरित किया गया था। जैनों द्वारा प्रयुक्त महाराष्ट्री तथा शौरसेनीपर इसका प्रभाव पड़ा है। **प्रमुख विशेषताएँ**—(१) ष, श के स्थानपर प्रायः 'स' मिलता (श्रावक—सावग)। (२) दंत्य ध्वनियाँ मूर्द्धन्य हो गयी हैं (स्थित—ठिय, कृत्वा—कट्टु)। (३) चवर्गके स्थानपर कहीं-कहीं तवर्ग मिलता है (चिकित्सा—तेइच्छा)। (४) जहाँ कुछ अन्य प्राकृतोंमें स्वरोंके बीच स्पर्शका लोप मिलता है, वहाँ इसमें 'य' श्रुति मिलती है (सागर—सायर, स्थित—ठिय)। (५) गद्य और पद्यकी भाषाके रूपोंमें अंतर है। सं०—अः (प्रथमा एकवचन)के स्थानमें प्रायः गद्यमें मागधीकी तरह—'ए' का प्रयोग हुआ है और प्रायः पद्यमें शौरसेनीके समान '—ओ'का। **मागधी प्राकृत**—मागधीका मूल आधार मगधके आसपासकी भाषा है। वररुचि इसे शौरसेनीसे निकली मानते हैं। लंकामें **पालि** को ही 'मागधी' कहते हैं। मागधीमें कोई स्वतंत्र रचना नहीं मिलती। संस्कृत नाटकोंमें निम्न श्रेणीके पात्र इसका प्रयोग करते हैं। इसका प्राचीनतम रूप अश्वघोषमें मिलता है। इसे **गौड़ी** भी कहते हैं। **वाह्लीकी, ढक्की, शाबरी** तथा **चांडाली** इसके जातीय रूप थे। **शाकारी** इसकी उपबोली थी। **प्रमुख विशेषताएँ**—(१) इसमें स, ष के स्थानपर 'श' मिलता है। (सप्त—शत्त, पुरुष—पुलिश)। (२) इसमें 'र'का सर्वत्र 'ल' हो जाता है (राजा—लाजा)। (३) 'स्थ' और 'र्थ'के स्थानपर 'स्त' मिलता है (उपस्थित—उवस्तिद, अर्थवती—अस्तवदी)। (४) कहीं-कहीं ज का य हो जाता है (जानाति—याणादि)। (५) ऐसे संयुक्त व्यंजनमें, जिनमें प्रथम ध्वनि ऊष्म हो, समीकरण आदि परिवर्तन अन्य प्राकृतोंकी तरह प्रायः नहीं होते (हस्त—हस्त)। (६) प्रथमा एकवचनमें संस्कृतमेंः— के स्थानपर यहाँ—ए मिलता है। (देवः—देवे, सः शे)

प्राकृत भाषाओंकी कुछ सामान्य विशेषताएँ--(१) ध्वनिकी दृष्टिसे प्राकृत भाषाएँ पालिके पर्याप्त निकट हैं। इनमें भी पालिकी तरह ह्रस्व ए और ओ, ळ, ळ्हका प्रयोग चलता रहा। ऐ, औ, ऋृ, ऌ का प्रयोग नहीं हुआ। ऋका प्रयोग लिखनेमें तो हुआ है किन्तु भाषामें यह ध्वनि थी नहीं। वे ध्वनि-विशेषताएँ, जो पालिसे प्राकृतको अलग करती हैं, इस प्रकार हैं:—(क) ऊष्मोंमें पालिमें केवल 'स'का प्रयोग था। प्राकृतमें पश्चिमोत्तरी क्षेत्रमें श, ष, स तीनों ही कुछ कालतक थे। बादमें 'ष' ध्वनि 'श'में परिवर्तित हो गयी। निय प्राकृतमें भी तीनों ऊष्म मिलते हैं। मागधीमें केवल 'श' है। अन्य बहुतोंमें पालिकी तरह प्रायः केवल 'स' (जैसे अर्धमागधीमें) मिलता है और कुछमें श, ष दोनों ही (पैशाची)। (ख) य, र, लके प्रयोगके सम्बन्धमें भी कुछ विशेषताएँ हैं। मागधीमें 'र' ध्वनि नहीं है। उसके स्थानपर 'ल' मिलता है। कुछ अन्यमें कभी-कभी 'र'के स्थानपर 'ल' और 'ल'के स्थानपर 'र' मिलता है। 'य' सामान्यतः 'ज' होता देखा जाता है, किन्तु मागधीमें 'ज'का 'य' होना भी पाया जाता है। (ग) सबसे विचित्र बात है कुछ ऐसे संघर्षी व्यंजनोंका प्रयोग, जो प्रायः भारतीय भाषाओंमें केवल आधुनिक कालमें प्रयुक्त माने जाते हैं, जैसे 'ज़' 'ग़' आदि। निय प्राकृतमें 'ज़' ध्वनि है। यद्यपि यह बाहरी प्रभावोंके कारण है, किन्तु ऐसा माननेके लिए आधार है कि दूसरी-तीसरी सदीके लगभग प्राकृतोंमें सामान्य रूपसे बहुतसे स्पर्शोंका स्वरूप कुछ दिनके लिए परिवर्तनके संक्रांति कालमें संघर्षी हो गया था, यद्यपि इन संघर्षी ध्वनियोंके लिए उस कालमें किन्हीं लिपि चिह्नोंका प्रयोग नहीं किया गया। ये स्पर्श घोष थे (जैसे ग़, घ़, ध़ आदि)। (२) प्राकृतोंमें 'न'का विकास प्रायः 'ण' रूपमें हुआ है। (३) पालि कालमें जिन ध्वनि-परिवर्तनकी प्रवृत्तियों (समीकरण, लोप, स्वरभक्ति आदि)का प्रारम्भ हुआ था, इस कालमें वे और सक्रिय हो गयीं। ध्वनि-परिवर्तन सबसे अधिक महाराष्ट्री तथा मागधीमें हुए। (४) ध्वनियोंके विकासके कुछ विशेष रूप भी इस कालमें दिखाई पड़ते हैं, यद्यपि वे सार्वभौम न होकर प्रायः क्षेत्रीय अधिक हैं :—अल्पप्राण स्पर्शोंका स्वर मध्यग होनेपर लोप; महाप्राण स्पर्शोंका स्वर मध्यग होनेपर 'ह'में परिवर्तन; संस्कृतमें विसर्गके स्थानपर प्रायः ए, ओ; 'म'का 'व' रूपमें परिवर्तन तथा घोष स्पर्शोंका अघोष और अघोषका घोषमें परिवर्तन आदि। (५) प्राकृतोंमें व्यंजनांत शब्द प्रायः नहीं हैं। (६) द्विवचनके रूपोंका प्रयोग (संज्ञा, क्रिया आदिमें) प्राकृतोंमें नहीं मिलता। 'निय' प्राकृत अपवाद है, जिसमें कुछ द्विवचनके रूप हैं। (७) प्राकृतोंका भी आत्मनेपद पालिकी तरह ही प्रायः नहींके बराबर हैं। (८) पालिमें वैदिकीकी भाँति रूप बहुत थे किन्तु कम हो रहे थे। प्राकृत-कालमें आते-आते सादृश्यके कारण नाम और धातु दोनों ही रूपोंमें और भी कमी हुई, इस प्रकार भाषा अधिक सरल हो गयी। (९) वैदिकी और संस्कृत संयोगात्मक भाषाएँ थीं। पालिमें भी यह विशेषता सुरक्षित है, किन्तु प्राकृत-कालमें भाषा अयोगात्मकता या वियोगात्मकताकी ओर तेजीसे बढ़ने लगी। भाषामें वियोगात्मकता प्रमुखतः दो कारणों से आती हैं—(१) कारक-चिन्हों या परसर्गोंके प्रयोगसे, (२) क्रियामें कृदंती रूपों एवं सहायक क्रियाके प्रयोगसे। प्राकृतोंमें कृदंती रूपोंका प्रयोग आरम्भ हो गया। कारक-रचनामें स्वतंत्र शब्द जोड़े जाने लगे, जो आधुनिक कालमें आकर परसर्ग बने (जैसे संस्कृत 'रामस्य गृहम्'के स्थानपर 'रामस्स केरक घरम्' आदि)। (१०) संस्कृतकी तुलनामें शब्दोंमें अर्थकी दृष्टिसे भी परिवर्तन हुए। धातुके अर्थ शब्दोंमें पूर्णतः सुरक्षित न रह सके। (११) स्वराघातके सम्बन्धमें वही स्थिति है, जो 'पालि'के बारेमें कही जा चुकी है। (१२) प्राकृतोंमें अधिकांश शब्द तद्भव हैं। इनमें

उन शब्दोंके भी तद्भव हैं जो आस्ट्रिक या द्राविड़ आदिसे संस्कृतमें लिये गये थे। साथ ही इस कालतक आते-आते आर्य भाषामें अनुकरणके आधारपर या यों भी वहुतसे देशज शब्दोंका भी विकास हो गया। हेमचन्द्रके 'देशी नाममाला' तथा धनपालकी 'पाइअलच्छी'में ऐसे शब्द हैं, यद्यपि इनमें बहुतसे अन्य प्रकारके शब्दोंको भी गलतीसे देशी मान लिया गया है।

अपभ्रंश

मध्य आर्य भाषाका अन्तिम रूप 'अपभ्रंश' के रूपमें दिखाई पड़ता है। अपभ्रंशका विकास प्राकृत-कालीन बोलचालकी भाषासे हुआ है और इस रूपमें उसे प्राकृत और आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओंके बीचकी कड़ी माना जा सकता है। विभिन्न ग्रंथोंमें 'अपभ्रंश'के अन्य नाम **तृतीय प्राकृत**, **''ग्रामीण भाषा'**, **'देसी'**, **'देश-भाषा'**, **'आभीरोक्ति'**, **'अपभ्रष्ट'**, **'अवहंस'** (अपभ्रंश शब्दका विकसित रूप), **अवहत्थ**, **अवहट्ठ**, **अवहठ** (अवहट्ठ या अवहठको अपभ्रंश और आधुनिक भारतीय भाषाओंके बीचकी कड़ी माना गया है) तथा **अवहट्ट** (अंतिम चारों 'अपभ्रष्ट' शब्दके विकसित रूप हैं) आदि मिलते हैं। 'अपभ्रंश' का अर्थ है 'बिगड़ा', 'भ्रष्ट' या 'गिरा हुआ'। भाषाका विकास पंडितोंको सर्वदा ही ह्रास दिखाई पड़ता है, प्रस्तुत नामकरणके पीछे स्पष्टतः यही प्रवृत्ति है। 'अपभ्रंश'का काल मोटे रूपसे ५०० ई०से १००० ई०तक है। कुछ लोगोंने इसे ६०० ई० से ११०० ई० या १२०० ई०तक भी माना है। यों जैसा कि आगे हम लोग देखेंगे, छठी सदीसे इनमें काव्य-रचना होने लगी थी और छठी सदीमें ही इसके लिए 'अपभ्रंश' नामका प्रयोग भी होने लगा था। ये दोनों ही बातें भाषाके आरम्भ होते ही प्रायः सम्भव नहीं होतीं। ऐसी स्थितिमें अधिक वैज्ञानिक यही होगा कि छठी सदीसे कुछ पूर्वसे अपभ्रंशका आरम्भ माना जाय। 'अपभ्रंश' शब्दके प्राचीनतम प्रयोग व्याडि (पतंजलिसे कुछ पूर्व) तथा पतंजलिके महाभाष्य (ई० पू० १५० के लगभग) आदिमें मिलते हैं, किन्तु वहाँ इसका अर्थ भाषाविशेष न होकर 'संस्कृत शब्द या तत्सम शब्दका बिगड़ा हुआ रूप' है। भाषाके अर्थमें इस शब्दके प्रयोग सर्वप्रथम छठी सदीमें मिलते हैं। इस दृष्टिसे भामहके 'काव्यालंकार' और चंडके 'प्राकृत लक्षणम्'के नाम उल्लेख्य हैं।

अपभ्रंश भाषाके प्राचीनतम उदाहरण भरतके नाट्यशास्त्र (३०० ई०)में मिलते हैं। इसका आशय यह है कि उसके बीज इससे भी कुछ पूर्व फूटने लगे थे। आगे चलकर कालिदासके नाटक 'विक्रमोर्वशी'के चौथे अंकमें अपभ्रंशके कुछ छंद मिलते हैं। इन छंदोंके सम्बन्धमें थोड़ा विवाद भी है। कुछ इसे बादका प्रक्षिप्त मानते हैं और कुछ कालिदासका लिखा। यों कालिदासद्वारा लिखित होनेका मत अधिक ठीक लगता है। छठी सदीतक आते-आते अपभ्रंशमें काव्य-रचना होने लगी थी। तबसे लेकर १५वीं-१६वीं सदीतक इसमें साहित्य-रचना हुई (यद्यपि बोलचालकी भाषाके रूपमें इसका प्रचार १००० ई० के आसपास समाप्त हो गया), जिनमें उल्लेख्य ग्रंथ रइधूका करकंड चरिउ, धर्मसूरिका जंबूस्वामी रासा, पुष्पदंतका आदि पुराण, सरहका दोहाकोश, रामसिंहका पाहुड़ दोहा, स्वयंभूका पउम चरिउ तथा धनपालकी 'भविस्सयत्तकहा' आदि हैं। अधिकांश विद्वान् यह मानते हैं कि अपभ्रंशकी प्रारंभिक विशेषताएँ सर्वप्रथम पश्चिमोत्तर प्रदेशमें विकसित हुईं। कीथ आदि कुछ लोगोंने मूलतः अपभ्रंशका सम्बन्ध आभीरों तथा गूजरोंसे माना है। डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी परिनिष्ठित अपभ्रंशका सम्बन्ध मध्यदेशकी भाषासे मानते हैं, यद्यपि बादमें वे उसपर अपभ्रंशके अन्य रूपोंके प्रभावका भी संकेत करते हैं। डॉ० सक्सेना भी मध्यदेशीय या शौरसेनी अपभ्रंशको ही उस कालकी परिनिष्ठित भाषा मानते हैं। **अपभ्रंशके भेद**—अपभ्रंशके भेदों-

को लेकर विद्वानोंमें बहुत विवाद है। विष्णुधर्मोत्तरमें इसके अनंत भेद कहे गये हैं, जो जितना ही सार्थक और सत्य है, उतना ही निरर्थक और असत्य भी है। नमि साधुने अपभ्रंशके '**उपनागर**,' '**आभीर**' और **ग्राम्य**' नामके तीन भेद किये हैं। मार्कण्डेय अपने 'प्राकृत-सर्वस्व'में भी तीन ही भेद देते हैं, यद्यपि नामोंमें अन्तर है। इनके अनुसार भेद हैं–'**नागर**', '**उपनागर**' और '**ब्राचड**'। इन्होंने 'ब्राचड'को सिंधका अपभ्रंश, 'नागर'को गुजरातकी अपभ्रंश और 'उपनागर'को दोनोंके बीचका मिश्र अपभ्रंश कहा है। इनका 'नागर' ही नमि साधुका 'उपनागर' है, जो कुछ लोगोंके अनुसार उस कालकी परिनिष्ठित भाषा थी। मार्कण्डेयसे ही इस बातका भी पता चलता है कि उनके समयमें कुछ लोग अपभ्रंशके स्थान और शैली आदिके आधारपर २७ भेद मानते थे। भेद हैं—**ब्राचड, लाट, वैदर्भ, उपनागर, नागर, बार्बर, अवन्त्य, पांचाल, टाक्क, मालव, कैकय, गौड, ओढ्र, वैवपश्चात्य, पांड्य, कौन्तल, सैंहल, कलिंग्य, प्राच्य, कार्णाट, कांच्य, द्राविड, गौर्जर, आभीर, मध्यदेशीय** तथा **वैताल** आदि। इस सूचीमें जो **लाट** है, उसीको कुछ लोगोंने प्राकृतका भी भेद माना है जिसका उल्लेख पहले किया जा चुका है। प्राकृतके प्रसंगमें इनमेंसे कुछ अन्य नामोंका भी प्रयोग हो चुका है। पुरुषोत्तमदेवके 'प्राकृतानुशासन'से भी अपभ्रंशके कुछ रूपोंका पता चलता है, जैसे **वैदर्भी, लाटी, ओड्री, कैकेयी, गौड़ी, ब्राचड** आदि। कहना न होगा कि ये भी उपर्युक्तमें आ गये हैं। प्राचीन विचारकोंने इन २७ भेदोंका खंडन किया है, और आज भी विद्वान् इनके पक्षमें नहीं हैं। अपभ्रंशके भेदपर प्रकाश डालनेवाले आधुनिक लोगोंमें इस प्रसंगमें सबसे पहले डॉ० याकोबीका नाम लिया जा सकता है। इन्होंने 'सनत्कुमार चरिउ' की भूमिकामें इस प्रश्नको लिया है और क्षेत्रका आधार लेते हुए अपभ्रंशके चार भेद माने हैं—**पूर्वी, पश्चिमी, दक्षिणी** और **उत्तरी**। डॉ० तगारेने 'हिस्टॉरिकल ग्रामर ऑफ अपभ्रंश' में याकोबीकी बातोंपर फिरसे विचार किया है और 'उत्तरी' को निकालकर केवल तीन भेद माने हैं : **दक्षिणी, पश्चिमी, पूर्वी**। डॉ० नामवर सिंहने 'हिंदीके विकासमें अपभ्रंशका योग' नामक पुस्तकमें डॉ० तगारेके मतकी परीक्षा की है और उन्होंने 'दक्षिणी' भेदको व्यर्थ मानकर केवल दो भेद माने हैं––**पश्चिमी, पूर्वी**। उपर्युक्त आधुनिक तीनों मतोंपर विचार करनेपर लगता है कि इन निर्णयोंपर पहुँचनेमें उन बहुतसी व्यावहारिक बातोंकी ओर कदाचित् ध्यान नहीं दिया गया है, जो अपभ्रंशके पूर्व और बादके भाषा-इतिहास तथा कुछ बातोंसे स्पष्ट है। अपभ्रंश साहित्यकी रचना जिस भाषामें हुई है, उसमें भाषा-भेद अधिक नहीं हैं। इसका कारण यह है कि वह भाषा प्रायः परिनिष्ठित है। इसका यह आशय कदापि नहीं है कि उस कालमें सिंध और बंगाल या पंजाब, महाराष्ट्रकी बोलचालकी भाषा एक थी। पर पीछे हम देख चुके हैं कि संस्कृतके अन्तिम कालमें आर्य भाषाके स्थानीय रूप––विकास या स्थानीय प्रभाव आदिके कारण––विकसित हो रहे थे। ये रूप पालि और अशोककी शिलालेखी प्राकृतमें कुछ और स्पष्ट हुए। प्राकृतमें इनका स्वरूप और भी स्पष्ट हुआ। अपभ्रंश प्राकृत और आधुनिक भारतीय भाषाओंके बीचकी कड़ी है, अतएव ऐसा मानना अवैज्ञानिक न होगा कि प्राकृतकी ये बोलियाँ (या विभिन्न रूप) अपभ्रंशमें और भी स्पष्ट हुईं और उसके बाद ये ही विकसित होकर आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ बन गयीं। १४-१५ सौ ई०के आसपास उत्तरी भारतमें कमसे कम पंजाबी, लहँदा, सिंधी, राजस्थानी, गुजराती, मराठी, खड़ीबोली-ब्रज, अवधी-छत्तीसगढ़ी, पहाड़ी, भोजपुरी-मगही-मैथिली, उड़िया, असमी तथा बंगाली, ये १३ रूप पर्याप्त विकसित

हो चुके थे। प्राकृतके ५ रूपों--शौरसेनी, महाराष्ट्री, पैशाची, मागधी और अर्ध-मागधी--को विद्वान् मानते ही हैं। तो फिर ५ और १३के बीचकी मिलानेवाली सीढ़ी दो-तीन तो नहीं ही हो सकती। उसके ५ और १३के बीचमें ही होनेकी सम्भावना है। यों भी दो-तीन रूपोंसे चार-पाँच सौ वर्षोंमें भाषाके १२-१३ रूप सामान्यतः नहीं बन सकते। एक बात और। संस्कृत कालमें ही जब उत्तरी, मध्य और पूर्वी रूप हो गये थे तो आगे एक हजार वर्षोंमें न तो उनके घटनेका कोई कारण है, और न ज्यों-के त्यों रहनेका। अपभ्रंशका साहित्य जिस रूपमें उपलब्ध है, उसके सहारे साहित्यिक भाषाके रूपोंका निर्धारण तो हो सकता है, किन्तु बोलचालकी भाषाके वर्गीकरणके साथ मात्र उसके आधारपर न्याय नहीं किया जा सकता। उदाहरणतः आज हिन्दी-की स्थिति लें। राजस्थानसे लेकर मिथिला-तक खड़ी बोलीमें साहित्य लिखा जा रहा है। कल यदि और कुछ उपलब्ध न हो तो केवल इस साहित्यके आधारपर यही निष्कर्ष निकलेगा कि २०वीं सदीमें इस पूरे क्षेत्रमें भाषाका प्रायः एक ही रूप था। कहना न होगा कि यह सत्यसे कितना दूर है। इन बातोंसे स्पष्ट है कि अपभ्रंशके प्राप्त साहि-त्यमें अपभ्रंशके भेदों या रूपोंकी संख्या चाहे जो हो (२, ३ या ४) आधुनिक भाषाओं और अपभ्रंशके पूर्वके प्राकृतोंके आधारपर यही निष्कर्ष निकलता है कि अपभ्रंशोंकी संख्या इससे अधिक रही होगी। यदि अधिक न होती तो ढाई-तीन सौ वर्षोंमें १३ भाषावर्ग या भाषाएँ उनसे न विकसित होतीं। पूरी स्थितिपर विचार करनेपर अप-भ्रंशके निम्नांकित भेदोंका अनुमान लगता है।

अपभ्रंश		उनसे निकलनेवाली आधुनिक भाषाएँ
१. शौरसेनी	(क)	पश्चिमी हिन्दी (१)
	(ख)	इस अपभ्रंशके नागर रूपसे
		(अ) राजस्थानी (२)
		(ब) गुजराती (३)
२. पैशाची]	(क)	लहँदा (४)
	(ख)	पंजाबी (इसपर शौरसेनी अपभ्रंशका प्रभाव है) (५)
३. ब्राचड		सिन्धी (६)
४. खस		पहाड़ी (शौरसेनी अपभ्रंश तथा उसके नागर रूप (पुरानी राज-स्थानीका प्रभाव है) (७)
५. महाराष्ट्री		मराठी (८)
६. अर्द्धमागधी		पूर्वी हिन्दी (९)
७. मागधी]	(क)	बिहारी (१०)
	(ख)	बंगाली (११)
	(ग)	उड़िया (१२)
	(घ)	असमिया (१३)

(**विशेष**—इधर पहाड़ीको शौरसेनीसे सम्ब-न्धित माननेके पक्षमें भी कुछ लोग हो गये हैं। डॉ० बाबूराम सक्सेना अवधी आदिको अर्द्धमागधीसे सम्बद्ध न मानकर पालिसे मानते हैं।)

अपभ्रंशके उपर्युक्त सात रूपोंसे आधुनिक भाषाओं या भाषा–वर्गोंके १३ रूपोंका विकास हुआ है। आधुनिक भाषाओंसे सम्बन्ध दिखला देनेके कारण इन सातों अपभ्रंशोंके स्थान स्पष्ट हैं। इन सातके अतिरिक्त कुछ अन्य अपभ्रंशोंके नामोंका स्पष्टीकरण भी यहाँ किया जा सकता है। गुजरातमें शौरसेनी अपभ्रंशका ही पश्चिमी रूप था, जिससे आधुनिक गुजरातीका सम्बन्ध है। इसे कुछ विद्वानोंने **सौराष्ट्री** या **नागर अपभ्रंश** कहा है। पालि भाषा अपने किसी रूपमें (संभवतः वह रूप जो गुजरातके पास बोला जाता था) दूसरी सदी ई० पू० में लंकामें गयी थी और उसका प्राकृत-कालमें **सिंहली प्राकृत** या **एलू प्राकृत** (सिंहलीके आदि रूपको **एलू** कहते हैं) रूप रहा होगा। अपभ्रंश-कालमें उसी आधारपर वहाँ भी अपभ्रंशका एक रूप माना जा सकता है और उसे **सिंहली** या **एलू अपभ्रंश**की संज्ञा दी जा सकती है। कुछ लोग पैशाचीके स्थानपर केकयका

प्रयोग करते हैं। 'खस'को कुछने 'दरद' भी कहा है। कुछ लोग पैशाचीसे ही सिंधी, पंजाबी, लहँदा तीनोंको मानते हैं। अपभ्रंश साहित्यमें उसके शौरसेनी रूपका प्रयोग हुआ है। यही उस कालकी परिनिष्ठित भाषा थी। **अपभ्रंशकी प्रमुख विशेषताएँ**– (१) अपभ्रंशमें लगभग वे ही ध्वनियाँ थीं, जिनका प्रयोग प्राकृतमें होता था। ह्रस्व ए, ह्रस्व ओ थे, यद्यपि लिखनेमें उनके लिए किसी नये चिह्नका प्रयोग नहीं होता था। कभी ए, ओ और कभी इ, उ का इनके लिए प्रयोग कर दिया जाता था। 'ऋ'का लेखनमें प्रयोग तो था, किन्तु स्वर रूपमें ध्वनि नहीं थी। श, षके स्थानपर केवल 'स' ही प्रचलित था। 'श' ध्वनि केवल मागधी अपभ्रंशमें थी। वर्तमान भाषाओंके देखनेसे यह भी अनुमान लगता है कि विभिन्न अपभ्रंशोंमें 'अ'का उच्चारण विवृत, अर्द्धविवृत आदि विभिन्न रूपोंमें होता था। ळ केवल माहाराष्ट्रीमें था। (२) स्वरोंका अनुनासिक रूप वैदिकी, संस्कृत, पालि, प्राकृतमें था। अपभ्रंशमें वह मिलता है। ऋ को छोड़कर सभीके अनुनासिक रूपोंका प्रयोग अपभ्रंशमें है। (३) संगीतात्मक और बलात्मक स्वराघातकी दृष्टिसे अपभ्रंशकी वही स्थिति थी, जो पीछे पालि-प्राकृतके लिए कही जा चुकी है। अर्थात् कुछ-कुछ बलात्मक स्वराघातके होनेकी सम्भावना है। (४) अपभ्रंश एक उकार-बहुला भाषा थी। यों तो 'ललित विस्तर' तथा 'प्राकृत धम्मपद' आदि गाथा और प्राकृतके ग्रंथोंमें भी यह प्रवृत्ति मिलती है, किन्तु वहाँ यह प्रवृत्ति अपने बीज रूपमें है। अपभ्रंशमें यह बहुत अधिक है, जहाँसे यह ब्रजभाषा या अवधी आदिको मिली है। (जैसे एक्कु, कारणु, पियासु, अंगु, मूलु और जगु आदि) (५) ध्वनि-परिवर्तनकी दृष्टिसे जो प्रवृत्तियाँ (लोप, आगम, विपर्यय आदि) पालिमें शुरू होकर प्राकृतमें विकसित हुई थीं, उन्हींका यहाँ आकर और विकास हो गया। (६) शब्दके अन्तिम स्वरके ह्रस्व होनेकी प्रवृत्ति प्राकृतमें भी थी और अपभ्रंशमें जैसा कि ऊपर कहा गया है बढ़ गयी; किंतु, अपभ्रंशकी ध्वन्यात्मक विशेषताओंमें प्रमुख होनेके कारण यह उल्लेख्य है। अन्तका यह ह्रस्वीकरण या कभी-कभी लोप स्वराघातके कारण होता है। जिस अन्तिम स्वरपर स्वराघात होगा उसका लोप या ह्रस्व रूप नहीं होता, किन्तु जिसपर स्वराघात नहीं होता उसपर बल कम होता जाता है। इस प्रकार उसका रूप ह्रस्व हो जाता है, या और आगे बढ़कर समाप्त भी हो जाता है (सं० गर्भिणी, प्रा० गब्भिणी, अप० गब्भिणि; सं० कीटक, प्रा० कीडअ, अप० कीड। इन शब्दोंमें प्राकृतकी तुलनामें ह्रस्व या लोप दिखाया गया है। संस्कृतकी तुलनामें तो यह प्रवृत्ति अपभ्रंशमें और भी मिलती है जैसे हरीडइ (हरीतकी), संझ (संध्या), वरआत्त (वरयात्रा) आदि। (७) अपभ्रंशमें स्वराघात प्रायः आद्यक्षरपर था, इसीलिए आद्यक्षर तथा उसका स्वर यहाँ प्रायः सुरक्षित मिलता है। जैसे माणिक्य, माणिक्क; घोटक, घोडअ या घोडा आदि संस्कृतकी तुलनामें हैं। प्राकृतकी तुलनामें छाहा (सं० छाया)से छाआ, आमलअ (सं० आमलक) से आवँलअ आदि हैं। (८) मका वँ (प्रा० आमलअ, अप० आवँलअ, कमल, कवँल); वका व (वचन, वअण); ष्णका न्ह (कृष्ण, कान्ह), क्षका क्ख या च्छ (पक्षी––पक्खी, पच्छी) स्मका म्ह (अस्मै––अम्ह), यका ज (युगल––जुगल) ड, द, न, रके स्थानपर 'ल' (प्रदीप्त––पलित्त आदि रूपमें ध्वनि विकासकी बहुतसी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। (९) (विशेषतः परवर्ती अपभ्रंशमें) समीकरणके कारण उत्पन्न संयुक्ततामें एक व्यंजन बच जाता है, और पूर्ववर्ती स्वरमें क्षतिपूरक दीर्घीकरण हो गया है। (सं० तस्य, प्रा० तस्स, अप० तासु; कस्य, कस्स, कासु)। (१०)

पालि, प्राकृतमें विकास तो हुआ था किन्तु सब कुछ ले-देकर वे संस्कृतकी प्रवृत्तिसे अलग नहीं थीं। अपभ्रंश भाषा पूर्णतः अलग हो गयी और वह प्राचीनकी अपेक्षा आधुनिक भारतीय भाषाओंकी ओर अधिक झुकी है। (११) भाषामें धातु और नाम दोनों रूप कम हो गये। इस प्रकार भाषा अधिक सरल हो गयी। (१२) वैदिकी, संस्कृत, पालि तथा प्राकृत संयोगात्मक भाषाएँ थीं। प्राकृतमें वियोगात्मकता या अयोगात्मकताके लक्षण दिखाई पड़ने लगे थे, किन्तु अपभ्रंशमें आकर ये लक्षण प्रमुख हो गये, इतने प्रमुख कि संयोगात्मक और वियोगात्मक भाषाओंके सन्धिस्थलपर खड़ी अपभ्रंश भाषा वियोगात्मकताकी ओर ही अधिक झुकी है। यह बात आगेकी दोनों बातोंसे स्पष्ट हो जायगी। (१३) संज्ञा-सर्वनामसे कारकके रूपके लिए संयोगात्मक भाषाओंमें केवल विभक्तियाँ लगती हैं जो जुड़ी होती हैं, किन्तु वियोगात्मकमें अलगसे शब्द लगाने पड़ते हैं जो अलग रहते हैं। हिन्दीमें ने, को, में, से आदि ऐसे ही अलग शब्द हैं। प्राकृतमें इस तरहके दो-तीन शब्द मिलते हैं, किन्तु अपभ्रंशमें बहुतसे कारकोंके लिए अलग शब्द मिलते हैं। जैसे करणके लिए सहुँ, तण; संप्रदायके लिए केहि, रेसि; अपादान के लिए थिउ, होन्त; सम्बन्धके लिए केर, कर, का और अधिकरणके लिए महँ, मज्झ आदि। (१४) ऊपर नामरूप थे। कालरूपोंके बारेमें भी यही स्थिति है। संयोगात्मक भाषाओंमें तिङ प्रत्ययके योगसे काल और भाव-रचना होती है। वियोगात्मकमें सहायक क्रियाके सहारे कृदंती रूपोंसे ये बातें प्रकटकी जाती हैं। इस प्रकारकी वियोगात्मक प्रवृत्तियाँ प्राकृतमें अपनी झलक दिखाने लगी थीं, किन्तु अब ये बातें बहुत स्पष्ट हो गयीं; संयुक्त क्रियाका प्रयोग होने लगा। तिङन्त रूप कम रह गये। (१५) नपुंसक लिंग समाप्तप्राय हो गया। (१६) अकारांत पुंलिंग प्रातिपदिकोंकी प्रमुखता हो गयी। अन्य प्रकारके थोड़े-बहुत प्रातिपदिक थे भी तो उनपर इसीके नियम प्रायः लागू होते थे। इस प्रकार इस क्षेत्रसे व्याकरणिक लिंग समाप्त-सा हो गया। (१७) कारकोंके रूप बहुत कम हो गये। संस्कृतमें एक शब्दके लगभग २४ रूप होते थे, प्राकृतमें उनकी संख्या लगभग बारह रह गयी थी, अपभ्रंशमें लगभग छः रूप रह गये। दो वचनों और तीन कारकों (१–कर्ता, कर्म, सम्बोधन; २–करण, अधिकरण; ३– संप्रदान, अपादान, सम्बन्ध) के। (१८) स्वार्थिक प्रत्यय '–ड' का प्रयोग अधिक होने लगा। राजस्थानी आदिमें यही ड़, ड़ी, ड़िया आदि रूपोंमें मिलता है। (१९) वाक्यमें शब्दोंके स्थान निश्चित हो गये। (२०) अपभ्रंशके शब्द-भंडारकी प्रमुख विशेषताएँ ये हैं :—
(क) तद्भव शब्दोंका अनुपात अपभ्रंशमें सर्वाधिक है। (ख) दूसरा नम्बर देशज शब्दोंका है। क्रिया शब्दोंमें भी ये शब्द पर्याप्त हैं। ध्वनि और दृश्यके आधारपर बने नये शब्द भी अपभ्रंशमें काफी हैं। (ग) तत्सम शब्द अपभ्रंशके पूर्वार्द्धकालमें तो बहुत ही कम हैं, किन्तु उत्तरार्द्धमें उनकी संख्या काफी बढ़ गयी है। (घ) इस समयतक बाहरसे भारतका पर्याप्त संपर्क हो गया था, इसी कारण उत्तरकालीन अपभ्रंशमें कुछ विदेशी शब्द भी आ गये हैं, जैसे ठट्ठा (फ़ा० तख्त), ठक्कुर (तुर्की तेगिन), नीक, तुर्क, तहसील, नौबति, हुद्दादार (फ़ा० ओहदादार) आदि।

अवहट्ठ—अपभ्रंशका काल मोटे रूपसे १००० या ११०० ई०के लगभग समाप्त होता है और इसके बाद आधुनिक भाषाओंका आरम्भ होता है किन्तु आरम्भके लग-भग दो-तीन सौ वर्षोंकी भाषा अपभ्रंश और आधुनिक भाषाओंके बीचकी है। अर्थात् शुरूमें उसमें अपभ्रंशकी प्रवृत्तियाँ अधिक हैं, किन्तु धीरे-धीरे वे कम होती गयी हैं और आधुनिक भाषाओंकी प्रवृत्तियाँ बढ़ती गयी हैं। अंतमें १४वीं सदीके लगभग आधुनिक भाषाओंका निखरा हुआ रूप सामने आ गया है। यह बीचका काल संक्रान्ति-

काल है । 'संनेहय-रासक', 'प्राकृतपैंगलम्', 'उक्ति-व्यक्तिप्रकरण', 'वर्णरत्नाकर', 'कीर्तिलता' तथा 'ज्ञानेश्वरी' आदिकी भाषा इसी कालकी है। इस भाषाके लिए परवर्ती अपभ्रंश, पुरानी हिन्दी, देशी आदि कई नामोंका प्रयोग किया गया है, किन्तु कुछ लोगोंके अनुसार इसके लिए 'अवहट्ठ' नाम अधिक उपयुक्त है । वस्तुतः 'अवहट्ठ' शब्द संस्कृत शब्द 'अपभ्रष्ट' का विकसित, विकृत या या अपभ्रष्ट रूप है और विष्णुधर्मोत्तर पुराणकर्ताने जैसे 'अपभ्रंश' के लिए 'अपभ्रष्ट'का प्रयोग किया है, उसी प्रकार ज्योतिरीश्वर ठाकुर (वर्णरत्नाकर), विद्यापति (कीर्तिलता) तथा वंशीधर (प्राकृतपैंगलम्की टीका) आदिने भी अपभ्रंशके लिए ही 'अवहट्ठ' या उसके रूपोंका प्रयोग किया है । उसके किसी विशेष रूपके लिए इसका प्रयोग कदापि नहीं है, जैसा कि कुछ लोगोंने माना है । साथ ही हर दो भाषाके संधि-स्थलपर, जिनका आपसमें माँ-बेटीका सम्बन्ध होता है, संक्रांतिकालीन रूप होते हैं, उसके लिए किसी अलग नामकी आवश्यकता नहीं । सच पूछा जाय तो संक्रान्तिकालीन रूपके लिए नया नाम देना भ्रामक होता है । उससे उस भाषाके एक नयी भाषा समझे जानेके भ्रमकी संभावनी रहती है, जब कि यथार्थतः वह भाषा कोई नयी भाषा न होकर दोके संधिका संक्रांतिकालीन रूप मात्र होती है । यों सीमित रूपमें यदि इसे प्रसंगतः किसी नामसे पुकारना ही हो तो परवर्ती अपभ्रंश या पुरानी (हिन्दी, गुजराती, बँगला आदि) अधिक ठीक है, क्योंकि इसमें उपर्युक्त भ्रमकी गुंजाइश नहीं है ।

मध्यकालीन सिंहली लिपि––**सिंहली लिपि** (दे०)का एक रूप ।

मध्यग––जो बीचमें (गमन करे या) हो । जैसे दो ध्वनियोंके बीचके स्वरके लिए मध्यग स्वर, या दो ध्वनियोंके बीचके व्यंजन के लिए मध्यग व्यंजन ।

मध्य तालव्य (medio palatal)–– तालुके मध्य भागसे उच्चारित ध्वनि । यहाँ तालुका अर्थ कठोर तालु है ।

मध्य तुर्की––यूराल-अल्ताईकी तुर्की शाखाकी केन्द्रीय भाषाओंका एक वर्ग, जिसमें **चगताई, काशगर, सार्त, तराँची, उज़बेग** तथा **चारकन्द** भाषाएँ आती हैं ।

मध्य दंत्य––एक प्रकारकी **दंत्य** (दे०) ध्वनि ।

मध्यदेशीय अपभ्रंश––**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद ।

मध्य पदलोपी बहुव्रीहि समास––(दे०) **समास** ।

मध्य पहाड़ी––(दे०) **माध्यमिक पहाड़ी** ।

मध्यपूर्वी राजस्थानी–(दे०) **राजस्थानी** ।

मध्य-प्रत्यय––**मध्यसर्ग** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मध्यप्रदेशी लिपि––**ब्राह्मी लिपि** (दे०)की दक्षिणी शैलीसे विकसित एक लिपि । ब्राह्मीकी उत्तरी शैलीसे यह प्रभावित है । इसके क्षेत्र मध्य प्रदेश, बुंदेलखंड, हैदराबाद राज्यका उत्तरी भाग तथा मैसूरके कुछ अंश हैं । ५वीं सदीसे ९वीं सदीतक इसका प्रयोग मिलता है । इसके अक्षरोंके सिर संदूककी तरह चौखुंटे (कभी भरे और कभी खाली) मिलते हैं और अक्षरोंकी आकृति समकोणीय है ।

मध्यबलाघात (medial stress)–शब्दके (आरंभ और अंतके) बीचमें पढ़नेवाला बलाघात ।

मध्यम ध्वनि––वह ध्वनि जिसके उच्चारणमें मुँहकी मांसपेशियाँ न तो अधिक दृढ़ रहती हों और न अधिक शिथिल । अर्थात् **सशक्त ध्वनि** (दे०) और **अशक्त ध्वनि** (दे०)के बीचमें रहती हों । **मध्यम स्वर** भी हो सकते हैं जैसे ऑ और मध्यम व्यंजन भी हो सकते हैं, जैसे च्, श् आदि । **मध्यम ध्वनिको अर्द्ध सशक्त ध्वनि या अर्द्ध अशक्त ध्वनि** भी कहते हैं ।

मध्यम पदलोप––बीचके या मध्यवर्ती पद या शब्दका लोप ।

मध्यमपदलोपी तत्पुरुष समास—(दे०) **समास** ।

मध्यम पुरुष—एक पुरुषवाचक सर्वनाम । (दे०) **सर्वनाम** ।

मध्ययोगात्मक (infix agglutinative) —**योगात्मक भाषा** (दे०) का एक भेद ।

मध्यलोप—लोप (दे०)का एक भेद ।

मध्यलोपी स्वर (syncopic vowel)—(दे०) लोप

मध्यवर्ती—बीचका । जैसे 'मध्यवर्ती स्वर' या 'मध्यवर्ती व्यंजन' ।

मध्यवर्ती जे (central ze)—मध्यवर्ती अमेरिकाके जे (दे०) परिवारका मध्यवर्ती वर्ग । इस वर्गमें कयापो तथा अकुआ आदि हैं ।

मध्यवर्ती पहाड़ी—(दे०) **माध्यमिक पहाड़ी**।

मध्यवाच्य—(दे०) **वाच्य** ।

मध्य व्यंजन-लोप—लोप (दे०)का एक भेद ।

मध्य व्यंजनागम—**आगम** (दे०)का एक भेद ।

मध्यविन्यस्त प्रत्यय—**मध्यसर्ग** (दे०) का एक अन्य नाम ।

मध्यश्रुति (off glide)—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें श्रुति** उपशीर्षक ।

मध्य-सकियन (middle sakian)—**खोतानी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मध्यसर्ग (infix)—ऐसी ध्वनि या ऐसा ध्वनि-समूह जो संबंध-तत्त्वके रूपमें या अर्थमें विशेषता लानेके लिए किसी रूढ़ शब्द, धातु, मूल शब्द या प्रातिपदिकके बीचमें जोड़ा जाय । जैसे मुंडा भाषामें दल=मारना; दपल=परस्पर मारना । यहाँ **प** मध्यसर्ग है । इसे **मध्य-प्रत्यय, मध्य-विन्यस्त प्रत्यय** या **अंतर्भुक्त प्रत्यय** भी कहते हैं ।

मध्यस्थ ध्वनि (intermediate sound) प्रकृतिकी दृष्टिसे दो ध्वनियोंसे मिलती-जुलती ध्वनि जो दोनोंके बीचकी हो ।

मध्यस्वर (middle vowel)—ऐसा स्वर जिसके उच्चारणमें जीभका मध्य भाग ऊपर उठता है, या करणका काम करता है । (दे०) **ध्वनियोंके वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण** तथा **मानस्वर** उपशीर्षक ।

मध्य स्वरलोप (syncope)—लोप(दे०) का एक भेद ।

मध्य स्वरागम (anaptyxis)—**आगम** (दे०) का एक भेद ।

मध्याक्षर लोप—(दे०) **मध्य-अक्षर-लोप** ।

मध्याक्षरविस्तरलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक ।

मध्यागत स्वर (anaptyctic vowel)—(दे०) **स्वरभक्ति स्वर** ।

मध्यागम—**आगम** (दे०)का एक भेद ।

मन—एक भाषा-वर्ग । इसका प्रमुख स्थान दक्षिण-पश्चिमी चीन, उत्तरी बर्मा तथा हिंदचीनका कुछ भाग है । इसे कुछ लोग चीनी परिवारकी तथा कुछ लोग अज्ञात परिवारकी मानते हैं । इसमें माओ, मियाओ आदि भाषाएँ आती हैं । 'मन' शब्द चीनी भाषाका है, और इसका अर्थ है 'दक्षिणके असभ्य लोग' ।

मनज़े (manaze)—**टुपी-गवरनी** (दे०) परिवारकी, दक्षिणी अमेरिकामें प्रयुक्त एक भाषा ।

मन तुन (man tun)—'मंगलुन उत्तरी शान स्टेटमें प्रयुक्त **व** (दे०)का एक रूप ।

मन-तोंग-लोंग (man-tong-long)—उत्तरी शान स्टेटमें प्रयुक्त **पले** (दे०)का एक रूप । इसके बोलनेवालोंकी संख्या बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार १,७००थी।

मन-नवँग (man-nawng)—**इंथ**(दे०) का एक अन्य नाम ।

मनसिका (manasika)—**चिकिटो** (दे०) भाषा-परिवारकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

मनितेनेरी (maniteneri)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा ।

मनिपुरी (manipuri)—**मैतेइ** (दे०) का एक नाम ।

मनु मनव (manu manaw)—**करेन्नी** (दे०)का एक रूप ।

काल है । 'संनेहय-रासक', 'प्राकृतपैंगलम्', 'उक्ति-व्यक्तिप्रकरण', 'वर्णरत्नाकर', 'कीर्तिलता' तथा 'ज्ञानेश्वरी' आदिकी भाषा इसी कालकी है। इस भाषाके लिए परवर्ती अपभ्रंश, पुरानी हिन्दी, देशी आदि कई नामोंका प्रयोग किया गया है, किन्तु कुछ लोगोंके अनुसार इसके लिए 'अवहट्ठ' नाम अधिक उपयुक्त है । वस्तुतः 'अवहट्ठ' शब्द संस्कृत शब्द 'अपभ्रष्ट' का विकसित, विकृत या या अपभ्रष्ट रूप है और विष्णुधर्मोत्तर पुराणकर्ताने जैसे 'अपभ्रंश' के लिए 'अपभ्रष्ट'का प्रयोग किया है, उसी प्रकार ज्योतिरीश्वर ठाकुर (वर्णरत्नाकर), विद्यापति (कीर्तिलता) तथा वंशीधर (प्राकृतपैंगलम्की टीका) आदिने भी अपभ्रंशके लिए ही 'अवहट्ठ' या उसके रूपोंका प्रयोग किया है । उसके किसी विशेष रूपके लिए इसका प्रयोग कदापि नहीं है, जैसा कि कुछ लोगोंने माना है । साथ ही हर दो भाषाके संधि-स्थलपर, जिनका आपसमें माँ-बेटीका सम्बन्ध होता है, संक्रांतिकालीन रूप होते हैं, उसके लिए किसी अलग नामकी आवश्यकता नहीं । सच पूछा जाय तो संक्रान्तिकालीन रूपके लिए नया नाम देना भ्रामक होता है । उससे उस भाषाके एक नयी भाषा समझे जानेके भ्रमकी संभावनी रहती है, जब कि यथार्थतः वह भाषा कोई नयी भाषा न होकर दोके संधिका संक्रांतिकालीन रूप मात्र होती है । यों सीमित रूपमें यदि इसे प्रसंगतः किसी नामसे पुकारना ही हो तो परवर्ती अपभ्रंश या पुरानी (हिन्दी, गुजराती, बँगला आदि) अधिक ठीक है, क्योंकि इसमें उपर्युक्त भ्रमकी गुंजाइश नहीं है ।

मध्यकालीन सिंहली लिपि––**सिंहली लिपि** (दे०)का एक रूप ।

मध्यग––जो बीचमें (गमन करे या) हो । जैसे दो ध्वनियोंके बीचके स्वरके लिए मध्यग स्वर, या दो ध्वनियोंके बीचके व्यंजन के लिए मध्यग व्यंजन ।

मध्य तालव्य (medio palatal)––तालुके मध्य भागसे उच्चारित ध्वनि । यहाँ तालुका अर्थ कठोर तालु है ।

मध्य तुर्की––यूराल-अल्ताईकी तुर्की शाखाकी केन्द्रीय भाषाओंका एक वर्ग, जिसमें **चगताई, काशगर, सार्त, तराँची, उजबेग** तथा **चारकन्द** भाषाएँ आती हैं ।

मध्य दंत्य––एक प्रकारकी **दंत्य** (दे०) ध्वनि ।

मध्यदेशीय अपभ्रंश––**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद ।

मध्य पदलोपी बहुव्रीहि समास––(दे०) **समास** ।

मध्य पहाड़ी––(दे०) **माध्यमिक पहाड़ी** ।

मध्यपूर्वी राजस्थानी–(दे०) **राजस्थानी** ।

मध्य-प्रत्यय––**मध्यसर्ग** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मध्यप्रदेशी लिपि––**ब्राह्मी लिपि** (दे०)की दक्षिणी शैलीसे विकसित एक लिपि । ब्राह्मीकी उत्तरी शैलीसे यह प्रभावित है । इसके क्षेत्र मध्य प्रदेश, बुंदेलखंड, हैदराबाद राज्यका उत्तरी भाग तथा मैसूरके कुछ अंश हैं । ५वीं सदीसे ९वीं सदीतक इसका प्रयोग मिलता है । इसके अक्षरोंके सिर संदूककी तरह चौखुंटे (कभी भरे और कभी खाली) मिलते हैं और अक्षरोंकी आकृति समकोणीय है ।

मध्यबलाघात (medial stress)–शब्दके (आरंभ और अंतके) बीचमें पड़नेवाला बलाघात ।

मध्यम ध्वनि––वह ध्वनि जिसके उच्चारणमें मुँहकी मांसपेशियाँ न तो अधिक दृढ़ रहती हों और न अधिक शिथिल । अर्थात् **सशक्त ध्वनि** (दे०) और **अशक्त ध्वनि** (दे०)के बीचमें रहती हों । **मध्यम स्वर** भी हो सकते हैं जैसे ऑ और मध्यम व्यंजन भी हो सकते हैं, जैसे च्, श् आदि । **मध्यम ध्वनिको अर्द्ध सशक्त ध्वनि** या **अर्द्ध अशक्त ध्वनि** भी कहते हैं ।

मध्यम पदलोप––बीचके या मध्यवर्ती पद या शब्दका लोप ।

मध्यमपदलोपी तत्पुरुष समास––(दे०) समास।

मध्यम पुरुष––एक पुरुषवाचक सर्वनाम। (दे०) **सर्वनाम**।

मध्ययोगात्मक (infix agglutinative) ––**योगात्मक भाषा** (दे०) का एक भेद।

मध्यलोप––लोप (दे०)का एक भेद।

मध्यलोपी स्वर (syncopic vowel)–– (दे०) लोप

मध्यवर्ती––बीचका। जैसे 'मध्यवर्ती स्वर' या 'मध्यवर्ती व्यंजन'।

मध्यवर्ती जे (central ze)––मध्यवर्ती अमेरिकाके जे (दे०) परिवारका मध्यवर्ती वर्ग। इस वर्गमें कयापो तथा अकुआ आदि हैं।

मध्यवर्ती पहाड़ी––(दे०)**माध्यमिक पहाड़ी**-

मध्यवाच्य––(दे०) **वाच्य**।

मध्य व्यंजन-लोप––लोप (दे०)का एक भेद।

मध्य व्यंजनागम––आगम (दे०)का एक भेद।

मध्यविन्यस्त प्रत्यय––मध्यसर्ग (दे०) का एक अन्य नाम।

मध्यश्रुति (off glide)––(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**में **श्रुति** उपशीर्षक।

मध्य-सकियन (middle sakian)–– **खोतानी** (दे०)का एक अन्य नाम।

मध्यसर्ग (infix)––ऐसी ध्वनि या ऐसा ध्वनि-समूह जो संबंध-तत्त्वके रूपमें या अर्थमें विशेषता लानेके लिए किसी रूढ़ शब्द, धातु, मूल शब्द या प्रातिपदिकके बीचमें जोड़ा जाय। जैसे मुंडा भाषामें दल=मारना; दपल=परस्पर मारना। यहाँ **प** मध्यसर्ग है। इसे **मध्य-प्रत्यय, मध्य-विन्यस्त प्रत्यय** या **अंतर्भुक्त प्रत्यय** भी कहते हैं।

मध्यस्थ ध्वनि (intermediate sound) प्रकृतिकी दृष्टिसे दो ध्वनियोंसे मिलती-जुलती ध्वनि जो दोनोंके बीचकी हो।

मध्यस्वर (middle vowel)––ऐसा स्वर जिसके उच्चारणमें जीभका मध्य भाग ऊपर उठता है, या करणका काम करता है। (दे०) **ध्वनियोंके वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण** तथा **मानस्वर** उपशीर्षक।

मध्य स्वरलोप (syncope)––लोप(दे०) का एक भेद।

मध्य स्वरागम (anaptyxis)––**आगम** (दे०) का एक भेद।

मध्याक्षर लोप––(दे०) **मध्य-अक्षर-लोप**।

मध्याक्षरविस्तरलिपि––बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

मध्यागत स्वर (anaptyctic vowel)–– (दे०) **स्वरभक्ति स्वर**।

मध्यागम––आगम (दे०)का एक भेद।

मन––एक भाषा-वर्ग। इसका प्रमुख स्थान दक्षिण-पश्चिमी चीन, उत्तरी बर्मा तथा हिंदचीनका कुछ भाग है। इसे कुछ लोग चीनी परिवारकी तथा कुछ लोग अज्ञात परिवारकी मानते हैं। इसमें माओ, मियाओ आदि भाषाएँ आती हैं। 'मन' शब्द चीनी भाषाका है, और इसका अर्थ है 'दक्षिणके असभ्य लोग'।

मनज़े (manaze)––**टुपी-गवरनी** (दे०) परिवारकी, दक्षिणी अमेरिकामें प्रयुक्त एक भाषा।

मन तुन (man tun)––'मंगलुन उत्तरी शान स्टेटमें प्रयुक्त **व** (दे०)का एक रूप।

मन-तोंग-लोंग (man-tong-long)– उत्तरी शान स्टेटमें प्रयुक्त **पले** (दे०)का एक रूप। इसके बोलनेवालोंकी संख्या बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार १,७०० थी।

मन-नवँग (man-nawng)––**इंथ**(दे०) का एक अन्य नाम।

मनसिका (manasika)–**चिकिटो** (दे०) भाषा-परिवारकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

मनितेनेरी (maniteneri)–दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा।

मनिपुरी (manipuri)–मैतेइ (दे०) का एक नाम।

मनु मनव (manu manaw)–**करेन्नी** (दे०)का एक रूप।

मनुष्य लिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक ।

मनो (mano)–(१) **करेन** (दे०)की, करेन्नी (बर्मा)में व्यवहृत एक बोली। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,४६५ थी । (२)बर्माके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार, 'करेन'की **ब्वे** (दे०)बोली-का एक रूप ।

मनोभावाभिव्यंजकतावाद—भाषाकी उत्पत्तिविषयक एक सिद्धांत। इसे **मनोभावाभिव्यक्ति-सिद्धान्त** (दे०) भी कहते हैं ।

मनोभावाभिव्यक्तिवाद—भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धान्त। इसे **मनोभावाभिव्यक्ति-सिद्धान्त** (दे०) भी कहते हैं ।

मनोभावाभिव्यक्ति-सिद्धान्त (interjectional theory)—भाषा-उत्पत्तिका एक सिद्धान्त। (दे०) **भाषाकी उत्पत्ति**।

मनोराग-मूलकतावाद—भाषाकी उत्पत्तिके संबंधमें एक सिद्धान्त । इसे **मनोभावाभिव्यक्ति-सिद्धान्त** (दे०) भी कहते हैं ।

मनोविकारबोधक अव्यय (interjection)–जो अव्यय आकस्मिक विस्मय, शोक, हर्ष आदि मनोविकारों अथवा भावोंको व्यक्त करते हैं, उन्हें मनोविकारबोधक अथवा **विस्मयादिबोधक** अव्यय कहते हैं । मनोविकारबोधक अव्यय जिन-जिन भावों आदिको व्यक्त करते हैं, उनके आधारपर इनके कई भेद किये जा सकते हैं, जिनमें प्रमुख निम्नांकित हैं :—(क) **आश्चर्यबोधक** अथवा **विस्मयबोधक**—हैं, अरे, सच । (ख) **हर्षबोधक** या **प्रसन्नताबोधक**–अहा, वाह, खूब, धन्य-धन्य ,जय । (ग) **शोकबोधक** या **दुःखबोधक**–आह, हा, हाय, बाप रे बाप । (घ) **घृणाबोधक** या **तिरस्कारबोधक**—छिः, धिक्, राम राम । (ङ) **स्वीकृतिबोधक** या **अनुमोदनबोधक**–ठीक, हाँ-हाँ, अच्छा, जी हाँ । (च) **विनयबोधक**–जी हाँ, जी, हाँजी । (छ)**संबोधनबोधक**–हे, अरे, अजी, क्यों । (दे०) 'अव्यय'

मनोवैज्ञानिक बलाघात—**बलाघात** (दे०)-का एक भेद ।

मन्गुए (mangue)—मध्य अमेरिकाके **ओटोमि** (दे०) परिवारकी एक भाषा । इसका एक अन्य नाम **चोलुटेक** है।

मन्पुन (manpun)—**पलौंग** (दे०) का एक रूप ।

मन्यक (manyak)—**तिब्बती** (दे०)-का एक पूर्वी रूप ।

मन्लोई (manloi)—**पलौंग** (दे०) का एक रूप ।

मपरिना (maparina)—**पनो** (दे०)परिवारकी एक विलुप्त दक्षिणी भाषा ।

मपुचे (mapuche)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरौकन** (दे०) परिवारकी एक भाषा ।

मफ़ोर—**पपुआ परिवार** (दे०)की न्यूगिनीमें प्रयुक्त एक प्रमुख भाषा ।

मबया-गुअयकुरु (mabaya-guaykuru) —**गुअयकुरु** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

मबुबा (mabuba)—**सूडान वर्ग** (दे०)-की मबुबा नामक नीग्रो जातियोंमें प्रयुक्त एक भाषा ।

मबेनरो (mabenaro)—दक्षिणी अमेरिका के **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा ।

मम (mam)—(१) मध्य अमेरिकाके**पोकोनची-किचे-मम** (दे०) उपवर्गकी एक प्रमुख भाषा। इसकी बोलियाँ **मम, इक्सिल, अगुअकाटेक** तथा **अचिस** आदिहैं। इनमें अंतिमके पारिवारिक सम्बन्धके विषयमें विद्वानोंमें मतभेद है । (२) मम भाषाकी एक प्रमुख बोली ।

मम्तादी (mamtadi)—१८९१ की बंबई जनगणनाके अनुसार **गुजराती** (दे०)का खानदेशमें प्रयुक्त एक रूप। अब इसका कुछ पता नहीं है।

मय (maya language)–(१) मध्य अमेरिकाके **मय परिवार** (दे०) की एक प्रमुख भाषा । इसकी बोलियाँ, **मय, लकन्डोन, इट्जा** तथा **मोपन** हैं । (२) मय भाषाकी प्रमुख बोली ।

मयन (mayan)—**कहुअपना** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसके अन्य नाम **मक्सूरूना** (maxu-runa) तथा **पेलाडोस**(pelados) हैं।

मय परिवार (maya)—**केन्द्रीय अमरीकी वर्ग** (दे०) वर्गका एक प्रमुख भाषा-परिवार। इस परिवारको दो वर्गोंमें बाँटा गया है: (१) **मय वर्ग** (दे०) तथा (२) **हुअस्टेक वर्ग** (दे०)। इन दोनों वर्गोंमें लगभग २७ भाषाएँ हैं। कुछ लोग इस परिवारको मय, हुअस्टेक, चनाबल, केक्चिस आदि ६ वर्गोंमें भी बाँटते हैं। इस भाषा-परिवारका क्षेत्र युकटन प्रायद्वीप, उत्तरी ग्वाटेमाला तथा ब्रिटिश होंडुरास है। इसके बोलनेवाले मय लोग अमेरिकी इंडियनमें सबसे अधिक सभ्य थे। इनकी अपनी लिपि भी थी। २०० ई०से लगभग १२०० ई० तक इनका साम्राज्य भी था। इस सदीके पूर्व तक इनकी कुछ जातियाँ स्वतंत्र शासक रही हैं।

मय लिपि—मय भाषाओंके लिए प्रयुक्त एक लिपि। इसमें चित्रात्मक तथा रेखात्मक दोनों ही प्रकारके चिह्न या अक्षर हैं। मूलतः यह एक चित्रलिपि थी। **अज़टेक लिपि** इसीसे निकली है।

मय वर्ग(maya group)—मध्य अमेरिकाके **मय परिवार**–(दे०)का एक प्रमुख वर्ग। इस वर्गके दो उपवर्ग **टज़ेन्टल–मया** (दे०),तथा **पोकोन्ची-किचे-मम** (दे०)हैं।

मयांग (mayang)–**असमी** (दे०)की, मणिपुरमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २३,५००के लगभग थी।

मयि (mayi)–**रेंगमा** (दे०)की, नागा पहाड़ियोंमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,७५० थी।

मयूरव्यंसकादि तत्पुरुष समास—(दे०) **समास**।

मयो (mayo)—**किन्नलोआ** (दे०) भाषाकी एक उपभाषा।

मयोरुना (mayoruna)–**पनो** (दे०)परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

मर (mara)—**लखेर** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

मरह (maraha)—एक **बोद्रो** (दे०) भाषा। इसका अब कुछ पता नहीं है।

मराठी—मराठी महाराष्ट्रकी भाषा है। यह लगभग एक लाख वर्ग मीलमें उत्तरमें सतपुड़ा पहाड़ियोंसे लेकर दक्षिणमें कृष्णा नदीतक तथा पूर्वमें नागपुरसे लेकर पश्चिममें गोवातक बोली जाती है। 'मराठी' नाम 'महाराष्ट्री' या 'माहाराष्ट्री'से संबद्ध है। डॉ० गुणे, जूलब्लाख आदि अनेक विद्वान् मराठीका सम्बन्ध महाराष्ट्री प्राकृत और महाराष्ट्री अपभ्रंशसे मानते हैं। किंतु कुछ विद्वानोंका यह भी कहना है कि महाराष्ट्री प्राकृत केवल महाराष्ट्र या मराठी क्षेत्रकी प्राकृत न होकर पूरे राष्ट्र (महाराष्ट्र)की भाषा या राष्ट्रभाषा थी। इसी रूपमें डॉ० घोष आदिने उसे शौरसेनीके बादकी माना है। कुछ भी हो, इसमें संदेह नहीं कि 'मराठी' नाम 'महाराष्ट्री'का ही विकसित रूप है। फ्रंक फुर्तरकने मराठी भाषाको पालिसे निकली माना है, यद्यपि इस मतको कभी मान्यता नहीं मिली।

मराठी भाषाके प्राचीनतम रूप ४८८ ई०के मंगलवेढ़े ग्रामके ताम्रलेखमें मिलते हैं। ७३६ ई०के चिकुर्डे ताम्रलेखमें भी इसके कुछ रूप हैं। मराठीका प्राचीनतम वाक्य ९८३ ई०के गोमतेश्वरके शिलालेखमें मिला है। इसका आशय यह है कि १००० ई०के पूर्व ही यह भाषा अंकुरित हो चुकी थी। क्षेत्रीय बोली या भाषा रूपमें इसका प्राचीनतम उल्लेख ८वीं सदीके ग्रंथ कुवलयमालामें आता है—'दिणल्ले गहिल्ले उल्लविरे तत्थ मरहट्ठे'।

मराठी भाषाके रूपों एवं वाक्योंकी परंपरा अत्यंत प्राचीन होनेपर भी मराठी साहित्यका प्रारंभ १२वीं सदीके पूर्व नहीं

माना जा सकता । मराठीके आदि कवि मुकुन्दराज (११२८-११९८) हैं, जिनका प्रधान ग्रंथ 'विवेकसिन्धु' है । मराठी साहित्यको प्रमुखतः महानुभाव-काल, ज्ञानेश्वर-नामदेव-काल, एकनाथ-काल, तुकाराम-रामदास-काल, मोरो पंत-काल, प्रभाकरराम जोशी-काल तथा आधुनिक काल; कुल इन सात कालोंमें बाँटा गया है। इन कालोंके नामोंसे ही मराठीके प्रमुख कवियोंके नामोंका पता चल जाता है । संत ज्ञानेश्वरकी 'ज्ञानेश्वरी' मराठीके प्राचीन साहित्यका सबसे अधिक प्रसिद्ध ग्रंथ है । मराठीका प्राचीन और आधुनिक दोनों ही साहित्य पर्याप्त सम्पन्न हैं। हिन्दी और मराठीने एक दूसरेसे बहुत कुछ लिया है । मराठीमें संस्कृतके तत्सम शब्दोंकी संख्या पर्याप्त है । साथ ही इसपर द्रविड़ परिवार (विशेषतः कन्नड़)की भी भौगोलिक स्थितिके कारण प्रभाव पड़ा है । मराठीकी ध्वनिकी दृष्टिसे सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें कुछ चवर्गीय ध्वनियाँ दो प्रकारकी हैं । उदाहरणार्थ 'च' एक तो सामान्य है और एक 'त्स' जैसा । मराठीका बलात्मक स्वराघात भी उसकी अपनी विशेषता है । इस रूपमें अन्य किसी भी आधुनिक भारतीय आर्य भाषामें यह नहीं है।

परिनिष्ठित मराठीको **'देशी'** भी कहते हैं। ग्रियर्सनने मराठीकी लगभग ३९ बोलियोंका उल्लेख किया है । कहना न होगा कि तथ्यतः इनमें सभी बोलियाँ न होकर बहुतसी उपबोलियाँ तथा स्थानीय या जातीय रूप भी हैं । मराठीकी सबसे प्रसिद्ध बोली **'कोंकण'** या **'कोंकणी'** है, जिसे अब डॉ० कत्रे आदि विद्वान् बोली न मानकर भाषा मानते हैं । इसकी बोलियाँ या उपबोलियाँ पर भी, कुंडाली, दालदी तथा चितपावनी आदि हैं । कोंकणीके अतिरिक्त इसकी एक बोली कोंकन या परिनिष्ठित कोंकन है जिसकी उपबोलियाँ परभी, कोळी, किरिस्ताँव कर्हाडी कुणबी, अगरी, धंगरी, भांडारी, ठाकरी, संगमेश्वरी, बाँकोटी, घाटी, माओली, काथोडी, वारली, वाडवल, फुडगी तथा सामवेदी आदि हैं । 'कोंकन' या परिनिष्ठित कोंकन व्याकरणिक दृष्टिसे परिनिष्ठित मराठी तथा 'कोंकणी'के बीचकी बोली है। बरार, मध्य प्रदेश तथा हैदराबाद आदिमें मराठीकी कई बोलियाँ या उपबोलियाँ बोली जाती हैं, जिनमें वर्हाडी, नागपुरी, धंगरी, झार्पी, गोवारी, कोष्टी, कुम्हारी, कुनबाऊ, माहारी, मरहवी, नतकानी, नतिया आदि प्रमुख हैं । मराठीकी कुछ मिश्रित बोलियाँ हलवी, भुंजिआ, नाहरी तथा कमारी भी कही गयी हैं। इनमें हलबी (दे०) वस्तुतः हिन्दीकी उपबोली है ।

मराठी भाषाके लिए देवनागरी लिपिका प्रयोग होता है। पत्र-व्यवहारमें कभी-कभी 'मोड़ी' भी प्रयुक्त होती है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार मराठी बोलनेवालोंकी संख्या १,८०,११,९४८ थी ।

मराम (maram)--**चीनी परिवार** (दे०)-की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके नागा वर्गकी, मणिपुरमें प्रयुक्त एक 'नागा-कुकी' भाषा। १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३,५२२ थी ।

मरारी--**बघेली** (दे०) बोलीकी माँडला जिलेमें प्रयुक्त एक उपबोली। इसके बोलनेवाले विशेषतः 'मरार' जातिके लोग हैं, जिनके आधारपर इसका यह नाम पड़ा है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ५२,००० थी।

मरिंग (maring)–**चीनी परिवार** (दे०)-की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके नागा वर्गकी, मणिपुर (असम)में प्रयुक्त एक नागा-कुकी भाषा । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,३५५ थी।

मरिआ (maria)--**हलबी** (दे०)का एक अन्य रूप । इसे मड़िया भी कहते हैं ।

मरिप (marip)—**कचिन** (दे०)की एक जातीय बोली।

मरिपोसन (mariposan)—**योकुट्स** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

मरीकोप (marikopa)—**केन्द्रीय यूम** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

मरीझी—(marijhi) १८९१की पंजाव जनगणनाके अनुसार एक **बंजारा** (दे०) भाषा। अव इसका कुछ पता नहीं है।

मरु—(maru) उत्तरी बर्माके पहाड़ी ज़िलों तथा उत्तरी शान स्टेटमें प्रयुक्त एक मिश्रित भाषा। वर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३५,५३१ थी।

मरोपा (maropa)-दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा।

मर्तबानी—**मोन** (दे०)का एक रूप। इसका क्षेत्र वर्मामें मर्तवान है।

मर्मर ध्वनि (murmur sound)—एक विशेप प्रकारकी ध्वनि। इसके उच्चारणकी स्थिति आदिके लिए (दे०) **शारीरिक ध्वनि-विज्ञानमें स्वर-यंत्र, स्वरयंत्रमुख और स्वर-तंत्र** उपशीर्षक, तथा **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक। (दे०) **मर्मर स्वर**।

मर्मर स्वर (murmur vowel)—(१) **मर्मर ध्वनि** (दे०)। (२) **जपित स्वर** (दे०)को भी मर्मर स्वर कहते हैं। (३) **उदासीन स्वर** (दे०)के लिए भी कभी-कभी मर्मर स्वरका प्रयोग होता है। (४) कुछ लोगोंके अनुसार मर्मर स्वर **घोष** (दे०) और **जपित** (दे०)के बीचमें उच्चरित स्वर हैं। (दे०) **शारीरिक ध्वनि-विज्ञानमें स्वर-यंत्र**...उपशीर्षक।

मर्वत (marwat)—दक्षिणी-पश्चिमी **पश्तो** का, बन्नूमें प्रयुक्त एक रूप।

महेंटी—वालाघाटमें **मराठी** (दे०)का एक स्थानीय नाम।

मलगसी—**होवा** (दे०)का एक अन्य नाम।

मलगासी (malagasy)—मैडागास्करमें लगभग ३० लाख मलगासी लोगों द्वारा प्रयुक्त एक भाषा। यह **इंडोनेशियन** (दे०) परिवारकी है।

मलबर (malabar)—**मलयालम** (दे०) तथा **तमिल** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम।

मलय—**आस्ट्रिक परिवार** (दे०)की एक भाषा। इसका क्षेत्र मलय प्रायद्वीप सुमात्रा, बोर्नियो, जावा, तथा आसपासके द्वीप हैं। बोलनेवालोंकी संख्या ३०,००,०००के लगभग है। इसे **इंडोनेशियन परिवार** (दे०)में भी रखा गया है। इंडोनेशियन परिवार आस्ट्रिकके अंतर्गत आता है। (दे०) **प्रशान्त-महासागरी भाषा-खंड**। 'मलय'का प्रयोग इंडोनेशियनके लिए भी होता है।

मलय पॉलिनेशियन—**आस्ट्रिक परिवार** (दे०) की एक शाखा, जिसमें **इंडोनेशियन, मलय या मलायन, माइक्रोनीशियन, मेलेनेशियन पापुआ, आस्ट्रेलियन** तथा **पालिनीशियन** आदि वर्ग हैं, जिनको अलग-अलग भी प्रायः परिवार कहा जाता है। मलय पॉलिनेशियनको आस्ट्रोनीशियन भी कहते हैं। इसे भी प्रायः एक परिवार कहते हैं।

मलयाड़म—**मलयालम** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

मलयाय्म (malayayma)—**मलयालम** (दे०)का एक अन्य नाम।

मलयालम—**द्रविड़ परिवार** (दे०)की प्रमुख चार भाषाओंमेंसे एक। 'मलयालम' वस्तुतः प्राचीन तमिल भाषाकी एक शाखा है जो ९वीं सदीके लगभग इससे अलग हुई। इसका प्रमुख क्षेत्र आधुनिक केरल तथा लक्ष द्वीप है। आसपास मद्रास तथा मैसूरमें भी इसका कुछ क्षेत्र पड़ता है।

'मलयालम' नाममें दो शब्द हैं। मल (=पर्वत)+आलम(='वाला' या 'राज्य')। इस प्रकार 'मलयालम'का अर्थ है 'पर्वतवाला देश'। मूलतः यह प्रदेशका नाम है, बादमें भाषाके लिए इसका प्रयोग हुआ है। मलयालम भाषाके लिए **तमिल, मलाबार** या

'मालावार' नामोंका भी प्रयोग होता रहा है । 'मलाबार'का आधार भी 'मल' (=पर्वत) ही है।

मलयाली विद्वान् मलयालम् भाषाका प्रारंभ चौथी सदीसे मानते हैं। मलयालमके क्षेत्रमें पहले साहित्य-रचना तमिलमें हुआ करती थी । मलयालममें साहित्य-रचना लगभग १३वीं सदीसे प्रारंभ होती है। आरंभिक ग्रंथोंमें तमिल अंश भी है। इसके कवियोंमें रामप्पणिकर, चेरुश्शेरि नपूनिरो, कोट्टारक्कर तंपुरान आदि उल्लेख्य हैं । १७वीं सदीमें ब्राह्मणोंके विशेष प्रभावके कारण मलयालम भाषा संस्कृत शब्दोंसे लद गयी । मणिप्रवाल शैली (संस्कृत शब्दोंसे युक्त मलयालम) में भी साहित्य-रचना हुई है ।

मलयालमके लिखनेमें प्रमुखतः वट्टेलुत्तु लिपिका प्रयोग होता रहा है । कभी-कभी ग्रंथलिपि भी प्रयोगमें आती रही है । १४वीं सदीतक प्रमुखतः ग्रंथलिपि तथा कुछ वट्टेलुत्तु लिपिके आधारपर मलयालमकी अपनी लिपि विकसित हो चुकी थी । इसे 'कोलेलुत्तु' कहते हैं । मलयालमकी प्रमुख बोली केवल एक है, जिसका नाम 'येरव' है । मलयाली बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ५४,२५,९७९ थी।

मलयालम लिपि--**मलयालम** (दे०) भाषाकी लिपि । इसका विकास प्रमुखतः **ग्रंथलिपि** (दे०)से हुआ है । कुछ अक्षर **वट्टेलुत्तुसे** भी लिये गये माने जाते हैं। प्राचीन मलयालम अभिलेख (९वींसे १३वीं सदीतक) वट्टेलुत्तु(दे०) लिपिमें मिलते हैं :--

അ ആ ഇ ഈ
ഉ ഊ ഋ എ ഏ
ഐ ഒ ഓ ഔ അം
അഃ ക ഖ ഗ ഘ
ങ ച ഛ ജ ഝ
ഞ ട ഠ ഡ ഢ
ണ ത ഥ ദ ധ
ന പ ഫ ബ ഭ
മ യ ര ല വ
ശ ഷ സ ഹ ള
ഴ റ ററ ന

[ये मलयालम वर्णमालाके अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ऍ, ए, ऐ, ऑ, ओ, औ, अं, अः, क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म, य, र, ल, व, श, ष, स, ह, ळ, ऴ, ऱ, ट़, ऩ, हैं।]

मलसर (malasar)--एक जंगली जातिमें प्रयुक्त एक **तमिल** (दे०) बोली ।

मलानी (malani)--**कनाशी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मलायन परिवार--**इंडोनेशियन परिवार**(दे०) का एक अन्य नाम ।

मलार (malar)--छोटा नागपुरमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,३०९ थी ।

मलाली (malali)--दक्षिणी अमेरिकाके **जे** (दे०) परिवारके पूर्वी वर्गकी एक भाषा। यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है ।

मलेकुदी (malekudi)--**तुळू** (दे०)का एक अन्य नाम । यह नाम एक द्रविड़ जातिके आधारपर पड़ा है ।

मलेनेशियन परिवार--**प्रशांत महासागरीय भाषा-खंड** (दे०)का एक परिवार । यह परिवार फिज़ी आदि छोटे-छोटे द्वीपोंमें फैला है ।

इसमें वचनके सम्बन्धमें विचित्रता यह है कि एकवचन, द्विवचन, त्रिवचन और बहुवचन पाया जाता है। अलग-अलग द्वीपोंमें अलग-अलग भाषाएँ हैं। **ल्वायल्ती** भाषामें मनुष्य और बीसके लिए एक शब्द है। शायद यह इसलिए कि हाथ-पैर मिलाकर मनुष्यके बीस अँगुलियाँ होती हैं। इन भाषाओंमें किसीमें 'चार' पर गिनती आधारित है तो किसीमें दसपर और किसीमें बीसपर। विकासमें यह परिवार इण्डोनेशियनसे आगे है। इस परिवारमें सम्बन्धवाचक सर्वनाम भी प्रत्यय लगाकर बनता है। यहाँ भी एक ही शब्द आवश्यकतानुसार संज्ञा, क्रिया, विशेषण आदि हो जाता है (फिजीमें 'रेकी'का अर्थ मनोरंजन और मनोरंजन करना दोनों ही होता है)। ज़ोर देनेके लिए शब्द दोहरा दिये जाते हैं। (फिज़ीमें ही 'तला' = भेजना, 'तलातला' = बार-बार भेजना या खबर) इसमें प्रधानतः उपसर्ग और प्रत्यय लगते हैं।

विभाजन——

मलेनेशियन
- —फिजियन
- —केलीडोनी
- —ल्वायल्ती
- —हेब्रिडी
- —सीलोमोनी आदि।

ये सभी भाषाएँ इन्हीं नामोंके द्वीपोंमें बोली जाती हैं। **फिजियन**के अन्तर्गत बहुतसी बोलियाँ हैं, जो वाक्य-रचनाकी दृष्टिसे इण्डोनेशियन परिवारसे कुछ मिलती-जुलती हैं। वस्तुतः मलेनेशियन एक परिवार न होकर, आस्ट्रिक परिवारकी मलय पॉलिनेशियन शाखाकी कुछ भाषाओंका एक वर्ग है।

मलेर (maler)——**मल्ता** (दे०)का एक नाम।

मलेसिट (malesit)——**पूर्वीय अलगोन्किन** (दे०)वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

मल्टो——**माल्टो** (दे०)का एक अन्य नाम।

मल्तो——**माल्टो** (दे०)का एक अन्य उच्चारण।

मल्वी——१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार '**गुजराती** (दे०)का एक रूप।

मल्हर (malhar)——**कुरुख** (दे०) का छोटा नागपुरमें प्रयुक्त एक रूप।

मल्हेस्ती (malhesti)——**कनौरी** (दे०)का एक स्थानीय नाम।

मवंकेन (mawken)——**सलोन** (दे०)का एक अन्य नाम।

मव-तेइत (maw-teit)——**कदू** (दे०)की बर्मामें प्रयुक्त एक बोली।

मशाकाली (mashakali)——दक्षिणी अमेरिकाके **जे** (दे०)परिवारके पूर्वी वर्गकी एक भाषा। यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है।

मशुबी (mashubi)——**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी है।

मश्केल (mashkel)——**बलोची** (दे०)का, कराँची, शिकारपुर तथा बिलोचिस्तान आदिमें प्रयुक्त एक रूप।

मसल——**लोकोक्ति** (दे०)के लिए प्रयुक्त नाम।

मस्कोइ (maskoi)——दक्षिणी अमेरिकाके **मस्कोइ परिवार** (दे०)की प्रमुख भाषा।

मस्कोइ परिवार (maskoi)——**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारमें निम्नांकित ६ भाषाएँ हैं: **मस्कोइ भाषा, लेन्गुआ, अन्गैटे, सनपन, सपुकी** तथा **गुअना**।

मस्तुंग देह्वारी (mastung dehwari)——'फ़ारसी'की **देह्वारी** (दे०) बोलीका, बिलोचिस्तानमें प्रयुक्त एक रूप।

मस्सचुसेट्ट——(massachusett)——**पूर्वीय अलगोन्किन** (दे०)वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

मस्सेट (masset)——**हैडा** (दे०) वर्गकी एक प्रमुख उत्तरी अमेरिकी बोली।

महंग (mahang)——**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके कुकी-चिन वर्गकी, बर्मामें प्रयुक्त एक दक्षिणी चिन भाषा।

महरी (mahri)——**हलबी** (दे०)का एक रूप।

महाजनी लिपि——हिन्दी प्रदेश (उत्तर प्रदेश, राजस्थान, बिहार, मध्य प्रदेश आदि)के व्यापारियों आदिके बहीखातेमें प्रयुक्त एक

लिपि। इस क्षेत्रके महाजन या व्यापारी भारतके अन्य स्थानोंमें भी अपने हिसाब-किताबके कामोंमें इसका प्रयोग करते हैं। यह देवनागरीका ही एक विकृत रूप है और इसके कुछ ही अक्षर (र) देवनागरी लिपिसे भिन्न हैं। इस लिपिमें मात्रा नहीं दी जाती। उदाहरणार्थ इसमें चना, चीनी, चून सभीको चन लिखा जाता है। इसी कारण यह पढ़नेमें बहुत दुरूह है। मालवी बोलीके क्षेत्रमें प्रयुक्त **मालवी लिपि** इसीका एक रूप है।

महाप्राण (aspirate या aspirated)--वे व्यंजन ध्वनियाँ जिनके उच्चारणमें मुँहसे अधिक (= महा) हवा (= प्राण) निकलती है। जैसे ख, छ, भ आदि। प्राणके लिए ह (h-ه)का प्रयोग करके महाप्राण व्यंजनोंको अंग्रेजीमें एच् के साथ (bh,th) तथा अरबी-फारसी आदिमें हेके साथ (ﮪ, ﮬ) लिखते हैं। महाप्राणको **सप्राण** भी कहते हैं। (दे०) **व्यंजनोंका वर्गीकरण**।

महाप्राणता(aspiration)--**महाप्राण**(दे०) युक्त होनेकी स्थिति।

महाप्राणीकृत (aspirated)--जो **महाप्राण** (दे०)कर दिया गया हो।

महाप्राणीकरण (aspiration)--ध्वनि-परिवर्तनका एक रूप या उसकी एक दिशा। (दे०) 'ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ'। कभी-कभी शब्दकी कोई अल्पप्राण (दे०)ध्वनि महाप्राण हो जाती है। भाषाविज्ञानमें अल्पप्राणका यह महाप्राण होना महाप्राणीकरण कहलाता है। जैसे फारसी 'किशमिश'से मराठी 'खिसमिस'। इसमें 'क्', जो अल्पप्राण था, 'ख्' अर्थात् महाप्राण हो गया है। संस्कृत 'तप'का कश्मीरी 'तफ', या फारसी 'ताक'का भोजपुरी 'ताखा' आदि भी इसके उदाहरण हैं। इसके शुद्ध उदाहरण हिन्दीमें बहुत कम मिलते हैं। कश्मीरी भाषा इस दृष्टिसे बहुत संपन्न है। महाप्राणीकरणके-लिए **महाप्राणीभवन** कदाचित् अधिक अच्छा नाम हो सकता है। महाप्राणीकरणका उलटा **अल्पप्राणीकरण** (दे०)होता है।

महाप्राणीभवन--**महाप्राणीकरण** (दे०)का एक नाम।

महाप्राणीभूत(aspirated)--जो **महाप्राण** (दे०) हो गया हो।

महाराष्ट्री--**मराठी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

महाराष्ट्री अपभ्रंश--**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

महाराष्ट्री प्राकृत--एक प्राकृत (दे०)।

महारूसी--(दे०)**स्लैवोनिक**।

महिकन(mahikan)--**केन्द्रीय अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक विलुप्त उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसका एक अन्य नाम **मोहिकन** भी मिलता है।

महेसरी (mahesari)--**मारवाड़ी**(दे०)का चाँदाके महेसरी मारवाड़ियोंमें प्रयुक्त एक रूप।

महोरग लिपि--बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

मह्ल(mahl)--**सिंहली** (दे०) भाषाकी मालद्वीपमें तथा आसपास प्रयुक्त एक बोली।

मांगल्य लिपि--बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

मांगेला(mangela)--**गुजराती** (दे०)तथा '**मराठी**' (दे०)का, मांगेला जाति द्वारा थाना (बंबई)में प्रयुक्त एक मिश्रित रूप।

मांचू--**यूराल-अल्ताई** (दे०) की एक शाखा या उसकी एक भाषा जो मंचूरियामें बोली जाती है।

मांचू-तुंगुस--**यूराल-अल्ताई** (दे०) की एक शाखा जिसमें **मांचू** (दे०) और **तुंगुस** (दे०) आती हैं। इस शाखाको **मांचू**, **तुंगुस** या **तुंगुस-मांचू** भी कहा जाता है।

मांचू लिपि--**मंगोली लिपि**(दे०)के गलिका रूपपर आधारित एक लिपि जिसका प्रयोग मंचूरियामें प्रयुक्त मांचू भाषाके लिए होता है।

मांझी(manjhi)--(१) **माझी** (दे०)का एक अशुद्ध नाम। (२) **चीनी परिवार**-की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी तिब्बती-

हिमालयी शाखाकी, नेपालमें प्रयुक्त एक असार्वनामिक भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ५२३ थी। (३) **संथाली** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम। (४) **असुरी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम। (५)**कोर्वा** (दे०)का एक अन्य नाम।

माँगरी(mangari)--**चीनीपरिवार**(दे०)की नेपालमें प्रयुक्त एक असार्वनामिक हिमालयी-तिब्बती-बर्मी भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २०,५३६ थी।

माँझ-कुमैयाँ--**गढ़वाली** (दे०)की, गढ़वाल तथा अलमोड़ेमें प्रयुक्त एक उपबोली। यह **कुमायूँनी** बोलियोंकी सीमापर होनेके कारण कुमायूँनीसे प्रभावित है। वस्तुतः यह 'कुमायूँनी' तथा 'गढ़वाली'का मिश्रण है, जिसमें 'गढ़वाली'का प्राधान्य है। इसी कारण अलमोड़ेमें इसे 'दोसंधि' (दोकी संधि) नाम दिया गया है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३३,०११ थी।

मांदे कुसिक (mande kusik)--**गारो** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

माइक्रोनेशियन (micronesion)--**मलय पॉलिनेशियन** (दे०)का एक वर्ग जिसमें कैरोलीन, गिलवर्ट, मार्शल, मैरिअने, मय तथा आर्किपेलागॉस आदि भाषाएँ आती हैं, जो इन्हीं नामके स्थानोंमें बोली जाती हैं।

माइसिअन(mycian)--अज्ञात परिवारकी, एशिया माइनरमें प्राचीन कालमें प्रयुक्त एक **एशियानिक** (दे०) भाषा।

माओ नागा(mao naga)--**सप्वोम** (दे०) का एक अन्य नाम।

मांओली (maoli)--**कोंकणी** (दे०)का पूना और थानाके बीचमें प्रयुक्त, एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३५,००० थी।

माकास (makas)--दक्षिणी अमेरिकाके **विसबरो परिवार** (दे०)की एक भाषा।

माकू(maku)--**दक्षिणी अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इसकी प्रमुख भाषा भी इसी नामकी है।

मागध--लेसेनके अनुसार **पैशाची प्राकृत** (दे०)का एक भेद।

मागधिक भाषा--**पालि**(दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

मागधी--**पालि** (दे०)के लिए लंकामें प्रयुक्त एक नाम।

मागधी अपभ्रंश--**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

मागधी प्राकृत--एक **प्राकृत** (दे०)।

माघा(magha)--उड़ीसामें माघा नामक जाति द्वारा प्रयुक्त **उड़िया** (दे०)को दिया गया एक नाम।

माची(machi)--**आचिक**(दे०)का एक अन्य नाम।

माझी(majhi)--परिनिष्ठित **पंजाबी** (दे०)-की लाहौर, अमृतसर तथा गुरदासपुर आदि में प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २८,०७,६२८ थी।

माड़ी (mari)--**सड़िआ** (दे०)का एक दूसरा नाम।

मातृभाषा (mother tongue)--वह भाषा, जिसे बच्चा सबसे पहले समाजमें सीखता है। यह भाषा प्रायः (किंतु सर्वदा नहीं) उसकी माँकी भाषा होती है, इसी कारण इसे मातृभाषा नाम दिया गया है।

मात्रा (quantity, length, mora, chrone, duration)--कुछ लोग mora या chrone को दूसरे अर्थोंमें भी प्रयुक्त करते हैं। मात्राकी एक इकाई भी mora या chrone कहलाती है। हिन्दीमें अन्य नाम **मात्राकाल** या **परिमाण** भी हैं।)--किसी भी ध्वनिके उच्चारणमें, या उच्चारण छोड़कर मौन रहनेमें, समयकी जो मात्रा लगती है उसे भाषाके अध्ययनमें मात्रा या मात्राकाल कहते हैं। किसी ध्वनिके उच्चारणमें समय कम लगता है, किसीमें ज्यादा, किसीमें बहुत कम और किसीमें

बहुत ज्यादा । कम समयवाली मात्रा ह्रस्व, अधिक समयवाली दीर्घ और उससे भी अधिक समयवाली प्लुत कहलाती है। इसी आधारपर मात्राके मोटे रूपसे पाँच भेद—**ह्रस्वार्द्ध** (half short), **ह्रस्व** (short), **ईषत् दीर्घ** (half long), **दीर्घ** (long), **लुत** (overlong) किये जा सकते हैं। यों सूक्ष्मतासे विचार करनेपर ये भेद और अधिक हो सकते हैं । मशीनोंके आधारपर तो पचासों भेद किये जा सकते हे । प्राचीन भारतमें मात्राका अध्ययन अच्छी तरह किया गया था। भारतीय भाषाशास्त्री इसके महत्त्वसे पूर्ण परिचित थे । इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि सिर्फ इसी विषयको लेकर लिखा गया 'काल-निर्णय-शिक्षा' नामका एक स्वतन्त्र ग्रन्थ मिलता है। भारतीय प्रातिशाख्य, शिक्षा या व्याकरण-ग्रन्थोंमें मात्राके भेदके रूपमें केवल तीन—**ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत**—का ही प्रायः उल्लेख मिलता है। परम्परागत रूपमें ह्रस्व एकमात्रिक, दीर्घ द्विमात्रिक तथा प्लुत त्रिमात्रिक है, या कुछ लोगोंके अनुसार एक बार चुटकी बजानेमें जितना समय लगता है, उतना समय ह्रस्वका है और उससे दूना तथा तीन गुना क्रमसे दीर्घ तथा प्लुतका ।[१] वस्तुतः बात ऐसी नहीं। ह्रस्वसे दीर्घमें अधिक समय तो लगता है किन्तु दूना नहीं। अंग्रेजी ह्रस्वमें .२२८ सेकेंड तथा दीर्घमें ·३१८ सेकेंड लगता है। संस्कृतमें सामान्यतः प्रथम दो—ह्रस्व तथा दीर्घ—का ही प्रयोग मिलता है। प्लुतका प्रयोग बहुत कम मिलता है । पूरे ऋग्वेदमें इसका प्रयोग दो-तीन बारसे अधिक नहीं है। 'ओ३म्'में 'ओ' प्लुत है, इसीलिए ओके बाद ३ लिखते हैं जो (ह्रस्वके तीन गुने) प्लुतका द्योतक है। किसीको बुलानेमें इसका प्रायः प्रयोग होता है 'राऽऽऽम'। यहाँ 'रा' का 'आ' प्लुत है। कभी-कभी तो इतना खींचकर बुलाते हैं कि प्लुतसे भी बड़ी मात्रा सुनाई पड़ती है, जिसके लिए ४ या ५ लिख सकते हैं । भोजपुरीमें 'रमुवाँ हउवेरे'में रेका ए १० मात्रासे कमका नहीं होता। मात्रा स्वर, अर्द्धस्वर और व्यंजन सभीकी होती है। कुछ लोगोंका विचार है कि भारतमें व्यंजनकी मात्रा नहीं मानी जाती थी, किन्तु वस्तुतः ऐसी बात नहीं है । अथर्ववेद प्रातिशाख्य तथा वाजसनेयी प्रातिशाख्य आदि कई ग्रंथोंमें व्यंजनकी मात्राका उल्लेख मिलता है। वाजसनेयी प्रातिशाख्य व्यंजनकी मात्रा आधी (व्यंजनमर्द्ध मात्रा) मानता है । व्यंजनकी मात्राके आधारपर कई वर्ग बनाये जा सकते हैं। स, श, ज, आदि ऐसे व्यंजन जिनका उच्चारण देरतक किया जा सकता है या ये अपेक्षाकृत देरतक बोले जा सकते हैं। उनकी मात्रा घट-बढ़ सकती है । किन्तु स्पर्श आदिमें सामान्यतया ऐसा होना सम्भव नहीं होता। इसका आशय यह नहीं कि उनकी मात्रा कभी दीर्घ हो ही नहीं सकती । व्यंजनका द्वित्व वस्तुतः दो व्यंजन न होकर मात्राकी दृष्टिसे व्यंजनका, दीर्घ रूप ही है। (दे० **ध्वनियोंके वर्गीकरण**में **संयुक्त व्यंजन** उपशीर्षक) 'गुड्डी', 'बग्गी', 'धक्का' जैसे शब्दोंमें यदि ध्यान दिया जाय तो 'ड' 'ग' 'च' 'क' दो नहीं हैं, अपितु एक ध्वनिके ही ये दीर्घ रूप हैं। इसका अर्थ यह भी हुआ कि स्पर्श व्यंजनोंमें मात्राकी दीर्घताके कारण बीचकी स्थिति ही लम्बी हो जाती है। वायुके आने और स्फोट या निकलनेमें कोई अन्तर नहीं पड़ता । कहना न होगा कि इस बातको दृष्टिमें रखते हुए इस प्रकारकी ध्वनिको दो चिह्नोंके योगसे लिखना भ्रामक है। वस्तुतः स्वर और व्यंजन दोनोंके लिए मात्राकी दीर्घताको व्यक्त करनेके लिए एक चिह्नका प्रयोग अधिक वैज्ञानिक है। किस व्यंजनके

१ नारद-शिक्षा, ऋक्प्रातिशाख्य तथा अन्य ग्रंथोंमें इन मात्राओंको और ढंगसे भी नापा गया है। जैसे ह्रस्व बराबर है आँखकी झपक या नीलकंठकी एक बोली या बिजलीकी एक चमकके। दीर्घ बराबर है कौवेकी एक बोलीके और प्लुत बराबर मोरकी एक बोलीके। आधी मात्राका ह्रस्वार्द्धको नेवलेकी एक बोलीके बराबर कहा गया है।

उच्चारणमें कितना समय लगता है इसका भी अध्ययन किया गया है। अंग्रेजीकी अघोष स्पर्श ध्वनियोंमें .१२ सेकेंड, घोष स्पर्शमें .०८८, नासिक्यमें .१४६, पार्श्विक और लुंठितमें .१२२, तथा संघर्षोंमें .११२ लगता है। यों सामान्यतया स्वरोंके उच्चारणमें सबसे अधिक समय लगता है। अर्द्धस्वरोंमें उनसे कम और व्यंजनोंमें अर्द्धस्वरोंसे भी कम। व्यंजनोंमें सबसे अधिक समय अनुनासिक व्यंजनोंमें लगता है उनसे कम लुंठित और पार्श्विक व्यंजनोंमें, उनसे कम ऊष्मोंमें, उनसे कम अन्य संघर्षियोंमें और सबसे कम स्पर्शोंमें। अन्य स्पर्शोंमें भी दंत्यमें सबसे कम, तालव्यमें उससे अधिक और ओष्ठ्यमें सबसे अधिक समय लगता है। सभी प्रकारकी ध्वनियोंमें अघोषमें समय ज्यादा लगता है और घोषमें कम। मोटे रूपसे सभी व्यंजनोंकी मात्रा ह्रस्वार्द्ध मानी जा सकती है। स्वरोंमें ह्रस्व स्वरोंकी मात्रा ह्रस्व तथा दीर्घकी दीर्घ होती है। संयुक्त स्वरोंके उच्चारणमें दीर्घसे अधिक समय लगता है। इस प्रकार उन्हें 'प्लुत' या अतिरिक्त दीर्घ कहा जा सकता है। प्रायः सभी भाषाओंमें ह्रस्व और दीर्घ स्वर पाये जाते हैं। किन्तु ऐसी भाषाएँ बहुत अधिक नहीं हैं, अफ्रीकाकी ईव आदि भाषाओंमें सच्चे अर्थोंमें ह्रस्वके दीर्घ स्वर हैं, जैसे, ba (कीचड़), baa (खुला) आदि जिनमें ह्रास्व स्वरोंके ही दीर्घ रूप वर्तमान हों। हिन्दी आदिमें अ आ, इ ई, उ ऊ में प्रथमके दूसरे मात्र दीर्घ रूप नहीं हैं, जैसा कि प्रायः माना जाता है। कहना न होगा कि इनमें मात्राके अतिरिक्त स्थानका भी भेद है। यों स्थानके आधारपर ह्रस्वके ह्रस्वार्द्ध या दीर्घके ह्रस्व रूप अवश्य उपलब्ध हैं। कमल में 'क' और 'म' के 'अ' बराबर नहीं हैं और न 'ओर' और 'ओखली'के 'ओ' या 'एक' और 'एक्की' के 'ए'। दीदीकी दोनों 'ई' 'दादा' के दोनों 'आ' और 'तू तू'के दोनों ऊ भी मात्राकी दृष्टिसे समान नहीं हैं। उच्चारण-सौकर्यके लिए 'स्' व्यंजनके पूर्व आनेवाली संक्षिप्त इ (स्कूल, स्काउट, स्टेशन), 'गोल्डस्मिथ' के उच्चारणमें 'ड' के साथकी संक्षिप्त 'इ', या किसी भी ह्रस्व स्वरकी विशेष संदर्भके कारण सामान्यसे कम मात्रा ह्रस्वार्द्ध या लघु ह्रस्व मात्रा है। उदासीन स्वर अ (अवधी रामक, पंजाबी वचारा) भी ह्रस्वार्द्ध है।

वस्तुतः ऊपर जो ध्वनियोंके अलग-अलग कालपर विचार किया गया है, वह भाषाके अध्ययनकी दृष्टिसे बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं है, क्योंकि भाषामें कोई ध्वनि अलग नहीं आती। जंजीरकी तरह एक ध्वनि दूसरीसे लगी रहती है और इस 'लगने'के कारण एक ध्वनि दूसरेको प्रभावित करती है। इसीलिए मात्राके अध्ययनमें यह बहुत महत्त्वपूर्ण है कि किन संदर्भोंमें मात्राका क्या रूप हो जाता है। इस सम्बन्धमें यों तो गहराईसे विचार किया जाय तो प्रत्येक भाषाके किसी सीमातक अपने अलग नियम होंगे, फिर भी सामान्य नियम दिये जा सकते हैं जो काफी भाषाओंपर लागू हो सकते हैं। स्वरके सम्बन्धमें प्रमुख बातें ये हैं:—(१) बलाघातयुक्त स्वर चाहे वे दीर्घ हों या ह्रस्व अबलाघातयुक्तसे अधिक मात्रावाले या दीर्घ होते हैं। उदाहरणतः 'लकड़ी'में 'ल' का 'अ', क के 'अ' से बड़ा है। (२) दीर्घ स्वरके बाद यदि अघोष व्यंजन हो तो वह स्वर, मात्रामें कुछ छोटा और उसके बाद यदि घोष व्यंजन हो तो बड़ा होगा। जैसे 'आप' का 'आ', 'आज' या 'आग'के आसे छोटा है। ईख-ईदमें भी यही बात दिखाई पड़ती है। (३) ह्रस्व स्वरपर भी यह नियम लागू होता है, यद्यपि वहाँ दोनोंमें अन्तर बहुत नगण्य होता है। उदाहरणार्थ पख-पद, जप-जग। (४) शब्दांतका स्वर उसी शब्दके अन्य स्थानीय समान स्वरकी कम मात्राका होता है। 'दादा' में पहला 'आ' दूसरेसे बड़ा है। इसी प्रकार दीदी, तूतू-मैंमैं तथा लोलो-कोकोमें भी। (५) एक ही स्वर यदि दो शब्दोंके आरम्भमें या आरम्भिक अक्षरमें आवे तो प्रायः लम्बे शब्दमें उसकी मात्रा छोटी होती है और

छोटे शब्दोंमें बड़ी। जैसे ओर-ओखली, ऐन-ऐनक, नागर-नागरिकता, (६) संयुक्त या द्वित्व **व्यंजनके** पूर्वका स्वर, असंयुक्त या अद्वित्वके पूर्वके स्वरसे छोटाहोगा, जैसे वहाँ-वक्त, पका-पक्का। **व्यंजनके** सम्बन्धमें भी दो-एक बातें कही जा सकती हैं। (१) अक्षरांतके व्यंजनके पूर्व यदि ह्रस्व स्वर हो तो वह व्यंजन कुछ बड़ी मात्राका होगा किन्तु यदि दीर्घ स्वर हो तो कुछ छोटी मात्राका होगा, जैसे दिन-दीन, लद-लीद आदि। (२) अनुनासिक, पार्श्विक और लुंठित ध्वनियाँ घोष व्यंजनके पूर्व बड़ी और अघोषके पूर्व कुछ छोटी होती हैं। उदाहरणातः बाल्टी-रोल्डगोल्ड, पंखा-गंगा, कर्क-कुर्ग।

आदमी सर्वदा एक गतिसे नहीं बोलता। वह कभी तीव्र गतिसे बोलता है, कभी धीमी गतिसे और कभी मध्यम गतिसे। इसके अनुसार भी ध्वनियोंकी मात्रा घटती-बढ़ती है।

ध्वनियोंकी तरह ही मौन या **विराम** (दे०) या दो शब्दोंके बीचके मौनकी भी मात्रा होती है। पूर्ण विराम, अर्द्ध विराम और अल्प विराममें मात्राका अन्तर स्पष्ट ही है।

मात्राके अंकनके लिए कई पद्धतियोंका प्रयोग होता है। अन्तर्राष्ट्रीय लिपि-चिह्नमें दीर्घके लिए दो बिन्दु (a:), उससे कुछ ह्रस्वके लिए एक बिन्दु (a.) और ह्रस्वको बिना किसी चिह्नके (a) लिखते हैं। कुछ लोग ऊपर छोटी लकीरके द्वारा दीर्घता व्यक्त (ā) करते हैं। नागरी लिपिमें अ आ, इ ई, उ ऊ, कई प्रकारके चिह्नों (ा ी)का दीर्घताके लिए प्रयोग होता है। व्यंजनोंके साथ भी ह्रस्व-दीर्घके चिह्न अलग-अलग (क, का, गि गी) हैं। हमारे यहाँ छन्दशास्त्रमें ह्रस्वके लिए '।' और दीर्घके लिए (s) का प्रयोग होता है। प्लुतके लिए नागरी लिपिमें तीन-का प्रयोग (ओ३म्) करते हैं। **ध्वनिग्राम** (दे०)की तरह ही किसी भाषामें प्रयुक्त अर्थ-भेदक मात्राकी एक इकाई **मात्राग्राम** (chroneme) कहलाती है।

मात्राकाल—**मात्रा** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

मात्राग्राम (chroneme)—अर्थभेदक मात्राकी एक इकाई। ध्वनिग्राम, रूपग्राम, अर्थग्राम आदिकी तरह इसका भी विश्लेषण हो सकता है तथा भाषाविशेषकी संमात्राओं (allochrones) का पता लगाया जा सकता है।

मात्राचिह्न (quantity mark)—स्वरोंकी मात्राको दीर्घ (a) या ह्रस्व करनेके चिह्न। इनको क्रमसे **दीर्घ-चिह्न** (macron) तथा **ह्रस्व-चिह्न** (breve) कहते हैं।

मात्रा-भेद—**मात्रा-भेदीकरण** (दे०)का एक अन्य नाम।

मात्रा-भेदीकरण—ध्वनि-परिवर्तनका एक रूप या उसकी एक दिशा। दे० ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ। कभी-कभी देखा जाता है कि शब्दके किसी स्वरकी मात्रा **ह्रस्व** (दे०) से **दीर्घ** (दे०), या दीर्घसे ह्रस्व हो जाती है। इसे **मात्रा-भेदीकरण** या **मात्रा-भेद** कहते हैं। स्वराघात, मुख-सुख, ध्वनि-लोप आदि कई कारणोंसे ऐसा होता है। इसका अच्छा नाम **मात्रा-भेदीभवन** हो सकता है। ऊपरके वर्णनसे स्पष्ट है कि इसके दो भेद हो सकते हैं। उदाहरण हैं:—(क) **ह्रस्वसे दीर्घ**—संस्कृत 'प्रिय'से हिन्दी 'पीय' (इ से ई), संस्कृत अंकुशसे अवधी आँकुस (अ से आ), संस्कृत 'कंटक' से हिन्दी 'काँटा' (अ से आ) तथा संस्कृत 'जिह्वा' से हिन्दी जीभ (इ से ई) आदि। इस ह्रस्वसे दीर्घ होनेको **दीर्घीकरण** (lengthering) या **दीर्घीभवन** कहा जा सकता है। (दे०) **क्षतिपूरण दीर्घीकरण**। (ख) **दीर्घसे ह्रस्व**—संस्कृत 'शून्य'से हिन्दी 'सुन्न' (ऊ से उ), संस्कृत आश्चर्यसे हिन्दी अचरज (आ से अ) तथा अंग्रेजी 'आगस्ट'से हिन्दी 'अगस्त' (आसे अ) आदि। इस दीर्घ ह्रस्व होनेको **ह्रस्वीकरण** (delengthering) या **ह्रस्वीभवन** कहा जा सकता है।

मात्रा-भेदीभवन—**मात्रा भेदीकरण** (दे०)का

एक अन्य नाम ।

मात्रासूचक क्रियाविशेषण––(दे०) **क्रिया-विशेषण** ।

मात्रिक अपश्रुति––एक प्रकारकी **अपश्रुति** (दे०) ।

माथुरी––**ब्रजभाषा** (दे०) का एक अन्य नाम। 'मथुरा'के आसपास प्रयुक्त होनेके कारण यह नाम पड़ा है। 'मथुरही' या इसे 'मथुराही' भी कहते हैं। कुछ लोग मथुरा-वृंदावन तथा आसपासकी ब्रजभाषाको माथुरी कहते हैं।

माध्यमिक पहाड़ी––हिन्दीकी उपभाषा **पहाड़ी** (दे०)की एक बोली। पहाड़ी उप-भाषा क्षेत्रके मध्य भागमें बोली जानेके कारण इसे **माध्यमिक केन्द्रीय मध्यवर्ती** या मध्य-पहाड़ी कहते हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ११,०७,६१२ थी। यह कुमायूँ तथा गढ़वाल-में दक्षिण-पूर्वमें बरमदेवसे लेकर उत्तर-पश्चिममें चकराताके उत्तर स्थित प्रदेशतक बोली जाती है।

माध्यमिक पहाड़ीकी प्रमुख बोलियाँ दो हैं––**कुमायूँनी** (दे०) तथा **गढ़वाली** (दे०)। माध्यमिक पहाड़ीपर 'राजस्थानी' का राज-नीतिक कारणोंसे बहुत अधिक प्रभाव पड़ा है। माध्यमिक पहाड़ीमें साहित्य केवल कुमायूँनी बोलीमें ही थोड़ा-बहुत रचा गया है। इसके लिए नागरी लिपिका प्रयोग होता है।

मान––**मन** (दे०)का एक अन्य नाम।

मानकस्वर (दे०)––**स्वरोंका वर्गीकरण**में **मानस्वर** उपशीर्षक।

मानस-सिद्धांत (mentalistic theory)––एक सिद्धांत, जिसके अनुसार भाषाकी परि-वर्तनशीलता, मानव-मस्तिष्कसे संबद्ध कार-णोंपर आधारित है।

मानस्वर––(दे०) **स्वरोंका वर्गीकरण**में **मानस्वर** उपशीर्षक। मानस्वरको **प्रधान स्वर, आदर्श स्वर, आधार स्वर, मूल स्वर, मानक स्वर, प्रधान अक्षर, प्रमाणाक्षर** आदि अन्य नामोंसे भी पुकारा गया है।

माप्पीली (mappili)––मोपलों द्वारा प्रयुक्त **मलयालम** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

मांप्ले (maple)––**माप्पीली** (दे०)का एक अन्य नाम।

मारक्वीसन––**पालिनेशियन परिवार** (दे०)-की मारक्वीसाज़में प्रयुक्त एक भाषा।

मारवाड़ी––(१) पश्चिमी राजस्थानीकी प्रमुख बोली। प्रमुख रूपसे मारवाड़की भाषा होनेके कारण इसका नाम मारवाड़ी है। यह नाम नया नहीं है। अबुल फज़लके आइने अकबरी तथा कुछ अन्य प्राचीन पुस्तकोंमें भी यह आया है। साहित्यमें प्रयुक्त 'मारवाड़ी' या साहित्यिक मारवाड़ी-को प्रायः 'डिंगल' (दे०) कहा गया है। मारवाड़ी बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार मारवाड़ी क्षेत्रमें ६० लाखसे कुछ ऊपर थी, तथा मारवाड़ी क्षेत्रसे बाहर असम, बरार तथा बंबई आदि-में साढ़े चार लाखके लगभग थी। मार-वाड़ीका क्षेत्र मारवाड़, मेवाड़, पूर्वी सिंध, जैसलमेर, बीकानेर, दक्षिणी पंजाब तथा जयपुरका पश्चिमी-उत्तरी भाग है। मार-वाड़ी अपने भौगोलिक विस्तारकी दृष्टिसे राजस्थानीकी अन्य सभी बोलियोंके योगसे भी बड़ी है। मारवाड़ीके कई स्थानीय रूप हैं। परिनिष्ठित मारवाड़ी मारवाड़में बोली जाती है। इसके अतिरिक्त पूर्वी, दक्षिणी, पश्चिमी तथा उत्तरी ये चार रूप हैं, जिनके अंतर्गत प्रसिद्ध उपबोलियाँ इस प्रकार हैं: **पूर्वी मारवाड़ी**––मगराकी बोली, मेरवाड़ी, मारवाड़ी, गिरासियाकी बोली, मारवाड़ी ढुंढारी, गोड़ावाटी, मेवाड़ी; मेरवाड़ी मार-वाड़ी। **दक्षिणी मारवाड़ी**––गोड़वाड़ी, सिरोही, देवड़ावाटी, मारवाड़ी-गुजराती। **पश्चिमी मारवाड़ी**––थली, ढटकी। **उत्तरी मारवाड़ी**––बीकानेरी, शेखावाटी, बागड़ी। मारवाड़ी, साहित्यकी दृष्टिसे पर्याप्त संपन्न है। राजस्थानीका पूरा साहित्य प्रायः इसी-के साहित्यिक रूपमें, जिसे 'डिंगल' (दे०) कहते हैं, लिखा गया है। नरपति नाल्ह,

पृथ्वीराज तथा बाँकीदास आदि इसके प्रसिद्ध कवि हैं। मारवाड़ीका सम्बन्ध शौरसेनी अपभ्रंशके एक रूप पश्चिमी, सौराष्ट्री या नागरसे माना जाता है। मारवाड़ी क्षेत्रमें नागरी लिपिका ही प्रयोग अधिक होता है। बहीखाता तथा कभी-कभी व्यापारी वर्गके पत्र-व्यवहारमें महाजनी, भुड़िया या इन दोनोंसे प्रभावित विकृत नागरी प्रयुक्त होती है। कहीं-कहीं, यद्यपि बहुत कम, फारसी लिपि भी प्रयोगमें आती रही है। (दे०) **राजस्थानी** (२) पूर्वी मारवाड़ीका एक स्थानीय रूप जो उत्तरी-पश्चिमी मेरवाड़में बोला जाता है। इसमें और 'मेरवाड़ी'में बहुत कम अंतर है। पश्चिमी राजस्थानीकी प्रमुख बोली **मारवाड़ी** (दे०)से यह भिन्न है और उसीका एक स्थानीय रूप है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १७,००० थी।

मारवाड़ी गुजराती–मारवाड़ और गुजरातकी सीमापर पालनपुरके आसपास प्रयुक्त दक्षिणी मारवाड़ीका, एक (अत्यधिक गुजराती मिश्रित) रूप है। इसके बोलनेवालोंमें 'खड़ी बोली हिंदी' बोलनेवाले कुछ मुसलमान भी हैं, इसीलिए इसमें खड़ी बोली हिन्दीके भी रूप मिलते हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ६५,२७० थी। दे० **मारवाड़ी**।

मारवाड़ी ढुंढारी––'पूर्वी मारवाड़ी'का एक स्थानीय रूपजो जयपुरकी सीमाके पास मारवाड़में बोला जाता है। इसपर 'जयपुरी'का पर्याप्त प्रभाव है। ग्रियर्सनके, भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४९,३०० थी। (दे०) **मारवाड़ी ढुंढारी**।

मारवाड़ी सिंधी––पश्चिमी मारवाड़ तथा सिंधके संधि-स्थलपर प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,३१,९६० थी।

मारिशस क्रेओले––मारिशसमें प्रयुक्त एक मिश्रित फ्रांसीसी भाषा।

मर्शिअन (mercion)–एक ऐंग्लो-सैक्सन या प्राचीन अंग्रेजीकी बोली। इसका क्षेत्र मध्य इंगलैंडका मर्शिआ प्रदेश था।

मालद्वीपी––लंकाके पास मालद्वीपकी भाषा। यह **सिंहली** (दे०)के ९-१०वीं सदीके रूपपर आधारित है।

माल पहाड़िआ (mal paharia)––**पश्चिमी बंगाली** (दे०)का संथाल परगनामें प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २७,९०८ थी।

मालव अपभ्रंश––**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

मालवाई (malwai)–**जटकी** (दे०)का एक नाम।

मालवी––दक्षिणी पूर्वी **राजस्थानी** (दे०)-की प्रतिनिधि बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग ६३,५०,५०७ थी। जयपुरी, मेवाड़ी, गुजराती, खानदेशी, महाराष्ट्री तथा बुंदेलीके बीचमें स्थित मालवीका क्षेत्र मालवा तथा इसके आसपासका प्रदेश है। इस प्रदेशकी भाषाका प्राचीन नाम 'आवन्ती' या 'अवन्तिजा' मिलता है। बहुतसे लोग इसीसे मालवीका जन्म मानते हैं। मालवी भाषाका प्राचीनतम प्रयोग ८वीं सदीमें लिखित कुवलयमाला नामक ग्रंथमें (भणिरे अह मालव दिट्ठे) मिलता है। इसकी प्रधान उपबोलियाँ सोंडवाड़ी(दे०), राँगड़ी (दे०), धोलेवाड़ी(दे०), भोयारी (दे०), पाटवी (दे०) तथा कटियाई (दे०) हैं। कुछ अन्य स्थानीय तथा जातीय रूप उमठवाड़ी, मंदसौरी, रतलामी, अहीरवाटी, बंजारी, भीली, देसवाली, गूजरी, पारधी तथा बागरी आदि हैं। कुछ निमाड़ी (दे०)को भी इसके अंतर्गत मानते हैं, किंतु वस्तुतः वह अलग है। परिनिष्ठित मालवीको 'अहीरी' भी कहते हैं। डॉ० चटर्जीके अनुसार यह राजस्थानी तथा पश्चिमी

हिंदी, इन दोनोंसे इतनी मिलती-जुलती है कि यह कहना कठिन है कि यह किसकी उपबोली है। मालवीमें बहुत कम साहित्य है। चंद्र-सखी इसकी प्रसिद्ध कवयित्री हैं। मालवीके लिए नागरी तथा महाजनी एवं मुड़ियासे प्रभावित नागरीका एक विकृत रूप प्रयुक्त होता है। वहीखातामें प्रायः महाजनी प्रयुक्त होती है।

मालवी लिपि--**महाजनी लिपि** (दे०)का एक रूप।

माली (mali)-माली नामक द्रविड़ जातिमें प्रयुक्त **उड़िया** (दे०)का मद्रास आदिमें प्रयुक्त एक नाम।

माल्टी--भूमध्यसागरके माल्टा द्वीपमें प्रयुक्त एक अरबी बोली।

माल्टो--**द्रविड़ परिवार** (दे०)की एक भाषा। यह बंगाल-बिहारकी सीमापर राजमहलकी पहाड़ीपर माल्टो या मल्टो नामक जाति द्वारा प्रयुक्त होती है। इसे **मलेर** भी कहते हैं। इसका शब्द-समूह आर्य भाषाओंसे पर्याप्त प्रभावित है। इसका पारिवारिक सम्बन्ध ओराँवसे ज्ञात होता है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवाले १२,८०१ थे।

माल्वणी (malvani)---रतनगिरिमें प्रयुक्त **कोंकणी** (दे०)का एक नाम। **कुडाली** भी यही है।

माव्ची (mawchi)---**भीली** (दे०)की, खानदेशमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३०,००० थी।

मासइ (masai)---मासइ जातिमें प्रयुक्त **सूडान वर्ग** (दे०)की एक भाषा। इसका क्षेत्र विक्टोरिया झीलके पूर्वमें केनिया और टांगानीकामें है।

माहाराष्ट्री अपभ्रंश--**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

माहारी (mahari)---(१) **मराठी** (दे०)-का, चाँदा और छिंदवाड़ामें प्रयुक्त एक रूप। यह नाम महार जाति द्वारा प्रयुक्त होनेके कारण दिया गया है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा- सर्वेक्षणके अनुसार लगभग १९,००० थी। (२) **ढेरी** (दे०)का एक अन्य नाम।

माहिली (mahili)-**माह्ले** (दे०)का एक अन्य नाम।

माहेश्वरसूत्र--**शिवसूत्र** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

माहेसरी--पन्नवणासूत्र नामक जैन ग्रंथमें दी गयी १८ लिपियोंमेंसे एक।

माह्ले (mahle)---**संथाली** (दे०)की, संथाल परगना, मानभूमि, मोरभंज तथा वीरभूमि आदिमें प्रयुक्त, एक बोली। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसकेबोलनेवालोंकी संख्या २०,५६८ थी।

मिंगोग्राफ़ (mingograph)---एक प्रकारका विकसित **कायमोग्राफ़** (दे०)।

मिंग्रेलिअन (mingrelion)---काकेशसमें प्रयुक्त एक काकेशस भाषा।

मिअमी (miam)---**केन्द्रीय अलगोन्किन** (दे०)की एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

मिआओ (miao)---बर्मा तथा हिन्दचीन आदिमें प्रयुक्त एक भाषा। यह **मन** (दे०) भाषा-वर्गकी है। इसे 'मन' या 'मिआओ त्जू' भी कहते हैं।

मिआजल (miazal)-दक्षिणी अमेरिकाके **क्सिबरो परिवार** (दे०)की एक भाषा।

मि एर्र (mi err)---**क्वेल्शिन** (दे०)का एक अन्य नाम।

मिएन (mien)-**म्येन** (दे०)का एक दूसरा नाम।

मिकमक (mikmak)---**पूर्वीय अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

मिकू (miku)---**चीनी परिवार** (दे०)-की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके, नागा-वर्गकी, मिकिर पहाड़ियों (असम)में प्रयुक्त एक 'नागाकुकी' भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,०९,१२३ थी।

मिक्लइ (miklai)—**ल्होता** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मिक्सटेक (mixtek)—**केन्द्रीय अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार । इस परिवारकी प्रमुख भाषाका नाम भी यही है ।

मिक्से (mixe)—मध्य अमेरिकाके **मिक्से-जोके** (दे०) परिवारकी एक भाषा ।

मिक्से-जोके (mixe-zoke)—**केन्द्रीय अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार । इस परिवारमें नौ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख **मिक्से, जोके, टापचुल्टेक, अगुअकाटेक, हुअवे** आदि हैं ।

मिजू (miju)—**मिश्मी** (दे०)का एक दूसरा रूप ।

मिट्टू (mittu)—**सूडान वर्ग** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा ।

मिताई (mitai)—मैतेइ (दे०)का ढाका-में प्रयुक्त एक नाम ।

मितान्नियन–(mitannian) (दे०) **मितान्नी**।

मितान्नी–मितान्नियन—एक विलुप्त भाषा । दजला और फरात नदियोंके पास यह भाषा बोली जाती थी । इसकी सामग्री अधिक नहीं मिल सकी है । केवल एक धर्म-पुस्तक तथा कुछ व्यक्तियोंके नाम मिले हैं । कुछ लोग इसका सम्बन्ध काकेशीसे मानते हैं, किंतु यह सभीको मान्य नहीं है । इसी कारण इसे अभीतक सर्वसम्मतिसे किसी परिवारका नहीं माना जा सका है ।

मिते (mite)—**करेन्नी** (दे०)का एक रूप ।

मिथन नागा (mithan naga)—**भुतोनिआ** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मिथुन (mithun)—**मिश्मी** (दे०)का एक नाम ।

मिथ्या प्रतीतिका नियम—**बौद्धिक-नियम** (दे०)का एक भेद ।

मिथ्या सादृश्य (false analogy)–**सादृश्य** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

मिथ्या स्वर तंत्रियाँ—(दे०) **शारीरिक ध्वनि-विज्ञानमें स्वरयंत्र, स्वरयंत्रमुख और स्वरतंत्री उपशीर्षक** ।

मिडु (midu)—**चुलिकाता मिश्मी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मिन—चीनके फूकिन प्रदेशमें लगभग ३ करोड़ लोगों द्वारा प्रयुक्त चीनी भाषाका एक रूप ।

मिन छाण (min chhan) **कनौरी** (दे०) का एक और नाम ।

मिएन (mien)—**स्येन** (दे०)का एक और नाम ।

मिन छाणंग (min chhanang)—**कनौरी** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

मिमा (mima)—**नाली** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मियंग (miyang)—**मयांग** (दे०) का एक अशुद्ध नाम ।

मियांगखांग (miyang khang)—**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके नागा-वर्गकी, मणिपुर (असम)में प्रयुक्त एक 'नागा-कुकी' भाषा । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ५,००० थी ।

मिराना (mirana)—दक्षिणी अमेरिकाके **विटोटो-परिवार** (दे०)की एक भाषा ।

मिरान्या (miranya)—**टुपी गवरनी** (दे०) परिवारकी दक्षिणी अमेरिकामें प्रयुक्त एक भाषाका नाम । इसका एक अन्य नाम बोरो भी है ।

मिरी (miri)—(१) **चांग** (दे०)का एक नाम । (२) **चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंके उत्तरी असम वर्ग-की, असममें प्रयुक्त एक भाषा । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ६५,२८९ थी । इस संख्यामें 'अबोर' बोलनेवाले भी सम्मिलित थे ।

मिर्गानी (mirgani)—**हलबी** (दे०)का एक रूप ।

मिर्जापुरी—१९२१की जनगणनाके अनुसार **अवधी** (दे०)का एक नाम । वस्तुतः इसे मिर्जापुरी अवधीका नाम माना जाना

चाहिये । **मिर्जापुरी भोजपुरी**को भी मिर्जापुरी कहते हैं ।

मिल्चंग (milchang)––**कनौरी** (दे०)-का एक स्थानीय नाम ।

मिवा (miwa)––**मिवोक** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम

मिवोक (miwok)––**कैलीफ़ोर्निअन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा । इसको **मिवा** तथा **मोक्येलुम्नन** भी कहते हैं । इस भाषाकी प्रमुख बोलियाँ चार हैं ।

मिल्कयक (milkayak) दक्षिणी अमेरिकाके **अलेन्टिअक परिवार** (दे०)की एक भाषा । यह अब विलुप्त हो चुकी है ।

मिश्मी (mishmi)––**चीनी परिवार**(दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी उत्तरी असम वर्गकी, असममें प्रयुक्त एक भाषा । १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ८४६ थी ।

मिश्र––(१) मिला हुआ । जैसे मिश्र शब्द, मिश्र या मिश्रित वाक्य, मिश्र ध्वनि, मिश्र-स्वर, मिश्र व्यंजन आदि । (२) १८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार बीजापुरमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा । ग्रियर्सनके मतानुसार यह **सिकल्गारी** (दे०) ही है ।

मिश्रकाल––(दे०) **काल** ।

मिश्रण (fusion)––दो या अधिक ध्वनि, शब्द या रूप आदिका मिश्रण ।

मिश्र ध्वनि-परिवर्तन––ध्वनि-परिवर्तनका एक रूप । (दे०) **ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ** ।

मिश्रभाषा (hybrid language)–ऐसी भाषा, जिसमें एकाधिक भाषाओंके रूप या शब्द आदि हों । इस दृष्टिसे विश्वकी सभी भाषाएँ मिश्र हैं । अब इसका प्रयोग केवल ऐसी भाषाके लिए होता है जिसमें अन्य भाषाओंके शब्द या रूप आदि अधिक हों ।

मिश्र वाक्य––(दे०) **वाक्यमें वाक्योंके प्रकार** उपशीर्षक ।

मिश्रशब्द–ऐसा शब्द जो दो या अधिक शब्दोंके मेलसे बना हो । कभी-कभी ऐसा भी किया जाता है कि दो या अधिक शब्दोंके कुछ अंशोंको ही मिलाकर शब्द बना दिये जाते हैं, ये भी मिश्र शब्द हैं । 'भारोपीय' (भारत-यूरोपीय) इसी प्रकारका शब्द है ।

मिश्र संधि––(दे०) **संधि** ।

मिश्र स्वर (mixed vowel)–**मध्य स्वर** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम । अग्र और पश्चके मिलन या मिश्र क्षेत्रसे उच्चरित होनेके कारण ही यह नाम पड़ा है। हिन्दीका अ इसी प्रकारका स्वर है । (दे०)**स्वरों का वर्गीकरण** ।

मिश्रित––मिला हुआ । जैसे **मिश्रित वाक्य** (दे०) ।

मिश्रित उड़िया (mixed oriya)––**उड़िया** (दे०) तथा **बंगाली** (दे०)का, मिदनीपुर (बंगाल) तथा उत्तरी उड़ीसामें प्रयुक्त, एक मिश्रित रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५,८२,७९८ थी ।

मिश्रित कश्मीरी (mixed kashmiri)–**कश्मीरी** (दे०)की एक मिश्रित बोली जो कि जम्मूके उत्तरमें प्रयुक्त होती है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४५,३१६ थी।

मिश्रित रूपग्राम (complex morpheme)––एक प्रकारका **रूपग्राम** (दे०) ।

मिश्रित वाक्य––(दे०) **वाक्यमें वाक्योंके प्रकार** उपशीर्षक ।

मिस्किटो (miskito)––मध्य अमेरिकाके **मिस्किटो सुमो-मटगल्पा** (दे०) परिवारकी एक प्रमुख भाषा । इसके अन्य नाम **मुस्किटो** तथा **मोस्किटो** हैं ।

मिस्किटो-सुमो-मटगल्पा (miskito-sumo-matagalpa)––**केन्द्रीय अमेरिकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा परिवार । इस परिवारमें लगभग पाँच भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख **मिस्किटो, सुमो** तथा **मटगल्पा** हैं ।

मिस्री (egyptian)––**हेमिटिक परिवार** (दे०)की भाषा । इसपर अरबी प्रभाव (न केवल शब्द अपितु रूपमें भी) बहुत है,

इसी कारण यह सेमिटिक परिवारकी भी ज्ञात होती है। इसी आधारपर इसे हेमिटो-सेमिटिक या सेमिटो-हेमिटिक भाषा कहा गया है। इसका प्रयोग प्राचीन मिस्री लोग करते थे, जिनका क्षेत्र नील नदीकी घाटी था। इसके प्राचीनतम नमूने लगभग ३,००० ई० पू०के मिलते हैं। यहाँकी प्राचीन लिपि हीरोग्लाइफ़िक थी। मिस्री भाषाको प्राचीन मिस्री (३,४०० ई० पू०से लगभग २,२०० ई० पू० तक) मध्यकालीन मिस्री (२,२०० से १,३७५ ई० पू० तक या कुछ लोगों के अनुसार १,५८० ई० पू० तक) तथा उत्तर मिस्री (१३७५ या १५८० ई० पू०से ७वीं सदी ई० पू०), इन तीन कालोंमें बाँटा गया है। इन कालोंके साहित्यमें नीति साहित्य पौराणिक कहानियाँ, प्रेमगीत तथा अन्य प्रकारकी कविताएँ, ऐतिहासिक ग्रंथ आदि प्रमुख हैं। ७वीं ८वीं सदी ई० पू०के बाद मिस्रकी भाषा डिमॉटिक या डिमॉटिक मिस्री हो गयी। हीरोग्लाइफ़िकसे विकसित डिमॉटिक लिपिमें लिखे जानेके कारण इस भाषाका यह नाम पड़ा है। डिमॉटिक मिस्री दूसरी सदीतक रही। उसके बाद वहाँ **कॉप्टिक** (दे०) भाषा विकसित हो गयी, जो लगभग १५०० ई० तक प्रयुक्त होती रही। उसके बादसे वहाँ अरबी बोली जा रही है, जिसे आधुनिक मिस्री या मिस्री अरबी भी कहते हैं।

मिस्री हीरोग्लाइफिक लिपि–**हीरोग्लाइफिक लिपि** (दे०)का एक अन्य नाम।

मिस्सूरी (missouri)––**चिवेरे** (दे०)वर्ग-की एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

मी (mi)––१९०१की जनगणनाके अनुसार चिन पहाड़ियों (वर्मा)में प्रयुक्त एक **चिन** (दे०) भाषा।

मी एर्र (mi err)––**क्वेल्शिन** (दे०)का एक अन्य नाम।

मीडिअन––एक **ईरानी** (दे०) भाषा।

मीदी––फ़ारसकी एक प्राचीन भाषा।

मी शिंग (mi shing)––**मिरी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

मुंग (mung)––**ह्मोंग** (दे०)का एकनाम।

मुंगी (mungi)––**मुंजानी** (दे०)का नाम।

मुंगू (mungu)––**सूडान वर्ग** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा।

मुंजानी––**ईरानी** (दे०)की, मुंजानमें प्रयुक्त एक गलचा भाषा।

मुंडा––**आस्ट्रिक परिवार** (दे०)के आस्ट्रो एशियाटिक शाखाकी कुछ भाषाओंका एक वर्ग। वॉन हेवेसि (१९३२)ने इसे फ़िनो-युग्रिकसे संबद्ध माना है। श्मिट (१९०६) ने इसको आस्ट्रिक परिवारमें माना था। बाउलेस (१९४३)ने दोनोंकी आलोचना की है, और इसे दोनोंसे अलग माना है। मुंडा भाषाओंका प्रधान क्षेत्र भारत है। पश्चिमी बंगाल, बिहारकी दक्षिणी पहाड़ियाँ, उड़ीसाके कुछ जंगल, मध्य भारत तथा मध्य प्रदेशके सीमाप्रान्त, नेपालके कुछ भाग, संयुक्त प्रान्तके उत्तरी प्रदेशकी कुछ तराइयाँ तथा मद्रासका गंजाम जिला आदि मुंडा भाषाओंके प्रमुख प्रदेश हैं। इसे पहले **'कोल'** भाषा कहा जाता था, पर संस्कृतमें 'कोल' शब्दका अर्थ सूअर है, अतः इसका प्रयोग उचित नहीं समझा गया। मैक्स-मूलर महोदयने इसे १८५४ ई०में 'मुंडा' नाम दिया। 'मुंडा' शब्द इसी परिवारकी एक भाषा मुंडारीका है जिसका अर्थ 'मुखिया' है। कुछ लोग इसे मुंडे, कुछ शबर या शाबर कहना भी ठीक समझते हैं।

मुंडा भाषा-भाषी लोग आर्य और द्राविड़ लोगोंसे पूर्व भारतमें आये थे और चारों ओर फैले थे। बादके आनेवालोंने इनको मारकर भगा दिया, और ये केवल कुछ कोनोंमें रह गये। **मुंडाकी प्रधान विशेषताएँ**––(१) आकृतिकी दृष्टिसे ये भाषाएँ अश्लिष्ट योगात्मक हैं। तुर्कीकी भाँति इनका भी योग सरल और स्पष्ट होता है। (२) इनका ध्वनि-समूह आर्य भाषाओंकी भाँति घोष, अघोष, महाप्राण और अल्प-प्राणसे ही बना है पर उसमें कुछ विशेषताएँ

हैं। (क) उनकी महाप्राण ध्वनियोंमें हम-लोगोंकी अपेक्षा महाप्राणत्वकी मात्रा अधिक होती है। (ख) हमारे स्वरों, अर्द्धस्वरों और व्यंजनों (स्पर्श, ऊष्म, पार्श्विक तथा उत्क्षिप्त आदि)के अतिरिक्त वहाँ एक अन्य प्रकारकी ध्वनि पायी जाती है, जिसे अर्द्धव्यंजनकी संज्ञा दी जा सकती है। इन अर्द्धव्यंजनोंके उच्चारणमें साँस पहले क्लिक ध्वनियोंकी भाँति अन्दर खींची जाती है, और स्फोटके समय कभी-कभी इनमें अनुनासिकता भी आ जाती है। (३) पद बनानेमें प्रत्यय तथा उपसर्ग लगते हैं। कभी-कभी बीचमें मध्यसर्ग भी जोड़े जाते हैं (मंझी, मपंझी आदि उदाहरणोंके लिए देखिये आकृत मूलक वर्गीकरण)। (४) मूल शब्द अधिकतर दो अक्षरोंके होते हैं, जिनमें यदि अंत्याक्षर दीर्घ और आदिका अक्षर ह्रस्व हो तो स्वराघात अन्तिमपर और नहीं तो आदिपर होता है। (५) एक ही शब्द चीनीकी भाँति संज्ञा, क्रिया, विशेषण आदि सभीका यथास्थान काम देता है। (६) प्राचीन आर्य भाषाओंकी भाँति तीन वचन होते हैं। इसके लिए पुरुष वाचक (अन्यपुरुष)के रूप जोड़ दिये जाते हैं। जैसे खेरवारीमें--**हाड़** = आदमी। **हाड़कीन** = दो आदमी। **हाड़को** = कई आदमी। उत्तम पुरुषके द्विवचन और बहुवचनमें दो-दो रूप होते हैं। जैसे 'हम' के लिए 'अले' और 'अबोन' दो शब्द हैं।' अले'में केवल कहने वालेका बहुवचन है पर 'अबोन'में सुननेवाला भी शामिल है। यदि किसीसे कहें कि हम (अबोन) चलेंगे तो आशय यह हुआ कि सुननेवाला भी चलेगा। (७) लिंग दो होते हैं। स्त्रीवाचक और पुरुषवाचक शब्द जोड़-कर इनका बोध कराया जाता है। जैसे--**आडिया कूल** = बाघ। **एंगा कूल** = बाघिन। कुछ थोड़े प्रयोग हिन्दीकी भाँति 'ई' और 'आ' से भी बनते हैं--**कूड़ी** = लड़की। **कोड़ा** = लड़का। इसे आर्य भाषाओंका मुंडा भाषाओं-पर प्रभाव माना जाता है। शब्दोंका विभा-जन सजीव और निर्जीवपर आधारित है, जिनमें निर्जीव पदार्थ एक प्रकारसे स्त्रीलिंग समझे जाते हैं। लिंगका क्रियापर प्रभाव नहीं पड़ता। (८) इन भाषाओंमें दसतक संख्याएँ हैं। इनके अतिरिक्त बीसके लिए भी एक नाम है। इन्हीं ग्यारह संख्याओंकी सहायतासे जोड़कर, घटाकर या कुछ और तरीकोंसे सभी संख्याएँ प्रकट की जाती हैं। उदाहरणार्थ = **बारेआ** = दो। **पोनेआ** = चार। **गैल** = दस। **इसि** = बीस। इसी आधारपर--**गैल खन पोनेआ** (१० + ४ = चौदह (१४); **बारेआ कम इसि** (२०-२) = अठारह (१८); **पोनेआ इसि** (४ × २० = अस्सी (८०)। (९) क्रियामें 'अ'को जोड़े बिना वह पूर्ण नहीं समझी जाती। 'दल्केत'का अर्थ मारा हो गया पर इसे 'दल् केत अ' कहेंगे। संशयात्मक क्रियाओंमें यह 'अ' नहीं जोड़ा जाता। (१०) जोर देनेके लिए शब्दको या शब्दांशको दो बार कह देते हैं--**दल्** = मारना। **दल्-दल्** = बार-बार मारना। **ददल्** = खूब मारना। स्वरसे आरम्भ होनेवाले शब्दोंमें ज़ोर देनेके लिए बीचमें क् जोड़ दिया जाता है--**अगु** = ले जाना। **अक्गु** = बार-बार ले जाना। (११) प्रेरणार्थक क्रिया बनानेके लिए अंतमें 'ओची' प्रत्यय जोड़ा जाता है। (१२) क्रिया-रूपोंमें प्रत्यय जोड़कर कालों-का बोध कराया जाता है। (१३) इन भाषाओंमें अव्यय स्वतन्त्र शब्द हैं, किंतु अव्य-यअर्थके अतिरिक्त भी इनका अर्थ होता है। जैसे--"**मैंने-खन**' का अर्थ 'लेकिन' है; किंतु कभी-कभी 'यदि तुम कहो' भी इसका अर्थ हो जाता है। **विभाजन**--मुंडाके अंतर्गत **कूर्कू**, **खड़िया**, **जुआंग**, **सवर**, **गदबा** तथा **खेरवारी** ये छः भाषाएँ हैं। **खेरवारी**की बहुतसी बोलियाँ हैं, जिनमें **संताली या संथाली मुंडारी**, **भुमिज**, **बिर्हाड़**, **कोडा**, **हो**, **तूरी**, **असुड़ी**, **अगरिआ**, **ब्रिजिआ** तथा **कोरवा** प्रमुख हैं। मुंडा भाषा-भाषियोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार २८,७४,७५३ थी। **मुंडारी**

(दे०) खेखारीकी एक बोली है, जो, मुंडासे भिन्न है।

'खेरवारी'का क्षेत्र विन्ध्याचलके पूर्वी भाग में है। 'मुंडा' शब्द इसी 'मुंडारी'का है। 'संथाली' संथाल लोगोंकी भाषा है। संथाली-की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें किसी भी शब्दके आरम्भमें संयुक्त व्यंजन नहीं आता। कुर्कू मालवाके आसपास तथा मध्यप्रान्त और मेवाड़में बोली जाती है। **खड़िया** (राँचीके समीप), जुआंग (केंदूझर और ढेंकानाल राज्यमें) और **गदना** (आन्ध्र-की सीमापर) अब मरणोन्मुख हैं। जुआंग भाषा बिल्कुल असभ्योंकी है। इसके बोलने-वाले अभी हालतक नंगे रहते रहे हैं। **मुंडा-भाषाओंका अन्य भाषाओंपर प्रभाव**—चीनी परिवारपर विचार करते समय कहा जा चुका है कि उनकी कुछ भारतस्थ भाषाओं-पर मुंडाका प्रभाव पड़ा है। इसके फलस्वरूप उनमें (क) संख्याओंको बीसके आधारपर गिनना, (ख) द्विवचनका प्रयोग, (ग) उत्तम पुरुष सर्वनामके दो रूप, और (घ) जीव और निर्जीव शब्दोंमें भेद, आदि कितनी ही बातें आ गयी हैं। द्राविड़ परिवार भी इन-के प्रभावसे नहीं बच सका है। उदाहरणके लिए कुछ संज्ञाओंका क्रिया रूपमें प्रयोग, तथा उत्तम पुरुष बहुवचनके दो रूप आदि। मुंडाका आर्य परिवारपर तो और अधिक प्रभाव पड़ा है। यहाँ कुछ प्रमुख लिये जा सकते हैं—(क) वस्तुओंकी कोड़ियोंमें गिनती। (ख) बिहारी बोलियोंमें क्रियाकी जटिलता। (ग) मध्य प्रान्तकी मालव आदि कुछ बोलि-योंमें उत्तम पुरुष बहुवचनके 'हम' और 'अपन' तथा गुजरातीमें 'अमे' और 'आपणे' दो रूपों-का मिलना। (घ) भोजपुरी, बँगला आदि-की क्रियाओंमें लिंगसूचक उपकरणोंकी कमी। (ङ) 'कोड़ी' तथा 'गोड़'आदि कुछ मुंडा भाषाके शब्द ज्योंके त्यों हिन्दी आदि आधु-निक आर्य भाषाओंमें ले लिये गये हैं।

मुंडारी (mundari)—(१) **खेरवारी** (दे०)की, छोटानागपुरमें प्रयुक्त एक बोली। १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलने-वालोंकी संख्या ६,२४,५०६ थी। (२) रायगढ़में **असुरी** (दे०)केलिए प्रयुक्त एक नाम।

मुंडोलिंग्वे (mundolingue)—जूलियस लॉट द्वारा १८९०में निर्मित एक कृत्रिम भाषा।

मुंतुक (muntuk)—**चीनी परिवार** (दे०)-की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी-शाखाके, कुकी-चीन वर्गकी, मणिपुर (असम) में प्रयुक्त एक प्राचीन 'कुकी' भाषा।

मुआंग, मुआंङ् (muong)—आस्ट्रिक परिवारकी, दक्षिणी-पूर्वी एशियामें प्रयुक्त एक भाषा।

मुकुची (mukuchi)—**टिम्रोटे** (दे०) परि-वारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

मुक्त ध्वनिग्राम (free phoneme)—**विध्वनि** (दे०) के लिए पामर द्वारा प्रयुक्त नाम।

मुक्त पदक्रम (free word order)—भाषामें वाक्यके पदोंका ऐसा क्रम जो बहुत निश्चित न हो और जिसे परिवर्तित किया जा सके।

मुक्त प्रयोग (free varation)—**वैक-ल्पिक रूप** (दे०)या **वैकल्पिक ध्वनि** (दे०) आदिका निर्बन्ध या वैकल्पिक प्रयोग।

मुक्तबद्ध रूपग्राम—एक प्रकारका **रूप-ग्राम** (दे०)।

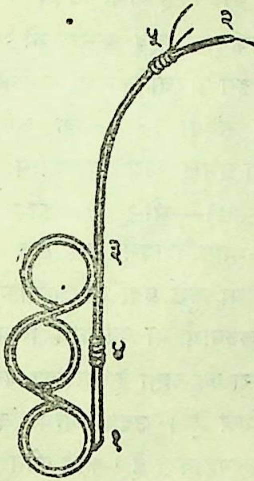
मुक्त बलाघात—**बलाघात** (दे०)का एक भेद।

मुक्त रूपग्राम—एक प्रकारका **रूपग्राम** (दे०)।

मुक्ताक्षर (free **या** open syllable)—**अक्षर** (दे०)का एक भेद।

मुख-मापक (mouth measurer)—ध्वनियोंके अध्ययनकी दृष्टिसे मुँहमें जीभकी स्थितिकी नापके लिए प्रयुक्त एक उप-करण। इसे ऐटकिन्सनने बनाया था, उसी आधारपर इसको प्रायः **'ऐटकिन्सनका मुख-मापक'** कहा जाता है। इसकी सहायतासे किसी ध्वनिके उच्चारणके समय जीभकी ऊँचाई, निचाई, उसका आगे या पीछे हटना आदि ठीक-ठीक नापा जा सकता है। १-२

धातुकी पतली नली है जो ऊपरकी ओर झुकी है। इसके भीतर एक पतला तार है जो दोके बाहर दिखाई पड़ रहा है। नीचे यह दस्तेसे जुड़ा है। इस दस्तेकी सहायतासे इस तारको



ऊपर नीचे किया जा सकता है। तारकी लम्बाई ऐसी होती है कि जब उसका निचला सिरा १के पास होता है, ऊपरी सिरा २के पास होता है। ५ एक दाँतरोक (tooth stop) है जिसमें बाहरकी ओर दो निकले भाग हैं। ये जब ऊपरकी ओर रहते हैं तो दाँत रोक नलीसे चिपका रहता है, जब नीचे कर दिये जाते हैं तो इसे खिसकाया जा सकता है। इसका ऊपरी भाग मुँहमें इतना डालते हैं कि दाँतरोक दाँतोंतक आ जाय, फिर दस्तेको ऊपर करके तारको जीभतक ले जाते हैं। और उसी स्थितिमें इसे निकाल-कर पहलेसे बने नक्शोंमें बिंदु लगा लेते हैं। इसी प्रकार दाँतरोक खिसका-खिस-काकर जीभकी स्थितिके ६-७ बिंदुओंका पता लगाकर जीभकी पूरी स्थितिका ठीक नक्शा खींच लेते हैं।

मुखर (sonorous)—(दे०) **मुखरता**।

मुखरता (sonority)—ध्वनिका ऊँचा होना। भाषा-विज्ञानमें उन ध्वनियोंको मुखर (sonorous) कहते हैं जो सहज रूपसे अपेक्षा-कृत अधिक ऊँची होती हैं। मुखरताकी दृष्टिसे ध्वनियोंके वर्गीकरणके लिए (दे०) **अक्षर**के अंतर्गत **शीर्ष** उपशीर्षक।

मुख-विवर (mouth cavity)—मुँहके, ओष्ठसे लेकर गलेतकके भागका, एक सामान्य नाम। भाषाके उच्चारणमें 'मुख-विवर'से बहुत सहायता मिलती है। (दे०) **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान**।

मुख्य उपवाक्य—(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक।

मुख्य कर्म—(दे०) **कर्म**।

मुख्य बलाघात—**बलाघात** (दे०) का एक भेद।

मुड़िया लिपि—**मोड़ी लिपी** (दे०) का एक अन्य नाम।

मुतोनिआ (mvtonia)—**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके, नागा वर्गकी, असम (फ्रान्टि-यर) में प्रयुक्त एक पूर्वीय नागा भाषा। इसे **मुथुन** भी कहते हैं।

मुथुन (muthun)—**मुतोनिआ** (दे०) का एक अन्य नाम।

मुदी (mudi)—**कोडा** (दे०) का एक दूसरा नाम।

मुयस्का (muyasca)—**चिब्चा-अरउअक** (दे०) वर्गकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसका अन्य नाम **मोस्का** है।

मुर (mura)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी है।

मुरसन (murasan)—**तमिल** (दे०) का एक अन्य नाम। वस्तुतः यह नाम मद्रासमें प्रयुक्त एक जातिका है जो तमिलके एक विकृत रूप-का प्रयोग करती है।

मुरिआ (muria)—**हलबी** (दे०) का एक रूप। यह कदाचित् 'मड़िया' या 'मरिया' ही है।

मुरिरे (murire)—**डोरस्क-गुअयनी** (दे०) भाषा-वर्गकी विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसके अन्य नाम **बुकुएटा** तथा **सबनेरो** है।

मुर्मी (murmi)—दार्जिलिंग, सिक्कम तथा नेपालमें प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०) की एक असार्वनामिक हिमालयी तिब्बती-बर्मी

भाषा।

मुलुंग (mulung)—**अंगवांकू** (दे०)का एक अन्य नाम।

मुल्की (mulki)—**थळी लहँदा** (दे०)का एक दूसरा नाम।

मुल्तानी—(१) **लहँदा** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक प्राचीनतम नाम। (२) **सराइकी हिंदकी** (दे०)का एक अन्य नाम। (३) **लहँदा** (दे०) की दक्षिणी बोली। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या२३,४२,९५४थी।

मुल्तानी लिपि—लहँदाकी प्रमुख बोली मुल्तानीकी लिपि। यह लिपि **लंडा लिपि** (दे०)से विकसित हुई है।

मुल्थानी (multhani)—**कनौरी** (दे०) का एक अन्य नाम।

मुल्लकुरुमन (mullakuruman)—**मलयालम** (दे०)का एक नाम। वस्तुतः यह नाम मद्रासकी एक जातिका है जो मलयालमके एक विकृत रूपका प्रयोग करती है।

मुवासी (muwasi)—**कुर्कू** (दे०)का छिंदवाड़ामें प्रयुक्त एक रूप।

मुशो (musho)—**मो-सो** (दे०)का एक अन्य नाम।

मुसलमानी—(१) (दे०) **जोलहा बोली**। (२) दक्खिनी (दे०)का एक अन्य नाम। (३) वीरभूमि (बंगाल)के मुसलमानोंमें प्रयुक्त एक विकृत **हिन्दोस्तानी** (दे०) (४) **पूर्वी बंगाली** (दे०)का एक नाम।

मुसु (musu)—**मो-सो** (दे०)का एकनाम।

मुस्किटो (muskito)—**मिस्किटो** (दे०)का एक नाम।

मुस्खोगी(muskhogi)—उत्तरी अमेरिकाके **मुस्खोगी** (दे०) भाषा-परिवारका एक वर्ग। इस वर्गको **क्रीक** भी कहते हैं।

मुस्खोगी परिवार (muskhogi)—**उत्तरी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारमें तीन वर्ग हैं: (१) **सेमिनोले**, (दे०) (२) **मुस्खोगी** (दे०) तथा (३) **नट्चेज** (दे०)। इन तीनों वर्गोंमें कुल मिलाकर लगभग १६ भाषाएँ हैं। मुस्खोगी या मुस्खोगियनका क्षेत्र, यूनाइटेड स्टेट ऑफ अमेरिकाके दक्षिणी भागमें बहुत बड़े भूभागमें था। कुछ लोग इस परिवारको पाँच वर्गोंमें भी बाँटते हैं तथा उपर्युक्तके अतिरिक्त **पस्कगुला** एवं **कसुलाको** भी इसमें रखते हैं। इस परिवारकी भाषाओंकी बोलनेवालोंकी संख्या ३०,०००के लगभग है। अब इनका प्रमुख क्षेत्र ओक्लहोम है।

मुस्सू (mussu)—**मो-सो** (दे०)काएक नाम।

मुहावरा—भाषाविशेषमें प्रचलित प्रयोग, वाक्यांश, या कुछ पदों या शब्दोंका समूह, जिसका लक्ष्यार्थ या व्यंग्यार्थ लिया जाता हो, मुहावरा कहलाता है। इसका अर्थ अभिधार्थसे भिन्न है। उदाहरणार्थ 'बाग़ बाग़ होना' एक मुहावरा है। कोई जीव बगीचा-बगीचा तो हो नहीं सकता, इस तरह अभिधार्थ यहाँ नहीं लिया जा सकता, अतः इसका लक्ष्यार्थ (परंपराके कारण) हुआ 'प्रसन्न होना'। 'मुहावरा' अरबीका शब्द है और इसका संबंध 'हे-वाव-र' मादेसे है। 'मुहावरा'का मूल अर्थ है 'बातचीत करना' या 'आपसमें बातचीत करना' या 'सवाल-जवाब' आदि। बादमें इस विशेष अर्थमें भी यह शब्द प्रयुक्त होने लगा। हिन्दीमें यह शब्द अरबीसे फ़ारसी होकर आया है। अंग्रेज़ीमें इसे इडिअम (idiom)कहते हैं। 'इडिअम' शब्द मूलतः ग्रीक इडिओमा (idioma) है जिसका अर्थ होता है 'अपना या विशेष बनाना'। सचमुच ही मुहावरे 'भाषाके अपने' या 'विशेषअर्थके वाचक' होते हैं। मुहावरे अर्थकी दृष्टिसे तो विशेषता रखते ही हैं, साथ ही व्याकरणकी दृष्टिसे भी कभी-कभी विशेषता रखते हैं। अंग्रेजीमें it was n't me आदि इसी प्रकारके मुहावरे हैं। ऐसे मुहावरे शुद्ध व्याकरणकी दृष्टिसे अशुद्ध होते हैं। इस तरह मुहावरोंके मूलतः **आर्थिक मुहावरे** [इनका संबंध **लक्षणा** (दे०) और **व्यंजना** (दे०) शब्द-शक्तियोंसे होता है] और **व्याकरणिक मुहावरे** दो भेद हो सकते हैं। पहला तत्त्वतः

आर्थिक दृष्टिसे अशुद्ध होता है और दूसरा व्याकरणकी दृष्टिसे। हिन्दीमें मुहावरेको **वाक्संप्रदाय, वाग्रीति, वाग्धारा, भाषा-संप्रदाय, वाक्-व्यवहार, वाक्-वैचित्र्य, वाग्योग, इष्ट प्रयोग, वाक्प्रचार, वाक्-पद्धति** तथा उर्दूमें **रोजमर्रा, इस्तलाह** आदि कहते हैं। संस्कृतमें मुहावरेका ठीक पर्याय नहीं मिलता। कुछ लोगोंने **वाग्योग**को माना है किंतु यह शब्द कदाचित् ठीक मुहावरेके अर्थमें नहीं था। भारतमें मुहावरोंकी परंपरा अत्यंत प्राचीन कालसे मिलती है। प्राचीन संस्कृत कवियोंके अनेक लाक्षणिक प्रयोग इस श्रेणीके हैं। वस्तुत: लाक्षणिक या व्यंजनात्मक प्रयोग जब किसी भाषाकी सामान्य संपत्ति बन जाते हैं तो वे मुहावरेकी संज्ञा पा जाते हैं। इस प्रकार मूलत: मुहावरे अनभिधात्मक प्रयोग ही हैं। आधुनिक भारतीय आर्सभाषाओं-के बहुतसे मुहावरे तो परंपरागत हैं जो संस्कृत आदिसे आये हैं (जैसे पार न पाना--सं० अंत: नहिं परिनसे; आँख जाती है--चक्षुर्गच्छति; कान लगता है--कर्णे लगति) और बहुतसे देशज हैं, अर्थात् देशज शब्दोंकी भाँति देशमें ही उत्पन्न हुए हैं (जैसे कचरकूट करना, उल्टे बाँस बरेली ले जाना आदि) मध्य युगमें फारसीसे भी काफी मुहावरे आये हैं। उदाहरणार्थ हिंदीमें पानी पानी होना (आब-आब शुदन), गला काटना (गर्दन ज़दन), हाथ खींचना (दस्त कशीदन), ठंडा होना (सर्द शुदन) या दिल लेना (दिल दादन) आदि। आधुनिक कालमें अंग्रेजीसे भी मुहावरे काफी आये हैं। हिंदीमें प्रकाश डालना (to throw light), एक शब्दमें (in a word), खाली समय (spare time), मरेको मारना (to slay the slain), आगसे खेलना (to play with the fire) तथा कुत्तेकी मौत मरना (to die like a dog) आदि अनेक मुहावरे इसी प्रकारके हैं। इस तरह आगमकी दृष्टिसे मुहावरोंके तीन भेद किये जा सकते हैं। (१) **परंपरागत,** (२) **देशज,** (३) **गृहीत** या **आगत**। विषयों आदिके आधारपर भी मुहावरोंके भेद-विभेद किये जा सकते हैं। जैसे (१) खेती संबंधी (हेंगा करना) मुहावरे, (२) कचहरी संबंधी (कचहरी झाँकना, दावा ठोकना) मुहावरे (३) शिक्षा संबंधी (रट्टा लगाना, नकल मारना) मुहावरे (४) युद्ध संबंधी (सफ़ेद झंडा दिखाना) मुहावरे (५) भोजन संबंधी (लंबे-लंबे हाथ मारना, साफ़ कर जाना) मुहावरे तथा (६) जुआ संबंधी (पंजा-सत्ता करना, पत्ते खोलना) मुहावरे आदि। इसी प्रकार मुहावरेमें प्रयुक्त प्रमुख शब्दोंके आधारपर भी मुहावरोंका वर्गीकरण किया जा सकता है। जैसे पानीके मुहावरे (पानी पानी होना, पानी उतरना आदि) आँख संबंधी (आँख मारना, आँख चरने जाना आदि) मुहावरे या नाक संबंधी (नाक जाना, नाक करना, नाक रहना आदि) मुहावरे।

प्राय: लोग मुहावरे और लोकोक्तियोंको एक समझते हैं। किंतु इन दोनोंमें अंतर है। मुहावरा वाक्यमें बिल्कुल मिल जाता है, किंतु लोकोक्तिकी अलग सत्ता रहती है। इसका कारण यह है कि अर्थकी दृष्टिसे लोकोक्ति अपने आपमें--सूत्र रूपमें ही सही--पूर्ण होती है, किंतु मुहावरेमें यह बात नहीं होती। उसे अन्य शब्दोंकी भी आवश्यकता होती है। साथ ही मुहावरा हमारी अभिव्यक्तिका अंग होता है, किंतु लोकोक्ति उस रूपमें अंग नहीं होती। उससे प्राय: किसी बातका समर्थन या खंडन आदि ही किया जाता है। इन अंतरोंके बावजूद कभी-कभी दोनों एक दूसरेसे पर्याप्त निकट होते हैं और कभी-कभी तो लोकोक्तियोंका क्रिया आदि जोड़कर मुहावरेके रूपमें भी प्रयोग होता है। जैसे 'नौ दिन चले अढ़ाई कोस' करना या 'आँखें कहीं और दिल कहीं और होना' आदि। मुहावरे जब प्रचलनके कारण बहुत घिसपिट जाते हैं, तो धीरे-धीरे उनका मुहावरापन समाप्त हो जाता है और वे सामान्य प्रयोग

समझे जाने लगते हैं। हर भाषाके अधिकांश प्रयोग सच्चे अर्थोंमें मूलतः मुहावरे होते हैं। प्रयोगाधिक्य उन्हें विशिष्ट प्रयोगकी भूमिसे उतारकर सामान्य प्रयोगकी भूमिपर रख देता है। भाषण देना, परीक्षा देना, कसम खाना आदि इसी प्रकारके हैं।

मुह्ती (muhti)— **मोह्तेइक** (दे०) का एक अन्य नाम।

मुह्तेइक(muhteik)—(१) **पोकरेन** (दे०)-का एक रूप (२) **मोह्तेइक** (दे०)का एक नाम।

मुह्सो(muhso)—**मो-सो** (दे०)का एक दूसरा नाम।

मूजुंग (moojung)—**चांग**(दे०)का एक और नाम।

मूर्त शब्द(concrete term)—ऐसा शब्द जो किसी मूर्त वस्तुका द्योतक हो। जैसे चावल, घोड़ा, मकान। (दे०) **अमूर्त शब्द**।

मूर्द्धन्य (cerebral, lingual) —**उच्चारण-स्थान**(दे०)के आधारपर व्यंजन ध्वनियोंका एक भेद। 'मूर्द्धन्य' उन ध्वनियोंको कहते हैं, जिनके उच्चारणमें मूर्द्धासे सहायता ली जाती है। संस्कृतमें टवर्ग, ऋ, ष आदि मूर्द्धन्य थे— 'ऋटुरषाणां मूर्द्धा'। हिंदीमें टवर्ग यद्यपि पुराने-नये सभी लेखकों द्वारा मूर्द्धन्य कहा गया है, किंतु वस्तुतः उसका मूर्द्धन्य उच्चारण बहुत कम होता है। वह काफी आगे खिसक आया है और प्रायः कठोर तालव्य या तालव्य हो गया है। 'टूटा' जैसे शब्दोंमें तो वह वर्त्स्य है। मराठी तथा चीनीमें कुछ ध्वनियाँ मूर्द्धन्य हैं। संस्कृतके टवर्गके उच्चारणमें जीभकी नोकको उलटकर मूर्द्धासे उसका स्पर्श कराते थे। 'मूर्द्धन्य'को अंग्रेजीमें **केक्यूमिनल**(cacuminal)भी कहा गया है। अब इसे retroflex कहा जाता है, जिसके लिए हिन्दी पर्याय **प्रतिवेष्ठित, पश्चोन्मुख** या **पश्चाद्वर्ती** हो सकते हैं। डॉ॰ डैनियल जोन्स आदि प्रायः सभी विद्वान् इसे retroflex कहते हैं। किन्तु तत्त्वतः यह नाम स्थानपर आधारित न होकर प्रयत्नपर आधारित है, अतः इसका प्रयोग इस प्रसंगमें बहुत उचित नहीं कहा जा सकता।

मूर्द्धा (cerebral)—तालुके बीचका सबसे ऊपरी भाग 'टवर्गीय' ध्वनियाँ इसीसे उच्चरित होती हैं। जो ध्वनियाँ यहाँसे उच्चरित होती हैं, उन्हें **मूर्द्धन्य** कहते हैं। (दे०) **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान**।

मूल उद्देश्य—**उद्देश्य** (दे०)में विस्तारको छोड़कर शेष भाग, अर्थात् वाक्यका कर्ता।

मूलकाल—(दे०)काल। (१) तीन मूल कालों (वर्तमान, भूत, भविष्य)के लिए एक सामूहिक नाम। (२) ऐसी काल-रचना जिसमें सहायक क्रिया, कृदंत आदिसे सहायता न ली गयी हो, अपितु जो तिङन्ती काल हो। जैसे चलो।

मूलक्रिया—(दे०)काल तथा **क्रिया**।

मूल क्रियाविशेषण—(दे०)**क्रियाविशेषण**।

मूल चिह्न (redical)—(१)चीनी लिपिके मूल भावलिपि-चिह्न। इनकी संख्या २१४ है। (२) अन्य भी किसी लिपिके मूल चिह्न।

मूल दंत्य—एक प्रकारकी **दंत्य**(दे०) ध्वनि।

मूल धातु—(दे०)**धातु**।

मूल ध्वनि (simple sound)—वह ध्वनि, जिसके उच्चारणमें करण या उच्चारण-अवयव एक अचल या निश्चित स्थितिमें रहते हैं। क, प, म आदि सभी मूल ध्वनियाँ इसी प्रकारकी होती हैं। इन्हें **सामान्य ध्वनि** या **असंयुक्त ध्वनि** भी कहते हैं।। (दे०) **'श्रुति-ध्वनि'** तथा **संयुक्त ध्वनि**। डैनियल जोन्स **मूल ध्वनिका** प्रयोग थोड़े भिन्न अर्थमें करते हैं। उनके अनुसार इसमें संघर्षी, अनुनासिक, पार्श्विक, कंपित, स्वर आदि ध्वनियाँ आती हैं।

मूल ध्वनिग्राम(primary phoneme)—सामान्य ध्वनिग्राम। ऐसा ध्वनिग्राम जो दो ध्वनियोंका योग न हो।

मूलभाषा (parent language)—**भाषा**-का एक रूप। ऐसी आरंभिक या प्रारंभकी भाषा जिससे अनेक भाषाएँ-बोलियाँ आदि विकसित होती हैं। उदाहरणार्थ 'मूल द्रविड़'

मूल भाषा है जिससे वर्तमान सभी द्रविड़ भाषाएँ और बोलियाँ विकसित हुई हैं। (दे०) **भाषाके त्रिविध रूप**।

मूलभूत अवयव (ultimate constituents)—किसी रचना (वाक्य, वाक्यांश या शब्द) के लघुतम अवयव 'मूलभूत अवयव' कहलाते हैं। 'राम आया है'के मूलभूत अवयव 'राम', 'आया' और 'है' हैं। (दे० निकटस्थ अवयव) शब्द या रूपको तोड़कर भी उसके मूलभूत अवयव दिखलाये जा सकते हैं। जैसे 'रामानुज'के 'राम' और 'अनुज'।

मूल विधेय—विधेय (दे०) में विस्तारको छोड़कर शेष भाग, अर्थात् वाक्यकी क्रिया, (दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक।

मूल विधेयके विस्तार—(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक।

मूल व्यंजन—ऐसा व्यंजन जो एक या असंयुक्त हो। जैसे क, प। इसके विरुद्ध क्क द्वित्व व्यंजन तथा प्त संयुक्त व्यंजन हैं।

मूल शब्द (base, stem, radical)—**धातु** (दे०) या **प्रातिपदिक** (दे०) जिनमें, प्रत्यय विभक्ति आदि जोड़कर कारक या काल आदिके रूप बनाये जाते हैं। कुछ लोगोंने 'प्रत्यय'को भी मूलशब्दके अंतर्गत माना है। मूल शब्दको वैज्ञानिक स्तरपर अर्थके स्तरपर भाषाकी लघुतम इकाई कहा जा सकता है।

मूल सम्बन्धसूचक अव्यय—(दे०) **सम्बन्धसूचक अव्यय**।

मूल सार्वनामिक विशेषण—(दे०) **विशेषण**।

मूल स्वर (monophthong)—ऐसा स्वर जो दो या अधिक स्वरोंके योगसे न बना हो। इसके उच्चारणमें जीभ अचल या स्थिर रहती है। यह **संयुक्त स्वर** (दे०)की भाँति चल या गतिशील नहीं रहती। अ, इ, उ आदि मूल स्वर हैं। (दे०) **स्वरोंका वर्गीकरण**में **भानस्वर** उपशीर्षक।

मूलस्वर किरण—(दे०) **असंयुक्त स्वर किरण**।

मूलावस्था—(दे०) **विशेषण**।

मृगचक्रलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

मृत भाषा (dead language या extinct language)—ऐसी भाषा जिसका प्रयोग अब न होता हो, जैसे 'हिट्टाइट'।

मेंगवारी—राजस्थानी (दे०)का, सिंधकी मेंगवार नामक जातिमें प्रयुक्त एक रूप।

मेंडे (mende)—**सूडान वर्ग** (दे०)की नाइजर नदीके पास प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा।

मेंडे लिपि—अफ्रीकाके मेंडे लोगोंमें प्रयुक्त एक अक्षरात्मक लिपि।

मेंदानी (mendani)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **सिंधी** (दे०)का पूनामें प्रयुक्त एक रूप।

मेंफाइट (memphite)—**कॉप्टिक** (दे०) भाषाकी एक बोली।

मेईथेई—मैतेइ (मणिपुरी) (दे०)का एक अन्य नाम।

मेईलेई (mei lei) **मैतेइ** (दे०)का एक 'थादो' नाम।

मेउंग्स (meungsa)—**मैंग्थ** (दे०)का एक दूसरा नाम।

मेकी (meke)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **हिन्दी** (दे०)का एक रूप।

मेको (meke)—मध्य अमेरिकाके **ओटोमि** (दे०) परिवारकी एक भाषा। इसके अन्य नाम **क्सोनाज़** तथा **टोनाज़** हैं। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

मेक्रानी (mekrani)—**मकरानी** (दे०)का एक अन्य नाम।

मेक्ले (mekle)—**मैतेइ** (दे०)का एक दूसरा नाम।

मेखली (mekhali)—**मैतेइ** (दे०)का एक अन्य नाम।

मेगलेनो-रूमानियन—रूमानियन (दे०) भाषाकी एक बोली।

मेग्यव (megyaw)—**फोन** (दे०)की एक बोली।

मेच (mech)—गोलपीरा (असम), कूचबिहार तथा जलपाईगुड़ीमें प्रयुक्त **बड़** (दे०) की एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके

अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ९३,-९११ थी ।

मेजू (meju)--**मीजू मिश्मी** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

मेज़ोवियन(mazovian)--**पोलिश**(दे०)की एक बोली जो मेज़ोवियामें बोली जाती है ।

मेटालिंग्विस्टिक (meta-linguistics)--इस शब्दका प्रयोग एकाधिक अर्थोंमें हो रहा है : (क) ट्रेगरने इसका प्रयोग अर्थ-विज्ञानके लिए किया है, क्योंकि वे उसे भाषा-विज्ञानसे बाहर 'बादका' या 'परे' मानते हैं । अंग्रेजी 'मेटा' का अर्थ 'बादका', 'परे' या बाह्य' होता है । इस रूपमें इसे हिन्दीमें **बाह्य भाषा-विज्ञान** या **परभाषा विज्ञान** कह सकते हैं । (ख) कुछ लोग इसका प्रयोग भाषा-विज्ञान-के उस अंगके लिए करते हैं ,जिसमें संस्कृति-के अन्य अंगोंसे भाषाके संबंधका अध्ययन किया जाता है । इस रूपमें इसे हिन्दीमें **सांस्कृतिक भाषा-विज्ञान** कह सकते हैं । (ग) कुछ अन्य लोगोंने इसका प्रयोग भाषा-के दार्शनिक स्वरूपके विवेचनके लिए किया है । इस रूपमें इसे हिन्दीमें **भाषा-दर्शन** कह सकते हैं । रुन्स, मॉहिस तथा कारनैप आदि तर्कशास्त्रमें इसका प्रयोग एक चौथे अर्थमें करते हैं । यहींसे लेकर भाषा-विज्ञान-वेत्ता इसका प्रयोग भाषाके अध्ययनकी टेक-नीक या शिल्प-विधिके अध्ययनके लिए कर रहे हैं । इसीके अंतर्गत उस भाषा तथा पारि-भाषिक शब्दावलीका भी अध्ययन आता है, जिसका भाषाके अध्ययनमें प्रयोग होता है । इसे कुछ लोग वहिर्भाषा-विज्ञान (exolin-guistics),कुछ लोग मेटारिसर्च (meta-research) तथा कुछ लोग मेटास्प्रॉग (metasprog) भी कहते हैं ।

मेन (men)--**यिद्दू** (दे०)का एक रूप ।

मेनहोफ़ नियम (meinhof law)--बांटू वर्गकी भाषाओंमें, नासिक्य व्यंजनोंके विषमी-करण विषयक एक ध्वनिनियम ।

मेनोमिनी (menomini)--**केन्द्रीय अल-गोन्किन** (दे०)वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

मेमानी (memani)--**गुजराती** या **सूरती गुजराती** (दे०)का सूरत (बंबई)में प्रयुक्त एक रूप । मेमन जाति द्वारा बोली जानेके कारण यह नाम पड़ा है । मेमन लोगों द्वारा प्रयुक्त अन्य भाषाओंको भी 'मेमनी' या 'मेमानी' कहते हैं ।

मेमे (meme)--**दिगारू मिश्मी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मेर (mer)--**लुशेई** (दे०)का एक नाम ।

मेरवाड़ी-'पूर्वी मारवाड़ी'की उपबोली **मेवाड़ी** (दे०)का एक स्थानीय रूप जो उत्तरी पूर्वी मेरवाड़में बोला जाता है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या ५४,५०० थी ।

मेरवाड़ी मारवाड़ी--**मारवाड़ी** (दे०)का मेरवाड़ (राजस्थान)में प्रयुक्त एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १७,०००थी ।

मेरोइतिक लिपि (meroitic script)--प्राचीन इथियोपिअन राज्यकी लिपि । इसका काल लगभग पहली सदीसे चौथी सदीतक है । यह लिपि अर्द्धवर्णात्मक थी, तथा इसमें कुल २३ वर्ण थे ।

मेरो विंजिअन(merovingian)--प्राचीन रोमन लिपिसे विकसित लिपि । **जर्मन लिपि** (दे०) इसीसे निकली है ।

मेर्गुई--'मेर्गई' नामक स्थानमें प्रयुक्त **बर्मी** (दे०)की एक बोली । बर्माके भाषा-सर्वेक्षण-के अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या, लगभग ५०० थी ।

मेलेनेशियन परिवार--(दे०) **मलेनेशियन परिवार** ।

मेल्चोरा (melchora)--**चिब्चा-अरउअक** (दे०) वर्गकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

मेवाड़ी--पूर्वी मारवाड़ीका एक स्थानीय रूप जो मेवाड़में (केवल दक्षिणी तथा पश्चिमी दक्षिणी भाग छोड़कर) और उसके आस-पास बोला जाता है । इसके प्रमुख स्थानीय

रूप मेरवाड़ी, सरवाड़ी तथा खरोड़ी (दे०) हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १३,८७,१०० थी। (दे०) **मारवाड़ी** ।

मेवाती––उत्तरी पूर्वी राजस्थानीकी एक बोली। इससे पश्चिमी हिन्दीसे भी पर्याप्त समानता है। इसीलिए कुछ लोग इसे पश्चिमी हिन्दीके अंतर्गत रखनेके पक्षमें हैं। (दे०) **राजस्थानी** । जयपुर तथा नाभाके लोग 'मेवाती'को 'बिघोताकी बोली' कहते हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार परिनिष्ठित मेवाती बोलनेवालोंकी संख्या २,५३,८०० थी, तथा इसके अन्य रूपोंको मिलाकर कुल बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ७,५८,६०० थी। मेवातीका क्षेत्र प्रमुखतः अलवर, भरतपुर, गुड़गाँवके आसपास है। इस क्षेत्रका एक भाग 'मेओ' लोगोंके निवासके कारण 'मेवात' कहलाता है, और उसी आधारपर इसे 'मेवाती' नाम दिया गया है। यह नाम नया नहीं है। १८वीं सदीमें लिखित 'आठ देसरी गूजरी'में भी इसका नाम आया है। 'मेवाती'की राजस्थानीका ब्रजभाषामें विलीन हुआ रूप कहा गया है, किंतु वस्तुतः बात कदाचित् उलटी है। इसलिए स्थान-स्थानपर जयपुरी तथा अहीरवाटी आदिका प्रभाव पड़ा है। इन्हीं प्रभावोंके आधारपर इसकी चार उपबोलियाँ हैं––परिनिष्ठित या शुद्ध मेवाती, राठी मेवाती, नहेड़ा मेवाती और कठेर मेवाती विकसित हो गयी हैं। 'गुजरी'को भी इसीका एक उपरूप माना जाना चाहिये। मेवातीमें साहित्य रचना लगभग नहीं हुई है। लोक-साहित्य अवश्य पर्याप्त है।

मेवास(mewas)––उत्तरी-पश्चिमी खानदेशमें प्रयुक्त एक **भील**(दे०) भाषा।

मेस(mes)––**मेच** (दे०)का एक अन्य नाम।

मेसेनिअन––ग्रीककी एक **डोरिक** (दे०) बोली।

मेहरी(mehari)––**हलबी** (दे०)का एक रूप।

मेहिनूक (mehinaku)––दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार**(दे०)की एक भाषा। इसका क्षेत्र उत्तरी आमेजन है।

मैंक्स––भारोपीय परिवारकी केल्टिक शाखाकी एक भाषा जो मान द्वीप (इंगलैंडके पास) में बोली जाती है। यह अब समाप्तप्राय है।

मैंगथ (maingtha) उत्तरी शान स्टेटमें प्रयुक्त एक मिश्रित **बर्मी** (दे०) भाषा। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या, २,७८१ थी।

मैंडेयन लिपि––**आरमेइक लिपि**(दे०)से निकली एक लिपि, जिसका क्षेत्र बेबिलोनिया था।

मैकडो-रूमानियन(macedo-romanian)––**रूमानियन** (दे०)की, मैकडूनियामें थोड़ेसे लोगों द्वारा प्रयुक्त एक बोली।

मैक्वारी––**आस्ट्रेलियन परिवार** (दे०)की एक प्रमुख भाषा।

मैडू (maidu)––**कैलीफ़ोर्निअन** (दे०) वर्गकी एक अमेरिकी भाषा। इसका अन्य नाम **पुजुनन** भी है। इस भाषाकी प्रमुख बोलियाँ तीन हैं।

मैतरिआ (maitaria)––**राभा** (दे०)की, गारो पहाड़ियों(असम)में प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १००० थी।

मैतेइ––मणिपुर(असम) में सबसे अधिक रहनेवाले **मीतेइ** जातिके लोग हैं। उन्हींके नामके आधारपर मणिपुरकी भाषा 'मैतेइ' या 'मैतै' कहलाती है। इसीको अंग्रेज लेखकोंने गलतीसे 'मेइथेइ' या 'मेइतेइ' लिखा है। 'मैतेइ' भाषाकी अपनी लिपि **मैतेइ मयेक** है। इसका प्राचीन साहित्य इसी लिपिमें लिखा गया था, किंतु शांतीदास नामक एक बंगाली रामानंदी धर्म-प्रचारकने उसका अधिकांश भाग गरीबनिवाज नामक राजाके राजत्व-कालमें जला दिया। कुछ भाग शेष भी है। यहाँ कुछ दिन पहलेसे बंगाली लिपि भी प्रचलित हो गयी है। किंतु अब मीतेइ लोग बंगाली लिपिके विरोधी हो गये हैं और वे या तो मैतेइ मयेकको या देवनागरीको अपनाना चाहते हैं। मैतेइको **मेईथेई, मेइतेइ, कथे, पोण्णा, मनिपुरी, मणि-**

पुरी, मोग्लइ, मेई-लेई, मिताई, मइ-तई, मइहतई, कते, मेक्ले, मेखली आदि कई नामोंसे पुकारा जाता है। इसमें ऐतिहासिक ग्रंथ १५वीं सदीसे मिलते हैं। आधुनिक कालमें साहित्य भी लिखा गया है। इसके बोलनेवालोंकी संख्य ४ लाखसे ऊपर है। यह भाषा चीनी परिवारके तिब्बती- बर्मी उपपरिवारकी असमीबर्मी शाखाकी एक कुकीचिन भाषा है।

मैतेइ मयेक लिपि––मणिपुरमें प्रयुक्त मैतेइ (मेइ थेई या मेइतेइ) भाषाकी अपनी प्राचीन लिपि। मैतेइ भाषामें 'मयेक'का अर्थ 'लिपि' होता है। बंगला लिपिके प्रचार-के कारण मैतेइ मयेकका प्रचार बीचमें कम हो गया था, किंतु अब फिर इसका प्रचार बढ़ रहा है। इसे मेइतेइ या **मणिपुरी लिपि** भी कहते हैं।

मैथिली––हिन्दी प्रदेशकी उपभाषा **बिहारी** (दे०)की एक बोली। मैथिली नाम उस क्षेत्रके नाम 'मिथिला'से सम्बद्ध है। मिथिला शब्द भारतीय साहित्यमें बहुत पहलेसे मिलता है। याज्ञवल्क्य स्मृति तथा वल्मीकि रामायणमें भी इसका उल्लेख मिलता है। 'मिथिला' शब्दकी व्युत्पत्ति अनिश्चित है। एक मतानुसार यहाँके एक प्राचीन राजाका नाम 'निथि' था। उन्हींके आधार-पर यह 'मिथिला' कहलाया। एक दूसरा मत उणादि सूत्रकारका है। वे इसे 'मंथ्' धातु (= मथना)से सम्बद्ध मानते हैं। कुछ लोग इसीसे संबद्ध कल्पना यह भी करते हैं कि पहले यहाँ समुद्र था और समुद्र-मंथन यहीं हुआ था, अतः यह मिथिला कहलाया। एक चौथे मतके अनुसार 'मिथिला' नामक ऋषिसे इसका सम्बन्ध है, इसी आधारपर यह प्रदेश 'मिथिला' कहलाया। एक आधु-निक मत यह भी है कि 'मिथ'का अर्थ है 'एक साथ' या 'मिला हुआ'। यह प्रदेश तीन प्राचीन छोटे-छोटे राज्यों (वैशाली, विदेह तथा अंग)का मिला रूप है, अतः इसे मिथिला कहा गया है। छठा मत शाक-टायनका दिया जा सकता है, जिनके अनु-सार 'मिथिला'का अर्थ है, 'वह देश जहाँ शत्रुओंका दमन हो'। सत्य यह है कि ये सभी मत अनुमान मात्र हैं। इनमें पुष्ट प्रमाणोंपर कोई भी आधारित नहीं है। मैथिली भाषाके लिए प्राचीन नाम 'देसिल बअना' (विद्यापति) है। इसका एक अन्य नाम **'तिरहुतिया'** (दे०) भी मिलता है। यह नाम भी 'मैथिली' नामसे पुराना है। इसका प्रथम उल्लेख १७७१में तिरुतियन रूपमें (बेलिगत्ती लिखित 'अल्फाबेटुम ब्राह्मनिकुम'की अम्दुजीकी भूमिकामें) मिलता है। 'मैथिली' नामका प्रयोग आधु-निक कालका है। सर्वप्रथम १८०१में कोल-ब्रुकने इस नामका उल्लेख अपने लेखोंमें किया है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या एक करोड़से कुछ ऊपर थी। 'मैथिली'का क्षेत्र बिहारके उत्तरी-पूर्वी भागमें पूर्वी चंपारन, मुजफ्फरपुर, मुंगेर, भागलपुर, दरभंगा, पुर्निया तथा उत्तरी संथाल परगना है। इसके अतिरिक्त यह माल्दा और दिनाज-पुरमें तथा भागलपुर एवं तिरहुत सब-डिविजनकी सीमाके पास नेपालकी तराईमें भी बोली जाती है। **उत्तरी मैथिली** (दे०), **दक्षिणी मैथिली** (दे०), **पूर्वी मैथिली**

(दे०), **पश्चिमी मैथिली** (दे०), **छिका-छिकी** (दे०) तथा **जोलहा बोली** (दे०) ये छः मैथिलीकी प्रमुख उपबोलियाँ हैं। कुछ लोग पूर्वी सीतापुर तथा मधुबनी सब-डिविजनकी निम्न श्रेणीकी जातियोंकी बोलीको 'केन्द्रीय (जन साधारणकी) '**मैथिली**'का नाम देते हैं। इस प्रकार इसकी बोलियोंकी संख्या सात हो जाती है। इनमें 'उत्तरी मैथिली' ही 'मैथिली'का परिनिष्ठित रूप है, जो उत्तरी दरभंगा तथा आसपासके ब्राह्मणोंमें विशेष रूपसे प्रयुक्त होता है। बिहारी बोलियोंमें केवल 'मैथिली' ही साहित्यिक दृष्टिसे संपन्न है। इसके प्रसिद्ध कवि विद्यापति हिंदीकी विभूति हैं। यहाँके अन्य साहित्यिकोंमें उमापति, नंदीपति, रामापति, महीपति तथा मनबोध झा आदि प्रधान हैं। अब 'मैथिली' भाषाभाषी, साहित्यके क्षेत्रमें प्रायः खड़ी बोली हिन्दी-का प्रयोग कर रहे हैं, किंतु कुछ लोग मैथिलीमें भी लिख रहे हैं।

मैथिलीकी उत्पत्ति मागधी अपभ्रंशके मध्य या केन्द्रीय रूपसे मानी जाती है। मैथिलीके लिए तीन लिपियोंका प्रयोग होता है। मैथिल ब्राह्मणोंमें मैथिली लिपि प्रचलित है, जो बंगला असमीसे बहुत मिलती है। अन्य जातियोंके लोग स्थानीय रूपांन्तरों-के साथ कैथीका प्रयोग करते हैं। साहित्यिक कार्योंके लिए नागरीका प्रयोग होता है। अब नागरीका प्रचार धीरे-धीरे बढ़ रहा है।

मैथिली लिपि—मिथिलामें प्रचलित एक लिपि। यह लिपि बँगला लिपिसे बहुत साम्य रखती है। इसका विकास पुरानी नागरी लिपिके पूर्वी रूपसे हुआ है। कुछ लोग कुटिल लिपिसे मैथिली, बँगला तथा असमीकी उत्पत्ति मानते हैं। मिथिलाके पुराने संस्कृत ग्रंथ इसी लिपिमें मिलते हैं।

मैदानी काचरी (plains kachari)—**बड़** (दे०)का एक अन्य नाम।

मैनिकेयन—**आरमेइक लिपि** (दे०)से निकली एक लिपि, जिसका क्षेत्र पश्चिमी एशिया, दक्षिणी यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका था।

मैपुरे (maipure)—दक्षिणी अमेरिका-के **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा। इसका क्षेत्र उत्तरी अमेजन तथा ओरीनो-को है। यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

मैयाँ (maiya)—**कोहिस्तानी** (दे०)की कोहिस्तानमें प्रयुक्त एक बोली।

मैया—**मैयाँ** (दे०)का एक अन्य नाम।

मैरिएँडिनिअन—अज्ञात परिवारकी एक विलुप्त **एशियानिक** (दे०) भाषा।

मैरिसन (marisan)—भारोपीय परिवार-की एक विलुप्त (इटैलिक शाखाकी) भाषा। यह **सैबैलिअन** (दे०)के अंतर्गत आती है।

मैरुसिनिअन (marrucinian)—भारो-पीय परिवारकी एक विलुप्त (इटैलिक शाखाकी) भाषा। यह सैबेलिअनके अंतर्गत आती है।

मैलाप्राप प्रवृत्ति—**मैला प्रापिज्म** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

मैलाप्रापिज्म (malapropism)—या **मैला प्राप प्रवृत्ति**का अर्थ है सुन्दर तथा बड़े शब्दोंके प्रयोगकी लालचसे शब्दोंका अनुचित प्रयोग करना। इसका नाम शेरि-डानकी पुस्तक 'द राइवल्स' (the rivals)के एक पात्र श्रीमती मैलाप्राप पर आधारित है, जिन्होंने इस प्रकार शब्दोंके बहुतसे दुष्प्रयोग किये हैं। आज हिन्दीमें भी ऐसे प्रयोग बहुत हो रहे हैं। लोग उपसर्गोंका मनमाना प्रयोग कर रहे हैं। ज्ञानके स्थानपर अभिज्ञान, क्रान्तिके स्थानपर उत्क्रान्ति, संधिके स्थानपर अभि-संधि इत्यादि अनेक उदाहरण लिये जा सकते हैं, जिनके अर्थ यथार्थतः दूसरे ही हैं।

मैवाँहीं (maiwarhi)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार, खानदेशमें प्रयुक्त एक **भीली** (दे०) भाषा। इसका अब पता नहीं है।

मोंग-लोंग (mong long)—**शांगले** (दे०)-का एक रूप।

मोंग ल्वे (mong lwe)—बर्माकी एक

बोली । इसे ग्रियर्सन **'व'** (दे०)से सम्बद्ध मानते हैं ।

मोंग्स (mongsa)—**मैंग्थ** (दे०)का एक और नाम ।

मोंग्सेन (mongsen)—**आओ-नागा** (दे०)की, असम (नागा पहाड़ियों)-में प्रयुक्त एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ६,२०० थी ।

मो (mo)—**सूडान वर्ग** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा । इसे **मोले** (mole) भी कहते हैं । इसका क्षेत्र मोस्सीमें है ।

मोआबाइट लिपि (moabite)—**कैनानाइट लिपि** (दे०)का एक रूप ।

मोएबाइट (moabite)—सामी परिवारके **कैनानाइट** (दे०)वर्गकी एक विलुप्त भाषा ।

मोकी (moki)—**होपी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मोकोवी (mokovi)—**गुअयकुरु** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा । इसे **मोकोबी** भी कहते हैं ।

मोक्येलुम्नन (moquelumnan)—**मिवोक** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मोक्सो (moxo)—दक्षिणी अमेरिकाके-**अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा ।

मोग्लइ (moglai)—**मैतेइ** (दे०)का एक 'बंगाली' नाम ।

मोग्ली (mogli)—१९२१की जनगणनाके अनुसार हैदराबादमें **हिन्दोस्तानी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

मोघिआ (moghia)—(१) (पंजाब-में) **बाओरी** (दे०) का एक रूप । (२) उड़ीसा तथा अन्य स्थानोंमें मोघिया लोगों द्वारा प्रयुक्त **उड़िया** (दे०)का एक नाम ।

मोचिका (mochika)—दक्षिणी अमेरिकाके **युंका** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त भाषा । इस भाषाको **चिंचा** भी कहते हैं ।

मोज़रैबिक (mozarabic)—भारोपीय परिवारकी एक विलुप्त रोमांस बोली जो दक्षिणी तथा मध्य स्पेनमें ९वीं सदीसे १५वींतक बोली जाती थी ।

मोजुंग (mojung)—**चांग** (दे०) का नाम ।

मोडी (modi)—**मराठी** (दे०) का मद्रासमें प्रयुक्त एक नाम । यह नाम मोड़ी लिपिके कारण पड़ा ज्ञात होता है ।

मोड़ी लिपि—महाराष्ट्रकी एक प्राचीन लिपि । लोगोंका कहना है कि बालाजी आवाजीने १७वीं सदीमें इसे बनाया, किंतु यथार्थतः यह और पहलेकी लिपि है । इसका प्रयोग १५०७ तक मिलता है । यह पुरानी देवनागरी लिपिसे निकली है । यों गुजराती, तेलुगु, कन्नड़का भी इसके कुछ स्थानीय रूपोंपर प्रभाव है । जल्दी लिखनेके लिए इसके अक्षरोंके रूप तोड़े-मरोड़े गये हैं, इसी कारण इसका नाम मोड़ी है । इसका प्रयोग महाराष्ट्रके अतिरिक्त राजस्थान आदिमें भी कुछ स्थानोंपर होता है । इसे **मुड़िया लिपि** भी कहते हैं ।

मोत्ले (motle)—**मोथइ** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मोथइ (mothai)—**व** (दे०)का, उत्तरी शान स्टेटोंमें प्रयुक्त एक रूप । बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १०,४१४ थी ।

मोन—आस्ट्रोएशियाटिक परिवारकी **मोन-ख्मेर** (दे०) शाखाकी दक्षिणी बर्मामें प्रयुक्त एक भाषा । बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,२४,४२४ थीं ।

मोनख्मेर—**आस्ट्रिक परिवार** (दे०)के, **मोन पलौंग, वा, यंगलम, दनव, खासी, नीकोबारी** आदि भाषाओंका एक सामूहिक नाम । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इस वर्ग या शाखाके बोलनेवालोंकी संख्या १,७७,२९३ थी ।

मोनगोयो (mongoyo)—**कमाकन** (दे०)-का एक दूसरा नाम ।

मोनशोको(monshoko)—**कमाकन** (दे०)

का एक दूसरा नाम ।

मोनोकूतोबा (monokoutouba)—फ्रांसीसी विषुवत रेखीय अफ्रीकामें एक बोल चालकी भाषा जो वहाँकी कई बोलियोंके मिश्रणसे बनी है ।

मोनो-पविओट्सो (mono-paviotso)—प्लेटो (दे०) उपवर्गकीएक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इस भाषाकी कई बोलियाँ हैं। इसका एक अन्य नाम **मोनो-बन्नोक** भी है ।

मोनो-बन्नोक (mono-bannok)—**मोनो-पविओट्सो** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मोन्ग्न्वे (mongnwe)—'**पलौंग**' (दे०)-का एक रूप ।

मोन्टौक (montauk)—**पूर्वीय अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

मोन्नोप्ग—**मोन्नेप्व** (दे०) का एक अन्य नाम । **मोन्नेप्व** (monnepwa)—बर्मामें, प्रयुक्त एक **करेन** (दे०) भाषा ।

मोपन (mopan)—मध्य अमेरिकाकी **मय भाषा** (दे०)की एक बोली ।

मोप्गा (mopga)—**पो-करेन** (दे०)का एक रूप ।

मोप्वा (mopwa)—**पो-करेन** (दे०)का एक रूप ।

मोबिम (mobima)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार । इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी है ।

मोरान (moran)—**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके 'बड' वर्गकी, असममें प्रयुक्त एक भाषा । अब यह भाषा विलुप्त हो गयी है ।

मोरो (moro)—**इंडोनेशियन** (दे०) परिवारकी एक भाषा जो फिलिपीन द्वीपोंमें बोली जाती है ।

मोरोटोको (morotoko)—**समुकु** (दे०) परिनारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

मोरोपे (morrope)—दक्षिणी अमेरिकाके **युंका** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त भाषा ।

मोर्द्विन (mordvin)—एशियाई रूसमें लगभग १० लाख लोगों द्वारा प्रयुक्त एक भाषा । यह **यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी है ।

मोलल (molala)—**वईलत्पू** (दे०)परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

मोलो(molo)—**कोडा**—(दे०)का जातीय रूप ।

मोवे (move)—**डोरस्क-गुअयमी** (दे०) भाषा-वर्गकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा । इसके अन्य नाम **वलिएन्टेस** तथा **नोर्टेनोंस** भी हैं ।

मोशाँग (moshang)—**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके नागा वर्गकी, असम (फ्रान्टियर)में प्रयुक्त एक पूर्वीय भाषा ।

मोसी (mossi)—**सूडान वर्ग** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा । इसे मो भी कहते हैं ।

मोसेटेन (moseten)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार । इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी है ।

मो-सो (mo-so)—दक्षिणी–पश्चिमी चीन तथा उत्तरी बर्मामें प्रयुक्त एक भाषा, जो **चीनी परिवार** (दे०)के लोलो-मोसोवर्गकी है । इसे तिब्बती लोग **जाँग** तथा इसके बोलनेवाले लहू **न-खी** या **न-शी** कहते हैं । **मो-सो** नाम चीनी लोगों द्वारा, इसके लिए प्रयुक्त होता है ।

मो-सो लिपि—चीनी परिवारकी मो-सो भाषाकी लिपि। यह स्पष्टतः एक चित्रलिपि है। आधुनिक कालमें दक्षिणी मो-सोमें चीनी, तथा उत्तरीमें तिब्बती लिपि प्रयुक्त की जा रही है ।

मोस्किटो(moskito)—**मिस्किटो** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मोस्सो (mosso)—**मो-सो** (दे०)का एक अन्य नाम ।

मोहवे (mohave)—**केन्द्रीय यूम**(दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

मोहिकन (mohikan)—**महिकन**(दे०)-का एक अन्य नाम ।

मोहोंगिआ (mohongia)—सिवसागर

(असम)में प्रयुक्त चीनी परिवार (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके नागा वर्गकी एक पूर्वीय नागा भाषा। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,६००थी। इस संख्यामें 'बन्परा' तथा 'मुतोनिआ' बोलनेवाले भी सम्मिलित थे।

मोहती (mohti)—**प्वो करेन** (दे०)का एक अन्य रूप।

मोहतेइक (mohteik)—**प्वो करेन** (दे०)-का एक रूप।

मौन्हपक (maunhepaka)—**स्गव करेन** (दे०)का एक रूप।

मौखिक—(१) मुँहसे उच्चरित। (२) अलिखित।

मौखिक इंगित सिद्धान्त—भाषा-उत्पत्तिका एक सिद्धांन्त। इसे **इंगित सिद्धान्त** (दे०) भी कहते हैं।

मौखिक ध्वनि—वह ध्वनि, जिसके उच्चारण-में वायु केवल मुँहसे निकले, जैसे क्, ट्।

मौखिकनासिक्य—**अनुनासिक** (दे०)का एक अन्य नाम।

मौखिक व्यंजन—ऐसा व्यंजन, जिसका उच्चारण केवल मुंहसे हो, उसे बोलनेमें नाकसे सहायता न ली जाय। जैसे क्, स्।

मौखिक स्वर—ऐसा स्वर, जिसका उच्चारण केवल मुँहसे हो, और जिसे बोलनेमें नाकसे सहायता न ली जाय। जैसे अ, इ आदि।

मौन योजक—**संगम** (दे०)का एक अन्य नाम।

मौर्य लिपि—दूसरी-तीसरी सदी ई० पू०में प्रचलित ब्राह्मी लिपिके लिए प्रयुक्त नाम। अशोक मौर्यके आधारपर इसे मौर्य लिपि कहा जाता है।

मौलिक शब्द—**रूढ़ि शब्द** (दे०)का एक नाम।

म्डेवकन्टोन (mdewakanton)—**डकोट-अस्सिनिबोइन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

म्पांग्वे (mpongwe)—**बांटू** (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा। इस भाषा-का क्षेत्र कांगो तथा दुआलाके बीचका तटीय क्षेत्र तथा कुछ उत्तरी भाग है। इसको **गलोवा** भी कहते हैं।

म्यम्म (myamma)—**बर्मी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

म्यान्वाले (myanwale)—बेलगाममें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

म्यू (myu)—**म्रू** (दे०)का एक अन्य नाम।

म्येइक (myeik)—**मेर्गुएसे** (दे०)का एक दूसरा नाम।

म्येन (myen)—**बर्मी** या **बबी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

म्रंग (mrang)—**मरुंग** (दे०)का एक अन्य नाम।

म्रंम (mranma)—**बर्मी** (दे०)का नाम।

म्रुंग (mrung)—**तिपुरा** (दे०)का एक अन्य नाम।

म्रू (mru)—**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके, बर्मा वर्गकी, अक्याब तथा उत्तरी अराकान (बर्मा)में प्रयुक्त एक भाषा। १९२१की जन गणनाके अनुसार इसकेबोलनेवालोंकी संख्या २२,९०७ थी।

म्रो (mro)—**म्रू** (दे०)का एक और नाम।

म्वाला (mwala)—मालय्ता द्वीपमें प्रयुक्त **इंडोनेशियन** (दे०) परिवारकी, एक भाषा।

म्हार (mhar)—**ह्मार** (दे०)का एक अन्य नाम।

य

यंग (yang)—**चिन** (दे०)का एक नाम।

यंग-कव-लेंग (yang-kaw-leng)—**यंग-लम** (दे०)का एक दूसरा नाम।

यंगतलइ (yangtalai)—१. **करेन्नी** (दे०)का

एक रूप। २. यितलइ (दे०) का एक नाम।

यंगलम (yanglam)—शान स्टेटों (वर्मा)-में प्रयुक्त, एक **पलौंग-व** (दे०) भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १२,८५३ थी।

यंग-वन-कुन (yang-wan-kun)—१. **यंगलम** (दे०) का एक अन्य नाम। २. **शंग-यंग-लम** (दे०) का एक अन्य नाम।

यंगसेक (yangsek)—**रिअंग-लेंग** (दे०) का एक अन्य नाम।

यओ (yao)—हिन्द चीन तथा वर्मामें प्रयुक्त एक भाषा। (दे०) **मिअओ**।

यकरण (yodization)—इ या ए स्वरका य हो जाना। उदाहरणार्थ लैटिन vinea का वल्गर लैटिनमें vinya। इसका दूसरा नाम **यभवन** हो सकता है।

यकार—यके लिए प्रयुक्त नाम। (दे०) **कार**।

यकिन (yakina)—उत्तरी अमेरिकाकी **कोअस्टल** (दे०) भाषाकी एक उपभाषा।

यकी (yaki) **किनलोआ**—(दे०) भाषाकी एक अमेरिकी उपभाषा।

यकुई (yaqui)—**कहिटा** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

यकैंग (yakaing)—**अराकानी** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक वर्मी नाम।

यकोन (yakona)—उत्तरी अमेरिकाकी **कोअस्टल** (दे०) भाषाकी एक उपभाषा।

यक्षलिपि—वौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

यगुआ (yagua)—**करिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

यग्नोबी—ज़रफशाँमें प्रयुक्त एक **ग़लचा** (दे०) भाषा।

यङन्त (frequentative or intensive)—ऐसी धातु जिनसे ख़ूब या वार-वार करनेका भाव व्यक्त हो। इसे **पौनः पुन्यात्मक धातु** भी कह सकते हैं। इसके लिए मूलधातुमें 'यङ' (=य) प्रत्यय जोड़ते हैं। जैसे दा+यङ=देदीय (देदीयते)। सभी संस्कृत धातुओंके यङन्त रूप नहीं बनते।

यचुमी (yachumi)—**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्वती-वर्मी भाषाओंकी, असमी-वर्मी शाखाके, नागा वर्गकी, असमकी उत्तरी-पूर्वी सीमापर प्रयुक्त एक केन्द्रीय नागा भाषा।

यण्—(दे०) **संप्रसारण**।

यत्न—**प्रयत्न** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

यन (yana)—**होक** (दे०) परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

यन्क्टोन (yankton)—**डकोट-अस्सिनिबोइन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

यन्बिए (yanbye)—**अराकानी** (दे०) का, क्योक्प्यू तथा अक्याव (वर्मा) में प्रयुक्त, एक रूप। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,५०,०१८ थी।

यन्येत (yanyet)—वर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार चिन पहाड़ियोंमें, लगभग ५,४०० व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत एक संदिग्ध वर्गकी भाषा।

यबेइन (yabein)—वर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **बर्मी** (दे०) का एक रूप। इसके यबैंग जबेइन तथा लबेइन आदि नाम भी मिलते हैं। 'बर्मी' का यह रूप अब विलुप्त हो चुका है।

यबैंग (yabaing)—**यबेइन** (दे०) का एक अन्य नाम।

यभवन—**यकरण** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

यम—'यम' का अर्थ है 'युग्म' या 'जोड़ा' नासिक्य या कुछ अन्य व्यंजनोंके पूर्वका स्पर्श व्यंजन कभी-कभी द्वित्व उच्चरित होता है, किंतु प्रायः द्वित्व लिखा नहीं जाता। ऐसे द्वित्वमें बीचके व्यंजनको यम कहते हैं। जैसे अग्निःका उच्चारण होगा 'अग्ग्निः' यहाँ बीचका 'ग' यम है। वस्तुतः यह यम स्पर्श तथा नासिक्यके बीच **संक्रान्ति ध्वनि** (transitional sound)—है। उच्चारण सौकर्यार्थ इसका आगमन होता है।

(असम) में प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके नागा वर्गकी एक पूर्वीय नागा भाषा। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,६००थी। इस संख्यामें 'बन्परा' तथा 'मुतोनिआ' बोलनेवाले भी सम्मिलित थे।

मोह्ती (mohti)––**प्वो करेन** (दे०) का एक अन्य रूप।

मोह्तेइक (mohteik)––**प्वो करेन** (दे०)-का एक रूप।

मौन्हपक (maunhepaka)––**स्गव करेन** (दे०) का एक रूप।

मौखिक––(१) मुँहसे उच्चरित। (२) अलिखित।

मौखिक इंगित सिद्धान्त––भाषा-उत्पत्तिका एक सिद्धांन्त। इसे **इंगित सिद्धान्त** (दे०) भी कहते हैं।

मौखिक ध्वनि––वह ध्वनि, जिसके उच्चारण-में वायु केवल मुँहसे निकले, जैसे क्, ट्।

मौखिकनासिक्य––**अनुनासिक** (दे०) का एक अन्य नाम।

मौखिक व्यंजन––ऐसा व्यंजन, जिसका उच्चारण केवल मुंहसे हो, उसे बोलनेमें नाकसे सहायता न ली जाय। जैसे क्, स्।

मौखिक स्वर––ऐसा स्वर, जिसका उच्चारण केवल मुँहसे हो, और जिसे बोलनेमें नाकसे सहायता न ली जाय। जैसे अ, इ आदि।

मौन योजक––**संगम** (दे०) का एक अन्य नाम।

मौर्य लिपि––दूसरी-तीसरी सदी ई० पू०में प्रचलित ब्राह्मी लिपिके लिए प्रयुक्त नाम। अशोक मौर्यके आधारपर इसे मौर्य लिपि कहा जाता है।

मौलिक शब्द––**रूढ़ि शब्द** (दे०) का एक नाम।

म्डेवकन्टोन (mdewakanton)––**डकोट-अस्सिनिबोइन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

म्पांग्वे (mpongwe)––**बांटू** (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा। इस भाषा-का क्षेत्र कांगो तथा दुआलाके बीचका तटीय क्षेत्र तथा कुछ उत्तरी भाग है। इसको **गलोवा** भी कहते हैं।

म्यम्म (myamma)––**बर्मी** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

म्यान्वाले (myanwale)––बेलगाममें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

म्यू (myu)––**म्रू** (दे०) का एक अन्य नाम।

म्येइक (myeik)––**मेर्गुएसे** (दे०) का एक दूसरा नाम।

म्येन (myen)––**बर्मी** या **ब्बी** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

म्रंग (mrang)––**मरंग** (दे०) का एक अन्य नाम।

म्रंम (mranma)––**बर्मी** (दे०) का नाम।

म्रुंग (mrung)––**तिपुरा** (दे०) का एक अन्य नाम।

म्रू (mru)––**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके, बर्मा वर्गकी, अक्याब तथा उत्तरी अराकान (बर्मा) में प्रयुक्त एक भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २२,९०७ थी।

म्रो (mro)––**म्रू** (दे०) का एक और नाम।

म्वाला (mwala)––मालय्ता द्वीपमें प्रयुक्त **इंडोनेशियन** (दे०) परिवारकी, एक भाषा।

म्हार (mhar)––**ह्मार** (दे०) का एक अन्य नाम।

य

यंग (yang)––**यिन** (दे०) का एक नाम।

यंग-कव-लेंग (yang-kaw-leng)––**यंग-लम** (दे०) का एक दूसरा नाम।

यंगतलइ (yangtalai)–१. **करेन्नी** (दे०) का

एक रूप। २. यितलइ (दे०)का एक नाम।

यंगलम (yanglam)--शान स्टेटों (वर्मा)-में प्रयुक्त, एक **पलौंग-व** (दे०) भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १२,८५३ थी।

यंग-वन-कुन (yang-wan-kun)--१. **यंगलम** (दे०) का एक अन्य नाम। २. **शंग-यंग-लम** (दे०) का एक अन्य नाम।

यंगसेक (yangsek)--**रिअंग-लेंग** (दे०)का एक अन्य नाम।

यओ (yao)--हिन्द चीन तथा वर्मामें प्रयुक्त एक भाषा। (दे०) **मिअओ**।

यकरण (yodization)--इ या ए स्वरका य हो जाना। उदाहरणार्थ लैटिन vinea का वल्गर लैटिनमें vinya। इसका दूसरा नाम **यभवन** हो सकता है।

यकार--**य**के लिए प्रयुक्त नाम। (दे०)**कार**।

यकिन (yakina)--उत्तरी अमेरिकाकी **कोअस्टल** (दे०) भाषाकी एक उपभाषा।

यकी (yaki) **किनलोआ**--(दे०) भाषाकी एक अमेरिकी उपभाषा।

यकुई (yaqui)--**कहिटा** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

यकैंग (yakaing)--**अराकानी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक वर्मी नाम।

यकोन (yakona)--उत्तरी अमेरिकाकी **कोअस्टल** (दे०) भाषाकी एक उपभाषा।

यक्षलिपि--वौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

यगुआ (yagua)--**करिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

यग्नोबी--ज़रफशाँमें प्रयुक्त एक **ग़लचा** (दे०) भाषा।

यङन्त (frequentative or intensive)--ऐसी धातु जिनसे खूब या बार-बार करनेका भाव व्यक्त हो। इसे **पौनः पुन्यात्मक धातु** भी कह सकते हैं। इसके लिए मूलधातुमें 'यङ' (=य) प्रत्यय जोड़ते हैं। जैसे दा+यङ=देदीय (देदीयते)। सभी संस्कृत धातुओंके यङन्त रूप नहीं बनते।

यचुमी (yachumi)--**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-वर्मी भाषाओंकी, असमी-वर्मी शाखाके, नागा वर्गकी, असमकी उत्तरी-पूर्वी सीमापर प्रयुक्त एक केन्द्रीय नागा भाषा।

यण्--(दे०) **संप्रसारण**।

यत्न--**प्रयत्न** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

यन (yana)--**होक** (दे०)परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

यन्क्टोन (yankton)--**डकोट-अस्सिनिबोइन** (दे०)वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

यन्बिए (yanbye)--**अराकानी** (दे०) का, क्यौक्प्यू तथा अक्याब (वर्मा)में प्रयुक्त, एक रूप। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,५०,०१८ थी।

यन्येत (yanyet)--वर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार चिन पहाड़ियोंमें, लगभग ५,४०० व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत एक संदिग्ध वर्गकी भाषा।

यबेइन (yabein)--वर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **बर्मी** (दे०)का एक रूप। इसके यबैंग जबेइन तथा लबेइन आदि नाम भी मिलते हैं। 'बर्मी'का यह रूप अब विलुप्त हो चुका है।

यबैंग (yabaing)--**यबेइन** (दे०) का एक अन्य नाम।

यभवन--**यकरण** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

यम--'यम'का अर्थ है 'युग्म' या 'जोड़ा' नासिक्य या कुछ अन्य व्यंजनोंके पूर्वका स्पर्श व्यंजन कभी-कभी द्वित्व उच्चरित होता है, किंतु प्रायः द्वित्व लिखा नहीं जाता। ऐसे द्वित्वमें बीचके व्यंजनको यम कहते हैं। जैसे अग्निःका उच्चारण होगा 'अग्ग्निः' यहाँ बीचका 'ग' यम है। वस्तुतः यह यम स्पर्श तथा नासिक्यके बीच **संक्रान्ति ध्वनि** (transitional sound)--है। उच्चारण सौकर्यार्थ इसका आगमन होता है।

भाषाका नाम ।

युस्कारा (euskara)—**बास्क** (दे०)का एक नाम ।

यूई—पालिनीशियन परिवारकी एक भाषा, जो ल्वायलटी द्वीपोंमें प्रयुक्त होती है ।

यूएह—**फैंटनी** (दे०)का अपने प्रदेशमें प्रचलित नाम ।

यूक्रेनियन (ukrainian)—यूक्रेन दक्षिणी पोलैंड आदिमें लगभग ४ करोड़ लोगों द्वारा प्रयुक्त एक स्लाव भाषा । इसे **लघु- रूसी** (little russian) भी कहते हैं । यूक्रेनियनकी पश्चिमी बोली रूथेनियन या कारपेथो-रूसी कहलाती है । (दे०)**रूसी** ।

यूगारीतिक (ugaritic)—सीरियन तटपर प्राचीन कालमें प्रयुक्त एक विलुप्त भाषा । इसके पारिवारिक सम्बन्धका पता नहीं है। इसका काल लगभग १५०० ई० पू० माना जाता है । यूगारीतिककी लिपि एक प्रकार-की क्यूनीफार्म लिपि है, जिसमें ३२ अक्षर हैं।

यूगारीतिक लिपि—(दे०) **यूगारीतिक** ।

यूची (yuchi)—**उत्तरी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार इसे **उचेअन** भी कहते हैं । इसकी प्रमुख भाषा **यूची** है।

यूज़केरा (euzkera)—**बास्क** (दे०)बोलने-वालों द्वारा बास्कके लिए प्रयुक्त एक नाम।

यूनानी—**ग्रीक** (दे०)का एक अन्य नाम ।

यूनानी लिपि—(दे०) **ग्रीक लिपि** ।

यूनीवर्सल स्प्रारवे—१८६३में यीरो द्वारा बनायी गयी एक कृत्रिम मात्रा ।

यूम (yuma)—**होक** (दे०) भाषा परि-वारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा । इस भाषाके तीन उपवर्ग हैं :—(१) **पूर्वीय यूम** (दे०), (२) **केन्द्रीययूम** (दे०) तथा (३) **लोअर केलीफोर्निअन यूम** (दे०) । इन तीनों उपवर्गोंमें लगभग १२ भाषाएँ हैं । यूमको युमन भी कहते हैं । यूम या युमन जातिके लोग पहल एरिज़ोना तथा पासके मेक्सिको एवं कैलिफोर्नियामें रहते थे । अब इनका क्षेत्र केवल दक्षिणी-पूर्वी कैलिफोर्निया तथा उत्तरी-पश्चिमी मैक्सिको है । इसे बोलने-वालोंकी संख्या ४,०००के लगभग होगी । इसे कुछ लोग स्वतंत्र भाषा-परिवार भी मानते हैं । यूम भाषा वर्गका नाम तो है ही, इसमें एक 'यूम' नामकी भाषा भी है ।

यूरक (yurak)—समोयदिक वर्गकी एक भाषा । (दे०) **समोयद** ।

यूरकरे (yurakare)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार । इसकी प्रमुख भाषा युरकरे है ।

यूराल-अल्ताई परिवार (या समुदाय)—एक यूरेशिआई भाषाओंका परिवार या भाषा-परिवारोंका वर्ग, **फिनो-तातारिक सीथियन** तथा **तूरानी** आदि भी इसके नाम हैं, किन्तु कोई भी नाम उपयुक्त नहीं ज्ञात होता । भौगोलिक दृष्टिसे उचित होनेके कारण इसे प्रायः यूराल-अल्टाइक कहा जाता है । इस परिवारकी भाषाएँ यूराल और अल्ताई पर्वतके बीचमें टर्की, हंग्री और फिनलैंडसे लेकर पूरबमें ओखोत्स्क सागरतक और भूमध्य सागरसे लेकर उत्तरमें उत्तरीय सागरतक फैली हुई हैं । क्षेत्रकी दृष्टिसे भारोपीय परिवारको छोड़कर संसारका कोई भी परिवार कदाचित् इतना विस्तृत नहीं है । इसकी भाषाएँ आपसमें बहुत अधिक समानता नहीं रखतीं । इसी-लिए कुछ लोग **यूराल** और **अल्ताइक** दो भाषा-परिवार कहना अधिक उचित समझते हैं । ध्वनि और धातु या शब्द-समूहकी दृष्टिसे सचमुच ही ये दोनों भिन्न परिवार प्रतीत होते हैं, किन्तु व्याकरणकी दृष्टिसे इनकी एकता अस्वीकार नहीं की जा सकती । **यूराल और अल्ताइकके समान लक्षण**—(१) इन दोनों (यूराल और अल्ताइक)की भाषाएँ अश्लिष्ट अंत योगा-त्मक हैं । धातुमें प्रत्यय जोड़कर पद बनाये जाते हैं । एक पद बनानेमें एकसे अधिक प्रत्यय भी जोड़े जा सकते हैं । कुछ भाषाएँ कुछ दिनोंसे अश्लिष्टसे श्लिष्टकी ओर आ रही हैं । उदाहरणके लिए फिनिश भाषाको ले सकते हैं । यह तो इतनी आगे बढ़ आयी

है कि आकृतिकी दृष्टिसे भारोपीय परिवारमें रखी जा सकती है। (२) इनकी सभी भाषाओंमें धातु अव्ययके समान हैं। उनमें कभी भी विकार नहीं आता और बड़े-से-बड़े शब्दमें भी आसानीसे पहचानी जा सकती हैं। (३) इन दोनोंमें ही कभी-कभी सम्बन्धवाचक सर्वनाम प्रत्ययके रूपमें संज्ञाओंके साथ जोड़ दिये जाते हैं। (४) स्वर-अनुरूपता (vowel harmony) भी दोनों हीमें मिलती है। ऐसा होता है कि जब मूल धातुमें अनेक प्रत्ययोंको जोड़ा जाता है, तो उन प्रत्ययोंके स्वर धातुके स्वरके 'वजन'पर कर लिये जाते हैं। यहाँके स्वरोंके गुरुस्वर और लघु-स्वर दो वर्ग हैं। जब धातुमें गुरुस्वर रहता है, तो सभी प्रत्ययोंके स्वर गुरु कर लिये जाते हैं और नहीं तो लघु। यह संभवतः उच्चारण-सौकर्यके लिए होता है। तुर्कीसे उदाहरण ले सकते हैं–'**यजसे मक**' लगा कर '**यज्**' '**मक्**' (=लिखना) बनता है। किन्तु 'सेव'से '**मक**' लगाकर 'सेवमक' न बनकर सेव्मेक् (=प्यार करना) बनता है। इसी प्रकार '**लर**' बहुवचनकी विभक्ति है। **अट्**के साथ मिलकर यह **अट्ल्र** (=घोड़े) पद बनाती है, पर **एव**के साथ **एव्लेर** (=अनेक घर)। यह स्वर-अनुरूपता इन भाषाओंमें बहुत पुरानी नहीं है। इसका विकास बादमें हुआ है। ऊपर दिये गये सभी समान लक्षण व्याकरणके हैं। जैसा कि पहले कह चुके हैं, ध्वनि और शब्दोंकी दृष्टिसे इनमें समानता नहीं मिलती। इसी लिए कुछ लोग इसे परिवार न कहकर समुदाय कहना पसन्द करते हैं। **विभाजन**-यूराल-अल्ताईके मूलतः दो वर्ग हैं: (१) **फिनो-युग्निक** या **यूराली**, (२) **अल्ताई**। फिनो युग्निकके **फिनिश-लैपिक फिनिश** (क) **वर्ग** (फिनिश, इस्तोनियन, करेलियन, इंग्रिअन, लिवोनियन, लूडिअन ओलोनेर्तिज़अन, वेप्सिअन, वोतिअ आदि), (ख) **लैप वर्ग** (लैपिक, चेरे मिस, मोर्द्विन आदि), **युग्रिक** (मगियार या हुंगेरियअन, ओब-युग्रिक–जिसमें ओस्त्यक, वोगुल हैं), **पर्मिअन** (वोत्यक, जाइ-रीन या साइरीन), **समोयदिक** (समोयद, युरक, कमासिन, ताग्वी)–ये चार वर्ग हैं। **अल्ताई** शाखाको तातार या तुर्की शाखा भी कहते हैं। इसमें तुर्की, मंगोल और मांचू या तुंगुस या मांचू-तुंगुस–ये तीन वर्ग हैं। तुर्की या तुर्किक वर्गके **पश्चिमी** (बश्किर, चुवैश, इर्तिश, किर्गिज), **पूर्वी** (अल्ताई, अबाकन, करगस, सोयोनिअन, उइगुर), **मध्यवर्ती** या **केन्द्रीय** (चताई, काशगर, सार्त तरांची उज़बेक, यारकन्द) तथा **दक्षिणी** (तुर्की या ओस्मनलि, अजरबैद्यानी अनातोलिअन बाल्कर, कुमिक तथा तुर्कोमन)–ये चार उपवर्ग हैं। **मंगोलमें पश्चिमी** (कालमुक), **उत्तरी** (बुर्यत) तथा **पूर्वी** (खल्खा, शारा, तंगुत, अफ़गान मंगोल)–ये तीन उपवर्ग हैं। मांचूमें मांचू और तुंगुस दो भाषाएँ हैं। अन्य कई रूपोंमें भी इस परिवारका विभाजन किया गया है। फ़िनिश भाषामें १६वीं सदीसे इधर सुसंस्कृत साहित्य मिलता है। 'कलेवला' नामका एक २२ हज़ार छन्दोंका प्रसिद्ध महाकाव्य भी है। इस भाषामें भारोपीय परिवारके शब्दोंका बाहुल्य है। हंग्रीकी भाषा **हंगेरियन** या **मगियार** भी सभ्य भाषा है। इसमें भाषा सम्बन्धी सामग्री १२वीं सदीसे ही मिलने लगती है। इस समुदायकी तीसरी विकसित भाषा **तुर्की** (दे०) है।

यूराल परिवार–(दे०) **यूराल-अल्ताइक परिवार**।

यूरिमगुआ (yurimagua) **टुपी-गवरनी** (दे०) परिवारकी, दक्षिणी अमेरिकामें प्रयुक्त एक भाषा। यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है। इसका अन्य नाम **जूरिमगुआ** भी है।

यूरी (yuri)–**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार। इसकी प्रमुख भाषा **यूरी** हैं।

यूरेशिया भाषा-खंड—विश्वको जिन चार भाषा-खंडोंमें बाँटा गया है, उनमें एक यूरेशिया-खंड भी है। यह यूरोप और एशियामें फैला हुआ है। इस खंडमें प्रधान रूपसे सात भाषा-परिवार हैं। किन्तु इनके अतिरिक्त कुछ जीवित और मृत भाषाएँ ऐसी भी हैं, जिनको किसी भी परिवारके अंतर्गत नहीं रखा जा सकता। इन अनिश्चित भाषाओंके लिए यदि एक **अनिश्चित या परिशेष** समुदाय या परिवार मान लिया जाय, तो कुल निम्नांकित आठ भाषा-परिवार या भाषा-वर्ग बनते हैं:—(१) **सेमिटिक परिवार** (दे०), (२) **काकेशस परिवार** (दे०), (३) **यूराल-अल्ताइक परिवार** (दे०), (४) **चीनी-परिवार** (दे०), (५) **द्रविड़ परिवार** (दे०), (६) **आस्ट्रिक परिवार** (दे०) (७) **भारोपीय परिवार** (दे०), (८) **अनिश्चित भाषा वर्ग** (दे०)। अनिश्चित परिवारके दो भेद किये जा सकते हैं:—(१) मृत और जीवित मृत भाषा वर्गके अंतर्गत ६ भाषाएँ आती हैं:—(१) **एत्रुस्कन** (दे०) (२) **सुमेरी** (दे०), (३) **मितानी** (दे०), (४) **कोसी** (दे०), (५) **वन्नी** (दे०) और (६) **एलामाइट** (दे०)। जीवित भाषा वर्गके अंतर्गत निम्नलिखित ८ भाषाएँ आती हैं:—(१) **कोरियाई** (दे०), (२) **ऐनू** (दे०), (३) **बास्क** (दे०), (४) **हाइपर-बोरी** (दे०), (५) **जापानी** (दे०), (६) **अंडमानी** (दे०), (७) **करेनी** (दे०) और (८) **बुरुशास्की** (दे०)। पहले **हित्ती** भाषा भी इसी अनिश्चित वर्गके अंतर्गत मानी जाती थी। अब उसका सम्बन्ध भारोपीय परिवारसे जोड़ दिया गया है।

यूरोक (yurok)—**केलीफ़ोर्नियन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसका एक अन्य नाम **वेइट्स्पेकन** भी है।

यूरोपन (europan)—वाइज़बार्ट (weisbart) द्वारा निर्मित एक कृत्रिम भाषा।

यूसुफजइ पश्तो (yusufzai pashto)—उत्तरी-पूर्वी **पश्तो** (दे०) का पेशावर ज़िलेके उत्तर-पूर्वमें प्रयुक्त, एक रूप।

येइन्बव (yeinbaw)—**यिन्बव** (दे०) का एक अन्य नाम।

ये-जेन (ye-jen)—**कचिन** (दे०) का एक नाम।

येतुन (yetun)—वर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, चिन पहाड़ियोंमें, लगभग ४,६०० लोगों द्वारा व्यवहृत एक संदिग्ध वर्गकी भाषा।

येनिसेई समोयद—**समोयद** (दे०) भाषाकी एक बोली, जो येनिसेई नदीके किनारे बोली जाती है।

येमा (yema)—**एंपेओ** (दे०) की, नागा पहाड़ियों तथा उत्तरी काचार (असम) में प्रयुक्त, एक बोली।

येम्शोंग (yemshong)—**यचुमी** (दे०) का एक अन्य नाम।

येरव (yerave)—**मलयालम** (दे०) की, कुर्गमें प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,५८७ थी।

येरु (yeru)—एक **अंडमानी** (दे०) भाषा।

येरूकल (yerukala)—**तमिल** (दे०) की एक बोली।

येश्कुन (yeshkun)—**बुरुशास्की** (दे०) का नगरके लोगों द्वारा प्रयुक्त एक नाम।

यो (yo)—**जो** (दे०) का एक अन्य नाम।

योकुट्स (yokuts)—**कैलीफोर्निअन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसका अन्य नाम **मरिपोसन** है।

योक्व (yokwa)—**लइ** (दे०) की, चिन पहाड़ियों (वर्मा) में प्रयुक्त, एक बोली। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २१२ थी।

योगरूढ़ि—एक प्रकारके शब्द। इन्हें **योगरूढ़** भी कहते हैं। (दे०) **शब्द**।

योगात्मक भाषा—आकृतिके आधारपर बनाया गया भाषाओंका एक वर्ग। इसे संयोगात्मक भाषा भी कहते हैं। (दे०) **विश्वकी भाषाओंका वर्गीकरणमें आकृतिमूलक वर्गी-**

करण ।

योग्यता––(दे०) **वाक्यमें वाक्यकी आवश्यकताएँ** उपशीर्षक ।

योग्यतावाचक प्रत्यय––एक प्रकारका प्रत्यय (दे०) ।

योजक––**संगम** (दे०)का एक अन्य नाम ।

योजक अव्यय––(दे०) समुच्चय बोधक अव्यय ।

योजक-चिह्न––एक प्रकारका चिह्न । (दे०) **विराम** ।

योतुन (yotun)––चिन पहाड़ियों (बर्मा) में प्रयुक्त, **चीनी परिवार** (दे०)की एक कुकी-चिन भाषा । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५,१०९ थी ।

योदय शान (yodaya shan)––**स्यामी** (दे०) का एक नाम ।

योय (yoya)––**कचिन** (दे०)का, पुताओ (बर्मा)में प्रयुक्त एक रूप ।

योरुब (yoruba)––**सूडान वर्ग** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा । यह योरुबा नामक नीग्रो जातिकी भाषा है । इसका क्षेत्र दहोमें तथा निम्न नाइजरके बीचमें है । इसमें पहले एक प्रकारकी सूत्र लिपिका प्रयोग होता रहा है । १९२८में इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,००,०००के लगभग थी । इसमें लिखित साहित्य भी है ।

योषा––स्त्रीलिंगका संस्कृतमें प्राचीन नाम । (दे०) **लिंग** ।

योस्को (yosko)––मध्य अमेरिकाकी **सुमो** (दे०) भाषाकी एक बोली ।

यो-हे-हो सिद्धान्त (yo-he-ho theory)––भाषा-उत्पत्तिका एक सिद्धान्त (दे०) **भाषाकी उत्पत्ति** ।

यौअपेरय (yaupery)––**करिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिण अमेरिकी भाषा ।

यौगिक––एक प्रकारके **शब्द** । (दे०) **शब्द** ।

यौगिक क्रियाविशेषण––(दे०) **क्रियाविशेषण** ।

यौगिक धातु––(दे०) **धातु** ।

यौगिक संबंधसूचक अव्यय––(दे०) **संबंधसूचक अव्यय** ।

यौगिक सार्वनामिक विशेषण––(दे०) **विशेषण** ।

यौलापिती (yaulapiti)––दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०)की एक भाषा । इसका क्षेत्र उत्तरी आमेज़न है ।

र

रंगपुरी (rangpuri)––**राजबंगसी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

रंगरोई (rangroi)––बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **पलौंग** भाषाकी **पले** (दे०) बोलीका एक रूप । इसका क्षेत्र उत्तरी शान प्रांत है ।

रंगलोई (rangloi)––**चीनी परिवार** (दे०)-की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, तिब्बती हिमालयी उपशाखाकी, लाहुलमें प्रयुक्त, एक पश्चिमी सार्वनामिक हिमालयी भाषा । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,९८७ थी । इसमें 'बुनन' (दे०)बोलनेवाले भी सम्मिलित थे ।

रंगसूचक विशेषण––(दे०) **विशेषण** ।

रंगारी (rangari)––(१) बरारके रंगसाज़ोंमें प्रयुक्त मराठीकी **कोष्टी** (दे०) बोलीका नाम । (२) **खानदेशी** (दे०)की, बरारमें प्रयुक्त एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३,६३० थी ।

रंग्कस (rangkas)––**चीनी परिवार** (दे०)-की तिब्बती-हिमालयी उपशाखाकी, अलमोड़ामें प्रयुक्त, एक पश्चिमी सार्वनामिक हिमालयी भाषा । इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग ६१४ थी ।

रंधाडी (randhadi)––**लधाडी** (दे०)का

एक अन्य नाम ।

रअंग (raang)––बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, **पलौंग** (दे०)का एक रूप, जिसका व्यवहार रुबी क्षेत्रमें होता है ।

रउ-चौभैंसी––**कुमायूंनी** (दे०)की, नैनीताल ज़िलेमें 'रौ' और 'चौभैंसी' पट्टीके आसपास प्रयुक्त एक उप-बोली । शुद्ध 'रउ-चौभैंसी' बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग ६,८००से कुछ अधिक थी । इसके कई स्थानीय रूप हैं, जिनमें प्रधान **छखातिया** (दे०), **रामगढ़िया** (दे०) तथा **बाज़ारी** (दे०) हैं । शुद्ध तथा अन्य रूपोंको मिलाकर इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वे-क्षणके अनुसार ५६,६७९ थी ।

रओ-क्यिन (rao-kyin)––**पलौंग** (दे०)का रुबीमें प्रयुक्त एक रूप ।

रओ-क्वंग (rao-kwang)––**पलौंग**(दे०)का रुबीमें प्रयुक्त एक रूप ।

रओ-पिंग (rao-ping)––**पलौंग** (दे०)का एक रूप ।

रओ-मइ (rao-mai)––'**पलौंग**' (दे०)का रुबीमें प्रयुक्त एक रूप ।

रकरण (rhotacism)––ल् या अन्य किसी ध्वनिके स्थानपर र् ध्वनिका प्रयोग करना ।

रकार––र के लिए प्रयुक्त नाम । (दे०) **कार** ।

रक्त––अनुनासिकीकृत या अनुनासिकतायुक्त अनुनासिकीकृत ध्वनिके लिए प्रयुक्त एक प्राचीन विशेषण या नाम ऋक् प्रातिशाख्यमें आता है––'रक्तसंज्ञोऽनुनासिक:' । इसके विरुद्ध **अरक्त** उन्हें कहा गया है जो अनुनासिकतायुक्त न हों । आँरक्त आ है और आ आरक्त ध्वनि है ।

रक्त करेन (red karen)––**करेन्नी** (दे०)का एक नाम ।

रक्त रिअंग (red riang)––**शंग-यंग-सेक** (दे०)का एक अन्य नाम ।

रक्ताद्यर्थक––(दे०) **तद्धित** ।

रक्शानी (rakshani)––चगाई एजेंसीमें प्रयुक्त **बलोची** (दे०)का एक रूप ।

रखिने (rakhine)––**अराकानी** (दे०) की, अक्याबमें प्रयुक्त एक बोली । बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५०,१६३ थी ।

रखैंग-थ (rakhaing-tha)––**अराकानी** (दे०)का एक नाम ।

रचना (construction) **के प्रकार**––(दे०) **वाक्यमें रचनाके प्रकार** उपशीर्षक ।

रचनात्मक वर्गीकरण––**आकृतिमूलक वर्गीकरण** (दे०)का एक अन्य नाम ।

रजवाड़ी **राँगड़ी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

रजिस्टर तान (register tone)––**सुर** का एक भेद ।

रजिस्टर तान भाषा––(दे०) **आघातमें सुर** उपशीर्षक ।

रझरी (rajhari)––१८९१की जनगणनाके अनुसार, **राजस्थानी** (दे०)का बेतुलमें प्रयुक्त एक रूप ।

रठ्याल (rathyal)––**कुमायूँनी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

रतन (ratan)––**बंजारी** (दे०)का मध्यप्रदेशमें प्रयुक्त एक नाम ।

रतलामी––**मालवी** (दे०)का रतलाममें प्रयुक्त रूप ।

रतब्दी (ratabdi)––१८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार **मराठी** (दे०)का , पूनामें प्रयुक्त एक रूप । इसका अब पता नहीं है ।

रनावत (ranawat)––**भीली** (दे०)की निमाड़में प्रयुक्त एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ५०० थी ।

रमोल्या––**टेहरी** (दे०)का एक रूप ।

रम्रे (ramre)––**अराकानी** (दे०)की, अक्याबमें प्रयुक्त एक बोली । बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५९,०२४ थी ।

रवंग (rawang)––बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **नुंग** (दे०)का, पुताओ ज़िलेमें प्रयुक्त एक रूप । इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,५०० थी ।

रवाँल्टी––**टेहरी** (दे०)का एक स्थानीय रूप। 'खाई'के निवासी रवाँल्टा इसे बोलते हैं, अतः बोलीका नाम रवाँल्टी है। रवाँल्टीमें लोक-साहित्य प्रचुर मात्रामें है।

रवी––**लिङलकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

रव्वन(rawvan)––वर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, पकोक्कू नामक स्थानमें ३०० व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत **चीनी परिवार** (दे०)-की एक कुकी-चिन भाषा।

रहतोरी(rahtori)––१८९१की हैदराबाद जनगणनामें **राठोरा** (दे)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

राँगखोल (rangkhol)––**ह्राँगखोल** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

राँगड़ी––**मालवी** (दे०)का एक स्थानीय रूप, जो मालवा खासके राजपूतोंमें प्रचलित है। यहाँ 'राँगड़' लोगोंके अधिक होनेके कारण इसे राँगड़ी कहा गया है। यह नाम जान मालकमके अनुसार मराठोंका दिया हुआ है। इसके अन्य नाम **राजवाड़ी** या **रजवाड़ी** भी मालवीका यह रूप कुछ कर्णकटु है।

राँगदानिआ(rangdania)––**राभा** (दे०)-की, गोलपारा, कामरूप तथा गारो पहाड़ियों (असम)में प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या ३०,३७० थी।

राँबनी(rambani)––**कश्मीरी** (दे०)की, जम्मू प्रांतमें प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या २,१७४ थी।

राई(rai)––**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंके पूर्वीय सार्वनामिक हिमालयी वर्गकी नैपालमें दुदकोसी तथा तुंबोर नदियोंके बीच प्रयुक्त, एक भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलने-वालोंकी संख्या ५६,३४२ थी।

रागात्मक तत्व (prosodic feature)––**ध्वनिगुण** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

रागीय तत्व (prosodic feature)––**ध्वनिगुण**(दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

रागुसन (raguson)––**दल्मेशन** (दे०) भाषाकी एक विलुप्त बोली।

राघोबंसी––**बुंदेली** (दे०)के **छिंदवाड़ा-बुंदेली** (दे०)नामक वर्गका, छिंदवाड़ाकी राघोबंसी जातिमें प्रयुक्त एक मराठी मिश्रित रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३,११४ थी।

राज (raj)––**गोंडी** (दे०)का एक रूप।

राजनयिक भाषा––वह भाषा, जो एक देशसे दूसरे देशोंके राजनयिक पत्र-व्यवहार या बातचीतमें प्रयुक्त होती हो। यह भाषा अत्यंन्त शिष्ट तथा औपचारिक होती है।

राजपुरी (rajapuri)––**कोंकणी** (दे०)का एक नाम। वस्तुतः यह कोंकणी भाषी एक द्रविड़ जातिका नाम है।

राजपूतानी––**राजस्थानी** (दे०)का एक नाम।

राजबंगसी––**बंगाली** (दे०)की, उत्तर-पूर्वी बंगाल तथा गोलपाड़ा (असम)में प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३५,०९,१७१ थी।

राजमहाली––**माल्तो** (दे०) का एक अन्य नाम।

राजवड़ी––**राँगड़ी** (दे०)का एक अन्य नाम।

राजवाड़ी––(दे०) **राँगड़ी**।

राजस्थानी––हिन्दीकी एक उपभाषा। राज-स्थानकी भाषाओं एवं बोलियोंके लिए ग्रियर्सन द्वारा प्रयुक्त यह एक सामूहिक नाम है। 'राजस्थानी'का अर्थ है 'राजस्थानका'। पूरे राजस्थान या राजपूतानाके लिए प्राचीन कालमें किसी एक नामका प्रयोग नहीं मिलता। या तो अलग-अलग राज्योंके लिए अलग-अलग नाम थे, या फिर इस पूरे क्षेत्रके कुछ खंडोंके लिए नाम थे। जैसे इसके उत्तरी भाग-का नाम 'ज़ांगल' मिलता है, इसी प्रकार पश्चिमी भागका नाम 'त्रवणी' आदि मिलता है। सभी (अंग्रेज़ी शासनमें इनकी संख्या २१ थी) राज्योंको मिलाकर एक प्रांत रूपमें नामकरणका प्रथम श्रेय कदाचित् टॉमसको है। इसने १८००ई०में इसके लिए 'राज-

पूताना' शब्दका प्रयोग किया। 'राजस्थान' शब्दका प्रयोग यों तो प्राचीन है। संस्कृतमें, शिलालेखोंमें 'राजस्थानीय' शब्द 'गवर्नर'के अर्थमें आता है। जिसका अर्थ यह है कि 'राजस्थान' शब्द भी अप्रयुक्त नहीं कहा जा सकता है। मध्ययुगमें 'राज-स्थान' या 'राजधानी'के अर्थमें 'राजस्थान'का प्रयोग १७वीं सदीके प्रथम चरणसे ही ('नैणसीकी ख्यात' आदिमें) मिलने लगता है। किन्तु इस प्रांतके लिए इसका प्रथम लिखित प्रयोग संभवतः कर्नल टॉडने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'एनल्ज ऐंड ऐंटिक्विटीज़ ऑव राजस्थान' (१८२९ई०)में ही किया। यों, यह टॉडका मौलिक प्रयास नहीं था। 'राजस्थान' या 'रायथाण' रूपमें यह नाम प्रायः पूरे राजस्थानके लिए वहाँकी जनतामें पहलेसे चल रहा था। जैसाकि ग्रियर्सनने संकेत किया है, उन्होंने टॉडके आधारपर ही यहाँकी भाषा या यहाँकी भाषाओं एवं बोलियोंको सामूहिक रूपसे 'राजस्थानी' कहा।

राजस्थानकी भाषा या वहाँकी बोलियोंकी अपनी कुछ स्वतंत्र विशेषताएँ बहुत पहलेसे विकसित हो गयी थीं। इसीके कारण 'मरु'के रूपमें इसका उल्लेख आधुनिक भारतीय भाषाओंके अस्तित्वमें आनेके पहलेसे हो रहा है। ८वीं सदीमें लिखित उद्योतन सूरिके अपभ्रंश ग्रंथ 'कुवलयमाला'में १८ देशभाषाओंका नाम आता है। उसमें एक नाम 'मरु'भी है--'अप्पा–तुप्पा भणिरे अह पच्छइ मारूए तत्तो'। १५वीं सदीके बादके अनेक ग्रंथोंमें राजस्थानीको **मारूभाषा** ('वेलि क्रिसन रुक्मिणी री'के गोपालकृत व्रज भाषानुवादमें), मारुभाषा (मौडजीकृत 'पाबू-प्रकाश'में), **मरूबानी**, (सूर्यमल कृत 'वंशभास्कर'में), **मरूदेशीया** (सूर्यमलकृत 'वंशभास्कर'में), **मरुभूम भाषा** (मंछकृत 'रघुनाथ रूपक'में) आदि कहा गया है। 'राजस्थानी'के अंतर्गत मानी जानेवाली अनेक बोलियोंके नाम भी आधुनिक युगसे पूर्व ही मिलने लगते हैं। उदाहरणार्थ 'कुवलयमाला'में ही मालव (मालवी)का नाम आता है। 'आईने अकबरी'में अबुल फ़ज़ल 'मारवार' (मारवाड़ी)का नाम लेते हैं। 'नौबोली छंद' (१७वीं सदी) नामक रचनामें जैसलमेरी, 'आठ देसरी गूजरी' (१८वीं सदी) नामक रचनामें मेवाती, मारवाड़ी, ढूंढाहड़ी तथा कुछ अन्यमें इसी प्रकार हाड़ौती, मेवाड़ी, आदिके भी नाम आये हैं। कैरे(w.carey)ने १९वीं सदीके प्रथम चरणमें भाषा-सर्वेक्षण करवाया था, जिसमें बीकानेरी, मारवाड़ी, उदयपुरी, हाड़ौती, मालवीके नाम आये हैं। कुछ लोग राजस्थानीके लिए 'डिंगल' (दे०) या 'मारवाड़ी' (दे०) नामका भी प्रयोग करते हैं, किन्तु यथार्थतः ये दोनों ही नाम राजस्थानीके न होकर उसके एक रूप या एक सीमित क्षेत्रकी बोलीके हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार राजस्थानी बोलनेवालोंकी संख्या डेढ़ करोड़से कुछ ऊपर थी।

राजस्थानी भाषा-भाषी क्षेत्र सिंधी, लहँदा, पंजाबी, बाँगरू, व्रजभाषा, बुंदेली, मराठी तथा गुजराती भाषा-भाषी क्षेत्रोंके बीचमें गुड़गाँव, अलवर, भरतपुर, जयपुर, बूंदी, कोटा, भोपाल, इन्दौर, खानदेश, बरार, उदयपुर, जैसलमेर, पूर्वीसिंध, जोधपुर, बीकानेर आदितक (कुछमें अंशतः और कुछमें पूर्णतः) फैला हुआ है। इसके कुछ भाग कश्मीर, पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र तथा तमिलनाडमें भी हैं। ग्रियर्सनने भीली (दे०)को राजस्थानीके अंतर्गत नहीं रखा था, किन्तु वस्तुतः इसे राजस्थानीके अंतर्गत माना जाना चाहिये। इसी प्रकार **सौराष्ट्री** (दे०)को भी राजस्थानीका ही स्थानीय रूप माना जाना चाहिये।

डॉ० ग्रियर्सनने राजस्थानी बोलियोंको निम्नांकित ५ वर्गोंमें रखा था–(१) **पश्चिमी राजस्थानी**--इसका क्षेत्र जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर तथा उदयपुर आदि है। इस वर्गकी प्रमुख बोली **मारवाड़ी** (दे०) है, प्रमुख उपबोलियाँ हैं **ढटकी** (दे०), **थली** (दे०), **बीकानेरी** (दे०), **बागड़ी** (दे०),

शेखावाती (दे०), मेवाड़ी (दे०), खैराड़ी (दे०), सिरोही (दे०), गोड़वाड़ी (दे०) तथा देवड़ावाटी (दे०) आदि। (२) **उत्तरी पूर्वी राजस्थानी**--इसका क्षेत्र अलवर, भरतपुर तथा दिल्लीके दक्षिण गुड़गाँवके आसपास है। इसकी बोलियाँ **अहीरवाटी** (दे०) तथा **मेवाती** (दे०) हैं। राजस्थानीका यह रूप पश्चिमी हिन्दीसे बहुत प्रभावित है। (३) **मध्य-पूर्वीय राजस्थानी**--इसका क्षेत्र जयपुर, कोटा तथा बूंदी है। इसकी प्रमुख बोलियाँ **ढुढाड़ी** (दे०) या **जयपुरी** (दे०), **किशनगढ़ी** (दे०) **अजमेरी** (दे०) आदि हैं। उपबोलियाँ हैं **तोरावाटी** (दे०), **राजावाड़ी** (दे०), **चौरासी** (दे०) तथा **नागरचाल** (दे०) आदि। (४) **दक्षिणी-पूर्वी राजस्थानी** (क)--इसका क्षेत्र मालवाके आसपास है। इसकी प्रमुख बोली **मालवी** (दे०) है। (५) **दक्षिणी पूर्वी राजस्थानी** (ख)--इसका क्षेत्र नीमाड़के आसपास है। इसकी प्रमुख बोली '**नीमाड़ी**' (दे०) है। डॉ० चटर्जी इस वर्गीकरणसे सहमत नहीं हैं। वे ग्रियर्सनके वर्ग एक तथा तीनको ही राजस्थानी कहना समीचीन समझते हैं और इन्हें क्रमसे **पश्चिमी** और **पूर्वी** दो वर्गोंमें रखनेके पक्षमें हैं। अहीरवाटी, मेवाती, मालवी तथा मेवाड़ी आदिको पश्चिमी हिन्दीके अंतर्गत रखा जाय या राजस्थानीके, इस संबंधमें वे निश्चित नहीं हैं। ग्रियर्सन और चटर्जीके मतों एवं इन बोलियोंके व्याकरणोंको दृष्टिमें रखते हुए मैं कुछ अन्य निष्कर्षोंपर पहुँचा हूँ, जो इस प्रकार हैं :--(क) ग्रियर्सनका ५वाँ वर्ग, जिसमें नीमाड़ी (दे०) आती है, राजस्थानी नहीं, अपितु पश्चिमी हिन्दी वर्गका है। (ख) ग्रियर्सनके दूसरे वर्गके संबंधमें भी यही बात है। (ग) सौराष्ट्री और भीलीका एक अन्य वर्ग बनाया जाना चाहिये, जिसे **दक्षिणी वर्ग** कहा जा सकता है। इस प्रकार ये वर्ग बने :--(१) **पश्चिमी राजस्थानी**--मारवाड़ी। (२) **पूर्वी-राजस्थानी**--जयपुरी, किशनगढ़ी, अजमेरी, हाड़ौती आदि। (३) **दक्षिणी पूर्वी राजस्थानी**--मालवी। (४) **दक्षिणी राजस्थानी**--भीली, सौराष्ट्री। इनमें तीसरा वर्ग पश्चिमी हिन्दीके निकट होते हुए भी राजस्थानीकी ओर झुका है, अतः इसे राजस्थानीके अंतर्गत ही रखा जा सकता है। इसके सम्बन्धमें डा० चटर्जीके संदेहके लिए पर्याप्त आधार नहीं दीखता। साहित्यिक दृष्टिसे राजस्थानीकी बोलियोंमें विशेष महत्त्व केवल मारवाड़ीका है। यों मालवी आदि कुछ अन्यमें भी कुछ साहित्य मिलता है। राजस्थानीकी विविध बोलियोंमें लिखनेवाले कवियोंमें नरपतिनाल्ह, मीराँबाई, ईसरदास, पृथ्वीराज, करणीदास तथा बाँकीदास आदि प्रमुख हैं। राजस्थानीका सम्बन्ध शौरसेनीके एक रूप नागर अपभ्रंशसे माना जाता है। डॉ० चटर्जी इस प्रदेशके अपभ्रंशको शौरसेनीसे अलग सौराष्ट्री अपभ्रंश माननेके पक्षमें हैं। कुछ लोगोंने इसे गुर्जर अपभ्रंश भी कहा है। वस्तुतः यह शौरसेनी अपभ्रंशका ही एक पश्चिमी रूप है। राजस्थानी भाषा-भाषी छपाईके काममें नागरी लिपिका प्रयोग करते हैं। लेखनमें-नागरीके अतिरिक्त उसका एक विकृत घसीट रूप भी प्रयुक्त होता है। बही-खाता आदि लिखनेमें महाजनी या बणियावटी लिपिका प्रचार है। यहाँकी नागरी तथा महाजनी लिपियां पहले मुड़िया लिपिसे कुछ प्रभावित रही हैं। पंजाब तथा सिंधकी सीमापर फ़ारसी लिपिका भी कुछ प्रचार रहा है।

राजावाटी--**जयपुरी** (दे०)का एक स्थानीय रूप, जो जयपुरके दक्षिण-पूरबमें बोला जाता है। अपने क्षेत्रके उत्तरी भागमें यह परिनिष्ठित 'जयपुरी'से अधिक प्रभावित है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,३३,४४९ थी।

राज्य भाषा (official language)--ऐसी भाषा, जिसका प्रयोग राज्यके कार्योंमें होता है। (दे०) **भाषाके विविध रूप**।

राठ (rath)--**राठी मेवाती** (दे०)का एक अन्य नाम।

राठरी (rathari)--१८९१की बम्बई

जनगणनाके अनुसार **गुजराती** (दे०)का पंचमहलमें प्रयुक्त एक रूप । ग्रियर्सनके मतानुसार यह **राठवी भीली** (दे०)ही है।

राठवाली—गढ़वालीकी उपबोली **राठी**(दे०)-का एक अन्य नाम ।

राठवी(rathvi)—**भीली**(दे०)की, रीवाँ-कंथामें प्रयुक्त, एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ८,००० थी ।

राठवी भिलाली—**भीली** (दे०) बोलीका एक स्थानीय रूप, जो बरवानीके आसपास बोला जाता है ।

राठी—(१) **गढ़वाली** (दे०)की, गढ़वाल तथा अलमोड़ेमें प्रयुक्त, एक उप-बोली । इसका एक अन्य नाम **राठवाली** भी है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषासर्वेक्षणके अनुसार ६३,०५७थी । (२) **सिरोही**(दे०) का एक स्थानीय रूप जो सिरोही राज्यमें आबू पर्वतपर रहनेवाले लोगों द्वारा बोला जाता है। इन लोगोंको आसपासके मैदानी राजपूत 'राठ' कहते हैं, इसी आधारपर इनकी भाषाका नाम 'राठी' है। इसका दूसरा नाम **'आबूलोकको बोली'** भी है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २,००० थी (३) **राठौरा** (दे०) का एक अन्य नाम । (४) परिनिष्ठित पंजाबीका, बीकानेरमें प्रयुक्त, एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २२,००० थी । इसे **पछाडी** भी कहते हैं ।

राठी मेवाती—उत्तरी-पूर्वी राजस्थानीकी बोली **मेवाती** (दे०)का एक स्थानीय रूप जो अलवरके पास बोला जाता है । इसे **राठ** भी कहते हैं , क्योंकि इसके क्षेत्रका नाम 'राठ'(=निर्दय)है । 'राठी मेवाती' पर 'अहीरवाटी'का कुछ प्रभाव है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,२२,२०० थी ।

राठोरा(rathora)—**लोधांती** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

राठौरा—**'लोधांती'**(दे०)का एक अन्य नाम।

राठौरी—(१) **राठौरा** (दे०)का एक अन्य नाम । (२) १९०१की बंबई जनगणनाके अनुसार कोलाबा (बंबई) में प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०)भाषा (३) ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **पंजाबी** (दे०)का फ़ीरोज़पुर (पंजाब)में प्रयुक्त, एक रूप । इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३८,००० थी।

राणी भील(rani bhil)—**भीली** (दे०)की, नवसारी (बड़ौदा)में प्रयुक्त एक बोली । इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ८७,५४० थी ।

रानटी (ranati)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार,खानदेशमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०)भाषा । यह **भीली**(दे०)का एक रूप है।

रान्केल (rankel)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरौकन** (दे०) परिवारकी एक भाषा ।

राभा (rabha)—**चीनी परिवार** (दे०)-की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके, बड़ वर्गकी, असमघाटीके पश्चिमी भागमें प्रयुक्त, एक भाषा । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २२,५४५ थी ।

रामगढ़िया—**कुमायूंनी** उप-बोली **रउ चौभैंसी** (दे०)का, नैनीताल जिलेके रामगढ़ परगनेमें प्रयुक्त, एक स्थानीय रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३,९५७ थी ।

रामपुरी (rampuri)—**कोची** (दे०)का, रामपुर रियासत(पंजाब)में प्रयुक्त, एक रूप ।

रामपुरी भाबरी—**कुमायूंनी**(दे०)की रामपुर (रियासत)में प्रयुक्त एक उपबोली । ग्रियर्सनके भाषासर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ९०० थी ।

रामा(rama)—**चिब्चा-अरउअक** (दे०) वर्गकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

रामा-रामा (rama-rama)—**टुपीगँवरनी** (दे०) परिवारकी दक्षिणी अमेरिकामें प्रयुक्त एक भाषा ।

राल्ते (ralte)—**चीनी-परिवार** (दे०)की

तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी बर्मी शाखाके कुकी-चिन वर्गकी, लुशाई पहाड़ियों तथा उसके आसपासके कुछ भागोंमें प्रयुक्त एक भाषा। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १८,१३३ थी।

राष्ट्र-भाषा (national language)--वह भाषा जिसका संपूर्ण देश या राष्ट्रमें प्रयोग होता हो। (दे०) **भाषाके विविध रूप**।

रिअंग (riang)--**यिन** (दे०) का एक नाम।

रिअंग लेंग (riangleng)--**रक्त रिअंग** (दे०) का एक अन्य नाम।

रिआसी बोलियाँ (riasi dialects)--कश्मीरी (दे०) भाषाकी बोलियोंका, पीर पंजाल पहाड़ियोंके दक्षिणमें प्रयुक्त, एक वर्ग। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २०,२५२ थी।

रिक्त शब्द (embry word)--चीनी आदि कुछ भाषाओंके ऐसे शब्द, जो केवल संबंधदर्शी तत्त्वके रूपमें काम करते हैं, अर्थात् अर्थदर्शी शब्दोंके आपसी संबंध प्रकट करते हैं। उनका कोई अपना स्पष्टतः अर्थ नहीं होता। व्यावहारिक दृष्टिसे अर्थसे रिक्त होनेके कारण ही उन्हें **रिक्त शब्द** कहते हैं। (दे०) **पूर्णशब्द**।

रिक्समाल (riksmal) नारवेमें अभी हालतक प्रयुक्त होनेवाली, साहित्यिक डैनिशपर आधारित, नारवेजिअन भाषा। इसे **डैनी-नारवेजिअन** भी कहते हैं।

रिट्वन (ritwan)--**केलीफोर्नियन** (दे०) वर्गका एक अन्य नाम।

रीतिवाचक क्रियाविशेषण-(दे०) **क्रिया विशेषण**।

रीति वाचक क्रिया विशेषण उपवाक्य--(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक।

रीतिवाचक प्रत्यय--एक प्रकारका **प्रत्यय** (दे०)

रीवाँई--**बघेली** (दे०) का एक अन्य नाम। बघेली बोलीका मुख्य केन्द्र रीवाँ है, अतः उसे 'रीवाँई' भी कहते हैं।

रुंडी (rundi)--**बाँटू** (दे०) परिवारकी टैंगानीकाके उत्तर-पूर्वमें प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा।

रुआँडा (ruanda)--**बाँटू** (दे०) परिवारकी टैंगानीकाके उत्तर-पूर्वमें प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा।

रुतुल (rutul)--काकेशस परिवारकी काकेशसमें प्रयुक्त एक भाषा।

रुथेनियन (ruthenian)--स्लाव परिवारकी उक्तेनिअन या लघु रूसी (little russian) भाषाकी पश्चिमी बोली जो कारपैथो-रूस नामक प्रदेशमें बोली जाती है। इसीलिए इसे **कारपैथो-रूसी** भी कहते हैं।

रुधादिगण--संस्कृत धातुओंका एक **गण** (दे०)

रुहेलखंडी-- **हिन्दी** (दे०) का एक रूप जो रुहेलखंडमें बोला जाता है। रुहेलोंके कारण इस क्षेत्रका यह नाम पड़ा। भाषाका नाम क्षेत्रपर ही आधारित है।

रुहोक (ruhok)--'**पलौंग**' की **पले** (दे०) बोलीका रूबीमें प्रयुक्त एक रूप।

रूंगछेंबूंग (rungchhenbung)--**खंबू** (दे०) की नेपालमें प्रयुक्त एक बोली।

रूगा (ruga)--गारो (दे०) की, **गारो** पहाड़ियोंपर प्रयुक्त, एक बोली।

रूढ़ शब्द (simple word)—ऐसे **शब्द** (दे०) जिनको सार्थक (प्रसंगसे संबद्ध) रूपमें तोड़ा न जा सके। इन्हें **रूढ़िशब्द** भी कहते हैं।

रूढ़ि—एक प्रकारके 'शब्द'। इन्हें 'रूढ़' भी कहते हैं। (दे०) **शब्द**।

रूढ़ि लक्षणा—एक प्रकारकी लक्षणा (दे०) **शब्द-शक्ति**।

रूथेनियन (ruthenian)—(दे०) **रुथेनियन**

रून (rune)—एक प्राचीन लिपिके लिपिचिन्ह्नोंके लिए प्रयुक्त नाम, जिसका प्रयोग तीसरी सदीसे जर्मनिक लोग करते रहे हैं। इस लिपिको **रूनिक लिपि**, **फुथोर्क** (futhore), या **फुथार्क** (futhark) कहते हैं। पहले इसमें २४ अक्षर थे। बादमें इसके **नार्स** रूपमें कुछ कम हो गये। इस लिपिकी उत्पत्ति एत्रुस्कन् से मानी जाती है। कदाचित् कुछ प्रभाव लैटिनका भी पड़ा है। इंगलैंडमें रोमन लिपिके आगमनके पूर्व वहाँ इसी लिपिका प्रयोग

होता था । इसमें लिखे अभिलेख लगभग १,००० ई० तक मिलते हैं। (दे०) फ़ुथॉर्क।

ᚳᚣᚾᛖᚹᚢᛚᚠ

[यह रूनिक लिपिमें cynewulf लिखा है]

रूनिक लिपि—(दे०) **रून** ।

रूप (morph)—भाषाकी इकाई वाक्य है । अर्थात् भाषाको वाक्योंमें तोड़ा जा सकता है। उसी प्रकार वाक्यके खंड शब्द होते हैं और शब्दकी ध्वनियाँ। एक ध्वनि या एकसे अधिक ध्वनियोंसे शब्द बनता है, और एक शब्द या एकसे अधिक शब्दोंसे वाक्य बनता है। यहाँ 'शब्द' शब्दका सामान्य या शिथिल प्रयोग है। थोड़ी गहराईमें उतरकर देखा जाय तो कोश-में दिये गये सामान्य 'शब्द' और वाक्यमें प्रयुक्त 'शब्द' एक नहीं हैं । वाक्यमें प्रयुक्त शब्दमें कुछ ऐसा भी होता है ,जिसके आधार-पर वह अन्य शब्दोंसे अपना सम्बन्ध दिखला सके या अपनेको बाँध सके। लेकिन 'कोश'में दिये गये 'शब्द'में ऐसा कुछ नहीं होता। यदि वाक्यके शब्द एक दूसरेसे अपना सम्बन्ध न दिखला सकें तो वाक्य बन ही नहीं सकता। इसका आशय यह है कि शब्दोंके दो रूप हैं। एक तो शुद्ध रूप है या मूल रूप है जो कोशमें मिलता है, और दूसरा वह रूप है जो किसी प्रकारके सम्बन्धतत्त्वसे युक्त होता है । यह दूसरा, वाक्यमें प्रयोगके योग्य, रूप ही **पद** या **रूप** कहलाता है। संस्कृतमें 'शब्द' या मूल रूपको 'प्रकृति' या 'प्रातिपदिक' कहा गया है और सम्बन्धस्थापनके लिए जोड़े जाने-वाले तत्त्वको **प्रत्यय** । महाभाष्यकार पतं-जलि कहते हैं : 'नापि केवला प्रकृतिः प्रयो-क्तव्या नापि केवल प्रत्ययः । ' अर्थात् वाक्यमें न तो केवल 'प्रकृति'का प्रयोग हो सकता है न केवल 'प्रत्यय' का। दोनों मिलकर प्रयुक्त होते हैं। दोनोंके मिलनेसे जो बनता है वही **पद** या **रूप** है। पाणिनिके 'सुप्तिङन्त पदम्' (सुप् और तिङ् जिनके अंतमें हो वे पद हैं) में भी पदकी परिभाषा यही है। यहाँ प्रत्यय या विभक्तिको सुप् और तिङ ('सुप्तिङौ विभक्तिसंज्ञौ स्तः) कहा गया है। उदाहरण-के लिए 'पत्र' शब्दको लें। यह एक शब्द मात्र है। संस्कृतके किसी वाक्यमें इसे प्रयोग करना चाहें तो इसी रूपमें हम इसका प्रयोग नहीं कर सकते । वैसा करनेके लिए इसमें कोई सम्बन्धसूचक विभक्ति जोड़नी होगी । जैसे 'पत्रं पतति' (पत्ता गिरता है) । अब यहाँ हम स्पष्ट देख रहे हैं कि शुद्ध शब्द तो 'पत्र' है और वाक्यमें प्रयोग करनेके लिए उसे 'पत्रं-का रूप धारण करना पड़ा है । अर्थात् 'पत्र' शब्द है और 'पत्रं' पद । इसी प्रकार 'राम' शब्द, प्राप्तिपदिक या प्रकृति है और रामः, रामं आदि पद या रूप स्थान-प्रधान या अयोगात्मक भाषाओंमें (जैसे चीनी आदि) शब्द और पदका यह भेद नहीं दिखाई पड़ता। इसका कारण यह है कि वहाँ शब्दोंमें सम्बन्ध दिखानेके लिए किसी **सम्बन्ध-तत्त्व** (विभक्ति आदि) के जोड़नेकी आवश्यकता नहीं पड़ती। शब्दके स्थानसे ही शब्दका सम्बन्ध अन्य शब्दोंसे स्पष्ट हो जाता है या दूसरे शब्दोंमें बिना विभक्ति आदि जोड़े, किसी वाक्यमें अपने विशिष्ट स्थानपर रक्खे जानेके कारण ही 'शब्द' पद बन जाता है । हिन्दी तथा अंग्रेजी आदि भारोपीय कुलकी कुछ आधु-निक भाषाएँ भी कुछ अंशोंमें इस प्रकारकी हो गयी हैं। उदाहरणके लिए 'लड्डू' हिन्दी-का एक शब्द है। इसे वाक्यमें रखना हुआ तो बिना किसी परिवर्तनके , या विभक्ति आदि लगाकर पद बनाये बिना ही रख दिया-- 'लड्डू गिरता है' । और 'लड्डू' ने वाक्यमें जाते ही अपने स्थानके कारण (यहाँ कर्त्ताका स्थान है) अपनेको पद बना लिया और उसका अन्य शब्दोंसे सम्बन्ध स्पष्ट हो गया । दूसरी ओर 'राम लड्डू खाता है'में ही वही 'लड्डू' है, लेकिन स्थान विशेषके कारण यहाँ उसके सम्बन्ध और प्रकारके हो गये हैं। वह कर्ता न होकर कर्म है। अंग्रेज़ीसे भी इस प्रकारके अगणित उदाहरण लिये जा सकते हैं। जैसे ram killed mohan तथा mo-han killed ram. **शब्द**--पद शब्दपर

ही आधारित होते हैं, अतः पहले संक्षेपमें शब्द-रचना विचारणीय है। एकाक्षर परिवारकी भाषाओंमें शब्दकी रचनाका प्रश्न ही नहीं उठता। उनमें तो केवल एक ही चीज़ होती है, जिसमें विकार या परिवर्तन कभी नहीं होता और जिसे धातु, शब्द या पद सब कुछ कह सकते हैं। कुछ प्रश्लिष्ट योगात्मक (पूर्ण) भाषाओंमें पूरे वाक्यका ही शब्द बन जाता है, जैसे 'नाचो-लिनिन' (दे०) **आकृतिमूलक वर्गीकरण** ऐसे शब्दोंपर भी यहाँ विचार नहीं किया जा सकता, क्योंकि उनका रूप मात्र ही शब्द-सा है। वे असलमें वाक्य ही हैं। ये वाक्य जिन शब्दोंसे बनते हैं, वे भी एक प्रकारसे बने-बनाये शब्द हैं, अतः उनपर भी विचार करनेकी यहाँ आवश्यकता नहीं। शेष अधिकतर भाषाओंमें शब्दकी रचना धातुओंमें पूर्व, मध्य या पर (आरम्भ बीच या अन्तमें), प्रत्यय जोड़कर होती है। भारोपीय परिवारकी भाषाओंमें शब्दकी रचना बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। इसमें प्रत्येक शब्दका विश्लेषण धातुओं तक किया जा सकता है। (सेमिटिक परिवारमें भी यही बात है) धातुएँ विचारोंकी द्योतिका होती हैं। शब्द बनानेके लिए उनमें उपसर्ग और प्रत्यय दोनों ही आवश्यकतानुसार जोड़े जाते हैं। उपसर्ग जोड़नेसे मूलके अर्थमें परिवर्तन हो जाता है, जैसे विहार, संहार, परिहार आदिमें। प्रत्यय जोड़कर उसी अर्थके 'शब्द' या 'पद' बनाये जाते हैं जैसे 'कृ' धातुमें तृच् प्रत्यय जोड़नेसे कर्तृ शब्द बना। प्रत्यय भी दो प्रकारके होते हैं। एक, जो सीधे धातुमें जोड़ दिये जाते हैं उन्हें 'कृत्' कहते हैं। दूसरेको तद्धित कहते हैं। तद्धितको धातुमें कृत् प्रत्यय जोड़नेके बाद जोड़ा जाता है। (दे०) **प्रत्यय, शब्द, प्रातिपदिक**)। हम ऊपर कह चुके हैं कि 'शब्द'को वाक्यमें प्रयुक्त होनेके योग्य बना लेनेपर उसे **'पद'** या रूपकी संज्ञा दे दी जाती है। अयोगात्मक भाषाओंमें पद नामकी शब्दसे कोई अलग वस्तु नहीं होती, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है। वहाँ स्थानके कारण ही शब्द पद बन जाता है। योगात्मक भाषाओंमें **पद** बनानेके लिए **शब्द** या **प्रातिपदिक**में सम्बन्धतत्त्वके जोड़नेकी आवश्यकता होती है। शब्दपर हम विचार कर चुके हैं। यहाँ सम्बन्ध-तत्त्व और उसके जोड़नेकी विधिपर विचार किया जायगा। **सम्बन्ध-तत्त्व**--वाक्यमें दो तत्त्व (सम्बन्ध और अर्थ) होते हैं। एक है अर्थ-तत्त्व (semanteme) और दूसरा सम्बन्ध-तत्त्व। सम्बन्ध-तत्त्वका कार्य है विभिन्न अर्थ-तत्त्वोंका आपसमें सम्बन्ध दिखला देना। उदाहरणार्थ एक वाक्य लिया जा सकता है--"रामने रावणको वाणसे मारा।' इस वाक्यमें चार अर्थ-तत्त्व हैं--राम, रावण, वाण और मारना। इन चारोंमें केवल अर्थ है। इनमें वह शक्ति नहीं है कि एक दूसरेसे संबंध दिखला सकें। इसीलिए इन्हें यों ही रख दिया जाय तो वाक्य नहीं बनेगा। वाक्य बनानेके लिए चारों अर्थ-तत्त्वोंमें सम्बन्धतत्त्वकी आवश्यकता पड़ेगी। इन चारों अर्थ-तत्त्वोंसे बने वाक्य 'रामने रावणको वाणसे मारा' में चार संबंध तत्त्व हैं 'ने' सम्बन्ध-तत्त्व वाक्यमें रामका सम्बन्ध दिखलाता है, और इसी प्रकार 'को' और 'से' क्रमसे रावण और वाणका सम्बन्ध बतलाते हैं। मारनासे 'मारा' पद बनानेमें सम्बन्ध-तत्त्व इसीमें मिल गया है। यहाँ हमें एक ओर ऐसे सम्बन्ध-तत्त्व मिले जो शब्दके साथ हैं किंतु अलग हैं। (जैसे रामने); और दूसरी ओर एक ऐसा मिला जो शब्दमें ऐसा घुल-मिल गया है जैसे (मारामें) कि पता नहीं चलता। इसी प्रकार कुछ और तरहके भी सम्बन्ध-तत्त्व होते हैं। यहाँ सभी प्रकारके सम्बन्ध-तत्त्वोंपर पृथक्-पृथक् विचार किया जा रहा है। **सम्बन्ध-तत्त्वके प्रकार**--(१) **शब्द-स्थान**--जैसा कि पीछे कई स्थानोंपर कहा जा चुका है शब्दोंका स्थान भी कभी-कभी सम्बन्ध-तत्त्वका काम करता है। संस्कृतके समासोंमें यह बात प्रायः देखी जाती है। कुछ उदाहरण दिये जा सकते हैं--राज-

सदन = राजाका घर; सदनराज = घरोंका राजा अर्थात् बहुत अच्छा या बड़ा घर; ग्राम-मल्ल = गाँवका पहलवान; मल्लग्राम = पहलवानोंका ग्राम; धनपति = धनका पति, कुबेर; पतिधन = पति (शौहर)का धन। यहाँ हम स्पष्ट देखते हैं कि स्थान-परिवर्तन-से सम्बन्ध-तत्त्वमें अन्तर आ गया है और अर्थ बदल गया है। अंग्रेज़ीमें भी 'स्थान' कभी-कभी सम्बन्ध-तत्त्वका काम करता है, जैसे 'गोल्ड मेडल'। इसमें यदि दोनों शब्दोंका स्थान उलट दें, तो यह भाव नहीं व्यक्त होगा। 'पावरहाउस' तथा 'लाइटहाउस' आदि भी ऐसे ही उदाहरण हैं। संस्कृत तथा अंग्रेज़ीके उदाहरणोंकी भांति हिन्दीमें भी अधिकारीके बाद अधिकृत वस्तु रखी जाती है। 'राजमहल', 'डाकघर' तथा 'मालबाबू' इसीके उदाहरण हैं। यहाँ भी स्थान विशेषपर होनेसे ही राज, डाक, तथा माल शब्द संज्ञा होते हुए भी विशेषणका काम कर रहे हैं और इस प्रकार उनका साथके शब्दोंसे विशिष्ट सम्बन्ध स्पष्ट है। चीनीमें भी इसी प्रकार अधिकारीके बाद अधिकृत वस्तु रखी जाती है। वँग = राजा, तीन = घर। अतः वँग तीन = राजाका घर। वेल्शमें शब्द-स्थान इससे बिल्कुल उलटा है। जैसे ब्रेनहिन = राजा, और ती = घर। पर यदि 'राजाका घर' कहना होगा तो हिन्दी या चीनी आदिकी भांति 'ब्रेनहिन ती' न कहकर 'ती ब्रेनहिन' कहेंगे। वाक्योंमें भी स्थानसे सम्बन्ध-तत्त्व स्पष्ट हो जाता है। यह बात चीनी आदि स्थान-प्रधान भाषाओं-में विशेष रूपसे पायी जाती है। उदाहरण-स्वरूप, **नो त नि** = मैं तुम्हें मारता हूँ। **नि त नो** = तू मुझे मारता है। अंग्रेज़ी तथा हिन्दीमें भी इसके उदाहरण मिल जाते हैं—'mohan killed ram.' 'ram killed mohan.'

कहना न होगा कि पहले वाक्यमें मोहन और रामका सम्बन्ध दूसरा है पर स्थानके परिवर्तन मात्रसे ही दूसरे वाक्यमें वाक्य पूर्णतः परिवर्तित हो गया है। हिन्दीमें—'चावल जल रहा है।' 'मैं चावल खाता हूँ।' इन दोनों वाक्योंमें बिना किसी विभक्तिके केवल 'चावल' शब्द है, पर स्थानकी विशिष्टताके कारण है वह दोनोंमें दो प्रकारका सम्बन्ध दिखला रहा है। पहलेमें कर्ता है तो दूसरेमें कर्म। (२) **शब्दोंको ज्योंका त्यों छोड़ देना, या शून्य सम्बन्ध-तत्त्व जोड़ना**—कभी-कभी कोई भी सम्बन्ध-तत्त्व न लगाकर शब्दोंको ज्योंका त्यों छोड़ देना भी सम्बन्ध-तत्त्वका बोधक होता है। अंग्रेजीमें सामान्य वर्तमानमें प्रथम पुरुष एकवचन (i go) तथा सभी बहुवचनों (we go, you go, they go)में क्रियाको ज्योंका त्यों छोड़ देते हैं। अंग्रेजीमें sheep का बहुवचन शीप ही है। हिन्दीमें धातुओंका मूल रूप (मर, रो, हँस तथा लिख आदि) ही आज्ञासूचक क्रियाका रूप है। संस्कृतमें ऐसी संज्ञाएँ (जैसे वणिक्, भूभृत्, मरुत्, सरित्, विद्युत्, वारि, दधि, विद्या, नदी तथा स्त्री आदि) कम नहीं हैं, जिनका अविकृत रूप ही प्रथमा एकवचनका बोधक है। आधुनिक भाषा-विज्ञानवेत्ताओंने स्पष्टताके लिए ऐसे रूपोंको शून्य सम्बन्ध-तत्त्व-युक्त रूप कहा है। अर्थात् मूल शब्दमें **शून्य सम्बन्ध-तत्त्व** (zero morpheme) जोड़कर ये बने हैं। (३) **स्वतन्त्र शब्द**—संसारकी बहुत-सी भाषाओंमें स्वतन्त्र शब्द भी सम्बन्ध-तत्त्वका कार्य करते हैं। हिन्दीके सारे परसर्ग या कारक चिह्न (ने, को, से, पर, में, का, की, के) इसी वर्गके हैं और उनका कार्य दो या अधिक शब्दोंका वाक्य या वाक्कांश या शब्द समूहमें सम्बन्ध दिखलाना ही है। अंग्रेजीके टू(to) फ्रॉम(from) ऑन(on) तथा इन (in) आदि भी इसी श्रेणीके शब्द हैं। संस्कृतके इति, आदि, एव तथा च आदि भी ऐसे ही शब्द हैं। चीनीमें रिक्त (empty) और पूर्ण (full) दो प्रकारके शब्द होते हैं। रिक्त शब्दोंका प्रयोग भी सम्बन्ध-तत्त्व दिखलानेके लिए ही होता है। चीनीके त्सि (= का), यु (= को), त्सुंग (= से) तथा लि (= पर)

रिक्त शब्द हैं, जो ऊपरके हिन्दी तथा अंग्रेजी शब्दोंकी ही श्रेणीमें आते हैं। ग्रीक, लैटिन, फ़ारसी तथा अरबीमें भी इस प्रकारके सम्बन्ध-तत्त्वदर्शी स्वतन्त्र शब्द मिलते हैं। कभी-कभी दो स्वतन्त्र शब्दोंका भी प्रयोग सम्बन्ध-तत्त्वके लिए होता है। हिन्दीका एक वाक्य लें—'अगर पिताजीकी नौकरी छूट गयी तो मुझे पढ़ाई छोड़ देनी पड़ेगी।' इसमें 'अगर' और 'तो' इसी प्रकारके शब्द हैं। हालाँकि . . .मगर, न. . .न, ज्यों, त्यों, यदि. . तो, तथा यद्यपि. . .तथापि आदि भी इसीके उदाहरण हैं। अंग्रज़ीके (if). . देन(then), या नीदर(neither)...नार भी इसी श्रेणीके हैं। (४) **ध्वनि-प्रतिस्थापन** (replacing)—इसके अंतर्गत ३ उपभेद किये जा सकते हैं। **स्वर-प्रतिस्थापन, व्यंजन-प्रतिस्थापन, स्वर- व्यंजन-प्रतिस्थापन**। (क) केवल स्वरोंमें परिवर्तनसे भी कभी-कभी सम्बन्धतत्त्व प्रकट किया जाता है। कुछ भाषा-विज्ञान-वेत्ताओंने इसीको अपश्रुति (vocalic ablaut) द्वारा सम्बन्ध-तत्त्व प्रकट होना कहा जाता है। अंग्रेजीमें 'सिंग' (sing) से सैंग (sang) तथा संग (sung) इसी प्रकार बनते हैं। tooth से teeth, find से found भी स्वर-प्रति-स्थापन हैं। जर्मनमें विर गेबेन (wir geben = हम देते हैं) से विर गैबेन (wir gaben = हमने दिया) इसी प्रकार बना है। संस्कृतमें दशरथसे दाशरथी तथा पुत्रसे पौत्र या हिन्दीमें चलसे चला, और चाल, काटसे काटा या काट, मरसे मरा, मारा, मारी, मारे या मामासे मामी आदि भी इसी श्रेणीके उदाहरण हैं। (ख) व्यंजन प्रतिस्थापनमें send से sent या advice से advise देखे जा सकते हैं। (ग) 'जा' से 'गया' be से am या is; go से went, संस्कृतमें पच् धातुका लुङ् परस्मैपदमें अपाक्षीः या अपाक्त; रभ्‌का लुङ्‌में अरप्साताम् या आशीः में रप्सीष्ट आदि स्वर-व्यंजन प्रतिस्थापनके उदाहरण हैं। (५) **ध्वनि-द्विरावृत्ति** (reduplicating)— कुछ ध्वनियोंकी द्विरावृत्तिसे भी कभी-कभी सम्बन्ध-तत्त्वका काम लिया जाता है। यह द्विरावृत्ति मूल शब्दके आदि, मध्य और अंत तीनों स्थानोंपर पायी जाती है। दक्षिणी मेक्सिकोकी तोजोलवल भाषासे अंत्य द्विरावृत्ति मिलती है। संस्कृत, ग्रीकमें भी कुछ उदाहरण मिलते हैं। लंकाकी एक भाषामें manao = चाहना और manaonao = (वे) चाहते हैं। इसी प्रकार अफ्रीकाकी एक भाषामें irik = चलना और irikrik = वह चलता है। (६) **ध्वनि-वियोजन** या ध्वनि न्यूनन subtracting—कभी-कभी कुछ ध्वनियोंको घटाकर या निकालकर भी सम्बन्धतत्त्वका काम लिया जाता है। उसके उदाहरण अधिक नहीं मिलते। फ्रांसीसी भाषासे कुछ उदाहरण दिये जा रहे हैं :—

स्त्रीलिंगमें उच्चरित रूप sul और लिखित रूप soule तथा पुल्लिगमें उच्चरित रूप su और लिखित रूप soul = पीया है। स्त्री०में उच्च०रूप ptit और लिखित रूप petite तथा पु०में उच्चरित रूप pti और लिखित रूप petit = छोटा है।

नाइडाने इन्हें इस रूपमें माना है। यों उलटे रूपमें जोड़नेका उदाहरण मानना शायद अधिक ठीक होगा। (७) **आदिसर्ग, पूर्वसर्ग, पूर्वप्रत्यय** या **उपसर्ग** (prefix)—मूल शब्द या प्रकृतिके पूर्व कुछ जोड़कर शब्द तो बहुत-सी भाषाओंमें बनते हैं किन्तु सम्बन्धतत्त्वके लिए इसका प्रयोग बहुत अधिक नहीं मिलता। संस्कृतमें भूतकालकी क्रियाओंमें 'अ' आरम्भमें लगाते हैं, जैसे अगच्छत्, अचोरयत्। अफ्रीकाकी बंटू कुलकी काफिर भाषामें यह प्रवृत्ति विशेष देखी जाती है। उदाहरणार्थ 'कु' वहाँ सम्प्रदान कारकका चिह्न है। 'ति' = हम, नि = उन। कुति = हमको; कुनि = उनको। (८) **मध्यसर्ग** (infix)—कभी-कभी सम्बन्धतत्त्व मूल शब्दके बीचमें भी आता है। यह ध्यान देनेकी बात है कि मूल शब्द

और प्रत्यय या उपसर्गके बीचमें यदि सम्बन्ध-तत्त्व आये तो उसे सच्चे अर्थमें मध्यसर्ग नहीं कहा जा सकता। उदाहरणार्थ संस्कृतमें गम्यतेमें 'य' गम् धातुके बाद आया है अतः वह प्रत्यय है मध्यसर्ग नहीं। मुण्डामें इसके उदाहरण मिलते हैं। उदाहरणार्थ दल=मारना, दपल=परस्पर मारना। मंझि=मुखिया; मपंझि=मुखिया लोग। संस्कृतमें रुधादि गणकी धातुओंके रूप इसके अच्छे उदाहरण हैं क्योंकि इनमें धातुके बीचमें 'न्' जोड़ा जाता है। जैसे रुध्से रुणद्धि (रोकता है), रुन्ध (तुमलोग रोकते हो) या छिद्से छिनद्मि (मैं काटता हूँ) आदि। यों इनमें अधिकांशमें मध्य-सर्गके साथ-साथ अंत-सर्गका भी प्रयोग होता है। अरबीमें भी इसके उदाहरण पर्याप्त हैं जैसे कतबसे किताब या कुतुब् आदि। त्ज़ेलटल (दक्षिणी मेक्सिकोकी एक भाषा)में 'ह' को बीचमें जोड़कर धातुको सकर्मकसे अकर्मक बनाया जाता है। जैसेkuch(ले जाना) से kuhch या kep (साफ करना) से kehp आदि। (९) **अंतसर्ग, विभक्ति या प्रत्यय**(suffix)—इसका प्रयोग सबसे अधिक होता है। संस्कृतमें संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रियाके रूपोंके बनानेमें प्रायः इसीका प्रयोग होता है। राम+:(सु) = रामः। फल+ ं (सु) = फलं। हिन्दीमें भी इसका प्रयोग खूब होता है। 'हो' धातुसे होता, उससे उसने। भोजपुरीमें 'दुवार'से 'दुवारे' (सप्तमी)। अंग्रेज़ी क्रियामें—ed, ing से बननेवाले रूप भी इसी श्रेणीके हैं। (१०) **ध्वनिगुण (बलाघात या सुर)**—बलाघात तथा सुर भी सम्बन्ध-तत्त्वका काम करते हैं। सुरका उदाहरण चीनी तथा अफ्रीकी भाषाओंमें मिलता है। अफ्रीकाकी 'फ़ुल' भाषासे एक उदाहरण लिया जा सकता है। यहाँ 'मिवरत' यदि एक सुरमें कहा जाय तो अर्थ होगा 'मैं मार डालूंगा' पर यदि 'त' का सुर उच्च हो तो अर्थ होगा 'मैं नहीं मारूँगा।' बलाघात तथा स्वराघात-का संस्कृत, स्लैवोनिक, लिथुआनिअन तथा ग्रीकमें भी काफ़ी महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। ग्रीकका एक उदाहरण लिया जा सकता है। 'प्रेट्रोक्टोड'में यदि पहले 'ओ' पर स्वराघात होगा तो अर्थ होगा 'पिता द्वारा मारा गया' पर यदि दूसरे 'ओ' पर होगा तो अर्थ होगा 'पिताको मारनेवाला।' अंग्रेजीमें कन्डक्ट (conduct) में यदि 'क' पर बलाघात होगा तो यह शब्द संज्ञा होगा पर यदि 'ड' पर होगा तो क्रिया। इसी प्रकार प्रेज़ेंट (presentमें) 'रे' पर होनेसे संज्ञा और ज़ेपर होनेसे क्रिया। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य प्रकारके भी सम्बन्ध-तत्त्व मिलते हैं, पर अधिक प्रचलित उपर्युक्त ही हैं। उपर्युक्त दसमें दो या दोसे अधिकको एक साथ सम्मिलित करके भी सम्बन्धतत्त्वका काम लिया जाता है, जैसे क़तल (मारना)से मक़्तूल (जो मारा जाय), तक़ातुल (एक दूसरेको मारना), क़ुत्ताल (क़तल करनेवाले), मुक़ातला (आपसमें लड़ना), मक़तल (क़तल करनेकी जगह) और तकतील (बहुत क़तल करना) आदि। **सम्बन्ध-तत्त्व और अर्थ-तत्त्वका सम्बन्ध**—इन दोनोंके सम्बन्ध सभी भाषाओंमें एक जैसे नहीं होते। इसका कुछ अनुमान हमलोग ऊपरके विवेचनसे भी लगा सकते हैं। यहाँ स्वतन्त्र रूपसे सम्बन्धके प्रकारोंपर विचार किया जायगा। (१) **पूर्ण संयोग**—कुछ भाषाओंमें अर्थतत्त्व और सम्बन्धतत्त्व, दोनों एक दूसरेसे इतने मिले रहते हैं कि एक ही शब्द एक साथ दोनों तत्त्वोंको प्रकट करता है। मारोपीय एवं सैमिटिक दोनों ही प्रखिारकी भाषाएँ ऐसी ही हैं। ऊपर 'स्वर-परिवर्तन' शीर्षकमें ऐसे ही सम्बन्ध-तत्त्वकी ओर संकेत किया गया है। अरबीमें क़्त्ल्में केवल स्वर या कुछ व्यंजन जोड़कर कई शब्द ऐसे बनाये जा सकते हैं, जिनमें दोनों तत्त्व एकमें मिले हैं। जैसे क़ातिल, क़तल, यक़्तुलु (वह मारता है) तथा उत्कुल आदि। अंग्रेजीके भी सिंग(sing)से सैंग (sang) आदि शब्द ऐसे ही हैं। शून्य सम्बन्धतत्त्व-

वाले रूप भी इसी श्रेणीमें रखे जा सकते हैं। (२) **अपूर्ण संयोग**—कभी-कभी ऐसा होता है कि अर्थ और सम्बन्ध, ये दोनों ही तत्त्व एकमें मिले रहते हैं, अतः एक ही शब्द द्वारा दोनों प्रकट होते हैं,किन्तु मिलन अपूर्ण रहता है और इस कारण सम्बन्ध और अर्थतत्त्व, दोनों स्पष्ट देखे जा सकते हैं। उपर्युक्त पूर्ण संयोगकी भांति इनका प्रयोग नीरक्षीरवत् न होकर तिलतंडुलवत् होता है। अंग्रेज़ीकी निर्बल क्रियाएँ ई डी (ed) लगाकर भूत-कालमें परिवर्तित की जाती हैं। उनमें दोनों तत्व मिले रहनेपर भी स्पष्ट दिखाई देते हैं। जैसे asked, talked killed तथा thanked इत्यादि। द्राविड़, तुर्की एवं एस्पेरैंतो आदि भाषाओंमें भी दोनों तत्त्वोंका सम्बन्ध लगभग ऐसा ही मिलता है। इनमें प्रधानतः उपसर्ग या प्रत्ययके रूपमें सम्बन्ध-तत्त्व रहता है। कभी-कभी मध्य-प्रत्ययका भी प्रयोग करना पड़ता है, पर ये सभी स्पष्टतः अलग रहते हैं, अतः इसे अपूर्ण संयोग कहा गया है। कन्नड़ भाषामें 'सेवक' से सेवक-र' या 'सेवक-रन्नु' आदि तथा तुर्कीमें सेव (प्यार करना)से 'सेवइस-मेक' या 'सेव-दिर-मेक'—इसके अच्छे उदाह-रण हैं। (३) **दोनों स्वतन्त्र**—कुछ भाषाओं-में दोनों तत्त्वोंकी सत्ता पूर्णतः स्वतन्त्र होती है। इसके अन्तर्गत भी कई भाग किये जा सकते हैं। (क) चीनी आदि भाषाओंमें दो प्रकारके शब्द होते हैं। पूर्ण शब्द और रिक्त शब्द। भाषाओंके वर्गीकरणमें हम-लोग इनसे परिचित हो चुके हैं। रिक्त शब्दोंका प्रयोग सर्वदा तो नहीं होता.क्योंकि यह स्थान-प्रधान भाषा है, पर कभी-कभी अवश्य होता है। उदाहरणार्थः—

पूर्णशब्द { वो = मैं या मुझे
उलत्सु = लड़का }

रिक्त शब्द 'ती' = अंग्रेजीके एपास्ट्रफी (') आदिकी भाँति अधिकारी चिह्न
अतः वो ती उलत्सु = मेरा लड़का।

भारोपीय परिवारके प्राचीन 'इति' आदि तथा नवीन 'ने','को', 'से' तथा 'टू' (to) आदि भी एक प्रकारसे ऐसे ही रिक्त शब्द हैं। (ख) 'क' वर्गमें दोनों तत्त्व स्वतंत्र होते हुए भी साथ-साथ थे। वाक्यमें सम्बन्ध-तत्त्वका स्थान अर्थतत्त्वके पास ही कहीं था, पर कुछ भाषाएँ ऐसी भी हैं, जिनमें दोनों तत्त्वोंका इस प्रकारका साथ नहीं रहता है। वाक्यमें पहले सम्बन्ध-तत्त्व प्रकट करने-वाले शब्द आ जाते हैं और फिर अन्य शब्द। अमेरिका चक्रकी चिनूक भाषासे एक उदा-हरणका हिन्दी अनुवाद यहाँ लिया जा सकता है:—

'वह—उसने—वह—से मारना—आदमी—औरत—लाठी' = उस आदमीने औरतको लाठीसे मारा। **सम्बन्ध तत्त्वका आधिक्य**—कुछ भाषाओंमें सम्बन्धतत्त्वोंकी संख्या अपेक्षाकृत अधिक रहती है। इसका फल यह होता है कि वाक्यमें प्रति शब्दके साथ एक सम्बन्ध-तत्त्व रहता है और एकके स्थानपर तीन-तीन, चार-चार सम्बन्ध-तत्त्व प्रयोगमें आते हैं।

फुल भाषाका एक उदाहरणः—

बी = बहुवचन बनानेके लिए सम्बन्ततत्त्व
-रिव-बी रैन-ए बी-बी = ये सफेद औरतें।

बंटू परिवारकी सोविया भाषामें:—

मु = एक व्यक्तिका चिह्न
मु-न्तु मु-लोटू = सुन्दर आदमी

हिन्दी आदिमें केवल संज्ञाके साथ बहु-वचनकी विभक्ति लगानेसे काम चल जाता, पर इन भाषाओंमें संज्ञाके सभी विशेषणोंमें भी विभक्ति लगानी पड़ती है। संस्कृत आदि पुरानी भाषाओंमें यह 'आधिक्य' अधिक है। यह आवश्यक नहीं है कि एक भाषामें केवल एक ही तरहके सम्बन्ध-तत्त्व मिलें और दोनों तत्त्वोंका सम्बन्ध भी एक ही तरहका हो। अधिकतर भाषाओं-में कई प्रकारके सम्बन्ध-तत्त्व मिलते हैं। **हिन्दी सम्बन्ध-तत्त्व**-हिन्दीमें अनेक प्रकारके सम्बन्ध-तत्त्व हैं। 'का', 'को', 'से' 'में', 'ने' आदि चीनीकी भाँति रिक्त शब्द हैं। वाक्य-

में किसी हदतक कर्ता, क्रिया, कर्मका स्थान भी निश्चित-सा है, अतः स्थान द्वारा प्रकट होनेवाला सम्बन्धतत्त्व भी है। बातचीत करते समय वाक्योंमें स्वराघातके कारण भी कभी-कभी परिवर्तन हो जाता है (काकु वक्रोक्ति)। 'मैं जा-रहा हूँ' तथा 'मैं-जा रहा हूँ'में अन्तर है। कहीं-कहीं तुर्की आदिकी भाँति अपूर्ण संयोग भी मिलता है, जैसे बालकों (बालक+ओं) या चावलों (चावल+ओं) आदि। इसी प्रकार स्वर और व्यंजनके परिवर्तन द्वारा दोनों तत्त्वोंका पूर्ण संयोग भी मिलता है, जिनमें दोनोंको अलग करना असम्भव है, जैसे 'कर'से किया या 'जा'से गया। अपश्रुतिके उदाहरणके लिए कुकर्मसे कुकर्मी, घोड़ासे घोड़ी या करतासे करती आदि कुछ शब्द लिये जा सकते हैं। इस रूपमें अनेक प्रकारके सम्बन्धतत्त्वोंके उदाहरण प्रायः सभी भाषाओंमें मिल सकते हैं, पर प्राधान्य केवल एक या दो प्रकारके सम्बन्धतत्त्वका ही होता है। हिन्दीमें स्वतंत्र शब्द तथा स्थानसे प्रकट होनेवाले सम्बन्धतत्त्वोंका प्राधान्य है। **सम्बन्ध-तत्त्वके कार्य**—भाषामें सम्बन्धतत्त्व द्वारा प्रमुखतः काल, लिंग, पुरुष, वचन तथा कारक आदिकी अभिव्यक्ति होती है। **काल**—कालके वर्तमान, भूत और भविष्य तीन भेद हैं और फिर इन कालोंकी क्रियाओंके पूर्णता-अपूर्णता तथा भाव या अर्थ (mood) आदिके आधारपर सामान्य वर्तमान, अपूर्ण वर्तमान आदि बहुतसे उपभेद हैं। क्रियामें विभिन्न प्रकारके सम्बन्धतत्त्व जोड़कर ही कालके इन भेदों और उपभेदोंकी सूक्ष्मताओंको प्रकट करते हैं। इसमें अनेक प्रकारके सम्बन्ध-तत्त्वोंसे काम लेना पड़ता है। कहीं तो स्वतन्त्र शब्द जोड़कर (I shall goमें शैल) काम चलाते हैं तो कहीं-इड(ed)जोड़ (he walked)कर भाव व्यक्त करना पड़ता है और कहीं इतना परिवर्तन किया जाता है कि अर्थतत्त्व और सम्बन्ध-तत्त्वका पता नहीं चलता, जैसे हिन्दीमें 'जाना'से 'गया' या अंग्रेजीमें गो(go)से वेंट (went)। कुछ अन्य तरहके सम्बन्धतत्त्वोंका भी इसके लिए प्रयोग होता है। विद्वानोंका विचार है कि कालोंका रूप आजके क्रियाके रूपोंमें जितना दो-टूक स्पष्ट है, उतना कभी नहीं था। इसका यही आशय है कि अब इस दृष्टिसे हमारी विचारधारा जितनी विकसित हो गयी है, पहले नहीं थी। **लिंग**—प्राकृतिक लिंग दो हैं—स्त्रीलिंग और पुंलिंग। बेजान चीजोंको नपुंसककी श्रेणीमें रख सकते हैं। पर, भाषामें यह स्पष्टता नहीं मिलती। संस्कृतका ही उदाहरण लें। वहाँ दारा(=स्त्री) प्राकृतिक रूपसे स्त्रीलिंग होते हुए भी पुलिंग शब्द है और कलत्र (=स्त्री) प्राकृतिक रूपसे स्त्रीलिंग होते हुए भी नपुंसक लिंगका शब्द है। हिन्दीमें किताब प्राकृतिक रूपसे नपुंसक लिंगका शब्द होते हुए भी स्त्रीलिंग है और दूसरी ओर ग्रन्थ प्राकृतिक रूपसे नपुंसक लिंगका शब्द होते हुए पुलिंग है। मक्खी, चींटी, चिड़िया, लोमड़ी तथा छिपकली आदि हिन्दीमें सर्वदा स्त्रीलिंगमें प्रयुक्त होते हैं, यद्यपि इनमें प्राकृतिक रूपसे पुलिंग या पुरुष भी होते हैं। इसी प्रकार बिच्छू तथा गोजर जैसे बहुतसे शब्द सर्वदा पुलिंगमें प्रयुक्त होते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वाभाविक लिंगसे भाषाके लिंगका सम्बन्ध बहुत कम है। भाषामें हमने प्रायः कल्पित लिंग आरोपित कर दिया है। लिंगका भाव व्यक्त करनेके लिए प्रमुख रूपसे दो तरीके भाषामें अपनाये जाते हैं—(१) प्रत्यय जोड़कर—जैसे हिन्दीमें बाघसे बाघिन, हिरनसे हिरनी, या कुत्तासे कुतिया। अंग्रेजीमें प्रिंससे प्रिंसेस या लायनसे लाइनेस भी इसी प्रकारके उदाहरण हैं। संस्कृतमें सुन्दरसे सुन्दरी भी इसी श्रेणीका है। (२) स्वतन्त्र शब्द साथमें रखकर—जैसे अंग्रेज़ीमें शी गोट (बकरी) ही गोट (बकरा) या मुंडा भाषामें आंड़िया कूल (बाघ) और एंगा कूल (बाघिन)। ऐसा भी देखा जाता है कि एक लिंगमें तो कोई

दूसरा शब्द है और दूसरेमें बिल्कुल दूसरा, जिससे पहले शब्दका कोई सम्बन्ध नहीं है, जैसे स्त्री-पुरुष, ब्वाय-गर्ल, हार्स-मेयर, वर-वधू, माता-पिता, राजा-रानी तथा भाई-बहिन आदि । लिंगके अनुसार संज्ञा, विशेषण, सर्वनाम तथा क्रियाके रूप बदलते हैं, पर यह सभी भाषाओंके बारेमें सत्य नहीं है । अंग्रेज़ीके विशेषणोंमें लिंगके कारण प्रायः परिवर्तन नहीं होता, जैसे फ़ैट गर्ल, फ़ैट ब्वाय । हिन्दीमें कहीं तो हो जाता है, जैसे मोटा लड़का, मोटी लड़की, पर कहीं-कहीं परिवर्तन नहीं भी होता, जैसे चतुर पुरुष, चतुर स्त्री या सुन्दर लड़का, सुन्दर लड़की । सर्वनाममें हिन्दीमें तो कोई परिवर्त्तन नहीं होता पर अंग्रेज़ी (ही, शी) तथा संस्कृत (सः, तत्, सा) आदिमें परिवर्तन हो जाता है । इसके विपरीत क्रियामें लिंगके आधारपर हिन्दीमें परिवर्तन होता है (लड़का जाता है, लड़की जाती है) पर अंग्रेज़ी (द गर्ल गोज़, द ब्वाय गोज़) तथा संस्कृत आदि भाषाओंमें नहीं होता । काकेशस परिवारकी चेचेन बोलीमें छः लिंग हैं । **पुरुष**——पुरुष तीन होते हैं——उत्तम, मध्यम तथा अन्य । पुरुषके आधारपर क्रियाके रूपोंमें परिवर्तन होता है । पर यह बात संसारकी सभी भाषाओंमें नहीं पायी जाती । एक ओर संस्कृत हिन्दी तथा अंग्रेज़ी आदिमें यह है तो दूसरी ओर चीनी आदिमें नहीं है । पुरुषके आधारपर क्रियाके रूपोंमें परिवर्तन करनेके लिए कभी तो कुछ स्वरों, व्यंजनों या अक्षरोंके बदलनेसे काम चल जाता है जैसे हिन्दीमें मैं जाऊँगा, तू जायेगा (जावेगा, जाएगा), और कभी-कभी विभक्ति-परिवर्तन करना पड़ता है जैसे संस्कृतमें प्रथम पुरुष भू + ति, मध्यम पुरुष भू + सि, अन्य पुरुष भू + मि । अंग्रेज़ीमें कभी तो एक ही रूप कईमें काम देता है (जैसे आई गो, यू गो, दे गो) और कभी नये शब्द रखकर (ही इज़ गोइंग, यू आर गोइंग) तथा कभी प्रत्यय जोड़कर (आई गो, ही गोज़) काम चलाते हैं । अरबी तथा फ़ारसी आदिमें भी प्रायः यही तरीके अपनाये जाते हैं । **वचन**——वचन प्रमुख रूपसे दो——एकवचन और बहुवचन——मिलते हैं । पर संस्कृत तथा लिथुयेनियन आदि कुछ भाषाओंमें द्विवचन तथा कुछ अफ्रीकी भाषाओंमें त्रिवचनका प्रयोग भी मिलता है । वचनका ध्यान प्रायः संज्ञा, सर्वनाम तथा क्रियामें रखा जाता है, पर संस्कृत आदि कुछ प्राचीन भाषाओंमें तथा हिन्दी आदिमें विशेषणमें भी इसका ध्यान रखा जाता रहा है । वचनके भावोंको व्यक्त करनेके लिए प्रायः एकवचनके रूपमें प्रत्यय (हिन्दीमें ओं या यों आदि, अंग्रेज़ीमें इ-यस या यस आदि तथा संस्कृतमें औ, जस् आदि) लगाते हैं । कभी-कभी अपवादस्वरूप समूहवाची स्वतन्त्र (गण तथा लोग आदि) शब्द भी जोड़े जाते हैं। क्रियामें और भी कई प्रकारकी पद्धतियोंसे वचनके भाव व्यक्त किये जाते हैं । इसके अतिरिक्त संज्ञा तथा सर्वनामके कारक (कर्त्ता, कर्म, करण, संप्रदान, अपादान, सम्बन्ध, अधिकरण तथा संबोधन) रूप, क्रियाके विभिन्न वाच्यों (कर्तृ, कर्म, भाव) या अर्थों (या भावों mood) के रूप, संस्कृत धातुओंके परस्मैपद तथा आत्मनेपदके रूप तथा क्रियाके प्रेरणात्मक (पढ़नासे पढ़वाना) आदि रूपोंके लिए भी भाषामें सम्बन्धतत्त्वका सहारा लेना पड़ता है । इसी प्रकार संज्ञासे क्रिया (हाथसे हथियाना), क्रियासे संज्ञा (मारसे मार), संज्ञासे विशेषण (अनुकरणसे अनुकरणीय), विशेषणसे संज्ञा (सुन्दरसे सुन्दरता), संज्ञा या विशेषणसे क्रियाविशेषण (तेज़ी या तेज़से 'तेज़ीसे') एवं नकारात्मकता या आधिक्य आदि बोधक रूपों आदिको बनानेके लिए भी सम्बन्ध तत्त्वकी आवश्यकता पड़ती है ।

रूपक्रम-पदक्रम (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

रूपगत ध्वनि-परिवर्तन——ध्वनि-परिवर्तनका एक रूप, (दे०) **ध्वनि परिवर्तनकी दिशाएँ** ।

रूपग्राम——(दे०) **रूपग्राम-विज्ञान** ।

रूपग्राम-विज्ञान (morphemics)——रूप विज्ञानकी एक नव-विकसित

शाखा। प्राचीन भारतमें यह अध्ययन पाणिनीय व्याकरणमें अपने ऊर्ध्व बिंदुपर मिलता है, किन्तु आधुनिक कालमें सच्चे अर्थों में इस विज्ञानके जीवनके अभी कुछ ही दशक बीते हैं। 'रूपग्राम–विज्ञान'में किसी भाषाके रूपों या पदोंका अध्ययन-विश्लेषण कर उनके वितरण एवं अर्थ आदिके आधारपर **रूपग्राम** (morpheme) एवं **संरूप** (allomorph)का निर्धारण किया जाता है, साथ ही दो या अधिक रूपग्रामोंके योगसे बननेवाले संयुक्त या मिश्रित रूपग्रामोंमें घटित ध्वन्यात्मक परिवर्तनों (morphophonemic charge)का भी अध्ययन होता है। नीचे तीनोंको अलग-अलग लिया जा रहा है। रूपग्रामको **रूपतत्व, रूपश्रेणी, पदतत्व, पदश्रेणी** भी कहते हैं। 'रूप' या 'पद' शव्दसे भिन्न है। कोशमें दिये गये यासम्वन्ध-विमक्तिहीन शव्द 'शव्द' हैं, लेकिन वाक्यमें प्रयुक्त शव्द सम्वन्ध-विमक्तियुक्त होनेके कारण 'पद' या 'रूप' हैं। पाणिनिने 'सुप्तिङन्तं पदम्' रूपमें पदको समझाया है। अर्थात् जिसमें 'सुप्' या 'तिङ' विभक्ति लगी हों। दूसरे शव्दोंमें 'पद' वह है, जिसमें कुछ अर्थ होनेके अतिरिक्त स्पष्ट या अस्पष्ट रूपसे कुछ ऐसे तत्त्व भी (प्रत्यय आदि) हों, जिनके कारण उसका सम्वन्ध वाक्यके अन्य पदोंसे स्पष्ट हो सके। संस्कृतके वाक्य 'रामः गच्छति'में 'राम' और 'गम्' मूल शव्द अपने मूल रूपमें न प्रयुक्त होकर कुछ विमक्तियोंसे युक्त होकर पद रूपमें प्रयुक्त हुए हैं, अर्थात्' राम' शव्द है या मूल शव्द है और 'रामः' पद या रूप है। वाक्यमें प्रयुक्त इस प्रकारकी हर इकाई पद है, चाहे उसमें विभक्ति दिखायी पड़े या न पड़े। जहाँ विमक्ति दिखायी नहीं पड़ती, वहाँ भाषाविद् एकरूपताकी दृष्टिसे शून्य विमक्तिकी कल्पना कर लेते हैं। उदाहरणार्थ 'विद्या गच्छतिमें विद्यामें शून्य विभक्ति है। 'रामः'की तरह उसमें प्रत्यक्ष नहीं है। **रूपको** समझ लेनेके वाद **रूपग्राम**(morpheme)-को लिया जा सकता है। 'उसके रसोईघरमें सफ़ाई होगी' वाक्यमें पाँच रूप (जिन्हें सामान्य भाषामें शब्द कहते हैं) हैं। ध्यान देनेपर यह स्पष्ट हुए बिना नहीं रहेगा कि इसमें सभी रूप एक-से नहीं हैं। **'उसके'**में **'के'** विभक्ति है। **रसोईघरके** साथ **'में'** विभक्ति है, यद्यपि वह 'के'की भांति मिली न होकर अलग है और **सफ़ाईमें** इस अर्थमें कोई भी **कारकदर्शी विभक्ति** नहीं है। अब यदि इस दृष्टिसे देखा जाय कि इनमें कौनसे रूप ऐसे हैं, जो छोटे-से-छोटे हैं और जिन्हें और अधिक छोटे सार्थक टुकड़ोंमें नहीं तोड़ा जा सकता, और कौनसे ऐसे हैं, जिन्हें तोड़ा जा सकता है, तो हम देखेंगे कि 'में'के तो टुकड़े नहीं हो सकते, लेकिन शेष चारके टुकड़े (उस+के, रसोई+घर, साफ़+ई, हो+ग+ई) हो सकते हैं। इस प्रकार इस वाक्यके यों तो पाँचही टुकड़ेहैं (उसके, रसोईघर, में, सफ़ाई, होगी) लेकिन यदि छोटेसे छोटे टुकड़े देखे जायँ तो दस हैं। ये दसों सार्थक टुकड़े हैं। ये दसों ही रूपग्राम कहलायेंगे, अर्थात् **भाषा या वाक्यकी लघुतम सार्थक इकाई रूपग्राम** है। यों घर या रसोई आदिको घ+र, रसो+ई आदि रूपमें विभाजित कर सकते हैं, किंतु ये सार्थक टुकड़े नहीं हैं, अतः रूपग्राम नहीं हैं।

रूपग्रामोंके प्रकार––हर भाषामें रूपग्रामोंकी संख्या वहुत बड़ी होती है। इन्हींके सहारे हम अपने भावोंकी अभिव्यक्तिके लिए भाषाका प्रयोग करते हैं। हर भाषाके रूपग्रामोंको कई आधारोंपर कई वर्गोंमें रखा जा सकता है। प्रमुख आधार हैं (अ) रचना और प्रयोग; (आ) रचना, प्रयोग और अर्थ (१); (इ) रचना, प्रयोग अर्थ (२); (ई) अर्थ और कार्य; (उ) खण्डी-करण। आगे इन्हीं द्रिष्टियोंसे वर्गीकरण किये जा रहे हैं।

(अ) रचना और प्रयोग–रचना और प्रयोगकी दृष्टिसे रूपग्राम प्रमुखतः तीन प्रकारके माने जा सकते हैं। (क) **मुक्त रूपग्राम**, (ख) **बद्धमुक्त रूपग्राम**, (ग) **बद्ध रूपग्राम**।

मुक्त रूपग्राम तो वे हैं, जो अकेले प्रयोगमें आ सकते हैं। ऊपरके उदाहरणमें 'रसोई', 'घर', और 'साफ़' प्रायः अकेले प्रयोगमें आते हैं, लेकिन वे सर्वदा मुक्त रूपसे प्रयोगमें नहीं आते (जैसे—रसोईघर, घरों, रसोइयों रसोइया, साफ़ी साफ़ों, सफ़ाई आदि)। इसीलिए उन्हें मुक्त रूपग्रामका उदाहरण नहीं माना जा सकता। अंग्रेज़ीका फ्रॉम (from) मुक्त रूपग्राम है। यह कभी भी किसी अन्य रूपमें नहीं मिलता। चीनी आदि पूर्णतः आंशिक रूपसे अयोगात्मक भाषाओंमें इनके उदाहरण अपेक्षाकृत अधिक मिलते हैं। **बद्धमुक्त रूपग्राम**, उन रूप-ग्रामोंको कहते हैं, जो कभी तो मुक्त रूपमें आते हैं (रामसे, घरमें, साफ़) और कभी बद्ध रूपमें (रामराज, घरों, सफ़ाई)। भारोपीय परिवारमें अधिक शब्द इसी वर्गके हैं। इस वर्गको **मुक्तबद्ध, अर्द्धमुक्त, अर्द्धबद्ध** आदि नामोंसे भी अभिहित किया जा सकता है। तीसरा वर्ग **बद्ध रूपग्रामों**का है, जो सर्वदा बद्ध रहते हैं। बहुवचन, स्त्रीलिंग, काल आदि बनानेकी विभक्तियाँ ऐसी ही हैं। ये कभी भी अलग प्रयुक्त नहीं होतीं। जैसे हिन्दीमें ओं (घोड़ों), ई (घोड़ी) आ (मरा) या अंग्रेज़ीमें ing (going), s (puts) ed (stamped) आदि। इसीके साथ यदि अर्थ और कार्यका भी विचार कर लिया जाय तो नक्शा बिल्कुल बदल सकता है। जिन उदाहरणोंको ऊपर पूर्णतः मुक्त रूपमें लिया जा चुका है, वे भी आश्रित या बद्ध हैं, क्योंकि अलग उनका कोई अर्थ नहीं है और न अलग उनका प्रयोग ही होता है।

(आ) रचना, प्रयोग, अर्थकी दृष्टिसे रूपग्राम दो वर्गों में बाँटा जाता है:—**(क) मुक्त रूपग्राम** (free morpheme)—जो अकेले या अलग भी प्रयोगमें आ सकते हैं। उपर्युक्त वाक्यमें रसोई, घर, साफ़ इसी प्रकारके हैं। ये अलग, मुक्त या स्वतंत्र रूपसे भी आ सकते हैं (जैसे–रसोई बन चुकी है) और अन्य रूपग्रामोंके साथ भी (जैसे—रसोईघर)। **(ख) बद्ध रूपग्राम** (bound morpheme) —जो अलग नहीं आ सकते, जैसे उस (जैसे —उससे, उसका आदिमें) या ई (जैसे—घोड़ी, लड़की, खड़ी आदिमें) आदि। इन दोके अतिरिक्त एक तीसरा प्रकार भी कुछ लोग मानते हैं, जिसे (ग) **अर्द्धबद्ध**, half bound **अर्द्धमुक्त**, half free **मुक्तबद्ध** या **बद्धमुक्त** की संज्ञा दी जा सकती है। इस तीसरे वर्गमें ऐसे रूपग्राम आते हैं, जो आधे बद्ध होते हैं और आधे मुक्त या जो एक दृष्टिसे मुक्त कहे जा सकते हैं तो दूसरी दृष्टिसे बद्ध। अंग्रेजीका from इसी प्रकारका है। यह किसी अन्य रूपग्रामसे मिलता नहीं, सर्वदा अलग रहता है, इसलिए मुक्त है, लेकिन साथ ही यह सर्वदा किसीके आश्रित रहना from him या from shop आदि) है, अकेले किसी भी प्रकारकी रचनाका निर्माण नहीं कर सकता, अतः बद्ध है। हिन्दीके परसर्ग (ने, के, में, से) जब संज्ञा शब्दोंके साथ आते हैं (रामसे, मोहनको) तो इसी रूपमें रहते हैं, यद्यपि सर्वनामके साथ ये (जैसे—उनसे, मुझसे, तुमको आदि) मिल जाते हैं। तात्विक दृष्टिसे इस तीसरे भेद (अर्द्धबद्ध)-को अलग नहीं रखा जा सकता, क्योंकि स्थानकी दृष्टिसे अलग होकर भी अर्थकी दृष्टिसे ये हमेशा बद्ध रहते हैं। **बद्ध रूपग्राम**-के तीन उपभेद करके इन्हें समाहित किया जा सकता है :–(१) **—मुक्त**, जो अर्थकी दृष्टिसे बद्ध होकर भी स्थानकी दृष्टिसे सर्वदा मुक्त रहते हैं, जैसे अंग्रेज़ीके from आदि। (२) **बद्ध**, जो स्थानकी दृष्टिसे भी सर्वदा बद्ध रहते हैं, जैसे अंग्रेज़ी (ness, ed), संस्कृत (अः, अम्) या हिन्दी (ई, ओं, आई) आदि-के प्रत्यय। (३) **बद्धमुक्त**, जो कभी तो बद्ध रहते हैं और कभी मुक्त—जैसे हिन्दी परसर्ग, जो संज्ञाके साथ मुक्त रहते हैं (जैसे रामको) और सर्वनामके साथ बद्ध (जैसे उसको)।

(इ) रचना, प्रयोग और अर्थको लेकर ही दो अन्य प्रकारके भेद भी किये जा सकते हैं। जब दो या अधिक ऐसे रूपग्राम एकमें मिलते

हैं, जिनमें अर्थतत्त्व केवल एक हो (जैसे-ऊपरके लिए गये वाक्यमें 'उसके', 'सफ़ाई' 'होगी') तो उसके पूरे रूपको **संयुक्तरूपग्राम** (compound morpheme)कहते हैं। यदि एकसे अधिक अर्थ तत्त्व हो तो **मिश्रित रूपग्राम** (complex morpheme) कहते हैं। ऊपरके वाक्यमें 'रसोईघर' इसी श्रेणीका है।

(ई) **अर्थ और कार्यके** आधारपर रूपग्रामके दो भेद होते हैं:-(क) **अर्थदर्शी रूपग्राम**—जिनका स्पष्ट रूपसे अर्थ होता है और अर्थ व्यक्त करनेके अतिरिक्त जो और कोई कार्य नहीं करते। इन्हींको **अर्थतत्त्व** भी कहते हैं। प्राचीन व्याकरणमें इन्हें ही stem, root, **धातु, मस्दर, माद्दा या प्रातिपदिक** आदि कहा गया है। विचारोंका सीधा सम्बन्ध इन्हींसे होता है। भाषाके मूल आधार ये ही हैं। हर भाषामें इस वर्गके रूपग्रामोंकी संख्या कई हजार होती है और दूसरे प्रकारके रूपग्रामोंसे बहुत अधिक होती है। (ख) **सम्बन्धदर्शी रूपग्राम या कार्यात्मक रूपग्राम**—इन्हें निरर्थक तो नहीं कहा जा सकता, किन्तु यह कहना अनुचित न होगा कि इनमें अर्थका प्राधान्य नहीं होता। इनका प्रमुख कार्य होता है सम्बन्धदर्शन या व्याकरणिक कार्य। इसीलिए इन्हें **सम्बन्ध तत्त्व** भी कहते हैं, यों इन्हें **व्याकरणिक तत्त्व** (grammatical element) कहना शायद अधिक ठीक होगा। संस्कृतमें विभक्ति, तिङ्, सुप् या हिन्दीमें परसर्ग, प्रत्यय आदि यही हैं। इस प्रसंगमें 'सम्बन्ध' शब्द काफी व्यापक है। इसमें यह भाव तो है ही कि ये रूपग्राम एक शब्दका सम्बन्ध वाक्यमें दूसरेसे दिखाते हैं। साथ ही ये लिंग, वचन, पुरुष, काल, वृत्ति या अर्थ (mood) और भाव (बारंबार आधिक्य)की दृष्टिसे अर्थदर्शी रूपग्राममें परिवर्तन भी लाते हैं (जैसे 'लड़क्' अर्थदर्शी रूपग्राम है, इसमें 'ई', 'आ', 'इयाँ, 'इयों', 'ए', 'ओं' आदि सम्बन्ध-दर्शी रूपग्राम या संवंधतत्त्वोंको जोड़कर लड़की, लड़का, लड़कियाँ, लड़कियों, लड़के, लड़कों आदि संयुक्त रूपग्राम या रूप या पद बना सकते हैं), इसीलिए इन्हें **कार्यात्मक रूपग्राम** (functional morpheme) कहना अधिक उचित है। इस श्रेणीके रूपग्रामोंकी संख्या हर भाषामें कुछ सौ-से अधिक नहीं होती, अर्थात् अर्थदर्शी रूपग्रामोंसे बहुत कम होती है। उपर्युक्त दोनोंके उपभेद भी किये जा सकते हैं।

अर्थदर्शी रूपग्रामके भेद तो व्याकरण या प्रयोगके आधारपर हो सकते हैं, जैसे-(१) संज्ञा (नाम्, कान्, तप्), (२) सर्वनाम (मैं, आप, तुम), (३) विशेषण (सुन्दर्, अच्छ्, बड़्, छोट्, चतुर आदि), (४) क्रिया (कर् भर्, चल्, पा, गा, लिख् आदि), (५) क्रियाविशेषण (अब्, जल्द्, ठीक्, अचानक)।

सम्बन्धदर्शी या **कार्यात्मक रूपग्रामके** भेद उसके लगाये जानेके स्थान या पद्धतिके आधारपर किये जा सकते हैं। प्रमुख भेद हैं:-(१) **स्वतंत्र शब्द**—हिन्दीके ने, को, से, में आदि कारक चिन्ह या अंग्रेजीके to, from, with आदि। (२) **मूल शब्द या अर्थदर्शी रूपग्रामको ज्योंका-त्यों छोड़ देना**। हिन्दीमें कर्, कर्, चल्, नाम्, कान् आदि ऐसे ही हैं। इसीको **शून्य सम्बन्ध तत्त्व** कहते हैं। इन मूल शब्दोंमें बिना कुछ जोड़े-घटाये, इनका यों ही प्रयोग किया जा सकता है। अंग्रेजीके अधिकांश मूल संज्ञा शब्द इस श्रेणीके हैं। (३) **ध्वनि-प्रतिस्थापन**—किसी स्वर, व्यंजन या स्वर-व्यंजनके स्थानपर दूसरे स्वर, व्यंजन या स्वर-व्यंजनको रखकर भी सम्बन्धदर्शी रूपमात्रका काम लिया जाता है। उदाहरणार्थ—

(क) स्वर-प्रतिस्थापन—sing-sang दशरथ-दाशरथी, पुत्र-पौत्र आदि।

(ख) व्यंजन-प्रतिस्थापन—send-sent, advice-advise, build-built आदि।

(ग) स्वर-व्यंजन-प्रतिस्थापन-'जा' से 'गया' be से 'am' या 'is, पच् से अपाक्षी आदि।

(४) **पुनरुक्ति या द्विरावृत्ति**—जब अर्थदर्शी रूपग्रामके किसी एक अंश या पूरेकी आवृत्ति करके और कोई भाव या सम्बन्ध दिखलाया जाता है। यह आवृत्ति आरम्भ,

मध्य और अंतमें हो सकती है। मेक्सिकोकी एक भाषामें सेट = चारों ओर जाना, सेटेट = चारों ओर कई बार जाना। लंकाकी एक भाषामें इसा = एक, इइसा = केवल एक। (५) **ध्वनि-वियोजन**—कुछ ध्वनियोंको निकालकर भी कभी-कभी दूसरा काम लिया जाता है। इसके उदाहरण कम मिलते हैं। फ्रांसीसी भाषामें नाइडाके अनुसार सुलका पुलिंग रूप सु (पीया) इसका उदाहरण माना जा सकता है। (६) **पूर्वयोग**—रूपग्रामके आरम्भमें कुछ जोड़कर भी सम्बन्ध-दर्शी रूपग्रामका काम ले लेते हैं। अफ्रीकाकी काफ़िर भाषा इस दृष्टिसे प्रायः उद्धृत की जाती है। कु = सम्प्रदान कारकका चिह्न। कुति = हमको, कुनि = उनको। (७) **मध्ययोग**—इसमें रूपग्रामके मध्यमें कुछ जोड़ते हैं। संस्कृतमें रुधादिगणकी धातुओंमें ऐसा करनेका नियम है, यद्यपि प्रायः कुछ और भी साथ-साथ जोड़ते हैं। मुंडामें मंझि = मुखिया, मपंझि = मुखिया लोग भी इसका अच्छा उदाहरण है। (८) **अंतयोग**—अंतमें प्रत्यय जोड़नेके उदाहरण भारोपीय, द्रविड़ आदि कई परिवारोंकी भाषाओंमें पर्याप्त मिलते हैं। जैसे ओं (लड़कों), ता (जाता), आ (मरा), ed (thanked) आदि। ये तो सामान्य ढंगके सम्बन्धदर्शी रूपग्राम थे। कुछ असामान्य भी मिलते हैं, जो नीचे दिये जा रहे हैं। (९) शब्द-स्थान—स्थान भी कभी सम्बन्ध दर्शी तत्त्वका काम करता है। ram killed mohan और mohan killed ram में राम और मोहनमें स्थान बदल देनेसे अर्थ उलट गया है। संस्कृतमें 'ग्राममल्ल' और 'मल्लग्राम'में भी इसी प्रकार स्थानान्तर के कारण अर्थांतर है। (१०) **बलाघात**—बलाघात भी इसका काम करता है। अंग्रेज़ीके बहुतसे संज्ञा और क्रिया रूप (present, record) अन्य दृष्टियोंसे एक होते हैं, उनमें केवल बलाघातका अंतर होता है। संज्ञामें पूर्ववर्ती और क्रियामें परवर्ती भागपर बलाघात होता है। लिथुवानिअन, ग्रीक आदिमें भी बलाघात इस प्रकारके कार्य करता है। सुर और वाक्यसुर भी इसी प्रकार प्रयुक्त किये जाते हैं।

(उ) **खंडीकरण** (segmentation) के आधारपर भी रूपग्रामके दो भेद करते हैं। एक तो (क) **खंड रूपग्राम** (segmental), जिन्हें तोड़कर अलग किया जा सके। ऊपरके सारे रूपग्राम इसी प्रकारके हैं। दूसरे (ख) **अखंड रूपग्राम** (suprasegmental) हैं। बलाघात (stress), सुर (tone, pitch) या सुरलहर (intonation) रूपमें स्वीकृत रूपग्राम इस श्रेणीके हैं। उन्हें दो-टूक रूपमें खंडित नहीं किया जा सकता। ध्वनिग्राम-विज्ञान (phonemics) में इसीलिए इन्हें 'अखंड—' या suprasegmental कहा जाता है[१]।

संरूप (allomorph)-कभी-कभी ऐसा देखा जाता है कि कई रूपग्रामोंका अर्थ एक होता है। यदि अंग्रेज़ीसे उदाहरण लें, तो संज्ञा शब्दोंको एकवचनसे बहुवचन बनानेके लिए **-स** (hats, cats, books, tops आदि), **-ज़** (schools, eyes, woods, dogs आदि), **-इज़** (horses bridges, roses आदि), **-इन** (oxen), **-रिन** (children) तथा **शून्य रूपग्राम** या सम्बन्धतत्त्व (sheep) आदिका प्रयोग होता है। इसका आशय यह है कि स, ज़, इज़, इन, रिन, शून्य रूपग्राम बहुवचन बनानेवाले ये छः रूपग्राम हैं। इनका अर्थ अंग्रेजीमें प्रमुखतः एक है, इसलिए सम्भावना यह हो सकती है कि ये अलग-अलग रूपग्राम न होकर एक ही रूपग्रामके अंग हों। जिन दो या दोसे अधिक समानार्थी रूपोंके एक रूपग्रामके अंग होनेका संदेह होता है, उन्हें **संदिग्ध समूह** या **संदिग्ध युग्म** (suspicious pair) कहते हैं, लेकिन केवल संदिग्ध समूह

१प्रस्तुत पंक्तियोंका लेखक विद्वानोंकी इस मान्यतासे मतभेद रखता है। हर स्तरके रूपग्राम या ध्वनिग्राम तोड़कर अलग किये जा सकते हैं।

या संदिग्धयुग्म होनेके आधारपर ही उन्हें एक रूपग्रामके अंतर्गत नहीं रखा जा सकता। संदेह मिटानेके लिए यह देखना पड़ता है कि ये रूप **परिपूरक वितरण** (complementary distribution) में हैं या नहीं। इसका अर्थ यह है कि जिन ध्वन्यात्मक या रूपात्मक परिस्थितियोंमें एक रूपका प्रयोग होता है, दूसरोंका भी उन्हींमें होता है या सबका अलग-अलग। यदि सबका एक ही परिस्थितियोंमें प्रयोग होता है तो उसका आशय यह है कि उनका आपसमें विरोध है। एकके स्थानपर दूसरा भी आ जाता है। यदि ऐसा है तो उन्हें एक रूपग्रामका अंग [जिन्हें **संरूप** (allomorph) कहते हैं] नहीं माना जा सकता। वे सभी अलग-अलग रूपग्राम हैं। किंतु यदि परिपूरक वितरणमें हैं, अर्थात् वितरण या प्रयोगकी दृष्टिसे सभीका स्थान अलग-अलग बँटा है। जहाँ एक आता है, वहाँ दूसरा नहीं और जहाँ दूसरा आता है, वहाँ तीसरा नहीं, तो इसका आशय यह है कि उनका आपसमें विरोध नहीं है और ऐसी स्थितिमें वे सभी एक ही रूपग्रामके **संरूप** (allomorph) हैं। ऊपरके उदाहरणमें जब हम स, ज़, इज़, इन, रिन तथा शून्य रूपग्रामके **वितरण** (distribution) का विश्लेषण करते हैं तो यह पाते हैं कि 'स' तो ऐसे शब्दोंके अन्तमें आ रहा है, जिनके अन्तमें स, श-के अतिरिक्त और कोई अघोष व्यंजन हों; 'ज़' ऐसे शब्दोंके अन्त में आता है, जिनके अन्तमें ज़ को छोड़कर कोई घोष व्यंजन[1] या कोई स्वर हो ; 'इज़' ऐसे शब्दोंके अन्तमें आता है, जिनके अन्तमें स, ज़, श ध्वनि हो; 'इन' केवल ऑक्स, ब्रदर आदि कुछ निश्चित शब्दों या रूपग्रामोंके अन्तमें आता है और शून्य रूपग्राम भी केवल डीयर, शीप, कॉड आदि कुछ निश्चित शब्दोंके साथ ही आता है। इसका आशय यह है कि ये विरोधी नहीं हैं और इनका वितरण परिपूरक है। विशिष्ट परिस्थितियोंमें एक आता है और उसमें दूसरा नहीं आता। अतएव इन्हें एक ही **रूपग्रामका संरूप** माना जा सकता है। निष्कर्ष यह निकला कि यदि कई रूप (क) समानार्थी हों, (ख) एक प्रकारकी रचनामें आवें और (ग) परिपूरक वितरण में हों, अर्थात् सबके आनेकी स्थिति निश्चित रूपसे अलग-अलग हो, विरोध न हो या एक ही स्थितिमें एकसे अधिक न आते हों, तो उन सबको एक ही **रूपग्रामका संरूप** माना जाता है। उन्हीं संरूपोंमें किसी एकको (जो प्रायः अधिक प्रयुक्त हो या जिसे मूल आधार मानकर ध्वन्यात्मक दृष्टिसे अन्यको स्पष्ट किया जा सके) रूपग्रामकी संज्ञा दे दी जाती है। यहाँ कहा जा सकता है कि अंग्रेजीमें संज्ञा शब्दोंके बहुवचन बनानेमें **ज़ रूपग्राम**का प्रयोग होता है। इस **ज़ रूपग्रामके** संरूप ज़, स, इज़, इन, रिन तथा शून्य रूप हैं। 'ज़' घोष ध्वनियोंसे अन्त होनेवाले शब्दोंके साथ आता है। अघोष ध्वनियोंसे अन्त होनेवाले शब्दोंमें 'ज़' अघोष होकर 'स' हो जाता है। स, श, ज़ से अन्त होनेवाले शब्दोंके अन्तमें 'ज़'का उच्चारण ठीकसे नहीं (grass, rose) हो सकता है, अतः ऐसी स्थितिमें बीचमें एक स्वर (इ) आ जाता है और यह इज़ हो जाता है। अर्थात् 'ज़' रूपग्रामके ज़, स, इज़ संरूप **ध्वन्यात्मक परिस्थितियोंके** कारण परिपूरक वितरणमें हैं, लेकिन शेष तीन **रूपात्मक परिस्थितियोंके** कारण हैं। क्योंकि कुछ विशेष शब्दों, रूपों या रूपग्रामोंमें ही इन, रिन या शून्य रूपका प्रयोग होता है। यहाँ निष्कर्ष यह निकला कि परिपूरक वितरण (complementary distribution) **ध्वन्यात्मक** या **रूपात्मक** या दोनों परिस्थितियों (phonological conditioning, morphological conditioning) पर निर्भर

१ 'फ़'से अन्त होनेवाले अधिकांश शब्द भी इसी वर्गमें आते हैं, क्योंकि उनके बहुवचन रूपमें फ़ का व हो जानेसे अन्तमें घोष व्यंजन ही हो जाता है।

करता है। हिन्दी शब्दोंका अभी इस रूपमें अध्ययन नहीं हुआ है, लेकिन मोटे रूपसे कहा जा सकता है कि कर्ता कारक (या मूलरूप) में हिन्दी संज्ञा शब्दोंमें 'एँ' रूपग्रामका बहुवचन बनानेके लिए प्रयोग होता है। इसके संरूप एँ (व्यंजनांत स्त्रीलिंग शब्द जैसे-रात्, बहिन्; आकारांत स्त्रीलिंग शब्द जैसे–लता, कथा आदि; उकारांत स्त्रीलिंग शब्द जैसे-वस्तु आदि ; ऊकारांत स्त्रीलिंग शब्द जैसे-बहू आदि; औकारांत स्त्रीलिंग शब्द जैसे गौ आदिके साथ); ए (व्यंजनांत निर्लिङ्गी शब्द जैसे–लड़क्, लोट् आदिके साथ); याँ (इकारांत, ईकारांत स्त्रीलिंग शब्द जैसे-रीति, शक्ति; टोपी, थाली); ँ (या-अन्तवाले स्त्रीलिंग शब्द जैसे–गुड़ियाँ, डिबियाँ आदिके साथ) तथा **शून्य रूप** या **शून्य सम्बन्ध तत्त्व** [व्यंजनांत पुल्लिग शब्द (बाप्, नाम्); इकारांत पुल्लिग शब्द (मुनि, कवि), ईकारांत पुल्लिग शब्द (भाई, नाई, पक्षी); उकारांत पुल्लिग शब्द (साधु, मधु); ऊकारांत पुल्लिग शब्द (बुद्धू, डाकू); एकारांत पुल्लिग शब्द (चौबे), ओकारांत पुल्लिग शब्द (रासो) तथा औकारांत पुल्लिग शब्द (जौ)] हैं। कहना न होगा कि यहाँ परिपूरक वितरण ध्वन्यात्मक और रूपात्मक दोनों ही परिस्थितियोंके मिले-जुले रूपपर निर्भर कर रहा है। निष्कर्षतः यदि एक रूपग्रामके परिपूरक वितरणवाले कई समानार्थी रूप (ध्वन्यात्मक दृष्टिसे मिलते-जुलते या न मिलते-जुलते) हों तो उन्हें **संरूपकी** संज्ञा दी जाती है।

रूप ध्वनि ग्रामविज्ञान (morphophonemics)—मार्फोफोनीमिक्स या रूपध्वनिग्रामविज्ञान, रूप विज्ञानकी ही एक शाखा है। इसमें उन ध्वन्यात्मक या **ध्वनिग्रामीय परिवर्तनों** (phonemic change)-का अध्ययन किया जाता है, जो दो या अधिक रूपों या रूपग्रामोंके मिलनेसे दृष्टिगत होते हैं। इसे दूसरे शब्दोंमें यों भी कह सकते हैं कि यह **रूपविज्ञानकी वह शाखा है, जिसमें रूपग्रामके** उन ध्वन्यात्मक रूपांतरोंका अध्ययन किया जाता है, जो विभिन्न वैयाकरणिक रूपोंके निर्माणमें बन जाते हैं। उदाहरणार्थ ऊपरके उदाहरणोंमें 'बुक' और 'ज़' अंग्रेज़ीके दो रूपग्राम हैं। दोनोंके मिलनेपर सामान्यतः रूप होना चाहिये 'बुक्ज़', लेकिन होता है 'बुक्स'। इसे **रूपध्वनिग्रामीय** (morpophonemic) परिवर्तन कहेंगे। यह परिवर्तन है 'क'के अघोष होनेसे 'ज़'का अघोष, अर्थात् 'स' हो जाना। इस प्रकारके परिवर्तनोंका अध्ययन रूपध्वनिविज्ञानमें होता है। कहना न होगा कि इस रूपमें, रूपध्वनिविज्ञान, प्राचीन भारतीय पारिभाषिक शब्द 'संधि'के निकट है, किन्तु वस्तुतः संधिमें केवल उन परिवर्तनोंको लिया जाता है, जो दो मिलनेवाले शब्दों या रूपोंमें एकके अन्त या दूसरेके आरम्भ या दोनोंमें राम अवतार = रामावतार; ध्वनि + अंग = ध्वन्यंग; उत् + गम = उद्गम या तेजः + राशि = तेजोराशि आदि) घटित होते हैं, लेकिन रूपध्वनिग्रामविज्ञानमें इसके साथ अन्य स्थानोंपर आनेवाले परिवर्तन भी लिये जाते हैं। जैसे घोड़ा + दौड़ = घुड़-दौड़; ठाकुर + आई = ठकुराई; बूढ़ा + औती = बुढ़ौती आदि। इन सभीमें हम देखते हैं कि हर दोके बीचमें तो परिवर्तन हुए ही हैं, लेकिन साथ ही अन्य स्थानोंमें भी (घो > घु; ठा > ठ, बू > बु) परिवर्तन हो गये हैं। इन सारे परिवर्तनोंका अध्ययन रूपध्वनिविज्ञानमें होता है। इस प्रकार यह संधिसे अधिक व्यापक है और संधि इसका एक अंग मात्र है। यहाँके उदाहरणोंमें केवल सामान्य परिवर्तन आये हैं, इसी प्रकार **ह्रस्वीकरण, दीर्घीकरण, समीकरण, विषमीकरण, तालव्यीकरण, आगम, लोप** तथा अनेक अन्य प्रकारके परिवर्तन भी आ सकते हैं। रूपग्राम (अर्थदर्शी या सम्बन्धदर्शी), अपने भिन्न-भिन्न संरूपोंमें ध्वन्यात्मक दृष्टिसे जो-जो स्वरूप धारण करता है या दो या अधिक रूपग्रामों (या संरूपों)के योगके आधारपर रूप बनानेमें जो-जो ध्वन्यात्मक परिववर्तन घटित होते हैं, उन सभीका अध्ययन इसमें

किया जाता है। यदि बहुतसे संरूप हों तो उनमें किसे **प्रतिनिधि संरूप** या **रूपग्राम** मानें (जैसे ऊपर स, ज़, इज़ आदिमें 'ज़'-को माना गया है), इस बातका निर्णय भी रूपध्वनिग्रामविज्ञानसे ही होता है, क्योंकि इसीसे पता चलता है कि कौन-सा रूप अपेक्षाकृत केन्द्रमें है, जिसके आधारपर ध्वन्यात्मक या रूपात्मक परिस्थितियोंका विवेचन करते हुए अन्य संरूपोंमें घटनेवाले ध्वन्यात्मक परिवर्तन समझाये जा सकते हैं। इस प्रकार विभिन्न संरूपोंके विभिन्न पारस्परिक सम्बन्धोंपर भी इससे प्रकाश पड़ता है।

रूपग्रामीय संगम (morphemic juncture)—**संगम** (दे०)का एक भेद।

रूपतत्त्व—**रूपग्राम** (दे०)का एक अन्य नाम।

रूपतालिका (paradigm)—क्रिया, संज्ञा आदिके रूपोंकी पूरी तालिका।

रूपध्वनिग्रामविज्ञान (morphophonemics)—(दे०) **रूपग्राम-विज्ञान**।

रूप-निर्माण (inflexion)—भाषा विशेषके नियमानुसार **संबंध तत्त्व** (दे०)की सहायतासे **प्रातिपदिक** (दे०)या मूल शब्दका कारकीय रूप बनाना।

रूप-परिवर्तन (morphological change)—रूप या पदोंके रूप सर्वदा एक-से नहीं रहते। उनमें परिवर्तन होता रहता है। सं० में 'रामं' था, अब हिन्दीमें वह 'रामको' हो गया है। बहुतसे लोग समझते हैं कि रूप-परिवर्तन और ध्वनि-परिवर्तन एक ही चीज है। यहाँ पहले दोनोंमें अन्तर समझ लेना होगा। **रूप-परिवर्तन और ध्वनि-परिवर्तनमें अन्तर**—सामान्य दृष्टिसे देखनेपर रूप-परिवर्तन और ध्वनि-परिवर्तनमें अन्तर नहीं दिखाई देता, किन्तु यथार्थतः दोनोंमें अन्तर है। यद्यपि कभी-कभी ये दोनों इतने समान या समीप होते हैं कि इनको अलग कर पाना यदि असम्भव नहीं तो कष्ट-सम्भव अवश्य हो जाता है। ध्वनि-परिवर्तनका सम्बन्ध किसी भाषाकी विशिष्ट ध्वनिसे होता है और उसका परिवर्तन ऐसे सभी शब्दोंको प्रायः प्रभावित कर सकता है (और करता भी है), जिनमें वह विशिष्ट ध्वनि हो। हम देखते हैं कि ध्वनि-परिवर्तनके नियमोंने कुछ अपवादोंको छोड़कर किसी भाषामें आनेवाले विशिष्ट ध्वनितत्त्वोंको प्रायः सर्वत्र प्रभावित किया, किन्तु रूप-परिवर्तनका क्षेत्र अपेक्षाकृत समीप होता है। वह किसी एक शब्द या पदके रूपको ही प्रभावित करता है। उससे भाषाके पूरे संस्थानसे कोई सम्बन्ध नहीं। **इस प्रकार ध्वनि-परिवर्तन अपेक्षाकृत बहुत व्यापक है और रूप-परिवर्तन सीमित तथा संकुचित।**

इस सम्बन्धमें एक और बात भी स्मरणीय है। ध्वनि-परिवर्तन होनेपर पुराने अवशेष बहुत कम मिलते हैं, किन्तु रूप-परिवर्तन होनेपर बहुतसे पुराने रूप भी मिलते हैं और उनका प्रयोग भी होता रहता है। एक पदके कई रूप इसी कारण मिलते हैं। **रूप-परिवर्तनका स्वरूप या उसकी दिशाएँ**—पदों या शब्दोंके रूपोंका परिवर्तन प्रमुखतः दो दिशाओंमें होता है:—(१) अपवादस्वरूप प्राप्त रूप मस्तिष्कके लिए बोझ ज्ञात होते हैं, अतएव उनके स्थानपर अनेकरूपता हटाकर एकरूपता लाकर नियमानुसार या एक प्रकारसे बने रूपोंका प्रयोग हम करने लगते हैं। अंग्रेज़ीमें बली और निर्बल दो प्रकारकी क्रियाएँ हैं। बली क्रियाओंका रूप किसी नियमित रूपसे नहीं चलता, जैसे गो, वेंट, गॉन या पुट, पुट, पुट, या बीट, बेट, बीटेन या राइट, रोट, रिटेन आदि। इसके विरुद्ध निर्बल क्रियाओंमें इड (-ed)लगाकर रूप बना लिये जाते हैं। अंग्रेज़ी भाषाके इतिहासके आरम्भमें बली क्रियाएँ बहुत अधिक थीं, पर इनको याद रखना एक बोझ था, इसीलिए जन-मस्तिष्कने धीरे-धीरे निर्बल क्रियाओंके सादृश्यपर बली क्रियाओंके रूपोंको भी चलाया और धीरे-धीरे बहुत-सी बली क्रियाएँ निर्बल हो गयीं और उनके पुराने अनियमित-रूप समाप्त हो गये और उनके स्थानपर नियमित

रूप आ गये। इस प्रकार उनके रूप परिवर्तित हो गये। वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृतके व्याकरणोंकी तुलना की जाय तो यह स्पष्टतः दिखाई पड़ता है कि वैदिक संस्कृतमें संज्ञा तथा क्रियाके रूपोंमें अपवाद बहुत अधिक थे, पर लौकिक संस्कृततक आते-आते अपवाद रूपमें प्राप्त रूपोंका स्थान नियमित रूपोंने ले लिया। संस्कृतसे प्राकृतकी तुलना करनेपर यह एकरूपता या नियमितता लानेका प्रयास स्पष्ट दिखाई पड़ता है। डॉ० सक्सेनाने प्राकृतसे इसके कुछ अच्छे उदाहरण दिये हैं। संस्कृतमें अकारांत संज्ञाओंकी संख्या बहुत बड़ी है, अतएव उनके रूपोंके नियम अपेक्षाकृत अधिक प्रचलित हैं। प्राकृत कालमें आते-आते हम देखते हैं कि कुछ अकारांतसे इतर संज्ञा शब्दोंके रूप भी अकारांतकी भांति चलते मिलते हैं। उदाहरणार्थ, प्रा० पुत्तस्स (सं० पुत्रसे पुत्रस्य) और सब्बस्स (सं० सर्वसे सर्वस्य) के वज़नपर अग्गिस्स (सं० अग्नि, जिसका संस्कृत रूप अग्नेः था) तथा वाउस्स (सं० वायु, जिसका संस्कृत रूप वायोः था), यद्यपि ये इकारांत तथा उकारांत हैं। इस प्रक्रियामें सादृश्य काम करता है और इसका शुरुआत लड़कों या अनपढ़ोंसे होता है। इसके पीछे प्रयत्नलाघवकी भावना काम करती है। (२) अभिव्यंजनाकी सुविधा या विभ्रम दूर करने या नवीनताके लिए भी लोग बिल्कुल नये रूपोंका प्रयोग करना पसंद करते हैं। इसे एकरूपताके स्थानपर अनेकरूपताका प्रयास कह सकते हैं। हिन्दीके परसर्ग इसी कारण प्रयोगमें आये। विभक्तियोंके घिसनेसे जब विभिन्न कारकोंके रूप एक हो गये तो अर्थकी स्पष्टताके लिए उन्हें अनेक करना आवश्यक प्रतीत हुआ और इसके लिए प्राकृत अपभ्रंश कालमें अलगसे शब्द जोड़े गये। अवधी बोलीमें कर्त्ताकारकके एकवचन और बहुवचनके रूप एक हो गये थे। जैसेः—बरधा खात अहै (एकवचन); बरधा खात अहैं (बहुवचन)। पर इस गड़बड़ीको दूर करनेके लिए बादमें बहुवचनमें —न जोड़ा जाने लगा और अब कहते हैं—'बरधवन या बरधन खात अहैं' या 'घोड़वन दौड़त अहैं' या 'बछवन दूध पियत अहैं'। यद्यपि अब भी यह नियम पूर्णतः लागू नहीं होता और 'घोड़ा दउड़त अहैं', 'घर गिरिहैं' या 'लरिका जात हैं' जैसे प्रयोग भी मिलते हैं। भोजपुरीमें भी यह गड़बड़ी है—

एकवचन	बहुवचन
चोर जात है	चोर जात हउवन
घर गिर गयल	घर गिर गइलँऽ

पर कुछमें यहाँ भी न जोड़ने लगे हैंः—

बरध मर गयल	बरधन मर गइलँऽ
लइका डूबि जाई	लइकन डूबि जइहें

ध्वनि-परिवर्तनसे भी शब्द या पदके रूपमें धीरे-धीरे परिवर्तन आ जाता है, जैसे-संस्कृत 'वर्तते'से भोजपुरी 'बाटे'। किन्तु रूप परिवर्तन न कहकर ध्वनि परिवर्तन कहना ही अधिक उचित है। यों ध्वनियोंके परिवर्तनके कारण इसके रूपमें पर्याप्त परिवर्तन हो गया है, इसमें दो मत नहीं हो सकते। **रूप-परिवर्तनके कारण**—ऊपर रूप-परिवर्तनकी दशाओंपर विचार करते समय रूप-परिवर्तनके कारणोंकी ओर भी संकेत किया गया है। यहाँ उन्हें अलग-अलग देखा जा सकता है। (१) **सरलता**—एक नियमके आधारपर चलनेवाले रूपोंके साथ यदि उसके अपवादोंको भी याद रखना पड़े, तो मस्तिष्कपर एक व्यर्थका भार पड़ता है और इसमें स्वभावतः कुछ कठिनाई भी होती है, अतएव सरलताके लिए जन-मस्तिष्क अपवादोंको निकालकर उनके स्थानपर नियमके अनुसार चलनेवाले रूपोंको रखना चाहता है। ऊपर अंग्रेज़ीकी बली-निर्बल क्रियाओं आदिके उदाहरण लिये जा चुके हैं। पुरानी अंग्रेजीकी तुलनामें आधुनिक अंग्रेजी तथा संस्कृतकी तुलनामें हिन्दीमें क्रिया और कारकके रूपोंकी एकरूपता इसका अच्छा उदाहरण है। ध्वनि-परिवर्तनमें प्रयत्न-लाघवका जो स्थान है, रूप-परिवर्तनमें सरलताका वही स्थान है। इस सरलताके लिए प्रायः किसी

अन्य प्रचलित रूपके सादृश्य(analogy)पर नया रूप बना लेते हैं। इसके फुटकल उदाहरण भी मिलते हैं। पूर्वीयके लिए अपने यहाँ 'पौरस्त' शब्द था, पर वह पाश्चात्यके वज़नपर नहीं था, अतएव लोगोंने उस वज़नपर नया शब्द पौर्वात्य बना लिया। (२) **अज्ञान**—अज्ञानके कारण भी कभी-कभी नये रूप बन जाते हैं और इनमेंसे कुछ प्रचलित भी हो जाते हैं। मरनासे मरा, धरनासे धरा और सड़नासे सड़ाकी भांति करनासे 'करा' रूप ठीक है, पर किसीने देनासे दिया या लेनासे लियाके वज़नपर करनासे 'किया' रूप चला दिया, जो अशुद्ध होनेपर भी चल पड़ा और आज वही परिनिष्ठित (स्टैण्डर्ड) रूप है। 'मैंने करा' शुद्ध होते हुए भी अशुद्ध माना जाता है। अज्ञानवश बने रूपोंमें आवश्यक नहीं है कि सभी चल ही जायँ। कुछ दिन पूर्व एक जेकोस्लोवाकियाके विद्वान् द्वारा लिखित एक हिन्दी व्याकरणकी पुस्तकमें मुझे 'मूजियेगा' रूप मिला। स्पष्ट ही होनासे 'हूजियेगा'-के वज़नपर यह बनाया गया है और यह भी स्पष्ट है कि इसके प्रचलित होनेकी सम्भावना नहीं है। बच्चे प्रायः इस प्रकारके रूप बनाकर प्रयोग करते हैं और बादमें माता-पिताके सुधारनेपर ठीक और परिनिष्ठित रूपका प्रयोग करने लगते हैं। कुछ अज्ञानी अपने संस्कृत-ज्ञानका रोब गालिब करनेके लिए लावण्यता, सौन्दर्यता या शुद्ध अज्ञानवश दयालुताई, कुटिलताई, गरीबताई, सुघरताई या मित्रताई जैसे रूपोंका प्रयोग करते हैं। इनमें अन्तिम ५ तो लोक-भाषाओंमें प्रचलित भी हैं। लोक् भाषाओंमें इस प्रकारके और भी अशुद्ध रूप खोजे जा सकते हैं। अवधीमें बूढ़ाके स्थानपर बुढ़ापा (बुढ़ापा मनई) कहते हैं। साहित्यिक भाषामें भी अन्तर्कथा, अन्तर्साक्ष्य, राजनैतिक और उपरोक्त जैसे अशुद्ध रूप प्रचलन पा गये हैं। अज्ञानके आधारपर आये परिवर्तन भी सादृश्यका ही आधार लेते हैं। (३) **नवीनता, स्पष्टता या बल**—नवीनता, स्पष्टता या बलके लिए भी नये रूपोंका प्रयोग चल पड़ता है। ऊपर स्पष्टताके लिए भोजपुरी तथा अवधीमें 'न' जोड़कर रूप बनानेका उल्लेख किया जा चुका है। इधर बोलचालकी हिन्दीमें 'मैं'के स्थानपर 'हम'का प्रयोग बढ़ रहा है और अस्पष्टता मिटानेके लिए लोग बहुवचनमें 'हम'के स्थानपर 'हम लोग'का प्रयोग कर रहे हैं। नवीनताकी दृष्टिसे गत ३० वर्षोंके हिन्दी साहित्यमें भांति-भांतिके उपसर्ग तथा प्रत्ययोंके योगसे बहुतसे नये रूप (धावितके लिए प्रधावित, भावनाके लिए प्रभावना, निन्दितके लिए विनिन्दित आदि) सामने आये हैं। मृदुताके लिए मार्दव या प्रखरताके लिए प्राखर्य जैसे रूप भी नवीनताके लिए ही लाये गये हैं। संस्कृतके व्याकरणके आधारपर इधर इस प्रकारके पर्याप्त शब्द बने हैं। बलके लिए भी नये रूप बना लिये जाते हैं। इनमें बहुतसे अशुद्ध भी होते हैं। 'अनेक'का अर्थ ही है एक नहीं, अर्थात् एकसे अधिक और इस प्रकार यह बहुवचन है, पर इधर अनेकके स्थानपर 'अनेकों'का प्रयोग (अनेकों व्यक्ति) चल पड़ा है। यहाँ 'ओं' बल देनेके लिए है। भोजपुरीमें फ़ज़ूलमें और बल देनेके लिए 'बेफ़ज़ूल' (बेफ़ज़ूल बात—अर्थात् ऐसी बात, जो बहुत ही फ़ज़ूल हो)का प्रयोग करते हैं, यद्यपि यह पूर्णतया अशुद्ध है और 'बे' लगा देनेसे इसका अर्थ उलटा हो जाना चाहिये। इस प्रकार रूपके क्षेत्रमें एकरूपता और अनेकरूपताकी दौड़ साथ-साथ होती है और उनके बीचमें रूपपरिवर्तन पलता रहता है।

रूप-परिवर्तनके कारण—(दे०) **रूप-परिवर्तन**।

रूप-परिवर्तनकी दिशाएँ—(दे०) **रूप-परिवर्तन**।

रूप-भूगोल (morph-geography)—(दे०) **भाषा-भूगोल**।

रूपरेखा (isomorph)—भाषाओंके नक्शेमें रूपीय विशेषताएँ दिखलानेवाली रेखा।

रूप विज्ञान (morphology)—भाषा विज्ञानकी एक प्रमुख शाखा, जिसमें **रूप** (दे०)का अध्ययन किया जाता है। भाषाके रूपोंका अध्ययन चार प्रकारसे हो सकता है, इसी

आधारपर रूपविज्ञानके चार प्रकार हो सकते हैं :—(क) **वर्णनात्मक रूप विज्ञान** (descriptive morphology)—इसमें किसी भाषाके व्याकरणिक रूपोंका वर्णन रहता है। रूप-विज्ञानका यह रूप सामान्य वर्णनात्मक या विवरणात्मक व्याकरणसे भिन्न नहीं है। (ख) **विश्लेषणात्मक रूप विज्ञान**(analytic morphology) या **संरचनात्मक रूप विज्ञान**(structural morphology)—इसमें भाषाके रूपोंका संरचनात्मक विश्लेषण रहता है। रूपग्राम विज्ञानीय (morphemic) अध्ययन इसीमें आता है। रूपध्वनिग्राम विज्ञान (morpho-phonemic)की दृष्टिसे अध्ययन भी इसीके अन्तर्गत किया जाता है। (ग) **ऐतिहासिक रूपविज्ञान**(historical morphology)—इसमें किसी भाषाके रूपोंका ऐतिहासिक अध्ययन करते हैं। **ऐतिहासिक व्याकरण**(historical grammer)-के यह बहुत निकट है। (घ) **तुलनात्मक रूपविज्ञान**(comparative morphology)—इसमें दो या अधिक भाषाओंके रूपोंका तुलनात्मक अध्ययन करते हैं। तुलनात्मक अध्ययन उपर्युक्त तीनोंमें किसी भी प्रकारका हो सकता है। रूपविज्ञान उपर्युक्त चार दृष्टिकोणोंसे भाषाओंका अध्ययन तो करता ही है, साथ ही उपर्युक्त शाखाओंके विषयमें नियम या सिद्धान्त-निर्धारण, रूप-परिवर्तन, उसके कारण, सम्बन्ध तत्त्व आदि भी इसके क्षेत्रमें आते हैं। (दे०) **रूप**, **रूप-परिवर्तन**, **रूपग्राम विज्ञान**।

रूपश्रेणी—**रूपग्राम** (दे०)का एक अन्य नाम।

रूपांतर(variant)—(१)**संध्वनि** (दे०)-के लिए प्रयुक्त एक नाम। (२) **संरूप** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

रूपात्मक वर्गीकरण—**आकृतिमूलक वर्गीकरण** (दे०)का एक अन्य नाम।

रूपात्मक समीकरण (morphological assimilation)—वाक्यमें किसी शब्दके लिंग, वचन, कारक या पुरुष आदिको किसी अन्य शब्दके जैसा बनाना। उदाहरणतः संस्कृतमें विशेष्यके अनुसार विशेषण या हिन्दीमें कर्ताके अनुसार क्रिया आदि। इसे **अन्वय** भी, कहते हैं।

रूपाश्रित वर्गीकरण—**आकृतिमूलक वर्गीकरण** (दे०)का एक अन्य नाम।

रूब्रंग(rubrang)—**पलौंग**की **पले** (दे०) बोलीका, ह्सिपव उत्तरी शान स्टेट (बर्मा) में प्रयुक्त, एक रूप। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४५६ थी।

रूमइ (rumai)—(१) **पलौंग** (दे०)का भामोमें प्रयुक्त एक रूप। (२) **पलौंग** (दे०)का ह्सुम्हसइ उत्तरी शान स्टेटमें प्रयुक्त एक रूप।

रूमांश(rumansch)—(दे०)**रेटो रोमांस**।

रूमानियन—रुमानियाकी भाषा। रूमानियाके अतिरिक्त बलगेरिया, बेसारेबिया तथा बनत आदिमें भी इसके बोलनेवाले हैं। इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग एक करोड़ तीस लाख है। इसकी कुछ बोलियाँ **डेको-रूमानियन** (युक्रेन तथा रूमानियामें) **मैकेडो-रूमानियन** (मैकेडोनियामें), **मेगलेनो रूमानियन** (सलोनिकाके पास) तथा **इस्ट्रो-रूमानियन** (इस्ट्रियाके कुछ भागोंमें) आदि हैं। इनमें प्रमुख प्रथम है। रुमानियन भाषा एक रोमांस भाषा है और वलगर या ग्राम्य लैटिनसे विकसित हुई है, अतः इसका व्याकरण तो रोमांस भाषाओंके समीप है, विशेषतः इतालवीके, किन्तु इसके शब्द समूहमें स्लाव तत्त्व अधिक हैं। रूमानियनका लिखित रूप लगभग १४०० ई०से मिलता है। साहित्य प्रायः १५०० ई०के बादसे मिलता है।

रूसी—रूसके बहुत बड़े भागमें (अन्य भागोंमें यूराल, अल्ताई तथा काकेशस परिवारकी भाषाएँ बोली जाती हैं) तथा आसपासके पोलैण्ड आदिमें लगभग १५ करोड़ लोगों द्वारा बोली जानेवाली भाषा। इस भाषाका सम्बन्ध भारोपीय परिवारके सतम् वर्गकी

स्लाव शाखासे है। रूसी भाषा स्लाव भाषाओं-में सबसे पूर्वी है। इस भाषाके प्राचीनतम नमूने ११वीं सदी मध्यके आसपासके हैं, किन्तु उस समयतक यूक्रेनियन और रूसी (बृहद्)में स्पष्ट अन्तर नहीं है। सच्चे अर्थोंमें रूसी भाषामें साहित्यका आरम्भ १३वीं सदी-से हुआ है। उसके कुछ पूर्व रूसी भाषाका स्पष्ट रूप विकसित हो चुका था। तबसे लेकर अबतक रूसीमें साहित्य रचना हो रही है। रूसी भाषामें ऐतिहासिक कारणोंसे समय-समयपर अनेक भाषाओंके प्रभाव, प्रमुखतः शब्दके क्षेत्रमें, पड़े हैं, जिनमें प्रमुख-नाम तातार, पोलिश, जर्मन, फ्रेंच, इतालवी, ग्रीक, लैटिन और अंग्रेजीका लिया जा सकता है। रूसी लिपि ग्रीकपर आधारित किरिल लिपि है, जिसमें रूसी क्रांतिके बाद कुछ परिवर्तन हुआ है। रूसी भाषाके प्रमुखतः तीन रूप (बोलियाँ नहीं, भाषाएँ) हैं:—(१) रूसी—इसीको **बृहद् रूसी** या **महा-रूसी** (great russian)भी कहते हैं। यही रूसकी परिनिष्ठित भाषा है। यह मास्कोके आस-पासकी बोलीपर आधारित है। इसका क्षेत्र रूसी भाषा क्षेत्रका मध्य तथा उत्तर-पूर्वी प्रदेश है। (२) **लघु रूसी** (little russian)—इसको **यूक्रेनियन** (ukrainian) भी कहते हैं। इसका क्षेत्र यूक्रेन, दक्षिणी पोलैंड आदि है। इसमें भी साहित्य है, किन्तु बृहद्से कम। **रुथेनियन** इसकी एक बोली है। (३) **श्वेत रूसी** (white russian)—पश्चिमी रूस तथा उत्तरी पूर्वी पोलैण्ड इसका क्षेत्र है। साहित्य-रचना इसमें भी हुई है, किन्तु उपर्युक्त दोनों-से कम है। रूसी लोग इसे बेलो रूसी कहते हैं। रोन नदीके किनारे काज़ेग लोगोंकी बोली **काज़ेकी** है। रूसीमें बोलियाँ कम हैं, जो हैं भी उनमें बहुत अन्तर नहीं है। रूसीपर फ्रांसीसी भाषाका बहुत प्रभाव पड़ा है। पहले यहाँ लोग रूसीको ग्रामीण भाषा समझते थे। बड़े लोगोंमें फ्रांसीसीका ही प्रचार था। रूसी-पर अंग्रेजी, जर्मन, तातारीका प्रभाव भी पड़ा है। रूसी साहित्य बहुत सम्पन्न है। इसके प्रमुख साहित्यकारोंमें रदीश्चेव, क्रिलोफ, पुश्किन, अदोयेव्स्की, तुर्गनेव, दास्ता येव्स्की, टाल-स्टाय, जेखव आदि हैं। रूसियोंके एक प्राचीन कबीलेका नाम रॉस (ros) या रॉसे (rosy) था। इसी आधारपर देश तथा भाषाका नाम रूस-रूसी पड़ा। कुछ लोग इन नामोंका सम्बन्ध रूसके दक्षिणी भागमें बहनेवाली नदी रॉस (ros)से जोड़ते हैं।

रूसी लिपि—रूसी भाषाके लिए प्रयुक्त लिपि। इसका नाम सिरिलिक लिपि (दे०) है।

Аа	Пп
Бб	Рр
Вв	Сс
Гг	Тт
Дд	Уу
Ее	Фф
Ёё	Хх
Жж	Цц
Зз	Чч
Ии	Шш
Йй	Щщ
Кк	Ъъ
	Ыы
Лл	Ьь
Мм	Ээ
Нн	Юю
Оо	Яя

[रूसी लिपिके छापेके छोटे और बड़े अक्षर यहाँ साथ-साथ दिये गये हैं। रोमन आदिकी तरह ही उसके भी लिखनेके अक्षर कुछ भिन्न होते हैं। ते आदि कुछ अक्षरोंमें तो यह भिन्नता बहुत अधिक मिलती है।]

रेंगखंग (rengkhang)—**मिकिर** (दे०)की उत्तरी कचार (असम)में प्रयुक्त एक बोली। वस्तुतः यह 'मिकिर' तथा उसके आसपास बोली जानेवाली बोलियोंका मिश्रण है। ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ७२५ थी।

रेंगखाल (rengkhal)—**ह्रांगखोल** (दे०)-का एक अन्य नाम।

रेंगमा (rengma)—**चीनी परिवार** (दे०)-

की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके नागा वर्गकी, नागा पहाड़ियों (असम) में प्रयुक्त, एक पश्चिमी भाषा। १९२१-की जनगणनामें इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५,१०३ थी।

रेअंग (reang)––**तिपुरा** (दे०)की एक बोली। इसका क्षेत्र टिपरा (पर्वतीय) है।

रेखा––एक प्रकारका चिह्न, जिसका प्रयोग लिखनेमें होता है। (दे०) **विराम**।

रेखात्मक लिपि (linear script)––ऐसी लिपि, जिसके अक्षर रेखाओं, बिन्दुओं आदिसे बने हों, चित्रों आदिसे नहीं। क्रीटमें प्राचीन कालमें एक प्रकारकी लिपि इस वर्गकी मिलती है। बहुत-सी प्राचीन चित्र-लिपयाँ भी विकसित होकर रेखात्मक लिपि हो गयी हैं। ब्राह्मी लिपि, जिससे उर्दूको छोड़कर सभी भारतीय लिपियाँ विकसित हुई हैं, रेखात्मक ही थी। (दे०) **चित्रलिपि**।

रेख़्ता––'रेख्ता' या 'रेख़्ता' शब्दका प्रयोग 'उर्दूमें एक प्रकारकी 'ग़ज़ल', संगीतके एक पारिभाषिक शब्द तथा एक प्रकारकी भाषाके लिए मिलता है। मूलतः यह शब्द फ़ारसीके 'रेख़तन्' मस्दरसे बना है, जिसका अर्थ रचना, बनाना, डालना, मिलाना, तोड़ना, आदि होता है। संस्कृतकी 'रिच्' धातु तथा फ़ारसीका 'रेखतन्' मस्दर मूलतः एक है। 'रिच्'का अर्थ गिराना, अलगाना आदि होता है। लैटिन, ग्रीक आदिमें भी यह धातु है। 'रेख्ता'का फ़ारसीमें अर्थ गिरा हुआ या गिराकर बनाया हुआ ढेर आदि है। भारतमें 'रेख्ता' शब्दका प्रयोग पहले छंद और संगीतके क्षेत्रमें हुआ। इन दोनों ही क्षेत्रोंमें इसमें मिलने या मिश्रणका भाव है। फ़ारसी और भारतीय पद्धतिको मिलाकर इनको बनाया गया। साथ ही ऐसे छंदोंको भी रेख्ता कहा गया, जिसमें कुछ अंश फ़ारसीका तथा कुछ हिन्दीका हो। जैसे ख़ुसरोकी प्रसिद्ध पंक्ति 'जहाल मस्कीं मकुन तग़ाफुल दुराय नैना बनाय बतियाँ। आगे इसी मिश्रणकी दृष्टिसे १७००से कुछ पूर्वसे १८००से कुछ बादतककी उर्दूकी पद्य भाषा 'रेख्ता' कही गयी। इसमें हिन्दी व्याकरणमें अरबी-फ़ारसी शब्दोंका मिश्रण था। ग़ालिब और उनके पूर्वके अधिकांश कवियोंने इसी अर्थमें 'रेख्ता' शब्दका प्रयोग किया। हिन्दीके भी बहुतसे कवियोंने रेख्ताका प्रयोग मिश्रित छंद या मिश्रित भाषा या इस मिश्रित रागके अर्थमें किया। आलम, पलटू, तुलसी, बूला साहब, गुलाल, किनाराम, गरीबदास, दरियादास तथा भीखासाहब आदिके नाम इस दृष्टिसे लिये जा सकते हैं। 'रेख्ता'के आधारपर ही औरतोंकी भाषा **रेख्ती** (दे०) कहलायी।

रेख़्ती––पुरुषोंकी भाषासे स्त्रियोंकी भाषा मुहावरा, प्रयोग आदिकी दृष्टिसे प्रायः भिन्न होती है। रंगीन आदि कुछ उर्दू कवियोंने स्त्रियोंकी भाषामें कविता लिखनी शुरू की, जिसे **नेग़माती ज़बान** या **बेगमाती उर्दू** कहा गया। बादमें **रेख़्ता** (दे०)के आधारपर इस ज़नानी भाषा तथा इसमें की गयी कविताके लिए रेख्ती शब्दका प्रयोग किया गया। रेख्ती लिखनेवाले कवियोंमें रंगीनके अतिरिक्त इंशा, अलीबेग नाजनी तथा जान साहब आदिके नाम प्रमुखतः लिये जा सकते हैं। इस भाषामें उन शब्दों, मुहावरों, रूपों एवं प्रयोगोंको ही विशेष रूपसे स्थान दिया गया है, जो प्रायः केवल मुसलमान औरतोंतक सीमित रहे हैं।

रेगरी (regari)––**पश्चिमी हिन्दी** (दे०)-का किशनगढ़ (राजस्थान)में प्रयुक्त एक रूप।

रेटिअन (rhatian)––**रेटो रोमांस** (दे०)-का एक अन्य नाम।

रेटिक (rhaetic)––स्विटज़रलैंड तथा आस्ट्रियामें प्राचीनकालमें प्रयुक्त होनेवाली एक भारोपीय परिवारकी इटैलिक शाखाकी विलुप्त भाषा। इसका संबंध **रोटो रोमांस**से है।

रेटो-रोमनिक (raeto-romanic)––**रेटो रोमांस** (दे०)का एक अन्य नाम।

रेटो रोमांस (rhaeto-romance)––एक रोमांस भाषा। वस्तुतः यह कई छोटी-छोटी

अर्थ (mood) कहते हैं। उसके लिए संस्कृत पंडितोंमें 'लकार' शब्दका एक सामूहिक नामके रूपमें प्रचलन रहा है। 'लकार' नामका आधार है संस्कृतके १० या ११ कालों एवं अर्थोंमें 'ल'का आना। ये लकार हैं :—लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट, लङ, लिङ, लुङ, लृङ तथा लिङाशिषि । ये नाम पाणिनि द्वारा प्रयुक्त हुए हैं। इन नामोंका आधार क्या है, यह विवादका विषय है। कुछ लोगोंका अनुमान है कि 'काल' शब्द पहलेसे आ रहा था, उसीसे पाणिनिने 'ल' लिया। अन्तका 'ट्' और ङ 'आद्यन्तौ टकितौ' 'ङिच्च'पर संभवतः आधारित है। इनमें अ, इ, उ आदि स्वर भी सकारण और सव्यवस्था प्रयुक्त हुए हैं। मूल स्वर अ, इ, उ हैं और मूल काल भी तीन ही हैं :—वर्तमान, भूत, भविष्य। 'अ'के आधारपर वर्तमानको लट्, इके आधारपर भूतको लिट् तथा उके आधारपर भविष्यको लुट् कहा गया है। शेषमें सामान्य भविष्यके लिए ऋ (लृट्) आज्ञाके लिए ओ (लोट्) तथा वैदिक विशिष्ट कालके लिए ए (लेट्) लिया गया है। ङ्के साथ भी इसी प्रकार अ, इ, उ, ऋ आये हैं। संस्कृत लकारोंके विभिन्न पर्याय अंग्रेज़ी और हिन्दी नामोंके साथ इस प्रकार दिखाये जा सकते हैं :—(१) **लट् लकार** (present tense)—इसके अन्य नाम **वर्तमान काल, वर्तमान, वर्तमाना, भवन्ती, कुर्वत, कुर्वती, की, भवति भवत्, सत्, अच्युत्** आदि भी हैं। इसका प्रयोग वर्तमान समयमें होनेवाली क्रियाके लिए होता है, जैसे—'सः गच्छति'। (२) **लोट् लकार** (imperative mood)—इसके अन्य नाम **पंचमी, गी, विधाता, आज्ञा** आदि हैं। किसीको कुछ करनेकी आज्ञा देनेके लिए इसका प्रयोग होता है,—जैसे 'त्वं गच्छ'। (३) **लिङ लकार** (potential mood)—इसे **विधि, विधिलिङ्, सप्तमी, वैधी, वैधानी, खी** आदि भी कहा गया है। यह भी लोट्की तरह ही आज्ञा है। दोनोंमें अन्तर यह है कि लोट्से लिङमें आज्ञा कुछ कड़ाईके साथ रहती है। इसमें चाहियेका भी भाव होता है। जैसे—'सः कुर्यात्'। (४) **लङलकार** (imperfect tense)—इसे **अनद्यतनभूत, ह्यस्तनी, भूतेश्वर** या **घी** भी कहा गया है। यह एक प्रकारका भूतकाल है। वह भूत, जो आज न समाप्त हुआ हो, अपितु आजसे पूर्व हुआ हो, जैसे—'अहम्जानि (मैंने जाना)। (५) **लिट्लकार** (perfect tense)—इसे **परोक्षभूत, भूत, कृतम्, चकृवत्, भूतं, अतीत, परोक्षा, ठी, अधोऽक्षज** आदि भी कहा गया है। इसका प्रयोग ऐसे भूतकालके लिए होता है, जो आँखोंके सामने न हुआ हो। स्पष्ट ही इस लकारका प्रयोग उत्तम पुरुषके लिए नहीं होता। उदाहरणार्थ—'स दधार' (उसने धारण किया)। (६) **लुङ लकार** (aorist)—इसके अन्य नाम **अद्यतनी, भूतेश, टी** तथा **सामान्य भूत** आदि भी हैं। यह संस्कृतका तीसरा भूतकाल है। यह सामान्य भूत है और किसी भूतके लिए इसका प्रयोग हो सकता है। यों मूलतः कदाचित् यह अनद्यतनका ठीक उलटा था। उदाहरण—अहमस्थाम् (मैं ठहरा)। (७) **लुट् लकार** (periphrastic future या first future)—इसे **अनद्यतन भविष्य, भविष्यत् भविष्य, भव्य, वत्स्यंत्, करिष्यत्, श्वस्तनी, डी** आदि भी कहा गया है। इसका प्रयोग तब होता है, जब कार्य आज न होनेको हो। उदाहरण—'अहं नेताहे' (मैं ले जाऊँगा)। (८) **लृट् लकार** (second future या simple future)—इसे **सामान्य भविष्य, भविष्यन्ती** या **ती** भी कहा गया है। सभी प्रकारके भविष्यके लिए इसका प्रयोग होता है। उदाहरण—'अहम्' स्थास्यामि (मैं ठहरूँगा)। (९) **लिङाशिषि** (precative mood) या (penedictive mood)—इसे **आशीः, आशीर्लिङ्, लोङ** या **ढी** भी कहा गया है। किसीको आशीर्वाद देनेके लिए इसका प्रयोग

होता है, जैसे––त्वं जीव्याः शरदां शतम्' (तुम सौ वर्षतक जिओ)। (१०) **लृङलकार** (conditional mood)––इसे **क्रिया-तिपत्ति** या **थी** भी कहा गया है। लृङ लकार-का प्रयोग तब होता है, जब एक क्रियाका होना किसी दूसरी क्रियापर निर्भर हो, जैसे––राम आता तो मैं जाता (यदि रामः आगमिष्यत्तर्हि अहं अगमिष्यम्) (११) **लेट् लकार** (vedic subjunctive या subjunctive mood)–इसे **लकार** या **पंचम लकार-**भी कहा गया है। लेट्का प्रयोग वैदिक साहित्यमें ही मिलता है, इसीलिए इसे **वैदिकी** या **नैगिमी** रूपमें भी अभिहित किया गया है। लेट, इससे निश्चयात्मक इच्छा आदिका बोध होता है। जैसे–स्वस्तये वायुं उप ब्रवामहै (मंगलके हमलोग वायुको बुलायँगे)। कारिका है––'लट् वर्तमाने लेट् वेदे भूते लुङ लङ लिटस्तथा। विध्याशिषोऽस्तु लिङलोटौ.लुट्, लृट्, लृङ च भविष्यति।"

लकार २––(१) **ल** के लिए प्रयुक्त नाम(दे०) कार। (२) **लेट् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

लकारीकरण(lambdism)––किसी शब्दमें 'र'- को 'ल' कर देना 'र'काल हो जाना **लकारी- भवन** या **लभवन** भी कहा जा सकता है। किसी अन्य ध्वनि (द, ड, ड़ आदि)के 'ल' हो जाने या कर देनेके लिए भी इन नामोंका प्रयोग होता है।

लकू(laku)––**ब्वे** (दे०)का एक रूप।

लक्षक शब्द––एक प्रकारके शब्द। (दे०) **शब्द-शक्ति** तथा **शब्द**।

लक्षण-लक्षणा––एक प्रकारकी लक्षणा। (दे०) **शब्द-शक्ति**।

लक्षणामूलाध्वनि––एक प्रकारकी **ध्वनि**(दे०)।

लक्षणामूला शाब्दी व्यंजना––एक प्रकारकी व्यंजना। (दे०) **शब्द-शक्ति**।

लक्षणा शक्ति––एक प्रकारकी **शब्द-शक्ति** (दे०)।

लक्ष्मीलिंग––(दे०) **लिंग**।

लखेर(lakher)––**लइ** (दे०)की, लुशाई पहाड़ियों (असम)पर प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १,१०० थी।

लग़ारी(laghari)––लग़ारियों तथा कुछ अन्य लोगोंमें प्रयुक्त **बलोची** (दे०)को दिया गया एक नाम।

लगुनेरोस (laguneros)––**पिमा-सोनोर** (दे०)वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसका एक अन्य नाम **ईरिटिला** भी है। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

लग़मानी(laghmani)––**पशई** (दे०)का एक अन्य नाम।

लघु––ह्रस्व मात्रा या ह्रस्व स्वर (अ, इ, उ, ऋ)को लघु कहते हैं। 'ह्रस्वं लघु' (अष्टाध्यायी, १.४.११)। **दीर्घ** (दे०), लघुका विरोधी है।

लघु रूसी(little russian)––**यूक्रेनियन** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

लघु शान(small shan)–**ताई-नोई**(दे०)-का एक अन्य नाम।

लङलकार––एक प्रकारका **लकार** (दे०)।

लट् लकार(present tense)–एक प्रकार-का **लकार** (दे०)

लड़का कोल(larka kol)––**हो** (दे०)का एक दूसरा नाम।

ल थ(la tha)––**जयेइन**(दे०)का एक रूप।

लथवंग(lathawang)––**कचिन**(दे०)का एक रूप।

लदखी(ladakhi)––लद्दाखमें बोली जाने-वाली **तिब्बती** (दे०)का एक अन्य नाम।

लदर (ladar)––१८९१की वम्बई जन-गणनाके अनुसार बीजापुर तथा कनारामें प्रयुक्त एक **बंजारा**(दे०) भाषा।

लदोर्नी–**इंडोनेशियन परिवार** (दे०)की लदोर्न द्वीपमें प्रयुक्त एक भाषा।

लद्दाखी तिब्बती––लद्दाखमें बोली जानेवाली **तिब्बती**(दे०) या भोटिया भाषा।

लधाडी(ladhadi)––बरारमें प्रयुक्त एक मिश्रित **द्रविड़** (दे०) बोली। ग्रियर्सनके

भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या २,१२२ थी।

ल-फै (la phai)—**कचिन** (दे०)की उत्तरी शान प्रांतमें प्रयुक्त एक बोली। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या १८० थी।

लबांकी(labanki)–पंजाबमें **लभानी**(दे०)-के लिए प्रयुक्त एक नाम।

लबाना (labana)—**लभानी** (दे०)का एक अन्य नाम।

लबानी (labani)—**लभानी** (दे०)का एक अन्य नाम।

लबेइन (labein)—**यबेइन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

लब्बै (labbai)—**तमिल**के लिए प्रयुक्त एक नाम। वस्तुतः यह मद्रासमें स्थित एक तमिल भाषी जातिका नाम है, जिसके आधारपर भाषाको भी यह नाम दे दिया गया है।

लभानी(पंजाब तथा गुजरातकी) (labhani of punjab & gujarat)–(१) पंजाब तथा गुजरातमें प्रयुक्त **बंजारी** (दे०)की एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २३,७३३ थी। (२) गुजरात और पंजाबमें तथा अन्यत्र भी **बंजारी**के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

लम—**तिब्बती** (दे०)का एक अन्य नाम।

लमनो (lamno)—दक्षिणी अमेरिकाके **किचुआ** (दे०)परिवारकी एक प्रमुख भाषा। इसका अन्य नाम **लमिस्टा**(lamista) है।

लमाणी(lamani)—नासिक तथा बेलगाम-में **लभानी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

लमुत(lamut)—**तुंगुस** (दे०) भाषाकी एक बोली।

लमेत(lamet)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार केंगतुंग दक्षिणी शान प्रांतमें २३१ व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत एक **मोन-ख्मेर** (दे०) भाषा।

लरिया—**छत्तीसगढ़ी** (दे०)का एक नाम। छत्तीसगढ़के पूर्वमें ओड़िया भाषा-भाषी प्रदेश है। वहाँके लोग पश्चिमी छत्तीसगढ़को 'लरिया' कहते हैं। इसी आधारपर 'छत्तीस-गढ़ी'का एक नाम 'लरिया' भी पड़ गया है।

लल्लैंग (lallaing)–**बर्मी** भाषा **शंडू**(दे०)का उत्तरी अराकानमें प्रयुक्त एक रूप। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या ७२० थी।

लव(lawa)—**व** (दे०)का एक अन्य नाम।

लवानी (lavani)—**लभानी** (दे०)का एक अन्य नाम।

लवी (lawi)—**यिन्बव** (दे०)का एक रूप।

लवंग्वव (lawngwaw)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **मरु** (दे०)का एक नाम।

लव्तू (lawtu)—चिन पहाड़ियों (बर्मा)-में प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०)की एक 'कुकी-चिन' भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३,०४३ थी।

लव्लव् (lawlaw)—**लोलो** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम

लव्हे (lawhe)—**ह्वी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक 'चीनी' नाम।

लशी (lashi)—उत्तरी शान स्टेट तथा कुछ अन्य भागोंमें व्यवहृत एक मिश्रत **कचिन** (दे०)भाषा। बर्माके भाषा-सर्वेक्षण-के अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २३,३६८ थी।

लस-बेल(las bela)–पूर्वीय **बलोची** (दे०)-का लसबेला (बिलोचिस्तान)में प्रयुक्त एक मिश्रित रूप।

लस शान(lasa shan)—**मैंगथ** (दे०)का एक और नाम।

लहँदा पंजाबी—(दे०) **पंजाबी लहँदा**।

लहँदा या लहँदी—लहँदा पश्चिमी पंजाब (कुछ भाग छोड़कर)की भाषा है। यह क्षेत्र अब पाकिस्तानमें है। 'लहँदा' शब्दका शाब्दिक अर्थ है 'सूर्यास्त'। इसी आधारपर इसका एक अर्थ 'पश्चिम' भी है। पूरे पंजाबके पश्चिमी भागकी यह भाषा है, इसीलिए पंजाबीमें इसे पहले लहन्दे दि बोली (= पश्चिमकी बोली) कहते थे। 'लहन्दा' या 'लहँदा' नाम उसीका संक्षिप्त रूप है। लहँदा,

लहन्दा या लंडाका प्रयोग अंग्रेजोंने आरम्भ किया। इसे **पश्चिमी पंजाबी**, **डिलाही** भी कहते हैं। हिन्दुओंके कारण इसका नाम **हिन्दको** या 'हिन्दकी', जाटोंके कारण 'जटकी' तथा 'ऊच' कस्बेके कारण **उच्ची**[1] भी है। ये नाम इसकी बोलियोंके भी हैं। प्राचीन कालमें इसका एक नाम **मुल्तानी** भी था। अबुल फ़ज़लने अपनी 'आईने-अकबरी' में इस भाषाको 'मुल्तान' कहा है। अब 'मुल्तानी'का प्रयोग मुल्तानके आसपास-की लहँदाके लिए होता है। लहँदा बोलने-वालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ७०,९२,७८१ थी। परिनिष्ठित लहँदा शाहपुर ज़िलेकी है। लहँदा इस-के विभिन्न रूपोंके नाम जटकी, पंजाबी, जांगली, चिनवाड़ी, निस्वानी, काछड़ी, बार्डी बोली तथा जटातार्दी बोली, आदि हैं। लहँदाकी बोलियोंमें प्रमुख मुल्तानी (इसमें डेरागाज़ी खांकी जटकी या हिन्दकी तथा सिंधी सिराइकी हिन्दकी, दो उप-बोलियाँ हैं), खेत्रानी, जाफिरी, थळी या जटकी, हिन्दको (इसमें तिनाउली उपबोली भी है) तथा उत्तरी पूर्वी बोली (इसमें पोठवारी, ढूंडी, अवांकी, घेबी, पुंछी, चिभाली आदि उप-बोलियाँ हैं) आदि हैं।

लहँदापर सिंधी तथा कश्मीरीका पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। सिख धर्मकी जनमसाखी-के अतिरिक्त लहँदामें केवल लोकसाहित्य है। लहँदा बोलनेवाले मुसलमान ही अधिक हैं, इसी कारण इसके लिए फ़ारसी-लिपिका ही प्रयोग अधिक होता है। हिन्दू लोग 'लंडा' नामक लिपिका भी प्रयोग करते रहे हैं। अब लहँदा क्षेत्रमें उर्दू भाषाका बोलवाला है। लहँदाका सम्बन्ध केकय या पैशाची अप-भ्रंशसे है।

लहरंग (laharang)—**कनम** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

लहर-सिद्धांत (wave theory)—भाषा परि-वर्तनके व्यापक बनने या फैलनेका सिद्धांत जे० श्मिटने १८७२में ध्वनि-परिवर्तनके प्रसंगमें लहर-सिद्धांत भाषा-विज्ञानके विद्वा-नोंके समक्ष रखा। आशय यह है कि जैसे पानीकी लहर एक बिंदुपर उत्पन्न होकर चारों ओर धीरे-धीरे फैल जाती है, उसी प्रकार भाषा-परिवर्तन भी एक व्यक्तिसे आरम्भ होकर संसर्गसे धीरे-धीरे समाजमें फैल जाता है। इसे बहुत लोगोंने ध्वनि-परिवर्तनके कारण-के रूपमें लिया है, वस्तुतः यह कारण नहीं है। यह सिद्धांत तो मात्र यह बतलाता है कि ध्वनि-परिवर्तन या किसी भी प्रकारका भाषा-परिवर्तन एक जगह घटित होनेके बाद कैसे पूरे भाषा-क्षेत्रमें फैलता है।

लहानी (lahani)—१८९१की बम्बई जन-गणनाके अनुसार खानदेश तथा पंचमहलमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा। इसका अब पता नहीं है।

लहु-सी (lahu-si)—**क्वी** (दे०) का एक अन्य नाम।

लहू (lahu)—**मो-सो** (दे०) का एक नाम। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसका क्षेत्र शान रियासतोंमें है तथा इसके बोलनेवालों-की संख्या १८,३४९ थी

लहोके—भूटानमें प्रयुक्त भोटिआका एक अन्य नाम। (दे०) **भोटिआ (भूटानकी)**।

लह्‌त (lahta)—**लथ** (दे०) का एक अन्य नाम।

लह्‌स शान (lahsa shan)—**लस शान** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

लांपुती (lanputi)—**अहीरवाटी** (दे०) का नाभा रियासत (पंजाब) में प्रयुक्त एक रूप।

लांबिछोंग (lambichhong)—**खंबू** (दे०) की नैपालकी ऊपरी घाटीमें प्रयुक्त एक बोली।

लाँब्लू (langue bleue)—**वोलपूक** (दे०)-के आधारपर बोलैक (bollack) द्वारा १८९९में बनायी गयी एक कृत्रिम भाषा। इसे नील भाषा (blue language) भी कहते हैं।

लाओ (lao)—चीनी परिवारकी स्यामी

१—१८१९ में कैरीने उच्ची नामका प्रयोग सर्वप्रथम किया।

शाखाका एक वर्ग, जो स्याम तथा बर्मामें बोला जाता है। इसमें थाई या थाई लू, थाई लाओ, थाई युअन आदि बोलियाँ हैं। इसे **लाओशियन** (laotian) भी कहते हैं।

लाओ लिपि—**लाओ** (दे०) के लिए प्रयुक्त लिपि, जो **ब्राह्मी** (दे०) की दक्षिणी शैलीसे सम्बद्ध है। इसपर बर्मी लिपिका भी प्रभाव पड़ा है।

लाक्षणिक अर्थ (figurative meaning)—(दे०) **लक्षणा**।

लाज़ (laz)—काकेशसमें प्रयुक्त काकेशस परिवारकी एक भाषा।

लाट अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०) का एक भेद।

लाटी अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०) का एक रूप।

लाड (lad)—**लाडी** (दे०) का एक अन्य नाम।

लाडी (ladi)—बरारमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ५०० थी।

लाड़ी (lari)—**सिंधी** (दे०) की दक्षिणी सिंधमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४०,००० थी।

ला-ति (la-ti)—चीनमें, हैंगिअङके उत्तर-पश्चिममें लगभग ५०० व्यक्तियों द्वारा प्रयुक्त एक भाषा। इसके पारिवारिक सम्बन्धका पता नहीं है।

लाद (lada)—मद्रासमें **बंजारी** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

लामा (lama)—**तिब्बती** (दे०) का एक अन्य नाम।

लामा तिब्बती—(दे०) **तिब्बती**।

लाला-लंबा (lala-lamba)—**बांटू** (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा। इस भाषाका क्षेत्र जंबजी नदीके उत्तर तथा न्यासा एवं टँगेनिका झीलोंके पश्चिममें है।

लालुंग (lalung)—**चीनी परिवार** (दे०)-की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके 'बोदो' वर्गकी असमकी घाटीमें प्रयुक्त एक भाषा। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४०,१६० थी।

लासी (lasi)—**सिंधी** (दे०) की लसबेला (बिलोचिस्तान) में प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४२,६१३ थी।

लाहुली (lahuli)—लाहोलमें बोली जानेवाली **तिब्बती** (दे०) भाषा।

लाहुली तिब्बती—लाहोलमें बोली जानेवाली **तिब्बती** (दे०) बोली।

लाहौरी (lahori)—**पंजाबी** (दे०) का एक रूप, जो लाहौरमें तथा उसके आसपास प्रयुक्त होता है। 'लाहौरी' नाम भाषाके अर्थमें अत्यन्त पुराना है। अमीर खुसरो तथा अबुल फ़ज़लने अपनी पुस्तकोंमें इसका उल्लेख किया है। पहले यह सम्भवतः पंजाबीका वाचक रहा होगा। अब यह केवल लाहौर तथा आसपासकी भाषाका द्योतक है।

लाहौली—**लाहुली** (दे०) का एक अन्य नाम।

लिंग (gender)—लिंग शब्दका प्रयोग संस्कृत तथा हिंदीमें चिह्न, लक्षण, प्रमाण, शिवप्रतिमा, पुरुषेन्द्रिय आदि अनेक अर्थोंमें मिलता है। व्याकरण या भाषा-शास्त्रमें लिंगका अर्थ है जाति (पुरुष जाति, स्त्री जाति, निर्जीव जाति)। जिन शब्दोंकी जाति पुरुष होती है, उन्हें पुल्लिंग, जिनकी जाति स्त्री होती है, उन्हें स्त्रीलिंग तथा जो निर्जीव होते हैं, उन्हें नपुंसक लिंग कहते हैं। इन तीनों लिंगोंमें, कुछ भाषाओंमें तो केवल दो (स्त्री, पुरुष) मिलते हैं और कुछमें तीनों। संसारमें वस्तुएँ दो प्रकारकी हैं :—सजीव, निर्जीव। सजीवके दो भेद हैं—स्त्री, पुरुष। इस प्रकार स्त्री, पुरुष, निर्जीव—ये तीन भेद बहुत सहज हैं, किन्तु भाषाका लिंग इस स्वाभाविक लिंगपर आधारित न होकर प्रचलन या परम्परापर आधारित है। इसी कारण संस्कृतमें स्त्री अर्थ रखनेवाले तीन शब्द —दार, स्त्री, कलत्र—तीन लिंगोंके हैं, प्रथम शब्द पुल्लिंग है, दूसरा स्त्री लिंग और तीसरा नपुंसक

लिंग। ईसी प्रकार जर्मनमें कुमारीका पर्याय 'फ्राउलाइन' नपुंसक लिंग है। कुछ भाषाओं-में लिंग मात्र सजीव-निर्जीवका तथा कुछमें बली-निर्बलका होता है। संस्कृतमें पुल्लिग-के लिए प्राचीन शब्द **वृषन्** तथा स्त्रीलिंगके लिए **योषा** मिलते हैं। इनके प्रयोग ऐतरेय ब्राह्मण तथा ऐतरेय आरण्यकमें हुए हैं। पाणिनिके पूर्व लिंगके अर्थमें 'व्यक्ति' तथा 'व्यंजन' शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं। नपुंसक लिंगके लिए 'क्लीद लिंग'का प्रयोग भी मिलता है। यह प्रयोग पतंजलिके पूर्वका नहीं है। जीव गोस्वामीने अपने 'हरिनामामृत व्याकरण'में पुल्लिग, स्त्रीलिंग और नपुंसक लिंगके लिए क्रमसे 'पुरुषोत्तम लिंग', 'लक्ष्मी लिंग' और 'ब्रह्म लिंग'का प्रयोग किया है। अफ्रीका आदिकी कुछ भाषाओंमें छः लिंग मिलते हैं। लिंग मूलतः संज्ञा शब्दोंमें होते हैं, किन्तु उसी आधारपर कुछ भाषाओंमें सर्वनाम, विशेषण तथा क्रिया आदिमें भी पाये जाते हैं।

कातंत्र वैयाकरणोंने 'लिंग' शब्दका प्रयोग 'प्रातिपदिक' अर्थमें किया है।

लिंगवाचक प्रत्यय–एक प्रकारका **प्रत्यय** (दे०)।

लिंगविहीन (genderless)—जो बिना लिंगके हों। इसे **निर्लिंगी** भी कहते हैं।

लिंगादिबोधक मूलकाल—(दे०) **काल**।

लिंबू (limbu)—दार्जिलिंग, सिक्कम तथा मध्य नैपालमें प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०) की एक पूर्वीय-सार्वनामिक-हिमालयी तिब्बती-बर्मी भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २३,४०२ थी।

लिगूरिअन (ligurian)—(१) एक **गैलो-इटैलिअन** बोली, जिसमें साहित्य रचना भी हुई है। (२) रोमनपूर्व इटलीकी एक विलुप्त भाषा। इसके परिवारिक सम्बन्धका पता नहीं है। **सिसेल** (दे०)का सम्बन्ध इससे माना गया है।

लिङ्लकार—एक प्रकारका **लकार** (दे०)।

लिङाशिषि—एक प्रकारका **लकार** (दे०)।

लिट् लकार—एक प्रकारका **लकार** (दे०)।

लिडिअन (lydian)—एक विलुप्त **एशियानिक** (दे०) भाषा, जो एशिया माइनरके पश्चिमी भागमें लिडिआ नामक क्षेत्रमें बोली जाती थी। इसके अभिलेख एक प्रकारकी ग्रीक लिपिमें मिले हैं। कुछ लोग इसका सम्बन्ध हित्ती, अर्थात् भारोपीय परिवारसे तथा कुछ लोग लूविअनसे मानते हैं, किन्तु अधिकांश विद्वानोंके अनुसार अभीतक इसका किसी भी अन्य भाषासे सम्बन्ध सिद्ध नहीं हुआ है।

लिथुआनियन—एक **बाल्टिक** (दे०) भाषा।

लिदंग (lidang)—**कनौरी** (दे०)की एक बोली।

लिपन (lipan)—**दक्षिणी अथपस्कन** (दे०) उप-वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

लिपि (script)—भाषाका आधार ध्वनि है, जो श्रव्य या कर्णगोचर होती है। उसे दृष्टि-गोचर करानेके लिए जिन प्रतीक-चिह्नोंका प्रयोग किया जाता है, उन्हें लिपि या लिपि-चिह्न कहते हैं। लिपिका प्रयोग **दिक्** और **काल**की सीमा दूर करनेके लिए किया गया है। बोली हुई भाषा **दिक्** (space) और **काल** (time) से बँधी होती है। इसका आशय यह है कि बोली गयी भाषा, केवल **उस समय वहाँ** उपस्थित व्यक्तिके लिए हो सकती है। यदि बातको किसी दूरस्थ व्यक्तिसे कहनी हो तो लिखकर भेजनी पड़ेगी, और यदि बात किसी बादमें आनेवाले व्यक्तिके लिए कहनी हो तो लिखकर रखनी पड़ेगी। इस तरह बातको लिखित रूपमें भेजकर **दिक्** और रखकर **काल**की ऊपर कथित सीमाको हम पार कर लेते हैं। (दे०) **लिपिकी उत्पत्ति और विकास** तथा **लिपि विज्ञान**।

लिपिकी उत्पत्ति और विकास : **उत्पत्ति**—भाषाकी उत्पत्तिकी भांति ही लिपि (दे०)-की उत्पत्तिके विषयमें भी पुराने लोगोंका विचार था कि ईश्वर या किसी देवता द्वारा यह कार्य सम्पन्न हुआ। भारतीय पंडित ब्राह्मी लिपिको ब्रह्माकी बनायी मानते हैं और इसके लिए उनके पास सबसे बड़ा प्रमाण यह है

कि लिपिका नाम 'ब्राह्मी' है। इसी प्रकार मिस्री लोग अपनी लिपिका कर्ता थॉथ (thoth)या आइसिस (isis)को, बेबिलोनियाके लोग नेबो (nebo)को, पुराने ज्यू लोग मोज़ेज़ (moses)को तथा यूनानी लोग हर्मेस(hermes)या पैलमीडस, प्रामेथ्यूस, आर्फ्युस तथा लिनोज़ आदि अन्य पौराणिक व्यक्तियोंको मानते रहे हैं। किन्तु भाषा (दे०—**भाषाकी उत्पत्ति**)की भांति ही लिपिके सम्बन्धमें भी इस प्रकारके मत अन्धविश्वास मात्र हैं। तथ्य यह है कि मनुष्यने अपने आवश्यकतानुसार लिपिको स्वयं जन्म दिया। आरम्भमें मनुष्यने इस दिशामें जो कुछ भी किया, वह इस दृष्टिसे नहीं किया गया था कि उससे लिपि विकसित हो, बल्कि जादू-टोनेके लिए कुछ रेखाएँ खींची गयीं, या धार्मिक दृष्टिसे किसी देवताका प्रतीक या चित्र बनाया गया, या पहचानके लिए अपने-अपने घड़े या अन्य चीज़ोंपर कुछ चिह्न बनाये गये ताकि बहुतोंकी ये चीज़ें जब एक स्थानपर रखी जायँ तो लोग सरलतासे अपनी चीज़ें पहचान सकें, या सुन्दरताके लिए कंदराओंकी दीवारोंपर आस-पासके जीव-जन्तुओं या वनस्पतियोंको देखकर उनसे टेढ़े-मेढ़े चित्र या रेखा खींचकर या पत्थर या अन्य चीज़ोंपर खोदकर या रंगकर बनाये गये या स्मरणके लिए किसी रस्सी या पेड़की छाल आदिमें गांठें लगायी गयीं और बादमें इन्हीं साधनोंका प्रयोग अपने विचारोंकी अभिव्यक्तिके लिए किया गया और वह धीरे-धीरे विकसित होकर लिपि बन गयी। **लिपिका विकास**—आजतक लिपिके सम्बन्धमें जो प्राचीनतम सामग्री उपलब्ध है, उस आधारपर कहा जा सकता है कि ४,००० ई० पू०के मध्यतक लेखनकी किसी भी व्यवस्थित पद्धतिका कहीं भी विकास नहीं हुआ था। इस क्षेत्रमें प्राचीनतम अव्यवस्थित प्रयास १०,००० ई० पू०से भी कुछ पूर्व किये गये थे। इस प्रकार मोटे रूपसे इन्हीं दोनोंके बीच, अर्थात् १०,००० ई० पू० और ४,००० ई० पू०के बीच लगभग ६,००० वर्षोंमें धीरे-धीरे लिपिका प्रारम्भिक विकास होता रहा। विकासकी दृष्टिसे प्रमुख लिपियाँ हैं: १. **चित्र लिपि**, २. **सूत्र लिपि**, ३. **प्रतीकात्मक लिपि**, ४. **भावमूलक लिपि**, ५. **भाव-ध्वनिमूलक लिपि** ६. **ध्वनिमूलक लिपि**। इनको कोशमें यथास्थान देखा जा सकता है।

लिपि विज्ञान (grammatology)—वह विज्ञान, जिसमें **लिपि**(दे०) या लिपियोंका वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है। यह अध्ययन वर्णनात्मक, ऐतिहासिक या तुलनात्मक हो सकता है। **वर्णनात्मक लिपि विज्ञानमें** किसी एक लिपिका उसके किसी एक कालमें प्रयुक्त रूपका अध्ययन करते हैं। **ऐतिहासिक लिपि विज्ञानमें** किसी एक लिपिकी उत्पत्ति, विकास, या उससे विकसित शाखाओं-प्रशाखाओंके विकास आदिका अध्ययन किया जाता है। **तुलनात्मक लिपि विज्ञानमें** दो या अधिक लिपियोंका तुलनात्मक अध्ययन (एक कालमें या पूरे विकासका) करते हैं। **सैद्धांतिक लिपि विज्ञानमें** सामान्य रूपसे विश्व लिपियोंका उत्पत्ति, विकास, परिवर्तनके कारण, उनका आदर्श तथा उस आदर्शकी प्राप्तिके लिए करणीय उपाय आदिका विचार किया जाता है।

लिपिशास्त्र—(१) **ध्वनिग्राम विज्ञान** (दे०)-के लिए प्रयुक्त एक अशुद्ध नाम। (२) लिपियोंके अध्ययनका शास्त्र **लिपि विज्ञान**(दे०)।

लिप्पा (lippa)—**कनौरी** (दे०)की एक बोली।

लिप्यन्तरण (transliteration)—किसी रचना या सामग्रीको एक लिपिसे दूसरी लिपिमें करना।

लिबर्नियन—**पिसेनिअन** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

लिबियन (libyan)—हैमेटिक परिवारकी एक विलुप्त भाषा।

लिबियन लिपि—लिबियामें प्रयुक्त लिपि। इसका संबंध फ़ोनीशियन लिपिसे है।

लिल्लुएट (lilluet)––**सलिश** (दे०) भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इस परिवारकी यह प्रमुख भाषा है।

लिवोनिअन (livonian)––यूराल-अल्ताई परिवारकी ऍक बोली। यह लुप्तप्राय है।

लिसिअन (lycian)––एक विलुप्त **एशियानिक** (दे०) भाषा, जो ई० पू० ५वीं सदीके आसपाससे लेकर बादतक दक्षिणी-पश्चिमी एशिया माइनरमें लिसिआ नामक प्रदेशमें बोली जाती थी। इसके अभिलेख एक प्रकारकी ग्रीक लिपिमें मिले हैं। इसे कुछ लोग हित्ती अर्थात् भारोपीय परिवारसे, कुछ काकेशस या लूविअनसे तथा कुछ किसीसे भी नहीं सम्बद्ध मानते।

लिसू (lisu)––**चीनी परिवार** (दे०) के तिब्बती-बर्मी उपपरिवारमें लोलो-मोसो वर्गकी बर्मीमें उत्तरी पहाड़ी ज़िलों तथा शान रियासतोंमें प्रयुक्त एक भाषा। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १९,०२६ थी।

लिह्सव (lishaw)––**लिसू** (दे०) का एक नाम।

लीएज़न (liaison)––उच्चारणमें दो ऐसे पार्श्ववर्ती शब्दोंको मिला देना, जिनमें प्रथमके अंतमें ऐसा कोई व्यंजन हो, जिसका उच्चारण न किया जाता हो तथा दूसरेके प्रारंभमें कोई स्वर या अल्पप्राण 'ह' हो। इसे मिला देनेसे प्रथम शब्दका अंत्य अनुच्चरित व्यंजन, ऐसी स्थितिमें अनुच्चरित नहीं रह जाता। इसका उच्चारण किया जाता है। अनुच्चरितके इस उच्चारणको भी लीएज़न कहते हैं। ऐसा फ्रांसीसी भाषामें प्रायः होता है। यह शब्द भी मूलतः फ्रांसीसी व्याकरणका ही है।

लीडिअन––(दे०) **लिडिअन**।

लीबियन लिपि––(दे०) **लिबियन लिपि**।

लीयांग (liyang)––**क्वोईरेंग** (दे०) का एक अन्य नाम।

लीसिअन––(दे०) **लिसिअन**।

लुंगेह्रव (lungehraw)–चिन पहाड़ियोंमें प्रयुक्त एक भाषा। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ५०० थी। इसके पारिवारिक संबंधका निश्चित पता नहीं है।

लुंठित (rolled)––**प्रयत्न** (दे०) के आधारपर किया गया व्यंजन ध्वनियोंका एक भेद। जीभकी नोकको कुछ बेलनकी तरह लपेटकर या लुंठन करके तालुका स्पर्श कराकर यह ध्वनि उत्पन्न की जाती है। इसे **लोड़ित** भी कहते हैं। हिन्दीका 'र' इसी प्रकारका कहा गया है। 'लुंठित' में हवा घर्षण खाकर निकलती है, अतः इन्हें **लुंठित-संघर्षी** भी कहते हैं।

लुंठित-संघर्षी––**लुंठित** (दे०) का एक नाम।

लुइअन––**लूविअन** (दे०) भाषाका एक नाम।

लुइसेनो-कहुइल्ला (luiseno-kahuilla)––**दक्षिणी केलीफोर्निअन** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इस भाषाकी कई बोलियाँ हैं।

लुगांडा (luganda)–पूर्वी अफ्रीकाके लुगांडा प्रदेशमें बोली जानेवाली बांटू परिवारकी एकभाषा। इसे **गांडा** (ganda) भी कहते हैं।

लुङ् लकार––एक प्रकारका **लकार** (दे०)।

लुट् लकार––एक प्रकारका **लकार** (दे०)।

लुतुअमिअन (lutuamian)––**क्लमाथ** (दे०) का एक नाम।

लुत्खो-ई-वार (lutkho-i-war)––**लैओटक्रुह-ई-वार** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

लु-त्ज़े (lutze)––**नुंग** (दे०) का एक और नाम।

लुध (ludha)––१८९१की जनगणनाके अनुसार **उड़िया** (दे०) का एक रूप। इसका अब पता नहीं है।

लुधियांती (ludhiyanti)––**लोधांती** (दे०) का एक दूसरा नाम।

लुप्तावयव रचना (elliptical construction)––ऐसी रचना (वाक्य, उपवाक्य या वाक्यांश), जिसका कोई अवयव लुप्त हो या छोड़ दिया गया हो। ऐसी रचनामें न्यूनपद दोष माना जाता है।

लुप्पा (luppa)––**तांगखुल** (दे०) के लिए

प्रयुक्त एक नाम ।

लुम्यंग कुकी (lumyang kuki)—**हिरोई लम्गांग** (दे०) का एक और नाम ।

लुले (lule)—दक्षिणी अमेरिकाके **विलेल-चुलुपी परिवार** (दे०) की एक विलुप्त भाषा। इसकी प्रमुख बोली **ओरिस्तिने** है ।

लुविआई—**लूविअन** (दे०) भाषाका एक नाम ।

लुसेशन (lusation)—जर्मनीमें कॉटबस तथा बौटज़ेन क्षेत्रोंमें लगभग एक लाख व्यक्तियों द्वारा प्रयुक्त एक स्लावी भाषा । इसे **वेन्ड, सोर्बिअन, वेंडिक, सोर्बो-वेंडिक** आदि नामोंसे भी पुकारते हैं । (दे०) **स्लैवोनिक** । इसका प्राचीनतम रूप १६वीं सदीकी एक प्रार्थना-पुस्तकमें मिलता है ।

लुहूपा (luhupa)—**तांगखुल** (दे०) का नाम ।

लू (lu)—बर्माके केंगतूंगके दक्षिणी शान प्रांतमें प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०) की एक **ताई** भाषा । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २६,१०८ थी ।

लूई (lui)—मणिपुर तथा बर्मामें प्रयुक्त कुछ भाषाओंका एक वर्ग । इसके पारिवारिक संबंधके विषयमें संदेह है । इसमें **अन्द्रो,, सेंग-मइ, चैरेल** तथा **कदू**, ये चार भाषाएँ प्रमुखतः आती हैं । इनमें प्रथम तीन मणिपुरमें तथा चौथी बर्मामें बोली जाती है ।

लूडिअन (ludian)—**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी एक बोली, जिसे **लूडिश** भी कहते हैं ।

लूडिश—**लूडिअन** (दे०) बोलीका एक नाम ।

लूणी (luni)—दक्षिणी-पश्चिमी **पश्तो** (दे०) का, बिलोचिस्तानमें प्रयुक्त एक रूप ।

लूबा-लुलुआ—अफ्रीकामें बोली जानेवाली एक बांटू भाषा ।

लू-लू—(दे०) **लो लो** ।

लूले (lule)—**डिअगिट** (दे०) परिवारकी एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

लूविअन (luvian)—एक विलुप्त भाषा, जिसे हित्ती अर्थात् भारोपीय या लिसियन आदिसे सम्बद्ध माना गया है । इसका क्षेत्र **लूबिआ (एशिया माइनर) है । इसे लुइअन** या **लुविआई** भी कहा गया है । (दे०) **भारोपीय एनाटोलियन परिवार** ।

लूशेई (lushei)—**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, 'असमी-बर्मी' शाखाके 'कुकी-चिन' वर्गकी, असमके कुछ भागों तथा लुशाई पहाड़ियोंमें प्रयुक्त एक केन्द्रीय चिन भाषा । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ७७,१८० थी ।

लृङ्लकार—एक प्रकारका **लकार** (दे०) ।

लृट्लकार—एक प्रकारका **लकार** (दे०) ।

लेंगरेंग (lengreng)—**लंगरोंग** (दे०) का एक दूसरा नाम ।

लेओट्कुह-इ-वार (leotkuh-i-war)—**युद्गा** (दे०) का एक अन्य नाम ।

लेओनीज़ (leonese)—स्पेन और पुर्तगालकी सीमाके पासकी एक मध्ययुगीन स्पैनिश बोली ।

लेको (leko)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)-का एक अमेरिकी भाषा-परिवार । इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी है ।

लेखप्रतिलेख लिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक ।

लेचेयल (lechyel)—दक्षिणी अमेरिकाकी **अलकालुफ परिवार** (दे०) की एक भाषा । यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी हैं ।

लेटिश—भारोपीय परिवारकी **बाल्टिक** (दे०) शाखाकी एक भाषा । इसे लेट लोग बोलते हैं । इसका क्षेत्र लैट्विया है । बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १५ लाख है । इसमें साहित्य लगभग १५वीं सदीसे मिलता है । लेटिशको **लेट्वियन** भी कहते हैं ।

लेट् लकार—एक प्रकारका **लकार** (दे०) ।

लेट्टिक—**बाल्टिक** (दे०) का एक अन्य नाम ।

लेट्टिश—(दे०) **लेटिश** ।

लेट्विअन (latvian)—(दे०) **लेटिश** ।

लेदू (ledu)—अक्याब तथा कुछ और भागों (बर्मा) में प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०) की एक कुकी-चिन भाषा । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,०११ थी ।

लेनिलेनपे (lenilenape)—**डेलवरे** (दे०)-का एक अन्य नाम ।

लेन्का (lenka)—**केन्द्रीय अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार । इस परिवार-में सात भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख **गुअक्सिकेरो, ओपेटोरो, चिलंगा, इंटीबुकट, ककगुअटिके** आदि हैं ।

लेन्गुआ (lengua)—(१) **मस्कोइ** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा । इसको **गेकोइन्लहआक** (gekoinlahaak) भी कहते हैं । (२) **एनिमगा** (दे०)परिवार-की एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

लेपइ (lepai)—**कचिन** (दे०)का एक नाम ।

लेपोन्तिने (lepontine)—उत्तरी इटलीमें मगिओरे झीलके पास प्राप्त कुछ अभिलेखोंकी भाषा, जो कुछ लोगोंके अनुसार लिगुरिअन-से सम्बद्ध है ।

लेप्चा (lepcha)—**रोंग** (दे०)का एक नाम ।

लेप्चा लिपि—**लेप्चा** (दे०)के लिए प्रयुक्त लिपि, जो **तिब्बती लिपि** (दे०)से निकली है।

लेम (lem)—केंगतुंगकी दक्षिणी शान स्टेटमें प्रयुक्त एक **व** (दे०) भाषा। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या ३,१७० थी ।

लेमेत (lemet)—**लमेत** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

लेह बोली—(leh dialect) **भोटिआ** (लद्दाखकी)का एक रूप । (दे०) **भोटिआ (लद्दाखकी)** ।

लैंगेडोक—**लैंगेडोशन**(दे०)बोलीकाएक नाम।

लैंगेडोशन (languedocien)—दक्षिणी फ्रांसमें रोनके पश्चिममें प्रयुक्त एक प्रावेन्सल बोली । इसका यह नाम १३वीं सदीसे मिलता है । इसे **लैंगेडोक** भी कहते हैं ।

लैकोनिअन—प्राचीन **ग्रीक** (दे०)की एक डोरिक उपबोली ।

लैज़ो (laizau)—**लैयो** (दे०)का एक नाम ।

लैटिन—**भारोपीय परिवार** (दे०)की केंतुम शाखाकी इटैलिक या लैटिन शाखाकी सर्व-प्रमुख भाषा । इटलीका एक प्रदेश लैटिअम (latium)है। इसीमें रोम नगर है। लैटिन मूलतः इसी प्रदेश (या एकमतसे रोम)की भाषा थी । इसी आधारपर लैटिअमसे बने विशेषण लैटिनससे 'लैटिन' नाम आया है। लैटिन भाषाका प्राचीनतम रूप ६ठी सदी ई० पू०का है, जो एक अभिलेखमें है **बोस्ट्रोफ़ीडेन** (दे०) शैलीमें लिखा है । इसके भाषा और साहित्यका आदिकाल ६ठी सदी ई० पू०से ७० ई० पू०तक है। आदि लैटिन-का स्वर्णकाल ७० ई० पू०से १४ ई० अर्थात् ८४ वर्षोंका है । सिसरो, लुक्रेटिअस, कटुलस, वर्जिन, होरेस तथा ओवि आदिकी अमर रचनाएँ इसी युगकी हैं। इसके बादका युग रजत युग कहलाता है, जो १४ ई०से १८० ई०तकका है। इस कालमें भी पर्याप्त साहित्य लिखा गया। यही स्वर्ण और रजत युग लैटिन-का क्लैसिक काल है। बादके विकासका विभा-जन उत्तर लैटिन, मध्यकालीन लैटिन तथा आधुनिक लैटिनके रूपमें किया जाता है । रोमन लोगोंकी हर क्षेत्रमें अद्वितीयताके कारण लैटिन भाषा मध्ययुगमें अनेक पश्चिमी यूरोप तथा कुछ पूर्वी यूरोपके देशोंमें फैल गयी । इस लोक प्रचलित लैटिनको **वल्गर लैटिन** (दे०) या मध्ययुगीन **लैटिन** कहते हैं, जिसका विकास रोमांस भाषाओंके रूपमें हुआ । मध्ययुगमें लैटिन धर्म, राजनयिक संबंध तथा सांस्कृतिक अभिव्यक्तिकी भाषा तो थी ही, रेनेसाँके बाद यह कविता तथा ज्ञानके क्षेत्रमें ऐसी जमी कि फ्रांसीसी आदि रोमांस भाषाओंके लिए एक ख़तरा पैदा हो गया । इस परवर्ती लैटिनको कभी-कभी मध्य युगीन लैटिन कहते हैं। भारतीय भाषाओंपर जिस प्रकार संस्कृतका प्रभाव है, उसी प्रकार लगभग सभी यूरोपीय भाषाओंपर लैटिनका प्रभाव है । आज भी शब्दोंकी आवश्यकता पड़नेपर उनकी दृष्टि लैटिन या ग्रीकपर जाती है। **कैलब्रिअन** (दे०), **लैटिनेस्के** (दे०) तथा जैसा कि कहा जा चुका है **रोमांस भाषाएँ** (दे०)इसीसे सम्बद्ध हैं । भारोपीय परिवारकी इटैलिक शाखाको भी लैटिन

या लैटिन शाखा कहते हैं।

लैटिन लिपि––लैटिन भाषाकी लिपि। यह लिपि अपने वंशकी अन्य लिपियोंको ले-देकर विश्वकी सबसे महत्त्वपूर्ण लिपि है और विश्वकी संस्कृति और सभ्यताकी यह सबसे प्रमुख संरक्षिणी है। लैटिन लिपिकी उत्पत्ति पुरानी सामी लिपिकी उत्तरी शाखासे विकसित **ग्रीक लिपि** (दे०)से निकली एत्रुस्कन लिपिसे ७वीं सदी ई० पू०में लैटिन लिपि विकसित हुई। एत्रुस्कनमें कुल २६ अक्षर थे, जिनमेंसे लैटिनमें अपनी ध्वनियोंके आवश्यकतानुसार केवल २१ अक्षर–A, B, C, D, E, F, ㅂ, H, I, K, L, M, N, O, P, Q, P (R की मूल आकृति यही थी), S, T, V, X––ग्रहण किये गये। मोटे रूपसे मूल तत्त्वकी दृष्टिसे इन २१ अक्षरोंमें सामी, ग्रीक और एत्रुस्कन तीनोंके ही तत्त्व हैं। आगे चलकर सिसरोके समयमें जब बहुतसे यूनानी शब्द लैटिन भाषाके शब्द-समूहमें आ गये तो स्वभावतः उन नयी ध्वनियोंके अंकनकी आवश्यकता हुई, जो लैटिनमें पहलेसे नहीं थीं। इसी आवश्यकताकी पूर्तिके लिए दो चिह्न Y और Z ग्रीक लिपिसे लिये गये और इस प्रकार लैटिन अक्षरोंकी संख्या २३ हो गयी और आगे चलकर मध्ययुगमें ध्वनिकी आवश्यकताके कारण तथा लिपिको पूर्ण बनानेके लिए अन्य ३ अक्षर U, W और J और बढ़ाये गये और इस प्रकार कुल २६ अक्षर हो गये। यह बायेंसे दायेंको लिखी जाती है। लैटिन लिपिका एक रूप तो **इटैलिक** कहलाता है और दूसरा **रोमन**। रोमन लिपि १५वीं सदीसे आरंभ होती है। इटलीके अतिरिक्त इंगलैंड, जर्मनी, फ्रांस, स्पेन, हालैंडमें इसका पहले प्रचार हुआ, फिर धीरे-धीरे यह एक सीमातक अंतराष्ट्रीय लिपि बन गयी। तुर्कीने भी इसे अपना लिया है। चीनमें भी इसके अपनाये जानेकी संभावना है। इस समय यह विश्वकी सर्वोत्तम लिपियोंमें है। इसमें थोड़ा-बहुत परिवर्तन-परिवर्द्धन करके इसे विश्वलिपिके रूपमें अपनाया जा सकता है। आइसलैंडिक आदि कुछ लिपियाँ लैटिन लिपिके आधारपर ही बनायी गयी हैं।

लैटिनेस्के (latinesce)––लैटिनका एक सरलीकृत रूप, जिसे १९००में हेंडर्सनने बनाया था। उसने एक विश्वभाषाके रूपमें इस भाषाको प्रस्तावित किया था।

लैटिनो-फैलिस्कन––भारोपीय परिवारकी इटैलिक शाखाकी **लैटिन** (दे०), हर्निसिअन (एक विलुप्त बोली), **प्रेनेस्टिअन** (दे०) तथा **फैलिस्कन** (दे०), इन चार प्राचीन भाषाओंके लिए प्रयुक्त एक सामूहिक नाम। यह **इटैलिक** (दे०)की एक उपशाखा है।

लैटिनो सिने फ्लेक्सिओने (latino sine flexione)––इंटरलिंगुआ (दे०)का मूल नाम।

लैदिन (ladin)–रेटोरोमांस (दे०)का नाम।

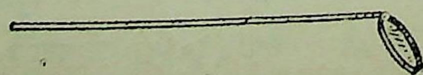
लैप––**लैपिक** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

लैपिक––यूराल-अल्ताई (दे०) परिवारकी एक भाषा, जिसे उत्तरी फ़िनलैंड, स्वेडेन और नारवे आदिमें लगभग ३० हजार व्यक्ति बोलते हैं। इसे बोलनेवाली प्रमुखतः एक मंगोलॉयड जाति लैप है। इसी आधारपर इस भाषाको **लैपोनिक**, **लैप** या **लैपिक** कहते हैं।

लैपोनिक––**लैपिक** (दे०) भाषाका एक नाम।

लैयो (laiyo)––**लई** (दे०)की चिन पहाड़ियोंपर प्रयुक्त एक बोली। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ९,२७७ थी।

लैरिंगोस्कोप (laryngoscope)––ध्वनिविज्ञानमें सहायक एक उपकरण। इसमें एक पतली छड़पर १२०°के कोणपर एक छोटा-सा गोल दर्पण लगा होता है। इसके द्वारा स्वरयंत्र और उसके कार्यको देखा जा सकता है।



किसी व्यक्तिको सूर्यकी ओर या लैंपकी ओर मुँह करके बैठा देना पड़ता है। फिर ऊपर जैसे

चित्र है, उसी स्थितिमें उसके मुँहमें इसे इतना डालते हैं कि दर्पण कौवेके पास चला जाय। वहाँ पहुँचनेपर इस दर्पणमें स्वरयन्त्र प्रतिबिंब होने लगता है और देखा जा सकता है। उस स्थितिमें जिन ध्वनियोंका उच्चारण संभव है, उनके उच्चारणमें स्वरयन्त्र और स्वरतन्त्रियोंकी स्थिति भी इससे देखी जा सकती है। यदि अपना स्वर यन्त्र स्वयं देखना हो तो एक और दर्पण अपने सामने रखकर लैरिंगोस्कोपके दर्पणकी छायामें उसे देखा जा सकता है। सर्वप्रथम सन् १८०७ ई०में बोज़िनी(bozzini)ने यह दिखाया कि मुँहके भीतरके वहुतसे यंत्रोंको शीशेके द्वारा बाहर दिखलाया जा सकता है। बाईस वर्ष बाद सन् १८२९में बोबिंगटनने सर्वप्रथम इस प्रकार स्वर-यन्त्र-मुखको देखनेका प्रयास किया। १८५४में प्रसिद्ध संगीतशास्त्रज्ञ गर्शियाने इसीसे अपने और कई अन्य संगीतज्ञोंके स्वर-यन्त्र को देखा। इसके अधिक प्रचारका श्रेय उसीको है। इस पद्धतिको कुछ और विकसित करके तर्क और ज़रमक आदि विद्वानोंने १८५७में लैरिंगोस्कोप बनाया और १८८३-में सर्वप्रथम एल० ब्राउने तथा ई० बेहकेने इसके सहारे जीवित मनुष्यके स्वर-यन्त्रका फोटो लिया। लैरिंगोस्कोपसे स्वरयन्त्र, स्वर-यन्त्र-मुख तथा स्वरतन्त्रीको बोलते समय देखकर ध्वनियोंका वैज्ञानिक अध्ययन तो किया जा सकता है, किन्तु इसमें सबसे बड़ी अड़चन यह है कि इसे मुँहमें डालनेपर ही यह सम्भव है और ऐसा करनेपर स्वाभाविक रूपसे बोलना असम्भव हो जाता है। गलेतक किसी यन्त्रको मुँहमें डालनेपर हम असाधारण परिस्थितिमें आ जाते हैं, अतः इस यन्त्रका प्रयोग अधिक उपयोगी नहीं सिद्ध हुआ।

लोअर कैलिफोर्निअन यूम (lower californiàn)––**यूम** (दे०) भाषाका एक उपवर्ग। इसके अंतर्गत **किलिवी, सन्टो ठोमस** और **कोचिमी** (दे०) आदि भाषाएँ आती हैं।

लोअर नाइजर (lower niger)––**सूडान वर्ग** (दे०)की कुछ भाषाओंका एक वर्ग।

लोअर पीमा (lower pima)––**पिमा-सोनोर** (दे०)वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

लोई लिऊ (loi liu)–**पलौंग** (दे०) का रूप।

लोईलोंग (loilong)––**जयेइन** (दे०)का एक रूप।

लोकन (lokan)––**लकन** (दे०)का एक दूसरा नाम।

लोक-प्रवाद––**लोकोक्ति** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक संस्कृत नाम।

लोकोक्ति––अनुभव, ऐतिहासिक या पौराणिक कथाओं या प्राकृतिक नियमों आदिपर आधारित ऐसी संक्षिप्त और सारगर्भित लोक-प्रचलित उक्ति या कथन, जिसका कि उपदेश, किसी बातकी पुष्टि या विरोध आदिके लिए प्रयोग होता हो। लोकोक्तिकी अनेक परिभाषाएँ दी गयी हैं, जिनमें कुछ इस प्रकार हैं :—(क) a proverb is a saying without an author. (ख) लॉर्ड रसेल––a proverb is the wit of one and the wisdom of many. (ग) सरवेंटिस––short sentences drawn from long experience. (घ) proverbs are wisdom of street (ङ) a brief epigrammatic saying, which is a popular by word. (च) कैलिन्सन––proverbs are ocean of experience expressed in a drop of word.। इन सबका आशय यह है कि अपने अनुभव, किसी ऐतिहासिक कथा, पौराणिक कथा, प्राकृतिक नियम तथा प्रतीक आदि किसी भी आधारपर किसी व्यक्ति द्वारा प्रयुक्त सूत्रात्मक चुटीली उक्ति, लोक प्रचलित होकर कहावत बन जाती है। कवियोंके छंदांश भी इसी प्रकार लोकोक्तिके रूपमें प्रचलित हो जाते हैं। लोकोक्तिको हिन्दी-उर्दूमें **कहावत** भी कहते हैं। कहावत शब्दकी व्युत्पत्ति विवादास्पद है। टर्नर इसे

'कथावार्ता' से संबद्ध मानते हैं। डॉ० चटर्जी इसे कल्पित रूप कथापयन्त>कधावयन्त> कहावअन्त>कहावन्त>कहावत रूपमें मानते हैं। डॉ० सिद्धेश्वर वर्मा इसे कह+आव (जैसे सुझावमें)+त (संक्षिप्तता)से मानते हैं। रामदहिन मिश्र इसे 'कथावत्'से निकला मानते हैं। मैं समझता हूँ कि यह 'कह्' धातु और 'आवत' प्रत्ययसे बना है। इसे लोक भाषाओंमें 'कहनउत' या 'कहनौत' आदि भी कहते हैं। उनका संबंध 'कथन+वत'से ज्ञात होता है। आवट (घबराहट), आवत (कहावत), आवा (पहनावा), आव (पड़ाव) आदिका संबंध सं० 'त्व'से ज्ञात होता है। कहावतके अतिरिक्त लोकोक्तिके अन्य पर्याय **मसल** (अरबी), **आभाणक** (संस्कृत), **प्रवाद** (संस्कृत), **लोकप्रवाद** (संस्कृत), **प्रायोवाद** (संस्कृत), **भासितो** (पालि), **आहाण** (प्राकृत) आहाणय (प्राकृत), अहाणउ या अक्खाणय (अपभ्रंश), परवाणा (गढ़वाली), जर्बुलमिस्ल (उर्दू), कहेवत (गुजराती), न्याय या आहणा या वाक्संप्रदाय (मराठी) तथा प्रवाद (बँगला) आदि हैं। प्रायः लोग लोकोक्ति और मुहावरेको एक समझ लेते हैं, किंतु दोनोंमें स्पष्ट अंतर है। (दे०) **मुहावरा**। कहावतोंमें अंत्यनुप्रास (माई क जीव गाई अस, पूत क जीव कसाई अस) आदि शब्दालंकार तथा विरोधाभास (मेहरी जस बैरी न मेहरी जस मीत), विषम (कहाँ राजा भोज, कहाँ भोजवा तेली), सम (जइसन देव तइसन पूजा) आदि अनेक अर्थालंकारोंका प्रयोग मिलता है। लोकोक्तियोंका वर्गीकरण विषयों (खेती, शकुन, जाति, ऋतु, उम्र आदि), आधारों (घोड़ा, कुत्ता), अलंकारों (उपमा, रूपक, सम, विषम आदि) तथा छंदों आदिके आधारोंपर किया जा सकता है। लोकोक्तियोंमें कुछ ऐसी भी होती हैं, जिनके पीछे किसी-न-किसी प्रकारकी कथा होती है। इन अंतर्कथात्मक लोकोक्तियोंका कथाओंकी दृष्टिसे भी (जैसे ऐतिहासिक कथात्मक, पौराणिक कथात्मक, कल्पित कथात्मक आदि) वर्गीकरण किया जा सकता है। लोकोक्ति सभी भाषाओंमें सभी कालोंमें मिलती है। कुछ लोकोक्तियाँ परम्परागत होती हैं और कुछ नवनिर्मित। कभी-कभी एक ही तरहकी लोकोक्ति एकसे अधिक भाषाओं या देशोंमें मिलती हैं, जिसका अर्थ यह है कि एक सीमातक मानवमात्रके अनुभव, अभिव्यक्ति या चिंतनमें एकरूपता है। उदाहरणार्थ पंजाबी—कुच्छड़ कुड़ी, ते कौर टिंडोरा'; हिन्दी—'गोदमें लड़का गाँवमें ढिंढोरा'; बँगला—'कोले छेले सहरे टेंडरा'; राजस्थानी—'बगलमें छोरो, गाँवमें ढिंढोरो'; भोजपुरी—'लइका कोरा, गाँव ढिंढोरा'। 'लोकोक्ति' शब्द पुराना है। इसका प्राचीन प्रयोग एक अलंकारके रूपमें मिलता है। इस दृष्टिसे इसके प्रथम प्रयोक्ता अप्पय दीक्षित कहे गये हैं। उन्होंने 'कुवलयानन्द'में कहा है—'लोकप्रवादानुकृतिर्लोकोक्तिरिति'।

लोक्रिअन लिपि—**ग्रीक लिपि** (दे०)का रूप।

लोक्लंग (lauklang)—**पले** (दे०)का रूप।

लोक्लोन (lauklon)—**पले** (दे०)का रूबीमें प्रयुक्त एक रूप।

लोगुदोरीज़ (logudorese)—**सार्डिनिअन** (दे०) भाषाकी सार्डिनिआ द्वीपके केन्द्रीय भागमें प्रयुक्त एक बोली। इसको **लोगुदोरीसिअन** भी कहते हैं।

लोगुदोरीसिअन (logudoresian)—**लोगुदोरीज़** (दे०)का एक अन्य नाम।

लोङ—**लिङाशिषि** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

लोट् लकार—एक प्रकारका **लकार** (दे०)।

लोड़ित—**लुंठित** (दे०)का एक अन्य नाम।

लोधांती—'पश्चिमी हिन्दी'की बोली **बुंदेली** (दे०)का, हमीरपुर जिलेके राठ परगने, जालौन तथा चरखारीके कुछ भागोंमें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप। लोधी नामक जातिकी इसी क्षेत्रमें अधिकता होनेके कारण इसका नाम 'लोधांती' पड़ा है। राठ परगनाके आधारपर इसे **राठौरा राठी** या **राठौरी** भी

कहते हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,४५,५०० थी।

लोधियोंकी बोली—**लोधांती** (दे०) का नाम।

लोधी—'पश्चिमी हिन्दी'की बोली **बुंदेली** (दे०) का एक रूप, जो मराठी और बुंदेलीकी सीमाके पास बालाघाटमें बोला जाता है। लोधी जातिमें विशेष रूपसे प्रचलित होनेके कारण इसे 'लोधी' नाम दिया गया है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग १,८६,००० थी।

लोनारी (lonari)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार मराठी (दे०) का सतारामें प्रयुक्त एक रूप।

लोप (elision)—ध्वनि-परिवर्तनका एक रूप या उसकी एक दिशा। (दे०) **ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ**। 'लोप'का अर्थ है 'लुप्त हो जाना'। शब्दमें जब कोई ध्वनि लुप्त हो जाती है तो इस लोप होनेको भाषा-विज्ञानमें 'लोप' या **ध्वनि-लोप** कहते हैं। जैसे संस्कृत 'स्थाली'से हिन्दी 'थाली'। यहाँ 'स्' व्यंजनका लोप हो गया है। 'लोप'का उलटा **आगम** (दे०) होता है। लोप मुख्यतः तीन प्रकारके होते हैं:—स्वर-लोप, व्यंजन-लोप, अक्षर-लोप। इन तीनों हीके तीन-तीन उपभेद हो हैं:—आदि, मध्य, अन्त्य। यदि आदिकी सकते ध्वनिका लोप होगा तो **आदि-लोप** होगा, मध्यकी ध्वनिका होगा तो **मध्य-लोप** होगा और अन्त्य ध्वनिका लोप होगा तो **अन्त्य-लोप**। कभी-कभी ऐसा होता है कि एक प्रकारकी दो ध्वनियाँ साथ-साथ आवें तो एकका लोप हो जाता है। इसे **समध्वनि लोप** कहते हैं। इस प्रकार इसके कुल मुख्यतः १० भेद हुए। उदाहरण इस प्रकार हैं:—

(१) **आदि-स्वरलोप** (aphesis)—सं० अभ्यंतर = भीतर, **अरघट्ट**—रहँट।

(२) **मध्यस्वरलोप** (syncope)—do not = don,t, तरबूज़ = तर्बूज, (उच्चारणमें) कपड़ा = कप्ड़ा। इस प्रकार जिस स्वरका लोप हो जाता है, उसे **मध्यलोपी स्वर** (syncopic vowel) कहते हैं।

(३) **अन्त्यस्वर लोप**—फ्रेंच bombe = अंग्रेजी bomb, हिन्दी आप = (बोलचालमें) आप्।

(४) **आदि-व्यंजन लोप**—अंग्रेज़ी know, write, knifeका उच्चरित रूप नो, राइट, नाइफ़। सं० 'स्थाली' = हिन्दी 'थाली'।

(५) **मध्य व्यंजन लोप**—सं० सूची = हिन्दी सूई; अंग्रेजी talkका उच्चरित रूप टॉक।

(६) **अन्त्य व्यंजन लोप**—अंग्रेज़ी bombका उच्चरित रूप bom।

(७) **आदि-अक्षर लोप** (apheresis)—अंग्रेज़ी neck tieका tie; सं० उपाध्यायका हिन्दी झा।

(८) **मध्य अक्षर लोप**—फ़ा० शादबाशका शाबाश।

(९) **अन्त्य अक्षर लोप** (apocope)—सं० माताका माँ; सं० विज्ञप्तिका विनती।

(१०) **समध्वनिलोप**।

लोपसंधि—(दे०) **संधि**।

लोबयाली—(दे०) **लोहब्या**।

लोब्याली (lobyali)—**लोह्ब्या** (दे०) का एक अन्य नाम।

लोभानू (lobhanu)—**लभानी** (दे०) का एक और नाम।

लोरी चीनी (lori chini)—१९२१की जनगणनाके अनुसार बिलोचिस्तानमें लोरी नामक जातिमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) बोली।

लोरेन (lorrain)—लोरेनमें प्रयुक्त एक **फ्रांसीसी** (दे०) बोली।

लोलो (lolo)—बर्माके कुछ भागोंमें प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०) की एक **लोलो-मोसो** भाषा या बोलियोंके समूहका सामूहिक नाम। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ७६९ थी। बर्माके अतिरिक्त दक्षिणी पश्चिमी चीनमें भी इसके बोलनेवाले हैं। वहाँ इनकी संख्या १८ लाखके लगभग होगी।

लोलोन्कुन्दु (lolonkundu)—**बांटू** (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा। इस भाषाका क्षेत्र कांगो नदीके आसपास है।

लोलो-मोसो वर्ग (lolo-moso group)—

चीन तथा बर्माके कुछ भागोंमें प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंका एक वर्ग। इस वर्गकी कुछ प्रमुख भाषाएँ **लोलो; मोसो, लिसु, अक, क्वि** आदि हैं। १९२१की जनगणनाके अनुसार इस वर्गके बोलनेवालोंकी संख्या बर्मामें ७५,६८६ थी।

लो-लो लिपि—चीनी परिवारकी लोलो भाषाकी लिपि। यह लिपि **चीनी लिपि** (दे०)से मिलती-जुलती है। इसके लिपिचिह्न भावमूलक हैं, जिनकी कुल संख्या ३ हज़ारके लगभग कही जाती है।

लोहब्या—**गढ़वाली** (दे०)की अलमोड़ा और गढ़वालकी लोहब पट्टीमें प्रयुक्त एक उपबोली। इसका एक अन्य नाम **लोबयाली** भी है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ९,७४८ थी।

लोहाना (lohana)—मद्रासमें **सिंधी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम। वस्तुत: 'लोहाना' नाम 'सिंधी'-भाषी एक जातिका है। उसी आधारपर इसे यह नाम दिया गया है।

लोहुली—'पश्चिमी पहाड़ी'की एक उपबोली। इसका क्षेत्र लाहुल-स्पिती नामक नवनिर्मित ज़िला है। ग्रियर्सनने इसका उल्लेख नहीं किया है। (दे०) **पश्चिमी पहाड़ी**। इसे **लाहौली** भी कहते हैं।

लोहेइर्ह (loheirh)—**क्वी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक 'चीनी' नाम।

लोहोरोंग (lohorong)—**खंबू** (दे०)की नैपालमें प्रयुक्त एक बोली।

लोह्तव (lohtaw)—**लव्त** (दे०)का एक अन्य नाम।

लौंग्वव (laungwaw)—**मरु** (दे०)की बर्मामें प्रयुक्त एक बोली।

लौकिक—(१) वैदिकके विरुद्ध, लोकप्रचलित। जैसे 'वैदिक संस्कृत' और 'लौकिक संस्कृत'। (२) लोकमें प्रचलित शब्दोंके लिए महाभाष्यकार द्वारा दिया गया एक नाम। (दे०) **शब्द**।

लौकिक व्युत्पत्ति(folk etymology)—**भ्रामक व्युत्पत्ति** (दे०)का एक अन्य नाम। यह नाम अंग्रेज़ीका अनुवाद तो ठीक है, किंतु भ्रामक व्युत्पत्ति जितना सार्थक नहीं है।

लौकिक संस्कृत—वैदिककालीन संस्कृतसे बादकी संस्कृत या क्लासिकल संस्कृतके लिए प्रयुक्त एक नाम। (दे०) **प्राचीन भारतीय आर्य भाषा**।

लौक्मुन (laukmun)—**पले** (दे०)का एक रूप।

लौक्लन(lauklan)—**पले** (दे०)का एक रूप।

लौत्कव(lautkaw)—पलौंगकी बोली। **पले**-(दे०)का एक रूप।

ल्यंगंगम(lyang-ngam)—**खासी**(दे०)की, खासी तथा जयंतिया पहाड़ियोंमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलने वालोंकी संख्या १,८५० थी।

ल्य—**कृत्य** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

ल्यूवूचे (leuvuche)—दक्षिणी अमेरिकाके **अरौकन** (दे०) परिवारकी एक भाषा।

ल्यैंते (lyente)—**लइ** (दे०)की चिन पहाड़ियोंमें प्रयुक्त एक बोली।

ल्येन-ल्येम(lyen-lyem)—**ज़हओ** (दे०)का एक और नाम।

ल्वायल्ती—**मलेनेशियन परिवार** (दे०)की एक भाषा।

ल्वेकिन(lwekin)—**पलौंग** (दे०)का एक रूप।

ल्हारी(lhari)—**म्यान्वाले**(दे०)का एक अन्य नाम।

ल्होके(lhoke)—**भोटिआ** (भूटानकी)का एक अन्य नाम। (दे०) **भोटिआ (भूटानकी)**।

ल्होता(lhota)—**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके नागा वर्गकी, नागा पहाड़ियों (असम)में प्रयुक्त एक मध्यवर्ती नागा भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १८,४१२ थी।

व

वंगचे (vangche)--लुशाई पहाड़ियों (असम)में प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०)-की एक कुकी-चिन भाषा । इसका अब कोई पता नहीं है ।

वंगलिपि--बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयी ६४ लिपियोंमें-से एक ।

वंजारी (vanjari)--**बंजारी** (दे०)का एक और नाम ।

वंपनोअग (wampanoag)--**पूर्वीय अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक विलुप्त उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

वंशवृक्ष सिद्धांत (pedigree theory)--यह सिद्धांत कि एक व्यक्तिसे अनेक वंशजोंकी भांति या एक तनेसे अनेक शाखाओं-उपशाखाओंकी भांति एक **मूल भाषा** (दे०)से अनेक भाषाओंका विकास होता है । १८६६-में आंगस्ट श्लाइखरने यह सिद्धांत प्रतिपादित किया था ।

वंशात्मक वर्गीकरण--**पारिवारिक वर्गीकरण** (दे०)का एक अन्य नाम ।

वंशानुक्रमिक वर्गीकरण--**पारिवारिक वर्गीकरण** (दे०)का एक अन्य नाम ।

व (wa)--**मोन-ख्मेर** (दे०) शाखाके **पलौंग-व वर्ग** (दे०)की एक भाषा । इसका क्षेत्र वर्मामें शान राज्य है । वर्मा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३८,७२१ थी ।

वइ (vai)--लाइबेरिया तथा उत्तरी मोनरोवियामें वइ जातिकी नीग्रो जाति द्वारा प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा । यह **सूडानवर्ग** (दे०) की भाषा है । जौ मन्डिंगोसे बहुत मिलती-जुलती है ।

वइलिपि--**वइ** (दे०) भाषाकी लिपि । यह आक्षरिक लिपि है। १८३४में दोअलु बुकेरने इसे बनाया था । बादमें सूडानके मुसलमानोंमें भी इस लिपिका प्रचार हो गया ।

वइकुरी (waikuri)--**केन्द्रीय अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इसकी प्रमुख भाषा **पेरिकू** थी । अब इस परिवारकी भाषाएँ विलुप्त हो चुकी हैं ।

वइगली (waigali)--**वई अला** (दे०)का एक अन्य नाम ।

वई-अला (wai ala)--**दरद**के 'काफ़िर वर्ग'-की, काफिरिस्तानकी, वैगल नदीकी घाटीमें प्रयुक्त, एक भाषा ।

वईफ़ेई (vaiphei)--**चीनी परिवार** (दे०)के कुकी-चिन वर्गकी एक प्राचीन कुकी भाषा ।

वईलत्पू (waiilatpu)--**उत्तरी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार । इस परिवारमें **कयुस** तथा **मोलल**, दो भाषाएँ हैं ।

वउदोइस (vaudois)--दक्षिणी-पूर्वी फ्रांस तथा उत्तरी पश्चिमी इटलीमें प्रयुक्त एक **रोमांस** (दे०) बोली । इसे **वाल्देन्सिअन** भी कहते हैं ।

वकश (wakash)--**उत्तरी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा परिवार । इस परिवारमें लगभग ७ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख **नुत्का** (दे०) तथा **कवकिउल्ला** (दे०) हैं ।

वकार--व के लिए प्रयुक्त नाम। (दे०) **कार** ।

वकोरेगुए (vakoregue)--**किनलोआ** (दे०) भाषाकी एक उपभाषा ।

वक्तृवैशिष्ट्योत्पन्ना आर्थी व्यंजना--एक प्रकारकी व्यंजना । (दे०) **शब्द-शक्ति** ।

वक्वॉइड--(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**में **स्वर और व्यंजन** उपशीर्षक ।

वचन (number)--व्याकरणमें वह विधान, जिससे शब्दके रूपसे उसके अर्थमें एक या अनेकका बोध होता है । वचनके कई भेद होते हैं। जिससे एकका बोध हो, उसे **एक-वचन** (singular number) कहते हैं ।

जैसे किताब, थाली। जिससे एकसे अधिकका बोध हो, उसे **बहुवचन** (plural number) या **अनेकवचन** (दे०) कहते हैं। जैसे किताबें, थालियाँ। अधिकांश भाषाओंमें ये ही दो वचन होते हैं। किंतु कुछ भाषाओंमें इन दोके अतिरिक्त अन्य प्रकारके वचन भी मिलते हैं :—**द्विवचन** (dual number) उसे कहते हैं, जिससे दोका बोध हो। काशिकामें आता है—'द्वयोरर्थयोर्वचनं द्विवचनम्'। संस्कृत, अरबी आदि बहुतसी प्राचीन तथा 'लिथुएनी' आदि आधुनिक भाषाओंमें द्विवचन मिलता है। जैसे संस्कृत कवी (दो कवि), सखायौ (दो मित्र) आदि। **त्रिवचन** (trial number) और **चतुर्वचन** (quatrial number) का भी कुछ अपवादस्वरूप भाषाओंमें प्रयोग मिलता है। वचनका प्रयोग संज्ञा, विशेषण, सर्वनाम, क्रिया आदिमें मिलता है। संसारकी कुछ भाषाओंमें तो वचनके द्योतक अलग-अलग रूप मिलते हैं। किंतु कुछ भाषाओंमें संख्या-सूचक शब्दों या अन्य शब्दोंको जोड़कर इनका भाव व्यक्त किये जाते हैं।

वचनान्विति (number concord)—वचनकी दृष्टिसे वाक्यके शब्दों (जैसे संज्ञा-क्रिया, संज्ञा-सर्वनाम आदि) का **अन्वय** या **अन्विति** (दे०)।

वज़ीरी (waziri)—दक्षिणी-पश्चिमी **पश्तो**. का, वज़ीरिस्तान (अफ़गानिस्तान) में प्रयुक्त एक रूप।

वज्रलिपि—बौद्धग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयी ६४ लिपियोंमें-से एक।

वटुक (vatuka)—**तेलुगु** (दे०) का एक 'तमिल' नाम।

वटेलुट्टू—**मलयालम** (दे०) का एक नाम। वस्तुतः यह **वट्टेलुट्टु** (दे०) लिपिका नाम है।

वट्टेलुत्तु लिपि—यह लिपि ७वींसे १४वीं सदीतक मद्रासके पश्चिमी तट तथा बिल्कुल दक्षिणमें प्रचलित रही है। इसे तमिल लिपिसे ही विकसित एक घसीट रूप माना जाता रहा है, किंतु अब लोग इसे तमिलसे भी पुरानी लिपि मानते हैं तथा इसका संबंध सीधे ब्राह्मीके दक्षिणी रूपसे जोड़ते हैं। इसके अक्षर प्रायः गोलाई लिये हुए होते हैं इसी कारण यह नाम पड़ा है। वट्टेलुत्तुका अर्थ 'गोल अक्षर' होता है। अब इसका प्रयोग नहीं होता।

[यह प्राचीन वट्टेलुत्तु लिपिका उदाहरण है। ये अक्षर क्रमशः अ, आ, इ, ई, उ, ए, ऐ, ऐ, ओ, क, ङ, च, ञ, ट, ण, त, न, प, म, य, र, ल, व, ळ, ऴ, ऱ, ण हैं।]

वडग (vadaga)—**तेलुगु** (दे०) का एक 'तमिल' नाम।

वडरी (vadari)—(१) **भाम्टा** (दे०) का एक अन्य नाम। (२) **तेलुगु** (दे०) की, मध्य तथा पश्चिमी भारतमें घूमनेवाली एक बंजारा जातिमें प्रयुक्त, एक बोली। कुछ विद्वानोंके मतानुसार यह एक 'बंजारा' भाषा है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २७,०९९ थी।

वडारी (wadari)—**वडरी** (दे०) का एक अन्य नाम।

वडुगु (vadugu)—**तेलुगु** (दे०) का एक 'तमिल' नाम।

वडोदरी (vadodari)—**गुजराती** (दे०)-की, बड़ौदामें प्रयुक्त, एक बोली।

वड्डी (vaddi)—**उड़िया** (दे०) का एक अशुद्ध नाम।

वणजारी––बंजारी (दे०)का बरारमें प्रयुक्त एक नाम ।

वतओ-खुम (watao-khum)––बर्मामें प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०)की एक लोलो-मोसो भाषा।

वद्र (vadra)––१८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार कनारा (मद्रास)में प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा । ग्रियर्सनके मतानुसार यह **वडरी** (दे०)का एक रूप है ।

वनांग (wanang)––**कोच** (दे०)की, गारो पहाड़ियों (असम)में प्रयुक्त एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,१०० थी ।

वन्निक (vannic)––(दे०) **वन्नी** ।

वन्नी––एक विलुप्त भाषा । ९०० ई० पू०से ६०० ई० पू०तक यह अराराट (नीयर ईस्ट)में बोली जाती थी । इसके कुछ (वन्नीलिपिमें) शिलालेख मात्र मिले है। इसके पारिवारिक सम्बन्धका पता नहीं है । इसे **खाल्दिक** तथा **अरारटिअन** (arartaean) भी कहते हैं ।

वरयल (varayal)––१८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार, खानदेशमें प्रयुक्त एक **भील** (दे०) भाषा । इसका अब पता नहीं है ।

वरुग (waruga)––**तेलुगु** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक 'जर्मन' नाम ।

वरोडी (varodi)––१८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार **मराठी** (दे०)का खानदेशमें प्रयुक्त एक रूप । वस्तुतः यह **वर्हाडी** (दे०)का एक अशुद्ध नाम है ।

वर्ग––देवनागरी वर्णमालाके व्यंजनोंके उच्चारण-स्थानके आधारपर बनाये गये समूह, जो इस प्रकार हैं––

कवर्ग––क,ख,ग,घ,ङ ।

चवर्ग––च,छ,ज,झ,ञ ।

टवर्ग––ट, ठ, ड, ढ़, ण ।

तवर्ग––त,थ,द,ध,न ।

पवर्ग––प, फ, ब, भ, म ।

कुछ ग्रंथोंमें 'यवर्ग'भी मिलता है, जिसमें य, र, ल, व आते हैं। उपर्युक्त वर्गोंकी भांति यह वर्ग उच्चारण-स्थानपर आधारित नहीं है । कहीं-कहीं श, ष, स या श, ष, स,ह को ऊष्मवर्ग कहा गया है। देवनागरीके अतिरिक्त बँगला, गुजराती आदि अन्य बहुत-सी भारतीय लिपियोंमें भी इसी प्रकार वर्णोंका विभाजन वर्गोंमें किया गया है ।

वर्गाकार कोष्टक––एक प्रकारका कोष्टक । (दे०) **विराम** ।

वर्गीकरण––(दे०)**आधुनिक भारतीय भाषाओंका वर्गीकरण; ध्वनियोंका वर्गीकरण; पारिवारिक वर्गी०; आकृतिमूलक वर्गी०** तथा **शब्द** ।

वर्जित शब्द (noa word, taboo)––ऐसा शब्द, जिसका प्रयोग अन्धविश्वास, धर्म, सामाजिक परम्परा, अश्लीलता या किसी अन्य कारणसे वर्जित हो गया हो ।

वर्ण––किसी भाषामें प्रयुक्त होनेवाली उस मूल या छोटी-से-छोटीध्वनि(या उसके द्योतक चिह्न)को वर्ण कहते हैं, जिसके खंड न हो सकें । वर्णको 'अक्षर'भी कहते हैं । हिन्दीमें अ, इ, क्, ग्, आदि वर्ण हैं। वर्णका मूल अर्थ 'रंग' है । रंगसे परिवर्तित होकर इसका अर्थ 'अक्षर' या 'ध्वनि'कैसे हो गया,इस सम्बन्धमें निश्चयके साथ कुछ कहना कठिन है । सम्भवतः आरम्भमें रंगों द्वारा अक्षरों या ध्वनियोंके द्योतन या रंगोंसे अक्षर लिखे जानेके कारण ऐसा हुआ । इस अर्थमें इसका प्रथम प्रयोग ऐतरेय ब्राह्मणमें मिलता है। तंत्र-साहित्यमें वर्णके स्थान पर 'अर्ण'का प्रयोग मिलता है । (दे०) **अर्ण** तथा **अक्षर** ।

वर्णनात्मक ध्वनि-विज्ञान (descriptive phonetics या synchronic phonetics)––ध्वनिविज्ञानका एक रूप । इसमें किसी भाषा (एक निश्चित समयमें)-की ध्वनियोंका, उच्चारण और प्रयोगादिकी दृष्टिसे वर्णन––वर्गीकरण आदि रहता है ।

वर्णनात्मक रूप विज्ञान (descriptive morphology)––**रूप विज्ञान** (दे०)का एक भेद ।

वर्णनात्मक लिपि विज्ञान––एक प्रकारका

लिपि विज्ञान (दे०) ।

वर्णनात्मक वाक्यविज्ञान (descriptive syntax)––(दे०) **वाक्यविज्ञान** ।

वर्णनात्मक विशेषण (descriptive adjective)––ऐसा विशेषण, जो किसी संज्ञाकी विशेषताका वर्णन करे । 'काला घोड़ा', 'अच्छा चित्र'में काला या अच्छा वर्णनात्मक विशेषण है। 'एक घोड़ा'में एक विशेषण है, किंतु वर्णनात्मक नहीं है ।

वर्णनात्मक व्याकरण (descriptive grammar)––व्याकरणका वह रूप, जिसमें किसी भाषाके प्रचलित या प्रयुक्त रूपका वर्णन रहता है । इसमें न तो उस भाषाके विभिन्न व्याकरणिक रूपोंके इतिहासपर प्रकाश डाला जाता है और न उसकी अन्य भाषाओंके रूपोंसे तुलना ही की जाती है। भाषाओंके सामान्य व्याकरण,वर्णनात्मक ही होते हैं । वर्णनात्मक व्याकरणमें कभी-कभी विभिन्न स्तरोंपर व्यवहृत परिनिष्ठित अपरिनिष्ठित एवं लिखनेमें प्रयुक्त तथा बोलनेमें प्रयुक्त रूप आदि भी दे दिये जाते हे। (दे०) **व्याकरण** ।

वर्णबोधक विशेषण––(दे०) **विशेषण** ।

वर्णमाला (alphabet)–किसी भाषाके मूल-ध्वनि-द्योतक चिह्नों (वर्णों या अक्षरों)का विशिष्ट क्रमसे सजाया हुआ समुदाय । ये चिह्न कभी-कभी केवल मूलध्वनियोंके ही न होकर संयुक्त ध्वनियोंके भी होते हैं । जैसे हिन्दी क्ष, त्र, ज्ञ । वर्णमालाका क्रम कभी तो उच्चारण-स्थानपर आधारित होता है, जैसे–देवनागरीका कवर्ग,चवर्ग, टवर्ग आदि; और कभी वर्णों या अक्षरोंके स्वरूपपर, जैसे–अरबी लिपिमें जीम, चे, हे, ख़े या काफ़, गाफ़ आदि । रोमन आदि अनेक लिपियोंमें क्रमकी कोई विशेष व्यवस्था नहीं है । (दे०) **वर्ण** ।

वर्णवाचक विशेषण––(दे०) **विशेषण** ।

वर्णविकार––**ध्वनि-परिवर्तन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

वर्ण-विचार (orthography)–व्याकरणका वह विभाग, जिसमें किसी भाषाके वर्णों या ध्वनियोंके उच्चारण, वर्गीकरण, आकार-प्रकार तथा उन्हें मिलाकर शब्द बनानेके नियम आदिका विवेचन रहता है । संधि-विषयक नियम भी इसीमें आते हैं । इसे ध्वनि-विचार भी कहते हैं । (दे०) **वर्ण**, **व्याकरण** । कभी-कभी **ध्वनि-प्रक्रिया-विज्ञान** (दे०)के लिए भी इसका प्रयोग होता है ।

वर्ण-विज्ञान––**ध्वनि-विज्ञान** (दे०) या **ध्वनि-ग्राम विज्ञान** (दे०)का एक अन्य नाम ।

वर्णविन्यास––**वर्तनी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

वर्णविन्यासविज्ञान (orthography)–वर्तनी, अक्षरी या वर्णविन्यास (spelling)का अध्ययन । इसके अन्य नाम **वर्तनी विज्ञान** या **अक्षरी विज्ञान** हैं ।

वर्ण-विपर्यय––**विपर्यय** (दे०)का एक अन्यनाम ।

वर्ण-व्यत्यय––**विपर्यय** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

वर्णसमाम्नाय––अक्षरों या वर्णों (स्वर और व्यंजन)का समूह या वर्णमाला । संस्कृतके वर्णसमाम्नायमें पाणिनिके अनुसार ९ स्वर तथा ३४ व्यंजन हैं । किंतु अन्य शिक्षाग्रंथों, प्रातिशाख्यों तथा व्याकरणोंमें इनकी संख्या कम या अधिक भी है । हिन्दीका वर्ण समाम्नाय अभीतक अनिश्चित है ।

वर्णसूचक विशेषण––(दे०) **विशेषण** ।

वर्णात्मक लिपि (alphabectic writing)––ऐसी **ध्वन्यात्मक लिपि** (दे०), जिसमें लिपि चिह्न ध्वनिकी लघुतम इकाईको व्यक्त करते हैं । रोमन लिपि इसी प्रकारकी है । उसमें k केवल क को व्यक्त करता है । नागरी आदि लिपियाँ वर्णात्मक नहीं हैं, क्योंकि उनमें क अक्षर k को व्यक्त न कर ka या क्––अ को व्यक्त करता है । (दे०) **अक्षरात्मक लिपि** । वर्णात्मक लिपि ही लिपिका सबसे विकसित रूप है ।

वर्तनी (spelling)––भाषा विशेषमें किसी शब्दके लिखित रूपमें प्रयुक्त विशिष्टक्रममें वर्णसमूह । इसे **अक्षरी**, **अखरौटी**, **वर्ण-**

विन्यास आदि भी कहते हैं ।

वर्तनी विज्ञान--**वर्ण विन्यास विज्ञान** (दे०)-का एक अन्य नाम ।

वर्तमान--**लट् लकार** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

वर्तमान आज्ञार्थ--(दे०) **काल** ।

वर्तमानकाल--(दे०) **काल** ।

वर्तमानकालिक कृदंत--(दे०) **कृदंत** ।

वर्तमान निश्चयार्थ--(दे०) **काल** ।

वर्तमाना--लट् लकार या वर्तमान कालके लिए महाभाष्य आदिमें प्रयुक्त एक नाम ।

वर्त्स (alveola)--दाँतके नीचेके मसूड़ोंको 'वर्त्स' कहते हैं । कुछ ध्वनियोंके उच्चारणमें इससे सहायता मिलती है । हिन्दीमें 'र' 'ल' तथा 'स' आदि यहींसे उच्चरित होते हैं । इन ध्वनियोंको **वर्त्स्य** कहते हैं । (दे०) **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान** ।

वर्त्स्य (alveolar)--**उच्चारण-स्थान** (दे०) के आधारपर किया गया व्यंजन ध्वनियोंका एक भेद । **मसूड़े** या **वर्त्स** (दे०) (और जिह्वाग्र) की सहायतासे उत्पन्न ध्वनियाँ 'वर्त्स्य' कहलाती हैं । वैदिक कालमें तवर्ग इसी श्रेणीका था । हिन्दी न, ल, र, स, ज़ आदि इस वर्गके हैं । अंग्रेजीके ट, ड भी वर्त्स्य हैं ।

वर्त्स्यंत्--**लुट् लकार** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

वर्धमान--दीर्घ स्वरके लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम ।

वर्नर-नियम--एक **ध्वनि-नियम** (दे०) ।

वर्नाक्यूलर हिंदुस्तानी--**खड़ीबोली** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

वर्शिक्वार (warshikwar)--**बुरूशास्की** (दे०) की, यासीनमें प्रयुक्त, एक बोली ।

वर्हाडी (varhadi)--'मराठी' की, **बरार-बोली** (दे०) का, बरारमें प्रयुक्त, एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २०,८४,०२३ थी ।

वलपइ (walapai)--**पूर्वीय यूम** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

वलव्डी (valavdi)--१९२१की बड़ौदा जनगणनाके अनुसार **चोधरी** (दे०) का एक रूप ।

वल्गर लैटिन (valgar latin)--**लैटिन** (दे०) का एक तो क्लासिकल या साहित्यिक रूप था, जो साहित्य आदिमें प्रयुक्त होता था और दूसरा वह था, जो रोमकी एक बोली था तथा पूरे रोमन साम्राज्यमें जन-भाषाके रूपमें प्रचलित था । यही जनभाषा लैटिन, वल्गर लैटिन या मध्ययुगीन लैटिन नामसे अभिहित की गयी है । **रोमांस भाषाएँ** (दे०) वल्गर लैटिनसे ही विकसित हुई हैं । वल्गर लैटिनको हिन्दीमें **ग्राम्य लैटिन** या **अपरिमार्जित लैटिन** कहते हैं ।

वल्लावल्ला (wallawalla)--**शहप्टिन** (दे०) परिवारकी एक उत्तरी-अमेरिकी भाषा ।

वल्वंदी (valvandi)--१८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार **गुजराती** (दे०) का एक रूप । अब इसका पता नहीं है ।

वशंगम संधि--(दे०) **संधि** ।

वशो (washo)--**होक** (दे०) भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

वसल (vasal)--१८९१की बम्बई जनगणनाके अनुसार, **मराठी** (दे०) का, खानदेशमें प्रयुक्त एक रूप ।

वसव (vasava)--उत्तरी-पश्चिमी खानदेशमें प्रयुक्त एक **भील** (दे०) बोली ।

वसी वेरी (wasi veri)--**दरद** (दे०) के 'काफिर' वर्गकी, काफ़िरिस्तानमें प्रयुक्त, एक भाषा ।

वस्को (wasko)--**चिनुक** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

वस्तुबोधक संज्ञा--(दे०) **वस्तुवाचक संज्ञा** ।

वस्तुवाचक संज्ञा--(दे०) **संज्ञा** ।

वह्पेटन (wahpeton)--**डकोट-अस्सिनिबोइन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

वाइब्रलाइज़र (vibralyzer)--**स्पेक्ट्रोग्राफ़** (दे०) का एक रूप ।

वाइलिपि (vai)--पश्चिमी अफ्रीकामें वाइ जातिके लोगोंमें प्रचलित एक लिपि, जिसमें २२६ अक्षरात्मक लिपि-चिह्न हैं । इसकी

उत्पत्ति १८२९के आसपास मानी गयी है। यह लिपि वहाँके लोगोंकी सूझ है या किसी अन्य लिपिपर आधारित है, कहना कठिन है।

वाक् पद्धति—मुहावरेके लिए प्रयुक्त एक नाम। (दे०) **मुहावरा**।

वाक् प्रचार—मुहावरेके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम। (दे०) **मुहावरा**।

वाक्य(sentence)—वाक्यकी **परिभाषा** अन्य परिभाषाओंकी तरह ही विवादास्पद है। किसीने 'एक पूर्ण विचार व्यक्त करनेवाला शब्द-समूह, वाक्य कहलाता है' (गुरु) कहा है, तो किसीने 'सार्थक शब्दोंका समूह, जो भावको व्यक्त करनेकी दृष्टिसे अपने आपमें पूर्ण हो' रूपमें वाक्यकी परिभाषा दी है। कोशों तथा व्याकरणोंमें भी वाक्यकी इसी प्रकारकी परिभाषा मिलती है। यूरोपमें इस दृष्टिसे प्रथम प्रयास थ्राक्स (१ली सदी पूर्व)का है। भारतमें पतंजलि (१५० ई० पू०के लगभग)-का नाम लिया जा सकता है। ये दोनों ही आचार्य 'पूर्ण अर्थकी प्रतीति करानेवाले शब्द-समूहको वाक्य' मानते हैं। यों समझने या समझानेके लिए ये परिभाषाएँ ठीक हैं, किन्तु तत्त्वतः इन्हें ठीक नहीं कहा जा सकता। थोड़ा ध्यान दें तो यह स्पष्ट हुए विना नहीं रहेगा कि भाषामें या बोलनेमें वाक्य ही प्रधान है। वाक्य भाषाकी इकाई है। व्याकरणवेत्ताओंने कृत्रिम रूपसे वाक्यको तोड़कर शब्दोंको अलग-अलग कर लिया है। हमारा सोचना, समझना, बोलना या किसी भावको हृदयंगम करना सब कुछ 'वाक्य'में ही होता है। ऐसी स्थितिमें **'वाक्य शब्दोंका समूह है'** कहनेकी अपेक्षा **'शब्द वाक्योंके कृत्रिम खंड हैं'** कहना अधिक समीचीन है। ऊपर वाक्यकी जो परिभाषाएं दी गयी हैं, उनमें मूलतः दो बातें हैं—(१) वाक्य शब्दोंका समूह है और (२) वाक्य पूर्ण होता है।

'वाक्य **शब्दोंका समूह है**' पर एक दृष्टिसे ऊपर विचार किया जा चुका है और यह कहा जा चुका है कि वाक्यका शब्द रूपमें विभाजन स्वाभाविक नहीं है। आज भी संसारमें ऐसी भाषाएँ हैं जिनमें वाक्यका शब्द रूपमें कृत्रिम विभाजन नहीं हुआ है। ऐसी भाषाओंमें वाक्य ही वाक्य हैं। शब्द नहीं। 'वाक्य शब्दोंका समूह है', इसपर एक और दृष्टिसे भी विचार किया जा सकता है। 'वाक्य शब्दोंका समूह है'का अर्थ है कि वाक्य एकसे अधिक शब्दोंका होता है, पर यह बात भी पूर्णतः ठीक नहीं है। एक शब्दके भी वाक्य होते हैं। छोटा बच्चा प्रातः जब माँसे 'बिछकुट' (बिस्कुट) कहता है तो इस एक शब्दके वाक्यसे ही वह अपना पूरा भाव व्यक्त कर लेता है। बातचीतमें भी प्रायः वाक्य एक शब्दके होते हैं। उदाहरणस्वरूप :–हीरा—तुम घर कब जाओगे ? मोती—कल। और तुम ? हीरा—परसों। मोती—और मोहन गया क्या ? हीरा—हाँ। 'खाओ', 'जाओ', 'लिखिये', 'पढ़िये', तथा 'चलिये' आदि भी एक ही शब्दके वाक्य हैं।

वाक्यकी **पूर्णता** भी कम विवादास्पद नहीं है। उसे पूर्णतः पूर्ण नहीं कहा जा सकता। कुछ उदाहरण लिये जा सकते हैं। प्रायः अपने किसी भावको हम कई वाक्यों द्वारा व्यक्त करते हैं। यहाँ वह भाव अपनेमें पूर्ण है और कई वाक्य मिलकर उसे व्यक्त करते हैं। अतएव निश्चय ही ये वाक्यपूर्ण (पूरे भाव)के खण्ड मात्र हैं, अतः अपूर्ण हैं। यह विवाद यहीं समाप्त नहीं हो जाता। मनोविज्ञानवेत्ता उस भाव या एक पूरी बात (जिसमें बहुतसे वाक्य होते हैं)को भी अपूर्ण मानता है, क्योंकि जन्मसे लेकर मृत्युतक उसके अनुसार भावकी एक ही अविच्छिन्न धारा प्रवाहित होती रहती है और बीचमें आने वाले छोटे-मोटे सारे भाव या बातें उस धाराकी लहरें मात्र हैं, अतएव वह अविच्छिन्न धारा ही केवल पूर्ण है। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि उस अविच्छिन्न धाराकी तुलनामें एक भाव या विचार भी बहुत ही अपूर्ण है। तो फिर एक वाक्यकी पूर्णताका तो कहना ही क्या, जो पूरे भाव या विचारका एक छोटा खण्ड मात्र है। इस प्रकार

हम देखते हैं कि 'वाक्य'की प्रचलित परिभाषा बहुत ही अपूर्ण तथा अशुद्ध हैं।

ऊपर वाक्यके सम्बन्धमें दिये गये विवादकी पृष्ठभूमिमें कहा जा सकता है कि––

वाक्य, पूरी बातकी तुलनामें अपूर्ण होते हुए भी अपने-आपमें पूर्ण, लघुतम स्वतंत्र भाषिक इकाई है। इसे संक्षेपमें यों भी रखा जा सकता है : **वाक्य लघुतम पूर्ण स्वतंत्र भाषांश है या वाक्य भाषाका चरम अवयव है।**

वाक्यकी आवश्यकताएँ–वाक्यकी परिभाषा देनेसे अधिक अच्छा यह होगा कि हम उसकी आवश्यकताओंको देख लें। इससे उसके स्वरूपको समझनेमें अधिक आसानी होगी। इस दृष्टिसे विश्वनाथकी वाक्यकी परिभाषा दर्शनीय है:––'वाक्यं स्यात् योग्यताकांक्षा सत्रियुक्तः पदोच्चयः।' जैमिनि भी कहते हैं :- 'अर्थैकत्वादेकं वाक्यं साकांक्षं चेद्विभागे स्यात्।' समवेत रूपसे वाक्यके लिए छः बातें आवश्यक हैं :–सार्थकता, योग्यता, आकांक्षा, सन्निधि, अन्वय, क्रम। इन्हें अब अलग-अलग देखा जा सकता है। (१) **सार्थकता**––इसका आशय यह है कि वाक्यके शब्द सार्थक होने चाहिये। (२) **योग्यता**––'योग्यता'का आशय यह है कि शब्दोंकी आपसमें संगति बैठे। शब्दोंमें प्रसंगानुकूल भावका बोध करानेकी योग्यता या क्षमता हो। 'वह पेड़को पत्थरसे सींचता है' वाक्यमें शब्द तो सार्थक हैं, किंतु पत्थरसे सींचना नहीं होता, इसलिए शब्दोंकी परस्पर योग्यताकी कमी है, अतः यह सामान्य अर्थोंमें वाक्य नहीं है, उल्टवाँसी भले हो। (३) **आकांक्षा**––इसका अर्थ है 'इच्छा'। वाक्यमें इतनी शक्ति होनी चाहिये कि पूरा अर्थ दे। उसे सुनकर भाव पूरा करनेके लिए कुछ जाननेकी आकांक्षा न रहे। यह शर्त विवादास्पद है। पीछे वाक्यमें अर्थकी पूर्णतापर सविस्तर विचार किया जा चुका है। किंतु इतना अवश्य है कि वाक्य पूरे भाव या पूरी बातकी तुलनामें अपूर्ण होनेपर भी अपने-आपमें पूर्ण और स्वतंत्र होता है, अतः उसमें इस प्रकारकी पूर्णता होनी चाहिये। (४) **सन्निधि या आसत्ति**––सन्निधि या आसत्तिका अर्थ है 'समीपता'। वाक्यके शब्द समीप होने चाहिये। उपर्युक्त सभी बातोंके रहनेपर भी, यदि एक शब्द आज कहा जाय, दूसरा कल और तीसरा परसों, तो उसे वाक्य नहीं कहा जायेगा। (५) **अन्विति या अन्वय**––इसका अर्थ है व्याकरणिक दृष्टिसे सामान्यरूपता। दूसरे शब्दोंमें वाक्यके पदों या रूपोंमें लिंग, वचन कारक, पुरुष आदिकी दृष्टिसे एकरूपता या समता। अंग्रेज़ीमें इसे concordance कहते हैं। विभिन्न भाषाओंमें इसके विभिन्न रूप मिलते हैं। उदाहरणार्थ हिन्दीमें क्रिया प्रायः लिंग, वचन, पुरुषमें कर्ताके अनुकूल होती है––'सीता गये' न तो ठीक वाक्य है और न 'राम जा रही हैं'। क्योंकि यहाँ न तो 'सीता' और 'गये' में अन्विति है और न 'राम' और 'जा रही हैं' में। अंग्रेज़ीमें क्रिया पुरुष, वचनकी दृष्टिसे कर्ताके अनुसार होती हैकिन्तु लिंगकी दृष्टिसे नहीं (ram goes, sita goes.)। प्राचीन भाषाओंमें विशेषण और विशेष्यमें भी अन्विति मिलती है। संस्कृतमें 'सुन्दरं फलम्' किन्तु 'सुन्दरः बालकः' लैटिनमें puella bona (अच्छी लड़की) किन्तु filius bonus), (अच्छा लड़का)। हिन्दीमें आकारांत विशेषणोंमें ही ऐसा होता है। जैसे अच्छा लड़का, अच्छी लड़की। अन्यमें नहीं, जैसे चतुर लड़का, चतुर लड़की। अंग्रेज़ीमें विशेषण-विशेष्य-अन्विति बिल्कुल नहीं है। इस प्रकार हर भाषामें अन्वितिके अपने नियम हैं। (६) **शब्दक्रम, क्रम या पदक्रम**–वाक्योंके पदों या शब्दोंका क्रम भी भाषा विशेषके नियमोंके अनुसार होता है। उदाहरणार्थ, हिन्दीमें 'राम आम खाता है' कहेंगे, पर अंग्रेजीमें क्रम बदल जायगा और कहेंगे 'राम खाता है आम (ram eats mango)। इसप्रकार कर्ता, कर्म, क्रिया या उद्देश्य, विधेय आदि वाक्यमें क्रमके लिए हर भाषाकेअपने नियम होते हैं, वाक्यकी रचनामें उनका ध्यान रखा जाना चाहिये। (दे० **पदक्रम**)। यदि उपर्युक्त सारी बातें किसी

रचनामें हों, तभी उसे वाक्य कहेंगे यों इसमें एक ७वीं बात **लघुतम** भी जोड़ दी जा सकती है, अर्थात् अर्थकी दृष्टिसे पूर्ण होते हुए उसे लघुत्तम भी होना चाहिये।

लिखित और बोलचालके वाक्य––बोलचालके वाक्य अपेक्षाकृत छोटे होते हैं और प्रायः एक सांस (लगभग तीन सेकंड) में बोले जा सकते हैं। पर इसके विरुद्ध लिखित वाक्य प्रायः बड़े होते हैं और बोलचालके कई वाक्योंसे मिल-कर बनते हैं। उदाहरणार्थ––(१) एक राजा था। (२) राजाका नाम भीमसेन था। (३) राजा धेनुपुर नामके शहरमें रहता था। इसका लिखित रूप होगा––एक राजा था, जिसका नाम भीमसेन था और जो धेनुपुर नामक नगरमें रहता था। बोलचालके वाक्योंका प्रयोग प्रायः अपढ़ लोग करते हैं। पढ़े-लिखे लोग लिखित भाषाके प्रभाव तथा मस्तिष्कके संस्कृत हो जानेके कारण अपनी बोलचालमें भी लिखित वाक्योंकी भांति बड़े वाक्योंका ही प्रयोग करते हैं। ऊपरके दोनों उदाहरणोंमें पहला उदाहरण अपढ़ लोगोंका प्रतिनिधित्व करता है। पर, पढ़े-लिखे लोग उसे इस प्रकार न कहकर प्रायः बोलचालमें भी दूसरे रूप (लिखित वाक्य) में कहते हैं। कहना न होगा कि पहला वाक्यका स्वाभाविक और प्राचीन रूप है और दूसरा कृत्रिम तथा बादका।

वाक्यका विभाजन–संसारकी सभी भाषाओं-के वाक्य एक प्रकारके नहीं होते, इसी कारण वाक्यका कोई ऐसा पूर्ण विभाजन अभीतक भाषा-वैज्ञानिकोंको नहीं मिल सका है, जो सभी भाषाओंपर लागू किया जा सके। फिर भी दो प्रकारके विभाजनोंका प्रचलन है, जिन्हें नीचे (क) और (ख) के अन्तर्गत दिया जा रहा है। इनमें पहला विभाजन अपेक्षाकृत अधिक भाषाओंपर लागू होता है।

(क) अग्र और पश्च––वाक्यके अग्र और पश्च, ये दो विभाग स्वाभाविक रूपसे हो जाते हैं। विशेषतः जब हम धाराप्रवाह रूपसे कुछ कहते हैं तो दोनों रूप अपने-आप स्पष्ट होते रहते हैं। पर ये विभाग आजके लिखित वाक्य या शिक्षित लोगों द्वारा प्रयुक्त वाक्यमें न मिलकर अपढ़ लोगोंके छोटे-छोटे वाक्योंमें मिलते हैं।

भोजपुरीका एक उदाहरण लिया जा सकता है। यहाँ वाक्यके अग्र और पश्च भाग रेखा द्वारा स्पष्ट कर दिये गये हैं।

हमके खाये जायेके रहल। जायेमें देरी हो गइल। देरी हो गयलासे ओइजाँ क खयवे खतम हो गयल। खयका खतम भइलासे हमके आपन अस मुंह लेके रह जायेके परल।

इससे एक वाक्यका पश्च अंश सम्बन्ध दिख-लानेके लिए दूसरेका अग्र हो गया है। समुन्नत भाषाओं या सुशिक्षित लोगोंकी बोलचालमें यह प्रवृत्ति नहीं मिलती। हमारा मस्तिष्क इतना संस्कृत हो गया है कि इस सम्बन्धको स्पष्ट करनेकी आवश्यकता नहीं पड़ती। यदि ऊपरके वाक्योंको आजका शिक्षित आदमी कहेगा तो उसके दो रूप होंगे। या तो वह सबको मिलाकर एक वाक्य कर देगा––**'मुझे खाने जाना था, पर देर हो गयी और फल यह हुआ कि खाना खतम हो गया और मुझे अपना-सा मुँह लेकर रह जाना पड़ा'** या कई वाक्यों-में कहेगा पर एक वाक्यके पश्च भागको दूसरे वाक्यमें अग्ररूपमें रखनेकी आवश्यकता न होगी। **'मुझे खाने जाना था। देर हो गयी। खाना खतम हो गया और मुझे अपना-सा मुँह लेकर रह जाना पड़ा।'**

(ख) **उद्देश्य और विधेय**–वाक्यमें कर्ता और क्रिया, दो अंग अवश्य रहते हैं। 'राम जाता है', 'वह नहीं आया' तथा 'मोहन खा रहा है' में 'राम', 'वह' और 'मोहन' कर्त्ता हैं तथा जाता है, 'आया' और 'खा रहा है' क्रिया। कभी-कभी कर्त्ताके साथ उसका विस्तार भी रहता है, जिसे **उद्देश्यका विस्तार** या **उद्देश्य-वर्द्धक** कहते हैं। जैसे-'रामका बेटा मोहन घर गया' में 'मोहन' कर्त्ता है और 'रामका बेटा' उसका विस्तार। इसी प्रकार क्रियाके साथ भी उसका विस्तार होता है। कर्त्ता

और उसके विस्तारको छोड़कर, वाक्यमें जो कुछ होता है, उसमें एक तो क्रिया होती है और शेष जो कुछ भी होता है क्रियाका विस्तार या **विधेय विस्तारक** कहलाता है। वाक्यमें कर्त्ता या कर्त्ता और उसके विस्तारको **उद्देश्य** (subject) तथा क्रिया या क्रिया और उसके विस्तारको **विधेय** (predicate) कहते हैं। उद्देश्य या कर्त्ताके बारेमें विधान करनेके कारण ही शेष वाक्यांश विधेय कहलाता है।

उद्देश्य अधिकतर संज्ञा (**मोहन** आ रहा है), सर्वनाम (वह जा रहा है), विशेषण (अच्छे ऐसा नहीं करते), क्रियार्थक संज्ञा (बहुत **बोलना** बुरा है) या वाक्यांश (**उसे इस प्रकार फटकारना** अच्छा नहीं कहा जा सकता) होते हैं। **उद्देश्यका विस्तार**, सार्वनामिक विशेषण (**तुम्हारा** लड़का पास हो **गया**), विशेषण (**गंदा** बिछौना अच्छा नहीं है) या विशेषतासूचक वाक्यांश (**रामका बड़ा भाई** श्याम घर गया) आदि होते हैं। **मूल विधेय** या विधेयका मूल भाग क्रिया होता है। उद्देश्य, उद्देश्यका विस्तार तथा मूल विधेयके अतिरिक्त वाक्यमें जो भी शब्द बचते हैं **क्रिया या मूल विधेयके विस्तार** या **विधेयके विस्तार** कहलाते हैं।

विधेयके विस्तार पूरक, पूरकके विस्तार; कर्म, कर्मके विस्तार; करण, करणके विस्तार, सम्प्रदान, सम्प्रदानके विस्तार; अपादान, अपादानके विस्तार; अधिकरण, अधिकरणके विस्तार; सम्बोधन, सम्बोधनके विस्तार; क्रिया-विशेषण तथा पूर्वकालिक क्रिया आदि हो सकते हैं। जैसे--

पूरक--मोहन **सुन्दर** है।

पूरकका विस्तार--मोहन **बहुत** सुन्द है।

कर्म--मैंने **रोटी** खायी।

कर्मका विस्तार--मैंने **मोटी** रोटी खायी।

करण--रामने रावणको **तीरसे** मारा।

करणका विस्तार--रामने रावणको **तीखे** तीरसे मारा।

सम्प्रदान--मैंने **भिखारीको** पैसे दिये।

सम्प्रदानका विस्तार--मैंने **दीन** भिखारीको पैसे दिये।

अपादान--**पेड़से** पत्ते गिरते हैं।

अपादानका विस्तार--**लम्बे** पेड़से पत्ते गिरते हैं।

अधिकरण--मैं **घरमें** रहता हूँ।

अधिकरणका विस्तार--मैं **साफ** घरमें रहता हूँ।

संबोधन--**ओ मोहन** ! शीघ्र दौड़ो।

संबोधनका विस्तार--ओ **मूर्ख** मोहन ! शीघ्र भाग।

क्रियाविशेषण--मोहन **धीरे-धीरे** दौड़ रहा है।

क्रिया विशेषणका विस्तार--मोहन **बहुत** धीरे-धीरे दौड़ रहा है।

पूर्वकालिक क्रिया--मैं **खाकर** आया हूँ।

(ग) **उपवाक्य** (clause)--कोई वाक्य यदि, एकसे अधिक वाक्योंसे मिलकर बना हो, तो वे वाक्य, बड़े वाक्यके उपवाक्य कहलाते हैं। उदाहरणके लिए 'जब वह आया मैं पढ़ रहा था' में वह आया, एक वाक्य है जिसमें उद्देश्य और विधेय दोनों हैं। इसी प्रकार, मैं पढ़ रहा था, भी एक वाक्य है और इसमें भी उद्देश्य और विधेय दोनों ही हैं। इन दोनों वाक्योंसे मिलकर बड़ा वाक्य बना है। अतः बड़े वाक्यके ये दोनों उपवाक्य हुए। उपवाक्य दो प्रकारके होते हैं। (१) प्रधान, **मुख्य या प्रमुख उपवाक्य** (principle clause या main clause) तथा (२) **आश्रित उपवाक्य** (dependent clause या subordinate clause)। जो उपवाक्य वाक्यमें प्रमुख हो या जो दूसरेके आश्रित न हो उसे **प्रमुख उपवाक्य** कहते हैं। ऊपरके वाक्यमें 'मैं पढ़ रहा था' प्रमुख है, या अनाश्रित है, अतः वह **प्रमुख उपवाक्य** है। **आश्रित उपवाक्य** उसे कहते हैं जो वाक्यमें प्रमुख न हो अपितु प्रमुख उपवाक्यपर आश्रित हो। उपर्युक्त वाक्यमें 'जब वह आया' प्रमुख नहीं है और अर्थकी दृष्टिसे प्रमुख उपवाक्य 'मैं पढ़ रहा था' का समय बतला रहा है, अतः यह आश्रित उपवाक्य है।

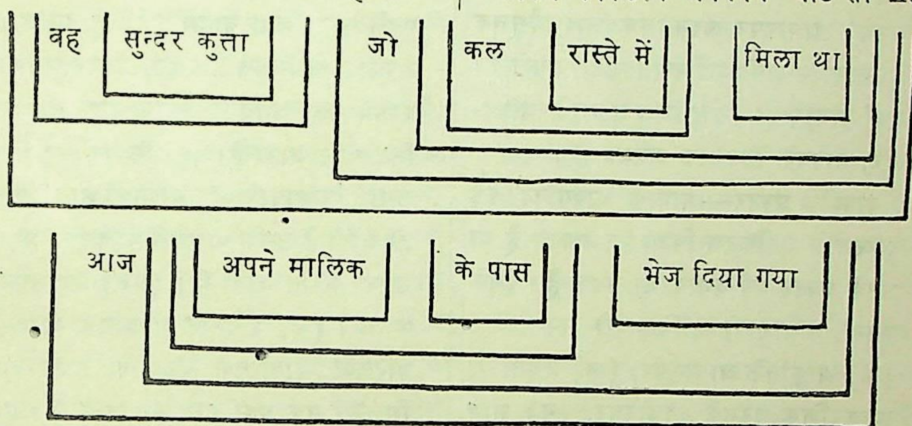
आश्रित उपवाक्य--तीन प्रकारके होते हैं: (१) **संज्ञा-उपवाक्य** (noun clause) या

संज्ञात्मक उपवाक्य (nominal clause); (२) **विशेषण-उपवाक्य** (adjective clause) या **विशेषणात्मक उपवाक्य** (adjectival clause) तथा (३) **क्रियाविशेषण-उपवाक्य** (adverb clause) या **विशेषणात्मक उपवाक्य** (adverbial clause.)। **संज्ञा-उपवाक्य** उस उपवाक्यको कहते हैं जो वाक्यमें संज्ञाका काम कर रहा हो। दूसरे शब्दोंमें, शब्दोंका वह समूह जिसमें एक उद्देश्य तथा एक विधेय हो तथा जो किसी वाक्यमें उपवाक्यके रूपमें संज्ञाका काम कर रहा हो, संज्ञा-उपवाक्य कहलाता है। **'मैं कब आऊँगा,** अनिश्चित है' वाक्यमें 'मैं कब आऊंगा' संज्ञाका काम कर रहा है, यह 'है' क्रियाका कर्त्ता है अतः संज्ञा उपवाक्य है। संज्ञा उपवाक्य, किसी क्रियाका कर्त्ता किसी सकर्मक क्रियाका कर्म, पूरक या समानाधिकरण आदि हो सकता है। **विशेषण-उपवाक्य,** उस उपवाक्यको कहते हैं जो वाक्यमें किसी संज्ञाकी विशेषता बतला रहा हो, अर्थात् विशेषणका कार्य कर रहा है। जैसे राम, **जो मोहनका बेटा था** मर गया। इसमें जो मोहनका बेटा था उपवाक्य रामकी विशेषता बतला रहा है, अतः यह विशेषण उपवाक्य है। **क्रियाविशेषण-उपवाक्य,** उस उपवाक्यको कहते हैं, जो वाक्यमें क्रियाकी विशेषता बतला रहा हो। जैसे जब तुम आये मैं सो रहा था, वाक्यमें, 'जब तुम आये' उपवाक्य, 'सो रहा था' क्रियाकी काल विषयक विशेषता बतला रहा है। कालके अतिरिक्त स्थान विषयक (जहाँ तुम सो रहे थे, मैं गया था) रीति विषयक (जैसा आप गाते हैं, वह नहीं गा सकता), परिमाण विषयक (जैसे जैसे आमदनी बढ़ती है, खर्च भी बढ़ता है), तथा कार्यकारण विषय (उन्होंने मुझे बेइज्जत किया है, अतः मैं भी नहीं छोड़ूंगा) विशेषताएँ भी हो सकती हैं। इसी आधारपर क्रिया विशेष उपवाक्यके **काल वाचक क्रियाविशेषण उपवाक्य, स्थान वाचक क्रिया विशेषण उपवाक्य, रीतिवाचक क्रिया विशेषण उपवाक्य, परिमाण वाचक क्रियाविशेषण उपवाक्य** तथा **कार्यकारण वाचक क्रियाविशेषण उपवाक्य,** ये पाँच भेद किये जाते हैं।

यहाँतक हमने वाक्यमें प्रमुख और आश्रित उपवाक्योंके बारेमें देखा। कभी-कभी वाक्यमें एकसे अधिक प्रमुख उपवाक्य होते हैं। इन्हें **समानाधिकरण उपवाक्य** (co-ordinate clause) कहते हैं। जैसे 'मैं चला आया और वे रुक गये।' यहाँ 'मैं चला आया' 'वे रुक गये' दोनों प्रमुख उपवाक्य हैं, दोनोंमें कोई भी दूसरेपर आश्रित नहीं है, अतः ये समानाधिकरण उपवाक्य हुए। ऐसे उपवाक्य प्रायः संयोजक, विभाजक, विरोधदर्शक या परिणामबोधक समुच्चयबोधक अव्ययसे जुड़े रहते हैं।

निकटस्थ अवयव (immediate constituent)—वाक्यके अंग या अवयव कहलाते हैं। उद्देश्य तथा उद्देश्यके विस्तार एवं विधेय तथा विधेयके विस्तारकी प्रत्येक इकाई या दूसरे शब्दोंमें वाक्यमें प्रयुक्त 'पद' या 'रूप' ही उसके अंग या अवयव हैं। इन्हें **वाक्यावयव** भी कहते हैं। कोई रचना जिन दो या अधिक अवयवोंसे मिलकर बनती है उनमें प्रत्येक **निकटस्थ अवयव** कहलाता है। निकटस्थका आशय स्थानसे नहीं है, अपितु अर्थसे है। अंग्रेज़ी वाक्य 'is ram going में यद्यपि is और going स्थानकी दृष्टिसे दूर-दूर हैं, किन्तु अर्थकी दृष्टिसे वे निकट हैं। इसमें is और going 'is going' रचनाके निकटस्थ अवयव हैं, और ये दोनों मिलकर 'is ram going? वाक्य या रचनाके निकटस्थ अवयव हैं। दूसरी ओर the cows of that milkman are coming में milkman तथा are स्थानकी दृष्टिसे निकटस्थ हैं, किन्तु अर्थकी दृष्टिसे नहीं (milkman are या milkman are coming कोई रचना नहीं है और ये एक प्रकारसे निरर्थकसे) हैं, अतएव उन्हें निकटस्थ अवयव नहीं माना

जा सकता। इसमें प्रथम स्तरपर निकटस्थ अवयवोंके तीन वर्ग बनाये जा सकते हैं'the cows', 'that milkman' 'तथा' 'are coming' दूसरे स्तरपर दो हैं the cows of that milkman तथा are coming हिन्दीका एक वाक्य है—'वह सुन्दर कुत्ता जो कल रास्तेमें मिला था आज अपने मालिकके पास भेज दिया गया'। इसमें कुल १७ शब्द हैं। 'निकटस्थ अवयव'की दृष्टि से इसका विभाजन इस प्रकार होगा—



इसका आशय यह है कि कई स्तरोंपर निकटस्थ अवयवोंको अलग किया जा सकता है। निकटस्थ अवयव पद-क्रम या शब्द-क्रमपर निर्भर करते हैं। ऊपर तो सरलतासे उन्हें अलग कर लिया गया है किन्तु ऐसे भी वाक्य मिलते हैं जहाँ वे इस प्रकार सरलतासे अलग-अलग नहीं होते। उनके बीचमें अन्य निकटस्थ अवयव या उनके अवयव भी आ जाते हैं। अंग्रेज़ीके प्रश्नसूचक वाक्योंमें जब क्रियाका सहायक अंश एक ओर तथा मूल अंश दूसरी ओर होता है तब यही स्थिति होती है। is the black dog coming में is और 'coming निकटस्थ अवयव हैं और उनके बीचमें the black dog दूसरा अवयव है।

वाक्यमें निकटस्थ अवयवोंका महत्व बहुत अधिक है। अर्थकी प्रतीति इसी कारण होती है। भाषाका प्रयोक्ता या स्रोता जाने या अनजाने इससे परिचित रहता है। यदि ऐसा न हो तो वह अर्थ नहीं समझ सकता। एक भाषासे दूसरीमें अनुवाद करनेमें भी इसका पूरा ध्यान रखना पड़ता है। अनुवादमें जब हम कहते हैं कि शब्दके लिए शब्द नहीं रखा जाना चाहिये तो वहाँ हमारा आशय इसीसे होता है। अनुवादकर्त्ता 'निकटतम अवयव'का अनुवाद करके ही सफल हो सकता है, शब्द-शब्दका अनुवाद करके नहीं। कुछ उदाहरण हैं- he fell in love with her का सीधा अनुवाद होगा—'वह गिरामें प्रेमसे उसके' लेकिन निकटस्थ अवयवमें बाँटें तो 'he' 'fell in love' 'with her' के रूपमें लेना पड़ेगा। इसका आशय यह भी है कि निकटस्थ अवयवोंमें बाँटनेके लिए भाषाके प्रयोगों और सुझावोंका पूरा ध्यान रखा जाना चाहिये। 'मेरा सर चक्कर खा रहा है'का अनुवाद my head is eating circles नहीं किया जा सकता, क्योंकि यहाँ 'चक्कर' स्वतन्त्र न होकर 'खा रहा'के साथ मिलकर निकटस्थ अवयव बनाता है या 'चक्कर खा रहा है' का निकटस्थ अवयव है। भाषा सर्वत्र अपने अर्थ स्पष्ट नहीं कर पाती। ऐसे स्थलोंपर निकटस्थ अवयवोंको ठीक-ठीक अलग कर पाना असम्भव हो जाता है। मान लें एक वाक्य है 'सुन्दर पुस्तकें और कापियाँ रखी हैं', यहाँ यह कहना कठिन है कि 'सुन्दर' विशेषण केवल 'पुस्तकें'के लिए है या 'पुस्तकें और कापियाँ' दोनोंके लिए। यदि केवल 'पुस्तकें'के लिए है तो 'निकटस्थ अवयव'का विभाजन होगा—

| सुन्दर पुस्तकें | और कापियाँ |

किन्तु यदि दोनोंके लिए है, तो होगा--

| सुन्दर | पुस्तकें और कापियाँ |

'वाक्य सुर' भी निकटस्थ अवयव है, क्योंकि इसके बिना कभी-कभी ठीक अर्थकी प्रतीति नहीं होती। 'आप जा रहे हैं' वाक्यको 'वाक्य-सुरके' आधारपर प्रश्नसूचक आश्चर्यसूचक या सामान्य आदि कई रूप दिये जा सकते हैं। यहाँ तीनोंमें ही, भिन्न-भिन्न प्रकारके वाक्य-सुर, वाक्यके **निकटस्थ अवयव** हैं।

वाक्योंके प्रकार--भाषाके वाक्योंका कई दृष्टियोंसे वर्गीकरण किया जा सकता है या उनके प्रकार-वर्ग बनाये जा सकते हैं। इनके प्रमुख आधार निम्नांकित हो सकते हैं : (क) आकृतिके आधारपर, (ख) रचना या व्याकरणिक गठनके आधारपर, (ग) भाव या अर्थके आधारपर तथा (घ) क्रियाके होने या न होनेके आधारपर, आदि। नीचे इनके आधारपर वर्गीकरण दिया जा रहा है।

(क) **आकृतिके आधारपर**--भाषाओंके **आकृति मूलक वर्गीकरण** (दे०) में संसारकी भाषाओंपर आकृतिकी दृष्टिसे विचार किया गया है। इस दृष्टिसे वाक्य निम्नांकित चार प्रकारके होते हैं। (१) **अयोगात्मक वाक्य**--अयोगात्मक वाक्यमें शब्द अलग-अलग रहते हैं और उनका स्थान निश्चित रहता है। इसका कारण यह है कि यहाँ सम्बन्धतत्त्व दिखानेके लिए शब्दोंमें कोई परिवर्तन नहीं किया जाता। अतः सम्बन्धका प्राकट्य शब्दोंके स्थानसे ही होता है। यह पद-क्रमकी निश्चितता एकाक्षर परिवारकी चीनी आदि भाषाओंमें प्रधान रूपसे मिलती है। भारोपीय कुलकी आधुनिक भाषाओंमें भी कुछ ऐसी प्रवृत्ति दिखायी दे रही है। संस्कृत, ग्रीक आदि प्राचीन भारोपीय भाषाएँ श्लिष्ट योगात्मक थीं, किन्तु उनसे विकसित हिन्दी अंग्रेजी, आदि आधुनिक भाषाएँ वियोगात्मक हो गयी हैं। अतः पद-क्रम यहां भी कुछ-कुछ निश्चित हो गया है। जैसे अंग्रेजीमें ram killed mohan और mohan killed ram यहाँ इन दोनों वाक्योंमें शब्द एक ही हैं, पर स्थान-परिवर्तनसे अर्थ उलटा हो गया है। हिन्दीमें भी लगभग यही बात है। किन्तु आर्य परिवारकी भाषाएँ अभी चीनी जैसी अयोगात्मक नहीं हैं, अतः पद-क्रम उतने निश्चित नहीं हैं। हिन्दीमें कर्त्ता पहले और क्रिया बादमें आती है, पर इसके अपवाद भी मिलते हैं। इसी प्रकार अंग्रेजीमें प्रश्नवाचक आदि वाक्योंमें यह साधारण नियम टूट जाता है। इससे निष्कर्ष यह निकलता है कि भाषा अयोगावस्थाकी ओर जितनी ही जाती है उसके वाक्योंमें पदक्रमका महत्त्व उतना बढ़ता जाता है। (दे०) **अयोगात्मक भाषा**। (२) **प्रश्लिष्ट योगात्मक वाक्य**--प्रश्लिष्ट योगात्मक वाक्योंके सभी शब्द मिलकर एक बड़ा शब्द बन जाते हैं। ऐसा होनेमें उनका थोड़ा-थोड़ा अंश कट जाता है। उदाहरणार्थ मेक्सिकनमें क = खाना; नकत्ल = मांस, नेवत्ल = मैं। तीनोंको मिलाकर 'नीनकक' = मैं मांस खाता हूँ। इन वाक्योंका विश्लेषण आसानीसे नहीं किया जा सकता, इससे इनके शब्दोंके योगको प्रश्लिष्ट कहा जाता है, जो इनकी इस (प्रश्लिष्ट योगात्मक) संज्ञाका कारण है। (३) **अश्लिष्ट योगात्मक वाक्य**--इन वाक्योंमें प्रत्ययोंकी प्रधानता रहती है। यहाँ शब्द प्रश्लिष्टकी भांति मिलते नहीं पर अयोगात्मककी भांति सम्बन्ध जाननेके लिए स्थानका ध्यान भी नहीं रखना पड़ता, अपितु प्रत्ययोंसे सम्बन्ध प्रकट हो जाता है। इन वाक्योंमें मूल शब्द और सम्बन्ध प्रकट करनेके लिए जोड़े गये प्रत्यय स्पष्ट रहते हैं। इसी कारण इनको पारदर्शक गठनवाले वाक्य कहा जाता है। उदाहरणके लिए देखिये **अश्लिष्ट योगात्मक भाषा** (४) **श्लिष्ट योगात्मक वाक्य**--इन वाक्योंमें विभक्तियोंकी

प्रधानता रहती है। विभक्तियाँ अश्लिष्ट योगात्मक वाक्योंकी भांति प्रत्यय रूपमें लगती है। पर दोनोंमें भेद यह है कि अश्लिष्टमें प्रत्यय स्पष्ट रहते हैं और उनका अस्तित्व खो नहीं जाता, किंतु दूसरी ओर श्लिष्टमें इनका स्पष्ट पता नहीं चलता। जैसे संस्कृतमें प्रथमा एक वचनमें 'सु' प्रत्यय जोड़कर पद बनाया जाता है पर जोड़नेके बाद जो पद बनता है उसमें 'सु' का बिल्कुल पता नहीं चलता--राम + सु = रामः।

कहीं कहीं तो जोड़नेमें प्रत्यय पूर्णतया लुप्त हो जाता है। विद्या+सु=विद्या।

इन चारोंमें कुछके उपभेद भी हो सकते हैं। (दे० **आकृतिमूलक वर्गीकरण** (ख) **रचना या वाक्य-गठनके आधारपर**--इस आधारपर वाक्यके तीन प्रकार होते हैं: साधारण वाक्य, मिश्र वाक्य, संयुक्त वाक्य (१) **साधारण वाक्य** (simple sentence)--ऐसा वाक्य जिसमें केवल एक उद्देश्य (अकेले या उद्देश्यके विस्तारके साथ) तथा केवल एक विधेय (मूल विधेय या विस्तारके साथ) हो। (दे० **उद्देश्य और विधेय**) जैसे **मोहन** आया; **रामका भाई** मोहन आया; या रामका भाई मोहन **अपने घर** आया। इन तीनोंमें, पहलेमें एक उद्देश्य एक विधेय है; दूसरेमें एक उद्देश्य, उसका विस्तार तथा एक विधेय; तथा तीसरेमें एक उद्देश्य, उसका विस्तार, एक विधेय या मूल विधेय तथा उसका विस्तार है। ये सभी साधारण या **सरल वाक्य** हैं। (२) **मिश्र-वाक्य** या **मिश्रित वाक्य** (complex sentence) ऐसे वाक्यको कहते हैं जिसमें कई **उपवाक्य** (दे०) हों, किंतु उनमें केवल एक ही मुख्य या प्रमुख उपवाक्य हो, शेष आश्रित उपवाक्य हों। दूसरे शब्दोंमें जिस वाक्यमें एक प्रमुख उपवाक्य तथा एक या अधिक **आश्रित उपवाक्य** हों उसे मिश्र वाक्य कहते हैं। जैसे रामने कहा कि मैं जाऊँगा। यहाँ रामने कहा मुख्य उपवाक्य है और शेष आश्रित। आश्रित उप वाक्य संज्ञा, विशेषण या क्रियाविशेषण किसी भी प्रकारके हो सकते हैं। मिश्र वाक्यको **जटिल वाक्य** भी कहते हैं। (३) **संयुक्त वाक्य** (compound sentence)--ऐसे वाक्यको कहते हैं, जिसमें एकसे अधिक **प्रमुख उपवाक्य** हों। इसमें आश्रित उपवाक्य हो भी सकते हैं और नहीं भी। संयुक्त वाक्यके प्रमुख उपवाक्य **समानाधिकरण उपवाक्य** (co-ordinate clause) कहलाते हैं। (ग) भाव या अर्थके आधारपर--इस आधारपर वाक्यके अनेकानेक भेद हो सकते हैं, जिनमें प्रधान नीचे दिये जा रहे हैं--(१) निश्चयात्मक या विधानसूचक--राम जाता है। (२) नकारात्मक, निषेधात्मक या निषेधसूचक--राम नहीं जाता है। (३) आज्ञासूचक--यह काम करो। (४) प्रश्नसूचक--तुम्हारा क्या नाम है। (५) विस्मयसूचक--अरे यह क्या किया! (६) संभावनासूचक--वह आया होगा। (७) इच्छासूचक--तुम्हारी उन्नति हो। (घ) **क्रियाके होने या न होनेके आधारपर**--भाषामें क्रियाका स्थान प्रमुख है। वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपमें वाक्यमें अवश्य वर्तमान रहती है। संस्कृत, लैटिन आदि बहुत-सी पुरानी भाषाओंमें तथा बंगला, रूसी आदि आधुनिक भाषाओंमें बिना क्रियाके भी वाक्य मिलते हैं, किन्तु सामान्यतः वाक्य क्रियायुक्त ही होता है। इस प्रकार क्रियाके होने और न होनेके आधारपर वाक्य दो प्रकारके हो सकते हैं: (१) **क्रियायुक्त वाक्य**--जिसमें क्रिया हो। कहना न होगा कि अधिकांश वाक्य इसी प्रकारके होते हैं। (२) **क्रियाविहीन वाक्य**--जिसमें क्रिया न हो। कुछ भाषाओंमें यह प्रवृत्ति विशेष रूपसे मिलती है, यद्यपि कुछ सीमित कालोंमें। यों **समाचारपत्र**के शीर्षकों (देशकी आजादी फिर खटाईमें या कुतुब मीनारसे कूदकर आतमहत्या आदि) **लोकोक्तियों** (जैसे नागनाथ वैसे साँपनाथ, हाथीके दाँत, खानेके और दिखानेके और; या आँखके अंधे नाम नयनसूख आदि),

विज्ञापनों (सुन्दर और मजबूत गाड़ी केवल चार हज़ारमें आदि) तथा काव्य-भाषामें क्रियाविहीन वाक्य प्रायः दिखाई पड़ते हैं।

रचनाके प्रकार--(१) पूर्ण वाक्यात्मक, (२) अपूर्ण वाक्यात्मक रचना (construction) के कई प्रकार होते हैं। जो पूर्ण वाक्यके रूपमें हो उसे '**पूर्ण वाक्यात्मक रचना**' कह सकते हैं। ऐसी रचना या ऐसे वाक्यमें वाक्यके लिए आवश्यक सारे उपकरण (जिनपर पीछे संकेत किया जा चुका है) होते हैं। दूसरी ओर कुछ रचनाएँ **अपूर्ण वाक्यात्मक** होती हैं। इनमें एक या अधिक वाक्य-उपकरणों या पदोंका लोप रहता है। प्रश्नोंके उत्तरमें दी गयी एक या दो शब्दकी रचनाएँ इसी श्रेणी-की होती हैं। जैसे--

(क) राम–मोहन, क्या तुम आज घर जाओगे?
(ख) मोहन—हाँ। (या हाँ, जाऊँगा)

यहाँ पहली रचना पूर्ण वाक्यात्मक है और दूसरी अपूर्ण वाक्यात्मक है। कहना न होगा कि अपूर्ण वाक्यात्मक रचनाका अर्थ समझनेके लिए उसे 'पूर्ण वाक्यात्मक' रचनाका रूप श्रोता या पाठक वातावरण और संदर्भके आधारपर दे लेता है। बिना इसके अर्थकी प्रतीति सम्भव नहीं है। दूसरीमें कोष्टकमें पूर्ण वाक्यात्मक रूप दिया गया है।

रचनाके दो अन्य भेदया प्रकार भी होते हैं: अंतः केन्द्रिक (endocentric) और बहिष्केन्द्रिक (exocentric)। **अन्तःकेन्द्रित रचना** उसे कहते हैं, जिसका केन्द्र उसीमें हो। 'लड़का' और 'अच्छा लड़का' में वाक्यके स्तर-पर कोई अन्तर नहीं है। 'लड़का' आता है भी कह सकते हैं और 'अच्छा लड़का आता है' भी। यहाँ प्रमुख शब्द लड़का है। वाक्यके स्तर-पर व्याकरणिक रचनाकी दृष्टिसे 'अच्छा लड़का' वही है जो 'लड़का' है। यहाँ 'अच्छा लड़का' अन्तः केन्द्रित रचना है। इसके कई रूप हो सकते हैं। (१) विशेषण+संज्ञा (काला कपड़ा, बदमाश आदमी), (२) क्रियाविशेषण+विशेषण (बहुत तेज़, खूब गया), (३) क्रियाविशेषण+क्रिया (तेज़ दौड़ा, खूब खाया), (४) संज्ञा+विशे-षण उपवाक्य (आदमी, जो गया था; फल, जो पकेगा), (५) सर्वनाम + विशेषण उपवाक्य (वह, जो दौड़ रहा था) (६) सर्वनाम+पूर्णसर्गात्मक वाक्यांश (prepositional phrase) those on the plane तथा (७) क्रिया+क्रियाविशेषण उपवाक्य (गया, जहाँ हवाई जहाज गिरा था) आदि प्रमुख हैं। जो रचना ऐसी नहीं होती उसे **बहिष्केन्द्री** या **बहिष्केन्द्रिक** कहते हैं। इसमें अन्तः केन्द्रिककी भांति केवल एक शब्द पूरी रचनाके स्थान-पर नहीं आ सकता या दूसरे शब्दोंमें पूरी रचना एक शब्दकी विशेषता नहीं बतलाती। 'हाथसे' 'इसी प्रकारकी रचना है। इसमें न तो केवल 'हाथ' हाथसेका कार्य कर सकता है, और न 'से',। दोनों ही आवश्यक हैं। किसी-के बिना रचना पूर्ण नहीं हो सकती है। यहाँ रचनाके दोनों घटकोंके काम वाक्यमें पूर्णतः दो हैं। इन दोनों घटकों या अवयवोंमें किसी-का भी केन्द्र इस रचनामें नहीं है (बहिष्केन्द्री)। 'आदमी गया', 'घोड़ेको', 'पानीमें' आदि ऐसी ही रचनाएँ हैं।

वाक्य और स्वराघात--वाक्यके संगीतात्मक और बलात्मक स्वराघातका भी गहरा सम्बन्ध है। अन्य दृष्टियोंसे शब्द, शब्द-क्रम आदिके एक रहनेपर भी इन दोनोंके कारण वाक्यके अर्थमें परिवर्तन हो जाता है। आश्चर्य, शंका, प्रश्न आदिका भाव प्रायः संगीतात्मक स्वराघात या वाक्यसुरसे व्यक्त किया जाता है। 'आप जा रहे हैं' वाक्यको समसुरमें कहें तो यह सामान्य अर्थका बोधक है, किन्तु विभिन्न रूपमें सुर देकर इससे आश्चर्य, शंका, प्रश्न आदिका सूचक बनाया जा सकता है। यही बात बलात्मक स्वराघातके सम्बन्धमें भी है। वाक्यके पद-विशेषपर बल देकर उसका स्थान वाक्यमें प्रधान किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, एक वाक्य 'मैं आज उसे लाठीसे मारूँगा' लिया जा सकता है। इसके पद-विशेषपर बल देनेका एक ढंग तो

है, उसे आरम्भमें रख देना, जिसका उल्लेख ऊपर पद-क्रमके सिलसिलेमें किया जा चुका है। दूसरा ढंग यह भी हो सकता है कि क्रम ज्यों-का-त्यों रहे, केवल बल देकर पदको प्रधान बना दिया जाय। इस प्रकार 'मैं'पर बल देनेका अर्थ होगा 'मैं ही मारूंगा' कोई अन्य नहीं; 'आज'पर बल देनेका अर्थ होगा कि आज ही मारूंगा, कभी और नहीं, 'उसे'-पर बल देनेका अर्थ होगा कि उसे ही मारूँगा, किसी औरको नहीं। इसी प्रकार अन्य पदों-पर बल देनेपर भी अर्थमें अन्तर आ जायेगा।

वाक्य-गठन--वाक्यकी रचना, उसका गठन या उसका विन्यास। (दे० **वाक्य**।

वाक्य-परिवर्तन (syntactical change) --भाषाकी ध्वनि, रूप, शब्द तथा अर्थ आदि इकाइयोंकी तरह वाक्यमें भी परिवर्तन होता रहता है। भाषाके इतिहासपर दृष्टि दौड़ाने-पर यह देखा जाता है कि पदक्रम (word order), अन्वय (concordance) तथा नियंत्रण (government) आदिकी दृष्टि-से वाक्य बनाने या वाक्य-गठनके नियम सर्वदा एकसे नहीं होते। संस्कृतमें नियम कुछ और थे, प्राकृतोंमें कुछ और तथा आधुनिक भाषाओंमें कुछ और हैं। इस परिवर्तनके प्रमुख कारण ये हैं:-(१) **अन्य भाषाका प्रभाव**--जब कोई भाषा दूसरीसे अत्यधिक प्रभावित होती है, तो कभी-कभी उसके वाक्यगठनमें भी प्रभावके कारण कुछ परिवर्तन आ जाता है। हिन्दीपर फ़ारसी और अंग्रेज़ीका प्रभाव पड़ा है, जिसके कारण कई प्रकारके परिवर्तन आ गये हैं। 'कि' लगाकर वाक्य बनानेकी परम्परा फ़ारसी-की देन है। इस प्रभावके पूर्व इस प्रकार-के वाक्योंके उदाहरण नहीं मिलते। अंग्रेज़ीका प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक पड़ा है। आजकल हिन्दीमें कुछ लोग कहते हैं--'रामने कहा कि मैं जाऊँगा' और कुछ लोग कहते हैं-'रामने कहा कि वह जायगा'। कहना न होगा कि इसमें दूसरे प्रकारकी रचना अंग्रेजीकी देन है। आधुनिककालीन हिन्दीमें बहुत बड़े-बड़े वाक्योंकी परम्परा भी अंग्रेजीके प्रभाव-के कारण ही आयी है। कुछ लोग अत्यन्त छोटे-छोटे वाक्य लिखते हैं, वह भी अंग्रेजीकी देन है। कुछ लोगोंके वाक्योंमें क्रियाके बाद कर्म रखनेकी प्रवृत्ति मिलती है, जो स्पष्ट ही अंग्रेज़ीका प्रभाव है। नेहरूजीके वाक्योंमें प्रायः ये बातें पर्याप्त मात्रामें मिल सकती हैं। भारतीय लोगों द्वारा बोली गयी अंग्रेज़ी भी इसी प्रकार कभी-कभी भारतीय भाषाओंके वाक्य-नियमोंसे अनुशासित दिखाई पड़ती है। (२) **ध्वनि-विकासके कारण विभक्तियों-का घिस जाना**--भाषाके विकासके साथ जब सम्बन्ध तत्त्वको स्पष्ट करनेवाली विभक्तियाँ घिस जाती हैं, तो अर्थकी स्प-ष्टताके लिए सहायक शब्द (क्रिया, परसर्ग आदि) जोड़ने पड़ते हैं। इसके कारण भाषा संयोगात्मकसे वियोगात्मकताकी ओर बढ़ने लगती है और उसकी वाक्य-रचना बहुत बदल जाती है। इसका सबसे अधिक प्रभाव तो शब्द-क्रमपर पड़ता है। संयोगात्मक भाषामें शब्द-क्रम वा पद-क्रम बहुत निश्चित नहीं होता। कुछ अपवादोंको छोड़कर शब्द वाक्यमें कहीं रखे जा सकते हैं, किंतु इसके विरूद्ध वियोगात्मक भाषामें शब्द-क्रम बहुत अंशोंतक निश्चित होता है। भारोपीय परि-वारकी अधिकांश आधुनिक भाषाओं (हिन्दी, अंग्रेजी आदि) में यही बात हुई है और वे चीनी आदिकी तरह स्थान-प्रधान या पद-क्रम-प्रधान हो चली हैं। (३) **स्पष्टता या बलके लिए सहायक शब्दोंका प्रयोग**--इसका भी प्रभाव वही होता है, जो ऊपर दूसरेमें कहा जा चुका है। प्राकृत, अपभ्रंशमें इन्हीं दोनों बातोंके कारण विभक्तियोंके न घिसनेपर भी सहायक शब्दोंका प्रयोग किया जाने लगा, जिसका फल यह हुआ कि विभिक्तियाँ धीरे-धीरे समाप्त हो गयीं और वे शब्द परसर्गके रूपमें प्रयुक्त होने लगे। (४) **बोलनेवालों-की मानसिक स्थितिमें परिवर्तन**--इसके परिवर्तनसे अभिव्यंजना-शैली तथा अलंक-रण-शैली प्रभावित होती है। अतः वाक्यकी गठन भी अछूती नहीं रह पाती। जैसे, युद्ध-

कालीन व्याख्यानोंमें वाक्य घुमे-फिरे न होकर सीधे अधिक होते हैं। या, रोकर अपना दुःख सुनानेवाला दुखी, अलंकृत वाक्य नहीं कहता । ज़ोर देनेके लिए उसमें कभी-कभी पुनरावृत्तिकी प्रवृत्ति भी दिखाई पड़ती है।

वाक्य-पृथक्करण---**वाक्य-विश्लेषण** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

वाक्य-बलाघात---**बलाघात** (दे०) का एक भेद ।

वाक्य-भूगोल---(दे०) **भाषा-भूगोल** ।

वाक्यभेद---प्राचीन वैयाकरणोंके अनुसार एक प्रकारका वाक्य-दोष । जिस वाक्यका अर्थ समझनेके लिए उसे दो वाक्योंमें विभक्त करना आवश्यक हो, उसमें यह दोष माना गया है ।

वाक्यमूलक वर्गीकरण---**आकृति मूलक वर्गीकरण** (दे०)का एक अन्य नाम ।

वाक्यरेखा(isosentence isosytagmic) ---भाषाओंके नक्शोंमें वाक्यीय विशेषताएँ दिखलानेवाली रेखा ।

वाक्य-विग्रह---**वाक्य-विश्लेषण** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

वाक्य विचार---(दे०) **वाक्य विज्ञान** ।

वाक्य-विच्छेद---**वाक्य-विश्लेषण** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

वाक्य-विज्ञान(syntax, वाक्य विचार)--- भाषा विज्ञानकी वह शाखा या विभाग, जिसमें **वाक्य** (दे०)का अध्ययन किया जाता है। इस अध्ययनमें वाक्य-रचना या वाक्य-गठनके नियम, वाक्य-रचनामें परिवर्तनके कारण और दिशाएँ, वाक्यके प्रकार, वाक्यमें शब्द-क्रम, पदान्विति, वाक्यमें बलाघात तथा सुर या सुरलहरका स्थान एवं वाक्यके घटक या निकटस्थ अवयव आदिपर विचार किया जाता है तथा इनसे सम्बद्ध सामान्य नियमों या सिद्धान्तोंका निर्धारण होता है। वाक्य-विज्ञान तीन प्रकारका होता है:-(क)**वर्णनात्मक वाक्य विज्ञान** (descriptive syntax)में किसी भाषाके किसी एक कालमें प्रयुक्त वाक्योंका उपर्युक्त दृष्टियोंसे अध्ययन किया जाता है।(ख) **तुलनात्मक वाक्य विज्ञान** (comparative syntax)के अन्तर्गत दो या अधिक भाषाओंके वाक्य-गठन आदिका तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। यह तुलनात्मक अध्ययन वर्णनात्मक या ऐतिहासिक दोनों प्रकारका हो सकता है। (ग) **ऐतिहासिक वाक्य विज्ञान** (historical syntax)में किसी भाषाके वाक्य गठनके विकास या इतिहासका अध्ययन किया जाता है।

वाक्य-विन्यास(syntax)---किसी भाषाके वाक्योंका गठन ।

वाक्य-विश्लेक्षण(analysis या sentence analysis)---वाक्यके अंगों, अवयवों या पदोंको अलग-अलग करना तथा उनका आपसी सम्बन्ध दिखलाना वाक्य-विश्लेषण, **वाक्य-विच्छेद वाक्य-पृथक्करण या वाक्य-विग्रह** कहलाता है। इसमें उद्देश्य (दे०) और उसके विस्तार तथा विधेय (दे०)और उसके विस्तारको अलग करके, फिर उनकी हर इकाईको अलग-अलग दिखलाते हैं, जैसा कि आगेके उदाहरणोंमें दिया गया है।

वाक्य तीन प्रकार (दे० **वाक्यमें वाक्यके प्रकार** उपशीर्षक)के होते हैं:---(१)साधारण वाक्य,(२)मिश्रित वाक्य, (३) संयुक्त वाक्य। इनमें मिश्रित वाक्यमें एक **प्रधान उपवाक्य** (दे० **वाक्यमें उपवाक्य** उपशीर्षक) तथा एक या अधिक **आश्रित उपवाक्य** (दे० **वाक्यमें उपवाक्य** उपशीर्षक) होते हैं तथा संयुक्तमें कम-से-कम दो **प्रधान उपवाक्य** या **समानाधिकरण उपवाक्य** ।

वाक्य-विश्लेषण भारतीय व्याकरणोंमें अंग्रेजी व्याकरणसे आया है। वहाँ तर्कशास्त्रसे इसे व्याकरणमें समाविष्ट किया गया । विस्तारकी दृष्टिसे हिन्दी पुस्तकोंमें वाक्य-विश्लेषणके एकाधिक रूप मिलते हैं। यहाँ उसकी अपेक्षा अधिक प्रचलित रूप दिये जा रहे हैं।

साधारण वाक्यका विश्लेषण निम्न प्रकारसे किया जाता है। वाक्य है:-(१) दशरथके

पुत्र रामने दुष्ट रावणको लंकामें वाणसे मारा। उद्देश्य––मूल उद्देश्य या कर्त्ता है, रामने। उद्देश्यका विस्तार है, दशरथके पुत्र। मूल विधेय या क्रिया है, मारा। विधेय (विधेयका विस्तार)––कर्म है, रावणको। कर्मका विस्तार है, दुष्ट। करण है, वाणसे। अधिकरण है, लंकामें। अधिकरणका विस्तार कुछ नहीं है।

उद्देश्य और विधेयके विस्तार यदि अन्य वाक्योंमें इससे भिन्न हों तो उनके अनुसार ख़ाने घटाये, बढ़ाये या परिवर्तित किये जा सकते हैं। उदाहरणार्थ, यदि वाक्य हो :–– 'दयालु राम दीन भिखारीको अपनी जेबसे पैसे देता है, तो उसका विश्लेषण इस प्रकार होगा :––

उद्देश्य–मूल उद्दश्य या कर्त्ता है, राम। उद्देश्य का विस्तार है, दयालु। मूल विधेय या क्रिया है, होता है। विधेय (विधेयका विस्तार)–कर्म है, पैसे। सम्प्रदान है, भिखारीको। सम्प्रदानका विस्तार है, दीन। अपादान है, जेबसे। अपादानका विस्तार है, अपनी।

मिश्रित वाक्यके वाक्य-विश्लेषणमें साधारण वाक्यके वाक्य-विश्लेषणसे केवल इतना ही अन्तर है कि इसमें सबसे पहले उपवाक्यों-को अलग-अलग कर लेते हैं तथा यदि समुच्चय बोधक अव्यय हो, तो उसे भी अलग दिखलाते हैं। इसके बाद आश्रित उपवाक्यों-का विश्लेषण साधारण वाक्यकी तरह करते हैं, अर्थात् उद्देश्य, उद्देश्यका विस्तार, विधेय, विधेयका विस्तार आदि दिखलाते हैं। उदाहरणके लिए एक वाक्य है :––'कृष्णने, जो भगवान्‌के अवतार थे, अत्याचारी कंसको मथुरामें मारा।' इसका विश्लेषण इस प्रकार होगा––

उपवाक्य है, (१) कृष्णने अत्याचारी कंसको मथुरामें मारा। (२) जो भगवानके अवतार थे। पहलेमें वाक्य भेद है, प्रधान उपवाक्य। दूसरेमें वाक्य भेद है, आश्रित विशेषण उप-वाक्य। योजक, कुछ नहीं है। उद्देश्य––पहले-में कृष्णने। दूसरेमें, जो। उद्देश्य विस्तार, कुछ नहीं है। विधेय (विधेयका विस्तार)––मूल विधेय या क्रिया है, पहलेमें मारा। दूसरेमें, थे। कर्म है, कंसको। कर्मका विस्तार है, अत्याचारी। अधिकरण है, मथुरामें। पूरक है, अवतार। पूरकका विस्तार है, भगवान।

आवश्यकतानुसार इसे घटाया-बढ़ाया या परिवर्तित किया जा सकता है।

संयुक्त वाक्यका वाक्य-विश्लेषण भी मिश्रित वाक्यकी तरह ही होता है। उसे उपवाक्योंमें विभाजित करके, उपवाक्योंका विश्लेषण साधारण वाक्यकी तरह किया जाता है। उदाहरणके लिए एक वाक्य है, 'जब तुम स्कूल गये थे, मैं बाज़ार गया था और अपनी पुस्तक ले आया।' इसका विश्लेषण होगा–– उपवाक्य है, (१) मैं बाजार गया था, (२) मैं अपनी पुस्तक ले आया, (३) जब तुम स्कूल गये थे। वाक्य भेद है, पहले और दूसरेमें प्रधान उपवाक्य। तीसरेमें आश्रित क्रिया विशेषण उपवाक्य। योजक है, और। उद्देश्य-––मूल उद्देश्य है, क्रमशः मैं, (मैं), तुम। उद्देश्यका विस्तार, कुछ नहीं है। विधेय–मूल विधेय या क्रिया है, क्रमशः गया था, ले आया, गये थे। कर्म है, पुस्तक। कर्मका विस्तार है, अपनी। अधिकरण है पहलेमें बाजार और तीसरेमें स्कूल। क्रिया विशेषण है, तीसरेमें जब।

वाक्यके अन्य अवयवोंके आवश्यकतानुसार इसे भी घटाया, बढ़ाया या परिवर्तित किया जा सकता।

वाक्य वैशिष्ट्योत्पन्ना आर्थी व्यंजना––एक प्रकारकी व्यंजना। (दे०) **शब्द-शक्ति**।

वाक्य-संश्लेषण––दो या अधिक साधारण वाक्योंसे **साधारण-वाक्य** (दे०) या **मिश्रित वाक्य** (दे०) बनाना, या दो या अधिक साधारण या मिश्रत वाक्योंसे संयुक्त वाक्य बनाना। यह **वाक्य-विश्लेषण** (दे०)का उलटा है। इसमें दो या अधिक वाक्योंको जोड़-कर एक वाक्य बनाया जाता है।

वाक्य सुरलहर––**सुरलहर** (दे०)का एक भेद।

वाक्यात्मक वर्गीकरण––**आकृतिमूलक वर्गी-**

करण (दे०)का एक अन्य नाम ।

वाक्यांश-संगम--**संगम** (दे०)का एक भेद ।

वाक्यावयव--(दे०) **वाक्यमें निकटस्थ अवयवः** उपशीर्षक ।

वाक्यीय ध्वनिविज्ञान (sentence phonetcis)--ध्वनि-विज्ञानका वह रूप, जिसमें वाक्यमें प्रयुक्त होनेपर शब्दोंमें घटित ध्वनि-परिवर्तनोंका अध्ययन किया जाता है ।

वाक्यीय शब्द (sentence words)--ऐसा शब्द जो एक पूरे वाक्यको प्रकट करे । विस्मयादि बोधक शब्द इसी वर्गके हैं ।

वाक्योंके प्रकार--(दे०) **वाक्यमें वाक्योंके प्रकार** उपशीर्षक ।

वाक्-वैचित्र्य--मुहावरेके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम । (दे०) **मुहावरा** ।

वाक्-व्यवहार--मुहावरेके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम । (दे०) **मुहावरा** ।

वाक्संप्रदाय--मुहावरेके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम । (दे०) **मुहावरा** ।

वाख़ी--ईरानी (दे०) के ग़लचा वर्गकी वख़नमें प्रयुक्त एक भाषा ।

वागडी (wagdi)--(१) **भीली** (दे०)की, मेवाड़ तथा उसके आसपास प्रयुक्त, एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ५,२५, ३७५ थी। (२) कई **बागड़ी** (दे०) बोलियोंका नाम ।

वागवरोध (aposiopesis)--बोलते-बोलते अकस्मात् रुक जाना । जैसे--'मैं समझता हूँ वह. . .।'

वागुड़ी (vaguri)--१८९१ की बंबई जनगणनाके अनुसार एक **बंजारा** (दे०) भाषा । ग्रियर्सनके अनुसार यह **बागड़ी** (दे०)का ही एक नाम है ।

वाग्डी (vagdi)--**बागड़ी** (दे०) का एक अन्य नाम ।

वाग्धारा--मुहावरेके लिए प्रयुक्त एक नाम ।

वाग्योग--मुहावरेके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम । (दे०) **मुहावरा** ।

वाग्योगविद्--(दे०) **वैयाकरण** ।

वाग्रीति--मुहावरेके लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम । (दे०) **मुहावरा** ।

वाघडी (vaghdi)--**बागड़ी** (दे०)का एक अन्य नाम ।

वाघिर्की--सक्कर (सिंध)में प्रयुक्त एक बोली । इसे कुछ लोग **सिंधी** (दे०)की और कुछ **गुजराती** (दे०)की बोली मानते हैं ।

वाचक शब्द--एक प्रकारके शब्द (दे०) **शब्दशक्ति** ।

वाच्य (voice)--इस शब्दका संबंध 'वच्' (कहना, बोलना) धातुसे है, और इसका अर्थ है 'कहने योग्य' । व्याकरणमें वाच्य क्रियाका वह रूप है जिससे क्रियामें कर्ता, कर्म या भावकी प्रधानताके विधानका पता चलता है । सामान्य भाषामें यों कह सकते हैं कि भाषामें कभी तो क्रिया कर्त्ताके अनुसार होती है, कभी कर्मके अनुसार और कभी इन दोनोंमें किसीके भी अनुसार नहीं । यही विधान वाच्य है । ऊपरकी परिभाषा या व्याख्यासे ही स्पष्ट है कि वाच्य तीन प्रकारके हैं (१) **कर्तृवाच्य** (active voice)--जो क्रिया कर्ताके अनुसार होती है, उसे कर्तृ-वाच्य कहते हैं । दूसरे शब्दोंमें जिस क्रियामें कर्ताकी प्रधानता हो उसे कर्तृवाच्य कहते हैं । जैसे राम जाता है, लड़के जाते हैं, सीता पढ़ती है आदि । यहाँ पहली क्रिया रामके अनुसार दूसरी लड़केके और तीसरी सीताके अनुसार है । कर्तृवाच्यको **कर्तरिप्रयोग** भी कहते हैं । (२) **कर्मवाच्य** (passive voice)--क्रिया जब कर्मके अनुसार होती है । दूसरे शब्दोंमें जिस क्रियामें कर्मकी प्रधानता हो । जैसे--रामने रोटी खायी, सीताने एक आम खाया । कुछ लोग इन वाक्योंको कर्तृवाच्य मानते हैं, किंतु इन पंक्तियोंका लेखक इस बातसे सहमत नहीं है । जिससे यह जाना जाय कि वाक्यका उद्देश्य क्रियाका कर्म है, उसे भी कर्मवाच्य कहते हैं । जैसे किताब पढ़ी जाती है । 'आम खाया जाता है' इत्यादि । कर्मवाच्यको **कर्मणिप्रयोग** भी कहते हैं । (३) **भाववाच्य** (impersonal voice)

--इसमें क्रिया न तो कर्त्ताके अनुसार होती है और न कर्मके अनुसार। वह सर्वदा एक-सी रहती है। जैसे--रामने आमको खाया, सीताने आमको खाया, सीताने रोटीको खाया, रामने रोटी को खाया। भाव वाच्यकी एक परिभाषा यह भी दी गयी है कि जिसमें कर्त्ता या कर्मकी प्रधानता न होकर भावकी प्रधानता हो या जिस क्रियासे यह ज्ञात हो कि वाक्यका उद्देश्य क्रियाका कर्त्ता या कर्म नहीं है। हिंदीमें भाववाच्यका प्रयोग असमर्थता दिखलानेके लिए प्रायः होता है। जैसे 'बीमारीके कारण चला नहीं जाता' या 'बुढ़ापेके कारण अब खाया नहीं जाता।' भाववाच्यको **भावेप्रयोग** भी कहते हैं। उपर्युक्त विवेचन प्रमुखतः हिंदीको ध्यानमें रखकर किया गया है। संसारकी कुछ भाषाओंमें **मध्यवाच्य** (middle voice) भी होता है जो कर्तृ वाच्य और कर्मवाच्यके बीचमें होता है। कुछ लोग भाववाच्यको भी 'मिड्ल वायस' कहते हैं।

वाच्य वैशिष्ट्योत्पन्ना आर्थी व्यंजना--एक प्रकारकी व्यंजना। (दे०) **शब्द-शक्ति**।

वाडवल (vadval)--**कोंकणी** (दे०)का, थाना (बंबई) ज़िलेकी वाड्वल नामक जातिमें प्रयुक्त, एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३,५०० थी।

वाणी (vani)--**मारवाड़ी** (दे०)का एक नाम।

वानिको लिपि--वानिको या **बनिया, लंडा** (दे०)का सिंधमें प्रचलित नाम है। अब केवल वहाँके हिन्दू ही इसका प्रयोग करते हैं। मुसलमानोंने प्रायः उर्दू लिपिको अपना लिया है।

वायु (vayu)--**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, तिब्बती-हिमालय शाखाकी, नैपालमें प्रयुक्त, एक पूर्वीय सार्वनामिक हिमालयी भाषा।

वायुमरु लिपि--बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमें-से एक।

वार (war)--**खासी** (दे०)की, खासी तथा जयंतिया पहाड़ियों (असम)में प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ७,००० थी।

वार्ली (varli)--**कोंकणी** (दे०)का खानदेश तथा थाना (बंबई) में प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ९२,००० थी।

वालिंग (waling)--**खंबू** (दे०)की नैपालमें प्रयुक्त एक बोली।

वाल्देन्सिअन--**वउदोइस** (दे०) बोलीका नाम।

वाल्वी (walvi)--**भीली** (दे०)का, बड़ौदामें प्रयुक्त, एक रूप।

विंटुन (wintun)--**कैलीफोर्निअन** (दे०) वर्गकी एक अमेरिकी भाषा। इस भाषाकी प्रमुख बोलियाँ चार हैं। इस भाषाका एक अन्य नाम **कोपेहन** भी है।

विकरण--धातु और लकार या वाच्य आदिके प्रत्ययोंके बीचमें जिस ध्वनि या ध्वनि-समूहका आगम होता है, उसे विकरण कहते हैं। इस प्रकार इसे एक प्रकारका कृत् प्रत्यय कह सकते हैं। विकरण शब्दका प्राचीन प्रयोग परिवर्तनके अर्थसे हुआ है। पाणिनिने इस शब्दका प्रयोग नहीं किया है। संस्कृत धातुओंका गणोंमें विभाजन प्रमुखतः विकरणोंके ही आधारपर किया गया है। उदाहरणार्थ, भ्वादिगणमें शप् (अ) विकरणका प्रयोग होता है, तो दिवादिगणमें श्यन् (य)का और स्वादिमें श्नु (नु)का।

विकल्प--ऐसी स्थिति, जिसमें दो या अधिकमें-से किसी भी एक (नियम, परिवर्तन, रूप या आदेश आदि)को मानना या चुनना ऐच्छिक हो, अथवा कईमें इच्छानुसार एक (नियम, परिवर्तन, रूप या आदेश)को स्वीकार करना या चुनना।

विकार--किसी भी भाषिक इकाई (ध्वनि, रूप, शब्द आदि)में परिवर्तन। प्राचीनतावादी लोग इस परिवर्तनको विकार कहते हैं। कृष्णका कन्हैया ध्वनिपरिवर्तनके कारण हुआ है। प्राचीनतावादियोंके अनुसार इसका कारण ध्वनि विकार है।

विकार संधि—(दे०) **संधि** ।

विकारी अव्यय—(दे०) **अव्यय** ।

विकारी कृदंत—(दे०) **कृदंत** ।

विकास (evolution)—भाषा, ध्वनि, रूप, शब्द, अर्थ, वाक्य, प्रयोग आदिका क्रमिक रूपसे आगे बढ़ना । यह विकास प्राचीनतावादी लोगोंकी दृष्टिसे **विकार** है । इसे **परिवर्तन** भी कहते हैं ।

विकासमूलक भाषा विज्ञान (evolutionary linugistics)—**ऐतिहासिक भाषा विज्ञान** (दे०)के लिए सास्यूर द्वारा प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

विकीर्ण भाषा—**अयोगात्मक भाषा** (दे०)का एक अन्य नाम ।

विकृत अव्यय—(दे०) **अव्यय** ।

विकृत भाषा (corrupt language)—ऐसी भाषा, जो व्याकरणिक दृष्टिसे विकृत या भ्रष्ट हो ।

विकृत रूपवाचक प्रत्यय—एक प्रकारका **प्रत्यय** (दे०) ।

विकृति-प्रधान—**श्लिष्ट-योगात्मक** (दे०)का एक अन्य नाम ।

विक्रांत ऊष्म संधि—एक प्रकारकी **ऊष्म संधि** (दे०) ।

विक्रांत संधि—(दे०) **संधि** ।

विक्षिप्त भाषा (glossolalia)—सामान्य भाषाका पागलों द्वारा तोड़ा-मरोड़ा हुआ रूप, जिसका वे प्रयोग करते हैं ।

विक्षेप लिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक ।

विक्षेपावर्त लिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर' में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक ।

विग्रह—(दे०) **समास** ।

विचिट (wichita)—**दक्षिणी कड्डो** (दे०) उपवर्गकी एक उतरी अमेरिकी भाषा

विचोली (vicholi)—**सिंधी** (दे०)की हैदराबाद (सिंध)में तथा आसपास बोली जानेवाली परिनिष्ठित बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १३,७५,६८६ थी ।

विजातीय शब्द—'विदेशी' (शब्द)के लिए प्रयुक्त एक नाम । (दे०) **शब्द** ।

विटिलिमा (vitilima)—**कोटवाली** (दे०)-का एक अन्य नाम ।

विटोटो परिवार (witoto)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार । इसमें विटोटोके अतिरिक्त मिराना-करपना-तपुयो, ओरेजोन्स, कोयेरुना आदि भाषाएँ आती हैं । इसका क्षेत्र कोलंबिया और पेरु, अर्थात् दक्षिणी अमेरिकाका उत्तरी पश्चिमी भाग है ।

विटोलीआ (vitolia)—**कोटवाली** (दे०)-के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

विदेशीयता (foreignism)—(किसी)भाषामें विदेशी तत्त्व । यह तत्त्व शब्द, रूप, मुहावरा आदि कई प्रकारका हो सकता है । यहाँ विदेशीका अर्थ 'अन्य देशका' न होकर 'अन्य भाषाका' है ।

विदेशी शब्द—एक शब्द-भेद । (दे०) **शब्द** ।

विदेश्याभास—वे शब्द, जो मूलतः 'विदेशी' न हों, किंतु जिनको देखनेपर उनके विदेशी होनेका आभास हो । जैसे 'अखरोट' । (दे०) **शब्द** ।

विद्यानुलोम लिपि—बौद्धग्रंथ 'ललितविस्तर'-में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक ।

विद्युतमुख-मार्ग (electrical vocaltract) —एच० के० डन (dunn) द्वारा बनायी गयी एक मशीन, जिससे स्वरोंका विभिन्न दृष्टियोंसे अध्ययन किया जा सकता है ।

विधाता— **लोट् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

विधानसूचक वाक्य—ऐसा वाक्य, जिसमें किसी निश्चित बातकी सूचना हो, जैसे—'राम दौड़ रहा है ।'

विधानार्थक शब्द—एक प्रकारके **शब्द** (दे०) ।

विधि—**लिङ्-लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

विधि लिङ—**लिङ्लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

विधि-वर्तमान—(दे०) **काल** ।

विधेय--(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक ।

विधेयक(copula)किसी वाक्यमें उद्देश्य और विधेयमें संबंध दिखानेवाला शब्द ।

विधेयके विस्तार--(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक ।

विधेय-विशेषण--(दे०) **विशेषण** ।

विधेय-विस्तारक--(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक ।

विध्यर्थ--(दे०) **अर्थ** ।

विध्यर्थक कृदंत--(दे०) **कृदंत** ।

विध्वनि(variphone)--यदि कोई व्यक्ति एकसे अधिक बार कोई शब्द, मान लें 'कमल' कहे, तो हर-बार इसका 'क' कुछ-न कुछ भिन्न होगा । इन विभिन्न क ओका सामूहिक नाम 'कं विध्वनि' है। हर भाषाके हर शब्दकी हर ध्वनिके संबंधमें यह लागू होता है । इसके लिए पामरने **मुक्त ध्वनिग्राम**(free phoneme) का प्रयोग किया है । कुछ अन्य प्रकारके अंतरोंवाली ध्वनियोंके सामूहिक नामके रूपमें भी कभी इसका प्रयोग होता है ।

विनयबोधक अव्यय--(दे०) **मनोविकार बोधक अव्यय** ।

विनिमय वाचक संबंधसूचक अव्यय--(दे०) **संबंधसूचक अव्यय** ।

विन्नेबगो (winnebago)--**चिवेरे**(दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

विपर्यय(metathesis)--ध्वनि-परिवर्तनकी एक दिशा(दे०) । **ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ**। 'विपर्यय'का अर्थ है उलट जाना । शब्दमें जब ध्वनियाँ एक दूसरेके स्थानपर आ जाती हैं या आपसमें विपर्यय कर लेती हैं, तो इस परिवर्तनको **ध्वनि-विपर्यय** या विपर्यय कहते हैं । जैसे 'मतलब'का 'मतवल', लखनऊका नखलऊ या वाराणसीका बनारस । इसके अन्य नाम **वर्ण-व्यत्यय**, **वर्ण-विपर्यय**, **अक्षर-विपर्यय**, स्थिति-परिवृत्ति भी हैं । पंतजलिने महाभाष्यमें तथा हेमचन्द्रने अपने प्राकृत व्याकरणमें इसे केवल **व्यत्यय** कहा है । जब स्वरका विपर्यय होगा तो उसे **स्वर-विपर्यय** [जैसे, अफ्रीकी भाषा इडोमें lie बनाना]-का [lei], और जब व्यंजनका होगा तो उसे **व्यंजन-विपर्यय** कहते हैं। यदि पास-पास-की ध्वनियोंका विपर्यय होगा तो उसे **पार्श्ववर्ती ध्वनि-विपर्यय** कहते हैं । जैसे, 'चिह्न'से 'चिन्ह' । यहाँ 'न्' 'ह' पास-पास थे । उनमें विपर्यय हो गया । यदि दूरकी ध्वनियोंमें विपर्यय हो तो उसे **दूरवर्ती ध्वनि-विपर्यय** कहते हैं । जैसे 'चाकू'से 'काचू' । कभी-कभी **अक्षर-विपर्यय** भी हो जाताहै । जैसे, 'मतलब'-का 'मतवल' । यहाँ अक्षरका अर्थ है व्यंजन और स्वरका मिला रूप । यदि केवल एक या अधिक ध्वनियाँ शब्दमें एक स्थानसे दूसरे स्थानपर आ जायँ, किंतु उनके स्थानपर कोई दूसरी ध्वनि न जाय तो विपर्यय एकांगी होता है , इसीलिए इसे **एकांगी विपर्यय** कहते हैं । जैसे, पुर्तगाली भाषामें festra का fresta (= खिड़की) 'स्पूनरिज्म भी एक प्रकारका विपर्यय है ।(दे०) **आद्य शब्दांश विपर्यय** । इस तरह विपर्ययके कई भेद-विभेद हो सकते हैं ।

विप्रकर्ष(dialresis)--**मध्यस्वरागम**(दे०)-का एक अन्य नाम ।

विभक्त व्यंजन--**पार्श्विक**(दे०)का एक नाम ।

विभक्ति--(दे०) **संबंधसूचक अव्यय** ।

विभक्ति-प्रधान--**श्लिष्ट योगात्मक** (दे०)का एक नाम ।

विभक्तियोंके अवशेषका नियम--**बौद्धिक-नियम** (दे०)का एक भेद ।

विभागबोधक संख्यावाचक विशेषण--(partitive numeral)--ऐसा संख्यावाचक विशेषण, जो 'कौन-सा भाग है'; इस प्रश्नका उत्तर दे ।

विभाजक अव्यय--(दे०) **समुच्चयबोधक अव्यय** ।

विभाषा--(१) **बोली** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम । (२) एक भाषाके अन्तर्गत मानी जानेवाली कईउपभाषाएँ । जैसे, हिन्दी-की पूर्वी हिन्दी, पश्चिमी हिन्दी आदि ।(३)

संस्कृत व्याकरणोंमें विभाषाका प्रयोग 'विकल्प' तथा 'निषेध' या 'प्रतिशेष' अर्थमें हुआ है। कहा गया है—'प्रतिषेध विकल्पयोर्विभाषेति संज्ञा भवति।' पाणिनिका सूत्र 'न वेति विभाषा' (अष्टाध्यायी, १:१:४४) भी इसी ओर संकेत करता है। अर्थात् 'न' (=निषेध) वा (=विकल्प), दोनों ही की 'विभाषा' संज्ञा है। पाणिनिके बहुतसे सूत्र विभाषा-विधायक हैं। उदाहरणार्थ' 'विभाषा श्वेः' (६:१:३०) या 'विभाषाऽकर्मकात्' (१:३:८५) आदि। विभाषाके तीन भेद माने गये हैं (दे०)—महाभाष्य, १:१:४४ पर या दयानन्द सरस्वतीका अष्टाध्यायी भाष्य (पृ० ६१, प्रथम संस्करण)। (४) कभी-कभी केवल विकल्प या ऐच्छिकके लिए भी विभाषाका प्रयोग होता है। जैसे—किसी व्याकरणिक नियमके विकल्पसे या ऐच्छिक रूपसे लागू होनेको विभाषा कहते हैं। यह चौथा अर्थ तीसरेका एक अंश मात्र है।

विभ्रष्ट—'तद्‌भव' शब्दोंके लिए भरत मुनि द्वारा प्रदत्त एक नाम। (दे०) **शब्द**।

विमिश्रित लिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

वियोगात्मक (analytic)—(दे०) **वियोगात्मक भाषा**।

वियोगात्मक अन्तर्मुखी श्लिष्ट (analytic)—**अन्तर्मुखी-श्लिष्ट**। (दे०) का एक वर्ग।

वियोगात्मक बहिर्मुखी-श्लिष्ट—**बहिर्मुखी-श्लिष्ट** (दे०) का एक भेद।

वियोगात्मक भाषा (analytic language)—ऐसी भाषा, जिसमें व्याकरणिक संबंधोंको स्पष्ट करनेके लिए प्रत्ययों या विभक्तियों आदिको (संयोगात्मक भाषाकी भांति) अर्थ तत्त्व व्यक्त करनेवाले शब्दोंमें न जोड़ा जाय, अपितु सहायक क्रिया, परसर्ग, पूर्वसर्ग आदि सहायक शब्दोंके द्वारा उन संबंधोंको स्पष्ट किया जाय। संस्कृत एक संयोगात्मक भाषा थी, उसकी तुलनामें हिन्दी वियोगात्मक भाषा है। इसे अयोगात्मक भाषा भी कहते हैं।

वियोगात्मक रूप—(दे०) **संयोगात्मक रूप**।

वियोजक अव्यय—(दे) **समुच्चयबोधक अव्यय**।

वियोजन (disjunction)—दो या अधिक इकाईसे मिलकर बनी किसी भी भाषिक इकाई (शब्द, ध्वनि आदि) को अलगाना या वियोजित करना।

वियोट (wiyot)—**कैलीफ़ोर्नियन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसका एक अन्य नाम **विशोकन** भी है।

विराम—'विराम'का शाब्दिक अर्थ है 'रुकना'। बोलनेमें शब्दों, वाक्यांशों या उपवाक्यों आदिके बीचमें हम थोड़ी-थोड़ी देरके लिए रुकते हैं, यही विराम है। वस्तुतः बोलनेमें ध्वनियोंका जितना महत्त्व है, उतना ही महत्त्व इस रुकने या 'मौन'का भी है। 'रुको मत जाओ'में यदि 'रुको'के बाद 'विराम' हो तो एक अर्थ होगा और 'मत'के बाद हो तो दूसरा अर्थ। अधुनिक भाषा-विज्ञानमें **संगम** (दे०) या juncture भी यही है। यह 'विराम' या 'संगम' भी एक प्रकारका **ध्वनिग्राम** (दे०) है। बोलनेमें जो 'मौन' या 'ध्वन्यभाव' होता है, लेखनमें उसीको विराम-चिह्नों द्वारा व्यक्त करते हैं। प्राचीन भारतमें विरामोंका बहुत सूक्ष्म अध्ययन किया गया था। आधुनिक विराम चिह्नोंका इतिहास १४वीं सदीसे आरम्भ होता है। उसके पूर्व पूर्ण विराम या अर्द्ध विराम आदि कुछ ही विराम-चिह्न थे। भारतमें प्राचीनकालमें 'दंड' 'दो दंड', 'बिंदु', 'लघु वृत्त' आदिका प्रयोग होता था। आज पूरे विश्वमें विराम-चिह्नोंकी व्यवस्था एक जैसी नहीं है। हिन्दी विराम-चिह्न, अंग्रेजीसे आये हैं। हिन्दीमें प्रयुक्त प्रमुख विराम चिह्न ये हैं:—(१) **अल्पविराम या कॉमा** (,)—बोलनेवाला जहाँ बहुत थोड़ी देरके लिए रुकता है, यह चिह्न लगाया जाता है। जैसे लो, मैं चला। (२) **अर्द्ध-विराम** (;)—जहाँ बोलनेवाला अल्प विरामकी अपेक्षा कुछ अधिक देरतक ठहरता है। जैसे—वे चले तो गये थे, पर यह समाचार

सुनकर लौट आये । (३) **पूर्ण विराम** (।) --वाक्यके अन्तमें लगाया जाता है । छंदमें वाक्यकी पूर्णता-अपूर्णतापर ध्यान न देकर इसका प्रयोग पद या पंक्तिके अन्तमें किया जाता है और छंदान्तमें एक पाईके स्थानपर दो पाइयाँ लगाते हैं । (४) **प्रश्नसूचक चिह्न** (?)--प्रश्नसूचक वाक्यके अन्तमें पूर्ण विरामके स्थानपर इसे लगाते हैं। (५) **विस्मयसूचक चिह्न** (!)--विस्मयसूचक वाक्योंके अन्तमें पूर्ण विरामके स्थानपर, सम्बोधित संज्ञाके बाद तथा विस्मयादिबोधक अव्ययके उपरांत इसे लगाते हैं । (६) **विवरण-चिह्न** (:--)--जहाँ कोई विवरण देना हो, इसका प्रयोग करते हैं । जैसे प्रमुख बातें निम्नांकित हैं :--। (७) **अवतरण चिह्न** ("--", '--')--जब किसीके शब्द उद्धृत करने हों । विशिष्ट शब्दोंको पूरे वाक्यमें विशिष्टता प्रदान करने या उसपर पाठकका ध्यान विशेष रूपसे आकर्षित करनेके लिए भी (प्रायः इकहरे चिह्न) इसका प्रयोग करते हैं। जैसे--'विराम'का अर्थ है 'रुकना'। (८) **योजक या संयोजक-चिह्न** (-)--दो शब्दोंका संबंध दिखानेके लिए यह प्रयुक्त होता है । जैसे डाक-घर । कभी-कभी विराम-चिह्नोंका प्रयोग वस्तुतः विरामके लिए न होकर अन्य विशेषताओं या स्पष्टता आदिके लिए भी होता है ।

विराम सुर (pause pitch)--वाक्यमें विरामके पूर्व सुरमें चढ़ाव ।

विरोध (opposition contrast)--**ध्वनिग्राम विज्ञान** (दे०) या **रूपग्रामविज्ञान** (दे०) में प्रयुक्त एक पारिभाषिक शब्द । ध्वनिग्राम विज्ञानमें यदि संध्वनियोंमें आपसमें विरोध हो तो वे अलग-अलग ध्वनिग्राम होती हैं, किंतु यदि उनमें विरोध नहीं है, अर्थात् वे **परिपूरक वितरण** (दे०) में हैं तो एक ही ध्वनिग्रामकी संध्वनियाँ होती हैं । contrast, अर्थात् हर भाषाका एक ध्वनिग्राम, दूसरे ध्वनिग्रामका विरोधी होता है । किसी शब्दमें-से यदि एक ध्वनिग्रामको हटाकर दूसरा रख दें, तो अर्थ वही नहीं रहेगा । या तो वह निरर्थक (जैसे--**दाम, डाम,**) हो जायगा, या उसका अर्थ बदल (जैसे--**दाम, नाम**) जायगा । यदि ऐसा नहीं होता, अर्थात् न तो शब्द निरर्थक बनता है और न उसका अर्थ बदलता है तो यह माना जायगा कि वे अलग-अलग ध्वनिग्राम नहीं हैं, अर्थात् उनमें विरोध नहीं हैं, अपितु वे संध्वनियाँ हैं । रूपग्राम विज्ञानमें भी इसी प्रकार विरोध या अविरोध होता है । विरोध प्रमुखतः दो प्रकारका होता है :-(१) **द्विपार्श्व विरोध** (bilateral opposition)--जिसमें विरोध केवल एक आधारपर हो; (२) **बहु-पार्श्व विरोध** (multilateral)--जिसमें विरोध एकाधिक आधारोंपर हो ।

विरोधदर्शक अव्यय--(दे०) **समुच्चय-बोधक अव्यय** ।

विरोधवाचक संबंधसूचक अव्यय--(दे०) **संबंधसूचक अव्यय** ।

विरोस्--मूल भारोपीय लोगोंका एक कल्पित नाम । (दे०) **भारोपीय परिवार** ।

विरोस् परिवार--**भारोपीय परिवार** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम । इस नामका सुझाव प्रस्तुत पंक्तियोंके लेखकका है ।

विलयन (absorption)--किसी परवर्ती या पूर्ववर्ती ध्वनिमें किसी ध्वनिका विलीन हो जाना ।

विलायती (vilayati)--**पश्तो** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

विलेल-चुलुपी--(vilela-chulupi) **दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार। इसका अन्य नाम **लुले** (lule) भी है । इस परिवारमें लगभग १९ भाषाएँ हैं; जिनमें लुले (इसकी प्रमुख बोली तथा ओरिस्तेने) विलेला (प्रमुख बोलियाँ : अटलला इपा, टेकेट आदि) प्रमुख हैं । इसका मूलस्थान अर्जेन्टाइना चाको था, अब सालाडो नदीके आसपास हैं ।

विलेला (vilela)--दक्षिणी अमेरिकाके **विलेल-चुलुपी परिवार** (दे०) की एक

भाषा। इसकी प्रमुख बोलियाँ अटलला इपा, टेकेट आदि हैं।

विलोप--लोप(दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

विलोम--(दे०) **विलोमार्थी**।

विलोमार्थी (antonym)--ऐसा शब्द जिसका अर्थ किसी अन्य शब्दके अर्थका ठीक उलटा हो। जैसे 'भला'की दृष्टिसे 'बुरा' विलोमार्थी शब्द है। पर्यायवाची शब्द इसका ठीक उलटा है।

विवरण चिह्न--एक चिह्न। (दे०) **विराम**।

विवार--प्राचीन भारतीय वैयाकरणोंके अनुसार एक बाह्य प्रयत्न जिसमें स्वर-तंत्रियाँ एक दूसरेसे दूर रहती हैं। 'कंठबिलस्य विकासः विवारः'या 'विवरण कंठस्य विस्तरणम्'। 'सएव विवाराख्यः बाह्यः प्रयत्नः।' अघोष ध्वनियोंका उच्चारण इसी स्थितिमें होता है।

विवृत--(१) स्वरोंके उच्चारणमें ऐसी स्थिति जब तालु और जीभके मध्य काफ़ी अंतर रहता है। इसके सामान्यतः विवृत (open) तथा अर्द्धविवृत (half open) दो भेद किये जाते हैं। (दे०)स्वरोंका वर्गीकरण तथा मानस्वर (२) प्राचीन भारतीय वैयाकरणोंके अनुसार एक अभ्यंतर प्रयत्न, जिसमें तालुसे, जीभका वह भाग, जो करणका काम करता है, दूर रहता है।

विवृत कंठ--अघोष (दे०) व्यंजनोंके लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम। इनके उच्चारणके समय स्वरयंत्र मुखके विकृत होनेके कारण इन्हें विवृतकंठ कहा गया है।

विवृत स्वर--एक प्रकारका स्वर। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण** तथा **मानस्वर** उपशीर्षक।

विवृत्ति--(दे०) **संधि**।

विशिष्ट चिह्न (diacritic mark)--ऐसे चिह्न, जिन्हें किसी अक्षर (latter) पर (नीचे, ऊपर, आगे, पीछे) लगाकर उससे विशेष प्रकारकी ध्वनिका द्योतन कराया जाता है। जैसे रोमन a सामान्यतः अ, आ दोनोंका काम करता है। निश्चितता लानेके लिए a पर--विशिष्ट चिह्न लगाकर ā बना लिया गया है। इस ā का प्रयोग केवल आ के लिए होता है। इसी प्रकार ऑ र प आदिमें,--विशिष्ट चिह्न हैं। इन्हें **विशेषक चिह्न** भी कहते हैं।

विशिष्ट भाषा(special language)--ऐसी भाषा जो किसी विशिष्ट वर्गमें या किसी विशिष्ट अवसरपर प्रयुक्त होती हो। (दे०)**भाषाके विविध रूप**।

विशिष्ट शब्द (jargon)--ऐसे शब्द जो विशेष व्यवसाय, स्तर, वर्ग आदिके लोगोंको ज्ञात हों किंतु, सामान्य लोग जिन्हें न समझ सकें।

विशेषण--(adjective) जो शब्द किसी संज्ञाकी कोई विशेषता बतलावे उसे विशेषण कहते हैं। अंग्रेज़ी 'ऐडजक्टिव' लैटिन adjectives से है जिसका मूलार्थ है 'जो जोड़ा जाय' अर्थात् जो संज्ञाके गुणोंका बोध करानेके लिए जोड़ा जाता है। श्रीकामता प्रसाद गुरुके अनुसार 'जिस बिकारी शब्दसे संज्ञाकी व्याप्ति मर्यादित हो उसे विशेषण कहते हैं।' गुरुजीकी यह परिभाषा बहुत पूर्ण नहीं है। 'काला घोड़ा'में' काला' विशेषण, 'घोड़ा'की व्याप्ति मर्यादित कर रहा है, किंतु 'वीर शिवाजी'में 'वीर' विशेषण 'शिवाजी'की व्याप्ति मर्यादित नहीं कर रहा है। इस प्रकार विशेषण भाव या जातिवाचक संज्ञाकी व्याप्ति तो प्रायः मर्यादित कर सकता है, किंतु व्यक्तिवाचककी नहीं। विशेषण जिस शब्दकी विशेषणता बतलाता है, उसे **विशेष्य** कहते हैं। 'काला घोड़ा', 'वीर शिवाजी', 'अच्छा लड़का' 'एक रुपया' में काला, वीर, अच्छा, एक, विशेषण हैं और 'घोड़ा' शिवाजी, लड़का और रुपया विशेष्य।

विशेषणके प्रमुखतः चार भेद हैं:--(१) **गुणवाचक विशेषण** (adjective of quality) जो किसी संज्ञाके गुणका बोध करावे। जैसे--अच्छा लड़कामें 'अच्छा'। गुणवाचकको **गुणबोधक** या **गुणसूचक** आदि भी कहते हैं। प्रमुखतः इसके छः उपभेद

होते हैं। (क) **कालवाचक** (adjective (of time)--जो काल या समय दर्शित करे। जैसे--**अगला** महीना, **पिछला** हफ्ता, **वर्तमान** स्थिति। यहाँ अगला, पिछला, वर्तमान कालवाचक हैं। इसे **कालदर्शी, काल-बोधक** या **कालसूचक** आदि भी कहते हैं। (ख) **स्थानवाचक** (adjective of place)--जो स्थानका बोध करावे। जैसे-**बाहरी** आदमी, **भीतरी** घर, **बनारसी** साड़ी। इसे स्थानबोधक, स्थानदर्शी या स्थानसूचक आदि भी कहते हैं। (ग) **आकार-वाचक** (adjective of form) जो आकारका बोध करावे। जैसे **गोला** मुँह, **चौकोर** मेज़। इसे आकारदर्शी, आकारबोधक या आकारसूचक आदि भी कहते हैं। (घ) **वर्णवाचक** (adjectiue of colour)--जो रंगका बोधक हो। जैसे--**लाल** कपड़ा, हरी पत्ती। इसे वर्णदर्शी, वर्णबोधक, वर्ण या रंग सूचक आदि भी कहते हैं। (ङ) **दशावाचक** (adjective of condition)--जो दशा या स्थिति बतलावे। जैसे-**रोगी** लड़का, **निर्धन** व्यक्ति। इसे दशादर्शी, दशाबोधक या दशासूचक आदि भी कहते हैं। (च) **गुणवाचक** (adjective of quality) जो गुण (quality या attribute) का सूचक हो। जैसे **अच्छा** लड़का, **बुरा** नौकर। इसे गुणदर्शी गुणबोधक आदि नामोंसे भी अभिहित किया जाता है। जैसा कि कहा जा चुका है, ये छः प्रमुख भेद हैं। विस्तारसे लेने-पर इसके **स्वभाव-बोधक** (adjective of temper) (दुष्ट, सीधा), **भारबोधक** (adjective of weight) (भारी, हल-का) तथा **स्वादबोधक** (adjective of teste), (नमकीन, तिक्त) तथा **क्रियाबो-धक** (adjective of action) (चलती गाड़ी, सोती स्त्री, दौड़ता लड़का) आदि-इत्यादि अनेक भेदोपभेद हो सकते हैं। कुछ लोगोंने भारतीय साहित्य, पंजाबी भाषा, जापानी खिलौने जैसे उदाहरणोंमें भारतीय, पंजाबी, जापानीको **संज्ञावाचक विशेषण** (nominal adjective) **नामसे अलग** रखा है। इस नामकरणका कारण यह है कि इस प्रकारके विशेषण संज्ञा-ओंके आधारपर बनते हैं। कहना न होगा कि इन्हें भी उपर्युक्त भेदोंकी भांति गुणवाचक-के अंतर्गत (स्थानवाचक उपभेदमें) ही रखा जा सकता है। (२) **परिमाणवाचक विशेषण** (adjective of quantity)--जिस विशेषणसे किसी संज्ञाकी नाप-तौल विषयक विशेषताका बोध हो। जैसे, चार सेर अनाज, थोड़ा दूध। इसे **परिमाणबोधक** या **परिमाणसूचक** आदि भी कहते हैं। इसके दो उपभेद हैं: (क) **निश्चित परिमाणवाचक** (definite adjective of quantity) –जिससे नाप या तौलके निश्चित परिमाणका बोध हो। जैसे, **चार गज** ज़मीन, **पाँच सेर** दूध, **एक तोला** सोना। (ख) **अनिश्चित परिमाणवाचक** (indefinite adjec-tive of quantity)--जिससे नाप या तौलका निश्चित बोध न हो। जैसे **सारा** आटा, **कुछ** घी, **थोड़ी** ज़मीन आदि। इन दोनों उपभेदोंको भी वाचकके अतिरिक्त बोधक, सूचक,--वाची तथा--दर्शी आदि लगाकर भी अभिहित करते हैं। कम दूध, जैसे उदाहरणोंमें 'कम' ऋणात्मक अनि-श्चित परिमाणवाचक विशेषण है। इसे ऊनवाचक भी कहते हैं। (३) **संख्या-वाचक विशेषण** (adjective of num-ber या numeral adjective)--जिस विशेषणसे वस्तुओंकी संख्याका बोध हो। जैसे **चार** आदमी, **थोड़े** आम। इसे **संख्याबोधक, संख्यासूचक, संख्यादर्शी, गणनाबोधक, गणनावाचक** आदि कई अन्य नामोंसे भी अभिहित किया गया है। इसके प्रमुख भेद दो हैं: (क) **निश्चित संख्यावाचक विशेषण** (definite adjective of number)–जिससे निश्चित संख्याका बोध हो। जैसे चार आदमी, **एक** देश। (ख) **अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण** (indefi-nite adjective of number)--

जिससे संख्याका बोध निश्चित न हो। जैसे थोड़े आदमी, कुछ देश। इनमें दूसरेके प्रायः उपभेद नहीं किये जाते (यों किये जा सकते हैं), किंतु प्रथम अर्थात् निश्चित संख्यावाचकके निम्नांकित सात भेद होते हैं: (अ) **पूर्ण संख्यावाचक विशेषण** (cardinal numerals)--जिनसे पूरे अंकोंका बोध हो। जैसे **एक** आदमी, **दो** पुस्तकें, तीन कमरे। इसे **गणबोधक, पूर्ण संख्याबोधक, पूर्ण संख्यासूचक पूर्णांक बोधक, पूर्णांकवाचक, पूर्णांकिसंख्यावाचक, गणनात्मक** आदि अनेक नामोंसे अभिहित किया गया है। (आ) **अपूर्ण संख्यावाचक विशेषण** (fractional numerals)—जिनसे पूर्ण संख्या वाचकके विरुद्ध अधूरी या अपूर्ण संख्याओंका बोध हो, जैसे **आधा** मकान, **डेढ़** रुपये, **ढाई** वर्ष। इसे अपूर्णक **संख्या, अपूर्णांक बोधक, अपूर्णांक वाचक, भिन्नात्मक संख्यावाचक** आदि कई नामोंसे पुकारा गया है। (इ) **क्रम संख्यावाचक या क्रमवाचक विशेषण** (ordinal numerals)–जिनसे संज्ञाका क्रमके अनुसार बोध हो। जैसे **पहला** लड़का, **दूसरी** पुस्तक, **तीसरी** गाड़ी। इसे **क्रमबोधक, क्रमांकबोधक, क्रमसंख्यावाचक, क्रमात्मक संख्यावाचक** आदि भी कहा गया है। (ई) **आवृत्तिसंख्यावाचक** (proportional numerals)–ये विशेषण 'गुना'का बोध कराते हैं, अर्थात् एक वस्तु दूसरीसे कै गुनी (कितनी गुनी) है। जैसे **दुगुना** पानी, **चौगुनी** आय। 'गुना' आवृत्ति है। इसीलिए इसे **आवृत्ति वाचक** कहा गया है। कुछ लोगोंने इसे **समानताबोधक** (शोलवर्ग–concise hindi grammer), **समानुपाती-संख्या वाचक विशेषण** (डॉ० उदयनारायण तिवारीः हिन्दी भाषाका उद्गम और विकास) भी कहा है। इसके अन्य नाम **आवृत्तिबोधक, आवृत्ति सूचक** या **आवृत्ति संख्यावाचक** आदि हैं। **गुणात्मक संख्यावाचक** (denominative) जैसे **दो बार** सात (= १४) या दो **दूना** चार भी इसीके अंतर्गत माना जाना चाहिये। (उ) **समुदाय संख्या वाचक** (collective numeral)–जिससे संख्याके समुदायका बोध हो। जैसे **दोनों** आदमी, **तीनों** लड़के, **चारों** मकान। सैकड़ा, कोड़ी, दर्जन, चौका, जोड़ा, सतसई भी इसीके अंतर्गत आते हैं। इसे **समूह** वाचक, **समुदाय वाचक, समुदाय बोधक** आदि अन्य नामोंसे भी अभिहित किया जाता है। (ऊ) प्रत्येक **वाचक**--इससे कई वस्तुओं या व्यक्तियोंमें प्रत्येकका बोध होता है। जैसे हर आदमी, प्रत्येक वस्तु, **प्रतिवर्ष**। इसे **प्रत्येक बोधक** या प्रत्येक **सूचक** या **प्रत्येक वाची** आदि भी कहते हैं। (ऋ) **ऊनवाचक**--इससे संख्यामें ऊन (= कम), ऋण या कमीका बोध होता है। जैसे **कम** आदमी, **एक कम** पचास। इसे **ऋणात्मक संख्यावाचक**, **ऊनबोधक**, **ऊनवाची** आदि भी कहते हैं। (४) **सार्वनामिक विशेषण** (pronominal adjective)--निजवाचक तथा पुरुषवाचक सर्वनामोंको छोड़कर शेष प्रायः सभीका प्रयोग विशेषणके रूपमें भी होता है। इस प्रकार सर्वनाम जब विशेषणके रूपमें प्रयुक्त होते हैं, तो उन्हें सार्वनामिक विशेषण कहते हैं। जब ये शब्द अकेले आते हैं, तो सर्वनाम होते हैं किंतु जब किसी संज्ञाके साथ आते हैं तो सार्वनामिक विशेषण होते हैं। जैसे, **यह** लड़का, **वह** आदमी, **क्या** काम, **जो** चीज़। इस विशेषणके व्युत्पत्तिके आधारपर दो भेद होते हैं: (क) **मूल सार्वनामिक विशेषण**--जो बिना किसी रूपान्तरके प्रयोग होते हैं। जैसे यह, वह, जो, कौन, क्या। (ख) **साधित सार्वनामिक विशेषण** या **यौगिक सार्वनामिक विशेषण**--उन्हें कहते हैं, जो मूल सर्वनामोंमें कुछ योग या जोड़कर बनाये जाते हैं। जैसे, यहसे **ऐसा** या **इतना**; वहसे **वैसा** या **उतना**; जोसे **जैसा** या **जितना**; या कौनसे **कैसा** या **कितना**। ये 'ना'वाले रूप परिमाणवाचक विशेषणके रूपमें प्रयुक्त होते हैं और '-स'वाले रूप **प्रकारवाचक विशेषण**के रूपमें। जैसे कितना आटा, ऐसा आदमी। कितने लड़के, इतने आम जैसे उदाहरणोंमें इनका संख्यावाचक

विशेषण रूपमें भी प्रयोग होता है। इस तरह साधित सार्वनामिक विशेषणके दो भेद हैं :– (अ) **प्रकार वाचक**––जैसे कैसा, वैसा आदि (आ) **परिमाणवाचक**––इतना, जितना, कितना आदि। दो या अधिक व्यक्तियों या वस्तुओंके गुणावगुण आदिकी **तुलना** (comparison) भी विशेषणके अंतर्गत आती है। जैसे वह लड़का **अच्छा** है; वह लड़का **उससे अच्छा** है; वह लड़का **सबसे अच्छा** है। इसी आधारपर तुलनाकी दृष्टिसे विशेषणों-की तीन अवस्थाएँ होती हैं:–(१) **मूलावस्था** (positive degree)––यह विशेषणकी सामान्य अवस्था है। इसमें तुलना आदि नहीं होती। इसमें सामान्य विशेषणका केवल प्रयोग होता है। जैसे, 'राम सुन्दर है', 'श्याम बुरा है' या 'पुस्तक श्रेष्ठ है'। मूला-वस्थाको **सामान्यावस्था** भी कहते हैं। (२) **उत्तरावस्था** (comparative degree)––इस अवस्थामें दो व्यक्तियों या वस्तुओंका मिलान करके एकको बढ़ाकर या घटाकर बतलाया जाता है। जैसे, 'राम मोहनसे सुन्दर है', 'श्याम कृष्णसे बुरा है', 'यह पुस्तक श्रेष्ठतर' है। इसे **तुलनावस्था** या **तरावस्था** भी कहते हैं। (३) **उत्तमावस्था** (superlative degree)–इस अवस्थामें किसी वस्तु या व्यक्तिको सबसे घटाकर या सबसे बढ़ाकर कहा जाता है। यह गुण अथवा दोषकी पराकाष्ठा है। जैसे, 'राम सबसे सुन्दर है', 'श्याम सबसे बुरा है', 'यह पुस्तक श्रेष्ठतम है'। इसे **श्रेष्ठावस्था** या **तमावस्था** भी कहते हैं। कुछ लोगोंने उत्तमावस्थाके दो प्रकार माने हैं :–(क) **सापेक्ष**––जिसमें अन्योंकी अपेक्षा बढ़ाकर या घटाकर कहा जाय। जैसे, 'वह सबसे खराब या अच्छा है'। (ख) **निरपेक्ष**––जिसमें किसीकी तुलनामें न कहकर यों ही पराकाष्ठापर रखा जाय। जैसे, 'वह बहुत ही बुरा है', 'वह अत्यधिक सुंदर है।'

उपर्युक्त भेद-विभेदोंके अतिरिक्त प्रयोगके आधारपर विशेषणके दो भेद होते हैं :–एक **विशेष्य-विशेषण** और दूसरा **विधेय-विशेषण**। जब विशेषण संज्ञाके पूर्व आता है, तो उसे विशेष्य-विशेषण कहते हैं। जैसे **काला** आदमी, **पुरानी** चादर, **हरी** पत्ती। यहाँ काला, पुरानी, हरी, ये तीनों विशेषण विशेष्य-विशेषण हैं, क्योंकि ये तीन विशेष्यों या संज्ञाओं (आदमी, चादर, पत्ती) के पूर्व आये हैं। कभी-कभी विशेषण विशेषता तो विशेष्य या संज्ञाकी बतलाते हैं, किंतु आते हैं क्रियाके पूर्व। जैसे, आदमी **काला** है, चादर **पुरानी** है या पत्ती **हरी** है। ऐसे विशेषणोंको **विधेय-विशेषण** कहते हैं। यहाँ काला, पुरानी, हरी ऐसे ही विशेषण हैं।

प्रारम्भमें विशेषणकी परिभाषा देते समय 'व्याप्ति'की बात की गयी है। इस दृष्टिसे भी विशेषण दो प्रकारके होते हैं। कुछ विशेषण विशेष्यकी व्याप्ति मर्यादित करते हैं, जैसे––'काला आदमी', 'लाल कुत्ता'। यहाँ काला' कहनेसे 'आदमी'की व्याप्ति मर्यादित हो गयी। सिर्फ़ 'आदमी' कहनेसे यह शब्द अधिक व्यापक था, इसके अंतर्गत अधिक व्यक्ति आ सकते थे, किंतु 'काला आदमी' कहनेसे इसकी व्याप्ति कम या मर्यादित हो गयी, अर्थात् अब यह केवल काले रंगके आदमियोंका ही बोधक हो सकता है। 'लाल कुत्ता'में भी 'लाल', 'कुत्ते, की व्याप्ति मर्यादित कर रहा है। व्यक्तिवाचक संज्ञाके अतिरिक्त किसी प्रकारकी संज्ञाकी जब कोई विशेषण विशेषता बतलावेगा तो वह प्रायः इसी प्रकार व्याप्ति मर्यादित करेगा। जैसे, अच्छी चाँदी, बुरे भाव, लंबा घोड़ा आदि। यह सामान्य विशेषण है। विशेषणका दूसरा रूप **समानाधिकरण** या **समानाधिकरण विशेषण** है। जब विशेषण किसी व्यक्तिवाचक संज्ञाके साथ आता है तो वह संज्ञाकी व्याप्तिको मर्यादित नहीं करता। जैसे, वीर शिवाजी, पतिव्रता सीता या दयालु शंकर। यहाँ वीर, पतिव्रता या दयालु लगनेसे शिवाजी, सीता या शंकरकी व्याप्ति मर्यादित नहीं हो रही है। इन विशेषणोंसे

विशेष्योंकी केवल एक विशेषता प्रकट हो रही है। ऐसे विशेषण ही **समानाधिकरण** कहे जाते हैं। इससे निष्कर्ष यह निकला कि जब विशेषण व्यक्तिवाचक संज्ञाके साथ हो तो उसकी व्याप्ति मर्यादित नहीं करेगा और यही समानाधिकरण होगा। इसके विरुद्ध अन्य संज्ञाओंके साथ वह व्याप्ति मर्यादित करेगा और समानाधिकरण नहीं होगा। यहाँ एक अपवादकी ओर संकेत कर देना भी आवश्यक है। व्यक्तिवाचकके अतिरिक्त अन्य प्रकारकी संज्ञाओंके साथ आनेवाला विशेषण यदि विशेष्यका मात्र सामान्य धर्म बतलावे तो वहाँ भी वह व्याप्ति मर्यादित नहीं करेगा, अतः समानाधिकरण ही होगा। जैसे ठंढी बर्फ़, श्वेत दुग्ध, काला कौआ आदि ('मैं भोलानाथ कसम खाकर कहता हूँ,' जैसे प्रयोगोंमें भी 'मैं' और 'भोलानाथ' **समानाधिकरण** कहलाते हैं)।

विशेषण उत्तरपद कर्मधारय समास––(दे०) **समास**।

विशेषण उत्तरपद बहुव्रीहि समास––(दे०) **समास**।

विशेषण उपवाक्य––(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक।

विशेषण उभयपद कर्मधारय समास––(दे०) **समास**।

विशेषण पूर्वपद कर्मधारय समास––(दे०) **समास**।

विशेषणपूर्वपद बहुव्रीहि समास–(दे०) **समास**।

विशेषणात्मक उपवाक्य––(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक।

विशेषतावाचक कर्मधारय समास–(दे०) **समास**।

विशेष भावका नियम––**बौद्धिक-नियम** (दे०)-का एक भेद।

विशेष शब्द (nonce word)––विशिष्ट अवसरोंपर प्रयोगके लिए निर्मित शब्द।

विशेषीकरण नियम––**बौद्धिक-नियम** (दे०)-का एक भेद।

विशेष्य––(दे०) **विशेषण**।

विशेष्य-विशेषण––(दे०) **विशेषण**[1]।

विशोकन (wishokan)––**वियोट** (दे०)-का एक अन्य नाम।

विश्लेष––**मध्य स्वरागम** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक संस्कृत नाम।

विश्लेषण (analysis)––किसी भी भाषिक इकाईको उन खंडोंमें विभाजित करना, जिनसे वह बना है।

विश्लेषणात्मक रूप––वियोगात्मक रूपका एक अन्य नाम। (दे०) **संयोगात्मक रूप**।

विश्लेषणात्मक रूप विज्ञान (analytic morphology)––**रूपविज्ञान** (दे०) का एक भेद।

विश्रम (wishram)––**चिनुक** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

विश्वकी भाषाओंका वर्गीकरण (classification of languages)––संसारमें अनेकानेक भाषाएँ तथा बोलियाँ हैं। लोकोक्ति है––'चार कोसपर पानी बदले आठ कोसपर बानी।' अर्थात् पानीका स्वाद हर चौथे कोसपर कुछ-न-कुछ बदल जाता है और भाषा आठवें कोसपर कुछ-न-कुछ परिवर्तित हो जाती है। सोचनेकी बात है कि जब हर आठ कोसपर भाषामें कुछ न कुछ परिवर्तन दृष्टिगत होने लगता है तो इतने लम्बे-चौड़े संसारमें कितनी अधिक भाषाएँ और बोलियाँ होंगी। गणना करनेवालोंने बतलाया है कि इनकी संख्या लगभग ३ हजार है। संसारकी इन भाषाओं और बोलियोंका वर्गीकरण कई आधारोंपर किया जा सकता है, जिनमें प्रधान निम्नांकित हैं––(१) **महाद्वीपके आधारपर**–जैसे एशियाई भाषाएँ, यूरोपीय भाषाएँ तथा अफ्रीकी भाषाएँ आदि। (२) **देशके आधारपर**––जैसे चीनी भाषाएँ तथा भारतीय भाषाएँ आदि। (३) **धर्मके आधारपर**––जैसे मुसलमानी भाषाएँ, हिन्दू भाषाएँ तथा ईसाई भाषाएँ आदि। (४) **कालके आधारपर**––जैसे प्रागैतिहासिक भाषाएँ, प्राचीन भाषाएँ, मध्ययुगीन भाषाएँ तथा आधुनिक भाषाएँ आदि। (५) **भाषाओंकी आकृतिके आधारपर**––जैसे अयोगात्मक तथा योगा-

त्मक भाषाएँ। (६) **परिवारके आधारपर**—जैसे भारोपीय परिवारकी भाषाएँ, एकाक्षर परिवारकी भाषाएँ या द्रविड़ परिवारकी भाषाएँ आदि। (७) **प्रभावके आधारपर**—जैसे संस्कृत प्रभावित भाषाएँ तथा फ़ारसी-प्रभावित भाषाएँ आदि।

वर्गीकरणके उपर्युक्त सात आधारोंमें भाषाविज्ञानकी दृष्टिसे विशेष महत्त्व केवल अंतिम तीन आधारोंपर किये गये वर्गीकरणका ही है। इन वर्गीकरणोंमें तीसरा अभीतक अपनी शैशवावस्थामें है। जर्मनमें इसे sprachbund नाम दिया गया है। इस प्रकारके अध्ययनसे भी भाषाविषयक बहुत सुन्दर निष्कर्ष प्रकाशमें लाये जा सकते हैं। दो ऐसी भाषाओंमें जो पारिवारिक या आकृतिमूलक दृष्टिसे एक दूसरेके समीप नहीं हैं, इस दृष्टिसे एक दूसरेके समीप आ जाती हैं, और उनका तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, हिंदी और तमिलमें पारिवारिक या आकृतिमूलक दृष्टिसे कोई सम्बन्ध नहीं है किन्तु संस्कृतके प्रभावके कारण दोनोंमें शब्द-समूह तथा ध्वनि आदिकी दृष्टिसे समानता है। अफ्रीकामें भी इस प्रकारके अध्ययन की पर्याप्त गुंजाइश है। शेष दो वर्गीकरण **आकृतिमूलक** (आकृति या रचनाके आधारपर) और **पारिवारिक** (परिवारके आधारपर) नामसे अभिहित किये जाते हैं। आगे इन दोनोंपर विस्तारसे विचार किया जा रहा है।

किसी वाक्यका अर्थ हम दो चीज़ोंके कारण समझते हैं। एक है **अर्थतत्व** और दूसरा **सम्बन्धतत्व**। 'रामने रावणको मारा', इस वाक्यमें 'राम', 'रावण' तथा 'मारना' ये तीन अर्थतत्त्व हैं, अर्थात् अर्थवाले शब्द हैं, जिनके आधारपर वाक्यका अर्थ समझा जाता है। और 'ने', 'को' तथा माराका 'आ' ये तीन 'सम्बन्धतत्त्व' या पद-रचनाके तत्त्व हैं, अर्थात् इन्हीं तीनोंके कारण उन 'अर्थतत्त्वों'-का आपसमें सम्बन्ध स्पष्ट होता है। यह पता चलता है कि रामने मारा, रावणने नहीं, और रावण मारा गया, राम नहीं तथा वर्तमान कालमें नहीं मारा गया, बल्कि भूतकालमें। कुछ और उदाहरणोंसे इन दोनोंके भेद और स्पष्ट हो जायँगे। करना, खोना, रोना, सोना या उससे, तुमसे, रामसे या आया, गया, खोया, धोया आदिमें अर्थतत्त्व, अर्थात् अर्थ या भाव तो भिन्न-भिन्न हैं, किन्तु प्रथम चारमें सम्बन्धतत्त्व या पद रचनाकी समानता है, अर्थात् सभीमें 'ना' है। इसी प्रकार दूसरे तीनमें भी सबके अन्तमें 'से' है तथा तीसरे चारमें सबके अन्तमें 'या' है, अतएव इन दूसरे 'तीन' तथा तीसरे 'चार'में भी सम्बन्धतत्त्व या पदरचनाकी समानता है। दूसरी ओर **खाकर, खाया, खाता, खा, खायेगा** तथा **खायमें** सम्बन्धतत्त्व या पदरचनाकी भिन्नता है, किंतु अर्थतत्त्वकी समानता है, अर्थात् खानेका भाव सभीमें है। सम्बन्धतत्त्व या पदरचनाका सम्बन्ध व्याकरण या भाषाकी 'रूपरचना'से है। इसीलिए संबंधतत्त्व, पदरचना या वैयाकरणिक समानतापर आधारित वर्गीकरण **आकृतिमूलक** या **रूपात्मक** कहलाता है। मूल शब्दसे रूप बनानेकी प्रक्रिया या पद्धतिके आधारपर जो भाषाएँ समानता रखती हैं, इसके अनुसार एक वर्गमें रखी जाती हैं। इसे **व्याकरणिक वर्गीकरण** या **रचनात्मक वर्गीकरण** भी कहा जा सकता है। वाक्य इन रूपोंके ही आधारपर बनते हैं, अतः इस वर्गीकरणका सम्बन्ध 'वाक्य'से भी है, इसीलिए इसे **वाक्यात्मक** या **वाक्यमूलक वर्गीकरण** भी कहते हैं। अंग्रेज़ीमें इसे syntactical, morphological, typical typological, syntactical classification आदि कई नामोंसे पुकारा जाता है, यों सूक्ष्मतासे देखा जाय तो इन सभीमें कुछ-न-कुछ अन्तर है। हिन्दीमें इसके लिए **रूपाश्रित, पदात्मक** तथा **पदाश्रित** आदि कुछ अन्य नामोंका भी कभी-कभी प्रयोग होता है।

दूसरे वर्गीकरण—**पारिवारिक**—में **सम्बन्धतत्वके** साथ-साथ **अर्थतत्त्वकी** समानतापर भी ध्यान देते हैं, साथ ही भाषाके प्राथ-

मिक शब्द-भंडारकी समानताका भी विचार करते हैं। इन तीनों समानताओंके आधारपर दो या अधिक भाषाओंको एक परिवारकी माना जाता है। **पारिवारिक वर्गीकरण**को **'वंशात्मक, वंशानुक्रमिक, कुलात्मक** या **ऐतिहासिक** वर्गीकरण भी कहते हैं। अंग्रेजीमें इसे geneological या historical classification कहते हैं।

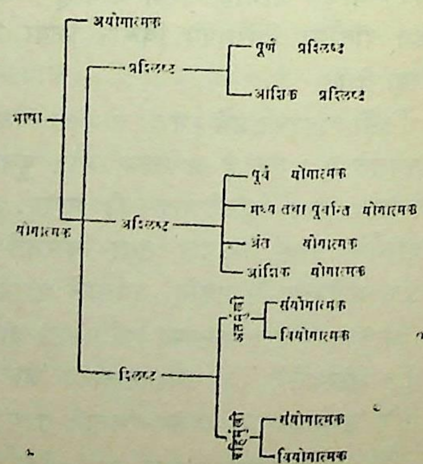
आकृतिमूलक वर्गीकरण—इस वर्गीकरण-का आधार **सम्बन्धतत्व** या **शैली** है। शैलीसे हमारा तात्पर्य वाक्य और रूप (पद) बनानेकी शैलीसे है। इस प्रकार प्रस्तुत वर्गीकरणमें दो बातोंपर ध्यान देना आवश्यक है —(१) प्रथमतः, वाक्यमें शब्दोंका पारस्परिक सम्बन्ध किस प्रकार प्रकट किया गया है? उदाहरणके लिए यदि हम 'मैंने भोजन किया' वाक्य लें तो 'मैं', 'भोजन' और 'करना' अर्थतत्त्वोंका सम्बन्ध एक दूसरेसे किस प्रकार प्रकट किया गया है, या वे एक दूसरेसे किस प्रकार बाँधे गये हैं। (२) दूसरे, मैंने", 'भोजन' और 'किया' ये तीनों शब्द किस प्रकार धातु प्रत्यय या उप-सर्ग लगाकर बनाये गये हैं। संक्षेपमें हम कह सकते हैं कि वाक्य-विज्ञान और रूप-विज्ञान, या वाक्य-रचना एवं (रूप या) पद-रचना—पर ही वर्गीकरण आधारित है। भाषाओंके **आकृतिमूलक वर्गीकरण**की परस्परा पुरानी हैं, किंतु महत्त्वपूर्ण व्यक्तियोंमें इस दृष्टिसे प्रथम नाम श्लेगलका लिया जा सकता है। उन्होंने भाषाओंको दो वर्गोंमें रखा था। आगे चलकर बॉपने श्लेगलके मतको काट दिया और तीन वर्ग बनाये। ग्रिम और श्लाइ-खर भी कुछ दूसरे रूपमें तीन वर्गोंके ही पक्षमें थे। पॉटने चार वर्ग बनाये। तबसे अधिक प्रचलित मत २,३,४ वर्गोंके ही रहे हैं, यों कुछ लोगोंने इसे और बढ़ानेका भी प्रयास किया और सामान्य दृष्टिसे इसके एक दर्जनसे अधिक वर्ग बनाये जा सकते हैं। किन्तु तत्त्वतः अधिक वैज्ञानिक वर्ग केवल दो ही बनते हैं। शेष सारे किसी-न-किसी रूपमें इन्हीं दोके अन्तर्गत आ जाते हैं। इसीलिए यहाँ दो वर्ग-वाले मतको ही पहले लिया जा रहा है, शेष मतोंपर आगे संक्षेपमें प्रकाश डाला जायगा।

आकृति या रूपकी दृष्टिसे संसारकी भाषा-ओंको प्रमुखतः दो वर्गोंमें रखा जा सकता है :—

(क) **अयोगात्मक भाषाएँ**—इस वर्गकी भाषाओंके isolating, positional, inorganic, **व्यास-प्रधान**, **निपात-प्रधान, वियोगात्मक**, **स्थान-प्रधान**, **अलगन्त**, **विकीर्ण, एकाक्षर, एकाच्, धातु-प्रधान, निरिंद्रिय, निरवयव, निर्योग** तथा **निर्योगी** आदि बहुतसे नामोंका अंग्रेजी और हिन्दीकी पुस्तकोंमें प्रयोग मिलता है।

(ख) **योगात्मक भाषाएँ**—इस वर्गकी भाषाओंके लिए agglutinating, organic, agglomerating, abounding in affixes, **प्रकृति-प्रत्यय प्रधान, उपचयात्मक, संचयात्मक, प्रत्यय-प्रधान, सयोगात्मक, संयोगी, संयोगप्रधान, व्यक्तयोग, उपचयोन्मुख, संचयोन्मुल** तथा **सावयव** आदिका भी प्रयोग मिलता है। आगे इसके अन्य भी बहुतसे वर्ग-उपवर्ग बनाये जा सकते हैं, जिन्हें वृक्ष रूपमें इस प्रकार दिखाया जा सकता है—

अब इनपर कुछ विस्तारसे विचार किया जा सकता है :—



(१) **अयोगात्मक भाषाएँ**—जैसा कि 'अयोग' शब्दसे स्पष्ट है, इस वर्गकी भाषाओंमें

'योग' नहीं रहता, अर्थात् शब्दोंमें उपसर्ग या प्रत्यय आदि जोड़कर अन्य शब्द या वाक्यमें प्रयुक्त होने योग्य रूप नहीं बनाये जाते। उदाहरणार्थ, संस्कृतमें 'राम'में 'आ' प्रत्यय जोड़कर 'रामेण' बनाया जाता है, या हिन्दीमें 'मुझे दो' वाक्यमें प्रयोग करनेके लिए 'मैं'—में कुछ जोड़-घटाकर 'मुझे' बनाना पड़ता है, पर अयोगात्मक भाषाओंमें इस प्रकारके योगकी आवश्यकता नहीं पड़ती। उनमें किसी भी शब्दमें कोई परिवर्तन नहीं होता। वाक्यमें स्थानके अनुसार शब्दोंका अर्थ लगा लिया जाता है। इसीलिए इन भाषाओंको **स्थान-प्रधान** भी कहते हैं। हिन्दीमें भी कुछ ऐसे उदाहरण मिलते हैं, जिनमें शब्दोंमें विकार नहीं होता और स्थान बदलनेसे अर्थ बदल जाता है। यद्यपि ऐसे उदाहरण अपवाद-से हैं। जैसे 'राधा सीता कहती है' तथा 'सीता राधा कहती है', इन दोनों वाक्योंमें शब्द बिल्कुल एक हैं। उनमें कोई भी परिवर्तन नहीं है, पर राधा और सीताका स्थान बदल देनेसे अर्थ पूर्णतः उलट गया है।

अयोगात्मक भाषाका सर्वोत्तम उदाहरण चीनी भाषा है। चीनी भाषामें व्याकरण नामकी कोई अलग चीज़ नहीं होती। वाक्यमें एक ही शब्द स्थान और प्रयोगके अनुसार संज्ञा, विशेषण, क्रिया और क्रिया-विशेषण आदि हो सकता है और तिसपर भी शब्दोंमें किसी प्रकारका विकार या परिवर्तन नहीं। कुछ उदाहरण लिये जा सकते हैं। (१):—**ता लेन** = बड़ा आदमी; **लेन ता** = आदमी बड़ा (है) (२) **न्गो त नि** = मैं मारता हूँ तुमको। **नि त न्गो** = तुम मारते हो मुझको।

यहाँतक कि विभिन्न कालके क्रियाके रूप बनानेमें भी शब्दोंमें परिवर्तन नहीं होता। उदाहरणार्थ हिन्दीमें 'चलना'का भूतकाल 'चला' बनेगा, जो देखनेमें 'चलना'से भिन्न है। पर, पुरानी चीनीमें **त्सेन** (tsen)—चलनाका भूतकाल बनानेके लिए इसके आगे **लिओन** (lion) जिसका अर्थ 'समाप्त' है रख देंगे। **त्सेन लिओन** = चला '(शाब्दिक अर्थ 'चलना समाप्त')।

कहना न होगा कि दोनों हीमें '**त्सेन**'का रूप एक है। आगे दूसरा शब्द-मात्र आनेसे काल-परिवर्तन हो गया। मूल शब्दमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ, और न कोई जोड़ना-घटाना ही अपेक्षित हुआ। इसी प्रकार : **त लइ** (ta lai) = वह आता है। **तलइ लिआव** (ta lai liao) = वह आया।

यहाँ यह भी स्पष्ट है कि इन भाषाओंमें प्रत्येक शब्दकी अलग-अलग सम्बन्ध-तत्त्व तथा अर्थ-तत्त्व व्यक्त करनेकी शक्ति होती है और वाक्यमें स्थानके अनुसार ही उनके ये तत्त्व जाने जाते हैं। ऊपर हम देख चुके हैं कि लिओन (lion) का अर्थ-तत्त्व है 'खतम करना' या 'समाप्त' किन्तु 'त्सेन लिओन'में वह सम्बन्ध-तत्त्व हो गया है और भूतकालका भाव व्यक्त करता है। इसी प्रकार दूसरे उदाहरणमें लिआव (liao) का अर्थतत्त्व है 'पूर्ण' या 'पूर्णता', पर यहाँ वह सम्बन्ध-तत्त्व हो गया है और भूतकालका भाव व्यक्त कर रहा है। इस प्रकार वहाँ शब्दोंके सम्बन्ध-तत्त्व तथा अर्थ-तत्त्व रूपमें दो अर्थ होते हैं। उदाहरणके लिए एक शब्द 'य' लें। इसका अर्थ-तत्त्व रूपमें अर्थ है 'प्रयोग', पर सम्बन्ध-तत्त्व रूपमें 'से'। इसी प्रकार 'त्सि'का अर्थ-तत्त्वका अर्थ है 'स्थान', पर सम्बन्ध-तत्त्वका अर्थ है 'का'। अन्य किसी प्रकारकी भाषाओंकी तरह इस वर्गकी भाषाओंमें शब्दोंका व्याकरणिक रूप स्पष्टतः अलग-अलग नहीं होते। ऊपरके वाक्योंमें 'न्गो'का अर्थ 'मैं' और 'मुझको' दोनों है, इसी प्रकार 'नि'का अर्थ 'तुम' भी है और 'तुमको' भी। केवल स्थानसे ही इस अंतरका पता चल सकता है। निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि अयोगात्मक भाषाओंमें सम्बन्ध-तत्त्वका बोध शब्दोंमें कुछ जोड़कर (जैसे हिन्दीमें 'मैं'से 'मैंने') या कुछ भीतरी विकार या परिवर्तन लाकर (जैसे 'मैं' से 'मुझे') नहीं कराया जाता, अपितु सम्बन्ध-तत्त्व-बोधक ('लिओन' या 'लिआव' आदि) शब्दोंको केवल स्थान विशेषपर रख

कर । अयोगात्मक भाषाओंमें **'शब्द-क्रम'** का महत्त्व है तो, किन्तु इसके साथ ही **तान** (tone, सुर, स्वर या लहजा) का भी महत्त्व है। उसके कारण भी सम्बन्ध दिखाये जाते हैं। इसी प्रकार **निपात** (particle) या सम्बन्धसूचक या अपूर्ण शब्दोंका भी आधार लिया जाता है जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है । चीनीके अतिरिक्त अफ्रीकाकी सूडानी (स्थानप्रधान), तथा एशियाकी मलय (यह एकाक्षर नहीं है), अनामी (स्वर प्रधान), वर्मी (निपात प्रधान), स्यामी तथा तिब्बती (निपात-प्रधान) आदि भाषाएँ भी लगभग इसी प्रकारकी हैं ।

(२) **योगात्मक भाषाएँ**--अयोगात्मक भाषाओंमें अर्थ-तत्त्व तथा सम्बन्धतत्त्वमें योग नहीं होता । या तो सम्बन्ध-तत्त्वकी आवश्यकता ही नहीं होती, केवल स्थान-क्रमसे ही सम्बन्धका पता चल जाता है या सम्बन्ध-तत्त्व रहता भी है तो वह अर्थ-तत्त्वसे मिलता नहीं । इसके विरुद्ध योगात्मक भाषाओंमें सम्बन्ध-तत्त्व और अर्थतत्त्व दोनोंमें योग हो जाता है अर्थात् मिले-जुले रहते हैं । 'मेरे घर आना' हिन्दीका एक वाक्य लें । इसमें 'मेरे' में अर्थ-तत्त्व (मैं) तथा सम्बन्ध-तत्त्व (सम्बन्धवाचकता प्रकट करनेवाला प्रत्यय जिसके कारण 'मेरे' शब्द बना है और जिसके कारण इसका अर्थ 'मैं का' हुआ है) दोनों मिले-जुले हैं । संस्कृतका एक वाक्य 'रामः हस्तेन धनं ददाति' (राम हाथसे धन देता है) लें । इसमें राम (अर्थ-तत्त्व)+अः (सम्बन्धतत्त्व), हस्त (अर्थ-तत्त्व)+एन (सम्बन्ध-तत्त्व), धन (अर्थ-तत्त्व)+अम् (सम्बन्ध-तत्त्व) तथा दा (=देना, अर्थ-तत्त्व)+ति (सम्बन्ध-तत्त्व) मिले हैं, या इन अर्थतत्त्वों और सम्बन्ध-तत्त्वोंमें 'योग' हैं। इस योगके कारण ही ये भाषाएँ योगात्मक कही जाती हैं । संसारकी अधिकांश भाषाएँ योगात्मक हैं । योगामक भाषाओंको योगकी प्रकृतिके आधारपर तीन वर्गोंमें रखा गया है—

(क्ष) प्रश्लिष्ट-योगात्मक (incorporating); इसे बहुसंश्लेषात्मक (polysynthetic) अव्यक्त-योगात्मक (holophrastic) 'समास-प्रधान', 'संघाती' तथा 'संघात-प्रधान' भी कहते हैं ।

(त्र) अश्लिष्ट-योगात्मक (simple agglutinative) ।

(ज्ञ) श्लिष्ट-योगात्मक (inflacting); इसे inflexional, विभक्ति-प्रधान, संस्कार-प्रधान, विकृति-प्रधान भी कहते हैं ।

इन तीनों विभागोंपर अलग-अलग विचार किया जा रहा है । (क्ष) **प्रश्लिष्ट-योगात्मक** भाषाएँ -- प्रश्लिष्ट-योगात्मक भाषाओं (समास-प्रधान या बहुसंहित भी कहा गया है) में सम्बन्ध-तत्त्व तथा अर्थ-तत्त्वका योग इतना मिला-जुला होता है, कि उन्हें अलग-अलग न तो पहचाना जा सकता है और न एक-को दूसरेसे अलग ही किया जा सकता है। जैसे संस्कृत 'ऋतु' से 'आर्तव' या 'शिशु से शैशव' : प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाओंके भी दो भेद किये गये हैं । एकमें योग पूर्ण रहता है और दूसरेमें आंशिक या अपूर्ण । ये दोनों भेद इस प्रकार हैं--(क) पूर्ण **प्रश्लिष्ट-योगात्मक या समास-प्रधान** भाषाएँ (completely-incorporative)-- इन भाषाओंमें सम्बन्धतत्त्व और अर्थतत्त्वका योग इतना पूर्ण रहता है कि पूरा वाक्य लगभग एक ही शब्द बन जाता है । इस प्रकारकी भाषाकी सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि वाक्यमें पूरे शब्द नहीं आते, बल्कि उनका कुछ अंश छूट जाता है और इस प्रकार आधे-आधे शब्दोंके संयोगसे बना हुआ लम्बा-सा शब्द ही वाक्य हो जाता है । ग्रीनलैंड तथा अमेरिकाके मूल निवासियोंकी भाषाएँ इसी प्रकारकी हैं । कुछ उदाहरण लिये जा सकते हैं--(१) दक्षिणी अमेरिकाकी चेरोकी भाषामें--नातेन = लाओ, अमोखोल = नाव, निन = हम; इन शब्दोंसे वाक्य बनानेमें शब्द अपना थोड़ा-थोड़ा अंश छोड़कर ऐसे मिलते हैं कि एक बड़ा-सा शब्द बन जाता है--'नाधोलिनिन' (=हमारे पास

नाव लाओ)। (२) इसी प्रकार ग्रीनलैंडकी भाषामें भी--अउलिसर = मछली मारना, पेअर्तोर = किसी काममें लगना, पिन्नेसुअर्पोक = वह शीघ्रता करता है। इन तीनोंसे मिलकर एकशब्दीय वाक्य बनता है--'अउलिसरिअर्तोरिसुअर्पोक्' (= वह मछली मारनेके लिए जल्दी जाता है)।

(ख) आंशिक प्रश्लिष्ट-योगात्मक या अंशतः समास प्रधान भाषाएँ (partly incorporative)--इन भाषाओंमें सर्वनाम तथा क्रियाओंका ऐसा सम्मिश्रण हो जाता है कि क्रिया अस्तित्वहीन होकर सर्वनामकी पूरक हो जाती है। पेरीनीज़ पर्वतके पश्चिमी भागमें बोली जानेवाली भाषा बास्क कुछ अंशोंमें आंशिक प्रश्लिष्ट योगात्मक है। इससे दो उदाहरण यहाँ दिये जाते हैं--दकारकिओत = मैं इसे उसके पास ले जाता हूँ। नकारसु = तू मुझे ले जाता है। हकारत = मैं तुझे ले जाता हूँ। इन वाक्योंमें केवल सर्वनाम और क्रियाएँ हैं। पूर्ण प्रश्लिष्टकी भांति आंशिक प्रश्लिष्टमें संज्ञा, विशेषण, क्रिया और अव्यय आदि सभीका योग सम्भव नहीं होता। भारोपीय परिवारकी भाषाओंमें भी इसके कुछ उदाहरण मिल जाते हैं--गुजरातीमें--'मे कह्यूं जे' का 'मकुंजे' (= मैंने वह कहा) मेरठकी बोलीमें--'उसने कहा' का 'उन्नेका'। अंग्रेज़ी, बँगला, फ्रेंच तथा भोजपुरी आदि अन्य बहुत-सी भाशाओं तथा बोलियोंके मौखिक रूपमें भी इसके उदाहरण मिल जाते हैं किंतु ये अपवाद ही हैं। इसका आशय यह नहीं कि ये भाषाएँ आंशिक प्रश्लिष्ट हैं। बांटू भाषामें भी इसके उदाहरण मिलते हैं। इस संदर्भमें एक बात स्मरणीय है कि संसारकी कोई भी भाषा विशुद्ध रूपसे आंशिक प्रश्लिष्ट योगात्मक नहीं है।

(ग) **अश्लिष्ट योगात्मक** या **प्रत्यय-प्रधान भाषाएँ**--अश्लिष्ट-योगात्मक भाषाओंमें सम्बन्ध-तत्त्व (प्रत्यय) अर्थतत्त्वसे इस प्रकार जुड़ा होता है कि तिलतंडुलवत् दोनों ही स्पष्ट रूपसे दीखते हैं। हिन्दी इस प्रकारकी भाषा नहीं है, पर उसमेंसे समझनेके लिए कुछ उदाहरण खोजे जा सकते हैं--**सुन्दरता** (सुन्दर + ता) **मैंने** (मैं + ने), **करेगा** (करे + गा) इन सभीमें दोनों तत्त्व (अर्थ तथा सम्बन्ध) स्पष्ट हैं। इस स्पष्टताके कारण इस प्रकारकी भाषाओंकी रूप-रचना बहुत ही आसान होती है। भाषा-वैज्ञानिकोंकी आदर्श और कृत्रिम भाषा 'एसपिरेंतो'का निर्माण इसी आधारपर हुआ है। अश्लिष्ट योगात्मक भाषाओंको भी कई वर्गोंमें विभाजित किया जा सकता है--(क) **पूर्व योगात्मक या पुरः प्रत्यय प्रधान** (prefix agglutinative)--इन भाषाओंमें प्रत्ययके स्थानपर उपसर्गका प्रयोग होता है। शब्द वाक्यके अन्तर्गत बिल्कुल अलग-अलग रहते हैं। शब्दोंकी रूप-रचनामें सम्बन्धतत्त्व केवल आरम्भमें लगता है, इसी कारण ये 'पूर्व-योगात्मक' कही जाती हैं। अफ्रीकाकी बांटू भाषाओंमें यह विशेषता स्पष्ट रूपसे पायी जाती है। उदाहरण लीजिये--जुलू भाषामें **उमु** = एकवचनका चिह्न। **अब** = बहुवचनका चिह्न। **न्तु** = आदमी। **न्गा** = से। इनके योगसे शब्द बनते हैं--**उमुन्तु** = एक आदमी। **अबन्तु** = कई आदमी। **न्गाउमुन्तु** = आदमीसे। **न्गाअबन्तु** = आदमियोंसे। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि इन सभी उदाहरणोंमें योग ('नी' 'उमु' या 'अब' आदि सम्बन्ध-तत्त्व) आरम्भमें हैं। इसी प्रकार काफ़िर भाषामें भी--**कु** = संप्रदान कारकका चिह्न। **ति** = हम। **नि** = उन। इनके योगसे--**कुति** = हमको। **कुनि** = उनको। यहाँ जुलूका एक वाक्य भी देखा जा सकता है। ऊपर उमु, अब तथा न्तु का अर्थ हम दे चुके हैं। इनके अतिरिक्त--**तु** = हमारा। **चिल** = सुन्दर। **यबोनकल** = देख पड़ना। इनके मिलानेसे एक वचनमें --**उमुन्तु बेतु ओमुचले उयबोतकल** = हमारा आदमी देखनेमें भला है। इसका बहुवचन केवल आरम्भिक अंशमें परिवर्तन करनेसे हो जाता

है—अबन्तु बेतु अबचले बयनोकल = हमारे आदमी देखनेमें भले हैं। (ख) **मध्ययोगात्मक या अंतः प्रत्यय प्रधान** (infix agglutinative)—इसके उदाहरण भारतकी तथा हिन्द महासागरके द्वीपोंसे लेकर अफ्रीका-के समीपके मैडागास्कर आदि द्वीपोंतक फैली भाषाओंमें मिलते हैं। इनमें प्रायः शब्द दो अक्षरोंके होते हैं और जैसा कि नाम (मध्य-योगात्मक) से स्पष्ट है सम्बन्ध-तत्त्व दोनों अक्षरोंके बीचमें रखे या जोड़े जाते हैं। मुंडा कुलकी संथाली भाषामें **'मंझि'** (= मुखिया) और **'प'** (बहुवचनका चिह्न) के योग-से—**मपंझि** = मुखिया लोग। यहाँ 'प' बीचमें जोड़ा गया है। इसी प्रकार **दल्** (= मारना) से **दपल** (= परस्पर मारना) अप-वाद-स्वरूप मध्ययोगात्मकताके बांटू भाषा-में भी कुछ उदाहरण मिलते हैं—**सि-तन्दा** = हम प्यार करते हैं। **सि–म–तन्दा** = हम उसे प्यार करते हैं। **सि–ब–तन्दा** = हम उन्हें प्यार करते हैं। इसी प्रकार तुर्कीमें भी कुछ मध्य योगके उदाहरण हैं—**सेव्मेक्** = प्यार करना। **सेव्इनमेक्** = अपनेको प्यार करना। **सेव्इलमेक्** = प्यार किया जाना। कहना न होगा कि बांटू तथा तुर्कीके इन उदा-हरणोंमें शब्द दो अक्षरोंसे अधिकके हैं, इसीलिए ये मध्य-योगात्मक अश्लिष्ट भाषाके शुद्ध उदाहरण नहीं हैं। (ग) **पूर्वान्त-योगात्मक**—इस श्रेणीकी भाषाओंमें सम्बन्ध-तत्त्व अर्थतत्त्वके आगे और पीछे या पूर्व और अन्तमें लगाया गया है, इसीलिए इन्हें 'पूर्वान्त-योगात्मक' कहते हैं। न्युगिनीकी मकोर भाषामें—**'म्नफ'** = सुनना। **ज – म्नफ – उ** = मैं तेरी बात सुनता हूँ। (यहाँ पूर्वमें 'ज' और अन्तमें 'उ' जोड़ा गया है)। मध्य-योगात्मकता तथा पूर्वान्ति-योगात्मकताके उदाहरण कई भाषाओंमें साथ-साथ भी मिलते हैं। पूर्व योगात्मकताके बारेमें भी यह सत्य है। (घ) **अन्त-योगात्मक या परप्रत्यय-प्रधान** (suffix agglutinative)—इस वर्गकी भाषाओंमें सम्बन्धतत्त्व केवल अन्तमें जोड़ा जाता है। यूराल अल्ताइक तथा द्रविड़ परिवारकी भाषाएँ ऐसी ही हैं। यहाँ कुछ उदाहरण लिये जा सकते हैं:—**तुर्कीमें एव** = घर। **एवलेर** = कई घर। **एवलेरइम** = मेरे घर।

कन्नड़ 'सेवक' शब्दका बहुवचनमें विभिन्न कारकोंमें रूप कर्त्ताकारकमें—**सेवक-रु**। कर्मकारकमें—**सेवक-रन्नु**। करणकारकमें—**सेवक-रिन्द**। संप्रदानकारकमें—**सेवक-रिगे** आदि। इसी प्रकार हंगरीकी भाषामें—**ज़ार** = बन्द करना। **ज़ारत** = बन्द करवाता है। **जारत्गत्** = अधिकतर बन्द करवाता है। (ङ) **आंशिक-योगात्मक या ईषत् प्रत्यय-प्रधान** (partially agglutinative)—योगात्मक शाखाके अश्लिष्ट वर्गकी अन्तिम उपशाखा आंशिक-योगात्मक भाषाओंकी है। इस वर्गकी भाषाएँ यथार्थतः योगात्मक और अयोगात्मक वर्गके बीचमें पड़ती हैं। इन भाषाओंमें योग और अयोग दोनोंके ही चिह्न मिलते हैं। पर ये भाषाएँ योगात्मक भाषाओं और उनमें भी अश्लिष्ट भाषाओंसे कुछ समानता रखती हैं, अतः इनको आंशिक (अश्लिष्ट) योगात्मक नाम दिया गया है। बास्क, हौसा, जापानी एवं न्यूजीलैंड तथा हवाई द्वीपकी भाषाएँ आंशिक योगात्मक हैं। कुछ भाषाएँ सर्वयोगात्मक या सर्वप्रत्यय प्रधान भी हैं जिनमें आदि, मध्य, अंत तीनों प्रकारके योग होते हैं। मलायन भाषाएँ इसी प्रकारकी हैं।

(ज्ञ) **श्लिष्ट योगात्मक या विभक्ति प्रधान भाषाएँ**—श्लिष्ट-योगात्मक भाषाओंमें सम्बन्ध तत्त्व (प्रत्यय) को जोड़नेके कारण अर्थतत्त्ववाले भागमें भी कुछ विकार पैदा हो जाता है, परन्तु सम्बन्धतत्त्वकी झलक अलग ही मालूम पड़ती है। रूप विकृत हो जानेपर भी सम्बन्धतत्त्व छिपा नहीं रहता। जैसे अरबीमें क्-त्-ल् (= मारना) धातुसे कतल (= खून), कातिल (मारनेवाला), किल्व (= शत्रु) तथा यकतुलु (= वह मारता है) आदि। इसी प्रकार संस्कृतमें वेद, नीति,

इतिहास तथा भूगोलसे वैदिक, नैतिक, ऐतिहासिक और भौगोलिक आदि। संस्कृतके उदाहरणोंमें स्पष्ट है कि अन्तमें 'इक' लगा है पर साथ ही आरम्भके 'वे', 'नी', 'इ' तथा 'भू' में विकार आ गया है और वे 'वै', 'नै', 'ऐ' तथा 'भौ' हो गये हैं। इस वर्गकी भाषाएँ संसारमें सबसे अधिक उन्नत हैं। सामी, हामी और भारोपीय परिवार इसी वर्गके अन्तर्गत आते हैं। **श्लिष्ट-योगात्मक भाषाओं-** के भी दो उपवर्ग किये जाते हैं--(क) **अन्तर्मुखी** और (ख) **बहिर्मुखी**। यह विभाजन बहुत समीचीन नहीं है और न पूर्णतया लागू ही होता है, किन्तु आंशिक रूपसे इसकी सत्यता अस्वीकार नहीं की जा सकती। यहाँ दोनोंपर अलग-अलग विचार किया जा रहा है--(क) **अन्तर्मुखी-श्लिष्ट** (internal inflectional)--इस विभागकी भाषाओंमें जोड़े हुए भाग मूल (अर्थ-तत्त्व) के बीचमें बिल्कुल घुलमिलकर रहते हैं। सेमिटिक और हेमेटिक कुलकी भाषाएँ इसी विभागकी हैं। अरबी भाषा इसके लिए उदाहरण स्वरूप ली जा सकती है। अरबीमें धातु प्रायः तीन व्यंजनोंकी (सुलासी) होती है। सम्बन्धतत्त्व प्रधानतः स्वर होता है जो व्यंजनोंके साथ घुलमिलकर रहता है। आशय स्पष्ट करनेके लिए हम क्-त्-ब् धातुको लेते हैं, जिसका अर्थ 'लिखना' होता है। इससे ये शब्द बने हैं--कातिब = लिखनेवाला। किताब = जो लिखा (या लिखी) गया हो। कुतुब = बहुतसी किताबें। यहाँ क्-त्-ब् व्यंजन तीनोंमें हैं पर बीचमें विभिन्न स्वरोंके आनेसे अर्थ बदलता गया है।

इस **अन्तर्मुखीके** भी दो भेद हैं--१-**संयोगात्मक** (synthetic)--अरबी आदि सेमिटिक भाषाओंका पुराना रूप संयोगात्मक था। शब्दोंमें अलगसे सहायक सम्बन्ध-तत्त्व लगानेकी आवश्यकता न थी। २-**वियोगात्मक** (analytic)--आज इन भाषाओंमें शब्द साधारणतया बनते तो उसी प्रकार हैं पर वाक्यकी दृष्टिसे वियोगात्मकता आ गयी है, क्योंकि सहायक शब्दोंकी आवश्यकता पड़ती है। बादकी हिब्रू भाषामें यह बात विशेष रूपसे दिखाई पड़ती है। (ख) **बहिर्मुखी-श्लिष्ट** (External Inflectional)--इस विभागकी भाषाओंमें जोड़े हुए भाग प्रधानतः मूल भाग (अर्थ-तत्त्व) के बाद आते हैं। जैसे संस्कृतमें गम् धातुसे 'गच्छ + अ + न्ति + गच्छन्ति (= जाते हैं)। भारोपीय परिवारकी भाषाएँ इसी विभागमें आती हैं। इसके भी दो भेद किये जा सकते हैं--(१) **संयोगात्मक**--भारोपीय परिवारकी पुरानी भाषाएँ (ग्रीक, लेटिन, संस्कृत, अवेस्ता आदि) संयोगात्मक थीं। इनमें सहायक क्रिया तथा परसर्ग आदिकी आवश्यकता न थी। शब्दमें ही सम्बन्ध-तत्त्व लगा रहता था, जैसे संस्कृतमें --सः पठति = वह पढ़ता है। इस परिवारकी लिथुआनियन भाषा तो अपनी भौगोलिक स्थितिके कारण अधिक परिवर्तित न होनसे आज भी संयोगात्मक ही है। (२) **वियोगात्मक**--भारोपीय परिवारकी अधिक भाषाएँ आधुनिक कालमें वियोगात्मक हो गयी हैं। बहुत पहले उनकी विभक्तियाँ धीरे-धीरे घिसकर लुप्तप्राय हो गयीं, अतः अलगसे शब्द लगानेकी आवश्यकता पड़ने लगी और इस आवश्यकताके कारण परसर्ग तथा सहायक क्रियाके रूपमें शब्द रखे जाने लगे। ऊपर हमलोग संस्कृत भाषाका 'सः पठति' संयोगात्मक उदाहरण देख चुके हैं। शब्द 'है' वहाँ 'पठति' में ही था, किन्तु अब उसे अलगसे (पढ़ता है) लगानेकी आवश्यकता पड़ गयी है। परसर्ग या कारक-चिह्नोंके विषयमें भी यही बात है। अंग्रेज़ी, हिन्दी, बँगला आदि वियोगात्मक भाषाएँ हैं। कुछ लोगोंका कथन है कि आधुनिक भारोपीय कुलकी वियोगात्मक भाषाएँ पुनः संयोगावस्थाकी ओर जा रही हैं और सम्भव है अपना वृत्त पूरा कर ये पुनः पूर्ण संयोगात्मक हो जायँ।

ऊपर भाषाके आकृतिमूलक वर्गीकरणको वर्गों, उपवर्गों तथा उसके भेदों-विभेदोंके साथ समझाया गया है। स्थान-स्थानपर विभिन्न

भाषाओंसे उदाहरण भी दिये गये हैं। उदाहरणोंका यह आशय नहीं समझना चाहिये कि वे जिस भाषासे लिये गये हैं, वह भाषा पूर्णरूपेण उस विशेष वर्ग, उपवर्ग या उसके भेद-विभेदसे सम्बद्ध है। कोई भी भाषा पूर्णरूपेण अश्लिष्ट, श्लिष्ट, प्रश्लिष्ट, अयोगात्मक या योगात्मक आदि नहीं कही जा सकती। किसी वर्ग या उपवर्गके लक्षण किसी भाषामें अपेक्षाकृत अधिक मात्रामें मिलनेपर प्रायः वह भाषा उस वर्ग या उपवर्ग आदिकी मान ली जाती है। कहीं-कहीं अपवादस्वरूप भी किसी वर्ग या उपवर्ग आदिके उदाहरण भाषामें मिल गये हैं और उन्हें समझानेके लिए दे दिया गया है। ऐसे स्थलोंमें स्पष्टताके लिए 'अपवाद-स्वरूप' या इसी भावके अन्य शब्दोंका प्रयोग कर दिया गया है।

कुछ विद्वानों––डॉ० मंगलदेव शास्त्री आदि-ने आकृतिकी दृष्टिसे भाषाओंको तीन वर्गोंमें रखा है—(क) **योगात्मक**, (ख) **अयोगात्मक**, (ग) **विभक्ति युक्त**। कहना न होगा-कि तत्त्वतः 'विभक्ति युक्त' वर्ग 'योगात्मक'-में ही समाहित हो जाता है। योगात्मकमें 'प्रकृति' (अर्थतत्त्व) और 'प्रत्यय' (संबंध तत्त्व) का होता है और दोनों स्पष्ट रहते हैं। किन्तु 'विभक्ति प्रधान'में वे इतने मिल जाते हैं कि उन्हें पहचानना असम्भव-सा हो जाता है। इस प्रकार 'योग' दोनोंमें ही है, एकमें 'तिलतंडुल'के समान और दूसरेमें 'पानी-दूध'के समान, अतः दोनों योगात्मक हैं। यहाँ यह भी जोड़ देना अन्यथा न होगा कि ऊपर जिस वर्गीकरणको विस्तारसे देखा गया है, उसमें योगात्मकके तीसरे भेद 'श्लिष्ट'के अन्तर्गत इस 'विभक्तियुक्त' वर्गको रखा जा सकता है। कुछ अन्य विद्वान् डॉ०–श्यामसुन्दरदास आदि भाषाकी आकृतिके आधार-पर चार वर्ग बनानेके पक्षमें हैं ––(१) **व्यास-प्रधान**, (२) **समास-प्रधान**, (३) **प्रत्यय-प्रधान**, (४) **विभक्ति-प्रधान**। इनमें, 'व्यास-प्रधान' वर्ग ऊपरके वर्गीकरणमें 'अयोगात्मक'का ही दूसरा नाम है। शेष तीन दूसरे वर्ग 'योगात्मक'में समाहित हो जाते हैं। डॉ० श्यामसुन्दरदासने भी इस ओर संकेत-सा किया है, जहाँ वे अपने प्रथम वर्गको **निरवयव** तथा शेष तीनको **सावयव**की संज्ञा देते हैं। या तात्त्विक रूपसे भाषाको आकृतिकी दृष्टिसे **निरवयव** और **सावयव**, इन दो वर्गोंमें बाँटते हैं। फिर सावयवके **समास-प्रधान**, **प्रत्यय-प्रधान** और **विभक्ति-प्रधान**, ये तीन भेद करते हैं। इस प्रकार तात्त्विक दृष्टिसे भाषाके केवल दो ही आकृति-मूलक वर्ग बन सकते हैं, अन्य सारे किसी-न-किसी रूपमें उन्हींके अन्तर्गत आ जायँगे। हाँ, व्यावहारिक दृष्टिसे एक दर्जनसे भी ऊपर भेद किये जा सकते हैं।

पारिवारिक वर्गीकरण—उपरकी बातोंसे स्पष्ट है कि आकृतिमूलक या रूपात्मक वर्गीकरणमें ध्यान केवल भाषाकी आकृति, रचना या रूपपर होता है––हम यह देखते हैं कि पद, शब्द या वाक्यका निर्माण कैसे होता है तथा सम्बन्धतत्त्व किस रूपमें आता है––किन्तु **पारिवारिक**, (**ऐतिहासिक**, **उत्पत्तिमूलक या वंशानुक्रमिक**) वर्गीकरणमें हमारा ध्यान उपर्युक्त प्रकारकी रचनाके अतिरिक्त **अर्थ-तत्त्व**पर भी जाता है। दूसरे शब्दोंमें एक वंश या परिवारमें केवल वे भाषाएँ स्थान पाती हैं, जिनमें **आकृति**के अतिरिक्त शब्दोंका भी **अर्थ** और **ध्वनि**की दृष्टिसे साम्य होता है। **भाषाके विविधरूप** (दे०)के अन्तर्गत भाषाके विविध रूपोंपर विचार करते समय **मूल भाषा** और उससे **निकली भाषाओं** या बोलियोंके बारेमें कहा जा चुका है। उसे समक्ष रखते हुए यह कहा जा सकता है कि एक व्यक्तिसे उत्पन्न संतानसे जिस प्रकार पीढ़ी-दर-पीढ़ीमें अनेक लोग उत्पन्न हो जाते हैं और सभी अन्ततः एक परिवारके कहे जाते हैं, उसी प्रकार एक मूल भाषासे पीढ़ी-दर-पीढ़ीमें अनेक भाषाएँ और बोलियाँ उत्पन्न हो जाती हैं और वे सब एक परिवारकी कही जाती हैं। इस प्रकारकी एक प्रकारकी भाषाओं और बोलियोंमें आकृति और शब्द या सम्बन्ध-

तत्त्व और अर्थतत्त्वका साम्य सर्वथा स्वाभाविक है।

यदि गहराईसे देखें तो कहा जा सकता है कि एक परिवारकी भाषाओंमें (१) **शब्द-समूह** (शब्द और अर्थ) (२) **व्याकरण या रचना** (सम्बन्धतत्व) और (३) ध्वनिकी समानता हो सकती है। इनमें प्रायः सबसे कम महत्त्वपूर्ण ध्वनिकी समानता होती है[1], क्योंकि विकास या प्रभावके कारण इसमें प्रायः परिवर्तन होता रहता है, फिर भी अन्य समानताओंके मिलनेपर इससे उसे और निश्चित किया जा सकता है। व्याकरण और शब्द-समूहमें शब्द-समूहका अपेक्षाकृत कम महत्व है, क्योंकि भाषामें विकास और प्रभावके कारण शब्द-समूहमें भी परिवर्तन आता है, अतः एक परिवारकी भाषाएँ भी प्रायः शब्द-समूहमें पर्याप्त भिन्नता रखती हैं (जैसे, रूसी और हिन्दी)। दूसरी ओर दो या अधिक परिवारकी दो या अधिक निकटस्थ भाषाएँ आपसी आदान-प्रदानके कारण आपसमें शब्द-समूहकी पर्याप्त समानता रखती हैं (जैसे मराठी और कन्नड़)[2]। व्याकरणकी समानता अपेक्षया बहुत अधिक स्थायी है। कितनी ही शीघ्रतासे विकास क्यों न हो और किसी समीप या दूरकी भाषाका कितना भी प्रभाव क्यों न पड़े; भाषाकी रचना या व्याकरणिक आकृतिमें परिवर्तन (ध्वनि और शब्द-समूहकी तुलनामें) बहुत धीमा होता है। इसी कारण भाषाओंको एक परिवारमें रखनेके लिए उनके व्याकरणका तुलनात्मक और ऐतिहासिक अनुशीलन बहुत जरूरी है। ऐतिहासिक अध्ययनके आधारपर उनके बहुतसे रूपोंके जनक उस आदि रूपका पता लगाया जा सकता है, जो उस मूल या आदि भाषाका होगा, जिससे दोनों (या अधिक) भाषाएँ निकली हैं।

शब्द-समूहकी समानताका प्रश्न कुछ और विस्तारसे विचारणीय है। किसी भी भाषाका शब्द-समूह कई प्रकारका होता। एक तो **आधार या मूल शब्द-भंडार** होता है, जिसमें सम्बन्धियोंके लिए प्रयुक्त शब्द (माता-पिता आदि)[3], सामान्य घर-गृहस्थीमें प्रयुक्त

१. कुछ विद्वानोंने इन तीनोंमें ध्वनिको सबसे महत्वपूर्ण माना है। इसमें कोई संदेह नहीं कि प्रायः जो शब्द गृहीत किये जाते हैं, उनमें नयी ध्वनियोंके स्थानपर अपनी पुरानी ध्वनियाँ रख ली जाती हैं, किन्तु परिवर्तन भी होता है। हिन्दीमें ऑ, क़, ख़, ग़, ज़, फ़ आदि ऐसे ही आये हैं। यदि अनुपात निकाला जाय तो सबसे स्थायी चीज़ तो व्याकरण है। ध्वनि और शब्दमें कभी किसीको प्राथमिकता दी जा सकती है और कभी किसीको।

२. शब्द-समूहकी तुलनामें प्रमुख गड़बड़ियाँ तीन हैं—(क) संभव है दोनों भाषाओंमें दो मिलते-जुलते शब्द किसी तीसरी भाषासे आये हों। (जैसे, रूसी chai और तुर्की chay, इन दोनोंमें यह शब्द चीनीसे गया है। अतः इसके या ऐसे शब्दोंके आधारपर दो भाषाओंको एक परिवारका नहीं माना जा सकता। तुर्की और हिन्दीमें अरबीके बहुतसे शब्द हैं, किन्तु इस समानताके कारण उन्हें एक परिवारका नहीं कहा जा सकता। इसी प्रकार आपसमें आदान-प्रदानके कारण भी शब्द-साम्यसंभव है। अरबी-फ़ारसी, मराठी-कन्नड़ ऐसी ही भाषाएँ हैं, किन्तु उन्हें एक परिवारकी नहीं माना जा सकता। (ख) संभव है दोनों भाषाओंके मिलते-जुलते शब्द किसी भी प्रकारका ऐतिहासिक सम्बन्ध न रखते हों और केवल ध्वनि-परिवर्तन होते-होते उनमें आकस्मिक समानता आ गयी हो (जैसे, अंग्रेज़ी near, भोजपुरी नियर) संस्कृत निकट; या संस्कृत सूप अं० soup आदि)। (ग) अनुकरणके आधारपर बने शब्दोंमें प्रायः समानता होती है, पर वह भी इस दृष्टिसे व्यर्थ है जैसे, मिस्री म्याउँ, हिन्दी म्याउँ और चीनी म्याऊँ। इसका आशय यह भी हुआ कि समानता-निर्धारणमें भाषाओंका इतिहास, उनका आपसी सम्बन्ध तथा अन्य भाषाओंसे उनका सम्बन्ध भी विचार्य है।

३. संस्कृत पितृ (पिता), ग्रीक pater, लैटिन pater फ्रेंच pere स्पैनिश padro

शब्द (आग-पानी आदि), अंगोंके नाम (हाथ, मुँह, आँख आदि), सर्वनाम (मैं,तुम आदि), संख्यावाचक विशेषण (एक, दो, तीन आदि) तथा दैनिक जीवनकी सामान्य क्रियाएँ (उठना-बैठना, खाना-पीना आदि धातुएँ) आदि आती हैं। शब्द-समूहका यह वर्ग अपेक्षाकृत अधिक स्थायी होता है और इसमें प्रायः परिवर्तन नहीं होता। साथ ही यह शब्द-भंडार अन्य भाषाओंसे प्रभावित भी बहुत कम ही होता है। इसीलिए शब्द-भंडारकी समानताके आधारपर दो भाषाओंको एक परिवारका माननेमें, इसी वर्गपर विशेष रूपसे ध्यान दिया जाता है। इसमें अगर साम्य है तो भाषाओंके एक परिवारके होनेकी सम्भावना पर्याप्त होती है। शब्द-समूहका शेष भाग उच्च, उच्चतर, उच्चतम आदि कई अन्य प्रकारोंका होता है, किन्तु वह प्रायः भाषाके प्रारम्भिक रूपसे संबंध नहीं रखता। साथ ही उसपर पारिवारिक दृष्टिसे असम्बद्ध भाषाओं (जैसे, हिन्दीमें अरबी, तुर्की आदि) के प्रभावकी भी पूरी सम्भावना रहती है, अतः इस दृष्टिसे बिल्कुल भी विश्वसनीय नहीं होता।

शब्दोंकी समानतापर विचार करते समय इस बातका भी ध्यान आवश्यक है कि वे शब्द यथासाध्य तद्भव हों। तत्सम और अर्द्ध-तत्सम उस रूपमें किसी भाषाके अपने नहीं होते, जिस रूपमें तद्भव होते हैं। तत्वतः तत्समको तो विदेशी या विजातीय कहा जाय, तो अत्युक्ति न होगी।

व्याकरणिक दृष्टिसे समानता रखनेवाले सबसे अधिक विश्वसनीय शब्द क्रिया और सर्वनाम हैं, क्योंकि प्रायः एक भाषासे दूसरीमें संज्ञा और कभी-कभी विशेषण आदि तो लिये जाते हैं, किन्तु क्रिया और सर्वनाम प्रायः नहीं लिये जाते। व्याकरणकी समानतामें प्रमुखतः तीन बातें विचार्य हैं—(१) धातुसे शब्द बनानेकी समानता, (२) मूल शब्दसे पूर्वसर्ग (prefix), मध्यसर्ग (infix) तथा अंतसर्ग (suffix) आदि जोड़कर अन्य शब्दोंके बनानेकी समानता तथा (३) वाक्यरचनाकी समानता। ऊपरकी बातोंके निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि दो भाषाओंको एक परिवारका सिद्ध करनेके लिए निम्नांकित बातें आवश्यक हैं—(१) ध्वनियोंकी समानता। (२) यदि कुछ ध्वनियाँ भिन्न हैं तो, (क) किसी भाषाके प्रभाव या (ख) स्वाभाविक विकासके आधारपर उनके आगमनके कारणकी प्राप्ति या उनका इतिहास दर्शन। (३) शब्दों [प्रमुखतः मौलिक शब्द-भंडारके संज्ञा, क्रिया (धातु), सर्वनाम और संख्यावाचक विशेषण] में ध्वनि और अर्थकी समानता। (४) दोनों भाषाओंके इतिहास द्वारा इस बातका निर्णय कि शब्दों या ध्वनियोंकी समानता आपसी सम्बन्ध या किसी अन्य भाषाके प्रत्यक्ष प्रभावके कारण तो नहीं है। (५) धातु या मूल शब्दमें कुछ व्याकरणिक तत्व जोड़ (या घटाकर) अन्य शब्दोंके बनानेकी प्रक्रियाकी समानता। (६) वाक्य-रचनाकी समानता।

वर्गीकरण—१७वीं सदीमें जब यूरोपीय विद्वानोंको संस्कृतका पता चला और उन्होंने ग्रीक और लैटिन आदिके साथ इसका तुलनात्मक अध्ययन किया तो इस बातका निश्चय हुआ कि इतनी समानता आकस्मिक नहीं है और निश्चय ही ये सब किसी एक भाषासे निकली हैं। भाषाओंके वैज्ञानिक पारिवारिक वर्गीकरणका आरम्भ यहींसे होता है। इसके पहले प्रायः पुराने धार्मिक लोग संसारकी सारी भाषाओंको एक परिवारकी मानते थे। किसीके अनुसार आदि और मूल भाषा संस्कृत थी और संसारकी सभी भाषाएँ इसीसे निकली थीं, तो किसीके अनुसार हिब्रूकी यही स्थिति थी और किसीके अनुसार फ्रीजियन या अरबी आदिकी।

ऊपर पारिवारिक वर्गीकरणके आधारोंपर प्रकाश डाला गया है। उससे स्पष्ट है कि अच्छी

जर्मन vater **पुरानी अंग्रेज़ी** faeder, **अंग्रेज़ी** father, **फ़ारसी पिदर**, **हिन्दी पिता तथा पंजाबी पिउ आदि।**

तरह तुलनात्मक और ऐतिहासिक अध्ययनके उपरान्त ही इस सम्बन्धमें निश्चित निर्णय दिया जा सकता है। इतना गहरा और विस्तृत अध्ययन केवल भारोपीय, सेमिटिक या द्रविड़ आदि कुछ ही परिवारोंका हुआ है। ऐसी स्थितिमें इन दो-तीनके बारेमें तो निश्चयके साथ कहा जा सकता है, किन्तु शेषके बारेमें कहना कठिन है। १८२२में जर्मन विद्वान् विल्हेम फ़ॉन हम्बोल्ड्टने इस बातपर विस्तारसे विचार करके संसारमें कुल १३ परिवार माने थे। पार्टिरिजके अनुसार १० परिवार ही हैं। आधुनिक विद्वान् राइस (reiss) एक परिवार माननेके पक्षमें हैं। ग्रे २६ मानते हैं। भारतीय विद्वानोंकी संख्या १० और १८के बीचमें है। फ्रेडरिक मूलर आदि विद्वानोंके अनुसार संसारमें इस समय लगभग १०० परिवार हैं। कुछ विद्वानोंके अनुसार केवल अमेरिकामें ही १०० परिवार हैं। इस प्रकार एकसे कई सौके बीच विद्वान् घूम रहे हैं, किन्तु सत्य यह है कि अभीतक संसारभरकी भाषाओंका ठीकसे अध्ययन (तुलनात्मक और ऐतिहासिक) नहीं हुआ है, अतः उपर्युक्त सारे मत अनुमानके अतिरिक्त और कुछ नहीं हैं। हाँ, मोटे रूपसे यह अवश्य कहा जा सकता है कि संसारके प्रमुख भाषा परिवार ये हैं—(१) भारोपीय, (२) सेमिटिक, (३) हेमेटिक, (४) यूराल-अल्ताइक, (५) चीनी या एकाक्षरी, (६) द्रविड़, (७) मलय-पालिनीशियन, (८) बांटू, (९) बुशमैन, (१०) सूडानी, (११) आस्ट्रेलियन-पापुवन, (१२) रेड-इंडियन, (१३) काकेशी, (१४) जापानी—कोरियाई (कुछ विद्वान् नं० ७, ११ तथा १४के दो-दो परिवार मानते हैं)। इस प्रकार पारिवारिक वर्गीकरणका प्रश्न काफ़ी उलझा हुआ है। स्पष्टता और सुबोधताकी दृष्टिसे भूगोलके आधारपर संसारकी भाषाओंको कुछ खंडोंमें बांट लेना अधिक सुविधाजनक है। इन खंडोंमें विभिन्न भाषा-परिवार सम्मिलित हैं। भाषा-खण्ड ये हैं:—(१) अफ्रीका-भाषा-खंड (२) यूरेशिया-भाषाखंड (३) प्रशांतमहासागरीय भाषाखंड और (४) अमेरिका-भाषाखंड। हर खण्डमें कौन-कौनसे भाषा-परिवार या परिवार-वर्ग हैं, कोशमें यथास्थान देखा जा सकता है।

विश्वकोश (encyclopedia)—विशेष स्तरपर किसी एक या सभी विषयोंकी अपेक्षित सभी जानकारियोंसे युक्त कोश। मानव ज्ञानकी सभी शाखाओंको विशेष स्तरपर समाहित करनेवाला संदर्भ ग्रंथ।

विषमीकरण (Dissimilation)—एक प्रकारका ध्वनि-परिवर्तन। (दे०) **ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ**। यह **समीकरण** (दे०)—का उलटा है। इसमें मूलतः दो ध्वनियाँ एक-सी ही या समान, अर्थात् सम रहती हैं, किंतु बादमें मुख-सुखके लिए एक ध्वनि अपना स्वरूप छोड़कर दूसरी, अर्थात् विषम बन जाती है। जैसे, कंकणसे कंगन। इसके **व्यंजन** तथा **स्वर** दो भेद तथा कई विभेद हैं। [अ] **व्यंजन**—इसके दो भेद किये जा सकते हैं:—(क) **पुरोगामी व्यंजन विषमीकरण**—जब प्रथम व्यंजन ज्यों-का-त्यों रहे और दूसरा परिवर्तित हो जाय, तो उसे पुरोगामी विषमीकरण कहते हैं। जैसे लाँगूली = लंगूर ; काक = काग; कंकण = कंगन; लैटिन turtur = अंग्रेज़ी turtle; लैटिन–marmor = marble.। (ख) **पश्चगामी व्यंजन विषमीकरण**—इसमें प्रथम व्यंजनमें विकार होता है। जैसे, नवनीत = लयनू; पुर्तगाली lelloo = नीलाभ; दरिद्र = दलिद्दर; साबस (शाबास) = चाबस (भोजपुरी)। [आ] **स्वर**—व्यंजनकी भाँति स्वरोंमें भी विषमीकरण देखा जाता है। (क) **पुरोगामी स्वर विषमीकरण**—तिलक = टिकली; पुरुष = पुरिस (कबीरमें)। (ख) **पश्चगामी स्वर विषमीकरण**—मुकुट = मउर; नूपुर = नेउर; kaleb (कुत्ता) = keleb; मुकुल = बउर। विषमीकरणके लिए **विषमी भवन** एक अच्छा नाम हो सकता है।

विषय पूर्वपद कर्मधारय समास—(दे०)

समास ।

विषय पूर्वपद बहुव्रीहि समास (दे०)-**समास**।

विषयवाचक संबंध सूचक अव्यय––(दे०) **संबंध सूचक अव्यय** ।

विष्णु कृत्य––**कृत्य** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

विसर्ग––एक प्रकारकी ध्वनि । 'विसर्ग'का शाब्दिक अर्थ है '(साँस) बाहर निकालना ।' इसके उच्चारणमें केवल हवाको (अधिक मात्रामें) बाहर निकालना पड़ता है और कोई प्रयास नहीं करना पड़ता, इसीलिए इसे कदाचित् इस नामसे पुकारा गया है। इसके प्राचीन नाम **अभिष्निठान**, **विसर्जनीय** (दे०) तथा **विसृष्ट** आदि मिलते हैं। प्रातिशाख्यों, पाणिनि तथा कातंत्रमें 'विसर्ग' शब्द नहीं मिलता । सम्भवतः हेमचन्द्रने ही इसका प्रथम प्रयोग किया है । ऋग्वेद प्रातिशाख्य तथा ऋक्तंत्रके अनुसार प्राचीनकालमें विसर्गको (विसर्जनीय) नामसे **उरस्य** (दे०) ध्वनि माना गया है––'उरसि विसर्जनीयो वा' । वस्तुतः विसर्ग **अघोष** (दे०) 'ह' है। विसर्गको **अयोगवाह** (दे०) भी कहा गया है । इसे प्रायः **वर्ण समम्नाय**में स्थान नहीं मिला है, यद्यपि कुछ प्रातिशाख्य, शिक्षाग्रंथ तथा महाभाष्य आदि इसे अक्षर माननेके पक्षमें हैं । विसर्ग दो विन्दुओं (:)से व्यक्त किया जाता है, इसी कारण इसे दो स्तनोंके समान (कुमारीस्तनयुगाकृतिर्वर्णो विसर्जनीय संज्ञो भवति––दुर्गसिंह) कहा गया है। **जिह्वामूलीय** (दे०) और **उपध्मानीय** (दे०) विसर्ग ही हैं । संस्कृतके प्राचीन ग्रंथोंमें इसे **व्यंजन** (जिह्वामूलीय या उपध्मानीय हो जानेपर) तथा **स्वर** (शुद्ध विसर्ग रहनेपर) दोनों ही माना गया है। शुद्ध विसर्ग, जो उपध्मानीय या जिह्वामूलीय न बना हो, पूर्ववर्ती स्वरके आश्रित रहता है, इसीलिए उसे स्वर कहा गया है ।

विसर्ग-संधि––(दे०) **संधि** ।

विसर्जनीय––इसका शाब्दिक अर्थ है '(साँस) बाहर निकालनेसे सम्बद्ध' । इसके इस प्रकार उच्चारणके कारण ही इसका यह नाम पड़ा है। इसका प्राचीन नाम अभिनिष्ठान मिलता है । इसे 'विसृष्ट' तथा **विसर्ग** (दे०)भी कहा गया है ।

विसर्जनीय-संधि––(दे०) **संधि** ।

विसा (wisa)––**विसा** (दे०)का एक नाम।

विसृष्ट––**विसर्ग** (दे०)का एक प्राचीन नाम।

विस्मयबोधक अव्यय––(दे०) **मनोविकार-बोधक अव्यय** ।

विस्मयसूचक चिह्न––एक प्रकारका विराम-चिह्न । इसे कभी-कभी संज्ञा शब्दोंके साथ रखते हैं, किंतु अधिकांशतः वाक्यके अंतमें इसका प्रयोग होता है । इसे लोग विरामका एक भेद मानते हैं, किंतु वस्तुतः यह एक पूर्ण विराम है । (दे०) **विराम** ।

विस्मयसूचक वाक्य––ऐसा वाक्य, जिसमें वक्ताके आश्चर्य प्रकट करनेका भाव व्यक्त हो । जैसे––'अरे यह क्या किया !'

विस्मयादि बोधक अव्यय––(दे०) **मनोविकार बोधक अव्यय** ।

वुइते (vuite)––**पइते** (दे०) का चिन पहाड़ियोंपर प्रयुक्त एक रूप ।

वू (wu)––यांग्ट्सी घाटीमें तथा उसके आसपास शंघाई, सूचो आदिमें प्रयुक्त एक चीनी बोली, जिसके बोलनेवालोंकी संख्या चार करोड़से ऊपर है ।

वृत्तमुखी (rounded)––जिसके उच्चारणके समय ओष्ठोंको गोल कर लिया जाय । ऊ, उ, ओ, ऑ आदि स्वर वृत्तमुखी हैं । वृत्तमुखीको गोल या **वृत्ताकार** भी कहते हैं।

वृत्ताकार––(दे०) **वृत्तमुखी** ।

वेंड––**लुसेशन** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

वेंडा (venda)––**बांटू** (दे०) परिवारकी पूर्वी अफ्रीका, चुआना और तटीय प्रदेशके बीच प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा ।

वेइट्स्पेकन (weitspekan)––**यूरोक** (दे०)–का एक अन्य नाम ।

वे-कुट (we-kut)––**तई-लोई** (दे०) का नाम ।

वेक्सोज़ (vexoz)––**मटको-मटगुअयो** (दे०)

परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसका अन्य नाम ऐयो (aiyo) है।

वेगलियन (veglian)—**दल्मेशन** (दे०) भाषाकी एक विलुप्त बोली।

वेट्—(दे०) **सेट्**।

वेन-लि (wen-li)—चीनीकी परम्परागत-साहित्यिक भाषा। वर्तमान राष्ट्रभाषा **कुयो-यू** (दे०) इसीके लिपि-चिह्नोंको प्रयुक्त करती है।

वेनिशन (venition)—(१) उत्तरी इटली-की कुछ बोलियोंके समूहका नाम। (२) वेनिस नगरमें प्रयुक्त इतालवी बोली।

वेनेतिक (venetik) भारोपीय परिवारकी एक विलुप्त भाषा, जो कभी एड्रिआटिक सागरके चारो ओर बोली जाती थी।

वेप्स (veps)—**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी एक भाषा, जिसके बोलनेवाले वेप्स लोग हैं। इसका क्षेत्र वोल्गा और नीपर नदियोंके बीचमें है। इसे **वेप्सिअन**, **वेप्सिश**, **वेप्से** आदि नामोंसे भी पुकारते हैं।

वेप्सिअन—**वेप्स** (दे०) भाषाका एक नाम।

वेप्सिश—**वेप्स** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

वेप्से—**वेप्स** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

वेरोन (veron)—**वसी-वेरी** (दे०) का एक अन्य नाम।

वेलम (welam)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ऊपरी छिन्दविनमें (लगभग १,००० व्यक्तियों द्वारा) व्यवहृत **चीनी परिवार** (दे०) की एक **नागा** (दे०) भाषा।

वेलौंग (weloung)—**चीनी परिवार** (दे०)-की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके, कुकी-चिन वर्गकी एक 'दक्षिणी चिन भाषा'।

वेल्तपार्ल (veltparl)—**वोलपूक** (दे०)-के आधारपर १८९६ई०में अर्निस द्वारा बनायी गयी एक कृत्रिम भाषा।

वेल्श (welsh)—वेल्ज़में प्रयुक्त, भारोपीय परिवारकी केल्टी शाखाकी बाइथोनिक उपशाखाकी एक भाषा। इसके बोलनेवालों-की संख्या लगभग ७,५०,००० है। वेल्शकी प्रमुखतः चार बोलियाँ हैं :—(१) **वेनोडो-टिअन** (venodotian)—यह उत्तर पश्चिममें बोली जाती है। (२) **पोविसिअन** (powysian)—उत्तरी पूर्वी तथा मध्य-वर्ती भाग इसका क्षेत्र है। (३) **डिमेटिअन** (demetian)—यह दक्षिण-पश्चिममें बोली जाती है। (४) **ग्वेन्टिअन** (gwentian)—यह दक्षिण-पूर्वमें प्रयुक्त होती है। वेल्श भाषाका इतिहास ९वीं सदीसे आरंभ होता है। इसका पूरा विकास आदि काल (९वीं—११वीं), मध्य काल (१२वीं—१४वीं) तथा आधुनिक काल (१५वीं—), इन तीन कालोंमें बँटा है। वेल्शके साहित्यकारोंमें डैफिड अप ग्विलिम तथा त्वम ओर नैन्ट आदि प्रमुख हैं।

वेव (wewa)—**स्गव करेन** (दे०) का एक रूप।

वेवव (wewaw)—**स्गव करेन** (दे०) का एक रूप।

वेवृत्त स्वरित—एक प्रकारका **स्वरित** (दे०)।

वेस्तिनिअन (vestinian)—केन्द्रीय इटली-में वेस्तिनी (एकसेबाइन जाति) लोगों द्वारा प्राचीन कालमें प्रयुक्त एक विलुप्त बोली। यह भारोपीय परिवारकी इटैलिक शाखाकी सेबेलियन भाषाकी एक बोली थी।

वैंडल—(दे०) **वैंडलिक**।

वैंडलिक (vandalic)—एक विलुप्त पूर्वी जर्मनिक भाषा, जिसे वंडालिक लोग (ओडर और विश्चुला नदियोंके बीच) बोलते थे। इसे **वैंडल** भी कहते हैं। (दे०) **जर्मनिक**।

वैकल्पिक द्वंद्व समास—(दे०) **समास**।

वैकल्पिक ध्वनि (free varient)—ऐसी ध्वनि, जिसका प्रयोग किसी भाषा या भाषाके विशिष्ट स्तरके रूपमें विकल्पसे किया जा सके। उदाहरणार्थ, हिन्दी प्रदेशकी लोक-बोलियों (अख़बार, अखबार, वक़्त, वक्त, ग़रीब, गरीब ज़्यादा, ज्यादा, फ़ौरन, फौरन-आदि) में बहुतसे शब्दोंमें ख़-ख, क़-क, ग़-ग, ज़-ज, फ़-फ ध्वनियाँ वैकल्पिक हैं।

वैकल्पिक रूप (free varient)—ऐसा रूप, जिसके (किसी भाषामें) प्रयोगके संबंधमें

विकल्प हो। अर्थात् बिना अर्थ परिवर्तनके उसके स्थानपर किसी अन्य रूपका प्रयोग भी संभव हो (जैसे करा, किया)।

वैका (waika)—**शिरिअंना** (दे०) परिवार-की एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

वैगन्न (waiganna)—**ग्वायन** (दे०)का एक दूसरा नाम।

वैचारिक बलाघात (thought stress)—बोलनेमें, ज़ोर देनेके लिए वाक्यके किसी एक शब्दपर डाला गया बलाघात। यह बलाघात निश्चित नहीं होता। बोलनेवालेकी इच्छापर निर्भर करता है। इससे वाक्यके अर्थमें कुछ अन्तर आ जाता है। यहाँ बलाघात एक प्रकारसे 'ही'का समानार्थी होता है। 'मैं तुम्हें मारूंगा'—में 'मैं'पर बलाघातका अर्थ है 'मैं ही' और 'तुम्हें'पर बलाघातका अर्थ है 'तुम्हें ही'।

वैताल अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

वैदर्भ अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

वैदर्भी अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०)का एक रूप।

वैदिक—वैदिक साहित्यमें प्रयुक्त शब्दोंके लिए महाभाष्यकार द्वारा दिया गया एक नाम। (दे०) **शब्द**।

वैदिक संस्कृत—**संस्कृत**का वैदिककालीन रूप। (दे०) **प्राचीन भारतीय आर्य भाषा**।

वैदिकी—(१) **वैदिक संस्कृत** (दे०)का एक नाम। (२) **लेट्लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

वैधानी—**लिङलकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

वैधी—**लिङ्लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

वैयाकरण (grammarian)—व्याकरण शास्त्रका विद्वान् या अध्येता। 'व्याकरणमधीते वैयाकरणः', इस अर्थमें इसका प्रयोग महाभाष्यमें तथा उसके बाद ही अधिक हुआ है। उसके पूर्व इस अर्थमें 'वाग्योगविद्' या 'शाब्दिक' का प्रयोग मिलता है।

वैलकी (wailaki)—**पैसिफ़िक** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

वैलून (walloon)—उत्तरी पूर्वी फ़्रांस तथा दक्षिणी बेल्जियममें प्रयुक्त एक रोमांस (भारोपीय परिवारकी इतैलिक शाखाकी) बोली।

वैवपश्चात्य अपभ्रंश—**अपभ्रंश** (दे०)का एक भेद।

वैवृत्तसुर—**सुर** (दे०)का एक भेद।

वैशेषणिक क्रियाविशेषण—(दे०) **क्रिया विशेषण**।

वैशेषणिक संबंधसूचक अव्यय—(दे०) संबंधसूचक अव्यय।

वोगुल (vogul)—वोगुल नामक फ़िनो-उग्रिक जातिके लगभग पाँच हजार लोगों द्वारा (उत्तरी यूरालपर) बोली जानेवाली एक **यूराल अल्ताई** (दे०) भाषा।

वोड्ड (vodda)—**ओडकी** (दे०)का एक अन्य नाम।

वोड्डर (voddar)—**ओड्की** (दे०)का एक दूसरा नाम।

वोड्डा (vodda)—**ओड्की** (दे०)का एक दूसरा नाम।

वोत्यक (votyac)—कम और व्यत्कके बीच वोत्यक (रूस) प्रदेशमें वोत्यक नामक फ़िनो-उग्रिक जाति द्वारा प्रयुक्त एक **यूराल-अल्ताई** (दे०) भाषा। इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग साढ़े चार लाख है।

वोर्ग्विग्नों (bourguignon)—**बुरगंडी**में प्रयुक्त एक फ्रांसीसी बोली। इसे बुरगंडी भी कहते हैं।

वोलपूक (volpuk)—जान मार्टिन श्लेयर द्वारा १८७९में बनायी गयी प्रमुखतः अंग्रेजी-पर आधारित एक कृत्रिम भाषा। यह भाषा विश्व-भाषाके रूपमें बनायी गयी थी। 'वोलपूक' का शब्दार्थ भी है 'विश्व-भाषा'। इसका थोड़ा-बहुत प्रयोग हुआ था। वोलपूकको सुधारकर **इडियम न्यूट्रल** (दे०), **लाँब्लू** (दे०), **वाल्टा** (दे०), **दिल** (दे०), **स्पेलिन** (दे०), **वेल्तपार्ल** (दे०), **बोपल** (दे०) तथा अन्य अनेक कृत्रिम भाषाएँ बादमें बनायी गयीं।

वोलोफ (wolof)—**सूडानवर्ग** (दे०)की

पश्चिमी सूडानमें सेनेगल नदीके आसपास 'वोलोफ़' जातिमें प्रयुक्त एक भाषा। इसे **जोलोफ़** (jolof) तथा **योलोफ़** (yolof) भी कहते हैं।

वोल्टाइक (voltaic)––**सूडानवर्ग** (दे०) की कुछ भाषाओंका एक वर्ग।

वोल्स्कियन (volscian)––भारोपीय परिवारकी एक विलुप्त **सबेलियन** (दे०) बोली।

वोलिव्का (volivka)––१९२१की बंबई जनगणनाके अनुसार पश्चिमी खानदेशमें प्रयुक्त एक **भील** (दे०) बोली।

वोरा (waura)––दक्षिणी अमेरिकाके **अरवक परिवार** (दे०) की एक भाषा। इसका क्षेत्र उत्तरी आमेज़न है।

वृत्तमुखी (rounded)––ऐसी ध्वनि, जिसके उच्चारणमें ओष्ठ वृत्ताकार कर लिये जायँ। इसे वृत्ताकार भी कहते हैं।

वृत्तमुखी स्वर (rounded vowel)––ऐसा स्वर, जिसके उच्चारणमें ओष्ठ वृत्तमुखी हों। इसे **वृत्ताकार स्वर** भी कहते हैं। जैसे ओ, अं आदि। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण-में स्वरोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक।

वृत्ताकार––(दे०) **वृत्तमुखी**।

वृत्ताकार स्वर––**वृत्तमुखी स्वर** (दे०) का एक अन्य नाम।

वृद्धि––पाणिनि द्वारा 'आ, ऐ, औ' इन तीन स्वरोंके लिए प्रयुक्त एक सामूहिक नाम। अष्टाध्यायीमें आता है:––'वृद्धिरादैच्' (१.१.१)। (दे०) **स्वर श्रेणी**।

वृषन्––पुल्लिंगका संस्कृतमें प्राचीन नाम। (दे०) **लिंग**।

व्यंजक शब्द––एक प्रकारके शब्द। (दे०) **शब्द-शक्ति**।

व्यंजन (consonant)–'व्यंजन' वह ध्वनि है, जिसके उच्चारणमें हवा अवाध गतिसे नहीं निकल पाती। या तो उसे पूर्णतः अवरुद्ध होकर फिर आगे बढ़ना पड़ता है, या संकीर्ण मार्गसे घर्षण खाते हुए निकलना पड़ता है, या मध्य रेखासे हटकर या दोनों पार्श्वोंसे निकलना पड़ता है, या किसी भागको कंपित करते हुए निकलना पड़ता है। इस प्रकार वायु-मार्गमें पूर्ण या अपूर्ण अवरोध उपस्थित होता है। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वर और व्यंजन** उपशीर्षक।

व्यंजन त्रिक (consonantal trigraph)––तीन व्यंजनोंका त्रिक, जो किसी एक व्यंजनके प्रकट करनेके लिए प्रयुक्त हो। जैसे जर्मनमें set।

व्यंजन युग्मक (consonantal digraph)––दो व्यंजनोंका युग्म, जो किसी एक ध्वनिको प्रकट करे। जैसे dz=ज।

व्यंजन विज्ञान–किसी भाषा या बोली आदिके, या सामूहिक रूपसे विश्व भाषाओंके व्यंजनोंका वर्णनात्मक, तुलनात्मक या ऐतिहासिक अध्ययन।

व्यंजन-विपर्यय––**विपर्यय** (दे०) का एक भेद।

व्यंजन-संधि––(दे०) **संधि**।

व्यंजनात्मक लिपि (consonantal script)––ऐसी लिपि, जिसमें केवल व्यंजनोंके लिए चिह्न हों।

व्यंजनात्मक स्वर (consonantal vowel)––**संयुक्त स्वर** (दे०) में एक स्वर प्रधान होता है तथा एक गौण। यह गौण स्वर ही व्यंजनात्मक स्वर कहलाता है।

व्यंजना शक्ति–एक प्रकारकी **शब्द-शक्ति** (दे०)

व्यंजनीकरण (consonantization)––किसी शब्दमें स्वर या अर्द्धस्वरका व्यंजन हो जाना। इसको **व्यंजनी भवन** भी कहा जा सकता है।

व्यंजनी भवन––**व्यंजनीकरण** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

व्यंजनीय अपनिहिति––एक प्रकारके **अपनिहित** (दे०)।

व्यंजनोंका वर्गीकरण (classificatian of consonants)–(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**––में **व्यंजनोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक।

व्यंडोट (wyandot)––**हुरोन** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

व्य––**कुत्स्न** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

व्यक्तयोग भाषा—**योगात्मक भाषा** (दे०) का एक अन्य नाम ।

व्यक्ति—(दे०) **लिंग** ।

व्यक्ति नाम विज्ञान—**नाम विज्ञान** (दे०) का एक भेद ।

व्यक्तिबोधक संज्ञा—(दे०) **व्यक्तिवाचक संज्ञा**

व्यक्तिबोधक सर्वनाम—(दे०) **सर्वनाम**

व्यक्ति-बोली (idiolect)—भाषाका एक रूप । किसी व्यक्ति-विशेषकी बोलीको व्यक्तिबोली कहते हैं । इसकी अपनी विशेषताएँ होती हैं, जो उस व्यक्ति-विशेषसे सम्बद्ध होती हैं । इसे **व्यक्ति-भाषा** भी कहते हैं । (दे०) **भाषाके विविध रूप** ।

व्यक्ति-बोली विकास (linguistic ontogeny)—'आंटोजेनी' (व्यक्ति-विकास) शब्द मूलतः जीव-विज्ञानका है । इसका प्रयोग १८७०के आसपास किसी एक व्यक्ति (मनुष्य या अन्य जीव)के विकासके लिए किया गया । आधुनिक कालमें भाषा-विज्ञानवेत्ताओंने इसके साथ लिंग्विस्टिक जोड़कर भाषा-विज्ञानकी शाखाके रूपमें इसे स्वीकार कर लिया है । इसमें व्यक्ति-भाषा (idiolect)में जन्मसे मृत्यु-तक विकासकी प्रक्रियाका अध्ययन होता है । (दे०) **व्यक्ति बोली** । दूसरे शब्दोंमें इसमें एक व्यक्तिकी भाषा या बोली-के विकास (जन्मसे मृत्युतक)का अध्ययन किया जाता है । बच्चोंकी भाषापर ओविस सी० इरविन, मैकार्थी, वाट्स, लियोपोल्ड, याकोब्सन, ब्रेंडनबर्ग, डेलाक्रवायक्स, केलाग, स्टर्न, कैंज, सिद्धेश्वर वर्मा आदि कई विद्वानोंने काम किया है, जिसे इस अध्ययनसे सम्बद्ध माना जा सकता है । सैद्धांतिक दृष्टिसे इस विषयपर हाकेट तथा कुछ अन्य लोगोंने विचार किया है । **व्यक्तिबोली विकास**को **व्यक्ति भाषा विकास** भी कहते हैं । छोटे बच्चेमें भाषा जैसी कोई चीज नहीं होती, किन्तु भूखा या दर्द आदिसे पीड़ित होनेपर वह रोकर या अंगोंको पटककर अपनी प्रति-क्रिया व्यक्त करता है और यह प्रतिक्रिया ही उसके लिए भाषा बन जाती है । माँ समय और स्थितिके आधारपर इन प्रतिक्रियाओंसे उसके भूखे या दर्द आदिसे पीड़ित होनेका अनुमान लगा लेती है । धीरे-धीरे उसे पता चल जाता है कि भूखा होनेपर रोनेकी क्रिया द्वारा वह खाना पा सकता है और तब वह रोनेका धीरे-धीरे भाषाके रूपमें प्रयोग करने लगता है । साथ ही अभ्याससे पीठ ठोंक-ने आदिसे सोने और बैठानेसे शौच होने आदिके रूपमें वह माँके इशारों या इशारों-की भाषाको समझने लगता है । इस प्रकार विचारोंका आदान-प्रदान बच्चा बहुत छोटी अवस्थासे करने लगता है, किन्तु इसे सच्चे अर्थोंमें 'भाषा'की संज्ञा नहीं दी जा सकती । दोनोंमें बहुत अन्तर है । फिर, धीरे-धीरे बच्चोंमें अनुकरणकी प्रवृत्ति आ जाती है, साथ ही वह ओठोंसे और जीभसे तरह-तरहकी ध्वनियोंको बिना किसी उद्देश्यके उच्चरित करता है । यों तो पैदा होते ही बच्चा रोनेके रूपमें हँ, कँ, यँ, आँ आदि ध्वनियोंका उच्चारण करता सुना जाता है किन्तु शीघ्र ही वह अन्य ध्वनियोंका भी उच्चा-रण करने लगता है । कुछ लोगोंका कहना है कि बच्चा पहले दोनों ओठोंसे बोली जानेवाली ध्वनियाँ कहता है, किन्तु यह बात पूर्णरूपेण सत्य नहीं है । मैंने व्यक्तिगत रूपसे अपनी लड़कीमें ध्वनियोंके उच्चारणमें विकासका अध्ययन पर्याप्त सावधानीसे किया है । आरम्भ में 'किहाँ-कियाँ' जैसी ध्वनि सुनायी पड़ती थी । एक महीने २२ दिनकी होनेपर लड़की 'घी-घी' जैसी ध्वनि करने लगी । एक महीने बाद, अर्थात् लगभग पौने तीन महीनेकी होने-पर दुखी होनेपर अघी, ङ ङ, हियाँ, अँगा, अंङा, अँहँ-अँहँ, अङ ऽऽ, उहँ-उहँ जैसी ध्वनियाँ उच्चरित करती थी और प्रसन्न होकर खेलते समय हँ-हँ, अबू-अबू, अफ्-अफ्, अँऽऽ, अँऽऽ, गे-गे, गी-गी, अगी-अघी आदि । निष्कर्षतः अनुनासिक और घोष ध्वनियोंका यहाँ प्राधा-न्य माना जायगा । यों कुछ ऐसे बच्चे भी देखे गये हैं, जो म, प, ब का भी उच्चारण इस काल-

में विशेष रूपसे करते हैं। इस प्रकारके अनर्गल ध्वनि-समूहोंसे उसका ध्वनि-उच्चारणका अभ्यास बढ़ता है और धीरे-धीरे वह अभ्यास-के आधारपर सफलतासे अनुकरण करने लगता है। आरम्भमें उसकी सफलता इतनी ही होती है कि मामाको 'मा' या 'पापा'को 'पा' आदि रूपमें वह कह लेता है, पर धीरे-धीरे ये कमियाँ दूर होती जाती हैं। आरम्भमें मौखिकके स्थानपर अनुनासिक, अल्पप्राणके स्थानपर महाप्राण या महाप्राणके स्थानपर अल्पप्राण, घोषके स्थानपर अघोष या अघोष-के स्थानपर घोष आदिका उच्चारण करता है। संघर्षी ध्वनियाँ प्रायः उसके लिए कठिन होती हैं। साथ ही पार्श्विक 'ल' और लुंठित 'र' भी बच्चोंके लिए कठिन होते हैं, इसी-लिए वे इन दोनोंके स्थानपर 'न' आदि कहते हैं। कुछ बच्चे 'ल'को पहले पकड़ लेते हैं और 'र', 'ड़' आदिके स्थानपर इसीका प्रारम्भमें प्रयोग करते हैं। धीरे-धीरे उन्हें अपनी ग़लती-का पता चलता जाता है और वे उसे ठीक करते जाते हैं। यह है ध्वनिकी दृष्टिसे बच्चों-की बोलीका विकास। बच्चे आरम्भमें केवल एक-एक शब्द कहते हैं, किन्तु वे शब्द हमारी दृष्टिसे हैं, बच्चोंकी दृष्टिसे वे वाक्य हैं। बच्चे द्वारा कहे गये 'दू' या 'दूध'का अर्थ है 'मैं दूध चाहता हूँ' या 'मुझे दूध दो'। धीरे-धीरे वे व्याकरणकी अन्य बातों—सैद्धांतिक दृष्टिसे नहीं, अपितु प्रायोगिक दृष्टिसे—को सीख लेते हैं। सादृश्यके आधारपर शब्दोंका निर्माण भी इसी कालके बाद शुरू होता है। बच्चेमें इस निर्माणके आरम्भ होनेका अर्थ है कि उसके मस्तिष्कमें भाषाकी नियमितता अपना स्थान बनाने लगी है। मैं जिस लड़कीका अध्ययन कर रहा था, चार वर्षकी उम्रमें वह कुछ लड़-कियोंके साथ खेलने लगी और उन्हें सहेली कहने लगी। फिर कुछ लड़के भी उसके साथ खेलने लगे और आरम्भमें उन्हें भी सहेली कहती थी, पर शीघ्र ही वह उन्हें 'सहेला' कहने लगी। मेरे पूछनेपर उसने बतलाया कि वे लड़की नहीं हैं लड़के हैं, अतः 'सहेली' न कह उन्हें 'सहेला' कहना चाहिये। मैं तरह-तरहसे पूछकर इस निष्कर्षपर पहुँचा कि 'सहेला' उसका बनाया (सादृश्यके आधार-पर) शब्द है और वह 'ई' प्रत्ययसे स्त्रीलिंग और 'आ'से पुलिंगके सम्बन्धसे परिचित है। इतना ज्ञान हो जानेपर बच्चे बहुत जल्दी भाषा सीखने लगते हैं। इसी प्रकार 'फोनीम' और 'अर्थ'की दृष्टिसे भी धीरे-धीरे विकास होता है। छः-सात वर्षकी अवस्थातक पहुँचते-पहुँचते बच्चा अपनी भाषाको काफ़ी हदतक सीख लेता है। उसके आधारभूत शब्द-समूह-से परिचित हो जाता है। आगे बढ़नेपर प्रायः ध्वनि या व्याकरणकी दृष्टिसे आदमीमें बहुत विकास नहीं होता, जो होता है, शब्द-समूह, मुहावरे तथा शैली आदिकी दृष्टिसे ही होता है और स्वभावतः ये विकास उसके पेशे एवं वातावरण आदिपर निर्भर करते हैं।

व्यक्ति-भाषा (idiolect)—(दे०) **व्यक्ति-बोली**।

व्यक्ति भाषा-विकास—**व्यक्तिबोली-विकास** (दे०)का एक अन्य नाम।

व्यक्तिवाचक संज्ञा—(दे०) **संज्ञा**।

व्यक्तिवाचक सर्वनाम—(दे०) **सर्वनाम**।

व्यक्तिसूचक सर्वनाम—(दे०) **सर्वनाम**।

व्यतिरेक संबंधसूचक अव्यय—(दे०) **संबंध-सूचक अव्यय**।

व्यतिहार बहुब्रीहि समास—(दे०) **समास**।

व्यत्यय—**विपर्यय** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम।

व्यधिकरण—(दे०) **समुच्चयबोधक अव्यय**।

व्यधिकरण तत्पुरुष समास—(दे०) **समास**।

व्यधिकरण बहुब्रीहि समास—(दे०) **समास**।

व्यधिकरण समुच्चयबोधक—(दे०) **समुच्चय बोधक अव्यय**।

व्याकरण (grammar)—वि + आ + कृ + ल्युट्। अर्थात् अच्छी तरह किया गया विश्ले-षण व्याकरण है। महाभाष्यकारने कहा भी है—'व्याक्रियते अनेन इति व्याकरणम्।' इस प्रकार भाषाके टुकड़े-टुकड़े करके उसका ठीक स्वरूप दिखलाना व्याकरणका काम है।

दूसरे शब्दोंमें 'व्याकरण वह शास्त्र है, जो किसी भाषाको विश्लेषित करके उसके स्वरूपको स्पष्ट करता है तथा उसे शुद्ध बोलने, लिखने और समझनेका ढंग सिखलाता है।' यों व्याकरण छः वेदांगोंमें है, किंतु इसका इस अर्थमें प्रयोग महाभाष्यके बाद ही विशेष मिलता है। व्याकरणके लिए संस्कृतमें '**शब्दानुशासन** तथा **शब्दशास्त्र** आदि अन्य शब्दोंका प्रयोग भी मिलता है। इन दोनोंमें प्रथमका प्रयोग पतंजलि, हेमचंद्र तथा देवनन्दिन् आदि द्वारा अपने व्याकरणोंके लिए किया गया है। 'शब्दशास्त्र'का प्रयोग मीमांसाशास्त्रके लिए भी हुआ है। व्याकरणके मुख्य विभाग तीन हैं—**वर्ण-विचार** (दे०), **शब्द-विचार** (दे०), **वाक्य-विचार** (दे०)। व्याकरण तीन प्रकारका होता है—**वर्णनात्मक व्याकरण** (दे०), **तुलनात्मक व्याकरण** (दे०) और **ऐतिहासिक व्याकरण** (दे०)।

व्याकरणिक क्रम (grammatical order)—वाक्यमें शब्दों या पदोंका क्रम।

व्याकरणिक बलाघात (grammatical stress)—वाक्यमें प्रमुख शब्दोंपर सहज रूपसे दिया गया बल।

व्याकरणिक लिंग (grammatical gender)—किसी भाषाके व्याकरणमें प्रयुक्त लिंग। यह प्राकृतिक लिंगसे कभी-कभी भिन्न होता है। उदाहरणार्थ हिन्दीमें निर्लिंगी या अलिंगी शब्द जैसे मेज़-कुर्सी भी व्याकरणिक दृष्टिसे पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग हैं। (दे०) **लिंग**।

व्याकरणिक वर्ग (grammatical category)—शब्दोंका व्याकरणके अनुसार (संज्ञा- सर्वनाम आदि) बना वर्ग। (दे०) **शब्द**।

व्याकरणिक वर्गीकरण—**आकृतिमूलक वर्गीकरण** (दे०)का एक अन्य नाम।

व्याकरणिक संरचना (grammaticl structure)—किसी भाषाके रूप तथा वाक्य आदिकी रचना।

व्याख्यात्मक व्याकरण (explanatory grammar)—ऐसा व्याकरण, जिसमें व्याकरणमें दिये गये नियमों, और उनके कारणों तथा उनकी उत्पत्तिकी भी व्याख्या हो। व्याख्यात्मक व्याकरण किसी एक भाषाका भी हो सकता है और सामान्य रूपसे व्याकरण दर्शन (philosophy of grammar) के रूपमें भी हो सकता है।

व्यापन्न ऊष्म संधि—**प्रत्यय संधि ऊष्म** (दे०)।

व्यापार वाचक प्रत्यय—(दे०) प्रत्यय।

व्यावसायिक भाषा—वह भाषा, जो किसी विशेष वर्गके व्यवसायियोंमें प्रयुक्त होती हो। जैसे 'दलालों' या 'सुनारों'की भाषा।

व्यास-प्रधान—**अयोगात्मक भाषा** (दे०)का एक अन्य नाम।

व्युत्पत्ति(etymology, derivation)—किसी शब्दकी उत्पत्ति तथा उसके विकासका इतिहास। व्युत्पत्ति तुलनात्मक भी हो सकती है और अतुलनात्मक भी। तुलनात्मकमें उस शब्दके विभिन्न भाषाओंमें प्राप्त रूप भी दिये जाते हैं, अतुलनात्मकमें व्युत्पत्ति केवल उसी भाषाको दृष्टिमें रखते हुए दी जाती है।

व्युत्पत्तिशास्त्र (etymology)—शब्दोंके सर्वांङ्गीण अध्ययनसे संबद्ध एक शास्त्र या विज्ञान। यह वस्तुतः **ध्वनिविज्ञान** या **ध्वनि-प्रक्रिया विज्ञान** (दे०) **शब्द विज्ञान** (दे०) तथा **अर्थविज्ञान** (दे०)का सम्मिलित प्रयोग है। इन तीनोंके आधारपर इसमें भाषाके एक-एक शब्दको लेकर उसकी उत्पत्ति, विकास या इतिहास (रूप या ध्वनि तथा अर्थ आदिकी दृष्टिसे) का विचार किया जाता है। व्युत्पत्ति आधुनिक ढंगके कोशोंकी एक अनिवार्य आवश्यकता है। कोशोंमें अर्थ देनेके साथ-साथ अब तुलनात्मक रूपमें व्युत्पत्ति देनेका भी प्रयास किया जाता है। इस दिशामें एक पथ-प्रदर्शक कार्य टर्नरका 'नेपाली कोश' है। व्युत्पत्ति-शास्त्रके आधारपर किसी भाषा-विशेषके किसी एक समयमें प्रयुक्त शब्द-समूहका विश्लेषण कर इस बातका भी पता लगाते हैं कि उसमें कितने प्रतिशत शब्द अपने हैं तथा कितने प्रतिशत विदेशी या अन्य भाषाओंके। व्युत्पत्ति-शास्त्रके लिए

अंग्रेजी शब्द 'एटिमालोजी' है। यह असलमें यूनानी भाषाका शब्द है और इसका अर्थ-यथार्थ लेखा-जोखा (etumos = यथार्थ, logos = लेखा-जोखा) है। यूनानीमें 'एटिमालाजी' मूलतः दर्शनकी एक शाखा थी, न कि भाषा-विज्ञानकी और इसके अन्तर्गत यूनानी दार्शनिक किसी शब्द द्वारा व्यक्त भाव या विचारकी यथार्थ जानकारीके लिए शब्दोंके मूल तथा उसके अर्थका अध्ययन करते थे। हिन्दीमें इसके लिए 'व्युत्पत्ति-शास्त्र' शब्द है। व्युत्पत्तिका अर्थ 'विशेष या विशिष्ट उत्पत्ति है। प्राचीनकालमें भारतमें इस शास्त्रको 'निरुक्त' कहते थे और यह छः वेदांगोंमें एक था। लोगोंका विश्वास है कि उस समय निघण्टुके शब्दोंकी व्याख्या और व्युत्पत्तिको स्पष्ट करनेके लिए बहुतसे निरुक्त ग्रन्थोंकी रचना हुई थी, जिनमें सबसे प्रसिद्ध निरुक्त यास्कका था और आज केवल वही उपलब्ध है। इस प्रकार यास्क विश्वके प्राचीनतम व्युत्पत्तिकार हैं। इन्होंने अपने निरुक्तमें कुल १२९८ व्युत्पत्तियाँ दी हैं, जिनमें २२४ बहुत ही वैज्ञानिक तथा युक्ति-संगत हैं। व्युत्पत्ति-शास्त्रके प्राचीन रूपको ठीकसे हृदयंगम करनेके लिए यह बतला देना आवश्यक है कि यास्कने एक शब्दकी एक ही व्युत्पत्ति न देकर एकसे अधिक व्युत्पत्तियाँ (इन्द्रकी १४ व्युत्पत्तियाँ, जातवेदस्की ६, अग्निकी ५ तथा अरण्यकी २) दी हैं। इसका आशय यह है कि उन लोगोंके लिए यह एक निश्चित और नियमित विज्ञान या शास्त्र नहीं था। मनमाने ढंगसे जितनी भी बुद्धि दौड़ायी जा सके, दौड़ायी जाती थी। यही कारण है कि इन व्युत्पत्तियोंमें आधीसे अधिक तो अत्यन्त पुराने ढंगकी तथा मनमानी (जैसे अंगार, आरि, अर्द्ध तथा अरण्य आदिकी हैं तथा कुछ संयोगसे ठीक और वैज्ञानिक (जैसे सहस्र, विंशति, श्रद्धा कंटक आदिकी) हो गयी हैं। प्लेटोके समयमें तथा उनके कुछ पूर्व भी यूनानमें दर्शनकी शाखाके रूपमें इस शास्त्रका अध्ययन प्रचलित था। वहाँ, उस समय विद्वानोंका विश्वास था कि किसी शब्दकी ध्वनि और उसके द्वारा व्यक्त किये गये अर्थमें कुछ सम्बन्ध होता है। इस सम्बन्धको सिद्ध करनेके लिए वहाँ भी मनमानी व्युत्पत्तियाँ दी गयीं। प्लेटोने अपनी पुस्तक 'क्रेटीलस'में ध्वनि और अर्थके सम्बन्धका उस समयकी ये बातें देखनेके कारण ही मज़ाक उड़ाया है। मध्य-युग तक आते-आते जब लोगोंका देश-देशांतर तथा उनकी भाषाओंसे परिचय बढ़ा तो संसारकी सारी भाषाओंको किसी एक भाषासे निकली सिद्ध करनेके लिए अर्थ तथा ध्वनिकी दृष्टिसे मिलते-जुलते शब्दोंके बहुतसे संग्रह बने। उस समयतक इस सम्बन्धमें कुछ निश्चित् सिद्धान्त तो थे नहीं। लोग अटकलसे दो शब्दोंके बाह्य रूपको देखकर दोनोंको एक शब्दसे निकला मान बैठते थे। उदाहणार्थ, अंग्रेज़ीके शब्द 'नीअर' (near) का अर्थ 'समीप' है और भोजपुरीमें भी 'नीअर'का अर्थ यही है। बस प्राचीन लोगोंका इतना पाना था कि दोनों शब्द एक मूलके मान लिये जाते थे। ऐसे ही नजाने कितनी बड़ी-बड़ी पुस्तकें बनीं, जिनमें इस प्रकारके उदाहरणोंके आधारपर हिब्रूसे अंग्रेजीका या हिब्रूसे ग्रीकका सम्बन्ध स्थापित किया गया। यों तो उन लोगोंके ये कार्य आज व्यर्थ सिद्ध हो चुके हैं, पर इस दृष्टिसे उनका ऐतिहासिक महत्त्व है कि उन्हीं अटकलों और असंगत बातोंमें भाषा विज्ञानके शिशुने जन्म लिया और पलता रहा। **व्युत्पत्ति और भ्रामक व्युत्पत्ति** (popularetymology)—ध्वनि-साम्य देखकर किसी और शब्दको और समझ लेना भ्रामक व्युत्पत्ति है। इसके कारण बहुतसे शब्दोंमें ध्वनि-परिवर्तन हो जाते हैं। 'ध्वनि-विज्ञान' शीर्षकके अन्तर्गत इस पुस्तकमें अन्यत्र इसपर विचार किया जा चुका है। भ्रामक व्युत्पत्तिके कुछ मनोरंजक उदाहरण लिये जा सकते हैं। पहरा देनेवाला संतरी अधिकतर किसीके आनेपर कहता है—

'हुकुम सदर'

इसका अर्थ लोग समझते हैं कि 'यह सदर

हुक्म है कि यहाँ आना मना है।' पर, मूलतः यह शब्दावली 'हुकुम सदर' न होकर—हू कम्ज़ देयर(who comes there) है, जिसका आशय है—कौन आता है ? पर भ्रामक व्युत्पत्तिके कारण लोगोंने इसे 'हुकुम सदर' कर डाला है। ग्रामीण जनतामें इसी प्रकार लाइब्रेरी (= पुस्तकालय) 'रायबरेली' कही जाती है और गाँवके मिडिल स्कूलोंमें चेम्सफोर्ड महोदय 'चिलमफोड़' कहे जाते हैं। 'चार्जसीट'को चारशीट (जो चार पन्ने काग़ज़पर हो) और पाउरोटीको पाव रोटी (पाव भरकी रोटी या बड़ी रोटी) भी इसी कारण हो जाना पड़ा है, और इसी कारण मुकदमेबाज़ लोग 'अस्सरे नौं'को 'सरे नौं' और 'आनरेरी'को 'अन्हरी' (जहाँ अंधेरा या अन्याय हो) कहते हैं। अंग्रेजीका कन्ट्री डान्स(country dance) इसी कारण फ्रांसीसीमें कोंत्रडान्स(contredanse) हो गया है। भ्रामक व्युत्पत्तिसे मिलती-जुलती चीज़ कुछ दिन पूर्वतक आर्यसमाजियोंमें प्रचलित रही है। वे लोग सारे संसारको आर्य संस्कृतिसे अभिभूत तथा सभी भाषाओंकी आदि जननी संस्कृतको मानते रहे हैं और इसी भावनासे कितने ही देशके नामों तथा अन्य शब्दोंको संस्कृतसे लिया गया सिद्ध करते रहे हैं। उनके लिए अरबीका ज़ात सं० जाति, स्कैंडिनेवियन सं० स्कंधनिवासी, जापान सं० जयप्राण, अफ़ग़ानिस्तान सं० आवागमनस्थान, चीन सं० च्यवनदेश, क्राइस्ट सं० कृष्ण तथा मिस्टर सं० मित्र है।

यों तो व्युत्पत्तितः एक मूलके शब्द बाह्य रूप तथा अर्थकी दृष्टिसे प्रायः कुछ मिलते-जुलते रहते हैं; पर ऐसे उदाहरणोंकी भी कमी नहीं है, जिनमें यह समानता नहीं रहती, उदाहरणके लिए—

भारोपीय 'penqe'—अंग्रेज़ी 'five'(रूप बिल्कुल भिन्न है)।

फ्रेंच 'larme'—'tear' (रूप बिलकुल भिन्न हैं)।

अंग्रेजी 'फ़ी' (fee)—संस्कृत 'पशु' (अर्थ और रूप दोनों भिन्न हैं)।

संस्कृत 'उपाध्याय'—मैथिली 'झा' अर्थ और रूप दोनों भिन्न हैं।

यहाँ एक पंक्तिमें दिये गये शब्द व्युत्पत्तिकी दृष्टिसे एक हैं, पर ऊपरसे और कुछमें तो अर्थकी दृष्टिस भी कोई समानता नहीं है।

व्युत्पत्ति देनेमें ध्यातव्य बातें—शब्दोंकी व्युत्पत्ति देनेमें बहुत-सी बातोंका ध्यान रखना आवश्यक है, जिनमें प्रधान ये हैं—(१) जिस शब्दकी व्युत्पत्ति देनी हो, उसके जीवनका पता लगाकर और उसपर काल-क्रमानुसार विचार करके उसके प्रत्नतम रूप, अर्थ एवं प्रयोगको निश्चित कर लेना चाहिये। जिस शब्दके संबंधमें ये बातें निश्चित हो जायँ, उसकी व्युत्पत्ति देनेमें भटकनेका भय प्रायः नहीं रह जाता। (२) दो भाषाओंमें एक ध्वनि तथा एक अर्थके शब्द पाकर बिना और छानबीन किये दोनोंको संबद्ध नहीं मानना चाहिये। उदाहरणके लिए भोजपुरीका 'नीयर', 'नियर' या 'नियरा' (= नज़दीक) और अंग्रेज़ीका 'नीअर' (near) = नज़दीक, शब्दोंको लें। दोनोंमें ध्वनि तथा अर्थ-साम्य है, पर यथार्थतः भोजपुरीका 'नियर' या 'नियरा' संस्कृत शब्द 'निकट'से निकला है और अंग्रेजीका 'नीअर' पुरानी नार्सके 'नेर,-से और इस प्रकार दोनोंका कोई सम्बन्ध नहीं है। जहाँ इस प्रकारका साम्य मिले, उस भाषा या बोलीकी जननी भाषामें उस शब्दके समानार्थी शब्दोंको लेकर तथा उस शब्दकी प्राप्त जीवनीको लेकर विचार करना चाहिये (३) दो शब्दोंको संबद्ध सिद्ध करनेमें या किसी पुराने शब्दसे किसी बादके शब्दको व्युत्पन्न सिद्ध करनेमें ध्वनि या रूपके अतिरिक्त अर्थपर भी विचार करना चाहिये, और यदि कोई अर्थ-परिवर्तन दिखाई पड़े तो भूगोल, इतिहास तथा सामाजिक नियमों एवं रूढ़ियोंके प्रकाशमें उस परिवर्तनका कारण समझ लेना चाहिये। (४) किसी भी ध्वनिका न तो यों हो लोप होता है और न त कोई अतिरिक्त ध्वनि यों ही किसी शब्द-

में जुड़ जाती है। अकारण अनुनासिकता भी इसका अपवाद नहीं। इस प्रकारके परिवर्तनोंमें मुख-सुख, सादृश्य, किसी और शब्द-का साथमें जुड़ना तथा स्वराघात (बलात्मक तथा संगीतात्मक) आदि काम करते हैं। इन दृष्टियोंसे भी दो शब्दों (यदि उनके रूप अभिन्न न हों)को संबद्ध सिद्ध करनेमें विचार आवश्यक है। इस प्रकारकी समस्याओं पर विचार करनेमें ध्वनि-नियमोंका पूरा ध्यान रखना चाहिये। (५) भाषाके विकासके साथ शब्द, उच्चारणकी दृष्टिसे सरल तथा लंबाईमें प्रायः छोटे होते जाते हैं। एक शब्दके दो रूपोंमें प्राचीन तथा अर्वाचीन रूप पहचाननेके लिए इस सिद्धांतको सामान्यतः अपनाया जा सकता है। यों इसके अपवाद भी मिल सकते हैं। जिस प्रकार नाटे व्यक्ति बहुत दिनतक परिवर्तित नहीं होते और दूसरी ओर लम्बे व्यक्ति शीघ्र परिवर्तित हो (वृद्ध हो) जाते हैं, उसी प्रकार छोटे शब्दोंमें भी परिवर्तन कम होता है और लम्बे जल्द परिवर्तित हो जाते हैं। (६) यदि किसी अन्य भाषासे किसी शब्दके उधार लियेजानेकी संभावना हो तो ऐतिहासिक और भौगोलिक दृष्टिसे उसपर विचार अपेक्षित है। दो भाषा-भाषियोंके प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपसे रूपसे सम्पर्क होनेपर ही एक भाषाके शब्द दूसरी भाषामें पहुँचते हैं। (७) किसी भी भाषाके शब्द प्रमुखतः तीन प्रकारके हो सकते हैं, जिनके संबंधमें ऊपर कहा जा चुका है। किसी शब्दकी व्युत्पत्ति निश्चित करनेमें इन सबका ध्यान आवश्यक है। सम्भव है दखनेमें कोई शब्द विदेशी ज्ञात हो, पर यथार्थतः वह अपनी प्राचीन भाषासे विकसित हुआ हो और उसी जननी भाषासे अतीतमें कभी विदेशी भाषामें चला गया हो। या दूसरी ओर कोई शब्द जननी भाषासे विकसित हुआ ज्ञात हो, पर यथार्थतः वह जननी भाषासे विदेशी भाषामें गया हो और फिर विदेशी भाषासे ही वह आधुनिक कालमें लिया गया हो। इस दूसरी अवस्थामें वह शब्द विदेशी कहा जायगा, यद्यपि उसका मूल देशी है। उदाहरणके लिए अंग्रेज़ी शब्द 'शैंपू' लें। पढ़ी-लखी औरतोंमें यह एक प्रचलित शब्द है। प्रसाधन-सामग्रीमें इसका प्रमुख स्थान है। इसे प्रायः लोग अंग्रेज़ीका समझते हैं, पर यथार्थतः हिन्दी शब्द 'चाँपना'से ही यह अंग्रेज़ीमें लिया गया है। इस प्रकार मूलतः 'शैंपू' हिन्दी शब्द है। भाषाविज्ञानकी दृष्टिसे मूलतः हिन्दी 'चाँपना'—से विकसित होते हुए भी 'शैंपू' अंग्रेज़ीसे हिन्दीमें लिया गया माना जायगा। (८) दो भाषाओंके दो शब्द यदि अर्थ एवं ध्वनिकी दृष्टिसे समान या समीप ज्ञात हों तथा अन्य सारी बातोंका विचार करनेपर भी उनके सम्बन्धमें कोई निर्णय न हो सके, तो यह देखना चाहिये कि वे दोनों भाषाएँ कहीं एक परिवारकी तो नहीं हैं, और यदि हैं तो उनमें पाये जानेवाले मिलते-जुलते शब्द उन दोनोंकी आदि जननी मूल भाषाके तो नहीं हैं। संस्कृत पितृ, अंग्रेज़ी फ़ादर, या फ़ारसी हफ़्त, संस्कृत सप्त ऐसे ही शब्द हैं। इस प्रकारके शब्दोंमें यदि मूल भाषाके किसी एक शब्दसे विकसित होनेकी सम्भावनाका ध्यान न रखा जाय तो प्रायः इस निर्णयपर पहुँचनेका भय रहता है कि वह शब्द उन दोनों भाषाओंमें किसीसे दूसरेमें लिया गया है।

'आधुनिक युगके प्रसिद्ध व्युत्पत्तिशास्त्रियोंमें नेपाली डिक्शनरीके सुयोग्य सम्पादक टर्नरके अतिरिक्त अंग्रेज़ी भाषाके प्रसिद्ध व्युत्पत्तिकार स्कीट, यूल और बर्नेल आदिके नाम लिये जा सकते हैं। भारतवर्षमें इस क्षेत्रमें कार्य करनेवालोंमें मुनि रत्नचन्द्रजी महाराज (अर्ध-मागधी), हरगोविन्ददास त्रिकमचन्द शेठ (प्राकृत), ज्ञानेन्द्र मोहनदास (बंगला), गोपालचन्द्र (उड़िया), कृष्णाजी पांडुरंग कुलकर्णी (मराठी), हरिवल्लभ भायाणी (गुजराती) तथा वासुदेवशरण अग्रवाल (हिन्दी) आदि प्रधान हैं। व्युत्पत्तिशास्त्रके आधारपर किसी भाषाके समस्त शब्दोंकी सम्पूर्ण जीवनी देकर उस भाषाका

बहुत सुंदर कोश बनाया जा सकता है, जिससे भाषाके अतिरिक्त समाजविज्ञान तथा नृविज्ञान सम्बन्धी कितनी ही समस्याओंपर प्रकाश पड़ सकता है। कार्यके कठिन होनेके कारण अभीतक इस दिशामें उल्लेख्य प्रयास नहीं हुए हैं।

व्युत्पन्न अव्यय––(दे०) **अव्यय**।

व्रश(vrash)––१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार हिन्दी (दे०)का, थाना (बंबई)में प्रयुक्त एक रूप। स्पष्टतः यह नाम **ब्रज** (दे०)का विकृत रूप है।

व्हिलकुट (whilkut)––**पैसिफ़िक** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

व्होरासाई (vhorasai)––**गुजराती** (दे०)-की, बोहरा नामक जातिमें प्रयुक्त, एक बोली। इसको **बोहरी** भी कहते हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १०,१५० थी।

श

शंगखिपो (shangkhipo)–**पो करेन** (दे०)-का एक रूप।

शंदू (shandu)––**चिन** (दे०)का एक नाम।

शंग-यंग-लम (shang-yang-lam)––बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, **यिन** (दे०)की, दक्षिणी शान स्टेटोंमें २५,४७४ व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत, बोली।

शंग-यंग-सेक (shang-yang-seh)–बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **यिन** (दे०)की, दक्षिणी शान स्टेटोंमें प्रयुक्त, एक बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,२२५ थी।

शंपेन्वाँ (champenois)––**फ्रांसीसी** (दे०) भाषाकी एक बोली।

शंबाला (shambala)––**बांटू** (दे०)परिवारकी दक्षिणी अफ्रीकाके पूर्वी तटपर प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा।

शक–एक विलुप्त ईरानी बोली। ओसेप्टिकाका विकास इसीसे हुआ था। इसे **सकियन** या **प्राचीन सकियन** भी कहते हैं। मध्यकालीन सकियन या शकको खोतानी भी कहते हैं।

शकार––शके लिए प्रयुक्त नाम। (दे०) **कार**।

शकारिलिपि––बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

शब्द (word)––**परिभाषा**––'शब्द'का मूल अर्थ है 'ध्वनि'। इसकी व्युत्पत्तिके सम्बन्धमें मतभेद है। 'शप्' आदि एकाधिक धातुओंसे इसका संबंध जोड़ा जाता है। अधिक प्रचलित मत यह है कि शब्दका संबंध 'शब्द्' धातुसे है, जिसका अर्थ है 'शब्द करना', 'ध्वनि करना' या 'बोलना' आदि (शब्द+घञ्)। यों कुछ लोग 'शब्द'को 'शब्द'से बनी नाम धातु भी मानते हैं। अंग्रेज़ी शब्द word (डच woord, जर्मन wort, गोथिक् waurd, आइसलैंडिक orth, लैटिन verbum, ग्रीक lirō) का संबंध भी 'बोलना' या 'ध्वनि करना'से है। अरबी 'लफ्ज़' भी मूलतः 'मुँहसे फेंका हुआ' या 'ध्वनि किया हुआ' या 'बोला हुआ' है। इस प्रकार 'शब्द'के विभिन्न भाषाओंमें प्राप्त पर्याय भी मूलतः एक दूसरेसे बहुत दूर नहीं हैं।

संसारकी सभी भाषाओंको दृष्टिमें रखते हुए शब्दकी सभी दृष्टियोंसे पूर्ण परिभाषा देना प्रायः असंभव-सा है। इस विषयपर विचार करते हुए येस्पर्सन, वेन्द्रिए, डैनियल जोन्स तथा उल्डल आदि अनेक विद्वानोंने इस असमर्थताको स्पष्ट शब्दोंमें स्वीकार किया है। इस असंभवताके बावजूद 'शब्द'-की अनेकानेक परिभाषाएँ दी गयी हैं। पतंजलि कहते हैं––'श्रोत्रोपलब्धिर्बुद्धिनिर्ग्राह्यः प्रयोगेणाभिज्वलितः आकाशदेशः शब्दः', अर्थात् शब्द, कानसे प्राप्य, बुद्धिसे ग्राह्य प्रयोगसे प्रस्फुरित होनेवाली आकाशव्यापी ध्वनि है। पतंजलिने विस्तारसे भी शब्दपर विचार किया है, जिसके निष्कर्षस्वरूप कहा जा सकता है कि उनकी

दृष्टिमें उच्चरित, श्रव्य, बुद्धिग्राह्य और अर्थबोधक, ये चार विशेषण शब्दकी विशिष्टताकी ओर संकेत करते हैं। दूसरे शब्दोंमें 'शब्द, वह है, जो उच्चरित, श्रव्य, बुद्धिग्राह्य तथा अर्थबोधक हो । पतंजलि एक स्थानपर कहते हैं :–'प्रतीतपदार्थको लोके ध्वनिः शब्दः' । अर्थात् 'वह ध्वनि, जिससे व्यवहार या लोकमें पदके अर्थकी प्रतीति ही शब्द है। 'श्रृंगार प्रकाश'में आता है, :– 'येनोच्चारितेन अर्थः प्रतीयते स शब्दः', अर्थात् जिसके बोलनेसे अर्थकी प्रतीति हो, वह (ध्वनि) शब्द है ।

पश्चिममें भी इस दृष्टिसे प्रयास हुए हैं । 'the smallest speech unit (= constantly recurring sound pattern) capable of functioning as a complete utterence,— पामर (palmer)। 'the smallest significant unit of speech and language'—उल्मैन (ulman)। 'a word is the result of the association of a given meaning with a given combination of sounds, capable of a given grammaticas use'—मेये (maillect)। "the smallest independent unit within the sentence'–राबर्टसन (robertson) तथा कैसिडी (cassidy) 'an ultimate sense unit—स्वीट (sweat)। मैं स्वयं शब्दको कुछ इस रूपमें परिभाषित करता रहा हूँ :–**अर्थके स्तरपर भाषाकी लघुतम स्वतंत्र इकाई शब्द है** । इस परिभाषामें शब्दके संबंधमें प्रमुखतः दो बातें कही गयी हैं । ये **दोनों** ही बातें शब्दकी विशेषता मानी जा सकती हैं :—(१) शब्द **अर्थ**के स्तरपर लघुतम इकाई है । इसमें दो संकेत हैं : (क) इसका एक अर्थ होता है (इस दृष्टिसे निरर्थक शब्दोंको शब्द नहीं माना जा सकता); तथा (ख) अर्थके स्तरपर शब्द लघुतम होता है । इसका आशय यह हुआ कि यहाँ 'मूल' या 'रूढ़' शब्दोंकी बात की जा रही है। 'यौगिक' या 'योगरूढ़' शब्दोंकी नहीं । यों व्यवहारमें वे भी शब्द हैं, किंतु वैज्ञानिक दृष्टिसे वे 'लघुतम इकाई' नहीं हैं, यौगिक हैं । उदाहरणार्थ, **अपूर्ण** एक यौगिक शब्द है, किंतु **पूर्ण** एक शब्द या मूल-शब्द है। यह ध्यातव्य है कि 'शब्द' अर्थके ही स्तरपर भाषाकी लघुतम इकाई है, ध्वनिके स्तरपर नहीं । क्योंकि एक ध्वनिका सर्वत्र अर्थ नहीं होता। जैसे 'आ' (= आजा) का तो अर्थ है, किंतु 'क्'का नहीं है । (२) इस परिभाषामें 'स्वतंत्र' शब्दका प्रयोग किया गया है । जिसका अर्थ यह हुआ कि 'शब्द' ऐसा होता है, जो प्रयोग या अर्थकी दृष्टिसे स्वतंत्र होता है । उसे किसीकी सहायता अपेक्षित नहीं होती । उपसर्ग (जैसे 'अ' = नहीं) भी एक प्रकारसे अर्थके स्तरपर लघुतम इकाई है, किंतु यह स्वतंत्र नहीं होता, अर्थात् अकेले, विना किसी शब्दकी सहायताके (जैसे **अ**पूर्ण) इसका प्रयोग नहीं हो सकता, अतः इसे शब्द नहीं कह सकते । इसी प्रकार प्रत्यय (जैसे ता = भाववाचकता) भी परतंत्र (जैसे पूर्ण**ता**) होते हैं, अकेले प्रयोग करने योग्य नहीं होते, अतः इन्हें भी शब्द नहीं माना जा सकता । इसके विरुद्ध 'पूर्ण' एक शब्द है, क्योंकि वह स्वतंत्र रूपसे प्रयुक्त हो सकता है ।

स्पष्ट ही अन्य परिभाषाओंकी तरह यह परिभाषा भी सभी दृष्टियोंसे पूर्ण न होकर काम-चलाऊ है और एक विशेष दृष्टिकोणसे की गयी है । व्यापकतम रूपमें उपसर्ग, प्रत्यय, रूढ़ शब्द, यौगिक शब्द, सार्थक शब्द, निरर्थक शब्द, सभी 'शब्द' माने जा सकते हैं । इस दृष्टिसे प्राचीन भारतीय वैयाकरणोंकी परिभाषाएँ अतिव्याप्ति दोषसे दूषित होते हुए भी अपेक्षाकृत अधिक उचित ज्ञात होती हैं । अतिव्याप्ति दोष इसलिए है कि इन परिभाषाओंमें 'शब्द'के

साथ-साथ 'वाक्य' भी समा सकता है। उनकी परिभाषाको कुछ सीमित करते हुए मैं कहना चाहूँगा—'मुखोद्गीर्ण श्रव्य ध्वनि, जो वाक्य नहीं—तथा जिससे अर्थकी प्रतीति हो, शब्द है। यहाँ यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि, इस परिभाषामें '**निरर्थक शब्द** नहीं आयँगे। किंतु वास्तविकता यह है कि '**निरर्थक शब्द** भी इसमें आ जाते हैं, क्योंकि निरर्थक शब्द सामान्यतः या व्यवहारतः निरर्थक होते हुए भी पूर्णतः निरर्थक नहीं होते। उनके सुनते ही आपको लगेगा कि आप कोई शब्द सुन रहे हैं। अर्थकी प्रतीति न होनेपर आपको लगेगा कि यह शब्द अपरिचित है। अंतमें इधर-उधरसे छानबीन करनेपर जब आपको पता चलेगा कि यह तो निरर्थक शब्द है, तब आप उसे समझनेका प्रयास छोड़ देंगे। किंतु क्या उस शब्दका यह बतला देना ही कि, 'उसका कुछ अर्थ नहीं है' उसको अव्यावहारिक या असामान्य रूपमें ही सही, यह नहीं सिद्ध करता कि वह भी 'सार्थक' है? निरर्थक शब्द सार्थक इसी रूपमें है कि वह बतला देता है कि उसका कोई अर्थ नहीं है। इस तरह अव्यावहारिक होते हुए भी तर्कतः निरर्थक शब्द सार्थक हैं, अतः केवल उसके लिए परिभाषामें कुछ और जोड़नेकी आवश्यकता कदाचित् नहीं होनी चाहिये।

किंतु एक बात और है, इस परिभाषामें भी थोड़ासा अतिव्याप्ति दोष है। इसमें कहा गया है कि **जो वाक्य न हो**। तो क्या 'उसका लड़का' शब्द है? यह वाक्य तो नहीं है। उत्तर होगा नहीं। क्यों नहीं है? उत्तर होगा, इसमें दो इकाइयाँ (unit) हैं। इस उत्तरके आधारपर उपर्युक्त परिभाषाको कुछ इस रूपमें रखा जा सकता है :—ऐसी **ध्वनि, जो मुखोद्गीर्ण, श्रव्य और अर्थवान् तो हो, किंतु वाक्य या प्रयोगके स्तरपर एकाधिक इकाइयोंकी न हो, शब्द है।** इसमेंसे 'मुखोद्गीर्ण' तथा 'श्रव्य'को छोड़ते हुए, यों भी रखा जा सकता है—'**एक या एकाधिक ध्वनियोंकी सार्थक अवाक्य इकाई, शब्द है।**' और संक्षेपमें '**ध्वनिकी सार्थक इकाई शब्द है**' या '**ध्वनिकी स्वतंत्र सार्थक इकाई शब्द है**' भी कहा जा सकता है। यहाँ 'स्वतंत्र' शब्दका अर्थ वही नहीं है, जो पीछे है। यहाँ अर्थ है '**जो स्वतंत्र अर्थवान् हो।**' उपसर्ग, प्रत्यय आदि भी स्वतंत्र अर्थवान् हैं प्रयोगके योग्य भले न हों। वस्तुतः उनको शब्दके बाहर नहीं रखा जा सकता। निष्कर्षतः **स्वतंत्र सार्थक अवाक्य या अवाक्यांश** (clause) **इकाई शब्द है**। इसे यों भी रखा जा सकता है—**ध्वनिकी सार्थक, स्वतंत्र, अवाक्यात्मक एवं अवाक्यांशात्मक इकाई शब्द है।**'

शब्दोंका वर्गीकरण (classification of word) : **इतिहास**—शब्द-वर्गीकरण, **शब्द विज्ञान** या **शब्द विचारका** एक महत्त्वपूर्ण अंग है। अनेक भाषाओंमें अनेक दृष्टियोंसे शब्दोंका वर्गीकरण किया गया है। भारतवर्षमें प्राचीनतम वैज्ञानिक वर्गीकरण यास्क मुनिका माना जाता है, (यद्यपि इसके पूर्व भी शुभ-अशुभ, साधु-असाधु रूपमें शब्द-वर्गीकरण किया जाता था), जो उनके निरुक्तमें मिलता है। यास्क (८वीं सदी ई० पू०)के अनुसार शब्द चार प्रकारके होते हैं :—'चत्वारि पदजातानि नामाख्याते चोपसर्गनिपाताश्च' (१ : १)। अर्थात् **नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात**। स्पष्ट ही यह वर्गीकरण व्याकरणिक है। आजतक जितने भी शब्द-वर्गीकरण किये गये हैं, उनमें इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है, तथा कुछ दृष्टियोंसे यह सर्वाधिक वैज्ञानिक है। वाजसनेयी प्रातिशाख्यमें भी शब्द चार प्रकारके माने गये हैं : **तिङ, कृत्, तद्धित, समास**। कुछ अन्य प्रातिशाख्योंमें भी इस प्रकारके संकेत मिलते हैं। पाणिनि (५वीं सदी ई० पू०)के अनुसार शब्दोंके दो ही प्रमुख वर्ग हैं :—**सुबन्त** और **तिङन्त**। यास्कका 'आख्यात' क्रिया शब्दोंके लिए आया है, जिसे पाणिनि 'तिङन्त' कहते

हैं। यास्कके शेष तीन, अर्थात् नाम, उपसर्ग, निपात पाणिनिके सुबन्तके अंतर्गत आ जाते हैं (यों प्रयोगतः केवल 'नाम' ही सुबन्त है)। इस प्रकार अव्ययको भी पाणिनि सुबन्तके अंतर्गत (अष्टाध्यायी २. ४. ८२) रखते हैं, यद्यपि यह बहुत ठीक नहीं है। संस्कृत प्रयोगोंको देखते हुए शब्दके सुबन्त, तिङन्त, अव्यय ये तीन भेद मानना कदाचित् अधिक समीचीन हो सकता है। महाभाष्य-कारने शब्दोंके **लौकिक** और **वैदिक** दो भेद माने हैं। कुछ संस्कृत वैयाकरणों (भोज: 'शृंगार प्रकाश')ने शब्दके **प्रकृति, प्रत्यय, उपस्कार, उपपद, प्रातिपदिक, विभक्ति, उपसर्जन, समास, पद, वाक्य** और **प्रबन्ध**, ये १२ भेद माने हैं। अर्थके आधारपर अपने यहाँ वाचक, लक्षक और व्यंजक तीन प्रकारके शब्द माने गये हैं। इसी प्रकार इतिहासके आधारपर तत्सम आदि भेद भी किये गये हैं। पश्चिममें व्याकरणिक दृष्टिसे शब्द आठ वर्गों (eight parts of speech)में विभाजित किये गये हैं:– **संज्ञा** (noun), **सर्वनाम** (pronoun), विशेषण (adjective), **क्रिया** (verb) **क्रिया विशेषण** (adverb), **समुच्चयबोधक** (conjunction), **संबंधसूचक** (preposition), **विस्मयादिबोधक** (interjection)। यह वर्गीकरण अंग्रेज़ीका है। अन्य यूरोपीय भाषाओंमें भी प्रायः इन्हींको स्वीकार किया गया है। जैसा कि येस्पर्सनने कहा है, यह वर्गीकरण व्यावहारिक तो है, किन्तु तात्त्विक या वैज्ञानिक नहीं है। इसी कारण इसपर विचार करते हुए विद्वानोंने आठके स्थान पर दो, चार तथा नौ आदि वर्ग माननेके सुझाव दिये हैं। इन आठ वर्गोंका विकास मूलतः प्लेटोके वर्गीकरणके आधारपर हुआ था। अरस्तूने भी कई रूपोंमें शब्दोंका वर्गीकरण किया था, जैसे रचनाके आधारपर **सरल** (इसीको हिन्दीमें रूढ़ या रूढ़ि कहते हैं) तथा **यौगिक** (यह संस्कृत या हिन्दी यौगिकके समान ही है)। इसी प्रकार प्रचलन, व्यंजना तथा अर्थ आदिके आधार-पर भी अरस्तूने प्रचलित-अप्रचलित, लाक्षणिक, आलंकारिक, नवनिर्मित, व्याकुचित, संकुचित या परिवर्तित आदि भेद किये हैं। येस्पर्सनने इसपर विचार करते हुए शब्दको प्रायोगिक या व्याकरणिक दृष्टिसे (१) नाम या संज्ञा (substantatives), (२) विशेषण, (३) सर्वनाम, (४) क्रिया तथा (५) अव्यय (जिसमें वे प्रथम चारको छोड़कर भाषाके शेष सभी शब्दों-को रखनेके पक्षमें हैं), इन पाँच वर्गोंमें रखनेका विचार प्रकट किया है। रचनाकी दृष्टिसे वे शब्दोंको प्राइमरीज़ (primaries), ऐडजंक्ट्स (adjuncts) तथा सबजंक्ट्स (subjuncts), इन तीन वर्गोंमें रखनेके पक्षमें हैं। **वर्गीकरण-के प्रमुख आधार**— तत्त्वतः शब्दोंका वर्गीकरण प्रमुखतः पाँच आधारोंपर किया जा सकता है:–(क) इतिहासके आधारपर, (ख) बनावटके आधारपर, (ग) अर्थके आधारपर, (घ) व्याकरणिक प्रयोगके आधारपर तथा (ङ) प्रयोगमें परिवर्तन-शीलता–अपरिवर्तनशीलताके आधारपर। यहाँ संक्षेपमें इन पाँचोंपर विचार किया जा रहा है :—

(क) **इतिहासके आधारपर शब्द-वर्गीकरण**—इतिहास या व्युत्पत्तिके आधारपर शब्दोंके वर्गीकरणका भारतमें प्रथम वैज्ञानिक प्रयास भरत मुनिने अपने 'नाट्यशास्त्र' में किया है—'त्रिविधं तच्च विज्ञेयं नाट्य-योग समम्मतः। समान शब्दैर्विभ्रष्ट देशी-मतमथापि वा।' अर्थात् शब्द **समान, विभ्रष्ट,** तथा **देशीमत**, ये तीन प्रकारके हैं। इन्हींको आगे चलकर तत्सम, तद्भव तथा देशी या देशज कहा गया। बादमें इनमें एक 'विदेशी' वर्ग जोड़कर इतिहासके आधारपर शब्द ४ प्रकारके माने गये। **तत्समका** अर्थ है :—'उसके समान', अर्थात् के 'संस्कृत समान।' शुद्ध संस्कृत शब्द तत्सम कहलाते

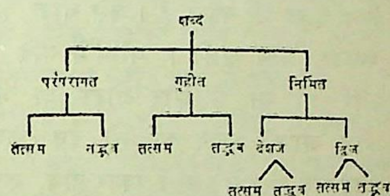
हैं।' जैसे कृष्ण, गृह, सपत्नी आदि। तत्समको **समान** तथा **तद्रूप** भी कहा गया है। **तद्भव**का अर्थ है–'उससे उत्पन्न' या 'उससे विकसित', अर्थात् 'संस्कृतके तत्सम शब्दोंसे विकसित शब्द'। जैसे, उपर्युक्त तत्सम शब्दोंसे विकसित कन्हैया, घर, सौत आदि। **तद्भव** (यह नाम त्रिविक्रम, मार्कण्डेय आदि द्वारा प्रयुक्त हुआ है) के लिए **विभ्रष्ट** (भरतमुनि), **तज्ज** (वाग्भट्ट), **संस्कृतयोनि** (चंड), **संस्कृतभव**, भ्रष्ट, अपभ्रंश, अपभ्रष्ट आदि नाम भी प्रयुक्त हुए हैं। आगे इसके **साध्यमान संस्कृतभव** तथा **सिद्धमान संस्कृतभव** आदि भेद भी किये गये।

विदेशी शब्द (foreign words) शब्द, उन्हें कहते हैं, जो अन्य भाषाओंसे आये हों। जैसे हिन्दीमें पेंट, हज़ार, नीलाम आदि। यह ध्यान देने योग्य है कि यहाँ विदेशीका अर्थ 'दूसरे देशका' नहीं है। यह शब्द अंग्रेज़ी 'फ़ॉरिन'का समानार्थी है। अर्थात् वह शब्द, जो किसी अन्य भाषासे (विदेशी या देशी) आया हो, अर्थात् 'भाषा विशिष्टके क्षेत्रसे बाहरका' हो। इन्हें **विजातीय शब्द**, **आगत शब्द** या **उद्धृत शब्द** भी कहा जा सकता है, यद्यपि अंग्रेज़ी 'फ़ॉरिन वर्ड' जैसा उपयुक्त शब्द इनमें कोई भी नहीं है। इस वर्गके शब्दोंके लिए **गृहीत शब्द** अच्छा नाम हो सकता है। **देशज** (indigenous या native word) उन शब्दोंको कहते हैं, जो उपर्युक्त तीनमेंसे किसीमें भी न आ सकें। इन्हें **देशीमत** (भरत), **देशी प्रसिद्ध** (चंड), **देशी**, **देशजात**, **देमिका**, **देश्य** आदि अन्य नामोंसे भी पुकारा गया है। ये शब्द न तो परंपरागत होते हैं, न गृहीत और न इन दोनोंमेंसे एक या दोनोंके आधारपर नवनिर्मित। ये देशमें उत्पन्न होते हैं, जैसे हिन्दीमें 'झगड़ा' आदि। इन चारके अतिरिक्त इस प्रसंगमें कुछ और भी नाम लिये जाते हैं। कुछ लोगोंने **दृश्यात्मक शब्द** (जैसे चमचम, बगबग), **प्रतिध्वनि शब्द** (जैसे लोटा-ओटा, पानी-वानी), **अनुकरणात्मक शब्द** (भोंपू), **अनुरणनात्मक शब्द** (झनझन, टनटन) आदिको अलग माना है, किंतु वस्तुतः ये प्रकृतिकी दृष्टिसे ही भिन्न हैं। इतिहासकी दृष्टिसे उपर्युक्त चारमें ही किसीके अंतर्गत रखे जा सकते हैं। अर्थात् ये या तो तत्सम होंगे, या तद्भव या देशी या विदेशी। कुछ लोगोंने **तत्समाभास** (श्राप, प्रण), **तद्भवाभास** (दुलहिन, मौसा) को भी अलग स्थान दिया। इस तरह तो **विदेश्याभास** (अखरोट, कलेजा) और **देशजाभास** (पगड़ी) शब्द भी हो सकते हैं। वस्तुतः जहाँ इतिहासके आधारपर वर्गीकरण किया जा रहा है, 'आभास'पर आधारित शीर्षकोंको स्थान देना पूर्णतः असंगत है। यहाँ हमलोग इस बातपर **नहीं** विचार कर रहे हैं, कि कोई शब्द क्या लगता है, अपितु इस बातपर विचार कर रहे हैं कि शब्द क्या है।

ग्रियर्सन, चटर्जी तथा धीरेन्द्र वर्मा आदि बहुतसे चोटीके भाषा-विज्ञानवेत्ता इस प्रसंगमें **'अर्द्धतत्सम'** नामक एक अन्य वर्गका उल्लेख करते हैं, जो तत्सम और तद्भवके बीचमें आता है। अर्द्धतत्सम शब्द उनको कहा जाता है, जो आधुनिक कालमें या हालमें संस्कृतसे गृहीत तत्सम शब्दोंसे विकसित हुए हैं। उदाहरणार्थ, 'कृष्ण'से 'कान्हा', 'कन्हैया', 'कान्ह' आदि तो तद्भव हैं, किंतु आधुनिक कालमें 'कृष्ण' शब्द भी प्रयोगमें आया और 'किशुन' या 'किशन' उससे आधुनिक कालमें ही विकसित हुए। ये 'किशन' या 'किशुन' जैसे शब्द ही अर्द्धतत्सम या अर्द्ध तद्भव हैं। वस्तुतः यह वर्ग भी ठोस विचार-भूमिपर आधारित नहीं दीखता। यदि शब्द संस्कृतके समान है तो 'तत्सम' हुआ और यदि उससे विकसित या विकृत होकर उससे भिन्न हो गया तो तद्भव (= उससे पैदा) हो गया। यह तद्भवता पूर्ण-अपूर्ण, आधी, तिहाई या चौथाई हुई है, इसे नापनेके लिए कोई भी

आधार नहीं है। इसके अतिरिक्त ऐसे भी शब्द हैं, जो वैदिक कालसे चले आ रहे हैं और उनमें बहुत थोड़ा अंतर आया है; जैसे, हल, हर १ (जोतने का यन्त्र)। इसमें केवल एक ध्वनि परिवर्तित हुई, दूसरे और ऐसे भी शब्द हैं, जो आधुनिक कालमें विकृत हुए हैं और जो अर्द्धतत्सम कहे जाते हैं, किंतु उनमें अपेक्षाकृत अधिक ध्वनियाँ विकृत हो गयी हैं, जैसे कृष्ण—किशन। इसमें ऋ से इ, ष् से श और ण से न हो गया है। ऐसी स्थितिमें यदि 'किशन' अर्द्ध तत्सम है तो 'हर'को १।४ या १।३ तत्सम कहना होगा, किंतु 'हर' तद्भव कहलाता है और किसन अर्द्ध-तत्सम, जो बिलकुल उलटा-सा है। जो अधिक तद्भव है, उसे अर्द्धतत्सम कहा जा रहा है; जो कम तद्भव है, उसे तद्भव। यदि यह कहा जाय कि इसका संबंध विकार या तद्भवतासे नहीं है, अपितु समयसे है, जो पहले तद्भव बना तद्भव है, जो वर्तमान कालमें बना अर्द्ध तत्सम है, तो फिर एक तिथि निश्चित करनी होगी, जो दोनोंके बीच समयकी दृष्टिसे विभाजक रेखा हो। इसके अतिरिक्त यदि समय निश्चित भी हो जाय तो यह कैसे जाना जा सकता है कि अमुक तद्भव शब्द १८५० ई०के पूर्व विकसित हुआ और अमुक उसके बाद। मात्र स्वरूपको देखकर कुछ कहना कठिन ही नहीं, असंभव है। कुछ शब्द बहुत दिनोंतक ज्यों-केत्यों बने रहते हैं, या कम परिवर्तित होते हैं और दूसरी ओर कुछ बहुत जल्दी बदल जाते हैं। इस प्रकार **अर्द्ध तत्सम** नामक वर्गके माननेमें कई कठिनाइयाँ हैं। साथ ही अर्द्ध तत्सम शब्दोंका सिद्धान्त सुनिश्चित और दो-टूक न होनेसे भाषासे इस वर्गके शब्दोंको निश्चयके साथ निकाल पाना तो प्रायः असंभव-सा है। इसी कारण अन्य वर्गोंके तो कई सौ उदाहरण दिये जा सकते हैं और दिये जाते हैं, किंतु इनमें एक-दो उदाहरणोंको ही बार-बार उद्धृत किया जाता है। अतएव, जो शुद्ध संस्कृत हैं, उन्हें 'तत्सम' और जो उनसे विकृत या निकाले हुए हैं, उन्हें 'तद्भव' कहा जाना चाहिये। १।२, १।३, १।४, या १।५ तत्समता या तद्भवता की नाप करना निरर्थक और असंभव है।

शब्दोंके उपर्युक्त चार वर्ग (तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी) भी विचार करनेपर बहुत समीचीन नहीं सिद्ध होते। सामान्य रूपसे किसी भी भाषाके शब्द-समूहको ऐतिहासिक दृष्टिसे निम्न रूपमें वर्गीकृत करना अधिक वैज्ञानिक हो सकता है :—



परंपरागत वे हैं जो, किसी भाषामें उस समय परंपरा रूपमें प्राप्त होते हैं, जब कोई भाषा किसी दूसरीसे विकसित होती है। जैसे अपभ्रंशसे हिन्दी जब विकसित हुई तो जो शब्द उसे अपभ्रंशसे मिले, वे परंपरागत हैं। बादमें हिन्दीने किसी भी देशी या विदेशी जीवित या मृत भाषा (जैसे संस्कृत, फ़ारसी, अंग्रेज़ी आदि)से जो शब्द ग्रहण किये, वे **ग्रहीत** हैं। जो शब्द हिन्दीके विकसित होनेके बाद बना लिये गये, वे **निर्मित** शब्द हैं। इनके दो भेद हो सकते हैं। जो शब्द हिन्दी प्रदेशमें बिना किसी परंपरागत या गृहीत शब्दके आधारपर बना लिये गये, वे **देशज** हैं। जैसे झगड़ा। दूसरे द्विज हैं। **द्विज** शब्द वे हैं, जो परंपरागत, गृहीत या देशजमेंसे, किसी एक या एकसे अधिक शब्दोंके योगसे बना लिये गये, जैसे 'रेलगाड़ी'। इन चारों ही शब्दोंके दो-दो विभेद (तत्सम और तद्भव) किये जा सकते हैं। तत्सम तो वे हैं, जो मूल रूपमें हों; और तद्भव वे हैं, जो मूल न होकर

१. भोजपुरी आदि बोलियोंमें 'हर' शब्द 'हल'के लिए चलता है।

उसके विकृत या विकसित रूप हों। इस प्रकार किसी भाषाके शब्द-समूहके, इस दृष्टिसे मूलतः तीन, विस्तृतः चार तथा और विस्तृततः ८ भेद हो सकते हैं।

(ख) **बनावटके आधारपर शब्द-वर्गीकरण**--बनावट या रचनाकी दृष्टिसे शब्द तीन प्रकारके माने गये हैं--**रूढ़ि, यौगिक** तथा **यौगरूढ़ि**। रूढ़िको रूढ़ तथा यौगिक रूढ़िको यौगिकरूढ़ भी कहते हैं। **रूढ़ि**:--जो शब्द, सार्थक शब्दों या शब्दांशोंके योगसे न बना हो, या जिसके संबद्ध अर्थमें सार्थक टुकड़े न किये जा सकें, उसे रूढ़ि कहा जाता है। इसे **मौलिक शब्द** या **अयौगिक शब्द** भी कहते हैं। जैसे घोड़ा, हाथ, कपड़ा, आग आदि। 'घोड़ा'में यदि 'घो' और 'ड़ा' या 'घ्' और 'ओड़ा' या 'घोड़्' और 'आ'को अलग करें, तो इन टुकड़ोंके कोई अर्थ न होंगे। इसी प्रकार हाथ, कपड़ा या आगको भी देखा जा सकता है। **यौगिक**--रूढ़ि शब्दोंके साथ उपसर्ग, प्रत्यय या कोई और शब्द जोड़कर 'यौगिक' शब्द बनते हैं। 'यौगिक'का अर्थ ही है 'जोड़ा हुआ' या 'जोड़कर बनाया हुआ'। रूढ़ि शब्दोंमें हमने देखा कि उनके टुकड़े करनेपर कोई सार्थक शब्द नहीं मिलते, पर उसके विरुद्ध 'यौगिक' शब्दोंके टुकड़े करनेपर सार्थक शब्द या शब्दांश मिलते हैं। उदाहरणार्थ सत्यता, अनपढ़, रसोईघर आदि यौगिक शब्द हैं। इन्हें तोड़नेपर हम देखते हैं कि [सत्य+ता (भाववाचक संज्ञा बनानेका प्रत्यय); अन (नहीं)+पढ़, रसोई+घर] सभी टुकड़े सार्थक हैं। **योगरूढ़ि**--यौगिक शब्द यदि अर्थकी दृष्टिसे संकुचित होकर केवल किसी एक वस्तुका बोध करायें, तो 'योगरूढ़ि' कहे जाते हैं। उदाहरणार्थ 'जल' एक रूढ़ि शब्द है, इसमें 'ज' प्रत्यय जोड़कर जलज बनता है। 'जलज' शब्द यौगिक है और इसका अर्थ है 'जलमें उत्पन्न'। किन्तु अब 'जलज'-का प्रयोग 'जलमें उत्पन्न' बहुत-सी अन्य चीजों, जैसे सेवार, जोंक, मछली आदिके लिये न होकर केवल कमलके लिए होता है, अतः यह 'यौगिक' शब्द 'योगरूढ़ि' है। अर्थात् यौगिक है पर साथ ही विशिष्ट अर्थमें रूढ़ि है। यहाँ एक बातका संकेत आवश्यक है कि यह तीसरा वर्ग शुद्ध अर्थोंमें रचनापर आधारित न होकर अर्थकी भी अपेक्षा रखता है। इसीलिए, तत्त्वतः बनावट या रचनाके आधारपर दो (रूढ़ि और यौगिक) भेद मानना ही अधिक संगत है।

बनावटके ही आधारपर शब्दोंके कुछ अन्य भेद भी हो सकते हैं:--(१) **समस्त शब्द** (compound word)--यह लगभग वही है, जिसे अन्यत्र यौगिक कहा गया है। भेद केवल यह है कि सामान्यतः यौगिकमें प्रायः शब्द और प्रत्यय (सुन्दरता) या शब्द और उपसर्गसे युक्त (असुन्दर) शब्द रखे जाते हैं और समस्त शब्दमें दो स्वतंत्र शब्दोंके मिलनेसे या समाससे बने शब्द होते हैं, जैसे --राम+अनुज=रामानुज। यों तात्त्विक दृष्टिसे असुन्दर भी समस्त शब्द है और इसमें समास है तथा रामानुज भी यौगिक शब्द है, क्योंकि यह दो शब्दोंके योगसे मिलकर बना है। (२) **पुनरुक्त शब्द** (doublet)--यह एक प्रकारका यौगिक शब्द है, जिसे किसी शब्दकी पुनरुक्ति या उसके अभ्यास द्वारा बनाते हैं--जैसे जय-जय, देश-देश। पुनरुक्त शब्द दो प्रकारके हो सकते हैं:--(क) **पूर्ण पुनरुक्त शब्द**--जैसे जन-जन, रोम-रोम। (ख) **अपूर्ण पुनरुक्त शब्द**--जैसे, बीच-बचाव। (३) **अनुकरणमूलक शब्द** या **अनुकार शब्द** (imitative word)--वे शब्द, जो अनुकरणके आधार-पर बनाये जाते हैं। जैसे, धड़धड़, चमचम। इनके दो भेद हो सकते हैं:-(क) **ध्वन्यात्मक शब्द**(onomatopoetic word या onomatopoeic word)--जो ध्वनियोंके अनुकरणपर बने हैं। जैसे धड़धड़, फटफटिया। (ख) **दृश्यात्मक शब्द**--जो दृश्यके आधार-

पर बने हों। जैसे चमचम, दकदक, बगबग। (४) **अनर्गल शब्द**—जो अनियमित रूपसे मनमाने बना लिये गये हों; जैसे लबड़ धोधों। निरर्थक शब्दोंको भी कभी अनर्गल शब्द कहते हैं। (५) **अनुवाद युग्मक शब्द** (translation compound)—ये एक प्रकारके ऐसे समस्त शब्द या यौगिक शब्द होते हैं, जिनमें दो शब्द एक ही अर्थमें रहते हैं, अर्थात् एक दूसरेके 'अनुवाद' या 'अर्थ' होते हैं, जैसे हाट-बाज़ार दवा-दारू, होश-चेत। ये तीन प्रकारके हो सकते हैं। (क) कभी तो एक शब्द विदेशी होता है और दूसरा अपना। जैसे, पाउरोटी (पाउ = पुर्तगालीमें रोटीका वाचक है), ध्वज-निशान, हाट-बाज़ार, ताला-कुलक, आसा-सोटा, खेल-तमाशा, साग-सब्ज़ी, लाज-शरम, कागज-पत्तर, धन-दौलत, आदि। (ख) कभी-कभी दोनों शब्द अपने ही होते हैं; जैसे जीव-जंतु, काम-काज, सीधा-पिसान, बनाव-सिंगार और (ग) कभी-कभी केवल विदेशी शब्दोंसे ही इस प्रकारके शब्द बन जाते हैं। जैसे, इज्ज़त-आबरू, नाज़-नखरा, दवा-दारू, सील-मुहर, कर्ज़ा-कुवाम, सौदा-सुलफ़। ऐसे शब्दोंको **अनुवाद समास, अनुवादमूलक समास** या **अनुवादमूलक समस्त पद** भी कहते हैं। इस प्रकारके शब्द बनानेकी प्रवृत्ति नयी नहीं है। संस्कृतके कार्षापण (कार्ष=नाप; पण=गणना), शालिहोत्र [शालि = घोड़ा (कोलशब्द); होत्र = घोड़ा] भी ऐसे ही शब्द हैं। (६) **प्रतिध्वनिशब्द** (echo-words)—कभी-कभी एक शब्दकी प्रतिध्वनि या उसके सादृश्यपर एक दूसरा शब्द गढ़कर मूल शब्दके साथ रख देते हैं। ऐसे शब्द प्रतिध्वनि शब्द कहलाते हैं। जैसे, घोड़ा-वोड़ा, हाथी-वाथी, काम-वाम। सभी भारतीय भाषाओंमें 'व' जोड़नेकी ही प्रवृत्ति नहीं है, गुजराती घोड़ो-बोड़ो, मराठी घोड़ा-बिड़ा, बंगला घोड़ा-टोड़ा, पंजाबी रोटी-शोटी, चा-शा, किताब-शिताब आदि। भारतीय आर्य भाषाओंपर इसे द्रविड़ भाषाओंका प्रभाव माना जाता है। इन्हें **प्रतिध्वन्यात्मक शब्द** भी कहते हैं। प्रतिध्वन्यात्मक शब्द संज्ञाके अतिरिक्त क्रिया (पीना-वीना, पंजाबी रोना-रूना, हँसना-हुँसना) तथा विशेषण (अच्छा-वच्छा) आदिके भी बनते हैं।

(ग) **अर्थके आधारपर शब्दोंका वर्गीकरण**—अर्थके आधारपर शब्दोंके कई वर्ग हो सकते हैं। एक तो **सार्थक, निरर्थक** भेद प्रसिद्ध ही है। सार्थक शब्द वे हैं, जिनका अर्थ हो; जैसे घोड़ा। निरर्थक वे हैं, जिनका अर्थ न हो; जैसे डिथ। यों यह वर्गीकरण यहाँ स्वीकार्य नहीं हो सकता, क्योंकि भाषामें सार्थक शब्दोंका ही विचार हो सकता है, निरर्थकका नहीं। साथ ही पीछे शुद्ध तार्किक दृष्टिसे भी निरर्थक शब्दोंकी निरर्थकताकी ओर संकेत किया जा चुका है। दूसरे **नकारात्मक** या **निषेधात्मक** (जैसे न, नहीं, अज्ञान, असुंदर) तथा अनिषेधात्मक निश्चयात्मक या **विधानार्थक** (नकारात्मकका उलटा जैसे-सुन्दर, ज्ञान) आदि भेद हो सकते हैं। इनमें प्रथममें नकारात्मक तथा दूसरेमें निश्चित भाव निहित रहता है। तीसरे अर्थकी एकता-अनेकता आदिके आधारपर भी शब्दोंके भेद किये जा सकते हैं। जैसे :—(१) **एकार्थी शब्द** (monosemic word)—ऐसे शब्द, जिनका केवल एक अर्थ हो, जैसे ईश्वर। यों इस वर्गके शब्द भाषामें बहुत कम होते हैं। हर शब्दका विभिन्न संदर्भोंमें प्रायः अर्थ कुछ-न-कुछ बदल जाता है। (२) **अनेकार्थी शब्द** (polysemic word)—ऐसे शब्द, जिनके एकसे अधिक अर्थ हों। प्रायः सभी भाषाओंमें ९९ प्रतिशतसे भी अधिक शब्द इसी प्रकारके होते हैं, जिनके एकसे अधिक अर्थ होते हैं। उदाहरणार्थ हिन्दीका 'घर' शब्द लें। नीचे के ८ वाक्योंमें इसके एक अर्थ नहीं हैं :—(क) धोबीका कुत्ता न **घरका** न घाटका, (ख) गाँवमें सत्तर **घर** हैं, (ग) मकानमें पाँच **घर** हैं, (घ) वह बड़े **घरका** है, (ङ) उसमें बुराई

घर कर गयी है, (च) वह झूठका **घर** है, (छ) वह तो **घर-घर** मारा-मारा फिरता है, (ज) तुम्हारा **घर** कहाँ है, पाकिस्तान-में या हिन्दुस्तानमें ? संस्कृतमें सारंग, हरि जैसे कुछ शब्दोंके तो कई दर्जन अर्थ हैं । (३) **एकमूलीयभिन्नार्थक शब्द** (doublet) —एक ही मूल शब्दसे विकसित भिन्नार्थी शब्द इस वर्गमें आते हैं—जैसे, संस्कृत 'पत्र'-से हिन्दीमें 'पत्र', 'पत्रा', 'पतला', 'पत्तर' 'पतरा' 'पत्ता' आदि । इस वर्गमें अर्थके साथ-साथ इतिहास या विकासपर भी ध्यान रहता है। (४) **समध्वनीय भिन्नार्थक शब्द** (homonym या homophone)—इस वर्गमें ध्यान ध्वनि और अर्थ दोनोंपर है । परोक्षतः इसका आधार व्युत्पत्ति या विकास होता है । उदाहरणतः हिन्दीमें 'आम' दो शब्द हैं । एक तो अरबी है, जिसका अर्थ है 'सामान्य' या 'साधारण' और दूसरा संस्कृत शब्द 'आम्र'का तद्भव या विकसित रूप है 'आम',—एक फल । ये दोनों 'आम' शब्द, ध्वनिकी दृष्टिसे एक हैं, किन्तु वस्तुतः एक शब्द नहीं हैं, क्योंकि इनका मूल और अर्थ दोनों ही भिन्न-भिन्न हैं । संस्कृत कुल (परिवार) तथा अरबी कुल (पूरा) भी इसी प्रकारके शब्द हैं । भारतीय काव्यशास्त्रके **वाचक**, (दे०), **लक्षक** (दे०) और **व्यंजक** (दे०) शब्द-भेद भी अर्थपर ही आधारित हैं।

(घ) **व्याकरणिक प्रयोगोंके आधारपर शब्दोंका वर्गीकरण**—इसके अंतर्गत आनेवाले अंग्रेजी आदि यूरोपीय भाषाओंके संज्ञा, क्रिया, सर्वनाम आदि ८ भेद, या यास्कके नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात अथवा पाणिनिके सुबन्त, तिङन्त, अव्यय आदिका उल्लेख हो चुका है । इस दृष्टिसे जितने भी वर्गीकरण किये गये हैं, प्रायः कुछ ही भाषाओंपर लागू होते हैं । ऐसा कोई वर्गीकरण प्रस्तुत करना कदाचित् संभव नहीं है, जो विश्वकी सभी भाषाओंपर सरलता एवं सफलताके साथ लागू हो सके ।

(ङ) **प्रयोगमें परिवर्तनशीलता—अपरिवर्तनशीलताके आधारपर शब्दोंका वर्गीकरण**—कुछ शब्द प्रयोगमें लिंग, वचन, पुरुष, कारक, काल आदिके कारण परिवर्तित हो जाते हैं—जैसे लड़का (लड़की, लड़के), अच्छा (अच्छी, अच्छे) आदि । संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया शब्द ऐसे ही हैं । ऐसे शब्द **व्यय शब्द** (declinable), **विकारी शब्द** या **परिवर्तनशील शब्द** कहलाते हैं । दूसरी ओर कुछ शब्द ऐसे होते हैं, जो कभी परिवर्तित नहीं होते । इन्हें **अविकारी शब्द** या **अपरिवर्तनशील शब्द** कहते हैं—जैसे आज, कल । बहुतसे क्रिया विशेषण, विस्मयादि बोधक, समुच्चय बोधक तथा संबंध बोधक शब्द इसी श्रेणीके होते हैं ।

शब्दोंके वर्गीकरणके प्रमुख आधार ऊपर किये गये हैं । अक्षर, ध्वनि आदि अन्य भी अनेक आधारोंपर शब्दोंका वर्गीकरण किया जा सकता है । जैसे एकाक्षरी शब्द, द्वयाक्षरी शब्द, बड़ा शब्द, छोटा शब्द, कोमल शब्द, कटु या कर्कश शब्द आदि । इसी प्रकार **पूर्ण शब्द, रिक्त शब्द, अनुभूत शब्द, अननुभूत शब्द, अमूर्त शब्द, मूर्त शब्द** आदि अनेक प्रकारके अन्य भेद भी किये जाते हैं ।

शब्द-क्रम—**पद-क्रम** (दे०) का एक अन्य नाम ।

शब्द-चयन (diction)—(१) अपेक्षित अभिव्यक्तिके लिए शब्दोंका चयन और उनका प्रयोग । (२) किसी साहित्यकारकी संपूर्ण रचनाओंमें या किसी पुस्तकमें प्रयुक्त शब्द-भाण्डार ।

शब्द-निरुक्ति—व्याकरणमें, वाक्यमें प्रयुक्त किसी शब्द [सामान्यतः इस प्रसंगमें 'शब्द'-का प्रयोग होता है पर वैज्ञानिक दृष्टिसे यहाँ 'पद'का प्रयोग होना चाहिये । इस आधारपर 'शब्द-निरुक्ति' या 'शब्दान्वय'की अपेक्षा 'पदव्याख्या' या 'पद परिचय' शब्द अधिक उपयुक्त हैं । (दे०) **शब्द** और **'पद'** ।]—का शब्द-भेद, वचन, लिंग, कारक, काल तथा दूसरे शब्दोंके साथ उसका संबंध बतलाना 'शब्द-निरुक्ति', 'शब्दान्वय', 'पद-

परिचय या **पद व्याख्या** (दे०) कहलाता है।

शब्द-निर्माण––(दे०) **शब्द-समूहमें निर्माण** उपशीर्षक ।

शब्द-पुनरुक्ति––पुनरुक्ति (दे०) का एक नाम।

शब्द-बलाघात––बलाघात (दे०) का भेद।

शब्द-भांडार––शब्द-समूह (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

शब्द-भूगोल (word geography)–– (दे०) **भाषा-भूगोल** ।

शब्दरेखा (isoglass **या** isolexic live)- (दे०) **आइसोग्लास** ।

शब्द-वर्ग (word group)––किसी वाक्य या अन्य रचनामें दो या अधिक शब्दोंका ऐसा वर्ग, जिनमें समास तो न हो, किंतु जो उस रचनामें व्याकरणिक और आर्थिक दृष्टिसे एक दूसरेसे पर्याप्त समीप हों ।

शब्द-विचार (etymology)–व्याकरणका वह विभाग, जिसमें शब्दोंके भेद, रूपान्तर, और व्युत्पत्ति आदिका वर्णन रहता है । इसे **शब्द-साधन** भी कहते हैं ।

शब्द-विज्ञान (wordology)–– 'शब्द-विज्ञान' और उसके लिए wordology शब्द, प्रस्तुत पंक्तियोंके लेखकका अपना प्रयोग है (दे०-भाषाविज्ञान, तीसरा संस्करण, पृ० ४२२)। इसकी आवश्यकता इसलिए पड़ी, कि शब्दके विषयमें ऐसी बहुत-सी अध्ययनीय बातें हैं, जिनको सुविधापूर्वक भाषाविज्ञानकी परंपरागत चार शाखाओं (ध्वनिविज्ञान, रूपविज्ञान, अर्थविज्ञान, वाक्य-विज्ञान) में नहीं रखा जा सकता । इसमें प्रमुखतः **शब्द** (दे०) की परिभाषा, शब्दोंका वर्गीकरण, **शब्द-समूह** (दे०), उसमें परिवर्तनके कारण और उनकी दिशाएँ, नये शब्दोंका निर्माण, **कोशविज्ञान** (दे०), **व्युत्पत्तिशास्त्र** (दे०) , **नाम विज्ञान** (दे०) आदि आते हैं । शब्द विज्ञानमें शब्दोंका अध्ययन वर्णनात्मक, तुलनात्मक और ऐतिहासिक तीनों रूपोंमें हो सकता है।

शब्द-शक्ति––शब्द (दे०) और **अर्थ** (दे०)-के बीच सम्बन्ध स्थापित करनेवाले व्यापार और उसमें निहित शक्तिको शब्द-शक्ति कहते हैं । दूसरे शब्दोंमें शब्दमें अर्थ प्रकट करनेकी जो शक्ति होती है, शब्द-शक्ति कहलाती है। अर्थकी दृष्टिसे शब्द तीन प्रकारके माने गये हैं :–(१) **वाचक** (२) **लक्षक** (३) **व्यंजक** । इन्हींके समानान्तर शब्द-शक्तियाँ भी तीन मानी गयी हैं–(१) **अभिधा** (२) **लक्षणा** (३) **व्यंजना**। **वाचक शब्द**–जो साक्षात् संकेतित अर्थ, कोशार्थ अथवा मुख्य अर्थका बोधक हो, उसे वाचक शब्द कहते हैं। वाचक शब्दके अर्थ-बोधका व्यापार 'अभिधा' शक्तिके नामसे प्रसिद्ध है। **अभिधा शक्ति**: कोशार्थ या मुख्य अर्थकी बोधिका, शब्दकी प्रथमा शक्तिका नाम अभिधा है । 'घोड़ा' शब्द सुनते ही पशु–विशेषकी आकृति मनमें उभर जाती है। वह विशेष पशु **अभिधेय'** अथवा '**अर्थ**' है और 'घोड़ा' उसका '**अभिधान**' या '**शब्द**' । दोनोंका संबंध अभिधा शक्ति द्वारा होता है । यहाँ 'घोड़ा' इस सामान्य अर्थमें वाचक शब्द है तथा उसकी जो शक्ति इस सामान्य अर्थका बोध कराती है, वह अभिधा शक्ति है। **अभिधाशक्ति** जिन शब्दोंका अर्थबोध कराती है, वे वाचक शब्द तीन प्रकारके होते हैं––(१) **रूढ़** (२) **यौगिक** (३) **योग रूढ़** । **रूढ़शब्दके** प्रकृति-प्रत्यय रूप अंगोंका सार्थक नियोजन नहीं होता । अर्थात् उस शब्दका व्युत्पत्ति-लभ्य अर्थ नहीं होता, जैसे 'घोड़ा'। इसका शब्दार्थ रूढ़िपर ही आधारित है । 'घो' और 'ड़ा' या 'घ' और 'ओड़ा' का कोई अर्थ नहीं है । **यौगिक शब्दमें** प्रकृति-प्रत्यय रूप अंगोंका सार्थक नियोजन होता है । अंगोंके योगसे संपूर्ण अर्थ उद्घाटित होता है, जैसे सुन्दरता (सुन्दर+ता) । इसी प्रकार समस्त शब्द (घुड़दौड़) भी यौगिक होते हैं। **योगरूढ़ शब्द**-में प्रकृतिप्रत्यय रूप अंगोंका सार्थक नियोजन तथा रूढ़का योग रहता है । दोनोंके सम्मिलित आधारपर अर्थका उद्घाटन होता है––जैसे, सम्मानित अतिथि राष्ट्रपिताकी समाधिपर माल्यार्पण करने गये । यहाँ

'राष्ट्रपिता' शब्दका यौगिक अर्थ 'राष्ट्रके पिता' है और रूढ़ अर्थ है महात्मा गांधी। प्रस्तुत वाक्यमें अभिप्राय दोनों अर्थोंसे है। इसलिए यह योगरूढ़ शब्द कहलायेगा। 'जलज', 'हाथी' आदि इसी प्रकारके शब्द हैं।

लक्षक शब्द-जिस शब्द द्वारा मुख्यार्थसे भिन्न कोई अन्य अर्थ लक्षित होता है, उसे 'लक्षक शब्द' कहते हैं। जैसे "तू 'गदहा' है"में 'गदहा' लक्षक शब्द है। यहाँ इसका अर्थ चार पैरका जानवर न होकर 'मूर्ख' है। **लक्षणा शक्ति**–मुख्यार्थमें बाधा उपस्थित होने, या कोशार्थके बाध होनेपर जिस शक्तिद्वारा, रूढ़ि अथवा प्रयोजनको आश्रय करके, मुख्यार्थसे संबंध रखनेवाला अन्य अर्थ लक्षित हो, उसे लक्षणा शक्ति कहते हैं। नीचे उद्धृत पंक्तिमें 'अनल-किरीट' शब्दमें मुख्यार्थका बाध है; कारण यह है 'आगका मुकुट' नहीं होता। अतएव लक्षणा द्वारा "भयंकर संकट या कठिनाई" अर्थ लिया जायगा––"लेना अनल किरीट भाल पर, ओ! आशिक होने वाले।" –'दिनकर'। **लक्षणाके भेद**—लक्षणाके सामान्य भेद दो हैं—(१) रूढ़ि (२) प्रयोजनवती। **रूढ़ि लक्षणा**—रूढ़ि लक्षणा वहाँ होती है, जहाँ रूढ़िके आधारपर मुख्यार्थ-को छोड़कर, उससे संबंध रखनेवाला अन्य अर्थ ग्रहण किया जाता है। बिहारीके निम्नां-कित दोहेमें—"दृग उरझत, टूटत कुटुम, जुरत चतुर चित प्रीति। परति गाँठ दुरजन हिये, दई नई यह रीति।" दृगोंका 'उलझना', कुटुम्बका 'टूटना', प्रीतिका 'जुटना' और दुर्जनोंके हृदयमें 'गाँठका पड़ना' रूढ़िके आधारपर ही अपना अर्थ देते हैं। इन पदार्थों-के 'उलझने', 'टूटने' आदिका अभिधार्थ इस प्रकरणमें बाधित है। **प्रयोजनवती लक्षणा**––जहाँ किसी विशेष प्रयोजनकी सिद्धिके लिए मुख्यार्थका बाध होनेपर, उसी-से संबंध रखनेवाला अन्य अर्थ ग्रहण किया जाय, वहाँ लक्षणा 'प्रयोजनवती' कहलाती है। भिक्षुकके इस रूपमें––"पेट पीठ दोनों मिलकर हैं एक, चल रहा लकुटिया टेक", अर्थात् पेट और पीठका मिलकर 'एक' होना अभिधार्थ द्वारा संभव नहीं है। पेट, पेट ही रहेगा और पीठ, पीठ। दोनों 'एक' नहीं हो सकते। अतः 'एक' शब्दका इस प्रयोजनके आधारपर लक्ष्यार्थ ग्रहण किया जाता है कि भिक्षुक अत्यन्त क्षुधात्रस्त है। 'पेट पीठकी ओर इतना धँस गया है कि दोनोंमें भेद नहीं रह गया। **प्रयोजनवती लक्षणाके छः** प्रसिद्ध भेद हैं––(१) गौणी, (२) शुद्धा, (३) सारोपा, (४) साध्यवसाना, (५) उपादान, (६) लक्षण। इन्हें क्रमसे लिया जा रहा है। **गौणी लक्षणा**––जहाँ मुख्यार्थका बाध होनेपर, उसीसे संबद्ध अन्य अर्थ सादृश्य अथवा समान गुण या धर्मके आधारपर ग्रहण किया जाय, वहाँ गौणी लक्षणा होती है। 'निराला'जीकी निम्नांकित पंक्तियोंमें 'उन्मदनद' और 'पठान'में दम्भपूर्ण प्रवाहका साम्य है, इसलिए 'पठान ही उन्माद ग्रस्त नदियोंके समान हैं' यह अर्थ लिया जायगा–– "मोगल दल बल के जलद यान। दर्पित पद उन्मद-नद-पठान।" रूपक अलंकारमें गौणी लक्षणाका ही योग रहता है। **शुद्धा लक्षणा**––जहाँ मुख्यार्थका बाध होनेपर उसीसे सम्बद्ध अन्य अर्थ सादृश्य संबंधके अतिरिक्त किसी अन्य संबंध द्वारा ज्ञात हो, वहाँ शुद्धा लक्षणा होती है। उदाहरणके लिए 'गुप्त'जीकी निम्नांकित पंक्तियाँ ली जा सकती हैं–– "अबला जीवन हाय! तुम्हारी यही कहानी। आँचलमें है दूध और आँखोंमें पानी।" 'आँचल'में दूधका होना संभव नहीं। सामीप्य संबंधसे यह व्यक्त होता है कि 'आँचल'का अर्थ 'स्तन' है। वे 'आँचल'में ही ढँके रहते हैं और दूध उन्हींमें होता है। **सारोपा लक्षणा**–जहाँ लक्षणामें विषयी और विषयका अलग-अलग उल्लेख हो और विषयीका विषयपर आरोप हो, वहाँ 'सारोपा लक्षणा' होती है। जैसे 'निराला'की निम्नांकित पंक्तिमें–– "स्वर्ण-किरण कल्लोलोंपर बहता रे यह बालक मन।" किरणके ऊपर कल्लोलका और मन-पर बालकका आरोप कर दिया गया है।

किरण किरण है और मन, मन। वे लहर और बालक नहीं बन सकते। इसीलिए मुख्यार्थका बाध है और अर्थ लक्षणा द्वारा ग्राह्य है। बालककी भाँति भोला मन किरणोंको देखकर बेसँभाल हो जाता है (कल्लोलोंमें वह जाता है)। **साध्यवसाना लक्षणा**––जहाँ लक्षणामें आरोप तो हो, किन्तु विषयका निर्देश न कर केवल विषयी या आरोप्यमाणका ही निर्देश किया जाय, वहाँ साध्यवसाना लक्षणा होती है। 'दिनकर'की निम्नांकित पंक्तियों-में 'महल' और 'झोपड़ी'के लक्ष्यार्थ इसी पद्धतिपर 'धनी' और 'ग़रीब' निकलते हैं–– "विद्युत्की इस चकाचौंधमें देख दीपकी लौ रोती है। अरी हृदयको थाम **महलके** लिए **झोपड़ी** बलि होती है।" **उपादान लक्षणा**––जहाँ वाक्यार्थकी संगतिके लिए अन्य अर्थ ग्रहण किया जाय और अपना मुख्य अर्थ न छूटे, वहाँ उपादान लक्षणा होती है। मुख्यार्थका बाध तो रहना ही चाहिये। उदाहरण निम्नांकित है––"जब हुई हुकूमत आँखोंपर जनमी चुपके मैं आहों-में। कोड़ोंकी खाकर मार पली पीड़ितकी दबी कराहोंमें।" 'विपथगा' अथवा 'क्रान्ति'-का पेट कोड़ोंकी मार खानेसे नहीं भर सकता और न उसका पालन ही इस प्रकार होता है। उपादान लक्षणा द्वारा ही यहाँ अर्थ ग्राह्य है। **लक्षण-लक्षणा**––जहाँ लक्ष्यार्थ वाच्यार्थको पूर्णतया छोड़कर केवल अपने आपको ही सूचित करे, वहाँ लक्षण-लक्षणा होती है। घनानंदने लिखा है–– "कबहूँ वा **बिसासी** सुजानके आँगन मो अँसुवान को लै बरसो।" यहाँ 'बिसासी' शब्दका अर्थ उलटकर 'विश्वासघाती' हो गया है। यह मुख्यार्थका ठीक उलटा है। इसीलिए लक्षण-लक्षणा है।

व्यंजक शब्द–जो शब्द वाच्यार्थ एवं लक्ष्यार्थ-से भिन्न अन्य अर्थका बोध कराता है, उसे व्यंजक शब्द कहते हैं। 'गंगापर गाँव है'-में 'पर' शब्द द्वारा 'निकटता' लक्षित होती है और 'पावनता', 'शीतलता' आदिकी व्यंजना होती है, अतः यहाँ 'पर' व्यंजक शब्द है। **व्यंजना शक्ति**––अभिधा और लक्षणाके अपना-अपना अर्थ बोध कराकर विरत हो जानेपर, जिस शक्ति द्वारा व्यंग्यार्थ-का बोध होता है, उसे व्यंजना कहते हैं। भूषण कविका निम्नांकित उदाहरण लीजिये ––"इतनो सँदेसो हैं पथिक जू तिहारे हाथ, जाय कहौ कंत सौं बसंत ऋतु आई है।" प्रोषितपतिका नायिकाकी इस उक्तिमें वाच्यार्थ केवल यह है कि, पथिक प्रियसे बसंत ऋतुके आनेकी बात कहे, किंतु व्यंग्यार्थ यह है कि इस ऋतुमें प्रियका अभाव जितना पीड़ादायक है, उतना और कुछ नहीं, इसीलिए उसे वापस चले आना चाहिये। **व्यंजनाके भेद**––व्यंजनाके दो भेद हैं–– (१) **शाब्दी** (२) **आर्थी**। **शाब्दी-व्यंजनाके** भी दो भेद होते हैं––(क) **अभिधामूला** (ख) **लक्षणामूला**। आर्थी व्यंजना परिस्थिति भेदके कारण लगभग ३० प्रकारकी होती है। आगे चलकर अभिधामूला शाब्दी व्यंजनाके १५ और लक्षणामूला शाब्दी व्यंजनाके ३२ प्रकार निर्धारित किये गये हैं। **अभिधामूला शाब्दी व्यंजना**––संयोग आदिके द्वारा अनेकार्थवाची शब्दके प्रसंगो-पयोगी एक विशिष्ट अर्थका निश्चय हो जानेपर जिस शक्ति द्वारा अन्यार्थका ज्ञान होता है, वह अभिधामूला शाब्दी व्यंजना कहलाती है। बिहारीके निम्नांकित दोहेमें 'गोरस' शब्दकी व्यंजना इसी प्रकार स्थिर हुई है––"लाज गहौ बेकाज कत, घेरि रहे, घर जाहिं। **गोरसु** चाहत फिरत हौ, गोरसु चाहत नाहिं।" यहाँ **गोरस** शब्द 'दूध-दही' और 'इन्द्रिय-रस'का वाचक है। व्यंजना द्वारा यह प्रकट है कि स्वयंदूतिका नायिका नायकपर अनुरक्त है और एकांतमें मिलने-का प्रस्ताव रख रही है। **लक्षणामूला शाब्दी व्यंजना**––जिस प्रयोजनके लिए लक्षणाका आश्रय लिया जाता है, उस प्रयोजनकी प्रतीति करानेवाली शक्तिका नाम लक्षणा-मूला शाब्दी व्यंजना है। मतिरामका निम्नां-

कित सवैया देखिये--"कूकती क्वैलिया कानन लौं नहिं जाति सह्यो तिन की सुअवाजें। भूमि ते लैके आकाश लौं फूले पलास दवानलकी छवि छाजें। आये बसंत नहीं घर कंत लगी सब अंतकी होने इलाजें। बैठि रही हमहूँ हिय हारि कहाँ लगि टारिये हाथन गाजें।" हाथसे **गाज,** अर्थात् बिजली टालना सम्भव नहीं। विपत्तियोंकी अतिशयता यहाँ व्यंजित है। विपत्तियाँ भी मामूली थोड़े ही हैं। कोइल कूकती कूकती कानके पास चली आती है। लाल लाल पलासके फल ऐसे लग रहे हैं, जैसे दावानल उत्पन्न हो गयी हो। ऋतुराज वसंत आ गया है और प्रिय घरपर नहीं हैं। मैं कहाँतक और क्या उपचार करूँ। कहीं गाज ऐसी विपत्ति हाथसे टाली जाती है। **आर्थी व्यंजना**--जो शब्द-शक्ति वक्ता बोद्धव्य आदिके विचारसे व्यंग्यार्थकी प्रतीति कराती है, वह आर्थी व्यंजना है। उदाहरण निम्नांकित है--"जिहि निदाघ दुपहर रहै, भई माघकी राति। तिहि उसीरकी रावटी, खरी आवटी जाति।" दूतिका नायकसे नायिकाके विरह-जन्य तापका उल्लेख करके शीघ्र चलनेका आग्रह करती है। 'जिस रावटीमें खसका प्रयोग होनेसे जेठका दुपहर माघकी रातकी भाँति शीतल लगता है, उसीमें बैठी नायिका विरह तापसे जल रही है।' शीघ्र चलनेका आग्रह व्यंग्य है। **वक्तृवैशिष्टयोत्पन्ना आर्थी व्यंजना**--कवि अथवा कवि-कल्पित पात्रके कथनकी विशेषताके कारण जो व्यंग्यार्थ प्रतीत होता है, वक्तृवैशिष्टयोत्पन्न कहलाता है--"तो ही निरमोही लग्यौ मो ही यहै सुभाव। अनै आये आवै नहीं, आये आवै, आव।" नायिकाकी नायकसे उक्ति--तुम्हारे निर्मोही हृदयसे मेरा हृदय जा लगा है। अब उसका स्वभाव यह हो गया कि तुम्हारे आनेसे आता है और न आनेसे नहीं। इसलिए तुम आओ। नायिकाकी अत्यासक्ति व्यंग्य है। **बोद्धव्यवैशिष्टयोत्पन्ना आर्थी व्यंजना**--जहाँ सुननेवालेकी विशेषताके आधारपर व्यंग्यार्थका बोध हो, वहाँ बोद्धव्यवैशिष्टयोत्पन्ना व्यंजना होती है। निम्नांकित दोहेमें सुननेवालेके अनुसार अर्थका निर्धारण देखिये--"यह अवसर निज कामना, किन पूरन करि लेहु। ये दिन फिर ऐहैं नहीं, यह छन भंगुर देहु।" यदि यह बात किसी तरुण परीक्षार्थीसे कही गयी है तो 'परिश्रम करो' यह व्यंजना होगी, किन्तु यदि किसी कामी अथवा लंपटसे कही जाय तो सुरतोपदेशकी व्यंजना होगी। **वाक्यवैशिष्टयोत्पन्ना आर्थी व्यंजना**--जहाँ संपूर्ण वाक्यकी विशेषतासे व्यंग्यार्थकी प्रतीति हो, वहाँ यह व्यंजना होती है--"ननँद चाह सुनि चलनकी बरजत क्यों न सुकंत। आवत बन विरहीनको, बैरी अधिक बसंत।" यह परकीया नायिकाकी उक्ति ननँदके प्रति है--तुम्हारे पति परदेश जानेकी कामना रखते हैं, उन्हें रोकती क्यों नहीं? बिरहिनियोंको मारनेवाला वसंत वनमें आ रहा है।' तुम कैसे जीवित रहोगी, यह व्यंग्य है। वह नायिका ननँदके पतिमें अनुरक्त है, इसलिए यह व्यंजना भी निकलती है कि उसके परदेश जानेसे प्रेमिका बच नहीं सकती। यहाँ, संपूर्ण वाक्यसे व्यंग्यार्थकी ध्वनि निकलती है। **अन्य संनिधिवैशिष्टयोत्पन्ना आर्थी व्यंजना**--अन्यकी उपस्थितिमें वक्ता बोद्धव्यसे जो कुछ कहे, उससे निकला हुआ व्यंग्य जहाँ निकले, वहाँ यह आर्थी व्यंजना होती है। इसमें व्यंग्यार्थ वही समझ पाता है, जिसे लक्ष्यकर बात कही गयी है। आगेके दोहेमें--"घरके सब न्यौते गये, अभी अँधेरी रात। घर किवार नहिं द्वारमें, ताते जिय घबरात।" नायिकाका प्रिय अन्य लोगोंके बीच उपस्थित है। बात उसे ही सुनायी जा रही है, लेकिन प्रत्यक्षतः सखीके प्रति निवेदित है। व्यंग्यार्थ यह है कि तुम रातमें निर्भय चले आओ, कोई बाधा नहीं है। **वाच्य वैशिष्टयोत्पन्ना आर्थी व्यंजना**--जहाँ वाच्य, अर्थात् कही हुई बात-

की विशेषतासे व्यंग्यार्थकी प्रतीति हो, वहाँ इस व्यंजनाका प्रयोग माना जायगा; जैसे--"सूखी सुता पटेलकी, सूखी ऊखन पेखि। अब फूली फूली फिरै फूली अरहर देखि।" 'फूली' अरहरसे व्यंजित है कि विहारके लिए एकांत सघन आच्छादित स्थान उपलब्ध है। **प्रस्ताव वैशिष्टचोत्पन्ना आर्थी व्यंजना**--जहाँ प्रस्ताव, अर्थात् प्रकरणकी विशेषतासे व्यंग्यार्थका बोध हो, वहाँ यह व्यंजना रहती है; जैसे--"सुन्यौ माइके ते वहू आयौ बाभन कंत। कुसल पूछिबे के मिसनि लीनी बोलि इकंत।" मायकेके ब्राह्मणको भेंट करनेके लिए एकांतमें बुलानेसे दोनोंके पारस्परिक पूर्व-प्रेमकी व्यंजना होती है। कुशल-क्षेम पूछनेका प्रकरण होनेसे ही यह व्यंजना संभव है। इसलिए विशिष्टता प्रकरणकी है। **देश वैशिष्टचोत्पन्ना आर्थी व्यंजना**--जहाँ स्थानकी विशेषताके कारण व्यंग्यार्थ प्रकट हो, वहाँ यही आर्थी व्यंजना रहती है; जैसे--"चित्रकूटमें रमि रहे, रहिमन अवध नरेस। जापर विपदा परत है, सो आवत यहि देस।" व्यंग्य यह है कि यह स्थल दुःखके दिन बिताने लायक है। रामके निवासके कारण इसमें यह विशेषता उत्पन्न हो गयी है। **काल वैशिष्टचोत्पन्ना आर्थी व्यंजना**--जहाँ कालकी विशेषताके कारण व्यंग्यार्थका बोध हो, वहाँ यह आर्थी व्यंजना होती है; जैसे--"कहाँ जायँगे प्राण ये लेकर इतना ताप? प्रियके फिरनेपर इन्हें फिरना होगा आप।" इस छंदमें वेदनाकी अधिकता और अभिलाषाकी व्यंजना है, 'प्रियके आगमनके समय' प्राणोंका लौट आना कालकी विशेषता सूचित करता है। **काकु वैशिष्टचोत्पन्ना आर्थी व्यंजना**--कंठध्वनि या काकु (tone)--की भिन्नता या विशिष्टतासे उत्पन्न व्यंजना इस श्रेणीके अंतर्गत आती है; जैसे--"मैं सुकुमारि नाथ बन जोगू, तुमहि उचित तप मोकहँ भोगू।" सीताके इस कथनमें व्यंजना यह है कि यदि राम वनके योग्य हैं तो वे भी हैं और यदि वे सुकुमार हैं तो राम अपेक्षाकृत अधिक सुकुमार हैं। यह काकु (tone) द्वारा ही होता है। **चेष्टा वैशिष्टचोत्पन्ना आर्थी व्यंजना**--जहाँ चेष्टा-हाव-भावादि द्वारा व्यंग्यार्थका बोध हो, वहाँ यही व्यंजना रहती है। शारीरिक चेष्टाएँ भावोंकी व्यंजनामें कितनी सफल होती हैं, यह बतानेकी आवश्यकता नहीं। निम्नांकित उदाहरणमें नायिकाका अनुराग-व्यंग्य है--"सटपटाति-सी ससिमुखी, मुख घूंघट पट ढांकि। पावक झर सी झमकिकै, गयी झरोखा झांकि"--विहारी। चन्द्रमाके समान मुखवाली नायिका कुछ सटपटातीसी, मुखको घूंघटसे ढंकती हुई, आगकी लपटकी तरह झमकती हुई झरोखेसे झांककर चली गयी। नायकके इस प्रकार कहनेसे व्यंजित है कि नायिका उसमें पूर्णतः अनुरक्त है। यहाँ चेष्टाओंद्वारा ही सब कुछ जतला दिया गया है।

शब्दशक्तिमूलक संलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि--एक प्रकार की **ध्वनि** (दे०)।

शब्दशास्त्र--(दे०) **व्याकरण**।

शब्द-संकेत (logogram)--ऐसे चिह्न या संकेत, जो एक या अधिक शब्दोंके प्रतीक हों। आशुलेखन (शार्ट हैण्ड) में इन्हीं चिह्नोंका प्रयोग करते हैं।

शब्द-संकेत-लेखन (logography)--**शब्द-संकेत** (दे०)से लिखनेकी पद्धति।

शब्द-संगम--**संगम** (दे०)का भेद।

शब्द-समूह (vocabalary)--किसी भाषा, बोली, उपबोली, व्यक्ति या पुस्तक द्वारा प्रयुक्त शब्दोंका समूह। इसे शब्द-भांडार भी कहते हैं। किसी भाषाके पूरे शब्द-समूहका ठीक-ठीक अनुमान संभव नहीं है, क्योंकि उसमें परिवर्तन-परिवर्द्धन होता रहता है। अंग्रेज़ी भाषा अन्य क्षेत्रोंकी भाँति शब्द-समूहके क्षेत्रमें भी सबसे धनी कही जाती है। वेब्स्टर कोशके १९३४के संस्करणमें ५,५०,०००से कुछ अधिक शब्द हैं। इधर २६ वर्षोंमें अधिक नहीं तो १०,००० शब्द तो अवश्य ही बढ़े होंगे। इस प्रकार अंग्रेज़ी

भाषामें इस समय लगभग ५,५६,००० शब्द होंगे। मोनियर विलियम्सके संस्कृत कोशके आधारपर संस्कृत भाषामें १,२५,००० शब्दोंके होनेका अनुमान लगाया जा सकता है। शब्द-समूहकी दृष्टिसे हिन्दीका सबसे बड़ा कोश 'बृहत् हिंदी कोश'(ज्ञानमण्डल लि०,वाराणसी) है। इसमें लगभग १,३८,००० शब्द हैं। इसके आधारपर इस समय हिन्दीमें लगभग १॥ लाख शब्दोंके होनेका अनुमान लगाना अनुचित न होगा। भाषाकी भाँति ग्रंथ तथा व्यक्तिका भी अपना शब्द-समूह होता है। पुरानी बाइबिलमें ५,६४२, नयी बाइबिलमें ४८००, होमरके ग्रंथोंमें ९,०००, मिल्टनमें ८,०००, शेक्सपीयरमें १५,००० और तुलसीदासमें लगभग १६,००० शब्द प्रयुक्त हुए हैं। बिना पढ़े-लिखे सामान्य व्यक्तिका शब्द-समूह ५००-८००के बीच या कभी-कभी इससे भी कम होता है। चर्चिलके शब्द-समूहमें लगभग ६०,००० शब्द कहे जाते हैं, जिनमें ३०,०००का तो वे प्रयोग करते हैं। अनेक वकीलोंका शब्द-समूह ५०,०००के लगभगका होता है, पर सबसे अधिक शब्द वैज्ञानिकोंको ज्ञात रहते हैं। इसका कारण यह है कि अन्य लोगोंके प्रयोगके सामान्य शब्द तो वे जानते ही हैं, साथ ही विज्ञानके पारिभाषिक शब्दोंको भी उन्हें जानना होता है। लोगोंका ख्याल है कि अच्छे विज्ञानवेत्ता लगभग ८०,००० शब्द जानते हैं।

जीवनके आरंभसे लेकर अंततक व्यक्तिके शब्द-समूहमें परिवर्तन होता रहता है। और ठीक इसी प्रकार भाषाका शब्द-समूह भी परिवर्तित होता रहता है। उदाहरणार्थ हिन्दी भाषाको ही लें। इसके इतिहासकी ओर दृष्टिपात करें तो देखेंगे कि १००० ई०से १९६३ तक उसका शब्द-समूह एक नहीं रहा है। उसमें हर सदीमें, बल्कि हर दशक या कभी-कभी तो हर वर्ष परिवर्तन-परिवर्द्धन होते रहे हैं।

शब्द-समूहमें परिवर्तन--किसी भाषाके शब्द-समूहमें परिवर्तन दो कारणोंसे होता है :-(१) प्राचीन शब्दोंका लोप, (२) नवीन शब्दोंका आगमन। इनपर अलग-अलग विचार किया जा रहा है।

(१) **प्राचीन शब्दोंका लोप**--प्राचीन शब्दोंके लोपके सम्बन्धमें हम जितने कारणोंपर यहाँ विचार करेंगे, उनके दो पक्ष हो सकते हैं। प्रथम है **वैयक्तिक पक्ष**। इसमें कारण बोलनेवालेके मस्तिष्कमें रहता है। जैसे शब्द कभी-कभी घिस जानेके कारण अर्थकी अभिव्यक्ति नहीं कर पाता, तो बोलनेवाले उसे व्यर्थ समझकर छोड़ देते हैं। दूसरा है **सामाजिक पक्ष**। समाजकी कुछ रीतियोंके समाप्त हो जानेके कारण उनसे सम्बन्धित शब्द भी छूट जाते हैं। कभी-कभी ये दोनों पक्ष साथ-साथ भी देखे जाते हैं, पर इन दोनों पक्षोंके साथ-साथ होनेमें भी कुछमें एकका प्राधान्य रहता है और कुछमें दूसरेका। **प्राचीन शब्दोंके लोपके कारण**--लोपके प्रमुख कारण ये हैं :-(क) **रीति या कर्मोंका लोप**--परिवर्तनशील समाजमें सर्वदा एक ही प्रकारके कार्य नहीं होते और न तो उसमें एक प्रकारकी रस्मों या रीतियोंका ही सर्वदा प्रचलन रहता है। ऐसी अवस्थामें रीतियों या कर्मोंके लुप्त होनेपर उनसे सम्बन्धित शब्द भी भाषाके शब्द-समूहसे प्रायः निकल जाते हैं। उदाहरणार्थ प्राचीन कालमें भारतमें प्रचलित 'यज्ञ'को लें। उस समय देशमें भाँति-भाँतिके यज्ञ होते थे, अतः उस कालकी भाषामें यज्ञसे सम्बन्धित सुब्रह्मण्या, न्यूङ्ख, यज्वा, यायजूक, स्थाण्डिल, आवसथिक, अहीन, अभिप्लव, संचाय्य, सुत्या तथा आनाय्य आदि सैकड़ों शब्द प्रचलित थे, जो बादमें 'यज्ञों'की परम्परा लुप्त हो जानेके कारण शब्द-समूहसे निकल गये। यदि यज्ञ-कर्म आजतक होते आते तो तत्सम या तद्भव रूपमें ये शब्द अवश्य वर्तमान होते। (ख) **रहन-सहन तथा खान-पान आदिमें परिवर्तन**--खान-पान, रहन-सहन, वेश-भूषा या इस प्रकारकी

अन्य चीजोंमें परिवर्तनका भी शब्द-समूह-पर प्रभाव पड़ता है। परिवर्तन होनेपर पुरानी चीजें नहीं रह जातीं, अतः उनसे सम्बन्धित शब्द भी लुप्त हो जाते हैं। उदाहरणार्थ, प्राचीन कालमें भक्त, अभ्यूष, अपूप तथा सक्तुकका प्रचार खानेमें था और आज भी है। अतएव ये शब्द लुप्त नहीं हुए हैं और तद्भव रूपमें (भात, हाबुस, पूआ या मालपूआ और सत्तू) आज भी शब्द-समूहमें हैं, पर दूसरी ओर मंथ (धानका मथकर बनाया गया सत्तू), यावक (जौसे बना एक खाद्य) तथा संयाव (एक प्रकारका हलुवा)का प्रयोग बहुत पहलेसे बन्द हो गया है, अतः ये शब्द भी शब्द-समूहसे निकल गये हैं। इसी प्रकार पुराने ढंगके कपड़ों, गहनों, शृंगारकी अन्य सामग्रियों, वाहनों, अस्त्रों तथा बर्तनों आदि जिन-जिन चीजोंका प्रयोग समाप्त हो जाता है, उनसे सम्बन्धित शब्द भी शब्द-समूहसे लुप्त हो जाते हैं। **(ग) अश्लीलता** सामाजिक रूढ़ियों तथा परम्पराओंके अनुसार मैथुन या शौच विषयक बहुतसे शब्द अश्लील स्वीकार कर लिये जाते हैं। इसका फल यह होता है कि शिक्षित तथा सभ्य समाजमें उनका प्रयोग नहीं होता और इस प्रकार वे लुप्त हो जाते हैं। आश्चर्य यह है कि ठीक वही अर्थ रखनेवाले अन्य शब्द समय और क्षेत्र विशेषमें अश्लील नहीं माने जाते। 'पाखाना और गुह', 'पेशाब और मूत' आदिमें यह बात स्पष्ट है। इन दोनों जोड़ोंमें प्रथम शब्द प्रचलित हैं पर दूसरे सभ्य-समाजके शब्द-समूहसे निकल चुके हैं। इसी प्रकार लिंग, उपस्थ, सहवास, वीर्य, शौच तथा गुदा आदि शब्द प्रचलित हैं, पर इन्हीं अर्थोंमें प्रयुक्त कुछ अन्य शब्द अब बिल्कुल ही अश्लील हो गये हैं तथा सभ्य समाजके लिए त्याज्य समझे जाते हैं। वे शब्द हमारे शब्द-समूहसे निकल गये हैं। **(घ) ध्वनिकी दृष्टिसे शब्दोंका घिस जाना** ध्वनि-परिवर्तन होते-होते कभी-कभी शब्द इतने घिस जाते हैं, कि उन्हें शब्द-समूहसे निकल जाना पड़ता है और उनके स्थानपर भाषामें फिरसे उनके मूल तत्सम शब्द या अन्य शब्द ले लिये जाते हैं। प्राकृत तथा अपभ्रंश तक आते-आते बहुतसे शब्द इस प्रकारके हो गये थे। कुछमें केवल स्वर ही स्वर रह गये थे। कुछ उदाहरण ऐसे भी मिलते हैं, जिनमें घिसते-घिसते कई शब्द एक रूप धारण कर चुके थे और उनमें प्रयोगकर्त्ताके लिए परेशानी थी। फल यह हुआ कि इस प्रकारके बहुत-से शब्द निकल गये। यहाँ कुछ इस प्रकारके शब्दोंके उदाहरण लिए जा सकते हैं जो स्पष्ट रूपसे घिसे लगते हैं और जिनको प्राकृत-अपभ्रंशके बाद हम प्रयोगमें नहीं पाते और उनके स्थानपर उनके मूल तत्सम शब्दोंको फिरसे अपना लिया गया है।

(क) ऐसे शब्द जिनमें घिसनेसे केवल स्वर ही स्वर शेष थे—

संस्कृत	प्राकृत-अपभ्रंश	सं०	प्रा०अप०
अति	अइ	ऋतु	उउ
इति	इइ	उचित	उइअ
उदर	उअअ	एक	एअ

(ख) अन्य घिसे शब्द—

संस्कृत	प्राकृत-अपभ्रंश	सं०	प्रा०अप०
ऋण	अण	शाखा	साहा
उदास	उआस	अंतर	अंतो
राज	राअ	अध्ययन	अहिज्जण
चरित	चरिउ	इत्यादि	इच्चाइ
अजगर	अअगर	स्त्री	इत्थि
अतिथि	अइहि	प्रयोग	पओग
वर्ष	वास	प्रदेश	पएस
रजत	रयय	शब्द	सद्द
भरत	भरह	धर्म	धम्म
साधक	साहय		

ग ऐसे शब्द जिन्होंने घिसकर एक रूप धारण कर लिया था और भ्रमकी आशंका थी—

संस्कृत	प्राकृत-अपभ्रंश
अवतार	ओआर

अपकार	ओआर
उपकार	ओआर

ग के अंतिम दो उदाहरणोंमें हम देखते हैं कि दो विरोधी भावोंके शब्द भी घिसकर एक हो चुके थे। यहाँ भ्रमकी कितनी अधिक गुन्जाइश थी, कहनेकी आवश्यकता नहीं। **(ङ) अंधविश्वास**—यह विशेषतः जंगली या अर्द्धसभ्य लोगोंकी भाषाओंमें पाया जाता है। वे लोग अंधविश्वाससे शब्दोंका प्रयोग बिल्कुल बन्द कर देते हैं। यदि किसी भी कारणसे उन्हें इसका आभास मिल गया कि अमुक शब्द अशुभ है या उसके कहनेसे कोई देवता रुष्ट होगा तो वे उसका प्रयोग छोड़ देते हैं। कुछ सभ्य लोगोंमें भी इस प्रकारके अंध-विश्वास मिलते हैं। जापानमें राजा या उसके परिवारमें बोली जानेवाली भाषामें ऐसे बहुतसे शब्द हैं, जो वहाँकी सामान्य भाषासे निकल गये हैं, क्योंकि सामान्य जनता उनका प्रयोग पाप समझती है। भारतमें पतिका नाम पत्नी या पत्नीका नाम पति नहीं लेता। कहीं-कहीं बड़े लड़केका नाम नहीं लिया जाता। एक संस्कृतका श्लोक भी है, जिसमें अपना नाम, गुरुका नाम, राजाका नाम तथा इसी प्रकारके कुछ और नामोंको लेनेका निषेध है। जैसे—'आपनाम गुरोर्नाम नामातिकृपणस्य च। श्रेयस्कामान्न गृह्णीयाज्ज्येष्ठापत्य कलत्रयोः ॥" कहीं-कहीं रातमें लोग साँप-बिच्छूका नाम न लेकर साँपको जेवर, करियवा या पीढ़ा तथा बिच्छूको टेढ़की कहते हैं। पर, इस प्रकारके वैयक्तिक या विशिष्ट समय (जैसे रातमें बिच्छू आदिका नाम न लेना)के टैबू शब्दोंका भाषाके शब्दसमूहपर कोई स्थायी प्रभाव नहीं पड़ सकता। **(च) पर्याय**—कभी-कभी यह देखा जाता है कि जन-मस्तिष्क व्यर्थमें एक भावनाके लिए कई शब्दोंका भार ढोना पसन्द नहीं करता। ऐसा होता है कि शब्दोंके अर्थमें यदि कुछ भी अन्तर न हो तो उसमें कुछ लुप्त हो जाते हैं। मुसलमानोंके आगमनके बाद मध्ययुगमें जन-भाषामें 'सहस' (सं० सहस्र) शब्द 'हज़ार'की प्रतियोगितामें खड़ा न हो सका और उसे मैदान छोड़ना ही पड़ा। इसी प्रकार 'इशारा'की प्रतियोगितामें संकेत-आईना या शीशाकी प्रतियोगितामें दर्पण, शकलकी प्रतियोगितामें आकृति, शराबकी प्रतियोगितामें मदिरा या मद्य, शहरकी प्रतियोगितामें नगर या पुर, शिकारकी प्रतियोगितामें मृगया या आखेट तथा खालीकी प्रतियोगितामें रिक्त या रीता भी जन भाषामें नहीं ठहर सके। हाँ, अब अवश्य सांस्कृतिक पुनरुत्थानके साथ फिर धीरे-धीरे ये लुप्त शब्द प्रयोगमें आ रहे हैं। बेइमान, ईमान, तथा ईमानदार आदि ऐसे बहुतसे शब्द हैं, जिनके लिए यह तो नहीं कहा जा सकता कि मुसलमानोंके सम्पर्कमें आनेके पूर्व भारतमें ये भाव व्यक्त किये जाते थे, पर हाँ आज इनके उपर्युक्त भारतीय पर्याय इतनी बुरी तरह लुप्त हो गये हैं कि बिना समुचित शोध किये उन्हें जान पाना भी कठिन है।

(२) नवीन शब्दोंका आगमन—भाषामें एक ओर तो कुछ प्राचीन शब्दोंका लोप होता है पर दूसरी ओर कुछ नये शब्दोंका आगमन भी होता है। आगमनके लिए निम्नांकित कारण सम्भव हैं: **(क) सभ्यतामें विकास**—सभ्यताके विकासके साथ तरह-तरहकी नवीन चीजोंका निर्माण होता है और उनसे सम्बन्धित शब्दोंका निर्माण करना पड़ता है। अंग्रेज़ी भाषामें तरह-तरहके वैज्ञानिक विकासके कारण ही तरह-तरहकी चीज़ों तथा विचारोंके लिए प्रति वर्ष हज़ारों नये शब्द अन्य भाषाओंसे लेने या बनाने पड़ते हैं। हिन्दीमें स्वतन्त्रताके बाद इस प्रकारके पर्याप्त शब्द आये हैं, जैसे नलकूप आदि। **(ख) चेतना**—राजनीतिक या सांस्कृतिक चेतनाके कारण भी नवीन शब्दोंका आगमन होता है। स्वतन्त्रताके बाद भारतमें बहुमुखी चेतना दृष्टिगत हो रही है। फल यह हुआ है कि उन विभिन्न क्षेत्रोंसे सम्बन्धित विचारकी अभिव्यक्तिके लिए हज़ारों शब्द संस्कृतके आधारपर बनाये जा रहे हैं, या संस्कृत, प्राकृत आदि

प्राचीन भाषाओं या कभी-कभी अंग्रेज़ी आदि विदेशी भाषाओंसे लिये जा रहे हैं। **(ग) भिन्न भाषा-भाषी शब्दों या क्षेत्रोंका सम्पर्क**--जब दो भिन्न भाषा-भाषी राष्ट्र, प्रान्त या क्षेत्र एक दूसरेके सम्पर्क में आते हैं तो दोनों ही एक दूसरेसे कुछ न कुछ शब्द लेते हैं। भारतके संपर्कमें समय-समयपर अरब, ईरानी, पुर्तगाली तथा अंग्रेज़ आदि आये और फल यह हुआ कि एक ओर तो भारतीय भाषाओं-ने इन सभीकी भाषाओं (अरबी, फ़ारसी, पुर्तगाली तथा अंग्रेज़ी)से शब्द लिये तथा दूसरी ओर अरबी, फ़ारसी, पुर्तगाली तथा अंग्रेज़ी आदिने भी भारतीय भाषाओंसे अने-कानेक शब्द लिये। संसारकी सभी भाषाओंने सम्पर्कके कारण कुछ न कुछ शब्द इस प्रकार ग्रहण किये हैं। जर्मनमें विदेशी शब्दोंकी संख्या लगभग १०,००० है। अंग्रेज़ीने केवल भार-तीय भाषाओंसे लगभग २,५०० शब्द लिये हैं। हिन्दीने तुर्कीसे लगभग ७०, फ़ारसी-अरबीसे लगभग ७,००० अंग्रेज़ीसे लगभग ३,००० तथा पुर्तगालीसे लगभग ८० शब्द लिये हैं। फ़ारसीमें भारतसे लगभग १५० शब्द गये हैं। डॉ० चटर्जीके अनुसार बंगलामें तुर्की, अरबी-फारसी शब्द २४००, अंग्रेजी ७०० शब्द तथा पुर्तगाली शब्द लगभग १०० हैं। **(घ) दृश्यात्मकता**--कुछ चीज़ोंके विशिष्ट रूपसे दिखाई पड़नेके कारण भी कभी-कभी कुछ शब्द उनकी दृश्यात्मक अनु-भूतिकी अभिव्यक्तिके लिए आ जाते हैं। बगबग, जगमग, चमचम, लकदक आदि हिन्दी शब्द इसी श्रेणीके हैं। **(ङ) ध्वन्यात्मकता**--कुछ वस्तुओंकी ध्वनिके कारण भी नये शब्द उन ध्वनियोंके आधारपर आ जाते हैं। मोटर ध्वनिके कारण पों-पों, कुत्तेके कारण भों-भों शब्द हिन्दीमें आये हैं। चरमर, भड़भड़, हड़हड़, कल-कल, छल-छल तथा खल-खल शब्द भी ऐसे ही हैं। **(च) साम्य या नवीनता लानेके लिए**--साम्य या नवी-नता लानेके लिए कभी-कभी लोग बलात् नय शब्दोंको लाते हैं और वे शब्द चल पड़ते हैं। हिन्दीमें साम्यके लिए पाश्चात्यके साथ नवीन शब्द पौर्वात्य आ गया है। पिंगलके आधारपर डिंगल, मीठाके आधारपर सीठा आदि ऐसे ही हैं। नवीनताके लिए उपसर्गों आदिको जोड़कर भी इधर कितने ही नवीन शब्द बनाये गये हैं। १९१५ से १९४५ तकके हिन्दी साहित्यमें ऐसे बहुतसे शब्द खोजे जा सकते हैं।

नवीन शब्दोंका स्रोत--नवीन शब्दोंके प्रमुखतः दो स्रोत हैं--१. निर्माण; २. उधार। कुछ शब्द तो (क) दो शब्दोंके मेल से, (ख) व्यक्तिवाचक संज्ञाओंके आधारपर, (ग) ध्वनिके आधारपर, (घ) दृश्यके आ-धारपर, (ङ) सदृशताके आधारपर, (च) व्याकरणके नियमोंके आधारपर या (छ) स्वतन्त्र, निर्मित कर लिये जाते हैं और कुछ (क) दूसरी भाषाओंसे, (ख) अपने प्राचीन साहित्यसे, या (ग) ग्रामीण बोलियोंसे उधार-ले लिये जाते हैं। यहाँ इन सभीपर अलग-अलग संक्षेपमें विचार किया जा रहा है।

(१) निर्माण--(क) दो शब्दोंके मेलसे--आवश्यकतानुसार हम कभी-कभी दो शब्दोंको मिलाकर एक तीसरा शब्द बना लेते हैं। यह क्रिया सभी समुन्नत भाषाओंमें हुआ करती है। यह मिलाना आवश्यकता-नुसार प्राचीन शब्द+प्राचीन शब्द, प्राचीन शब्द + नवीन शब्द, नवीन शब्द + नवीन शब्द, विदेशी शब्द + विदेशी शब्द, + विदेशी शब्द + देशी शब्द तथा देशी शब्द + देशी शब्द आदि कई प्रकारका हो सकता है। फ़ारसी भाषामें फ़ारसी और अरबीके मेलसे बनाये गये शब्द कई हज़ार हैं। कुछ उदाहरण हैं।

अरबी	फ़ारसी	मेलसे बने शब्द
अक़्द (विवाह)	नामा	अक़्दनामा
		(विवाहका इकरारनामा)
अक्ल	मंद	अक्लमंद
अरक़	रेज़ी	अरकरेज़ी
		(बहुत परिश्रमी)
अर्ज़ी	नवीस	अर्ज़ीनवीस
ज़मा	बंदी	ज़माबंदी

हिन्दीमें भी इस प्रकार मेलसे बनाये गये शब्दोंकी संख्या कम नहीं है। जैसे :--

अंग्रेज़ी 'रेल' + हिन्दी 'गाड़ी' = रेलगाड़ी

अरबी 'अजायब' + हिन्दी 'घर' = अजायबघर

हिन्दी 'चिड़िया' + फ़ारसी 'खाना' = चिड़िया-खाना

संस्कृत 'दल' + फ़ारसी 'बंदी' = दलबंदी

हिन्दी 'रसोई' + हिन्दी 'घर' = रसोईघर

संस्कृत 'देश' + हिन्दी 'निकाला' = देशनिकाला

हिन्दी + 'अब' हिन्दी 'ही' = अभी

पुर्तगाली 'पाव' + हिन्दी 'रोटी' = पावरोटी

हिन्दी 'कब' + हिन्दी 'ही' = कभी

हिन्दी + 'जब' हिन्दी 'ही' = जभी

(ख) व्यक्तिवाचक संज्ञाओंके आधारपर-- व्यक्तिवाचक शब्दोंके आधारपर भी उनके कार्य, गुण या विशेषताको लेकर शब्द बना लिये जाते हैं। 'सैंडो बनियाइन' मेंका सैंडो शब्द एक अमेरिकन पहलवानके नामसे लिया गया है, जिसने इस प्रकारकी बनियाइनका सर्वप्रथम प्रयोग किया था। अंग, बंग, कुरु, पांचाल, भारत तथा अमेरिका आदि भी व्यक्तिवाचक नामोंपर ही आधारित हैं। अंग्रेज़ीके बॉयकाट, एटलस, मर्सराइज़, इको तथा क्विसलिंग एवं हिन्दीके जयचन्द (देश-द्रोही), सावित्री (पतिव्रता), हरिश्चन्द्र (सच्चा) तथा विभीषण (घरका भेदिया, देशद्रोही) आदि शब्द भी ऐसे ही हैं। स्थानोंके नामके आधारपर भी शब्द बनते हैं। सुर्ती (सूरत नगरसे आनेवाली), चीनी (चीनकी), मिश्री (मिस्रकी), तथा मोरस (मारिशसकी) ऐसे ही शब्द हैं। लखनौवा (छैला, नाज़ुक) तथा बनारसी (चतुर, ठग) आदि विशेषण भी इसीके उदाहरण हैं। **(ग) ध्वनियोंके आधारपर**--कुछ शब्द ध्वनियोंके आधारपर भी बनते हैं। धड़-धड़ तड़-तड़, पड़-पड़ चर-मर, चू-चू, मर-मर तथा खर-खर आदि शब्द ऐसे ही हैं। **(घ) दृश्यके आधारपर**--कुछ वस्तुओंके देखनेसे ही उनके दिखाई पड़नेके सम्बन्धमें शब्द बन जाते हैं। चम-चम, जग-मग, बग-बग तथा दग-दग आदि इसी प्रकारके शब्द हैं। **(ङ) दूसरे शब्दोंके रूपके आधारपर (औपम्य या सादृश्यके आधारपर)**--दूसरे शब्दोंके वज़न या औपम्यपर भी कुछ शब्दोंसे नये शब्द बनाये जाते हैं। कुछ इस प्रकारके विचित्र उदाहरण भी मिलते हैं। उस्मानिया युनिवर्सिटीसे एक कोश (a concise english-hindi dictionary) प्रकाशित हुआ है, जिसमें 'करना', 'कराना' आदिके सादृश्यपर अंग्रेज़ी शब्द canvass से हिन्दी 'कन्वसना', acknowledgeके लिए रसीदसे 'रसीदियाना' तथा alienate के लिए विपक्षसे 'विपक्षियाना' जैसे बहुतसे शब्द बनाये गये हैं। कहना न होगा कि योग्य संपादकोंने धन, श्रम और बुद्धिका यह जो दुरुपयोग किया है, दयनीय है और इसका अधिकांश कभी प्रयुक्त नहीं होगा। पर सादृश्यके आधारपर बने ऐसे शब्द भी बहुत हैं जो ख़ूब चलते हैं और अच्छे हैं। शहरसे शहरी और देहातसे देहाती शब्द थे पर बादमें 'देहाती' के सादृश्यपर 'शहराती' शब्द बना जो आज धड़ल्लेसे प्रयुक्त होता है। बहुतसे संज्ञा-शब्दोंसे (करना, मरना आदिके) सादृश्यके आधारपर क्रिया शब्द बने हैं, जैसे संस्कृत टंकारसे टंकारना, फारसी दाग़से दागना या लालचसे ललचाना, अंग्रेजी फ़िल्मसे फ़िलमियाना। लोक भाषाओंमें भी यह प्रवृत्ति है और बरधसे बरधाना, पाड़ीसे पड़ियाना, भैंससे भैंसाना तथा लातसे लतियाना आदि इसके अच्छे उदाहरण हैं। **(च) व्याकरणके नियमोंके आधारपर**--व्याकरणके नियमोंके आधारपर पुराने या नये, देशी या विदेशी शब्दोंमें उपसर्ग या प्रत्यय आदि लगाकर बहुत अधिक शब्दोंका निर्माण होता है। जैसे हिन्दीमें 'अ' उपसर्ग लगाकर 'अथाह', 'दु' लगाकर, 'दुकाल', 'नि' लगाकर 'निकम्मा' या 'अक्कड़' प्रत्यय लगाकर 'मुलक्कड़', 'आऊ' लगाकर 'दिखाऊ', 'चलाऊ', 'उड़ाऊ'; 'आका' लगाकर (पड़ाका, धड़ाका, तथा 'आरी' लगाकर 'भिखारी', 'पुजारी'

आदि। संस्कृतमें कृतमें 'अप' उपसर्ग लगाकर अपकृत, 'उप' लगाकर 'उपकृत' 'वि' लगाकर विकृत, या 'ता' प्रत्यय लगाकर 'सुन्दर' से 'सुन्दरता', 'मृदु' से मृदुता आदि। अंग्रेजीमें डिवीज़नमें 'सब' उपसर्ग लगाकर 'सबडिविजन' या 'अल' प्रत्यय लगाकर 'डिविज़नल' अरबी-फ़ारसीमें 'ला' उपसर्ग लगाकर 'वारिस' से 'लावारिस' या 'कम' लगाकर 'कमजोर' और 'खोर' प्रत्यय लगाकर 'चुग़लखोर' या 'कार' लगाकर 'पेशकार' आदि।

(छ) स्वतन्त्र रूपसे निर्मित शब्द––बिना किसी आधारके स्वतन्त्र रूपसे शब्दोंका निर्माण होता है या नहीं यह प्रश्न विवादग्रस्त है। अधिकतर विद्वान् इसी पक्षमें हैं कि स्वतन्त्र रूपसे शब्दोंका निर्माण नहीं होता। कुछ लोग अंग्रेजी शब्द 'कौडक, गर्ल, डॉग तथा गैस'को स्वतन्त्र रूपसे निर्मित शब्द मानते हैं। यों इसमें संदेह नहीं कि बिना किसी आधारके प्रायः बहुत ही कम शब्द बनते हैं।

[२] उधार––(क) दूसरी भाषाओंसे––देश या विदेशकी दूसरी भाषाओंके संपर्कमें आनेपर शब्द उधार ले लिये जाते हैं। पीछे कहा जा चुका है कि तुर्की, फ़ारसी, अंग्रेज़ी आदिके बोलनेवालोंके संपर्कमें आनेके कारण हिन्दी आदि भारतीय भाषाओंने बहुतसे शब्द लिये हैं। ये शब्द कभी-कभी तो ज्योंके त्यों ले लिये जाते हैं जैसे, अंग्रेज़ी निब, पिन, टिन आदि और कभी-कभी ध्वनि-परिवर्तित होकर जैसे दिसम्बर, अगस्त, पैटमैन तथा वास्कट आदि। **(ख) अपने प्राचीन साहित्यसे**––सभी भाषाओंके प्राचीन साहित्य या वहाँकी प्राचीन भाषाओंके साहित्योंमें ऐसे अनेकानेक शब्द मिलते हैं जो अब प्रचलित नहीं हैं और आवश्यक होनेपर वे वहाँसे ले लिये जाते हैं। राष्ट्रभाषा हिन्दीको पारिभाषिक शब्दोंकी दृष्टिसे संपन्न बनानेके लिए संस्कृत साहित्यसे बहुतसे पुराने शब्द लिये जा रहे हैं। अंग्रेजी तथा फ्रेंच आदि यूरोपीय भाषाएँ आवश्यकता पड़नेपर ग्रीक तथा लैटिनसे इसी प्रकार शब्द लेती हैं। **(ग) ग्रामीण बोलियोंसे**––ग्रामीण बोलियोंसे भी आवश्यकतानुसार, भाषाको जीवंत बनानेके लिए या यों भी शब्द लिये जाते हैं। हिन्दीके मध्ययुगीन साहित्यमें तत्कालीन बोलियोंके काफ़ी शब्द लिये गये हैं। आधुनिक युगमें भी विशेषतः आंचलिक उपन्यासोंमें इस प्रकारके शब्द पर्याप्त मिलते हैं। नागार्जुनका 'बलचनमा' या रेणुका 'मैला आँचल' या 'परती परिकथा' इस दृष्टिसे दर्शनीय हैं। हिन्दीके चिपोंग, झांपी, झाम, लहवर, लेंहड़ा, ठड्ढा, ढोंका, ढुकना, टट्टू, ठर्रा, ठेठ, टेट, टंटा तथा डील आदि शब्द ग्रामीण बोलियोंसे ही लिये गये हैं।

शब्द-समूहमें परिवर्तन––(दे०) **शब्द-समूह**।

शब्द-सांख्यिकी (lexicostatistics)––**भाषा-कालक्रम विज्ञान** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

शब्द-साधन––(दे०) **शब्द-विचार**।

शब्द-सुरलहर––**सुरलहर** (दे०) का एक भेद।

शब्दानुकरणमूलकतावाद––भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धांत। इसे **अनुकरण-सिद्धांत** (दे०) भी कहते हैं।

शब्दानुकरणवाद––भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धान्त। इसे **अनुकरण-सिद्धान्त** (दे०) भी कहते हैं।

शब्दानुक्रमणी (indexing या word concordance word-index)––**अनुक्रमणी** या **शब्दानुक्रमणी**का प्रयोग कई अर्थों और कई प्रसंगोंमें होता है। यहाँ इसपर विचार भाषाविज्ञानकी शाखा **शब्द-विज्ञान** (दे०) या उसकी शाखा **कोश विज्ञान** (दे०) की दृष्टिसे किया जा रहा है। किसी पुस्तक या किसी साहित्यकारके शब्द-समूह, या उसकी भाषापर विचार करनेके लिए या उसका कोश बनानेके लिए उसमें (पुस्तक) आये हुए या उसके (साहित्यकारके) द्वारा प्रयुक्त शब्दोंकी आवश्यकता होती है। इन्हीं शब्दोंका वर्णानुक्रमसे संकलन पुस्तक या साहित्यकार-विशेषकी शब्दानुक्रमणी कहलाता है। इसमें लेखक या ग्रंथमें आये हुए जितने भी शब्द हैं, उन्हें वर्णानुक्रमसे

रखते हैं, साथ ही उनके साथ वे सारे संदर्भ लिए जाते हैं, जहाँ-जहाँ लेखक या पुस्तकमें वह शब्द आया है। उदहरणार्थ कल्पना कर लें कि रामचरितमानसकी शब्दानुक्रमणीमें 'अवध १. २. ३; २.३.४' लिखा है, तो इसका अर्थ होगा कि उसमें अवध शब्द दो बार आया है एक बार तो बालकांडके दूसरे दोहेकी तीसरी चौपाईमें और दूसरे अयोध्याकांडकेतीसरेदोहेकी चौथीचौपाईमें। इसी प्रकार पुस्तक विशेष या लेखक-विशेषके सारे शब्दोंके सन्दर्भ दिये रहते हैं। इस तरह शब्दानुक्रमणीके द्वारा सरलतासे यह जाना जा सकता है कि किसी शब्दका प्रयोग किसी पुस्तकमें कितनी बार हुआ है और कहाँ-कहाँ हुआ है। इस दिशामें प्राचीनतम प्रयास अपने यहाँ निघंटुओंमें मिलता है, यद्यपि वह सच्चे अर्थोंमें शब्दानुक्रमणी नहीं है। किंतु उन्हें शब्दानुक्रमणीका पूर्वरूप अवश्य कहा जा सकता है। पश्चिममें बाइबिल, शेक्सपियर आदिपर इस प्रकारका काम हुआ है। भारतीय साहित्यमें इस क्षेत्रमें कार्य करनेवालोंमें मैकडॉनेल और कीथका नाम उल्लेख्य है। इन्होंनेसर्वप्रथम इस दिशामें कदम उठाया। इन लोगोंने १९१२में वेदोंकी शब्दानुक्रमणी (vedic index of names and subjects) प्रकाशित की है। इसकी विशेषता यह है कि इसमें व्याख्यात्मक टिप्पणियाँ भी हैं जो विषयको देखते हुए बहुत मूल्यवान हैं। इसी प्रकार विश्वबंधुशास्त्रीने वैदिक-पदानुक्रम-कोशः (vedic word-concordance)नामसे वैदिक साहित्यके ४२५ ग्रंथोंकी शब्दानुक्रमणी (१९३५में तथा उसके बाद) प्रकाशित की। अनुक्रमणीकी दृष्टिसे यह कार्य मैकॉडनेल के कार्यसे श्रेष्ठ है। हिन्दी साहित्यकेक्षेत्रमें इसदिशामें डॉ० सूर्यकान्तने सर्वप्रथम काम किया। उन्होंने तुलसीके रामचरितमानस और जायसीके पद्मावतकी अनुक्रमणियां प्रकाशित कीं। इधर तुलसीके मानसकी एक और अनुक्रमणी प्रकाशित हो चुकी है।

अनुक्रमणी बनानेके पूर्व संबद्ध पुस्तक या लेखक का ठीक पाठ आवश्यक है। नये लेखकों या ग्रंथोंमें तो यह समस्या नहीं उठती, किंतु प्राचीन जैसे कबीर, तुलसी आदिके संबंधमें इसका ध्यान बहुत आवश्यक है। अच्छा यह होता कि पाठ विज्ञानके आधारपर पहले लेखक या पुस्तकके ठीक पाठका निर्धारण कर लिया जाय और तब उसकी शब्दानुक्रमणी तैयार की जाय। आधुनिक लेखकोंकी अनुक्रमणी बनानेमें भी कभी-कभी बड़ी सतर्कता अपेक्षित होती है। ऐसा प्रायः होता है कि मुद्रित पाठमें एकरूपता नहीं मिलती और अनुक्रमणी बनानेवालेने यदि आँख मूंदकर मुद्रित पाठके आधारपर अनुक्रमणी बना डाली तो अनेकरूपताके कारण कई प्रकारकी गड़बड़ियाँ रह जाती हैं। उदाहरणके लिए मान लें कि कहीं तो 'करनेवाला' छपा है और कहीं छपा है 'करने वाला'। अब यदि एक स्थानपर 'करनेवाला'को एक शब्द मानकर रखा गया तथा दूसरे स्थानपर 'करने'को अलग और 'वाला'को अलग शब्द रखा गया तो अनुक्रमणी त्रुटिपूर्ण हो जायगी। 'वाला' शब्द जहाँ होगा, वहाँ 'करने वाला'के 'वाला' का संदर्भ तो मिल जायगा किंतु 'करनेवाला'के 'वाला'का संदर्भ नहीं मिलेगा। इसी प्रकार यदि कहीं 'उस ने' छपा है और कहीं 'उस ने', तो 'ने'के दोनों संदर्भोंका पता नहीं चल सकता। विभिन्न भाषाओंमें प्रेस-संबंधी गड़बड़ियाँ विभिन्न प्रकारकी हो सकती हैं, जिनके कारण शब्दानुक्रमणी त्रुटिपूर्ण या अपूर्ण हो सकती है। इस दृष्टिसे, अनुक्रमणी बनानेके पूर्व, ग्रंथको आद्यंत पढ़कर उसमें आवश्यक संशोधन कर लेना अधिक अच्छा होता है। यह तो प्रेसकी गड़बड़ीकी बात थी। भाषा-विशेषकी लेखन-पद्धतिके कारण भी गड़बड़ी हो जाती है। उदाहरणार्थ, हिन्दीमें सर्वनामोंके साथ कारक चिह्न मिलाकर लिखते हैं—जैसे उसने, मैंने, तुमको, किंतु संज्ञाके साथ अलग लिखते

हैं, जैसे राम ने, मोहन ने, श्याम को। मान लें इनकी शब्दानुक्रमणी बनानी है और इसी प्रकार बना दी गयी तो परिणाम यह होगा कि अनुक्रमणीमें 'ने' और 'को' केवल संज्ञाके साथवाले ही आवेंगे, सर्वनामके साथके 'ने' और 'को'के संदर्भ उनके साथ नहीं मिलेंगे। इसके लिए अच्छा यह होता है कि जिनके साथ कारक चिह्न जोड़कर लिखे जाते हैं, उन्हें संयुक्त रूपमें (जैसे उसने, उसको) अलग लिखा तो जाय, किंतु साथ ही कारक-चिह्नों (जैसे यहाँ 'ने' या 'को'को)के संदर्भ अलग आनेवाले कारकचिह्नोंके साथ भी दे दिये जायँ। दोनोंमें अंतरके लिए दोनोंको अलग-अलग भी रखा जा सकता है, जैसे ने--१.२.४, आदि (अलग 'ने'के लिए); तथा--ने--१.३.२, आदि (संबद्ध 'ने'के लिए)। दोनोंको मिलाकर एकमें भी रखा जा सकता है। इसके लिए 'ने' शीर्षकके अंतर्गत ही संदर्भोंके साथ कुछ संकेत दिये जा सकते हैं। जैसे, जहाँ 'ने' अलग है, उसका संदर्भ सामान्य रूपमें दिया गया, किंतु जहाँ संबद्ध है, उनके साथ कोष्ठकमें 'स' या कुछ और लिख दिया जाय। जैसे ने--१.४.२, २.३.४ ('स') ३.२.६। संधित या सामासिक पदोंके संबंधमें भी यही नीति बरतनी चाहिये। यदि इनमें दूसरा सदस्य भी स्वतंत्रतः उस भाषामें प्रयुक्त होता हो तो उसे अलग भी देना चाहिये और उसके बँधे रूपका भी संकेत दे देना चाहिये। उदाहरणार्थ रामावतार, यथाशक्ति आये हों तो रामावतार और यथाशक्तिको अलग-अलग तो देना ही चाहिये, साथ ही अवतार और शक्तिको भी अपने अपने स्थान-पर दिखाना चाहिये। और इनके साथ इनके समास या संधिमें द्वितीय सदस्य होनेका भी संकेत किया जाना चाहिये।

ये बातें हिन्दीकी दृष्टिसे कही गयी हैं। इस प्रकारके नियम सभी भाषाओंके लिए अलग-अलग बनाये जा सकते हैं। इसके संबंधमें सामान्य सिद्धांत यह है कि जिस भाषाकी पुस्तक या साहित्यकी अनुक्रमणी बनानी हो, उसकी लघुतम इकाई [शब्द, रूप; अच्छा हो कि उपसर्ग, प्रत्यय, मध्यसर्ग (दे०) आदि भी दिये जायँ] दी जाय। स्वतंत्र शब्दों या रूपोंका अलग-अलग सामान्य रूपसे दिया जाय और जो केवल प्रारंभमें (जैसे उपसर्ग), केवल मध्यमें (मध्यसर्ग), या अंतमें (प्रत्यय, परसर्ग या संधि या समासके प्रथमेतर सदस्य) आये हों, उन्हें अलग दिया जाय, या उनके ही अलग आनेवाले रूपोंके साथ, किसी भेदक-चिह्न या संकेतके साथ दिया जाय। ऐसी अनुक्रमणियोंसे भाषावैज्ञानिक अध्ययनमें बहुत सहायता मिलेगी। यहाँतक कि यदि उस लेखक या पुस्तकके कारक चिह्नों, उप-सर्गों, मध्यसर्गों या प्रत्ययों आदिपर विचार करना हो, तो भी ऐसी अनुक्रमणीके आधार-पर सरलतासे विचार किया जा सकता है। सामान्य समासोंको तोड़कर अलग-अलग शब्दोंको अपने-अपने स्थानपर भी दिया जा सकता है। जैसे 'मुखचंद्र'के लिए बहुत आवश्यक नहीं है कि मुखचंद्रको भी अलग दिया जाय। यथास्थान 'मुख' और 'चंद्र' दे देना पर्याप्त है किंतु बहुव्रीहि समासके शब्दोंको (जैसे चक्रपाणि, दशानन आदि) तो संयुक्त रूपमें भी अवश्य ही दिया जाना चाहिये, क्योंकि संयुक्त रूपमें उनका अर्थ योगरूढ़ होनेके कारण कुछ और हो जाता है। मुहावरों और लोकोक्तियोंके संबंधमें दो बातें की जानी चाहिये। पहली तो यह कि इनमें आनेवाले रूपों या शब्दों या उप-सर्ग प्रत्यय, कारक-चिह्नों आदिको, जैसा कि ऊपर कहा गया है, अलग-अलग देना चाहिये। दूसरे पूरे मुहावरे या पूरी लोको-क्तिको भी अलग कोशमें यथास्थान देना चाहिये। इससे उस ग्रंथ या लेखककी भाषा-पर विचार करते समय, उसमें प्रयुक्त मुहा-वरों और लोकोक्तियोंका अध्ययन करनेमें सहायकता मिलेगी।

शब्दानुक्रमणीमें संदर्भ देनेमें बहुत सतर्कता बरती जानी चाहिये और पद्धतिका भूमिका-में स्पष्ट उल्लेख होना चाहिये। पद्य-ग्रंथोंमें

प्रबंधकाव्य हो तो सर्ग या अध्याय और छंदकी संख्या दी जा सकती है। मुक्तक हो तो छंदकी संख्या और पंक्ति दी जा सकती है। गद्य-ग्रंथोंमें अध्याय, पृष्ठ और पंक्ति या केवल पृष्ठ दिया जा सकता है। भूमिकामें संस्करणका उल्लेख अवश्य होना चाहिये, नहीं तो विभिन्न संस्करणोंमें गद्यमें और कभी-कभी पद्यमें भी पृष्ठ और पंक्तिमें अंतर होनेपर शब्दका ठीक पता नहीं चल सकता। यदि किसी लेखकके पूरे साहित्यकी अनुक्रमणी बन रही हो, तो उपर्युक्त बातोंके अतिरिक्त पुस्तकके नामका संक्षेप भी दिया जाना चाहिये।

शब्दानुशासन––(दे०) **व्याकरण**।

शब्दान्वय––(दे०) **शब्द-निरुक्ति**।

शब्दापक्रम(synchysis)––वाक्यमें शब्दोंका अव्यवस्थित क्रम।

शब्दाभ्यास––**पुनरुक्ति** (दे०)का एक अन्य नाम।

शब्दार्थ-तत्त्व––**अर्थ-विज्ञान** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

शब्दार्थ-विज्ञान––**अर्थ-विज्ञान** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

शब्दार्थोभय शक्तिमूलक संलक्ष्यक्रम ध्वनि––एक प्रकारकी **ध्वनि** (दे०)।

शम(sham)––भोटिआ (लद्दाखकी)का एक रूप। (दे०) **भोटिआ (लद्दाखकी)**।

शमबीओआ(shambioa)––**करज** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

शराचली (sarachali)––**सोराचोली** (दे०)का एक अन्य नाम।

शरी (shari)––**सूडानवर्ग** (दे०)की कुछ भाषाओंका एक वर्ग।

शरी-वाडी (shari-wadi)––**सूडानवर्ग** (दे०)की कुछ भाषाओंका एक वर्ग।

शर्पा भोटिआ(sharpa bhotia)––**भोटिआ** (दे०)की, पूर्वी नेपाल, सिक्कम तथा दार्जिलिंगमें प्रयुक्त, एक बोली। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५,१८० थी।

शल्गनो (shalgno)––**तिब्बती** (दे०)का एक अन्य नाम।

शवंटे (shavante)––**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इसका अन्य नाम **एओशवन्टे** (eoshavante) है। इसकी प्रमख भाषा इसी नामकी है।

शवांते-ओपे (shavante opaie)––**अकुआ** (दे०)की एक बोलीका नाम। इसके दूसरे नाम अराये, शिकिअबा, अक्रोआ इत्यादि हैं।

शस्टकोस्टा (shastakosta)––**पैसिफ़िक** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

शस्ता (shasta)––**होक** (दे०) भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

शहप्टिन (shahaptin)––**उत्तरी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा परिवार। इस वर्गमें लगभग ८ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख क्लीकिटट (klikitat), नेज़पेर्से (nezperce), वल्लावल्ला (wallawalla) तथा याकिम (yakima) आदि हैं। इस परिवारकी भाषाओंका मूलक्षेत्र कोलंबिया नदीकी ऊपरी घाटी था। अब इनके बोलनेवाले ओरेगन आदिमें हैं। इनकी संख्या लगभग साढ़े चार हज़ार है।

शांगले (shangale)––**शान** (दे०)का एक रूप। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४,७४,८७८ थी।

शांग्गे(shangge)––**चीनी परिवार** (दे०) तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके नागा वर्गकी, असम फ्रन्टियरमें प्रयुक्त एक पूर्वीय नागा भाषा।

शांग्यी(shangye)––**शान** (दे०)का एक रूप। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १८,०७४ थी।

शाकारी––**मागधीप्राकृत** (दे०)की एक बोली।

शान––**चीनी परिवार** (दे०)की चीनी स्यामी शाखा की, बर्माके बहुत बड़े भूभाग (शान स्टेट) तथा असमके कुछ भागोंमें प्रयुक्त

एक भाषा। इसकी बोलियोंमें **आहोम**, **खाम्ती** आदि प्रमुख हैं। **करेन** भी इसीका एक दक्षिणी रूप है। इसे करेन, आहोम खाम्ती आदिका सामूहिक रूप भी कहा जा सकता है। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ८ लाख, ४४ हज़ार थी।

शान-तयोक (shan-tayok)–बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, **शान** (दे०)का, निचले छिन्दविन, भामो तथा कथामें प्रयुक्त, एक रूप। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग २३,४७३ थी।

शान-तेओ (shan-teo)—**कचिन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक 'चीनी' नाम।

शान-बम (shan-bama)—**शान** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक बर्मी नाम।

शाबरी—**मागधी प्राकृत** (दे०)का एक जातीय रूप।

शाब्दिक—(दे०) **वैयाकरण**।

शाब्दी-व्यंजना—एक प्रकारकी व्यंजना (दे०) **शब्द-शक्ति**।

शाम (sham)—**ताई** (दे०)वर्ग के लिए प्रयुक्त एक नाम।

शाम तुरूंग (sham turung)—**तैरोंग** (दे०)का एक अन्य नाम।

शाम दोआन (sham doan)—**ऐटोन** (दे०)का एक नाम।

शारदा लिपि—काश्मीरकी अधिष्ठात्री देवी शारदा कही जाती हैं और इसी आधारपर कश्मीरको शारदा मंडल तथा वहाँकी लिपिको शारदा लिपि कहते हैं। **कुटिल लिपि** (दे०) से ही १०वीं सदीके आसपास इसका विकास हुआ और नागरीलिपिके क्षेत्रके उत्तरपश्चिम (कश्मीर, सिंध तथा पंजाब आदि) में इसका प्रचार रहा। आधुनिक कालकी शारदा, टाक्री, लंडा, गुरमुखी, डोगरी, चमेआली तथा कोची आदि लिपियाँ इसीसे निकली हैं।

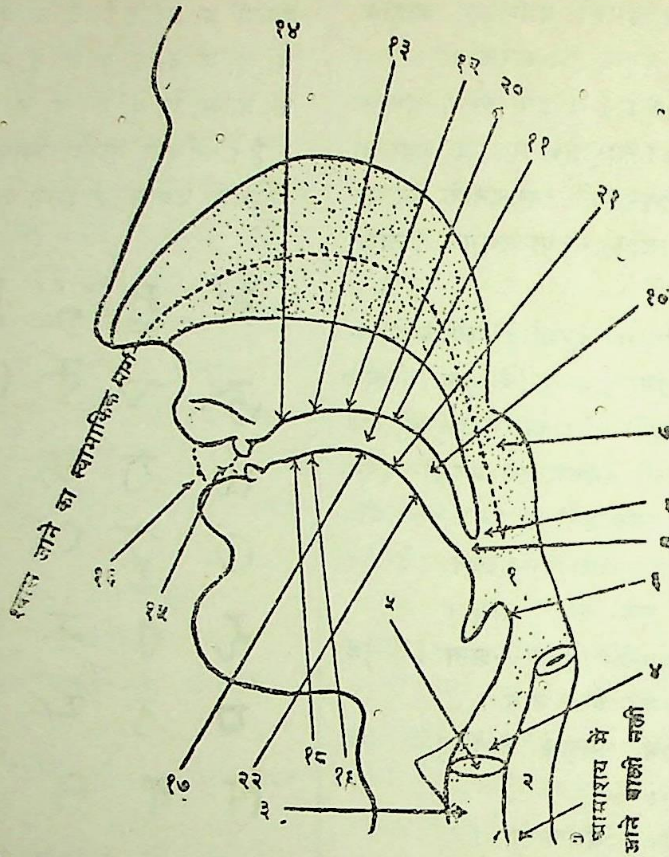
[शारदा लिपिका यह प्राचीन रूप १०वीं और ११वीं सदीके चंबा राज्य और सुंगलमें प्राप्त अभिलेखोंसे लिया गया है। अक्षर क्रमशः अ, आ, इ ई, उ, ऊ, ए, क, ख, ग, घ, च, छ, ज, ट, ठ, ड, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म, य, र, ल, व, श, ष, स, और ह हैं। वर्तमान शारदा लिपि जो कश्मीरके हिंदुओंमें प्रचलित है, इससे बहुत भिन्न है।]

शारा (shara)—**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी एक भाषा।

शारी—अफ्रीकी भाषाओंका एक वर्ग। यह **सूडान वर्ग** (दे०)के अंतर्गत आता है।

शारीर सिद्धांत (mechanistic theory)–एक सिद्धांत, जिसके अनुसार भाषाकी परिवर्तन-शीलता मानवशरीरसे संबद्ध कारणोंपर आधारित है।

शारीरिक ध्वनि-विज्ञान (physiological phonetics)–ध्वनि-विज्ञानके इस विभागमें उच्चारणमें सहायक अवयवों एवं उनके कार्योंका विवरण प्रस्तुत किया जाता है। साथ ही ध्वनि सुननेमें सहायक अंगोंपर भी इसमें प्रकाश डाला जा सकता है। शारीरिक ध्वनि-विज्ञान को **आंगिक या आवयविक ध्वनि-विज्ञान** (motor phonetics, genetic phonetics, articulatory phonetics) तथा उच्चारणात्मक ध्वनि-विज्ञान आदि अन्य नामोंसे भी अभिहित



किया जाता है।

ध्वनि-यंत्र—जिन अंगों या अवयवोंसे भाषा-ध्वनियोंका उच्चारण किया जाता है, उन्हें **ध्वनि-यंत्र, उच्चारण-अवयव** या **वाग्यंत्र** कहते हैं।

१. उपालि जिह्व (pharynx,) गलबिल, कंठ, कंठ मार्ग
२. भोजन-नालिका (gullet)
३. स्वर-यंत्र (कंठ-पिटक, ध्वनियंत्र, larynx)
४. स्वरयंत्र-मुख (काकल, glottis)
५. स्वर-तंत्री (ध्वनि-तंत्री, vocal chord)
६. स्वरयंत्र-मुख-आवरण (अभिकाकल, स्वर-यंत्रावरण, epiglottis)
७. नासिका-विवर (nazal cavity)
८. मुख-विवर (mouth cavity)
९. अलिजिह्व (कौवा, घंटी, शुंडिका, uvula)
१०. कंठ (guttur)
११. कोमल तालु (soft palate)
१२. मूर्द्धा (cerebral)
१३. कठोर तालु (hard palate)
१४. वर्त्स[१] (alveola)
१५. दाँत (teeth)
१६. ओष्ठ (lip)
१७. जिह्वा मध्य (middle of the tongue)
१८. जिह्वानीक (जिह्वानोक tip of the tongue)
१९. जिह्वाग्र (जिह्वाफलक, front of the tongue)
२०. जिह्वा (tongue)
२१. जिह्वा-पश्च (जिह्वापृष्ठ, पश्चजिह्व, back of the tongue)
२२. जिह्वामूल (root of the tongue)

चित्रमें जहाँ नं० ३ के तीरकी नोक है, वह श्वास-नालिका (wind pipe) है।

श्वास-नालिका, भोजन-नालिका और अभि-काकल—हम प्रतिक्षण नाकके रास्तेसे हवा

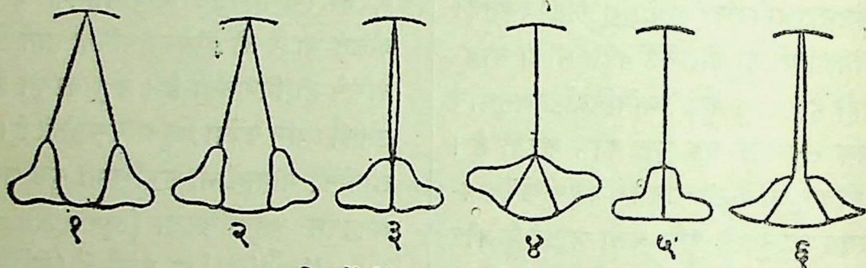
---

१ वैदिक साहित्यमें शुद्ध शब्द 'वर्स्व' है, जिससे 'वर्स्व्य' विशेषण बनता है अब अशुद्ध शब्द 'वर्त्स' तथा उसका विशेषण 'वत्सर्य' ही प्रचलित हो गये हैं ?

अपने फेफड़ेमें पहुँचाते रहते हैं। जैसा कि ऊपरके चित्रमें दिखलाया गया है। श्वास **श्वासनालिकामें** होती हुई फेफड़ोंमें पहुंचती है और उन्हें स्वच्छ कर वह फिर उसी पथसे बाहर निकल जाती है। श्वास-नालिकाके पीछे **भोजन-नालिका** है, जो नीचे आमाशय-तक जाती है। इन दोनों (श्वास तथा भोजन) नालिकाओंके बीचमें दोनोंको पृथक् करनेके लिए एक दीवार है। भोजन-नालिकाके विवरके साथ श्वास-नालिकाकी ओर झुकी हुई एक छोटी-सी जीभ है, जिसे **अभिकाकल** या **स्वरयंत्रमुखआवरण** (epiglottis) कहतेहैं। इस अंगका यों तो बोलनेसे बहुत सीधा सम्बन्ध नहीं है, किन्तु कुछ ध्वनिविदोंके अनुसार मौखिक संगीतमें यह कुछ काम करता है। साथ ही आ, ऑ के उच्चारणमें यह पीछे खिचकर स्वर-यंत्रमुखके पास चला जाता है और ई, ए के उच्चारणमें यह बहुत आगे खिच जाता है। भोजन या पानी जब मुँहके रास्ते भोजन-नालिकाके मुखके पास आता है, तो यह अभिकाकल नीचेकी ओर झुककर श्वास-नालिकाको बन्द कर देता है और भोजन या पानी आगे सरककर भोजन-नालिकामें चला जाता है। यदि श्वास-नालिका बंद न हो तो, जैसा कि चित्रसे स्पष्ट है, भोजन और पानी इसी नालिकामें चले जायँ और मनुष्यकी तुरन्त ही मृत्यु हो जाय। खाते समय कभी-कभी असावधानीके कारण जब अन्नके एक-आध टुकड़े श्वास-नालिकामें चले जाते हैं तो बुरी दशा हो जाती है और फेफड़ेकी हवा शीघ्र ही अपनी पूरी शक्ति लगाकर उसे लौटा देती है। पानी पीते समय भी यदि पानी 'सरक' जाता है तो इसी प्रकारकी सुरसुरी आ जाती है। हमारे यहाँ खाते समय बात करना संभवतः इसीलिए वर्जित है, क्योंकि बात करते समय श्वास-नालिकाको खुला रखना ही पड़ता है। भोजन या पानीका स्वाभाविक मार्ग मुँह द्वारा होता हुआ भोजन-नालिकामें है। इसी प्रकार श्वास या वायुका स्वाभाविक पथ नासिका-विवरमें होते हुए श्वास-नालिकामें है। सभी जानवर इस स्वाभाविक पथका ही अनुसरण करते हैं, पर मनुष्य मस्तिष्क-प्रधान होनेके कारण स्वाभाविकता या प्रकृतिके विरुद्ध जाता है। यहाँ भी उसने कुछ विशिष्ट अवसरोंके लिए भोजन-पानी और श्वासके स्वाभाविक मार्गका परित्याग कर दिया है। साधु लोग ठोस भोजन तो नहीं, पर दूध और पानी आदि द्रवपदार्थ कभी-कभी नाकसे पीते देखे जाते हैं, दूसरी ओर बोलते समय सभी लोग श्वास-नालिकाके साथ-साथ मुँहको भी वायुके आने-जानेका मार्ग बना देते हैं, जो कि नितान्त अस्वाभाविक है। पशु बोलते भी हैं तो वायुका अधिक भाग उनकी नाकसे ही निकलता है। यही कारण है कि उनकी ध्वनि सर्वदा अनुनासिक होती है। हम-लोगोंकी भाषामें भी कभी-कभी कुछ शब्दोंमें अकारण अनुनासिकता (spontaneous nazalization) आ जाती है (सर्पसे साँप या वक्रसे बाँका) जो शायद इसी बातको प्रदर्शित करती है कि नाकसे बोलना ही हमारे लिए भी अधिक प्राकृत या स्वाभाविक है।

स्वर-यंत्र, स्वर-यंत्र-मुख और स्वर-तंत्री—श्वास-नालिकाके ऊपरी भागमें अभिकाकलसे कुछ नीचे ध्वनि उत्पन्न करनेवाला प्रधान अवयव होता है, जिसे ध्वनि-यंत्र या स्वर-यंत्र कहते हैं। बाहर गलेमें (दुबले पुरुषोंमें) जो उभरी **घांटी** (**टेंटुआ** या adam's apple) दिखाई पड़ती है, वह यही है। यहाँ श्वास-नालिका कुछ मोटी होती है। **स्वर-यंत्रमें** पतली झिल्लीके बने दो लचीले परदे या कपाट होते हैं, जिन्हें **स्वर-तंत्री** या **स्वर-रज्जु** कहते हैं। वस्तुतः इनका यह नाम (vocal chord) उचित नहीं है। ये ओष्ठ जैसे होते हैं, अतः इन्हें **स्वर-ओष्ठ** कहना अधिक सही है। इन परदों, स्वर-तंत्रियों या स्वर-ओष्ठोंके बीचके खुले भागको **स्वर-यंत्रमुख** या **काकल** (glottis) कहते हैं। साँस लेते समय या बोलते समय हवा इसी मुखसे होकर बाहर-भीतर जाती है। इन स्वर-तंत्रियोंका मूल या प्राकृतिक काम है बोझ उठाते समय

या उसी प्रकारके अन्य कामोंके समय हवाको रोककर हमारी शक्ति और हिम्मतको अपेक्षाकृत बढ़ा देना। किन्तु अब बोलनेमें—जो निश्चय ही कृत्रिम या बादमें विकसित है—हम इन स्वर-तंत्रियोंके सहारे कई प्रकारकी ध्वनियाँ उत्पन्न करते हैं। ऐसा करनेके लिए स्वर-तंत्रियोंको कभी तो एक दूसरेके समीप लाना पड़ता है और कभी दूर रखना पड़ता है। जो लोग रुक-रुककर बोलते या हकलाते हैं, वे किसी शारीरिक या मानसिक कमीके कारण इनस्वर-तंत्रियोंको आवश्यकतानुसार उचित मात्रामें खोलने या बंद करनेमें असमर्थ होते हैं। स्वरतंत्रियाँ जब ढीली रहती हैं तो सामान्यतः पुरुषोंमें उनकी लम्बाई ३।४" और स्त्रियोंमें १।२" होती है। तनकर कड़ा होनेपर ये क्रमशः १" और ३।४" हो जाती हैं। स्वरतन्त्रियोंके इस प्रकार समीप आने या दूर हटनेसे (साथ ही तनने आदिसे) कई प्रकारकी स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं। बहुत सूक्ष्मतासे देखा जाय तो इन स्थितियोंकी संख्या लगभग एक दर्जन है, जिनमें अधिक महत्त्वपूर्ण निम्मांकित ही हैं:—



स्वरतन्त्रियोंकी कुछ प्रमुख स्थितियाँ

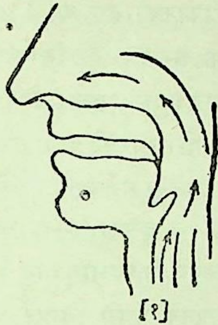
(१) स्वरतन्त्रियाँ एक दूसरीसे सबसे अधिक दूर 'श्वास लेने' या **प्रश्वास** (inhalation)की स्थितिमें होती हैं। इस स्थितिमें काकल या स्वरयंत्रमुख एक पंचमुखीकी एक पंचभुज स्थितिमें और बहुत अधिक चौड़ा होता है। (२) दूसरी स्थिति है **निःश्वास** या साँस निकालने (exhalation) की। साँस निकालते समय स्वरतंत्रियाँ श्वास लेते समयकी तुलनामें एक दूसरेके निकट होती हैं और इस प्रकार स्वरयंत्रमुख कुछ कम चौड़ा हो जाता है। इस स्थितिमें स्वरयंत्रमुख लगभग त्रिभुजाकार होता है। ऐसी स्थितिमें जो प्रच्छ्वास निकलता है, स्वरतंत्रियोंसे घर्षण नहीं करता। 'अघोष' ध्वनियोंका उच्चारण इसी स्थितिमें होता है। **अघोष** (voiceless, devoicedयाbreathed) उन ध्वनियोंको कहते हैं जिनके उच्चारणमें स्वरतंत्रियोंमें (उनके एक दूसरेसे दूर रहनेके कारण) निश्वास घर्षण नहीं करती और इसीलिए उनमें कम्पन नहीं होता। सांस निकलनेकी स्थितिमें उत्पन्न होनेके कारण ही इस प्रकारकी ध्वनियोंको संस्कृतमें **श्वास** भी कहा गया है। (३) तीसरी स्थितिमें स्वरतंत्रियाँ एक दूसरीके और भी निकट आ जाती हैं। अब वे इतनी निकट होती हैं कि इनके बीचसे जानेवाली हवाको रगड़ खाकर निकलना पड़ता है। रगड़के कारण ही स्वरतन्त्रिमें कम्पन होता है। घोष ध्वनियोंका उच्चारण इसी स्थितिमें होता है। **घोष** या **नाद** (voiced या voice) उन ध्वनियोंको कहते हैं, जिनके उच्चारणमें स्वरतंत्रियोंमें उनके एक दूसरेसे निकट होनेके कारण उनके बीचसे आती हवाके घर्षणसे कम्पन होता है। कानोंको दोनों हाथोंसे बन्द करके, या गलेपर (स्वरयंत्रपर) हाथ रखकर या सिरसे ऊपर हाथ रखकर इस कम्पनका अनुभव क्रमसे अघोष-घोष (क ग) और घोष-अघोष (ग क) ध्वनियोंका बार-बार उच्चारण करके किया जा सकता है। इस स्थितिमें स्वरयंत्रमुख बहुत संकीर्ण हो जाता है और नीचे-ऊपरके किनारोंके बन्द होनेके कारण लम्बाईमें भी वह छोटा हो जाता है। इस स्थितिमें भी

कभी तो स्वरतन्त्रियाँ कम कड़ी रखी जाती हैं और कभी अधिक। इसी प्रकार कभी उनके बीचसे हवा कम तेज़ निकलती है और कभी अधिक। इन दोनों बातोंपर तन्त्रियोंका कम्पन निर्भर करता है। और इस कम्पनके स्वरूप औरतेजीपर ध्वनिका **आयतन** (volume) और उसकी गंभीरता या **तीव्रता** (intensity) तथा **सुर** (pitch) निर्भर करता है। सामान्य बोलचालमें पुरुषोंमें स्वरतंत्रियोंके कम्पनकी गति १०९से १६३ **चक्र** (cycle) प्रति सेकेंड तथा स्त्रियोंमें २१८-से ३२६ चक्र प्रति सेकेंड होती है। यों यह कम-से-कम ४२ चक्र प्रति सेकेंड तथा अधिक-से-अधिक २०४८ चक्र प्रति सेकेंड हो सकता है। संगीतज्ञ, अभिनेता और अच्छे वक्तामें भावावेश आदिके अनुसार यह कम्पन सामान्यसे बहुत अधिक देखा जाता है। १९ मई १९४३ई० को चर्चिलका वाशिंगटनमें भाषण हुआ था। उनके रेकार्डका विश्लेषण करनेपर पता चला कि भाषणके अधिकांश अंशोंमें उनकी तन्त्रियोंकी गति ११५से २३०के बीचमें थी। (४) चौथी स्थितिमें स्वरतन्त्रियाँ अपने लगभग तीन-चौथाई भागमें तो एक-दूसरीसे मिलकर हवाका मार्ग पूर्णतः बन्द कर देती हैं। कोनेका केवल एक चौथाई भाग ही स्वरयंत्र मुखके रूपमें खुला रहता है। इसी स्थितिमें फुसफुसाहटवाली ध्वनियोंका उच्चारण होता है। इन ध्वनियोंको **जपित, जाप, फुसफुस** या **उपांशु** (whispered) भी कहते हैं। जब दो मित्र आपसमें धीरे-धीरे बात करते हैं, तो इसी प्रकारकी ध्वनियोंका प्रयोग करते हैं। स्वरतंत्रमुखके बहुत छोटा हो जानेके कारण ध्वनि धीमी हो जाती है। फुसफुसाहटकी सभी ध्वनियाँ अघोष होती हैं। इनके उच्चारणमें स्वर-तंत्रियोंमें कम्पन नहीं होता। वस्तुतः जपित ध्वनिके उत्पन्न होनेकी यह एक स्थिति है। इसके अतिरिक्त निम्नांकित अन्य स्थितियाँ भी होती हैं। (क) कभी-कभी इनके उच्चारणमें स्वरतन्त्रियाँ ठीक उस स्थितिमें होती हैं, जिस स्थितिमें वे घोष ध्वनियोंको उत्पन्न करती हैं। पर साथ ही गलेकी मांस-पेशियोंको बहुत कड़ा रखकर स्वरतन्त्रियोंमें इतना तनाव ला दिया जाता है कि हवाके घर्षणसे वे कम्पित नहीं होतीं और इस प्रकार उनसे जो ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं, जपित होती हैं। (ख) स्वरतन्त्रियोंके ऊपर उन्हीं जैसी दूसरी स्वर-तन्त्रियां भी होती हैं, जिन्हें **मिथ्या** या **कृत्रिम स्वरतंत्रियाँ** (false vocal chords) कहते हैं। ये असली स्वरतंत्रियोंसे कुछ छोटी होती हैं। कभी-कभी ऐसा होता है कि असली स्वरतन्त्रियाँ तो दूर-दूर रहती हैं, किन्तु ऊपरकी तन्त्रियाँ निकट आकर हवाके रास्तेको बहुत छोटा कर देती हैं और इस स्थितिमें भी 'जपित' ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं। (ग) कभी-कभी स्वरतंत्रियाँ सामान्य स्थितिमें हों, लेकिन उनके बीचसे आनेवाली हवा बहुत थोड़ी और बहुत धीमी (बीमारीके कारण या सप्रयास) हो, तब भी फुसफुसाहट ध्वनियाँ उत्पन्न हो सकती हैं। (घ) एक चौथी स्थिति वह भी मानी जाती है, जब स्वरतन्त्रियाँ न तो अघोषकी स्थितिमें बहुत खुली होती हैं और न घोषकी स्थितिमें काकलको इतना सँकरा बना देती है कि हवा रगड़से निकले। यह स्थिति घोष-अघोषके बीचकी है तथा असामान्य है। (ङ) बियेल आदि कुछ ध्वनिशास्त्रियोंने एक ऐसी स्थिति भी मानी है, जब दोनों ही स्वरतंत्रियां (मिथ्या और यथार्थ) अधिकांशतः बन्द होकर हवाको रोकती हैं और केवल दोनोंका एक-एक अंश ही खुला रहता है। जब बहुत फटी-फटी आवाज़ सुनाई पड़ती है, तब भी यही स्थिति रहती है। ध्वनिविदोंके अनुसार यह स्थिति देरतक नहीं रखी जा सकती। (५) एक अन्य स्थितिमें स्वरतन्त्रियाँ एक कोनेसे दूसरे कोनेतक पूर्णतः सटी रहती हैं और हवाका रास्ता पूर्णतः बन्द हो जाता है। इसी स्थितिमें रहकर झटकेके साथ स्वरतन्त्रियाँ अलग हो जाती हैं तो **काकल्य स्पर्श** (glottal stop, glottal

catch, अन्य नाम **अलिफ़ हम्ज़ा** आदि हैं) नामकी ध्वनि उच्चरित होती है, जिसके लिए ɂ चिह्नका प्रयोग किया जाता है। भारतीय भाषाओंमें यह मुंडारीमें मिलती है। कुछ अफ्रीकी, हिब्रू, डच, जर्मनमें यह ध्वनि सामान्य है। यह हल्की खांसीसे मिलती-जुलती है। अंग्रेजीमें कभी-कभी ज़ोर देकर बोलनेमें is इज़के उच्चारणमें 'इ'के पहले यह ध्वनि सुनाई पड़ती है (the key is not in the door) वाक्यमें 'इज़'की 'इ'के पूर्वके प्रभावके कारण 'ɂ' उच्चरित होती है। (६) छठे प्रकारकी स्थितिमें स्वरतंत्रियोंका लगभग तीन-चौथाई भाग तो लगभग घोषकी स्थितिमें होता है और शेष एक-चौथाई काफ़ी खुला घोष ह (जिसमें घोषत्वके साथ महाप्राणता भी होती है) इसी स्थितिमें उच्चरित होता है। (७) सातवें प्रकारकी स्थिति घोषवाली स्थिति ही है, किन्तु यह अलग इसलिए है कि स्वरतंत्रियाँ घोषकी तुलनामें इसमें तनी होती हैं, जिसके कारण कम्पन अधिक नहीं होता, किन्तु वे जपित जैसी स्थितिमें, अर्थात् पूर्णत: तनी नहीं होतीं। इस रूपमें इसे घोष और जपितके बीचकी स्थिति मान सकते हैं। **मर्मर** (murmer) ध्वनियोंका उच्चारण इसी स्थितिमें होता है। इसमें कम्पन बहुत थोड़ा होता है। साथ ही रगड़ जैसी एक आवाज़ भी होती है। इस प्रकार स्वर यंत्र, स्वर-तंत्रियों और मिथ्या स्वर तंत्रियोंके सहारे ध्वनियोंके उच्चारणमें पर्याप्त काम करता है। वस्तुतः यही वह पहला ध्वनि-अवयव है, जहाँ प्रच्छ्वासके सहारे ध्वनि उत्पन्न करना आरम्भ होता है। साथ ही किसी भी भाषाकी कोई भी ध्वनि ऐसी नहीं है, जिसके निर्माणमें इस अंगका हाथ न हो। स्वरयंत्र, स्वरतंत्रियोंके सहारे नहीं, अपितु अपने पूरे शरीरके साथ, अर्थात् पूरा स्वरयंत्र भी ध्वनियोंके निर्माणमें सहायता देता है। अफ्रीकाकी कई भाषाओंमें पायी जानेवाली **अंतर्मुखी या अंतःस्फोट** (implosive) ध्वनियाँ इसी प्रकारकी हैं। इनके निर्माणमें पूरा ध्वनियंत्र कुछ नीचेको खींच दिया जाता है।

मुख-विवर नासिका-विवर और कौवा--स्वरयंत्रके ऊपर उसका ढक्कन (अभिकाकल) होता है, जिसके सम्बन्धमें हम ऊपर विचार कर चुके हैं। उसके ऊपर वह स्थान आता है, जिसे हम चौराहा (crossing) कह सकते हैं। यह एक खाली स्थान है, जहाँसे चार मार्ग (१. श्वासनालिका, २. भोजन-नालिका, ३. मुख-विवर, और ४. नासिका-विवर) चारों ओर जाते हैं। जिस प्रकार इस चौराहेके नीचे अभिकाकल है, उसी प्रकार ऊपर जीभके स्वरूपका माँसका छोटा-सा भाग उस स्थानपर होता है जहाँसे नासिका-विवर और मुख-विवरके रास्ते फूटते हैं। इस छोटी जीभको कौवा या अलिजिह्व कहते हैं। इसका भी कार्य कोमलतालुके साथ अभिकाकलकी भाँति कभी-कभी मार्ग अवरुद्ध करना है। कौवाको कोमलतालुके साथ विभिन्न दशाओंमें हम तीन अवस्थाओंमें पाते हैं :-(१) पहली तो इसकी स्वाभाविक और साधारण अवस्था है, जिसमें यह ढीला होकर नीचेकी ओर गिरा रहता है। इसके गिरे रहनेसे मुख-विवर और श्वास-नालिकाका सम्बन्ध-विच्छेद हो जाता है और श्वास अबाध गतिसे नासिका-विवरसे होकर आता-जाता है। स्वाभाविक रूपसे श्वास लेनेकी अवस्था यही होती है। किसीकी बात सुनकर जब हम मुँहको विना खोले हुए 'हूँ' या 'हँ' ध्वनि कहते हैं तो वह इसी दशामें उच्चरित होती है। संस्कृतके शुद्ध अनुस्वारका उच्चारण भी इसी प्रकार होता था। (२) दूसरी अवस्थामें कौवा सामनेकी ओर खड़ा हो जाता है और नासिका-विवरमें श्वास-नालिकासे आयी हवाको तनिक भी नहीं जाने देता, अतः वायु मुखविवरसे आता-जाता है। अनुनासिकेतर स्वर या व्यंजनोंका उच्चारण इसी दशामें होता है। (३) तीसरी और अंतिम अवस्था उस समयकी है, जब कौवा न तो ऊपर तनकर नासिका-विवरको रोकता

है और न नीचे गिरकर मुखविवरको। वह मध्यमें रहता है, अतः श्वास, नासिका और मुख दोनों हीसे होकर निकलता है। अनुनासिक स्वरों तथा व्यंजनोंका उच्चारण इसी अवस्थामें होता है।



[१]



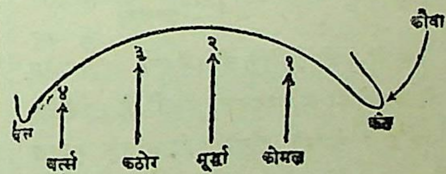
[२]



[३]

उपर्युक्त तीन स्थितियोंमें दूसरी और तीसरीमें कौवा भाषा-ध्वनियोंके उच्चारणमें बहुत सहायक होता है, क्योंकि अधिकांश ध्वनियाँ इन्हीं दो प्रकारोंकी होती हैं। किन्तु यह तो कौवेका सामान्य कार्य है, जिसकी आवश्यकता अधिकांश भाषाओंमें होती है। कुछ भाषाओंमें यह विशेष प्रकारकी ध्वनियोंके उच्चारणमें प्रत्यक्षतः भी सहायक होती है। इस प्रकारकी ध्वनियाँ **अलिजिह्वीय** (uvular) कहलाती हैं। इनके उच्चारणमें कौवा या तो जिह्वापश्च (या जिह्वामूल) से स्पर्श करके (हिन्दी-उर्दू 'क़', या उसीका घोष रूप जो फ़ारसीमें है) स्पर्श-ध्वनि उत्पन्न करता है या एस्किमो भाषाका अनुनासिक स्पर्श (ङ) उत्पन्न करता है, या उसके समीप होकर संघर्षी ध्वनि (हिन्दी, अरबी ख़, ग़,) उत्पन्न करता है या फिर उत्क्षेप या लुंठन करके फ्रांसीसी 'र' ध्वनि (जो 'ग़' जैसी सुनाई पड़ती है) उत्पन्न करता है।

तालु, जिह्वा, दंत्य और ओष्ठ—कौवेके एक ओर नासिका विवर है और दूसरी ओर मुखविवर। नासिका-विवरमें और कोई भी ऐसा अंग नहीं है, जिससे ध्वनि उत्पन्न करनेमें कुछ सहायता मिले, अतः उसे छोड़कर मुखविवरपर विचार किया जा सकता है। मुखविवरमें ऊपरकी ओर तालु है, जिसके कंठस्थान और दांतोंके बीचमें क्रमसे ४ भाग हो सकते हैं:-(१) कोमल तालु, (२) मूर्द्धा, (३) कठोर तालु तथा (४) वर्त्स। जिह्वाके विभिन्न भागोंका इनसे स्पर्श कराकर विभिन्न ध्वनियाँ उच्चरित की जाती हैं।



मुख-विवरके निचले भागमें जिह्वा है। जिह्वा उच्चारण-अवयवोंमें सबसे प्रमुख है, इसी कारण इसके पर्याय ज़बान (अरबी) या lingua (लैटिन) आदि भाषाके पर्याय बन गये हैं। प्रायः सभी भाषाओंकी अधिकांश ध्वनियाँ जीभकी सहायतासे ही बोली जाती हैं। साधारण अवस्थामें जीभ ढीली नीचे पड़ी है। बोलनेमें वायु-अवरोध या विशेष आकृतिका गूंज-विवर बनानेके लिए हम इसका प्रयोग करते हैं। जिह्वाको पाँच भागोंमें बाँटा जा सकता है—

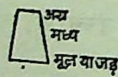
१–मूल ५ ४ ३ २ १ ३–मध्य
२–पश्च ४–अग्र
५–नोक



कभी-कभी इनके 'जिह्वोपाग्र' (जिह्वा मध्यसे कुछ आगे) आदि अन्य अवांतर भेद भी किये जाते हैं। ध्वनि-उच्चारणमें इन सभी भागोंका अलग-अलग महत्व है। साथ ही अभिकाकल और कौवेकी भाँति जिह्वाकी विभिन्न अवस्थाएँ भी होती हैं। इन सबका सविस्तार वर्णन ध्वनियोंके प्रसंगमें मिलेगा। जीभ दाँत तथा तालुके विभिन्न भागोंको छूकर या उनके समीप आकर या उत्क्षेप लोड़न आदि करके ध्वनियोंका निर्माण करती है।

मुख-विवरमें तालु तथा जिह्वाके बाद तीसरे प्रधान अंग दाँत हैं, जो भोजन करनेके अतरिक्त बोलनेमें भी हमारी सहायता करते हैं। इनके भी (१) मूल और (२) अग्र ये दो भाग किये जा सकते हैं।

अग्र
मूल



कभी-कभी दोनोंके बीचमें एक मध्य भाग भी माननेकी आवश्यकता पड़ती है। ध्वनि-निर्माणमें ऊपरके दाँतोंका ही अधिक महत्व है। ये नीचेके ओष्ठ या जीभसे मिलकर या उसके समीप होकर ध्वनि-निर्माण करते हैं।

ध्वनिसे सम्बन्ध रखनेवाले अंतिम अंग ओठ हैं। ये आपसमें मिल या पास आकर या दाँतकी सहायतासे ध्वनियाँ उत्पन्न करते हैं।

ध्वनि-उत्पत्ति—ध्वनि-अवयवोंके प्रसंगमें ही यह बात भी विचारणीय है कि हम ध्वनियाँ कैसे उत्पन्न करते हैं।

हारमोनियम या बिगुल आदि वाद्ययंत्रोंकी भाँति हमलोग भी वायुकी सहायतासे बोलते हैं। यह वायु दो प्रकारका है। एक तो वह है, जो हम नाक या मुंहके मार्गसे भीतर खींचते हैं। यह बाहरकी साफ़ हवा होती है। इस शुद्ध हवासे दुःख है कि हम लोग अधिक ध्वनियाँ उच्चरित नहीं कर पाते। कुछ भाषाओंकी आश्चर्य आदिकी ध्वनियों तथा अफ्रीका, अमेरिका आदिकी कुछ क्लिक आदि ध्वनियोंके उच्चारणमें ही यह हवा हमारा काम दे पाती है। दूसरे प्रकारकी हवा वह है, जो फेफड़ेकी गन्दगी साफ करके बाहर निकलती है। सच पूछा जाय तो यह दूसरी हवा (जो पहलीका गंदा रूप मात्र है) ही संसारकी प्रायः सभी भाषाओंके बोलनेमें हमारी सहायता करती है। पहली हवा ('श्वास') है, दूसरी 'प्रच्छ्वास'। फेफड़ेकी सफाई करने के पश्चात् वायु श्वास रूपसे श्वास नालिकाके पथसे बाहर चलता है। स्वर-यंत्रके पूर्व इसमें किसी भी प्रकारका विकार नहीं होता। सर्वप्रथम हम स्वरतंत्रियोंकी सहायतासे इसे मनमाना रूप देते हैं। उससे आगे चलकर आवश्यकतानुसार नासिका-विवर, मुख-विवर या दोनोंसे थोड़ा-थोड़ा निकालते हैं। ऐसा करनेमें कौवा भी हमारी सहायता करता है। वहाँसे मुख-विवरमें जानेवाला हवाको हम आवश्यकतानुसार जिह्वा, कंठ, तालु, दाँत और ओष्ठके सहारे इच्छित रूप देकर बाहर निकालते हैं, जो बाहर आकर ध्वनिकी संज्ञा पाती है। साथ ही आवश्यक होनेपर इससे एक अंशको नासिका-विवर (अनुनासिक-ध्वनियोंको उच्चरित करनेमें) से निकालते हैं।

शास्त्रावर्तलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'—में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

शिंगप्रव (shingpraw)—**चिंगपव** (दे०)—का एक नाम।

शिंगसोल (shingsol)—**थादो** (दे०) का एक रूप।

शिंपी (shimpi)—'**मराठी**' (दे०) के लिए, हैदराबादमें प्रयुक्त, एक नाम।

शिओपुरी (shiopuri)—**सिपाड़ी** (दे०) का एक अन्य नाम।

शिकारी (shikari)—१८९१की मध्यप्रदेशकी जनगणनाके अनुसार एक **बंजारा** (दे०) भाषा। इसका अब पता नहीं है।

शिक्रिअबा (shikriaba)––**शवान्तेओप** (दे०)का एक अन्य नाम। यह भाषा अब विलुप्त हो चुकी है।

शिक्षा-शास्त्र––**ध्वनि-विज्ञान** (दे०)के लिए संस्कृतमें प्रयुक्त एक नाम।

शिखर––**शीर्ष** (दे०)का एक अन्य नाम।

शिग़नी––ईरानीकी एक **ग़लचा** (दे०) भाषा।

शिथिल ध्वनि––**अशक्त ध्वनि** (दे०)का एक अन्य नाम।

शिणा (shina)––गिलगित तथा उसके आसपासप्रयुक्त, एक **दरद**(दे०)भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २८,४८२ थी।

शिन-कता काना लिपि (shin-kata kana)––**जापानी लिपि** (दे०) का एक रूप।

शिपिनउअ (shipinaua)––**पनो** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

शिमला सिराजी––**क्यूँठली** (दे०) बोलीकी शिमलाकी पहाड़ियोंपर प्रयुक्त एक उपबोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार २८०० थी।

शिमाली उर्दू––**दक्खिनी** (दे०)की तुलनामें उत्तर भारतकी उर्दूको दक्षिण भारतमें दिया गया नाम।

शिरिअना (shiriana)––**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक अमेरिकी भाषा-परिवार। इस परिवारमें **शिरिशना** तथा **वैका** भाषाएँ हैं।

शिरिशना (shirishana)–**शिरिअना** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसे **शिरिअना** भी कहते हैं।

शिलालेख शास्त्र––**पुरालेख शास्त्र** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

शिलालेखी प्राकृत––एक प्राकृत, जिसका प्रयोग शिलालेखोंमें मिलता है (दे०) **मध्ययुगीन भारतीय आर्य भाषामें** **शिलालेखी प्राकृत** उपशीर्षक।

शिलुक (shiluk)––**सूडानवर्ग** (दे०)की शिलुक नामक अफ्रीकी जातिमें प्रयुक्त एक भाषा। इस भाषाका क्षेत्र, नील नदीके पास डिन्का तथा उसके आसपास है।

शिल्ह––**श्लुह** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

शिवपुरी––'सिपाड़ी' (दे०) का एक नाम। शिवपुरके आसपास इसका क्षेत्र होनेसे यह नाम पड़ा है। शिवपुरीको **शिओपुरी** भी कहते हैं।

शिवसूत्र––पाणिनिके अष्टाध्यायीके प्रारंभमें. **अइउण** (१) **ऋ लृक्** (२) **ए ओ ङ्** (३) **ऐऔच्** (४) हयवरट् (५) लण् (६) ञमङणनम् (७) झभञ् (८) घढधष् (९) जबगडदश् (१०) खफछठथ चटतव् (११) कपय् (१२) शषसर् (१३) हल् (१४) ये १४ सूत्र आते हैं। कहा जाता है कि इनकी उत्पत्ति शिवके डमरूसे (नृत्तावसाने नटराजराजो ननाद ढक्काँ नवपंचवारम्। उद्धर्तुकामः सनकादिसिद्धानेतद् विमर्षे शिवसूत्रजालम्) हुई थी, इसी लिए इन्हें शिव या **माहेश्वरसूत्र** कहते हैं। पाणिनिका व्याकरण इन्हीं सूत्रोंपर आधारित है। इनमें सूत्रांतमें जो हल् व्यंजन (ण्, क्, ङ् आदि) हैं उनकी इत् (दे०)संज्ञा है, अर्थात् उनको नहीं लिया जाता। इन सूत्रोंमें शेष जितने वर्ण बचते हैं वे संस्कृतकी ध्वनियाँ हैं। आरंभमें४ सूत्रोंतक स्वर हैं––अ, इ, उ, ऋ, लृ, ए, ओ, ऐ, औ। इन चारों सूत्रोंको मिलाकर प्रथम वर्ण 'अ' और चौथेके अंतिम वर्ण 'च्' के आधारपर इनका सामूहिक नाम 'अच्' है। पाणिनीय व्याकरणमें इसी कारण 'अच्' का अर्थ स्वर है। शेष सूत्रोंमें सारे व्यंजन आये हैं। इनमें प्रथम वर्ण है 'ह' और अंतिम 'ल्' इसी आधारपर इन सारे व्यंजनोंको या व्यंजन मात्रको पाणिनीय व्याकरणमें 'हल्' कहते हैं। संस्कृत व्याकरणमें एक पारिभाषिक शब्द आता है **प्रत्याहार**। प्रत्याहारका अर्थ है 'एक जगह लाना' या संक्षेपमें कथन (बाल मनोरमा-टीकाकार––प्रत्याह्रियन्ते संक्षिप्यन्ते वर्ण इतिति प्रत्याहारः) पाणिनिने उपर्युक्त सूत्रोंके आधारपर संक्षेपमें कहनेके लिए अक्, शर् आदि प्रत्याहार बनाये हैं। उदाहरणके लिए उन्हें यदि 'अ इ उ ऋ लृ' कहीं कहना

हुआ तो इन सबको न कहकर प्रथम दो सूत्रों-को मिलाकर आरंभके 'अ' और अंतके 'क्' को लेकर वे 'अक्' कहते हैं। 'अक्' एक प्रत्याहार है। 'अक्'में 'अ' से लेकर 'क्' तककी ध्वनियां आयेंगी। इनमें 'ण्' और 'क्' इत् हैं, अर्थात् उनको नहीं लिया जायगा, अतः अक्में केवल अ, इ, उ, ऋ, लृ, आये। इस तरह शिव सूत्रमें कहींसे भी आदि और अंतके अक्षरको लेकर प्रत्याहार बनाये जा सकते हैं—आदिरन्त्येन सहेता (पाणिनि १.१.७१) प्रत्याहारमें बीचके वर्ण (इत् या हलन्तवाले छोड़कर) ही लिये जाते हैं। कहा गया है—'प्रत्याहारोनाम मध्यपतितानां ग्रहणाय आद्यन्तयोर्मेलनम्' (लघुपाणिनीयम्)। शिवसूत्रके आधारपर कुल ४४ प्रत्याहार बनते हैं। जैसे झश्, अण्, जश् आदि पाणिनिके बहुतसे पारिभाषिक शब्द भी मूलतः प्रत्याहार ही हैं। जैसे ऊपर कहे गये अच् (स्वर) तथा हल् (व्यंजन)। कभी-कभी इन सूत्रोंके अतिरिक्त अन्य आधारोंपर भी प्रत्याहार बनाये गये हैं। जैसे कारकीय प्रत्ययों या विभक्तियोंमें प्रथम और अंतिम वर्णको लेकर उन्हें 'सुप्' कहते हैं। यह 'सुप्' भी प्रत्याहार ही है, इसी आधारपर कारक रूपोंको 'सुबन्त' कहते हैं। इसी प्रकार क्रियापदके प्रत्ययके लिए 'तिङ्' प्रत्याहारका प्रयोग होता है, जिसके आधारपर क्रियाके संयोगी रूपोंको 'तिङन्त' कहते हैं। उपर्युक्त बातोंके आधारपर कहा जा सकता है कि संस्कृत व्याकरणमें संक्षेपके लिए सूत्र या प्रत्यय आदिमें किसी भी समूह या इकाईको द्योतित करनेके लिए उसके आदि और अंतकी इकाईके योगके अधारपर उसे जो नाम दिया जाता है, उसे प्रत्याहार कहते हैं। प्रयोग पाणिनिके 'प्रत्यहार' शब्दका तो नहीं किन्तु इस पद्धतिका पूर्वसे चला आ रहा है। कुछ लोगोंके अनुसार ऐन्द्र व्याकरणमें इस पद्धतिका संक्षेपमें कथन-के लिए सर्वप्रथम प्रयोग हुआ। 'प्रत्याहार' शब्दका प्रयोग 'पाणिनिमें नहीं मिलता। इस प्रकारके संक्षेपके लिए यह शब्द पारिभाषिक रूपमें पाणिनिके बाद प्रचलित हुआ। इसका प्रथम प्रयोग कदाचित् सामवेदीय प्रातिशाख्य ऋक्तंत्र (प्रत्याहारार्थो वर्णानुबन्धो व्यंजनम्) में हुआ है। शिवसूत्रोंके आधारपर प्रत्याहार बनते हैं, इसी लिए इन्हें **प्रत्याहारसूत्र** भी कहते हैं।

शिवोरा (shiwora)—**किसबरो** (दे०) भाषा तथाभाषा-परिवारका एक अन्य नाम।

शिष्ट भाषा—ऐसी भाषा जिसका प्रयोग शिष्ट समाजमें होता हो।

शिष्टाचारी रूप—**औपचारिक रूप** (दे०)का एक अन्य नाम।

शीक-शिंशुम (shik-shinshum)—**थाडो** (दे०)का एक रूप।

शी-जांग (shi-zang)—**सियिन** (दे०)का एक अन्य नाम।

शीत्कारी—दे० **ऊष्म**।

शीना—**शीणा** (दे०)का एक नाम।

शीरानी (shirani) — दक्षिणी-पश्चिमी **पश्तो** (दे०)का विलोचिस्तानमें प्रयुक्त रूप।

शीर्ष (nucleus, kernel crest या peak)—**अक्षर** (दे०)की आक्षरिक ध्वनिको **शीर्ष** कहते हैं। इसे **चोटी, केन्द्र** तथा **शिखर** भी कहते हैं।

शीर्ष उच्चारण (coronal articulation)—जिह्वाफलक (blade)से, तालु या दंत आदि मुख-विवरके ऊपरी अंगोंका स्पर्श कराकर किया गया उच्चारण।

शुंडिका—**अलिजिह्व** (दे०)का एक अन्य नाम।

शुआरा (shuara)—**किसबरो** (दे०) भाषा तथा भाषा-परिवारका एक अन्य नाम।

शुद्ध काल—दे० **काल**।

शुद्ध क्रिया विशेषण—दे० **क्रिया विशेषण**।

शुद्ध भाषा—ऐसी भाषा जो व्याकरणिक दृष्टिसे शुद्ध हो।

शुद्धा लक्षणा—एक प्रकारकी लक्षणा। दे० **शब्द-शक्ति**।

शुन्क्ल (shunkla)—**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमी-बर्मी शाखाके, कुकी-चिन वर्गकी, चिन पहाड़ियों

(बर्मा) में प्रयुक्त, एक केन्द्रीय चिन भाषा। ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४१२,१५ थी।

शुस्वप (shuswap)––**सलिश** (दे०) भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

शू (shu)––**पवो करेन** (दे०) का एक नाम।

शून्य प्रत्यय (zero ending)––वाक्यमें जब प्रातिपदिक ज्योंका त्यों बिना कुछ जोड़े घटाये प्रयुक्त किया जाता है तो उसमें शून्य प्रत्यय माना जाता है। संस्कृतमें 'विद्या' प्रातिपदिक भी है और प्रथम एकवचनका रूप भी है। इसका अर्थ यह है प्रातिपदिक 'विद्या'+शून्य प्रत्यय = प्रथमा एक वचन विद्या। इस प्रकार शून्य प्रत्ययका यथार्थ अर्थ है प्रत्ययाभाव।

शेंतंग (shentang)––चिन पहाड़ियों (बर्मा) में प्रयुक्त, **चीनी परिवार**की एक **कुकी-चिन** (दे०) भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५७२० थी।

शेंदू (shendu)–**चिन** (दे०) का एक नाम।

शेकसिप (shekasip)––१. **सकाजैब** (दे०) का एक नाम। २. **हल्लाम** (दे०) का नाम।

शेखई (shekhai)––१. चम्पारन ज़िलेके, मुसलमानों-द्वारा प्रयुक्त **अवधी** (दे०) का नाम। 'शेख' (= मुसलमान) शब्दके आधारपर यह नाम पड़ा है। २. **जोलहा बोली** (दे०) का एक अन्य नाम।

शेखाई––'शेख' मूलतः एक प्रकारके ऊँचे मुसलमानोंको कहते हैं। यों इसका प्रयोग सामान्य मुसलमानके लिए भी होता है। 'शेखाई' शब्द इसीसे बना है, और इसका अर्थ है 'मुसलमानकी' इसका प्रयोग **जोलहा बोली** (दे०) के लिए होता है।

शेखावाटी–'उत्तरी मारवाड़ी'का एक स्थानीय रूप जो बीकानेरके पूरब शेखावाटी नामक प्रदेशमें बोला जाता है। ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४८८,०१७ थी। दे० **'मारवाड़ी'**।

शेन––तामिल (दे०) भाषाकी एक शैली।

शेरपा तिब्बती–नैपालमें प्रयुक्त तिब्बती (दे०) बोली। इसे **शेरपा भोटिया** भी कहते हैं।

शेरेन्ते (sherente)––**अकुआ** (दे०) की एक शैलीका नाम।

शैयांग (shaiyang)––**मिरी** (दे०) का एक रूप।

शैली-शास्त्र––शैली-विज्ञान (दे०) का एक अन्य नाम।

शैलीविज्ञान (stylistics)––एक विज्ञान, जिसमें 'शैली'का वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है। शैली-विज्ञानको जेनेवा, फ्रांस और जर्मनीके बहुतसे विद्वान् भाषा-विज्ञानके अंतर्गत मानते हैं, किन्तु स्टुर्टवेंट, ग्लीसन आदि अधिकांश अमेरिकन भाषा-विज्ञानविद् इसे भाषा-विज्ञानके क्षेत्रके बाहरका मानते हैं। यह विज्ञान, काव्यशास्त्रके पर्याप्त निकट है। इसमें प्रभावकी दृष्टिसे ध्वनि, रूप, शब्द, वाक्य आदिपर विचार किया जाता है। इन आधारोंपर इसके ध्वनीय-शैली-विज्ञान, (phonostylistics), रूपीय शैली विज्ञान, (morpho-stylistics), शब्दीय शैली विज्ञान (wordostytistics), वाक्यीय शैली-विज्ञान (syntactostylistics), तथा अर्थीय शैलीविज्ञान (semantico-stylistics), आदि पाँच उपभेद हो सकते हैं। अर्थात् इसमें इस बातपर विचार करते हैं कि साहित्य-रचना या बातचीतमें प्रभाव आदिकी दृष्टिसे किस प्रकारकी ध्वनियों, रूपों, शब्दों, वाक्यों या अर्थों आदिको छोड़ा जाय और किन्हें प्रयुक्त किया जाय। इस तरह इसमें चयन-पद्धति एवं उसके आधारभूत सिद्धान्तोंपर विचार किया जाता है। इस प्रकारका विचार साहित्यिक भाषाके सम्बन्धमें तो होता ही है, रोज़की बोली जानेवाली भाषामें भी वक्ताके सामाजिक स्तर, संदर्भ या विषय आदिकी दृष्टिसे रूपों या शब्दों आदिके चयनमें पर्याप्त अन्तर पड़ता है। इसी प्रकार विशिष्ट प्रभावके लिए सामान्य भाषामें परिवर्तन करके भी भाषाको आकर्षक बनाया जाता

है। इन सभी बातोंका इसमें विचार किया जाता है। भारतके भाषा-विज्ञानविदोंमें डॉ० मसऊद हसन खांने इस दृष्टिसे अपने कुछ लेखोंमें उर्दूके प्रसिद्ध कवि ग़ालिबकी भाषापर विचार किया है।

शैषिक--दे० **तद्धित**।

शोंशे (shonshe)--**लुइ** (दे०)का एक रूप।

शो (sho)--**ख्यंग** (दे०)का एक नाम।

शोअ (shoa)--**ख्यंग** (दे०)का एक नाम।

शोउ (shou)--**ख्यंग** (दे०)का एक नाम।

शोकबोधक अव्यय--दे० '**मनोविकार बोधक अव्यय**।

शोदोची--**पश्चिमी पहाड़ी** (दे०)के **सतलज** वर्ग (दे०)की शिमला पहाड़ियोंमें सतलज नदीके दक्षिणी किनारेपर प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १८,८९३ थी।

शोम्वांग (shomwang)--**मिरी** (दे०) का एक रूप।

शोराचोली--**क्यूंठली** (दे०)का शिमलाकी पहाड़ियोंमें प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,४२८ थी।

शोलग (sholaga)--**सोलग** (दे०)का नाम।

शोशोन (shoshon)--उत्तरी अमेरिकाके **उटो-अज्टेक** (दे०)परिवारका एक वर्ग। इस वर्गके चार उपवर्ग हैं :(१) **प्लेटो** (दे०) (२) **दक्षिणी कैलिफोर्निअन** (दे०), (३) **कर्न रिवर** (दे०)तथा (४) **पुएबलो** (दे०) हैं। इन चारो उपवर्गोंमें लगभग २४ भाषाएँ हैं। इस वर्गका क्षेत्र कैलिफोर्निया तथा ऐरिज़ोना आदिमें है।

शोशोनी-कोमंच (shoshoni-comanch --**प्लेटो** (दे०)उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इस भाषाकी बहुतसी बोलियाँ हैं। इसे **शोशोनिअन** भी कहते हैं।

शौद्धाक्षरसंधि--(दे०) **संधि**।

शौरसेनी--मार्कण्डेयके अनुसार **पैशाची** प्राकृत (दे०)का एक भेद।

शौरसेनी अपभ्रंश--**अपभ्रंश** (दे०)का भेद।

श्याममिऔ (black miao)--'**हे मिंआव**' (दे०)का एक नाम।

श्याम यिन (black yin)--**शन-यंगलम** (दे०)का एक अन्य नाम।

श्याम रिअंग (black riang) **शंग-यंगलम** (दे०)का एक अन्य नाम।

श्यू (shyu)--**ख्यंग** (दे०)का एक नाम।

श्रमपरिहरण मूलकतावाद--भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धांत। इसे **यो-हे-हो-सिद्धांत** (दे०) भी कहते हैं।

श्रावणिक ध्वनि-विज्ञान (acoustic phonetics)--'श्रावणिक ध्वनि-विज्ञान' भौतिकीकी एक शाखा है। इसका सम्बन्ध मूलतः ध्वनिकी श्रोतव्यतासे है। भाषाका ग्रहण ध्वनियोंको सुनकर किया जाता है, इसीलिए इसका सम्बन्ध भाषा-विज्ञानसे भी है। भाषा विज्ञानके क्षेत्रमें यह ध्वनि-विज्ञानकी एक शाखा मानी जा सकती है। इसमें इस बातका अध्ययन किया जाता है कि सुननेमें ध्वनि कैसी है। ध्वनिका विशिष्ट प्रकारका होना उसके सुर या **तारत्व** (pitch), **आयतन** (volume), गूंज या अनुनाद, भीतरसे आनेवाली हवाकी शक्ति, उच्चारण अवयवोंकी बनावट तथा उनके द्वारा विशिष्ट शक्तिसे ध्वनन् आदि कई बातोंपर निर्भर करता है। इन्हींमें विभिन्नताके कारण ध्वनि मीठी-सुरीली, कर्कश-कर्णकटु, भारी-हलकी, मोटी-पतली, भरी, भर्राई, टूटी, कृत्रिम आदि होती है। इतना ही नहीं भाषा-ध्वनिके रूपमें एक ध्वनिका दूसरेसे अंतर भी इन्हीं बातोंपर निर्भर करता है। स्वर, अर्द्धस्वर तथा व्यंजन आदि रूपोंमें ध्वनियोंका वर्गीकरण अन्य बातोंके अतिरिक्त ध्वनियोंके श्रौतगुणपर भी आधारित है। आगे स्वर और व्यंजनके वर्गीकरण भी कुछ अंशोंतक इसपर भी आधारित हैं। डा० जोन्सके मान स्वरोंका वर्गीकरण भी मूलतः श्रावणिक है। (दे० मान स्वर) यह बात दूसरी है कि उच्चारण-अवयवोंकी विभिन्न स्थितियोंसे भी उन-

का सम्बन्ध है । वस्तुतः अवयवोंकी क्रिया कारण है और उत्पन्न ध्वनियोंका श्रोतगुण उनका परिणाम या कार्य । व्यंजनोंके वर्गीकरण(घोष, अघोष, अल्पप्राण, स्पर्श, संघर्षी, लुंठित, पार्श्विक, नासिक्य आदि)का भी इससे सम्बन्ध है । ध्वनियोंके श्रौतगुणके कारण ही श्रोता विभिन्न ध्वनियोंको पहचानकर भाषाको समझता है या सुर, बलाघात, या व्यक्ति-विशेषका निर्णय करता है । श्रोताके कानतक इन ध्वनियोंकी लहरें आती हैं और उन्हींको पकड़कर श्रोता ध्वनियोंको विभिन्न दृष्टियोंसे समझता है। इस प्रकार ये लहरें बहुत महत्वपूर्ण हैं । आज इसीलिए श्रावणिक ध्वनि-विज्ञानमें विभिन्न यंत्रोंसे इन लहरोंका अध्ययन किया जाता है । पहले यंत्र इन लहरोंका चित्र ले लेते हैं फिर उन चित्रोंके विश्लेषणद्वारा ध्वनिकी **आवृत्ति** (frequency), उसका **मात्राकाल** (duration), **आयाम** (amplitude) तथा उसकी **तीव्रता** (intensity) का पता चलाते हैं। श्रावणिक ध्वनि-विज्ञानमें प्रमुखतः दो यंत्रोंसे आजकल बहुत सहायता ली जा रही है। एक तो है **ऑसिलोग्राफ** (दे०) जो पुराना आविष्कार है । और दूसरा है **स्पेक्टोग्राफ़** (दे०) जिसे पिछले महायुद्धमें बनाया गया था । श्रावणिक ध्वनि-विज्ञानमें, अभीतक स्वरोंपर ही विशेष रूपसे कार्य हो सका श्रावणिक ध्वनि विज्ञानको **श्रुतिशास्त्र** (acoustics) **भौतिक ध्वनि-विज्ञान** (physical phonetics) तथा **ध्वानिकी** (genemmic phonetics) भी कहते हैं।

श्रीनगरिया—**गढ़वाली** (दे०)की, गढ़वालकी, प्राचीन राजधानी श्रीनगरमें तथा उसके आसपास प्रयुक्त, एक उपबोली । यह गढ़वालीका परिनिष्ठित रूप है । ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १२०.०८ थी ।

श्री हट्टिया पूर्वीय—**सिलहटिआ** (दे०)का एक अन्य नाम ।

श्रुति (glide)—दे० **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें श्रुति** उपशीर्षक ।

श्रुति ध्वनि (gliding sound)—ऐसी ध्वनियां जिनका उच्चारण एक निश्चित स्थितिमें (दे०) **मूल ध्वनि** न होकर चल स्थितिमें होता है। (दे०) **श्रुति** । इनके उच्चारणके समय उच्चारण अवयव एक ध्वनि-उच्चारणकी स्थितिसे धीरे धीरे दूसरी ध्वनिके उच्चारणकी स्थितिकी ओर अग्रसर होते रहते हैं, इसी बीचमें या चल स्थितिमें श्रुति ध्वनियोंका उच्चारण हो जाता है । व, य तथा सभी संयुक्त स्वर (ऐ, ओ) इसी श्रेणीके हैं । इन्हें **चलध्वनि** या **गत्यात्मक ध्वनि** भी कहते हैं ।

श्रुतिशास्त्र(acoustics)—**श्रावणिक ध्वनि-विज्ञान** (दे०)का एक अन्य नाम ।

श्रेणीवाचक क्रियाविशेषण—(दे०) **क्रिया विशेषण** ।

श्रेष्ठावस्था—(दे०) '**विशेषण**'।

श्रैप्र सुर—सुर (दे०)का भेद ।

श्लिष्ट-योगात्मक (inflecting)—**योगात्मक-भाषा** (दे०)का एक भेद ।

श्लिष्ट योगात्मक वाक्य—(दे०) **वाक्यमें वाक्योंके प्रकार** उपशीर्षक ।

श्लुह (shluh) हेमिटिक परिवारकी एक बर्बर भाषा, जो दक्षिणी मोरक्को (अफ्रीका)-में बोली जाती है। इसे **शिल्ह** भी कहते हैं।

श्वस्तनी—**लुट् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

श्वा (shwa)—यह पारिभाषिक शब्द हिब्रूका है । हिब्रूमें इसका प्रयोग अस्पष्ट स्वर या स्वर शून्यताके लिए हुआ है। अस्पष्ट स्वरके लिए प्रयुक्त श्वाको **चल श्वा** (mobile show) कहते थे। आजकल इसे उदासीन स्वर (neutral vowel) कहते हैं तथा उलटी ई (ə)से इसे व्यक्त करते हैं। स्वरशून्यताके लिए प्रयुक्त श्वा हिब्रूमें **अस्पष्ट श्वा**(latent shwa)कहलाता था।

श्वास—**अघोष**(दे०)का एक अन्यनाम ।(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें प्रयत्न** उपशीर्षक ।

श्वास-नालिका (wind pipe)—भाषाके बोलनेमें सहायक एक अंग। इसीके द्वारा हवा फेफड़ोंसे निकलकर मुँहमें आती है। **स्वर-यंत्र** (दे०) इसीके ऊपर होता है। दे० **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान**।

श्वास वर्ग (breathing group)—एक श्वास (expiration)में उच्चरित ध्वनि या शब्द-समूह।

श्वासानुप्रदान—दे० **अनुप्रदान**।

श्विज़्टुत्श (schwyztutsch)—स्विट्ज़रलैंडमें प्रचलित परिनिष्ठित जर्मन।

श्वेत करेन (white karen)—**करेन्न्यू** (दे०)का एक अन्य नाम।

श्वेत मिअओ (white miao)—**पे-मिअओ** (दे०)का एक दूसरा नाम भाषा।

श्वेत रूसी—दे० **स्लैवोनिक**।

श्वेली शान (shweli shan)—**शांगले** (दे०)का एक रूप।

ष

षकार—षके लिए प्रयुक्त नाम। (दे०) **कार**।

षष्ठी—संबंध कारकके लिए संस्कृतमें प्रयुक्त एक नाम। कभी-कभी इसका हिन्दीमें भी प्रयोग होता है।

षष्ठी तत्पुरुष समास,—(दे०) **समास**।

षष्ठी बहुव्रीहि समास—(दे०) **समास**।

स

संकर (sankara)—**येरूकलस** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम। वस्तुतः यह येरुकलस बोलनेवालोंका नाम है।

संकीर्ण प्रतिलेखन—(दे०) **सूक्ष्म प्रतिलेखन**।

संकीर्ण रोमिक(narrow romic)—स्वीट द्वारा बनायी गयी ध्वन्यात्मक लिपि। बादमें उसने इसका एक सरल रूप भी बनाया, जिसे **आयत रोमिक** (broad romic) कहते हैं।

संकीर्ण संयुक्त स्वर—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**का **संयुक्त स्वर** उपशीर्षक।

संकेत—एक प्रकारका चिह्न। (दे०) **विराम**।

संकेतवाचक अव्यय—(दे०) **समुच्चयबोधक अव्यय**।

संकेतवाद—भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धांत। इसे **निर्णय-सिद्धांत** (दे०) भी कहते हैं।

संकेतार्थ—(दे०) **अर्थ**।

संकेथ (sanketha)—**तमिल** (दे०)के लिए कुर्गमें प्रयुक्त एक नाम।

संक्रमित अर्थ(transferred meaning)—किसी शब्दका लाक्षणिक अर्थ। जैसे 'वह गदहा है'में 'गदहा'का 'मूर्ख' अर्थ।

संक्रांतिकालिक प्राकृत—एक **प्राकृत** (दे०)।

संक्रांति-लिपि (transitional script)—ऐसी लिपि, जिसमें कुछ चिह्न चित्रलिपिके, कुछ भाव लिपिके तथा कुछ ध्वन्यात्मक लिपिके हों।

संक्षिप्त वाक्यांश (bridged clause)—ऐसा वाक्यांश या उपवाक्य, जिसमें क्रिया (finite verb) न हो।

संक्षेप (abbreviation)—संक्षिप्त किया हुआ रूप। जैसे, आधुनिक भारतीय आर्य-भाषाका आ० भा० आ० या आ भा आ।

संक्षेपित शब्द(curtailed word)—किसी शब्दके अग्र, मध्य और पश्च भागोंमें किसी एक या अधिकको काटकर बनाया गया संक्षिप्त या छोटा शब्द। जैसे, 'नेकटाई'-का 'टाई'।

संख्या उत्तरपद बहुव्रीहि समास—(दे०) **समास**।

संख्यादर्शी विशेषण--(दे०) **विशेषण** ।

संख्या पूर्वपद कर्मधारय समास--(दे०) **समास** ।

संख्या पूर्वपद बहुव्रीहि समास--(दे०)**समास** ।

संख्याबोधक विशेषण--(दे०) **विशेषण** ।

संख्यावाचक विशेषण--(दे०) **विशेषण** ।

संख्यालिपि--बौद्धग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक ।

संख्यासूचक विशेषण--(दे०) **विशेषण** ।

संगतम्र (sangtamra)--**थुकुमी** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

संगतिमूलक सर्वनाम--(दे०) **सर्वनाम** ।

संगतिवाचक सर्वनाम--(दे०) **सर्वनाम** ।

संगम (juncture)--(अंग्रेजी शब्द) juncture के लिए हिन्दीमें 'संधि'का भी प्रयोग कुछ लोगोंने किया है, किन्तु सन्धि एक विशेष अर्थमें पहलेसे प्रचलित है, अतः एक नये अर्थमें उसे प्रयुक्त करना ठीक नहीं । juncture-को अंग्रेजीमें border-point(सीमा बिन्दु) भी कहा गया है । हिन्दीमें इसे **योजक** या **मौन योजक** भी कहा जा सकता है) बोलने-में एक ध्वनिके बाद दूसरी ध्वनि आती रहती है । वक्ता एक ध्वनि समाप्त करके दूसरीका उच्चारण करता है। यह एक ध्वनिसे दूसरी-पर आना दो प्रकारका होता है । कभी तो हम सीधे चले जाते हैं, दोनों ध्वनियोंके बीचमें कुछ नहीं आता । उदाहरणार्थ, 'तु-म्हारे'में 'म्'के बाद 'ह्' सीधे आ जाता है, किन्तु कभी एक ध्वनिसे दूसरीपर जाना ऐसा नहीं होता । उदाहरणार्थ,' तुम् हारे'में ध्वनियाँ वही हैं, किन्तु'म्' से 'ह्'पर जाना 'तुम्हारे' जैसा नहीं है । यहाँ 'म्' और 'ह्'-के बीचमें थोड़ा अवकाश, विराम या मौन है । इसी विराम या मौनको 'संगम', 'मौन' या 'योजक मौन' कहते हैं । यह ध्यातव्य है कि यह संगम सार्थक है। यदि न हो तो 'तुम् हारे'का अर्थ 'तुम्हारे' हो जायगा । संगमको भाषा-विज्ञानमें धन (+, जैसे तुम् +हारे) द्वारा व्यक्त करते हैं, इसीलिए इसे **धन संगम** (plus juncture) भी कहते हैं । संगम सर्वदा शब्दोंके बीचमें आता है, अर्थात् वाक्यांशकी सीमाओंके भीतर ही आता है, इसलिए इसे कुछ लोग **आंतरिक संगम** (internal juncture) कहते हैं । दूसरे शब्दोंमें संगम कभी वाक्य या वाक्यांश-के अन्तमें नहीं आता, अतः वह आंतरिक है। कुछ विद्वानोंने वाक्यादिके अन्तके 'विराम' (‡‡)को भी संगम कहा है, किन्तु उसे संगम न कहकर **सीमांतिक विराम** (terminal contour) कहना कुछ लोग अधिक ठीक मानते हैं । संगमका एक भेद **रूपग्रामीय संगम**(morphemic juncture) भी है। जब दो रूपग्रामों (morphems) के बीच संगम हो तो उसे यह नाम देते हैं । 'तुम् + हारे'में यही है । व्याकरणिक शब्दोंके बीचमें आनेसे इसे व्याकरणिक-संगम भी कहते हैं । संगमका एक भेद **आक्षरिक संगम**(syllabic juncture) भी है। जब संगम दो अक्षरोंके बीचमें आये तो उसे यह नाम देते हैं । दो समध्वनीय भिन्नार्थी उच्चारणोंको लें ।

नल्की	नल् की
(१)	(२)

उपर्युक्त दोनोंमें दो अक्षर हैं (१)में 'नल्' और 'की' । इन दो अक्षरोंके बीच संगम नहीं है, किन्तु दूसरेमें इन्हीं दोनों अक्षरोंके बीच संगम है । अक्षर-सीमापर स्थित होनेके कारण यह संगम **'आक्षरिक सगम'** है ।[1]

---

१ इस प्रसंगमें **आन्तरिक मुक्त संगम** (internal open juncture) और **बाह्य मुक्त संगम** (external open juncture) के भी नाम लिये जाते हैं । दूसरे वहाँ होता है, जहाँ संगम ध्वनिग्रामकी प्रकृतिमें निहित हो, जैसे हिन्दी आदिमें अन्तके स्पर्श या स्पर्श संघर्षी अस्फोटित होते हैं या अंग्रेजीमें आरम्भमें आनेवाले क्, प्, ट् आदि कुछ महाप्राण हो जाते हैं। इस प्रकार यह आदि या अन्तमें मिलता है । अर्थात् शब्दसे बाहर है। इसे हॉकिटने **सीमांतिक** (terminal) कहा है । पहलेको **शब्द-संगम** या **वाक्यांश-संगम** भी कहते हैं । यहाँ संगम न बाहर

संगम बहुत-सी भाषाओंमें किसी-न-किसी रूपमें सार्थक होता है। कुछ उदाहरण हैं :— नदी—न दी। नफ़ीस—न फ़ीस। नरम—न रम। सोना—सो ना। वह घोड़ागाड़ी खींचता है—वह घोड़ा गाड़ी खींचता है। इसी आधारपर कुछ विद्वानोंने संगमको **ध्वनिग्राम** माना है। ऊपर कहा जा चुका है कि वाक्य या वाक्यांशके अन्तमें आनेवाले विरामको संगम न कहकर **सीमांतिक विराम** कहना अधिक उचित समझा जाता है, किन्तु यह सर्वसम्मत नहीं है। कुछ लोग भाषाके बीच किसी भी प्रकारके मौन या टूट-(break)को संगम मानते हैं। इस रूपमें **सीमांतिक विराम**को संगम मानकर उसके दो भेद किये जा सकते हैं :—(१)**पूर्ण विराम संगम** या **सीमांतिक संगम** (terminal juncture)—यह पूर्ण विराम है, जिसके (i) **सामान्य भाव**, (ii) **प्रश्न**, (iii) **आश्चर्य**, ये तीन उपभेद किये जा सकते हैं। (२) **अल्पविराम संगम** या **कॉमा संगम** (coma juncture)—यह अल्प विराम है। रोको मत, जाने दो; रोको, मत जाने दो। he will act, roughly in the same manner; he will act roughly, in the same manner। old man, and woman; old.

होता है, न ध्वनिग्रामकी प्रकृतिमें निहित होता है। वह शब्दके भीतर होता है। अंग्रेज़ी-का एक उदाहरणलें slyness। इसमें बीचमें sly + ness संगम है। कभी-कभी **बद्ध संगम** (close juncture)का भी प्रयोग होता है। जहाँ सरलतासे, बिना अव-काशके एक ध्वनिसे दूसरीपर जाया जाय (जैसे तुम्हारे, नल्की) वहाँ यह होता है। इसे **ध्वन्यात्मक संगम** भी कहते हैं। वस्तुतः इसे संगम नहीं कहना चाहिये। कुछ लोग आन्तरिक और वाह्य मुक्त संगम नामका प्रयोग बिल्कुल ही भिन्न अर्थमें करते हैं। कुछ अमेरिकी विद्वान् 'जंक्चर'में और भी बहुत-सी बातोंको समेट लेते हैं।

man and woman। दिया, तले रख दो; दिया तले रख दो। इन उदाहरणोंसे स्पष्ट है कि ये अल्प विराम संगम सार्थक हैं और इनके रहने या न रहनेसे पर्याप्त अन्तर पड़ जाता है।

संगमेश्वरी (sangamesvari)—**कोंकणी** (दे०) का, राजापुर तथा बंबईके बीचमें प्रयुक्त, एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १३,३२,८०० थी।

संगयस (sangyas)—कनवरमें प्रयुक्त **भोटिआ** (दे०)का एक नाम।

संगलीची (sanglichi)—**इश्काश्मी** (दे०)-की, पामीरमें प्रयुक्त, एक बोली।

संगीतवाद—भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धांत। इसे **संगीत सिद्धांत** (दे०) भी कहते हैं।

संगीत सिद्धान्त (musical theory)—भाषा उत्पत्तिका एक सिद्धांत। (दे०) **भाषाकी उत्पत्ति**।

संगीतात्मक स्वराघात (musical accent)—**सुर**(दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

संग्रहवाचक संबंधसूचक अव्यय—(दे०)**संबंध-सूचक अव्यय**।

संघर्षी (fricative, spirent) प्रयत्नके आधारपर किया गया व्यंजनोंका एक भेद। संघर्षी व्यंजनमें किन्हीं दो अंगोंके समीप आनेसे उनके बीच हवा घर्षण करते हुए निकलती है। स, ज, फ़ आदि ध्वनियाँ इसी प्रकारकी हैं। इसके कई भेद होते हैं। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**में **व्यंजनोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक।

संघर्षीकरण—किसी असंघर्षी ध्वनिका विक-सित या परिवर्तित होकर संघर्षी ध्वनि हो जाना। यह ध्वनिपरिवर्तनकी एक दिशा है। इसे **संघर्षी भवन** भी कहते हैं। लैटिन vitiumसे इतालवी vezzo इसका उदा-हरण हो सकता है।

संघात-प्रधान—**प्रश्लिष्ट-योगात्मक** (दे०)का एक अन्य नाम।

संघाती—**प्रश्लिष्ट-योगात्मक** (दे०)का नाम।

संचयात्मक भाषा—योगात्मक भाषा (दे०)-का एक अन्य नाम।

संचयोन्मुख भाषा—योगात्मक भाषा (दे०)-का एक अन्य नाम।

संज्ञा (noun)—सम्+ज्ञा+अङ+टाप्; अर्थात् जिससे सम्यक् ज्ञान हो। किसी प्राणी, चीज़, गुण, काम या भाव आदिके नामको संज्ञा कहते हैं। जैसे हाथी, कुर्सी, भलाई, दौड़ना, मित्रता आदि। कामताप्रसाद गुरुके शब्दोंमें 'संज्ञा उस विकारी शब्दको कहते हैं, जिससे प्रकृत किंवा कल्पित सृष्टिकी किसी वस्तुका नाम सूचित हो।' संक्षेपमें यह भी कहना अनुचित नहीं है कि 'किसीके भी नामको संज्ञा कहते हैं।' संज्ञाके, अर्थके आधारपर प्रमुख भेद दो हैं:—(१) **पदार्थ वाचक** या **वस्तुवाचक** तथा (२) **भाववाचक**। **पदार्थ-वाचक** संज्ञा, किसी पदार्थ (वस्तु या जीव आदि)के नामको कहते हैं, जैसे कलम, घोड़ा, मोहन आदि। **भाववाचक** (abstract noun) संज्ञा, उसे कहते हैं जिससे किसी गुण, दशा, क्रिया या भाव आदिका बोध हो। जैसे वीरता, सुख, बहाव, मित्रता आदि। इसे **गुणवाचक** संज्ञा भी कहते हैं। प्रथम, अर्थात् **पदार्थवाचकके व्यक्तिवाचक** (proper noun), **जातिवाचक** (common noun), **समूहवाचक** (collective noun) और **द्रव्यवाचक** (material noun), ये चार उपभेद होते हैं। **व्यक्तिवाचक** उस संज्ञाको कहते हैं, जिससे किसी एकका बोध हो। जैसे राम, काशी, विंध्याचल, ऐरावत आदि। **जातिवाचक** उस संज्ञाको कहते हैं, जिससे पूरी जातिका बोध हो। जैसे मनुष्य, नगर, पर्वत, हाथी आदि। जिस संज्ञासे अनेक व्यक्तियों या पदार्थों आदिके समूहका बोध हो, उसे **समूहवाचक** संज्ञा कहते हैं। जैसे सेना, गुच्छा आदि। जिस संज्ञासे किसी द्रव्यका बोध हो, उसे **द्रव्यवाचक** संज्ञा कहते हैं। जैसे सोना, घी, चीनी आदि। इन्हींको अलग-अलग कुछ वैयाकरणोंने संज्ञाके पाँच भेद—व्यक्तिवाचक, जातिवाचक, समूहवाचक, द्रव्यवाचक, भाववाचक—के रूपमें माना है। संस्कृत व्याकरणमें 'संज्ञा' शब्दका प्रयोग पारिभाषिक शब्दोंके लिए हुआ है। वहाँ संज्ञा शब्द (पतंजलिके अनुसार) दो प्रकारके हैं:—**कृत्रिम संज्ञा**—अर्थात् जो कृत्रिम हैं और जिनका सामान्य भाषामें प्रयोग नहीं होता। ये केवल व्याकरणिक विवेचनमें ही प्रयुक्त हुए हैं। जैसे टि, घु, घ, भ आदि। **अकृत्रिम संज्ञा**—वे संज्ञा या नाम, जो कृत्रिम नहीं हैं और जो अपने द्वारा व्यंजित कोशार्थको व्यक्त करते हैं। जैसे अव्यय, सर्वनाम, विशेषण आदि। हिन्दीमें जिस अर्थमें 'संज्ञा' शब्दका प्रयोग हुआ है, उस अर्थमें संस्कृतमें 'नाम' शब्द है। पाणिनि 'सुवन्त' शब्दका प्रयोग करते हैं, जिसमें 'नाम'के अतिरिक्त उपसर्ग और निपात भी आते हैं।

संज्ञा उपवाक्य—(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक।

संज्ञात्मक उपवाक्य—(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक।

संज्ञात्मक विशेषण (absolute adjective)—ऐसा विशेषण, जो संज्ञाके रूपमें प्रयुक्त हुआ हो। जैसे, '**अच्छों**को जाने दो'में 'अच्छों'।

संज्ञाप्रधान वाक्य (nominal sentence)—ऐसा वाक्य, जिसके प्रमुख अवयव संज्ञा शब्द हों।

संज्ञा भाषा (noun language, nominal language)—ऐसी भाषा, जिसमें **संज्ञा प्रधान वाक्य** ही प्रमुख रूपसे प्रयुक्त हों।

संज्ञावाचक विशेषण—(दे०) **विशेषण**।

संज्ञार्थक क्रिया (gerund, verbal noun, verb-noun)—वह क्रिया या क्रिया रूप, जो क्रियाका काम होकर ही रुके, संज्ञाका भी काम कर सके। इसे कभी-कभी क्रियात्मक संज्ञा भी कहते हैं। अंग्रेज़ीमें धातुमें लगाकर इसका निर्माण किया जाता है। जैसे reading is a good pastime.

संटोटोमस (santo tomas)—**लोअर**

केलीफोर्निअन यूम (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

संतान (allotone)—(दे०) **तानग्राम**।

संताली—संथाली (दे०) का यथार्थ नाम।

संथाली (santali)—इसे प्रायः स्वतंत्र भाषा माना जाता है। ग्रियर्सनके अनुसार यह खेरवारी भाषाकी एक बोली है। यह छोटा नागपुर तथा उसके आस-पास बंगाल, बिहार तथा उड़ीसामें बोली जाती है। आसपासकी प्रमुख भाषाओंका इसपर पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। इसका शुद्ध नाम **संताली** है। (दे०) **खेरवारी**। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २२,३३,५७३ थी।

संदिग्ध भूत—(दे०) **काल**।

संदिग्ध युग्म (suspicious pair)—**ध्वनिग्रामविज्ञान** (दे०) में प्रयुक्त एक पारिभाषिक शब्द।

संदिग्ध वर्तमान—(दे०) **काल**।

संदेहसूचक वाक्य—ऐसा वाक्य, जिसमें संदेहका भाव व्यक्त किया गया हो, जैसे—'शायद हमारी जीत न हो।'

संदेहार्थ—(दे०) **अर्थ**।

संदेहास्पद युग्म (suspicious pair)—**ध्वनिग्राम विज्ञान** (दे०) में प्रयुक्त एक पारिभाषिक शब्द।

संधान—(दे०) **संधि**।

संधि—(१) एक प्रकारका ध्वनि परिवर्तन। (दे०) **ध्वनि परिवर्तनकी दिशाएँ**। संस्कृतमें इस सम्बन्धमें विस्तारके साथ नियमोंका विवेचन किया गया है। ये नियम स्वर और व्यंजन (विसर्ग भी इसीमें है) दोनों हीके सम्बन्धमें बने हैं। हिन्दीमें भी कुछ सन्धियोंकी प्रवृत्ति बोलनेमें दिखाई पड़ रही है। 'दूध दो'को 'दुद्दो' कहा जाता है, पर इसे समीकरण कहना अधिक समीचीन होगा। इन सबके अतिरिक्त भी भाषाके स्वाभाविक विकासमें एक प्रकारकी सन्धियाँ दिखाई पड़ती हैं। कुछ व्यंजन (प, व, म, य आदि) उच्चारणमें स्वरके समीप होनेके कारण स्वरमें परिवर्तित हो जाते हैं और फिर अपनेसे पहलेके व्यंजनमें मिल जाते हैं। कभी-कभी इससे ध्वनियोंमें इतना परिवर्तन हो जाता है कि साधारणतया समझमें नहीं आता। कुछ उदाहरण लिये जा सकते हैं :—**सपत्नी** = सवत = सउत = सौत। **शत** = सअ = सव = सउ = सौ। **नयन** = नइन = नैन। **चामर** = चँवर = चँउर = चौर। **समर्पयति** = सअँप्पेइ = सवँप्पेइ = सौंपे। (२) (sandni या euphonic combination या phonatic combination)—'धा' (= रखना, धारण करना, धातुसे 'सम्' (=एक स्थानपर) उपसर्ग लगानेसे 'संधि' शब्द बनता है और इसका अर्थ होता है योग, जोड़, मिलाना या मेल आदि। व्याकरणमें दो पास-पासकी ध्वनियोंका मिलना ही संधि है। दूसरे शब्दोंमें, दो शब्दोंके पास-पास आनेपर, जब प्रथम शब्दकी अंतिम ध्वनि तथा दूसरेकी प्रथम ध्वनि आपसमें मिलती है, तो उसे संधि कहते हैं। 'संधि' शब्द पर्याप्त पुराना है। ऋग्वेदमें इसका प्रयोग 'जोड़', 'योग' या 'मिलने'के अर्थमें मिलता है। व्याकरणके पारिभाषिक अर्थमें यह शब्द प्रातिशाख्योंमें मिलने लगता है और तबसे अबतक प्रयुक्त होता आ रहा है। संधिके लिए **संहिता** शब्दका प्रयोग भी ('परःसन्निकर्षः संहिता'—पाणिनि, १.४.१०९) मिलता है। इसका भी संबंध 'सम् = ध'से है और अर्थ भी प्रायः वही है, जो संधिका है। संहिता शब्द भी ऋग्वेदसे ही मिलने लगता है और पाणिनिमें तथा उनके बादतक मिलता है। और आगे चलकर इस अर्थमें 'संहिता' शब्द लुप्त हो गया और इसीलिए आज 'संधि' शब्द ही प्रायः प्रचलित है। संधिके लिए ऋग्वेद प्रातिशाख्यमें तथा अन्यत्र भी **सन्धान** शब्दका भी प्रयोग मिलता है। याज्ञवल्क्य शिक्षामें (प्राचीनतम तमिल व्याकरण 'तोलकप्पियम्'में भी) संधिके चार प्रकार माने गये हैं :—'सन्धिश्चतुर्विधो भवति'—'लोपागमविकाराः

प्रकृतिभावश्चेति', अर्थात् संधि चार प्रकार-की होती है––लोप, आगम, विकार और प्रकृतिभाव । **लोपसंधि**में किसी ध्वनिका लोप होगा । **आगम संधि**में कोई नवीन ध्वनि आ जायगी । **विकार संधि**में वर्तमान ध्वनियोंमें कोई विकार होगा । **प्रकृतिभाव संधि**में न लोप होगा, न आगम और न विकार। अर्थात् ध्वनियाँ ज्यों-की-त्यों रहेंगी। विश्वकी सभी भाषाओंको दृष्टिमें रखते हुए इस शृंखलामें **मिश्र संधि** नामक एक पाँचवीं संधि भी जोड़ी जा सकती है। इसमें उपर्युक्त चार संधियोंमें किसी भी दो या अधिकका मिश्ररूप हो सकता है। इन पाँच प्रकारोंको सामान्य रूपसे संधिका कार्य भी माना जा सकता है। अर्थात् संधियाँ लोप, आगम, विकार, प्रकृतिभावका या मिश्रकार्य करती है। सामान्यतः संस्कृत तथा हिन्दी आदिमें संधियाँ तीन प्रकार[1] की मानी गयी हैं :––(१) **अच्-संधि** या **स्वर-संधि**––दो स्वरोंके पास-पास आनेसे जो संधि होती है; उसे स्वर या अच् संधि कहते हैं। जैसे, कवि+ईश्वर=कवीश्वर । (२) **हल्-संधि** या **व्यंजन-संधि**––जिन दो ध्वनियोंमें संधि हो, उनमें पहली व्यंजन हो और दूसरी स्वर या व्यंजन हो तो संधिको हल् या व्यंजन संधि कहते हैं। जैसे, वाक्+मय=वाङमय या जगत्+ईश=जगदीश । (३) **विसर्ग संधि** या **विसर्जनीय संधि**––जिन दो ध्वनियोंमें संधि हो, उनमें प्रथम विसर्ग तथा दूसरी स्वर या व्यंजन हो तो संधिको विसर्ग संधि कहते हैं। जैसे निः+चल=निश्चल, निः+आशा=निराशा। इस प्रकार संधियोंका नाम प्रथम ध्वनिके आधारपर रखा गया है। संस्कृतके शिक्षा ग्रंथों, व्याकरण ग्रंथों तथा प्रातिशाख्योंमें उपर्युक्तके अतिरिक्त कुछ अन्य संधियोंके भी नाम मिलते हैं, जो तत्त्वतः उपर्युक्त तीनमें ही किसी-न-किसीके अंतर्गत रखी जा सकती हैं। उनमें कुछ प्रमुख संधियाँ इस प्रकार हैं :––(क) **प्रकृति-संधि**––कातंत्र व्याकरणमें तथा अन्यत्र भी इस संधिका नाम मिलता है। यह 'प्रकृति भाव संधि'का ही एक अन्य नाम है। जैसे, प्लुत स्वरके उपरांत या प्रगृह्यसंज्ञक वर्णोंके बाद यदि स्वर आवे तो संधि नहीं होती :––विष्णो+इति=विष्णो इति। (२) **अनुलोम अन्वक्षर संधि**––जब संधिमें स्वर पहले हो तथा व्यंजन बादमें। (३) **प्रतिलोम अन्वक्षर संधि**––जब संधिमें व्यंजन पहले हों तथा स्वर बादमें। (४) **अन्वक्षर संधि-वक्त्र**––जिसमें अघोषके पूर्वके ऊष्मके पूर्वके विसर्गका लोप हो। इसे **अन्वक्षर-वक्त्र संधि** भी कहते हैं। (५) **अन्वक्षर संधि**––ऊपरकी नं० २, नं० ३का यह एक सामूहिक नाम तो है ही, इसके अतिरिक्त जब एषः, स्यः सःका विसर्ग किसी व्यंजनके पूर्व आनेपर लुप्त हो जाता है, तो उसे भी अन्वक्षर संधि कहते हैं। (६) **शौद्धाक्षर संधि**––जहाँ ऊष्म या र् ध्वनियाँ कुछ शब्दोंमें आ जायँ। जैसे, 'पुरु'में 'ष्' (ऋग्वेद-प्रातिशाख्य)। एक ध्वनि या शुद्ध अक्षरके आनेके कारण यह नाम पड़ा है। (७) **अंतःपात संधि**––जिसमें कुछ श्रुति ध्वनियाँ (जैसे य्, व् आदि) आ जायँ। (८) **प्रश्लिष्ट संधि**––स्वर संधिका एक भेद, जिसमें ह्रस्व या दीर्घ मूल स्वर मिलकर दीर्घ हो जाते हैं। जैसे, राम+अनुज=रामानुज। कुछ अन्य अर्थोंमें भी प्रश्लिष्ट संधिका प्रयोग होता है। (९) **क्षैप्र संधि**––स्वर संधिका एक भेद। बोलनेकी शीघ्रता या क्षिप्रतासे उत्पन्न स्वर-संधियोंको यह नाम दिया गया है। ऋग्वेद प्रातिशाख्यमें स्वरके असमान स्वरोंके पूर्व अर्वस्वर हो जानेको इस नामसे पुकारा गया है। (१०) **भुग्न-संधि**––अनौष्ठ्य स्वरोंके पूर्व ओ, औके

(१) सच्चे अर्थोंमें पाणिनिके अनुसार संधियाँ दो ही मानी जानी चाहिये—एक अच् और दूसरी हल् । विसर्ग संधि हल्के अंतर्गत ही रखी जा सकती है। किंतु परंपरागत रूपमें तीन ही मानी जाती हैं। कुछ लोगोंने ४,५, ६ या अधिक भेद भी माने हैं।

अव्, आव् हो जानेको भुग्न संधि कहा गया है। 'भुग्न'का अर्थ है 'मरोड़ा' या 'विकृत किया हुआ'। अर्थात् 'ओ'का 'अव' मरोड़ा हुआ या विकृत रूप है। (११) **अभिनिहित संधि**—'अभिनिहित'का अर्थ है 'पार्श्ववर्ती-में रखा हुआ।' जब संधिमें एक ध्वनि दूसरे-में अपना व्यक्तित्व मिटा दे तो इस नामसे अभिहित किया जाता है। जैसे, हरे+अव = हरेऽव। यहाँ 'अ' 'ए'में समाहित हो गया है। अन्य संधियोंमें **उद्ग्राह संधि, उद्ग्राहवत् संधि, प्राच्य पदवृत्ति संधि, पांचाल पदवृत्ति संधि, सामवश संधि, परिपन्न संधि, अवशंगम आस्थापित संधि, वशंगम संधि, नियत संधि रेफ संधि** (विसर्गका 'र' हो जाना), **अकाम संधि** (रके पूर्व विसर्गका लोप), **प्रश्रित संधि** (अः का ओ हो जाना), **व्यापन्न-उष्म संधि, विक्रांत-उष्म संधि, उपाचरित संधि, अनानुपूर्व्य संधि, स्पर्श-रेफ-संधि, स्पर्शोष्म-संधि, विक्रांत संधि, नति संधि** (दंत्यका मूर्द्धन्यमें परिवर्तन), **क्रम संधि** तथा **प्लुति संधि** आदिके नाम लिये जा सकते हैं।

हर भाषामें ध्वनियोंके उच्चारण-स्थान तथा प्रयत्न आदिके आधारपर संधिके नियम अलग-अलग होते हैं। संधि वस्तुतः सहज रूपमें बोलनेमें दो ध्वनियोंके मिलनेसे उद्-भूत ध्वनि-परिवर्तन है और यह हर भाषा-का अलग-अलगहोता है। संस्कृतकी संधियोंके नियम हिन्दीपर लागू कर दिये जाते हैं, किंतु वैज्ञानिक दृष्टिसे यह सर्वथा अनुचित है। संस्कृतकी बहुत कम संधियाँ हिन्दीपर वास्त-विक रूपमें लागू होती हैं। आजकल भाषा-विज्ञानमें मार्फ़ो फ़ोनीमिक्सके अंतर्गत जिन परिवर्तनोंका विचार होता है, वे भी एक प्रकारसे संधि ही हैं। संधिके प्रसंगमें **विवृत्ति** (hiatus)का नाम भी उल्लेख्य है। (दे०) **विवृत्ति, रूपध्वनिग्राम विज्ञान** तथा **ध्वनि-परिवर्तन**।

संधिकालीन प्राकृत—**शिलालेखी प्राकृत**(दे०)-का एक अन्य नाम।

संध्यात्मक तत्त्व (prosodic feature)-ध्वनि-गुण (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

संध्वनि (allphone)—भाषा विशेषमें प्रयुक्त होनेवाली यथार्थ ध्वनियोंके लिए एक नाम। ये एक **ध्वनिग्राम** (दे०)के अंतर्गत आती हैं। (दे०) **ध्वनि और भाषा-ध्वनि**।

संपर्क भाषा (contact vernacular)—बॉडकर तथा हॉगवेन द्वारा प्रयुक्त एक नाम। यह नाम ऐसी स्थानीय भाषाओंको दिया गया है, जो यूरोपीयों तथा आदि-वासियों या उपनिवेशोंके प्राचीन निवासियों-के बीच संपर्कके कारण पनपीं। संपर्क भाषाएँ एक प्रकारकी मिश्रित भाषाएँ हैं। पिडगिन अंग्रेजी इसी प्रकारकी है।

संपर्क सिद्धांत (contact theory)—भाषा-उत्पत्तिका एक सिद्धान्त। (दे०) **भाषाकी उत्पत्ति**।

संप्रदान कारक—(दे०) **कारक**।

संप्रदान तत्पुरुष समास—(दे०) **समास**।

संप्रदान बहुव्रीहि समास—(दे०) **समास**।

संप्रसारण—(१) संप्रसारणका अर्थ है फैला-ना। अर्द्धस्वरों (य, व, र, ल्त)को समस्थानीय स्वरों (इ, उ, ऋ, लृ)में फैलाना या परिव-र्तित कर देना ही संप्रसारण है। पाणिनि कहते हैं:—'इग्यणः संप्रसारणम्' (१.१.४५)। इ,उ,ऋ लृको 'इक्' कहते हैं और 'य्, व्, र्, ल्'को 'यण्' और कभी इक्के स्थानपर यण् और कभी यण्के स्थानपर इक् हो जाता है। जब इक्के स्थानपर 'यण्' हो जानेको 'यण्' कहते हैं तथा यण्के स्थानपर 'इक्' हो जाने को 'संप्रसारण' अर्थात् इ का य्,उ का व्, ऋ का र् तथा लृ का ल् हो जाना संप्रसारण है। संप्रसारणके लिए प्राचीन नाम **प्रसारण** मिलता है। (२) **अपश्रुति** (दे०)को मराठी-में संप्रसारण कहते हैं।

संबंधकारक—(दे०) **कारक**।

संबंध तत्पुरुष समास—(दे०) **समास**।

संबंधतत्त्व—वाक्यमें प्रयुक्त रूपोंमें जुड़ा हुआ वह तत्त्व, जिसके कारण उन रूपोंके आपसी संबंधका पता चलता है। (संबंध तत्त्वके प्रकार, संबंधतत्त्व और अर्थतत्त्वका संबंध,

हिन्दी संबंधतत्त्व, संबंधतत्त्वके कार्य आदिके लिए (दे०) **रूप** ; **विश्वकी भाषाओंका वर्गीकरण** भी देखिये) ।

संबंध तत्त्व और अर्थ-तत्त्वका संबंध––(दे०) **रूप** ।

संबंध-तत्त्वके कार्य––(दे०) **रूप** ।

संबंध-तत्त्वके प्रकार––(दे०) **रूप** ।

संबंधदर्शी रूप ग्राम––एक प्रकारका **रूपग्राम** (दे०) ।

संबंधदर्शी शब्द (relating word, functional word या relational word)–ऐसा शब्द, जो वाक्यमें अन्य शब्दोंके संबंधोंको द्योतन करे। परसर्ग, संयोजक, वियोजक आदि शब्द इसी श्रेणीके हैं। 'फंक्शनल वर्ड' नाम श्लौच (schlauch) का दिया हुआ है। ऐसे शब्दोंका अन्य शब्दोंकी भाँति कोई स्पष्ट अर्थ नहीं होता, इसी कारण इन्हें **रिक्त शब्द** भी कहते हैं।

संबंध बहुव्रीहि समास––(दे०) **समास** ।

संबोधनबोधक अव्यय––(दे०) **मनोविकार–बोधक अव्यय** ।

संबंधबोधक सर्वनाम––(दे०) **सर्वनाम** ।

संबंधवाचक क्रियाविशेषण––(दे०) **क्रिया-विशेषण** ।

संबंधवाचक प्रत्यय––एक प्रकारका **प्रत्यय** (दे०) ।

संबंधवाचक समुच्चयबोधक––(दे०) **समुच्चयबोधक अव्यय** ।

संबंधवाचक सर्वनाम––(दे०) **सर्वनाम** ।

संबंध समास (possessive compound)––(दे०) **संबंध तत्पुरुष** ।

संबंधसूचक अव्यय––संज्ञा अथवा संज्ञाके समान प्रयुक्त होनेवाले सर्वनाम, क्रिया, विशेषण, क्रिया विशेषण आदि शब्दोंके साथ जो अव्यय संबंध सूचित करनेके लिए आते हैं, उन्हें संबंधसूचक अव्यय कहते हैं। जैसे ने, को, वास्ते, बिना, पास, में आदि। इनमें जो संज्ञा आदि शब्दोंके बाद आते हैं, उन्हें **परस्थ अव्यय** अथवा **परसर्ग** (post position) कहते हैं। जैसे, (उन)के, (राम)-से, (घोड़े)ने। इनमें ने, को, से, के लिए, का, में पर आदि जो कारकके चिह्नके रूपमें प्रयुक्त होते हैं, **कारक चिह्न कारक-विभक्ति** या **विभक्ति** कहलाते हैं। इन्हें भी परसर्ग कहते हैं। अंग्रेजीमें ये संबंधसूचक अव्यय संज्ञा आदि शब्दोंके पहले आते हैं। अतः उन्हें **पूर्वसर्ग** (preposition) कहते हैं। जैसे, टू (to), फ्रॉम (from) आदि। हिन्दी आदि आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओंके इस प्रकारके शब्दोंको अंग्रेजी preposition के विरोधमें ही अंग्रेज़ विद्वानोंने post–position कहा था। परसर्ग उसीका अनुवाद है।

कुछ लोग कारक चिह्नोंको छोड़कर शेष संबंधसूचक शब्दोंको ही संबंधसूचक अव्यय कहते हैं। इस दृष्टिसे संबंधसूचक अव्यय तीन प्रकारके माने जाते हैं :–(१) **निर्विभक्तिक संबंधसूचक अव्यय**––जिनका प्रयोग ने, से, को आदि कारक विभक्तियोंके बिना ही होता है। जैसे––सहित, रहित आदि। (२) **सविभक्तिक संबंधसूचक अव्यय**––जिनका प्रयोग कारक विभक्तियोंके बिना नहीं होता। जैसे पास, वास्ते आदि। (३) **उभयविधि संबंध सूचक अव्यय**––जिनका प्रयोग कारक विभक्तियोंके साथ तथा उनके बिना दोनों ही प्रकारसे होता है। जैसे द्वारा, बिना आदि। इनमें प्रथमको **स्वतंत्र संबंधसूचक अव्यय**, दूसरेको **संबद्ध संबंध सूचक अव्यय या परतंत्र-संबंध सूचक अव्यय** भी कहते हैं। तीसरेको **अर्धाधीन संबंधसूचक अव्यय** या **अर्ध-स्वतंत्र-संबंधसूचक अव्यय** भी कहते हैं। कुछ लोगोंने एक **अनुबद्ध संबंधसूचक अव्यय**का भी उल्लेख किया है। ये संज्ञा आदिके विकृत रूपके साथ आते हैं। जैसे–'किनारे तक'में किनारे विकृत रूप है। अतः 'तक' अनुबद्ध संबंधसूचक है। 'कटोरे भर'में 'भर' भी ऐसा ही है। हिन्दीके संबंधसूचक अव्यय प्रायः संज्ञा आदि शब्दोंके बाद आते हैं, किंतु कभी-कभी पहले भी आते हैं! जैसे––बिना राम मैं नहीं जा सकता। बहुतसे **क्रिया विशेषण** (दे०) भी संबंध-

सूचक अव्ययोंके रूपमें प्रयुक्त होते हैं। उनको लेकर संबंधसूचक अव्ययके अर्थके आधारपर **कालवाचक संबंधसूचक अव्यय** (आगे, पीछे), **स्थानवाचक संबंधसूचक अव्यय** (ऊपर, नीचे, दूर), **दिशावाचक संबंधसूचक अव्यय** (ओर, तरफ) **साधनवाचक संबंधसूचक अव्यय** (द्वारा, ज़रिये), **कारणवाचक संबंधसूचक अव्यय** (कारण, हेतु), **सादृश्यवाचक संबंधसूचक अव्यय** (समान, तरह), **विरोधवाचक संबंधसूचक अव्यय** (प्रतिकूल, विरुद्ध), **विषयवाचक संबंध सूचक अव्यय** (मद्धे, बावत), **व्यतिरेक वाचक संबंधसूचक अव्यय** (बिना, वग़ैर), **विनिमय, वाचक संबंध सूचक अव्यय** (वदले, जगह), **सहचारवाचक संबंधसूचक अव्यय** (साथ, संग), **तुलनावाचक संबंधसूचक अव्यय** (सामने, अपेक्षा), **सीमावाचक संबंधसूचक अव्यय** (तक, पर्यन्त, लौं), **संग्रहवाचक संबंधसूचक अव्यय** (भर) आदि अनेक भेद किये जा सकते हे।

हिन्दी संबंधसूचक अव्यय व्युत्पत्तिके आधारपर दो वर्गोंमें रखे गये हैं :–(क) **मूल संबंधसूचक अव्यय** जैसे––बिना, पर्यन्त, (ख) **यौगिक** या **सन्धित संबंधसूचक अव्यय**––जो संज्ञा, विशेषण, क्रिया आदिसे वनाये गये हों ; जैसे––वास्ते (संज्ञा), मारे (क्रिया) आदि।

जो शब्द मूलतः संज्ञा, विशेषण क्रिया या क्रिया विशेषण हैं, किन्तु कभी-कभी काम संबंधसूचक अव्ययका करते हैं, उन्हें **सांज्ञिक संबंधसूचक अव्यय** (ओर, नाम), **वैशेषणिक संबंधसूचक अव्यय** (समान, तुल्य), **क्रिया विशेषण संबंधसूचक अव्यय** (भीतर, पास) तथा **क्रियामूलक संबंधसूचक अव्यय** (जान) कहा जा सकता है। जो कृदंत संबंधसूचक अव्ययका काम करते हैं, उन्हें **कार्दन्तिक संबंधसूचक अव्यय** (छोड़कर) कहा गया है। कभी-कभी एकसे अधिक शब्द एक साथ संबंधका बोध कराते हैं। जैसे राम **के में से** ले लो। ऐसे अव्यय **सामूहिक संबंधसूचक अव्यय** या **संबंधसूचक वाक्यांश** कहे जा सकते हैं। (दे०) अव्यय।

संबंधसूचक वाक्यांश––(दे०) **संबंधसूचक अव्यय**।

संबंधसूचक सर्वनाम––(दे०) **सर्वनाम**।

संबद्ध भाषाएँ (related language)––वे भाषाएँ, जो एक दूसरेसे पारिवारिक संबंध रखती हों। दूसरे शब्दोंमें वे भाषाएँ जो एक ही **मूल भाषा** (दे०)से निकली हों।

संबद्ध संबंधसूचक अव्यय––(दे०) **संबंधसूचक अव्यय**।

संबोधन कारक––(दे०) **कारक**।

संभावनार्थ––(दे०) **अर्थ**।

संभावनासूचक वाक्य––ऐसा वाक्य, जिसमें किसी कार्य या बातके होनेमें निश्चयका भाव न हो, अपितु संभावनामात्र हो। जैसे––उसने काम समाप्त कर दिया होगा।

संभाव्य भविष्य––(दे०) **काल**।

संभाव्य भूत––(दे०) **काल**।

संभाव्य वर्तमान––(दे०) **काल**।

संमात्रा––(दे०) **मात्राग्राम**।

संयुक्त काल––(दे०) **काल**।

संयुक्त-क्रिया––(दे०) **क्रिया**।

संयुक्त ध्वनि (compound sound)––दो मूल ध्वनियोंके योगसे बनी ध्वनि। इनके उच्चारणमें उच्चारण अवयव एक ध्वनिका उच्चारण करके (पूर्ण या अपूर्ण) तुरत दूसरी ध्वनिका उच्चारण करते हैं। त्स, प्ट, ऐसी ही ध्वनियाँ हैं। डैनियल जोन्स संयुक्त ध्वनिका प्रयोग थोड़े भिन्न अर्थमें करते हैं। उनके अनुसार क, प, ट, ब आदि स्पर्श ध्वनियाँ संयुक्त हैं। यहाँ निश्चय ही उनका ध्यान, ध्वनिकी अखंडतापर नहीं, अपितु उच्चारण की केवल चल स्थितिपर है।

संयुक्त ध्वनिग्राम (compound phoneme)––दो या दोसे अधिक मूल ध्वनिग्रामोंका संयुक्त रूप। जैसे, संयुक्तस्वर।

संयुक्त रूप ग्राम––एक प्रकारका **रूपग्राम** (दे०)।

संयुक्त वाक्य––(दे०) **वाक्यमें वाक्योंके प्रकार** उपशीर्षक।

संयुक्त विधेय (compound predicate) —एक ही वाक्यमें प्रयुक्त दो विधेय । जैसे— वह आता है और जाता है ।

संयुक्त व्यंजन—ऐसे व्यंजन जो असंयुक्त या एक न हों, अपितु एकसे अधिक व्यंजनोंके मिलनेसे बने हों । जैसे—क्त, प्व, ल्य आदि इसमें असमान या दो या अधिक भिन्न व्यंजनोंका योग होता है । इसके विपरीत 'द्वित्व व्यंजनों'में समान व्यंजन संयुक्त होते हैं। जैसे, क्क, प्प, त्त आदि । (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें व्यंजनोंका वर्गीकरण** तथा **संयुक्त व्यंजन** ।

संयुक्त स्वर (dipth thong)—ऐसा स्वर, जो दो या अधिक मूलस्वरों (दे०) से मिलकर बना हो । विशेष विवरणके लिए देखिये **ध्वनियोंके वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण, श्रुति और संयुक्त स्वर** उपशीर्षक ।

संयुक्त स्वरकिरण (diphthongization) —मूल स्वरका संयुक्त स्वर हो जाना, या कर देना । वस्तुतः करनेको संयुक्त स्वरीकरण तथा हो जानेको **संयुक्त स्वरी भवन** कहा जाना चाहिये ।

संयोग—इसका शाब्दिक अर्थ है 'मिल जाना'। यदि दो व्यंजनोंके बीच कोई स्वर न हो तो वे मिल जाते हैं। पाणिनि इसीको 'संयोग' कहते हैं—'हलोऽनंतराः संयोगः', (१.१.७)—दो स्वर यदि पास-पास हों तो संयुक्त स्वरके विरुद्ध उन्हें स्वर-संयोग (जैसे आई) कहते हैं।

संयोगप्रधान भाषा—**संयोगात्मक भाषा** (दे०) का एक अन्य नाम ।

संयोगात्मक अन्तर्मुखी श्लिष्ट (synthetic) —**अन्तर्मुखी-श्लिष्ट** (दे०) का एक भेद ।

संयोगात्मक बहिर्मुखी-श्लिष्ट—**बहिर्मुखी-श्लिष्ट** (दे०) का एक भेद ।

संयोगात्मक भाषा (synthetic language)—ऐसी भाषा, जिसमें व्याकरणिक संबंध स्वतंत्र शब्दों (जैसे—परसर्ग, पूर्वसर्ग, सहायक क्रिया) द्वारा प्रकट न किया जाकर संयोगात्मक रूपों (संस्कृतमें—रामः, रामस्य, गच्छति आदि) द्वारा प्रकट किये जायँ । संस्कृत, ग्रीक, लैटिन आदि प्राचीन भाषाएँ इसी प्रकारकी थीं । इन्हें **योगात्मक भाषा** (दे०) या **संश्लेषणात्मक भाषा** भी कहते हैं ।

संयोगात्मक रूप—ऐसे रूप, जिनमें व्याकरणिक संबंधदर्शी तत्त्व जुड़े हों । जैसे—संस्कृत रामः, रामं आदि । इसके विरुद्ध **वियोगात्मक रूप** उन्हें कहते हैं, जिनमें ये तत्त्व जुड़े नहीं होते । जैसे—रामने, रामको आदि । संयोगात्मक रूपको **संश्लेषणात्मक रूप,** तथा **वियोगात्मक रूप**को **अयोगात्मक रूप** या **विश्लेषणात्मक रूप** भी कहते हैं ।

संयोगी भाषा—**योगात्मक भाषा** (दे०) का एक अन्य नाम ।

संयोजक अव्यय—(दे०) **समुच्चयबोधक अव्यय** ।

संयोजक क्रियाविशेषण—(दे०) **क्रियाविशेषण** ।

संयोजक चिह्न—**योजक चिह्न**का एक अन्य नाम । (दे०) **विराम** ।

संरचना (structure)—अक्षर, रूप वाक्य आदि भाषिक इकाइयोंका गठन या उनकी रचना ।

संरचनात्मक रूप विज्ञान (structural morphology)—**रूपविज्ञान** (दे०) का एक भेद ।

संरूप (allomorph)—(दे०) **रूपग्रामविज्ञान** ।

संलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि—एक प्रकारकी **ध्वनि** (दे०) ।

संवार—संस्कृत व्याकरणोंमें एक बाह्य प्रयत्न । कहा गया है—'कंठबिलस्य संकोचः संवारः ।' अर्थात् संवारकी स्थितिमें कंठबिल (स्वरयंत्र मुख) संकुचित रहता है । वस्तुतः यह स्थिति या यह प्रयत्न वही है, जिसे आजकल **घोष** (दे०) कहा जाता है। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें प्रयत्न** उपशीर्षक.।

संवृत्त—इसका शाब्दिक अर्थ है 'ढँका' या 'सँकरा' । (१) संस्कृत व्याकरणमें संवृत

एक आभ्यंतर प्रयत्न है। 'संवृतो घोषवान्' या 'ह्रस्वस्यावर्णस्य प्रयोगे संवृतम्' रूपमें इसे स्पष्ट किया गया है। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें प्रयत्न** उपशीर्षक F (२) आधुनिक कालमें स्वरोंके प्रसंगमें प्रायः इसका प्रयोग होता है। (दे०) **संवृत स्वर**।

संवृत स्वर—एक प्रकारका स्वर। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण** तथा **मानस्वर** उपशीर्षक।

संशयवाचक क्रियाविशेषण—(दे०) **क्रिया विशेषण**।

संश्लेषण (synthesis)—दो या अधिक भाषिक इकाइयोंको मिलाकर कोईएक इकाई (विशेषतः रूप) बनाना।

संश्लेषणात्मक भाषा—**संयोगात्मक भाषा** (दे०)का एक अन्य नाम।

संश्लेषणात्मक रूप—**संयोगात्मक रूप** (दे०)-का एक अन्य नाम।

संस्कार-प्रधान—**श्लिष्ट-योगात्मक** (दे०)का एक अन्य नाम।

संस्कृत—भारतकी एक प्राचीन भाषा। (दे०) **प्राचीन भारतीय आर्य भाषा**।

संस्कृतभव—'तद्‌भव'के लिए प्रयुक्त एक नाम। (दे०) **शब्द**।

संस्कृतयोनि—'तद्‌भव'के लिए चंड द्वारा प्रयुक्त एक नाम। (दे०) **शब्द**।

संस्वन—**संध्वनि** (दे०)का एक अन्य नाम।

संहितज सुर—**सुर** (दे०)का एक भेद।

संहिता—वर्णोंकी अत्यंत समीपता। पाणिनि कहते हैं :—'परः सन्निकर्षः संहिता' (१.४.१०९)। (दे०) **संधि**।

सक (sak)—**थेत** (दे०)का एक अन्य नाम।

सकमेक्रन (sakamekran)—दक्षिणी अमेरिकाके **जे** (दे०) परिवारके उत्तरी वर्गकी एक भाषा।

सकर्मक क्रिया—(दे०) **धातु** तथा **क्रिया**।

सकर्मक धातु—(दे०) **धातु** तथा **क्रिया**।

सक वर्ग (sak group)—**लूई वर्ग** (दे०) का एक अन्य नाम।

सकाजैब (sakajaib)—(१) **हल्लाम** (दे०)की, उत्तरी काचार (असम)में प्रयुक्त, एक बोली। (२) **हल्लाम**के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

सकार—स के लिए प्रयुक्त नाम। (दे०) **कार**।

सकियन—**शक** (दे०) बोलीका एक नाम।

सग्नुम (sagnum)—**कनौरी** (दे०)की एक बोली। इसका अब पता नहीं है।

सजातीय कर्म—(दे०) **क्रिया**।

सजातीय क्रिया (cognate verbs)–(दे०) **क्रिया**।

सजातीय पूरक—(दे०) **क्रिया**।

सतनामी—छत्तीसगढ़के सतनामी चमारोंमें प्रयुक्त **छत्तीसगढ़ी** (दे०)का एक नाम।

सतपरिया (satpariya)—**कोच** (दे०)की, गारो पहाड़ियों (असम) में प्रयुक्त, एक बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या, ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार १,१०० थी।

सतम्—भारोपीय परिवारकी एक शाखा। (दे०) **भारोपीय परिवार** शीर्षकमें **भारोपीय परिवारका विभाजन** उपशीर्षक।

सतलज वर्गकी बोलियाँ—कुलू तथा शिमलाकी पहाड़ियोंमें सतलज नदीके दोनों किनारोंपर प्रयुक्त **पश्चिमी पहाड़ी** (दे०)की बोलियाँ। इसकी प्रमुख बोलियाँ **शोदोची** (दे०) और **बाहरी सिराजी** (दे०) हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इनके बोलनेवालोंकी संख्या ३९,०००से कुछ कम थी।

सती—**मालवी** (दे०)का एक अन्य नाम।

सत्—(१) 'सत्'का अर्थ है विद्यमान। 'शतृ' और 'शानच्' वर्तमानकालिक कृत् प्रत्यय हैं, अतः इन्हें 'सत्' कहा गया है। 'तौ सत्' (पाणिनि, ३.२.१२७) इसी प्रकार 'क्त' और 'क्तवतु'को **निष्ठा** (दे०) कहा गया है। (२) **लट्लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

सदरी (sadri)—**नागपुरिआ** (दे०)का एक अन्य नाम।

सदरी कोल—**पूर्वी मगही** (दे०) का एक स्थानीय रूप, जो बामराके आसपास वहाँके आदिवासियों द्वारा बोला जाता है। ये

आदिवासी 'कोल' जातिके हैं और इन्होंने अपनी भाषा छोड़कर इसे अपना लिया है। जब कोई आदिवासी जाति, अपनी भाषा छोड़कर किसी आर्य भाषाको अपना लेती है तो उसे 'सदरी' कहते हैं। इस सदरीको प्रमुखतः कोल जातिने अपनाया है, अतः इसे 'सदरी कोल' कहते हैं। इसपर 'बंगला'-का कुछ प्रभाव है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४,१९४ थी।

सदान (sadan)—**नागपुरिआ** (दे०)का एक अन्य नाम।

सद्री कोरवा—**छत्तीसगढ़ी** (दे०)की एक उपबोली, जो जशपुरमें बोली जाती है। जब छोटानागपुर या छत्तीसगढ़में कोई आदिवासी जाति अपनी मूल भाषाको छोड़कर आर्य परिवारकी किसी बोलीको अपना लेती है, तो उस बोलीको 'सदरी' या 'सद्री' कहते हैं। जशपुरकी कोरवा जातिके आदिवासियोंने इसी प्रकार 'छत्तीसगढ़ी'को अपना लिया है और इसीलिए उनके द्वारा प्रयुक्त छत्तीसगढ़ी 'सद्री कोरवा' कहलाती है। यह 'सरगुजिया'से बहुत मिलती-जुलती है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४,००० थी।

सधोची (sadhochi)—**शोदोची** (दे०)का एक अन्य नाम।

सनपन (sanapana)—**मस्कोइ** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

सनबिरोन (sanabiron)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक विलुप्त भाषा-परिवार। इसकी प्रमुख भाषा सनविरोक थी। इसकी एक बोली मेचिगन थी।

सन्नंत (desiderative)—ऐसी धातु, जिससे इच्छाका बोध हो। इसे इच्छार्थक धातु भी कह सकते हैं। संस्कृतमें मूल धातुमें इच्छाका अर्थ व्यक्त करनेके लिए 'सन्' प्रत्यय जोड़ते हैं, अतः धातुको सन्नन्त कहते हैं। जैसे—पठ् + सन् = पिपठिष् (पिपठिषति, अर्थात् पढ़ना चाहता है) या गम् + सन् = जिगमिष् (जिगमिषति अर्थात् जाना चाहता है)। इसे **चिकीर्षित** भी कहते हैं।

सन्नतर—(दे०) **अनुदात्ततर**।

सन्निधि—(दे०) **वाक्यमें वाक्यकी आवश्यकताएँ** उपशीर्षक।

सपर (sapara)—**करिब** (दे०)परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

सपरसर्ग कर्ता—(दे०) **कर्ता**।

सपरसर्ग कर्म—(दे०) **कर्म**।

सपुकी (sapuki)—**मस्कोइ** (दे०)परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

सप्तमी—(१) **लिङ् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम। (२) **अधिकरण कारक** (दे०)।

सप्तमी तत्पुरुष समास—(दे०) **समास**।

सप्तमी बहुव्रीहि समास—(दे०) **समास**।

सप्रत्यय कर्त्ता—(दे०) **कर्त्ता**।

सप्रत्यय कर्म—(दे०) **कर्म**।

सप्रवाह (continuant, durative)—ऐसी ध्वनियाँ, जिनका उच्चारण प्रवाह रूपमें या देरतक किया जा सकता है। इसमें संघर्षी, नासिक्य व्यंजन, पार्श्विक लुंठित तथा अर्द्ध स्वर आते हैं। इसे **अनवरुद्ध, प्रवाही, अव्याहत** भी कहते हैं। सच्चे अर्थोंमें स्वर भी सप्रवाह हैं, किंतु प्रायः उनके लिए इसका प्रयोग नहीं किया जाता।

सप्रवाह समुच्चय बोधक (continuative conjunction)—ऐसा समुच्चयबोधक, जो आश्रित उपवाक्यको अनाश्रित या मुख्य उपवाक्यसे जोड़ता है।

सप्राण—**महाप्राण** (दे०)का एक अन्य नाम।

सबरी (sabari)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **हिन्दी** (दे०)का खानदेशमें प्रयुक्त एक रूप।

सबिर (sabir)—भूमध्यसागरके बंदरगाहोंपर प्रयुक्त फ्रांसीसी, इतालवी, ग्रीक, अरबी, प्रावेंशल तथा स्पेनी आदि मिश्रित एक खिचड़ी भाषा।

सबुय (sabuya)—**करिरि**, (दे०) परि-

वारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

समकरण ध्वनि—एक करण ध्वनि (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

समध्वनि-लोप (yaplology)—एक प्रकारका **लोप** (दे०) अंग्रेज़ी नाम haplology अमेरिकन भाषा-विज्ञान विद् ब्लूमफ़ील्डका दिया हुआ है । इसमें haplo तथा logy दो शब्द हैं । ग्रीक haploos का अर्थ है 'एक' और logos का अर्थ है 'कहना' या 'बोलना' या 'जानना' । अर्थात् दोके स्थानपर एक बोलना । किसी शब्दमें यदि दो समान ध्वनियाँ या अक्षर पास पास हों तो प्रायः एक छूट जाता है । जैसे—मूलतः हिन्दीमें शब्द था 'ख़रीददार' किंतु अब हो गया है 'खरीदार' । दो 'द' पास-पास थे, अतः एक छूट गया । यह मुख-सुख या बोलनेकी शीघ्रताके कारण होता है । मुख-सुख इसलिए कि दो ध्वनियाँ पास-पास हों तो, उच्चारणमें सतर्कता बरतनी पड़ती है, अतः कुछ कठिनाई होती है । लैटिनमें एक शब्द था semimodius, बादमें यह मिलता है semodius । इसी प्रकार 'नककटा' से 'नकटा' या part time से partime है । इसे अंग्रेज़ीमें कभी-कभी syllabic syncope, assimilatory condensation तथा syncope भी कहते हैं । हिन्दीमें इसे **समाक्षर लोप** भी कहा गया है ।

समध्वनीय भिन्नार्थक शब्द—एक प्रकारके **शब्द** (दे०) ।

समन्वित रूप—कई वादोंके समन्वयके आधारपर भाषाकी उत्पत्तिके संबंधमें प्रस्तुत स्वीटके मतके लिए प्रयुक्त नाम । (दे०) **भाषाकी उत्पत्ति** ।

समपार्श्व संघर्षी (slit fricative)—एक प्रकारकी संघर्षी ध्वनि । इसके उच्चारणमें जीभके आगेके दोनों किनारे सम या बराबर होते हैं। 'श' इसी प्रकारकी ध्वनि है । **उत्थित पार्श्व संघर्षी** (दे०) में इसके उलटे, किनारे उठे होते हैं । (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें व्यंजनोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक ।

समप्रयत्नीय ध्वनि—एक **प्रयत्नीय ध्वनि** (दे०) का एक अन्य नाम ।

समयबोधक क्रिया विशेषण—(दे०) **क्रिया विशेषण** ।

समयवाचक क्रिया विशेषण—(दे०) **क्रिया विशेषण** ।

समवर्ण लोप (haplography)—लिखनेमें एक ही अक्षर (letter) या अक्षर-समूहके दो बार आनेपर एकका छूट जाना । जैसे—philology के स्थानपर philogy । इसे **आवृत्ति लोप** भी कहते हैं ।

समसुर—**सुर** (दे०) का एक भेद ।

समस्तपदीय अव्यय—(दे०) **अव्यय** ।

समस्त शब्द—एक प्रकारके शब्द । (दे०) **शब्द** ।

समस्वरागम—**आगम**का एक भेद । इसे **अपनिहिति** (दे०) भी कहते हैं ।

समाक्षर-लोप—**समध्वनि-लोप** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

समाक्षरिक (parisyllabic)—बराबर अक्षरवाला (शब्द, छंद आदि) ।

समान—'तत्सम' शब्दोंके लिए भरत मुनि द्वारा प्रयुक्त एक नाम । (दे०) **शब्द** ।

समानताबोधकविशेषण—(दे०) **विशेषण**,

समानाधिकरण—'समानाधिकरण'का अर्थ है 'एक ही आधारके' । इसका प्रयोग कई प्रसंगोंमें होता है । (दे०) **विशेषण**, **समुच्चय बोधक अव्यय** तथा निम्नस्थ शीर्षक ।

समानाधिकरण उपवाक्य—(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक ।

समानाधिकरण तत्पुरुष समास—(दे०) **समास** ।

समानाधिकरण बहुव्रीहि समास—(दे०) **समास** ।

समानाधिकरण विशेषण—(दे०) **विशेषण** ।

समानाधिकरण समुच्चय बोधक—(दे०) **समुच्चयबोधक अव्यय** ।

समानुपातिक विरोध (proportional

opposition)—एकाधिक ध्वनिग्राम-युग्मोंका एकाधारीय विरोध। जैसे—क : ग, च : ज, ट : ड, प : ब। यहाँ इन सारे युग्मोंका विरोध घोष-अघोषपर आधारित है।

समानुपाती संख्यावाचक विशेषण—(दे०) **विशेषण**।

समापिका क्रिया—वह क्रिया, जिससे कार्य या वाक्यकी समाप्ति सूचित होती है। वाक्य या उपवाक्यकी अंतिम क्रिया समापिका ही होती है। समापिका क्रियाको **परिमित क्रिया** (दे०) भी कहते हैं।

समाप्ति-सूचक चिह्न—एक प्रकारका चिह्न, जिसका प्रयोग प्रायः किसी लेख अथवा पुस्तकके अंतमें करते हैं। (दे०) **विराम**।

समावेशी पुरुषवाचक सर्वनाम—**अंतर्भावी पुरुषवाचक सर्वनाम** (दे०)का एक नाम।

समास (compound)—सम्+अस्+घञ्। 'सम' अर्थात् समीप या इकट्ठा; 'अस' अर्थात् फेंकना। अर्थात् 'समास'का शाब्दिक अर्थ है 'समीप फेंकना' या 'दो या अधिक शब्दोंको समीप रखना'। कहा गया है 'पृथगर्थानामेकार्थीभावः समासः।' अर्थात् भिन्नार्थी शब्दोंका एक अर्थमें हो जाना समास है। जब दो या अधिक शब्दोंके आपसी संबंध बतलानेवाले संबंधसूचक शब्दों या प्रत्ययों आदिका लोप करके (या यों ही) उन शब्दोंको मिलाकर एक शब्द बनाया जाता है, तो उस एक शब्दको **सामासिक शब्द** तथा संबंधसूचक शब्दों या प्रत्ययों आदिका लोप करके (या यों ही) इस मिलानेकी क्रियाको **समास** कहते हैं। जैसे—'रसोईका घर' से 'रसोईघर'। सामासिक शब्दोंको तोड़कर उसके बनानेवाले शब्दोंको अलग करना तथा मूल संबंध-सूचक शब्द या प्रत्यय आदि जोड़कर उनका आपसी संबंध दिखलाना **विग्रह** कहलाता है। जैसे—'रसोईघर' सामासिक शब्दका विग्रह होगा 'रसोईका घर'। संस्कृतमें 'सभायाः पतिः'का समास होगा 'सभापतिः' और इसका विग्रह होगा 'सभायाः पतिः'। समास मुख्यतः चार प्रकारके माने गये हैं:—अव्ययीभाव, तत्पुरुष, द्वंद्व, बहुव्रीहि।

(१) **अव्ययीभाव** (adverbial compound)—इस समासमें पहला शब्द प्रायः प्रधान होता है —'पूर्वपदार्थ प्रधानोऽव्ययीभावः'—महाभाष्य। 'अव्ययीभाव'का शाब्दिक अर्थ है, जो अव्यय नहीं था, उसका अव्यय हो जाना'। अर्थात् दोनों शब्द मिलकर अव्यय बन जाते हैं या अव्ययका काम करते हैं। महाभाष्यकार कहता है:—'अनव्ययं अव्ययं भवतीत्यव्ययी भावः'। संस्कृतमें अव्ययीभाव समासमें पहला शब्द प्रायः अव्यय होता है और दूसरा संज्ञा अथवा विशेषण। जैसे—यथाशक्ति। हिन्दीमें इस समासमें प्रायः पहला शब्द संज्ञा या विशेषण आदि होता है। जैसे—रातों रात, हर रोज।

(२) **तत्पुरुष समास** (determinative compound)—महाभाष्यकारके अनुसार 'उत्तरपदार्थ प्रधानस्तत्पुरुषः', अर्थात् जिसमें दूसरा शब्द या उसका अर्थ प्रधान हो। इसमें पहला शब्द प्रायः दूसरे शब्दके विशेषणका कार्य करता है। जैसे—'राजपुत्र'। अर्थात् पहला शब्द या तो विशेषण होता है, या संज्ञा होते हुए भी अर्थकी दृष्टिसे विशेषणका कार्य करता है। 'कृष्णसर्प'में 'कृष्ण' विशेषण है। 'रसोईघर'में 'रसोई' शब्द संज्ञा होते हुए भी 'घर'की विशेषता बतला रहा है, अतः विशेषण है। इसका अर्थ यह भी हुआ कि इसमें उत्तर शब्द विशेष्य होता है। विशेष्य होनेके कारण ही वह प्रधान होता है। 'तत्पुरुष' शब्द स्वयं ('सः पुरुषः' अथवा 'तस्य पुरुषः') तत्पुरुष समासका एक अच्छा उदाहरण है, साथ ही जैसा कि आगे दिया जायेगा, इसमें तत्पुरुषके दो प्रमुख भेदोंका भी उल्लेख है, इसी कारण अत्यंत प्राचीन कालसे ही इस समासको यही नाम (तत्पुरुष) दे दिया गया है। 'तत्पुरुष' शब्दके, जैसा कि ऊपर दिया

गया है, दो अर्थ संभव हैं:--(क) सः पुरुषः, (ख) तस्य पुरुषः । इन्हीं दोनोंके आधार तत्पुरुष समासके मुख्य रूपसे दो भेद हो सकते हैं । 'सः पुरुषः'के आधारपर जो भेद होता है, उसे **समानाधिकरण तत्पुरुष** या **समानाधिकार तत्पुरुष** कहते हैं । इसमें प्रथम और दूसरे, दोनों शब्दोंकी विभक्ति (=अधिकरण या अधिकार) एक या समान होती है । अर्थात् विग्रहमें दोनों शब्दोंमें एक ही विभक्ति लगती है, जैसे 'सः पुरुषः' में है । 'कृष्णसर्पः' (कृष्णः सर्पः) भी इसीका उदाहरण है । समानाधिकरण तत्पुरुषका ही प्रचलित नाम **कर्मधारय समास** (appositional compoud) है । 'तस्य पुरुषः'के आधारपर तत्पुरुष का जो भेद होता है, उसे **व्यधिकरण तत्पुरुष** कहते हैं । व्याकरणोंमें तत्पुरुष नामसे जिस समासका वर्णन होता है, वह वस्तुतः यह व्यधिकरण तत्पुरुष ही होता है । समानाधिकरणके विरुद्ध इसमें प्रथम शब्दकी विभक्ति दूसरेसे भिन्न (अर्थात् व्यधिकरण) होती है, जैसे 'तस्य पुरुषः'में है । राजपुत्र (राजाका पुत्र) या नरेश (नरका ईश) आदि भी इसीके उदाहरण हैं । नीचे क्रमशः दोनों भेदोंको लिया जा रहा है ।

व्यधिकरण तत्पुरुष या तत्पुरुषके प्रथम शब्दमें जिस विभक्तिका लोप होता है, उसीके आधारपर इसके भेद होते हैं । यह लोप द्वितीयासे लेकर सप्तमीतक छः विभक्तियोंका (प्रथमा तथा संबोधनका नहीं) होता है अतः, इसके निम्नांकित छः भेद माने गये हैं ।:--(१) **द्वितीया** या **कर्मतत्पुरुष**--जिसमें प्रथम शब्द द्वितीयाका हो और समास करनेपर कर्म-विभक्तिका लोप हो । जैसे स्वर्गप्राप्त (स्वर्गं प्राप्तः) । (२) **तृतीया** या **करणतत्पुरुष** --जिसमें प्रथम शब्द तृतीयाका हो और समास करनेपर करण-विभक्तिका लोप हो । जैसे ईश्वरदत्त, तुलसीकृत । (३) **चतुर्थी** या **संप्रदान तत्पुरुष**--जिसमें प्रथम शब्द चतुर्थीका हो तथा समास करनेपर उसकी चतुर्थी विभक्तिका लोप हो जाय । जैसे ब्राह्मणहितम्, रसोईघर । (४) **पंचमी** या **अपादान तत्पुरुष**--जिसमें प्रथम शब्द पंचमीमें हो और समास करनेपर उस विभक्तिका लोप हो जाय । जैसे देश-निकाला, जन्मांध, जातिभ्रष्ट । (५) **षष्ठी** या **संबंध तत्पुरुष** --प्रथम शब्द षष्ठीका हो । जैसे राजपुत्र, बैलगाड़ी । (६) **सप्तमी** या **अधिकरण तत्पुरुष**--प्रथम शब्द सप्तमीका हो । जैसे दानवीर, आपबीती । व्यधिकरण तत्पुरुषके इन छः के अतिरिक्त कुछ और भी भेद होते हैं :--(१) **अलुक् समास**--जिस तत्पुरुषमें पहले पदकी विभक्तिका लोप न हो । जैसे युधिष्ठिर, ऊटपटाँग । अलुक् समास करनेका अधिकार सामान्यतः किसीको नहीं है । प्राचीन कालसे जो ऐसे शब्द चले आ रहे हैं, वे ही इसके उदाहरण हैं । वस्तुतः ऐसे शब्द समासकी दृष्टिसे अशुद्ध हैं, जिन्हें परंपरागत होनेके कारण मान्य मान लिया गया है और उन्हें समाहित करनेके लिए तत्पुरुषका एक यह भेद करना पड़ा है । 'अलुक्'का अर्थ है 'अलोप' अथवा 'लोपका अभाव' (२) **उपपद समास** या **उपपद तत्पुरुष**--जब प्रथम शब्द संज्ञा या अव्यय हो तथा दूसरा शब्द कृदंत हो, जिसका स्वतंत्र उपयोग प्रायः न होता हो । जैसे--ग्रंथकार, चर्मकार । प्रथम शब्द उपपद कहलाता है, इसी आधारपर यह उपपद समास कहा गया है । (३) **नञ् तत्पुरुष**--(negative determinative)--निषेध या अभाव आदि अर्थमें जब प्रथम शब्द अ, अन्, न्, ना आदि हो तथा दूसरा संज्ञा या विशेषण हो । जैसे--अधर्म, अनाचार, नास्तिक, नालायक आदि । (४) **प्रादि-तत्पुरुष**--जब पहला शब्द 'प्र' आदि उपसर्गोंमेंसे कोई हो । जैसे--प्रपितामह । (५) **गति तत्पुरुष**--कुछ कृदंतोंके साथ

जब ऊरी आदि कुछ विशिष्ट शब्दोंका समास होता है तो उसे गति तत्पुरुष कहते हैं। इस नामका कारण यह है कि 'ऊरी' आदि निपातोंकी क्रियाके योगमें 'गति संज्ञा मानी गयी है। (दे०) **गति**।

समानाधिकरण तत्पुरुषको जैसा कि कहा गया है कर्मधारय भी ('तत्पुरुषः समानाधिकरणः कर्मधारयः' –पाणिनि १.२.४२) कहते हैं। इसमें दोनों पदोंका अधिकरण अर्थात् उनके आसन और उनकी विभक्तियाँ समान होती है। 'कर्मधारय' नाम क्यों दिया गया है, इसका कोई संतोषजनक उत्तर नहीं मिलता। शाकटायन इस संबंधमें कहते हैं––'विशेषणं व्यभिचारि एकार्थं कर्मधारयश्च'। दूसरे शब्दोंमें विशेषण व्यावर्तक या भेदक है और 'कर्म'का अर्थ है 'भेदक क्रिया'––'कर्मभेदक क्रिया तां धारयति असौ कर्मधारयः'। अर्थात् कर्मधारयका विशेषण विशेष्यको विषेषता प्रदान करके उसे उसकी सामान्य जातिसे अलगाता या भेद करता है, इस भेदक क्रियाको जो धारण करे, वह 'कर्मधारय' है। जैसे 'नीलगाय'में नील शब्द 'गाय'को अनेक रंगोंकी सामान्य गायोंसे अलग कर रहा है। 'नीलगाय' कर्मधारयका उदाहरण है। कर्मधारय दो प्रकारका होता है :––(१)––**विशेषतावाचक कर्मधारय**––जिसमें एक विशेषण विशेष्यकी विशेषता बतलावे। जैसे नीलगाय, महाजन। (२) **उपमावाचक कर्मधारय**––जिसमें उपमान-उपमेयका भाव हो। जैसे चंद्रमुख, अर्थात् चंद्रके समान मुख। यहाँ 'चंद्र' उपमान है और 'मुख' उपमेय।

विशेषतावाचक कर्मधारय निम्नांकित ८ प्रकारके हो सकते हैं :––(१) **विशेषण-पूर्वपद कर्मधारय**––जिसमें विशेषण विशेष्यके पूर्व आवे। जैसे––नीलोत्पल, रक्तकमल, खड़ीबोली। (२) **विशेषण-उत्तरपद कर्मधारय**––जिसमें विशेषण विशेष्यके बादमें आवे। जैसे–पुरुषोत्तम, मुनिवर। (३) **विशेषण-उभयपद कर्मधारय**––जिस दोनों ही शब्द विशेषण हों। जैसे––'चराचर (जगत्), श्यामसुन्दर। वैयाकरणोंने इसे तत्पुरुषके अंतर्गत माना है, किंतु मैं इसे माननेके पक्षमें नहीं हूँ। या तो द्वन्द्वका एक भेद इसे माना जा सकता है, या फिर ऐसे समास, जो परंपरागत समासोंमें नहीं आते, उनके लिए समासके कुछ नये भेद माने जा सकते हैं। (४) **विषय पूर्वपद कर्मधारय**––जिसमें 'विषय' पहले हो। जैसे–धर्मबुद्धि (धर्मविषयक बुद्धि)। (५) **अव्यय पूर्वपद कर्मधारय**–जिसमें अव्यय हो, किंतु जो विशेषणका कार्य कर रहा हो। जैसे निराशा, दुकाल। इसे **उपसर्ग पूर्वपद कर्मधारय** भी कह सकते हैं। (६) **संख्या पूर्वपद कर्मधारय**––जिसमें पहले संख्यावाची शब्द हो ('संख्यापूर्वो द्विगुः'––पाणिनि, २.१.३२) तथा पूरेसे एक समूहका बोध हो। जैसे–त्रिभुवन, पंचवटी। इसीको **द्विगु समास** (numeral appositional compound) भी कहते है। द्विगु शब्द स्वयं (द्वि = दो + गो = गाय) इसका अच्छा उदाहरण है, इसीलिए इसे यह नाम दिया गया है। (७) **मध्यम–पद-लोपी तत्पुरुष**––ऐसे समास, जिनके मध्यसे किसी ऐसे पदका लोप हो गया हो, जिसे सामान्यतः रहना चाहिये। जैसे 'शाकप्रियः पार्थिवः'का 'शाक पार्थिवः' या 'देवपूजकः ब्राह्मणः'का 'देवब्राह्मणः'। इसके उदाहरण परंपरागत रूपसे चले आ रहे हैं। यों इस प्रकार लोप करनेका अधिकार सामान्यतः किसीको है नहीं। हिन्दीमें गुड़म्बा (गुड़में उबाला आम) आदि इसके उदाहरण हो सकते हैं। (८) **मयूर-व्यंसकादि तत्पुरुष**––समासके सामान्य-नियमोंका उल्लंघन करनेवाले शब्दोंको 'मयूर व्यंसकादि' नामसे पाणिनि (२.१.७२) ने अलग रखा है। 'मयूरव्यंसक' इसका उदाहरण होनेसे यह नाम पड़ा है। उदाहरण हैं––व्यंसकः मयूरः = मयूर-

व्यंसकः (चालाक मोर), अन्यो ग्रामः = ग्रामान्तरम् ।

उपमावाचक कर्मधारयके चार भेद होते हैं:—(१) **उपमान-पूर्वपद कर्मधारय**—जिसमें उपमान पहले हो। जैसे चंद्रमुख, घनश्याम, प्राणप्रिय। (२) **उपमान-उत्तर-पद कर्मधारय**—जिसमें उपमान बादमें हो। जैसे चरणकमल, मुखकमल। (३) **अवधारणा-पूर्वपद-कर्मधारय**—जब समासमें उत्तरपदका अर्थ पूर्वपदके अर्थपर अवलंबित हो। बुद्धिबल, धर्मसेतु। (४) **अवधारणा उत्तरपद कर्मधारय**—जहाँ पूर्वपदका अर्थ उत्तरपदपर अवलंबित हो। जैसे भ्रष्टबुद्धि। तत्त्वतः ये तीसरे, चौथे भेद इस प्रकार माने तो गये हैं, किंतु इन्हें ऊपरके कुछ अन्य भेदोंमें भी समाहित किया जा सकता है। (३) **द्वंद समास** (copulative compound)—जब दो या अधिक संज्ञाएँ हों और उनके बीचसे और, च, अथवा या इसी अर्थका कोई और शब्द लुप्त करके उन्हें जोड़ दिया गया हो। पाणिनि कहते हैं 'चार्थे द्वन्द्वः' (२.२.२९)। उदाहरणार्थ, राधाकृष्ण, माँ-बाप (माँ और बाप) आदि। द्वंद्व समासमें दोनों ही शब्द या पद प्रधान होते हैं—'उभयपदार्थप्रधानो द्वन्द्वः'—महाभाष्यकार। 'द्वंद्व' शब्दका अर्थ है युगल, जोड़ा या मिथुन। इस समासमें प्रायः शब्दोंका जोड़ा रहता है, इसीलिए यह नाम पड़ा है। द्वंद्व समास तीन या चार प्रकारका हो सकता है :-(१) **इतरेतर द्वन्द्व**—जब दो या अधिक संज्ञाएँ इस समासके बावजूद अपना व्यक्तित्व या प्रधानत्व रखें। जैसे-राधाकृष्ण, तन-मन-धन। (२) **समाहार द्वन्द्व**—जब दो या अधिक संज्ञाएँ मिलकर एक समाहारका बोध करावें, अर्थात् उनसे उनके अपने अर्थके अतिरिक्त उसी प्रकारके और अर्थ भी सूचित हों। जैसे, आहार-निद्रा-भय, अर्थात् जीवोंके सभी धर्म। कपड़े-लत्ते, काम-काज, बाल-बच्चा आदि भी इसी प्रकारके द्वन्द्व हैं। (३) **वैकल्पिक द्वन्द्व**—जब समास 'अथवा' या इसी अर्थके अन्य शब्दोंका लोप करके बनाया गया हो। जैसे-धर्माधर्म, दो-चार, भला-बुरा आदि। संस्कृतमें (४) **एकशेष द्वन्द्व** नामसे द्वन्द्वका एक और भेद भी माना गया है। इसमें दो या अधिक शब्दोंमें समास रहनेपर केवल एक ही शेष रह जाता है। जैसे—'माता च पिता च'का 'पितरौ'। वस्तुतः इसमें जब एक ही शब्द या पद शेष रह जाता है तो बाह्य प्रत्यक्ष दृष्टिसे इसे समास मानना चिंत्य है। हाँ, आंतरिक दृष्टिसे अवश्य इसे द्वन्द्व कहा जा सकता है। भट्टोजि दीक्षित भी सिद्धांतकौमुदीके सर्वसमासशेष प्रकरण (२२)में इसके समास होनेपर प्रश्नवाचक चिह्न लगाते ज्ञात होते हैं।

(४) **बहुव्रीहि समास** (attributive-compound)—जब दोनों शब्द मिलकर अपनेसे भिन्न किसी संज्ञाके विशेषण हों तथा जिसमें कोई भी शब्द प्रधान न हो ('अन्य पदार्थ प्रधानो बहुव्रीहिः'—पतञ्जलिः), उसे बहुव्रीहि कहते हैं। जैसे—'दशानन' (दस मुंह हैं जिसके अर्थात् 'रावण')। 'बहुव्रीहि'का शाब्दिक अर्थ है, 'जिसके पास बहुत चावल हो'। 'बहु' और 'व्रीहि' दोनों शब्द मिलकर किसी तीसरेकी विशेषता बतला रहे हैं। इस प्रकार 'बहुव्रीहि' शब्द 'बहुव्रीहि समास'-का एक अच्छा उदाहरण है, इसी कारण समासके इस भेदको यही नाम (बहुव्रीहि) दे दिया गया है। बहुव्रीहि और तत्पुरुषमें अंतर यह है कि प्रथममें दोनों शब्द मिलकर किसी तीसरे शब्दके विशेषण होते हैं, जैसे 'चतुरानन', किंतु दूसरेमें उक्त समासमें ही विशेषण और विशेष्य दोनों होते हैं, जैसे 'चंद्रमुख' या 'रक्तकमल'। बहुव्रीहि समासके कई आधारोंपर कई भेद हो सकते हैं। कुछ प्रमुख भेद आधारोंके संकेतके साथ नीचे दिये जा रहे हैं:—**अधिकरणके आधारपर**:—इस आधारपर बहुव्रीहि दो प्रकारका होता

है :—(१) **समानाधिकरण बहुव्रीहि**—वह, जिसमें दोनों ही शब्द एक ही कारकके हों, या विग्रह करनेपर दोनों शब्दोंके साथ एक ही विभक्ति लगे। जैसे 'दशानन' या 'पीतांबर'। (२) **व्यधिकरण बहुव्रीहि**—जिसमें दोनों शब्दोंके कारक या उनकी विभक्ति एक न हो। संस्कृतमें प्रायः इसमें एक शब्द प्रथमामें होता है और दूसरा षष्ठी या सप्तमीमें। जैसे—चंद्रशेखर = चन्द्रः शेखरे यस्य सः = शंकरः। हिंदी 'सतखंडा' भी इसी प्रकारका है। समानाधिकरण बहुव्रीहिके विभक्तियों या कारकोंके आधारपर ६ भेद हो सकते हैं :—(१) **द्वितीया** या **कर्म** बहुव्रीहि—प्राप्तोदक (प्राप्तोदक ग्राम)। (२) **तृतीया** या **करण बहुव्रीहि**—कृतकार्य (किया गया है कार्य जिसके द्वारा)। (३) **चतुर्थी** या **संप्रदान बहुव्रीहि**—दत्तधनः (पुरुषः) (४) **पंचमी** या **अपादान बहुव्रीहि**—निर्जन (गाँव)। (५) **षष्ठी** या **संबंध बहुव्रीहि**—पीतांबर (कृष्ण), (६) **सप्तमी** या **अधिकरण बहुव्रीहि**— व्यंजनांत (शब्द)।

बहुव्रीहिके उपर्युक्त अधिकरण तथा विभक्तियोंके आधारपर थे। पदोंके स्थान या उनके अर्थ आदिके आधारपर बहुव्रीहिके निम्नांकित अन्य भेद किये जा सकते हैं :—(१) **विशेषण पूर्वपद**—जिसमें विशेषण पहले हो। जैसे पीतांबर, मिठबोला। (२) **विशेषण-उत्तरपद**—युद्धप्रिय, सिरफिरा। (३) **उपमान पूर्वपद**—चंद्रमुखी, वज्रांग। (४) **विषय पूर्वपद**—अहमभिमान ('अहं' अर्थात् मैं, यह है अभिमान जिसको)। (५) **अवधारणा पूर्वपद**—ज्ञान बल (ज्ञान ही है बल जिसका)। (६) **मध्यम पदलोपी**—मीनाक्षी (मीनकी तरह आँख हैं जिसकी.)। (७) **नञ् बहुव्रीहि**—अनाथ (नाथ नहीं है जिसका), निर्धन। (८) **संख्या पूर्वपद**—पंचानन, दशानन। (९) **संख्या-उत्तरपद**—त्रिसप्त (तीन है सात जिस संख्यामें अर्थात् २१)। (१०) **सह बहुव्रीहि**—सपरिवार (व्यक्ति)। (११) **दिगंतराल बहुव्रीहि**—पूर्वोत्तर (दिशा)। (१२) **व्यतिहार बहुव्रीहि**—जिससे दो व्यक्तियों या दलों आदिमें व्यतिहार, विनिमय, बदला, मारपीट आदि प्रकट हो। जैसे—हाथापाई, मारामारी। कामताप्रसाद गुरु तथा कुछ अन्य लोगोंने इसे बहुव्रीहि माना है, किंतु मैं समझता हूँ कि यह मत चिंत्य है। बहुव्रीहि अंततः किसी अन्यका विशेषण होता है, किंतु इसके उदाहरणस्वरूप जितने भी उदाहरण दिये जाते हैं, प्रायः सभी संज्ञा होते हैं। इसे वस्तुतः समाहार द्वन्द्व माना जाना चाहिये। (१३) **प्रादि अव्ययपूर्व** या **उपसर्गयुक्त बहुव्रीहि**—जिसके आरंभमें प्रादि अव्यय या उपसर्ग हो। जैसे—विधवा (स्त्री), कुरूप। इस प्रकारके और भी भेद-विभेद किये जा सकते हैं।

समासके अन्य भी कई भेद-विभेद मिलते हैं। जैसे—संस्कृतमें एक प्रकारके समासको **नित्य समास** कहा गया है। इनका अपने पदोंसे विग्रह नहीं होता—'अस्वपद विग्रहो नित्यसमासः'। जैसे 'जीमूतस्येव'। ऊपर हमने देखा कि समास मूलतः चार हैं :—अव्ययीभाव, तत्पुरुष, द्वन्द्व और बहुव्रीहि। तत्पुरुषके एक भेद 'कर्मधारय' तथा कर्मधारयके एक भेद 'द्विगु', इन दोको उपर्युक्त चारमें मिलाकर सामान्यतः समासके छः भेद कहे जाते हैं : —'द्वन्द्वो द्विगुरपि चाहं मद्गेहे नित्यमव्ययीभावः। तत्पुरुष कर्मधारय येनाहं स्याम-बहुव्रीहिः ['मैं जोड़ा (सपत्नीक) हूँ, मेरे पास दो गायें हैं, किंतु मेरे घरमें सदा व्ययका अभाव अर्थात् धनाभाव है, इसलिए हे पुरुष ! कोई ऐसा उपाय करो जिससे मैं बहुत चावलोंवाला अर्थात धनी बन जाऊँ]।

समास प्रधान—प्रश्लिष्ट योगात्मक (दे०)-का एक अन्य नाम।

समास-प्रधान भाषा—प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषा

(दे०) या **पूर्ण प्रश्लिष्ट-योगात्मक भाषा** (दे०) का एक अन्य नाम।

समाहार द्वंद्व समास—(दे०) **समास**।

समीकरण (assimilation)—एक प्रकार-का ध्वनि-परिवर्तन। (दे०) **ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ**। इसमें एक ध्वनि दूसरी ध्वनिको प्रभावित कर अपना रूप दे देती है, जैसे संस्कृत चक्रसे प्राकृत चक्क हो गया है। यहाँ क् ने ट् को प्रभावित करके क् बना लिया। **सावर्ण्य, सारूप्य** तथा **अनुरूपता** भी इसके अन्य नाम हैं। समीकरण दो प्रकारका होता है:—(१) व्यंजनका, और (२) स्वरका। इन दोनोंके ही दो-दो उपभेद होते है—(क) पुरोगामी (ख) पश्चगामी। इनमेंसे प्रत्येकके **पार्श्ववर्ती** और **दूरवर्ती** विभेद भी हो सकते हैं। (१) **व्यंजन**—(क) **दूरवर्ती पुरोगामी व्यंजन समीकरण** (incontact progressive assimilation)—इसमें दो ध्वनि पास न रहकर दूर-दूर रहती है और पहली ध्वनि दूसरीको प्रभावित करती है। इसके उदाहरण अधिक नहीं मिलते। संस्कृतका शब्द 'भ्रष्ट' भोजपुरी आदि कुछ ग्रामीण बोलियोंमें 'भरमट' हो गया है। **(ख) पार्श्ववर्ती पुरोगामी व्यंजन समीकरण** (contact progresive assimilation)—इसमें ध्वनियाँ पास-पास होती हैं। इसके उदाहरण प्राकृतमें पर्याप्त संख्यामें मिलते हैं। चक्र = चक्कः, पद्म—पद्द; व्याघ्र = बाघ्घ; मुक्त = मुक्क; लग्न = लग्ग; यस्य = जस्स; तक्र तक्क; वक्र = वक्त; हिन्दीमें 'चक्र'से चक्का तथा 'पत्र'से 'पत्ता' इसके अच्छे उदाहरण हैं। **(ग) दूरवर्ती पश्चगामी व्यंजन समीकरण** (incontact regressive assimilation)—इसमें दूसरी ध्वनि पहली ध्वनिको प्रभावित करती है। इसके उदाहरण भी अधिक नहीं मिलते। लैटिन pequo = quequo; pique = quique; खरकट = करकट; नील = लील; लैकड़बग्घा = **समीकरण** बगड़बग्घा। **(घ) पार्श्ववर्ती पश्चगामी व्यंजन** (contact regressive assimilation)—इसके उदाहरण प्राकृतमें बहुत अधिक मिलते हैं। कर्म = कम्म; धर्म = धम्म; सर्प = सप्प; दुग्ध = दुध्ध (दुद्ध); भक्त = भत्त; श्रेष्ठ = सेठ्ठ; दुर्गा = दुग्गा। हिन्दीमें भी शर्करा = सक्कर या कलक्टर = कलट्टर जैसे कुछ उदाहरण मिल जाते है। (२) **स्वर**—**(क) दूरवर्ती पुरोगामी स्वर समीकरण**—ऊपरके व्यंजन-नियमकी भाँति इसमें भी प्रथम स्वर दूसरेको प्रभावित करता है। सूरज = (भोजपुरी) सुरुज। अं० इस (is) = इज़ (iz)। इसमें 'इ' घोष है, उसने अघोष व्यंजन (स) को प्रभावित करके घोष (ज़) बना लिया। यहाँ स्वरने व्यंजनको प्रभावित किया है। **(ख) पार्श्ववर्ती पुरोगामी स्वर समीकरण**—साधारणतया शब्दमें स्वर पास-पास नहीं रहते। अधिकतर दो स्वरोंके बीचमें एक व्यंजन पाया जाता है। इसीलिए इसके उदाहरण प्रायः नहीं मिलते। प्राकृतकी अंतिम अवस्थामें अधिकतर शब्दोंमें स्वर-प्राधान्य था। यदि खोज हो तो इसके उदाहरण उस कालके साहित्यमें मिल सकते हैं। समझनेके लिए कल्पित उदाहरण लिये जा सकते हैं:—अउर = अअर, आइए = आइइ। **(ग) दूरवर्ती पश्चगामी स्वर समीकरण**—अँगुलि = उँगुली; इक्षु = उक्खु; आदमी = अदमी; अदिमी = इदिमी (भोजपुरी)। **(घ) पार्श्ववर्ती पश्चगामी स्वर समीकरण**—पुरोगामीकी ही भाँति इसके उदाहरण भी प्रायः नहीं मिलते। **(ई) पारस्परिक व्यंजन समीकरण** (mutual assimilation)—उपर्युक्त आठ प्रकारके समीकरणोंके अतिरिक्त एक प्रकार-का और समीकरण होता है। इसे हम अधिकतर व्यंजनोंमें पाते हैं। दो पार्श्ववर्ती व्यंजन एक दूसरेको प्रभावित करते हैं और इस पारस्परिक प्रभावके कारण दोनों ही परिवर्तित हो जाते हैं और एक तीसरा व्यंजन वहाँ आ जाता है। जैसे विद्युत् = बिजली;

सत्य=सच, साँच; कर्तरिका=कटारी; बुद्धि=बूझ; सार्द्ध=साढ़े; अनाद्य=अनाज; युद्ध=जूझना; वाद्य=वाजा। समीकरण का उलटा **विषमीकरण** (दे०) होता है।

समीकारी ध्वनि (assimilatory sound) --ऐसी ध्वनि, जो किसी दूसरी ध्वनिको अपने समान बना ले या समीकृत कर ले। (दे०) **समीकरण**। कलक्टरसे कलट्टरमें 'ट' **समीकारी व्यंजन** (assimilatory consonant) है। इसी प्रकार **समीकारी स्वर** (assimilatory vowel) भी हो सकता है। समीकारी ध्वनि यदि ध्वनिग्राम (phoneme) हो तो उसे **समीकारी ध्वनिग्राम** (assimilatory phoneme) कहते हैं।

समीकारी ध्वनिग्राम--(दे०) **समीकारी ध्वनि**।

समीकारी व्यंजन--(दे०) **समीकारी ध्वनि**।

समीकारी स्वर--(दे०) **समीकारी ध्वनि**।

समुकु (samuku) --**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०) का एक भाषा-परिवार। इस परिवारमें लगभग १६ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख **चमकोको**, **सोरोटोको**, **उगरनो** तथा **चिरकुआ** आदि हैं।

समुच्चयबोधक--(दे०) **अव्यय**।

समुच्चयबोधक अव्यय (conjunction) --जो अव्यय शब्द दो शब्दों, वाक्यखंडों या वाक्योंको जोड़ते हैं, उन्हें समुच्चयबोधक कहते हैं। जैसे और (राम और श्याम जा रहे हैं)। इसे **उभयान्वयी** या **योजक अव्यय** भी कहते हैं। समुच्चयबोधकके मुख्य भेद दो हैं :–(१) **समानाधिकरण** और (२) **व्यधिकरण**। जो समुच्चयबोधक दो प्रधान वाक्योंको मिलाते हैं, उन्हें **समानाधिकरण समुच्चयबोधक** कहते हैं। जैसे, राम गया **और** घड़ी ले आया। जो समुच्चयबोधक **प्रधान वाक्य** (दे०) से एक या अधिक **आश्रित वाक्य** या **गौण वाक्य** जोड़ते हैं, उन्हें **व्यधिकरण समुच्चयबोधक** कहते हैं। समानाधिकरण समुच्चयबोधक प्रमुखतः चार प्रकारके होते हैं :– (क) **संयोजक** (copulative)--जो दो शब्दों अथवा वाक्यों आदिको जोड़ते हैं। जैसे और, तथा। (ख) **विभाजक** या **वियोजक** (alternative)--यह संयोजकका उलटा है। इन अव्ययोंसे दो या अधिक शब्दों या वाक्योंमेंसे एक या अधिकका त्याग होता है। जैसे **या** राम **या** मोहन, **न** राम **न** मोहन, **चाहे** वह **चाहे** तुम आदि। (ग) **विरोधदर्शक** (adversative)--ये अव्यय दो वाक्योंमें पहलेका दूसरेके द्वारा निषेध करते हैं या उसकी न्यूनता प्रकट करते हैं। जैसे, चमड़ी चली जाय **पर** दमड़ी न जाय। (घ) **परिणामदर्शक** (illative या inferential)--पहले वाक्यमें कारण बतलाकर प्रायः इनके द्वारा दूसरे वाक्यमें परिणाम या फल दिखलाया जाता है। जैसे, वह आ गया **अतः** तुम जाओ। इसलिए, सो भी परिणामदर्शक हैं। इन्हें **फलदर्शक** भी कहते हैं।

व्यधिकरण समुच्चयबोधक भी चार प्रकारके होते हैं :--(क) **कारणवाचक** (causative)--जब प्रधान वाक्यमें फल या परिणाम बताकर गौणमें उसका कारण बताया जाय तो दोनोंको जोड़नेवाला समुच्चयबोधक कारणवाचक कहलाता है। जैसे, मैं आपसे कुछ नहीं लूंगा **क्योंकि** आप अपने हैं। (ख) **उद्देश्यवाचक**--इस वर्गके समुच्चयबोधकके बाद आनेवाला वाक्य पहलेका उद्देश्य सूचित करता है। जैसे ताकि (पढ़ो, ताकि पास हो जाओ), कि आदि। (ग) **संकेतवाचक** (correlative)--ये संबंधवाचक सर्वनामकी भाँति साथ आते हैं। पहला गौण वाक्यमें आता है। इनसे शर्त, संकेत आदिका बोध होता है। जैसे--यदि..तो (यदि पास होना चाहता है तो पढ़), यद्यपि ... तथापि। इसे **संबंधवाचक समुच्चयबोधक** भी कहते हैं। (घ) **स्वरूपवाचक** (descriptive)--जो समुच्चयबोधक पहले कहीं गयी बातका स्पष्टीकरण या वर्णन करते हैं। जैसे पानी,

कि (उसने कहा कि वह जायगा; मुझे लगता है कि कहीं वह मर न जाय), मानो आदि ।

समुदायबोधक विशेषण—(दे०) **विशेषण** ।

समुदायवाचक प्रत्यय—(दे०) **प्रत्यय** ।

समुदायवाचक विशेषण—(दे०) **विशेषण** ।

समुदाय संख्यावाचक विशेषण—(दे०) **विशेषण** ।

समूहबोधक संज्ञा—(दे०) **समूहवाचक संज्ञा** ।

समूहबोधक सर्वनाम—(दे०) **सर्वनाम** ।

समूहवाचक विशेषण—(दे०) **विशेषण** ।

समहवाचक संज्ञा—(दे०) **संज्ञा** ।

समैन (samaina)—**आओ** (दे०) का दूसरा नाम ।

समेरिटन लिपि—**प्राचीन हिब्रू लिपि** (दे०)-का एक रूप ।

समैरितन (samaritan)—आरमेइककी पश्चिमी बोली ।

समोंग (samong)—**फोन** (दे०) की एक बोली ।

समोई—**पॉलिनेशियन परिवार** (दे०) की समोआ द्वीपोंमें प्रयुक्त एक भाषा । इसे **समोअन** भी कहते हैं ।

समोयद (samoyed)—**यूराल-अल्ताई** (दे०) परिवारकी एक भाषा, जो एशियाई रूसमें येनिसेई नदीके आसपास लगभग ११ हज़ार लोगों द्वारा बोली जाती है। इसके अंतर्गत **येनिसेई समोयद**, **ओस्त्यक समोयद** तथा **दक्षिणी समोयद**, ये तीन बोलियाँ आती हैं । दक्षिणी समोयदको **कमासिन** या **सयन समोयद** भी कहते हैं । समोयदभाषी अपनी भाषाको **नेनेट्स** कहते हैं । समोयद, **समोयदिक** (बोलनेवाले लगभग २१ हज़ार) वर्गकी एक शाखा है, जिसमें समोयदके अतिरिक्त **यूरक** (yurak), ताग्वी (tagvy) आदि भी हैं।

समोयदिक—यूराल-अल्ताई परिवारका एक वर्ग । (दे०) **समोयद** ।

सम्चू (samchu)—**कनौरी** (दे०) की एक बोली । इसका अब पता नहीं है ।

सयन—**दक्षिणी समोयद** (दे०) बोलीका एक अन्य नाम ।

सर (sara)—**सूडान वर्ग** (दे०) की 'सर' नामक जातिमें प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा । इसका क्षेत्र केमरूनमें शारी नदीके आसपास है ।

सरकोल्ले (sarakolle)—**सूडान वर्ग** (दे०)-की नाइजर तथा सेनेगल नदियोंके पास प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा ।

सरगुजिया—(दे०) **सुरगुजिया** ।

सरन (saran)—**पलौंग** (दे०) का एक रूप ।

सरल रोमिक—**आयत रोमिक** (दे०) का नाम ।

सरल वाक्य—**साधारण वाक्य** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

सरवारिया—**उत्तरी-भोजपुरी** (दे०) का एक स्थानीय रूप, जो पश्चिमी गोरखपुर तथा बस्तीके आसपास, सरयू नदीके उत्तर स्थित 'सरवार' या 'सरुवार' (सरयू+पार) नामक प्रदेशके एक भागमें बोला जाता है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३३,५३,१५१ थी ।

सरवाड़ी—'पूर्वी मारवाड़ी' के एक रूप **मेवाड़ी** (दे०) का एक स्थानीय रूप, जो किशनगढ़के दक्षिणमें सरवाड़में तथा उसके आसपास बोला जाता है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग १५,००० थी ।

सरहिंदी—**खड़ीबोली** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

सराकी (saraki)—पश्चिमी **बंगाली** (दे०)-का, रांचीकी जैन जातिमें प्रयुक्त एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४८,१२७ थी ।

सराफ़ी लिपि—गुजरातमें प्रयुक्त एक लिपि । गुजराती भाषाके लिए प्रयुक्त यह लिपि बहुत ही अपूर्ण है । प्रमुखतः सराफ़ों द्वारा प्रयुक्त होनेके कारण इसका यह नाम पड़ा है । इसके **बनयई** तथा **बोडिया** नाम भी हैं। इस लिपिका विकास प्राचीन नागरीके पश्चिमी-दक्षिणी रूपसे हुआ है ।

सरावकी (sarawaki)—**सराकी** (दे०) का

एक अन्य नाम।

सरीकोली (sarikoli)––शिग्नी (दे०) की, पामीरमें प्रयुक्त, एक बोली।

सर्ग (affix)––ऐसी ध्वनि या ऐसा ध्वनि समूह, जो उपसर्ग रूपमें आदिमें, मध्य सर्ग रूपमें बीचमें या अंत्य सर्ग रूपमें अंतमें जोड़ा जाय। इस प्रकार यह उपसर्ग, मध्यसर्ग तथा अंत्यसर्ग (प्रत्यय)के लिए एक सामूहिक नाम है।

सपोकार कोष्टक––एक प्रकारका कोष्टक। (दे०) **विराम**।

सर्वनाम (pronoun)––सर्वनाम उस शब्द (या विकारी शब्द)को कहते हैं, जो किसी भी संज्ञाके स्थानपर (पूर्वापर संबंधसे) आता है। जैसे––मैं, तुम आदि। अंग्रेज़ी तथा हिन्दी आदिमें इसका यही अर्थ है। संस्कृतकी स्थिति थोड़ी भिन्न कही गई है। 'सर्वनाम' शब्दका प्राचीनतम प्रयोग आपस्तंभ धर्मसूत्रमें मिलता है। और आगे चलकर निरुक्त तथा अथर्ववेद प्रातिशाख्यमें भी यह मिलता है। इन स्थानोंपर 'सर्वनाम'का अर्थ लगभग वही है, जो हिंदी आदिमें है। पाणिनिकी अष्टाध्यायीपर दृष्टिपात करनेपर 'सर्वनाम'की एक दूसरी परिभाषा सामने आती है। पाणिनिका सूत्र है––'सर्वादीनि सर्वनामानि'। अर्थात् सर्व, विश्व, उभ, उभय, डतर, डतम, अन्य, अन्यतर, इतर, त्वत्, त्व, नेम, सम, सिम, पूर्व, पर, अवर, दक्षिण, उत्तर, अपर, अधर, स्व, अन्तर, त्यद्, तद्, यद्, एतद्, इदम्, अदस्, एक, द्वि, युष्मद्, अस्मद्, भवत्, किम्, ये ३५ शब्द सर्वनाम हैं। इसी आधारपर डॉ० बाबूराम सक्सेना (संस्कृत व्याकरण प्रवेशिका, ३रा संस्करण, पृ० ९२) आदि अनेक विद्वानोंने कहा है कि संस्कृतमें 'सर्वनाम'का वही अर्थ नहीं है, जो हिंदी आदिमें है। हिंदीमें यह संज्ञाके स्थानपर आनेवाला है, जबकि संस्कृतमें यह उपर्युक्त ३५ शब्दोंका एक सामूहिक नाम है। इन शब्दोंमें प्रथम शब्द 'सर्व' है, कदाचित् इसी आधारपर पाणिनिने इन्हें सर्वनाम कहा है। मुझे ऐसा लगता है कि पाणिनि संस्कृतका प्रायोगिक व्याकरण (functional grammar) लिख रहे थे और इन शब्दोंके रूप प्रायः एकसे चलनेके कारण उन्होंने इन्हें 'सर्वनाम' कह दिया है। इस प्रकार पाणिनिमें यह अकृत्रिम संज्ञा न होकर उनकी अन्य बहुत-सी संज्ञाओंकी भाँति कृत्रिम संज्ञा है। पाणिनिमें 'सर्वनाम' शब्द आर्थिक दृष्टिसे एक वर्गके शब्दोंके लिए नहीं है, क्योंकि यदि ऐसा होता तो केवल 'एक' और 'दो', मात्र इन दो संख्यावाचक शब्दोंके सम्मिलित करनेका कोई अर्थ नहीं। अन्य संख्यावाचक शब्द भी अवश्य लिये जाते। आशय यह निकला कि 'सर्वनाम'का यह ३५वाला अर्थ पाणिनिका बिल्कुल अपना है और अंग्रेज़ी प्रोनाउन [लैटिन pronomen , अर्थात् संज्ञा (nomen)के स्थानपर प्रयुक्त शब्द] या हिन्दी सर्वनामकी भाँति यह एक व्याकरणिक विषमता नहीं है। किंतु संस्कृत ग्रंथोंमें सर्वत्र सर्वनामका पाणिनि जैसे अर्थमें ही प्रयोग नहीं है। अतएव यह नहीं कहा जा सकता कि संस्कृतमें 'सर्वनाम' शब्दका अर्थ हिन्दीसे भिन्न है। हाँ, पाणिनिमें यह अवश्य भिन्न है, क्योंकि वहाँ सर्वनाममें कुछ विशेषण आदि भी आ गये हैं।

अब प्रश्न यह उठता है कि संस्कृतमें अन्यत्र 'सर्वनाम'का अर्थ क्या है? मुझे लगता है कि अन्यत्र 'सर्वनाम'का अर्थ प्रायः ठीक वही है, जो इसकी ग्रीक (autonumia) या लैटिन (pronomen) आदि सगोत्रीय भाषाओंमें है, अर्थात् 'संज्ञाके स्थानपर आनेवाला'। संस्कृतमें 'नाम' या 'नामन्'का अर्थ है 'संज्ञा' और 'सर्व'का अर्थ है 'सब'। अर्थात् 'सर्वनाम' वह शब्द है, जो सभी संज्ञाओंके लिए आ सके। इस प्रकारकी व्याख्याके लिए निरुक्त, महाभाष्य तथा चतुरध्यायिकाकी ह्विटनीकृत टीका आदिमें सांकेतिक आधार वर्तमान हैं। संस्कृतके कई

वैयाकरणोंने 'सर्वनाम'के लिए **स्नि** (देवनंदिन्), **सर्वादि** (शाकटायन, हेमचंद्र), **स्नी** (वोपदेव), **कृष्णनाम** (जीवगोस्वामी), **सिट** (शान्तनवाचार्य) तथा **सादि** आदिका प्रयोग किया है। कुछ आधुनिक प्रयोगोंमें **प्रतिनाम**भी सर्वनामके लिए प्रयुक्त मिलता है।

तात्त्विक दृष्टिसे 'सर्वनाम' की परिभाषा विवादास्पद है। इस संबंधमें येस्पर्सनने (philosophy of grammar) विस्तारसे विचार किया है। सर्वनाम सर्वत्र संज्ञाके स्थानपर ही आता हो, ऐसी बात नहीं है। 'मैं रामलाल शपथ लेता हूँ कि. . .'-में 'मैं'के संबंधमें यह कहना कि वह 'रामलाल'के स्थानपर आया है, बहुत सही नहीं कहा जा सकता। इसीलिए, यह कहनेसे कि—'सर्वनाम वह है, जो किसी संज्ञाके स्थानपर आये' यह कहना कदाचित् अधिक उचित है कि "सर्वनाम वह है, जो 'सबका नाम' (सर्वेषाम् नाम) हो, अर्थात् सभी वस्तुओंका बोधक हो सके।" यों, यह परिभाषा भी सभी दृष्टियोंसे पूर्ण नहीं कही जा सकती।

सर्वनाम (प्रमुखतः हिन्दीको ध्यानमें रखते हुए)के मुख्यतः आठ भेद हैं :—(१) **पुरुषवाचक सर्वनाम** (personal pronoun) —वह सर्वनाम, जो बात कहनेवाले, सुननेवाले या किसी तीसरे (जिसके संबंधमें बात हो)का बोध कराये। जैसे, मैं (बात करनेवाला), तुम (सुननेवाला), वह (तीसरा) आदि। इसे **व्यक्तिवाचक, व्यक्तिबोधक, व्यक्तिसूचक, पुरुषबोधक** तथा **पुरुषसूचक** आदि कई अन्य नामोंसे भी अभिहित किया जाता है। उपर्युक्त तीनोंको **पुरुष** (person) या व्यक्ति भी कहते हैं। इन तीनों पुरुषोंके आधारपर पुरुषवाचक सर्वनामके तीन भेद होते हैं :—(क) **उत्तमपुरुष** (first person)—बोलने या लिखनेवाला अपने लिए जिन सर्वनामोंका प्रयोग करे, वे उत्तम पुरुष कहलाते हैं। जैसे—मैं, हम। (ख) **मध्यम पुरुष** (second person)—वक्ता जिससे बात कर रहा है या लेखक जिसे लिख रहा है, उसके लिए जिस व्यक्तिवाचक सर्वनामका प्रयोग हो, उसे मध्यम पुरुष कहते हैं। जैसे—तू, तुम, आप। यों ये तीनों ही मध्यम पुरुष हैं, किंतु प्रयोगतः इसमें आर्थिक अंतर है। 'तू'का प्रयोग भगवान्के लिए अथवा अनादर या प्यारमें छोटेके लिए होता है। इसे अनादरसूचक **मध्यम पुरुष सर्वनाम** (unhonorific second person) कह सकते हैं। इसके विरुद्ध 'आप' आदरसूचक **मध्यम पुरुष सर्वनाम**(honorific second person) है। इसे आदरसूचक, आदरबोधक या आदरवाचक (honorific pronoun) रूपमें कुछ लोगोंने सर्वनामका एक स्वतंत्र भेद माना है, किंतु ऐसा मानना समीचीन नहीं। तत्त्वतः यह मध्यम पुरुषका ही एक रूप है, अतः पुरुषवाचकके ही अंतर्गत आ सकता है, अलग नहीं। 'तुम'की स्थिति प्रयोगतः 'तू' और 'आप'के बीचमें है। यों मूलतः यह बहुवचनका रूप है। इसे **सामान्य मध्यम पुरुष** कहा जा सकता है। (ग) **अन्यपुरुष** (third person)—उत्तम पुरुष और मध्यम पुरुषके अतिरिक्त अन्य सभी व्यक्तिवाचक सर्वनाम इसके अंतर्गत आते हैं। व्याकरणकारोंने इसके भेद किये तो नहीं हैं, किंतु वस्तुतः अन्य पुरुष के दो वर्ग सरलतापूर्वक बनाये जा सकते हैं:-(i) **निकटवर्ती अन्यपुरुष**—यह, ये, आप। (ii) **दूरवर्ती अन्य पुरुष**—वह, वो, वे। इनमें भी प्रथम, अर्थात् निकटवर्तीके दो उपभेद हो सकते हैं :-(क) **निकटवर्ती सामान्य अन्य पुरुष**—यह, ये; (ख) **निकटवर्ती आदरार्थ अन्य पुरुष**—(proximate honorific third person)—आप, आप लोग (जैसे 'तुम, आपके साथ साथ चले जाओमें 'आप')। अन्य पुरुषके इन भेदोंमें निकटवर्ती अन्य पुरुष अर्थात् यह, ये को प्रायः व्याकरणोंमें **निकटवर्ती निश्चयवाचक** (proximate de-

monstrative) कहा गया है। कुछ लोगोंने इसे **निकटोल्लेखसूचक** या **प्रत्यक्ष उल्लेखसूचक** आदि भी कहा है। इसी प्रकार दूरवर्ती अन्य पुरुष, अर्थात् वह,वे को प्रायः वैयाकरणोंने **दूरवर्ती निश्चयवाचक** (remote demonstrative) कहा है। इसी प्रकार इसे **दूरोल्लेखसूचक** या **परोक्ष उल्लेखसूचक** भी कहा गया है। इस रूपमें इन्हें **निश्चयवाचक सर्वनाम** (demonstrative pronoun)के निकटवर्ती और दूरवर्ती दो भेद माने जा सकते हैं। यों ये दोनों कार्यतः अन्य पुरुष भी हैं और निश्चयवाचक भी। ऐसी स्थितिमें कार्यतः पुरुषवाचकके बाद सर्वनामका दूसरा भेद (२) **निश्चयवाचक**को माना जा सकता है। यह दूरवर्ती या निकटवर्ती वस्तु या व्यक्तिका सनिश्चय बोध कराता है। जैसे—यह लड़का, वह पुस्तक। 'अन्य पुरुष'को संस्कृतमें 'प्रथम पुरुष' कहते हैं। (३) **अनिश्चयवाचक सर्वनाम** (indefinite pronoun)—जिस सर्वनामसे किसी व्यक्ति या वस्तुका सनिश्चय बोध न हो, उसे अनिश्चयवाचक कहते हैं। जैसे—कोई, कुछ। इसे **अनिश्चयबोधक** या **अनिश्चयसूचक** आदि अन्य नामोंसे भी पुकारा जाता है। (४) **निजवाचक सर्वनाम** (reflexive pronoun)—जिस सर्वनामसे अपना या निजका बोध हो। जैसे—आप, स्वयं, खुद, अपना। इसे **निजबोधक**, **आत्मवाचक** या **आत्मसूचक** आदि अन्य नामोंसे भी अभिहित किया जाता है। प्रयोगके आधारपर 'आप' तथा 'स्वयं' आदिको कुछ लोगोंने **पारस्परिक सर्वनाम** (reciprocal pronoun) भी कहा है। (५) **प्रश्नवाचक सर्वनाम**(interrogative pronoun)—जिस सर्वनामका प्रयोग प्रश्न पूछनेके लिए हो, उसे प्रश्नवाचक कहते हैं। जैसे—कौन, क्या। इसे **प्रश्नसूचक** या **प्रश्नबोधक** आदि भी कहते हैं। (६) **संबंधवाचक सर्वनाम** (relative pronoun)—जो सर्वनाम किसी दूसरी संज्ञा या सर्वनामसे संबंध दिखानेके लिए प्रयुक्त हो। जैसे—जो (वह, **जो** आया था, चला गया)। इसे **संबंधसूचक** या **संबंधबोधक** भी कहते हैं। (७) **पारस्परिक संबंधवाचक सर्वनाम** (co-relative pronoun)—जो परस्पर या 'जो'के साथ संबंध दिखानेके लिए प्रयुक्त हो। जैसे 'सो' (जो आयगा सो जायगा)। अत्र 'सो'-के स्थानपर 'वह' प्रयुक्त होता है। इसे **नित्य संबंधी संगतिमूलक** या **संगतिवाचक** आदि भी कहते हैं। (८) **साकल्यवाचक सर्वनाम** (inclusive pronoun)—जिसमें साकल्य या समूहका बोध हो। जैसे—सब, कुल। इसे **समूहबोधक** (collective) या **साकल्यसूचक** आदि भी कहते हैं।

सर्वभूतरुद्ग्रहणी लिपि—बौद्धग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

सर्वरुत्संग्रहणी लिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

सर्वसारसंग्रहणी लिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित-विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

सर्वादि—**सर्वनाम** (दे०)का एक दूसरा नाम।

सर्वौषधनिष्यनन्द लिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित-विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक।

सर्वोक्रोटिअन—(दे०) **स्लैवोनिक**।

सलाणी—(दे०) **सलानी**।

सलानी—**गढ़वाली** (दे०)की, अलमोड़ा, गढ़वाल, देहरादून, सहारनपुर, बिजनौर तथा मुरादाबादके कुछ भागोंमें प्रयुक्त एक उप-बोली। इस उप-बोलीके क्षेत्रमें मल्ल सलान, तल्ला सलान तथा गंगा सलान नामके तीन परगने, हैं जिनके आधारपर इसका नाम **सलानी** या **सलाणी** है। इसपर 'पश्चिमी हिन्दी'का कुछ प्रभाव पड़ा है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,२९,७५८ थी।

सलिन (salina)—**होक** (दे०) भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है। इसे सलिन नामक जाति बोलती थी।

सलिश (salish)––**उत्तरी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा परिवार । इस परिवारमें लगभग १६ भाषाएँ हैं, जिनमेंसे प्रमुख ये हैं:––**लिल्लुएट, शुस्वप, फ्लाथेड, स्किट्सविश, बेल्लाकुला, कोमोक्स, सोन्गिश, टिल्लामुक** आदि । इस परिवारकी भाषाएँ पहले ब्रिटिश कोलंबियाके दक्षिणार्ध, वाशिंगटन स्टेट तथा ओरेगन, इडाहो आदिमें बोली जाती थी । इसके अंतर्गत ९७ भाषाएँ थीं, जिनको ९७ जातियोंके लोग बोलते थे ।

सव-को करेन (saw-ko karen)––बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, टौंगू (बर्मा)में प्रयुक्त, **करेन** (दे०)का, एक रूप। इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,७८३ थी ।

सवर(savara)––मद्रासकी उत्तर-पूर्वी पहाड़ियोंमें प्रयुक्त एक **मुंडा** (दे०) भाषा । १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,६८,४४१ थी ।

सवर्ण––(१) एक स्थान तथा एक प्रकारके आभ्यंतर प्रयत्न (स्पर्श, संघर्षी आदि)से उच्चरित ध्वनियाँ एक दूसरेकी **सवर्ण** कहलाती हैं। 'ताल्वादिस्थानमाभ्यंतर प्रयत्नश्चेत्येतद् द्वयं यस्य येन तुल्यं तन्मिथं सवर्णसंज्ञं स्यात् ।' (२) एक प्रकारके प्रयत्नसे उच्चरित ध्वनियाँ भी एक दूसरेकी सवर्ण कही गयी हैं । पाणिनि कहते हैं 'तुल्यास्य प्रयत्नं सवर्णम्' (१.१.९) ।

सविभक्तिक कर्ता––(दे०) **कर्ता** ।

सविभक्तिक कर्म––(दे०) **कर्म** ।

सविभक्तिक संबंधसूचक अव्यय––(दे०) **संबंधसूचक अव्यय** ।

सवैन(sawain)––**लहँदाके** 'उत्तरी-पश्चिमी बोली'का, अटकमें प्रयुक्त, एक रूप ।

सव्न (sawn)––बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **व** (दे०) का, पूर्वी मंगलून उत्तरी शान स्टेटमें प्रयुक्त तथा १,२६० व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत एक रूप ।

सव्पन(sawpana)––बर्माके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार 'पलौंग'की **पले**(दे०)बोलीका, तव्नपेंग उत्तरी शान स्टेट (बर्मा)में प्रयुक्त तथा ३,००८ व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत एक रूप ।

सशक्त ध्वनि (fortis)––ऐसी ध्वनि, जिसके उच्चारणमें मुँहकी मांसपेशियाँ दृढ़ रहती हों । **सशक्त स्वर** भी हो सकते हैं जैसे ऊ, ई तथा सशक्त व्यंजन भी जैसे स्, ट् । सशक्त ध्वनिको **दृढ़ ध्वनि** भी कहते हैं । (दे०)**स्वरोंका वर्गीकरण** तथा **व्यंजनोंका वर्गीकरण** ।

सशक्त बलाघात––**बलाघात**(दे०)का भद ।

ससंख्य––(दे०) **अव्यय** ।

सस्सन(sassan)––**कचिन** (दे०)का एक मिश्रत रूप ।

सहकारी क्रिया––(दे०) **काल** तथा **क्रिया**।

सहचारवाचक संबंधसूचक अव्यय––(दे०) **संबंधसूचक अव्यय** ।

सह बहुव्रीहि समास––(दे०) **समास** ।

सहायक क्रिया––(दे०) **सहकारी क्रिया** ।

सहेरिआ––**बुंदेली** (दे०)का शिवपुर (ग्वालियर) ज़िलेमें प्रयुक्त एक रूप ।

सांकेतिक उत्पत्ति-सिद्धांत––भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धान्त । इसे **निर्णय-सिद्धांत** (दे०) भी कहते हैं ।

सांगपांग(sangpang)––**खंबू**(दे०)की नैपालमें प्रयुक्त एक बोली ।

सांज्ञिक क्रिया विशेषण––(दे०)**क्रिया विशेषण** ।

सांज्ञिक संबंधसूचक अव्यय––(दे०) **संबंधसूचक अव्यय** ।

सांठकी बोली––**सिरोही** (दे०)का एक स्थानीय रूप, जो सिरोहीके दक्षिणी-पश्चिमी भागमें सांठ(इसे साठ या सायठ भी कहते हैं)में बोला जाता है । इसे साठ या सायठकी बोली भी कहते हैं । इसपर गुजरातीका अत्यधिक प्रभाव पड़ा है । ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ६,००० थी ।

सांसिया(sansiya)––**साँसी**(दे०)के लिये प्रयुक्त एक नाम ।

सांसी(sansi)––पंजाब तथा उत्तरप्रदेशमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०)भाषा । ग्रियर्सन-

के भाषा सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५१,५५० थी ।

सांस्कृतिक भाषा (cultural language)––ऐसी भाषा, जो अन्य भाषा-भाषी क्षेत्रोंमें सांस्कृतिक या उच्च स्तरपर प्रचलित हो, वहाँकी सांस्कृतिक भाषा कहलाती है । पहले पूरे पश्चिमी यूरोपमें फ्रांसीसी का यही स्थान था । हर उच्च वर्गका आदमी फ्रेंच अवश्य पढ़ता था । जर्मन मध्य यूरोप, नीदरलैंड्ज़ तथा स्कैंडिनेविया आदिमें सांस्कृतिक भाषा है । मध्ययुगमें पूरे यूरोपमें लैटिनकी यही स्थिति थी । कभी संस्कृत पूरे भारतकी सांस्कृतिक भाषा थी ।

सांस्कृतिक भाषाविज्ञान (cultural linguistics)––एक प्रकारका अध्ययन, जिसमें भाषाके अध्ययनके आधारपर किसी देशकी संस्कृतिके विभिन्न तत्त्वोंका अध्ययन किया जाता है । यह सांस्कृतिक दृष्टिसे भाषाका अध्ययन है । भाषापर आधारित प्रागैतिहासिक खोजका भी इससे संबंध है ।

सांस्कृतिक शब्द (cultural word)––किसी जाति, संप्रदाय, कबीले या राष्ट्रके सांस्कृतिक विचार या सांस्कृतिक विशेषता आदिको व्यक्त करनेवाला शब्द । उदाहरणार्थ यज्ञ, वर्ण, आश्रम, पूजा आदि भारतीय भाषाओंमें सांस्कृतिक शब्द हैं ।

साइप्रस लिपि––साइप्रसकी प्राचीन लिपि, जो एक प्रकारकी आक्षरिक लिपि थी । इसके लिपिचिह्न रेखात्मक थे । कुछ लोगोंके अनुसार यह हित्ती हीरोग्लाइफ़िकसे निकली थी ।

साइप्रोफ़ोनीशियन––(दे०) **फोनीशियन लिपि** ।

साइरीन (syryen)––**ज़ाइरीन** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

साइलू (syloo)––**साइलो** (दे०) का नाम ।

साइलो (sailo)––**लुशेई** (दे०) का एक रूप ।

साकल्यसूचक सर्वनाम––(दे०) **सर्वनाम**

साकल्यवाचक सर्वनाम––(दे०) **सर्वनाम** ।

सागम (augmentative)––ऐसा शब्द या रूप, जिसमें आगम हुआ हो, अर्थात् जिसमें कोई नयी ध्वनि आई हो । इसके **सागम शब्द**, **सागम रूप** आदि कई भेद हो सकते हैं ।

सागम रूप––(दे०) **सागम** ।

सागम शब्द––(दे०) **सागम** ।

सागर लिपि––बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तर'में दी गयी ६४ लिपियोंमेंसे एक ।

साठकी बोली––(दे०) **सांठकी बोली** ।

सादि––**सर्वनाम**का एक दूसरा नाम । (दे०) **सर्वनाम** ।

सादृश्य (analogy)––भाषा–विज्ञानमें नये शब्दोंको बनाने या कुछ शब्दोंमें परिवर्तन होनेका एक आधार । मनुष्य स्वभावतः सरलताका प्रेमी होता है । उसका यह स्वभाव भाषामें भी कार्य करता है । यह किसी पुराने शब्दको किसी पुराने शब्दके वज़नपर उसकी आकृतिके साँचेमें ढाल लेता है और इस प्रकार दोनों शब्द रूपकी दृष्टिसे एक-से हो जाते हैं या दोनोंमें सादृश्य (या रूपसादृश्य) हो जाता है । जैसे संस्कृतमें 'द्वादश'के वज़नपर संस्कृतवालोंने 'एकदश'को 'एकादश' बना लिया । सैंतिस और सैंतालिसकी अनुनासिकता पैंतिस और पैंतालिसके सादृश्यपर ही आधारित है । व्याकरणकी दृष्टिसे भाषाके आरंभकालमें बहुतसे रूप रहे होंगे । धीरे-धीरे सादृश्यके आधारपर ही रूपोंकी विभिन्नता दूर हुई होगी । अंग्रेज़ीकी बली (strong) क्रियाएँ इसी आधारपर धीरे-धीरे बलहीन (weak) होती जा रही हैं । एक समय ऐसा भी असम्भव नहीं है, जब कि एक भी बली क्रिया अंग्रेज़ीमें शेष न रहे । **मिथ्या सादृश्य** (false analogy)––सर्वप्रथम रोमांस भाषाओंके अध्ययनमें लोगोंका ध्यान इस ओर गया । उस समय लोग इसे सादृश्य न कहकर **मिथ्या सादृश्य** कहते थे । बादमें इस आधारपर कि सभी सादृश्य मिथ्या हैं, 'मिथ्या' शब्दको निरर्थक समझा गया और मिथ्या सादृश्यके स्थानपर सादृश्यका प्रयोग होने लगा । **क्या सादृश्य एक कारण है ?**––अधिकतर लोग ऐसा समझते हैं कि सादृश्य स्वयं एक कारण है और इसी कारणसे

परिवर्तन होते हैं। यथार्थतः यह बात नहीं है। सादृश्यपर आधारित परिवर्तनोंका कारण सादृश्य नहीं है। उसका कारण तो सुविधा या सरलता है। सादृश्य तो एक साधन मात्र है, जिससे सुविधा प्राप्त होती है। उदाहरणके लिए 'मज्ञ' शब्द 'तुज्ञ'के सादृश्यपर 'मुज्ञ' हो गया। यहाँ यह नहीं कहा जा सकता कि 'मुज्ञ', 'तुज्ञ'के सादृश्यके कारण 'तुज्ञ' हो गया, अपितु यह कहना उचित है कि याद रखनेकी सुविधाके कारण 'तुज्ञ'के आधारपर 'मुज्ञ' बना लिया गया। 'तुज्ञ'का सादृश्य तो आधार या साधन मात्र है। अतः यह कहना अशुद्ध है कि सादृश्य किसी परिवर्तनका कारण है। **सादृश्यकी गति**--इसकी गति गणितकी भाँति है :--१ : २ :: ६ : १२। संस्कृतमें केवल युग्म शब्दोंके लिए द्विवचनका प्रयोग होता था :--पादौ, कर्णौ, पितरौ। बादमें विलोम, युग्मके लिए भी प्रयोग होने लगा :--लाभालाभौ जयाजयौ। कुछ दिन बाद सादृश्यके आधार-पर द्वन्द्व समासवाले शब्दोंमें भी यही बात आने लगी :--सिंह-मृगालौ, राम-लक्ष्मणौ आदि। अंग्रेज़ीमें shallसे should और willसे would बना तो यहाँ shall और willमें l होनेसे, l होना अस्वाभा-विक नहीं था, पर इसीके सादृश्यपर can-में l न रहते हुए भी couldमें l ला दिया गया। छोटे लड़के या नवीन भाषा सीखने-वाले सादृश्यके आधारपर अधिकतर रूप बना लेते हैं। अंग्रेज़ीमें s लगाकर बहुधा बहुवचन बनाया जाता है। नया विद्यार्थी कभी-कभी उसी सादृश्यपर box से boxes देखकर oxसे oxes कर देता है, यद्यपि oxen होना चाहिये। नया हिन्दी सीखने-वाला इसी प्रकार मरसे मरा, धरसे धरा देखकर करसे 'करा' या बैठिए, लिखिए देखकर 'करिए' कह बैठता है, यद्यपि परि-निष्ठित रूप 'किया' और 'कीजिये' हैं। **सादृश्यके कुछ प्रधान कारण**--यों तो सुविधाके लिए सादृश्यका सहारा लेना पड़ता है, पर उस सुविधाके भी कुछ विशेष पक्षोंकी ओर पृथक्-पृथक् संकेत किया जा सकता है--(क) **अभिव्यंजनाकी किसी कठिनाईको दूर करनेके लिए**--एक प्रकारके भावके लिए दो शब्द भिन्न-भिन्न रूपोंके रहते हैं तो कुछ कठिनाई होती है। यदि दोनोंको एक वज़नका बनाना सम्भव होता है तो जन-मस्तिष्क बना लेता। 'पूर्वीय' और पौरस्तके रहते हुए भी पाश्चात्यके सादृश्यपर 'पौर्वात्य' शब्द इसी कारण हिन्दीमें आ गया है। (ख) **अधिक स्पष्टता लानेके लिए**--यदि रूप बहुत छोटे हों या किसी कारणसे अर्थ स्पष्टः न वहन कर सकते हों तो अन्य शब्दोंके आधारपर उनके रूप बना लिये जाते हैं। अंग्रेज़ीमें, ग्रीक ismके आधारपर optimism, so-cialism, जर्मन--ardके आधारपर bastard, coward; इटैलियन esque-के आधारपर romanesque, pictur-esque तथा फ्रेंच--al के आधारपर na-tional, local आदि शब्द बना लिये गये हैं। (ग) **समानता या विपर्ययपर बल देनेके लिए**--अंग्रेज़ीके before, after या लैटिनके antid, postid आदि इसके उदाहरण हैं। संस्कृतमें स्वसृका पंचमीमें स्वसुः, मातृ-का मातुः, पितृका पितुः तो ठीक है, पर इन्हीं समानतासे सादृश्यपर पतिका पत्युः रूप चल पड़ा है, यद्यपि पतेः होना चाहिये जैसा कि कुछ स्थानोंपर मिलता भी है। संस्कृतमें 'अभ्यन्तर' और 'बाह्य' शब्द थे। अभ्यन्तरसे हिन्दी 'भीतर'का बनना तो ठीक था, पर बाह्यसे 'बाहर' क्यों बना। दोनों एक-दूसरेके विपर्यय हैं, अतः रूपकी समानता दे दी गयी। इसी विपर्ययपर बल देनेके लिए 'निर्गुण'के सादृश्यपर 'सगुण'-को मध्ययुगीन साहित्यमें 'सरगुण'का रूप दे दिया गया है। (घ) **किसी प्राचीन अथवा नवीन नियमकी संगति मिलानेके लिए**--कभी-कभी कोई अशुद्ध शब्द चल पड़ता है, तो उसे प्राचीन नियमके अनुसार अन्य

शब्दोंके सादृश्यपर नया रूप दे दिया जाता है। कभी-कभी नवीन नियमके अनुसार भी शब्द बनाये जाते हैं। कुछ लोगोंने हिन्दीके 'इक' प्रत्ययको प्रामाणिक मानकर ऐतिहासिकके स्थानपर 'इतिहासिक' लिखना आरम्भ किया और अब उसके सादृश्यपर सामाजिक, व्यवहारिक, भूगोलिक आदि भी प्रयुक्त हो सकते हैं। **सादृश्यका आरम्भ**-कुर्टिअस आदि कुछ विद्वानोंका मत था कि सादृश्यका आरम्भ हालमें हुआ है, पर इसके विपरीत ब्रील आदि इसे भाषाके आरम्भके कुछ ही बादका मानते हैं। यही ठीक भी है। भाषा ही क्या, जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें मानवके आरम्भसे ही सादृश्यका आरम्भ हुआ होगा। एकको घर बनाते देख, वैसा ही दूसरेने बनाया होगा। तीसरेने जब उससे अधिक उपयोगी बनाया होगा तो अपनी सुविधाके लिए पहले और दूसरेने भी अपने मकानको तीसरेके आधारपर नया रूप दिया होगा। भाषाके आरम्भ होनेपर यही बात भाषामें भी लागू हुई होगी। व्याकरणके सारे नियम 'सादृश्य'-के कार्य करनेके उपरान्त ही समानता देखकर बनाये गये होंगे। **सादृश्यका प्रभाव** (१) सादृश्य नियमके विरुद्ध पाये जानेवाले अपवादोंको दूर करके नियमबद्धता लाता है। अंग्रेजी क्रियाएँ धीरे-धीरे इसी कारण एक-रूप होती जा रही हैं। (२) एक भाषाका दूसरीपर भी प्रभाव पड़ता है। अंग्रेजी वाक्योंका प्रभाव इसी रूपमें नेहरू, जैनेन्द्र आदिके वाक्योंपर पड़ा है। (३) दो जातियोंके मिश्रणके बाद जब भाषाका विकास होता है, तो वहाँ भी सादृश्य ही काम करके भाषाको दोनोंके उपयुक्त बनाता है। (४) इसके प्रभावसे भाषा आसान होती जाती है। एसपिरैंतों इसीपर आधारित होनेके कारण थोड़े समयमें ही सीखी जा सकती है। **सादृश्यका क्षेत्र**-भाषाविज्ञानके अध्ययनकी प्रमुख चारों ही शाखाओं (ध्वनि, रूप, वाक्य, अर्थ)में इसका क्षेत्र है। वाक्यमें इसका प्रभाव अन्योंसे कम मिलता है। अर्थमें भी अधिक नहीं मिलता। पर रूप और ध्वनिमें तो इसका प्रधान हाथ है। अन्तमें यह कहना असंगत न होगा कि भाषाके विकासमें सादृश्यका प्रधान हाथ है।

सादृश्यका नियम—बौद्धिक-नियम (दे०) का एक भेद।

सादृश्यवाचक संबंधसूचक अव्यय—(दे०) संबंधसूचक अव्यय।

सादृश्याधारित रूप (analogical form)—किसी रूपके सादृश्यपर बनाया गया रूप। जैसे 'जल'से 'जला' आदिके सादृश्यपर 'कर'से 'करा'।

साधनवाचक संबंधसूचक अव्यय—(दे०) संबंधसूचक अव्यय।

साधारण अतीत—(दे०) काल।

साधारण उद्देश्य—साधारण वाक्यके उद्देश्य (दे०)को साधारण उद्देश्य कहते हैं।

साधारण काल—(दे०) काल।

साधारण प्रश्नात्मक सुर—सुर (दे०)का भेद।

साधारण वाक्य—(दे०) वाक्यमें वाक्योंके प्रकार उपशीर्षक।

साधारण विधेय—साधारण वाक्यके विधेय (दे०)को साधारण विधेय कहते हैं।

साधित क्रिया विशेषण—(दे०) क्रिया विशेषण।

साधित धातु—(दे०) धातु।

साधित शब्द (derivative)—ऐसा शब्द, जो किसी धातु या मूल शब्द आदिसे (कुछ जोड़कर या परिवर्तित करके) बनाया गया हो। इसे **व्युत्पन्न शब्द** या **व्युत्पादित शब्द** भी कहते हैं।

साधित संबंधसूचक अव्यय—(दे०) संबंधसूचक अव्यय।

साधित सार्वनामिक विशेषण—(दे०) विशेषण।

साधु भाषा—इसका प्रयोग **शिष्ट भाषा** (दे०) या **शुद्ध भाषा** (दे०)के लिए होता है।

साध्यवसाना लक्षणा—एक प्रकारकी लक्षणा। (दे०) शब्द-शक्ति।

सानुनासिक—अनुनासिकतासे युक्त ध्वनि।

ऐसा स्वर या व्यंजन, जिसके उच्चारणमें नाकसे भी सहायता ली जाय। जैसे अँ, कूँ।

सान्निध्य समास (justaposed compound)–ऐसा समास, जिसमें जिन पदों या शब्दोंका समास किया गया हो, उन्हें अलग-अलग लिखा गया हो, मिलाकर नहीं। जैसे भाषा विज्ञान।

सापेक्ष उत्तमावस्था––(दे०) **विशेषण**।

साम (sam)––**शाम** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

सामवश संधि––(दे०) **संधि**।

सामवेदी––**कोंकणी** (दे०)का, थाना (बंबई)–के सामवेदी ब्राह्मणोंमें प्रयुक्त, एक रूप। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार लगभग २,७०० थी।

सामान्य अव्यय––(दे०) **अव्यय**।

सामान्य क्रिया विशेषण––(दे०)**क्रिया विशेषण**।

सामान्य ध्वनि––**मूल ध्वनि** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

सामान्य ध्वनि-परिवर्तन––एक प्रकारका **ध्वनि परिवर्तन** (दे०)।

सामान्य बलाघात––**बलाघात** (दे०)का भेद।

सामान्य भविष्य––(दे०)**काल**। **लृट् लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

सामान्य भविष्य आज्ञार्थ––(दे०) **काल**।

सामान्य भविष्य निश्चयार्थ––(दे०)**काल**।

सामान्य भाव संगम––**संगम** (दे०)का भेद।

सामान्य भाषा (general language)––१. गुप्त भाषा (दे०)के विरुद्ध ऐसी भाषा, जिसे समाजके सभी या सामान्य लोग समझ सकें, 'सामान्य भाषा' कही जाती है। इसके विरुद्ध गुप्त भाषाको सामान्य लोग नहीं समझ सकते। (दे०) **भाषाके विविध रूप**। २. (common language)––ऐसी भाषा, जो वर्ग, जाति या स्तर विशेषकी न होकर सर्वसामान्यकी हो।

सामान्य भूत––(दे०)**काल**। **लुङ् लकार** (दे०)––के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

सामान्य भूत निश्चयार्थ––(दे०) **काल**।

सामान्य भूत संभावनार्थ––(दे०) **काल**।

सामान्य मध्यम पुरुष सर्वनाम–(दे०)**सर्वनाम**।

सामान्य रूप (familiar form)––कुछ भाषाओं (जापानी, उर्दू आदि)में वे रूप, जो सामान्य रूपसे प्रयुक्त होते हैं। **औपचारिक रूप** (दे०) इसके ठीक उलटे होते हैं। इसे **अनौपचारिक** या **अशिष्टाचारी रूप** भी कहते हैं।

सामान्य लिंग (common gender)––ऐसे संज्ञा-शब्दों, सर्वनामों या विशेषणोंके लिए प्रयुक्त, जो लिंगके अनुसार परिवर्तित नहीं होते। जैसे तेज़, वह आदि। इसे **द्विलिंगी** भी कहते हैं।

सामान्य वर्तमान––(दे०) **काल**।

सामान्य वर्तमान निश्चयार्थ––(दे०)**काल**।

सामान्य संकेतार्थ––(दे०) **काल**।

सामान्यावस्था––(दे०) **विशेषण**।

सामासिक शब्द––(दे०) **समास**।

सामी परिवार––**सेमिटिक परिवार** (दे०)––का एक अन्य नाम।

सामी लिपि––सामी लिपि विश्वकी प्राचीनतम ध्वन्यात्मक लिपि है। सामी लिपिके दो रूप मिलते हैं :––**उत्तरी सामी लिपि** तथा **दक्षिणी सामी लिपि**। उत्तरीका प्रयोग सीरिया तथा फ़िलस्तीनमें होता था तथा दक्षिणीका अरब आदिमें। मूल सामी लिपिका काल १९०० ई० पू०के आसपास है। यह बेबिलोन, मिस्र, क्रीट आदिकी विभिन्न लिपियों तथा आसपासकी अन्य चित्र एवं ज्यामितीय लिपियोंके आधारपर बनी थी। मूल सामी लिपिकी मूल उत्तराधिकारिणी उत्तरी सामी लिपि थी, जिसका काल १२०० ई० पू०के आसपास है। इसमें २२ वर्ण थे। ये वर्ण केवल व्यंजन थे। इसमें स्वर-चिह्न नहीं थे। उत्तरी सामीसे ही आगे चलकर **कैनानाइट लिपि** (दे०) तथा **आरमेइक लिपि** (दे०)का विकास हुआ। प्राचीन **हिब्रू** लिपि और **फ़ोनिशियन** लिपि इस कैनानाइट लिपिसे ही कालान्तरमें विकसित हुई। आरमेइकसे परवर्ती **हिब्रू**, **अरबी**, **पहलवी** आदि लिपियाँ निकालीं। **ग्रीकका**

संबंध भी उत्तरी सामीसे ही है । ग्रीकसे एत्रुस्कन तथा उससे लैटिन लिपि विकसित हुई । इस प्रकार सामी लिपिकी वंशज लिपियोंका आज विश्वमें सर्वाधिक प्रचार है । सामी लिपि मूलतः व्यंजनात्मक लिपि थी ।

सामूहिक संबंधसूचक अव्यय--(देо)**संबंध-सूचक अव्यय** ।

सायठकी बोली--(देо) **सांठकी बोली** ।

सारन बोली--**भोजपुरी** (देо)का एक रूप, जो सारन (बिहार तथा उड़ीसा) तथा पूर्वीय गोरखपुरमें प्रयुक्त होता है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवाले १५,०४,५०० थे । इसे **सरन बोली** भी कहते हैं ।

सारूप्य--**समीकरण** (देо)का एक नाम ।

सारोपा लक्षणा--एक प्रकारकी लक्षणा । (देо) **शब्द-शक्ति** ।

सार्थक--जिसका अर्थ हो । जैसे **सार्थक शब्द** । इसके विरुद्ध निरर्थक उसे कहते हैं, जिसका कोई अर्थ न हो ।

सार्थकता--(देо) **वाक्यमें वाक्यकी आवश्य-कताएँ** उपशीर्षक ।

सार्थक बलाघात--**बलाघात** (देо)का भेद ।

सार्थक शब्द--एक प्रकारके **शब्द** (देо) ।

सार्थक सुर--**सुर** (देо)का एक भेद ।

सार्डिनिअन (sardinian)--एक **रोमांस भाषा** (देо) । वस्तुतः यह सार्डिनिया द्वीप (मध्य तथा दक्षिण)में प्रयुक्त बोलियोंका एक सामूहिक नाम है । इसकी प्रमुख बोलियाँ **कैंपीदानीज** (campidanese) तथा **लोगुदोरीज** (logudorese)हैं , जो क्रमसे द्वीपके दक्षिणी तथा केन्द्रीय भागमें बोली जाती हैं । कैंपीदानीजको **कैंपीदेनीसिअन** (campidanesian) तथा लोगुदोरीजको **लोगुदोरीसिअन** (logudoresian) भी कहते हैं ।

सार्डिनिअन लिपि--(देо)**फ़ोनीशियन लिपि** ।

सार्त (sart)--**यूराल-अल्ताई** (देо) परिवारकी एक भाषा, जो तुर्की, ईरान और अफ़गानिस्तानमें सार्त नामक तुर्क जाति द्वारा बोली जाती है ।

सार्वधातुक--एक प्रकारके प्रत्यय । धातुओंसे क्रियापद बनानेमें कई प्रकारके प्रत्ययोंकी आवश्यकता पड़ती है । इन प्रत्ययोंको दो वर्गोंमें रखा गया है :--(१) **सार्वधातुक प्रत्यय**, (२) **आर्धधातुक प्रत्यय** । सार्व-धातुकके अंतर्गत दो प्रकारके प्रत्यय आते हैं । एक तो तिङ प्रत्यय (परस्मैपद और आत्मनेपदके), जिनसे काल रचना होती है तथा दूसरे शित् प्रत्यय (अर्थात् जिनमें श्की इत्संज्ञा हो, जैसे श्यन्, शप्, श्नम्, शतृ आदि) । पाणिनि कहते हैं :-'तिङ शित् सार्वधातुकम्, (३.४.११३) । शेष सारे प्रत्यय **आर्धधातुक** कहलाते हैं। पाणिनि कहते हैं :-'आर्धधातुक शेषः, (३.४.१४४) । स्य, तास्, च्लि, इट् आदि आर्धधातुक प्रत्यय हैं । सार्वधातुक और आर्धधातुक पाणिनिके पहलेसे व्याकरणमें प्रयुक्त होते रहे हैं । इनके नामका आधार कदाचित् यह है कि जो प्रायः सभी धातुओंमें लगते हैं, उन्हें सार्वधातुक प्रत्यय कहा गया है, किंतु जो सभीमें नहीं लगते, उन्हें आर्ध-धातुक ।

सार्वनामिक--१. सर्वनामका या सर्वनाम-विषयक या सर्वनामसे बना । २. (देо)**सार्व-नामिक भाषा** ।

सार्वनामिक क्रिया विशेषण--(देо) **क्रिया विशेषण** ।

सार्वनामिक भाषा (pronominalized language)--**चीनी परिवार** (देо)की कुछ भाषाओंके लिए प्रयुक्त नाम । इनमें कर्ता और कर्म सर्वनाम हों तो क्रियाके साथ मिल जाते हैं ।

सार्वनामिक विशेषण--(देо) **विशेषण** ।

सार्वनामिक हिमालयी वर्ग(pronominalized himalayan group)--**चीनी परि-वार** (देо)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, तिब्बती-हिमालयी शाखाका एक वर्ग । इस वर्गमें लगभग २२ भाषाएँ हैं, जो सभी

हिमालयमें प्रयुक्त हैं। इस वर्गके दो उपवर्ग, पश्चिमी तथा पूर्वीय हैं। इसकी मुख्य भाषाएँ तथा बोलियाँ बुनन, रंगलोई, क्नाशी, कनौरी, रंगकास, दर्मिया, चौदान्ग्सी, व्यांगसी, जंगली आदि पश्चिमी वर्गमें तथा धीमाल, थामी, लिम्बू, यारवा, खंबू, जिम्दार, चेपांग, कुसुन्दा, स्रामू, थाक्सा आदि पूर्वीय वर्गमें हैं। इन भाषाओंको कोशमें यथास्थान देखा जा सकता है। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,०७,८४१ थी।

सालिब (saliba)––**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारकी भाषाएँ सालिब, पिअरोआ तथा माकू हैं।

सालिब भाषा (saliba)–**सालिब** (दे०) परिवारकी एक प्रमुख दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

सालेवारी (salewari)––**तेलुगु** (दे०)की चाँदाकी सालेवार नामक जातिमें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३,६६० थी।

सावयव भाषा––योगात्मक भाषा (दे०)का एक अन्य नाम।

सावर्ण्य––समीकरण (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

सासानियन पहलवी लिपि––पहलवी लिपि (दे०)का एक रूप।

साहिडिक (sahidic)––**कॉप्टिक** (दे०) भाषाकी एक बोली।

साहित्यिक भाषा (literary language)–ऐसी भाषा, जिसका प्रयोग साहित्यमें हो। (दे०) **भाषाके विविध रूप**।

सिगफो (singpho)––**कचिन** (दे०)की, असममें प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,९२० थी।

सिंगली (singli)––**कोर्वा** (दे०)का रूप।

सिंतेंग (synteng)––**खासी** (दे०)की, खासी तथा जयंतिया पहाड़ियों (असम)–पर प्रयुक्त, एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५१,७४० थी।

सिंध बलोची (sind balochi)––**पूर्वीय बलोची** (दे०)का, सिंधमें प्रयुक्त, एक मिश्रित रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,४५,७९० थी। इसमें लसबेला और बहावलपुरके 'बलोची' बोलनेवाले भी सम्मिलित थे।

सिंधी––'सिंध' शब्दका संबंध संस्कृत शब्द 'सिंधु'से विद्वानोंने जोड़ा है। मैं इस बातसे अपनेको सहमत नहीं कर सका हूँ। मूल शब्द संभवतः संस्कृत न होकर द्रविड़ 'सिद्' या सित् था (दे० **'हिंदी'**) और 'सिंधु' उसीका संस्कृतीकृत रूप है। 'सिंध'की भाषा सिंधी है। अब सिंधमें अधिकतर सिंधी बोलनेवाले मुसलमान ही रह गये हैं। सिंधी हिंदू प्रायः कच्छ, बंबई, अजमेर तथा दिल्ली आदिमें हैं।

सिंधी भाषाका प्राचीनतम संकेत भरतके नाट्यशास्त्र (२री सदी)में मिलता है। ७वीं सदीमें चीनी–यात्री युआन च्वाँगने भी अपने यात्रा-विवरणमें इसका उल्लेख किया है। ८वीं सदीमें 'कुवलयमाला'में भी इसका उल्लेख है। इस प्रकार स्पष्ट है कि सिंधीकी अपनी विशेषताओंका विकास अत्यंत प्राचीन कालमें ही हो चुका था।

सिंधीकी प्राचीनतम पुस्तक 'महाभारत' कही जाती है, जिसकी रचना संस्कृत 'महाभारत'के आधारपर १००० ई०से कुछ पूर्व हुई थी। १४वीं सदीसे इसमें नियमित रूपसे साहित्य मिलने लगता है। सिंधी साहित्यका सबसे प्रसिद्ध ग्रंथ 'शाहजो रिशालो' है। इसके प्रमुख कवि अब्दुल करीम, शाह लतीफ़ सचल और सामी आदि हैं।

सिंधीमें मुसलमानोंकी संख्या अधिक रही है, किंतु सिंधी भाषा उस अनुपातमें अरबी-फारसीसे प्रभावित नहीं कही जा सकती। सिंधी भाषाकी प्रमुख बोलियाँ ५-६ हैं। विचोली मध्य सिंधमें बोली जाती है: यही वहाँकी परिनिष्ठित तथा साहित्यिक भाषा है। 'विचोली'के एक रूपको 'सिराइकी'

या 'सिराइकी 'सिंधी' कहते हैं। यह उपबोली होती हुई भी अब स्वतंत्र बोली जैसी हो गयी है। अन्य बोलियाँ थरेली, लासी, लाड़ी तथा कच्छी हैं। कच्छीकी कायस्थी, भाटिया आदि कुछ उप-बोलियाँ भी हैं। कच्छीपर गुजराती-का प्रभाव पड़ा है।

सिंधी भाषाकी सबसे बड़ी विशेषता है, उसकी अंतःस्फोटात्मक (implosive) ध्वनियाँ ज, ब आदि। सिंधीके लिए फ़ारसी लिपिका प्रयोग होता है। अंततः-स्फोटात्मक ध्वनियोंके लिए पुराने अक्षरोंके आधारपर कुछ नये अक्षर भी बना लिये गये हैं। भारतमें सिंधी, अब नागरी लिपिमें भी लिखी जाने लगी है। सिंधीकी अपनी प्राचीन लिपि लंडा है। इसके पूरे सिंधमें कई रूप प्रचलित रहे हैं। कुछ सिंधी-भाषी गुरमुखीका भी प्रयोग करते रहे हैं।

सिंधी बोलनेवालोंकी संख्या १९३१की जनगणनाके अनुसार लगभग ४० लाख थी। भारतमें इस समय सिंधियोंकी संख्या २० लाखसे ऊपर है।

सिंधीका संबंध व्राचड अपभ्रंशसे है। व्राचडकी बहुतसी विशेषताएँ इसमें अब भी मिलती हैं।

सिंधी लिपि––पहले सिंधमें प्राचीन नागरीका प्रचार था, मुस्लिम-कालमें यहाँ मुसलमानों-की संख्या बढ़ गयी और अरबी-फारसी लिपि प्रचलित हो गयी। अंग्रेज़ोंके आनेके बाद इस लिपिका एक निश्चित स्वरूप सिंधी लिखनेके लिए निश्चित किया गया, जिसे **अरबी-सिंधी** लिपि कहते हैं। अरबी-सिंधी मूलतः अरबी-फ़ारसी लिपिपर आधारित है, किंतु कई बातोंमें जैसा कि आगे दिये गये अक्षरोंसे स्पष्ट है, यह उर्दूसे भिन्न है। इसमें सिंधीकी आवश्यकताके अनुसार बहुतसे नये अक्षर बिंदुओंके सहारे बना लिये गये हैं। बिंदुओंके सहारे नये अक्षर बनानेकी परंपरा देवनागरी (ड़, ढ़, क़, फ़, ॱ आदि) तथा रोमन आदि (˙˙) में भी मिलती है। सिंधी वर्णमाला-में वर्णोंका क्रम १९०८के पूर्व कुछ और था। १९०८के बादसे जो क्रम निश्चित हुआ, वही अब भी चल रहा है। नीचे इसी क्रममें वर्ण दिये गये हैं। अब भारतीय सिंधी अरबी-सिंधी लिपि छोड़कर देवनागरी लिपि (कुछ परिवर्धनके साथ) अपनानेकी सोच रहे हैं। कुछ सिंधी पुस्तकें देवनागरीमें अजमेरसे छप भी चुकी हैं।

ا ب ٻ پ ڀ ٿ ٽ ٺ

ث ت ڦ ف ٿ گ ڳ ڱ

ک ي د ذ ڌ ڊ ح ج ڄ

ڃ چ ڇ خ ع غ ر ز ژ

ء ن ل س ش و ق ص ض

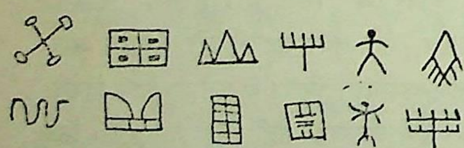
ڻ ط ظ ه ة ڱ ڪ ع

सिंधु घाटीकी लिपि––भारतमें लिखनेकी कला-का ज्ञान लोगोंको अत्यंत प्राचीन कालसे है। इसके प्राचीनतम नमूने सिंधु घाटी (पंजाब-के मांटेगोमरी ज़िलेके हड़प्पा तथा सिंधके लरकाना जिलेके मोहन-जो-दड़ोंमें प्राप्त सीलोंपर) में मिले हैं। हेरास, लैंग्डन, स्मिथ, गैड तथा हंटरने इसे समझने और पढ़नेका प्रयास किया है, पर अभीतक किसी-को पूर्ण सफलता नहीं मिल सकी है। **सिंधु घाटीकी लिपिकी उत्पत्ति**––सिंधु घाटीकी लिपिकी उत्पत्तिके विषयमें प्रधानतः तीन मत है :–(क) **द्रविड़ उत्पत्ति**––इस मतके सम-र्थकोंमें एच० हेरास तथा जान मार्शल प्रधान हैं। इन लोगोंके अनुसार सिंधु-घाटीकी सभ्यता द्रविड़ोंकी थी और वे ही लोग इस लिपिके जनक तथा विकास करनेवाले थे। इस मतके समर्थकोंके तर्क पुरातत्त्ववेत्ताओंको इतने सशक्त नहीं लगे हैं कि उन्हें स्वीकार किया जा सके। (ख) **सुमेरी उत्पत्ति**––एल० ए० वैडेल तथा डॉ० प्राणनाथके अनुसार सिंधु घाटीकी लिपि सुमेरी लिपिसे निकली है।

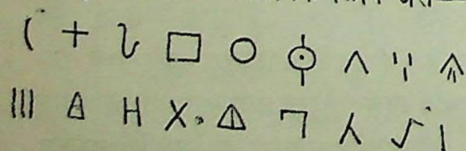
वैडेलके अनुसार सिंधुकी घाटीमें ४००० ई० पू० सुमेरी लोग थे और उन्हींकी भाषा तथा लिपि वहाँ प्रचलित थी। जैसा कि डॉ० राजबली पांडेयने लिखा है प्राचीन भारतीय, मध्य एशिया, क्रीट तथा इजिप्टकी पुरानी लिपियाँ चित्र-लिपि थीं और व्यापारिक संबंधोंके कारण उनमें कुछ साम्य भी है, किंतु आज इतने दिन बाद यह कहना कठिन है कि इस प्रकारकी लिपिके मूल निर्माता कौन थे और किन लोगोंने मूल निर्माताओंसे इसे सीखा। (ग) **आर्य या असुर उत्पत्ति**-- कुछ लोगोंके अनुसार सिंधुकी घाटीमें आर्य या असुर रहते थे और इन्हीं लोगोंने इस लिपिका निर्माण किया। इन लोगोंके अनुसार प्राचीन एलामाइट, सुमेरी तथा मिस्री लिपियोंसे, इस लिपिका साम्य इस कारण है कि इन तीनों ही देशोंमें लिपि भारतसे ही गयी है।

ये तीनों ही मत अपने समर्थकोंको ही मान्य हैं। वस्तुस्थिति यह है कि आधारसूत्रकी कमीके कारण इस लिपिकी उत्पत्ति या उत्पत्तिस्थानके संबंधमें निश्चयके साथ कुछ नहीं कहा जा सकता।

सिंधु घाटीकी लिपिमें कुछ चिह्न तो चित्र जैसे हैं--



और कुछ अक्षर या रेखात्मक लिपि जैसे--



विद्वानोंका कहना है कि यह लिपि यदि शुद्ध भावमूलक होती तो इतने थोड़े चिह्नोंसे काम नहीं चलता, जितने कि वहाँ मिले हैं। इसी आधारपर लोगोंने अनुमान लगाया है कि यह **लिपि** भावमूलकता और अक्षरात्मकताके संधिस्थलपर खड़ी है। अर्थात् यहाँ कुछ चिह्न चित्रमूलक हैं और कुछ अक्षरसे हैं। इसी आधारपर इसे संक्रमणकालीन लिपि या 'ट्रांज़िशनल स्क्रिप्ट' (भाव-ध्वनि-मूलक लिपि) कहा गया है। सिंधु घाटीकी लिपिमें कुल कितने चिह्न हैं, इस संबंधमें भी विद्वानोंमें मतभेद है। इसका कारण यह है कि वर्गीकरणमें कुछ लोग तो कई चिह्नोंको एक चिह्नका ही लेखनके कारण परिवर्तित रूप मानते हैं और कुछ लोग उन्हें अलग-अलग चिह्न मानते हैं। इस संबंधमें तीन विद्वानोंके मत प्रधान हैं। हंटरके अनुसार चिह्नोंकी संख्या २५३, लैंगडनके अनुसार २२८ तथा गैड और स्मिथके अनुसार ३९६ है। कुछ प्रमुख चिह्न इस प्रकार हैं:--



सिंहली--भारोपीय परिवारकी लंकाके दक्षिणी भागमें प्रयुक्त एक भाषा। लगभग ५वीं सदी ई० पू० में विजय नामक राजाके साथ भारतसे कुछ लोग लंकामें जाकर बस गये। इन्हीं लोगोंके साथ यहाँसे भाषा भी गयी। विजय राजा तथा उनके साथ जानेवाले कहाँके थे, इस संबंधमें विवाद है। ये लोग जहाँके रहनेवाले रहे होंगे, वहींकी भाषासे सिंहलीका संबंध होगा। कुछ लोगोंने इन्हें पश्चिमी

बंगालका माना है, जिसके अनुसार सिंहलीका संबंध उस समय बंगालमें प्रयुक्त भाषासे होगा, किंतु कुछ लोगोंने सौराष्ट्र, लाट या गुजरातमें उनका स्थान माना है। अधिक संभावना सौराष्ट्रकी ही है, इस प्रकार सिंहलीका संबंध सौराष्ट्रकी पालि या पालिपूर्व भाषासे है। बादमें बौद्ध धर्मके कारण मगधसे भी लंकाका संबंध हो गया और इसपर पालि तथा संस्कृतका कुछ प्रभाव पड़ा। **सिंहली प्राकृत** भारतीय प्राकृतोंकी तरह, लंकाकी प्राकृत है। इसका अधिकांश साहित्य नष्ट हो चुका है, केवल कुछ अभिलेख ही हैं। सिंहलीमें प्राप्त साहित्य १०वीं सदीके आसपासका है। सिंहली भाषाका प्राचीन रूप एळू कहलाता है। 'एळू' शब्द सिंहल (>सिंहलु> हिअलु>एलु) का ही विकसित रूप है। एळु एक प्रकारसे अपभ्रंश है, अर्थात् सिंहली प्राकृत और वर्तमान सिंहलीके बीचकी भाषा है। एलुपर कुछ मराठीका भी प्रभाव पड़ा है। मालद्वीप तथा आसपासके द्वीपोंकी भाषा भी सिंहलीका ही एक रूप है। इसे **महल** (mahl) कहते हैं।

सिंहली प्राकृत––(दे०) **सिंहली**।

सिंहली लिपि––लंकामें प्रयुक्त लिपि। **प्राचीन सिंहली लिपि**का संबंध **ब्राह्मी लिपि** (दे०)-से है। **मध्यकालीन सिंहली** लिपि **ग्रंथलिपि** (दे०)से निकली है। इसीसे १३वीं सदीमें आधुनिक सिंहली लिपि विकसित हुई। उत्तरी लंकामें तमिल भाषी लोग **तमिललिपि** (दे०)-का प्रयोग करते हैं।

सिउस्लव (siuslaw)––उत्तरी अमेरिकाकी **कोअस्टल** (दे०) भाषाकी एक उप-भाषा।

सिऔक्स (sioux)––**उत्तरी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इस परिवारके अंतर्गत ७ वर्ग हैं:–(१) **डकोट-अस्सिनिबोइन**, (२) **ढेगिहा**, (३) **चिवेरे**, (४) **मंडन**, (५) **हिडट्स वर्ग**, (६) **बिलोक्सी वर्ग** तथा **पूर्वीय सिऔक्स**। इस परिवारमें लगभग २४ प्रमुख भाषाएँ हैं। इस परिवारका मूल क्षेत्र सुपीरिअर झीलके दक्षिण-पश्चिम था। अब डैकोट्स, मिनेसोटा तथा मोन्टानामें इसके बोलनेवाले हैं, जिनकी संख्या लगभग २५,००० है। इस परिवारकी भाषाओंके लिए० तथा वर्गोंको कोशमें यथास्थान देखा जा सकता है।

सिकरवाड़ी––**ब्रजभाषा** (दे०)का, ग्वालियरके उत्तरी-पूर्वी क्षेत्रमें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप। इस क्षेत्रमें सिकरवाड़ राजपूतोंके प्राधान्यके कारण इसका नाम 'सिकरवाड़ी' पड़ा है। ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,२७,००० थी।

सिकलगारी (sikalgari)––बेलगाम (बंबई) में प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा। इसका एक नाम **मिश्र** भी मिलता है।

सिक्कमी तिब्बती––सिक्कम और दार्जिलिंगमें बोली जानेवाली **तिब्बती** (दे०)। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १०,०४६ थी।

सिक्किम भोटिआ––(दे०) **सिक्कमी-तिब्बती**।

सिक्यूलन (siculan)––प्राचीन कालमें सिसलीमें सिकेली लोगों द्वारा प्रयुक्त एक भारोपीय परिवारकी भाषा, जो अब विलुप्त हो चुकी है।

सिखरिआ (sikharia)––**कोडा** (दे०)का एक जातीय रूप।

सिखी (sikhi)––१८९१ की हैदराबाद जनगणनाके अनुसार **पंजाबी** (दे०)का एक नाम। इसका संबंध 'सिक्ख' शब्दसे है।

सिग़नी––एक पामीरी बोली। (दे०) **ईरानी**।

सिगुआ (sigua)––**नहुअत्‌ल** (दे०) भाषा वर्गका एक उपवर्ग। इस उपवर्गकी भाषाएँ विलुप्त हो चुकी हैं। इसकी प्रमुख भाषा सिगुआ थी।

सिजबू (sijabu)––१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **हिन्दी** (दे०)का खानदेशमें प्रयुक्त एक रूप।

सिट––'सर्वनाम'का एक अन्य नाम। (दे०) **सर्वनाम**।

सित्तू (sittu)––क्यौक्प्यू (बर्मा) में प्रयुक्त एक **कुकी-चिन** (दे०) भाषा। १९२१की

जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३,९१८ थी ।

सिद्धमात्रिका लिपि—**गुप्तलिपि** (दे०)की पश्चिमी शाखाकी पूर्वी उपशाखासे ६वीं सदीमें विकसित एक लिपि । इसे **न्यूनकोणीय लिपि** भी कहा गया है । तिब्बती लिपिका इसीसे विकास हुआ है ।

सिनलोआ (sinaloa)—**किनलोआ** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम ।

सिनसिन (sinsin)—**करेन** (दे०)की एक बोली ।

सिन-ह्म मपौक (sin-ham mapauk) —**करेन्नी** (दे०)का एक रूप ।

सिन्का (sinca)—**क्सिन्का** (दे०) परिवारका एक अन्य नाम ।

सिन्लम (sinlam)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **व** (दे०)का, पूर्वी मंगलुन, उत्तरी शान स्टेट (बर्मा)में प्रयुक्त (४,३५२ व्यक्तियों द्वारा) एक रूप ।

सिन्लेंग (sinleng)—**व** (दे०)का पूर्वी मंगलुन उत्तरी शान स्टेटमें प्रयुक्त एक रूप । बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,५३८ थी ।

सिपाड़ी—'मध्यपूर्वी राजस्थानी'की बोली **हाड़ौती** (दे०)का एक स्थानीय रूप, जो शिवपुर (ग्वालियर)के आसपास बोला जाता है । ग्वालियरके निवासी 'हाड़ौती'के इस रूपको **शिवपुरी**, किंतु कोटाके निवासी **सिपाड़ी** (समीपवर्त्ती नदी 'सिप'के आधारपर) कहते हैं । सिपाड़ीपर 'बुंदेली' तथा 'डांगी'का प्रभाव पड़ा है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४८,००० थी ।

सिप्रिअन—**सिप्रिओटे** (दे०)भाषाका एक नाम ।

सिप्रिओटे (cypriote)—प्राचीन कालमें साइप्रसमें प्रयुक्त एक विलुप्त भाषा । इसके संबंधमें बहुत कम जानकारी है । इसे एशियानिक वर्गमें रखा गया है । इसको **एपिसिप्रिअन** या **सिप्रिअन** भी कहते हैं ।

सिम (sima)—**अंगवाकू** (दे०)का एक नाम

सिम और मुलुंग (sima and mulung)—(दे०) **मुलुंग और सिम** ।

सिमी (simi)—**सेमा** (दे०)की एक बोली ।

सिम्रिक (cymric)—**वेल्श** (दे०)का एक नाम ।

सिम्रेग (cymraeg)—**वेल्श** (दे०)का एक अन्य नाम ।

सियांग (siyang)—**सियिन** (दे०)का एक अन्य नाम ।

सियाल्गीरी (siyalgiri)—**भीली** (दे०)—की, मिदनापुर (बंगाल)में प्रयुक्त, एक बोली ।

सियिन (siyin)—**चीनी परिवार** (दे०)—की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, असमीबर्मी शाखाके, कुकी-चिन वर्गकी, चिन पहाड़ियों (बर्मा)में प्रयुक्त एक उत्तरी चिन भाषा । बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३१६० थी ।

सिरकैसिअन (circassian)—एक काकेशस भाषा, जो मूलतः काकेशसमें बोली जाती थी, किंतु अब जिसके बोलनेवाले सीरिया तथा एशियामाइनर आदिमें बस गये हैं । इस भाषाको **चेरकेस** (cherkess) भी कहते हैं ।

सिरमौरी—**पश्चिमी पहाड़ी** (दे०)की सिरमुरके आसपासके क्षेत्रमें प्रयुक्त एक बोली । इसकी प्रधान उपबोलियाँ **धारठी** तथा **गिरिपारी** (दे०) हैं । इसकी लिपिका नाम भी सिरमौरी है, जो टाकरी लिपिका एक रूप है । इसपर पश्चिमी हिन्दी तथा पंजाबीका प्रभाव है । ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,२४,-५६२ थी ।

सिरमौरी धारठी—(दे०) **धारठी** ।

सिरमौरी लिपि—पहाड़ीकी उपबोली **सिरमौरी** (दे०) बोलीकी लिपि । यह **टक्की लिपि** (दे०)की ही एक उपशाखा है । इसपर देवनागरी लिपिका प्रभाव पड़ा है ।

सिरयाली—**सीराली** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

सिरहिन्दी—**खड़ी बोली** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

सिराइकी––इसका शाब्दिक अर्थ है 'सिरो,, अर्थात् 'ऊंची भूमि'की भाषा । एकाधिक बोलियोंके नामोंके साथ इसका प्रयोग मिलता है ।

सिराइकी लहँदा––सिराइकी हिन्दकी (दे०)–का एक अन्य नाम ।

सिराइकी सिंधी (siraiki sindhi)––**सिंधी** (दे०)की, ऊपरी सिंधमें प्रयुक्त, एक बोली । सिराइकीको **सरैकी** भी कहा जाता है । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ११,१२, ९२६ थी ।

सिराइकी हिन्दकी––लहँदा (दे०)की, **मुलतानी** (दे०) बोलीका, ऊपरी सिंधमें प्रयुक्त, एक रूप । **सिराइकी** शब्दोंको **सिरैकी** भी कहा जाता है । ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,०४,-८७५ थी ।

सिराचली(sirachali)––**शोराचोली** (दे०)-का एक अशुद्ध नाम ।

सिराजी––भारतके उत्तरी पहाड़ी भागोंमें कई बोलियोंके नामोंके साथ प्रयुक्त एक शब्द । इसको प्रायः लोग 'शीराजी' समझते हैं । वस्तुतः इसका अर्थ है 'ऊँचे पर्वतका' और यह शब्द मूलतः 'शिव-राज्य+ई' है ।

सिराजी (डोडाकी)––कश्मीरी (दे०)की, जम्मू प्रांतमें प्रयुक्त, एक बोली । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालों-की संख्या १४,७३२ थी ।

सिराजी (मंडीकी)––मंडी सिराजी (दे०)-के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम ।

सिराजी (शिमलाकी)––दे० **शिमला सिराजी**।

सिराली––(दे०) **सीराली** ।

सिरावाली––सीराली (दे०)का एक नाम ।

सिरिआंनो (siriono)––**टुपी-गुअरनी** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा ।

सिरिपुरिआ (siripuria)––उत्तरी **बंगाली**-का, पूर्वीय पूर्णियामें प्रयुक्त, एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ६,०३,६२३ थी ।

सिरिलिक लिपि(cyrillic)––सिरिल(cyril) नामक विद्वान् संत द्वारा ग्रीक लिपिके आधार-पर ९वीं सदीमें बनायी गयी एक लिपि । सिरिल-ने इसको बनानेमें मिफ़ोन तथा मेथोडिअस नामक आचार्योंका भी सहयोग प्राप्त किया था । सिरिलिक लिपि ही रूस, बुल्गेरिया, युक्रेन तथा सर्बिया आदिमें प्रयुक्त होती है । आरंभमें इसमें कम अक्षर थे, बादमें कुछ और जोड़े गये । इस लिपिमें दो बार सुधार हुए । पहला सुधार १७००के लगभग हुआ और यह लिपि कुछ सरल कर दी गयी, दूसरा सुधार १९१८ में । इसे **किरिल** या **किरिलिक** लिपि भी कहते हैं । (दे०) **रूसी लिपि** ।

सिरोही––'दक्षिणी मारवाड़ी'का एक स्थानीय रूप, जो सिरोही तथा उसके पासके मारवाड़के कुछ भागोंमें बोला जाता है । सिरोहीके प्रमुख उपरूप **राठी** तथा **सांठकी बोली** हैं । 'सिरोही'पर 'गुजराती'का प्रभाव है । इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार लगभग १,७९,-३००थी । (दे०) **मारवाड़ी** ।

सिलबिक––(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**में **स्वर और व्यंजन** उपशीर्षक ।

सिलहटिया (sylhettia)––पूर्वी **बंगाली**-का, पूर्वी सिलहट तथा काचार (असम)में प्रयुक्त, एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षण-के अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ९,०६,२२१ थी ।

सिलियन––एक प्राचीन भाषाका नाम । (दे०) **भारोपीय एनाटोलियन परिवार** ।

सिलिसिअन (cilician)–– सिलिसिआकी एक विलुप्त भाषा । इसके परिवारका पता नहीं है । इसे **एशियानिक** (दे०) वर्गकी भाषा कहा जाता है ।

सिसिलिअन (sicilian)––(१) सिसलीकी बोलियोंका एक सामूहिक नाम (२) सिसली-की प्रमुख बोलीके लिए प्रयुक्त एक नाम । इन बोलियोंका संबंध लैटिनसे है ।

सिसेल (sicel)––सिसिली तथा इटलीमें प्राचीन कालमें प्रयुक्त होनेवाली एक विलुप्त बोली । इसे सिकुली लोग बोलते थे, जो

लिगूरियन कबीले थे। इसी आधारपर इसे लिगूरियनसे संबद्ध माना गया है।

सिस्किआ (siskia)—**ब्लैक्फ़ुट** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम।

सि-हिअ (si-hia)—**चीनी परिवार** (दे०)-की एक विलुप्त भाषा। इसका क्षेत्र 'तान्गुत' (बर्मा) था।

सीमांतिक विराम (terminal contour)—एक प्रकारका **संगम** (दे०)।

सीमांतिक संगम (terminal juncture)—**संगम** (दे०)का एक भेद।

सीमावाचक संबंधसूचक अव्यय— (दे०) **संबंधसूचक अव्यय**।

सीरिअक (syriac)—(१) इराक, ईरान तथा तुर्कीमें लगभग एक लाख लोगोंद्वारा प्रयुक्त एक **सेमिटिक** (दे०) भाषा, जो अरबीसे संबंध रखती है। (२) एक पूर्वी आरमेइक बोली, जो एदेसामें २री सदीके पास बोली जाती थी। बादमें यह उत्तरी सीरिया तथा पश्चिमी मेसोपोटामियाँकी साहित्यिक भाषा बन गयी। १३वीं सदीके बाद इसका स्थान अरबीकी एक बोलीने ले लिया। यों कर्मकाण्डीय कामोंमें अब भी इसका प्रयोग चलता है।

सीराली— **कुमायूँनी** (दे०)की अलमोड़ा ज़िलेके 'सीर'परगनेमें प्रयुक्त एक उपबोली। इसपर नैपालीका कुछ प्रभाव पड़ा है। इसे **सिराली**, **सिरयाली**, या **सिरावाली** भी कहते हैं। ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १२,४८१ थी।

सुंडी (sundi)—**हलबी** (दे०)का एक रूप।

सुंदीअन (sundanese) ६५ लाख लोगों द्वारा जावा आदिमें बोली जानेवाली, इंडोनीशियन परिवारकी एक भाषा।

सुएरे (suerre)—दक्षिणी अमेरिकी भाषा **टलमनक्** (दे०)की एक विलुप्त बोली।

सुक (suk)—**सूडानवर्ग** (दे०)की सुक नामक जातिमें प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा। इसका क्षेत्र इथियोपियाकी सीमापर बरिंगो झीलके आसपास है।

सुकाली (sukali)—मैसूरमें प्रयुक्त एक **बंजारा** (दे०) भाषा।

सुकेती—**पश्चिमी पहाड़ी** (दे०)की मंडी वर्गकी एक बोली, जो सुकेत पर्वत श्रेणीके आसपास बोली जाती है। इसमें और मंडेआलीके परिनिष्ठित रूपमें अधिक अंतर नहीं है। इसके लिखनेमें मंडेआली लिपि प्रयुक्त होती है जो, टाकरीका ही एक विकसित रूप है। (दे०) **मंडी वर्गकी बोलियाँ**।

सुडानी गिनिअन या **सुडानी गिनी**—**सूडान भाषा-परिवार** वर्गका एक अन्य नाम।

सुतइओ (sutaio)—**चेयेन्ने** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है। इसके बोलनेवाले अब चेयेन्ने बोलते हैं। सुतइओ भाषा-भाषियोंका क्षेत्र दक्षिणी डकोटा है।

सुद्रा (suda)—**उड़िया** (दे०) अथमलिकमें सुदा नामक जाति द्वारा बोले जानेवाले रूपका एक नाम।

सुदिर (sudir)— १८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **कोंकणी**की बोलीके अनुसार **गोमांतकी** (दे०)का एक रूप।

सुद्र (sudra)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार **मराठी** (दे०)का एक रूप। शूद्रों द्वारा प्रयुक्त होनेके कारण यह नाम पड़ा है।

सुनुवार (sunuwar)—**सुन्वार** (दे०)का एक अन्य नाम।

सुन्वार (sunwar)—**चीनी परिवार** (दे०)—की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी, तिब्बती-हिमालयी शाखाकी, सिक्किम, दार्जिलिंग तथा पूर्वीय नेपालमें प्रयुक्त, एक अ-सार्वनामिक हिमालयी भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलने वालोंकी संख्या ४१३२ थी।

सुप्—संस्कृतकी वे विभक्तियां, जिन्हें प्रातिपदिकमें लगाकर कारक रूप बनाये जाते हैं। इन विभक्तियोंके आधारपर बने कारक रूप **सुबन्त** (सुप् + अंत) कहलाते हैं। उदाहरणार्थ राम+सु (सुप् प्रत्यय) = रामः। यह 'रामः'

सुबंत है। (दे०) **प्रत्यय**।

सुबंत––(दे०) **सुप्**।

सुबन्तीय प्रत्यय (inflexional affix)––ऐसे प्रत्यय (पूर्व, मध्य या अंत्य), जिनकी सहायतासे प्रातिपदिक या मूल शब्दके कारकीय रूप बनाये जाते हैं।

सुबन्त्य (inflexible)––ऐसे प्रादिपदिक या मूल शब्द, जिनके कारकीय रूप प्रत्यय (आदि, मध्य या अंत) जोड़कर बनाये जा सकें।

सुबखमिमिक (subakhmimic) **कॉप्टिक** (दे०) भाषाकी एक बोली।

सुबरेअन (subaraean)–– उत्तरी मेसोपोटामियामें प्राचीनकालमें प्रयुक्त हूरिअन तथा मितानी, इन दो विलुप्त भाषाओंके वर्गका नाम।

सुबिन्हा (subinha)––मध्य अमेरिकाकी **टज़ोट्ज़िल भाषा** (दे०)की एक विलुप्त बोली।

सुबिया (subiya)––**बांटू** (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा। इस भाषाका क्षेत्र जंबजी नदीके उत्तर तथा न्यासा एवं टैंगेनिका झीलोंके पश्चिममें है।

सुमात्री लिपि––सुमात्रामें तथा आसपास प्रयुक्त लिपि। यह प्राचीन जावानी लिपिसे निकली है।

सुमेरियन (sumerian)––एक विलुप्त भाषा। यह सुमेरी लोगोंकी भाषा थी। ४००० ई० पू०से ३री सदी ई० पू० तक यह भाषा प्रयुक्त होती रही। इसके प्राप्त साहित्यमें व्याकरण, अर्थशास्त्र, शासन, कानून, इतिहास, धर्म आदि विषयोंका वर्णन मिलता है। सुमेरी भाषाका क्षेत्र बेबलोनियासे फारसकी खाड़ीतक सुमेरिया या मेसोपोटामियामें था। इसे बर्मी, यूराल-अल्ताई, काकेशी, हैमेटिक, मलय––पालिनीशियन आदिसे जोड़नेके प्रयास किये गये हैं, किन्तु सफलता नहीं मिल सकी है। सुमेरी भाषा अश्लिष्ट योगात्मक है।

सुमेरी––(दे०) **सुमेरियन**।

सुमेरी लिपि––सुमेरी लोगों द्वारा प्रयुक्त **क्यूनिफ़ार्म लिपि** (दे०)। क्यूनिफ़ार्म लिपिका प्राचीनतम प्रयोग सुमेरियोंमें ही मिलता है।

सुमो (sumo)–मध्य अमेरिकाके **मिस्किटो-सुमो-मटगल्पा** (दे०) भाषा परिवारकी एक मुख्य भाषा। इसकी बोलियाँ **ऊलूआ, सुमोटाउअक्सक** तथा **योस्को** हैं। सुमोका एक अन्य नाम **ऊलूआ** भी है।

सुमो-टाउअक्सक (sumo-tauaxka)––मध्य अमेरिकाकी **सुमो** (दे०) भाषाकी एक बोली।

सुया (suya)––**कयापो** (दे०) की एक बोलीका नाम।

सुर––(दे०) **आघातका सुर** उपशीर्षक।

सुरगुजिया––**छत्तीसगढ़ी** (दे०)की एक उपबोली, जो कोरिया, सुरगुजा, उदयपुर तथा जशपुरके पश्चिमी भागमें बोली जाती है। इसका क्षेत्र प्रधान रूपसे सुरगुजामें है, अतः इसे इस नामसे अभिहित किया गया है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ३,८४,०००थी। 'सुरगुजिया' उपबोली, 'छत्तीसगढ़ी'(दे०)और 'नगपुरिया' (दे०)का एक मिश्रित रूप है।

सुरती (surti)––**गुजराती** (दे०)की सूरतमें प्रयुक्त एक बोली।

सुर रेखा (isotonic line)––नक्शेमें एक सुरके प्रदेशों या स्थानोंको दिखानेवाली रेखा।

सुर-लहर (intonation)––(दे०) **आघात**में **सुर-लहर** उपशीर्षक।

सुर–लहर रेखा––नक्शेमें समान **सुर–लहर** (दे०)––के स्थानोंको दिखानेवाली रेखा।

सुर विज्ञान (tonetics)––भाषाके 'सुर'का अध्ययन। यह ध्वनि विज्ञानकी एक शाखा है। (दे०) **आघात**।

सुर्खुली (surkhuli)––**कोची** (दे०)की एक बोली।

सुलैमानी (sulaimani)––पूर्वी **बलोची** (दे०)का एक प्राचीन नाम।

सुसिअन––**एलामाइट** (दे०)का एक नाम।

सुस्क्वेहन्ना (susquehanna)––**इरोकोइस** (दे०) भाषा-परिवारकी एक विलुप्त

उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

सूक्ष्म प्रतिलेखन (narrow transcription)—एक प्रकारका **ध्वन्यात्मक प्रतिलेखन** (दे०) । इसे कुछ लोगोंने **संकीर्ण प्रतिलेखन** भी कहा है, यद्यपि यह नाम सूक्ष्म प्रतिलेखन जितना सार्थक नहीं है ।

सूचक (informant)—सूचक उस व्यक्तिको कहते हैं, जिससे सुनकर भाषा वैज्ञानिक अध्ययनके लिए सामग्री एकत्र की जाती है । सूचकका चयन बहुत समझ-बूझकर किया जाना चाहिये । ऐसा सूचक सर्वोत्तम होता है, जो केवल उसी भाषा या बोली आदिका जानकार हो, जिसका अध्ययन करना हो तथा जिसपर अन्य प्रभावोंकी कम-से-कम संभावना हो ।

सूडान वर्ग या सूडान भाषा-परिवार-वर्ग—अफ्रीकाके कुछ भाषा-परिवारोंका एक वर्ग जो पहले सूडान परिवार वर्ग न समझा जाकर, एक परिवार समझा जाता था, पर डब्ल्यू श्मिटने स्पष्ट रूपसे दिखला दिया है कि यह एक वर्ग है और इसमें एकाधिक परिवार हैं । इसे सुडानी-गिनियन, सुडानी तथा गिनिअन भी कहते हैं । इस वर्गकी भाषाएँ अफ्रीकामें भूमध्यरेखाके उत्तर और हैमिटिक भाषाओंके दक्षिण, पूरबसे पश्चिमतक पतले भागमें फैली हैं । इसकी कुछ भाषाएँ लिपिबद्ध भी हैं । कुछ बातोंमें यह वर्ग बांटूसे मिलता-जुलता है । **सूडान वर्गकी भाषाओंकी प्रमुख विशेषताएँ**—(१) चीनी भाषाकी भाँति ये अयोगात्मक हैं । विभक्तियाँ बिल्कुल नहीं पायी जातीं । धातुएँ उसी प्रकार एकाक्षर हैं । (२) यहाँ व्याकरण नहीं होता और न उसकी कोई आवश्यकता ही है । (३) इनमें बहुवचन बहुत स्पष्ट नहीं है । कभी-कभी अन्य पुरुष (वे लोग, ये लोग) या 'लोग'के समानार्थी शब्दोंको जोड़कर संज्ञाको बहुवचन बना लेते हैं । ह्रस्व स्वरको दीर्घ करके भी कभी-कभी बहुवचनको प्रकट कर लेते हैं, जैसे रॉर = बन और रोर = बहुतसे बन । पर यह सब बहुत कम किया जाता है । (४) लिंगके विषयमें भी यही बात है । कुछ खास शब्द लिंग-बोधक होते हैं, जिन्हें जोड़कर शब्दोंको लिंग प्रदान किया जाता है । (५) पूर्वसर्ग (preposition)के अभावके कारण संयुक्त या मिश्रित वाक्योंकी रचना यहाँ नहीं हो पाती, अतः उसे तोड़कर लोग साधारण बना लेते हैं, जो छोटा-सा होता है और जिसमें केवल एक क्रिया होती है । उदाहरणार्थ यदि इन लोगोंको 'वह जहाज़परसे समुद्रमें कूदा' कहना होगा तो इसे **तीन** वाक्योंमें (वह कूदा । जहाजके भीतरी भागको छोड़ा । समुद्रमें गिरा ।) कहेंगे । (६) ऊपर हम कह चुके हैं कि इस परिवारकी धातुएँ चीनीकी भाँति एकाक्षर होती हैं, पर प्रकृतिकी दृष्टिसे कुछ भिन्न होती हैं । इनमें वर्णनात्मकता होती है । साथ ही वे ध्वन्यात्मक भी होती हैं । यों तो हिन्दी आदि अन्य भाषाओंमें भी भड़-भड़, तड़-तड़ आदि ध्वन्यात्मक शब्द होते हैं, जो ध्वनिको चित्रित करते हैं, पर इन भाषाओंमें धातु या शब्द केवल ध्वनिको ही प्रकट नहीं करते, अपितु रूप, गति, अवस्था और यहाँतक कि रंगका भी चित्र खींच देते हैं । ये अधिकतर क्रिया-विशेषणके रूपमें प्रयुक्त होते हैं, पर कभी-कभी विशेषण रुपमें भी । इस वर्गकी भाषाओंमें ऐसे शब्द सबसे अधिक हैं । कुछ क्रिया-विशेषणोंके उदाहरण लिये जा सकते हैं:—ये क्रिया-विशेषण 'जो' धातु (= चलना) की विशेषता प्रकट करते हैं—कक—सीधा । त्यत्य—जल्दी-जल्दी । सिसि—छोटे-छोटे कदम रखकर, आदि । हमलोग इनके सुननेके अभ्यस्त नहीं हैं, फिर भी थोड़ा ध्यान दें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि इन शब्दोंकी ध्वनि अपने अर्थको व्यक्त करनेमें पूर्णतया समर्थ है । (७) चीनी भाषाकी ही भाँति यहाँ भी सुर या तान (tone)के परिवर्तनसे अर्थमें परिवर्तन हो जाता है । सूडान या **सुडानी-गिनी**

वर्गका विभाजन कई लोगोंने कई प्रकारसे किया है। श्मिटने इसमें ७ परिवार माने हैं, ड्रेक्सेल १७१ भाषाएँ मानते हैं, डेलाफ़ोसे ४३५ भाषाएँ माननेके पक्षमें हैं। कुछ लोग इसमें सूडान और गिनीका दो परिवार मानते हैं। डेलाफोसेका वर्गीकरण (les langues du monde में) निम्नांकित रूपमें है:—(१) **नील-चाड** (nilo-chad)—इस वर्गमें लगभग ३० भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख 'नूबा', 'कुनम', 'टूबू', 'कनूरी' आदि हैं। (२) **नील-अबीसीनिअन** (nilo-abyssinian)—इस वर्गमें १५ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख 'शिलुक', 'डिन्का' आदि हैं। (३) **नील-भूमध्यरेखा** वर्ग (nilo-equatoial)—इस वर्गमें २६ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख 'बरी', 'सुक', 'मासइ' आदि हैं। (४) **कोर्डोफ़निअन** (kordofanian)—इस वर्गमें १० भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख 'टुमेली' है। (५) **नील-कांगोली** (nilo-congolese)—इस वर्गमें १९ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख 'मंगबेटू' तथा 'मबुबा' हैं। (६) **उबांगी** (ubangi)—इस वर्गमें लगभग २५ भाषाएँ है, जिनमें प्रमुख 'निट्टू', 'मुंगू', 'ज़ांडे' तथा 'बांडा' आदि हैं। (७) **शरी-वाडी** (shari-wadi)—इस वर्गमें १२ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख 'सर' तथा 'बरम' हैं। (८) **शरी** (shari)—इस वर्गमें लगभग १५ भाषाएँ हैं, किंतु प्रसिद्ध कोई नहीं है। (९) **नाइजेरो-चाड** (nigero-chad)—इस परिवारमें लगभग ३१ भाषाएँ हैं। प्रमुख हौसा है। (१०) **नाइजेरो कमेरून** (nigero camerun)—इस वर्गमें लगभग ६४ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख 'फ़ी', 'बो', योरुबा आदि हैं। (११) **लोअर नाइजर** (lower niger)—इस वर्गमें केवल एक ही भाषा 'जो' है। इस भाषाकी बहुतसी बोलियाँ तथा उपबोलियाँ हैं। (१२) **वोल्टाइक** (voltaic)—इस वर्गमें ५३ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख 'गुर्मा', 'मो', 'कुरुमा', 'सेनुफू' आदि हैं। (१३) **आइवरी कोस्ट-डहोमिअन** ivory coast-dahomian)—इस वर्गमें ४८ भाषाएँ हैं। जिनमें प्रमुख 'फ़ोन', 'एहुए', 'गाँ', 'ची', 'फांटी' आदि हैं। (१४) **नाइजेरो सेनेगलीज़** (nigero-senegalese)—इस वर्गमें ३६ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख **सोंगोइ**, 'डोगोन', 'स़रकोल्ले', 'मन्डिंगो', 'वइ', 'मेंडे' आदि हैं। (१५) **आइवरी कोस्ट-लाइबेरिअन** (ivory coast-liberian)—इस वर्गमें २४ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख 'ग्रे', 'क्रा', 'बस्सा' आदि हैं। (१६) **सेनेगल-गिनी** (senegal-guinean)—इस वर्गमें लगभग २४ भाषाएँ हैं, जिनमें प्रमुख 'वोलोफ़', 'प्यूल' तथा 'सेरेर' आदि हैं। डेलाफ़ोसेके अनुसार सुडानी-गिनी और बांटूका एक परिवार है। सुडानी-गिनीके बोलनेवालोंकी संख्या ५ करोड़से ऊपर है।

सूतो—**सोथो** (दे०) भाषाका एक नाम।

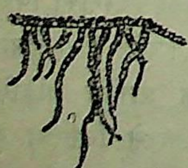
सूत्र—ऐसी संक्षिप्त समस्त शैलीकी रचना, जिसमें सांकेतिक ढंगसे किसी विषयके संबंधमें कोई बात असंदिग्ध रूपमें कही गयी हो। व्याकरण तथा दर्शन आदिमें सूत्रों द्वारा विषय-विवेचनाकी परंपरा भारतमें प्राचीन कालसे मिलती है। सूत्रकी जो प्रसिद्ध परिभाषा है, उसमें अल्पाक्षरता, असंदिग्धता, सारवत्ता, अनेकार्थता तथा अबाधताको सूत्रमें आवश्यक माना गया है :—'अल्पाक्षरमसंदिग्धं सारवद्विश्वतोमुखम्। अस्तोभमनवद्यं च सूत्रं सूत्रविदो विदुः'। सूत्रोंकी परंपराका विकास संक्षेपमें बातोंको याद करनेके लिए हुआ था।

सूत्र-लिपि—एक प्राचीन पद्धति, जिसके द्वारा एक प्रकारसे लिपिका काम लिया जाता था। सूत्र लिपिका इतिहास भी काफ़ी पुराना है। इसकी परंपरा, प्राचीन कालसे आजतक किसी-न-किसी रूपमें चली आ रही है। स्मरणके लिए आज भी लोग रूमाल आदिमें गाँठ देते हैं। सालगिरह या वर्ष-

गाँठमें भी वही परंपरा अक्षुण्ण है। प्राचीन कालमें सूत्र, रस्सी तथा पेड़ोंकी छाल आदिमें गाँठ दी जाती थी। किसी बातको सूत्र रूपमें रखने या सूत्र (व्याकरण या दर्शन-शास्त्र आदिके सूत्र) यादकर पूरी बातको याद रखनेकी परंपराका भी संबंध इसीसे ज्ञात होता है।

सूत्रोंमें गाँठ आदि देकर भाव व्यक्त करनेकी परंपरा भी काफी प्राचीन है। इस आधारपर भाव कई प्रकारसे व्यक्त किये जाते रहे हैं, जिनमें प्रधान निम्नांकित हैं:—
(क) रस्सीमें रंग-विरंगे सूत्र बाँधकर। (ख) रस्सीको रंग-विरंगे रंगोंसे रँगकर। (ग) रस्सी या जानवरोंकी खाल आदिमें भिन्न-भिन्न रंगोंके मोती, घोंघे, मूंगे या मनके आदि बाँधकर। (घ) विभिन्न लंबाइयोंकी रस्सियोंसे। (ङ) विभिन्न मोटाइयोंकी रस्सियोंसे। (च) रस्सीमें तरह-तरहकी तथा विभिन्न दूरियोंपर गाँठें बाँधकर। (छ) डंडेमें भिन्न-भिन्न स्थानोंपर भिन्न-भिन्न मोटाइयों या रंगोंकी रस्सी बाँधकर। इस तरहके लेखनका उल्लेख, ५वीं सदीके ग्रंथकार हेरोडोटस (४, ९८)-ने किया है। चित्र लिपिका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण पीरूकी 'क्वीपू' है।

'क्वीपू'में भिन्न-भिन्न लंबाइयों, मोटाइयों तथा रंगोंके सूत (जो प्रायः बटे ऊनके होते थे) लटकाकर भाव प्रकट किये जाते थे। कहीं-कहीं गाँठें भी लगायी जाती थीं। इनके द्वारा गणना की जाती थी तथा ऐतिहासिक घटनाओंका भी अंकन होता था।



[पीरूमें प्राप्त 'क्वीपू' नामक सूत्र-लिपि]

पीरूके सैनिक अफसर इस लिपिका विशेष प्रयोग करते थे। इसके माध्यमसे सेनाका एक वर्णन आज भी प्राप्त है, पर उसे पढ़ने या समझनेका कोई साधन नहीं है। चीन तथा तिब्बतमें भी प्राचीनकालमें सूत्र-लिपिका व्यवहार होता था। बंगालके संथालों तथा कुछ जापानी द्वीपों आदिमें आज भी सूत्र-लिपि कुछ रूपोंमें प्रयोगमें आती है। टंगानिकाके मकोन्दे लोग छालकी रस्सियोंमें गाँठ देकर बहुत दिनोंसे घटनाओं तथा समयकी गणना करते आये हैं।



सेंकदोंग (senk-dong)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, ऊपरी छिन्दविन (बर्मा)-में प्रयुक्त (लगभग २००० व्यक्तियोंद्वारा व्यवहृत) **चीनी परिवार** (दे०) की एक नागा भाषा।

सेंगमइ (sengmai)—मणिपुर (असम)-में प्रयुक्त एक लूई (दे०) भाषा।

सेंगा (senga)—बांटू (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा। इस भाषाका क्षेत्र जंबज़ी नदीके उत्तर तथा न्यासा एवं टंगेनिका झीलोंके पश्चिममें है।

सेंगिमा (sengima)—**एंग्वेओ** (दे०)का एक अन्य नाम।

सेंग्मा (sengma) **एंग्वेओ** (दे०) की एक बोलीका नाम।

सेंतुंग (sentung)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार (बर्मामें इसका नाम 'ह्सेंतुंग' लिया जाता है), चिन पहाड़ियोंपर प्रयुक्त एक भाषा। इसके पारिवारिक संबंधका ठीक पता नहीं है।

सेओ-बंकर (seo-bankar)—**कोहिस्तानी** (दे०)की बोली **मैयाँ** (दे०)का, कोहिस्तानमें प्रयुक्त, एक रूप।

सेक (sek)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)-का एक भाषा-परिवार। इस परिवारकी

प्रमुख भाषाएँ कटकओ, कोलन तथा सेचुरा हैं।

सेकोटन (sekotan)––**पूर्वीय अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। अब यह भाषा विलुप्त हो चुकी है।

सेचुरा (sechura)––**सेक** (दे०) परिवार की एक विलुप्त दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

सेटाला नियम (setala's law)––फ़िनिश भाषाके व्यंजन-परिवर्तन संबंधी एक ध्वनि नियम। इसका प्रयोग वेसलेने किया है।

सेट्––संस्कृतमें धातुओंको आगमकी दृष्टिसे तीन वर्गोंमें बाँटा गया है:––(१) **सेट्**–– ऐसी धातुएँ, जिनके रूप बनानेमें धातु और प्रत्ययके बीचमें 'इट्' अर्थात् 'इ'का आगम होता हो। 'इ' या 'इट्' सहित रूप होनेसे इन्हें सेट् कहते हैं। उदाहरणार्थ, भू (भविता), पठ् (पठिष्यति)। (२) **वेट्**–– ऐसी धातुएँ, जिनमें 'इ' (या 'इट्) विकल्प-से (वा + इट्) आती है। (३) **अनिट्**–– ऐसी धातुएँ, जिनमें इ या इट् न (अन् + इट) आवे। जैसे गम् भुज् आदि।

सेडिला (cedila)––कुछ रोमन अक्षरोंके नीचे (,) लगाया जानेवाला एक चिह्न। इसका प्रयोग उक्त अक्षर द्वारा विशेष प्रकारकी ध्वनि व्यंजित करनेके लिए किया जाता है। यह एक प्रकारका विकारक (modifier) या विशिष्ट चिह्न (dia-critic mark) है।

सेतु-अक्षर––(दे०) **सेतु-ध्वनि**।

सेतु-ध्वनि (bridge sound)––उच्चारण सुविधाके लिए उपसर्ग तथा मूल शब्द, या मूल शब्द और प्रत्यय आदिके बीच (कुछ भाषाओंमें) लायी जानेवाली ध्वनि। इसे **सेतु-वर्ण, सेतु-अक्षर, सेतु-व्यंजन** (यदि व्यंजन हो), **सेतु-स्वर** (यदि स्वर हो), **सेतु-ध्वनि-ग्राम** (यदि ध्वनि-ग्राम हो) आदि नामोंसे भी अभिहित करते हैं।

सेतु-ध्वनिग्राम––(दे०) **सेतु-ध्वनि**।

सेतु-वर्ण––(दे०) **सेतु-ध्वनि**।

सेतु-व्यंजन––(दे०) **सेतु-ध्वनि**।

सेतु-स्वर––(दे०) **सेतु-ध्वनि**।

सेन (sen)––'सेम' (दे०) का एक नाम।

सेन सुम (sen sum)––बर्माके भाषासर्वेक्षणके अनुसार (बर्मामें इसका नाम 'ह्सेन ह्सुम' लिया जाता है) केंगतूंग दक्षिणी शान स्टेटमें प्रयुक्त (लगभग १,२६५ व्यक्तियों द्वारा व्यवहृत) एक भाषा। इसके संबंध-का ठीक पता नहीं है। कुछ लोग **व** (दे०) से संबद्ध मानते हैं।

सेनूफू (senufu)––**सूडान वर्ग** (दे०) की एक अफ्रीकी भाषा।

सेनेगल-गिनी (senegal-guinean)––**सूडान वर्ग** (दे०) की कुछ भाषाओंका एक वर्ग।

सेफ़ार्दी (sephardic)––भारोपीय परिवारकी इटैलिक उपशाखाकी स्पेनी भाषासे उद्भूत एक भाषा। इसका आधार १५वीं सदीकी स्पेनी है। यह कान्स्टैंटिनोप्ल, सलोनिका आदिके यहूदियोंकी भाषा है। इसका शब्द-भाण्डार तुर्की, अरबी, ग्रीक तथा हिब्रूसे प्रभावित है। इसे **लैदिनो** (ladino), **जूदो-रोमांस** (judaeo romance) तथा **जूदो स्पेनी** (judaeo-s panish) भी कहते हैं।

सेफ़ार्दी लिपि––हिब्रू लिपिपर आधारित एक लिपि, जिसका प्रयोग **सेफ़ार्दी** (दे०) भाषा लिखनेमें होता है।

सेम (sem)––**व** (दे०) का एक रूप।

सेमा (sema)––**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाओंके नागा-वर्गकी, नागा पहाड़ियों (असम) में प्रयुक्त, एक पश्चिमी नागा भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३४,८८३ थी।

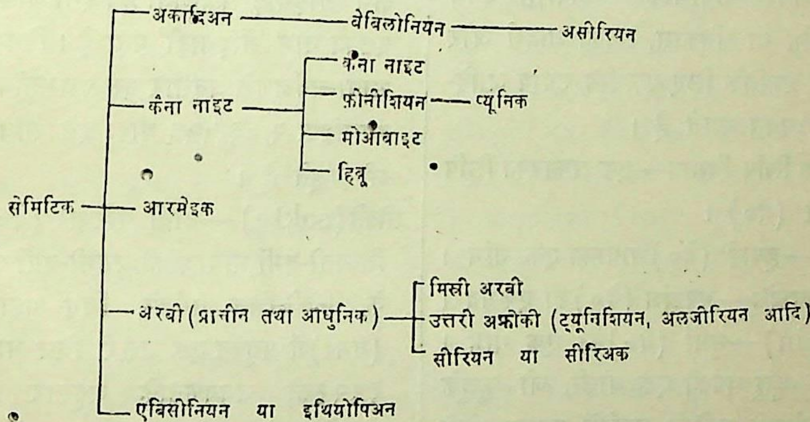
सेमिटिक परिवार––उत्तरी अफ्रीका तथा पश्चिमी दक्षिणी एशियाका एक भाषा-परिवार। हैमिटिकपर विचार करते समय हज़रत नूहके बड़े लड़के सेम दक्षिणी-पश्चिमी एशियाके निवासियोंके आदि पुरुष कहे गये हैं। उन्हींके नामपर उस क्षेत्रमें बोले जानेवाले भाषा-परिवारका

नाम सेमिटिक या सामी पड़ा है। इस परिवारकी अरबी भाषाने उत्तरी अफ्रीकापर अपना आधिपत्य जमा लिया है और इस प्रकार यह परिवार अफ्रीका खंडमें भी आता है। बहुतसे विद्वान् हैमिटिक (दे०) और सेमिटिकको एक ही परिवार **हैमिटो-सेमिटिक** (दे०)के दो उपपरिवार मानते हैं। इसे एक माननेका कारण दोनों परिवारोंके लक्षणोंमें समानताका आधिक्य है।

सेमिटिक और हैमिटिकके मिलते-जुलते लक्षण—(१) दोनों ही श्लिष्ट योगात्मक और अन्तर्मुखी हैं। इनमें पूर्व, अन्तः और पर विभक्तियाँ लगती हैं, पर अधिकतर सम्बन्धतत्त्व भीतर होनेवाले स्वर-परिवर्तनसे ही सूचित हो जाता है। जैसे सेमिटिककी अरवी भाषामें क़्-त्-ल्से क़ितल, क़ित्ल, कुतिल, यक़्तुलु, क़ातिल तथा क़तल आदि अनेक शब्द बनते हैं, जिनमें साधारण स्वर-परिवर्तनसे ही अर्थ-परिवर्तन हो गया है। (२) दोनों ही परिवारोंमें अफ्रीकाकी कुछ भाषाओंकी भाँति क्रियामें कालका गौण स्थान है और पूर्णता और अपूर्णताका प्रमुख। (३) बहुवचन बनानेके लिए दोनों ही कुलोंमें प्रत्यय लगते हैं और दोनोंके प्रत्ययोंका मूल भी लगभग एक ही ज्ञात होता है। (४) 'त' ध्वनि दोनों कुलोंमें स्त्रीलिंगका चिह्न मानी जाती है। दोनों हीमें लिंगभेद नर-मादापर अर्थात् प्राकृतिक लिंगपर न होकर कुछ अन्य बातोंपर आधारित है। (५) दोनों परिवारोंके सर्वनामोंका मूल भी प्रायः एक ही है।

सेमिटिक परिवारकी प्रमुख विशेषताएँ—सेमिटिक और हैमिटिकके उपर्युक्त तुलनात्मक अध्ययनमें इस विषयपर कुछ बातें दी जा चुकी हैं, किंतु दोनों परिवारोंकी सभी बातें एक-सी नहीं हैं, अतः यहाँ सेमिटिक कुलपर अलग भी विचार कर लेना आवश्यक है। (१) माद्दा (धातु, रूट या अर्थतत्त्वबोधक मूल शब्द) प्रायः तीन व्यंजनोंका होता है, जैसे क्‌त्‌ब् (लिखना), द्‌ब्‌र् (बोलना), व्‌ग्‌द् (पाना) इत्यादि। अपवादस्वरूप कुछ माद्दे चार या पाँच व्यंजनोंके भी होते हैं और 'रुबाई' तथा 'खुमाशी' कहलाते हैं। यों कुछ विद्वानोंका कहना है मूलतः सभी धातुएँ तीन व्यंजनोंकी थीं। हैमिटिक भाषाओंमें यह बात नहीं पायी जाती। (२) 'माद्दा'के इन व्यंजनोंमें स्वर जोड़कर पद (वाक्यमें रखे जाने योग्य शब्द, जिनमें अर्थतत्त्व और सम्बन्धतत्त्व दोनों हों) बनते हैं। इस प्रकार भारोपीय परिवारमें जो कार्य आंतरिक परिवर्तन तथा प्रत्ययोंसे लिया जाता है, वह यहाँ स्वरोंकी सहायतासे ही प्रायः हो जाता है। जैसे अरवीमें क्‌त्‌ब् 'माद्दा'से कातिब, किताव तथा कुतुब इत्यादि। (३) कभी-कभी इस उपर्युक्त स्वर-परिवर्तनसे काम नहीं चलता तो उपसर्ग तथा प्रत्ययकी भी आवश्यकता पड़ती है। जैसे प्रेरणार्थक आदिके लिए 'क्‌त्‌ल्'से 'हिक्तिल' 'हि' उपसर्ग जोड़कर वनाना पड़ता है। इसी प्रकार क्‌त्‌ब्से इस्तक्तव (किसी अन्यसे लिखनेको कहा) भी बनता है। यहाँ एक बात उल्लेख्य यह है कि भारतीय भाषाओंकी भाँति सेमिटिक परिवारकी भाषाओंमें एक धातुमें कई प्रत्यय या उपसर्ग (जैसे अनुकरणात्मकता शब्दमें अनु + करण + आत्मक + ता हैं) एक साथ नहीं मिलते। (४) इस परिवारमें समास केवल व्यक्तिवाचक संज्ञाओंमें ही मिलता है और वह भी केवल दो शब्दोंका, जैसे बीर्-शेवा, मलकह्-इसरायल आदि। स्थान-क्रमकी दृष्टिसे भारोपीय समासोंसे यहाँकी पद्धति उलटी है। संस्कृतमें 'दधि-सुत' होगा तो यहाँ 'सुत-दधि'। इसीका प्रभाव उर्दूपर पड़ता है और उसमें शाहे-फ़ारस (फ़ारसका शाह) जैसे प्रयोग चलते हैं। (५) प्राचीन सेमिटिक भाषाओंमें प्रत्यय लगाकर कर्त्ता, कर्म और सम्बन्ध कारक बनते थे, जैसे—प्राचीन अरवीमें अब्दु, अब्दा। इसी प्रकार बहुवचन और द्विवचनके लिए भी प्रत्ययका

प्रयोग होता था, पर अब अलगसे शब्द जोड़े जाते हैं, क्योंकि हिन्दी आदिकी भाँति ही ये भाषाएँ भी प्रायः वियोगात्मक हो गयी हैं। (६) ऊपर हम यह कह चुके हैं कि हैमिटिक और सेमिटिक दोनों हीमें 'त' स्त्रीलिंगका चिह्न है, पर सेमिटिक परिवारमें एक बात यह विशेष है कि यह 'त' ध्वनि कुछ भाषाओंमें विकसित होकर 'थ' या 'ह' हो गयी है। जैसे-अरबीमें मलक् (राजा)का स्त्रीलिंग मलकह् (रानी) होता है कि मलकत्। (७) इसी प्रकार कुछ धातुओंमें ध्वनि-विकासके ही कारण व्यंजन-लोप हो गया है, जिसके फलस्वरूप वे द्वि-व्यंजनात्मक हो गयी हैं। पर ऐसी द्विव्यंजनात्मक धातुएँ संख्यामें अधिक नहीं हैं, अतः इनकी उपस्थिति अपवाद ही समझी जायगी। सेमिटिक परिवार या उपपरिवारका वर्गीकरण कई प्रकारसे किया गया है। कुछ लोग इसे **पूर्वी सेमिटिक** और **पश्चिमी सेमिटिक**, दो वर्गोंमें बाँटते हैं। पूर्वीमें अकादिअन (जिसके प्राचीन रूपको कुछ लोग **प्राचीन अकादिअन** या असीरियन तथा बादके रूपको **नव अकादिअन** या **बेबिलोनियन** कहते हैं) आती हैं। पश्चिमीमें **उत्तरी** (कनानाइट, आरमेइक) तथा **दक्षिणी** [उत्तरी अरबी जिसे अरबी कहते हैं, दक्षिणी अरबी, इथिओपिअन] दो वर्ग हैं। कुछ अन्य लोग इस रूपमें भी इसे बाँटते हैं:—



सेमिटिक परिवारकी विभिन्न शाखाओंमें आपसमें बहुत कम अन्तर है। इस परिवारकी अरबी भाषा बहुत धनी है। धर्म, ज्योतिष, गणित, दर्शन, साहित्य और रसायन आदि सभी क्षेत्रोंमें उसका हाथ है। अरबी साहित्यने फ़ारसी, तुर्की, उर्दू, हिन्दी, बँगला, मराठी और गुजराती आदिको बहुत प्रभावित किया है। अंग्रेज़ी, स्पैनिश तथा फ्रेंच आदि यूरोपकी अन्य समुन्नत भाषाएँ भी अपने शब्द-समूहमें अरबीके प्रभावसे नहीं (अलजब्रा, सिफ़र, अलकोहल आदि) बच सकी हैं।

सेमिनोले (seminole)—**मुस्खोगी** (दे०) भाषा-परिवारका एक वर्ग। इसके अंतर्गत **अपलची** (दे०), **अलबमा**, **चोक्टव** आदि भाषाएँ आती हैं।

सेरी (seri)—(१) **थांडो** (दे०)का एक रूप। (२) **होक** (दे०) परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

सेरेगोन्ग (seregong)—**करिब** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरिकी भाषा।

सेरेर (serer)—पश्चिमी अफ्रीकामें वर्डे अंतरीपके पास सेरेर जातिके नीग्रो लोगों द्वारा प्रयुक्त एक भाषा। यह **सूडान वर्ग** (दे०) की है।

सेर्रानो (serrano)—(१) मध्य अमेरिकाके **ओटोमि** (दे०) भाषा-परिवारकी एक विलुप्त भाषा। (२) **दक्षिणी-केलीफोर्निअन** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इस भाषाकी कई बोलियाँ हैं।

सेलुंग (selung)--**सलोन** (दे०)का एक विकृत नाम।

सेलोन (selon)--(१) **सलोन** (दे०) का एक अन्य नाम। (२) **पलौंग** (दे०) का एक रूप।

सेसेथो--सोथो (दे०) भाषाका एक नाम।

सैंगबौंग (saing baung)--बर्माके क्यौक्प्यू नामक स्थानमें प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०)की एक **कुकी-चिन** (दे०) भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ७२३२ थी।

सैद्धांतिक भाषा विज्ञान--भाषा विज्ञानका वह रूप, जिसमें भाषा विशेष या कुछ सीमित भाषाओंका अध्ययन न करके, सामान्य रूपसे विश्व-भाषाओंकी उत्पत्ति, उनमें परिवर्तन या विकास, उनका आदर्श और उसकी प्रगतिके लिए करणीय उपाय आदिका अध्ययन करते हैं।

सैद्धांतिक लिपि विज्ञान--एक प्रकारका **लिपि विज्ञान** (दे०)।

सैंद्विशी--**हवाई** (दे०)भाषाका एक नाम।

सैंहल अपभ्रंश--**अपभ्रंश** (दे०)का एकभेद।

सैन (sain)--**मुर्मी** (दे०)का एक नाम।

सैनजी--कुलू वर्गकी एक बोली, जो कुलूके पास सैनजी नदीकी घाटीमें प्रयुक्त होती है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १०,००० थी। (दे०) **कुलू वर्गकी बोलियाँ**।

सैबाइन (sabine)--**सैबेलियन** (भारोपीय परिवारकी इटैलिक शाखाकी एक शाखा)--की एक विलुप्त बोली।

सैबेलियन (sabellian)--भारोपीय परिवारकी इटैलिक शाखाकी एक उपशाखा। इसके अंतर्गत **एक्विअन, मैरुसिनिअन मैरिसन, पेलिग्निअन, सैबाइन, वेस्तिनिअन** तथा **वोलस्किअन आदि बोलियाँ** आती हैं।

सैमर (saimar)--**थाडो** (दे०) का, काचारके मैदान (असम) में प्रयुक्त एक रूप।

सैरंग (sairang)--**थाडो** (दे०) की, काचारके मैदान (असम)में प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५,२७० थी।

सोंगबू (songbu)--**कबुई** (दे०) का रूप। इसका क्षेत्र मणिपुर है।

सोंगलोंग (songlong)--**ब** (दे०)का रूप।

सोंगिश (songish)--**सलिश** (दे०)भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

सोंगोइ (songoi)--**सूडानवर्ग** (दे०) की नाइजर और सेनेगल नदीके पास प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा।

सोंड़वाड़ी--**मालवी** (दे०)का एक स्थानीय रूप, जो झालावाड़, पश्चिमी मालवा तथा भोपालके आस-पास बोला जाता है। इसके बोलनेवाले प्रमुखतः सोंडिया लोग हैं, जिनका क्षेत्र 'सोंड़वाड़' कहलाता है। इसी आधारपर इसका नाम 'सोंड़वाड़ी' पड़ा है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,०३,५५६ थी। इसे **सौंधवाड़ी** भी कहते हैं।

सोक्ते (sokte)--**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-वर्मी भाषाओंकी असमी-वर्मी शाखाके, कुकी-चिन वर्गकी, चिन पहाड़ियों (वर्मा)में प्रयुक्त एक उत्तरी चिन भाषा। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३०,६३३ थी।

सोग्दिअन--एक **ईरानी** (दे०) भाषा।

सोग्दिअन लिपि--सोग्दिआमें प्रयुक्त एक लिपि, जो आरमेइक लिपिसे निकली मानी जाती है। **उइगुरलिपि** (दे०) इसीसे निकली थी।

सोथो (sotho)--**बांटू** (दे०) परिवारकी, पूर्वी अफ्रीकाके चुआना प्रदेशमें, प्रयुक्त एक अफ्रीकी भाषा। इसे **सूतो** या **सेसेथो** भी कहते हैं।

सोद्देश्य बलाघात--**बलाघात** (दे०)का भेद।

सोन (son)--**ब** (दे०)का एक रूप।

सोनपारी--**पश्चिमी भोजपुरी** (दे०)का एक स्थानीय रूप, जो मीरजापुर ज़िलेमें सोन नदीके दक्षिणमें 'सोनपार' नामके स्थानमें बोला जाता है। 'भोजपुरी'का यह रूप

'अवधी'से प्रभावित है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४९, ०० थी।

सोनारेखा (sonarekhna)––**कोडा** (दे०)का एक जातीय रूप ।

सोनास्ट्रेचर––**स्पीचस्ट्रेचर** (दे०)का एक रूप।

सोनोग्राफ़ (sonograph)––**स्पेक्ट्रोग्राफ़** (दे०)का एक रूप ।

सोप्वोमा (sopvoma)––**चीनी परिवार** (दे०) की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके, नागा वर्गकी, मणिपुर (असम)में प्रयुक्त, एक 'नागा-कुकी' भाषा १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १३,०९६ थी।

सोबइपुरी (sobaipuri)––**अपरपीमा** (दे०) भाषाकी एक उत्तरी अमेरिकी उपभाषा । अब यह उपभाषा विलुप्त हो चुकी है ।

सोमाली (somali)––हैमेटिक परिवारकी अफ्रीकी भाषा। इसका क्षेत्र सोमालीलैंड है।

सोयोनिअन (soyonian)––**यूराल अल्ताई** (दे०) परिवारकी एक पूर्वी तुर्की भाषा ।

सोरठी (sorathi)––गुजरातीकी, **काठियावाड़ी** (दे०)बोलीका, काठियावाड़में प्रयुक्त, एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ७,३३,००,० थी ।

सोराली––(दे०) **सोरियाली** ।

सोरियाली––**कुमायूँनी** (दे०)की, अलमोड़ा ज़िलेके 'सोर' परगनेमें प्रयुक्त, एक उपबोली । इसपर 'नैपाली'का कुछ प्रभाव पड़ा है। इसका एक नाम 'सोराली' भी मिलता है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार १२,४८१ थी ।

सोरियाली गोरखाली (soriyali gorkhali)––**नैपाली** (दे०)का, कुमाऊँमें बसे हुए नेपालियोंमें प्रयुक्त, एक रूप ।

सोर्बिअन––**लुसेशन**(दे०)भाषाका अन्य नाम।

सोर्बो-वेन्डिक––**लुसेशन** (दे०) भाषाका नाम।

सोलग (solaga)––**तमिल** (दे०)का एक अन्य नाम। वस्तुतः यह मद्रासकी एक आदिवासी 'तमिल'-भाषी जातिका नाम है ।

सोल्टेक (soltek)––मध्य अमेरिकाके **ज़पोटेक** (दे०)परिवारकी एक भाषा ।

सौंग्प (saungpa)––बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, **नुंग** (दे०)का, पुताओ ज़िलेमें प्रयुक्त एक रूप। बर्माके-सर्वेक्षणानुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,२२८ थी।

सौंधवाड़ी––(दे०) **सोंड़वाड़ी** ।

सौक (sauk)––**केन्द्रीय अलगोन्किन** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा ।

सौकिया खुन (saukiya khun)––**रंगकस** (दे०)का एक अन्य नाम ।

सौराष्ट्री––तामिलनाडमें रेशमका काम करनेवाले जुलाहोंमें प्रचलित एक बोली, जिसे ग्रियर्सनने 'गुजराती'की बोली माना है, किंतु जिसे डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी 'राजस्थानी'-की बोली माननेके पक्षमें हैं। इसपर तमिल, गुजराती तथा मराठीका पर्याप्त प्रभाव है। इसके बोलनेवाले मूलतः सौराष्ट्रके रहनेवाले हैं तथा अपनेको सौराष्ट्री कहते हैं। **सौराष्ट्री**-को **पटलूणी** भी कहते हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ५,८०० थी ।

सौराष्ट्री लिपि––**सौराष्ट्री** (दे०)के लिए प्रयुक्त लिपि । यह लिपि अन्य भारतीय लिपियोंसे भिन्न है और इसकी उत्पत्तिके संबंधमें अभीतक विशेष खोज नहीं हुई है।

सौरिआ (sauria)––**माल्तो** (दे०)का एक दूसरा नाम ।

स्कांगो (csango)–हंगेरियनकी, एक बोली जो कारपेथियन्सके पास बुकोविआमें बोली जाती है। इसपर रूसी तथा रुमानियनका प्रभाव पड़ा है ।

स्कॉटगेलिक (scots gaelic)––भारोपीय परिवारकी **केल्टिक** (दे०) शाखाकी एक भाषा, जो स्कॉटलैंडमें लगभग एक लाख लोगों द्वारा प्रयुक्त होती है ।

स्किट्टागेटन (skittagettan)––**हैडा** (दे०) वर्गका एक अन्य नाम ।

स्किट्सविश (skitswish)––**सलिश** (दे०)

भाषा-परिवारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।
स्किड्गेट (skidgate)—**हैडा** (दे०) वर्गकी एक प्रमुख उत्तरी अमेरिकी बोली।
स्कैन्डिनेवियन—भारोपीय परिवारकी **जर्मनिक** (दे०) उपशाखाकी उत्तरी शाखाका एक अन्य नाम। इसमें आइसलैंडिक, स्वेडिश, डैनिश, नार्वेजियन, फ़रोईज़, गॉटलैंडिक आदि हैं।
स्गव करेन (sgaw karen)—**करेन** (दे०) की, बर्माके बहुतसे ज़िलोंमें प्रयुक्त, एक बोली। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३,६८, २८२ थी।
स्ज़ी (szi)—बर्माकी एक अनिश्चित भाषा।
स्ज़ीलेपइ (szilepai)—**स्ज़ी** (दे०) का एक अन्य नाम।
स्ट्रोबोलैरिंगोस्कोप (strobolaringoscope—एक यंत्र जिसे स्वर-तन्त्रियोंकी गतिविधिका अध्ययन करनेके लिए बनाया गया है।
स्तंबुल—**आर्मेनियन** (दे०) की एक बोली।
स्तीएंग (stieng)—हिन्दचीनमें प्रयुक्त एक **मोन-ख्मेर** (दे०) भाषा।
स्त्री-प्रत्यय—ऐसे प्रत्यय, जिन्हें जोड़कर पुंल्लिग शब्दोंके स्त्रीलिंग रूप बनाये जाते हैं। संस्कृतमें टाप्, ङीप्, और ङीष् प्रमुख स्त्री-प्रत्यय हैं।
स्त्री-भाषा—ऐसी भाषा, जिसका प्रयोग केवल स्त्रियाँ ही करें। 'करीब' नामकी एक जंगली जातिमें इस प्रकारका भेद है। वहाँ पुरुष 'करीब' बोलीका प्रयोग करते हैं, किंतु स्त्रियाँ 'अरोवक' नामक बोलीका। (दे०) **भाषाके विविध रूप**।
स्त्रीलिंग—(दे०) **लिंग**।
स्त्रीलिंगीकरण (feminization)—किसी पुंल्लिग शब्दका स्त्रीलिंग बनाना।
स्थान—(दे०) **उच्चारण-स्थान**।
स्थानगत ध्वनि-परिवर्तन—**ध्वनि-परिवर्तन**का एक रूप। (दे०) **ध्वनि-परिवर्तनकी दिशाएँ**।
स्थानदर्शी विशेषण—(दे०) **विशेषण**।
स्थान नाम विज्ञान (toponymics)—**नाम विज्ञान** (दे०) का एक भेद।
स्थानपूरक चिह्न—एक प्रकारका चिह्न। (दे०) **विराम**।
स्थान-प्रधान भाषा—**अयोगात्मक भाषा** (दे०) का एक अन्य नाम।
स्थानप्रधान रचना या वाक्य (actor-action-goal)—ऐसी रचना या ऐसा वाक्य, जिसमें कर्त्ता और कर्मके स्थान-परिवर्तनसे ही अर्थ बदल जाता है। जैसे—**शेर गीदड़** खाता है, और **गीदड़ शेर** खाता है। अंग्रेज़ीमें भी इसके उदाहर मिलते हैं, जैसे—ram killed mohan तथा mohan killed ram.
स्थानबोधक विशेषण—(दे०) **विशेषण**।
स्थानवाचक क्रियाविशेषण—(दे०) **क्रिया-विशेषण**।
स्थानवाचक क्रिया विशेषण उपवाक्य—(दे०) **वाक्यमें वाक्यका विभाजन** उपशीर्षक।
स्थानवाचक प्रत्यय—एक प्रकारका **प्रत्यय** (दे०)
स्थानवाचक विशेषण—(दे०) **विशेषण**।
स्थानवाचक संबंधसूचक अव्यय—(दे०) **संबंधसूचक अव्यय**।
स्थानसूचक विशेषण—(दे०) **विशेषण**।
स्थानीय क्रियाविशेषण—(दे०) **क्रिया विशेषण**।
स्थानीय प्रयोग (localism)—मुहावरा, लोकोक्ति, शब्द, रूप, ध्वनि या ऐसी वाक्य-रचना जो किसी भाषाके पूरे क्षेत्रमें प्रचलित न होकर किसी सीमित क्षेत्रमें प्रचलित हो।
स्थानीय बोली (local dialect)—ऐसी बोली, जो अत्यंत छोटे स्थान-विशेषमें सीमित हो। इसका क्षेत्र बोलीसे छोटा होता है। अर्थात् एक बोलीके अंतर्गत कई स्थानीय बोली या स्थानीय रूप होते हैं,। **स्थानीय बोली** और **उपबोली** (दे०) का प्रयोग प्रायः समानार्थी रूपमें होता है। (दे०) **भाषाके विविध रूप**।
स्थिति-परिवृति—**विपर्यय** (दे०) का नाम।
स्थितिवाचक क्रियाविशेषण—(दे०) **क्रिया-विशेषण**।
स्थूल प्रतिलेखन (broad transcription)—एक प्रकारका **ध्वन्यात्मक प्रतिलेखन** (दे०)। इसे **आयत प्रतिलेखन** भी कहा गया

है ।

स्नि––**सर्वनाम** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक नाम।

स्पर्श (stop, mute, explosive, plosive, occlusive)––**प्रयत्न** (दे०)-के आधारपर किया गया व्यंजनोंका एक भेद ।

इसमें एक अंग दूसरेका स्पर्श करता है, इसी-लिए इसे स्पर्श कहा जाता है। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें व्यंजनोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक ।

स्पर्श-घर्ष––**स्पर्श-संघर्षी** (दे०) का एक नाम।

स्पर्श-रेफ संधि––(दे०) **संधि** ।

स्पर्श-संघर्षी (affricate)––**प्रयत्न** (दे०) के आधारपर किया गया, ध्वनियोंका **एक भेद** ।

स्पर्श-संघर्षी ऐसी ध्वनियोंको कहते हैं, जिनके उच्चारणका आरम्भ स्पर्शसे हो, किंतु उन्मोचन या स्फोट झटकेके साथ या एक-ब-एक न होकर धीरे-धीरे हो । इसका फल यह होता है कि कुछ देरतक हवाको घर्षण करके निकलना पड़ता है । इसे **स्पर्श-घर्ष** भी कहते हैं । हिन्दीमें च, छ, ज, झ स्पर्श-संघर्षी हैं । इनमें भी 'स्पर्श'की तरह पूर्ण-अपूर्ण दो भेद हो सकते हैं और वे ठीक स्पर्शकी स्थितियोंमें ही घटित भी होते हैं ।

स्पर्शोष्म संधि––(दे०) **संधि** ।

स्पष्ट बलाघात––**बलाघात** (दे०) का एक भेद।

स्पष्ट ल (clear l)––(दे०) **पार्श्विक** ।

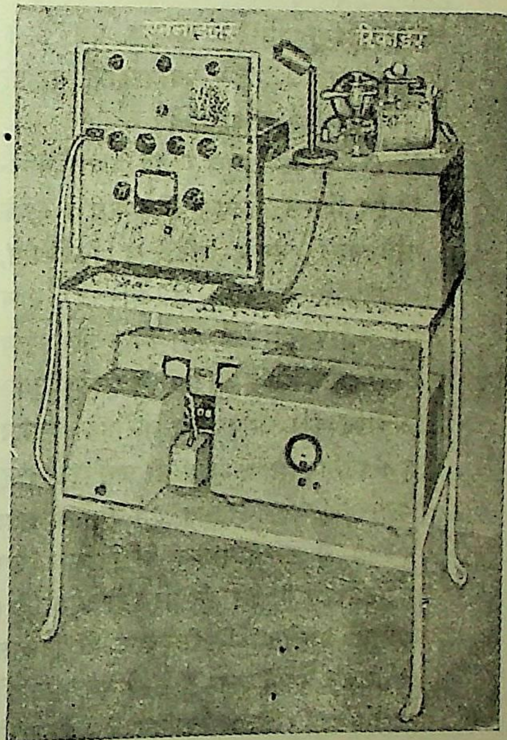
स्पीचस्ट्रेचर (speechstretcher) ––एक यंत्र, जिससे किसी भी रिकर्ड की हुई सामग्रीको काफ़ी धीरे-धीरे बिना विशेष अस्वाभाविकताके सुना जा सकता है। किसी सूचक (informant) से सुनकर रिकर्ड की हुई सामग्रीको विश्लेषणके लिए बहुत धीरे-धीरे सुनना अधिक अच्छा होता है । इसी दृष्टिसे इस यन्त्रको बनाया गया है । नयी भाषाको रिकर्डसे सुनकर सीखनेवालेके लिए भी यह पर्याप्त उपयोगी है । इस यन्त्रका एक रूप **'सोनास्ट्रेचर'** है । सामान्य टेपरेकर्डर आदिपर बहुत धीरे-धीरे सुननेपर ध्वनिकी स्वाभाविकता समाप्त हो जाती है , इसी कठिनाईको दूर करनेके लिए यह यंत्र बनाया गया है ।

स्पीती तिब्बती––स्पीतीमें बोली जानेवाली **तिब्बती** (दे०) । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३,५४८ थी ।

स्पीती भोटिआ––**स्पीती तिब्बती** (दे०) का एक अन्य नाम ।

स्पूनरिज्म––**आद्यशब्दांश विपर्यय** (दे०) का एक नाम ।

स्पेक्ट्रोग्राफ़ (spectrograph)––ध्वनि-विज्ञानमें बहुत अधिक उपयोगी एक यंत्र । दूसरे महायुद्धमें यह यन्त्र सामरिक प्रयोगके लिए बनाया गया था, अब भाषाके अध्ययनमें सहायक यंत्रोंमें यह सबसे अधिक उपयोगी



माना जाता है । इससे प्रमुखतः **उच्चारण-समय** तथा **आवृत्ति** (frequency) का पता चलता है । अभीतक स्वरका ही विशेष रूपसे अध्ययन इसके द्वारा सम्भव हो सका है । व्यंजनके फार्मेंट इसपर पर्याप्त स्पष्ट नहीं आते, यद्यपि उस दिशामें प्रयास जारी है । यह यन्त्र **सोनोग्राफ़** (sonograph),

वाइब्रलाईज़र (vibralyzer) तथा **कार्डिअलाइज़र** (cardialyzer) आदि कई रूपों में चल रहा है। **सोनोग्राफ़** समय-मापनकी दृष्टिसे सर्वश्रेष्ठ समझा जाता है। इस मशीनसे ध्वनिका जो चित्र (स्पेक्टोग्राम) बनता है ऊँचाईमें आवृत्ति तथा लम्बाईमें समय दिखलाता है। इससे ध्वनिके भौतिक स्वरूपकी सारी विशेषताओंपर प्रकाश पड़ता है। इसमें माइकपर बोलते हैं और ध्वनिचित्र मशीनमें ही बनता है। १९५९ई०-में अर्न्स्ट पुलग्राम (ernst pulgram) ने introduction to the spectrography of speech नामसे इस यंत्रके भाषाके अध्ययनमें प्रयोगका परिणाम प्रकाशित किया है।

स्पेनी— (दे०) **स्पैनिश**।

स्पेलिन (spelin)—**बोलपूक** (दे०) के आधारपर १८८८में बॉयरद्वारा बनायी गयी एक कृत्रिम भाषा।

स्पैनिश—स्पेनकी प्रमुख (अन्य भाषाएँ गैलिशिअन, बास्क, कैटलन हैं) भाषा। इसके बोलनेवाले स्पेनके अतिरिक्त फ़िलिपीन, अमेरिकाके कुछ क्षेत्रों, जैसे-मेक्सिको, मध्य एवं केन्द्रीय अमेरिका तथा क्यूबा और अन्य स्पेनी उपनिवेशोंमें हैं। विश्वमें इसके बोलनेवालोंकी कुल संख्या ११ करोड़के लगभग है। स्पैनिश भाषा फ्रांसीसी आदिकी तरह वल्गर लैटिनसे विकसित एक **रोमांस भाषा** (दे०) है। स्पैनिशका परिनिष्ठित रूप **कैस्टिलियन** है, जो कैस्टाइलकी बोली है। वस्तुतः प्राचीन कैस्टिलियनका ही विकास स्पैनिशके रूपमें हुआ है। स्पैनिश भाषाकी लेखन पद्धति बहुत वैज्ञानिक है। विश्वकी अन्य भाषाओंकी तुलनामें इसका लिपिबद्ध रूप, इसके उच्चरित रूपके बहुत निकट है। स्पैनिशके प्राचीनतम नमूने ११वीं सदीके हैं। इसमें साहित्य-रचना १२वीं सदीसे मिलती है। स्पैनिशको हिन्दीमें स्पेनी भी कहते हैं। इसकी एक मध्ययुगीन बोली **लेओनीज** थी। इसके अन्य रूपोंमें **पपिआमेंतो** (दे०) तथा **लैदिनो** (दे०) उल्लेख्य हैं।

स्पृष्ट—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें प्रयत्न** उपशीर्षक।

स्फोट—(१) स्पर्शोंके उच्चारणमें एक स्थिति या प्रक्रिया। (दे०) **ध्वनियोंके वर्गीकरणमें व्यंजनोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक। (२) **स्पर्श** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम। (३) **स्फोटवाद** (दे०)।

स्फोटक—स्पर्शके लिए प्रयुक्त एक नाम। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें व्यंजनोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक।

स्फोटवाद—व्याकरण-दर्शनका एक सिद्धांत, जिसके अनुसार 'स्फोट' ही विचारका वाहक है। ध्वनि या शब्द सुननेपर वस्तुतः जो प्रतिक्रिया मानस पटलपर होती है, वही 'स्फोट' है। 'स्फोट'का शाब्दिक अर्थ जैसा कि स्पष्ट है, 'फूटना' है। अर्थात् मानसमें विचार या भाव श्रवण-क्रियाके बाद फूटते या उदित होते हैं। कभी-कभी इस फूटनेकी क्रियाको और कभी-कभी इस क्रियाके परिणामस्वरूप उत्पन्न या उदित भावको भी 'स्फोट' कहा गया है। मीमांसामें 'नित्य शब्द'को स्फोट कहा गया है। यह नित्य शब्द ही, मीमांसाके अनुसार विश्वका कारण है। इस मतको भी 'स्फोटवाद' कहते हैं।

स्फोटित स्पर्श (complete या exploded stop)—एक प्रकारका स्पर्श। (दे०) **ध्वनियोंके वर्गीकरणमें व्यंजनोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक।

स्यामी—**चीनी परिवार** (दे०) के दक्षिणी शान वर्गकी बर्मा तथा थाइलैंडमें प्रयुक्त भाषा। इसकी बोलियोंमें **लाओ** उल्लेख्य है। इसकेबोलनेवालोंकी संख्या १,००,००,०००के लगभग है। इसका एक नाम **योदयशान** भी है।

स्यामी-चीनी उप-परिवार (siamese-chinese sub-family)—इस वर्गकी भाषाएँ बर्मा तथा स्याममें बोली जाती हैं। बर्मामें इसके बोलनेवालोंकी संख्या १९२१ की जनगणनाके अनुसार ९,२६,३३५ थी।

स्यामीलिपि—स्यामकी लिपि। इसे कुछ लोग **सिंहली लिपि** (दे०)से तथा कुछ लोग **बर्मी लिपि** (दे०)से निकली मानते हैं।

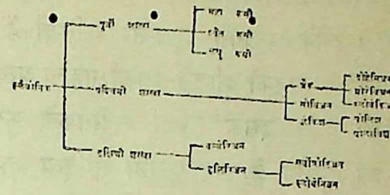
स्त्री—सर्वनामका एक दूसरा नाम।

स्लाविक—**स्लैवोनिक** (दे०)का एक नाम।

स्लाविक लिपि— स्लाव भाषा-भाषियों द्वारा प्रयुक्त लिपियाँ। ९वीं सदीके आस-पास ग्रीक लिपिके आधारपर स्लाव लोगोंने अपने लिए दो लिपियाँ बनायीं :— (१) **ग्लैगोलिटिक लिपि**, (२) **सिरिलिक लिपि**। इनमें प्रथमका प्रयोग तो अधिक नहीं होता, किंतु दूसरी कुछ संशोधित-विकसित रूपमें रूस, बलगेरिया तथा सर्विया आदिमें प्रयुक्त होती है।

स्लावी—(दे०) 'स्लैवोनिक'।

स्लाव या स्लैवोनिक—भारोपीय परिवार-की सतम् शाखाकी एक उपशाखा या वर्ग। कभी-कभी बाल्टीके साथ मिलाकर इसे **बाल्टो-स्लाविक** भी कहते हैं। यह बहुत विस्तृत वर्ग है। इसमें पूर्वी यूरोपका एक काफ़ी बड़ा भाग आ जाता है। दूसरी-तीसरी सदीके लगभगतक इसके बोलने-वाले एक सीमित क्षेत्रमें थे, पर पाँचवीं सदीके बादसे ये लोग इधर-उधर फैलने लगे और नवीं सदीतक रूस, पोलैंड, गल-सिआ, आस्ट्रियाका एक बड़ा भाग, बोहे-मिया, मोराविआ, सर्विया, बलगेरिया] तथा स्लावोनिआ आदि इनके कब्ज़ेमें आ गया। आज भी यह क्षेत्र उनका है। इसमें नवीं सदीतकके लेख मिलते हैं। इसका **विभाजन** कुछ इस प्रकार हो सकता है। पूर्वी शाखाका १२वीं सदीतक लगभग एक ही रूप मिलता है। इसमें साहित्य १९वीं सदीसे भी पूर्वका है। **महारूसी** ही रूसकी प्रधान भाषा है। १८वीं सदीके पूर्व-तक यह बहुत अस्तव्यस्त थी। उसके बाद इसे टकसाली रूप मिला। यह मूलतः मास्को-की एक बोली मात्र है। **श्वेत रूसी** रूसके दक्षिणी भागमें बोली जाती है। **लघु रूसी**-का दूसरा नाम **युक्रेनियन** है, जिसकी बोली **रुथेनियन** है। इसके बोलनेवाले कुछ आस्ट्रि-याके गलीसिया प्रान्तमें भी हैं। आधुनिक



साहित्य प्रमुखतः **महारूसीमें** ही है। रूसी क्रांतिके पश्चात्से इसका भंडार बहुत ही पूर्ण हो गया है। पश्चिमी शाखाकी प्रधान भाषा **जेक** है। यह प्रधानतः प्राचीन बोहे-मिआकी भाषा है, अतः इसका नाम **बोहे-मिअन** भी है। **स्लोवेकिअन** इसीकी एक बोली है, जो उत्तरी हंगरी तथा प्रेसबर्ग एवं कारपेथिअन्सके मध्यमें बोली जाती है। ज़ेककी बहिन **सोर्बिअन** का नाम **'सारो-बिअन, लुसेशन** (दे०) एवं **वेंडिक** भी है। **पोलिश** भाषाका मूल क्षेत्र अब पोलेंड है। जर्मनीमें भी इसका प्रचार कभी था, पर फिर निकाल दी गयी। निम्न एबके पासके गुलामोंकी भाषा पोलाबिश पोलिशकी ही बहन थी। **पोलाबिश** या पोलाबिअनका लोप १८वीं सदीमें हो गया। इसमें साहित्य आदि कुछ भी नहीं मिलता। दक्षिणी शाखा-की प्रसिद्ध भाषा **बल्गेरिअन** है। इसके पुराने रूपको **प्राचीन बल्गेरियन** या **चर्च स्लैवोनिक** कहा जाता है। इसमें बाइबिल-का अनुवाद ९वीं सदीके मध्यका मिलता है। इसमें द्विवचनका प्रयोग भी है और भाषा अधिक वियोगात्मक नहीं है। वर्त-मान बल्गेरिअन पूर्णतः वियोगात्मक हो गयी है। यह अपने प्राचीन रूपसे बहुत दूर चली आयी है। जहाँतक शब्दसमूहका प्रश्न है, इसने स्वतंत्रताके साथ ग्रीक, अल्बे-नियन, रूमानियन तथा तुर्की शब्दोंको अपनाया है। बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ७० लाख है। इसका प्रधान क्षेत्र बल्गेरियाके अतिरिक्त यूरोपीय तुर्की तथा ग्रीस आदि भी है। सम्भवतः इसी कारण इसके शब्दसमूहमें विदेशी तत्त्व अधिक आ गये हैं। **सर्बोको**-

टिअन भाषाके बोलनेवाले (लगभग सवा करोड़) सर्बिआ, यूगोस्लाविया, दक्षिणी हंगरी तथा स्लैवोनिया आदि कई स्थानोंपर हैं। इसके अन्तर्गत बहुत-सी बोलियाँ हैं। भाषा-विज्ञानकी दृष्टिसे इसका महत्त्व अत्यधिक है। इसके १२वीं सदीतकके कुछ लेख मिलते हैं, पर पुराना साहित्य नहीं है। इसमें सर्बिअन और क्रोटिअन दो भाषाएँ आती हैं। पहली सर्बियामें, दूसरी क्रोटिआमें बोली जाती है। **स्लोबेनिअन** या **स्लोवीन** (दे०)का क्षेत्र यूगोस्लावियामें है। इसके प्राचीन लेख १०वीं सदीतकके मिलते हैं। इसके बोलनेवाले १५ लाख हैं।

स्लोबेकिअन––(दे०) **स्लैवोनिक**।

स्लोवक (slovak)–मध्य ज़ेकोस्लोवाकिया (स्लोवाकिया) में स्लोवक लोगों द्वारा प्रयुक्त भारोपीय परिवारकी एक स्लाव भाषा। यह ज़ेकके बहुत निकट है। बोलनेवालोंकी संख्या ३०लाखके लगभग है।

स्लोवन (slovan)—स्लाव भाषाओंके आधारपर प्रस्तावित एक कृत्रिम भाषा।

स्लोवियन––**स्लोवीन** (दे०) भाषाका नाम।

स्लोवीन (slovene) — यूगोस्लावियामें लगभग १५,००,००० लोगों द्वारा प्रयुक्त एक दक्षिणी स्लाव भाषा। यह भाषा सर्बोक्रोटिअनके निकट है। इसे **स्लोविअन** भी कहते हैं।

स्लोवेनियन––(दे०) **स्लैवोनिक**।

स्वच्छन्द परिवर्तन (free variation)– **ध्वनिग्राम विज्ञान** (दे०)में प्रयुक्त एक पारिभाषिक शब्द।

स्वतंत्र इकाई (independent element)—वाक्यमें प्रयुक्त ऐसी भाषिक इकाई, जिसका वाक्यकी अन्य इकाइयों (पदों)से किसी भी प्रकारका व्याकरणिक संबंध न हो। विस्मयादिबोधक शब्द इसी प्रकारके होते हैं।

स्वतंत्र उपवाक्य (independent clause)––ऐसा उपवाक्य, जो अपने-आपमें स्वतंत्र वाक्य हो। इसे **स्वतंत्र वाक्यांश** भी कहते हैं।

स्वतंत्र वाक्यांश––(दे०) **स्वतंत्र उपवाक्य**।

स्वतंत्र संबंधसूचक अव्यय––(दे०) **संबंधसूचक अव्यय**।

स्वनग्राम––**ध्वनिग्राम** (दे०)का एक नाम।

स्वनग्रामिकी––**ध्वनिग्राम विज्ञान** (दे०)का एक अन्य नाम।

स्वनिम––**ध्वनिग्राम** (दे०)का एक नाम।

स्वभावबोधक विशेषण––(दे०) **विशेषण**।

स्वयंजात ध्वनि परिवर्तन––एक प्रकारका **ध्वनि-परिवर्तन** (दे०)।

स्वयंभू ध्वनि परिवर्तन (unconditional phonetic change)––एक प्रकारका **ध्वनि-परिवर्तन** (दे०)।

स्वर (vowel)––(१) एक प्रकारकी ध्वनि। स्वर वह घोष (कभी-कभी अघोष भी) ध्वनि है, जिसके उच्चारणमें हवा अबाध गतिसे मुख-विवरसे निकल जाती है। (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वर और व्यंजन उपशीर्षक**। (२)**सुर** (दे०)का एक अन्य नाम।

स्वर-अनुरूपता––(दे०) **यूराल अल्ताई परिवार**।

स्वर-ओष्ठ––**स्वरतंत्री** (दे०)का अधिक शुद्ध नाम। (दे०) **शारीरिक ध्वनिविज्ञान**में **स्वरयंत्र स्वर-यंत्र-मुख** और **स्वर-तंत्री** उपशीर्षक।

स्वरक्रम–**अपश्रुति** (दे०)का एक अन्य नाम।

स्वर-चतुर्भुज––(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण**में **मान स्वर** उपशीर्षक।

स्वर-तंत्री (**ध्वनि-तंत्री**, **स्वर-रज्जु**––vocal chord)––'स्वर यंत्र' (दे०)के मुखपर स्थित तंत्रियाँ, जिनके द्वारा **घोष** (दे०), **अघोष**, (दे०), **जपित** (दे०) ध्वनियाँ उत्पन्न की जाती हैं। विशेष विवरणके लिए (दे०) **शारीरिक ध्वनि विज्ञान**।

स्वर-त्रिभुज (vowel triangle)––(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें मान स्वर** उपशीर्षक।

स्वर भंग (vowel fracture)––निकट-

वर्ती ध्वनियोंके प्रभावसे मूल स्वरका संयुक्त स्वर हो जाना ।

स्वरभक्ति (anaptyxis)––एक प्रकारका **आगम** (दे०)। उच्चारण-सुविधा आदिके लिए दो संयुक्त व्यंजनोंके बीच एक स्वरका आ जाना। जैसे 'राजेन्द्र'का 'राजिन्दर'। पाणिनिने स्वर भक्तिके लिए अज्भक्तिका प्रयोग किया है। संस्कृत व्याकरणमें स्वरभक्तिका प्रयोग कई अर्थोंमें मिलता है। (दे०) **अपिनिहिति** ।

स्वरभक्ति स्वर (anaptyctic vowel)–– उच्चारण-सुविधाके लिए शब्दके बीचमें आगत स्वर। (दे०) **स्वरभक्ति, मध्य स्वरागम**।

स्वर मध्यग (inter vocalic)––दो स्वरोंके बीचमें आनेवाली ध्वनि ।

स्वर मध्यग व्यंजन लोप (jamming)–– दो स्वरोंके बीचके व्यंजनका लोप। जैसे- 'कोकिल'का 'कोइल' या वलगर लैटिनमें jamego का eo आदि jamming का इस अर्थमें प्रथम प्रयोग होलमेस (holmes) ने किया ।

स्वर-यंत्र (कंठ-पिटक, ध्वनि-यंत्रlarynx) ––गलेमें स्थित एक अवयव, जिसके द्वारा बोलनेमें बहुत सहायता मिलती है। (दे०) **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान** ।

स्वरयंत्र-मुख (काकल, glottis)––गलेमें स्थित स्वरयंत्र नामक अवयवका मुख। इससे बोलनेमें बहुत सहायता मिलती है। (दे०) **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान** ।

स्वरयंत्र-मुख-आवरण (अभिकाकल, स्वरयंत्रावरण, epiglottis)––गलेमें स्थित स्वर-यंत्रके ऊपर स्थित एक अंग, जो स्वरयंत्रको ढकनेका काम करता है। विशेष विवरणके लिए(दे०)**शारीरिक ध्वनिविज्ञान**।

स्वरयंत्रमुखी (laryngeal या glottal)––**उच्चारण स्थान** (दे०)के आधारपर किया गया ध्वनियोंका एक भेद। स्वर यंत्रमुखी उन ध्वनियों को कहते हैं, जो **स्वरयंत्रमुख** (दे०)से उच्चरित की जाती हैं। इन्हें **स्वर-यंत्र-स्थानीय, काकल्य** या **उरस्य** भी कहते हैं। हिन्दीका 'ह' स्वर यंत्रमुखी संघर्षी है और '१' **स्वर-यंत्रमुखी स्पर्श** (glottal stop)। अरबीका हमज़ा यह दूसरी प्रकारकी ही ध्वनि है। उत्तरी जर्मन तथा कुछ अन्य भाषाओंमें भी यह स्पर्श मिलता है (कुछ लोग glottal और laryngealमें अंतर मानते हैं) ।

स्वरयंत्रमुखी स्पर्श (glottal stop)–– ऐसी स्पर्श-ध्वनि, जो[स्वरयंत्र (दे०)की] दोनों स्वरतंत्रियों (दे०) का स्पर्श कराकर **स्पर्श** (दे०) ध्वनियोंकी तरह उच्चरित की जाय। इसे **हमज़ा, काकल्य स्पर्श** या **उरस्य स्पर्श** भी कहते हैं। अरबी, जर्मन तथा एकाध शब्दोंमें अंग्रेज़ीमें यह ध्वनि मिलती है। इसे '१' लिखते हैं। (दे०) **शारीरिक ध्वनिविज्ञानमें स्वरयंत्र, स्वरतंत्री** उपशीर्षक ––तथा **स्वरयंत्र मुखी** ।

स्वर-यंत्र-स्थानीय––**स्वरयंत्रमुखी** (दे०)का एक नाम ।

स्वरयंत्रावरण––**स्वरयंत्र-मुख-आवरण** (दे०)–का एक अन्य नाम ।

स्वर-रज्जु––**स्वरतंत्री** (दे०)का एक अन्य नाम। (दे०) **शारीरिक ध्वनि-विज्ञान** ।

स्वर-रेखा (vowel line)––(दे०)**ध्वनियोंका वर्गीकरणमें मानस्वर** उपशीर्षक ।

स्वरवत् व्यंजन (vocalic consonant)–– ऐसे व्यंजन, जो **अक्षर** (दे०)बनानेमें **शीर्ष** (दे०)का काम कर सकें। र्, ल्, म्, न्, ज़् आदि व्यंजन इस श्रेणीके हैं।

स्वर-विच्छेद (hiatus)––दो स्वरोंके साथ आनेपर दोनोंके बीचका अल्प विराम, जो उन्हें मिलने नहीं देता। इसके दो भेद होते हैं: (१) **आंतरिक स्वर-विच्छेद** (internal hiatus)–जब एक ही शब्दमें आये दो पार्श्ववर्ती स्वरोंके बीच हो। जैसे––'आइये' या 'खाइये' आदिमें। (२) **बाह्य स्वर-विच्छेद** (external hiatus)––जब दो शब्द पास-पास आवें और प्रथमकी अंतिम ध्वनि तथा दूसरेकी प्रथम ध्वनि स्वर हो, तो उन दोनों स्वरोंके बीचका विच्छेद बाह्य कहलाता

है । जैसे—गीला ईंधन, लंबी आरी आदि ।

स्वर विपर्यय—**विपर्यय** (दे०)का एक भेद ।

स्वरश्रेणी(vowel grade)—संस्कृत आदि-के स्वरोंको तीन श्रेणियोंमें बाँटा गया है :

(१) शून्य या प्राथमिक श्रेणी (zero या primary grade या degree)—अ, इ, उ ।

(२) सामान्य या गुण श्रेणी (normal या gun degree या grade)—अ, ए, ओ ।

(३) वृद्धि श्रेणी या दीर्घश्रेणी (vrddha या long grade)—आ, ऐ, ओ ।

इनमें प्रथम श्रेणीके स्वरोंको प्राथमिक स्वर, दूसरीके स्वरोंको गुण या गुण स्वर तथा तीसरीके स्वरोंको वृद्धि या वृद्धि स्वर कहते हैं ।

स्वर-संधि—(दे०) **संधि** ।

स्वरानुरूपता (vowel harmonyo,assonance)—यूराल-अल्ताई तथा द्रविड़ आदि भाषा-परिवारोंकी कुछ भाषाओंमें पायी जाने-वाली एक प्रवृत्ति जिसके अनुसार शब्दोंमें स्वर एक दूसरेके अनुरूप होते या हो जाते हैं। एक ही शब्दमें एक पश्च और दूसरा अग्रस्वर नहीं आ सकता । यदि मूल शब्दमें कोई स्वर है और प्रत्ययमें कोई दूसरे प्रकारका स्वर है तो उनमें कोई एक परिवर्तित न होकर दूसरे-के अनुरूप हो जायगा । (दे०) **द्रविड़ परिवार-में विशेषताएँ** या यूराल-अल्ताई परिवार, ध्वन्यभ्यास, ध्वनि (विशेषतः स्वर)का दोहराया जाना ।

स्वरित—इसका शाब्दिक अर्थ है 'उच्चरित' या 'ध्वनित' । स्वरित एक प्रकारका वैदिक सुर (या स्वर) है । (दे०) **आघातमें सुर** उपशीर्षक । तैत्तिरीय प्रातिशाख्य तथा अष्टाध्यायी आदिमें आता है—'समाहारः स्वरितः' । वाजसनेयी प्रातिशाख्यमें आता है—'उमयवान् स्वरितः' । आपिशलि शिक्षामें आता है—'उदात्तानुदात्तस्वर-सन्निपातात् स्वरितः' , अर्थात् स्वरित **उदात्त** (दे०) और **अनुदात्त** (दे०)का मेल या समाहार है । इस मेलका अर्थ संधि है या समन्वय, यह प्रश्न महाभाष्यकारने उठाया है । कहना न होगा कि यह संधि ही है, जिसे नीर-क्षीरकी तरह न मानकर काष्ठ-जंतुके समान माना गया है । पाणिनिने कहा है—'तस्यादित उदात्तमर्ध-ह्रस्वम्' (१. २. ३२), अर्थात् स्वरितके आदिकी ह्रस्वार्द्ध मात्रा उदात्त होती है और शेष अनुदात्त । मैकडॉनेलने स्वरितको उदात्तसे गिरता हुआ या अधोगामी सुर (falling accent) माना है । उनके अनुसार यह उदात्त और सुरशून्यता (tonelessness) के बीचका है । स्वरोंके भेद और उसके स्वरूपके संबंधमें अनेक प्रकारके मत व्यक्त किये गये हैं ।

भेद—कुछ लोगोंने पाणिनिके आधारपर इसके **स्वतंत्र** और **परावलंबी** दो भेद माने हैं । परावलंबी स्वरित ग्रीकके सरकम्फ्लेक्स-सा कहा गया है, जिसमें स्वरितका आद्यंश उदात्तसे भी कुछ ऊँचा होता है । उसके बाद यह अनुदात्त होता है । ऋक् प्राति-शाख्यमें भी यह बात कही गयी है । स्वतंत्र रूपमें यह महत्त्वकी दृष्टिसे उदात्तके सम-कक्ष माना गया है । कुछ लोगोंने मात्राके आधारपर स्वरितके **ह्रस्व स्वरित, दीर्घ-स्वरित** और **प्लुत स्वरित** तीन भेद माने हैं । ह्रस्व स्वरितका पूर्वार्द्ध उदात्त और उत्तरार्ध अनुदात्त होता है, दीर्घकी प्रारंभ-की १।४ मात्रा उदात्त तथा शेष ३।४ अनु-दात्त तथा प्लुतकी प्रारंभकी १।८ मात्रा उदात्त तथा शेष ७।८अनुदात्त होती है। इस प्रकारके मत उव्वट तथा अनंत भट्ट आदि द्वारा व्यक्त किये गये हैं । प्रातिशाख्योंमें स्वरितके कई भेदोंका उल्लेख मिलता है । कुछ (मीमांसकको 'वैदिक स्वर मीमांसाके आधारपर) ये हैं :—(१) **जात्य स्वरित** या **नित्य स्वरित**—जो पार्श्ववर्ती उदात्त अनुदात्त आदिकें कारण स्वरित न होकर अपनी जाति या स्वभावसे ही स्वरित हो । जैसे स्वः में । (२) **अभिनिहित स्वरित**—जो स्वरित ए अथवा ओ के बादके अ के पूर्वरूप हो जानेपर (जिसे अभिनिहित

संधि कहते हैं) ए अथवा ओ पर हो । जैसे ते+अवन्तु=तेऽवन्तु (३) **क्षैप्र स्वरित**—यदि ह्रस्व या दीर्घ इ, उ, ऋ, लृ के बाद असवर्ण स्वर आवे तो क्रमशः य, व, र, ल हो जाता है । इसे क्षैप्र संधि कहते हैं । यहाँ संधिके पूर्व यदि इ, उ आदि उदात्त हों और परवर्ती स्वर अनुदात्त हो तो, संधि होनेके बाद उद्‌भूत स्वर स्वरित हो जाता है । इस प्रकारका स्वरित क्षैप्र कहलाता है । जैसे—नु+इन्द्र=न्विन्द्र । (४) **प्राश्लिष्ट स्वरित**—प्रश्लिष्ट संधि (अ+अ=आ, आ+आ=आ, इ+इ=ई; अ+इ=ए, अ+उ=ओ, अ+ए=ऐ, अ+ओ=औ आदि) पर जो स्वरित हो । जैसे—अभि+इन्धताम्=अभीन्धताम् । (५) **तेरोव्यंजन स्वरित**—किसी उदात्त स्वरके बाद यदि कोई व्यंजन हो और उसके बादका स्वर स्वरित हो तो उसे तेरोव्यंजन स्वरित कहते हैं । जैसे—इड'। (६) **पादवृत्त स्वरित** या **वैवृत्त स्वरित**—पार्श्ववर्त्ती असंधित स्वरोंकी असंधि विवृत्ति कहलाती है । ऐसी स्थितिमें यदि पदान्त्य स्वर उदात्त तथा उसके बादका स्वर स्वरित हो तो उस स्वरितके लिए इन नामोंका प्रयोग होता है । जैसे—'ध्रुवा अंसदन्नृतस्य,। संस्कृतका स्वरित ग्रीकके सरकम्फ्लेक्सके समीप होता हुआ भी उसका समानार्थी नहीं है ।

स्वरित सुर—**सुर** (दे०)का एक भेद ।

स्वरीय अपनिहिति—एक प्रकारका अपित्तिहित (दे०) ।

स्वरीकरण (vocalization)—किसी व्यंजनका स्वर हो जाना ।

स्वरूपवाचक अव्यय—(दे०) **समुच्चयबोधक अव्यय** ।

स्वरोंका वर्गीकरण—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक ।

स्वल्पवृत्तमुखी स्वर—ऐसा स्वर, जिसके उच्चारणमें ओष्ठ अपूर्णरूपसे वृत्तमुखी हो । जैसे—ऊ उ, की तुलनामें ओ या ऑ । इसे **स्वल्प वृत्ताकार स्वर** भी कहते हैं । (दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक ।

स्वल्प वृत्ताकार स्वर—**स्वल्प वृत्तमुखी स्वर** (दे०)का एक अन्य नाम ।

स्वात—उत्तरी-पूर्वी **पश्तो** (दे०)का स्वातमें प्रयुक्त एक रूप ।

स्वादबोधक विशेषण—(दे०) **विशेषण** ।

स्वादिगण—संस्कृत धातुओंका एक **गण**(दे०)।

स्वानिमी—**ध्वनिग्रामविज्ञान** (दे०)का नाम ।

स्वानियन(svanian)—काकेशस परिवारकी काकेशसमें प्रयुक्त एक भाषा । इसे **स्वानेतिअन** भी कहते हैं ।

स्वानेतिअन—**स्वानियन**(दे०)भाषाका नाम ।

स्वार—**स्वरित** (दे०)के लिए प्रातिशाख्योंमें प्रयुक्त एक नाम । 'स्वारःस्वरितः' ।

स्वार्थिक—(दे०) **तद्धित** ।

स्वार्थिक प्रत्यय—ऐसे प्रत्यय, जो शब्दोंके साथ लगते हैं, किंतु उनके लगनेसे शब्दके अर्थमें कोई अंतर नहीं आता । शब्दका अपना अर्थ (स्वार्थ) ज्यों-का-त्यों बना रहता है । महाभाष्यकारने कहा है—'अनिर्दिष्टार्थाः प्रत्ययाः स्वार्थे भवन्ति' ।

स्वाहिली—**बांटू परिवार** (दे०)की एक प्रसिद्ध अफ्रीकी भाषा । मूलतः यह स्वाहिली लोगोंकी भाषा है, जो बांटू मुसलमान हैं तथा जंजीबार और आस-पासके तटीय क्षेत्रोंमें रहते हैं । स्वाहिली लोगोंके व्यापारी होनेके कारण उस क्षेत्रके आस-पासकी यह सर्वप्रचलित भाषा हो गयी है, इसीलिए इसका क्षेत्र अब सीमित न रहकर काफ़ी फैल गया है और पूर्वी अफ्रीकाकी अंतर्राज्यीय भाषा बन गयी है । कुछ सदियोंसे इसमें लिखित साहित्य भी मिलता है । इसके बोलनेवालोंकी संख्या ८०,००,०००के लगभग है ।

स्वीकारवाद—भाषाकी उत्पत्तिका एक सिद्धान्त । इसे **निर्णय-सिद्धान्त** (दे०) भी कहते हैं ।

स्वीकृतिबोधक अव्यय—(दे०) **मनोविकारबोधक अव्यय** ।

स्वेडिश––भारोपीय परिवारकी **जर्मनिक**(दे०) उपशाखाकी उत्तरी जर्मनिक शाखाकी एक भाषा। स्वेडिश पहले, कुछ दक्षिणी तथा उत्तरी भागको छोड़कर पूरे स्वीडेनमें, फ़िनलैंड तथा रूसके कुछ भागोंमें एवं आस-पास भी बोली जाती थी। अब इसका प्रमुख क्षेत्र स्वीडन है। कुछ बोलनेवाले फ़िनलैंड आदि अन्य देशोंमें भी हैं। बोलनेवालोंकी संख्या ६५ लाखसे ऊपर है। प्राचीन स्वेडिश लगभग १००० ई०के बादसे मिलती है। यों कुछ अभिलेख ९०० ई०के पूर्व या उसके आस-पासके भी मिले हैं। पहले यहाँ लैटिनमें भी लिखा जाता था, किंतु १४००के बादसे स्वेडिशमें भी साहित्य-रचना होने लगी। तबसे अबतक साहित्य रचना हो रही है। यहाँके प्रमुख साहित्यकार लार्स विवेलिअस (१६०५-६९), फ़िलिप क्रूट्ज़ (१७३१-८५), ओवसेन्स्टीयर्न (१७५०-१८१८), बेंगट लिडनर (१७५७-९३) आदि कहे गये हैं। स्वडिशकी सर्वप्रमुख बोली गॉटलैंड द्वीपमें बोली जाती है, जिसका नाम फॉर्नगुट्निस्क है। अब यह प्रायः एक स्वतंत्र भाषा मानी जाती है। इसे गॉटलैंडिक भी कहते हैं।

ह

हंगकूप (hangkoop)––**थाडो** (दे०) का एक रूप।

हंगसीन (hangseen)––**थाडो** (दे०) का एक रूप।

हंडूरी––**क्यूँठली** (दे०) बोलीकी शिमलाकी पहाड़ियोंमें हंडूरके आसपास प्रयुक्त एक उपबोली। इसकी एक उपबोलीका नाम **बाघली** है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ५०,५०० थी।

हंसपद––एक प्रकारका चिह्न, जिसका प्रयोग लिखनेमें छूटे हुए किसी शब्दके लिए होता है। इसे **काकपद** भी कहते हैं। (दे०) **विराम**।

ह-अंग (ha-ang)––**पलौंग** (दे०) का रूप।

हक (haka)––चिन पहाड़ियों (बर्मा) में प्रयुक्त **लई** (दे०) की एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १४,२५० थी। १९२१की भारत जनगणनामें इसे **क्वेलशिन** कहा गया है।

हकार––**ह** के लिए प्रयुक्त नाम। (दे०) **कार**।

हक्का (hakka)––मानकी कुछ बोलियोंका दक्षिणी चीनमें प्रयुक्त एक वर्ग। कुछ लोग इन्हें **मान** (दे०) से अलग रखते हैं।

हज़ंग (hajang)––**हैजोंग** (दे०) का एक दूसरा नाम।

हजारी अजिरी––(दे०) **अजिरी**।

हजारा हिन्दकी––उत्तरी-पश्चिमी **लहँदा** (दे०) का हज़ारामें प्रयुक्त एक रूप।

हजोंग (hajong)––**हैजोंग** (दे०) का नाम।

हतिगोरिआ (hatigorria)––केन्द्रीय नागा भाषा **आओ** (दे०) का एक अन्य नाम।

हत्ती––**हित्ती** (दे०) भाषाका एक नाम।

हनियुन (hniyun)––**यिन्दू** (दे०) का एक दूसरा नाम।

हबूड़ा––ग्रियर्सनके भाषा सर्वेक्षणके अनुसार, अलीगढ़में प्रयुक्त **भीली** (दे०) की एक बोली। सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ९५० थी। इसे हबूड़ी भी कहते हैं।

हबूड़ी––(१) **जिप्सी** (दे०) भाषाका एक अन्य नाम। (२) **हबूड़ा** (दे०) के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

हमज़ा––**स्वर यंत्र मुखी स्पर्श** (दे०) ध्वनिके लिए एक अरबी नाम। पारिभाषिक शब्दके रूपमें 'हमज़ा' का प्रयोग अब अंग्रेजी आदि अन्य भाषाओंमें भी होता है।

हमीरपुरी––पश्चिमी पहाड़ीकी एक उपबोली। इसका क्षेत्र कांगड़ा ज़िलेकी

हमीरपुर तहसील है। यह उपबोली **कांगड़ी** (दे०)से थोड़ी ही भिन्न है। उदाहरणार्थ, मैंके स्थानपर कांगड़ीमें 'मिजो' चलता है तो हमीरपुरीमें 'हाऊँ'। हमीरपुरी पंजाबीसे थोड़ी-बहुत प्रभावित है। (दे०) **पश्चिमी पहाड़ी**।

हरज (haraj)—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार अहमदाबादकी एक भाषा। अब इसके बारेमें कुछ ज्ञात नहीं है।

हरणशिकारी(haranshikari)—१९११-की बंबई जनगणनाके अनुसार **कन्नड़**(दे०)का बीजापुर तथा धारवाड़में प्रयुक्त एक रूप।

हरारी (harari)—सेमेटिक परिवारकी **इथिओपिअन** (दे०) भाषाकी एक बोली।

हरि (hari)—कन्नड़का एक अन्य नाम। वस्तुतः यह नाम एक मद्रासी जातिका है, जो **कन्नड़** (दे०)के एक विकृत रूपका प्रयोग करती है।

हरिगया(harigaya)—**कोच**(दे०)भाषाकी असममें गारों पहाड़ियोंपर प्रयुक्त एक बोली। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार १,१०० थी।

हरियानी—(१) **पश्चिमी हिन्दीकी** बोली **बाँगरूका**, पंजाबके हिसार ज़िलेके पूर्वी भाग तथा उसके आसपास प्रयुक्त एक स्थानीय रूप। इस क्षेत्रका नाम हरियाना होनेके कारण यहाँकी बोलीको 'हरियानी' कहा गया है। ग्रियर्सनके मतानुसार यह नाम यूरोपीयोंका दिया हुआ है। हरियानाको 'देस' भी कहते हैं, इसी आधारपर 'हरियानी'के अन्य नाम **देसवाली**, **देसी** या 'देसड़ी' भी हैं। क्षेत्रके 'हरियाना' नामके संबंधमें कई मत हैं। कुछ लोगोंके अनुसार इसके हरा-भरा होनेके कारण यह नाम पड़ा है। कुछ अन्य लोगोंका कहना है कि हरि (कृष्ण)का यान (रथ) द्वारिका इधरसे ही गया था, अतः यह नाम पड़ा। (२)कभी-कभी **बाँगरू**(दे०)के लिए भी हरियानी नामका प्रयोग होता है।

हरेनिअन (harranian)—एक विलुप्त पूर्वी आरमेइक बोली।

हरोद (harod)—**हाड़ौती** (दे०)का एक विकृत नाम।

हर्थी(harthi)—बंबई जनगणनाके अनुसार **गुजराती** (दे०)का एक रूप।

हर्निसिअन (hernician)—एक विलुप्त इतालवी बोली। (दे०)**लैटिनो-फैलिस्कन**।

हर्षबोधक अव्यय—(दे०) **मनोविकारबोधक अव्यय**।

हलंत—(दे०) **हल्**।

हलबी—एक बोली, जो बस्तर, चाँदा, विदर्भ, काँकेर तथा नागपुर आदिमें प्रचलित है। इस बोलीके बोलनेवाले 'हलवा' हैं। ये किसान हैं और हल चलानेके कारण इनका नाम 'हलवा' या 'हलबा' पड़ा है। हलबा लोग आदिवासी हैं और जहाँ भी गये हैं, वहाँकी भाषाकी कुछ-न-कुछ विशेषता ग्रहण करते गये हैं। इस प्रकार हलबी बोलीमें कई बोलियों और भाषाओंका मिश्रण है। साथ ही विभिन्न क्षेत्रोंकी हलबी इन बाह्य प्रभावोंके कारण ही एक दूसरेसे कुछ भिन्न हो गयी हैं। उदाहरणार्थ, चाँदाकी हलबी मराठीकी ओर झुकी है तो छत्तीसगढ़में छत्तीसगढ़ी हिन्दीकी ओर। ग्रियर्सनने अपने भाषा-सर्वेक्षणमें चाँदाके उदाहरणोंके आधारपर ही हलबीको मराठीके साथ रखा था, यद्यपि उन्होंने इसे मराठीकी सच्ची बोली नहीं माना था, जैसा कि उनके शब्दोंसे स्पष्ट है। इसमें कोई संदेह नहीं कि हलबीपर मराठी और उड़िया तथा कुछ द्रविड़ भाषाओंका प्रभाव है किंतु हलबीके सभी रूपोंको दृष्टिमें रखा जाय तो यह स्पष्ट हो जाता है कि उसकी व्याकरणिक आत्मा छत्तीसगढ़ी हिन्दीकी ओर झुकी है। इस तरह उसे पूर्वी हिन्दीकी छत्तीसगढ़ी बोलीके अंतर्गत रखा जा सकता है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,०४,९७१ थी।

हल्—**व्यंजन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम। वस्तुतः 'हल्' पाणिनिका एक **प्रत्याहार** (दे०) है, जिसमें सभी व्यंजन आ जाते हैं।

(दे०) **शिवसूत्र**। यह 'हयवरट' के 'ह' और 'हल' के 'ल' को मिलाकर बनाया गया है। 'हल्' से ही **हलंत** बना है। **हलंत**के दो अर्थ हैं:–(१) ऐसा शब्द, जिसके अंतमें 'हल्' या 'व्यंजन' हो। इस अर्थमें यह 'व्यंजनांत'-का समानार्थी है। (२) चिह्न (्)जो देवनागरीके व्यंजनचिह्नोंमें उन्हें अ-विहीन करनेके लिए लगाया जाता है, जैसे क्, प्, ब्।

हल्लाम (hallam)––सिलहट (असम) तथा बंगालके पहाड़ी भागोंमें प्रयुक्त एक प्राचीन 'कुकी' भाषा। यह भाषा **चीनी परिवार** (दे०) की 'तिब्बती-बर्मी' भाषाओंकी 'असमीबर्मी' शाखाके 'कुकी-चिन' वर्गकी है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार २६,८४८ थी।

हल्संधि—(दे०) **संधि**।

हवसुपइ(havasupai)––**पूर्वीय यूम** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

हवाई—**पालिनेशियम परिवार** (दे०)की हवाई द्वीपमें प्रयुक्त एक भाषा।

हविक (havika)––**कन्नड़** (दे०)का एक नाम। वस्तुतः यह नाम एक ब्राह्मण जातिका है, जो कि कन्नड़के एक विकृत रूपका प्रयोग करती है।

ह्स्वे करेन (hashwe keren)–बर्मामें बोली जानेवाली **करेन** (दे०)भाषाकी एक बोली।

हाइपरबोरियन वर्ग (hyperborean)–– उत्तरीपूर्वी साइबेरियामें तथा कुछ द्वीपोंमें लगभग ५० हजार लोगों द्वारा प्रयुक्त **चुक्ची-कमचदल, गिल्यक** तथा **ऐनू** (ainu), इन तीनों भाषाओंका एक वर्ग। इनमें आपसमें कोई पारिवारिक संबंध नहीं है। यह वर्ग मात्र भौगोलिक समीपताके आधारपर बनाया गया है। इसे **पैलेओ-एशियाटिक** (palaeo asiatic)भी कहते हैं। इसे **हाइपरबोरी** भी कहते हैं।

हाइपरबोरी—(दे०) **हाइपरबोरिअन**।

हाडोठी—**हाड़ौती** (दे०)का एक दूसरा नाम।

हाड़ (har)—**संथाली** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

हाड़ौती––मध्य-पूर्वी **राजस्थानी** (दे०)की एक बोली, जो बूंदी तथा कोटामें एवं उनके आसपास बोली जाती है। इसके बोलनेवाले प्रमुखतः हाड़ा राजपूत हैं। इसी कारण इसका नाम **हाड़ौती** है। **सिपाड़ी** (दे०)या **शिवपुरी** इसके एक स्थानीय रूपके नाम हैं। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ९,९१,१०१ थी। इसके परिनिष्ठित रूपके बोलनेवाले ९ लाख, ४३ हजारसे कुछ ऊपर थे।

हॉब्सन-जॉब्सन––ऐंग्लो-इंडियन भाषाके लिए युक्त एक अन्य नाम।

हामी परिवार––**हैमिटिक परिवार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

हायु (hayu)––मध्य नेपालमें प्रयुक्त **वायु** (दे०)का एक अन्य नाम।

हार-राड़ (harrad)––**संथाली** (दे०)का एक अन्य नाम।

हालाई (halai)––**हालाडी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

हालाडी (haladi)––'गुजराती'की बोली **काठियावाडी** (दे०)का एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ७,७०,०००के लगभग थी।

हिंक्येन (hinkyen)––बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार **पलौंग** (दे०)का एक रूप।

हिंद-ईरानी––**आर्य** (दे०)उपशाखाका नाम।

हिंदकी––**लहँदा** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक सामान्य नाम। हिंदकी नामका प्रयोग निम्नांकित बोलियोंके लिए भी होता है। (१) **मुल्तानी** (दे०) बोलीका डेरागाजी खांमें प्रयुक्त एक रूप। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ३,६२,२७० थी। (२) **अवांकारी** (दे०) बोलीके लिए प्रयुक्त एक नाम। (३) **मुल्तानी** (दे०)का एक स्थानीय नाम। (४) डेरा इस्माइल खांकी लहँदाके लिए प्रयुक्त एक नाम।

हिंदको––पेशावर, हजारा तथा उसके आसपास **लहँदा** (दे०)की उत्तरी-पश्चिमी बोली-

का एक सामान्य नाम। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ८,८१,४२५ तथा इसके परिनिष्ठित रूपके बोलनेवालोंकी संख्या ८,२७,०००के लगभग थी। 'हिन्दको' नाम अन्य अर्थोंमें भी प्रयुक्त होता है जैसे--(१) सामान्यतः **लहँदा**के लिए (२) 'लहँदा'की उत्तरी-पूर्वी बोली **अवांकारी**'के लिए तथा (३) मियाँ-वाली तथा बन्नूमें थकी लहँदाके लिए।

हिंदवी--यह नाम **हिन्दुवी**, **हिन्दुई**, **हिन्दवी**, इन तीनों रूपोंमें प्रायः मिलता है। प्रचलित व्युत्पत्तिके अनुसार संस्कृत 'सिन्धव'का फारसीमें 'हिन्दव' बना। इसी 'हिन्दव'में फारसी प्रत्यय 'ईक'के मिलनेसे 'हिन्दवी' शब्द बना। किन्तु यह व्युत्पत्ति सहमत होने योग्य नहीं हो सकी है। 'हिन्दवी' शब्दका प्रयोग भारतके बाहर प्राचीन कालमें नहीं मिलता। ऐसा लगता है कि मुसलमान जब भारतमें आये तो वे यहाँके लोगोंको 'हिंदु' या 'हिंदू' कहते थे। इसीमें तत्कालीन फ़ारसीके विशेषणात्मक प्रत्यय ई (जो प्राचीन फ़ारसी 'ईक'-का विकसित रूप है) जोड़कर मध्यप्रदेशके हिन्दुओंकी भाषाको (हिंदु+ई) उन लोगोंने 'हिन्दुई' (अर्थात् 'हिन्दूवाली' या 'हिन्दूकी') नाम दिया। बादमें उच्चारण-सौकर्य-के लिए 'व' **श्रुति** (दे०) आ जानेके कारण 'हिन्दुई' शब्द 'हिन्दुवी' हो गया (उर्दूमें देहलवी, बाराबंकवी, लखनवी आदि शब्द इसी प्रकार बने हैं। अलिब वाव, ये, हरूफ इल्लत हैं। इनके बाद ई आनेपर 'व' श्रुति आ जाती है)। 'हिन्दवी' इस दूसरे रूप 'हिन्दुवी'का ही विकास है। इस प्रकार इसके तीनों नामोंमें 'हिन्दुई' सबसे पुराना, 'हिन्दुवी' उसका विकास तथा 'हिन्दवी' अंतिम विकास है। एक इसके बादका भी विकास **हिंदुवी** मिलता है।

यहाँ यह भी उल्लेख्य है कि भाषाके अर्थमें 'हिन्दवी' या 'हिन्दुवी' नाम 'हिन्दी'से पुराना है। 'हिन्दुवी' नामका पुराना उल्लेख प्रसिद्ध भारतीय फ़ारसी कवि मुहम्मद औफ़ीमें मिलता है। औफ़ी (१२२८ ई०)-ने इसका प्रयोग कई स्थानोंपर किया है। एक स्थानपर मसऊद नामक कविकी रचनाओंका उल्लेख करते हुए वे लिखते हैं--'यके बताजी व यके ब पारसी व यके ब **हिन्दुवी**'। अमीर खुसरोमें भी 'हिन्दुवी' शब्द मिलता है:--'हिन्दुस्तानियम मन **हिन्दुवी** गोयम जवाब'। दक्षिण भारतमें भी यह शब्द बहुत पहले चला गया था और मुसलमान कवियोंने इसमें (जिसे दक्खिनी भी कहते हैं) रचना भी प्रारंभ कर दी। शेख अशरफ (१५०३) 'नौसरहार'में लिखते हैं--'यक यक बोल न मौजूं आन। तकरीर **'हिन्दवी'** सब बखान'। इस समयतक कदाचित् 'हिन्दवी' ('हिन्दुवी'से विकसित होकर) शब्द चल चुका था। उत्तरी भारतमें जायसी (१६ वीं सदी उत्तरार्ध) भी कहते हैं --'तुर्की अरबी **हिन्दवी** भाषा जेती आहि। जामे मारग प्रेमका, सबै सराहैं ताहि'। तुलसीके फ़ारसी पंचनामे [जो महाराज बनारसके यहाँ सुरक्षित है; सन् १६२३ ई० में लिखित गोरा बादलकी कथामें तथा १६६६ई०में श्री परकासदासके एक पत्रमें (जो अम्बेरके दीवानको लिखा गया था] भी 'हिन्दवी' शब्दका प्रयोग मिलता है। यह आश्चर्य होता है कि इस प्रकार भाषाके रूपमें चारों ओर प्रसिद्ध होनेपर भी अमीर खुसरो द्वारा प्रस्तुत भारतीय भाषाओंकी सूचीमें या अबुलफ़ज़ल द्वारा दी गयी भाषा सूचीमें यद्यपि 'लाहौरी', 'देहलवी' आदि नाम हैं, किंतु यह नाम नहीं है। इसका कारण शायद यह है कि इसके क्षेत्रका निर्धारण नहीं हुआ था। उपर्युक्त सूचियोंमें दिये गये नाम क्षेत्रोंसे संबद्ध हैं। या यह भी हो सकता है कि खुसरो और अबुल-फ़ज़ल द्वारा प्रयुक्त नाम देहलवी इसीका नाम हो। कदाचित् जनतामें 'देहलवी' नाम ही चल रहा था, 'हिन्दवी' शब्द विशेषतः साहित्यिकोंतक सीमित था।

यह संकेत किया जा चुका है कि 'हिन्दवी' का प्रयोग संभवतः हिन्दुओंकी बोलीके लिए

था; इसके विरुद्ध आरंभमें 'हिन्दी' नाम मुसलमानों द्वारा प्रयुक्त (दे०--'हिन्दी') उसी भाषाके लिए था। दोनोंमें व्याकरणका अंतर न था किन्तु शब्द-समूहका कुछ अंतर था। हिन्दीपर विचार करते समय दिखलाया जा चुका है कि 'खालिक बारी' खुसरोकी रचना नहीं थी। वह रचना उनके बादकी है। किन्तु 'हिन्दी' और 'हिन्दवी' शब्दोंके इतिहासकी दृष्टिसे उसका मूल्य है। उसमें 'हिन्दी' शब्दका प्रयोग केवल पाँच बार, जबकि 'हिन्दवी'का प्रयोग तीस बार हुआ है। इसका अर्थ यह है कि उस समयतक 'हिन्दवी' शब्द अधिक प्रचलित था और 'हिन्दी' बहुत कम। सच पूछा जाय तो १३००से १८००के बीचके पूरे इतिहासमें 'हिन्दी' शब्दका प्रयोग अपेक्षाकृत कम हुआ है और 'हिन्दवी'का अधिक हुआ है। खालिकबारीके संबंधमें पहले मेरा विचार था कि इसमें 'हिन्दवी' और 'हिन्दी' शब्द बिल्कुल समानार्थी शब्दके रूपमें नहीं प्रयुक्त हुए हैं, अपितु जैसा कि ऊपर संकेत किया गया है, केवल उन शब्दोंके लिए हिन्दवीका प्रयोग है, जो अधिकतर हिंदुओंकी भाषामें चलते हैं और हिन्दी उनको कहा गया है, जो मुसलमानोंकी भाषा(हिन्दी)-में भी खूब चलते हैं। ध्यानपूर्वक देखनेपर पता चला कि कुछ शब्दोंसे इस बातकी पुष्टि होती है, किंतु कुछ इसके विरुद्ध भी जाते हैं। इसका निष्कर्ष यह निकला कि (१) उस कालमें दोनों शब्द प्रायः समानार्थी थे। (२)'हिन्दी' शब्दका प्रचार कम तथा 'हिन्दवी' का अधिक था। (३) खालिकबारीमें इनके प्रयोगमें कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। अधिक प्रचारके कारण 'हिन्दवी'शब्द अधिक तो आया है, किंतु इस अधिक आनेमें छंदकी आवश्यकता भी कुछ कारण रही है।

'हिन्दवी'को हिन्दुओंकी हिंदी (जिसे हिन्दू लोग 'भाखा'या 'भाषा' कहते थे) या ऐसी हिंदी, जिसमें अरबी-फ़ारसी शब्द अपेक्षाकृत कम रहते थे, १८वीं सदीतक या तासीको प्रमाण मानें तो १९वीं सदी के मध्यतक माना जाता रहा है। हातिम (१८वीं सदी उत्तरार्ध) 'दीवानज़ादे'के दीबाचेमें लिखते हैं--'हिन्दवी किआ रा भाका गोयन्द।' इंशाकी 'हिन्दवी' भी 'रानी केतकीकी कहानी'की भाषासे स्पष्ट है कि पढ़े-लिखे मुसलमानोंकी भाषा नहीं है, जैसा कि चंद्रबली पाण्डेय या डा० उदयनारायण तिवारी मानते हैं। वह प्रायः हिन्दुओंकी ठेठ हिन्दी या 'भाखा' है। उस कालके मुसलमानों द्वारा लिखित गद्य या पद्यकी भाषाकी तुलना करनेसे यह बात स्पष्टतया देखी जा सकती है। गार्सां द तासीने अपने इतिहासमें 'एंदूस्तानी' (अर्थात् हिन्दुस्तानी)का प्रयोग उर्दूके लिए तथा 'ऐंदुई' (अर्थात् हिन्दवी) का प्रयोग हिन्दीके लिए किया है, इससे भी वही बात स्पष्ट होती है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मोटे तौरपर तो दिल्लीके आसपासकी बोली देहलवी या उसपर आधारित साहित्यिक भाषाओंके लिए इस हिन्दवी नामका प्रयोग होता रहा है, और इस रूपमें 'हिन्दवी'हिन्दू-मुसलमान दोनोंकी भाषा रही है, और इसके अंतर्गत हिन्दी, हिन्दुस्तानी, दक्खिनी, रेख्ता, उर्दू आदि सभी कुछ रही हैं। किंतु इसके साथ ही मूलतः यह हिन्दुओंकी भाषा रही है और उसके लिए यह नाम प्रयुक्त होता रहा है। इस प्रकार हिन्दवी नामके प्रयोगमें वैज्ञानिक ढंगकी दो-टूकता तथा एकरूपता नहीं मिलती। इसका प्रयोग सामान्यतः १९वीं सदीके मध्यतक मिलता है। बादके प्रयोग अपवाद स्वरूप ही हैं। आजकल केवल 'दक्खिनी' या दक्खिनी तथा उसके पूर्वके उत्तर-भारतके मसऊद, खुसरो तथा शकरगंजी आदिके साहित्यके लिए भी हिन्दवी शब्दका प्रयोग चल रहा है। (दे०) **हिन्दी, उर्दू, हिन्दुस्तानी, दक्खिनी**।

हिंदी--(१)पश्चिमी हिंदीकी बोली **बांगरू** (दे०) का, रोहतक, दिल्लीके ग्रामीण भागों तथा करनालमें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप। ग्रियर्सनके अनुसार इस क्षेत्रकी बोलीके लिए

'हिंदी' नाम यूरोपीय लोगोंमें प्रचलित था। (२) **खोंटाली** (दे०)का एक नाम। (३) **पूर्वी मगही** (दे०)के लिए मालदा (बंगाल)-में प्रयुक्त एक नाम। (४) **मुल्तानी** (दे०)-का मुल्तानमें प्रयुक्त एक नाम। (५) **दक्खिनी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम। (६) **कनौजी** (दे०)के एक रूपका नाम, जो फ़रुखाबादमें बोला जाता है। (७) भारतकी प्रसिद्ध भाषा, जो अब भारत गणतंत्रकी राज्यभाषाके रूपमें स्वीकृत हो चुकी है। 'हिंदी' शब्दका इतिहास बहुत पुराना है। लोग इसे संस्कृत शब्द 'सिंधु'से संबद्ध मानते हैं। किन्तु सिंधु शब्द मूलतः संस्कृतका शब्द नहीं हो सकता। आर्योंके भारतमें आनेके समय पश्चिमोत्तर भारतमें आर्येतर लोग रहते थे और ये लोग पर्याप्त संस्कृत थे। ऐसी स्थितिमें यह स्वाभाविक है कि सिंधु नदीका कोई नाम इन आर्येतर लोगों द्वारा प्रयुक्त होता रहा होगा। ऐसा प्रायः नहीं होता कि कोई विदेशी जाति किसी देशमें आवे और वहाँके सारे-के-सारे नामोंको बदल डाले। ऐसी नदियों या ऐसे पहाड़ों आदिके नाम तो नवागंतुक रख या बदल सकते या लेते हैं, जिनको अधिक लोग नहीं जानते, किंतु पश्चिमोत्तर भारतकी सबसे बड़ी नदीके संबंधमें उनको ऐसा करना पड़ा हो, या उन्होंने ऐसा किया हो, ऐसा माननेका कोई कारण नहीं दीखता। ऐसी स्थितिमें कम-से-कम इतना तो कहा ही जा सकता है कि यह शब्द मूलतः द्रविड़ है। यों यह भी असंभव नहीं है कि द्रविड़ लोग जब भारतमें आये हों तो उन्हें यह नाम आस्ट्रिक आदि किसी अन्य पुरानी जातिसे मिला हो। साथ ही यह भी संभव है कि आर्योंके आनेके समय इस नदी-का जो नाम प्रचलित रहा हो, आर्योंने 'सिंधु' रूपमें उसका संस्कृत रूप बना लिया हो। शब्दोंके संस्कृतीकरणकी परंपरा आर्योंमें अत्यंत प्राचीन कालसे मिलती है। उन्होंने अनेक देशी-विदेशी नामों एवं शब्दोंके साथ ऐसा किया है।

एक शब्द 'सिड्' 'सित्' या 'चिन्द' आदि कई रूपोंमें द्रविड़ परिवारकी कई भाषाओं एवं बोलियोंमें अत्यंत प्राचीनकालसे मिलता है, जिसका प्रयोग, अन्य अर्थोंके साथ, 'छिड़कने', 'सींचने' या 'बहने' आदिके लिए होता रहा है। मेरा अनुमान है कि इसी 'सिड्' या 'सित्' शब्दके आधारपर प्राचीन द्रविड़ोंने इस बड़ी नदी (सिंधु)को 'सिद्' या 'सित्' नाम दिया। यह नाम इसमें बहते हुए बहुत अधिक पानीके कारण भी हो सकता है, या इस कारण भी हो सकता है कि इनकी सभ्यताका उस कालमें मूल केन्द्र (सिंधुकी घाटी) जो था, इसीसे सींची जानेवाली भूमिपर बसा था। बादमें इस नदीके आसपास-की भूमि (सिंधु घाटी) भी इसी नामके आधारपर 'सिद्' या 'सित्' कहलायी। इस अनुमानके लिए एक ठोस आधार भी है। १९२८-२९में पश्चिमोत्तर भारतसे प्राप्त कुछ अभिलेखोंसे यह पता चलता है कि हड़प्पा-मोहन-जोदड़ोके लोगोंके स्थानका नाम उस कालमें 'सिद्' या सित् था। इस प्रकार सिंधु प्रदेशका प्राचीन नाम 'सिद्' या 'सित्' सिद्ध होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि संस्कृत-में इस नदी या इस प्रदेशके लिए 'सिंधु' शब्द वस्तुतः संस्कृत शब्द न होकर प्राचीन द्रविड़ शब्द 'सिद्' या 'सित्'का संस्कृतीकृत रूप है। जैसा कि ऊपर संकेत किया गया है ज्ञानकी वर्तमान परिधिमें इस शब्दको और पीछेतक ले जाना संभव नहीं। संभव है, भविष्यमें और प्रमाणोंके मिलनेपर इसे आ-स्ट्रिक या और भी किसी प्राचीन भाषाका शब्द सिद्ध किया जा सके। द्रविड़ शब्दके आधारपर बने इस 'सिंधु' शब्दका प्रयोग ऋग्वेद-कालमें दो अर्थोंमें चल रहा था। इसका प्रमुख अर्थ तो नदी था और दूसरा अर्थ था 'सिंधुनदीके पासकी भूमि'। नदीके अर्थमें यह शब्द 'सिंधु' 'सप्तसिंधवः' (सात नदियाँ), 'सप्तसिंधुषु' आदि रूपोंमें कई स्थानोंपर आया है, किंतु स्थान-विशेषके अर्थ-में कदाचित् केवल एक बार (२.८.९६)ही

प्रयुक्त हुआ है। आर्योंके भारत-आगमनसे पूर्व भी भारतसे ईरानका सांस्कृतिक तथा व्यापारिक संबंध रहा है, जैसा कि ज्योतिष, पौराणिक कथाओं तथा अन्य क्षेत्रोंमें आपसी प्रभावोंसे स्पष्ट होता है। आर्योंके भारत आगमनके बाद यह संपर्क सगोत्रीय होनेके कारण कदाचित् और अधिक बढ़ गया। ५००ई० पू०के आसपास दारा प्रथमके कालमें सिंधु नदीका प्रदेश ईरानी लोगोंके हाथमें था। इन्हीं संपर्कोंके साथ भारतसे ईरान तथा ईरानसे भारतमें याजक लोग आया-जाया करते थे। शाक द्वीप के मग ब्राह्मण (जो भारतमें शाकद्वीपी ब्राह्मण कहलाये) फारसके पूर्वोत्तर भागसे ही आकर यहाँ बसे थे। कदाचित् याजकोंके साथ हमारे 'सिंधु' और 'सप्तन्धिवः' आदि शब्द भी ईरान पहुँचे। हमारी प्राचीन 'स' ध्वनि ग्रीक भाषाकी तरह ईरानकी अवेस्ता आदिमें भी 'ह' उच्चरित होती रही है, जैसे—सं० सप्त, अवेस्ता हफ्त, सं० असुर, अवेस्ता अहुर आदि। इसी कारण ये 'सिंधु' और 'सप्त-सिन्धव' शब्द अवेस्तामें 'हिंदु' (अवेस्तामें महाप्राण ध्वनियाँ नहीं होती, अतः घ का द हो गया है) और 'हप्तहिन्दव' रूपमें मिलते हैं। अवेस्तामें 'हिंदु' शब्द नदीके अर्थमें तो प्रयुक्त हुआ ही, साथ ही, सिंधु नदीके पासकी भूमिके अर्थमें भी प्रयुक्त हुआ है। उस समय ईरानवालोंके पास भारतकी भूमिके लिए केवल वही शब्द था, अतः धीरे-धीरे इरानी, भारतके जितने भी भागसे परिचित होते गये, उसे वे इसी नामसे अभिहित करते गये। इस प्रकार किसी अन्य शब्दके अभावमें इस शब्द-के अर्थमें विस्तार होता गया और 'सिंधु नदीके पासकी भूमिका वाचक' शब्द धीरे-धीरे पूरे भारतका वाचक हो गया। इस आर्थिक विकासके साथ-साथ इस शब्दका ध्वनिक विकास भी हुआ और इसमें 'इ'पर बलाघात होनेके कारण अंत्य 'उ' लुप्त हो गया और इस प्रकार यह शब्द 'हिन्दु'-से 'हिंद' हो गया। आगे चलकर 'हिंद' शब्दमें इरानीके विशेषणार्थक प्रत्यय 'ईक' जुड़नेसे हिंदीक[1] शब्द बना, जिसका अर्थ था 'हिन्दका' इसी 'हिन्दीक'का विकास ('क'के लुप्त हो जानेके कारण) 'हिंदी' रूपमें हुआ। इस प्रकार 'हिन्दी'का मूल अर्थ है 'हिन्दका' या 'भारतीय'। इस अर्थमें 'हिन्दी' शब्दका प्रयोग मध्यकालीन फ़ारसी तथा अरबी आदिमें अनेक स्थलोंपर हुआ है। उदाहरणार्थ अरबीमें 'तमर'का अर्थ 'सूखा खजूर' है। इससे कुछ मिलता-जुलता होनेके कारण उन लोगोंने 'इमली'को (जिसका परिचय उन्हें भारतसे ही प्राप्त हुआ था) इसी आधारपर 'तमर हिन्दी' या 'तमर-ए-हिंद'[2] कहा। विशेषणके रूपमें प्रयुक्त होनेके अतिरिक्त 'हिन्दी' शब्द संज्ञा रूपमें भी बहुत-सी भाषाओंमें प्रयुक्त होता रहा है। उदाहरणार्थ फ़ारसी तथा अरबीमें 'हिन्दी' शब्दका प्रयोग विशेष प्रकारकी तलवारके लिए (जो भारतीयइस्पातकीबनी थी, याभारतसेजाती थी) तथा तलवारके वार आदिके लिए होता रहा है। मिस्रमें मलमल (जो भारतसे जाता था) के लिए भी 'हिन्दी' शब्दका प्रयोग मिलता है।

भाषाके लिए 'हिन्दी' शब्दके प्रयोगका इतिहास भी फ़ारस और अरबसे ही आरंभ होता है। छठी सदी ई०के कुछ पूर्वसे ही ईरानमें 'ज़बान-ए-हिन्दी'का प्रयोग भारत-की भाषाओंके लिए होता रहा है। इस दृष्टिसे कुछ उदाहरण उल्लेख्य हैं :—

(१) ईरानके प्रसिद्ध बादशाह नौशेरवाँ (५३१-५७९ ई०) ने अपने दरबारके प्रमुख विद्वान् हकीम बजरोयाको 'पंचतंत्र'का अनुवाद कर लानेके लिए भारत भेजा था। बजरोयाने यह काम पूरा किया। 'कर्कटक और दमनक'के आधारपर उसने

१—यह 'हिंदीक' शब्द ही अरबीसे होता ग्रीकमें 'इंदिके' 'इंदिका', लैटिनमें 'इंडिआ' तथा अंग्रेजी आदि में 'इंडिआ' हुआ।

(२) यही शब्द अंग्रेजीमें टैमरिंड (tamrind = इमली है।

इस अनुवादका नाम 'कलीला व दिमना' रखा। इसकी भूमिका नौशेरवाँके मंत्री बुज़र्च मिहरने लिखी। भूमिकामें अन्य बातोंके अतिरिक्त यह भी कहा गया है कि यह अनुवाद—'ज़बाने हिन्दी'से किया गया है। यहाँ स्पष्ट ही जबाने हिन्दीका प्रयोग 'भारतीय भाषा' या 'संस्कृत'के लिए है। (२) इस पहलवी अनुवादसे इस पुस्तकके अरबी गद्य तथा पद्यमें कई नामोंसे कई अनुवाद हुए १९वीं सदीतकके प्रायः सभी अनुवादोंमें मूल पुस्तकको **जबाने हिन्दी**—का कहा गया है। उदाहरणार्थ ७०० ई०के आस-पासमें किये गये अब्दुल्ला इब्नुल मुकफ़्फ़ाके अनुवादमें, इब्न भकनाके अनुवादमें तथा जावेदाने खिरद नामसे ८१३ ई०में इब्न सुहेल द्वारा किये गये अनुवादमें। (३) १२२७में मिनहाजुस्सिराज़ भारत आया था। इसने अपनी पुस्तक 'तबकातेनासिरी'में लिखा है कि 'ज़बाने हिन्दी'में बिहारका अर्थ 'मदरसा' है। स्पष्ट ही यहाँ 'ज़बाने हिन्दी'का प्रयोग संस्कृतके लिए न होकर या तो सामान्य भारतीय भाषाके अर्थमें है, या फिर भारतके 'मध्य भागकी भाषा' (कदाचित् 'हिन्दुवी' या 'हिन्दी')के लिए। (४) १३३३ ई०में इब्नबतूता अपने 'रेहला इब्न बतूता'में तारन नगरके संबंधमें लिखते हुए लिखता है :—'किताबत अला बाज़ अलजदरात बिल हिन्दी' अर्थात् कुछ दीवारोंपर हिन्दीमें लिखा था। भाषाके अर्थमें केवल 'हिन्दी' शब्दका विदेशोंमें यह कदाचित् प्राचीनतम प्रयोग है, यद्यपि यह नाम आजकी 'हिन्दी'के लिए न होकर कदाचित् संस्कृतके लिए है। (५) तैमूरलंगके पोतेके कालमें (१४२४ ई०) शरफुद्दीन यज़्दीने तैमूर और उसके परिवारके संबंधमें 'ज़फ़रनामा' नामक ग्रंथ लिखा। इसमें एक स्थानपर आता है कि 'राव' हिन्दी शब्द है। विदेशोंमें 'हिन्दी भाषा'के लिए 'हिन्दी'का संभवतः यह प्रथम प्रयोग है। भारतवर्षमें भी भाषाके अर्थमें हिन्दी शब्दका प्रयोग प्रारंभमें मुसलमानों द्वारा ही किया गया। भारतीय परंपरामें बोली जानेवाली या 'प्रचलित भाषा'के लिए प्राचीन कालसे ही 'भाषा' शब्दका प्रयोग करते आ रहे हैं। इसका प्रयोग क्रमसे संस्कृत, प्राकृत तथा बादमें हिन्दी आदिके लिए हुआ। 'सो देख कै बनमाली शिष्यार्थ भाषा टीका कीन्ह' (१४३८में लिखित भास्वतीकी भाषा-टीका)। 'संस्कृत कबिरा कूपजल भाषा-बहता नीर' —कबीर; 'आदि अंतजसि कथ्था अहै। लिखि भाषा चौपाई कहै'—जायसी; 'भाषा भनित मोर मति थोरी'—तुलसीदास; 'भाषा-निबद्ध मति मंजुल.....' तुलसीदास; 'भाषा बोल न जानहीं जेहिके कुलके दास'—केशवदास। संस्कृत आदिके ग्रंथोंकी हिन्दी टीकाओंमें 'भाषा टीका' रूपमें भी यह शब्द उसी अर्थमें प्रयुक्त हुआ है। रामप्रसाद निरंजनी—कृत 'भाषा योग वासिष्ठ' (१७४१ ई०), १९ फ़रवरी १८०२में फोर्ट विलियम कॉलिज द्वारा 'भाखा मुंशी'की माँगकी स्वीकृति तथा लल्लूलालको उक्त कॉलिजके कागज़ोंमें **भाषा मुंशी** कहे जानेसे पता चलता है कि हिन्दीके लिए भाषा शब्दका प्रयोग आधुनिक कालतक चला आ रहा है। संस्कृतके टीका-ग्रंथोंमें तो यह अब भी चल रहा है। पुरानी पीढ़ीके पंडित **हिन्दी टीका** न कहकर **भाषा टीका** ही कहते है।

मुसलमान इस देशके लिए 'हिन्द'का प्रयोग करते थे ही, अतः जब वे यहाँ आये तो यहाँकी भाषाको 'जबान हिन्दी' कहने लगे। उनका विशेष संबंध मध्यदेशसे था, अतः धीरे-धीरे इसकी मध्यदेशीय बोलीके लिए उन्होंने 'जबान हिन्दी' या 'हिन्दी जबान' या 'हिन्दी' नामका प्रयोग किया। आरंभमें इस नामके अंतर्गत पूर्वी पंजाबी भी कदाचित् आती थी।

'हिन्दी' नामका भारतमें प्रथम प्रयोग किसने किया, यह अभीतक अनुसंधानका विषय है। प्रायः यही कहा जाता है कि

अमीर खुसरोमें सबसे पहले 'हिन्दी' शब्द हिन्दी भाषाके लिए मिलता है। मैं समझता हूँ कि भाषाके अर्थमें खुसरोने कहीं भी 'हिन्दी' शब्दका प्रयोग नहीं किया। उसने (इलिअट, ३. ८. ५३९) 'हिन्दी' शब्दका प्रयोग 'भारतीय मुसलमानों' या 'भारतीय'के लिए किया है। यहाँ बहुत विस्तारसे इस विषयको लेना संभव नहीं है, किंतु संक्षेपमें कुछ बातें कही जा सकती हैं। इस संबंधमें सबसे बड़ा तर्क तो यह दिया जाता है कि खुसरो लिखित 'खालिक बारी'में हिन्दी शब्द कई बार आया है। वस्तुत: 'खालिक बारी' खुसरोकी रचना नहीं है और उसके बहुत बाद किसी 'खुसरो शाह'ने इसकी रचना की है। यदि 'खालिक बारी' अमीर खुसरो जैसे विद्वान्‌की रचना होती तो वह पर्याप्त व्यवस्थित होती, जबकि उपलब्ध 'खालिक बारी' पूर्णत: अव्यवस्थित है। कभी फ़ारसी शब्दोंके समानार्थी हिन्दी शब्दादि दिये गये हैं तो कभी वाक्योंके समानार्थी वाक्य। भाषा सीखनेकी दृष्टिसे इन वाक्यों या शब्दोंमें कोई भी एकरूपता नहीं है। जो वाक्य दिये गये हैं, वे भी तुक या छंद बैठानेकी दृष्टिसे लिये गये ज्ञात होते हैं। भाषाके प्रारंभिक ज्ञानकी दृष्टिसे उनका प्राय: बिल्कुल भी मूल्य नहीं है। कारक, काल-रचना आदिकी दृष्टिसे भी वे महत्त्व नहीं रखते। 'तुर्की जानी ना'। तुर्कीका विद्वान् खुसरो यह लिखे कि उसे अमुक शब्दकी तुर्की नहीं आती, कल्पनातीत है। साथ ही यदि उसे तुर्की नहीं भी आती, तो इस स्वीकारोक्तिकी, किसीको हिन्दी या हिन्दवी सिखानेके लिए लिखे गये कोशमें क्या आवश्यकता? ऐसे शब्द छोड़ देता या उसके लिए जैसा कि अन्यत्र किया गया है अरबी या फ़ारसी शब्द दे दिया होता। 'खालिक बारी'में शब्दोंकी गलतियाँ भी हैं। हिन्दी 'काना'के लिए फ़ारसी शब्द 'कोर' दिया गया है, जबकि 'कोर'का अर्थ 'अंधा' होता है। 'तिदर्व', 'कुबक' और 'हंस'को एक माना है, जबकि तीनों अलग-अलग हैं। 'तीतर'के लिए एक स्थानपर 'दुर्राज' तथा अन्यत्र 'लगलग' दिया गया है। 'खालिक बारी'से इस तरहकी अशुद्धियोंके अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। उपर्युक्त बातोंको देखते हुए यह कहना उचित नहीं लगता कि 'खालिक बारी, खुसरोकी रचना है। ऐसी स्थितिमें 'हिन्दी' शब्दका खुसरो द्वारा प्रयोग 'खालिक बारी'के आधारपर नहीं माना जा सकता। दूसरे प्रमाणके रूपमें खुसरोका एक वाक्य उद्‌धृत किया जाता है, जिसमें उन्होंने कहा है कि—'मैंने फ़ारसीके साथ-साथ हिन्दीमें भी चंद नज्में कहीं :— 'जुज़ बै चंद नज्म हिन्दी नीज नज्जर देस्तान करदा शुद अस्त।' वस्तुत: यह वाक्य उनके किसी भी प्रामाणिक ग्रंथमें नहीं आया है। 'देवल देवी खिज्र खाँ' मसनवीसे कुछ लोगोंने उद्धरण दिये हैं, किंतु वहाँ भी मूलत: 'हिन्दुवी'का प्रयोग है न कि 'हिन्दी'का। इनके अतिरिक्त खुसरो द्वारा भाषाके अर्थमें हिन्दी शब्दके प्रयोगका कोई अन्य प्रमाण देखनेमें नहीं आया। उसने कहीं और भी प्रयोग किया हो तो नहीं कह सकता। यों, भाषाके अर्थमें हिन्दुवी (दे०) या 'हिन्दुई' शब्दका प्रयोग खुसरोमें कई स्थलोंमें मिलता है। एक स्थानपर वे कहते हैं :—'तुर्क हिन्दुस्तानियम मन हिंदवी गोयम जवाब' अर्थात् मैं हिन्दुस्तानी तुर्क हूँ, हिन्दुवीमें जवाब देता हूँ। उनकी मसनवियोंमें भी यह शब्द एकाधिक स्थलोंपर आया है। इस प्रकार खुसरोके द्वारा 'हिंदी' नामके प्रयोगकी बात बहुत प्रामाणिक नहीं ज्ञात होती। हाँ, यह अवश्य अनुमान है, कि उनके कुछ ही बाद इस शब्दका भाषाके अर्थमें प्रयोग प्रारंभ हो गया था।

यह प्राय: कहा गया है कि 'हिन्दी' और 'हिंदवी' शब्द एक ही अर्थ रखते थे और एक ही अर्थमें प्रयुक्त होते थे। किंतु मूलत. यह बात गलेसे उतरती नहीं। एक ही

भाषाके लिए बिना किसी विशेष कारणके दो नामोंका साथ-साथ उत्पन्न होना और बिल्कुल एक अर्थ चलना कुछ बहुत जँचता नहीं। मुझे ऐसा लगता है कि आरंभमें ये दोनों शब्द भिन्नार्थी थे। ऊपर कहा गया है खुसरोने 'हिन्दी' शब्दका प्रयोग भारतीय मुसलमानोंके लिए किया है और 'हिन्दवी' शब्दका प्रयोग उसने मध्यदेशीय भाषाके लिए किया है। यह 'हिन्दवी' शब्द वस्तुतः 'हिन्दुवी' या 'हिन्दुई' है। हिन्दू+ई = हिन्दुओंकी भाषा (दे० हिन्दवी)। 'हिन्दुवी' शब्दके प्रयोगके कुछ दिन बाद हिन्दी (अर्थात् भारतीय मुसलमानों)की भाषाके लिए कदाचित् 'हिन्दी' शब्द ही चल पड़ा। 'हिन्दुवी' या हिन्दवी तो वह भाषा थी, जो शौरसेनी अपभ्रंशसे विकसित थी और मध्यदेशमें सहज रूपसे प्रयुक्त हो रही थी। 'हिन्दी' अर्थात् 'भारतके मुसलमानों'ने भी इसे अपनाया, किंतु स्वभावतः धार्मिक तथा सांस्कृतिक (खान-पान, रहन सहन, कपड़ा-लत्ता) कारणोंसे उनकी भाषामें अरबी, फ़ारसी, तुर्कीके शब्द अधिक थे। इसी भाषाके लिए आरंभमें कदाचित् 'हिन्दी' शब्द चला। इस प्रकार 'हिन्दवी' शब्द पुराना है और 'हिन्दी' अपेक्षाकृत बादका। साथ ही मूलतः दोनोंमें कुछ अंतर भी है। शुद्ध हिन्दीमें लिखनेवाले पुराने कवियों तथा लेखकोंने संभवतः इसी कारण अपनी भाषाको प्रायः 'हिन्दवी' कहा है—तुरकी अरबी 'हिन्दवी भाषा जेती आहि। जामें मारग प्रेमका, सबें सराहैं ताहि।—जायसी। श्री परकास दास (१६६६ ई०)के अंबेरके दीवानको लिखे गये पत्र, तुलसीके 'फ़ारसी पंचनामे' जटमलकी 'गोरा बादलकी कथा' तथा इंशा अल्ला खाँकी 'रानी केतकीकी कहानी'में भी 'हिन्दवी' शब्द ही मिलता है।

किंतु ऐसा लगता है कि यह भेद अधिक दिनतक चला नहीं। अरबी-फ़ारसी-तुर्कीके बहुतसे आम-फ़हम शब्द हिन्दवीमें आ गये और दूसरी ओर हिन्दुओं एवं भारतीय वातावरणके प्रभावसे पर्याप्त भारतीय शब्द मुसलमानोंकी भाषामें भी गृहीत हो गये, और हिन्दी-हिन्दवी दोनों ही शब्द प्रायः (किन्तु पूर्णतः नहीं) समानार्थी हो गये। यों कुछ विशेष प्रयोगोंमें इन शब्दोंके मूल अर्थ भी लगभग १८वीं सदी उत्तरार्द्ध-तक या उसके भी बाद चलते रहे। हातिम (१८वीं सदी उत्तरार्द्ध)ने दीवानज़ादेके दीबाचेमें लिखा है,—'ज़बान हर दयार ता बहिन्दवी, कि आँरा भाका गोयंद...'। इससे स्पष्ट है कि 'हिन्दवी' और भाषा प्रायः एक थी। उसीके कुछ दिन बाद 'तज़किरः मख़ज़न उल्गरायब'में लिखा मिलता है—'दरज़बाने हिन्दी किमुराद उर्दू अस्त' अर्थात् हिन्दीमें जिससे मतलब उर्दू है। किंतु जैसा कि संकेत किया गया है तथा आगे भी कुछ उदाहरणोंसे स्पष्ट होगा, इस प्रकारका अंतर सर्वत्र नहीं किया गया है। चंद्रबली पाण्डेयने यह दिखानेका ('उर्दूका रहस्य' 'पृष्ठ ४०-४२) प्रयास किया है कि हिन्दवी हिन्दुओंकी भाषा नहीं थी। इसी आधारपर डॉ० उदयनारायण तिवारी ('हिन्दी भाषाका उदय और विकास' पृ० १८४)ने भी कदाचित् इसे स्वीकार कर लिया है, किंतु पांडेयजीके तर्क वस्तुतः उनके मतको प्रमाणित करनेमें समर्थ नहीं दीखते।

'हिन्दी' शब्दके प्रारंभिक प्रयोग जब भी और जिसके भी द्वारा हुए हों, इसके अविच्छिन्न प्रयोगकी प्राचीन परंपरा दक्खिनी या दक्खिनी हिन्दीके कवियों एवं गद्यकारोंमें ही मिलती है। उदाहरणार्थ :—(१) शाही नीराजी (१४७५ ई०)—यों देखत **हिन्दी** बोल। (२) शाह बुर्हानुद्दीन (१५८२ई०)—ऐब न राखें **हिन्दी** बोल (इर्शाद नामामें)। (३) मुल्ला वजही (१६३५ ई०)—हिन्दोस्तानमें **हिन्दी** ज़बान सों..., (सबरसकी भूमिकामें)। (४) जुनूनी (१६९० ई०)—मैं इसको देर **हिन्दी** ज़बाँ इस वास्ते कहने लगा

(मौलाना रूमके 'मोजज़ा'के अनुवादमें)। इसके साथ-साथ **हिन्दवी** (दे०) शब्द भी प्रयुक्त हो रहा था ! १७वीं सदीसे हिन्दी शब्द उत्तर भारतमें भी अविच्छिन्न रूपसे मिलने लगता है। उदाहरणार्थ, खफ़ी खांके 'मुतखबुल्ल बाव' (१७वीं सदी उत्तरार्द्ध), मिर्जा खांके 'तुहफ़तुल हिन्द' (१६७६ ई०), बरकतुल्ला पेमीके अवारफ़े हिन्दी (लगभग १७०० ई०) तथा मआसिरुल उमरा (१७४२-१७४७) आदिमें। हिन्दी कवियोंमें १७७३ ई०में सूफ़ी कवि नूर मुहम्मदने लिखा है—'हिंदू मग पर पांव न राख्यौं। का जौ बहुतै हिंदी माख्यौं।' इससे संकेत यह मिलता है कि इस कालतक आते-आते हिन्दी शब्द कुछ-कुछ हिन्दुओं-की माषाकी ओर झुक रहा था, और इसमें-से हिन्दुओंकी शब्दावली निकलकर फ़ारसी शब्दोंके आधारपर उर्दूकी नींव पड़ रही थी। १८००के लगभग मुरादशाह लिखते हैं :

झिझोड़ा फ़ारसीके उस्तख्वाँ को
किया पुर मग्ज़ तब हिन्दी ज़बाँ को
फ़साहत फ़ारसी से जब निकाली
तताफ़त शेर में हिन्दी के ड़ाली।

यों जैसा कि हम आगे देखेंगे, हिन्दी शब्द-का प्रयोग इसके विरुद्ध सामान्य अर्थोंमें लगभग १९वीं सदीके मध्यतक मिलता है।

यह ध्यातव्य है कि यद्यपि 'हिन्दवी' या 'हिन्दी'का प्रयोग मध्यदेशकी जनभाषाके लिए चल रहा था और वह उत्तर भारतसे दक्षिण भारतमें भी जा पहुँचा था, किंतु इसका स्वीकृत नाम भाषाओंमें अकबरके कालतक नहीं मिलता। अमीर खुसरोने अपने ग्रंथ 'नुहसिपर'में उस कालकी प्र-सिद्ध ग्यारह भाषाओंका उल्लेख किया है (सिन्धी, लाहोरी, कश्मीरी, बंगाली, गौड़ी, गुजराती, तिलंगी, मावरी (कोंकणी) ध्रुव समुन्दरी, अवधी, देहलवी), किंतु इनमें 'हिन्दवी' या 'हिन्दी' नहीं है। अबुल फ़ज़लकी 'आईने अकबरी'में दी गयी १२ भाषाओं (देहलवी, बंगाली, मुलतानी, मारवाड़ी, गुजराती, तिलंगा, मरहठी, कर्नाटकी, सिंधी, अफ़गानी, बलूचिस्तानी, कश्मीरी) में भी इनका नाम नहीं आता। हाँ, एक बात अवश्य विचार्य है। खुसरो और अबुलफ़ज़ल दोनों हीने देह- लवी भाषाका उल्लेख किया है। यह 'हिन्दवी' या हिन्दी छोड़कर कोई और भाषा नहीं हो सकती। इसका अर्थ यह हुआ कि खुसरोसे लेकर अबुलफ़ज़लके कालतक इस भाषाका स्वीकृत नाम संभवत: देहलवी था। अन्य नाम केवल साहित्यतक ही सीमित थे।

ऊपर यह संकेत किया जा चुका है कि 'हिन्दी' शब्द मूलतः मुसलमानोंकी हिन्दीके लिए प्रयुक्त होकर फिर हिन्दुओंकी भाषाके की ओर आ रहा था। किंतु १९वीं सदीके मध्यके पूर्वतक उर्दूके लेखकोंमें प्राय: इसका प्रयोग उर्दू या रेख़्ताके समानार्थी रूपमें चल रहा था। हातिम (१८वीं सदी उत्तरार्द्ध), नासिख, सौदा (१७१३-१७८० ई०), मीर (१७१८-१७५८ ई०) आदिने एका-धिक बार अपने शेरोंको हिन्दी शेर कहा है। ग़ालिबने अपने ख़तोंमें 'उर्दू', 'हिन्दी' तथा 'रेख्ता'को कई स्थलोंपर समानार्थी शब्दोंके रूपमें प्रयुक्त किया है। १८०३ ई०में लिखित 'तज़किरः मखज़न अल्ग़ा-रायब'में आता है—'दर ज़बाने हिंदी कि मुराद उर्दू अस्त।' फोर्ट विलियम कॉलिजके हिन्दीके अध्यापक गिलक्राइस्टके लेखोंसे पता चलता है कि वे हिन्दी, हिंदुस्तानी, उर्दू तथा रेख्ता आदिको समानार्थी समझते थे। किंतु उनकी दृष्टिमें इनका परिनिष्ठित रूप अरबी-फारसी मिश्रित था, अर्थात् उनकी हिन्दी आजकी दृष्टिसे उर्दू थी। १८२०ई०में उनकी एक किताब निकली जिसका नाम था—'कवानीन सर्फ़ व नहो हिन्दी'। पुस्तकपर अंग्रेज़ीमें लिखा था—(rules of hindee grammar) पुस्तकके भीतर सर्वत्र ही 'हिन्दी' या 'रेख्ते' शब्दका प्रयोग है, किंतु व्याकरण उर्दूका

है। इसकी भाषा भी अरबी-फ़ारसी शब्दोंसे लदी है, जैसा कि नाम (कवानीन सर्फ़...) से भी स्पष्ट है। इस तरह आरंभमें गिलक्राइस्ट भी 'हिन्दी' शब्दका प्रयोग 'उर्दू'के अर्थमें ही करते हैं। आशय यह है कि १८००के आसपास हिन्दी शब्दका प्रयोग उर्दू तथा रेख़्ताके लिए हो रहा था।

'हिन्दी' शब्दके आधुनिक अर्थमें प्रयुक्त होनेका इतिहास बड़ा विचित्र है। पीछेके नूर मुहम्मद तथा मुरादशाहके उद्धरणोंसे इस बातका कुछ संकेत मिलता है कि कभी-कभी उसका प्रयोग हिन्दुओंकी भाषा या अरबी-फ़ारसीके कठिन शब्दोंसे रहित मध्यदेशीय भाषाके लिए होता था, किंतु ऐसे प्रयोग प्रायः अपवादस्वरूप हैं। प्रायः 'हिन्दी'का प्रयोग उस भाषाके लिए, मिलता है, जो अरबी-फ़ारसीसे भरती जा रही थी या जो वह भाषा थी, जो बादमें विकसित होकर उर्दू कहलायी। जनतामें १९वीं सदीके प्रायः मध्यतक कुछ अपवादोंको छोड़ हिंदीका इस अर्थमें प्रयोग मिलता है।

आधुनिक अर्थमें 'हिन्दी' शब्दके व्यापक प्रयोगका श्रेय मूलतः अंग्रेज़ोंको है। १८०० ई०में कलकत्तेमें फ़ोर्ट विलियम कॉलिजकी स्थापना हुई। वहाँ गिलक्राइस्ट हिन्दी या हिन्दुस्तानीके अध्यापक नियुक्त हुए। यदि गिलक्राइस्टने मध्यदेशकी वास्तविक प्रतिनिधि भाषाको, जो न तो अधिक अरबी-फारसीकी ओर झुकी हुई थी और न संस्कृतकी ओर, अपनाया होता तो आज हिन्दी-उर्दू नामकी दो भाषाएँ न होतीं और हिन्दी भाषा एवं उसके साहित्यका नक्शा कुछ और ही होता। किंतु उनकी हिन्दी [जैसा कि, उनके हिन्दी व्याकरणके नाम (कवानीन सर्फ़ व नहो हिन्दी)] से स्पष्ट है, बहुत ही कठिन उर्दू थी। वे १९०४ तक तो अध्यापक रहे, अतः वही भाषा हिन्दी कही जाती रही। किंतु वहाँके कर्मचारियोंका ध्यान इस बातकी ओर गया कि प्रतिनिधि भाषा वह नहीं थी। इसका परिणाम यह हुआ कि 'हिन्दुस्तानी' शब्द तो अरबी-फ़ारसी शब्दोंसे युक्त गिलक्राइस्टकी हिन्दी (जो वस्तुतः उर्दू थी) के लिए प्रयुक्त होने लगा और हिन्दी शब्द हिन्दुओंमें प्रयुक्त संस्कृत मिश्रित भाषाके लिए। इस अर्थमें 'हिन्दी' शब्दकी परंपरा प्राप्त साहित्यमें कहीं-कहीं ही मिली है। संभव है जनतामें इस अर्थमें उस समय हिन्दी नामका कुछ अधिक प्रचार रहा हो, जहाँसे अंग्रेज़ोंने उसे ले लिया हो। इस नवीन अर्थमें हिन्दीका स्पष्ट रूपसे लिखित प्रयोग कदाचित् सर्वप्रथम कैप्टिन टेलरने किया। १८१२में फोर्ट विलियम कॉलिजके वार्षिक विवरणमें वे कहते हैं—मैं केवल हिन्दुस्तानी या रेख़्ताका जिकर कर रहा हूँ, जो फ़ारसी लिपिमें लिखी जाती है...., मैं हिन्दीका ज़िक्र नहीं कर रहा, जिसकी अपनी लिपि है,... जिसमें अरबी-फारसी शब्दोंका प्रयोग नहीं होता और मुसलमानी आक्रमणसे पहले जो भारतवर्षके समस्त उत्तर-पश्चिम प्रांतकी भाषा थी' (imperial records, vol-IV पृ० २६७-७७)। इस उद्धरणसे यह स्पष्ट है कि उस समयतक हिन्दी शब्द इस अर्थमें कम-से-कम कॉलिजके लोगोंमें[1] कुछ समझा जाने लगा था, किंतु बहुत अधिक नहीं, क्योंकि उसे हिन्दुस्तानी या रेख़्ता अलग स्पष्ट करनेकी आवश्यकता अभी समाप्त नहीं हुई थी, जैसा कि टेलरके कथनसे स्पष्ट है। कॉलिजमें यह हिन्दी-उर्दू (या हिन्दुस्तानी) का यह अलगाव बढ़ता ही गया। १८२४में उक्त कॉलिजके हिन्दी प्रोफ़ेसर विलियम प्राइसने स्पष्ट शब्दोंमें हिन्दीके

(१) शासकके लोगोंमें इसरूपमें प्रयुक्त होनेपर भी हिन्दी शब्द उर्दूके अर्थमें साहित्यिकों तथा जनता आदि में १९वीं सदीके लगभग मध्यतक चलता रहा। कहा जा चुका है कि गासाँ द तासीने अपने पत्रोंमें 'हिन्दी' उर्दू और रेख़्ताको प्रायः समान अर्थोंमें प्रयुक्त किया है।

लगभग सभी शब्दोंके संस्कृत होनेकी बात कही तथा हिन्दुस्तानीके शब्दोंके अरबी-फारसी होनेकी । १८२५में कॉलिजके वार्षिक अधिवेशनके भाषणमें लार्ड ऐमहर्स्ट-ने हिन्दी भाषाको हिन्दुओंसे संबद्ध कहा तथा उर्दूको उनके लिए उतना ही विदेशी कहा, जितनी अंग्रेज़ी । इस प्रकार अंग्रेज़ोंने चाहे जिस नीयतसे भी किया हो, १९वीं सदीके प्रथम २५ वर्षोंमें एक ओर हिन्दवी या हिन्दी-देवनागरी-संस्कृत-हिन्दूको जोड़ दिया और दूसरी ओर हिन्दुस्तानी, रेख्ता या उर्दू–फ़ारसी लिपि–अरबी-फारसी शब्द –मुसलमानोंको । संभवतः शासनके ही इशारेपर १८६२में हिन्दी-उर्दूका प्रश्न शिक्षा-के संयोजकोंके समक्ष आया और इस प्रकार 'हिन्दी' आजकलके अर्थमें निश्चित रूपसे स्वीकृत हो गयी । उर्दू और हिन्दी भाषा-को लेकर उस कालमें कितनी गर्मा-गर्मी थी, इसका चित्र 'सितारे हिन्द' और 'भारतेन्दु' उपाधिकी अंतःकथामें मूर्तिमान है ।

इस प्रकार 'हिन्दी' शब्दके विकासको पाँच कालोंमें बाँटा जा सकता है । पहला काल वह है जब यह शब्द विदेशमें था और 'भारतीय'के अर्थमें एक विशेषण था । दूसरा काल विदेशोंमें ही वह है, जब यह विशेषण या संज्ञाके रूपमें भारतीय भाषाओं-के लिए प्रयुक्त हो रहा था । तीसरा काल वह है, जब भारतमें खुसरोके समयके आस-पास हिन्दवीके प्रयोगमें आनेके बाद मुसल-मानोंकी हिन्दवीके लिए इसका प्रयोग हुआ । चौथे कालमें उत्तर तथा दक्षिण भारत-में यह शब्द हिन्दवीका लगभग समानार्थी होकर मध्यदेशीय भारतीय भाषाके लिए प्रयुक्त हो रहा था । इस कालमें सामान्यतः यह हिन्दवीका समानार्थी तो था, किन्तु विभिन्न प्रयोगोंपर दृष्टि डालनेसे ऐसे संकेत मिलते हैं कि हिन्दवी शब्द हिन्दुओं-की हिन्दीकी ओर तथा हिन्दी मुसलमानों-की हिन्दीकी ओर भी 'कभी-कभी झुके हुए थे । हिन्दू अपनी भाषाके लिए 'भाखा'-के अतिरिक्त कभी-कभी यदि प्रयोग करते थे तो प्रायः 'हिन्दवी'का इसी कालके अंतमें 'हिन्दी' नाम अपनेमें उर्दू, रेख्ता या हिन्दु-स्तानी आदिको भी समाहित किये था । इस कालके पूर्वार्द्धमें इस भाषाको देहलवी" (खुसरो तथा अबुल फ़ज़लमें) भी कहते थे । पाँचवाँ काल १८०० ई०के बादसे आरंभ होकर लगभग ग़दरके कालतक है, जब जनता-में हिन्दी शब्द कुछ अपवादोंको छोड़कर प्रायः पूर्ववर्ती अर्थमें प्रयुक्त हो रहा था, किंतु फोर्ट विलियम कॉलिज़में तथा शासनके मस्तिष्कमें वह हिन्दुओंकी भाषाका नाम था, जिसकी लिपि देवनागरी थी तथा जिसका शब्द-समूह संस्कृतकी ओर झुका था । हिन्दी नाम आज भी इस पाँचवें अर्थ (फ़ोर्ट विलियम कॉलिजवाला)में प्रयुक्त हो रहा है । यहाँ एक यह बात भी संकेत्य है कि उपर्युक्त बातोंसे यह स्पष्ट है कि १८५०के पूर्व हिन्दी शब्दके प्रयोगमें वैज्ञा-निक दो-टूकता नहीं थी । एक ही साथ कई अर्थोंमें इसके प्रयोग चल रहे थे ।

इस समय 'हिन्दी' शब्द प्रमुखतः निम्नां-कित पांच अर्थोंमें प्रयुक्त हो रहा है :—(१) हिन्दी साहित्यके इतिहासमें 'हिन्दी' शब्द-का अर्थ है 'बिहार, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, दिल्ली तथा पंजाब एवं हिमा-चल प्रदेशके कुछ भागोंकी भाषा'। यही हिन्दी प्रदेश है । इस पूरे प्रदेशमें उर्दूको छोड़कर सभी भाषाएँ या बोलियाँ हिन्दीमें समाहित है । इस दृष्टिसे हिन्दी भाषाकी पांच रूप-भाषाएँ तथा १७ उप-बोलियाँ मानी जाती हैं :—(क) **राजस्थानी उपभाषा**— चार बोलियाँ (१) मेवाती-अहीरवाटी, (२) मालवी, (३) जयपुरी-हाड़ौती, (४) मारवाड़ी-मेवाड़ी । (ख) **पश्चिमी हिन्दी उपभाषा**—पांच बोलियाँ (१) हरि-यानी या बांगरू, (२) खड़ी बोली, (३) ब्रज, (४) कनौजी, (५) बुंदेली । (ग) **पहाड़ी**—दो बोली वर्ग (१) पश्चिमी पहाड़ी, (२) माध्यमिक पहाड़ी । (घ)

पूर्वी हिन्दी—तीन बोलियाँ (१) अवधी, (२) बघेली, (३) छत्तीसगढ़ी। (ङ) बिहारी—तीन बोलियाँ (१) भोजपुरी (२) मगही, (३) मैथिली। हिन्दी साहित्यके इतिहासमें इन सभी बोलियोंमें प्राप्त साहित्य (जैसे डिंगल, ब्रज, खड़ीबोली, अवधी, मैथिली आदि) समाहित मिलता है। हिन्दीका यह सर्वप्रचलित अर्थ है। इसी अर्थमें हिन्दी प्रदेश या हिन्दीके विश्वमें बोलनेवालोंकी संख्याकी दृष्टिसे तीसरी भाषा (प्रथम चीनी, दूसरी अंग्रेज़ी) होनेकी बात की जाती है। सांस्कृतिक तथा व्यावहारिक दृष्टिसे यह हिन्दीका व्यापकतम रूप या अर्थ है। (२) १९४७, अर्थात् स्वतंत्रताके पूर्व हिन्दीकी पहाड़ी उपभाषामें पश्चिमी तथा माध्यमिक पहाड़ीके अतिरिक्त पूर्वी पहाड़ी (या नैपाली)को भी स्थान दिया जाता था। इस दृष्टिसे हिन्दीके अंतर्गत १८ बोलियाँ मानी जाती थीं। अब नैपाली भारतसे अलग एक स्वतंत्र देशकी राष्ट्र और राज्य-भाषा है, अतः उसे हिन्दीके अंतर्गत सम्मिलित करनेका प्रश्न नहीं उठता। यों नैपाली हिन्दीसे पर्याप्त निकट है, दोनों भाषाओंको जाननेवाले इस बातसे भली-भांति परिचित हैं। नैपालीमें हिन्दी-भाषी पर्याप्त संख्यामें हैं तथा वहाँके अधिकांश लोग हिन्दी समझते हैं। इसीलिए कुछ दिनतक यह भी सुना जा रहा था कि नैपाल भी अपनी राज्यभाषा हिन्दीको ही बनायेगा, किंतु ऐसा हुआ नहीं। नैपालमें हिन्दी माध्यमसे शिक्षाकी भी व्यवस्था रही है तथा वहाँके कुछ पत्र भी हिन्दीमें निकलते रहे हैं। (३) कुछ लोग पंजाबीको भी हिन्दीको एक उपभाषा या बोली मानते हैं। यह मत नया नहीं है। खुसरोके समयके आसपास आरंभमें हिन्दी शब्दका प्रयोग जिस भाषाके लिए हुआ, उसमें कदाचित् पंजाबी भी समाहित थी। १८१२ ई०में टेलरने फोर्ट विलियम कॉलिजके वार्षिक विवरणमें हिन्दीका जो अर्थ बतलाया था, उसमें भी ऐसा लगता है कि कम-से-कम पूर्वी पंजाबी सम्मिलित थी। १८५३में बंबईके चीफ जस्टिस सर एरस्किन पेरीने रायल एशियाटिक सोसायटीके जर्नलके जनवरीके अंकमें भारतीय भाषाओंके विभाजनपर एक लेख प्रकाशित किया। इसमें उन्होंने सिंधी, पंजाबी तथा मुल्तानी (लहँदा)को हिन्दीकी बोलियोंके रूपमें स्वीकार किया था। इन्होंने मैथिलीको हिन्दीकी बोली न मानकर बंगलाकी बोली माना था। कहना न होगा, भाषावैज्ञानिककी दृष्टिसे पंजाबी पश्चिमी हिन्दीकी हरियानी आदिसे निश्चय ही बहुत निकट है, किंतु इस प्रकारके मतोंके लिए अब कोई स्थान नहीं है। (४) ग्रियर्सनने अपने भाषा-सर्वेक्षणमें पश्चिमी और पूर्वी हिन्दीको ही वस्तुतः हिन्दी माना है। इसी कारण उन्होंने केवल इन्हीं दोनोंके साथ हिन्दी शब्द रखा है। अन्यको पहाड़ी, राजस्थानी, बिहारी आदि अन्य नामोंसे अभिहित किया है। इस प्रकार उनके अनुसार भाषा-वैज्ञानिक दृष्टिसे हिन्दीके अंतर्गत केवल काठ बोलियाँ हैं। पांच पश्चिमी हिन्दीकी, और तीन पूर्वी हिन्दीकी। (५) एक भाषाशास्त्रीय मत यह भी है कि केवल पश्चिमी हिन्दी ही हिन्दीके अंतर्गत है, अर्थात् हिन्दी, केवल पश्चिमी हिन्दीके अंतर्गत आनेवाली पांच बोलियोंके समूहका नाम है। ग्रियर्सनने भी कभी इस मतको १९३०के लगभग व्यक्त किया था, किंतु बादमें उन्होंने अपना यह मत वापिस ले लिया। डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जीने भी यह मत व्यक्त किया है, विशेषतः १९५२ के बाद, जबसे वे हिन्दी के राज्य या राष्ट्रभाषा होनेके विरोधी हो गये हैं। हिन्दी (जिसे वे proper hindi कहते हैं)की वे दो शाखाएँ मानते हैं :—(क) आजकी परिनिष्ठित हिन्दी, जिसकी हरियानी, जाटू तथा खड़ी बोलियाँ हैं। (ख) ब्रजभाषा, बुंदेली तथा कनौजी, इन तीन बोलियोंका समूह (दे०—the

languages of india, madras, प्रथम संस्करण)। अन्य दृष्टियोंकी तो बात ही और है, भाषा वैज्ञानिक दृष्टिसे भी इस मतको ठीक नहीं कहा जा सकता। हिंदीके अंतर्गत १७ या १८ बोलियाँ शास्त्रीय या वैज्ञानिक दृष्टिसे भले न मानी जायें, किंतु आठ तो (पश्चिमी + पूर्वी) हैं ही। इसपर प्रश्नवाचक चिह्न नहीं लगाया जा सकता। (६) आज जब हम कहते हैं कि शिक्षाका माध्यम हिन्दी हो, या हिन्दी भारतकी राज्य या राष्ट्रभाषा हैं, तो हमारा आशय न तो १८ या १७ बोलियोंसे होता है और न ८ बोलियोंसे। हमारा आशय होता है, आजकी परिनिष्ठित हिन्दीसे, जो प्रमुखतः खड़ीबोलीपर आधारित है। यह हिन्दीका अविस्तृततम अर्थ है।

उपर्युक्त मतोंमें अधिक प्रचलित तथा मान्य मत तीन ही हैं। व्यावहारिक तथा सामान्य दृष्टिसे हिन्दी १७ बोलियोंके समूहका नाम है। हिन्दी साहित्यमें यही अर्थ लिया जाता है। दूसरा मत भाषा-वैज्ञानिक है, जिसके अनुसार पश्चिमी और पूर्वी हिन्दीकी आठ बोलियाँ हैं। तीसरा मत आधुनिक राज्यभाषा, शिक्षा, समाचार पत्र आदिसे है और जिसमें परिनिष्ठित हिन्दी ही हिन्दी है। अपने-अपने स्थानपर ये तीनों ही मत ठीक हैं।

इन्हीं तीनोंके आधारपर **हिन्दी-क्षेत्र** या **हिन्दी प्रदेश**का भी निर्धारण हो सकता है। प्रथमके अनुसार हिन्दी प्रदेश बिहार, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, दिल्ली, पंजाब एवं हिमाचल प्रदेशका कुछ भाग है। भारतीय संविधानमें प्रथम पाँच ही हिन्दी प्रदेश कहे गये हैं। भाषा वैज्ञानिक, अर्थात् दूसरे मतके अनुसार संबद्ध ८ बोलियों-का क्षेत्र ही हिन्दी प्रदेश है। तीसरे मतके अनुसार बोलीकी दृष्टिसे, खड़ीबोली-क्षेत्र हिन्दी प्रदेश है, किंतु भाषा (जो राष्ट्र या राज्य भाषा है)की दृष्टिसे एक प्रकारसे पूरा देश हिन्दी प्रदेश है।

हिन्दी भाषाके अंतर्गत कौन-कौनसी बोलियाँ सामान्यतः मानी जाती हैं, इनका उल्लेख ऊपर हो चुका है। उनकी संख्या १७ है। किंतु आज वैज्ञानिक एवं व्यावहारिक दृष्टिसे ऐसा मानना बहुत समीचीन नहीं ज्ञात होता। इसके विरुद्ध दो बातें कही जा सकती हैं:—(१) जो-जो-बोलियाँ अलग अलग कही गयी हैं, उनमें सभी बोली कहलानेकी अधिकारिणी नहीं हैं। कुछ तो मात्र स्थानीय रूप हैं। (२) कुछ जैसे मैथिली, भोजपुरी, अवधी, ब्रज आदि बोली न कही जाकर भाषा कहलानेकी अधिकारिणी हैं। ग्रियर्सनके नाम (बिहारी, पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी आदि) काल्पनिक थे। उनको छोड़कर आजकी वस्तुस्थितिके संदर्भमें यह कहा जा सकता है कि हिन्दी प्रदेशकी प्रमुख भाषा आजकी **परिनिष्ठित हिन्दी** है। शेष भाषाएँ इस प्रदेशकी गौण भाषाएँ, अप्रमुख भाषाएँ या उप-भाषाएँ हैं, जिन्हें भूगोल तथा भाषाओंके आधारपर इस प्रकार विभाजित किया जा सकता है:

हिन्दी प्रदेशकी उप-भाषाओंके वर्ग :—

(१) **मागधी वर्ग**—मैथिली, मगही, भोजपुरी।

(२) **अर्द्धमागधी वर्ग**—अवधी, छत्तीसगढ़ी ('बघेली' स्वतंत्र न मानी जाकर अवधीकी एक बोली मानी जानी चाहिये)।

(३) **उत्तरी शौरसेनी वर्ग**—गढ़वाली, कुमायूंनी, शिमला वर्ग (इन बोलियोंके आधारमें तथाकथित खस अपभ्रंशकी कुछ बातें मिल सकती हैं, किंतु वस्तुतः इनकी अधिकांश बातें शौरसेनीकी ज्ञात होती हैं। इसीलिए इन्हें भी शौरसेनी माना गया है)।

(४) **माध्यमिक शौरसेनी वर्ग**—खड़ी बोली ('हरियानी' इसीकी एक बोली), ब्रज (कनौजी इसीकी एक बोली), बुंदेली, नीमाड़ी (इसे लोगोंने राजस्थानीके साथ रखा है, किंतु वस्तुतः यह पश्चिमी हिन्दीके निकट है)।

(५) **पश्चिमी शौरसेनी वर्ग**—मारवाड़ी (इसकी प्रमुख बोलियाँ ढटकी, थली, बीका-

नेरी, बागड़ी, शेखावाटी, मेवाड़ी, खैराड़ी, सिरोही, राठी, साँठ, गोड़वाड़ी, देवड़ावाटी आदि हैं), मेवाती—अहीरवाटी, ढूंढाड़ी (इसमें हाड़ौती, जैपुरी, काठैड़ा, राजावाटी, अजमेरी, किशनगढ़ी, चौरासी, नागरचाल आदि बोलियाँ हैं), मालवी (इसमें सोंधवाड़ी, रांगड़ी, होशंगाबादी आदि बोलियाँ आती हैं) तथा भीली।

इस प्रकार हिन्दी प्रदेश भाषाकी दृष्टिसे ५ क्षेत्रोंमें विभक्त है और हिन्दीके अंतर्गत कुल १६ उप-भाषाएँ हैं। उर्दूको यहाँ अलग स्थान नहीं दिया गया है। वह अरबी-फारसीके बहुल शब्द प्रयोगोंपर आधारित हिन्दीकी एक शैली मात्र है।

हिन्दी भाषा तथा उसकी उप-भाषाएँ अपभ्रंशके विभिन्न रूपोंसे प्रसूत हैं। (दे०) अपभ्रंश। जैसा कि ऊपरके वर्गीकरणसे स्पष्ट है हिन्दीका संबंध शौरसेनी, अर्द्धमागधी तथा मागधी अपभ्रंशसे है। शौरसेनीके पश्चिमी रूपसे भीली, मालवी, ढूंढाड़ी, मेवाती, मारवाड़ी आदि हैं, मध्यवर्ती रूपसे खड़ीबोली, ब्रज, बुंदेली तथा नीमाड़ी हैं, और उत्तरी रूपसे गढ़वाली-कुमायूँनी तथा शिमला वर्गकी बोलियाँ। अर्द्धमागधीसे अवधी, छत्तीसगढ़ी और मागधीसे मैथिली, मगही, भोजपुरी।

हिन्दी भाषाका काल लगभग १००० ई०से प्रारंभ होता है। इसके इतिहासको भाषाकी दृष्टिसे ३ कालोंमें विभाजित किया जा सकता है। (क) **आदिकाल** (१०००-१५०० ई०)—यह हिन्दीका शैशवकाल है। इस कालकी हिन्दीमें अपभ्रंशके काफ़ी रूप मिलते हैं। साथ ही हिन्दीकी विभिन्न उप-भाषाओं एवं बोलियोंके रूप इस कालमें बहुत स्पष्ट तथा सुविकसित नहीं हैं। इसी कारण प्रायः साहित्यमें भाषाओंका मिश्रण जैसा मिलता है। अपभ्रंशसे हिन्दीने लगभग सभी ध्वनियाँ लीं, किंतु उसमें कुछ नयी ध्वनियोंका भी विकास हुआ। अपभ्रंशमें संयुक्त स्वर नहीं थे। हिन्दीमें ऐ और औ दो संयुक्त स्वर इस कालमें प्रयुक्त होने लगे। व्यंजनोंमें एक तो दंत्योष्ठ्य 'व' नया विकसित हो गया तथा दो उत्क्षिप्त ध्वनियाँ—ड़, ढ़—भी प्रयुक्त होने लगीं। कुछ ध्वनियोंके महाप्राण रूप भी विकसित हो गये,—न्ह, न्ह, म्ह, ल्ह आदि। शब्द समूहकी दृष्टिसे आदिकालीन हिन्दी अपभ्रंशसे बहुत भिन्न नहीं थी। इसमें तद्भव शब्द सर्वाधिक थे। तत्सम शब्द उससे कम तथा देशज उससे भी कम। अपभ्रंश तथा आदिकालीन हिन्दीके शब्द-भांडारमें विदेशी शब्दोंकी दृष्टिसे अवश्य अंतर मिलता है। अपभ्रंशमें अरबी-फ़ारसी-तुर्की शब्दोंकी संख्या सौ-से अधिक न होगी, किंतु हिन्दीके इस कालमें मुसलमानोंके बस जाने, एवं उनके शासनके कारण इन तीनों ही भाषाओंसे पर्याप्त शब्द आ गये। विदेशी शब्द प्रायः पहले उच्च वर्गमें आते हैं, फिर मध्यम वर्गमें और तब निम्न वर्गमें। इस कालमें साहित्यमें प्रमुखतः डिंगल, मैथिली, दक्खिनी तथा मिश्रित रूपोंका प्रयोग मिलता है। इस कालके प्रमुख हिन्दी साहित्यकार गोरखनाथ, विद्यापति, नरपति नाल्ह, चंद वरदायी, कबीर, ख्वाजा बंदे नेवाज, शाहमीराजी आदि हैं। 'हिन्दी'का प्रथम कवि कौन है, इस संबंधमें विवाद है। जहाँतक मुसलमानोंका संबंध है हिन्दवी या 'हिन्दी'के प्रथम कवि ख्वाजा मसऊद साद सलमान (र० का०, १०६६ ई०) हैं। इनके हिन्दवी-संग्रहकी चर्चा अमीर खुसरोने की है। इसकी भाषा प्राचीन पंजाबी मिश्रित हिन्दवी थी। (ख) **मध्यकाल** (१५००-१८००)—इस कालतक आते-आते हिन्दीका स्पष्ट स्वरूप निखर आया। उसकी प्रमुख बोलियाँ भी विकसित हो गयीं। अपभ्रंशके रूप समाप्त-प्राय हो गये और प्रायः हिन्दीके अपने रूप प्रयुक्त होने लगे। ध्वनियोंकी दृष्टिसे इस कालकी प्रमुख विशेषता यह है कि पढ़े लिखे लोगोंकी हिन्दीमें क़, ख़, ग़, ज़, फ़—ये पाँच व्यंजन ध्वनियाँ सम्मिलित हो गयीं। अरबी-

फ़ारसी शब्द तो आदिकालमें भी आये थे, किंतु इसी कालमें आकर वे पूर्णतः हमारे हुए। दरबारी भाषा फ़ारसी थी, अतः उच्च वर्गके लोग फ़ारसी पढ़ने लगे और अपनी भाषामें प्रयुक्त शब्दोंका प्रायः शुद्ध फ़ारसी जैसा उच्चारण करने लगे। इस शुद्ध उच्चारणके कारण ही उपर्युक्त पाँच व्यंजन ध्वनियाँ हिन्दीमें आयीं। शब्दोंकी दृष्टिसे कई उल्लेख्य बातें घटित हुईं। उस कालमें धर्मके प्रति लोग अधिक आस्थावान् हो गये, इसी कारण प्रमुख हिन्दी साहित्य, कम-से-कम इस युगके पूर्वार्द्धतक, धर्मपर लिखा गया। धर्मके कारण संस्कृतके धार्मिक ग्रंथोंका प्रचार हुआ। परिणाम यह हुआ कि आदिकालकी तुलनामें बहुत अधिक तत्सम शब्द भाषा, प्रमुखतः साहित्यिक भाषामें गृहीत हुए। आदिकालकी तुलनामें तद्भव और देशज शब्दोंका प्रयोग कुछ कम हुआ। उनका स्थान प्रायः तत्सम शब्दोंने ले लिया। अरबी-फ़ारसी-तुर्की शब्द इस कालमें और अधिक आ गये। हिन्दीमें इस समय, जो लगभग ३,५०० फ़ारसी, २,५०० अरबी तथा सौ-से कुछ कम तुर्की शब्द प्रयुक्त हो रहे हैं, ये प्रायः सभीउस कालतक अपनी भाषामें आ चुके थे और धीरे-धीरे उच्चसे मध्यम और मध्यमसे निम्न-वर्गमें प्रवेश कर रहे थे। इस कालके उत्तरार्धमें यूरोपसे भी हमारा पर्याप्त संपर्क हो गया अतः १०० से कुछ कम पुर्तगाली, कुछ फ्रांसीसी एवं डच तथा कई सौ अंग्रेज़ी शब्द भी हिन्दीमें प्रविष्ट हो गये। धर्मकी प्रधानताके कारण राम-स्थानकी भाषा अवधी तथा कृष्ण-स्थानकी भाषा ब्रजमें ही विशेष साहित्य रचा गया। यों दक्खिनी, उर्दू, डिंगल, मैथिली और खड़ी बोलीमें भी साहित्य रचना हुई। इस कालके प्रमुख साहित्यकार जायसी, सूर, मीरा, तुलसी, केशव, बिहारी, देव, बुरहानुद्दीन, नुसरती, कुली कुतुबशाह, वजही, वली, मीर, इंशा, अनीस, दबीर, नासिख नासिक स्वामी प्राणनाथ आदि हैं। (ग) आधुनिक काल (१८००—अबतक) इस कालमें आकर हिन्दी भाषा पूर्ण विकसित हो गयी है। हिन्दीकी प्रमुख बोलियाँ इतनी विकसित हो गयी हैं कि वे अब बोली न रहकर उप-भाषाएँ हो गयी हैं और भाषा होनेके पथपर हैं। इस कालमें अंग्रेजीसे पर्याप्त शब्द आ गये हैं। सामान्य भाषामें भी उनकी संख्या तीन हज़ारके आसपास है। शिक्षाके प्रचार-प्रसारके कारण इधर संस्कृत शब्द बहुत अधिक आये हैं और बहुतसे पुराने तद्भव एवं देशज शब्द अप्रचलित हो गये हैं। भारत-की सगोत्रीय तथा अगोत्रीय दोनों ही वर्गकी भाषाओंसे हिन्दीने शब्द ग्रहण किये हैं और करती जा रही है। नये पारिभाषिक शब्दोंके निर्माणका कार्य भी चल रहा है और बातचीत साहित्य तथा पत्र-व्यवहारकी भाषा हिन्दी, अब विज्ञान आदि हर क्षेत्रके लिए एक सक्षम भाषा बनती जा रही है। साहित्यके क्षेत्रमें प्रमुखतः केवल खड़ी बोली-का प्रयोग चल रहा है। राजनीति-प्रधान युग होनेके कारण दिल्लीके पास ही भाषाको प्रमुखता मिलना स्वाभाविक ही है। परि-निष्ठित हिन्दीमें एक नयी ध्वनि आ गयी है—ऑ। इसका प्रयोग ऑफिस, कॉलिज आदि अंग्रेज़ी शब्दोंमें हो रहा है। जिस प्रकार फ़ारसीके शुद्ध उच्चारणके प्रयासमें मध्य युगमें हिन्दीने कई नये व्यंजन ग्रहण किये उसी प्रकार आधुनिक युगमें यह नया स्वर ग्रहण किया है। ध्वनिकी दृष्टिसे कुछ विकास भी दृष्टिगत हो रहा है। आदि कालमें हिन्दीने दो संयुक्त स्वर (ऐ, औ) को अपनाया था, अब ये ध्वनियाँ धीरे-धीरे संयुक्त स्वरके स्थानपर मूल स्वर होती जा रही हैं। ऐसा लगता है कि आगे चलकर ए-ऐ, ओ-औ में केवल संवृत-विवृतका भेद रह जायगा मूल-संयुक्तका नहीं। हिन्दीके आधुनिक साहित्यकारोंमें भारतेन्दु, महावीरप्रसाद, प्रसाद शुक्ल, निराला, पंत, ग़ालिब, मोमिन, जौक, दाग़, हाली, इकबाल,

जिगर, जोश, फ़िराक आदि प्रमुख हैं ।

उर्दू हिन्दीकी एक शैली विशेष है । वस्तुतः हिन्दीकी इस समय प्रमुखतः तीन बोलियाँ चल रही हैं एक उर्दू, एक संस्कृतनिष्ठ हिन्दी, तथा एक बीचकी । आवश्यकता इस बातकी है कि बिना किसी पूर्वाग्रहके हिन्दी-उर्दूवाले, इस स्थितिको समझें और स्वीकार करें । हिन्दी साहित्यके इतिहासमें उर्दू साहित्यका या उर्दू साहित्यके इतिहासमें हिन्दी साहित्यका समन्वय किया जाना चाहिये ।(दे०) **हिन्दवी, उर्दू, हिन्दुस्तानी** (हिन्दीकी विभिन्न उप-भाषाओं, बोलियों आदिके लिए कोशमें' यथास्थान देखिये),

हिंदुरी (hinduri)––**हंडूरी** (दे०) का एक विकृत नाम ।

हिन्दुस्तानी––'हिंदुस्तानी' नामकी व्युत्पत्ति स्पष्ट है । 'हिन्दु' (दे० हिन्दी) × फ़ारसी 'स्तान' (सं० स्थान) × ई (– की, वाली, संबद्ध) । किंतु, यह प्रश्न विवादास्पद है कि इसका प्रयोग कब हुआ । कुछ लोगोंका विचार है कि यह नाम यूरोपवालों, विशेषतः अंग्रेज़ोंका दिया है, किंतु वस्तुतः यह नाम और भी पुराना है और 'हिन्दी'की तरह ही इसका भी संबंध मुसलमानोंसे है । मुझे लगता है कि बाबरके पहलेसे यह नाम आ रहा है । आगे चलकर फ़रिश्ता (१७वीं सदी), टेरी (१६१६), वजही (१६३५), अमादुज्ज़ी (१७०४) तथा कैटलियर (१७१५) आदि अनेक लेखकोंने इस नामका प्रयोग किया । 'हिंदुस्तानी' नाम आजकी तरह, पहले भी विशेषण (हिंदुस्तानका) एवं संज्ञा (निवासी, भाषा) दोनों अर्थोंमें प्रयुक्त होता था । यों, अपने मूलमें यह शब्द विशेषण है । भाषाके अर्थमें हिंदुस्तानी'–का प्राचीन प्रयोग 'हिंदी'के अर्थमें हुआ है । बादमें १८वीं सदीके अंतमें यह मुसलमानों (केवल दक्षिणके या उत्तर-दक्षिण दोनोंके)-की भाषाके अर्थमें प्रयुक्त होने लगा । इस रूपमें यह 'उर्दू'का पर्याय बन गया । १९वीं सदीमें यह बात स्पष्टतः दिखायी पड़ती है । गार्सां द तासीके इतिहासमें भी इसका यही अर्थ है । २०वीं सदीके तीसरे दशकमें हिंदी-मुस्लिम संघर्षके परिणामस्वरूप, उर्दू-हिंदीके विवादसे बचनेके लिए 'हिन्दुस्तानी'-को एक नये अर्थसे गर्भित किया गया । इसमें प्रमुख हाथ गाँधीजीका था । इस प्रकार हिंदुस्तानी हिंदी-उर्दूके बीचकी भाषा बन गयी, जिसमें दोनों भाषाओंकी सामान्य शब्दावली थी और कठिन अरबी, फ़ारसी, संस्कृत शब्दोंके लिए जिसमें कोई स्थान नहीं था । समय-समयपर 'हिंदुस्तानी' नामका प्रयोग 'दक्खिनी' या 'कौरवी'के लिए भी हुआ है । आज सरल कथा साहित्यकी हिंदी या उर्दू, वस्तुतः हिंदुस्तानीके बहुत निकट है ।

हिऊ (hiu)––**हिओड** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम ।

हिओउ (hiou)––**शो** (दे०) का एक नाम ।

हिट्टाइट लिपि––(दे०) **हित्ती लिपि** ।

हिट्टाइट हीरोग्लाइफ़िक लिपि––**हित्ती लिपि** (दे०)का एक अन्य नाम ।

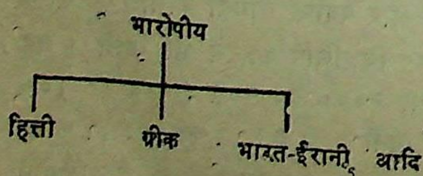
हिडट्स (hidatsa)––**हिडट्स वर्ग** (दे०)–की एक प्रमुख अमेरिकी उत्तरी भाषा ।

हिडट्स वर्ग (hidatsa group)––उत्तरी अमेरिकाके **सिऔक्स** (दे०) भाषा-परिवार-का एक वर्ग । इस वर्गमें दो प्रमुख भाषाएँ **हिडट्स** तथा **क्रोव** (दे०) हैं ।

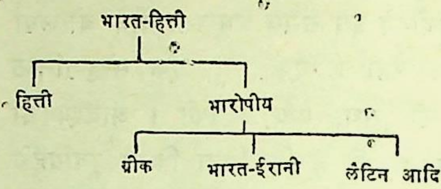
हित्ताइत––**हित्ती** (दे०) भाषाका एक नाम ।

हित्ती (या **हित्ताइत**–hittite)–एक प्राचीन भाषा । ह्यूगो विंकलरको एशिया माइनरके 'बोगाज़कोई' नामक स्थानकी खुदाईमें कुछ कीलाक्षर लेख १८९३ई०में मिले, जिनसे 'हित्ती' भाषाका पता चला । इसे **हिट्टाइट, खत्ती, कप्पदोसी, हत्ती, कनेसिअन, नेसीय, नेसियन** तथा **नासिली** आदि भी कहते हैं । १९०५से १९०७तक यह खुदाई और भी हुई और पर्याप्त सामग्री कीलाक्षरके अतिरिक्त चित्रलिपि आदिमें भी मिली । यह भाषा २०००ई० पू०से १५०० ई० पू०–की मानी जाती है । इसे कुछ लोगोंने काके-शिअनसे जोड़नेका प्रयास किया, कुछ लोगोंने

लीसियनसे और कुछ लोगोंने लीडियनसे। इस भाषापर समीपवर्ती होनेके कारण सामी परिवारका बहुत अधिक प्रभाव पड़ा है, इसीलिए सईस तथा कुछ अन्य लोगोंने यह भी विचार प्रकट किया था कि यह सामी परिवारकी भाषा है। कुछ विद्वानोंका यह भी कहना था कि इस भाषामें भारोपीय या सामी परिवारके शब्द तो गृहीत (उधार) मात्र हैं। यथार्थतः इसका सम्बन्ध किसी भी परिवारसे नहीं है। इसीलिए बहुत दिनोंतक इसे अनिश्चित परिवारकी भाषा भी कहा जाता रहा। १९१७में ज़ेक विद्वान् बी० ह्राज्नी (hrozny) ने विस्तृत अध्ययनके बाद अपनी पुस्तक 'die sprache der hethiter' में इसे निश्चित रूपसे भारोपीय परिवारकी सिद्ध किया। इसके बाद मेरिग्गी, स्टुर्टवेण्ट, कूव्रर तथा पीडर्सन आदि लगभग एक दर्जन विद्वानोंने इस भाषाके अध्ययनको अपनी पूर्णतापर पहुँचाया है। अब हित्ती भाषाको निश्चित रूपसे भारोपीयसे सम्बद्ध माना जाता है, और सामी प्रभावके कारण उससे भी कुछ साम्य रखनेवाली माना जाता है। किन्तु हित्तीके विवादकी समाप्ति केवल इसके परिवार-निर्धारणसे ही नहीं हो गयी। आरम्भमें लोगोंने संस्कृत, ग्रीक, लैटिनकी भांति इसे भारोपीय परिवारकी पुत्री माना और भारोपीयके दो वर्ग केन्तुम् और शतम्में इसे 'केन्तुम्'के अन्तर्गत स्थान दिया, किन्तु अब स्टुर्टवेंटकी यह मान्यता है कि इसकी ओर संकेत करनेका प्रथम श्रेय एमिल फ़ॉररको है। प्रायः सर्वमान्य-सी बात हो चली है कि 'हित्ती', भारोपीयकी पुत्री न होकर उसकी बहन थी। 'हित्ती'के **पुत्री** माने जानेपर स्थिति इस प्रकारकी थी—



अब हित्तीके **बहन** माने जानेपर स्थिति इसतरहकी हो गयी—



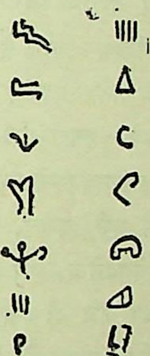
ऐसी स्थितिमें, जबतक इसे पुत्री माना जाता था, परिवारका नाम 'भारोपीय परिवार' हो सकता था, किन्तु जब 'हित्ती' भारोपीयकी बहिन मान ली गयी तो परिवारका नाम स्वभावतः 'हित्ती'को भी प्रत्यक्षतः समाहित करनेवाला होना चाहिये, इसीलिए अब यह परिवार भारोपीयके स्थानपर भारत-हित्ती (indo-hittite) कहा जाता है। हित्तीकी वास्तविक स्थितिकी दृष्टिसे मैंने इस परिवारके एक अन्य नामका सुझाव दिया है। (दे०) **भारोपीय एनाटोलियन परिवार**।

हित्तीसे भारोपीय भाषाओंकी एकता सिद्ध करनेवाली कुछ प्रमुख बातें या समानताएँ यहाँ द्रष्टव्य हैं:—(१) बहुतसे वैदिक देवताओंके नाम हित्तीमें थोड़े परिवर्तनके साथ वर्तमान है। हित्ती शुरियश, संस्कृत सूर्यः; हि० मरुत्तश, सं० मरुतः; हि० ईन्दर, सं० इन्द्रः; हि० उरुवन, सं० वरुणः। (२) सर्वनामोंमें भी साम्य है। 'मैं'के लिए हि० उग्स, लैटिन ego, जर्मन ich; 'वह'के लिए हि० तत्; सं० तत्; 'कौन'-के लिए हि० कुइस्, लैटिन क्विस, सं० कः; 'क्या'के लिए हि० कुइद्, लैटिन क्विड, वैदिक कद्; (३) कुछ क्रिया रूप भी समान हैं। हि० एकुज़ि, लैटिन aqua; हि० इइआमि, सं० यामि; हि० इइअसि, सं० यासि; हि० नेयन्त्सि, सं० नयन्ति। (४) संज्ञा शब्दोंमें भी समानता है। हि० वेदर, अंग्रेजी water, सं० उद; हि० केमन्ज, सं० हेमंत, ग्रीक cheima; हि० लमन्, सं० नामन्, लैटिन nomen। (५) सुबन्त, तिङन्तकी विभक्तियोंमें भी समानताएँ हैं।

हित्ती भाषाकी प्रमुख विशेषताएँ ये हैं: (क) हित्ती, ध्वनिकी तथा अन्य बहुत-सी दृष्टियों-से लैटिनके समीप है, इसी कारण इसे 'केंतुम' वर्गकी भाषा माना जाता रहा है। (ख) इसके ध्वनि-समूहकी सबसे बड़ी विशेषता है एक (कुछ लोगोंके अनुसार दो) प्रकारकी ह ध्वनि, जो अन्य भारोपीय भाषाओंमें नहीं मिलती। म्, न् का वितरण भी इसका अपना है जो अन्य भारोपीय भाषाओंसे भिन्न है। (ग) इसमें कारक केवल छः हैं, अन्य भाषाओंकी तरह सात नहीं। (घ) हित्तीमें केवल दो लिंग हैं—पुलिंग और नपुंसक लिंग। यह इसकी सबसे बड़ी विशेषता है कि इसमें स्त्रीलिंग नहीं है। (ङ) वचन तीन थे, किन्तु द्विवचनका प्रयोग कम होता था, सभी शब्दोंके स्पष्ट बहुवचन नहीं हैं। (च) काल केवल दो थे—वर्तमान और भूत (preterite) (मूल क्रिया द्वारा)। अन्य सहायक क्रिया द्वारा बनते थे। (छ) क्रियार्थ भेद (mood) दो थे—निश्चयार्थ और आज्ञार्थ। (ज) क्रिया और संज्ञा दोनोंमें द्विरुक्ति (reduplication)-का प्रयोग पर्याप्त होता था। आॅक्आकस (मेंढक), काल-काल्टुरे (एक बाजा), काट्ट-काट एनु (नहाना) तथा लाह-लाह इनु (लड़ाना) आदि। (झ) अन्य ज्ञात प्राचीन भारोपीय भाषाओंकी तुलनामें यह कुछ दृष्टियोंसे अधिक विकसित थी, इसी कारण इसमें योगातमकताके साथ अयोगात्मकता (निपात तथा सहायक क्रियाके प्रयोग) के लक्षण भी मिलते हैं।

साहित्यके नामपर हित्ती भाषामें केवल एक अश्वविद्या संबंधी पुस्तक है। (दे०) भारत-हित्ती परिवार तथा भारोपीय परिवार।

हित्ती-लिपि—इसे **हिट्टाइट लिपि** या **हिट्टाइट हीरोग्लाइफिक लिपि** भी कहते हैं। इसका प्रयोग १५०० ई० पू०से ६०० ई० पू०तक मिलता है। यह लिपि मूलतः चित्रात्मक थी, पर बादमें कुछ अंशोंमें भावात्मक तथा कुछ अंशोंमें ध्वन्यात्मक हो गयी थी। इसमें कुल ४१९ चिह्न मिलते हैं। इसे कभी दायेंसे बायें और कभी इससे उलटा लिखते थे। इसकी उत्पत्ति कुछ लोग मिस्री हीरोग्लाइफिकसे तथा कुछ लोग क्रीटकी चित्रात्मक लिपिसे मानते हैं। डॉ० डिरिंजरने इन मतोंका विरोध करते हुए इसे वहींकी उत्पत्ति माना है। उनके अनुसार केवल यह संभव है कि इसके आविष्कारकोंने इसके आविष्कारकी प्रेरणा मिस्रसे ली हो। तत्त्वतः इसकी उत्पत्तिके बारेमें सनिश्चय कुछ भी कहना कठिन है।



हित्ती हीरोग्लाइफ़िक लिपि—**हित्ती** (दे०) भाषाके लेखनमें प्रयुक्त **हीरोग्लाइफ़िक लिपि** (दे०)। इसका प्रयोग १५०० ई० पू०-के बाद, कुछ दिनोंतक मिलता है। इसकी उत्पत्तिके संबंधमें मतभेद है। कुछ लोग इसका संबंध **मिस्री हीरोग्लाइफ़िकसे** तथा कुछ क्रीटकी चित्रलिपिसे मानते हैं।

हिब्रू—उत्तरी पश्चिमी (दे०) **कैनानाइट** सामी भाषा। यह हिब्रू लोगोंकी भाषा है। इनका मूल क्षेत्र इसराइलके आसपास था। लगभग ओल्ड टेस्टामेंट (बाइबिलकी पुरानी पोथी) इसी भाषामें लिखी गयी है। हिब्रूका प्राचीनतम रूप १२वीं सदी ई० पू०में लिखित 'देबोराके गीत' (बाइबिलका एक अंश) रूपमें उपलब्ध है। बाइबिलकी हिब्रू **बिबलिकल हिब्रू** कहलाती है। यह भाषा आर्मेइक और फ़ोनीशियनसे बहुत निकट है। छठी सदीके बादसे हिब्रूका प्रयोग मात्र धार्मिक कार्योंतक सीमित हो गया और

बोलचालमें आर्मीयन प्रभावके कारण ज्यू लोगोंने (जो हिब्रू लोगोंकी मिश्र संतान हैं) आर्मेइकको अपना लिया। बिबलिकल हिब्रूके अतिरिक्त मिशनेइक हिब्रू (mishnaic hebrew), रैबिनिक हिब्रू (rabbinic hebrew) आदि भी इसके रूप मिलते हैं। इनमें प्रथम बिबलिकलके बादकी भाषा है। इसपर ग्रीक, लैटिन, तथा आर्मेइकका प्रभाव पड़ा है। इसका प्रधान ग्रंथ 'म्शिनाह' है। दूसरी बादमें ज्यू कर्मकांडियों एवं पंडितों द्वारा प्रयुक्त मध्ययुगकी धार्मिक भाषा है। आधुनिक हिब्रू ज्यू पंडितोंकी भाषा है, हालाँकि उसका विभिन्न देशोंमें स्वरूप अलग-अलग है। हिब्रूमें साहित्य रचना पैलेस्तीन, स्पेन, अमेरिका आदि अनेक देशोंमें हुई है। स्पेनमें इसके साहित्यका स्वर्णकाल ९००-१२०० ई०तक है। प्राचीनकालसे लेकर आधुनिक कालतक इसमें धर्म, दर्शन, चिकित्सा तथा साहित्यके अनेकानेक ग्रंथ लिखे गये हैं और लिखे जा रहे हैं। (दे०) **इव्रिट**।

हिब्रू लिपि—हिब्रू भाषाकी लिपि। प्राचीन हिब्रू लिपि **कैनानाइट लिपि** (दे०)से तथा **परवर्ती हिब्रू** (दे०)लिपि आरमेइक लिपिसे निकली है। (दे०) **सामी लिपि**।

א ב ג ד ה ו ז ח

ט י כ ל מ נ ס ע

פ צ ק ר ש ש ת

[प्राचीन हिब्रू लिपि। ये क्रमशः अलेफ़, बेथ, गिमेल, पालेथ, हे, वाउ, ज़ायिन, केथ, तेथ, योद, काफ़, लामेद, मेम, नुन, समे ख, ऐन, पे, साद, कोफ़, रेश, सीन, शीन, ताव हैं।]

हिरा गाना लिपि (hira gana)—**जापानी लिपि** (दे०)का एक रूप।

हिरोई-लम्गांग (hiroi lamgang)—मणिपुरमें प्रयुक्त एक प्राचीन कुकी भाषा। यह **चीनी-परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी बर्मी शाखाके कुकी-चनि वर्गकी है। १९२१की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ७४४ थी।

हिस्पानी—**इस्पहानी** (दे०)का नाम।

ही—**लुङलकार** (दे०)का नाम।

हीरवाटी—**अहीरवाटी** (दे०)का नाम।

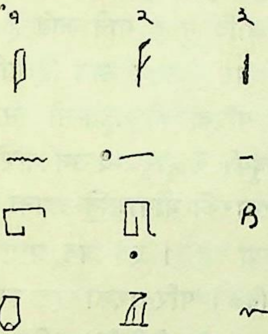
हीराटिक (hieratic) **लिपि**—हीराटिक (=**पवित्र लिपि**)एक प्राचीन लिपि है, जिसका प्रचार प्राचीन मिस्रमें था। यह नाम यूनानियों द्वारा दिया गया है।

हीरोग्लाइफ़िक हिट्टाइट—एक प्राचीन भाषा-का नाम। (दे०) **भारोपीय-एनाटोलियन परिवार**।

हीरोग्लाइफ़िक लिपि (hieroglyphic writing)—एक प्राचीन लिपि। इसके अन्य नाम **गूढ़ाक्षर**, **बीजाक्षर**, **पवित्राक्षर**, या **पवित्र लिपि** भी हैं। इसे पहले **हीरो ग्लाइफ़िक ग्रामेटा** (hieros=पवित्र, glyphein=उत्कीर्ण करना, grammata=अक्षर) नाम यूनानियों द्वारा दिया गया।

प्राचीनकालमें मन्दिरकी दीवारोंपर लेख खोदनेमें इस लिपिका प्रयोग होता था। इसी आधारपर इसका यह नाम रखा गया। विद्वानोंका अनुमान है कि ४,००० ई० पू०-में यह लिपि प्रयोगमें आ गयी थी। आरम्भमें यह **चित्र लिपि** (दे०) थी। बादमें भाव-मूलक लिपि हुई और फिर अक्षरात्मक हो गयी। सम्भवतः इसी लिपिमें अक्षरोंका सर्वप्रथम विकास हुआ। इस लिपिमें स्वर नहीं थे, केवल व्यंजन थे। पर ये व्यंजन ठीक आजके अर्थमें नहीं थे। एक ध्वनिके लिए कई चिह्न थे और साथ ही एक चिह्नका कई ध्वनियोंके लिए भी प्रयोग हो सकता था। सामनयतः यह दायेंसे बायेंको लिखी जाती थी, पर कभी-कभी इसके उलटे या एकरूपताके लिए दोनों ओर सेभी। हीरोग्लाइफ़िक लिपि-के घसीट लिखे जानेवाले रूपका नाम **हीराटिक** है।जो पहले ऊपरसे नीचेको और बाद-में दायेंसे बायेंको लिखी जाने लगी थी। इसका बादमें एक और भी घसीट रूप विक-सित हो गया, जिसकी संज्ञा **डेमाटिक** है। यह दायेंसे बायेंको-लिखी जाती थी। हीरो-ग्लाइफ़िक लिपिका प्रयोग ४०००ई० पू०-

से छठीं ई०तक, हीराटिकका २०००ई०पू०-से ३री सदीतक तथा डेमोटिकका ७वीं सदी ई० पू०से ५वीं सदीतक मिलता है। इस लिपिका प्रयोग प्राचीन मिस्रमें मिलता है, इसी-लिए इसे मिस्री हीरोग्लाइफिक भी कहते हैं।



१के नीचे कुछ हीरोग्लाइफ़िक अक्षर हैं। उनके साथ २के नीचे हीराटिक तथा ३के नीचे डेमोटिक अक्षर दिये गये हैं।

हीर्वाटी—**अहीरवाटी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

हुंगेरियन—हंगरी तथा आसपासके देशोंकी भाषा। इसे मजियार भी कहते हैं। यह **यूराल अल्ताइक** (दे०)की यूराली शाखाकी है। इसके बोलनेवालोंकी संख्या १,२०,००,०००-से कुछ ऊपर है। इसमें साहित्य १२वीं सदीसे कुछ पूर्वसे ही मिलता है। इसकी एक बोली **स्कांगो** (दे०) है, जो रूसी और रुमानियनसे प्रभावित है।

हुंडवाड़ी (hundwari)—**सोंडवाड़ी** (दे०)-का एक स्थानीय नाम।

हुअनकयो (huancayo)—दक्षिणी अमे-रिकाके **किचुआ** (दे०) परिवारकी एक दक्षिणी अमेरीकी भाषा।

हुअरी (huari)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)का एक भाषा-परिवार। इसकी प्रमुख भाषा इसी नामकी है।

हुअल्न्गो (hualngo)—**शुन्कल** (दे०)का एक रूप।

हुअवे (huave)—मध्य अमेरिकाके **मिक्से-ज़ोको** (दे०) भाषा परिवारकी एक भाषा।

हुअस्टेक (huastek)—मध्य अमरिकाके **हुअस्टेक वर्ग** (दे०)की प्रमुख भाषा।

हुअस्टेक वर्ग (huastek group)—**मय** (दे०) परिवारका एक भाषा-वर्ग। इस वर्गकी प्रमुख भाषा **हुअस्टेक** तथा इसकी प्रमुख बोली **चिकोमुसेल्टेक** है।

हुआर्पे (huarpe)—दक्षिणी अमरिकाकी **अलेन्-टिअक परिवार** (दे०)की एक विलुप्त भाषा। इसकी एक और भाषाका नाम अलेन्टिअक है।

हुइचोल (huichol)—**पिमा-सोनोर** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

हुज्वारेश—**पहलवी**का एक रूप। (दे०) **ईरानी**।

हुनिया (huniya)—**तिब्बती** (दे०)का एक अन्य नाम।

हुमै (humai)—**पलौंग** (दे०)का एक उत्तरी शान (वर्मा) प्रांतमें प्रयुक्त रूप।

हुरोन (huron)—**इरोक़ोइस** (दे०) परि-वारकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसका एक अन्य नाम **व्यन्डोट** भी है।

हुर्किली (hurqili)—काकेशस परिवार-की एक दग्वी बोली।

हुलन (hulan)—**पलौंग** (दे०)का एक रूप।

हुलिचे (huiliche)—दक्षिणी अमरिकाके **अरौकन** (दे०) परिवारकी एक भाषा। इसका एक अन्य नाम कुंको है।

हुसेइन (husein)—**पलौंगकी पले** (दे०)बोली का उत्तरी शान प्रांतमें प्रयुक्त एक रूप। वर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलने वालोंकी संख्या १,६८२ थी।

हूअची (huachi)—(दे०) परिवारकी एक प्रमुख दक्षिणी अमेरिकी भाषा। इसको **चपकुरा** भी कह हैं।

हूणलिपि—बौद्ध ग्रंथ 'ललित विस्तार'में दी गयी ६४ लिपियोंमें-से एक।

हूपा (hupa)—**पैसिफ़िक** (दे०) वर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा।

हूरिअन—उत्तरी मेसोपोटामियाकी एकबोली। (दे०) **सुबरेअन**

हृत्स्पंद (chest pulse)—हृदयका एक स्पंद

या घड़कन । (दे०) **अक्षर** ।

हेट (het)—**दक्षिणी अमरीकी वर्ग** (दे०)-का एक भाषा-परिवार । इस परिवारकी प्रमुख भाषाएँ **चेचंहेट** तथा **डियिहेट** थीं । अब इस परिवारकी भाषाएँ विलुप्त हो चुकी हैं ।

हेतुवाचक क्रियाविशेषण—(दे० **क्रियाविशेषण** ।

हेतुहेतुमद्भूत—(दे०) **काल** ।

हेने—अफ्रीकाकी एक भाषा जो बाँटू परिवारकी है।

हेमी (hemi)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ऊपरी छिंदविर्न जिलेमें प्रयुक्त एक **नागा** (दे०) भाषा । इसके बोलनेवालोंकी संख्या लगभग ४,००० थी ।

हेरेरो (herero)—**बांटू** (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा । इस भाषाका क्षेत्र दक्षिणी अफ्रीकामें कालाहरी रेगिस्तान तथा जंबज़ीके पश्चिममें है ।

हेलेनिक—(दे०) **ग्रीक** ।

हेहे(hehe)—**बांटू** (दे०) परिवारकी एक अफ्रीकी भाषा। इस भाषाका क्षेत्र विक्टोरिया, टँगेनिका तथा न्यासा झीलोंके बीचमें है ।

हैजोंग (haijong)—**बंगाली** (दे०)की, पूर्वीय बोलीका, सिलहट तथा मेमन सिंहमें प्रयुक्त एक रूप । ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ५,०००-के लगभग थी ।

हैडा(haida)—(१)एक उत्तरी अमेरिकी भाषा-वर्ग । (दे०) **ना-डेने** । (२) हैडावर्ग-की एक प्रमुख भाषा ।

हैडावर्ग (haida)—उत्तरी अमेरिकाके **ना-डेने** (दे०)भाषा-परिवारका एक वर्ग । इस वर्गको **स्किट्टागेटन** भी कहते हैं । इस वर्गकी प्रमुख भाषाएँ **हैडा** तथा **कैगनी** हैं और प्रमुख बोलियाँ हैं, **स्किड्गेट** तथा **मस्सेट** ।

हैदलारादी—१८९१की बंबई जनगणनाके अनुसार हैदराबादमें प्रयुक्त **उर्दू** (दे०)-का एक रूप

हैमिटिकपरिवार—अफ्रीकाका एक भाषा-परिवार । इसे **हामी** परिवार भी कहते हैं । उत्तरी अफ्रीकाके संपूर्ण प्रदेशमें यह फैला हुआ है । इसके कुछ बोलनेवाले मध्य और दक्षिणी अफ्रीका तक पहुँच गये हैं, अतः उत्तरी अफ्रीकाके अतिक्ति छिट-फुट कुछ अन्य छोटे-छोटे प्रदेशोंमें भी इस परिवारकी भाषाएँ पायी जाती हैं । इंजीलकी पौराणिक-कथाके अनुसार नौहके दूसरे पुत्र हैम अफ्रीकाके कुछ लोगोंके आदि पुरुष माने जाते हैं । इन्हींके नामपर इस कुलका नाम 'हैमिटिक' पड़ा है । इस परिवारकी बहुत-सी भाषाएँ अब नष्ट हो चुकी हैं और अब उन क्षेत्रोंमें सेमिटिक परिवारकी भाषाओंने अपना आधिपत्य जमा लिया है । इसे अब प्रायः **हैमिटो-सेमेटिक**(दे०) परिवारका एक उप-परिवार माना जाता है । **सेमिटिक परिवार** (दे०)-से इससे बहुत साम्य है । हैमिटिक परिवारकी कुछ भाषाओंमें धार्मिक साहित्य तथा पुराने शिलालेख मिलते हैं । इस परिवारकी अधिकतर वर्तमान बोलियाँ अन्य परिवारोंसे प्रभावित हैं । हौसा (मध्य अफ्रीकाकी राष्ट्रभाषा) जिसका नाम हम लोग सूडान परिवारके अन्तर्गत ऊपर ले चुके हैं, कुछ विद्वानोंके अनुसार इसी कुलकी है और सूडानी परिवारसे अधिक प्रभावित होनेके कारण ही सूडानी ज्ञात होती है । **हैमिटिक परिवारकी प्रमुख विशेषताएँ**—(१)इस परिवारकी भाषाएँ श्लिष्ट. योगात्मक है । (२) पद बनानेके लिए इन भाषाओंमें प्रत्यय और उपसर्ग दोनों ही लगाये जाते हैं, पर ऐसा केवल क्रिया-के ही सम्बन्धमें होता है । संज्ञामें प्रत्यय ही लगाये जाते हे । (३) इन भाषाओंमें स्वर परिवर्तन मात्रसे अर्थ परिवर्तित हो जाता है । जैसे 'गल्'का अर्थ होता है 'भीतर जाना', पर 'गेलि'का अर्थ होता है 'भीतर रखना' है। (४) जोर देनेके लिए इनमें पुनरुक्तिका प्रयोग किया जाता है । 'लब'का अर्थ 'मोड़ना' होता है, पर बार-बार मोड़नेके लिए 'लब्-लब्'का प्रयोग होता है । इसी प्रकार गोइ (काटना) और गोगोइ (बार-बार काटना) भी हैं ।(५)इन भाषाओंमें क्रियामें रूपोंसे ठीक-ठीक कालका बोध नहीं होता, बल्कि

पूर्णता और अपूर्णताका बोध होता है। समय-का ठीक बोध करानेके लिए अन्य सहायक शब्दोंकी शरण लेनी पड़ती है। (६) इस परिवारमें लिंगभेद 'नर' और 'मादा' पर आधारित नहीं है, पर साथ ही वह भारोपीय भाषाओंकी भांति बहुत अव्यवस्थित भी नहीं है। सामान्यतः बड़ी और बली वस्तुएँ पुलिंग समझी जाती हैं और इसके उलटे निर्बल और छोटी स्त्रीलिंग। प्यार करने योग्य तथा कोमल वस्तुएँ भी स्त्रीलिंग मानी जाती हैं। तलवार, कड़ी और मोटी घास, चट्टान तथा हाथी आदि पुलिंग हैं, पर चाकू, नरम और पतली घास, पत्थरके टुकड़े तथा छोटे-छोटे जानवर स्त्रीलिंग हैं। इन भाषाओं-के अधिकतर पुलिंग शब्द कण्ठ-ध्वनिसे आरम्भ होते हैं और स्त्रीलिंग दंत्य ध्वनिसे। इथिओपिक शाखाकी गल्ला और सोमाली भाषाओंमें यह बात विशेष रूपसे पायी जाती है। नामा आदि भाषाओंमें अन्तकी ध्वनिसे लिङ्भेद होता है। कुछ भाषाओंमें अन्य नियम भी हैं, किन्तु 'त' ध्वनि स्त्रीलिंगके चिह्नके रूपमें पूरे परिवारमें प्रचलित है। (७) बहुवचन बनानेके यहाँ कई तरीके हैं, साथ ही बहुवचनके समूहात्मक और असमूहात्मक आदि कई भेद भी हैं। लिसा (= आँसू, एकवचन), लिस् (= आँसूका असमूहात्मक बहुवचन) और लिस्से (= आँसूका समूहात्मक बहुवचन)। छोटे पदार्थ या कीड़े आदि बहु-वचन समझे जाते हैं। उनको एकवचनमें लानेके लिए प्रत्यय जोड़ने पड़ते हैं। ऊपर हम लोग लिस् और लिसा देख चुके हैं। बिल् (पतिंगे) और बिला (पतिंगा) भी उदाहरण स्वरूप लिये जा सकते हैं। इस परिवारकी केवल 'नामा' भाषामें द्विवचन हैं। (८) यहाँकी सबसे विचित्र और अभूतपूर्व विशेषता यह है कि संज्ञा वचनमें परिवर्तन होनेपर लिंगमें भी परिवर्तित हुई समझी जाती है। अर्थात् किसी एकवचन पुलिंग संज्ञाको बहुवचन बनाते हैं, तो लिंगके विचारसे वह स्त्रीलिंग हो जाती है। इसे नियमको भाषा-वैज्ञानिकोंने **ध्रुवाभिमुख नियम** (दे०) कहा है। इसके अनुसार माता स्त्रीलिंग है, पर माताएँ पुलिंग और इसी प्रकार शेर पुलिंग है, पर कई शेर स्त्रीलिंग। इसे, (१) **कुशिटिक** (सोमाली, गल्ला, कफ़ा, खामिर, बंडाला, साहो खाम्ता आदि); (२) **मिस्री** (पुरानी मिस्री तथा कॉप्टिक आदि) तथा (३) **लिबियो बर्बर** (मृत भाषा लिबिअन, तमशेक तथा बर्बर, जिसमें तुआरेग, श्लुह, कबिल, जेनागा ज़नेटे तथा मृत भाषा गुआंचे आदि हैं), इन तीन वर्गोंमें प्रायः बाँटा जाता है। पुराना वर्गीकरण कुछ और ढंगका मिलता है।

हैमिटो-सेमिटिक—एक भाषा परिवार, जिसकी **हैमिटिक** और **सेमिटिक** दो शाखाएँ हैं। पहले इन दोनोंका अलग-अलग परिवार माना जाता था, किंतु अब प्रायः इन्हें एक परिवारकी दो शाखाएँ या उपपरिवार माना जाता है। इस परिवारको **हामी-सामी** भी कहते हैं। (दे०) **हैमिटिक परिवार, सेमिटिक परिवार**।

हो—(१) **कुरुख** (दे०) का एक भ्रमवश पड़ा हुआ नाम। (२) **खेरवारी** (दे०) की सिंहभूमि तथा मानभूमिमें प्रयुक्त एक बोली। १९२१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ४,४७,८६२ थी। इसे **कोल** भी कहते हैं।

होक (hoka)—**उत्तरी अमरीकी वर्ग** (दे०) का मेक्सिको आदिमें प्रयुक्त एक भाषा-परिवार। इसे **होकन** (hokan) कहते हैं। इसका क्षेत्र कैलिफ़ोर्निया है इस परिवारमें लगभग ४२ भाषाएँ हैं, तथा बहुतसी बोलियाँ हैं जिनमें प्रमुख निम्नलिखित हैं, **शस्ता,-चिमरिको,** (दे०), **करोक, यन, पोमो एस्सेलेन** (दे०) **यूम** (दे०) **सलिन** (दे०), **चुमश** (दे०) **सेरी, वशो, टेकिस्ट्लिटेक** और **कोअहुइल्तेक** (दे०)।

होजी—**नव एलामाइट** (दे०) भाषा।

होजै (hojai)—**दीमासा** (दे०) की असममें प्रयुक्त एक बोली। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलने वालोंकी संख्या २,७५० के थी।

होरेन्टोट—**बुशमैन** (दे०)की एक अफ्रीकी भाषा, जिसे नामा भी कहते हैं। इसके बोलनेवाले लगभग २॥ लाख हैं, जो दक्षिणी पश्चिमी अफ्रीका में रहते हैं। इसकी ४ बोलियाँ हैं।

हो-थ(ho-tha)—**ज़येइन** (दे०)का रूप।

होप(hopa)–पुताओ(बर्मा)में प्रयुक्त **चीनी परिवार** (दे०)की एक **लोलो-मोसो**(दे०) भाषा।

होपी(hopi)—**पुएब्लो** (दे०) उपवर्गकी एक उत्तरी अमेरिकी भाषा। इसे **मोकी** भी कहते हैं।

होमैंग(hamaing)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार, शान प्रान्तमें लगभग ३७९ लोगों द्वारा व्यवहृत 'पलौंग' भाषाकी, **पले** बोली (दे०)का एक रूप।

होमोंग(homong)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार उत्तरी शान प्रांतमें २,६५५ लोगों द्वारा व्यवहृत **पलौंग** भाषाकी बोली पले (दे०)का एक रूप।

होर(hor)–'**हड़**(दे०)का एक प्राचीन नाम।

होर त्सेंग (hor tseng)—मध्य तिब्बतमें प्रयुक्त **तिब्बती** (दे०)का एक रूप।

होरु मुथुन (horumuthun)—**मुतोनिआ** (दे०) का एक रूप।

होरोलिआ झगर (horolia jhagar)—**मुंडारी** (दे०)का राँची स्थित कुरुख लोगों द्वारा व्यवहृत एक रूप।

होलव(holava)—**उड़िया** (दे०)का मद्रासमें प्रयुक्त एक नाम।

होलिया(holiya)—**गोलरी** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

होवहुल (howhul)—**ज़हओ** (दे०)का एक दूसरा नाम।

होवा—**इंडोनेशियन् परिवार** (दे०)की मैडागास्करमें प्रयुक्त एक भाषा।

होशियारपुर पहाड़ी–परिनिष्ठित **पंजाबी** (दे०) का एक रूप, जो कि होशियारपुरके पहाड़ी भागोंमें प्रयुक्त होता है। ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या २,०३,३२१ के थी और इसमें 'कहलूरी' बोलनेवाले भी सम्मिलित थे।

होस शान (hosa shan)—**सैंगथ**(दे०)–का एक अन्य नाम।

हौल्ग्नो(haulgno)—**शुन्क्ल**(दे०)का एक रूप।

हौसा—मध्य अफ्रीका(नाइजीरिया तथा चाड-झीलके पास)की एक भाषा। इसे कुछ लोग **सुडान वर्ग**(दे०)की तथा कुछ हेमिटिक परिवारकी मानते हैं। यह एक मिश्रित भाषा है। अपने क्षेत्रकी एक व्यापारिक भाषा होनेके कारण इसे काफ़ी लोग जानते हैं। इसमें साहित्य भी है। यह मूलतः हौसा नामक नीग्रो जाति द्वारा बोली जाती है। बोलनेवालोंकी संख्या १,२०,००,०००के लगभग है।

ह्कमुक (hkamuk)—**खमुक** (दे०)का एक नाम।

ह्कम्ती(hkamti)—**खाम्ती**(दे०)का एक नाम।

ह्कुन(hkun)—**खुन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

ह्कुनुंग (hkunung)—**खुंलोंग** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

ह्कुंलोंग(hkunlong)—**खुंलोंग**(दे०)–का एक नाम।

ह्तग्स(htangsa)—**थंगस्** (दे०)का एक नाम।

ह्तओते(htaote)—**थओते**(दे०)का एक नाम।

ह्त-मो (htamo)—**थ-मो** (दे०)का एक अन्य नाम।

ह्ताइ(htai)—**थाइ** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

ह्पिन (hpin)—**फिन** (दे०)का नाम।

ह्पो (hpo)—**फोन** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

ह्पोन(hpon)—**फोन**(दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

ह्मार(hmar)—**चीनी परिवार** (दे०)की तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके

कुकी-चिन वर्गकी असममें प्रयुक्त एक प्राचीन 'कुकी' भाषा। ग्रियर्सनके अनुसार इसका शुद्ध नाम म्हार है। १९३१ की जनगणनाके अनुसार इसके बोलनेवालोंकी संख्या ८,५८६ के थी।

ह्मेंग (hmeng)—बर्मामें प्रयुक्त **मिअओ** (दे०)की एक बोली।

ह्मोंग (hmong)—**ह्मेंग** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

ह्यस्तनी—**लङ्लकार** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

ह्रंगचल (hrangchal)—**ह्रांगखोल** (दे०) का एक नाम।

ह्रस्व—ऐसी ध्वनि, जिसे बोलनेमें अपेक्षाकृत (दीर्घकी तुलनामें) कम समय लगे। अ,इ, उ आदि ह्रस्व ध्वनियाँ हैं। (दे०) **मात्रा**।

ह्रस्व-चिह्न—एक प्रकारका **मात्रा चिह्न** (दे०)।

ह्रस्वता-दीर्घतात्मक अपश्रुति—**मात्रिक अपश्रुति** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक अन्य नाम।

ह्रस्वमात्रा—एक प्रकारकी **मात्रा** (दे०)।

ह्रस्व स्वर (short vowel)—ऐसा स्वर, जिसके उच्चारणमें थोड़ा समय लगे। जैसे अ, इ, उ, आदि। (दे०) **मात्राकाल** तथा **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक।

ह्रस्व स्वरित—एक प्रकारका **स्वरित** (दे०)।

ह्रस्वार्द्ध-मात्रा—**मात्रा** (दे०)का एक भेद।

ह्रस्वार्द्ध स्वर—ऐसा स्वर, जिसके उच्चारणमें **ह्रस्व स्वर** (दे०)से भी कम समय लगे। **उदासीनस्वर** (दे०) इस प्रकारका स्वर होता है। (दे०) **मात्राकाल** तथा **ध्वनियोंका वर्गीकरणमें स्वरोंका वर्गीकरण** उपशीर्षक।

ह्रस्वीकरण (delengthening)—**मात्राभेदीकरण** (दे०)का एक भेद।

ह्रस्वीभवन—**ह्रस्वीकरण** (दे०)का नाम।

ह्रांगखोल (hrangkhal)—खासी और जयंतिया पहाड़ियों (असम) तथा बंगालके पहाड़ी भागों आदिमें प्रयुक्त एक प्राचीन 'कुकी' भाषा। यह **चीनी परिवार** (दे०) तिब्बती-बर्मी भाषाओंकी असमी-बर्मी शाखाके कुकी-चीन वर्गकी है। इसे **ह्रंगचल** भी कहते हैं। इसके बोलनेवालोंकी संख्या ग्रियर्सनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार ८,४५० थी।

ह्रसोन्मुख संयुक्त स्वर—(दे०) **ध्वनियोंका वर्गीकरण में संयुक्तस्वर** उपशीर्षक।

ह्रुसो (hrusso)—**अक** (दे०)का एक नाम।

ह्लुंसेऔ (hlunseo)—बर्माके भाषा-सर्वेक्षण के अनुसार चिन पहाड़ियोंमें प्रयुक्त **लैयौ** (दे०)का एक रूप।

ह्वेंच (whench)—**शुन्कल** (दे०)का एक रूप। इसका ठीक नाम '**ह्वेनो**' है।

ह्वेनो (hweno)—'**शुन्वल** (दे०)का एक रूप।

ह्वैलन्गोव (hwelngow)—चिन पहाड़ियोंमें प्रयुक्त एक अवर्गीकृत भाषा। बर्माके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार इसके बोलने वालोंकी संख्या लगभग ५,००० थी।

ह्सिलेंग (hsinleng)—**सिन्लेंग** (दे०)का का एक नाम।

ह्सिनीअम (hsiniam)—**सिन्लम** (दे०)—एक नाम।

ह्सेंतुंग (hsentung)—**सेंतुंग** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

ह्सेन (hsen)—**सेम** (दे०)का नाम।

ह्सेन ह्सुम (hsen hsum)—**सेनसुम** (दे०)के लिए प्रयुक्त एक नाम।

ह्सेम (hsem)—सेम (दे०)का एक नाम।

परिशिष्ट

अंग्रेजी-हिंदी पारिभाषिक शब्दावली

A

abbreviation संक्षेप, संक्षिप्त रूप
abbreviation of consonant व्यंजन-संक्षेप, व्यंजन-निचय
abbreviation of vowel स्वर-संक्षेप, स्वर-निचय
abecedarian वर्णमालिक
abecedarian order वर्णमालिक क्रम
abessive case विहीनार्थी कारक
abloative अपादान
ablative absolute निरपेक्ष अपादान, निर्बद्ध अपादान
ablative case अपादान कारक
ablative infinitive अपादानी क्रियार्थक संज्ञा
ablative of agent कर्तृ अपादान, कर्तृवाचक अपादान
ablative of manner रीति अपादान, रीतिवाचक अपादान
ablative of comparison तुलनावाचक अपादान, तुलनासूचक अपादान
ablative omitted लुप्त अपादान, विवक्षित अपादान
ablative, post position of अपादानीय परसर्ग, अपादानीय कारक-चिह्न
ablaut अपश्रुति, स्वर-क्रम, स्वरानुक्रम, अक्षरावस्थान, अक्षर श्रेणीकरण, संप्रसारण-गुण-वृद्धि
ablaut grade अपश्रुति-अवस्था, अपश्रुति-स्तर
ablaut, qualitative गुणात्मक अपश्रुति
ablaut, quantitative मात्रात्मक अपश्रुति, मात्रिक अपश्रुति
abnormal असामान्य, अपवाद नियम-बाह्य
abnormal consonant असामान्य व्यंजन, अपवाद व्यंजन
abnormal vowel असामान्य स्वर, अपवाद स्वर
aboriginal मूल, आदिम
abridged संक्षिप्त, कर्तित
abrupt आकस्मिक
absolute निरपेक्ष, पूर्ण, स्वतंत्र, निर्बद्ध
absolute ablative निरपेक्ष अपादान, निर्बद्ध अपादान
absolute adjective सांज्ञिक विशेषण
absolute case निरपेक्ष कारक, अबद्ध कारक
absolute construction पूर्ण संरचना, स्वतंत्र रचना
absolute form पूर्ण रूप, निरपेक्ष रूप
absolute position निरपेक्ष स्थिति
absolute, semi-अर्ध निर्बद्ध, अर्धनियंत्रित, अर्ध निरपेक्ष
absolute superlative degree निरपेक्ष उत्तमावस्था
absolutely पूर्णतः, पूर्णतया
absolutive पूर्णकालिक
absorption विलयन
abstract अमूर्त
abstract idea अमूर्त विचार
abstract noun भाववाचक संज्ञा, गुणवाचक संज्ञा
abstract process अमूर्त प्रक्रिया
abstract term अमूर्त शब्द
abstraction अमूर्तीकरण, अमूर्तीभवन, भावानयन

acceleration वर्धन, विवर्धन, वेग
accent (१) आघात, (२) स्वराघात, बलाघात स्वर, बल
accent, acute उदात्त स्वराघात
accent, circumflex स्वरित
accent, general सामान्य स्वराघात
accent, grave अनुदात्त स्वराघात
accent, high pitch उदात्त स्वराघात
accent, level pitch स्वरित
accent, low pitch अनुदात्त स्वराघात
accent, musical संगीतात्मक स्वराघात. गीतात्मक स्वराघात
accent, pitch सुर, संगीतात्मक स्वराघात, स्वराघात, गीतात्मक स्वराघात
accent, sentence वाक्याघात, वाक्य-बलाघात, वाक्य स्वराघात
accent, shift आघात परिवृत्ति, स्वराघात परिवृत्ति
accent, stress बलाघात, बलात्मक स्वराघात, बल
accented सस्वर, बलाघातयुक्त, सबल, आहत स्वराघातयुक्त
accentless विस्वर, अबल बलाघात शून्य, स्वराघात शून्य
accentuate स्वरांकित करना, स्वरघातांकन करना, स्वर-चिह्नांकन करना
accentuation स्वरांकन, स्वरघातांकन, स्वर-चिह्नांकन
accentuation, chromatic रंजित स्वरांकन
accentuation, ordinary सामान्य स्वरांकन
accentuation, tonic काकु स्वरांकन, तान स्वरांकन
accessory सहकारी
accidental आनुषंगिक
accommodation आंशिक समीकरण, निवेशन, व्यवस्थापन
accommodative aspect व्यवस्थापन-पक्ष, निवेशन-पक्ष
accu-dative form कर्म संप्रदान रूप
accu-gerund क्रिया निष्पन्न संज्ञा कर्म
accu-infinitive कर्म तुमुनन्त
accurate सही, शुद्ध, ठीक, सटीक
accusative कर्म
accusative, adverbial क्रियाविशेषणात्मक कर्म
accusative case कर्म कारक, द्वितीया विभक्ति
accusative, cognate सजातीय कर्म
accusative, double द्विगुणित कर्म
acoustic श्रावणिक, श्रौत
acoustic basis श्रावणिक आधार
acoustic colouring श्रावणिक रंजन, श्रावणिक स्पर्श
acoustic features श्रावणिक विशेषता
acoustic impression श्रावणिक आभास
acousticist श्रावणिक ध्वनिविद, श्रुतिशास्त्री
acoustic phonetics श्रावणिक ध्वनि-विज्ञान
acoustics श्रुतिशास्त्र
acrophonetic writing भाव-ध्वनि लिपि
acrophony भाव-ध्वनि-लेखन
action क्रिया
action, coincidental समपाती क्रिया
action, continuous अविच्छिन्न क्रिया
action, corrosive क्षयकारी क्रिया
action, habitual अभ्यासी क्रिया
action, noun क्रियासूचक संज्ञा
action word क्रियासूचक शब्द
active कर्तृ-कर्तृवाची
active case कर्तृकारक
active form कर्तृवाचक रूप
active language गतिशील भाषा, जीवन्त भाषा
active past tense क्तवत् प्रत्ययान्त काल

active use कर्तरि प्रयोग
active verb सकर्तृक धातु
active voice कर्तृवाच्य
actor-action goal स्थान-प्रधान रचना
actualization वास्तविकीकरण
acute उदात्त, तीव्र
acute accent उदात्त स्वर, उदात्त बलाघात, उदात्त स्वराघात
adaptation theory अनुयोजन सिद्धांत, अभिस्वीकरण सिद्धांत
addition योग, आगम परिवर्द्धन
additional अतिरिक्त, अनुपूरक
additive clause उपवाक्य
adhessive case नैकट्यसूचक कारक
adherent adjective संसक्त विशेषण
aditive case ओरसूचक कारक
adjectival विशेषणात्मक, वैशेषणिक विशेषण
adjectival clause विशेषण उपवाक्य, विशेषणात्मक उपवाक्य
adjacent संसक्त, आसन्न, संलग्न, निकटस्थ, सन्निकट
adjective विशेषण
adjective, attributive गुणवाचक विशेषण
adjective, clause विशेषण उपवाक्य
adjective, multiplicative गुणात्मक विशेषण
adjective, definite demonstrative निश्चयार्थी संकेतवाचक विशेषण
adjective, definite, ordinal, numeral निश्चयार्थी क्रम संख्यावाचक विशेषण
adjective, demonstrative संकेतवाचक विशेषण, संकेतसूचक विशेषण
adjective, descriptive विवरणात्मक विशेषण
adjective, indefinite cardinal numeral अनिश्चयार्थी संख्यावाचक विशेषण
adjective, indefinite demonstrative अनिश्चयार्थी संकेतवाचक विशेषण
adjective, numeral संख्यावाचक विशेषण
adjective of action क्रियाबोधक विशेषण
adjective of attribute गुणवाचक विशेषण
adjective of colour वर्णवाचक विशेषण
adjective of condition दशावाचक विशेषण, स्थितिसूचक विशेषण
adjective of form आकारसूचक विशेषण
adjective of number संख्यावाचक विशेषण
adjective of place स्थानवाचक विशेषण
adjective of quality गुणवाचक विशेषण
adjective of quantity परिमाणवाचक विशेषण
adjective of taste स्वादबोधक विशेषण
adjective of temper स्वभावबोधक विशेषण
adjective of time समयबोधक विशेषण, कालवाचक विशेषण
adjective of weight भारवाचक विशेषण
adjective, predicative विधेयात्मक विशेषण
adjective, pronominal सर्वनाममूलक विशेषण, सार्वनामिक विशेषण
adjective, proper व्यक्तिवाचक विशेषण
adjective, quantitative परिमाणात्मक विशेषण, मात्रावाची विशेषण
adjective, verbal धातुसाधित विशेषण
adjunct; adjunct word अनुबंध, अनुबंध-शब्द, गुणवाचक शब्द

adjunct, adverbial क्रियाविशेषणात्मक अनुवन्ध
adjunct, appositional समानावस्थित अनुवन्ध
adjunct, attributive गुणवाचक अनुबंध
adnominal संज्ञात्मक, सांज्ञिक
advent आगम
adverb क्रियाविशेषण
adverb, attributive गुणवाचक क्रियाविशेषण
adverb, affirmative स्वीकारात्मक क्रियाविशेषण
adverb clause गुणवाचक क्रियाविशेषण-उपवाक्य
adverb, compounded समासभूत क्रियाविशेषण
adverb, descriptive वर्णनात्मक क्रियाविशेषण
adverb, genitival संबंधवाची क्रियाविशेषण
adverbial क्रियाविशेषणात्मक, क्रियाविशेषण
adverbial adjunct क्रियाविशेषणात्मक अनुबंध
adverbial case क्रियाविशेषणात्मककारक
adverbial clause क्रियाविशेषणात्मक उपवाक्य
adverbial compound क्रियाविशेषणात्मक समास, अव्ययीभाव समास
adverbial expression क्रियाविशेषणात्मक अभिव्यक्ति, क्रिया विशेषणात्मक वाक्यांश
adverbial gerund क्रिया विशेषणात्मक धातु साधित संज्ञा।
adverbial indeclinable क्रियाविशेषणात्मक अव्यय
adverbial modifier क्रियाविशेषण, क्रियाविशेषणात्मक विशेषक
adverbial phrase क्रियाविशेषणात्मक वाक्यांश
adverb, interrogative प्रश्नसूचक क्रियाविशेषण
adverb, negative नकारात्मक (निषेधात्मक) क्रियाविशेषण
adverb, numeral संख्यावाचक क्रियाविशेषण
adverb of certainty निश्चयवाचक क्रियाविशेषण
adverb of direction दिशासूचक क्रिया विशेषण
adverb of manner रीतिवाचक क्रियाविशेषण
adverb of order क्रमवाचक क्रियाविशेषण
adverb of period अवधिवाचक क्रियाविशेषण
adverb of place स्थानवाचक क्रियाविशेषण
adverb of position स्थितिवाचक क्रियाविशेषण
adverb of quantity परिमाणवाचक क्रिया विशेषण
adverb of reason हेतु (कारण)वाचक क्रियाविशेषण
adverb of time कालवाचक क्रियाविशेषण
adverb of uncertainty अनिश्चयवाचक क्रियाविशेषण
adverb, predicative विधेयभूत क्रियाविशेषण, विधेय क्रियाविशेषण
adverb, pronominal सार्वनामिक क्रियाविशेषण
adverb, relative संबंधबोधक क्रियाविशेषण
adverb, repetitive द्विरुक्ति क्रियाविशेषण, अभ्यासी क्रियाविशेषण
adverb, simple सामान्य क्रियाविशेषण
adversative conjunction विरोधदर्शक समुच्चयबोधक अव्यय

affective प्रभावक
affinity सामीप्य, समीपता; अनुरूपता
affinity, vowel स्वरानुरूपता
affirmative अस्तिवाचक, सम्मोदनात्मक
affirmative conjunction सम्मोदनात्मक समुच्चयबोधक
affix प्रत्यय, अनुबंध, पूर्व प्रत्यय, उपसर्ग, मध्य प्रत्यय, अंत्य प्रत्यय
affix, enclitic अव्ययात्मक प्रत्यय
affix, feminine स्त्री प्रत्यय
affix, formative रचनाक्षम प्रत्यय
affix, honourific आदरवाचक प्रत्यय, आदरबोधक प्रत्यय
affix, primary कृत प्रत्यय, प्रधान प्रत्यय, मूल प्रत्यय
affix, private स्वार्थिक प्रत्यय
affix, secondary तद्धित प्रत्यय, अप्रधान प्रत्यय, गौण प्रत्यय
affricate स्पर्श-संघर्षी, घर्ष-स्पर्श, स्पर्श-घर्ष, घृष्ट
affrication घर्षण, स्पर्शसंघर्षण
affricative aspirate स्पर्ष संघर्षी महाप्राण
after sound पश्च-ध्वनि, पर-ध्वनि
age and area theory क्षेत्र और युग सिद्धांत
agent कर्ता
agential case कर्तृकारक
agential noun कर्तृसंज्ञा
agentive कर्तृवाचक
agent-noun कर्तृसंज्ञा
agglomerating योगात्मक, प्रत्यय-प्रधान, संयोगात्मक, उपचयात्मक
agglutinated अभिश्लिष्ट
agglutinating योगात्मक, प्रत्ययप्रधान, संयोगप्रधान, संयोगात्मक
agglutination संयोग, योजन, अभिश्लेषण
agglutinative योगात्मक, संयोग-प्रधान, अभिश्लेषी
agglutinative language संयोगप्रधान भाषा
agglutinative infix मध्य योगात्मक, अन्तर्योगात्मक, मध्य प्रत्ययप्रधान
agglutinative prefix पूर्व योगात्मक, पूर्व प्रत्ययप्रधान
agglutinative prefix suffix उभयोगात्मक, पूर्वापर योगात्मक
agglutinative simple अश्लिष्ट योगात्मक
agglutinative suffix अंतयोगात्मक, परप्रत्ययप्रधान
agreement अन्वय
air current श्वास-प्रवाह
air passage श्वास-नालिका
allative case ओरसूचक कारक
alliteration अनुप्रास
allochrome संमात्रा
allograph संलिपि, संवर्ण
allogram संचिह्न
allomorph संरूप
allophone संध्वनि, ध्वन्यंग, संस्वन, सहस्वन
allotone संतान
alogisms चिह्नक
alphabet वर्णमाला, लिपि, वर्ण, अक्षर
alphabetic quasi अर्ध वर्णमालीय
alphabetic phonogram वर्णमालीय ध्वनिग्राम
alphabetic sound वर्ण ध्वनि
alphabetic writing वर्णात्मक लिपि, वर्ण लिपि
alphabetical वर्णात्मक, वर्णानुक्रमिक, वर्णमालीय
alteration परिवर्तन
alteration of meaning अर्थ-परिवर्तन
alternant प्रत्यावर्ती
alternative वैकल्पिक, विकल्प
alternative conjunction विभाजक समुच्चयबोधक अव्यय, वियोजक समुच्चय-

बोधक अव्यय
alveola वर्त्स
alveolar वर्त्स्य
alveolo-palatal वर्त्सतालव्य
amalgamating पूर्णसंयोगी, सम्मिश्रणात्मक
amalgamating language सम्मिश्रणात्मक भाषा
ambiguous अस्पष्ट, संदिग्ध, अनिश्चित
ambiguous gender संदिग्ध लिंग
amelioration अर्थोत्कर्ष
amplificative आगमित शब्द
amplitude आयाम, विस्तार, दोलनांक
anacoluthon क्रमदोष, वाक्यक्रम दोष
anagram वर्णान्तरित शब्द, वर्णान्तरित वाक्य
analogical creation सादृश्यमूलक रचना
analogic change सादृश्यात्मक परिवर्तन
analogical extension सादृश्यात्मक विस्तार, सादृश्यात्मक परिवर्तन
analogous form सदृश रूप
analogical form सादृश्यात्मक रूप, सादृश्यमूलक रूप
analogue समरूपी शब्द, तुल्य शब्द
analogy सादृश्य
analogy, false मिथ्या सादृश्य
analphabetic notation अवर्णात्मक परिचिह्न
analysis विश्लेषण, वाक्य-विश्लेषण
analysis of sentences वाक्य विश्लेषण, वाक्यविग्रह
analytic वियोगात्मक, विश्लेषणात्मक, व्यवहित
analytical विश्लेषणात्मक, वियोगात्मक, अयोगात्मक
analytical linguistics विश्लेषणात्मक भाषा-विज्ञान
analytical morphology विश्लेषणात्मक रूप-विज्ञान
analytical syntax विश्लेषणात्मक वाक्य-विज्ञान
analytic language वियोगात्मक भाषा, अयोगात्मक भाषा
analytic stage वियोगावस्था, वियोगात्मक अवस्था
anaphora पुनरावृत्ति, पश्च संकेत
anaphoric word पश्चसंकेती शब्द
anaptyctic insertion मध्य प्रक्षेप
anaptyctic vowel मध्यागत स्वर, स्वरभक्ति स्वर
anaptyxis स्वरभक्ति, स्वरागम, मध्यस्वरागम, विप्रकर्ष
anaptyxis, consonantal व्यंजनभक्ति, व्यंजनागम
angularsha-ped character कोणात्मक लिपि
animal language प्राणि-भाषा, पशु-भाषा
animate चेतन, सजीव
animate gender चेतन लिंग, प्राणिलिंग
animate noun चेतन संज्ञा, सजीवसंज्ञा
anomalous verb अनियमित क्रिया
anomoly अनियम, अव्यवस्था
antagonistic language विरोधी भाषा
antecedent पूर्वगामी, पूर्वगामी शब्द
antepenult उपधापूर्व, उपांत्यपूर्व
antepenultimate उपधापूर्व, उपांत्यपूर्व
anterior पूर्ववर्ती
anterior syllable पूर्ववर्ती अक्षर
anthropomorphic character मानवरूपात्मक लिपि
anticipation पूर्व प्रभाव
antonomasia परस्थानी प्रयोग, संज्ञास्थानी विशेषण प्रयोग, विशेषणस्थानी संज्ञा-प्रयोग
antonym विलोम, विलोमार्थी, विपरीतार्थी
aorist लुङ्लकार, सामान्य भूत, अनिश्चित भूत
aorist, causative प्रेरणार्थक लुङ, प्रेर-

णार्य सामान्य भूत
aorist, duplicated द्विगुणीकृत लुङ्, अभ्यस्त लुङ्
aoristic लुङात्मक
aorist, passive कर्मवाच्य लुङ्
aorist, periphrastic पल्लवित लुङ्, वियोगात्मक सामान्य भूत
aorist, simple सामान्य लुङ्
aorist, strong सबलभूत, सबल लुङ्
aorist, thematic सविकरण लुङ्
aperture मुख रंध्र, मुख-विवर, विवर
aphasia वाग्रोध
apheresis आदि अक्षर लोप, आदि स्वर लोप, आदि वर्णलोप
aphesis आदि वर्ण लोप, आदि स्वर लोप
aphorist सूत्रकार
aphoristic सूत्रात्मक
apical अग्र, अग्रवर्ती, पूर्ववर्ती, जिह्वानोकी
apical articulation जिह्वानोकी उच्चारण
apical contact जिह्वानोकी संपर्क या स्पर्श
apocope अन्त्यवर्ण लोप, अंत्याक्षर लोप, अंत्य लोप, अंत्य स्वरलोप, अंत्य व्यंजन लोप
apodosis परिणामी उपवाक्य
apophony अपश्रुति, अक्षरावस्थान, स्वर विकार, स्वर-विकृति, मात्रिक अपश्रुति
aposiopesis आकस्मिक वाग्रोध, मध्य-रोध
apostrophe षष्ठी चिह्न, संबंध चिह्न, ऍपास्ट्राफ़ि
apparatus, respiratory श्वास यन्त्र
appellative जातिवाचक संज्ञा, श्रोता पक्ष
application प्रयोग, सम्प्रयोग
applicative aspect प्रायोगिक पक्ष
applied linguistics प्रायोगिक भाषा-विज्ञान
appositional compounds कर्मधारय समास
apraxia प्रत्यभिज्ञा लोप
arbitrary यादृच्छिक
arbitrary vocal symbol यादृच्छिक ध्वनिप्रतीक
archaic आर्ष, पुरातन, प्राचीन, अप्रचलित
archaism आर्ष प्रयोग, प्राचीन अभिव्यक्ति, अप्रचलित प्रयोग
archiphoneme मूल ध्वनिग्राम
area क्षेत्र
area, dialect बोली-क्षेत्र
areal क्षेत्रीय, क्षेत्र-विषयक
area, linguistic भाषा-क्षेत्र
areal linguistics क्षेत्रीय भाषा-विज्ञान
argot गुप्त भाषा, चोर-भाषा
arranged व्यवस्थित, क्रमबद्ध
arrangement व्यवस्था, क्रम
arrowheaded sign वाणमुखी चिह्न
article उपपद
article, definite निश्चितार्थी उपपद
article, indefinite अनिश्चितार्थी उपपद
articulate व्यक्त
articulated उच्चरित
articulate sentence पूर्ण वाक्य
articulate sound व्यक्त ध्वनि
articulate speech व्यवस्थित भाषा
articulation उच्चारण
articulation, place of उच्चारणस्थान
articulator करण, उच्चारण-अवयव
articulatory difference उच्चारण-गत भिन्नता
artificial language कृत्रिम भाषा
artificial palate कृत्रिम तालु
arytenoid cortilege दर्विकास्थि
aspect पक्ष
aspirate महाप्राण, प्राणध्वनि ह-कार
aspirated महाप्राण, सप्राण, महाप्राणयुक्त, महाप्राणित, महाप्राणीकृत
aspiration महाप्राणत्व, महाप्राणीभवन, महाप्राणीकरण
assertive निश्चयात्मक, निश्चयबोधक, दृढ़ताबोधक

asseverative particle निश्चयात्मक निपात
assibilation ऊष्मीकरण, ऊष्मीभवन
assimilated phoneme समीकृत ध्वनिग्राम
assimilation समीकरण, अनुरूपता, समीभवन, सारुप्य
assimilation, mutual अन्योन्य समीकरण
assimilation, progressive पुरोगामी समीकरण, पूरोवर्त समीकरण
assimilation regressive पश्चगामी समीकरण
assimilatory condensation समध्वनि लोप, समाक्षर लोप
assimilatory phoneme समीकारी ध्वनिग्राम
association संसर्ग, साहचर्य
association group संसर्ग-वर्ग, साहचर्य वर्ग
associational word साहचर्यिक शब्द
assonance स्वरानुप्रास, स्वर-अभ्यास
asterisk तारक-चिह्न
astounding theory विस्मयकारी सिद्धान्त, आश्चर्यकारक सिद्धान्त
asyllabic अनाक्षरिक, अनाक्षरिक ध्वनिग्राम
asyndeton द्वन्द्व समास
asyntactic compound व्याकरण विरुद्ध समास, अनियमित समास
atelic aspect आपूर्ण पक्ष
athematic अविकरण, आदिष्ट, मूलविहीन, प्रकरणात्मक
atonic सुर-सवहीन, बलाघात शून्य
attested form प्रयुक्त रूप, प्राप्त रूप
attraction संक्षेपण, रूपात्मक समीकरण
attribute गुण, धर्म, गुणबोधक, धर्मबोधक
attributive गुणवाचक, गुणबोधक, धर्मबोधक
attributive compound गुणवाचक समास, बहुव्रीहि समास
attributive adjective गुणवाचक विशेषण
attributive Adverb गुणवाचक क्रियाविशेषण
auditory श्रोतृग्राह्य, श्रावणी, श्रौत
auditory image श्रावणी बिंब
auditory language श्रोतृ भाषा
auditory nerve श्रावणी स्नायु
augment आगम, ध्वनि-आगम, वृद्धि
augmentative आगमी, आगमीय, आगम-विषयक, आगमित शब्द
augmentative suffix आगमी प्रत्यय
autonomous sound change निरपेक्ष ध्वनि-परिवर्तन, स्वयंभू ध्वनिपरिवर्तन
auxiliary सहकारी, सहायक
auxiliary numeral सहकारी संख्यावाचक
auxiliary verb सहायक क्रिया
average pronunciation सामान्य उच्चारण

B

back पश्च, पिछला
back close vowel पश्च संवृत स्वर
back formation पश्चगामी रचना, पश्च-रचना
back guttural जिह्वामूलीय
backing पश्चावर्तन
back of the tongue जिह्वा-पश्च, पश्चजिह्वा
back-open vowel पश्च विवृत स्वर
back vowel पश्च स्वर
balance sentence सन्तुलित वाक्य
barbarism अव्याकरणिक, अनार्ष प्रयोग व्याकरण-विरुद्ध
bartholomae's law बारथोलोमे नियम
base प्रकृति, प्रातिपादिक, आधार, धातु, मूल
base of comparison तौलनिक आधार
base of inflection प्रातिपदिक, प्रकृति

basic मूल, मौलिक, आधारभूत
basic language मूल भाषा,आधार भाषा
basic principle मूल तत्त्व, आधार-भूत-सिद्धान्त
basis आधार
basis of articulation उच्चारणाधार
benedictive आशीः, आशीलिंङ
bibliography पुस्तक-सूची, संदर्भ-सूची
bilabial (bi-labial) द्वयोष्ठ्य
bilabiodental द्वयोष्ठदंत्य
bilateral opposition द्विपार्श्व विरोध
bilingual द्विभाषा-भाषी
bilingualism द्विभाषिता
bilinguality द्विभाषिता
binary द्वितत्त्वी, द्विपक्षी, द्वयांगी
binary principle द्विगतिक सिद्धांत
biolinguistics जैविक भाषा-विज्ञान
blade फलक
blade of the tongue जिह्वाफलक, जिह्वाग्र
blend मिश्र, मिश्र शब्द, मिश्रित शब्द, संकर
blending संकरता, मिश्रण
blocked syllable बद्धाक्षर, व्यंजनांत अक्षर
borrowed गृहीत
borrowed character गृहीत लिपि
borrowed word गृहीत शब्द
bonrrowed elemnet गृहीत तत्त्व
borrowing ग्रहण
bound बद्ध, आवद्ध
bound accent बद्ध बलाघात, अपरिवर्ती बलाघात
boundary सीमा, सीमांत
boundary language सीमान्त-भाषा
bounded noun बद्ध संज्ञा
bound form बद्धरूप
bound morpheme बद्ध रूपग्राम
bourgeois language बुर्जुआ भाषा
bow-wow theory दे० onomatopoetic theory.

bracket कोष्ठ, कोष्ठक
bracket round गोल-कोष्ठक, छोटा कोष्ठक
bracket squareचौकोर कोष्ठक, बड़ा कोष्ठक
branch शाखा, प्रशाखा
breath श्वास
branchylogy समास-शैली, सूत्राभिव्यक्ति
breath force प्राण शक्ति, श्वास-शक्ति
breathed अघोष
breath in श्वास
breathing group श्वास वर्ग
breath out निःश्वास, प्रश्वास
breathings प्राणत्व, प्राणचिह्न
breve चंद्र
bridge-letter सेतु-वर्ण
bridge-phoneme सेतु ध्वनिग्राम
bridge-sound सेतु ध्वनि
bridge-syllable सेतु-अक्षर
bridge-vowel सेतुस्वर
bright vowel अग्रस्वर, स्पष्ट स्वर, उज्ज्वल स्वर
broad आयत, स्थूल
broad consonant आयत व्यंजन, पश्चस्वरानुवर्ती व्यंजन
broad romic आयत रोमिक
broad transcription स्थूल प्रति-लेखन, आयत प्रतिलेखन
broad vowel पश्च स्वर, आयत स्वर
broken टूटी-फूटी
buccal मुखसम्बन्धी, मौखिक
buccal cavity मुख-विवर
building language रचनात्मक भाषा

C

cacography दुष्प्रयोग, दूषित शब्द-चयन, अशुद्ध वर्तनी, दूषित भाषा
cacology कुप्रयोग, दुष्प्रयोग; अशुद्धोच्चारण
cacophony श्रुतिकटुता, ध्वनि-कर्कशता
cacuminal मूर्द्धन्य

cadence स्वर-संगति, लय
cadenced सुरीला, लययुक्त
cant सांकेतिक भाषा, सांकेतिक शब्द-समूह
capital letter बड़ा अक्षर, बृहदक्षर
cardinal मूल, मौलिक, आधारभूत
cardinal consonant मूल, आधार, मान, मानक या मुख्य व्यंजन
cardinal numeral मुख्य अंक, पूर्ण संख्य-वाचक विशेषण
cardinal vowel प्रधानस्वर, मूल स्वर आधार स्वर, मान स्वर
carian case विहीनार्थी कारक
cartilage क्वास्थि
case कारक, विभक्ति
case, ablative अपादान कारक, अपादान विभक्ति
case, accusative द्वितीया विभक्ति, कर्म कारक
case, dative सम्प्रदान कारक, चतुर्थी विभक्ति
case ending विभक्ति, कारक-विभक्ति, सुप, कारकान्त
case form कारक रूप
case genitive संबंधकारक, षष्ठी विभक्ति
case, indirect परोक्ष विभक्ति, परोक्ष कारक
case, inflection कारक-रूप, नाम रूप, सुबन्त
case, instrumental तृतीया विभक्ति, करण कारक
case, locative सप्तमी विभक्ति, अधिकरण कारक
case, nominative प्रथमाविभक्ति, कर्ता कारक
case, objective द्वितीया विभक्ति, कर्म कारक
case, possessive षष्ठी विभक्ति, संबंध कारक
case termination कारक विभक्ति
case, uocative संबोधन
caste जाति, वर्ग
caste language जातिभाषा
caste-less जातिशून्य, वर्गविहीन
casteless nouns जातिशून्य संज्ञा, निम्नवर्गीय संज्ञा
catch स्पर्श, स्वरयंत्रमुखी स्पर्श
category श्रेणी, वर्ग
causal प्रेरणार्थक, णिजन्त
causal clause कारणात्मक उपवाक्य, कारणात्मक वाक्यांश
causal conjunction कारणवाचक समुच्चयबोधक अव्यय
causal sense प्रेरक अर्थ, णिजर्थ
causative प्रेरणार्थक, णिजन्त
causative aspect प्रेरणार्थक पक्ष
causative conjunction कारण-वाचक समुच्चयबोधक अव्यय
causative root प्रेरणार्थक धातु
cavity विवर, द्वार
cavity, nasal नासिका विवर
cavity vocal मुख विवर
centering diphthong केन्द्राभिमुखी संयुक्त स्वर
central केन्द्रीय
central vowel मध्यस्वर, केन्द्रीय स्वर
centre केन्द्र
centro-dental मध्यदन्त्य
centum केंतुम
cerebra मूर्द्धा
cerebral मूर्द्धन्य
cerebralisation मूर्द्धन्यीकरण
cerebralizer मूर्द्धन्यकारी
cerebrum मूर्द्धा, मस्तिष्क
chamber कोष्ठ
chamber, resonance प्रतिध्वनन-कोष्ठ
change परिवर्तन, विकार
changing परिवर्तनशील
character लिपि-चिह्न, प्रकृति
characteristic लक्षण
chart चार्ट

check स्पर्श वर्ण
checked syllable बद्धाक्षर
chest pulse हृत्स्पंद
clay tablet मृत्पट्टिका
chromatic accent सुर, सुराघात
chrone मात्रा
chroneme मात्राग्राम
chronological कालक्रमिक
chronology कालक्रम
Circumflex स्वरित
class वर्ग, जाति
class-meaning वर्ग-अर्थ
class words वर्ग-शब्द
class cleavage वर्ग भेद
classical क्लासिकल, पुरातन अभिजात्य, लौकिक
classical language क्लासिकल भाषा, लौकिक भाषा
classical sanskrit लौकिक संस्कृत
classification वर्गीकरण
classifier वर्गकर्त्ता
clause उपवाक्य, वाक्यांश
clear स्पष्ट
clear l स्पष्ट ल
click क्लिक, अंतर्मुखी द्विस्पर्श, अंतः-स्फोट द्विस्पर्श
clipped word कर्तित शब्द
close संवृत
closed संवृत
closed construction संवृत रचना
closed sound संवृत ध्वनि
closed stress संवृत बलाघात
closed syllable बद्धाक्षर
close transition अविच्छिन्न संक्रमण
close vowel संवृत स्वर
closure संवृति
cluster समूह, गुच्छ, अनुक्रम
cluster consonant व्यंजन गुच्छ
cluster vowel स्वरानुक्रम
coalescence एकीभाव
coda पर-गह्वर
cognate सजातीय
cognate complement सजातीय पूरक
cognate noun सजातीय संज्ञा
cognate object सजातीय कर्म
cognate verb सजातीय क्रिया
cognate word सजातीय शब्द, एकमूलीय शब्द
coinage शब्द गढ़ना, नव शब्द-निर्माण
coined word नवनिर्मित शब्द, गढ़ा हुआ शब्द
collateral clause उपवाक्य
collective noun समूहवाचक संज्ञा
collective number समूहवाचक संख्या
collective numeral समुदाय संख्यावाचक
collective pronoun समूहवाचक सर्वनाम
collocation शब्द-व्यवस्था, शब्द-क्रम शब्द-निवेशन
colloquial बोलचालका, लोकभाषीय, स्थानीय भाषीय
colloquialism बोलचालका ढंग (शैली)
colloquial style बोलचालकी शैली
colon कोलन
column स्तंभ, खाना
combination सन्धि, संहति
combinatory variants स्थितिजन्य रुपान्तर
comitative case सह-अर्थीय कारक
comma अर्द्धविराम, कॉमा
comma inverted उद्धरण चिह्न
comma juncture कॉमा, संगम, अर्द्धविराम संगम
common case सामान्य कारक
common gender उभयलिंग
common language साधारण भाषा, लोकभाषा
common noun जातिवाचक संज्ञा
common syllable उभयविध अक्षर
communication, संसूचन, सम्प्रेषण

community speech संप्रदाय-भाषा, वर्ग-भाषा
comparative तुलनात्मक
comparative degree तरकोटि, तुलनात्मक कोटि, उत्तरावस्था, तुलनावस्था
comparative grammar तुलनात्मक व्याकरण
comparative linguistics तुलनात्मक भाषाविज्ञान
comparative method तुलनात्मक पद्धति
comparative morphology तुलनात्मक रूपविज्ञान
comparative syntax तुलनात्मक वाक्यविज्ञान
comparison तुलना
compellative case संबोधन कारक
compensatory lengthening पूर्त्तिकारी दीर्घीकरण, क्षतिपूरक दीर्घीकरण
complement पूरक, पूर्ति
complementary compounds पूरकात्मक समास
complementary distribution परिपूरक वितरण, पूरक वितरण
complete पूर्ण
complete diphthong पूर्ण संयुक्तस्वर
completely incorporating languages पूर्ण संश्लेषात्मक भाषा
complete predication पूर्णविधेयकत्व
complete reduplication पूर्ण द्विरुक्ति
complete root पूर्ण धातु
complete stop पूर्ण स्पर्श, स्फोटित स्पर्श
complete verb पूर्ण क्रिया, पूर्ण धातु
completive पूर्णतावाची, पूर्णात्मक
complex मिश्र, जटिल
complex sentence मिश्र, मिश्रित या जटिल वाक्य
complex word मिश्र शब्द
complicated उलझा हुआ, पेचीदा, जटिल
component संघटक
component, integral अखण्ड अवयव, अखंड संघटक
composite संश्लिष्ट
composition of sentence वाक्यविन्यास, वाक्यरचना, वाक्य-गठन
compound समास, संयुक्त
compound adverb साधित क्रियाविशेषण, यौगिक क्रिया-विशेषण
compound consonant संयुक्त व्यंजन
compound form संयुक्त रूप
compound indeclinable संयुक्त अव्यय, समस्तपदीय अव्यय
compound morpheme संयुक्त रूपग्राम
compound noun संयुक्त संज्ञा
compound palatal संयुक्त तालव्य
comporend phonem संयुक्त ध्वनिग्राम
compound preposition संयुक्त पूर्वसर्ग
compound predicate संयुक्त विधेय
compound sentence संयुक्त वाक्य
compound sign संयुक्त चिह्न
compound sound संयुक्त ध्वनि
compound syllable संयुक्ताक्षर
compound tense संयुक्त काल
compound verb संयुक्त क्रिया
compound vowel संयुक्त स्वर
compound word समस्त शब्द, संयुक्त शब्द
concept धारणा, विचार
conceptual धारणात्मक, वैचारिक
concord अन्विति, एकस्वरता, स्वरैकता
concordance अन्विति
concrete मूर्त
concrete noun मूर्तबोधक संज्ञा
concrete sense मूर्त्तभाव, मूर्तार्थ
concrete term मूर्त शब्द
conditional सापेक्ष, सप्रतिबंध, प्रातिबंधिक
conditional clause सोपाधिक उप-

वाक्य, प्रातिबंधिक उपवाक्य या वाक्यांश
conditional mood हेतुहेतुमद्भाव, संकेतार्थ लृङ्, क्रियातिपत्ति
conditional past हेतुहेतुमद्भूत
conditional sentence प्रातिबंधिक वाक्य, सोपाधिक वाक्य, प्रतिबंधात्मक वाक्य
conditional sound change परिस्थितिजन्य ध्वनिपरिवर्तन, सोपाधिक ध्वनि-परिवर्तन
conditional stress प्रतिबद्ध बलाघात
conditional variants प्रतिबद्ध रूपांतर
conformative पुष्टिकारी, समर्थक
congruence संगति, अन्विति
conjugated form तिङन्त
conjugation क्रिया-रूप, तिङन्ती रूप, काल-प्रक्रिया
conjugatonal termination तिङ्
conjunct संयुक्त, संयोजक, संयुक्त व्यंजन
conjunct consonant संयुक्त व्यंजन
conjunct vowel संयुक्त स्वर
conjunction समुच्चयबोधक
conjunctive संयोजक
conjunctive adverb संयोजक क्रिया-विशेषण
conjunctive form समुच्चित रूप
conjunctive mood संभाव्य क्रियार्थ
conjunctive participle पूर्वकालिक कृदन्त
conjunctive pronouns समुच्चित सर्वनाम
conjunctive stem समुच्चित प्रकृति, समुच्चित प्रातिपदिक
connected speech संबद्ध भाषण
connecting vowel योजक स्वर, सेतु-स्वर
connection संबंध, योग
connective conjunction योजक समुच्चयबोधक
connective word संयोजक शब्द, योजक शब्द

connotation अर्थ, अभिधान
consequence clause परिणामी उपवाक्य या वाक्यांश
consonance स्वर-ऐक्य, स्वर-संगति
consonant व्यंजन, हल्
consonantal व्यंजनात्मक, व्यंजनीय
consonantal bases हलन्त प्रकृति, व्यंजनांत
consonantal digraph संयुक्त वर्ण, प्रातिपदिक या द्विवर्ण धातु
consonantal epenthesis व्यंजनीय अपिनिहिति
consonantal glide व्यंजन-श्रुति
consonantal group व्यंजन-वर्ग
consonantal terminations हलन्त प्रत्यय, व्यंजनांत प्रत्यय
consonantal trigraph त्रिवर्ण
consonantal vowel व्यांजनिक स्वर
consonantal writing व्यांजनिक लेखन
consonant cluster व्यंजन-गुच्छ
consonantism व्यंजनत्व, व्यंजन-विज्ञान
consonantization व्यंजनीकरण
constituent अवयव
constricted निकुंचित
constructio ad sensum अर्थानुकूल रचना
construction रचना; अवयवी; वाक्य-विन्यास
construction, active कर्तृवाचक वाक्य-विन्यास या रचना
construction, passive कर्मवाचक वाक्य-विन्यास या रचना
contact संपर्क, स्पर्श, संस्पर्श
contact anticipation पश्चगामी समीकरण
contact phonetic change कारण-जन्य ध्वनिपरिवर्तन, सापेक्ष ध्वनिपरिवर्तन, परोद्भूत ध्वनिपरिवर्तन
contact pregressive assimilation पार्श्ववर्ती पश्चगामी व्यंजन समीकरण

contact progressive assimilation पार्श्ववर्ती पुरोगामी व्यंजन समीकरण
contact sound संपर्कित ध्वनि
contact theory संपर्क सिद्धांत
contact vernacular संपर्क भाषा, संपर्क लोक भाषा
contamination संपर्क-विकार, संपर्क-प्रभाव, मिश्रण
content अंतःतत्त्व
context संदर्भ, परिस्थिति
contextual variant सांदर्भिक रूपाँतर
contingent आपातिक, संभाव्य
contingent future संभाव्य भविष्य
contingent mood संभावनार्थ
contingent perfect पूर्ण संभावनार्थ
continuant सप्रवाह, अव्याहत, अनवरुद्ध
continuative अव्याहत, सप्रवाह
continuative conjunction सप्रवाह समुच्चयबोधक
continuous अविच्छिन्न, अप्रतिहत
continuous writing अविच्छिन्न लेखन
contour tone कंतूर तान, चल तान, चलसुर
contracted sense संकुचित अर्थ
contraction संकोच, संकोचन
contraction of meaning अर्थ-संकोच
contradictory विरोधात्मक, विरोधी
contrast विरोध, व्यतिरेक, वैषम्य
contrastive, व्यतिरेकी, विरोधी
contrastive pair व्यतिरेकी युग्म, विरोधी युग्म
conventional परंपरागत, सांकेतिक
conventional sign सांकेतिक चिह्न
convergence संक्रमण, अभिसरण
conversation बातचीत
conversational बातचीतका, बातचीत-विषयक
co-ordinate समपदस्थ, समान, समाश्रित; समानाधिकरण
co-ordinate alternative conjunction समानाश्रित विकल्पवाची समुच्चयबोधक
co-ordinate adversative conjunction समानाश्रित विरोधवाची समुच्चयबोधक
co-ordinate clause समानाधिकरण उपवाक्य, संयुक्त उपवाक्य
coordinated adjective समानाश्रित विशेषण, समपदस्थ विशषण
coordinating conjunction समानाश्रित समुच्चयबोधक
coordinative conjunction समानाश्रित समुच्चयबोधक
coordinative cumulative conjunction समानाश्रित उपचय समुच्चय बोधक
coordinative illative conjunction समानाश्रित आनुमानिक समुच्चय-बोधक
copula संयोजक, संयोजक क्रिया; विधेयक
copulative संयोजक
copulative compound द्वन्द्व-समास
copulative conjunction समुच्चय-बोधक अव्यय, संयोजक
coronal articulation शीर्ष उच्चारण
correct शुद्ध, साधु
correct form शुद्ध रूप
correctness साधुता, शुद्धता
correlation अन्योन्य संबंध, पारस्परिक संबंध
correlative संबद्ध, संबंधित, अन्योन्याश्रयी
correlative conjunction अन्योन्याश्रयी संयोजक, संकेतवाचक समुच्चयबोधक अव्यय, परस्पर संबद्ध समुच्चय बोधक
correlative phrase अन्योन्याश्रयी वाक्यांश या उपवाक्य
correlative pronoun नित्यसंबंधी सर्वनाम
correlative word अन्योन्याश्रयी शब्द

correspondence अनुरूपता
corresponding अनुरूप
corresponding form प्रतिरूप
corresponding letter प्रतिवर्ण
corresponding sound प्रतिध्वनि
corresponding word प्रतिशब्द
corrupt विकृत, भ्रष्ट, विकसित
corruption भ्रष्टता, विकृति, विकास
counter accent प्रतिस्वराघात,प्रत्याघात
court language राजभाषा
craesis एकादेश, एकीभाव
crest शीर्ष, चोटी, शिखर, केन्द्र
crest of sonority मुखरता-शीर्ष
criteria, phonetic ध्वानिक मापदंड ध्वन्यात्मक मापदंड
criterion मापदंड
culmination पराकोटि
culminative function पराकोटि कार्यकारिता
cultural language सांस्कृतिक भाषा
cultural linguistics सांस्कृतिक भाषाविज्ञान
cultural vocabulary सांस्कृतिक शब्दावली
cultural word सांस्कृतिक शब्द
cultured सुसंस्कृत
cultured language सुसंस्कृत भाषा
cuneiform कीलाक्षर
curled up उत्कुंचित
current प्रचलित, व्यवहृत
current language प्रचलित भाषा, व्यवहृत भाषा
cursive घसीट
cursive writing घसीट लेखन
curtailed word संक्षिप्त शब्द
curvature वक्रता

D

dark अस्पष्ट, अस्फुट, ध्वांत
dark l अस्पष्ट ल, अस्फुट ल, ध्वांत ल
dark vowel अस्पष्ट स्वर, ध्वांत स्वर
dash डैश, निर्देशक रेखा
dative case संप्रदान कारक
dead language मृतभाषा, विलुप्तभाषा
dead metaphor मृत रूपक
deaspiration अल्प प्राणीकरण
declension संज्ञारूप, सुबन्त, कारकरूप
declinable विकारी
declinable particle अनिपाद पद
decline रूप चलाना, कारक रूप चलाना
decompound विग्रह करना
deduction अनुमिति
deep vowel गर्त स्वर, पश्च स्वर
defective सदोष, दोषपूर्ण, त्रुटिपूर्ण
defective phoneme सदोष ध्वनिग्राम
defective verb सदोष क्रिया, दोषपूर्ण क्रिया
defective writing त्रुटिपूर्ण लेखन
definite निश्चयार्थी
definite adjective of number निश्चित संख्यावाचक विशेषण
definite adjective of quantity निश्चित परिमाणवाचक विशेषण
definite article निश्चयार्थी उपपद, निश्चयात्मक उपपद
definite cardinal numeral adjective निश्चयार्थी संख्यावाचक विशेषण
definite conjugation निश्चितार्थी क्रियारूप, निश्चयार्थी क्रियारूप
definite declension निश्चयार्थी संज्ञारूप, निश्चितार्थी संज्ञारूप
definite demonstrative adjective संकेतवाचक विशेषण, निश्चयार्थी वाचक विशेषण
definite future past निश्चयार्थी भविष्य भूत
definite future present निश्चयार्थी भविष्य वर्तमान
definite multiplicative numeral adjective निश्चयार्थी गुणात्मक संख्यावाची विशेषण

definite ordinal numeral adjectives निश्चयार्थी क्रमसंख्यावाचक (विशेषण)

definite past continuous निश्चयार्थी भूत अपूर्ण

definite past perfect continuous निश्चयार्थी पूर्ण अपूर्ण भूत

definite past present निश्चयार्थी भूत वर्तमान

definite perfect past present निश्चयार्थी पूर्णभूत वर्तमान

definite present past निश्चयार्थी वर्तमान भूत

definite tense निश्चयार्थी काल

definite verb निश्चयार्थी क्रिया

definition परिभाषा; लक्षण

degree अंश; मात्रा; अवस्था; कोटि

delabialization अनोष्ठीकरण

delative case अवतरणार्थी कारक

delengthening ह्रस्वीकरण

demarcative function सीमांकन-कार्यकारिता

demonstrative संकेतवाचक

demonstrative adjective संकेत-वाचक विशेषण, संकेत-सूचक विशेषण

demonstrative particle संकेत-वाचक पद, संकेतवाचक निपात

demonstrative pronoun संकेत-वाचक सर्वनाम, निश्चयवाचक सर्वनाम

demotic character डिमॉटिक लिपि

demotic writing डिमाटिक लेखन

denazalization अनासिक्यीकरण

denominative नामधातु

denotation अभिधान

denominative present नामधातुज वर्तमान

denom root नामधातु

dental दन्त्य

dental labio दंतौष्ठ्य

dependent clause आश्रित उपवाक्य

dependent sound change सापेक्ष ध्वनिपरिवर्तन, परिस्थितिजन्य परिवर्तन

derivation व्युत्पत्ति, निर्वचन

derivative साधित, व्युत्पन्न, व्युत्पादित

derivational व्युत्पत्ति-विषयक

derivative noun साधित संज्ञा

derivative verb साधित क्रिया

descriptive वर्णनात्मक, विवरणात्मक

descriptive adjective वर्णनात्मक विशेषण

descriptive adverb वर्णनात्मक क्रियाविशेषण

descriptive grammar वर्णनात्मक व्याकरण

descriptive linguistics वर्णनात्मक भाषाविज्ञान

descriptive morphology वर्णनात्मक रूपविज्ञान

descriptive phonetics वर्णनात्मक ध्वनिविज्ञान

descriptive syntax वर्णनात्मक वाक्यविज्ञान

desiderative सन्नन्त, इच्छाबोधक इच्छार्थक

desiderative compound verb सन्नन्त संयुक्त क्रिया

deteriorative अपकर्षार्थी

deteriorative suffix अपकर्षार्थी प्रत्यय

determinative निर्णयात्मक, निर्णायक, निर्धारक

determinative clause निर्णायक उपवाक्य या वाक्यांश

determinative compound तत्पुरुष समास

deviation अपसरण, व्यतिक्रम

device युक्ति

devocalization अघोषीकरण

devoiced अघोष

diachronic ऐतिहासिक

diachronic grammar ऐतिहासिक

व्याकरण
diachronic linguistics ऐतिहासिक भाषाविज्ञान
diachronic phonetics ऐतिहासिक ध्वनिविज्ञान, ध्वनिप्रक्रिया विज्ञान
diacritical mark विशेषक चिह्न
diacritic mark विशेषक चिह्न
diacritic sign विशेषक चिह्न
diagraph द्विवर्ण, द्विग्राह, द्विवर्णग्राह
dialect बोली
dialectal बोलीय, बोलीगत
dialect area बोली क्षेत्र
dialect atlas बोली एटलस
dialect geography बोली भूगोल
dialect local स्थानीय बोली
dialectology बोली-विज्ञान
dialect range बोली परिधि
diaphone प्रध्वनि, विपुस्वन
diaphonic variants प्रध्वनीय अंतर विपुस्वनीय भेद
diction शब्द-चयन
dictionary शब्दकोश
dieresis विप्रकर्ष स्वरभाजक
difference व्यतिरेक, भेद, अन्तर
differentiation भेदीकरण
different phonemic environment भिन्न ध्वनिग्रामिक परिवेश
digetal language अंकभाषा
digraph द्विवर्ण, द्विलिपि
dimetrism द्विमात्रिकता
diminutival force अल्पार्थकीय बल
diminutival sense अल्पार्थ
diminutive अल्पार्थक, लघ्वर्थक, लघुत्वार्थक
diminutive aspect अल्पार्थी पक्ष
diminutive suffix अल्पार्थी प्रत्यय
ding-dong theory डिंग-डांगवाद
diphthong संयुक्त स्वर, संध्यक्षर
diphthongisation संध्यक्षरीकरण
diplomatic edition यथावत् अनुलिपि
diplomatic transcription यथावत् अनुलिपि
direct मूल, अविकारी, प्रधान
direct case मूल कारक, कर्ताकारक
direct form मूल रूप, प्रधान रूप, अविकारी रूप
direct narration साक्षातुक्ति
direct object मुख्य कर्म, प्रधान कर्म, प्रत्यक्ष कर्म
direct question प्रत्यक्ष प्रश्न
direct quotation यथावत् उद्धरण
directive case अर्थार्थी कारक
disagreement अन्वयाभाव, अनन्वय
disappearance लोप, अन्तर्धान, तिरोभाव
disguised प्रच्छन्न
disintegrated sound विकलित ध्वनि
disintegration भेदीकरण, विखंडन
disjunction वियोजन
disjunctive conjunction वियोजक समुच्चयबोधक
disjunctive sentence वियोजक वाक्य
dislocation अपसरण
displaced speech अस्थानीकृत भाषा
displacement अपसरण, अस्थानीकृत बोली
displacement of meaning अर्थादेश, अर्थापसरण
dissimilar विषम, असमान
dissimilation विषमीकरण, असमानीकरण
dissonance ध्वनि-वैषम्य, विस्वनता
dissyllabic द्वयाक्षरी, द्वयक्षरात्मक
distant assimilation दूरवर्ती समीकरण
distinction of meaning अर्थभेद
distinctive सुस्पष्ट, विशेषक तत्त्व
distinctive element विशेषक तत्त्व
distinctive feature विशेष लक्षण, विशेषक लक्षण

distinctive function विशेषक कार्यकारिता
distinctive phenomenon सुस्पष्ट, अनुलक्षण
distinguished महत्त्वपूर्ण
distraction संप्रसारण
distribution वितरण, बंटन
distributional वितरणात्मक
distributional analysis वितरणात्मक विश्लेषण
distributional description वितरणात्मक वर्णन
distribution, complementary परिपूरक वितरण, पूरक वितरण, पूरक बंटन
distribution exclusive अनन्य वितरण, अपवर्जी वितरण
distribution free मुक्त वितरण, अबाध वितरण
distributive adjective वितरणात्मक विशेषण
distributive aspect वितरण पक्ष
distributive numeral वितरणात्मक संख्यावाचक
disuse अप्रचलन, प्रयोगाभाव
divergence विभेद, अपसरण, व्युत्क्रमण
divergence dialectical बोलीगत विभेद
divergent अपसारी, व्युत्क्रांत
divergents संध्वनि, ध्वन्यंग, संस्वन
diversity भिन्नता, विभिन्नता
diversity, dialectal बोलीगत विभिन्नता
divided विभक्त
divided consonant विभक्त व्यंजन
divine origin दिव्य उत्पत्ति
divine theory दैवी सिद्धान्त
division विभाजन
doctrine वाद, सिद्धान्त, मत
document प्रलेख, दस्तावज
domesticated word गृह्य शब्द
dorsal पृष्ठ, पृष्ठीय
dorsum पृष्ठ
double द्वि, द्विगुण, द्विगुणित, द्वित्व
double consonant द्वित्व-व्यंजन
double letter द्वित्व-वर्ण
double negative द्विगुणित नकारात्मक
double plural द्विगुणित बहुवचन
doublet एकमूलीय भिन्नार्थक शब्द, द्वित्तक, युग्मक
doubling द्वित्व
doubtful सन्दिग्ध
doubtful origin सन्दिग्ध व्युत्पत्ति
doubtful past सन्दिग्ध भूत
doubtful present संदिग्ध वर्तमान
drift अपसरण
dual द्विवचन
dual number द्विवचन
duplicaled aorist द्विगुणीकृत लुङ
duplicated verb साभ्यास क्रिया
duplicated word आवृतिवाचक द्विरुक्तिवाचक
duplication पुनरुक्ति, अभ्यास, द्विगुणन
duration मात्रा, मात्राकाल
durative सप्रवाह, अव्याहत, ऊष्म
dynamic चल
dynamic accent चल बलाघात
dynamic linguistics विकासात्मक भाषाविज्ञान, ऐतिहासिक भाषाविज्ञान, चल भाषाविज्ञान

E

eardrum कर्णशष्कुली, कर्णपटह
echo प्रतिध्वनि, अनुरणन
echoic theory प्रतिध्वनि सिद्धांत, ध्वन्यनुकृतिमूलक सिद्धांत
echoism प्रतिध्वनन, अनुकार
echo-word प्रतिध्वन्यात्मक शब्द, प्रतिध्वनि शब्द
eclipsis व्यंजनलोप; अनुनासिकीकरण
economy of effort प्रयत्न लाघव
ecphoneme विस्मयादिबोधक चिह्न
ecthlipsis व्यंजन लोप

effective aspect प्रभावक पक्ष
effort प्रयत्न
ejective consonant उद्गार व्यंजन
ejective stop उद्गार स्पर्श
elastic लचीला
elative case बहिरर्थी कारक
element तत्त्व, अंश
elements of a sentence वाक्यावयव
elimination निष्कासन
elision लोप, ध्वनि लोप
ellipsis शब्दलोप, पदलोप, शब्द-लोप-चिह्न, अध्याहार
ellipsis of clause वाक्यांश-अध्याहार, वाक्यांश-लोप
elliptical लुप्तांश, लुप्तावयव, अध्याहारयुक्त
elliptical form अध्याहारित रूप, लुप्त रूप
elliptical construction अध्याहारित रचना
emotion मनोभाव, भाव, आवेग
emotional भावात्मक आवेगात्मक, मनोभावात्मक
emotional emphasis भावात्मक बल
emotive भावोत्तेजक
emotive speech भावोत्तेजक भाषा
emotive style भावोत्तेजक शैली
emphasis बल
emphatic बलात्मक
emphatic articulation बलात्मक उच्चारण
emphatic mood बलात्मक क्रियार्थ
emphatic pronoun बलात्मक सर्वनाम
empirical प्रयोगाश्रित
empirical knowledge प्रयोगाश्रितज्ञान
empty word रिक्त शब्द, अर्थहीन शब्द
enclisic अनुलग्न उच्चारण, पश्चाश्रयी उच्चारण
enclitic पश्चाश्रयी, अनुलग्न शब्द
enclitic affix पश्चाश्रयी, पूर्व प्रत्यय
end अंत
ending प्रत्यय, विभक्ति
ending, case कारक विभक्ति
ending vowel अन्त्य स्वर
endocentric अंतःकेन्द्रिक, अंत्यकेन्द्रिक
endocentric construction अंतःकेन्द्रिक रचना
enigma पहेली, प्रहेलिका
endophasia आंतरिक भाषा, अनुच्चरित भाषा
energetic mood बलात्मक क्रियार्थ
enlarged वर्द्धित, विस्तृत
enlargment वर्द्धन, विस्तार, वृद्धि
enlarging वृद्धिकरण, वर्द्धन
entering tone प्रवेशमुखी सुर
enumeration परिगणन, परिगणना
enumerative गणनात्मक
environment परिवेश, परिसर, वातावरण
epanalepsis पुनरुक्ति, शब्द-पुनरुक्ति, शब्दाभ्यास
epenthesis अपिनिहिति, समस्वरागम, ध्वनि-सन्निवेश
epenthetic-vowel अपिनिहित स्वर
epenthetic word अपिनिहित शब्द
epicene द्विलिंगी, उभयलिंगी
epiglottis स्वरमुखावरण, अभिकाकल, स्वरयंत्रच्छद
epigraphical अभिलेखात्मक
epigraphy पुरालेख शास्त्र, अभिलेख-शास्त्र, शिलालेख शास्त्र, अभिलेख विद्या
epise.neme अर्थग्राम
epithesis अंत्ययोग
epithet विशेषतासूचक, गुणसूचक
eponym आधारनामी, आधार नाम
equal समान, बराबर, सम
equal clause समान उपवाक्य
equation समीकरण
equational समीकरणात्मक
equation, etymological व्युत्पत्ति-

मूलक समीकरण
equative case समानार्थी कारक
equative degree समकोटि, समश्रेणी
equilibrium साम्य, समत्व
equivalent समानार्थी, एकार्थी पर्याय
ergative case अप्रत्यक्ष कर्तृ कारक
estimate अनुमान
ethnolinguistics नृवंशीय भाषाविज्ञान, जाति भाषा विज्ञान
ethnology नृवंश विज्ञान
etymological व्युत्पत्तिमूलक, व्युत्पत्तीय
etymological doublets व्युत्पत्ति-मूलक द्वित्तक
etymology व्युत्पत्ति, निरुक्त, उत्पत्ति, शब्द विचार, शब्दसाधन, पद साधन, व्युत्पत्ति शास्त्र, व्युत्पत्तिविज्ञान
etymon मूल, शब्द-मूल
euphemism मंगलाभिव्यक्ति, मंगल-भाषित, शिष्ट भाषित, मंगल प्रयोग, मधुर भाषित
euphonic सुस्वर, श्रुतिमधुर, उच्चारण-सुकर
euphonic combination संधि
euphonic glide उच्चारण-सुकर-श्रुति
euphony ध्वनिमाधुर्य
even tone समसुर
evolution विकास
evolutionary linguistics विकासात्मक भाषाविज्ञान
exact science निश्चयात्मक विज्ञान
exaggerated अतिशयोक्तिपूर्ण
exception अपवाद
exceptional अपवादात्मक
exchange विनिमय
exclamation विस्मयादि सूचक, विस्मयादि बोधक
exclamation mark विस्मयादिबोधक चिह्न
exclamatory pitch विस्मयादिबोधक सुर, भावमूलक सुर
exclamatory pronoun उद्गार-वाचक सर्वनाम, विस्मयादिबोधक सर्वनाम
exclamatory sentence उद्गार-वाचक वाक्य, विस्मयादिबोधक वाक्य
exclamatory sign उद्गार चिह्न
exclamatory sound उद्गार ध्वनि विस्मयादिबोधक ध्वनि
exclusion बहिष्करण
exclusive personal pronoun अनंत-र्भावी पुरुषवाचक सर्वनाम, असमावेशी पुरुषवाचक सर्वनाम
exclusive relationship परिपूरक वितरण
excrescent आगत ध्वनि
exhale निःश्वास
exocentric construction बहिष्के-न्द्रिक रचना, बहिष्केन्द्री रचना
exogenous बाह्याधारित, बाह्यजन्य
exophasia उच्चरित भाषा, श्रुत भाषा बाह्य भाषा
expansion विस्तार
expansion of meaning अर्थविस्तार
experiential word अनुभूत शब्द
experiment प्रयोग
experimental प्रायोगिक
experimental phonetics प्रायोगिक ध्वनिविज्ञान
expiration निःश्वास
expiratory stress बलाघात
explanative particle व्याख्यात्मक व्याकरण
explanatory grammar व्याख्यात्मक व्याकरण
expletive नियमपूरक
exploded stop पूर्ण स्पर्श, स्फोटित स्पर्श
explosion स्फोट, स्फोटन
explosive स्फोटात्मक स्पर्श, बहिःस्फोटक
expression अभिव्यक्ति
expressive व्यंजक, अभिव्यंजक
extension विस्तार

extension of meaning अर्थ-विस्तार
extension of predicate विधेयकका विस्तार
external difference बाह्यभेद
external hiatus बाह्य स्वर विच्छेद
external inflectional बहिर्मुखीश्लिष्ट
external open juncture बाह्य मुक्त संगम
external punctuation marks वाक्यांत विरामचिह्न
external reconstruction बाह्य पुनर्निर्माण
extinct language लुप्त भाषा, विलुप्त भाषा, मृतभाषा
extra length अतिरिक्त दीर्घता
eye-picture दृष्टि-चित्र

F

fact तथ्य
factitive प्रेरणार्थक
factive case परिवर्तार्थी कारक
fact mood तथ्यार्थ, निश्चयार्थ
factor उपकरण
fallacy भ्रांति
falling diphthong अवरोही संयुक्त-स्वर, अधोगामी संयुक्त स्वर
falling tone अवरोही सुर
false analogy मिथ्या सादृश्य
false palate कृत्रिम तालु
false vocal cards मिथ्या स्वरतंत्री
familiar form सामान्य रूप, अनौपचारिक रूप
familiar style सामान्य शैली, सामान्य अभिव्यक्ति
family परिवार, वंश, कुल
family of languages भाषा-परिवार
family of speech भाषा-परिवार
family tree वंशावली, वंश-वृक्ष
fatuous theory अनर्गल सिद्धान्त
faucal कंठ्य
fauces मुख-विवर, तालु-चाप
faucescal तालु-चापीय
feature लक्षण, विशेषता, विशेष लक्षण
feminine स्त्रीलिंग
feminine affix स्त्री प्रत्यय, स्त्री-अनुबंध
feminine, double द्विगुणीकृत स्त्रीलिंग
feminine suffix स्त्रीलिंग प्रत्यय, स्त्रीलिंग पर-प्रत्यय
feminization स्त्रीलिंगीकरण
fertile suffix उर्वर प्रत्यय
field method क्षेत्र-पद्धति, सर्वेक्षण-पद्धति
field work क्षेत्र-कार्य, सर्वेक्षण-कार्य
figurative idiom रूपकयुक्त मुहावरा
figurative meaning लाक्षणिक अर्थ, रूपकाश्रित अर्थ
figure अलंकार, लाक्षणिक प्रयोग
figure of etymology अलंकार, लाक्षणिक प्रयोग
figure of rhetoric अलंकार, लाक्षणिक प्रयोग
figure of speech अलंकार, लाक्षणिक प्रयोग
final अंतिम, अंत्य
final accent अंत्य आघात, अंत्य बलाघात, अंत्य स्वराघात
final glide अंत्य श्रुति
final stress अंत्य बलाघात
final vowel अंत्य स्वर
finite form समापक रूप, समापिका क्रिया
finite mood समापक क्रियार्थ
finite verb समापिका क्रिया
first प्रथम
first causal प्रथम प्रेरणार्थक
first form प्रथम रूप
first-future लुट्लकार, अनद्यतन भविष्य
first participle वर्तमानकालिक कृदंत, प्रथम कृदंत
first person उत्तम पुरुष
first sound shifting प्रथम वर्ण-परिवर्तन
fixed स्थिर, अचल, निश्चित

fixed accent स्थिर स्वराघात, अचल बलाघात
fixed formula निश्चित सूत्र
fixed stress अचल बलाघात, स्थिर बलाघात, निश्चित बलाघात
fixed word order स्थिर पद-क्रम निश्चित पद-क्रम
flap उत्क्षेप
flapped उत्क्षिप्त, ताड़ित, ताड़नजात, लघ्वाघात
flash of meaning अर्थ-स्फोट
flection रूप, रूपांतर
flexible लचीला
flexion रूप, रूपांतर
flexional रूप-विषयक
flexional language रूपांतरयुक्त भाषा
floating element प्लवमान तत्त्व
flow गति
folk etymology लौकिक व्युत्पत्ति, भ्रामक व्युत्पत्ति
folk lore लोकवार्ता
food passage अन्न-मार्ग
food pipe भोजन-नलिका
force, breath श्वास-शक्ति
foreign विदेशी, विजातीय, आगत, गृहीत
foreign element विजातीय तत्त्व
foreignism विदेशीयता, विजातीयता
foreign language विदेशी भाषा; अन्य भाषा
foreign words विदेशी शब्द, विजातीय शब्द, आगत शब्द, गृहीत शब्द
form रूप
formal form औपचारिक रूप
formal grammar औपचारिक रूपीय व्याकरण
formal language औपचारिक भाषा
formal speech औपचारिक भाषा
formation, back पश्च-रचना, पश्चगामी रचना
formative रचनात्मक
formative affix रचनात्मक प्रत्यय रचनात्मक अनुबन्ध
formative element रचनात्मक तत्त्व
form-building रूप रचना
form-class रूप वर्ग
formless रूपविहीन, रूपशून्य
formless language वियोगात्मक भाषा, स्थान-प्रधान भाषा
form, original प्रकृति, मूल, मूलरूप
form, strong सबल रूप, सशक्त रूप
formula सूत्र
form, weak निर्बल रूप, अशक्त रूप
forte दृढ़ता, दृढ़तासे
fortis दृढ़, सशक्त, दृढ़ोच्चरित व्यंजन
fortunatov law फ़ार्तुनेतोफ़ नियम
fossil form अवशिष्ट रूप
fossilized अश्मीभूत, प्राचीन, अप्रचलित
fractional numeral अपूर्ण संख्यावाचक विशेषण
fracture स्वर-भंग
free accent मुक्त स्वराघात
free form मुक्त रूप, निरपेक्षरूप
free morpheme मुक्त रूपग्राम
free particle शुद्ध निपात अव्यय
free phoneme मुक्त ध्वनिग्राम
free stress मुक्त बलाघात
free syllable मुक्ताक्षर, स्वरांताक्षर
free translation भावानुवाद, मुक्तानुवाद
free variant वैकल्पिक रूप, मुक्त रूपांतर, वैकल्पिक ध्वनि, मुक्त परिवर्तन
free variation मुक्त प्रयोग, वैकल्पिक प्रयोग, मुक्त परिवर्तन, स्वच्छन्द परिवर्तन
free word accent मुक्त शब्द-स्वराघात
free word order मुक्त पदक्रम
frequency आवृत्ति, बारंबारता
frequency curve आवृत्ति-वक्र, बारंबारता-वक्र
frequency of cycle चक्र-संख्या, चक्रावृत्ति

frequency vibration कंपन-संख्या, कंपनावृत्ति
frequentative यङन्त, पौनःपुन्यात्मक, बारंबारता सूचक
frequentative aspect यङन्त पक्ष, पौनःपुन्यात्मक पक्ष
frequentative verb यङन्त क्रिया, पौनःपुन्यात्मक क्रिया
fricative संघर्षी
friction घर्षण
front अग्र
frontal अग्रजिह्वोच्चरित
fronted अग्रीकृत, अग्रित
front of the tongue जिह्वाग्र
front vowel अग्र स्वर
full contact पूर्ण स्पर्श
full reduplication पूर्ण द्विरुक्ति
full sentence पूर्ण वाक्य
full stop पूर्ण विराम
full word पूर्ण शब्द, अर्थपूर्ण शब्द
function कार्य, कार्यकारिता, प्रकार्य
functional कार्यकारी, प्रकार्यकारी, कार्यात्मक, प्रकार्यकर, कार्याधारित
functional and structural theory कार्यात्मक एवं संरचनात्मक सिद्धांत
functional centre शीर्ष, चोटी, केन्द्र
functional change प्रकार्यकारी परिवर्तन, कार्याधारित परिवर्तन
functional form प्रकार्यकर रूप, कार्यकारी रूप
functional linguistics प्रकार्यात्मक भाषाविज्ञान
functional phonetics प्रकार्यात्मक ध्वनिविज्ञान, ध्वनिग्रामविज्ञान
fundamental आधारभूत, मूलभूत
fusion मिश्रण, विलयन
futhark रूनिक लिपि
future भविष्यत्, भविष्य
future anterior पूर्ण भविष्य
future conjunctive संभाव्य भविष्य
future imperative भविष्य आज्ञार्थ, आज्ञात्मक भविष्य
future imperfect indicative अपूर्ण निश्चयार्थी भविष्य
future indicative निश्चयार्थ भविष्य, सामान्य भविष्य
future tense भविष्यत् काल, भविष्यकाल
future participle भविष्य कृदंत
future perfect पूर्ण भविष्य
future perfect indicative पूर्ण निश्चयार्थ भविष्य
future periphrastic पल्लवित भविष्य, वियोगात्मक भविष्य

G

gaelic गेली प्रयोग
gemination द्वित्व, द्वित्त व्यंजन
gender लिंग
genderless निर्लिङ्गी, लिंगविहीन
genderless language निर्लिङ्गी भाषा
genderless noun निर्जीव संज्ञा
gender noun लिंगार्थी संज्ञा
genealogical वंश-क्रमात्मक
genealogical classification पारिवारिक वर्गीकरण, वंशानुक्रमिक वर्गीकरण
genealogy वंश-क्रम
genemmic phonetics ध्वानिकी
general सामान्य
general accent सामान्य स्वराघात
general coherence सामान्य सामंजस्य
general grammar सामान्य व्याकरण
generalisation साधारणीकरण
general language सामान्य भाषा
generation पीढ़ी
generic सामान्यकारी
generic term सामान्य शब्द
generous plural द्विगुणित बहुवचन
genetic classification उत्पत्तिमूलक वर्गीकरण
genetic phonetics औच्चारणिक भाषाविज्ञान

genetic relationship उत्पत्ति मूलक संबंध
genitive संबंध षष्ठी
genitive case संबंध कारक, षष्ठी कारक, षष्ठी विभक्ति
genitively dependent compound षष्ठी समास, संबंधाश्रित समास
genitive postposition संबंधवाचक परसर्ग, संबंधबोधक परसर्ग
genus जाति
geographical linguistics भौगोलिक भाषाविज्ञान
gerund तुमन्त, संज्ञार्थक क्रिया, क्रिया-निष्पन्न संज्ञा, धातु-साधित संज्ञा
gerundial तुमन्त
gerundial infinitive क्रिया निष्पन्न संज्ञा तुमन्त, तुमुनन्त
gerundive तुमन्त, क्रियात्मक विशेषण
gerundive suffix कृत्य
gerundive form क्रिया निष्पन्न संज्ञा-रूप, धातु-साधित संज्ञारूप
gestural theory इंगित सिद्धान्त
gesture इंगित, संकेत
gesture language सांकेतिक भाषा
ghost-form अशुद्धिजन्य रूप
ghost-word अशुद्धिजन्य शब्द
gingival वर्त्स्य
glide श्रुति
glide-vowel श्रुति स्वर
gliding vowel श्रुतियुक्त स्वर
gloss अर्थ, पार्श्वार्थ
glossary शब्द समूह, शब्द संग्रह
glossematics ग्लॉसीम विज्ञान
glosseme ग्लॉसीम
glossolalia विक्षिप्त-भाषा.
glossology भाषाविज्ञान, अर्थविज्ञान अर्थतत्त्व
glottal स्वर-यंत्र-मुखी; स्वर यंत्र स्थानीय, काकल्य, उरस्य, कंठद्वारीय
glottal catch स्वरयंत्रमुखी स्पर्श
glottal chord स्वरतंत्री
glottal closure अलिजिह्वीय संवृति
glottalized काकल्यीकृत, कंठमूलीकृत
glottalized stop उद्गार व्यंजन
glottal plosive काकल्य स्पर्श, स्वरयंत्रमुखी स्पर्श
glottal spirant स्वरयंत्रमुखी संघर्षी काकल्य घर्ष
glottal stop काकल्प स्पर्श, स्वरयंत्रमुखी स्पर्श
glottal vibration स्वरयंत्रमुखी कंपन
glottis काकल, स्वरयंत्रमुख, कंठद्वार
glottochronology भाषा-कालक्रम-विज्ञान
glottology भाषाविज्ञान
govern नियंत्रित करना
governed word नियंत्रित शब्द
governing word नियंत्रक शब्द
government नियंत्रण
gradation अपश्रुति
gradation of sound ध्वनि-अपश्रुति
grade श्रेणी, कोटि
grade, high उच्च श्रेणी, उच्चावस्था, उच्चकोटि
gradual क्रमिक
grammar व्याकरण
grammarian वैयाकरण, व्याकरणकार
grammatical व्याकरणात्मक, व्याकरण-मूलक, व्याकरणिक
grammatical agreement अन्वय, अन्विति, व्याकरणिक अन्विय
grammatical analysis व्याकरणिक विश्लेषण.
grammatical category व्याकरणिक प्रवर्ग, व्याकरणिक श्रेणी
grammatical element व्याकरणिक तत्त्व
grammatical equivalent व्याकरणिक पर्याय
grammatical form व्याकरणिक रूप

grammatical gender व्याकरणिक लिंग
grammatical meaning व्याकरणिक अर्थ
grammatical order व्याकरणिक क्रम
grammatical stress व्याकरणिक बलाघात
grammatical structure व्याकरणिक संरचना
grammatical terminology व्याकरणिक पारिभाषिक शब्द
grammatology लिपिविज्ञान
grapheme लिपिग्राम, वर्णग्राम
graphemics लिपिग्राम विज्ञान, लिपिविज्ञान
graphic accent विशेषक चिह्न, चिह्नित स्वराघात
graphonomy लिपिग्राम विज्ञान, लिपि विज्ञान
grassmans law ग्रैसमैन-नियम
grave अनुदात्त
grave accent अनुदात्त स्वराघात
grimm's law ग्रिम-नियम
grooved fricative उत्थित पार्श्व संघर्षी
groove-spirant नद संघर्षी
group वर्ग, गण
gullet भोजन नलिका
gum मसूड़ा, वर्स्स
gun grade गुण श्रेणी
guttar कंठ
guttural कंठ्य,
gutturo-labial कंठौष्ठ
gutturo-palatal कंठ-तालव्य

H

hammer and anvilहथौड़ा औरनिहाई
hamza स्वरयंत्रमुखी स्पर्श, हमज़ा
hand लेखन
half अर्द्ध, आधा
half-bound अर्द्ध ब्रद्ध
half-close अर्द्ध संवृत
half-closed अर्द्ध संवृत
half-free अर्द्ध मुक्त
half-length अर्द्ध दीर्घत्व
half-long अर्द्ध दीर्घ, ईषत् दीर्घ
half-open अर्द्ध विवृत
half-plosive अर्द्ध स्पर्श
half-short ह्रस्वार्द्ध
haplography समध्वनि लुप्त लेखन
haplology समध्वनि लोप, समाक्षर लोप
hard अघोष, कठोर
hard consonant अघोष व्यंजन
hard palate कठोर तालु
hard sign कठोर चिह्न
harmony सामंजस्य, संगति
harmony of vowels स्वर-संगति, स्वर-सामंजस्य
harmony-mutation ससामंजस्य अभिश्रुति
heaviness उदात्तत्व
helper verb सहायक क्रिया, सहकारी क्रिया
hesitation-form द्विधा रूप
hesitation sound द्विधा ध्वनि
heteroclite अपवाद
heteronomous sound change परिस्थितिजन्य ध्वनि परिवर्तन, सापेक्ष ध्वनि परिवर्तन
hetero-organic भिन्न स्थानीय
heterosyllabic भिन्नाक्षरी
hiatus विवृत्ति, स्वरविच्छेद
hieratic writing हिरेटिक लेखन
hieroglyphic character चित्रलिपि, सांकेतिक लिपि
hieroglyphic writing चित्रलिपि, सांकेतिक लिपि
high उच्च
high-back vowel उच्च पश्च-स्वर
high caste noun उच्चवर्गीय संज्ञा
higher उच्चतर
high falling accent उच्चावरोही स्वराघात

high german उच्च (या दक्षिणी) जर्मन
high grade उच्च श्रेणी, उच्चावस्था
higher low उच्चतर निम्न
higher mid उच्चतर मध्य
high pitch उच्च स्वर, उच्च सुर, उदात्त
high pitch accent उदात्त
hissing sound सीत्कार ध्वनि, शीत्कार ध्वनि
history इतिहास
historical ऐतिहासिक
historical classification ऐतिहासिक वर्गीकरण, पारिवारिक वर्गीकरण
historical etymology ऐतिहासिक व्युत्पत्ति
historical grammar एतिहासिक व्याकरण
historical linguistics ऐतिहासिक भाषाविज्ञान
historical morphology ऐतिहासिक रूपविज्ञान
historical phonetics ऐतिहासिक ध्वनि-विज्ञान, ध्वनि प्रक्रिया विज्ञान
historical present ऐतिहासिक वर्तमान
historical syntax ऐतिहासिक वाक्य-विज्ञान
historical tenses ऐतिहासिक काल
hole रिक्ति, अभाव, कमी
hole in the pattern ढांचेमें रिक्ति
holophrase एकशब्दीय वाक्य, एक-शब्दीय वाक्यांश
holophrasis एकशब्दीय अभिव्यक्ति
holophrastic अव्यक्त योगात्मक
holophrastic stage अव्यक्त योगात्मकावस्था
home language घरेलू भाषा
homogeneous सजातीय
homonym समानाकार
homo-organic समस्थानीय, सवर्ण, तुल्यस्थानीय समकरण, एककरण
homophone समध्वनि, समध्वनीय भिन्नार्थक शब्द, समस्वन
homophony समस्वनता, समध्वनित्व
honorific आदरार्थक, आदरवाचक
honorific affix आदरवाचक प्रत्यय या अनुबंध
honorific form आदरवाचक रूप
honorific pronoun आदरवाचक सर्वनाम
honorific second person आदर-वाचक मध्यम पुरुष
horizontal आड़ा, बेंड़ा
hushing sound तालव्य ऊष्म
hybrid संकर, मिश्र, मिश्रित
hybridized मिश्रित, संकरित
hybridization मिश्रण, संकरण
hybrid formation मिश्र रचना, संकर रचना
hybrid language मिश्रित भाषा, मिश्र भाषा
hybrid word संकर शब्द, द्विज शब्द
hyperbatic शब्दक्रम विपर्यस्त
hyperbaton शब्दक्रम विपर्यय
hyperbole अत्युक्ति, अतिशयोक्ति
hyphen योजक चिह्न, संयोजक रेखा
hypothesis कल्पना, उपकल्पना, अनु-मान, सिद्धान्त
hypothetical अनुमानसिद्ध, काल्पनिक, अनुमानाधारित
hypothetical clause प्रातिबंधिक उपवाक्य, प्रातिबंधिक वाक्यांश
hypothetical conjunction प्राति-बंधिक समुच्चयबोधक
hypothetical language काल्पनिक भाषा, कल्पित भाषा

I

idea विचार, भाव
ideal आदर्श
identic समान, अभिन्न, समरूप, एकरूप
identical समान, अभिन्न, समरूप, एकरूप
identity पहचान, एकरूपता, अभिन्नता
ideogram भावलिपि, भावचित्र

ideograph भावलिपि, भावचित्र
ideographic symbol भावसूचक प्रतीक
ideographic writing भावमूलक लिपि
idiolect व्यक्ति-बोली, व्यक्ति-भाषा
idiom मुहावरा, भाषा, बोली
idiomatic मुहावरेदार
idiomatic expression मुहावरेदार अभिव्यक्ति
idiomatic usage मुहावरेदार प्रयोग
illative case प्रवेशार्थी कारक
illative conjunction परिणामदर्शक समुच्चयबोधक अव्यय
illiterate अशिक्षित, अनपढ़
illusion भ्रांति
illusory भ्राँतिपूर्ण, मिथ्या
illustration उदाहरण
image बिंब
imaginary काल्पनिक
imitational अनुकरणात्मक
imitative अनुकरणात्मक
imitative word अनुकरणात्मक शब्द, अनुकार शब्द
immediate constituent निकटतम अवयव, निकटस्थ अवयव
immediate future आसन्न भविष्य, तात्कालिक भविष्य
immigrant language आप्रवासी भाषा
imperative form आज्ञासूचक रूप
imperative mood लोट्, अनुज्ञा, आज्ञार्थ, आज्ञा
imperative proethnic प्रोथेनिक आज्ञासूचक
imperative sentence आज्ञासूचक वाक्य
imperative verb आज्ञासूचक क्रिया
imperative verb causative प्रेरणार्थक आज्ञासूचक क्रिया
imperfect articulation अपूर्ण उच्चारण, अभिनिधान
imperfect imitation अपूर्ण अनुकरण
imperfect participle अपूर्ण कृदंत
imperfect tense अपूर्ण काल, लङ्, अनद्यतन भूत
imperfective अपूर्ण, अपूर्णार्थी
imperfective aspect अपूर्ण पक्ष
impersonal अवैयक्तिक, भावबोधक, पुरुषशून्य
impersonal use भावेप्रयोग
impersonal verb भाववाचक क्रिया
impersonal voice भाव वाच्य
implication निहितार्थ
implied विवक्षित, निहित, उपलक्षित
implosion अन्तःस्फोट, स्फोट
implosive अन्तःस्फोटात्मक
implosive consonant अन्तःस्फोटात्मक व्यंजन, अंतर्मुखी व्यंजन
improper compound अपूर्ण समास
improper triphthong त्रिस्वर, अपूर्ण त्रिस्वर
impure language मिश्रित भाषा, संकर भाषा
inactive voice अकर्तृ वाच्य
inanimate अचेतन, निर्जीव
inanimate gender अचेतन लिंग, निर्जीव लिंग
inanimate noun अप्राणीवाचक संज्ञा
inarticulate sound अव्यक्त ध्वनि
incapsulating language समास-प्रधान भाषा
incapsulation समास
inchoative verb प्रारंभात्मक क्रिया
inclusion अन्तर्भाव, समावेश
inclusive साकल्यवाचक
inclusive personal pronoun अंतर्भावी पुरुषवाचक सर्वनाम, समावेशी पूर्णवाचक सर्वनाम
inclusive pronoun साकल्यवाचक सर्वनाम
incomplete अपूर्ण
incomplete diphthong अपूर्ण

संयुक्तस्वर
incomplete root अपूर्ण धातु
incomplete stop अपूर्ण स्पर्श
incomplete verb अपूर्ण क्रिया
incongruity असंगति, असादृश्य, विषमता
incongruous असंगत, विषम
inconsistant असंबद्ध
incontact progressive assimilation दूरवर्ती पुरोगामी समीकरण
incontact regressive assimilation दूरवर्ती पश्चगामी समीकरण
incontiguous assimilation असंलग्न समीकरण
incorporated phrase प्रश्लिष्ट-वाक्यांश, समासप्रधान वाक्यांश
incorporating प्रश्लिष्ट, योगात्मक, समासप्रधान
incorporative प्रश्लिष्ट, समासप्रधान
incorrect अशुद्ध
increase वृद्धि
indeclinable अव्यय, अविकारी
indeclinable past participle अविकारी भूत कृदंत
indefinite अनिश्चित, अनिर्दिष्ट; सामान्य; अनिश्चयात्मक
indefinite adjective of number अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण
indefinite adjective of quantity अनिश्चित परिमाणवाचक विशेषण
indefinite article अनिश्चयात्मक उपपद
indefinite cardinal numeral adjective अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण
indefinite demonstrative adjective अनिश्चित संकेतवाचक विशेषण
indefinite demonstrative pronoun अनिश्चित संकेतवाचक सर्वनाम
indefinite future past अनिश्चितार्थी भविष्य-भूत
indefinite future present अनिश्चितार्थी भविष्य वर्तमान
indefinite numeral adjective अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण
indefinite past continuous अनिश्चित अपूर्ण भूत
indefinite past perfect continuous अनिश्चित पूर्णापूर्ण भूत
indefinite past present अनिश्चित भूत वर्तमान
indefinite perfect past present अनिश्चित पूर्ण भूत वर्तमान
indefinite present continuous अनिश्चित अपूर्ण वर्तमान
indefinite pronoun अनिश्चयवाचक सर्वनाम
indefinite tense अनिश्चित काल
indefinite verb अनिश्चित क्रिया
independent clause स्वतंत्र उपवाक्य, स्वतंत्र वाक्यांश
independent element स्वतंत्र एकांश, स्वतंत्र इकाई, स्वतंत्र तत्त्व
independent vowel glide स्वतंत्र स्वरश्रुति
indexing शब्दानुक्रमणी
indicative निर्देशात्मक, निर्देशक
indicative mood निश्चयार्थ निर्देशक क्रियार्थ
indicative preterite भूत निश्चयार्थ
indicative, thematic आदिष्ट निश्चयार्थ
indirect अप्रत्यक्ष, असाक्षात्, परोक्ष, गौण
indirect object अप्रत्यक्षकर्म, अप्रमुख-कर्म, गौणकर्म
indirect narration असाक्षादुक्ति
individual व्यक्ति, व्यक्तिगत, वैयक्तिक
indo-aryan भारतीय आर्यभाषा
indo-aryan, middle मध्यभारतीय आर्यभाषा
indo-aryan, modern आधुनिक भारतीय आर्यभाषा
indo-aryan, old प्राचीन भारतीय

आर्यभाषा
indo-european भारोपीय, भारत-यूरोपीय
indo-germanic भारत-जर्मनीय
indo-iranian भारत-ईरान
indo-keltic भारत-केल्टी
inessive case अभ्यंतरार्थी कारक
infection सापेक्ष स्वर-परिवर्तन
inferential aspect परिणामदर्शी पक्ष
inferential conjunction परिणाम-दर्शी समुच्चयबोधक
inferior comparison निम्नकोटिक तुलना
infinite verb असमापिका क्रिया
infinitive क्रियार्थक संज्ञा, तुमुनत, तुमंत, तुमुन, अपरिमित क्रिया
infinitive clause तुमुनंत उपवाक्य, तुमुनंत वाक्यांश
infinitive mood तुमुनंत क्रियार्थ
infinitive verb असमापिका क्रिया, तुमुन क्रिया
infix मध्य सर्ग, अन्तःप्रत्यय, मध्य विन्यस्त-प्रत्यय
infix agglutination मध्ययोग
infix agglutinative मध्ययोगात्मक अंतःप्रत्यय प्रधान, मध्यसर्ग प्रधान
inflecting श्लिष्ट योगात्मक, विभक्ति-प्रधान
inflecting language श्लिष्ट योगात्मक भाषा, विभक्ति-प्रधान भाषा
inflected word पद, ..त्यय निष्पन्न शब्द, रूप
inflection रूपांतरण, रूप-रचना, अभि-संक्रमण, विभक्ति
inflectional श्लिष्ट योगात्मक, विभक्ति-प्रधान, श्लिष्ट
inflexion विभक्ति
inflexional (दे०) inflectional
influence प्रभाव
informant सूचक
initial प्राथमिक, आदिम, आदि, संक्षिप्त हस्ताक्षर
initial accent आद्य स्वराघात, आद्य आघात
initial glide पूर्व श्रुति, आद्य श्रुति
initial inflection आदियोगी रूप-निर्माण
initially आद्यतः
initial mutation आद्य ध्वनिपरिवर्तन
initial stress आद्य बलाघात
injunctive निर्बंध, विधि
injunctive mood विध्यर्थ, विधि क्रियार्थ
inner मध्यवर्ती, आभ्यन्तर, आंतरिक
inner language आंतरिक भाषा
innovation नवीनता, नवपरिवर्तन
inordinated adjective मुख्य विशेषण
inorganic निरिन्द्रिय, निरवयव, निपात-प्रधान
inorganic language निपातप्रधान भाषा
inscription अभिलेख, शिलालेख
inseparable अविच्छेद्य
inseparable prefix पूर्वप्रत्यय
inseparable preposition अविच्छेद्य पूर्वसर्ग
insert सन्निविष्ट करना
inserted clause सन्निविष्ट उपवाक्य, सन्निविष्ट वाक्यांश
insertion आगम, ध्वनि-आगम, सन्निवेश
insertion of euphonic glide श्रुत्यागम
inspiration निश्वसन
instructive case करण कारक
instrument यंत्र, उपकरण
instrumental case करण कारक
instrumental phonetics यांत्रिक ध्वनिविज्ञान
instrumentative case करण कारक
integral componant अखंड अवयव
intellectual law बौद्धिक नियम

integration एकीकरण, संघटन
intensity तीव्रता, गंभीरता
intensive यङन्त, अतिशयार्थक, तीव्रता-बोधक
intensive aspect तीव्रताबोधी पक्ष
intensive compound तीव्रताबोधी समास
intensive compound verb तीव्रता बोधक संयुक्त क्रिया
intensive form तीव्रताबोधी रूप
intensive particle तीव्रताबोधी निपात
intentional meaning साभिप्राय अर्थ
interchange विनिमय
interdental अंतर्दन्त्य
interior अंतस्थ
interjection विस्मयादिबोधक शब्द, मनोविकारबोधक अव्यय
interjectional विस्मयादिबोधक
interjectional phrase विस्मयादिबोधक उपवाक्य या वाक्यांश
interjectional theory मनोभाव व्यंजकतावाद, पूह पूह सिद्धांत, मनोभावाभिव्यक्ति सिद्धांत
inter-language अंतर्राष्ट्रीय भाषा
inter-linguistics अंतर्भाषा विज्ञान
interlude अक्षर-मध्यग ध्वनि
intermediary अंतस्थ, मध्यवर्ती
intermediate अंतर्वर्ती, अंतस्थ, मध्यवर्ती
intermediate sound अंतस्थ ध्वनि, मध्यवर्ती ध्वनि, मध्यस्थ ध्वनि
intermingling अंतर्मिश्रण
internal आंतरिक
internal flexion आंतरिक रूपांतरण, आंतरिक रूप निर्माण
internal hiatus अंतस्थ विवृति, आंतरिक स्वर-विच्छेद
internal inflectional अंतर्मुखी श्लिष्ट
internal juncture आंतरिक संगम
internal open juncture आंतरिक मुक्त संगम
internal punctuation mark आंतरिक विराम चिह्न
internal reconstruction आंतरिक पुनर्निर्माण
internal structure आंतरिक बनावट, आंतरिक संरचना
internal vowel आंतरिक स्वर संरचना
international phonetic alphabet अंतर्राष्ट्रीय ध्वन्यात्मक वर्णमाला या लिपि
international phonetic script अंतर्राष्ट्रीय ध्वन्यात्मक लिपि
interpreter दुभाषिया
interrelation अंतःसंबंध, परस्परसंबंध
interrogation mark (point) प्रश्न चिह्न, प्रश्नसूचक विराम या चिह्न
interrogative प्रश्नवाचक
interrogative adverb प्रश्नवाचक क्रियाविशेषण
interrogative pronoun प्रश्नवाचक सर्वनाम
interrogative sentence प्रश्नवाचक वाक्य
interrogative sign प्रश्नसूचक चिन्ह
intervocalic स्वरमध्यग, द्विस्वरान्तर्गत
intonation सुरलहर, वाक्यसुर
intransitive अकर्मक
intransitive causative अकर्मक प्रेरणार्थक
intransitive verb अकर्मक क्रिया
intrusive vowel विप्रकर्ष, आगत स्वर, आगंतुक स्वर
invariable अव्यय
inverse sound law विपर्यस्त ध्वनि नियम
inversion शब्दक्रम-विपर्यय
inverted commas अवांतरण चिह्न
inverted sound प्रतिवेष्टित ध्वनि, मूर्द्धन्य ध्वनि
irregular अनियमित, नियमविरुद्ध
irregularity अनियमितता, अनियम, व्यत्यय

irrelevant अप्रासंगिक
isogloss शब्दरेखा, आइसोग्लॅास
isoglottic line शब्दरेखा
isograph लिपिरेखा, भाषांगरेखा
isolated opposition पृथक्कृत विरोध
isolating वियोगात्मक, अयोगात्मक, व्यास प्रधान
isolating language वियोगात्मक भाषा
isolative change निरपेक्ष परिवर्तन
isolexic line शब्दरेखा
isophone ध्वनिरेखा, स्वनरेखा, आइसोफ़ोन
isophonic line ध्वनिरेखा, स्वनरेखा
isosyntagmic line वाक्यरेखा
isotonic line सुररेखा
isotope समस्थानी
iterative aspect पुनरुक्ति पक्ष, अभ्यस्त पक्ष, पुनरावृत्तीय पक्ष
iterative compound पुनरुक्ति समास, द्वन्द्व समास, पुनरावृत्तीय समास
iterative numeral पुनरावृत्तीय संख्यावाचक विशेषण, वारबोधक संख्यावाचक विशेषण
iterative root पुनरुक्ति धातु, पुनरावृत्तीय धातु
iterative verb पुनरावृत्तीय क्रिया

J

jamming स्वरमध्यग व्यंजन लोप
journalese पत्रकार-शैली, अखबारी भाषा या शैली
junction संधि
junctional prosody संध्यात्मक राग
juncture संगम, योजक, मौन योजक, विवृति
junggrammarian, neo नव वैयाकरण
junggrammatiker नव-वैयाकरण
jussive mood अशक्त आज्ञार्थ
jussive subjunctive आज्ञार्थी संभावनार्थ
juxtapose पास-पास रखना, जोड़ना
juxtaposed compound सान्निध्य-समास
juxtaposition सान्निध्य; जोड़
juxtapositional assimilation सान्निध्य समीकरण

K

kernel शीर्ष, केन्द्र, शिखर,
key word सूचक शब्द
kinemics इंगिताभिव्यक्ति विज्ञान
kinesics अंगविक्षेपाभिव्यक्ति विज्ञान
kinetic consonant गतिक व्यंजन
knot device ग्रंथि लिपि
knot reckoning ग्रंथि गणना
knot script ग्रंथि लिपि
knotted cord ग्रंथित रज्जु

L

labial ओष्ठ्य, द्वयौष्ठ्य
labial click ओष्ठ्य क्लिक
labial dental दंत्यौष्ठ्य
labial fricative ओष्ठ्य संघर्षी
labialization ओष्ठीकरण
labialize ओष्ठ्य बनाना
labiolized ओष्ठीकृत
labio-dental दन्त्यौष्ठ्य
labio-velar कंठौष्ठ्य, ओष्ठ-कंठ्य
labiovelarized कंठ्यौष्ठीकृत
laboratory प्रयोगशाला
laboratory phonetics प्रयोगशाला ध्वनिविज्ञान
lag पश्चगामी समीकरण
lambdaism लकारीकरण
lane शिथिल व्यंजन
language भाषा
language-boundary भाषा-परिधि
language family भाषा-परिवार
language shift भाषा-पर्ययण
language strata भाषास्तर
language system भाषा-व्यवस्था
lapse स्खलन
laryngal स्वरयंत्रमुखी, स्वरयंत्रस्थानीय, काकल्य, उरस्य

laryngeal स्वरयंत्रमुखी, स्वरयंत्र स्थानीय, काकल्य, उरस्य
laryngeal explosive काकल्य-संघर्षी, काकल्यीय स्पर्श
larynx, स्वरयंत्र
latent shwa स्वरलोप-चिह्न
lateral पार्श्विक
lateral area पार्श्ववर्ती क्षेत्र
lateral consonant पार्श्ववर्ती व्यंजन
lautverchiebung जर्मन-ध्वनि-परिवर्तन
law नियम, विधान
law of analogy सादृश्य-नियम
law of differentiation भेदका नियम, भेदभावका नियम, भेदीकरण-नियम
law of extinction of useless forms अनुपयोगी रूपोंके विलोपका नियम
law of false perception भ्रमका नियम, मिथ्याप्रतीतिका नियम
law of irradiation उद्योतनका नियम, अर्थोद्योतन नियम
law of new acquisition नव प्राप्तिका नियम
law of palatalization तालव्यीकरणका नियम, तालव्यभावका नियम
law of polarity ध्रुवाभिमुख नियम
law of specialization विशेषीकरणका नियम, विशेषभावका नियम
law of survival of inflection विभक्तियोंके अवशेषोंका नियम
lax शिथिल
layer परत, स्तर
length मात्रा, दीर्घता
length accute मात्रासूचक आघात
lengthened प्रलंबित, दीर्घीकृत, प्रवर्द्धित
lengthened grade वृद्धि प्राप्त श्रेणी, प्रलंबित श्रेणी
lengthening वृद्धि, दीर्घीकरण, प्रलंबीकरण
lenis शिथिल, अशक्त, शिथिल व्यंजन
lenition व्यंजन परिवर्तन, आदि एवं स्वर मध्यग व्यंजन-परिवर्तन
letter वर्ण, अक्षर
level तल, समतल, सम, स्तर
levelling समीकरण, समानीकरण
level pitch स्वरितसुर, समसुर
level pitch accent स्वरित
levels of articulation उच्चारण-स्तर
lexical शाब्दिक, आभिधानिक, कोशविषयक, कोशगत
lexical form आभिधानिक रूप, कोशगत रूप
lexical meaning अभिधानिक अर्थ, कोशगत अर्थ
lexicography कोश-रचना, कोश-कला
lexicographer कोशकार
lexicology कोश-विज्ञान
lexicon शब्दकोश, अभिधान
lexico-statistics शब्द-सांख्यिकी
liaison संयोग, संधि, योजन
light syllable बलाघात शून्य अक्षर
light vowel बलाघात शून्य स्वर
line रेखा
linear phoneme रैखिक ध्वनिग्राम खंडध्वनिग्राम
linear sign रैखिक चिह्न
linear writing रैखिक लेखन
line median मध्य रेखा
lingua franca राष्ट्र-भाषा
lingual मूर्द्धन्य
linguist भाषाशास्त्री, बहुभाषाविद्
linguistic भाषिक, भाषागत, भाषायी
linguistic analysis भाषिक विश्लेषण, भाषा-विश्लेषण
linguistic area भाषा-क्षेत्र
linguistic change भाषा विषयक परिवर्तन, भाषिक परिवर्तन
linguistic comparison भाषिक तुलना, भाषागत तुलना
linguistic diversity भाषा-वैभिन्य,

भाषागत विभिन्नता
linguistic form भाषिक रूप
linguistic geography भाषा भूगोल, भाषिक भूगोल, भाषायी भूगोल
linguistic map भाषिक मानचित्र, भाषायी नक्शा
linguistic minority भाषिक अल्पसंख्यकता, भाषिक अल्पसंख्यक वर्ग
linguistic ontogeny व्यक्ति-बोली-विकास, व्यक्ति–भाषा–विकास
linguistic palaeontology भाषिक पुराशास्त्र
lingustic phylogeny भाषा-विकास
linguistics भाषा विज्ञान, भाषाशास्त्र
linguistic survey भाषा-सर्वेक्षण
linguistic typology भाषिक प्ररूप विज्ञान, भाषा प्ररूप विज्ञान
linguistician भाषा वैज्ञानिक, भाषा विज्ञानवेत्ता
link verb योजक क्रिया
link word योजक शब्द
linking योजन
lip ओष्ठ, ओठ
lip, lower अधर, अधरोष्ठ
lip-rounding ओष्ठ वर्तुलन
lip, upper ऊर्ध्वोष्ठ
liquid तरल, द्रव, कोमल
liquid sound तरल ध्वनि
lisping थद्दीकरण
literal शब्दशः, अविकल, वर्णात्मक
literal translation शब्दशः अनुवाद
literal, tri त्रिवर्णात्मक, त्रिवर्णिक
literary language साहित्यिक भाषा
literate शिक्षित
literature साहित्य, वाङमय
liturgical language धर्मप्रयुक्त भाषा
living जीवित, सजीव
living language जीवित भाषा
loan translation अनुवादागत शब्द, अनुवादाधारित शब्द
loan word गृहीत शब्द
local स्थानीय
local dialect स्थानीय बोली
local difference स्थानीय अंतर
localism स्थानीय प्रयोग
locative case सप्तमी विभक्ति, अधिकरण कारक
locative clause अधिकरणार्थी वाक्यांश, अधिकरणार्थी उपवाक्य, अधिकरणात्मक उपवाक्य
locution भाषण-शैली, मुहावरेदार शैली, विशिष्ट शैली
logogram शब्द-संकेत, शब्द-व्यंजक-संकेत
logography शब्द-संकेत-लेखन
long दीर्घ
long consonant दीर्घ व्यंजन
long grade दीर्घ श्रेणी
long vowel दीर्घ स्वर
loss लोप
low निम्न
low back vowel निम्न पश्च स्वर
lower निम्नतर
lower high vowel निम्नतर उच्चस्वर
lower mid vowel निम्नतर मध्यस्वर
low german निम्न या उत्तरीय जर्मन
low grade निम्न श्रेणी
low pitch निम्नसुर
low pitch accent अनुदात्त, अनुदात्त स्वराघात
low vowel निम्न स्वर
lungs फुफ्फुस, फेफड़े

M

macron दीर्घ-चिह्न
main प्रमुख, मुख्य, प्रधान
main accent प्रधान आघात, प्रधान स्वराघात
main clause प्रधान उपवाक्य, मुख्य उपवाक्य,
malapropism मैलाप्रापिज्म, मैलाधिप प्रवृत्ति, पांडित्य-प्रवृत्ति

malformation अपनिर्माण, अपरचना
manner, ablative of रीतिवाचक अपादान
marginal area पार्श्ववर्ती क्षेत्र
mark चिह्न, निशान, विरोधाधार
marker चिह्नक
masculine पुल्लिग
mass-word पिंड शब्द
material noun द्रव्यवाचक संज्ञा
meaning अर्थ
mean mid vowel मध्य स्वर
measure माप, नाप
measurement मापन
mechanistic theory शारीर सिद्धांत
medial मध्य, मध्यस्थ
medial accent मध्य स्वराघात, मध्याघात
medially मध्यतः
medial position मध्य स्थिति
medial stress मध्य बलाघात
mediative case माध्यमार्थी कारक
mediopalatal मध्यतालव्य
meinhof's law मेनहोफ़–नियम
melioration अर्थोत्कर्ष
meliorative suffix अर्थोत्कर्षी प्रत्यय
mental image मानस-बिंब
mentalistic theory मानस सिद्धांत
metalinguistics सांस्कृतिक भाषा-विज्ञान, भाषा-दर्शन, दार्शनिक भाषा-विज्ञान, बहिर्भाषा-विज्ञान, परभाषा-विज्ञान, उत्तर भाषा-विज्ञान
metaphony आंतरिक स्वर-परिवर्तन, गुणीय अपश्रुति, अपश्रुति
metaphor रूपकालंकार; उपचार
metaphrase शाब्दिक अनुवाद
metaplasm भाषिक परिवर्तन
metathesis विपर्यय, ध्वनि-विपर्यय
method पद्धति, विधि, प्रणाली
methodical सुव्यवस्थित
metonymy शब्द-प्रतिस्थापन
microlinguistics विश्लेषणात्मक भाषा-विज्ञान
middle मध्य
middle of the tongue जिह्वामध्य
middle voice मध्यवाच्य
mid-vowel मध्य स्वर
mimetic word अनुकरणात्मक शब्द
minimal अल्प, स्वल्प
minimal pair अल्पतम विरोधी युग्म, स्वल्प युग्म, स्वल्पांतर युग्म, स्वल्पतम विरोधी युग्म
missing link लुप्त कड़ी, लुप्त चिह्न
mixed मिश्रित, मिश्र
mixed conjugation मिश्रित क्रिया-रूप
mixed declension मिश्रित कारकरूप
mixed language मिश्रित भाषा, मिश्र भाषा
mobile shwa चल श्वा
modal auxiliary क्रियार्थद्योतक सहकारी क्रिया
mode (दे०) mood
modification परिवर्तन, विकार
modificator परिवर्तक, विकारक
modifier विशेषक, परिवर्तक
mongrel word संकर शब्द, मिश्र शब्द
monogenesis theory एक-परिवार सिद्धांत
monoglot एक-भाषाभाषी, एकभाषी
monopersonal verb एकपुरुषी क्रिया
monophone एकध्वनीय शब्द
monophthong मूल स्वर, मूल ध्वनि
monophthongization मूलस्वरीकरण, मूलध्वनीकरण
monosyllabic एकाक्षर, एकाक्षरात्मक, एकाक्षरी
monosyllabic language एकाक्षरी भाषा
monosyllable एकाक्षरी (शब्द)
mood क्रियार्थ, अर्थ, क्रियाभाव
mora मात्रा

morph रूप
morpheme रूपग्राम, संबंधतत्त्व, रूप
morphemic रूपग्रामीय
morphemic contour रूपग्रामीय संगम
morphemics रूपग्राम विज्ञान
morph-geography रूप भूगोल
morphological आकृतिमूलक, रूपात्मक
morphological assimilation रूपात्मक समीकरण
morphological change रूप-परिवर्तन
morphological classification आकृतिमूलक वर्गीकरण, रूपात्मक वर्गीकरण
morphological conditioning रूपात्मक परिस्थिति
morphological doublets रूपात्मक द्वित्तक
morphology रूपविज्ञान, रूपविचार
morphophoneme इतरेतर परिवर्ती ध्वनिग्राम
morphophonemic रूप ध्वनिग्रामीय, पदिम स्वनग्रामीय
morphophonemics रूप ध्वनिग्राम विज्ञान
morphostylistics रूप शैली विज्ञान रूपीयशैली विज्ञान
morphotonic रूपतानग्रामीय
mother language मातृभाषा
mother tongue मातृभाषा
motor unit गत्यात्मक इकाई
mouth cavity मुख-विवर
multilateral opposition बहुपार्श्वी विरोध
multiplicative numeral गुणात्मक संख्यावाचक विशेषण
multisyllable बह्वक्षरी
murmur मर्मर
murmur-vowel मर्मर स्वर
musical accent सुर, संगीतात्मक स्वराघात, गीतात्मक स्वराघात, स्वर तान
musical theory संगीत सिद्धांत
mutation परिवर्तन
mutative परिवर्तनशील
mute स्पर्श
mutual पारस्परिक
mutual assimilation पारस्परिक व्यंजन समीकरण
mutually exclusive पारस्परिक अपवर्जी

N

name word व्यक्तिवाचक संज्ञा
naming word अर्थदर्शी शब्द
narrowed meaning संकुचित अर्थ
narrow transcription सूक्ष्म प्रतिलेखन, संकीर्ण प्रतिलेखन, संयत प्रतिलेखन
nasal नासिक्य, अनुनासिक
nasal cavity नासिका-विवर
nasal chamber नासिका कोष्ठ
nasalization नासिक्यीकरण, अनुनासिकीकरण
nasal plosion नासिक्य स्फोट
nasal twang स्वरानुनासिकीकरण
national language राष्ट्रभाषा, राष्ट्रीय भाषा
native language मातृभाषा
native speaker मातृभाषी
native word देशज शब्द, देशी शब्द
nativistic theory नेटिविस्टिक सिद्धांत
natural प्राकृतिक
natural gender प्राकृतिक लिंग
natural gender system प्राकृतिक लिंग व्यवस्था
naturalized word प्रकृतीकृत शब्द
negation निषेध
negative निषेधात्मक, नास्तिसूचक, नकारात्मक
negative aspect निषेधात्मक पक्ष
negative conjugation निषेधात्मक या नकारात्मक क्रियारूप
negative conjunction निषेधात्मक, समुच्चय बोधक

negative determinative compound नञ्, तत्पुरुष समास
negative particle निषेधात्मक उपपद्द
negative verb निषेधात्मक क्रिया
negative voice निषधात्मक वाच्य
neologism नवनिर्मित शब्द, नवनिर्माण
neo-grammarian नव्य-वैयाकरण
nerve, auditory श्रावणी शिरा
neuter gender नपुंसक लिंग
neutralization तटस्थीकरण, तटस्थीभवन
neutralize तटस्थ होना
neutral suffix उदासीन प्रत्यय
neutral vowel उदासीन स्वर
noa word वर्जित शब्द
noeme ग्लासीमार्थ, अर्थग्राम
nomenclature संज्ञीकरण
nominal adjective संज्ञात्मक विशेषण
nominal base नामप्रकृति, प्रातिपदिक,
nominal clause संज्ञा उपवाक्य, संज्ञात्मक उपवाक्य
nominal definition नामिक परिभाषा
nominal language संज्ञा भाषा, सांज्ञिक भाषा
nominal sentence संज्ञा प्रधान वाक्य
nominal stem नाम प्रातिपदिक, संज्ञा प्रातिपद्दिक
nominal verb नामधातु, नामसाधित क्रिया
nominative absolute अनन्वित कर्ता
nominative case कर्त्ताकारक, कर्तृकारक, प्रथमा विभक्ति
non-aspirated अल्पप्राण
nonce word विशिष्ट शब्द
non-compound असमस्त, समास रहित
non-contrastive distribution अविरोधी वितरण, अव्यतिरेकी वितरण
non-distinctive अभेददर्शक
non-epithetised अविशेषणात्मक
non-experiential word अननुभूत शब्द
non-final position उपान्त्य स्थिति
non-personal अव्यक्तिवाचक
non-phonemic अध्वनिग्रामिक
non-productive suffix अनुत्पादक प्रत्यय
non-prominent syllable अनुत्सिद्धाक्षर
non-pronominalized असार्वनामिक
non-segmental अखंड, अखंडीय
non-segmental phoneme अखंडध्वनिग्राम
non-sentence अवाक्य
non-significant अमहत्त्वपूर्ण, असार्थक
non-standard अपरिनिष्ठित
non-standard form अपरिनिष्ठित रूप
non-standard language अपरिनिष्ठित भाषा
non-sygmatic असिजंत, सिजंतशून्य
non-syllabic अनाक्षरिक, अनक्षरात्मक
non-thematic अनादिष्ट, अविकरण, अप्रकरणात्मक
non–tone language अतान भाषा, तानशून्य भाषा
norm आदर्श
normal सामान्य
normal grade सामान्य श्रेणी
normal innovation सामान्य नवीनता
normative grammar आदर्शी व्याकरण
notation स्वरांकन, संकेतन, स्वरसंकेतन
note of exclamation विस्मयादि बोधक चिह्न
note of interrogation प्रश्नसूचक चिह्न
noun संज्ञा
noun clause संज्ञा उपवाक्य
noun equivalent संज्ञार्थी, संज्ञार्थी शब्द-वर्ग
noun language संज्ञा प्रधान भाषा
noun numeral संज्ञात्म संख्यावाचक
noun root नामधातु

noun sentence संज्ञात्मक वाक्य, संज्ञा प्रधान वाक्य
nounstem संज्ञा प्रकृति, संज्ञाप्रातिपदिक
nucleus शीर्ष, चोटी, केन्द्र, शिखर
number वचन
number concord वचनान्विति
numeral संख्यावाचक, संख्यापद
numeral adjective संख्यावाचक विशेषण
numeral appositional compound द्विगु समास
numeral pronuon अनिश्चयार्थी संख्यावाचक सर्वनाम
numerals अंक, संख्या
numerical सांख्यिक, संख्यात्मक
numerical metanalysis वचन-परिवर्तन
nursery word नर्सरी शब्द, बाल शब्द

O

object कर्म; उद्देश्य
objectal कर्म-विषयक
object, cognate सजातीय कर्म, सवर्ण कर्म, समधातुज कर्म
object, direct मुख्य कर्म, प्रत्यक्ष कर्म
object, indirect गौण कर्म, अप्रत्यक्ष कर्म,
objective case कर्म कारक, द्वितीया विभक्ति
objective conjugation वस्तुनिष्ठ धातुरूप, निश्चयार्थी धातुरूप
objective phonemics वस्तुनिष्ठ ध्वनिग्राम विज्ञान
objective stress स्पष्ट बलाघात
oblique case विकारीकारक, विकृत कारक
oblique form विकारी रूप, विकृत रूप
oblique question अप्रत्यक्ष प्रश्न
obscene अश्लील
obscure अस्पष्ट
obscurity अस्पष्टता
obsolescent अप्रचलितप्राय, अप्रयुक्तप्राय
obsolete अप्रचलित, अप्रयुक्त
occlusive स्पृष्ट, स्पर्श
off-glide परश्रुति, पश्चश्रुति, अवरोह श्रुति
official language राजभाषा
off-shoot प्रशाखा
ominous form मांगलिक रूप
oneness एकत्व
on-glide पूर्वश्रुति, अग्रश्रुति, आरोह श्रुति
onomasiology नाम विज्ञान
onomastics नाम विज्ञान
onomatology नाम विज्ञान
onomatopoeia ध्वन्यात्मक शब्द, अनुकरणमूलक शब्द, अनुरणनमूलक शब्द ध्वनि-अनुकरणमूलक शब्द
onomatopoeic ध्वन्यात्मक, अनुरणनमूलक, ध्वनि-अनुकरणमूलक
onomatopoetic root अनुरणनमूलक धातु, ध्वन्यात्मक धातु
onomatopoetic theory ध्वनि-अनुकरण सिद्धांत, अनुकरण सिद्धांत, अनुकरणमूलकतावाद, अनुरणनवाद
onomatopoetic verb अनुरणनात्मक क्रिया
onomatopoetic (onomatopoeic) word ध्वन्यात्मक शब्द, अनुकरणमूलक शब्द, अनुरणनमूलक शब्द
onset पूर्व गह्वर
open विवृत
open consonant व्यक्त व्यंजन
open, half अर्ध विवृत
open sound विवृत ध्वनि
open stress विवृत बलाघात
open syllable मुक्ताक्षर, स्वरांत अक्षर
open transition विवृत संक्रमण
open vowel विवृत स्वर
opposed pair विरोधी युग्म
opposition विरोध, व्यतिरेक,
optative mood इच्छासूचक क्रियार्थ, विधि लिङ, विध्यात्मक, संभाव्य भविष्यत
optional ऐच्छिक, वैकल्पिक
optional variant ऐच्छिक परिवर्तन

वकल्पिक परिवर्त
oral मौखिक
oral cavity मुख विवर
oral chamber मुख-कोष्ठ
oral gesture theory मौखिक इंगित सिद्धांत
oral image मौखिक बिंब
oral tradition मौखिक परम्परा
order क्रम
ordinal numeral क्रमवाचक विशेषण, क्रम संख्यावाचक विशेषण
organ अवयव
organic अवयवी, सावयव, प्रकृति-प्रत्यय प्रधान
origin उत्पत्ति, उद्भव
original मूल, आदिम, मौलिक
original language मूल भाषा
orthographic वर्ण-विन्यास-संबंधी, वर्तनी-विषयक, वर्तनी विज्ञान-विषयक
orthography वर्तनी विज्ञान, वर्ण-विन्यास-विज्ञान, वर्ण विचार
orthology अर्थ विज्ञान
oscillogram चल ध्वनिलेख
osthoff's law ओस्थफ-नियम
out-line रूपरेखा
outer बाह्य
outer speech बाह्य भाषा
overcorrection अतिशुद्धि दोष, अतिशय शुद्धि दोष
over long प्लुत, अतिरिक्त दीर्घ
oxytone. अंत्याघाती शब्द
oxytonic language अंत्याघाती भाषा

P

palaeontology पुराप्राणिविज्ञान
palatal तालव्य
palatalization तालव्यीकरण
palatalized consonant ताल-व्यीकृत व्यंजन
palatal law तालव्य नियम
palatal vowel अग्रस्वर, तालव्यस्वर
palate तालु
palatograph तालुग्राह
palatogram तालुलेख
paleography प्राचीन लिपि शास्त्र, पुरा लिपि शास्त्र
paradigm रूपावली, रूप-तालिका, शब्द-रूपावली
paradigmatic रूपतालिकात्मक; रूप तालिका-विषयक
paragoge अंत्ययोग
paragogic अंत्ययोगात्मक, अंत्ययोगी, अंत्ययोग
paragogic consonant अंत्ययोग-व्यंजन
paragogic phoneme अंत्ययोग-ध्वनि-ग्राम
paragogic sound अंत्ययोग-ध्वनि
paragogic syllable अंत्ययोगाक्षर
paragogic vowel अंत्ययोगस्वर
paragogical दे॰ paragogic
paragraph पैरा, अनुच्छेद, पैराग्राफ़
paraphrase स्वतंत्र अनुवाद, भावानुवाद
paraplasm रूप-प्रतिस्थापन
paraplastic form प्रतिस्थापक रूप
paraptyxis अपिनिहिति, अनन्वित प्रयोग
parasynthesis परासंकलन
parasynthetic परासंकलन-विषयक
parasyntheton परासंकलन-शब्द
paratactic असंबद्ध वाक्य विन्यास-विषयक, असंबद्ध वाक्य विन्यासका
parataxis असंबद्ध वाक्य विन्यास
parent language मूल भाषा, पितृभाषा
parenthesis निक्षिप्त वाक्य, निक्षिप्त उपवाक्य, निक्षिप्त वाक्यांश, निक्षिप्त शब्द या रूप
parenthesis mark निक्षिप्त-चिह्न
parenthetical निक्षिप्त
parenthetical clause निक्षिप्त उपवाक्य या वाक्यांश
parenthetical sentence निक्षिप्त

वाक्य
parenthetical word निक्षिप्त शब्द
parisyllabic समाक्षरिक
parlance भाषा शैली, विशिष्ट भाषा शैली
parole भाषा, व्यक्तिभाषा, एकावसरी व्यक्ति-भाषा
paronym समानोच्चरित शब्द
paronymous समानोच्चरित शब्द युक्त
paroxytone उपान्त्यक्षर स्वराघाती शब्द, उपघाघाती शब्द
paroxytonic language उपघाघाती भाषा
parse पदव्याख्या करना
parsing पद-व्याख्या, पद-परिचय
part अंश, भाग
partial आंशिक
partial assimilation आंशिक समीकरण
partial contact ईषत्स्पर्श
partially agglutinative आंशिक योगात्मक, ईषत् प्रत्यय प्रधान
partially incorporating ईषत्समास प्रधान
participial कृदंती
participial compound कृदंती समास
participial, compound संयुक्त कृदंती
participialization कृदंतीकरण
participial noun क्रियार्थक संज्ञा
participial phrase कृदंती वाक्यांश
participial preposition कृदंती पूर्वसर्ग
participial suffix कृदंती प्रत्यय
participial tense कृदंती काल
participle कृदंत
particle निपात
partitive विभागबोधक, खंडबोधक, अंशबोधक, अंशार्थी
partitive article अंशार्थी उपपद
partitive case अंशार्थी कारक
partitive genitive अंशार्थी षष्ठी
partitive locative अंशार्थी अधिकरण
partitive numeral अंशार्थी संख्यावाचक
partly अंशतः
partly incorporating आंशिक प्रश्लिष्ट योगात्मक, अंशतः समासप्रधान
part of speech वाक्यावयव, शब्द भेद
pasigraphy विश्वलिपि
pasimology इंगिताभिव्यक्ति
passage मार्ग, प्रणाली
passive aoristकर्मणि लुङ
passive past participle कर्मणि भूतकालिक कृदंत
passive use कर्मणि प्रयोग
passive verbकर्मप्रधान क्रिया, कर्मणि क्रिया
passive voice कर्मवाच्य
passive participle कर्मणि कृदंत
past भूत, अतीत
past conjunctive संभाव्य भूत
past continuous अपूर्ण भूत
past imperfect अपूर्ण भूत
past indefinite indicative सामान्य भूत निश्चयार्थ
past indefinite सामान्य भूत
past infinitive भूत तुमुनन्त
past participle भूतकालिक कृदंत
past perfect पूर्ण भूत
past perfect conjunctive पूर्ण भूत संभावनार्थ
past perfect participle पूर्ण भूतकालिक कृदंत
past tense भूत काल
patois बोली, स्थानीय बोली
pattern पैटर्न, साँचा, ढाँचा, आदर्श
pause, विराम
pause, external बहिर्विराम
pause, internal अंतर्विराम
pause-pitch विराम-पूर्व सुर, विराम-पूर्व सुरारोहण
peak शीर्ष, शिखर, केन्द्र

pedigree theory वंशवृक्ष सिद्धांत
pejoration अर्थापकर्ष
pejorative निंदात्मक, अर्थापकर्षक
pejorative suffix निंदात्मक प्रत्यय, अर्थापकर्षक प्रत्यय
pendent अपूर्ण रचना
penult उपान्त्य
penultimate उपान्त्य, उपवा
peregrinism विदेशी तत्त्व, विजातीय तत्त्व, बाह्य तत्त्व
perfect पूर्ण, परोक्षभूत, लिट्
perfect tense लिट्, परोक्षभूत, अतीत
perfect infinitive भूत तुमुनन्त
perfectivation पूर्णकालिकता, पूर्णीकरण
perfective पूर्णकालिक
period अवधि, काल, युग, विरामच्छेद
periodic नियतकालिक
periodic sentence अंतप्रधान वाक्य
periphrastic पल्लवित, वियोगात्मक, संयुक्त
periphrastic aorist पल्लवित लुङ, वियोगात्मक लुङ
periphrastic conjugation वियोगात्मक क्रियारूप
periphrastic declension वियोगात्मक संज्ञा-रूप
periphrastic form वियोगात्मक रूप
periphrastic formation पल्लवित रचना, वियोगात्मक रचना
periphrastic future लुट्, अनद्यतन भविष्य, पल्लवित भविष्य, वियोगात्मक भविष्य
periphrastic perfect पल्लवित पूर्ण, वियोगात्मक पूर्ण
periphrastic tense संयुक्त काल
perissologic, perissological } अनावश्यक (शब्द, रूप, परसर्ग, उपसर्ग, प्रत्यय)
perissology अनावश्यक प्रयोग, (उपर्युक्तका)
permissive अनुमतिबोधक
permissive mood अनुमतिबोधक-क्रियार्थ
perpendicular stroke ऊर्ध्वाघात
person पुरुष
person concord पुरुषान्विति
personal पुरुषवाचक, व्यक्ति वाचक
personal ending पुरुषबोधक प्रत्यय
personal infinite पुरुषबोधक तुमुनन्त
personal pronoun पुरुषवाचक सर्वनाम
personal suffix पुरुषबोधक प्रत्यय
personal verb पुरुषबोधक क्रिया
personified मूर्त्तीकृत
petitionary sentence प्रार्थनात्मक वाक्य
petroglyph पेट्रोग्लिफ़
petrogram पेट्रोग्राम
perversion विपर्यास, विपर्यय, प्रतीपता
phantom word प्रमादाधारित शब्द
pharyngeal उपालिजिह्व, उपालिजिह्वी
pharyngeal stop उपालिजिह्वी स्पर्श
pharynx उपालिजिह्वा
philologist भाषा-विज्ञानी, भाषा विज्ञान-वेत्ता
philology भाषा-विज्ञान, भाषा-शास्त्र, भाषा-साहित्य विज्ञान
philosophical grammar दार्शनिक व्याकरण
phonation ध्वनि-उच्चारण
phonatory ध्वनि-उच्चारणका, ध्वनि उच्चारण-विषयक
phone स्वन, ध्वनि, भाषा-ध्वनि, भाषण-ध्वनि
phonematic ध्वनिग्रामिक, स्वनग्रामिक
phoneme ध्वनिग्राम, स्वनग्राम, स्वनिम, ध्वनिश्रेणी, ध्वनिमात्र, ध्वनितत्त्व
phonemic ध्वनिग्रामिक, स्वनग्रामिक, ध्वनिग्रामीय, स्वनग्रामीय
phonemic analysis ध्वनिग्रामिक,

विश्लेषण, ध्वनिग्रामीय विश्लेषण, स्वनग्रामिक विश्लेषण, स्वनग्रामीय विश्लेषण
phonemicist ध्वनिग्राम विज्ञान वेत्ता, ध्वनिग्रामशास्त्री
phonemics ध्वनिग्राम विज्ञान, स्वनग्राम विज्ञान, ध्वनिग्रामिकी, स्वनग्रामिकी, स्वनिम-शास्त्र, ध्वानिकी, स्वानिकी
phonemic structure ध्वनिग्रामिक गठन
phonemic transcription ध्वनि-ग्रामिक लेखन
phonemic variant ध्वनिग्रामिक परिवर्त
phonetic ध्वन्यात्मक, ध्वनि-संबंधी
phonetical ध्वन्यात्मक
phonetic alphabet ध्वन्यात्मक लिपि, ध्वन्यात्मक वर्णमाला
phonetic change ध्वनि-परिवर्तन
phonetic combination संधि
phonetic complement ध्वनि-पूरक, उच्चारण-पूरक
phonetic contamination ध्वनि-सम्मिश्रण, आद्य शब्दांश-विपर्यय
phonetic decay ध्वन्यात्मक क्षय, ध्वन्यात्मक ह्रास, ध्वनि-विकार
phonetic difference ध्वन्यात्मक अंतर
phonetic development ध्वनि-विकास
phonetic evolution ध्वनि-विकास
phonetic harmony ध्वनि-संगति,
phonetician ध्वनिशास्त्री, ध्वनिविज्ञान-वेत्ता
phonetic indicator ध्वनि सूचक उच्चारण-सूचक
phonetic influence ध्वन्यात्मक-प्रभाव
phoneticist ध्वनिशास्त्री, ध्वनिविज्ञान-वेत्ता
phoneticization ध्वन्यात्मकीकरण
phonetic law ध्वनि-नियम
phonetic modification ध्वन्यात्मक परिवर्तन, ध्वनि-परिवर्तन
phonetic pattern ध्वन्यात्मक ढाँचा
phonetics ध्वनिविज्ञान, ध्वनिविचार, ध्वनितत्त्व
phonetic script ध्वन्यात्मक लिपि
phonetics, experimental प्रयोगात्मक ध्वनिविज्ञान
phonetic sign ध्यवनात्मक चिह्न या संकेत
phonetic similarity ध्वन्यात्मक साम्य
phonetic spelling ध्वन्यात्मक वर्तनी
phonetic stage ध्वन्यात्मक अवस्था
phonetic symbolo ध्वन्यात्मक प्रतीक (संकेत, चिह्न)
phonetic tendency ध्वन्यात्मक प्रवृत्ति
phonetic transcription ध्वन्यात्मक प्रतिलेखन
phonetic writing ध्वन्यात्मक लिपि
phonetist ध्वनिशास्त्री, ध्वनिविज्ञानवेत्ता
phonic ध्वनिक, ध्वन्यात्मक
phonics ध्वनिविज्ञान, ध्वनिविचार, ध्वनिशास्त्र
phono aesthetic ध्वनि सौंदर्य
phono aesthetics ध्वनि सौंदर्य विज्ञान
phono-geography ध्वनि-भूगोल
phonogram ध्वनि-संकेत, ध्वनिलिपि, ध्वनिग्राफ़
phonological ध्वनि-प्रक्रियात्मक, ध्वन्यात्मक
phonological conditioning ध्वन्यात्मक परिस्थिति
phonological change ध्वन्यात्मक परिवर्त्तन या विकार
phonologically ध्वनि-प्रक्रियाकी दृष्टि-से, ध्वन्यात्मक दृष्टिसे
phonology ध्वनि-प्रक्रिया विज्ञान, ऐतिहासिक ध्वनिविज्ञान, ध्वनि विचार, ध्वनि-विज्ञान, ध्वनिग्राम विज्ञान दे० phonemics
phonostylistics ध्वनीय शैली विज्ञान
phonotactics फ़ोनोटैक्टिक्स

phrasal वाक्यांशी
phrasal compound वाक्यांशी समास
phrasal tense वाक्यांशी काल
phrase वाक्यांश, मुहावरेदार उक्ति, कथन-पद्धति
phraseology शब्द-शृंखला, कथन-पद्धति
physical भौतिक, शारीरिक
physical aspect शारीरिक पक्ष
physical basis भौतिक आधार, शारीरिक आधार
physical phonetics भौतिक ध्वनि-विज्ञान
physics भौतिक शास्त्र, भौतिकी, भौतिक विज्ञान
physiological phonetics शारीरिक ध्वनिविज्ञान
physiology शरीर विज्ञान
pictogram चित्रलिपि चिह्न
pictograph चित्रलिपि
pictography चित्रलिपि लेखन
pictorial character चित्र लिपि
pictorial script चित्र लिपि
pictorial symbol चित्रात्मक प्रतीक
pictorial writing चित्रलिपि
picture चित्र
picture symbol चित्र-प्रतीक
picture writing चित्र लिपि
pidgin मिश्रित, मिश्रित भाषा
pipe नली, नलिका, नालिका
pitch सुर, स्वर, तारत्व
pitch accent सुर, सुराघात
pitch, falling अवरोही सुर, अधोगामी सुर
pitch high, level उच्चस्तरीय सुर
pitch, low निम्न सुर
pitch, rising आरोही सुर, ऊर्ध्वगामी सुर
place of articulation उच्चारण-स्थान
plene writing प्लीन लेखन
pleonasm शब्द-बाहुल्य, अधिक पदत्व
pleonastic शब्द-बाहुल्य, शब्द-बाहुल्य पूर्ण, स्वार्थिक
plosion स्फोट, स्फोटन
plosive स्पर्श
plosiveness स्पर्शत्व, स्फोटकत्व
pluperfect परोक्ष भूत; पूर्णभूत
plural बहुवचन
plural number बहुवचन
plural of approximation लगभगार्थी बहुवचन, निकटार्थी बहुवचन
plurative बहुवचन विशेषण
plurilingual बहुभाषिक, बहुभाषाभाषी
plus juncture धन संगम
poetry कविता
point of contact स्पर्श स्थान, स्पर्श-बिंदु
polyglot बहुभाषाविद्, बहुभाषा-भाषी
polylingual बहुभाषिक, बहुभाषाभाषी, बहुभाषाविद्
polyphone बहुध्वनिचिह्न
polyphonic बहुध्वनि, बहुध्वन्यात्मक
polysemantic बह्वार्थी, अनेकार्थी
polysemia अनेकार्थता, अनेकार्थी शब्द
polysemous अनेकार्थी, बह्वार्थी
polysemy अनेकार्थता
polysyllabic बह्वक्षरात्मक, अनेकाक्षरी
polysyllable अनेकाक्षरी शब्द
polysynthesis बहुसंश्लेषात्मकता
polysynthetic बहुसंश्लेषात्मक, बहु-संश्लेषणात्मक
polysystematic बहुतंत्रात्मक, बहु-पद्धत्यात्मक
polytonic बहुसुरात्मक, बहुसुरीय, बहु-तानात्मक, बहुतानीय
pooh-pooh theory, पुह-पूहवाद, मनोभावाभिव्यक्तिवाद
popular etymology लौकिक व्युत्पत्ति, भ्रामक व्युत्पत्ति
popular misconception प्रचलित भ्रम,

portmanteau word मिश्र शब्द, पोर्टमैंटो
position अवस्था, स्थान, स्थिति
positional स्थान-संबंधी, स्थान-विषयक; स्थितीय, स्थान-प्रधान, निपात प्रधान
positional languages स्थान-प्रधान भाषा
positional variant स्थितीय परिवर्त, स्थैतिक परिवर्त
positive अस्त्यात्मक, अस्तिवाचक
positive conjunction अस्तिवाचक समुच्चयबोधक
positive degree अस्त्यात्मक कोटि, निश्चित कोटि, मूलावस्था
positive science अस्त्यात्मक विज्ञान
positive verb अस्तिवाची क्रिया
possessive संबंधवाचक, संबंध
possessive case संबंध कारक, षष्ठी विभक्ति
possessive compound षष्ठी समास, संबंध समास
possessive noun संबंधवाचक संज्ञा
post accentical पश्चस्वरित
post-dental पश्चदन्त्य, परदंत्य
postfix पर प्रत्यय, प्रत्यय
postposition परसर्ग
post-velar परकंठ्य, पश्चकंठ्य
potential mood लिङ्, विधिलिङ्, विध्यर्थक, विधि
potential participle विध्यर्थक कृदंत
potential passive participle विध्यर्थक कर्मणि कृदंत
practical व्यावहारिक
pre-accentical पूर्व स्वरित
pre-adjective पूर्ववर्ती विशेषण
precative इच्छार्थक, प्रार्थनात्मक
precative mood इच्छार्थक क्रियार्थ, प्रार्थनात्मक क्रियार्थ, आशीर्लिङ्, लिङाशिषि
preceding पूर्ववर्ती, पूर्वगामी
preclitic पूर्वाश्रयी
pre-dental पूर्वदंत्य
predicate विधेय
predicate adjective विधेय विशेषण, विधेयात्मक विशेषण
predicate noun विधेय संज्ञा, विधेयात्मक संज्ञा
predicate verb विधेय क्रिया, विधेयात्मक क्रिया
predicating word विधेय शब्द
predication पूर्वकथन, भविष्य-कथन, पूर्वानुमान
predicative विधेय, विधेयात्मक
predicative adverb विधेय क्रिया विशेषण, विधेयात्मक क्रिया विशेषण
prefix उपसर्ग, पूर्वप्रत्यय, आदिसर्ग
prefix agglutinating पूर्व प्रत्यय योगात्मक, पूर्व योगात्मक
prefix agglutination पूर्वप्रत्यय योगात्मक, पूर्वयोगात्मक
prefix agglutinative पूर्वप्रत्यय योगात्मक, पूर्वयोगात्मक
prefix suffix agglutinating उभय-प्रत्यय योगात्मक
prefix suffix agglutinative उभय-प्रत्यय योगात्मक
pregnant construction अर्थगर्भित रचना
prelinguistics पूर्वभाषा विज्ञान
prepalatal पूर्व तालव्य
preperfect अपूर्ण भूत
preposition पूर्वसर्ग
prepositional पूर्वसर्गिक, पूर्वसर्गमूलक
prepositional compound पूर्वसर्गिक समास
prepositional phrase पूर्वसर्गमूलक वाक्यांश
prepositional verb पूर्वसर्गमूलकक्रिया
preposition-group पूर्वसर्ग वर्ग
prescriptive grammar निर्देशात्मक व्याकरण, आदर्शी व्याकरण

present वर्तमान, लट्
present conjunctive संभाव्य वर्तमान
present continuous अपूर्ण वर्तमान
present imperative वर्तमान आज्ञार्थ
present imperfect अपूर्ण वर्तमान
present indefinite सामान्य वर्तमान
present indicative वर्तमान निश्चयार्थ
present participle वर्तमानकालिककृदंत
present perfect आसन्नभूत, पूर्णवर्तमान
present tense वर्तमान काल, लट्
presumptive mood संदेहार्थ
preterite भूत, अतीत
preterite indicative भूत निश्चयार्थ
preterite participle भूतकालिककृदंत
priest language पुरोहिती भाषा, कर्मकांडी भाषा
primary मूल, कृत्, प्रधान, प्राथमिक, अविकृत
primary accent मूल स्वराघात, मूल आघात, प्रधान स्वराघात
primary affix कृत् प्रत्यय
primary compound मूल समास
primary derivative मूलसाधित
primary grade प्राथमिक श्रेणी
primary language कथ्य भाषा
primary phoneme मूल ध्वनिग्राम
primary root मूल धातु
primary suffix कृत
primary tense मूल काल
primary word मूल शब्द
prime word मूल शब्द
primitive आदिम
principal सिद्धान्त
principal clause मुख्य उपवाक्य
principal verb मुख्य क्रिया
principal word मुख्य शब्द
private affix स्वार्थिक प्रत्यय
privative affix स्वार्थिक प्रत्यय
process प्रक्रिया
problem समस्या, प्रश्न
proclitic अबलाघाती शब्द, अग्राश्रयी
production उत्पादन
productive suffix उत्पादी प्रत्यय
proethnic imperative प्रोथेनिक आज्ञार्थ
proethnic language प्रोथेनिक भाषा
proethnic perfect प्रोथेनिक पूर्ण
profile दृश्य रेखा
progress प्रगति
progressive पुरोगामी
progressive assimilation पुरोगामी समीकरण
progressive dissimilation पुरोगामी विषमीकरण
progressive tense अपूर्ण काल
prohibition निषेध
prohibitive निषेधात्मक
prolative case सहार्थी कारक
prolepsis पूर्व प्रयोग
prolonged दीर्घीभूत, दीर्घित, दीर्घीकृत, प्रलंबित, प्रवर्द्धित
prominence प्रधानता, प्राधान्य
prominent प्रधान, मुख्य, मुखर
promissive future प्रतिज्ञात्मक भविष्य
promissive tense प्रतिज्ञात्मक काल
pronominal सार्वनामिक
pronominal adjective सार्वनामिक विशेषण
pronominal adverb सार्वनामिक क्रिया-विशेषण
pronominalised speech सार्वनामिक भाषा
pronominal verb सार्वनामिक क्रिया
pronoun सर्वनाम
pronoun co-relative नित्यसंबंधी
pronoun definite निश्चय वाचक सर्वनाम
pronoun demonstrative निश्चय वाचक सर्वनाम

pronoun honorific आदरवाचक सर्वनाम
pronoun incorporating संयोगी सर्वनाम
pronoun indefinite अनिश्चयवाचक सर्वनाम
pronoun interrogative प्रश्न वाचक सर्वनाम
pronoun personal पुरुष वाचक सर्वनाम
pronoun reflexive निजवाचक सर्वनाम
pronoun relative संबंधवाचक सर्वनाम
pronthesis आदि वर्णागम, अग्रागम
pronunciation उच्चारण
proparoxytone पूर्वोपधा बलाघाती शब्द
proparoxytonic language पूर्वोपधा बलाघाती भाषा
proper adjective व्यक्तिवाचक विशेषण
proper compound पूर्ण समास
proper noun व्यक्तिवाचक संज्ञा
proper triphthong पूर्ण त्रिस्वर
proportion अनुपात
proportional समानुपात, समानुपाती, समानुपातिक
proportional analogy समानुपाती सादृश्य
proportional numeral आवृत्ति संख्यावाचक विशेषण
proportional opposition समानुपातिक विरोध
prose गद्य
prosecutive case सहार्थी कारक
prosodeme प्रासडीम
prosodic रागात्मक, रागीय, संध्यात्मक
prosodic feature रागात्मक लक्षण या तत्त्व, संध्यात्मक लक्षण या तत्त्व
prosody राग
prosthesis पुरोहिति, पूर्वहिति
prosthetic पुरोहितिमूलक
prothesis अग्रागम, आद्रिस्वरागम, पुरोहिति, पूर्वहिति, प्रागुपजन
prothetic consonant अग्रागमित व्यंजन
prothetic phoneme अग्रागमित ध्वनिग्राम
prothetic vowel अग्रागमित स्वर
prototype मूल, मूल रूप, मूलादर्श
proverb लोकोक्ति, कहावत
proverbial लोकोक्तीय
provincialism प्रादेशिकता, प्रादेशिक प्रयोग, स्थानीय प्रयोग
proximate demonstrative pronoun निकटवर्ती संकेतवाचक सर्वनाम, निकटवर्ती निश्चयवाचक सर्वनाम
proximate honorific third person निकटवर्ती आदरार्थ अन्यपुरुष
psychical aspect मानसिक पक्ष
psycholinguistics मनोभाषा-विज्ञान
psychology मनोविज्ञान
pulmonary फुफ्फुसीय
pun श्लेष
punctuation विराम
punctuation mark विराम चिह्न
pure language शुद्ध भाषा, अमिश्रित भाषा
pure tense साधारण काल, शुद्धकाल, मूलकाल
purity शुद्धता
putative aspect परिणामदर्शी पक्ष

Q

quadrisyllabic चतुराक्षरिक, चतुरक्षरी
quadrisyllable चतुरक्षरी शब्द
quadruplet चतुर्द्वित्तक
qualifier विशेषक
qualifying infinitive गुणबोधक या विशेषक तुमुनन्त
qualify विशेषता बतलाना
qualitative ablant गुणीय अपश्रुति
qualitative accent गुणीय स्वराघात
qualitative alteration गुणीय अपश्रुति

qualitative gradation गुणीय अश्रुपति
quality गुण
quantifier संख्याबोधक विशेषण
quantitative मात्रिक
quantitative ablant मात्रिक अपश्रुति
quantitative accent मात्रिक स्वराघात
quantitative adjective मात्रिक विशेषण
quantitative alteration मात्रिक अपश्रुति
quantitative gradation मात्रिक अपश्रुति
quantity मात्रा, परिमाण
quantity mark मात्राबोधक चिह्न
quasialphabetic अर्ध-वर्णमालीय, अर्ध-वर्णात्मक
quasialphabetic script अर्धवर्णात्मक लिपि
quatrial number चतुर्वचन
question mark प्रश्नवाचक चिह्न
quinanesyllalbic पंचाक्षरी
quinanesyllable पंचाक्षरी शब्द
quipe क्विपु लिपि
quotation marks अवतरण-चिह्न, उद्धरण-चिह्न

R

racial admixture जातीय मिश्रण
racial influence जातीय प्रभाव
racial strata जातीय स्तर
radiation ध्वनि-प्रसरण
radical मूल शब्द, मूल चिह्न, मूल, मौलिक; आद्योपांत, आमूल
radical element मौलिक अंश
radical tense मूलकाल
radical flexion मूल-रूपनिर्माण
radical language स्थान प्रधान भाषा
ramification प्रशाखीकरण
ramified प्रशाखित, शाखाकृत
rare विरल, दुर्लभ
rare use विरल प्रयोग
real वास्तविक, यथार्थ
real condition वास्तविक स्थिति
real definition वास्तविक परिभाषा
realization प्रत्यक्षीकरण
rearrangement पुनर्व्यवस्था
reciprocal पारस्परिक, अन्योन्य
reciprocal assimilation पारस्परिक समीकरण
reciprocal copulative compound अन्योन्य द्वन्द्व समास
reciprocal pronoun पारस्परिक सर्वनाम
reciprocal verb अन्योन्य क्रिया
reconstruction पुनर्रचना, पुनर्निर्माण
record प्रलेख, लिखित प्रमाण
rection नियंत्रण
reducad ह्रस्वीकृत, न्यूनीकृत, प्रह्रासित
reduction ह्रस्वीकरण, कमी, न्यूनीकरण
redundancy अनावश्यक शब्द-प्रयोग, शब्दाधिक्य दोष, पदाधिक्य दोष
redundant अनावश्यक, अतिरिक्त, अतिशय
redundant consonant अतिरिक्त व्यंजन, अनावश्यक व्यंजन
redundant feature अतिशय लक्षण, अनावश्यक लक्षण
reduplicated अभ्यस्त, द्विरावृत्तिक, द्विगुणीकृत
reduplicating reduplication अभ्यास, द्विरावृत्ति, द्वित्व
reduplicative expression पुनरावृत्तिक अभिव्यक्ति; पुनरावृत्तिक शब्द
reduplicative phrase पुनरावृत्तिक वाक्यांश, अभ्यस्त वाक्यांश
reduplicative syllable द्विरुक्ताक्षर, अभ्यस्ताक्षर
reduplicative word पुनरावृत्तिक शब्द, अभ्यस्त शब्द
reemployed अन्वादिष्ट
reference संदर्भ

referend संकेत-साधन
referent संकेतित, निर्दिष्ट
refined परिष्कृत, सुसंस्कृत
refined language परिष्कृत भाषा, सुसंस्कृत भाषा
reflective निजवाचक, आत्मवाचक
reflexive निजवाचक, आत्मवाचक
reflexive object निजवाचक कर्म
reflexive pronoun, निजवाचक सर्वनाम
reflexive verb निजवाचक क्रिया
regimen नियंत्रण
region क्षेत्र, प्रदेश
regional प्रादेशिक, क्षेत्रीय
regional dialect प्रादेशिक बोली, क्षेत्रीय बोली
regionalism प्रादेशिक प्रयोग, प्रादेशिकता
register tone अचल स.र, अचल तान रजिस्टर तान
regressive पश्चगामी
regressive assimilation पश्चगामी समीकरण
regressive direction पश्चगामीदिशा, प्रतिगामी दिशा
regressive dissimilation पश्चगामी विषमीकरण
regular नियमित
regular form नियमित रूप
regularity नियमितता
regular verb नियमित क्रिया
related संबद्ध
related language संबद्ध भाषा
relating word संबंधदर्शी शब्द
relation संबंध
relational word संबंधदर्शी शब्द
relative संबंधवाचक, संबंधसूचक
relative adverb सम्बन्धवाचक क्रिया-विशेषण
relative clause संबंधवाचक वाक्यांश या उपवाक्य
relative degree तुलनात्मक कोटि, संबंधसूचक कोटि, संबंधसूचक तुलनात्मक कोटि
relative pronoun सम्बन्ध वाचक सर्वनाम
relative superlative संबंधसूचक सर्वोच्चकोटि या तमावस्था
release उन्मोचन, मोचन, रेचन, स्फोट
released मोचित, रेचित, स्फोटित
relevant संबद्ध, प्रासंगिक, संगत, आवश्यक
relic form अवशिष्टरूप
remote demonstrative दूरवर्ती निश्चयवाचक
repartition पुनर्विभाजन
replaced प्रतिस्थापित
replacing प्रतिस्थापन
representation प्रतिनिधित्व, निरूपण
representational aspect विषय-पक्ष; अभिव्यक्ति-पक्ष
reservation प्राचीनता, अभिरक्षण
residual अवशिष्ट
residual form अवशिष्ट रूप
residue शेष, अवशेष
resonance प्रतिध्वनि, अनुनाद
resonance cavity प्रतिध्वनि विवर, अनुनादी विवर
resonance chamber प्रतिध्वनि कोष्ठ या कक्ष
resonator प्रतिध्वनक, अनुनादक
restriction of meaning अर्थसंकोच
restrictive clause प्रतिबंधी उपवाक्य, विशेषक उपवाक्य
restrictive phrase प्रतिबंधी वाक्यांश, विशेषक वाक्यांश
restrictive relative pronoun प्रतिबंधी संबंधवाचक सर्वनाम
result फल, परिणाम
retracted पश्चीकृत, संकोचित
retraction पश्चीकरण, संकोचन
retroflex मूर्धन्य

retrogressive पश्चगामी
rhematalogy अर्थविज्ञान
rhematics अर्थविज्ञान
rhotacism रकरण
rhyme तुक, अंत्यानुप्रास
rhyme word तुकांत शब्द, मित्राक्षरी शब्द
rhythm सुस्वरता, लय
ridge, teeth वर्त्स
rill fricative उत्थित पार्श्व संघर्षी, नद संध
rising diphthong आरोही संयुक्त स्वर
rising tone आरोही सुर
rolled लुंठित, लोड़ित
root धातु
root base शब्द मूल, मूल, धातुमूल
root duplication धातु-द्विरुक्ति, धात्वभ्यास
root gradation धात्वपश्रुति
root inflexion अपश्रुति
root of the teeth दन्तमूल
root of the tongue जिह्वामूल
root theory धातु सिद्धांत
rounded वृत्ताकार, वृत्तमुखी
rounding वृत्तीकरण, वृत्तमुखीकरण
rule नियम
rural ग्रामीण
rural dialect ग्रामीण बोली
rural language ग्रामीण भाषा
rural speech ग्रामीण भाषा
rustic ग्राम्य, अपरिष्कृत

S

sarcasm व्यंग्योक्ति
satem languages संतम् भाषाएँ
saving of effort प्रयत्न-लाघव
scattered अस्तव्यस्त, छिटपुट
scholastic पांडित्य-प्रदर्शक, रूक्षपाण्डित्यमय, पंडिताऊ, शास्त्रीय
science विज्ञान
science of language भाषा विज्ञान
screech कर्णकटु ध्वनि, कर्कश ध्वनि
script लिपि
scriptology लिपि विज्ञान
second मध्यम, दूसरा, द्वितीय।
secondary गौण, अप्रमुख, तद्धित, यौगिक, द्वितीयक, विकृत
secondary accent गौणस्वराघात
secondary affix गौण प्रत्यय
secondary compound द्वितीयक समस्त शब्द
secondary derivative द्विसाधित
secondary form गौण रूप
secondary language गौण भाषा, लिखित भाषा
secondary meaning गौण अर्थ, अप्रमुख अर्थ
secondary phoneme गौण ध्वनिग्राम
secondary root गौण धातु, यौगिक धातु
secondary suffix तद्धित
secondary tense गौण काल, संयुक्तकाल
secondary verb गौण क्रिया, संयुक्त क्रिया
secondary word गौण शब्द, विशेषक शब्द
second causal द्वितीय प्रेरणार्थक
second future लृट्, सामान्य भविष्य
second person मध्यम पुरुष
secret language गुप्त भाषा
section विभाग, खंड
segment खंड
segmental खंड, खंडीय, खंडयुक्त
segmental phoneme खंड ध्वनिग्राम
segmentation खंडीकरण
segment of utterance उच्चारण-खंड, उच्चारखंड
semanniology अर्थ प्रक्रिया विज्ञान
semanteme अर्थतत्त्व, अर्थग्राम
semantic अर्थ, आर्थिक
semantical आर्थिक
semantic change अर्थपरिवर्तन
semantic complement अर्थपूरक,

आर्थिक पूरक
semantic extension अर्थ-विस्तार
semantic indicator अर्थ-संकेतक
semantico-stylistics अर्थीय शैलीविज्ञा
semantics अर्थविज्ञान, अर्थतत्त्व
semantic shift अर्थ-परिवर्तन
semasiology अर्थ-विज्ञान
semasiological अर्थविज्ञान-मूलक
sematology अर्थविज्ञान
sememe अर्थग्राम
sementeme अर्थग्राम
semi अर्ध–अल्प, ईषत्
semi-absolute अर्धस्वतंत्र, अर्धमुक्त
semicolon सेमिकोलन, अर्धविराम चिह्न
semiconsonant अर्धव्यञ्जन
semiconsonantal अर्धव्यंजनात्मक
semiconsonantal vowel अर्धव्यंजनात्मक स्वर, अर्धस्वर
semiotics अर्थविज्ञान
semiplosive ईषत्स्पृष्ट, स्पर्शसंघर्षी
semi-tatsama अर्धतत्सम
semitic सामी, सेमिटिक
semi-vowel अर्धस्वर
semi-syntactic compound अर्धवाक्यक्रम समास
sense तात्पर्य, अर्थ, अभिप्राय
sensitics अर्थविज्ञान
sentence वाक्य
sentence accent वाक्याघात
sentence analysis वाक्यविश्लेषण, वाक्यविग्रह, वाक्य-विच्छेद
sentence phonetics वाक्यीय ध्वनिविज्ञान
sentence stress वाक्य-बलाघात
sentence-word वाक्यार्थी शब्द, शब्दवाक्य
separable पृथक्करणीय
separable prefix पृथक्करणीय उपसर्ग
separable suffix पृथक्करणीय प्रत्यय
sequence अनुक्रम
series क्रम
sesmiology अर्थविज्ञान
shibboleth परीक्षाशब्द
shift of emphasis बलका अपसरण
shift-sign परिवृत्ति चिह्न, परिवर्तक चिह्न, विशेषक चिह्न
short ह्रस्व
shortening ह्रस्वीकरण
shwa श्वा, उदासीन स्वर
shwa, latent अस्पष्ट श्वा
shwa, mobile चलश्वा
sibilant ऊष्म
sigmate स-प्रवेश कराना, स-योग कराना
sigmatic स-युक्त, सिजंत
sigmation स-प्रवेश, स-योग, सिजंतीकरण
sign चिह्न, संकेत, प्रतीक, इंगित
signal चिह्नक
significance अर्थ
significs अर्थविज्ञान
sign language इंगित-भाषा
silent मूक
similar समान, अनुरूप
similarity साम्य, समानता, अनुरूपता
similative case समानार्थी कारक
simple सरल, अश्लिष्ट, मूल अयौगिक, सामान्य, साधारण
simple adverb मूल क्रियाविशेषण, सरल क्रियाविशेषण
simple agglutinative अश्लिष्ट योगात्मक
simple future लृट्, सामान्य भविष्य
simple indeclinable मूल अव्यय
simple infinitive मूल तुमुन्त सामान्य अव्यय
sumple predicate मूल विधेय
simple root मूल धातु
simple sentence सरलवाक्य, साधारण वाक्य
simple sound मूल ध्वनि
simple tense मूल काल

simple verb मूलक्रिया
simple vowel मूल स्वर
simple word मूल शब्द, अयौगिक शब्द
sing-song theory संगीत सिद्धांत
singular एकवचन
sinking tone अवरोही सुर
sister speech भगिनी भाषा, सहोदरा भाषा
slang वर्ग बोली, ग्राम्य बोली
slender consonant अग्रस्वर संपर्कित व्यंजन
slender vowel अग्रस्वर
slit fricative समसंघर्षी, समपार्श्व संघर्षी
slit-spirant समपार्श्व संघर्षी
slope गह्वर, घाटी, ढाल
slow विलंबित, धीमा
sociative case सहार्थीकारक
sociology समाजविज्ञान
soft कोमल
soft consonant घोष व्यंजन, कोमल व्यंजन
soft palatal कोमल तालव्य, कंठ्य
soft palate कोमल तालु
soft-sign कोमल-चिह्न
solecism व्याकरणिक अशुद्धि
solid compound पूर्ण समास, संघाती समास
sonant अन्तस्थ, स्वनंत, आक्षरिक, अर्धस्वर, घोष
sonority मुखरता, संस्वनता
sonorization घोषीकरण
sonorous मुखर
sonorousness मुखरता
sound ध्वनि
sound attribute ध्वनि-गुण, ध्वनि-लक्षण
sound change ध्वनि प्रक्रिया, ध्वनि-परिवर्तन
sound combination ध्वनि-संयोग
sound group ध्वनि-समवाय
sound harmony ध्वनि-संगति
sound image ध्वनि प्रतिमा, ध्वनि-बिंब
sound picture ध्वनि-चित्र
sound quality ध्वनिगुण
sound shifting ध्वनि-परिवर्तन
sound symbolism ध्वनि-प्रतीक
sound system ध्वनि-पद्धति
sound tube ध्वनि-नालिका
sound type ध्वनि-प्रकार, ध्वनि-वर्ग
sound wave ध्वनि-तरंग
specialization of meaning अर्थ-संकोच
special language विशिष्ट भाषा
speech भाषा, वाक्
speech-center भाषा-केन्द्र
speech-community भाषा-समाज, भाषा-भाषी-समुदाय
speech-island भाषा-द्वीप
speech mechanism भाषण-अवयव, उच्चारण अवयव
speech-organ भाषण-अवयव, उच्चारण-अवयव
speech sound भाषा-ध्वनि, भाषणध्वनि
spelling वर्तनी, वर्ण-विन्यास, अक्षर-विन्यास
spelling pronunciation वर्ण-विन्यासी उच्चारण
spirant संघर्षी, ऊष्म
spirantisation संघर्षीकरण, ऊष्मीकरण
spoken language उच्चरित भाषा
spontaneous sound change स्वयंभू ध्वनिपरिवर्तन
spontaneous nasalization अकारण अनुनासिकता, स्वयंभू अनुनासिकता
spoonerism स्पूनेरिज्म, आद्यशब्दांश विपर्यय
standard आदर्श, प्रामाणिक, टकसाली, परिनिष्ठित
standard language परिनिष्ठित भाषा

standard pronunciation प्रामाणिक उच्चारण
starred form तारांकित रूप
state दशा, स्थिति
static अचल
static consonant अचल व्यंजन
static linguistics वर्णनात्मक भाषा-विज्ञान
statics वर्णनात्मक व्याकरण
statistical method संख्यिकीय पद्धति
statistics सांख्यिकी
stem प्रकृति, मूलरूप, प्रातिपदिक, शब्दमूल
stem base (दे०) stem
stem-compound प्रातिपदिक-समास
stereotyped अपरिवर्तनीय, रूढ़िवद्ध
stop स्पर्श, विराम
strata स्तर
stratum स्तर
stray form विरल, छिटफुट
stress बल
stress accent बलाघात, बलात्मक स्वराघात
stress group बलाघात वर्ग
stress shift बल-परिवर्तन, बलाघात परिवर्तन
stress, stressed सशक्त बलाघात
stress-unit बलाघात-इकाई
strong सवल, वली, सशक्त
strong aorist सशक्त सामान्य भूत काल
strong conjugation सशक्त या वली क्रियारूप
strong conjunct वली संयोजक
strong consonant वली व्यंजन
strong declension वलीकारक रूप
strong form वली रूप, सशक्त रूप, तनुलरूप
strong grade बली श्रेणी
strong noun बली संज्ञा, सशक्त संज्ञा
strong phoneme वली ध्वनिग्राम, सशक्त ध्वनिग्राम
strong stem सबल प्रकृति, सशक्त प्रातिपदिक
strong suffix सबल प्रत्यय
strong termination सबल विभक्ति
strong verb सबल क्रिया
strong vowel सबल स्वर
structural संरचनात्मक, रचनात्मक
structural linguistics संरचनात्मक भाषाविज्ञान, रचनात्मक भाषा-विज्ञान
structural morphology संरचनात्मक रूपविज्ञान
structural order संरचनात्मक क्रम, संरचना क्रम
structural symmetry संरचनात्मक संगति
structure संरचना, रचना, गठन
style शैली
stylistic शैलीगत
stylistics शैलीविज्ञान
subbranch उपशाखा
subdialect उपबोली, स्थानीय बोली
subfamily उपपरिवार, उपकुल
subject उद्देश्य, कर्ता
subjectival noun कर्त्तवाचक संज्ञा, उद्देश्यवाचक संज्ञा
subjective कर्तृपदीय, कर्ता-विषयक, उद्देश्य आत्मगत
subjective case कर्ताकारक
subjective complement उद्देश्यपूरक
subjective stress अस्पष्ट बलाघात, आत्मगत बलाघात
subject word कर्तृ शब्द
subjunctive लेट्, अभिप्रायात्मक
subjunctive improper परोक्ष विधिलिङ्
subjunctive mood लेट्
sublanguage उपभाषा
sublative case निम्नार्थी कारक
subminimal pair उपस्वल्प युग्म, उपाल्पतम-विरोधी युग्म

subordinate आश्रित, अप्रधान
subordinate clause आश्रित उपवाक्य या वाक्यांश, अप्रधान उपवाक्य या वाक्यांश
subordinating conjunction उपसमुच्चयबोधक
subphonemic variant संध्वनि,संस्वन ध्वन्यंग
subsidiary member संध्वनि, संस्वन, ध्वन्यंग
subsidiary phoneme उप ध्वनिग्राम
substandard उपमानदंड, सहायक मानदण्ड
substantival विशेष्यात्मक, संज्ञात्मक
substantival adjunct विशेषण संज्ञा
substantive संज्ञा, विशेष्य
substantive sentence संज्ञा वाक्य
substantive verb सहायक क्रिया
substitute आदेश, स्थानापन्न
substratum आधार, आधार भाषा
substratum theory आधार-सिद्धांत
subtracting अभिन्यूनन, ध्वनि-न्यूनन ध्वनि-वियोजन
subvocal अर्धस्वरात्मक
successive आनुक्रमिक
suction-sound चोषण ध्वनि
suffix प्रत्यय, परप्रत्यय, अंत सर्ग
suffix agglutinative अंतयोगात्मक, परप्रत्ययप्रधान
suffix inflection परप्रत्ययी रूप रचना
suffix, primary कृत्प्रत्यय
suffix, secondary तद्धित प्रत्यय
suitable उपयुक्त
sulcalized vowel सुंषिर स्वर
super अति
superessive case उपर्यर्थी कारक
superimposition आरोपण
superior श्रेष्ठ, उच्चतर
superior comparison ऊर्ध्वगामी तुलना
superlative degree उत्तमावस्था, श्रेष्ठावस्था
superstratum आधारोच्च भाषा
superstructure बाह्य रचना
supine क्रियार्थक संज्ञा
suppletive form पूरक रूप
supplition पूर्त्ति
supra-segmental अखंड
supra-segmental phoneme अखंड ध्वनिग्राम
surd अघोष
surface fricative समपार्श्व संघर्षी, समसंघर्षी
survival अवशिष्ट रूप, अवशेष
survival of the fittest योग्यतमावशेष
survey सर्वेक्षण
survey, linguistic भाषा-सर्वेक्षण मापन
suspension-pitch विरामपूर्ण सुर
suspicious pair संदिग्ध युग्म, संदेहास्पद युग्म
svarabhakti sound स्वरभक्ति स्वर, श्रुतिस्वर
swear word शपथ-शब्द
syllabary अक्षरी
syllabation अक्षरीकरण, अक्षर विभाजन, आक्षरिक विभाजन
syllabic आक्षरिक, अक्षरात्मक, अक्षरीय
syllabication अक्षरीकरण, आक्षरिक विभाजन
syllabic division आक्षरिक विभाजन
syllabic juncture आक्षरिक संगम
syllabic peak अक्षर-शीर्ष
syllabic sign अक्षर-चिह्न
syllabic stress आक्षरिक बलाघात
syllabic syncope समाक्षर लोप, समध्वनि लोप
syllabic writing अक्षरात्मक लिपि, आक्षरिक लिपि
syllabification अक्षरीकरण

syllable अक्षर
syllable sign अक्षर-चिह्न
syllable writing अक्षरात्मक लिपि, आक्षरिक लिपि
syllabogram अक्षर-चिह्न
syllepsis शब्दान्वय
symbol प्रतीक, संकेत
symbolic प्रतीकात्मक
symbolical प्रतीकात्मक, सांकेतिक
symmetrical सम, सुसम, सुडौल, संगतिपूर्ण, सुसंगत
symmetrical pattern सुसंगत ढांचा, संगतिमय ढांचा, संगतिपूर्ण ढांचा
symmetry सम्मिति, संगति, संतुलन
synchronic संकालिक, वर्णनात्मक
synchronic grammar संकालिक व्याकरण, वर्णनात्मक व्याकरण
synchronic linguistics संकालिक भाषाविज्ञान, वर्णनात्मक भाषा-विज्ञान
synchronic phonemics संकालिक ध्वनिग्राम विज्ञान, वर्णनात्मक ध्वनि विज्ञान
synchronic phonetics संकालिक ध्वनिविज्ञान, वर्णनात्मक ध्वनि विज्ञान
synchysis शब्दाक्रम
syncopation (दे०) syncope
syncope समध्वनि लोप, समाक्षर लोप, मध्यस्वर लोप
syncopic vowel मध्यलोपी स्वर
syncretic case आत्मसाती कारक
syncretic form आत्मसाती रूप
syncretism अन्यरूपार्थी प्रयोग
syndesis संयोजन
syndetic संयोजित, संयोगित
syndetic word संयोजी शब्द
synonymous समानार्थक, पर्याय
synonymous word समानार्थक शब्द, पर्याय शब्द, समानार्थी शब्द
synonym पर्याय, समानार्थी
synonymy समानार्थता
syntactic वाक्यीय, वाक्य-विषयक, वाक्यक्रमी, वाक्य-विन्यासात्मक
syntactical वाक्य-विन्यासात्मक
syntactical classification आकृतिमूलक वर्गीकरण, वाक्यमूलक वर्गीकरण
syntactic category प्रयोग-वर्ग
syntactic change वाक्य-परिवर्तन
syntactic compound वाक्यक्रमी समास
syntactic construction वाक्य-रचना
syntactic order वाक्य-क्रम
syntactic regimen नियंत्रण
syntactics वाक्य-विचार, वाक्य-विज्ञान, वाक्य विन्यास-विज्ञान
syntactostylistic वाक्यीय शैली-विज्ञान
syntagmatic वाक्य रचना क्रमात्मक
syntax वाक्य-विन्यास, वाक्य-गठन, वाक्य-विज्ञान, वाक्य-विचार
synthesis संयोजन, संश्लेषण
synthetic संयोगात्मक
synthetical संयोगात्मक
synthetic compound संयोगात्मक समास
synthetic conpound language संयोगात्मक भाषा
synthetic compound stage संयोगात्मक अवस्था या स्थिति
system व्यवस्था
systematic सुव्यवस्थित

T

table तालिका, सारणी
taboo निषिद्ध, बहिष्कृत वर्जित, वर्जित शब्द, शब्द-वर्जन
tabular सारणीबद्ध, तालिकाबद्ध
tactile स्पर्श ग्राह्य
tagmeme युक्तग्राम
tap लघ्वाघात
ta-ta theory टा-टा सिद्धांत, टा-टा वाद
tautological compound पुनरुक्त

समास, पर्याय-समास
tautology पुनरुक्ति, द्विरूक्ति, अनुवाद-युग्म
tautophony ध्वनिद्विरुक्ति, ध्वनि-पुनरुक्ति
taxeme लघुतम रूप
technique पद्धति, प्रविधि
technical पारिभाषिक
technical language पारिभाषिक भाषा
technical term पारिभाषिक शब्द
teeth दन्त, दाँत
teeth ridge वर्त्स,दंतमूल
telescoped expression अंशान्वित अभिव्यक्ति, अंशमिश्रित अभिव्यक्ति
telescope word अंशान्वित शब्द, अंशमिश्रित शब्द
temporal समयवाचक, कालवाचक
temporal clause कालवाचक उपवाक्य
temporal conjunction कालवाचक समुच्चयबोधक
tendency प्रवृत्ति
tense काल, दृढ़
tense-phrase वियोगात्मक काल, कालवाचक वाक्यांश
tense suffix कालबोधक प्रत्यय
tenue प्रतनु
tenuis अघोष, श्वास
term शब्द
terminal contour सीमांतिक विराम
terminal juncture सीमांतिक संगम, पूर्ण विराम संगम
terminal stress अंत्य बलाघात, अंत्याक्षरी बलाघात
termination विभक्ति, प्रत्यय, परप्रत्यय
terminative case उद्देश्यार्थी कारक
terminative aspect उद्देश्यार्थी पक्ष
terminology परिभाषा शास्त्र, परिभाषाविज्ञान, पारिभाषिक शब्द, पारिभाषिक शब्द-विज्ञान
ternary त्रयात्मक, त्रिवर्णक, त्रिधातुक
testimony साक्ष्य, प्रमाण
tetraphthong चतुःसंयुक्तस्वर
tetragram चतुर्वर्णी शब्द
tetra syllabic चतुरक्षरात्मक, चतुराक्षरिक
textual criticism पाठालोचन
thematic आदिष्ट, सविकरण
thematic aorist सविकरण लुङ
thematic flexion सविकरण रूप
thematic morpheme सविकरण रूपग्राम
thematic stem सविकरण प्रातिपदिक
theme मूल, शब्दमूल, प्रातिपदिक, प्रकृति, धातु
theoritical form सैद्धांतिक रूप, काल्पनिकरूप
theory वाद, सिद्धान्त
theory of relativity सापेक्ष्य वाद
third person अन्य पुरुष
thought विचार
thought mood लेट्
thought stress वैचारिक बलाघात
thread writing सूत्र या रज्जुलिपि
throat कण्ठ, गला
til अनुनासिक चिह्न, टिल्डे
tilde टिल्डे, अनुनासिक चिह्न
timbre सुर, तान
tip of the tongue जिह्वा नोक, जिह्वाग्र
tmesis समस्तपद प्रवेश
tone सुर, तान
tone language तान भाषा, तान प्रधान भाषा, सुर प्रधान भाषा
toneme तानग्राम
tonetics तानग्राम विज्ञान
tongue जिह्वा, भाषा
tongue flap जिह्वाघात
tonic तानात्मक, तानमूलक, सुरात्मक
tonic accent सुरात्मक बलाघात, सुर

tonic accentuation सुरांकन
toponomasiology स्थाननाम विज्ञान
toponomastics स्थान नाम विज्ञान
toponomatology स्थान नाम विज्ञान
tossed breath आस्फालित श्वास
trace अनुचिह्न, शेष-चिह्न
trachea श्वासनली
tracheal opening श्वास-विवर
trade language व्यापारिक भाषा
trade word व्यापारिक शब्द
tradition परम्परा
traditional परम्परागत
traditionalism परम्परागतता
traditional spelling परंपरागत वर्तनी, परंपरागत वर्णविन्यास
traditional stress परंपरागत बलाघात
traditional transcription परंपरागत प्रतिलेखन
transcript प्रतिलिपि
transcription प्रतिलिपीकरण, प्रतिलेखन
transference परिवर्त्तन, संक्रमण
transference of meaning अर्थादेश
transferred संक्रमित
transferred meaning संक्रमित अर्थ
transition संक्रांति, संक्रमण
transitional सांक्रांतिक, सांक्रमणिक
transitional period संक्रमण-काल
transitional script संक्रांति लिपि
transitional sound संक्रमण-ध्वनि
transitional writing संक्रांति लेखन
transition, close अविच्छिन्न संक्रमण
transitive सकर्मक
transitive verb सकर्मक क्रिया
translation अनुवाद
translation loan अनुवादागत, अनुवाद-ग्रहण
translation loan-word अनुवादागत शब्द, अनुवादगृहीत शब्द
translative अनुवादात्मक
translator अनुवादक

transliteration लिप्यन्तरण, अनुलिपिकरण, लिप्यांतर अनुलिपि
transposition विपर्यय, स्थानान्तर
tree-stem theory वंशवृक्ष सिद्धांत
trema ट्रेमा, द्विबिंदु
trial त्रिवचन
triconsonantal त्रिव्यंजनात्मक
triconsonantal root त्रिव्यंजनात्मक धातु
trigraph त्रिवर्ण
triliteral त्रिवर्णात्मक
triliteral root त्रिवर्णात्मक धातु
trilled कंपनजात, जिह्वोत्कंपी, कंपनयुक्त
trilled fricative कंपनजात संघर्षी, कंपनयुक्त संघर्षी
triphthong त्रिसंयुक्त स्वर, त्रिस्वर, त्रिसंध्यक्षर
triple त्रिगुणित, त्रिगुण
triplet त्रिक
trisyllabic त्रि-अक्षरात्मक, त्र्यक्षर
trisyllable त्र्यक्षर, त्र्यक्षर शब्द
trope अलंकार
true शुद्ध, सही
tube नली, नलिका, नालिका
turn वाच्य
tut-tut theory तू-तू वाद, तू-तू सिद्धांत
typical विशिष्ट, ठेठ, प्ररूपात्मक
typical classification प्ररूपात्मक वर्गीकरण

U

ultimate मूल, मूलभूत, चरम, अंत्य
ultimate constituent चरम अवयव, चरमांश
ultimate element मूलतत्त्व
ultimate question मूल प्रश्न
ultra sanskritisation अत्यन्त संस्कृतमयता
umlaut अभिश्रुति, द्विबिंदु
unaccented अनुदात्त, अनाहत, स्वराघात शून्य, स्वराघात विहीन, अनाघात

unaspirate अल्पप्राण
unaspirated अल्पप्राण
unbounded असीमित
uncöncious inclusion अनजान समावेश, अज्ञात अंतर्भाव
unconditional phonetic change स्वयंभू ध्वनि परिवर्तन, अकारण ध्वनि परिवर्तन
underived असाधित
underlying form मुक्त रूपग्राम
unexploded stop अस्फोटित स्पर्श, अपूर्ण स्पर्श
uniformity एकरूपता
unhonorific अनादरसूचक
unilateral एक पार्श्विक
unintelligible अबोधगम्य
unipersonal verb सर्वपुरुषी क्रिया
unit इकाई, एकांश, एकांक
unitive case सहार्थी कारक
unknown अज्ञात
unlike भिन्न, असदृश, असमान
unlimited असीमित
unproductive suffix अनुत्पादी प्रत्यय
unrelated compound असम्बद्ध समास
unrounded अवृत्तमुखी, अवृत्ताकार
unrounding अवृत्तीकरण
unstable अस्थायी, परिवर्तनशील
unstressed बलहीन, बलाघात शून्य
unvoiced अघोष
unvoicing अघोषीकरण
upper language उच्चवर्गीय भाषा, उच्च भाषा
upward comparison ऊर्ध्वमुखी तुलना
urbanism नागरिक प्रयोग, शिष्ट प्रयोग
usage प्रयोग
use प्रयोग
utilitarian उपयोगितावादी
utterance उच्चरित शब्द, उच्चरित रूप, उच्चरित वाक्य
uvula अलिजिह्व, कौवा, घंटी, शुंडिका
uvular अलिजिह्व, अलिजिह्वीय, काकल्य

V

vague अस्पष्ट
valley गह्वर, घाटी, ढाल
value मूल्य
variant परिवर्त, भिन्नरूप, रूपांतर, संध्वनि, वैकल्पिक रूप
variation भेद, रूपांतर, विभेद, परिवर्तन
variation, abrupt आकस्मिक परिवर्तन
variety शबलता, अनेकरूपता
varying change बहुरूपी परिवर्तन
vedic subjunctive लेट्
velar कंठ्य
velar vowel पश्च स्वर, कंठ्य स्वर
velarified कंठीकृत, पश्चीकृत
velum कोमल तालु
verb क्रिया
verbal क्रियामूलक, क्रियार्थक
verbal adjective क्रियामूलक विशेषण
verbal aspect क्रियापक्ष
verbal compound क्रियामूलक समास
verbal derivative क्रिया-साधित शब्द
verbal noun क्रियार्थक संज्ञा
verbal preposition क्रियामूलक पूर्वसर्ग
verb language क्रिया-प्रधान भाषा
verb-noun क्रियार्थक संज्ञा
verb sentence क्रियावाक्य, क्रिया-प्रधान वाक्य
verb stem धातु, क्रियामूल
vernacular देशभाषा, जनपदीय भाषा
verner's law वर्नर का नियम
vetative निषेधार्थी
visual नेत्रग्राह्य
visual image नेत्रग्राह्य बिंब
visual language नेत्रग्राह्य भाषा
vocable शब्द
vocabulary शब्द-भांडार, शब्द-समूह, शब्द-कोश, अभिधान
vocal स्वरात्मक, स्वरीय, स्वर

vocal chord स्वर तंत्री
vocal epenthesis स्वरीय अपनिहिति
vocalic स्वरात्मक
vocalic consonant स्वरवत् व्यंजन
vocalic ablaut स्वरीय अपिश्रुति, अपिश्रुति
vocalic anaptyxis स्वरभक्ति
vocalic harmony स्वर-संगति
vocalism स्वर-विज्ञान, स्वर-अध्ययन, स्वर-व्यवस्था
vocal mechanism मुखयंत्र
vocal organ उच्चारण-अवयव
vocal symbol ध्वनि-प्रतीक
vocalization घोषीकरण, स्वरीकरण
vocative case संबोधन कारक
voice वाच्य, घोष, ध्वनि
voiced घोष, सघोष, नाद
voiced, partially अपूर्ण घोष
voiceless अघोष, श्वास
voiceness घोषत्व
voicing घोषत्व
voice timbre ध्वनि-लक्षण
volitive इच्छार्थक, स्वेच्छार्थक
volume आयतन
voluntative इच्छार्थक, स्वेच्छार्थक
vowel स्वर
vowel alterance स्वर-परिवर्तन
vowel combination स्वर-संयोग
vowel cluster स्वरानुक्रम
vowel, compound संयुक्त स्वर
vowel ending स्वरान्त
vowel fracture स्वर-भंग
vowel grade स्वर श्रेणी
vowel gradation अपश्रुति
vowel harmony स्वर-संगति, स्वर-अनुरूपता
vowel insertion स्वरभक्ति, विप्रकर्ष
vowel line स्वर रेखा
vowel mutation अभिश्रुति
vowel prothesis आदि-स्वरागम
vowel quality ध्वनि गुण
vowel shift स्वरान्तर
vowel similarity स्वर-साम्य
vowel termination स्वर विभक्ति, स्वर प्रत्यय
vox nihili अशुद्धिजन्य शब्द
vriddhi grade वृद्धि श्रेणी
vulgar अश्लील, अशिष्ट, ग्राम्य
vulgar dialect ग्राम्य बोली, जनबोली
vulgarism ग्राम्य प्रयोग, अश्लील प्रयोग, अशिष्ट प्रयोग

W

wave तरंग, लहर
wave theory लहर सिद्धांत
wave of thought विचार-लहरी
weak निर्बल, बलहीन, निर्बलीभूत
weak conjugation निर्बल क्रियारूप
weak declension निर्बल संज्ञारूप, निर्बल कारक रूप
weak form निर्बल रूप
weak grade निर्बल श्रेणी
weak noun निर्बल संज्ञा
weak phoneme निर्बल ध्वनि
weak stem निर्बल प्रकृति
weak termination निर्बल विभक्ति या प्रत्यय
weak verb निर्बल क्रियापद, नियमित क्रिया रूप
weak vowel निर्बल स्वर
whisper फुसफुसाहट
whispered consonant जपित व्यंजन
whispered vowel अस्पष्ट स्वर, जपित स्वर
wide diphthong प्रशस्त संयुक्त स्वर
wide vowel दीर्घ स्वर
widened meaning विकसित अर्थ
will संकल्प
wind वायु, श्वास
wind-pipe श्वास-नलिका
word शब्द, पद

wish इच्छा
woo-woo theory प्रेम सिद्धांत
word base शब्द-मूल
word class शब्द-वर्ग
word concordance शब्दानुक्रमणी
word formation शब्द रचना
word-geography शब्द-भूगोल
word-index शब्दानुक्रमणी
word meaning शब्दार्थ
word-order पदक्रम, शब्द-क्रम
wordostylistics शब्दीय शैली विज्ञान
word picture शब्द चित्र
word stress शब्द-बलाघात
world-auxiliary कृत्रिम विश्व-भाषा
wrenched accent अशुद्ध स्वराघात, अशुद्ध आघात
wrenched stress अशुद्ध बलाघात
writing लेखन
writing, hand–हस्तलिपि
written language लिखित भाषा
wrong omission अपलोप
wrong reading अपपाठ
wrong use अपप्रयोग

Y

yo-he-ho theory यो-हे-हो वाद, श्रम-परिहरणवाद
yodization यकारीकरण, यकरण

Z

zero शून्य
zero ending शून्य विभक्ति, शून्य प्रत्यय
zero feature शून्य-रूप
zero grade शून्य श्रेणी
zeugma पदलोप
zeugmatic पदलोपी
zone प्रदेश, क्षेत्र


ज्ञान